शीयकारायणस्य नमः

श्रीविष्णुपुराण

प्रथम अंश

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्। देवीं सरस्वती व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

पहला अध्याय

प्रन्थका उपोद्घात

श्रीसूत उचान

🕉 परादारे मुनिवरं कृतपीर्वाहिकक्रियम् । परिपप्रसङ प्रणिपत्याभिवाद्य च ॥ १ त्वत्तो हि वेदाध्ययनमधीतमस्विलं गुरो । धर्मशासाणि सर्वाणि तथाङ्गानि यथाक्रमम् ॥ २ खद्मसादान्युनिश्रेष्ठ मामन्ये नाकृतश्रमम्। वश्यन्ति सर्वशासेषु प्रायशो वेऽपि विद्विषः ॥ ३ सोऽहिष्कामि धर्मज्ञ श्रोतुं त्वत्तो यथा जगत्। बभूव भूयझ यथा महाभाग भविष्यति ॥ ४ जगद्रग्रन्थतङ्गेतचराचरम् । लीनमासीद्यथा यत्र लयमेष्यति यत्र च ॥ ५ यत्प्रपाणानि भूतानि देवादीनां च सम्भवम् । समुद्रपर्वतानो च संस्थानं च यथा भुवः ॥ ६ सूर्यादीनां च संस्थानं प्रमाणं मुनिसत्तम । देवादीनां तथा वैज्ञान्यनुन्यन्वन्तराणि च ॥ ७ कल्पान् कल्पविभागांश्च चातुर्पुगविकल्पितान्। कल्पान्तस्य स्वस्तपं च युगयमाध्य कृत्स्रशः॥ ८

श्रीसुतजी बोले—मैत्रेयजीने निस्करमाँसे नियत हुए मुनिबर पराश्मरजीको प्रणाम कर एवं उनके चरण स्ट्रकर पूछा — ॥ १ ॥ "हे गुरुदेश | मैंने आपहोसे सन्पूर्ण केंद्र, वेदाङ्ग और सकल धर्मशास्त्रोका क्रमशः अध्ययन किया है ॥ २ ॥ हे मुनिक्षेष्ठ ! आपकी कृषासे मेरे विपक्षी भी मेरे ियं यह नहीं कह सकेंगे कि 'मैंने सम्पूर्ण शास्त्रोंके अभ्यासमें परिश्रम नहीं किया। ॥ ३ ॥ हे धर्मश्र । हे महाभाग ! अब मैं आपके मुसारविन्दसे यह सुनना चाहता हूँ कि यह जगत् किस प्रकार उत्पन्न हुआ और आगे भी (दूरसे कल्पके आरम्भमें) कैसे होगा ? ॥ ४ ॥ तथा हे ब्रह्मन् ! इस संसारका उपादान-कारण क्या है ? वह सम्पूर्ण चरावर किससे उत्पन्न हुआ है ? यह पहले किसमें लीन था और आगे किसमें लीग हो जायगा ? ॥ ५ ॥ इसके अतिरिक्त (आकाश आदि) भूतीका परिमाण, समुद्र, पर्वत तथा देवता आदिका उत्पति, पृथिबीका अधिष्ठान और सूर्य आदिका परिमाण तथा उनका आधार, देवता आदिके वंश, मन्, मन्यत्तर, (बार-बार आनेवाले) चारों युगोमें विभक्त करूप और कल्पोंके विभाग, प्रश्रवका स्वरूप, युगोंके

धर्माश्च ब्राह्मणादीनां तथा चाश्रमवासिनाम् । श्रोतुमिच्छाम्यहं सर्वं त्वत्तो वासिष्ठनन्दन ॥ १० ब्रह्मन्त्रसादप्रवर्ण कुरुष्ट्व पथि पानसम्। येनाहमेतजानीयां त्वत्प्रसादान्महामुने ॥ ११ श्रीपरागर उवाच साधु मैत्रेय धर्मज्ञ स्मारितोऽस्मि पुरातनम् । पितुः पिता मे भगवान् वसिष्ठो यदुवाच ह ॥ १२ विश्वामित्रप्रयुक्तेन रक्षसा भक्षितः पुरा 🖙 श्रुतस्तातस्ततः क्रोधो पैत्रेयाभून्यमातुरुः ॥ १३ ततोऽहं रक्षसां सत्रं विनाशाय समारभम्। भस्मीभूताश्च शतशस्त्रस्मिन्सत्रे निशाचराः ॥ १४ ततः सङ्क्षीयमाणेषु तेषु रक्षस्वशेषतः 🕮 🗥 मामुबाच महाभागो वसिष्ठो मत्पितामहः ॥ १५ अलमत्यन्तकोपेन तात मन्युपिमं जहि। राक्षसा नापराध्यन्ति पितुस्ते विहितं हि तत् ॥ १६ मूहानामेव भवति क्रोधो ज्ञानवर्ता कुतः । हन्यते तात कः केन यतः स्वकृतभुक्युमान् ॥ १७ सञ्चितस्यापि महता वत्स क्रेशेन मानवै:। यशसस्तपसश्चेव क्रोधो नाशकरः परः॥ १८ स्वर्गापवर्गव्यासेघकारणं परमर्थयः । वर्जयन्ति सदा क्रोधं तात मा तहुशो भव ॥ १९ अलं - निशाचरैर्दग्यैदीनैरनपकारिभिः । सत्रं ते विरमत्वेतत्क्षमासारा हि साधवः ॥ २० एवं तातेन तेनाहमनुनीतो महात्मना। उपसंहतवान्सत्रं सद्यस्तद्वाक्यगौरवात् ॥ २१ ततः प्रीतः स भगवान्वसिष्ठो मुनिसत्तमः ।

सम्प्राप्तश्च तदा तत्र पुरुस्यो ब्रह्मणः सुतः ॥ २२

मामुबाच महाभागो मैत्रेय पुलहात्रज: ॥ २३

पितामहेन : दत्तार्थः कृतासनपरिग्रहः ।

देवर्षिपार्थिवानां च चरितं यत्रहामुने ।

वेदशास्त्राप्रणयने यथावद्व्यासकर्तृकम् ॥

[इसके लिये तुम धन्यवादके पात्र हो] ॥ १२ ॥ हे मैंबेय ! जय मैंने सुना कि पिताजीको विश्वामित्रकी प्रेरणासे राक्षसने जा किया है, तो मुझको बड़ा भारी क्रोध हुआ॥ १३॥ तब सक्षसोंका ध्वेस करनेके लिये मैंने यज्ञ करना आरम्भ किया। उस यज्ञमें सैकड़ों राक्षस जलकर भस्म हो गये ॥ १४ ॥ इस प्रकार तन राक्षसोंको सर्वथा नष्ट होते देख मेरे महाभाग पितामह वसिष्ठजी मुझसे बोले— ॥ १५ ॥ "हे वत्स ! अत्यन्त क्रोध करना टीक नहीं, अब इसे शान्त करो। राक्षासोंका कुछ भी अपराध नहीं है, तुम्हारे पिताके लिये तो ऐसा ही होना था ॥ १६ ॥ क्रोध तो मूर्खीको ही हुआ करता है, विचारवारीको भरत कैसे हो सकता है ? भैया ! भला कौन किसीको गारता है ? पुरुष खर्य ही अपने कियेका फुट भोगता है ॥ १७ ॥ हे प्रियवर ! यह क्रोध तो मनुष्यके अत्यत्त कष्टसे संज्ञित यहा और तपका भी प्रबल नाहाक है ॥ १८-॥ है तात ! इस स्रोक और परस्रोक दोनोंको विगाहनेवारे इस क्रोधका महर्षिगण सर्वदा त्याग करते हैं, इसिंख्ये तू इसके वशीभूत मत हो ॥ १९ ॥ अब इन बेचारे निरपराध राक्षसोंको दग्ध करनेसे कोई लाग नहीं; अपने इस यज्ञको समाप्त करो । साधुओंका भन तो सदा क्षमा ही THE ROLL COMES HOSTING महात्मा दादाजीके इस प्रकार समझानेपर उनकी बातोंके गौरवका विचार बारके मैंने वह यज्ञ समाप्त कर दिया ॥ २१ ॥ इससे मुनिश्रेष्ट भगवान् वसिष्ठजी बहुत प्रसन्न हुए। उसी समय ब्रह्माजीके पुत्र पुलस्त्यजी वहाँ आये ॥ २२ ॥ हे मैत्रेय ! पितामह [बसिष्ठजी] ने उन्हें अर्घ्य दिया, तब ये महर्षि पुरुहके ज्येष्ट भाता महाभाग पुलस्यनी आसन प्रहण करके मुझसे बोले॥ २३॥ ः

उस पूर्व प्रसङ्घका तुमने मुझे अच्छा स्मरण कराया---

पृथक् पृथक् सम्पूर्ण धर्म, देवर्षि और राजर्षियोके चरित्र,

श्रीव्यासजीकृत वैदिक शास्त्राओंकी यथावत् रचना तथा

ब्राह्मणादि वर्ण और ब्रह्मचर्यादि आश्रमोंके धर्म—ये

सब, हे महापुनि शक्तिनन्दन ! मैं आपसे सुनना चाहता

है ॥ ६ — १० ॥ है ब्रह्मन् ! आप मेरे प्रति अपना जिल

प्रसादोन्पुख कीन्द्रिये जिससे हे महामुने ! मैं आपकी

पिताजीके पिता बीवसिष्ठजीने जिसका वर्णम किया था,

श्रीपराञ्चारजी खोले—"हे धर्मज्ञ मैत्रेय! मेरे

कृपासे यह सब जान सक्ँ' ॥ ११ ॥

पुलस्य हवाच

वैरे महति यद्वाक्यादगुरोरद्याश्रिता क्षमा ।

त्वया तस्मात्समस्तानि भन्नाञ्छास्त्राणि वेस्यति ॥ २४

सन्तर्ने ममोच्छेदः क्रुद्धेनापि यतः कृतः ।

त्वया तस्मान्यहाभाग ददाम्यन्यं महावरम् ॥ २५

पुराणसंहिताकर्ता भवान्वत्स भविष्यति ।

देवतापारमार्थ्यं च यथाबद्वेत्स्यते भवान् ॥ २६

प्रवृत्ते च निवृत्ते च कर्मण्यस्तमला मति: । महासादादसन्दिग्धा तव वत्स भविष्यति ॥ २७

ततश्च प्राहः भगवान्वसिष्ठो मे पितामहः ।

पुलस्त्येन चदुक्तं ते सर्वमेतद्भविष्यति ॥ २८

इति पूर्व व्यसिष्ठेन पुलस्त्वेन च धीमता। यदुक्तं तत्स्मृति याति त्वत्प्रश्नादिखलं मम ॥ २९

स्रोऽहं वदाम्बरोधं ते भैत्रेय परिपुच्छते । पुराणसंहितां सम्यक् तां निकोध यथातथम् ॥ ३०

विष्णोः सकाशादुद्धतं जगनत्रैव च स्थितम् । स्थितिसंथमकर्ताऽसौ जगतोऽस्य जगञ्च सः ॥ ३१

दूसरा अध्याय

चौबीस तत्त्वोंके विचारके साथ जगतके उत्पत्ति-क्रमका वर्णन और विष्णुकी महिमा

श्रीपराशर उत्पाच

अविकाराय शृद्धाय नित्याय परमात्मने ।

सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे ॥

नमो हिरण्यगर्भाय हरवे शङ्कराय च।

वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे ॥

एकानेकस्वरूपाय स्थूलसूक्ष्मात्मने नमः। अध्यक्तव्यक्तरूपाय विष्णवे मुक्तिहेतवे ॥

सर्गस्थितिविनाञ्चानां जगतो यो जगन्मयः ।

पुरुद्धयनी बोरो-तुपने, चित्तमें बहा बैरमाव

रहरेपर भी अपने चड़े-गृहे वसिष्ठजीके कहरेसे धामा स्वीकार की है, इसिलये तुम सम्पूर्ण शास्त्रीके क्षाता

होगे ॥ २४ ॥ हे महाभाग ! अत्यन्त क्रोधित होनेपर भी तुमन मेरी सन्तानकः सर्वथा मूत्र्येच्हेद नहीं किया; अतः मै तुम्हें एक और इसम वर देता हैं ॥ २५ ॥ हे वस्प ! तुम

पुराणसंहिताके बका होगे. और देखताओंके यशार्थ स्वरूपको जानोगे॥ २६॥ तथा मेरे प्रसादमे तुन्हारी निर्मल बुद्धि प्रवृत्ति और निवृति (भाग और मोक्ष)के

उत्पन्न बरनेवाले कमोंमें निःसन्देह हो जायगी॥ २७॥। [प्रकरवर्जाक इस तरह कहनेके अनन्तर] फिर मेरे पितामह भगवान् वसिष्ठजी बोलें "पुरुस्त्यवीने जो कुछे

कहा है, वह सभी सत्य होगा" ॥ २८ ॥ हे पेत्रेय ! इस प्रकार पूर्वकालमें बुद्धिमान् परिष्ठजी। और पुरुस्यजीने जो कुछ कहा था, वह सब तुम्हारे प्रश्नके

मुझे स्मरण हो आया है।। २९॥ अतः हे फैंबेय ! तुंग्हारे पृष्टनेसे में उस सम्पूर्ण पुराणसंहिताको सुन्हें सुनाता हैं: तुम उसे भली प्रकार ध्यान देकर सूनो॥ ३०॥: यह

जगत् विष्णुसे उत्पन्न हुआ है, उन्होंमें स्थित है, ये ही इसकी क्ष्यिति और लयके बता है तथा यह जगत् भी वे

इति श्रीविच्युपुराणे प्रथमेंऽदी प्रथमोऽस्थायः ॥ १ ॥

औपराशरजी खोले—जे ब्रह्मा, विष्णु और इंकररूपसे जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और संहारके कारण

हैं तथा अपने भक्तोंको संसार-सागरसे तारनेवाले हैं, डन <mark>बिकाररहित, शुद्ध, आ</mark>विनाशी, परमास्मा, सर्वदा एकरस, सर्वविजयी भगवान् वासुदेव विष्णुको नमस्तार है ॥ १-२ ॥ जो एक होकर भी नाना रूपवाले हैं, स्थूल-

मुक्ष्ममब है, अञ्चल (कारण) एवं व्यक्त (कार्य) रूप है तथा [अपने अनन्य धत्तोंकी] मृत्तिके कारण हैं,

[उन श्रीविष्णुभगवान्को नमस्कार है] ॥३॥ जो विश्वराप प्रम विश्वकी उत्पत्ति, स्थिति और सेहारेके

मूळभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने ॥

Ę

١9

आधारभृतं विश्वस्याप्यणीयांसमणीयसाम् । प्रणम्य सर्वभूतस्थमच्युतं पुरुषोत्तमम्॥

ज्ञानस्वरूपमत्यन्तनिर्म**लं** परमार्थतः ।

तमेवार्थस्वरूपेण भ्रान्तिदर्शनतः स्थितम् ॥ विष्णुं प्रसिष्णुं विश्वस्य स्थितौ सर्गे तथा प्रभुप् ।

जगतामीशयजमक्षयम्वयम् ॥ प्रणस्य

कथयामि यथापूर्वं दक्षाद्यैम्निसत्तमैः । पृष्टः प्रोवाच भगवानकायोनिः पितामहः ॥

तैश्चोक्तं पुरुकुत्साय भूभुजे नर्मदातटे।

सारस्वताय तेत्रापि यहां सारस्वतेन च ॥ परः पराणां परमः परमात्पात्मसंस्थितः ।

रूपवर्णादिनिर्देशविशेषणविवर्जितः अपक्षयविनाशाभ्यां परिणामधिजन्मभिः । वर्जितः शक्यते वक्तुं यः सदास्तीति केवलम् ॥ ११

सर्वत्रासौ समस्तं च वसत्यत्रेति वै यतः । ततः स बासुदेवेति विद्वद्धिः परिपठ्यते ॥ १२ तद्ब्रह्म परमं नित्यमजमक्षयमव्ययम् ।

एकस्वरूपं तु सदा हेयाभावाद्य निर्मलम् ॥ १३ सर्वमेवैतद्व्यक्ताव्यक्तस्वरूपवत् । तथा पुरुषरूपेण कालरूपेण च स्थितम् ॥ १४ परस्य ब्रह्मणो रूपं पुरुषः प्रथमं द्विज ।

व्यक्ताव्यक्ते तथैवान्ये रूपे कालस्तथा परम् ॥ १५ प्रधानपुरुपव्यक्तकालानां परमं हि यत्। पञ्चन्ति सुरवः शुद्धं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ १६

प्रधानपुरुषव्यक्तकालास्त् प्रविभागशः । रूपाणि स्थितिसर्गान्तव्यक्तिसद्भावहेतवः ॥ १७

व्यक्तं विष्णुस्तथाव्यक्तं पुरुषः काल एव च । क्रीडतो बालकस्पेव चेष्टां तस्य निशामय ॥ १८ अव्यक्ते कारणं यत्तत्रधानमृषिसत्तमैः ।

प्रोच्यते प्रकृतिः सुक्ष्मा नित्यं सदसदात्मकम् ॥ १९

मुल-कारण है, उन परमात्मा विष्णुभगवानुको नमस्कार

है ॥ ४ ॥ जो विश्वके अधिष्ठान हैं, अतिसुक्ष्मसे भी सुक्ष्म हैं, सबं प्राणियोंने स्थित पुरुषोत्तम और अविनाशी है, जो परमार्थतः (वास्तवमें) अति निर्मल ज्ञानस्वरूप हैं, किन्तु अज्ञानवश नाना पदार्थरूपसे प्रतीत होते हैं, तथा जो [काळस्वरूपसे] जगतुकी उत्पत्ति और स्थितिमें समर्थ

एवं उसका संहार करनेवाले हैं, उन जगदीश्वर, अजन्मा, अक्षय और अव्यय भगवान् विष्णुको प्रणाम करके तुम्हें वह सारा प्रसंग ऋमशः सुवाता है जो दक्ष आदि मुनि-श्रेष्टोंके पूछनेपर पितामह भगवान् ब्रह्माजीने उनसे

कहा था॥ ५—८॥ वह प्रसंग दक्ष आदि मुनियोंने नर्मदा-तटपर राजा पुरुकृत्सको सुनाया था तथा पुरुकृत्सने सारखतसे और सारस्वतने मुझसे कहा था ॥ ९ ॥ जो पर (प्रकृति) से भी पर, परमश्रेष्ट, अन्तरात्मामें स्थित परमात्मा, रूप, वर्ण, नाम और विहोषण आदिसे रहित हैं; जिसमें जन्म, बद्धि,

परिणाम, स्रय और नाश—इन छः विकारीका सर्वथा

अभाव है; जिसको सर्वदा केवल 'है' इतना ही कह सकते हैं, तथा जिनके लिये यह प्रसिद्ध है कि 'वे सर्वत्र हैं और उनमें समस्त विश्व बसा हुआ है—इसिलेये ही विद्वान् जिसको वास्देव कहते हैं' वहीं नित्य, अजन्म, अक्षय, अञ्चय, एकरस और हेय गणोंके अभावके कारण निर्मल परब्रह्म है ॥ १० — १३ ॥ वही इन सब व्यक्त (कार्य) और अव्यक्त (कारण) जगतुक रूपसे, तथा इसके साक्षी

है द्विज ! परब्रह्मका प्रथम रूप पुरुष है, अञ्चल (प्रकृति) और व्यक्त (महदादि) उसके अन्य रूप हैं तथा [सबको शोभित करनेवाला होनेसे] काल उसका परमक्रप हैं ॥ १५ ॥ इस प्रकार जो प्रधान, पुरुष, व्यक्त और काल-इन नारोंसे परे है तथा जिसे पण्डितजन ही देख पाते हैं वही

पुरुष और महाकारण कालके रूपसे स्थित है।। १४॥

भगवान् विष्णुकः परमपाः है ॥ १६ ॥ प्रधान, पुरुष, व्यक्त और काळ—ये [भगवान् विष्णुके] रूप पृथक्-पृथक् संसारकी उत्पत्ति, पालन और संद्वारके प्रकाश तथा उत्पादनमें कारण हैं ॥ १७ ॥ भगवान् विष्णु जो ब्यक्त, अव्यक्त, पुरुष और कालरूपसे स्थित होते हैं, इसे उनकी बालवर् क्रीडा ही समझो ॥ १८॥

उनमॅसे अव्यक्तं कारणको, जो सदसद्वपं (कारण-शक्तिविशिष्ट्) और नित्य (सदा एकरस) है, श्रेष्ट अक्षयं नान्यदाधारममेयमजरं ध्रुवम् । शब्दस्पर्शविद्येनं तद्रुपादिभिरसंहितम् ॥ २०

त्रियुणं तज्जगद्योनिरनदिष्रभवाष्ययम् । तेनामे सर्वपेयासीद्वाप्तं वै प्रख्यादनु ॥ २१

बेदबादबिदो विद्वन्नियता ब्रह्मवादिनः ।

पठिन चैत्रपेक्षार्थं प्रधानप्रतिपादकम् ॥ २२ नाहो न संत्रिर्न नभो न भूमि-

र्नासीत्तमोज्योतिरभृष्टः नान्यत् । श्रोत्रादिबुद्ध्यानुपलभ्यमेकं प्राधानिकं ब्रह्म पुमास्तदासीत् ॥ २३

विष्णो: स्वस्त्रपात्परतो हि ते हे रुपे प्रधानं पुरुषश्च विप्र। तस्यैव तेज्न्येन धृते वियुक्ते

रूपान्तरं तद्द्विज कालसंज्ञम् ॥ २४ प्रकृतौ संस्थितं व्यक्तमतीतप्ररूपे दु यत् । तस्राद्धाकृतसङ्गोऽयमुच्यते प्रतिसञ्चरः ॥ २५

अनादिर्भगवान्काल्ये नान्तोऽस्य द्विष विद्यते । अव्युक्तिन्नासासत्वेने सर्गस्थित्यन्त्संबमाः ॥ २६ गुणसाम्ये ततस्तस्मिन्पृथक्युंसि व्यवस्थिते ।

कालसक्तपं तद्विक्योपेंत्रिय परिवर्तते ॥ २७ ततस्तु तत्परं ब्रह्म परमात्मा जगन्मयः। सर्वगः सर्वभृतेशः सर्वातमा परमेश्वरः॥ २८

प्रधानपुरुषौ श्वापि प्रविद्यात्मेच्छया हरिः । क्षोभयामास सन्प्राप्ते सर्गकाले व्ययाव्ययौ ॥ २९ वश्चा सन्निधिमात्रेण गन्धः क्षीभाय जायते । मनसो नोपकर्तृत्वात्तधाऽसौ परमेश्वरः ॥ ३०

स एव श्रोधको ब्रह्मन् श्रोध्यश्च पुरुषोत्तमः । सं सङ्कोचविकासाभ्यो प्रधानत्वेऽपि च स्थितः ॥ ३१ विकासागुरवरूपैश्च ब्रह्मरूपदिभिक्तया ।

व्यक्तस्वरूपश्च तथा विष्णुः सर्वेश्वरेश्वरः ॥ ३२

क्षयरहित है, इसका कोई अन्य आधार भी नहीं है तथा अप्रमेय, अजर, निश्चल शब्द-स्पर्शीदिशुन्य और इत्पादरहित है।। २०॥ यह त्रिगुणमय और जगत्का कारण है तथा खर्य अनादि एवं उत्पत्ति और रूथसे रहित

मुनिजन प्रधान तथा सुक्ष्म प्रकृति कहते हैं 🛭 १९ ॥ वह

है। यह सम्पूर्ण प्रपञ्च प्रलयकालसे लेकर सृष्टिके आदितक इसीसे व्याप्त था ॥ २१ ॥ हे विद्वन् ! श्रुसिके मर्मको जाननेवाले, श्रुतिपरायण ब्रह्मवेता महासागण इसी अर्थको लक्ष्य करके प्रधानके प्रतिपादक इस

(निप्रस्थिति) २ल्पेकको कहा करते हैं— ॥२२ ॥ 'उस समय (प्रस्थकारुमें) न दिन था, न राति श्री, न आकारा था, न पृथियो थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था। और न इनके अतिरिक्त कुछ और ही था। यस, श्रीतादि इन्द्रियों और अदि आदिका अविषय एक प्रधान **करा** और

हे जिन्न ! जिञ्जुके परम (उपाधिरतित) स्वरूपसे प्रधान और पुरुष—ये दी रूप हुए, उसी (विष्णु) के जिस अन्य रूपके द्वारा वे दोनों [सृष्टि और प्ररूथकारूगें] संयुक्त और वियुक्त होते हैं, उस रूपान्तरका ही नाम

पुरुष ही था। ॥ २३ ॥

'काल' है ॥ २४ ॥ बीते हुए प्रस्त्यकालमें यह व्यक्त प्रपञ्ज प्रकृतिमें ठीन था, इसिल्ये प्रपञ्चके इस प्ररूपको प्राकृत प्ररूप कहते हैं।। २५॥ है द्विज ! कालक्ष्य भगवान्। अनादि हैं, इनका अन्त नहीं है इसलिये संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी कभी नहीं रुकते [वे प्रवाहरूपसे निरन्तर होते रहते हैं } ॥ २६ ॥

हे मेंद्रेय ! प्रख्यकालमें प्रधान (प्रकृति) के साम्यावस्थामे स्थित हो जानेपर और पुरुषके प्रकृतिसे पृथक् रिथत हो आनेपर विष्णुभगवानुका कालरूप 🛙 इन दोनोंक्डे धारण करनेके लिये] प्रयुत्त होता है ॥ २० ॥ तदनकर [सर्गकाल उपस्थित होनेपर] उन परमहः परमाला विश्वरूप सर्वव्यापी सर्वभृतेशर सर्वोस्म

परमेक्षरने अपनी इच्छासे विकारी प्रधान और अविकारी परुष्यें प्रतिष्ट होकर उनको शोमित किया ॥ २८-२९ ॥

जिस प्रकार क्रियाशील न होनेशर भी गन्ध अपनी स्रजिधियाजसे ही मनको क्षुभित कर देता है उसी प्रकार परमेश्वर अपना लिखियात्रसे ही प्रयान और पुरुषको प्रेरित करते हैं ॥ ३० ॥ हे ब्रह्मन् ! ब्रह पुरुषोत्तम ही इनको श्लोभित करनेवाले हैं और वे ही शुव्य होते हैं तथा संकोच (साम्य) और विकास (शोभ) युक्त प्रधानरूपसे भी वे

ती रिधत है। एउर में जेवादि समस्त ईश्वरीके ईश्वर वे

गुणसाम्यात्ततस्तस्मारक्षेत्रज्ञाधिष्टितान्युने गुणव्यञ्जनसम्भृतिः सर्गकाले द्विजोत्तम ॥ ३३ प्रधानतत्त्वमुद्धतं महान्तं तत्समावृणोत्। सात्त्वको राजसञ्चेव तामसञ्च त्रिधा महान्।। ३४ प्रधानतत्त्वेन समं त्वचा बीजमिवावृतम्। वैकारिकस्तैजसञ्च भूतादिश्चैव तामसः ॥ ३५ त्रिविद्योऽयमहङ्कारो महत्तत्त्वादजायत । भूतेन्द्रियाणां हेतुस्त त्रिगुणत्वान्प्रहामुने । यथा प्रधानेन महान्महता स तथावृतः ॥ ३६ भूतादिस्तु विकुर्वाणः शब्दतन्मात्रकं ततः । ससर्व अब्दतन्यात्रादाकाशं शब्दलक्षणम् ॥ ३७ शब्दमात्रं तथाकाशं भूतादिः स समावृणोत् । आकाशस्तु विकुर्वाणः स्पर्शमात्रं ससर्जे ह ॥ ३८ बलवानभवद्वायुसास्य स्पन्नों गुणो मतः । आकारो शब्दमार्त्रं तु स्पर्शमार्त्रं समावृणोत् ॥ ३९ ततो वायुर्विकुर्वाणो रूपभात्रं ससर्जं हु। ज्योतिरुत्पद्यते वायोस्तद्भुपगुणमुच्यते ॥ ४० स्पर्शमात्रं तु वै वायु रूपपात्रं समायुणोत् । ज्योतिश्चापि विकुर्वाणं रसमात्रं ससर्जं ह ॥ ४१ सम्पर्वन्त ततोऽभांसि रसाधाराणि तानि च । रसमात्राणि चाम्भांसि रूपमात्रं समाकुणोत् ॥ ४२ विकुर्वाणानि चाम्पांसि गन्धमात्रं ससर्जिरे ।

न शान्ता नापि घोरास्ते न मूढाश्चाविशेषिणः ।

तैजसानीन्द्रियाण्याहर्देवा वैकारिका दश ।

एकादशं मनश्चात्र देवा वैकारिकाः स्पृताः ॥ ४७

साम्पावस्थारूप प्रधान जय चिळ्युके क्षेत्रज्ञरूपसे अधिष्रित हुआ हो उससे महतत्त्वकी उत्पति हुई ॥ ३३ ॥ उत्पन्न हुए सङ्गातो जायते तस्मातस्य गन्धो गुणो मतः ॥ ४३ तस्मिस्तस्मिस्तु तन्यात्रं तेन तन्यात्रता स्मृता ॥ ४४ तन्मात्राण्यविशेषाणि अविशेषास्ततो हि ते ॥ ४५ भूततन्मात्रसर्गोऽयमहङ्कारानु तामसान् ॥ ४६

महान्को प्रधानतस्तने आयुत किया; महत्तत्व साल्किक, राजस और तामस, भेदले तीन प्रकारका है। किन्तु जिस प्रकार बीज छिलकेसे समभावसे हंका रहता है देसे ही यह त्रिविध यहतस्य प्रधान-तत्त्वसे सम और व्याप्त है। फिर त्रिविध महवत्वसे ही वैकारिक (सात्त्विक) तैजस (राजस) और तामस भूतादि तीन प्रकारका अर्हकार उत्पन्न हुआ । हे महामुने ! यह तिनुणात्मक होनेसे भूत और इन्द्रिय आदिका कारण है और प्रधानसे जैसे महत्तत्व व्याप्त है, जैसे ही भक्तत्त्वसे बह (अहंकार) व्याप्त है ॥ ३४ -- ३६ ॥ भूतादि नामक तामस आहंक्यरने विकृत होकर शब्द-तन्मात्रा और उससे ज्ञब्द-गुणवाले आकाजको स्वना की 🛚 ३७ ॥ ४स धुतादि तापस अहंकारने शब्द-तन्प्रवारूप आकाशको व्याप्त क्षिया । फिर् [शब्द-तन्मात्रारूप] आकाशने विकृत होकर स्पर्दा-तन्पत्राको रचा॥३८॥ उस (स्पर्श-तन्मात्रा) से बलवान् बायु हुआ, इसका गुण स्पर्श माना गया है । शब्द-तन्मात्रारूप आकाराने स्पर्श-तन्मात्रावाले वायुको आवृत किया है।। ३९ ॥ फिर (स्पर्श-हन्यावारूप) वायुने विकृत होकर रूप-राष्प्रावाको सष्टि को। (रूप-तप्यातायुक्त)। वायुरी तेज उत्पन्न हुआ है, उसका गुण रूप कहा जाता है ॥ ४० ॥ स्पर्श-तन्यात्रारूप वायुने रूप-तन्यत्रायाले तेजको आजृत किया। फिर (रूप-तन्मात्रापयं) तेजने भी विकृत होकर रस-तन्पात्राकी रचना की ॥ ४१ ॥ उस (रस-तन्मात्रारूप) से रस-गुणवाला जल हुआ। रस- तन्मात्रात्राले उलको रूप-तन्त्रज्ञामय तेजने आयुत किया ॥ ४२ ॥ [स्स-तन्मात्रारूप् । जलने विकारको प्राप्त होकर, गन्ध-तन्धावाकी सृष्टि की, उससे पृथियो उत्पन्न हुई है जिसका गुण गन्ध माना जाता है।। ४३ ।। उस-उन आबद्धशादि पृतीमे तत्पाता है [अर्थात केवल उनके गुण इच्छादि ही हैं] इसलिये वे तन्यात्रा (गुणरूप) ही कहे गये हैं ॥ ४४ ॥ तन्यात्राओंमें विशेष भाव नहीं है इसलिये उनकी अविशेष संज्ञा है ॥ ४५ ॥ वे अविशेष तन्मात्राएँ शान्त, योर अथवा मृद् नहीं हैं [अर्थात् उनका सुख-दु:ख या मोहरूपसे अनुभव नहीं हो सकता] इस प्रकार तापस अङ्कारसे यह भूत-तन्यात्रारूप सर्ग हुआ है ॥ ४६ ॥ दस इन्द्रियाँ तैजस अर्थात राजस अङ्कारसे और उनके अधिष्ठाता देवता वैकारिक अर्थात् सात्विक

विष्णु ही समष्टि-व्यष्टिरूप, ब्रह्मादि जीवरूप तथा

हे द्विलक्षेष्ठ ! सर्गकारुके प्राप्त होनेपर गुणोंकी

महत्तत्त्वरूपसे स्थित है ॥ ३२ ॥

त्वक् चशुर्नासिका जिह्ना श्रोत्रमत्र च पञ्चमम् । शब्दादीनामवाप्तार्थं बुद्धियुक्तानि वै द्विज ॥ ४८ पांयुपस्थौ करौ पादौ वाक् च मैत्रेय पञ्चमी ।

विसर्गशिल्पगत्युक्ति कर्म तेषां च कथ्यते ॥ ४९

आकाशवायुतेजांसि सलिलं पृथिवी तथा ।

शब्दादिभिर्गुणैर्बह्मन्संयुक्तान्युत्तरोत्तरैः ॥ ५०

शान्ता घोराश्च मृहाश्च विशेषास्तेन ते स्पृताः ॥ ५१

नानाबीर्याः पृथम्भृतास्ततस्ते संहति विना ।

नाशक्कुबन्प्रजाः स्रष्टुमसमागस्य कुत्स्रशः ॥ ५२

समेत्यान्योन्यसंयोगं परस्परसमाश्रयाः । एकसङ्गातलक्ष्याञ्च सम्प्राप्यैक्यमशेषतः ॥ ५३

पुरुषाधिष्ठितस्वाच प्रधानानुप्रहेण च । महदाद्या विशेषान्ता हाण्डमुत्पादयन्ति ते ॥ ५४

तत्क्रमेण विवृद्धं सञ्जलबुद्बुद्धत्समम्। भृतेभ्योऽण्डं महाबुद्धे महत्तदुदकेशयम् ।

प्राकृतं ब्रह्मरूपस्य विष्णोः स्थानमनुत्तमम् ॥ ५५ तत्राव्यक्तस्वरूपोऽसौ व्यक्तरूपो जगत्पति: ।

विष्णुर्ब्रह्मस्वरूपेण स्वयमेव व्यवस्थितः ॥ ५६

मेरुरुल्बमभूतस्य जरायुश्च महीधराः । गर्भोदकं समुद्राश्च तस्यासन्सुमहात्मनः ॥ ५७

साद्रिद्वीपसमुद्राश्च सञ्चोतिलॉकसंग्रहः । तस्मित्रपडेऽभवद्विप्र सदेवासुरमानुषः ॥ ५८

वारिवह्न्यनिलाकाशैस्ततो भूतादिना बहिः ।

वृतं दशगुणैरण्डं भूतादिर्महता तथा ॥ ५९ अव्यक्तेनावृती ब्रह्मंस्तैः सर्वैः सहितो प्रहान् ।

एभिरावरणैरण्डं सप्तभिः प्राकृतैर्वृतम् । नारिकेलफलस्यान्तर्बीजं बाह्यद्रुरिय ॥ ६०

जुषन् रजो गुणं तत्र स्वयं विश्वेश्वरो हरिः ।

ब्रह्मा भूत्वास्य जगतो विसृष्टौ सम्प्रवर्तते ॥ ६१

अहंकारसे उत्पन्न हुए करे जाते हैं । इस प्रकार हन्द्रियोंके अधिष्ठाता दस देवता और ग्यारहवाँ मन वैकारिक (सालिक) हैं॥४७॥ है द्विज ! त्वक, चक्षु, नासिका,

जिद्धा और श्रोत—ये पाँचों बृद्धिकी सहस्थतासे शब्दादि जिपयोंको ग्रहण करनेवाली पॉच हानेन्द्रियाँ हैं ॥ ४८ ॥ हे

मैंत्रेय ! पायु (गुद्रा), उपस्थ (लिल्ल), इस्त, पाद और वाक — ये पाँच कमेंन्द्रियाँ हैं । इनके कमें [मरू-मृत्रका] ल्याम, शिल्प, मति और बचन बतलाये जाते हैं॥४९॥

हैं॥ ५० ॥ वे पाँचों मृत शान्त घोर और मृद्ध हैं [अर्थात्

आकाश, बायु, तेंज, जल और पृथिवी—ये पाँचों भृत उत्तरीत्तर (क्रमशः) शब्द-स्पर्श आदि पाँच गणोंसे एक

सुख, दुःख और मोहयुक्त हैं] अतः ये विशेष कहरूति है । ५१।

इन भूतोंमें पृथक्-गृथक् नाना शक्तियाँ हैं। अतः वे परस्पर पूर्णतया पिछे बिना संसारकी रचना नहीं कर सके ॥ ५२ ॥ इसलिये एक-दूसरेके आश्रय रहनेवाले और

एक ही समातकी उत्पत्तिके लक्ष्यवाले महत्तत्वसे लेकर विशेषपर्यन्त प्रकृतिके इन सभी विकासेने पुरुषसे आश्रिष्ठित होनेके कारण परस्पर मिलकार सर्वथा एक होकर प्रधान-

तत्त्वके अनुबहसे अण्डको उत्पत्ति की ॥ ५३-५४ ॥ है। महाब्द्धे ! जलके बुलकुलेके समान क्रमशः भूतीसे बद्धा हुआ वह गोलाकार और जलपर स्थित महान् अण्ड ब्रह्म (हिराप्यगर्भ) रूप विष्णुका अति उत्तम प्राकृत आधार

हुआ ॥ ५५ ॥ उसमें वे अन्यक्त-स्वरूप जगत्पति विष्णु व्यक्त हिरण्यगर्भरूपसे खयं ही विराजमान हुए ॥ ५६ ॥ उन महात्मा हिएल्यगर्भका सुमेर उल्ल (गर्भको र्वकनेवास्त्री (क्रिल्ली), अन्य पर्वत, जरायु (गर्भादाय) तथा स<u>मुद्</u>र

गर्भाशयस्य रस था । ५७॥ हे विज्ञ ! उस अण्डमें ही

पर्वत और द्वीपादिके सहित समुद्र, यह-गणके सहित सभ्पूर्ण क्षेत्र तथा देव, असुर और मनुष्य आदि विविध प्राणिवर्ग प्रकट हुए ॥ ५८ ॥ यह अण्ड पूर्व-पूर्वकी अपेक्षा दस-दस-मुण अधिक जल, अमि, वायु, आवरक और भूनादि अर्थात् तामस-अहंकारसे आवृत है तथा भूतात् महत्तत्त्वसे चिए तुआ है ॥ ५९ ॥ और इन सबके सहित यह

भहतत्त्व भी अञ्चल प्रधानसे आवृत है। इस प्रकार जैसे

नारियरूके फलका भीतरी बीज बाहरसे कितने ही छिन्टकोंसे ढैंका रहता है वैसे हो यह अण्ड इन सात प्राकृत आवरणोंसे घिरा हुआ है ॥ ६० ॥

उसमें स्थित हुए स्थयं विश्वेक्षर मगवान विष्णु

[🐣] परस्थर भिरूपेसे सभी भूत साचा, घोर और मूढ प्रतीत होते हैं. पृथक्-पृथक् तो पृथियी और खळ सान्त हैं; तेज और बाबु फोर है तथा आकाश मूद है।

सृष्टं च पात्यनुयुगं याद्यत्कल्पविकल्पना । सत्त्वभृद्धगवान्विष्णुरप्रमेवपराक्रमः 11 69 तमोद्रेकी च कल्पान्ते स्द्ररूपी जनार्दनः । **यैत्रेयास्त्रिलभूता**नि भक्षयत्यतिदारुणः ॥ ६३ भक्षयित्वा च भूतानि जगत्येकार्णवीकृते । नागपर्यद्वशयने शेते च परमेश्वरः ॥ ६४ प्रबुद्धश्च पुनः सृष्टिं करोति ब्रह्मरूपधृक् ॥ ६५ सृष्टिस्थित्यन्तकरणीं ब्रह्मविष्णुद्दिावात्मिकाम् ।

स संज्ञां याति भगवानेक एव जनार्दनः ॥ ६६ स्रष्टा सुजंति चात्पानं विष्णुः पारुवं च पाति च ।

उपसंद्धियते चानो संहर्ता च स्वयं प्रभुः ॥ ६७ पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाश एव च । सर्वेन्द्रियान्तःकरणं पुरुषाख्यं हि यज्ञगत् ॥ ६८

स एव सर्वभूतात्मा विश्वरूपो यतोऽव्ययः । सर्गाविकं तु तस्यैव भूतस्थमुपकारकम् ॥ ६९ स एव सृज्यः स च सर्गकर्ता

स एव पात्यति च पाल्यते च । ब्रह्माद्यवस्थाभिरशेषमृति-

निर्गुणस्याप्रमेवस्य

र्विच्युर्वरिष्ठो यरदो वरेण्यः ॥ ७०

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरा अध्याय

मह्मादिकी आयु और कालका स्वस्थ्य

श्रीभैत्रेष उवाच

शुद्धस्याय्यम्लात्मनः ।

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे भगवन् ! जो ब्रह्म निर्गुण,

अप्रमेय , शुद्ध और निर्मेखाला है उसका सर्गादिका कर्ता

कथं सर्गादिकर्तृत्वं ब्रह्मणोऽभ्युपगम्यते ॥ १ | होना कैसे सिद्ध हो सकता है ? ॥ १ ॥

मैत्रेथ ! फिर कल्पका अन्त होनेपर अति दारुण तम:-प्रधान रुद्ररूप धारण कर वे जनार्दन विष्णु ही समस्त भृतीका भक्षण कर छेते हैं॥ ६३ ॥ इस प्रकार समस्त मृतोंका भक्षण कर संसारको जल्ञ्मय करके वे परमेश्वर शेष-शब्दापर शयन करते हैं ॥ ६४ ॥ जगनेपर ब्रह्मारूप

ब्रह्मा होकर रजोगुणका आश्रय लेकर इस संसारकी रचनामें प्रवृत होते हैं।। ६१।। तथा रचना हो जानेपर

सत्त्वगुण-विशिष्ट अतुल पराक्रमी भगवान् विष्णु उसका

कल्पान्तपर्यन्त युग-युगमें पालन करते हैं॥६२॥ हे

होकर ये फिर जगतुकी रचना करते हैं ॥ ६५ ॥ वह एक हो भगवान् जनार्दन जगत्की सृष्टि, स्थिति और संहारके लिये ब्रह्मा, जिप्णु और शिव—६२ तीन संज्ञाओंको श्वारण करते

हैं ॥ ६६ ॥ वे प्रमु किच्नु सष्टा (बहा) होकर अपनी ही सृष्टि करते हैं, पालक विष्णु होकर पाल्यरूप अपना ही

पालन करते हैं और अन्तमें स्वयं ही संदारक (शिव) तथा स्वयं ही उपसंहत (लीन) होते हैं ॥ ६७॥ पृथिवी, जरू, तेज, वायु और आकाश तथा समस्त इन्द्रियाँ और

अन्तःकरण आदि जितना जगत् है सब पुरुषरूप है और क्योंकि वह अख्यय विष्णु ही विश्वरूप और सब भूतीके

अन्तरात्मा हैं, इसलिये ब्रह्मादि प्राणियोंमें स्थित सर्गादिक भी उन्होंके उपकारक हैं। [अर्थात् जिस प्रकार ऋक्जिंद्वारा किया हुआ हवन यजमानका उपकारक होता है, उसी तरह

परमात्माके रचे हुए समस्त प्राणियोद्वारा होनेवाली सृष्टि भी

उन्होंकी उपकारक है] ॥ ६८-६९ ॥ वे सर्वस्वरूप, श्रेष्ठ. वरदायक और वरेण्य (प्रार्थनाके योग्य) भगवान् विष्णृ ही महा। आदि अवस्थाओंद्वारा रचनेवाले हैं, वे ही रचे जाते हैं,

वे ही पालते हैं, वे ही पालित होते हैं तथा वे ही संहार करते

हैं [और ख़र्य ही संहत होते हैं] ॥ ७० ॥

퓢

X

6

श्रीपराशर उवाच

शक्तयः सर्वभावानामचिन्यज्ञानगोचराः । यतोऽतो ब्रह्मणस्तास्तु सर्गाद्या भावशक्तयः ।

भवन्ति तपतां श्रेष्ट पावकस्य यथोष्णता ॥

तक्षिबोध यथा सर्गे भगवान्सम्प्रवर्तते।

नारायणाख्यो भगवान्त्रह्या लोकपितामहः ॥

उत्पन्नः प्रोच्यते विद्वन्नित्यमेवोपचारतः॥

निजेन तस्य मानेन आयुर्वर्षशतं स्पृतम्।

तत्वराख्यं तदर्दं च परार्द्धपभिधीयते ॥

कालखरूपं विष्णोश्च यन्पयोक्तं तवानय । तेन तस्य निबोध त्वं परिमाणोपपादनम् ॥

अन्येषां चैव जन्तुनां चराणामचराश्च ये ।

भूभुभुत्सागरादीनामशेषाणां च सत्तम ॥

काष्ट्रा पञ्चदशाख्याता निमेषा मुनिसत्तम ।

काष्ट्रा त्रिंशत्कला त्रिंशत्कला मौहर्तिको विधि:॥ तावत्संख्यैरहोरात्रं मुहर्त्तैर्मानुषं स्पृतम् ।

अहोरात्राणि तावन्ति मासः पश्चद्वयात्मकः ॥ तैः षष्टभिरयनं वर्षं द्वेऽयने दक्षिणोत्तरे।

अयनं दक्षिणं रात्रिर्देवानामुत्तरं दिनम् ॥ १० दिव्यैर्वर्षसहस्रैस्त कृतत्रेतादिसंज्ञितम् । चतुर्युर्ग द्वादशभिस्तद्विभागं निबोध मे ॥ ११

चत्वारि श्रीणि है चैकं कुतादिष यथाक्रमम् । दिव्याब्दानां सहस्राणि युगेष्ट्राहः पुराविदः ॥ १२

तरामाणै: रातै: सन्ध्या पूर्वा तत्राभिधीयते ।

सन्ध्यांशश्चेव तत्तुल्यो युगस्यानन्तरो हि सः ॥ १३

सन्ध्यासन्ध्यांशयोरन्तर्यः कालो मुनिसत्तम । युगास्यः स तु विज्ञेयः कृतवेतादिसंज्ञितः ॥ १४

कृतं त्रेता द्वापरश्च कलिश्चैय चतुर्युगम्। प्रोच्यते तत्सहस्रं च ब्रह्मणो दिवसं मुने ॥ १५

ब्रह्मणो दिवसे ब्रह्मन्मनवस्तु चतुर्दश । भवन्ति परिमाणं च तेवां कालकृतं शृणु ॥ १६

सप्तर्षयः सुराः शको मनुस्तत्सुनवो नृपाः । एककाले हि सञ्चन्ते संह्रियन्ते च पूर्ववत् ॥ १७

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे तर्पाख्योमें श्रेष्ट मैत्रेय ! समस्त भाव-पदार्थीकी शक्तियाँ अचिन्द-ज्ञानकी

विषय होती है; [उनमें कोई युक्ति काम नहीं देती] अतः अग्निकी शक्ति उष्णताके समान ब्रह्मकी भी सर्गादि-रचनारूप इक्तियाँ स्वाभाविक हैं ॥ २ ॥ अब जिस प्रकार

नारायण नापक लोक-पितापह भगवान् ब्रह्माजी सृष्टिकी रचनामें प्रवृत्त होते हैं सो सुनो। हे विद्वन् ! वे सदा उपचारसे ही 'उत्पन्न हुए' कहलाते हैं ॥ ३-४ ॥ उनके

अपने परिमाणसे उनकी आयु सी क्वेंकी कही जाती है। उस (सौ वर्ष) का नाम पर है, उसका आधा पराई. कहलाता है ॥ ५ ॥

हे अन्य ! मैंने जो तुमसे विष्णुभगवानुका

कालस्वरूप कहा या उसीके द्वारा उस ब्रह्माकी तथा और भी जो पृथिबी, पर्वत, समुद्र आदि चराचर जीव हैं उनकी आयुका परिमाण किया जाता है ॥ ६-७ ॥ हे मुनिश्रेष्ट ! पन्द्रह निमेक्को काष्टा कहते हैं, तीस काष्टाकी एक करन

तथा तीस कलाका एक मुहर्त होता है ॥ ८ ॥ तीस मुहर्तका भनुष्यका एक दिन-रात कहा जाता है और उतने ही दिन-रातका दो पक्षयुक्त एक मास होता है ॥ ९ ॥ छः

महीनोंका एक अयन और दक्षिणायन तथा उत्तरायण दो अयन मिलकर एक वर्ष होता है। दक्षिणायन देवताओंकी राजि है और उत्तरायण दिन ॥ १० ॥ देवताओंके बारह हजार वर्षेकि सतयुग, बेता, द्वापर और कलियुग नामक चार युग

होते हैं। उनका अलग-अलग परिमाण मैं तुन्हें सुनाता

है ॥ ११ ॥ पुरातस्त्रके जाननेवाले सतयुग आदिका परिमाण क्रमशः चार, तीन, दो और एक हजार दिव्य वर्ष बतलाते है ॥ १२ ॥ प्रत्येक युगके पूर्व उतने ही सौ वर्षकी सम्ध्या बतायी जाती है और युगके पीछे उतने ही परिमाणवाले

सन्ध्यांश होते हैं [अर्थात् सतयुग आदिके पूर्व क्रमशः चार, तीन, दो और एक सौ दिव्य वर्षकी सम्ध्याएँ और इतने हो वर्षके सन्ध्यांका होते हैं] ॥ १३ ॥ हे मृतिश्रेष्ठ ! इन सन्ध्या और सन्ध्याशीके बीचका जितना काल होता है, उसे ही

सतयुग आदि नामवासे युग जानना चाहिये ॥ १४ ॥

हे भुने ! सतयुग, बेता, द्वापर और कॉल ये मिलकर चतुर्यम कहलाते हैं; ऐसे हजार चतुर्यमका ब्रह्माका एक दिन होता है ॥ १५ ॥ हे ब्रह्मन् ! ब्रह्माके एक दिनमें चौदह मनु होते हैं । उनका कालकृत परिमाण सुनो ॥ १६ ॥ सप्तर्षि. देवगण, इन्द्र, मनु और मनुके पुत्र राजालोग [पूर्व-

कल्पानुसार] एक ही कालमें रचे जाते हैं और एक ही

कारूमें उनका संदार किया जाता है ॥ १७ ॥ है सतम ! इजहतर चतुर्युगसे कुछ अधिक* कालका एक मन्यन्तर

होता है । यहाँ मनु और देवता आदिका कारू है ॥ १८०॥

इस प्रकार दिव्य वर्ष-गणनासे एक मन्त्रक्तरमें आठ लाख

बावन हजार वर्ष बताये जाते हैं ॥ १९ ॥ तथा है महामुने !

मानवी वर्ष-गणनाके अनुसार मन्वत्तरका परिमाण पूरे

तीस करोड़ सरसट लाख बीस हजार वर्ष है, इससे

अधिक नहीं ॥ २०-२१ ॥ इस कालका चौदह गुना

ब्रह्मका दिन होता है, इसके अनन्तर नैमित्तिक नामवास्त्र

जलने लगते हैं और महलेंकमें स्टनेबाले सिद्धगण अति

सन्तप्त होकर जनलोकको चले जाते हैं ॥ २३ ॥ इस प्रकार

त्रिलोकीके जलमय हो जानेपर जनलोकवासी योगियोद्वारा

ध्यान किये जाते हुए नारायणरूप कमलयोनि ब्रह्माजी

विलोकीके प्राससे तुप्त होकर दिनके बराबर ही

परिमाणवाली उस रात्रिमें शेषशय्यापर शयन करते हैं और उसके बीत जानेपर पुनः संसारकी सृष्टि करते

हैं ॥ २४-२५ ॥ इसी प्रकार (पक्ष, मास आदि) गणनासे

ब्रह्माका एक वर्ष और फिर सौ वर्ष होते हैं। ब्रह्माके सौ वर्ष

ही उस महात्मा (ब्रह्मा) की परमायु हैं॥ २६॥ हे

अनच ! उन ब्रह्माजीका एक परार्द्ध बीत चका है । उसके

अत्तमें पादा नामसे विख्यात महाकल्प हुआ था ॥ २७ ॥

हे द्विज ! इस समय वर्तमान उनके दूसरे परार्द्धका यह

उस समय भूलेंक, भूवलेंक और खलेंक तीनी

बाह्य-प्ररूप होता है ॥ २२ ॥

चतुर्युगाणां संख्याता साधिका होकसप्ततिः । मन्यन्तरं मनोः कालः सुरादीनां च सत्तम ॥ १८ अष्टौ शत सहस्राणि दिव्यया संख्यया सृतम् । द्विपञ्चाशत्त्रधान्यानि सहस्राण्यधिकानि तु ॥ १९ त्रिप्तत्कोट्यस्त सम्पूर्णाः संख्याताः संख्यया द्विज । सप्तपष्टिस्तथान्यानि नियुतानि पहासुने ॥ २० विंदातिस्तु सहस्राणि कालोऽयमधिकं विना । मन्यन्तरस्य सङ्खयेयं मानुषैर्वत्सरैर्द्धिज ॥ २१ चतुर्दशगुणो होष कालो ब्राह्ममहः स्मृतम् । ब्राह्मो नैमित्तिको नाम तस्यान्ते प्रतिसञ्चरः ॥ २२ तदा हि दहाते सर्व त्रैत्येक्यं भूभृंबादिकम् । जनं प्रयास्ति तापातां महर्लोकनिवासिनः ॥ २३ एकार्णवे तु त्रैलोक्ये ब्रह्मा नारायणात्मकः । भोगिशय्यां गतः शेते त्रैलोक्ययासबृहितः ॥ २४ जनस्यैयोगिभिदेवश्चित्त्यमानोऽकासम्भवः ।

तत्प्रमाणां हि तां रात्रिं तदन्ते सुजते पुनः ॥ २५ एवं तू ब्रह्मणो वर्षमेवं वर्षशतं च यत्। शतं हि तस्य वर्षाणां परमायुर्महात्मनः ॥ २६ एकमस्य व्यतीतं तु पराई ब्रह्मणोऽनघ । तस्यान्तेऽभून्यहाकल्पः पादा इत्यधिविश्रुतः ॥ २७ द्वितीयस्य परार्द्धस्य वर्तमानस्य वै द्विज ।

वासह इति कल्पोऽयं प्रथमः परिकीर्तितः ॥ २८

वाराह नामक पहला कल्प कहा गया है ॥ २८ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय

ब्रह्मजीकी उत्पत्ति वसहभगवानद्वास पृथिवीका उद्धार और ब्रह्मजीकी लोक-र्जना

श्रीमैत्रेय उतान

ब्रह्मा नारायणाख्योऽसो कल्पादो भगवान्यथा ।

श्रीमैत्रेय बोले-हे महानुने ! कल्पके आदिमें दारायणाख्य भगवान् बह्याजीने जिस प्रकार समस्त ् **सर्वभूतानि**्तदाचक्ष्वः महामुने ॥ १ | भूतोको रचना की यह आप वर्णन कीकिये ॥ १ ॥

इकहत्तर चतुर्युगके हिसाबसे चीदह पन्वत्तरोंमें १९४ चतुर्युग होते हैं और ब्रह्माके एक दिनमें एक हजार चतुर्युग होते हैं, अतः छः चतुर्युग और बचे। छः चतुर्युगन्त्र चौदहवाँ भाग कुछ कम पाँच हजार एक सौ तोन दिव्य वर्ष होता है, इस अकार एक मन्यन्तरमें इकहनर चतुर्यगके अतिरिक्त इतने दिव्य वर्थ और अधिक होते हैं।

विस्तारिताक्षियुगलो राजान्तःपुरयोषिताम् । नागरस्त्रीसमूहश्च द्रष्टुं न विरराम तम्॥ ५३ सस्यः परयतं कृष्णस्य मुख्यस्यरुणेक्षणम् । गजयुद्धकृतायासस्वेदाम्बुकणिकाचितम् ॥ ५४ विकासिशस्दम्भोजमवश्यायजलोक्षितम् । परिभूय स्थितं जन्म सफले क्रियतां दृशः ॥ ५५ श्रीवत्साङ्कं महद्भाम बालस्यैतद्विलोक्यताम् । विपक्षक्षपणं वक्षो भुजयुग्मं च भामिनि ॥ ५६ कि न पश्यसि दुम्धेन्दुमृणालध्वलाकृतिम् । बलभद्रमिमं नीलपरिधानमुपागतम् ॥ ५७ वल्गता मुष्टिकेनैव चाणूरेण तथा सस्ति । क्रीडतो बलभद्रस्य हरेर्हास्यं विलोक्यताम् ॥ ५८ सस्यः परयत चाणूरं नियुद्धार्थमयं हरिः । समुपैति न सन्यत्र कि वृद्धा मुक्तकारिणः ॥ ५९ क्र योवनोन्धुखीभूतसुकुमारतनुर्हरिः । क वज्रकठिनाभोगशरीरोऽयं महासुरः ॥ ६० इमी सुललितेरङ्गेर्वतिते नवयोवनी। दैतेयमल्लाश्चाणूरप्रमुखास्त्वतिदासणाः ॥ ६१ नियुद्धप्राक्षिकानां तु महानेष व्यतिक्रमः। यद्वालक्तिनोर्युद्धं मध्यस्थैस्समुपेक्ष्यते ॥ ६२ श्रीपराञर उवाच इत्यं पुरस्त्रीलोकस्य वदतशालय-भुवम्। वयस्य बद्धकक्ष्योऽन्तर्जनस्य भगवान्हरिः ॥ ६३ बलभद्रोऽपि चास्फोट्य ववल्ग ललितं तथा । पदे पदे तथा भूमियंत्र शीर्णा तदझ्तम् ॥ ६४ चाणूरेण ततः कृष्णो युयुधेऽमितविक्रमः । नियुद्धकुरालो दैत्यो बलभद्रेण मुष्टिकः ॥ ६५

सन्निपातावधूतैस्तु चाणूरेण समं हरिः।

प्रक्षेपणैर्मृष्टिभिश्च कीलबज्रनिपातनैः ॥ ६६

कारण वसुदेवजी भी मानो आयी हुई जराको छोड़कर फिरसे नवयुवक-से हो गये॥ ५२॥

राजाके अन्तःपुरकी स्त्रियाँ तथा कगर निवासिनी

महिलाएँ भी उन्हें एकटक देखते-देखते उपराम न हुई ।। ५३ ॥ [वे परस्पर कहने लगीं—] "अरी सिखयो ! अरुणनयनसे युक्त श्रीकृष्णचन्द्रका अति सुन्दर मुख तो देखों, जो कुवलयापोडके साथ युद्ध करनेके परिश्रमसे खेद जिन्दुपूर्ण होकर हिम-कण-सिश्चित शरकालीन प्रयुक्त कमलको लिखत कर रहा है। अरी ! इसका दर्शन करके अपने नेत्रीका होना सफल कर लो" ॥ ५४-५५॥

[एक स्त्री बोली —] "है भाषिनि ! इस बालकका यह लक्ष्मी आदिका आश्रयभूत श्रीयत्सोकयुक्त वक्षःस्थल तथा शत्रुओंको पराजित करनेवाली इसकी दोनी भुजाएँ तो देखो !" ॥ ५६ ॥

[दूसरी॰—]''अरी ! क्या तुम्न नीलाम्बर धारण किये इन दुग्ध, चन्द्र अथवा कमलनालके समान शुभवर्ण बलदेवजीको आते हुए नहीं देखती हो ?''॥ ५७॥

[तीसरी॰—]''अरी सिखयो ! [अखाड़ेमें] चकर देकर घूमनेवाले चाणूर और मुष्टिकके साथ क्रीडा करते हुए वलभद्र तथा कृष्णका हैंसना देख स्त्री ।'' ॥ ५८ ॥ [चौद्यी॰—]''हाथ ! सिखयो ! देखो तो चाणुरसे

लड़नेके लिये ये हरि आगे बढ़ रहे हैं; क्या इन्हें खुड़ानेवालें कोई भी बड़े-बूढ़े यहाँ नहीं हैं ?''॥ ५९॥ 'कहाँ तो यौकनमें प्रवेश करनेवाले मुकुमार-इसिर इयाम और कहाँ वक्षके समान कठोर इसिरवाला यह महान् असुर!' ॥ ६०॥ ये दोनों नवयुषक तो बड़े ही सुकुमार इसिरवाले हैं, [किंतु इनके प्रतिपक्षी] ये चाणूर आदि दैत्य मल्ल अत्यन्त दारुण हैं॥ ६९॥ मल्लयुद्धके परीक्षक गणींका यह बहुत बड़ा अन्याय है जो वे मध्यस्य होकर भी इन बालक और बलवान् मल्लोंके युद्धको उपेक्षा कर रहे हैं॥ ६२॥

श्रीपराशस्त्री बोले — नगरकी सियोंक इस प्रकार वार्तालाप करते समय भगवान् कृष्णचन्द्र अपनी कपर कसकर उन समल दर्शकोंक बीचमें पृथिवीको कम्पायमान करते हुए रङ्गपूमिमें कृद पड़े ॥ ६३ ॥ श्रीबलभद्रजा भी अपने भुजदण्डोको ठोकते हुए अति मनोहर भावसे उछलने लगे । उस समय उनके पद-पद्धर पृथिवी नहीं फटी, वड़ी बड़ा आक्षर्य है ॥ ६४ ॥

तदननर अभित-विक्रम कृष्णचन्द्र चाणूरके साथ और इन्द्रयुद्धकुशल राक्षस मृष्टिक वलभद्रके साथ युद्ध करने लगे ॥ ६५ ॥ कृष्णचन्द्र चाणूरके साथ परस्पर मिङ्कर,

भवतो यत्परं तत्त्वं तन्न जानाति कश्चन । अवतारेषु यहूपं तदर्जन्ति दिवौकसः॥ १७ त्वामाराध्य परं ब्रह्म याता मुक्ति मुमुक्षवः । वासुदेवमनाराध्य को मोक्षं सपवापयति ॥ १८ यत्किञ्चित्पनसा प्राह्मं बद्धाह्मं चक्षुरादिभिः । बुद्ध्या च यत्परिच्छेद्यं तद्रुपमस्त्रिलं तव ॥ १९ त्वन्ययाहं त्वदाधारा त्वत्सृष्टा त्वत्समाश्रया । माधवीमिति स्त्रेकोऽयमभिष्यते ततो हि माम् ॥ २० जयार्त्वलज्ञानमय जय स्थूलमयाव्ययः। जयाऽनन्त जयाव्यक्त जय व्यक्तमय प्रभो ॥ २१ परापरात्मन्विश्वात्मञ्जय यज्ञपतेऽनय । त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमोङ्कारस्त्वमग्रयः ॥ २२ त्वं वेदास्त्वं तदङ्गानि त्वं यज्ञपुरुषो हरे। सूर्यादयो प्रहास्तारा नक्षत्राण्यस्तिलं जगत् ॥ २३ मूर्तामूर्तेमदुर्यं च दुर्यं च पुरुषोत्तम । ययोक्तं यस नैवोक्तं मयात्र परमेश्वर । तत्सर्वं त्वं नमस्तुभ्यं भूयो भूयो नमो नमः ॥ २४ श्रीपराशर उदाच एवं संस्तूयमानस्तु पृथिव्या घरणीधरः । सामस्वरध्वनिः श्रीमाञ्चगर्ज परिधर्धरम् ॥ २५ ततः समुस्क्षिप्य धरां स्वदृष्ट्या महावराहः स्फुटपरालोचनः । रसातलादुत्पलपत्रसन्निभः समुखितो नील इवाचलो महान् ॥ २६ उत्तिष्ठता तेन भुखानिलाहतं तसम्भवाम्भो जनलोकसंश्रयान् । प्रश्लालयामास हि तान्महाद्युतीन् सनन्दनादीनपकल्पपान् मुनीन् ॥ २७ प्रयान्ति तोयानि खुराप्रविक्षत-

रसातलेऽधः कृतशब्दसन्तति ।

सिद्धा जने ये नियता वसन्ति ॥ २८

श्वासानिलास्ताः परितः प्रचान्ति

हैं ॥ १६ ॥ हे प्रभो ! आफ्का जो परतस्व है उसे तो कोई भी नहीं जानता; अतः आपका जो रूप अवतारोंमें प्रकट होता है उसोकी देवगण पूजा करते हैं॥ १७॥ आप परब्रह्मकी ही आराधना करके मुमुक्षुजन मुक्त होते हैं। थला वासदेवकी आराधना किये बिना कौन मोक्ष प्राप्त कर सकता है ? ॥ १८ ॥ मनसे जो कुछ ग्रहण (संकल्प) किया जाता है, चक्षु आदि इन्द्रियोंसे जो कुछ प्रकृण (विषय) करनेयोग्य है, बुद्धिद्वारा जो कुछ विचारणीय है वह सब आपहीका रूप है।।१९।। हे प्रभी ! मैं आपहीका रूप हैं, आपहीके आश्रित हूँ और आपहीके द्वारा रची गयी है तथा आपहीकी दारणमें हैं। इसीलिये लोकमें मुझे 'माधवी' भी कहते हैं ॥ २०॥ हे सम्पूर्ण ज्ञानमय ! हे स्थूलमय ! हे अव्यय ! आपको जय हो । हे अनन्त ! हे अव्यक्त ! हे व्यक्तमय प्रभो ! आपकी जय हो ॥ २१ ॥ हे परापर-स्वरूप ! हे विश्वासन् ! हे यञ्चपते । हे अनम ! आपकी जय हो । हे प्रभी ! आप ही यञ्ज हैं, आप हो वचदकार हैं,आप ही ओंकार हैं और आप ही (आहवनीयादि) अग्नियाँ हैं ॥ २२ ॥ हे हरे । आप ही वेद, वेदांग और यज्ञपुरुष हैं तथा सुर्य आदि यह, तारे, नक्षत्र और सम्पूर्ण जगत् भी आप ही हैं॥ २३॥ है पुरुषोत्तम ! हे परमेश्वर ! मूर्त-अमूर्त, दुश्य-अदृश्य तथा जो कुछ मैंने कहा है और जो नहीं कहा, वह सब आप ही हैं। अतः आपको नमस्कार है, बारम्बार नमस्कार है ॥ २४ ॥ श्रीपराशरजी बोले—पृथिवीद्वारा इस प्रकार स्तृति किये जानेपर सामस्वर ही जिनकी ध्वनि है उन भगवान् धरणीधरने घर्षर शब्दसे गर्जना की ॥ २५ ॥ फिर विकसित कमलके समान नेत्रीबाले उन महावगहने अपनी डाढ़ोंसे पृथिवीको उठा लिया और वे कमल-दलके समान इयाम तथा नीलाचलके सद्दा विद्यालकाय भगवान् रसातलसे बाहर निकले ॥ २६ ॥ निकलते समय उनके मुखके शाससे उछलते हुए जलने जनलोकमें रहनेवाले यहातेजस्वी और निष्पाप सनन्दनादि मुनीश्चरीको मिगी दिया ॥ २७ ॥ जरू बड़ा शब्द करता हुआ उनके खुरीसे विदीर्ण हुए रसातलमें नीचेकी ओर जाने लगा और जनलोकमें रहनेवाले सिद्धगण उनके श्वास-वायुसे

हे गोविन्द् । सबको भक्षणकर अन्तर्मे आप ही मनीविजनोद्वारा चिन्तित होते हुए जलमें शयन करते तं

उत्तिष्ठतस्तस्य जलाईकक्षे-र्महावराहस्य महा विगृह्य । विधुन्वतो बेदमयं शरीरं

रोमान्तरस्था मुनवः स्तुवन्ति ॥ २९ तृष्ट्रवस्तोषपरीतचेतसो

लोके जने ये निवसन्ति योगिनः ।

सनन्दनाद्या ह्यतिनप्रकन्धरा धराधरं धीरतरोद्धतेक्षणम् ॥ ३०

जयेश्वराणां परमेश केशव

प्रभो गदाशङ्खधरासिचक्रधृक्। प्रसृतिनाशस्थितिहेत्रीश्वर-

स्त्वमेव नान्यत्परमं च यत्पदम् ॥ ३१ पादेषु वेदास्तव यूपदेष्ट

दुन्तेषु यज्ञाश्चितयश्च वक्त्रे । ह्ताशजिह्नोऽसि तनूरुहाणि

दर्भाः प्रभो यज्ञपुर्मास्त्वमेव ॥ ३२ विल्प्रेचने राज्यहुनी महात्य-न्सर्वाश्रयं ब्रह्म घरं दिगरस्ते।

सुक्तान्यशेयाणि सटाकलापो

ब्राणं समस्तानि हवीपि देव ॥ ३३

ख्कतुण्ड सामस्वरधीरनाव प्राप्वंशकायाखिलसत्रसन्धे । पूर्तेष्ट्रधर्मश्रवणोऽसि देव

सनातनात्म-भगवन्त्रसीद 11 3K पदक्रमाकान्तभूवं भवन्त-

मादिस्थितं चाक्षर विश्वमूर्ते । विश्वस्य विद्यः परमेश्वरोऽसि

प्रसीद नाथोऽसि परावरस्य ॥ ३५ दृष्टाप्रविन्यस्तमशेषमेत-

द्धमण्डलं नाथ विभाव्यते ते। पद्मवनं विलयं विगाहतः

सरोजिनीपत्रमिवोदपङ्कम्

द्यावापृथिव्योरतुलप्रभाव यदन्तरं तद्वपुषा तबैव ।

11 3 8

व्याप्तं जगद्व्याप्तिसमर्थदीप्ते

कुक्षि जरूमें भीगी हुई है वे महावराह जिस समय अपने वेदमय शरीरको कँपाते हुए पृथिवीको लेकर बाहर निकले उस समय उनकी रोमावलीमें स्थित मुन्जिन स्तृति करने लपे ॥ २९ ॥ उन निस्हांक और उन्नत दृष्टिवाले धराधर

विक्षिप्त होकर इधर-उधर भागने रूगे ॥ २८ ॥ जिनकी

भगवानुकी जनलोकमें रहनेवाले सनन्दनादि योगीश्वरीने प्रसन्निच्चसे अति नद्यतापूर्वक सिर झुकाकर इस प्रकार स्तुति की ॥ ३० ॥

'हे बहादि ईश्वरोंके भी परम ईश्वर ! हे केशव ! हे इंख-गदाधर । हे खड़-चक्रधारी प्रभो ! आपकी जय हो । आप ही संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और नाशके कारण

है, तथा आप ही ईश्वर हैं और जिसे परम पद कहते हैं वह भी आपसे अतिरिक्त और कुछ नहीं है।। ३१ ॥ है युपरूपी डाहोंबाले प्रभी ! आप ही यहपुरुष है । आपके चरणोंमें चारों बेद हैं, दाँतोंमें यज्ञ है, मुखमें [श्येन चित

तथा कुशाएँ रोमाविल है ॥ ३२ ॥ हे महासान् ! रात और दिन आपके नेत्र हैं तथा सबका आधारभूत परब्रह्म आपका सिर है। हे देव ! बैण्यब आदि समस्त सुक्त

आदि | चितियाँ हैं । हुताशन (यज्ञाप्रि) आपकी जिहा है

आपके सटाकलाप (स्कन्धके रोम-गुच्छ) हैं और समार हवि आपके प्राण है।। ३३ ॥ हे प्रमो ! स्नुक आपका तुष्ड (थूथनी) है, सामस्वर धीर-गम्भीर शब्द है, प्राप्वेश (यजमानगृह) शरीर है तथा सत्र शरीरकी

सन्धियाँ हैं। हे देव ! इष्ट (श्रीत) और पूर्व (स्पर्ता) धर्म आपके कान हैं। हे नित्यखरूप भगवन् ! प्रसन्न होड्ये ॥ ३४ ॥ हे अक्षर ! हे बिद्यमुर्ते ! अपने पाद-प्रहारसे भूमण्डलको प्याप्त करनेवासे आएको हम विश्वके आदि-

कारण समझते हैं । आप सम्पूर्ण चराचर जगत्के परमेश्वर और नाथ है; अतः प्रसन्न होइये॥ ३५॥ हे नाथ ! आपकी डाढ़ोंचर रखा हुआ यह सम्पूर्ण भूभण्डल ऐसा प्रतीत होता है मानो कमळवनको रॉदते हुए गजराजके

दाँतीसे कोई कीचड़में सना हुआ कमलका पता लगा हो ॥ ३६ ॥ हे अनुपम प्रभावकारी प्रभो ! पृथिवी और आकाशके बीचमें जितना अन्तर है वह आपके शरीरसे ही व्याप्त है। हे विश्वको व्याप्त करनेमें समर्थ तेजयुक्त

हिताय विश्वस्य विभो भव त्वम् ॥ ३७ | प्रभो ! आप विश्वका कल्याण कीजिये ॥ ३७ ॥

परमार्थस्त्वमेवैको नान्योऽस्ति जगतः पते । तवैष महिमा येन व्याप्तमेतचराचरम् ॥ ३८ यदेतद् दुश्यते मूर्तमेतन्ज्ञानात्मनस्तव । भ्रान्तिज्ञानेन पश्यन्ति जगद्रुपमयोगिनः ॥ ३९ ज्ञानस्वरूपमस्विलं जगदेतदबुद्धयः । अर्थस्वरूपं परयन्तो भ्राप्यन्ते पोहसप्पृत्वे ॥ ४० ये तु ज्ञानविदः शुद्धचेतसस्तेऽस्तिलं जगत् । ज्ञानात्मकं प्रपञ्चन्ति त्वद्रूपं परमेश्वर ॥ ४१ प्रसीद सर्व सर्वात्यन्वासाय जगतापिमाम् । उद्धरोर्वीममेयात्मञ्जन्नो देहाञ्जलोचन ॥ ४२ सत्त्वोद्रिक्तेऽसि भगवन् गोविन्द् पृष्ठिवीपिमाम् । समुद्धर भवायेश शन्नो देहाब्जलीचन ॥ ४३ सर्गप्रवृत्तिर्भवतो जगतामुपकारिणी । भवत्वेषा नमस्तेऽस्तु रात्रो देहाब्जलोचन ॥ ४४ श्रीपराद्य उद्याच

एवं संस्तूयमानस्तु परमात्मा महीधरः । उजहार क्षिति क्षिप्रं न्यस्तवांश्च महाष्पसि ॥ ४५ तस्योपरि जलौधस्य महती नौरिव स्थिता । विततत्वात् देहस्य न मही याति सम्प्रवम् ॥ ४६ ततः श्चितिं समो कृत्वा पृष्टिच्यां सोऽविनोद्रिरीन् । यथाविभागं भगवाननादिः परमेश्वरः ॥ ४७ प्राक्सर्गदन्धानस्त्रिलान्पर्वतान्पृश्चिवीतले अमोधेन प्रभावेण ससर्जामोधवाञ्चितः ॥ ४८ भृविभागं ततः कृत्वा सप्तद्वीपान्यथातथम् । भूगद्यांश्चत्रो लोकान्यूर्ववत्समकल्पयत् ॥ ४९ ब्रह्मरूपधरो देवस्ततोऽसौ रजसा वृतः । चकार सृष्टि भगवांशतुर्वक्त्रधरो हरि: ॥ ५० निमित्तमात्रमेवाऽसौ सुज्यानी सर्गकर्मणि । प्रधानकारणीभूता बतो वै सृज्यशक्तयः ॥ ५१ निमित्तमात्रं मुक्त्यैवं नान्यत्किञ्चिद्येक्षते । नीयते तपतां श्रेष्ठ स्वशक्त्या वस्तु वस्तुताम् ॥ ५२

दे जगत्यते । परमार्थ (सत्य बस्तु) तो एकमात्र आप ही है, आपके अतिरिक्त और कोई भी नहीं है। यह आपकी ही महिमा (माया) है जिससे यह सम्पूर्ण चराचर जगत क्याप्त है ॥ ३८ ॥ यह जो कुछ भी मूर्तिमान् जगत् दिखायो देता है जिल्ह्यरूप आपहीका रूप है। अजितेन्द्रिय लोग भ्रमसे हसे जगत्-रूप देखते हैं ॥ ३९ ॥ इस एम्पूर्ण ज्ञान-स्वरूप जगत्की वृद्धिहोन लोग अर्थरूप देखते हैं, अतः वे निरन्तर मोहपय संसार-सागरमें भटका करते हैं ॥ ४० ॥ हे परमेश्वर ! जो लोग शुद्धचित्त और विज्ञानवेत्ता है वे इस सम्पूर्ण संसारको आपका अलारमक स्वरूप ही देखते हैं ॥ ४१ ॥ हे सर्व ! हे सर्वाटमन् ! प्रसन्न होइये । हे अप्रमेषात्मन् ! हे कमलनयन ! संसारके निवासके टिये पृथियोका उद्धार करके इनको शान्ति प्रदान कीजिये ॥ ४२ ॥ है भगवन् ! हे गोविन्द ! इस समय आप सत्त्वप्रधान है; अतः हे ईश ! जगतके उद्भवके लिये आप इस पृथिवीका उद्धार कीविये और हे कमलनयन ! हमको शास्ति प्रदान कोजिये ॥ ४३ ॥ आयके द्वारा यह रागंकी प्रवृत्ति संसारका उपकार करनेवाली हो। हे कमलनयन ! आपको नमस्कार है, आप हमको शाला प्रदान कौजिये ॥ ४४ ॥ **श्रीपराञ्चरजी खोले — इ**स प्रकार स्तुति किये जानेपर प्रथिकोको भारण करनेवाले परमात्मा वराहजीने उसे शीध ही उठाकर अपार जलके रूपर स्थापित कर दिया ॥ ४५ ॥ उस जलसमृदके ऊपर वह एक बहुत बड़ी नौकाके समान स्थित है और वहत विस्तृत आकार होनेके कारण उसमें डुवती नहीं है ॥ ४६ ॥ फिर उन अनादि परमेश्वरने पृथियोकी समरास्ट कर उसपर जहाँ-तहाँ पर्वतीको विभाग करके स्थापित कर दिया ॥ ४७ ॥ सलासंकल्प भगवान्त्रे अपने अयोध प्रभावरी पूर्वकल्पके अन्तमें दग्ध हुए समस्त पर्वतीको पृथिवी-तलपर यथास्थान रच दियो॥ ४८॥ तदनसर उन्होंने सप्रद्वीपादि-क्रमसे पृथिबीका यथायोग्य विभाग कर भूलीकादि चर्चा लोकोको पूर्ववत् कल्पना कर दी ॥ ४९ ॥ फिर उन भगवान् हरिने रजोगुणसे युक्त हो चतुर्मस्रधारी ब्रह्मारूप धारण कर सृष्टिकी रचना की ॥ ५० ॥ सृष्टिकी रचनापै भगवान् तो केवङ निभित्तमात्र ही हैं, क्योंकि उसकी प्रधान कारण तो सुज्य पदाश्रोंकी शक्तियाँ ही है ॥ ५१ ॥ है। वपस्वियोमें श्रेष्ठ मैत्रेय ! वस्तुओकी रचनामे निमित्तमात्रको छोड़कर और किसी बातको आवड्यकता भी नहीं है, क्योंकि वस्तु तो अपनी ही [परिणाम] शक्तिसे वस्तुता

(स्थुलरूपता) को प्राप्त हो जाती है ॥ ५२ ॥

पाँचवाँ अध्याय

अविद्यादि विविध सर्गोका वर्णन

श्रीमेनेय उदाच

यथा ससर्जे देवोऽसौ देवर्षिपितृदानवान् । मनुष्यतियंग्वृक्षादीन्भृव्योमसलिलौकसः यद्गणं यत्त्वभावं च यद्गुपं च जगद्द्विज । सर्गादौ सृष्टवान्त्रह्मा तन्पमाचक्ष्व कृत्स्नज्ञः ॥

श्रीपराहार उवाच

मैत्रेय कथयाम्येतच्छ्रणुष्ट्र सुसमाहितः। यथा ससर्जं देवोऽसौ देवादीनसिलान्विभुः ॥

सृष्टिं चिन्तयतस्तस्य कल्पादिषु यथा पुरा ! अबुद्धिपूर्वकः सर्गः प्रादुर्भृतस्तमोमयः॥

तमो मोहो महामोहस्तामिस्रो हान्धसंज्ञितः । अविद्या पञ्चपर्वेषा प्रादुर्भृता महात्मनः ॥

पञ्चधाऽवस्थितः सर्गो ध्यायतोऽप्रतिबोधवान् । बहिरन्तोऽप्रकाशश्च संवृतात्मा नगात्मकः ॥

मुख्या नगा यतः प्रोक्ता मुख्यसर्गस्ततस्त्वयम् ॥ 9

तं दुष्टाऽसाधकं सर्गममन्यद्परं पुनः॥ L तस्याभिध्यायतः सर्गस्तिर्यक्स्रोताभ्यवर्ततः।

यस्मात्तिर्यक्षप्रवृत्तिस्स तिर्यक्रुस्रोतास्ततः स्मृतः ॥

पश्चादयस्ते विख्यातास्तमः प्रांचा ह्यवेदिनः । उत्पथयाहिणश्चैव तेऽज्ञाने ज्ञानमानिनः ॥ १०

अहङ्कृता अहम्माना अष्टाविशद्वधात्मकाः।

अन्तः प्रकाशास्ते सर्वे आवृताश्च परस्परम् ॥ ११

* सांस्य-कारिकामे अट्टाईम वधीका वर्णन इस प्रकार किया है---

व्होंबंपर्यवातृष्टिसरहेनाम् ॥ सह वृद्धिवर्षस्यातिम्हिणाः । सप्तदश एकाद सन्द्रयवधाः **ুখা** प्रकृत्युक्तदासभारकभाग्यास्थाः । बाह्या विषयोदस्थात् प्रश्च व सव तृष्ट्योऽभिमताः ॥ <u>आध्यातिगम्पञ्चतस्यः</u>

Ę

दुःस्क्रियातास्त्रयः सुहत्प्राप्तिः । दानश **बिद्धमा**ज्य सिद्धः पुर्वे ज्ञुकाशियम् ॥ शब्दाउथ्ययन

·धारह इन्द्रियनप और तृष्टि तथा सिद्धिके विपर्ययसे सत्रह युद्धि-नथ—ये कुल अद्राईस वप अञ्चक्ति कहलाते हैं। प्रकृति,

उपादान, उत्तर और भाग्य नामक चार आभ्यात्मिक और पाँची झानेन्द्रियोंक बाह्य विषयोंक निवृत हो जानेसे पाँच बाह्य — इस प्रकार

श्रीमैत्रेयजी योरुं—हे द्विजराज ! सर्गके आदियें भगवान् ब्रह्माजीने पृथिवी, आकास और जल आदिमें रहनैवाले देव, ऋषि, पितृगण, दजव, मनुष्य, तिर्यक् और वृक्षारिको जिस प्रकार रचा तथा जैसे गुण, स्वचाव और रूपवाले जगत्की

रचन की यह सब आए मुझसे कहिये ॥ १-२ ॥ श्रीपराशस्त्री कोले--हे मैन्नेय ! भगवान् विभूने

जिस प्रकार इस सर्गकी रचना की वह मैं तुमसे कहता हैं; सावधान होकर सुनो ॥ ३ ॥ सर्पके आदिमें ब्रह्मजीके पूर्ववत् सृष्टिका चिन्तन करनेपर पहले अबुद्धिपूर्वक

[अर्थात् पहले-पहल असावधानी हो जानेसे] तमोगुणी सृष्टिका आविर्भाव हुआ ॥ ४ ॥ उस महात्मासे प्रथम तम

(अञ्चान), मोह, महामोह (भोगेच्छा), तामिख (ऋोध)

और अञ्चलमिस (अधिनिवेदा) नामक पत्रपर्वा (पाँच प्रकारकी) अविद्या उत्पन्न हुई॥५॥ उसके ध्यान

करनेपर ज्ञानसून्य, बाहर-भौतरसे तमोमय और जड नगादि (बृक्ष-गुल्म-छता-बीस्त्-तृण) रूप

प्रकारका सर्ग हुआ । ६ ॥ [बराहजीहारा सर्वप्रथम स्थापित होनेके कारण | नगादिको मुख्य कहा गया है,

इसक्तिये यह सर्ग भी युख्य सर्ग कहरूरता है ॥ ७ ॥ उस सुष्टिको पुरुषार्थकी असाधिका देखकर उन्होंने

फिर अन्य सर्गके लिये भ्यान किया तो तिर्यंक्-स्रोत-सृष्टि उत्पन्न हुई । यह सर्ग [चायुके समान] तिरछा चलनेवाला है

उस्रुक्तिये तियंक्-जोत कहसाता है ॥ ८-९ ॥ ये पर्।, पक्षी आदि जमसे प्रसिद्ध हैं — और प्रायः तमोमय (अज्ञानी),

विवेक्स्तित अनुचित मार्गका अवलम्बन करनेवाले और विपरीत ज्ञानको ही यथार्थ ज्ञान माननेवाले होते हैं। ये सब

अहंकारो, अभिमानी, अद्वाईस वधीसे युक्त कालरिक सुख आदिको ही पूर्णतया समझनेवाले और परस्पर एक-

दुसरेकी प्रवृत्तिको न जाननेवाले होते है ॥ १०-११ ॥

तमप्यसाधकं मत्वा ध्यावतोऽन्यस्ततोऽभवत् । <u>कर्ध्वस्रोतास्तृतीयस्तु</u> सात्त्विकोर्ध्वमवर्ततः ॥ १२ ते सुखप्रीतिबहुला बहिरन्तस्त्वनावृताः। प्रकाशा बहिरन्तश्च ऊर्ध्वस्रोतोद्भवाः स्पृताः ॥ १३ तृष्टात्पनस्तुतीयस्तु देवसर्गस्तु स स्पृतः। तस्मिन्सर्गेऽभवत्प्रीतिर्निच्यत्रे ब्रह्मणस्तदा ॥ १४ ततोऽन्यं स तदा दथ्यौ साधकं सर्गमुक्तपम् । असाधकांस्तु ताञ्जात्वा मुख्यसर्गादिसम्भवान् ॥ १५ तथाभिध्यायतस्तस्य सत्याभिष्यायिनस्ततः ।

प्रादुर्बभूव चाव्यक्ताद्वीक्स्रोतास्तु साधकः ॥ १६ यस्मादर्वाग्व्यवर्तन्त ततोऽर्वाक्कोतसस्तु ते । ते च प्रकाशबहुलास्तमोद्रिका रजोऽधिकाः ॥ १७

प्रकाशा बहिरनाश्च मनुष्याः साधकास्तु ते ॥ १८ इत्येते कथिताः सर्गाः षडत्र मुनिसत्तम । प्रथमो पहत: सर्गो विज्ञेयो ब्रह्मणस्तु स: ॥ १९

तस्मात्ते दुःखबहुला भूयोभूयश्च कारिणः ।

तन्यात्राणां द्वितीयश्च भूतसर्गों हि स स्मृतः । वैकारिकसृतीयस्तु सर्ग ऐन्द्रियकः स्मृतः ॥ २० इत्येव प्राकृतः सर्गः सम्भृतो बृद्धिपूर्वकः । मुख्यसर्गश्चनुर्थस्तु मुख्या वै स्थावराः स्मृताः ॥ २१

कुल नौ तृष्टियों हैं तथा ऊहा, राज्य, अभ्ययन, [आभ्यात्मिक, आधिभीतिक और अधिदैविक) तीन दुःसविधात, सुहस्राप्ति और दान—ये आठ सिद्धियाँ है। ये [इन्द्रियाशक्ति, तृष्टि, सिद्धिरूप] तीनी वध मुक्तिसे पूर्व विश्वरूप है। अञ्चल-विपरत्वादिसे लेकर पागलपनतक मनसहित स्वारह इन्द्रियोक्ट विपरीत अवस्थाएँ स्वारह इन्द्रियवध है।

आत प्रकारको प्रकृतिमेशे किसोमे चित्रका एव हो जानेसे अपनेको भुक मान छेना 'प्रकृति' नमवाछी तुष्टि है। संन्याससे ही अपनेको कृतार्थ मान रहेना 'उपादाम' नामको तृष्टि है। समय आनेपर स्वयं हो सिद्धि रहण हो जायगी, ध्यानादि केशकी क्या

उनसे उपराम हो जाना बाह्य लुष्टियाँ है। शब्दादि बाह्य विधय पाँच हैं, इसल्यिये बाह्य तृष्टियाँ भी पाँच ही है। इस प्रकार कुल नौ तहियाँ हैं।

चित्तन करनेपर एक और सर्ग हुआ। वह ऊर्ध्व-स्रोतनामक तीसरा सान्तिक सर्ग ऊपरके लोकोंमें रहने रुगा ॥ १२ ॥ वे उत्पर्ध-स्रोत सृष्टिमें उत्पन्न हुए प्राणी

उस सर्गको भी पुरुषार्थका असाधक समझ पुनः

विषय-सुखके प्रेमी, बाह्य और आन्तरिक दृष्टिसम्पन्न. तथा बाह्य और आन्तरिक ज्ञानयुक्त थे ॥ १३ ॥ यह तोसरा देवसर्ग कहरळता है । इस सर्गके प्रादुर्गुत होनेसे सन्तृष्ट-

चित्त ब्रह्माजीयते अति प्रसन्नता हुई ॥ १४ ॥ फिर, इन मुख्य सर्ग आदि तीनों प्रकारकी सृष्टियोंमें

उत्पन्न हुए प्राणियोंको पुरुषार्थका असाधक जान उन्होंने एक और उत्तम साधक सरकि लिये निन्तन किया ॥ १५ ॥ ३२ सत्यसंकल्प ब्रह्माजीके इस प्रकार चिन्तन

करनेपर अञ्यक्त (प्रकृति) से पुरुषार्थका साधक अर्थाक्सोत नामक सर्ग प्रकट हुआ ॥ १६ ॥ इस सर्गक प्राणी नीचे (पृथिवीपर) रहते हैं इसल्जिये वे 'अर्वाक्-

स्रोतः कहत्त्रते हैं । उनमें सत्त्व, रज और तम वीनोंहीकी अधिकता होती है।। १७॥ इसलिये वे दःखबहल, अत्यन्त क्रियाशील एवं वाह्य-आध्यन्तर ज्ञानसे युक्त और

सध्यक है । इस सर्गके प्राणी मनुष्य है ॥ १८ ॥

हे पुनिश्रेष्ठ ! इस प्रकार अवतक तुमसे छः सर्ग कहे । उनमें महत्तत्वको ब्रह्माका पहला सर्ग जानना चाहिये॥ १९॥ दक्ता सर्ग तत्पात्राओंका है, जिसे भूतसर्ग भी कहते हैं और तीसरा वैकारिक सर्ग है जो

प्रकार बुद्धिगूर्वक उत्पन्न हुआ यह प्राकृत सर्ग हुआ।

ऐन्द्रियक (इन्द्रिय-सम्बन्धी) कहलाता है ॥ २० ॥ इस

आवस्यकता है – ऐसा विकार बरना 'काल' नामकी तुष्टि है और भाग्वोदयसे सिद्धि हो जायनी — ऐसा विचार 'भाग्य' नामकी ्राष्ट्र है । ये चारोका आत्मासे सम्बन्ध है; अतः वे आध्यात्मिक तुष्ट्रियाँ हैं । पदार्थिक उपार्जन, रक्षण और ज्यय आदिमें दीप देखकर

उपदेशकी अपेक्षा न करके स्वयं हो प्रध्मार्थका निश्चय कर लेना 'ऊहा' सिद्धि है। प्रसंगवदा कहीं कुछ सुनवर उसीसे

शनसिद्धि पन लेना 'शब्द' सिद्धि है । गुरुसे पहकर ही यहनु शह हो गयी—ऐसा पान लेना 'अध्ययन' सिद्धि है । आध्यक्तिकादि विविध दुःखेंका नाम हो जाना तीन प्रकारको 'दुःखविधात' सिद्धि है । अभीष्ट पदार्थकी प्राप्ति हो जाना 'सुद्धवाप्ति' सिद्धि है । तथा

विद्वान् या तपस्त्रियोंका संग बाप्न हो जान 'दान' नामिका सिद्धि है। इस प्रकार ये आट सिद्धियों है।

तिर्यक्लोतास्तु यः प्रोक्तस्तैर्यम्योन्यः स उच्यते । तद्ध्वंत्रोतसां षष्ठो देवसर्गस्तु संस्पृतः॥ २२ ततोऽर्वाक्कोतसां सर्गः सप्तमः सातु मानुषः ॥ २३

अष्टमोऽनुबहः सर्गः सान्तिकस्तामसश्च सः । पञ्चैते वैकृताः सर्गाः प्राकृतास्तुत्रयः स्मृताः ॥ २४

प्राकृतो वैकृतश्चेष कौमारो नवमः स्मृतः ।

इत्येते वै समाख्याता नव सर्गाः प्रजापतेः ॥ २५ प्राकृता वैकृताश्चेव जगतो मूलहेतवः। सुजतो जगदीशस्य किमन्यच्छ्रोतुमिच्छम् ॥ २६

श्रीमेवेय उदाच

सङ्क्षेपात्कथितः सर्गो देवादीनां मुने त्वया ।

विस्तराच्य्रेतुपिच्छापि त्वसो मुनिवरोत्तम ॥ २७

श्रीपराधार उसाच

कर्मभिर्भाविताः पूर्वैः कुशलाकुश्लेस्तु ताः। स्यात्मा तया ह्यनिर्मुक्ताः संहारे ह्युपसंहताः ॥ २८ स्थावरात्ताः सुराद्यास्तु प्रजा ब्रह्मंश्चनुर्विधाः ।

ब्रह्मणः कुर्वतः सृष्टिं जज्ञिरे मानसास्तु ताः ॥ २९

ततो देवासुरपितृन्मनुष्यांश्च चतुष्टयम् । सिसृक्षुरम्भांस्येतानि स्वभातमानमयुयुजत् ॥ ३०

युक्तात्मनस्तमोमात्रः सृद्विक्ताऽभूक्षजापतेः ।

सिसुक्षोर्जधनात्पूर्वमसुरा जज्ञिरे ततः ॥ ३१

उत्ससर्ज ततस्तां तु तमोमात्रात्मिकां तनुम् । सा तु त्यक्ता तनुस्तेन मैत्रेयाभृद्विभावरी ॥ ३२

सिसृक्षुरन्यदेहस्थः प्रीतिमाप ततः सुराः। सत्त्वोद्रिक्ताः समुद्भूता मुखतो ब्रह्मणो द्विज ॥ ३३

त्यका सापि तनुस्तेन सत्त्वप्रायमभृहिनम् ।

ततो हि बल्जिनो रात्राबसुरा देवता दिवा ॥ ३४

सन्त्रमात्रात्स्कामेव ततोऽन्यां जगृहे तन्म् । पितृबन्धन्यमानस्य पितरस्तस्य जज़िरे ॥ ३५

उत्स्रसर्ज ततस्तां तु पितृन्सृष्ट्वापि स प्रभुः ।

चोत्पृष्टाभवतान्थ्या दिननक्तान्तरस्थिता ॥ ३६

रजोमात्रात्मिकामन्यां जगृहे स तनुं ततः । रजोमात्रोत्कटा जाता पनुष्या द्विजसत्तम् ॥ ३७ चौथा मुख्यसर्ग है । पर्वत-वृक्षादि स्थावर ही मुख्य सर्गके अनार्गत है ॥ २१ ॥ पाँचवाँ जो तिर्वकृस्रोत वतलाया उसे।

तिर्यक् (कीट-पतंगादि) योनि भी कहते हैं। फिर छठा सर्भ ऊर्ध्व-स्रोताओंका है जो 'देवसर्ग' कहलाता है।

उसके पश्चात सातवाँ सर्ग अर्थाक-स्रोताओंका है, वह मनुष्य सर्ग है ॥ २२-२३ ॥ आढवाँ अनुप्रह-सर्ग है । वह

सान्त्रिक और तामसिक है । ये पाँच वैकृत (विकारी) सर्ग है और पहले तीन 'प्राकृत समी' कहत्यते हैं ॥ २४ ॥ नवी कीमार-सर्ग है जो प्राकृत और वैकृत भी है। इस प्रकार

सुटि-रचनामें प्रवृत्त हुए जगदीश्वर प्रजापतिके प्राकृत और यैकृत नामक ये जगत्क मृत्सभूत नौ समं तुम्हं सुनाये। अब और क्या सुनना चाहते हो ? ॥ २५-२६ ॥

श्रीमैत्रेयजी खोले— हे मुने ! आपने इन देवादिकोंके समौका संक्षेपसे वर्णन किया । अब, हे भुनिश्रेष्ठ ! मैं इन्हें

आपके भ्रातिन्दसे ज़िलारपूर्वक सुनना चाहता है ॥ २७ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैंबेश! सम्पूर्ण प्रजा अपने पूर्व-शभाश्यभ कर्गोसे युक्त है; अतः प्ररूपकारुमें

सबन्ध रूथ होनेपर भी यह उनके संस्कारोसे मुक्त नहीं होती ॥ २८ ॥ हे ब्रह्मन् ! ब्रह्माजीके सृष्टि-कर्ममें प्रयुक्त होनेपर देवताओंसे लेकर स्थावरपर्यन्त चार प्रकारकी सृष्टि

हुई । वह केवल मनोमंगी थी ॥ २९ ॥ फिर देवता, असर, धितगण और पन्ष्य—इन चारोंकी तथा जलकी सृष्टि फरनेको इच्छासे उन्होंने अपने शरीरका उपयोग किया ॥ ३० ॥ सष्टि-रचनाको कामनासे प्रजानतिके

युक्तवित होनेपर तमोगुणको वृद्धि हुई। अतः सबसे पहले

उनको जेकारी असुर उरपत्र हुए॥३१॥ तब, हे मैत्रेय [उन्होंने उस तमोमय शरीरको छोड़ दिया, वह छोड़ा हुआ तमोमय इसीर ही सीत्रे हुआ।। ३२॥ फिर अन्य देहमें

स्थित होनेपर सृष्टिकी कामनायाले उन प्रजापतिको अति प्रस्कात हुई, और हे दिज ! उनके मुखसे सत्यप्रधान देखगण उत्पन्न हुए॥३३॥ तदनन्तर उस दारोरको भी उन्होंने त्याग दिया। वह त्यामा दुआ अरीर ही सन्तस्यरूप दिन हुआ। इसीलिये एजिमें असूर बलवान होते है और

दिनमें देवगणोंका वस विशेष होता, है।। ३४॥ फिर

उन्होंने ऑहिंग्क सत्वमय अन्य इत्त्रीर ब्रह्म किया और अपनेको पितृदात् मानते हुए [अपने पार्श्व-भागसे] पिहगणकी रचना की ॥ ३५ ॥ पितृगणको रचना कर उन्होंने

उस इसिस्को भी छोड़ दिया । वह स्थागा हुआ इसिर ही दिन और रात्रिके बीचमें स्थित सन्ध्या हुई ॥ ३६ ॥ सत्पश्चात् तामण्याञ्च स तत्याज तर्नु सद्यः प्रजापतिः । ज्योत्त्रा समभवत्सापि प्रावसन्य्या याऽभिषीयते ॥ ३८

ज्योतस्त्रागमे तु बलिनो मनुष्याः पितरस्तथा । मैत्रेय सन्ध्यासमये तस्मादेते भवन्ति वै ॥ ३९

न्यांत्स्मा राज्यहर्नी सन्ध्या चत्वार्येतानि वै प्रभो: । क्यांत्स्मा राज्यहर्नी सन्ध्या चत्वार्येतानि वै प्रभो: ।

ब्रह्मणस्तु शरीराणि त्रिगुणोपाश्रयाणि तु ॥ ४० रजोमात्रात्मिकामेव ततोऽन्यां जगृहे तनुम् ।

रजामात्रात्मकामव तताऽन्या जगृह तनुम् । ततः श्रुद् ब्रह्मणो जाता जज्ञे कामस्तया ततः ॥ ४१ श्रुतक्षामानन्यकारेऽथ सोऽसुबद्धगवास्ततः ।

विरूपाः रमञ्जूला जातास्तेऽभ्यषावंस्ततः प्रभुम् ॥ ४२ मैवं भो रक्ष्यतामेष यैरुक्तं राक्षसास्तु ते । ऊचुः खादाम इत्यन्ये येते यक्षास्तु जक्षणात् ॥ ४३

अप्रियेण तु तान्दृष्ट्वा केजाः जीर्यन्त वेधसः । हीनाश्च जिरसो भूयः समारोहन्त तच्छिरः ॥ ४४

सर्पणातेऽभवन् सर्पा हीनत्वादहयः स्मृताः । ततः कुन्हो जगत्वष्टाः क्रोधात्मानो विनिर्ममे । वर्णेन कपिशेनोग्रभृतास्ते पिशिताशनाः ॥ ४५

गायतोऽङ्गात्समुत्पन्ना गन्धर्वास्तस्य तत्क्षणात् । पिबन्तो जज्ञिरे वाचं गन्धर्वास्तेन ते द्विन ॥ ४६ एतानि सष्टा भगवान्त्रह्या तच्छक्तिचोदितः ।

ततः स्वच्छन्दतोऽन्यानि वयांसि वयसोऽसृजत् ॥ ४७ अवयो वक्षसञ्चके मुखतोऽजाः स सृष्टवान् ।

अवयो बक्षसञ्चक्तं मुखतीऽजाः स सृष्टवान् । सृष्टवानुदराद्राश्च पार्खाभ्यां च प्रजापतिः ॥ ४८ पद्भ्यां चाश्चान्समातङ्गात्रासभानावयानुगान् ।

उष्ट्रानश्चतरांश्चेय न्यङ्कुनन्याश्च जातयः ॥ ४९ ओषध्यः फलमृलिन्यो रोमभ्यस्तस्य जज्ञिरे । त्रेतायुगमुखे ब्रह्मा कल्पस्यादौ द्विजोत्तम ।

न्तानुगतुःस म्ह्या पारपरवादा छुनातम् । सृद्वा पश्चोषधीः सम्यन्युयोज स तदाध्वरे ॥ ५० गौरजः पुरुषो मेषश्चाश्चाश्चतरगर्दभाः । एतान्त्राम्यान्यञ्जूनाहूरारण्यांश्च निबोध मे ॥ ५१ द्विजश्रेष्ठ ! उससे रजः-प्रधान मनुष्य उत्पन्न हुए ॥ ३७ ॥ फिर शीघ्र ही प्रजापतिने उस शरीरको भी त्याग दिया, बही ज्योतका हुआ, जिसे पूर्व-सम्ध्या अर्थात् प्रातःकाल कहते हैं ॥ ३८ ॥ इसोटिये, हे भैत्रेय ! प्रातःकाल होनेपर मनुष्य

उन्होंने ऑशिक रजोमय अन्य शरीर धारण किया; है

और सायकालके समय पितर बलवान् होते हैं ॥ ३९ ॥ इस प्रकार रात्रि, दिन, प्रातःकाल और सायंकाल ये चारी प्रभु ब्रह्माकीके ही शरीर हैं और नीनी मुणोके आश्रय हैं ॥ ४० ॥

फिर बह्याजीने एक और रजोगात्राताक शरीर धारण किया। उसके द्वारा ब्रह्माजीसे क्षुधा उत्पन्न हुई और क्षुधासे कामकी उत्पत्ति हुई॥४१॥ तब भगवान् प्रजापतिने अन्धकारमें स्थित होकर क्षुधायस्त सृष्टिकी रचना की। उसमें बड़े कुरूप और दाड़ी-मूँछवाले स्थिति उत्पन्न हुए। वे स्वयं ब्रह्माजीकी ओर ही [उन्हें भक्षण करनेके लिये] दीड़े॥४२॥ उनमेरी जिन्होंने यह कहा कि 'ऐसा मत करो, इनकी रक्षा करो' वे 'ग्रक्षस' कहलाये और जिन्होंने कहा 'हम खायेंगे' वे खानेकी वासनावाले

होनेसे 'यक्ष' करे गये । ४३ ॥

उनकी इस अनिष्ठ प्रवृत्तिको देखकर ब्रह्माजीके केरा
सिरसे गिर गये और फिर पुनः उनके मस्तकपर आरूद हुए।
इस प्रकार ऊपर चढ़नेके कारण ये 'सपे' कड़लामे और नीये
गिरनेके ब्रारण 'अहि' कहे गये। उदमन्तर जगत्-स्वियता
ब्रह्माजीने क्रोधित होकर क्रोधयुक्त प्राणियोकी रचना की; वै
कांपश (कालापन लिये हुए पीले) वर्णके, अति उम

करते समय उनके शरीरसे तुरना ही गन्धर्य उत्पन्न हुए। है द्विज! वे वाणीका उच्चारण करते अर्थात् बोलते हुए उत्पन्न हुए थे, इसल्विये 'गन्धर्य' कन्नलाये ॥ ४६ ॥ इन सबकी रचना करके भगवान् ब्रह्माजीने पश्चियोंको, उनके पूर्य-कमौसे प्रेरित होकर स्वच्छन्दता-

स्वभववाले तथा मासाहारी हुए ॥,४४-४५॥ फिर,गान

पूर्वक अपनी आयुक्ते रक्ता ॥ ४७ ॥ तदनक्तर अपने तथःस्थलसे भेड़, मुखसे बकरी, उदर और पार्श-धागसे गौ, पैरोंसे घोड़े, हाथी, गधे, बनगर, सृग, केंद्र, खबर और न्थड़ू आदि पशुओंकी रचना की ॥ ४८-४५ ॥ उनके रामोसे फल-मूलरूप ओधधियाँ उत्पन्न हुई । हे द्विजोतम ! कल्पके आरम्भमें ही बह्माजीने पशु और ओवधि आदिकी रचना करके फिर नेतागुमके आरम्भमें उन्हें बज़ादि कमीमें सम्मिलित किया ॥ ५० ॥ नी, बकरी, पुरुष, भेड़, घोड़े, खबर और गथे ये सब औदकाः पशवः षष्ठाः सप्तमास्तु सरीसृपाः ॥ ५२ गायत्रं च ऋचश्चैव त्रिवृत्सोमं रथन्तरम् । अग्निष्टोमं च यज्ञानां निर्ममे प्रथमान्मुखात् ॥ ५३

अग्निष्टोर्म च यज्ञानां निर्मामे प्रथमान्मुखात् । यजूंषि त्रष्टुर्भ छन्दः स्तोमं पञ्चदशं तथा । बृहत्साम तथोक्थं च दक्षिणादसृजन्मुखात् । सामानि जगतीछन्दः स्तोमं सप्नदशं तथा ।

श्चापदा द्विख्रा हस्ती वानराः पक्षिपञ्चमाः ।

बृहत्साम तथोक्थं च दक्षिणादसृजन्मुखात् ॥ ५४ सामानि जगतीछन्दः स्तोमं सप्नदशं तथा । वैरूपमतिरात्रं च पश्चिमादसृजन्मुखात् ॥ ५५ एकविंशमधर्वाणमाप्तोर्यामाणमेव च ।

एकविंशमधर्वाणमाप्तीर्यामाणमेव च । अनुष्टुमं च वैराजमुत्तरादसृजन्युखात् ॥ ५६ उद्यावचानि भूतानि गात्रेभ्यस्तस्य जज्ञिरे ।

देवासुरपितृन् सृष्ट्वा मनुष्यांश्च प्रजापतिः ॥ ५७ ततः पुनः ससर्जादौ सङ्कल्पस्य पितामहः । यक्षान् पिशाचानान्धर्वान् तथैवाप्सरसां गणान् ॥ ५८ नरकिञ्चररक्षांसि वयः पशुपुगोरणान् ।

अध्ययं च व्ययं चैव यदिदं स्थाणुजङ्गमम् ॥ ५९ तत्ससर्ज तदा ब्रह्मा भगवानादिकृत्मभुः । तेषां ये यानि कर्माणि प्राक्सृष्ट्यां प्रतिपेदिरे । तान्येव ते प्रपद्यन्ते सृज्यमानाः पुनः पुनः ॥ ६०

तान्येव ते प्रपद्यन्ते सृज्यमानाः पुनः पुनः ॥ ६० हिस्त्राहिस्त्रे मृदुक्त्रे धर्माधर्मावृतानृते । तद्भाविताः प्रपद्यन्ते तस्मात्ततस्य रोचते ॥ ६१

इन्द्रियाशेषु भूतेषु शरीरेषु च स प्रभुः। नानात्वं विनियोगं च धातैवं व्यसृजत्त्वयम् ॥ ६२ नाम रूपं च भूतानां कृत्यानां च प्रपञ्चनम् । वेदशब्देभ्य एवादौ देवादीनां चकार सः ॥ ६३

ऋषीणां नामधेयानि यथा वेदश्रुतानि वै । तथा नियोगयोग्यानि हान्येषामपि सोऽकरोत् ॥ ६४ यथर्तुषृतुलिङ्गानि नानारूपाणि पर्यवे । दृश्यन्ते तानि तान्येव तथा भावा युगादिषु ॥ ६५

यथर्तुष्कृतुलिङ्गानि नानारूपाणि पर्यये । दृश्यन्ते तानि तान्येव तथा भावा युगादिषु ॥ ६५ करोत्येवंविधां सृष्टिं कल्पादौ स पुनः पुनः । सिसृक्षाराक्तियुक्तोऽसौ सुज्यशक्तिप्रवोदितः ॥ ६६ (ब्याघ्र आदि), से खुरवाले (बनगाय आदि), हाथी, बन्दर और पाँचवें पक्षी, छठे जलके जीव तथा सातवें सरोस्प आदि॥ ५१-५२॥ फिर अपने प्रथम (पूर्व)

गाँबोंमें रहनेवाले पद्म हैं। जंगली पद्म ये हैं—शापद

मुखसे बह्याजीने गायत्री, ऋक्, त्रिवृस्सोम स्थनार और आग्नष्टोम यज्ञीको निर्मित किया ॥ ५३ ॥ दक्षिण-मुखसे यजु, त्रेष्टुप्छन्द, पश्चदशस्तोम, बृहत्साम तथा उक्थकी रचना को ॥ ५४ ॥ पश्चिम-मुखसे साम, जगतीछन्द,

सप्तदशस्तोम, बैरूप और अतिराबको उत्पन्न किया ॥ ५५॥ तथा उत्तर-मुखसे उन्होंने एकविशतिस्तोम, अश्रवंबेद, आप्तोर्यामाण, अनुष्टुप्टुन्द और वैराजकी सृष्टि की ॥ ५६॥ इस प्रकार उनके शरीरसे समस्त ऊँच-नीच प्राणी

उतान हुए। उन आदिकर्ता प्रजापति भगवान् ब्रह्माजीने देव, असुर, पितृगण और मनुष्योवन्ने सृष्टि कर तदनन्तर करपका आरम्भ होनेपर किर यक्ष, पिशाच, गन्धर्य, आसरागण, मनुष्य, किन्ना, सक्षस, पशु, पक्षो, मृग और सर्प आदि सम्पूर्ण नित्य एवं अनित्य स्थावर-जङ्गम जगत्जी रचना की। उनमेंसे जिनके जैसे-जैसे कमें पूर्वकल्पोप थे पुन:-पुन: सृष्टि होनेपर उनकी उन्होंमें फिर प्रवृति हो जाती है॥ ५७—६०॥ इस समय हिसा-

अहिसा, मुदुता-कठोरता, धर्म-अधर्म, सत्य-मिथ्या—ये

सय अपनो पूर्व-भावनाके अनुसार उन्हें प्राप्त हो जाते हैं,

इसीसे ये उन्हें अन्छे लगने लगते हैं ॥ ६१ ॥ इस अन्द्रश् प्रश्नु विधाताने ही स्वयं इन्द्रियोंके विषय भूत और द्वारीर आदिमें विभिन्नता और व्यवहारको उत्पन्न किया है ॥ ६२ ॥ उन्होंने कल्पके आरम्पपे देवता आदि प्राणियोंके बेदानुसार सम और रूप तथा कार्य-विभागको

निश्चित किया है ॥ ६३ ॥ ऋषियों तथा अन्य पाणियोंके भी

वेदानुकुल नाग और यथायोग्य कर्मोंको उन्होंने निर्दिष्ट

किया है ॥ ६४ ॥ जिस प्रकार भिन्न-भिन्न ऋतुओंके पुनः-पुनः आनेपर उनके चिह्न और नाम-रूप आदि पूर्ववन् रहते हैं उसी प्रकार युगादिमें भी उनके पूर्व-भाव ही देखे जाते हैं ॥ ६५ ॥ सिस्का-शक्ति (सृष्टि-रचनाकी इच्छारूप शक्ति) से युक्त वे बहााजी सृज्य-शक्ति (सृष्टिके प्राख्य) की प्रेरणासे कल्योंके आरम्भमे बारम्बार इसी

प्रचोदितः ॥ ६६ | प्रकार सृष्टिको रचना किया करते हैं ॥ ६६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेऽशे पञ्जमोऽध्यायः ॥ ५॥ -,/क्रान्त-

a loss and a same a

छठा अध्याय

🐃 🤍 चातुर्वर्ण्य-व्यवस्था, पृथिवी-विभाग और अन्नादिकी उत्पत्तिका वर्णन

श्रीपैत्रेय उवाच अवांक्स्रोतास्तु कथितो भवता यस्तु मानुषः । ब्रह्मन्विस्तरतो ब्रह्म ब्रह्मा तमसुजद्यथा ॥ यथा च वर्णानसुजद्यदुगुणां ध्र प्रजापतिः । वद्य तेषां स्मृतं कर्म विप्रादीनां तदुच्यताम् ॥ औपराञ्चर उद्याच मत्याभिध्यायिनः पूर्वं सिम्क्षोर्वहाणो जगत् । अजायन्त द्विजश्रेष्ठ सत्त्वोद्विका मुखाखजाः ॥ वक्षसो रजसोद्रिकास्तद्या वै ब्रह्मणोऽभवन् । रजसाः तमसाः चैव समुद्रिकास्तथोरुतः ॥ पद्ध्यापन्याः प्रजा ब्रह्मा संसर्ज द्विजसत्तम । त्तमः प्रधानास्ताः सर्वाञ्चातुर्वर्ण्यमिदं नतः ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैदयाः शुद्राश्च द्विजसत्तम । पादोस्वक्षःस्थलतो मुखतश्च समुद्रताः ॥ यज्ञनिष्यसये सर्वमेतद् ब्रह्मा चकार वै। चातुर्वण्ये महाभाग यज्ञसाधनमुत्तमम् ॥ यज्ञैराप्यायिता देवा बृष्ट्युत्सर्गेण वै प्रजाः । आप्याययन्ते धर्मज्ञ यज्ञाः कल्याणहेतवः ॥ निष्पाद्यन्ते नरैस्तस्तु स्वधर्माभिरतैस्सदा । विशुद्धाचरणोपेतैः सद्धिः सन्मार्गगामिभिः ॥ खर्गापवर्गी मानुष्यात्प्राञ्चवन्ति नरा सुने । यश्चाचिक्तचितं स्थानं तद्यान्ति मनुजा द्विज ॥ १० प्रजास्ता ब्रह्मणा सृष्टाश्चातुर्वण्यंव्यवस्थिताः । सम्बक्ष्रद्धासमाचारप्रवणा 🐃 मुनिसक्तम ॥ ११ पश्चेच्छावासनिरताः सर्वबाधाविवर्जिताः । शुद्धान्तःकरणाः शुद्धाः कर्मानुष्ठाननिर्मलाः ॥ १२ शुद्धे च तासां मनसि शुद्धेऽन्तः संस्थिते हरी । शुद्धज्ञानं प्रपञ्चन्ति विष्णवाख्यं येन तत्पदम् ॥ १३ ततः कालात्मको योऽसौ स चांशः कथितो हरेः ।

स पातबत्पद्यं घोरमल्पमल्पाल्पसारवत् ॥ १४

श्रीमैत्रेयजी बोले--हे भगवन्! आपने जो अर्वाक्-स्रोतः मनुष्यंकि विषयमे कहा तनकी सृष्टि ब्रह्मजीने किस प्रकार की-यह विस्तारपूर्वक कहिये ॥ १ ॥ श्रीप्रकापतिने बाह्यपादि वर्णको जिन-जिन गुणोरो युक्त और ज़िस प्रकार रचा तथा उनके जो-जो कर्तव्य-कर्म निर्धारित किये वह सब वर्णन कीखिये ॥ २ ॥

श्रीपराक्षरजी बोले-हे द्विजश्रेष्ठ ! जगत-रचनाकी इच्छासे युक्त सन्यसंकलप श्रीब्रह्माजीके मुखसे पहले सस्वप्रधान प्रचा उलाश हुई ॥ ३ ॥ तदनना उनके वक्षःस्थलसे रजःप्रधान तथा जंघाओसे रज और तमविशिष्ट सृष्टि हुई ॥ ४ ॥ हे द्विजोत्तम ! चरणींसे ब्रह्माजीने एक और प्रकारकी प्रजा उत्पन्न की, बहु तमःप्रधान थी । ये ही सब चारों वर्ण हुए ॥ ५ ॥ इस प्रकार हे द्रिजसत्तम ! ब्राह्मण, श्रात्रिय, वैदय और शुद्र ये धारी क्रमञ्चः बहुमलोके नृष्य, बक्षःस्थल, जान् और चरणीसे उत्पन्न हुए ॥ ६ ॥

हे महाभाग ! बह्याजीने यज्ञानुष्ठानके रूपे ही यज्ञके उत्तम साधनरूप इस सम्पूर्ण चातुर्वपर्यकी रचना की थीं ॥ ७ ॥ हे धर्मज ! यहसे तुप्त होकर देवगण करू बरसाकर प्रजाको तुप्त करते हैं; अतः यज्ञ सर्वधा कल्याणका हेत् है ॥ ८ ॥ जो मनुष्य सदा खधर्मप्रययण, सदाचारी, सज्जन और सुमार्गगामी होते हैं उन्होंसे यज्ञका यथायत् अनुष्ठान हो सकता है ॥ ९ ॥ हे मूने । [यङ्के द्वारा) मनुष्य इस मनुष्य-शरीरसे ही स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्त कर सकते हैं; तथा और भी जिस स्थानको उन्हें इच्छा हो उसीको जा सकते हैं ॥ १० ॥

हे मृतिसत्तम ! ब्रह्माजीद्वारा र्ची । चातुर्कण्य-क्रिभागमें स्थित त्रजा अति आचरणवाली, स्वेच्छानुसार रहनेवास्टी, सम्पूर्ण बाधाओंसे रहित, शुद्ध अना:करणवाली, सत्कलीत्पन्न और पुण्य कमोंके अनुहानसे परम पवित्र थी।। ११-१२।। उसका चित सुद्ध होनेके कारण उसमें निरुत्तर सुद्धस्वरूप श्रीहरिके विराजमान रहनेसे उन्हें शुद्ध ज्ञान प्राप्त होता था जिससे ते भगवानुके उस 'विष्णु' जामक परम पदको देख पार्ट थे ॥ १३ ॥ फिर (बेहायुगके आरम्भमें), हमने तुमसे भगवानुके जिस काल नामक अंशका पहले वर्णन किया है,

अधर्मबीजसम्द्रतं तमोलोभसम्द्रवम् । प्रजास तास पेत्रेय रागादिकपसाधकम् ॥ १५ ततः सा सहजा सिद्धिस्तासो नातीव जायते । रसोल्स्ब्रसादवश्चान्याः सिद्धयोऽष्ट्री भवन्ति याः ॥ १६ तासु श्लीणास्वद्रोषासु वर्द्धमाने च पातके । हुन्ह्यभिभवदुःखार्तास्ता भवन्ति ततः प्रजाः ॥ १७ ततो दुर्गाणि ताशुकुर्धान्वं पार्वतमौदकप्। कृत्रिमं च तथा दुर्गं पुरखर्वटकादिकम् ॥ १८ गृहाणि च यथान्यार्य तेषु चक्कः पुरादिषु । ञ्जीतातपादिबाधानां प्रश्नमाय महापते ॥ १९ प्रतीकारमिमं कृत्वा शीतादेस्ताः प्रजाः पनः । वार्तोपायं ततशकुर्हस्तसिद्धिं च कर्मजाम् ॥ २० ब्रीह्यश्च यवाश्चेव गोधूमाश्चाणवस्तिलाः । प्रियञ्जवो ह्यदाराश्च कोरदृषाः सतीनकाः ॥ २१ मावा मुद्रा मसुराश्च निष्पावाः सकुलत्थकाः । आदवयश्चणकाश्चेय शणाः सप्तदश स्पृताः ॥ २२ इत्येता ओषधीनां तु ग्राम्यानां जातयो मुने ।

ओषध्यो यज्ञियाश्चेव प्राप्यारण्याश्चतुर्दश ॥ २३

वह अति अस्य सारवारे (सुखवारे) तुच्छे और घोर (दु:समय) पापाँको प्रवामें प्रवृत कर देता है॥ १४ ॥ है मैत्रेय । उससे प्रकामे पुरुपार्थका विधातक तथा अज्ञान और लोधको उत्पन्न करनेवाला रामादिरूप अधर्मका बीच उत्पन्न हो जाता है॥ १५ ॥ तथीसे उसे वह विष्णु-पद-प्राप्ति-रूप खाभाविक सिद्धि और स्सोल्लास आदि अन्य अष्ट सिद्धियाँ नहीं मिलतीं॥ १६ ॥

उन समस्त सिद्धियोंक क्षीण हो जाने और पापके बढ़ जानेसे फिर सम्पूर्ण प्रजा द्वन्द्व, हास और दुःखसे आतुर हो गयो ॥ १७ ॥ तब उसने मरुभूम, पर्वत और बल आदिके स्वाभाविक तथा कृष्ठिम दुर्ग और पुर तथा खर्वट है आदि स्थापित किये ॥ १८ ॥ हे महम्मते ! उन पुर आदिकोंमें शीत और घाम आदि बाघाओंसे बचनेके लिये उसने यथायोग्य घर बनाये ॥ १९ ॥

इस प्रकार शितोष्णादिसे बचनेका उपाय करके उस प्रजाने जीविकाके साधनरूप कृषि तथा कला-हौशल आदिको रचना को ॥ २० ॥ हे मुने ! धान, जो, गेहूँ, छोटे भान्य, तिल, कोंगनी, ज्यार, कोटो, छोटी मटर, उड़द, पूँग, मसूर, बढ़ी भटर, कुलथी, सई, चना और सन— ये सबड़ प्राप्य ओपिंघयोंकी जातियाँ हैं। प्राप्य और बन्य टोनों प्रकारकी मिलाकर बुल चौदह ओपिंघयाँ याज्ञिक हैं।

أزها فراسمه خممه كالمعمورة

स्वत एवान्तरुल्छातः स्पाल्कते युगे। रतोल्लालाहियका सिद्धिस्तया अन्ति शर्थ तरा॥ नैरपेश्येण सदा तुप्ता प्रजास्तथा। द्वितीया रम्बाद्धाः सिद्धिरुद्धिः सा विप्रमीनसवर्षः 🛚 धर्मोत्यक्ष बोऽस्यासां सा तृतीबाऽभिष्योदते । चतुर्थी ु (च्युरा) तासामायुषः पञ्चमो । परमन्यपरखेन ऐकान्त्रयलबाहरूयं विशोका नाम कामचारित्वं सहसी सिद्धिरुव्यते। अष्टमी च तथा प्रोक्ता । यशक्यनद्वप्राचना ।।

अर्थ — सत्ययुगमें रसका स्वयं ही उल्लास होता था। यही रसोल्लास नामको सिद्धि है, उसके प्रभावसे मनुष्ट भूखको नष्ट कर देता है। उस समय प्रजा स्त्री आदि भौगोकी अपशाके बिना ही सदा तृम रहती थी, इसोको मुनिश्रेष्टीते 'तृति' नामक दूसरी सिद्धि करा है। उनका जो उत्तप धर्म था बही उनकी तीसरी सिद्धि बजी जाती है। उस समय सम्पूर्ण प्रजाके रूप और आयु एक-से थे, यही उनकी चौषी सिद्धि थी। बलको ऐकत्तिको अधिकता—बह 'विद्योका' नामको पौचवी सिद्धि है। परमारापरायण रहते हुए, तप-ध्यानादिमें तत्पर रहना छठी सिद्धि है। स्वेच्छानुसार विचरना सातवीं सिद्धि कही जाती है तथा जहाँ-तहाँ मनको मौज पड़े रहना आउर्वी सिद्धि कही गयी है।

^{*} रसोस्त्त्रसादि अष्ट-सिद्धियोका वर्णन स्कन्दपुराणमें इस प्रकार किया है---

[ो] परम्ह या नदीके तटपर बसे हुए छोटे-छोटे टीलोको 'सर्वट' कहते हैं।

ब्रीह्यस्यया मावा गोधूमाञ्चाणवस्तिलाः । प्रियङ्गसप्तमा होते अष्टमास्तु कुलत्यकाः ॥ २४ रयामाकास्त्वथ नीवारा जतिंलाः सगवेधकाः । तथा वेणुयवाः प्रोक्तास्तथा मर्कटका मुने ॥ २५ प्राम्यारण्याः स्मृता होता ओषध्यस्तु चतुर्दश । यज्ञनिष्यत्तये यज्ञस्तश्चासां हेतुरुतमः ॥ २६ एताश्च सह यज्ञेन प्रजानों कारणं परम्। परावरविदः प्राज्ञास्ततो यज्ञान्वितन्वते ॥ २७ अहन्यहन्यनुष्टानं यज्ञानां मुनिसत्तम्। उपकारकरं पुंसां क्रियमाणाघशान्तिदम् ॥ २८ येषां तु कालसञ्चेऽसौ पापविन्दर्महामने। चेतःसु यव्धे चक्कस्ते न यज्ञेषु मानसम् ॥ २९ वेदवादांस्तथा वेदान्यज्ञकर्मादिकं च यत्। त्रत्सर्वे निन्दयामासूर्यज्ञव्यासेधकारिणः ॥ ३० प्रवृत्तिभार्गस्युच्छित्तिकारिणो वेदनिन्दकाः । दुरात्मानो दुराचारा बभूदः कृटिलाशयाः ॥ ३१ संसिद्धायां तु वार्तायां प्रजाः सृष्टा प्रजापतिः । मर्यादो स्थापयामास यथास्थानं यथागुणम् ॥ ३२ वर्णानामाभ्रमाणां च धर्मान्यर्पभूतां वर । लोकांश्च सर्ववर्णानां सप्याधर्मानुपालिनाम् ॥ ३३ प्राजापत्यं ब्राह्मणानां स्पृतं स्थानं क्रियावताम् । स्थानमैन्द्रं क्षत्रियाणां संप्रामेषुनिवर्तिनाम् ॥ ३४ वैश्यानां मास्तं स्थानं स्वधर्ममनुवर्तिनाम् । गान्धर्वं शुद्रजातीनां परिचर्यानुवर्तिनाम् ॥ ३५ अष्टाशीतिसहस्राणि मुनीनाम्ध्वरेतसाम् । स्मृतं तेषां तु यत्स्थानं तदेव गुरुवासिनाम् ॥ ३६ सप्तर्वीणो तु यत्स्थानं स्मृतं तद्दै वनौकसाम् । प्राजापत्यं गृहस्थानां न्यासिनां ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ३७ योगिनामपृतं स्थानं स्वात्मसन्तोषकारिणाम् ॥ ३८ एकान्तिनः सदा ब्रह्मध्यायिनो योगिनश्च ये ।

तेषां तु परमं स्थानं यत्तत्पञ्चन्ति सुरयः ॥ ३९

उनके नाम ये हैं— घान, जी, उड़द, गेहूँ, छोटे घान्य, तिल, काँगनी और कुलधी— ये आठ तथा स्वामाक (समी), नीवार, वनतिल, गवेधु, वेणुयव और मर्कट (मका) ॥ २१——२५) ॥ ये चौदह ग्राम्य और क्या ओक्चियाँ यज्ञानुष्ठानकी सामग्री हैं और यज्ञ इनकी उत्पत्तिका प्रधान हेतु हैं॥ २६॥ यज्ञोंक सहित ये ओक्चियाँ प्रजाकों वृद्धिका परम कारण हैं इसिलये इहलोक-परलोकके ज्ञात पुरुष यज्ञोंका अनुष्ठान किया करते हैं ॥ २७॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! नित्यप्रति किया जानेवाला यज्ञानुष्ठान मनुष्योंका परम उपकारक और उनके किये हुए पापोंको शान्त करनेवाला है ॥ २८॥

है महामुने ! जिनके चित्तमें कालकी गतिसे पापका बीज बढ़ता है उन्हीं लोगोंका चित्त यहमें प्रयुत्त नहीं होता ॥ २९ ॥ उन यहके बिरोधियोंने वैदिक मत, बेद और यहादि कर्म — सभीकी निन्दा की है ॥ ३० ॥ बे लोग दुसला, दुसचारी, कुटिलमति, बेद-विनिन्दक और प्रयृतिमार्गका उन्छेद करनेवाले ही थे ॥ ३१ ॥

है धर्मवानोंमें श्रेष्ठ मैत्रेय ! इस प्रकार कृषि आदि जीविकाके साधनोंके निश्चित हो जानेपर प्रजापति ब्रह्माजीने प्रजाकी रचना कर उनके स्थान और गुणोंके अनुसार मर्यादा, वर्ण और आश्रमीके धर्म तथा अपने धर्मका पूछी प्रकार पाछन करनेवाले समस्त वर्णेकि लोक आदिकी स्थारना की ॥ ३२-३३ ॥ कमीनष्ट ब्राह्मणीका स्थान पितलोक हैं, युद्ध-क्षेत्रसे कभी न हटनेवाले क्षत्रियोंका इन्द्रलोक है ॥ ३४ ॥ तथा अपने धर्मका पालन करनेवाले वैदर्शेका वायुलोक और सेवाधर्मपरापण शूद्रोंका गन्धर्वलोक है ॥ ३५ ॥ अहासी हजार अध्योता मृति हैं; उनका जो स्थान बताया गया है वही गुरुकुछवासी ब्रह्मकारियोंका स्थान है।। ३६॥ इसी प्रकार बनवासी व्यनप्रस्थोंका स्थान सप्तर्षिलोक, गृहस्थोंका पितृस्त्रेक और संन्यासियोका ब्रह्मछोक है तथा आत्मानुभवसे तुप्त योगियोंकः स्थान अमरपद (मोक्ष) है ॥ ३७-३८ ॥ जो निरत्तर एकान्तसेवी और बहाचित्तनमें मग्न रहनेवाले योगिजन है उसका जो परमस्थान है उसे पण्डितजन ही देख

गत्वा गत्वा निवर्तन्ते चन्द्रसूर्यादयो प्रहाः । अद्यापि न निवर्तन्ते द्वादशाक्षरविन्तकाः ॥ ४० तामिस्त्रमन्धतापिसं पहारौरवरौरवौ । असिपत्रवनं घोरे कालसूत्रमवीचिकम् ॥ ४१ विनिन्दकानां वेदस्य यज्ञव्याधातकारिणाम् । स्थानमेतत्समाख्यातं स्वधर्मत्यागिनश्च ये ॥ ४२ पाते हैं ॥ ३९ ॥ चन्द्र और सूर्य आदि यह भी अपने-अपने रोकोंमें जाकर फिर ठाँट आते हैं, किन्तु ब्रादशाक्षर फल (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय) का विकान करनेवाले अधीतक मोक्षपदसे नहीं ठाँटे ॥ ४० ॥ वामिस, अन्धतामिक, महार्यस्त, येंस्त, असिपत्रवन, घोर, कालसूत्र और अधीचिक आदि जो नरक हैं, वे वेदोंकी निन्दा और यशोंका उच्छेद करनेवाले तथा स्वधर्म-विमुख पुरुषोंके स्थान कहे गये हैं ॥ ४१-४२ ॥

इति श्रीविष्णुपराणे प्रथमेंऽदो षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

मरीचि आदि प्रजापतिगण, तामसिक सर्ग, स्वायम्भुवमनु और शतरूपा तथा उनकी सन्तानका वर्णन

ततोऽभिथ्यायतस्तस्य जित्तरे मानसाः प्रजाः । तच्छरीरसमृत्यत्रैः कार्यस्तैः करणैः सह। क्षेत्रज्ञाः समवर्तन्त गात्रेभ्यस्तस्य धीमतः ॥ Ŷ ते सर्वे समवर्तन्त ये मया प्रागुदाहुताः । देवाद्याः स्थावरान्ताशु त्रैगुण्यविषये स्थिताः ।। 9 एवंभूतानि सृष्टानि चराणि स्थावराणि च ॥ 3 यदास्य ताः प्रजाः सर्वा न व्यवर्धन्त धीमतः । अधान्यान्यानसान्युत्रान्सदृशानात्मनोऽसुजत् ॥ X भृगुं पुलस्त्वं पुलहं क्रतुमङ्गिरसं तथा। मरीचिं दक्षपत्रिं च वसिष्ठं चैव मानसान् ॥ नव ब्रह्माण इत्येते पुराणे निश्चयं गताः ॥ 5

औपराज्य उसाच

ख्याति भृति च सम्भूति क्षमां प्रोति तथैव च । सन्नति च तथैवोज्जांमनसूयां तथैव च ॥ । प्रसृति च ततः सृष्ट्वा ददौ तेषां महात्पनाम् । पत्यो भवध्वमित्युक्त्वा तेषामेव तु दत्तवान् ॥ सनन्दनादयो ये च पूर्वसृष्टास्तु वेधसा । न ते स्रोकेष्ट्रसञ्जन्त निरपेक्षाः प्रजास ते ॥

पत्या भवस्यामत्युक्ता तथामव तु दत्तवान् ॥ ८ सनन्दनादयो ये च पूर्वसृष्टास्तु वेधसा । न ते लोकेष्टसञ्जन्त निरपेक्षाः प्रजासु ते ॥ ९ सर्वे तेऽभ्यागतज्ञाना बीतरागा विमत्सराः । तेष्ट्रेवं निरपेक्षेषु ल्प्रेकसृष्टौ महात्मनः ॥ १० श्रीपराशस्त्री बोले — फिर उन भजापतिके भ्यान करनेपर उनके देहस्वरूप भूतोंसे उत्पन्न हुए शरीर और इन्द्रिसोंके सहित मागस प्रजा उत्पन्न हुई। उस समय मतिमान् ब्रह्माजीके जड शरीरसे ही चेतन जीवोंका प्रादुर्भाव हुआ॥ १॥ मैंने पहले जिनका वर्णन किया है, देवताओंसे लेकर स्थावस्पर्यन्त वे सभी त्रिगुणात्मक चर और अचर जीव इसी प्रकार उत्पन्न हुए॥ २-३॥

जब महाबुद्धिमान् प्रजापतिकी वह प्रजा पुत्र-पौत्रादि-ऋमसे और न बढ़ों तब उन्होंने पृगु, पुलस्य, पुलह, ऋतु, अंगिए, मरीबि, दक्ष, अत्रि और वसिष्ठ— इन अपने ही सदृश अन्य मानस-पुत्रोंकी सृष्टि की। पुराणोंमें ये नौ ब्रह्मा माने गये हैं॥ ४—६॥

फिर ख्याति, भृति, सम्भृति, क्षमा, प्रौति, सन्नर्ति, कर्जा, अनसूया तथा प्रसृति इन नी कन्याओंको उत्पन्न कर, इन्हें उन महात्माओंको 'तुम इनकी पत्नी हो' ऐसा कहकर सौंप दिया॥ ७-८॥

ब्रह्माजीने पहले जिन सनन्दनादिको उत्पन्न किया था ये निरपेक्ष होनेके कारण सन्तान और संसार आदिमें प्रवृत्त नहीं हुए ॥ ९ ॥ वे सभी ज्ञानसम्पन्न , विरक्त और मत्सरादि दोषोंसे रहित थे। उन महात्माओंको संसार-रचनासे

ब्रह्मणोऽभून्महान् क्रोधस्त्रैलोक्बदहनक्षमः । तस्य क्रोधात्समुद्धतज्वालामालातिदीपितम् । ब्रह्मणोऽभूतदा सर्व त्रैलोक्यमस्त्रिलं मुने ॥ ११ भ्रकुरीकुटिलात्तस्य ललाटाकोधदीपितात् । समुत्पन्नस्तदा रुद्धो मध्याहार्कसमप्रभः ॥ १२ अर्धनारीनरवपुः प्रचण्डोऽतिशरीरवान् । विभजात्मानमित्युक्त्या तं ब्रह्मान्तर्द्धे ततः ॥ १३ तथोक्तोऽसौ द्विधा स्त्रीत्वं पुरुषत्वं तथाऽकरोत्। विभेदपुरुषत्वं च दशधा चैकधा पुनः॥ १४ सौम्यासौम्येस्तदा शानाऽशानीः खीत्वं च स प्रभुः । विभेद बहुधाः देवः स्वरूपैरसितैः सितैः ॥ १५ ततो ब्रह्माऽऽत्यसम्भृतं पूर्वं स्वायम्भृवं प्रभुः । आत्मानमेव कृतवान्प्रजापाल्ये मनुं द्विज ॥ १६ शतरूपां च तां नारीं तपोनिर्धृतकल्मषाम् । स्वायम्भुवो मनुर्देव: यत्नीत्वे जगृहे प्रभु: ॥ १७ तस्मान् पुरुषादेवी शतरूपा व्यजायत । घ्रियव्रतोत्तानपादौ प्रसूत्याकृतिसंज्ञितम् ॥ १८ कन्याद्वयं च धर्मज्ञ रूपौदार्यगुणान्वितम् । ददौ प्रसृति दक्षाय आकृति रुवये पुरा ॥ १९ प्रजापतिः स जग्नाह तयोर्जज्ञे सदक्षिणः । पुत्रो यज्ञो महाभाग दम्पत्योमिश्चनं ततः ॥ २० यज्ञस्य दक्षिणायां तु पुत्रा हादश जज़िरे । यामा इति समाख्याता देवाः स्वायम्भुवे मनौ ॥ २१ प्रसत्यां च तथा दक्षश्चतस्त्रो विंइतिस्तथा । ससर्ज कन्यास्तासां च सम्यङ् नामानि मे शृणु ॥ २२ श्रद्धा लक्ष्मीर्धतिस्तुष्टिर्वेद्या पुष्टिस्तथा क्रिया। बुद्धिलंबा वपुः शान्तिः सिद्धिः कीर्तिस्रयोदशी ॥ २३ पत्यर्थं प्रतिजवाह धर्मो दाक्षायणीः प्रभुः । ताभ्यः शिष्टाः यवीयस्य एकादश सुरक्षेत्रनाः ॥ २४ स्थातिः सत्यथं सम्भृतिः स्मृतिः प्रोतिः क्षमा तथा । सन्ततिशानसूया च ऊर्जा खाहा खया तथा।। २५ भृगुर्गवो मरीचिश्च तथा चैवाङ्गिरा मुनि: । पुलस्य:- पुलहश्चैव कतुश्चर्षिवरस्तथा ॥ २६

हह्याजीको त्रिलोकोको भस्म कर देनेवाला महान् क्रोध उत्पन्न हुआ। हे मुने ! उन ब्रह्माजीके क्रोधके कारण-सम्पूर्ण त्रिलोको ज्वाला-मालाओसे अत्यन्त देदीप्यमान हो गयो॥ १०-१९॥

उस समय उनकी देही भृकुटि और क्रीध-सन्तर ललाटसे दोपहरके सूर्यक समान प्रकाशमान करकी उत्पत्ति हुई ॥ १२ ॥ उसका अति प्रचण्ड दारीर आधा नर और आधा नारीरूप था। तब ब्रह्माओं 'अपने शरीरका विभाग कर' ऐसा कहकर अन्तर्धान हो गये ॥ १३ ॥ ऐसा कहे जानेपर उस रहने अपने शरीरस्य की और पुरुष दोनों । भागोंको अलग-अलग कर दिया और फिर पुरुष-भागको स्यारह भागोंमें विभक्त किया ॥ १४ ॥ तथा की-भागको भी सीम्प, कूर, शान्त-अशान्त और श्याम-गौर आदि कई रूपोंमें विभक्त कर दिया ॥ १५ ॥

तदगत्तर, हे दिज ! अपनेसे हत्पत्र अपने ही स्वरूप स्वायम्भुवको ब्रह्माजीने प्रजा-पालनके लिये प्रथम मर्नु बनाया ॥ १६ ॥ उन स्वायम्भुव मनुने [अपने ही साथ हत्पत्र हुई] तपके कारण निष्पाप शतकृषा नामको स्वीको अपनी प्रतीरूपसे प्रहण वित्या ॥ १७ ॥ है धर्मंत्र ! उन स्वायम्भुव मनुसे शतकृषा देवीने प्रियन्नत और उत्तानपादनामक दो पुत्र वथा उदार, रूप और गुणोसे सम्पन्न प्रसृति और आकृति नामको दो कन्याएँ इत्पन्न को । उनमेरे प्रसृतिको दक्षके साथ तथा आकृतिको रूचि प्रजापत्तिके साथ विवाह दिया ॥ १८-१९ ॥

हे महाभाग ! रुचि प्रजापतिने उसे प्रहण कर लिया ।
तव उन दम्पतीके यह और दक्षिणा— ये युगल (जुड़मी)
सन्तान उत्पन्न हुई ॥ २० ॥ यहके दक्षिणासे बारह पुत्रहुए, जो स्वायग्युल मन्वन्तरमें चाम नामके देवता
कहलावे ॥ २१ ॥ तथा दक्षने प्रसूतिसे चौबीस कन्याएँ
उत्पन्न की । मुझसे उनके द्युभ नाम सुनो ॥ २२ ॥ श्रद्धा,
लक्ष्मी, पृति, तुष्टि, मेथा, पृष्टि, क्रिया, युद्धि, रुच्चा, यपु,
शान्ति, सिद्धि और तेरत्यों कीर्ति— इन दक्ष-कन्याओंको
धर्मने पत्नीरूपसे प्रहण किया । इनसे छोटी शेष ग्यारह
कन्याएँ स्वाति, सती, सम्भृति, स्मृति, प्रीति, क्षना,
सन्ति, अनसूचा, रुद्धी, स्वाहा और स्वधा थीं
॥ २३— २५ ॥ हे मुनिसत्तम ! इन स्वाति आदि
कन्याओंको क्रमशः भृगु, शिव, मरीचि, अंगिग, पुलस्य,

अत्रिर्वसिष्ठो वहिञ्च पितरञ्च यथाक्रमम्। ख्यात्याचा जगृह: कन्या मुनयो मुनिसत्तम ॥ २७ श्रद्धा कामं चला दर्पं नियमं धृतिरात्मजम् । सन्तोषं च तथा तुष्टिलोंमं पुष्टिरसूयत ॥ २८ मेथा श्रृतं क्रिया दण्डं नयं विनयमेव च ॥ २९ बोधं बुद्धिसाधा रूजा विनयं वपुरात्मजम् । व्यवसायं प्रजज्ञे वै क्षेमं शान्तिरसूयत ॥ ३० सुखं सिद्धिर्यदाः कीर्तिरित्येते धर्मसूनवः । कामाद्रतिः सुते हर्षे धर्मपौत्रमसूयत ॥ ३१ हिसा भार्या त्वधर्मस्य ततो जज्ञे तथानृतम् । कत्या च निकृतिस्ताभ्या भयं नरकमेव च ॥ ३२ माया च वेदना चैव मिथुनं त्विदमेतयोः । तयोजेंज्ञेज्य वै माया मृत्युं भूतापहारिणम् ॥ ३३ वेदना स्वसूतं चापि दःखं जज्ञेऽथ रीरवात् । मृत्योव्यधिजसञ्जोकतुष्णक्रोधाश्च जज्ञिरे ॥ ३४ दु:स्वोत्तरा: स्पृता होते सर्वे चाधर्मलक्षणा: । नैयां पुत्रोऽस्ति वै भार्या ते सर्वे ह्यूध्वरितसः ॥ ३५ रौद्राज्येतानि रूपाणि विद्योम्निवरात्मज । नित्यप्रलयहेतुत्वं जगतोऽस्य प्रयान्ति वै ॥ ३६ दक्षो मरीचिरत्रिश्च भृग्वाद्याश्च प्रजेश्वराः । जगत्वत्र महाभाग नित्यसर्गस्य हेतवः ॥ ३७ मनबो मनुपुत्राञ्च भूपा वीर्यधराञ्च ये। सन्पार्गनिरताः शुरास्ते सर्वे स्थितिकारिणः ॥ ३८

और्येत्रेय उताच

येयं नित्या स्थितिर्ब्रहान्नित्यसर्गस्तथेरितः । नित्याभावश्च तेषां वै स्वरूपं मम कश्यताम् ॥ ३९

औपराठार उसान

सर्गस्थितिविनाशांश्च भगवान्मध्सुदनः । तैस्तै रूपैरचिन्यात्मा करोत्यव्याहतो विभुः ॥ ४०

नैमित्तिक: प्राकृतिकस्तथैवात्यन्तिको द्विज ।

नित्यश्च सर्वभूतानां प्रलयोऽयं चतुर्विघः ॥ ४१

पुरुढ, ऋतु, अत्रि, यसिष्ठ—इन मुनियों तथा अगि और पितरीने अहल किया ॥ २६-२७ ॥

श्रद्धासे काम, चला (लक्ष्मी) से दर्प, धृतिसे नियम, तुष्टिसे सन्तोष और पुष्टिसे लोभको उत्पत्ति हुई ॥ २८ ॥ तथा मेधारो श्रुत, क्रियासे दण्ड, नय और विनय, बृद्धिसे बोध, सञ्जासे विनय, वपसे उसका पुत्र व्यवसाय, शान्तिसे भ्रेम, सिद्धिसे सुख और कीर्विसे यहका जन्म हुआ; ये ही धर्मके पुत्र है। रतिने कामसे धर्मके पौत्र हर्षको उत्पन्न किया ॥ २९ — ३१ ॥

अधर्मकी स्त्रो हिसा थी, उससे अनुत नामक पुत्र और निकृति नामकी कन्या उत्पन्न हुई। उन दोनीसे भय और नरक नामके पुत्र तथा उनकी पश्चियाँ मायः और वेदना नामकी कन्याएँ हुई। उनमेंसे भायाने समस्त प्राणियोंका संहारकर्ता सुरयु नामक पुत्र उत्पन्न किया ॥ ३२-३३ ॥ बेदनाने भी रीरव (नरक) के द्वारा अपने पत्र दःखको जन्म दिया और मृत्युसं व्याधि, जरा, चोक, तृष्णा और क्रोधकी उत्पत्ति हुई ॥ ३४ ॥ ये सब अधर्मरूप हैं और 'दःखोत्तर' नामसे प्रसिद्ध हैं. | क्वोंकि इनसे परिणाममें दःख ही श्राप्त होता है। इनके न कोई स्त्री है और न सन्तान। ये सब कथ्वीता है ॥ ३५ ॥ हे मुनिकुमार ! ये भगवान् विक्कृके बड़े भयद्भर रूप हैं और ये ही संसारके नित्य-प्रकयके कारण होते हैं 🛭 ३६ ॥ हे महाभाग ! दक्ष, मरीचि, अत्रि और भूग आदि प्रजापतिगण इस जगतके नित्य-सर्गके कारण है।। ३७।। तथा यन और मनके पराक्रमी, सन्मार्गपरायण और शुर-वीर पुत्र राजागण इस संसारकी नित्य-स्थितिके कारण हैं ॥ ३८ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले-हे ब्रह्मन ! आपने जो नित्य-स्थिति, नित्य-सर्ग और नित्य-प्रस्थयका उल्लेख किया सो कृपा करके मुझसे इनका सारूप वर्णन कीजिये ॥ ३९ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले-जिनको गति कहीं नहीं रुकती वे अचित्त्यातमा सर्वञ्यापक भगवान् मधुसूदन निरन्तर इन मनु आदि रूपोसे संसारको उत्पत्ति, स्थिति और नाश करते रहते हैं ॥ ४० ॥ हे द्विच ! समस्त भूतोंका चार प्रकारका प्रलय है—नैमित्तिक, प्राकृतिक, आह्मन्तिक

ब्राह्मो नैमित्तिकस्तत्र शेतेऽयं जगतीपतिः ।
प्रयाति प्राकृते चैव ब्रह्मण्डं प्रकृतौ लयम् ॥ ४२

ज्ञानादाँत्यन्तिकः प्रोक्तो योगिनः परमात्यनि ।

नित्यः सदैव भूतानां यो विनाशो दिवानिशम् ॥ ४३
प्रसृतिः प्रकृतेयां तु सा सृष्टिः प्राकृता स्मृता ।
दैनन्दिनी तथा प्रोक्ता यान्तरप्रलयादनु ॥ ४४
भूतान्यनुदिनं यत्र जायन्ते मुनिसत्तम ।
नित्यसर्गो हि स प्रोक्तः पुराणार्थविवस्त्रणैः ॥ ४५

एवं सर्वशारीरेषु भगवान्भृतभावनः ।
संस्थितः कुरुते विष्णुकृत्यत्तिस्थितसंयमान् ॥ ४६

सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तयः सर्वदेहिषु ।
वैष्णव्यः परिवर्त्तन्ते मैत्रेयाहर्निशं समाः ॥ ४७

गुणत्रयपयं होतहृह्मन् शक्तित्रयं महत् ।

योऽतियाति स यात्येव परं नावत्तते पुनः ॥ ४८

और नित्य ॥ ४१ ॥ उनमेंसे नैमितिक अल्य ही ब्राह्म-अल्य है, जिसमें जगत्मित ब्रह्माओं कल्पान्तमें शयन करते हैं, तथा प्राकृतिक प्रलयमें ब्रह्माण्ड प्रकृतिमें लोन हो जाता है ॥ ४२ ॥ ज्ञानके द्वारा योगीका परमात्मामें लीन हो जाता अस्यत्तिक प्रलय है और रात-दिन जो भूतोंका क्षय होता है वहां नित्य-प्रलय है ॥ ४३ ॥ प्रकृतिसे महत्त्वादि-क्रमसे जो सृष्टि होतो है वह प्राकृतिक सृष्टि कहल्पती है और अवान्तर-प्रलयक अनन्तर जो [ब्रह्माके द्वारा] चराचर जगत्को उत्पत्ति होती है वह दैनन्दिनों सृष्टि कही जाती है ॥ ४४ ॥ और हे पुनिश्रेष्ट ! जिसमें प्रतिदिन प्राणियोंकी उत्पत्ति होती रहती है उसे पुराणार्थमें कुशल महानुभावोंने नित्य-सृष्टि कहा है ॥ ४५ ॥

इस प्रकार समस्त शरीरमें स्थित मूतभावन भगवान् विष्णु जगत्की उत्पत्ति, रिचिति और प्रस्य करते रहते हैं ॥ ४६ ॥ हे मैंप्रेय ! सृष्टि, स्थिति और जिनाशकी इन वैष्णवी शक्तियोंका समस्त शरीरोमें समान भावसे अहर्निश सञ्चार होता रहता है ॥ ४७ ॥ हे ब्रह्मन् ! ये तोनों महती शक्तियाँ विगुणमयी हैं, अतः जो उन तीनों गुणोंका अतिक्रमण कर जाता है वह परमपरको ही प्राप्त कर लेता है, फिर जन्म-मरणादिके चक्रमें नहीं पहता ॥ ४८ ॥

and the particular of

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेऽहो सप्तमोऽभ्यायः ॥ ७ ॥

आठवाँ अध्याय

रौद्र-सृष्टि और भगवान् तथा सक्ष्मीजीकी सर्वव्यापकताका वर्णन 🦟 🔭 🦠

श्रीपराञ्चार उवाच

कथितस्तापसः सर्गो ब्रह्मणस्ते महामुने । स्द्रसर्गं प्रवश्यामि तन्मे निगदतः शृणु ॥ कल्पादावात्मनस्तुल्यं सुतं प्रध्यायतस्ततः । प्रादुरासीत्प्रभोरङ्के कुमारो नीललोहितः ॥ सरोद सुखरं सोऽथ प्राद्ववदृद्विजसत्तम ।

कि त्वं रोदिषि तं ब्रह्मा स्दन्तं प्रत्युवाच ह ॥ नाम देहीति तं सोऽध प्रत्युवाच प्रजापतिः । स्द्रस्त्वं देव नाष्ट्रासि मा रोदीर्धैर्यमावह । एवमुक्तः पुनः सोऽध सप्रकृत्वो स्रोद वै ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले—है महामुने ! मैंने तुमसे बहार्जिके तामस-सर्गका वर्णन किया, अब मैं ठद्र-सर्गका वर्णन करता हूँ, सो सुनो ॥ १ ॥ कल्पके आदिमें अपने समान पुत्र उत्पन्न होनेके लिये चिन्तन करते हुए ब्रह्माजीकी पोदमें नीललोहित वर्णके एक कुमारका प्रादुर्माव हुआ ॥ २ ॥

है दिजोत्तम ! जन्मके अनन्तर ही बढ़ जोर जोरसे रोने और इधर-उधर दौड़ने लगा। उसे रोता देख बहाजीने उससे पूछा—''तू क्यों रोता है ?'' ॥ ३॥ उसने कहा—''मेरा नाम रखो।'' तब बहाजी जोले—' हे देव ! तेरा नाम रुद्र है, अब तू मत रो, धैर्य धारण कर।' ऐसा कहनेपर भी वह सात बार और ततोऽन्यानि ददौ तस्यै सप्त नामानि वै प्रभुः । स्थानानि चैषामष्टानां पत्नीः पुत्रांश्च स प्रभुः ॥ भवं शर्वमधेशानं तथा पश्पति द्विज। भीममुत्रं महादेवमुवाच स पितामहः ॥ चक्रे नामान्यथैतानि स्थानान्येषां चकार सः । सुर्यो जलं मही वायुर्वद्विराकारामेव च। टीक्षितो ब्राह्मणः सोम इत्वेतास्तनवः क्रमात् ॥ सुवर्चला तथैवोषा विकेशी चापरा शिवा । स्वाहा दिशस्तथा दीक्षा रोहिणी च यथाक्रमम् ॥ सर्यादीनां द्विजशेष्ट स्ट्राइर्टनीयधिः सह। एषां सुतिप्रसुतिभ्यामिदमापूरितं जगत्।। १० स्कन्दः सर्गोऽथ सन्तानो बुधश्चानुक्रमात्स्ताः ॥ ११ उपयेमे दहितरं दक्षस्यैव प्रजापतेः॥ १२ हिमबद्दहिता साऽभून्मेनावां द्विजसत्तम ॥ १३ उपबेमे पुनश्चोमामनन्यां भगवान्हरः ॥ १४ श्रीमैत्रेय उसाच क्षीराज्यौ श्रीः समुत्पन्ना श्रूयतेऽपृतपन्थने । औपरादार तवाच

पत्न्यः स्मृता महाभाग तद्यत्यानि मे शृणु ॥ शनैश्चरस्तथा सुक्रो लोहिताङ्गो पनोजवः। एवंप्रकारो स्द्रोऽसौ सतीं भार्यामनिन्दिताम् । दक्षकोपाच तत्याज सा सती स्वकलेवरम् । देवौ धातुविधातारौ भुगोः स्थातिरस्यत । नित्यैकैषा जगन्माता विष्णोः श्रीरनपायिनी । अर्थो विकारियं वाणी नीतिरेषा नवो हरि: । स्रष्टा विष्णुरियं सृष्टिः श्रीभूमिर्भूधरो हरिः । इच्छा श्रीर्भगवान्कामो यज्ञोऽसौ दक्षिणा त्वियम् ।

भियं च देवदेवस्य पत्नी नारायणस्य या ॥ १५ भूगोः ख्यात्यां समुत्यन्नेत्येतदाह कथं भवान् ॥ १६ यथा सर्वगतो विष्णुस्तश्रैवेयं द्विजोत्तम ॥ १७ बोधो विष्णुरियं बुद्धिर्धर्पोऽसौ सिक्किया त्वियम् ॥ १८ सन्तोषो भगवाँल्लक्ष्मीस्तुष्ट्रिपॅत्रेय शाश्रती ॥ १९ अञ्चाहतिरसौ देवी पुरोडाशो जनार्दनः ॥ २० वि॰ पु॰ २--

रोया ॥ ४ ॥ तब भगवान् ब्रह्माजीने उसके सात नाम और रखे; तथा उन आडोंके स्थान, स्त्री और पुत्र भी निश्चित किये ॥ ५ ॥ हे द्विज ! प्रजापतिने उसे मञ, कर्व, ईशान, पश्पति, भीम, उम और महादेव कंटकर सम्बोधन किया ॥ ६ ॥ यही उसके नाम रखे और इनके स्थान भी निहात किये। सुर्य, जल, पृथिबी, वाय, अग्नि, आकादा, [यज्ञमे] दीक्षित ब्राह्मण और चन्द्रमा—ये क्रमदाः उनकी मृतियाँ है ॥ ७ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! स्द्र आदि नामोके साथ उन सूर्य आदि मूर्तियोकी क्रमशः सुवर्चला, ऊषा, विकेशी, अपरा, शिवा, स्वाहा, दिशा, दीक्षा और रोहिणी नामकी पिलयाँ हैं। हे महाभाग ! अब उनके पृशेके नाम सुनी;

उन्हेंकि पुत्र-पौबादिकोंसे यह सम्पूर्ण जगत् परिपूर्ण

है ॥ ८—१० ॥ शर्नेक्षर, सुक्र, स्वेहिताङ्ग, मनोजव, स्कन्द, सर्ग, सन्तान और बुध--ये क्रमदाः उनके पुत्र हैं। ॥ ११ ॥ ऐसे भगवान् रुद्रने प्रजापति दक्षकी अनिन्दिता पुत्री सतीको अपनी भार्यारूपसे प्रहण किया ॥ १२ ॥ हे द्विजसत्तम ! उस सतीने दक्षपर कृपित होनेके कारण अपना इसीर त्याग दिया था। फिर वह मेनाके गर्भसे हिपाचलको पुत्री (उमा) हुई। भगवान् शंकरने उस अनन्यपरायणा उपासे फिर् भी विवाह किया ॥ १३-१४ ॥ भगके द्वारा ख्यांतिने धाता और विश्वातानामक दो देवताओंको तथा लक्ष्मीजीको जन्म दिया जो भगवान् विष्णुकी पत्नी हुई ॥ १५ ॥ श्रीपैत्रेयजी बोले—भगवन् ! सुना जाता है कि

लक्ष्मीजी तो अमृत-मन्धनके समय श्रीर-सागरसे उत्पन्न हुई थीं, फिर आप ऐसा कैसे कहते हैं कि वे भुगुके द्वारा रूपातिसे उत्पन्न हुई ॥ १६ ॥ भीपराशरजी बोले-हे द्विजोत्तम ! भगवानुका

कभी संग न छोड़नेवाली जगजननी लक्ष्मीजी तो नित्य ही हैं और जिस प्रकार श्रीविष्णुपगवान् सर्वव्यापक है वैसे ही ये भी है।। १७।। विष्णु अर्थ हैं और ये वाणी है, हरि नियम हैं और ये नीति है, भगवान् विष्णु बोध है और ये बद्धि हैं तथा ने धर्म है और ये सिक्किया है।। १८ ॥ है मैत्रेय ! भगवान् जगत्के सहा है और रूक्ष्मीजी सहि है. श्रीहरि भूधर (पर्वत अथवा राजा) है और लक्ष्मीजी भूमि है तथा भगवान् सन्तेन हैं और लक्ष्मीजी निस्प-तुष्टि हैं

॥ १९ ॥ भगवान काम हैं और लक्ष्मीजो इच्छा हैं, वे यज्ञ हैं और ये दक्षिणा हैं, श्रीजनार्दन प्रोडाश हैं और देवी

पत्नीज्ञाला मुने लक्ष्मीः प्राग्वेज्ञो मधुसुद्धनः । चितिर्रुक्ष्मीहॅरियूंप इध्या श्रीर्भगवान्क्रशः ॥ २१ सामस्त्ररूपी भगवानुद्गीतिः कमलालया । खाहा लक्ष्मीर्जगन्नाथो वासुदेवो हुताशनः ॥ २२ शृङ्करो भगवाञ्छौरगाँरी लक्ष्मीर्ह्विजोत्तम । मैत्रेय केदावः सूर्यस्तराभा कमलालया ॥ २३ विष्णुः पितृगणः पद्मा स्वधा शाश्चतपृष्टिदा । द्यौः श्रीः सर्वात्पको विष्णुरवकाशोऽतिविस्तरः ॥ २४ शशाद्धः श्रीधरः कान्तिः श्रीस्तर्ववानपायिनी । धृतिर्लक्ष्मीर्जगचेष्टा वायुः सर्वत्रगो हरिः ॥ २५ जलधिर्द्विज गोविन्दस्तद्वेला श्रीर्महामुने । लक्ष्मीस्वरूपमिन्द्राणी देवेन्द्रो मधुसूदनः ॥ २६ यमश्रक्तधरः साक्षाद्धपोर्णा कमलालया। ऋद्धिः औः श्रीधरो देवः स्वयमेव घनेश्वरः ॥ २७ गौरी लक्ष्मीर्महाभागा केशवो वरुण: स्वयम् । श्रीदेवसेना विप्रेन्द्र देवसेनापतिहीरै: ॥ २८ अवष्टम्भो गदापाणिः शक्तिर्रुश्मीद्विजोत्तम । काष्ट्रा लक्ष्मीर्निमेवोऽसौ मुहूर्तोऽसौ कला त्वियम् ॥ २९ ज्योत्ह्या लक्ष्मीः प्रदीपोऽसौ सर्वः सर्वेष्टरो हरिः । लताभूता जगन्याता श्रीविष्णुर्दूमसंज्ञितः ॥ ३० विभावरी श्रीर्दिवसो देवश्रकगदाधरः। वरप्रदो वरो विष्णुर्वधुः पदावनालया ॥ ३१ नदस्वरूपी भगवाञ्छीनंदीरूपसंस्थिता । ध्वजश्च पुण्डरीकाक्षः यताका कमलालया ॥ ३२ तुष्णा लक्ष्मीर्जगन्नाको लोभो नारायणः परः । रती रागश्च मैत्रेय लक्ष्मीगॉविन्द एव च ॥ ३३ किं चातिबहुनोक्तेन सङ्घेपेणेदमुच्यते ॥ ३४

देवतिर्यङ्गनुष्यादौ पुञ्जामा भगवान्हरिः ।

स्त्रीनाम्नी श्रीश्च विज्ञेवा नानयोर्विद्यते परम् ॥ ३५

हैं, श्रीहरि युप हैं और लक्ष्मीज़े चिति हैं तथा भगवान् कुझा हैं और लक्ष्मीजी इध्मा हैं ॥ २१ ॥ भगवान् सामस्वरूप हैं और श्रीकमलादेवी उद्गीति हैं, जगत्पति भगवान् वास्टेव हताशन हैं और लक्ष्मीजी स्वाहा हैं ॥ २२ ॥ हे द्विजोत्तम ! भगवान विष्ण शंकर है और श्रीसक्षीजी गौरी है तथा है. मैत्रेय ! श्रीकेशव सुर्य है और कमलवासिती श्रीलंक्मीकी उनको प्रभा है ॥ २३ ॥ श्रीविष्णु चितुगण है और श्रीकमला नित्य पृष्टिदायिनी स्वधा है, विष्णु अति विस्तीर्ण सर्वाठस्क अक्कादा है और लक्ष्मीजी स्वर्गस्त्रेक हैं ॥ २४ ॥ भगवान् श्रीपर चन्द्रमा है और श्रीलक्ष्मीजी उनकी अक्षय कान्ति है, हरि सर्वगामी वायु है और रूक्ष्मीजी जगन्नेष्टा (जगत्की र्गात) और धृति (आधार) हैं॥२५॥ हे महामूने ! श्रीगोविन्द समुद्र हैं और हे द्विज ! लक्ष्मीजी उसकी तरङ्ग हैं, भगवान् मधुसुदन देवराज इन्द्र हैं और लक्ष्मीजी इन्द्राणी हैं ॥ २६ ॥ चक्रपाणि धगदान् यस हैं और श्रीकमस्त्र यमपत्नी धुमोणां हैं, देवाधिदेव श्रीविष्णु कुनेर है और श्रीलक्ष्मीजी साक्षात् ऋदि है।। २७॥ श्रीकेदाव स्वयं वरुण हैं और महाभागा लक्ष्मीजी गीरी हैं, हे द्विजराज ! श्रीहरि देवसेनापति स्वामिकार्तिकेय है और श्रीलक्ष्मीजी देवसेना है ॥ २८ ॥ हे द्विजोत्तम ! भगवान् गदाश्वर आक्रय हैं और लक्ष्मीजी इस्ति हैं, भगवान् निमेच हैं और लक्ष्मीजी काष्ट्रा है, वे मुहर्त हैं और ये कहन हैं ॥ २९ ॥ सर्वेशर सर्वरूप श्रीहरि दीपक है और श्रीलक्ष्मीजी ज्योति है, श्रोबिष्ण् वृक्षरूप हैं और जगन्यता श्रीलक्ष्मीजी लता हैं ॥ ३० ॥ चक्रगदाधरदेव श्रीविष्णु दिन है और रुक्ष्मीजी संत्रि है, बरदायक श्रीहरि वर है और परानिवासिनी श्रीलक्ष्मीजी बंधु हैं ॥ ३१ ॥ भगवान् नद हैं और श्रीजी नदी हैं, कमरुनयन भगवान् ध्वजा है और कमरुमरुया रूक्ष्मीजी पताका है ॥ ३२ ॥ जगदीश्वर परमात्मा नारायण लोभ हैं और लक्ष्मीजी तृष्णा है तथा हे पैत्रेय ! र्रात और राग भी साक्षात् औलक्ष्मी और मोविन्स्रूप ही है ॥ ३३ ॥ अधिक क्या कहा जाय ? संक्षेपमें, यह कहना चाहिये कि देव, तिर्थक और मनुष्य आदिमें पुरुषकाची भगवान् हरि हैं और स्रोवाची श्रीलक्ष्मीजी, इनके परे और कोई नहीं

लक्ष्मीजी आज्याहुति (घृतको आहुति) हैं ॥२०॥ है मुने | मधुसुदन यजमानगृह हैं और लक्ष्मीजी पलीशाला

नवाँ अध्याय

दुर्वासाजीके शापसे इन्द्रका पराजय, ब्रह्माजीकी स्तुतिसे प्रसन्न हुए भगवान्का प्रकट होकर देवताओंको समुद्र-मन्यनका उपदेश करना तथा देवता और दैत्योंका समुद्र-मन्यन

इदं च भूण् मैत्रेय यत्पृष्टोऽहमिह त्वया। श्रीसम्बन्धं मयाप्येतच्छतमासीन्परीचितः ॥ दुर्वासाः शङ्करस्यांशश्चार पृथिवीमिमाम् । स ददर्श स्त्रजं दिव्यामुषिर्विद्याधरीकरे ॥ 3 सन्तानकानामस्त्रिलं यस्या गन्धेन वासितम् । अतिसेव्यमभृद्धस्य तद्वनं वनचारिणाम् ॥ 3 उन्मत्तव्रतधृग्विप्रस्तां दुष्टा शोधनां स्वजम् । तां ययाचे वरारोहां विद्याधरवध्ं ततः ॥ X याचिता तेन तन्वड्डी मालां विद्याधराङ्गना । ददौ तस्मै विज्ञालाक्षी सादरं प्रणिपत्य तम् ॥ q तामादायात्मतो मूर्धि स्टजमुन्यतस्वपधृक् । कृत्वा स वित्रो पैत्रेय परिबन्नाम मेदिनीम् ॥ स ददर्श तमायान्तमुन्यत्तैरावते स्थितम् । प्रैलोक्याधिपति देवं सह देवै: शजीपतिम् ॥ तामात्मनः स झिरसः स्त्रजमुक्तत्वद्पदाम् । आदायापरराजाय चिक्षेपोन्पत्तवसुनिः ॥ गृहीत्वाऽमरराजेन स्नगैरावतमूर्द्धनि । न्यस्ता रराज कैलासशिखरे जाह्नवी यथा ॥ मदान्धकारिताक्षोऽसौ गन्धाकृष्ट्रेन वारणः । करेणावाय चिक्षेप तां सजं धरणीतले ॥ १० ततश्चक्रोध भगवान्दुर्वासा मुनिसत्तमः । मैन्नेय देवराजं तं कुद्धश्चैतदुवाच ह ॥ ११ द्वांसा उवाच

दुवंसा उवाय ऐश्वर्यमद्दुष्टात्मन्नतिस्तन्थोऽसि वासव । श्रियो धाम स्रजं यस्त्वं महत्तां नाभिनन्दसि ॥ १२ प्रसाद इति नोक्तं ते प्रणिपातपुर:सरम् । हर्षोत्फुल्लकपोलेन न चापि शिरसा धृता ॥ १३ मया दत्ताभिमां भालां यस्मान्न बहु मन्यसे । त्रैलोक्यश्रीरतो मूढ विनाशमुपयास्मति ॥ १४ श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैत्रेय! तुमने इस समय मुझसे जिसके विषयमें पूछा है वह श्रीसम्बन्ध (लक्ष्मीजीका इतिहास) मैंने भी मरीन्व ऋषिसे मुना था, वह मै तुम्हें सुनाता हूँ, [साबधान होकर] सुनो ॥१॥ एक बार शंकरके अशावतार श्रीदुर्वासाजी पृथिवीतस्त्रमें विचर रहे थे। घूमते-घूमते उन्होंने एक विद्याधरीके हाथोंमें सन्तानक पुष्पोंकी एक दिव्य माला देखी। है ब्रह्मन्! उसकी गन्धसे सुवासित होकर वह वन वनवासियोंक स्थि अति सेवनीय हो रहा था॥ २-३॥ तब उन उन्मत-वृत्तिवाले विश्ववरने वह सुन्दर माला देखकर उसे उस विद्याधर-सुन्दरीस भीगा॥४॥ उनके माँगनेपर उस बड़े-बड़े नेशेंवाली कृशांभी विद्याधरीने उन्हें आदरपूर्वक प्रणाम कर वह माला दे रही॥ ५॥

हे मैन्नेय ! उन उन्मत्तेवधारी विप्रवर्त उसे लेकर अपने मस्तकपर डाल लिया और पृथिवीपर विचरने लगे ॥ ६ ॥ इसी समय उन्होंने उन्मत्त ऐरावतपर चढ़कर देवताओं के साथ आते हुए बैलोक्याधिपति श्राचीपति इन्द्रको देखा ॥ ७ ॥ उन्हें देखकर मुनिवर दुर्वासाने उन्मत्तके समान वह मतवाले भींग्रेसे गुज़ाबमान माला अपने सिरपरसे उतारकर देवराज इन्द्रके ऊपर फेंक दी ॥ ८ ॥ देवराजने उसे लेकर ऐरावतके मस्तकपर डाल दी; उस समय वह ऐसी सुशोधित हुई मानो कैलास पर्वतके शिखरपर श्रीम्ब्राजी विराजमान हो ॥ ९ ॥ उस मदोन्यत हाथीने भी उसको मन्थसे आकर्षित हो उसे सूँद्रसे सूँगकर पृथिवीपर फेंक दिया ॥ १० ॥ हे मैंत्रेय ! यह देखकर मुनिश्रेष्ठ भगवान् दुर्जासाजी अति क्रोधित हुए और देवराज इन्द्रसे इस प्रकार बोले ॥ ११ ॥

दुर्वासाजीने कहा — अरे ऐश्वर्यके मदसे दूषितिचित्त इन्द्र ! तू बड़ा लोठ है, तूने मेरों दो हुई सम्पूर्ण शोभाकी धाम मालाका कुछ भी आदर नहीं किया ! ॥ १२ ॥ अरे ! तूने न तो प्रणाम करके 'बड़ी कृपा की' ऐसा ही कहा और न हर्षसे प्रसन्नवदन होकर उसे अपने सिरपर ही रखा ॥ १३ ॥ रे मूढ़ ! तूने मेरी दी हुई मालाका कुछ भी मूल्य नहीं किया, इसलिये तेस प्रिलोकीका वैभव नह हो मां मन्यसे त्वं सदृशं नृतं शक्केतरहिजैः। अतोऽवमानमस्मासु मानिना भवता कृतम्॥ १५ महत्ता भवता यस्मातिक्षप्ता माला महीतले। तस्मात्राणष्टलक्ष्मीकं त्रैलोक्यं ते भविष्यति॥ १६ यस्य सञ्जातकोषस्य भयमेति चराचरम्। तं त्वं मामतिगर्वेण देवराजावमन्यसे॥ १७

श्रीपराशर उवाच

महेन्द्रो वारणस्कन्धादवतीर्य त्वरान्वितः । प्रसादयामास मुनि तुर्वाससमकल्मषम् ॥ १८ प्रसाद्यमानः स तदा प्रणिपातपुरःसरम् । इत्युवाच सहस्राक्षं दुर्वासा मुनिसत्तमः ॥ १९

दुवासा उकाच नाहं कृपालुहृदयो न च मां भजते क्षमा ।

अन्ये ते मुनयः शक्र दुर्वाससमवेहि माम् ॥ २०

गौतमादिभिरन्यस्तं गर्वमारोपितो मुधा। अक्षान्तिसारसर्वस्वं दुर्वाससमवेहि माम्॥ २१ वसिष्ठाचैर्दयासारैस्स्तोत्रं कुर्वद्धिरुचकैः। गर्वं गतोऽसि येनैवं मामप्यद्यावमन्यसे॥ २२ ज्वरुजटाकरूपस्य भृकुटीकुटिलं मुखम्।

निरीक्ष्य कस्त्रिभुवने मय यो न गतो भयम् ॥ २३ नाहं क्षमिष्ये बहुना किमुक्तेन शतकतो ।

विडम्बनामिमां भूयः करोष्यनुनयात्मिकाम् ॥ २४

श्रीनगरस उवाच

इत्युक्त्वा प्रययौ विप्रो देवराजोऽपि तं पुनः । आरुद्दौरावतं ब्रह्मन् प्रययावमरावतीम् ॥ २५ ततः प्रभृति निःश्रीकं सशकं भुवनत्रयम् ।

मैत्रेयासीदपध्यस्तं सङ्क्षीणौषधिवीरुथम् ॥ २६

न यज्ञाः समवर्तन्त न तपस्यन्ति तापसाः ।

न च दानादिवर्मेषु मनश्चके तदा जनः॥ २७

निःसत्त्वाः सकला लोका लोभाद्यपहतेन्द्रियाः ।

स्वल्पेऽपि हि बभूवुस्ते साभिलाया हिजोत्तम ॥ २८

यतः सत्त्वं ततो लक्ष्मीः सत्त्वं भूत्यनुसारि च ।

निःश्रीकाणां कुतः सत्त्वं विना तेन गुणाः कुतः ॥ २९

जायगा ॥ १४ ॥ इन्द्र ! निश्चय ही तू मुझे और ब्राह्मणीके समान ही समझता है, इसोलिये तुझ अति मानीने हमारा इस प्रकार अपमान किया है ॥ १५ ॥ अच्छा, तूने मेरी दी हुई गालाको पृथिबीपर फेंका है इसलिये तेस यह त्रिभुवन भी सीम ही श्रीहीन हो जायगा ॥ १६ ॥ रे देवराज ! जिसके कुद्ध होनेपर सम्पूर्ण चराचर जगत् भयभीत हो जाता है उस मेरा ही तूने अति गर्वसे इस प्रकार अपमान किया ! ॥ १७ ॥

श्रीपराझरजी बोले---सब ते। इन्द्रने तुरस्त ही ऐरावत हाथीसे उतरकर निष्माप मुनिबर दुर्वासाजीको [अनुनय-विनय करके] प्रसन्न किया ॥ १८ ॥ तब उसके

प्रणामादि करनेसे प्रसन्न होकर मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाजी उससे इस प्रकार कहने छगे ॥ २९ ॥

दुर्वासाजी बोले—इन्द्र! मैं कृपालु-चित्त नहीं हूँ, मेरे अन्तःकरणमें क्षमाको स्थान नहीं है। वे मुनिजन तो और ही हैं; तुम समझों, मैं तो दुर्वासा हूँ न ? ॥२०॥ गौतमादि अन्य मुनिजनोंने व्यर्थ ही तुझे इतना मुँह लगा लिया है; पर याद एख, मुझ दुर्वासाका सर्वस्त तो क्षमा न करना ही हैं॥ २१॥ दयामृर्ति वसिष्ठ आदिके बढ़-बढ़कर स्तुति करनेसे तू इतना गर्वीला हो गया कि आज मेरा भी अपनान करने चला है॥ २२॥ अरे ! आज जिल्लेकीमें ऐसा कौन है जो मेरे प्रज्वलित जहाकलाप और देवी भूकुटिको देखकर भयमीत न हो जाय ?॥ २३॥ रे शतकतो ! तू वारम्बार अनुनय-विनय करनेका दोग क्यों करता है ? तेरे इस कहने सुननेसे क्या होगा ? मैं क्षमा नहीं कर सकता॥ २४॥

श्रीपराशरजी बोरिं — हे ब्रह्मन् ! इस प्रकार कह वे विप्रवर वहाँसे चल दिये और इन्द्र भी प्रेशवतपर बहुकर अमरावतीको चले गये ॥ २५ ॥ हे मैंत्रेय ! तमीसे इन्द्रके सहित तीनों लोक वृक्ष-लता आदिके झीण हो जानेसे श्रीहीन और नष्ट-श्रष्ट होने लगे ॥ २६ ॥ तबसे यशोंका होना बन्द हो गया, तपस्थियोने तप करना खेड़ दिया तथा लोगोंका दान आदि धर्मेंमिं चित्त नहीं रहा ॥ २७ ॥ हे दियोत्तम ! सम्पूर्ण लोक लोभादिके वशीभृत हो जानेसे सस्वश्न्य (सामर्थ्यहीन) हो गये और तुत्क वस्तुओंके क्लिये भी लालगित रहने लगे ॥ २८ ॥ जहाँ सन्त होता है वहीं लक्ष्मी रहतो है और सन्त भी लक्ष्मीका ही साथी है।

श्रीहीनोंमें भरू। सत्त्व कहाँ ? और बिना सत्त्वके गुण

बलझौर्याद्यभावश्च पुरुषाणां गुणैर्विना । लङ्गुनीयः समस्तस्य बलशौर्यविवर्जितः ॥ ३० भवत्यपथ्यस्तमतिर्लक्षितः प्रश्वितः पुमान् ॥ ३१ एवमस्यन्तनिःश्रीके त्रैलोक्ये सत्त्ववर्जिते । देवान् प्रति बलोद्योगं चक्नुद्दैतेयदानवाः ॥ ३२ लोपाभिपुता निःश्रीका दैत्याः सत्त्वविवर्जिताः । श्रिया विहीनैर्नि:सत्त्वैदेवैश्चकुस्ततो रणम् ॥ ३३ विजितासिदशा देव्येरिन्दराद्याः शरणं ययुः । पितामहं महाभागं हुताशनपुरोगमाः ॥ ३४ यथावत्कथितो देवैर्ब्रह्मा प्राष्ट्र ततः सुरान्। परावरेशं शरणं व्रजध्वमसुरार्दनम् ॥ ३५ उत्पत्तिस्थितिनाशानामहेतुं हेतुपीश्वरम् । प्रजापतिपति विष्णुमनन्तमपराजितम् ॥ ३६ प्रधानपुंसीरजयोः कारणं कार्यभृतयोः। प्रणतार्त्तिहरं विष्णुं स वः श्रेयो विधास्पति ॥ ३७ श्रीपरास्त्र उवाच एवमुक्त्वा सुरान्सर्वान् ब्रह्मा लोकपितामहः । क्षीरोदस्योत्तरं तीरं तैरेव सहितो ययौ ॥ ३८ स गत्वा त्रिदशैः सर्वैः समवेतः पितामहः । तृष्टाव वाग्भिरिष्टाभिः परावरपति हरिम् ॥ ३९ वस्त्रावाच नयामि सर्वे सर्वेशमनन्तमजमव्ययम्। लोकधाम धराधारमप्रकाशमभेदिनम् ॥ ४० नारायणमणीयांसमशेषाणामणीयसाम् । समस्तानां गरिष्ठं च भूरादीनां गरीयसाम् ॥ ४१ यत्र सर्वं यतः सर्वमुत्पन्नं मत्पुरःसरम्। सर्वभृतश्च यो देवः पराणामपि यः परः ॥ ४२ परः परस्मात्पुरुवात्परमात्मस्वरूपधृक् । योगिभिश्चिन्यते योऽसौ मुक्तिहेतोर्मुमुक्षुभिः ॥ ४३ सत्त्वादयो न सन्तीशे यत्र च प्राकृता गुणा: । स शुद्धः सर्वशुद्धेभ्यः पुमानाद्यः प्रसीदत् ॥ ४४ कलाकाष्ट्रामुहर्तादिकालसूत्रस्य गोचरे ।

बस्य शक्तिर्न शुद्धस्य स नो विष्णुः प्रसीदत् ॥ ४५

॥ ३३ ॥ अन्तमें देखोंद्वास देवतालोग परास्त हुए । तब इन्द्रादि समस्त देवगण अभिदेवको आगे कर पहाभाग पितामह श्रीब्रह्माजीकी शरण गये॥ ३४॥ देवताओसे सम्पूर्ण बृत्तान्त सूनकर श्रीब्रह्माजीने उनसे कहा, है देवगण ! तुम दैत्य-दलन पराचरेश्वर धगकन् विष्णुकी शरण जाओ. जो [आरोपसे] संसारकी उत्पत्ति, स्थिति और संहारके कारण है फिन्तु [बासाबमें] कारण भी नहीं हैं और जो चराचरके ईश्वर, प्रजापतियोंके स्वामी, सर्वच्यापक, अनन्त और अवेय है तथा वो अजना किस कार्यरूपमें परिणंत हुए प्रधान (मूलप्रकृति) और प्रध्यके कारण है एवं अरणागतनस्मल है। [शरण जानेपर] वे अबदय तुम्हारा मङ्गल करेगे' ॥ ३५-—३७॥ श्रीपराञ्चरजी खोले — हे मैत्रेय ! सम्पूर्ण देवगणींसे इस प्रकार कह लोकपितामह श्रीब्रह्माजी भी उनके साथ श्रीरसागरके उत्तरी तटपर गये॥ ३८॥ बहाँ पहुँचकर पितामह ब्रह्माजीने समस्त देवताओंके साध पत्तवरनाथ श्रीविष्णुभगवानुकी अति पङ्गलपय वाक्योंसे स्तृति की ॥ ३९ ॥ ब्रह्माजी कहने रूगे - जो समस्त अणुओंसे भी अणु और पृथिवी आदि समस्त गुरुओं (भारी पदार्थी) से भी गुरु (भारी) हैं उन निस्तिल्होकविश्वाम, पृथिवीके आधारस्वरूप, अप्रकार्य, अभेद्य, सर्वरूप, सर्वेक्षर, अनन्त, अज और अध्यय नारायणको मैं नमस्कार करता हैं ॥ ४०-४१ ॥ मेरेसहित सम्पूर्ण जगत जिसमें स्थित है, जिससे उत्पन्न हुआ है और जो देव सर्वभृतमय है तथा जो पर (प्रधानादि) से भी पर है; जो पर पुरुषसे भी पर है, मुक्ति-लाभके लिये मोक्षकामी मुनिजन जिसका ध्यान घरते है तथा जिस ईश्वरमें सत्त्वदि प्राकृतिक गुणौंका सर्वधा अभाव है वह समस्त शुद्ध पदार्थोंसे भी परम शुद्ध परमात्मस्वरूप आदिपुरुष हमपर प्रसन्न हों ॥ ४२—४४ ॥

जिस शुद्धस्वरूप भगवान्की शक्तिः (विमृति) करुप-

कैसे उहर सकते हैं 7 ॥ २९ ॥ जिना गुणीके पुरुषमें बल,

श्रीर्य आदि समीका अभाव हो जाता है और निर्वल तथा अशक पुरुष समीसे अपमानित होता है ॥ ३० ॥ अपमानित

इस प्रकार विलोकत्के श्रीहीन और सन्वरहित हो

जानेपर दैत्य और दानवोंने देवताओंपर चढ़ाई कर दी

॥ ३२ ॥ सल और वैभवसे शून्य होनेपर भी दैत्योंने स्प्रेभवश निःसत्त्व और श्रीहीन देवताओंसे योर युद्ध ठाना

होनेपर प्रतिष्ठित पुरुषकी बुद्धि बिगड़ जाती है ॥ ३१ ॥

प्रोच्यते परमेशो हि यः शुद्धोऽप्युपचारतः । प्रसीदतु स नो विष्णुरात्मा यः सर्वदेहिनाम् ॥ ४६ यः कारणं च कार्यं च कारणस्वापि कारणम् । कार्यस्यापि च यः कार्यं प्रसीदतु स नो हरिः ॥ ४७ कार्यकार्यस्य यत्कार्यं तत्कार्यस्यापि यः स्वयम् । तत्कार्यकार्यभूतो यस्ततश्च प्रणताः स्म तम् ॥ ४८ कारणं कारणस्यापि तस्य कारणकारणम् । तत्कारणानां हेतुं तं प्रणताः स्म परेश्वरम् ॥ ४९ भोक्तारं भोग्यभूतं च स्रष्टारं सृज्यमेव च । कार्यकर्तृस्वरूपं तं प्रणताः स्य परं पदम् ॥ ५० विशुद्धकोधवित्रत्यमजमक्षयमव्ययम् अव्यक्तमविकारं यत्तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ५१ न स्थूलं न च सूक्ष्मं यन्न विशेषणगोचरम् । तत्पदं परमं विष्णोः प्रणमामः सदाऽमलम् ॥ ५२ यस्यायुतायुतांशांशे विश्वशक्तिरियं स्थिता । यत्रणमामस्तमव्ययम् ॥ ५३ परब्रह्मस्वरूपं बद्योगिनः सदोद्युक्ताः पुण्यपापक्षयेऽक्षयम् । पश्यन्ति प्रणवे चिन्त्यं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ५४ यन्न देवा न मुनयो न चाहं न च ञ्डूरः । जानन्ति परमेशस्य तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ५५ शक्तयो यस्य देवस्य ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाः । भवन्यभूतपूर्वस्य तद्विष्णोः परमं पदम्।। ५६ सर्वेश सर्वभूतात्मन्सर्वे सर्वाध्रयाच्युत्। प्रसीद विष्णो भक्तानां क्रज नो दृष्टिगोचरम् ॥ ५७ श्रीपराञ्चर उवाच

इत्युदीरितमाकण्यं ब्रह्मणस्त्रिदशास्ततः । प्रणम्योचुः प्रसीदेति व्रज नो दृष्टिगोचरम् ॥ ५८ यत्रायं भगवान् ब्रह्मा जानाति परमं पदम् । तन्नताः स्म जगद्वाम तव सर्वगताच्युत ॥ ५९

काष्टा और मुहर्न आदि काल-क्रमका विषय नहीं है, वे मगवान् विष्णु हमपर प्रसन्न हो ॥ ४५ ॥ जो शुद्धस्वरूप होकर भी उपचारसे परमेश्वर (परमा-महाउधमी-ईक्षर-पति) अर्थात् सभगीपति कहरूरते हैं और जो समस्त देहधारियंकि आत्मा हैं वे श्रीविष्णुघगवान् हमपर प्रसन्न हों ॥ ४६ ॥ जो कारण और कार्यरूप हैं तथा कारणके भी कारण और कार्यके भी कार्य है वे श्रीहरि हमपर प्रसन्न हो ॥ ४७ ॥ जो कार्य (महत्तत्व) के कार्य (आहंकार) का भी कार्य (तन्मात्रापञ्चक) है उसके कार्य (भूतपञ्चक) का भी कार्य (ब्रह्माण्ड) जो स्वयं है और जो उसके कार्य (ब्रह्मा-दक्षादि) का भी कार्यभूत (अजायतियोंके पुत्र-शीतादि) है उसे हम प्रणाय करते हैं ॥ ४८ ॥ तथा जो जगतके कारण (ब्रह्मादि) का कारण (ब्रह्माण्ड) और उसके कारण (भूतपञ्चक) के कारण (पञ्चतन्मात्रा) के कारणों (अहंकार-महत्तत्वादि) का भी हेतु (मुलप्रकृति) है उस परमेश्वरको हम प्रणाम करते है ॥ ४९ ॥ जो भोका और भोग्य, स्नष्टा और सुज्य तथा कर्ता और कार्यरूप साथ ही है उस परमपदको हम प्रणाम करते हैं ॥ ५० ॥ जो विशुद्ध बोधावरूप, नित्य, अजन्या, अक्षय, अञ्यय, अञ्यक्त और अविकारी है वही विष्णुका परमपद (परस्वरूप) है ॥ ५१ ॥ जो न स्थूल है न सुक्ष्म और न किसी अन्य विशेषणका विषय है वही भगवान विष्णुका नित्य-निर्मल परमपद है, हम उसको प्रणाम करते. है।। ५२ ॥ जिसके अयुतांश (दस हजारवे अंश) के अयुतोशमें यह विश्वरचनाकी शक्ति स्थित है तथा जो परब्रह्मस्वरूप है उस अध्ययको हम प्रणाम करते हैं ॥ ५३ ॥ नित्य-युक्त योगिगण अपने पुण्य-पापादिका क्षय हो जानेपर ॐकारद्वारा चिन्तनीय जिस अविनाशी पदका साक्षात्कार करते हैं वही भगवान् विष्णुका परमपद है ॥ ५४ ॥ जिसको देवगण, मुनियण, शंकर और मैं— कोई भी नहीं जान सकते वही परमेश्वर श्रीविष्णुका परमपद है ॥ ५५ ॥ जिस अभृतपूर्व देवको बह्या, विष्णु और शिवरूप शक्तियाँ है बही भगवान विष्णुका परमपद है ॥ ५६ ॥ हे सर्वेश्वर] हे सर्वभूतात्मन् ! हे सर्वरूप ! हे सर्वाधार ! हे अच्युत ! हे बिल्लो ! इम भक्तीपर प्रसन्न होकर हमें दर्शन तीजिये ॥ ५७ ॥

श्रीपराशरजी सोले—ब्रह्मजीके इन उदारीको सुनकर देवगण भी प्रणाम करके बोले— प्रमो ! हमपर प्रसन्न होकर हमें दर्शन दीजिये॥ ५८॥ हे जगन्द्राम हत्यने वचसतेषां देवानां ब्रह्मणस्तथा। ऊचुदेवर्षयसतें बृहस्पतिपुरोगमाः॥६० आद्यो यज्ञपुमानीङ्यः पूर्वेषां यश्च पूर्वजः। तन्नताः स्म जगत्त्वष्टुः स्रष्टारमिवशेषणम्॥६१ धगवन्धूतभव्येश यज्ञमृतिंधराव्यय। प्रसीद प्रणतानां त्वं सर्वेषां देहि दर्शनम्॥६२ एव ब्रह्मा सहास्माभिः सहस्द्रैस्निलोचनः। सर्वादित्यैः समं पूषा पावकोऽयं सहाप्रिभिः॥६३ अधिनौ वसवश्चेमे सर्वे चैते महद्गणाः। साथ्या विश्वे तथा देवा देवेन्द्रश्चायमीश्चरः॥६४ प्रणामप्रवणा नाथ दैत्यसैन्यैः पराजिताः।

श्रीपरागर उवाच एवं संस्तुयमानस्तु भगवाञ्छङ्क्षचक्रश्रुक् । जगाम दर्शनं तेषां मैत्रेय परमेश्वरः ॥ ६६ तं दृष्ट्वा ते तदा देवाः शङ्कचक्रगदाघरम् । अपूर्वरूपसंस्थानं तेजसां राश्चिमूर्जितम् ॥ ६७ प्रणम्य प्रणताः सर्वे संशोभस्तिमितेश्वणाः । तुष्टुतुः पुण्डरीकाक्षं पितामहपुरोगमाः ॥ ६८ देवा अनुः

शरणं त्वामनुत्राप्ताः समस्ता देवतागणाः ॥ ६५

प्रणम्य प्रणताः सव सङ्गाभास्तापतञ्जाः । तुष्टुतः पुण्डरीकाक्षं पितामहपुरोगमाः ॥ ६८ देश ऊपुः नमो नमोऽविशेषस्त्वं त्वं ब्रह्मा त्वं पिनाकधृक् । इन्द्रस्त्वमितः पवनो वरुणः सविता यमः ॥ ६९ वसवो मस्तः साध्या विश्वेदेवगणाः भवान् । योऽयं तवाप्रतो देव समीपं देवतागणः । स त्वमेव जगत्स्त्रष्टा यतः सर्वगतो भवान् ॥ ७० त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमोङ्कारः प्रजापतिः । विद्या वेद्यं च सर्वात्मंस्तन्त्रयं चालितं जगत् ॥ ७१ त्वामार्ताः सरणं विद्यो प्रयाता दैत्यनिर्जिताः । वयं प्रसीद सर्वात्मंस्तेजसाप्याययस्य नः ॥ ७२

तावदार्त्तिस्तथा वाञ्छा तावन्पोहस्तथाऽसुखम् ।

त्वं प्रसादं प्रसन्नात्वन् प्रपन्नानां कुरुषु नः ।

यावन्न याति शरणं त्वामशेषाधनाञ्चनम् ॥ ७३

तेजसां नाथ सर्वेषां स्वशक्त्याप्यायनं कुरु ॥ ७४

सर्वगत अच्युत ! जिसे ये भगवान् ब्रह्माओं भी नहीं जानते, आफ्के उस परमपदको हम प्रणाम करते हैं ॥ ५९ ॥ तदमन्तर ब्रह्मा और देवगणोंके बोल युकनेपर बृहस्पति आदि समस्त देवर्षिगण कहने लगे— ॥ ६० ॥ 'जो परम स्तवनीय आद्य ब्रह्म-पुरुष हैं और पूर्वजोंके भी पूर्वजुक्य हैं उन जगत्के स्विचता निर्विशेष परमात्माको हम नमस्कार करते हैं ॥ ६९ ॥ हे भूत-भव्येश यश्मपूर्तिभर भगवन् । हे अव्यय । हम सब शरणागतीपर आप प्रसन्न होइये और दर्शन दीजिये ॥ ६२ ॥ हे नाथ ! हमारे सहित ये ब्रह्माजी, रुद्रोंके सहित भगवान् शंकर, बारही आदित्योंके सहित भगवान् शंकर, बारही आदित्योंके सहित भगवान् पूषा, अग्नियोंके सहित भगवक और ये दोनों अधिनीक्रमार, आदों वस्, समस्त मरुद्रण,

शरपामें आये हैं' ॥ ६३ — ६५ ॥ श्रीपराशरजी बोले — हे मैत्रेव ! इस प्रकार स्तृति किये जानेपर शंख-चक्रधारी भगवान् परमेश्वर उनके सम्पुख प्रकट हुए ॥ ६६ ॥ तब ठक्ष शंख-चक्रगदाधारी उत्कृष्ट तेजोराशिमय अपूर्व दिव्य मृतिको देखकर पितामह

आदि समस्त देवगण अति विनयपूर्वक प्रणामकर क्षोभवदा चिकत-नयन हो उन कमलनयन भगवानुकी

स्तृति करने लगे ॥ ६७-६८ ॥

साध्यगण, विश्वेदेव तथा देवराज इन्द्र ये सभी देवगण दैत्य-सेनासे पराजित होकर अति प्रणत हो आफर्की

देवगण बोले—हे प्रभी ! आपको नगरकार है, नमस्कार है ! आप निर्विदेव हैं तथापि आप ही बहा। हैं, आप ही शंकर हैं तथा आप ही इन्द्र, अग्नि, पवन, वरुण, सूर्य और यमराज हैं । ६९ ॥ हे देव ! वसुगण, मरुद्रण, साध्यगण और विश्वेदेवगण भी आप ही हैं तथा आपके सम्पुख को वह देवसमुदाय है, हे जगरकाष्टा ! वह भी आप ही हैं क्योंकि आप सर्वत्र परिपूर्ण हैं ॥ ७० ॥ आप ही यह है, आप ही वषदकार है तथा आप ही ओंकार

दैत्योंसे परास्त हुए हम आतुर होकर आपकी शरणमें आये है; हे सर्वत्वरूप ! आप हमपर प्रसन्न होइये और अपने तेजसे हमें सशक्त कीजिये ॥ ७२ ॥ हे प्रमो ! जयतक जीय सम्पूर्ण पापोको नष्ट करनेवाले आपकी शरणमें नहीं जाता तभीतक उसमें दीनता, इच्छा, मोह और दु:ख आदि रहते है ॥ ७३ ॥ हे प्रसन्नात्वन् ! हम शरणागतोंपर आप प्रसन्न होइये और हे नाथ ! अपनी शक्तिसे हम सब

और प्रजापति हैं। हे सर्वातान् ! विद्या, वेदा और सम्पूर्ण

जगत् आपहीका स्वरूप तो है॥ ७१ ॥ हे विष्णो !

श्रीपराद्यार उयाच एवं संस्तूयमानस्त् प्रणतैरमरैहीरै: । प्रसन्नदृष्टिर्भगवानिद्माह स विश्वकृत् ॥ ७५ तेजसो भवतां देवाः करिष्याम्यपबंहणम् । वदाम्यहं यत्क्रियतां भवद्भिस्तदिदं सुराः ॥ ७६ आनीय सहिता दैत्यैः श्लीराब्धौ सकलीपधीः । प्रक्षिप्यात्रामृतार्थं ताः सकला दैत्यदानवैः । मन्यानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा च वासुकिम् ॥ ७७ मध्यताममृतं देवाः सहाये मध्यवस्थिते ॥ ७८ सामपूर्वं च दैतेयास्तत्र साहाय्यकर्मणि । सामान्यफलभोक्तारो यूवं वाच्या भविष्यय ॥ ७९ मध्यमाने च तत्राव्यौ यत्समृत्यत्स्यतेऽमृतम् । तत्यानाङ्ग्लिनो युवममराञ्च भविष्यश्च ॥ ८० तथा चाहं करिष्यामि ते यथा त्रिदशद्विष: । न प्राप्यन्यमृतं देवाः केवलं क्रेशभागिनः ॥ ८१ श्रीपराचर उसाच

इत्युक्ता देवदेवेन सर्व एव तदा सुराः। सन्धानमस्रैः कृत्वा यत्नवन्तोऽमृतेऽभवन् ॥ ८२ नानौषधीः समानीय देवदैतेयदानवाः। क्षिप्ता क्षीराव्यिपयसि शरदभामलितिषि ॥ ८३ मन्यानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा च वासुकिम् । ततो मधितुमारक्या मैत्रेय तरसाऽमृतम् ॥ ८४ विबुधाः सहिताः सर्वे यतः पुर्छं ततः कृताः । कृष्णेन वासुकेदैंत्याः पूर्वकाये निवेशिताः ॥ ८५ ते तस्य मुखनिश्वासवहितापहतत्विषः । निस्तेजसोऽसुराः सर्वे वभूवुरमितोजसः ॥ ८६ तेनैव मुखनिश्वासवायनास्तबलाहकैः । पुच्छप्रदेशे वर्षद्भिस्तदा वाप्यायिताः सुराः ॥ ८७ क्षीरोदमध्ये भगवान्कुर्मरूपी स्वयं हरिः। मन्धनाद्रेरिषष्टानं भ्रमतोऽभून्यहामुने ॥ ८८. रूपेणान्येन देवानां मध्ये चक्रगदाधरः। चक्क नागराजानं दैत्यमध्येऽपरेण च ॥ ८९

देवताओंके (स्तीये हुए) तेजको फिर बढ़ाइबे ॥ ७४ ॥

श्रीपराहारजी बोले—विनीत देवताओद्वारा इस प्रकार स्तृति किये जानेपर विश्वकर्ता भगवान् हरि प्रसंत होकर इस प्रकार बोले — ॥ ७५ ॥ हे देवगण ! मैं तुन्हारे तेजको फिर बदाऊँगा; तुम इस समय मैं जो कुछ कहता हैं। वह करो ॥ ७६ ॥ तुम दैत्योंके साथ सम्पूर्ण ओवधियाँ लाकर अमृतके लिये श्रीर-सागरमें डालो और मन्दराचलको मथानी तथा वासकि नागको नेती बनाकर उसे देख और दानवोंके सहित मेरी सहायतासे मधकर अमरा निकालो ॥ ७७-७८ ॥ तुमलोग सामनीतिका अवलम्बन कर दैत्योंसे कहो कि 'इस काममें सहायता करनेसे आपलोग भी इसके फलमें समान भाग पायेंगे' ॥ ७९ ॥ समृद्रके मथनेपर उससे जो अपृत निकर्रुगा उसका पान करनेसे तुम सबल और अपर हो जाओंगे ॥ ८० ॥ हे देवगण ! तुम्हारे लिये मैं ऐसी युक्ति करूँगा जिससे तुम्हारे हेणी दैत्योंको अमृत न मिल सर्वेजा और उनके हिस्सेमें केवल समुद्र-मन्यनका क्षेत्रा ही आयेगा ॥ ८१ ॥

श्रीपराक्षरजी बोले—तब देवदेव भगवान विष्णुके ऐसा कहनेपर सभी देवगण देखोंसे सन्धि करके अमृतप्राप्तिके लिये यह करने लगे ॥ ८२ ॥ है मैत्रेय । देव, दानव और दैत्योंने नाना प्रकारकी ओषधियाँ लाकर उन्हें शरद-ऋतुके आकाशकी-सी निर्मेल कान्तिवाले श्रीर-सागरके जलमें डाला और मन्दराचलको मधानी तथा वास्तिक नागको नेती बनाकर बड़े बेगसे अमृत मधना आरम्भ किया ॥ ८३-८४ ॥ भगवान्ते जिस ओर वास्किकी पूँछ थी उस ओर देवताओंको तथा जिस ओर मुख था उचर दैत्योंको नियुक्त किया ॥ ८५ ॥ महातेजस्वी बासुकिके मुखसे निकलते इए निःश्वासामिसे झलसकर सभी दैल्यगण निस्तेज हो गये ॥ ८६ ॥ और उसी श्वास-वायुसे विद्यिप्त हुए मेथोंके पृष्ठकी ओर बरसते रहनेसे देवताओंकी शक्ति बढती गयी॥ ८७॥

हे महामुने ! भगवान् स्वयं कूर्मरूप धारण कर श्रीर-सागरमें घूमते हुए मन्दराचलके आधार हुए ॥ ८८ ॥ और वे हो चक्र-गदाधर भगवान् अपने एक अन्य रूपसे देवताओंमें और एक रूपसे दैत्योंमें मिलकर नागराजको

उपर्याकान्तवाञ्छैलं बृहदूरोण केशवः । तथापरेण मैत्रेय यत्र दृष्टं सुरासुरै: ॥ 90 तेजसा नागराजानं तथाप्यायितवान्हरिः । अन्येन तेजसा देवानुपबृहितवान्त्रभुः ॥ 99 पथ्यपाने ततस्तस्मिन्शीराठ्यौ देवदानवै: । इविधामाऽभवत्पूर्वं सुरभिः सुरपूजिता ॥ 83 जग्पुर्पदं ततो देवा दानवाश महामुने। व्याक्षिप्रचेतसश्चैव बभूवुः स्तिमितेक्षणाः ॥ 23 किमेतदिति सिद्धानां दिवि चिन्तयतां ततः । बभूव वारुणी देवी मदाधूणिंतलोचना ॥ 68 कृतावर्तात्ततस्तस्मात्क्षीरोदाद्वासयञ्जगत् । गन्धेन पारिजातोऽभृद्देवस्त्रीनन्दनस्तरुः ॥ 94 रूपौदार्यगुणोपेतस्तथा चाप्सरसां गणः । क्षीरोदधेः समुत्पन्नो मैत्रेय परमाद्भुतः ॥ 95 ततः शिर्वाशुरभवज्जगृहे तं महेश्वरः। जगृहश्च विषं नागाः श्लीरोदाब्धिसमुखितम् ॥ 919 ततो धन्वन्तरिर्देवः श्वेताम्बरधरस्ययम् । बिभ्रत्कमण्डलुं पूर्णममृतस्य समुख्यितः ॥ 39 ततः स्वस्थमनस्कास्ते सर्वे दैतेयदानवाः । बभूवुर्युदिताः सर्वे मैत्रेय युनिभिः सह ॥ ततः स्फरत्कान्तिपती विकासिकमले स्थिता । श्रीरेंबी पद्मसस्तस्मादुद्भृता धृतपङ्कुजा ॥ १०० तां तुष्टुवर्मदा युक्ताः श्रीसुक्तेन महर्षयः ॥ १०१ विश्वावसमुखास्तस्या गन्धर्वाः पुरतो जगुः । घृताचोप्रमुखास्तत्र ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ १०२ गङ्गाद्याः सरितस्तोयैः स्नानार्थम्पतस्थिरे । दिगाजा हेमपात्रस्थमादाय विमलं जलम् । स्नापयाञ्चक्रिरे देवीं सर्वलोकमहेश्वरीम् ॥ १०३ क्षीरोदो रूपधृक्तस्य मालामम्लानपङ्कजाम् ।

ददी विभूषणान्यङ्गे विश्वकर्मा चकार ह ॥ १०४

पश्यतां सर्वदेवानां ययौ वक्षःस्थलं हरेः ॥ १०५

दिव्यमाल्याध्वरधरा स्नाता भूषणभूषिता ।

सींचने लगे थे ॥ ८९ ॥ तथा हे मैत्रेय ! एक अन्य विशाल रूपसे जो देवता और दैत्योंको दिखायी नहीं देता था, श्रीकेशवने रूपसे पर्वतको दवा रहा। था ॥ ९० ॥ भगवान् श्रीहरि अपने तेजसे नागराज वासुकिसे बलका सञ्चार करते थे और अपने अन्य तेजसे वे देवताओंका बल बढ़ा रहे थे ॥ ९१ ॥

इस प्रकार, देवता और दानवोद्धारा क्षीर-समुद्रके मधे जानेपर पहले हवि (यज्ञ-सामग्री) को आश्रयरूपा सुरपुजिता कामधेन् उत्पन्न हुई ॥ ९२ ॥ हे महापुने ! उस समय देव और दानवराण अति आनन्दित हुए और उसकी ओर चित्त खिंच जातेसे उनकी टकटकी बैंच गयी ॥ ९३ ॥ फिर स्वर्गलोकर्मे 'यह क्या है ? यह क्या है ?' इस प्रकार चिन्ता करते हुए सिद्धोंके समक्ष भदसे घूमते हुए नेत्रोंबाली बारुणीदेवी प्रकट हुई ॥ ९४ ॥ और पुनः मन्थन करनेपर उस क्षीर-सागरसे, अपनी गन्धसे विकोकीको सगन्धित करनेवासा तथा सर-सन्दरियोंका आनन्दवर्षक कल्पवृक्ष उत्पन्न हुआ ॥ ९५ ॥ हे मैत्रेय ! तत्पक्षात् श्रीर-सागरसे रूप और उदारता आदि गुणोंसे युक्त अति अञ्चल अफराएँ प्रकट हुई॥ ९६॥ फिर चन्द्रमा प्रकट हुआ जिसे महादेवजीने प्रक्रण कर लिया। इसी प्रकार शीर-सागरसे उत्पन्न हुए विषको नागोंने यहण किया ॥ ९७ ॥ फिर श्वेतवस्त्रधारी साक्षात् भगवान् घन्वन्तरिजी अमृतसे परा कमण्डल् लिये प्रकट हुए॥ ९८॥ हे मैत्रेय! उस समय मुनिगणके सहित समस्त दैत्य और दानवगण स्वस्थ-चित्त होकर अति प्रसन्न हुए ॥ १९ ॥

उसके पश्चात् विकसित कमलपर विराजमान स्फुटकान्तिपयी श्रीलक्ष्मीदेवी हाथोमें कमल-पुत्र धारण किये श्रीर-समुद्रसे प्रकट हुई ॥ १०० ॥ उस समय महर्षिगण अति प्रसन्नतापूर्वक श्रीसृतद्वारा उनकी स्तृति करने लगे तथा विश्वायमु आदि गन्धर्वगण उनके सम्मुख गान और धृताची आदि अपसराएँ नृत्य करने लगीं ॥ १०१-१०२ ॥ उन्हें अपने जलसे कान करानेके लिये गङ्गा आदि नदियाँ स्वयं उपस्थित हुई और दिणजीने सुवर्ण-कलशोमें भरे हुए उनके निर्मल जलसे सर्वलोक-महेशरी श्रीलक्ष्मीदेवीको स्नान कराया ॥ १०३ ॥ श्रीर-सागरने मूर्तिमान् होकर उन्हें विकसित कमल-पुत्योको नाला दो तथा विश्वकर्मीने उनके अंग-प्रस्थामें विविध आपूरण पहनाये॥ १०४ ॥ इस प्रकार दिव्य मास्त और तया विलोकिता देवा हरियक्ष:स्थलस्थया । रुक्ष्या मैन्नेय सहसा परां निर्वृतिमागताः ॥ १०६ उद्देगं परमं जग्मुर्दैत्या विष्णुपराङ्मुखाः । त्यक्ता लक्ष्म्या महाभाग विप्रचित्तिपुरोगमाः ॥ १०७

ततस्ते जगृहुर्दैत्या धन्यन्तरिकरस्थितम्।

कमण्डलुं महावीर्या यत्रास्तेऽमृतमुत्तमम् ॥ १०८

मायवा मोहवित्वा तान्विष्णुः स्वीरूपसंस्थितः । दानवेभ्यस्तदादाय देवेभ्यः प्रददौ प्रभुः ॥ १०९

ततः पपुः सुरगणाः शक्राद्यस्तिनदाऽमृतम् ।

उद्यतायुधनिस्त्रिंशा दैत्यास्तांश्च समभ्ययुः ॥ ११०

पीतेऽमृते च बलिभिर्देवैदैंत्यचमूस्तदा। बध्यमाना दिशो भेजे पातालं च विवेश वै ॥ १११

ततो देवा मुदा युक्ताः शङ्खचक्रगदाभृतम् । प्रणिपत्य यथापूर्वमाशासत्तत्त्रविष्टुपम् ॥ ११२

ततः प्रसन्नभाः सूर्यः प्रथयौ स्वेन वर्त्यना ।

ज्योतीिव च यथामार्गं प्रययुर्मुनिसत्तम ॥ ११३

जञ्चारः भगवांश्रोश्चेश्चारुदीप्तिर्विभावस्ः । धर्मे च सर्वभूतानां तदा मतिरजायत ॥ ११४

त्रैलोक्यं च श्रिया जुष्टं बभूव द्विजसत्तम । शकश्च त्रिदशश्रेष्टः पुनः श्रीमानजायत ॥ ११५

सिंहासनगतः शक्रसम्प्राप्य त्रिदिवं पुनः ।

देवराज्ये स्थितो देवीं तृष्टावाब्जकरां ततः ॥ ११६

इन्द्र उद्याच

नपस्ये सर्वलोकानां जननीपब्जसम्पवाम् ।

श्रियमुग्निद्रपद्माक्षी विष्णुवश्चःस्थलस्थिताम् ॥ ११७

पद्मालयां पद्मकरां पद्मपत्रनिभेक्षणाम्। वन्दे पद्ममुर्खी देवी पद्मनाभप्रियामहम् ॥ ११८

त्वं सिद्धिस्त्वं खद्या स्वाहा सुधा त्वं त्वेकपावनी । सन्ध्या रात्रिः प्रभा भृतिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ॥ ११९ वस्र धारण कर, दिव्य जलसे स्नान कर, दिव्य आभूषणीसे विभूषित हो श्रीलक्ष्मीजी सम्पूर्ण देवताओंके देखते-देखते श्रीविष्णुभगवान्के वक्षःस्थलमे विराजमान हुई ॥ १०५॥

हे मेंत्रेय ! श्रीहरिके वक्षःस्वलमें विराजमान श्रीलक्ष्मीजीका दर्शन कर देवताओंको अकरमात् अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त हुई॥ १०६॥ और हे महाभाग ! लक्ष्मीजीसे परित्यक्त होनेके कारण भगवान् विष्णुके विरोधी विप्रचित्ति आदि दैत्यगण परम उद्विप्र (व्याकुरू)। हुए ॥ १७७ ॥ तब उन महाबलवान् दैत्योने श्रीधन्यन्तरिजीके हाथसे वह कमण्डल छोन लिया जिसमें अति उत्तम अमृत भग्र हुआ था॥ १०८॥ अतः स्त्री (पोहिनी) रूपधारी भगवान् विष्णुने अपनी माथासे दानवीको मोहित कर उनसे वह कमण्डल हेकर देवताओंको दे दिया ॥ १०९ ॥ .

दैत्यलोग अति तीस्रो खड्ड आदि शस्त्रोंसे सर्साञ्चत हो उनके ऊपर ट्रट पड़े ॥ ११० ॥ किन्तु अमृत-पानके कारण बलवान् हुए देवताओंद्वारा मारी-काटी जाकर दैत्योंकी सम्पूर्ण सेना दिशा-विदिशाओंमें भाग गयी और कुछ पाताललोकमें भी चली गयी॥ १११॥ फिर देवगण प्रसन्नतापूर्वक शङ्क-चक्र-गरा-धारी भगवान्को प्रणाम कर पहलेहीके समान स्वर्गका शासन करने लगे ॥ ११२ ॥

तब इन्द्र आदि देवगण उस अमृतको पी गये; इससे

हे मृनिश्रेष्ठ ! उस समयसे प्रखर तेजीयुक्त भगवान् सूर्य अपने मार्गसे तथा अन्य तारागण भी अपने-अपने मार्गसे चलने लगे ॥ ११३ ॥ सुन्दर दीप्तिशालो भगवान् अफ़्रिदेव अत्यन्त प्रज्वलित हो उठे और उसी समयसे समस्त प्राणियोंकी धर्ममें प्रवति हो गयी॥ ११४॥ हे द्विजोत्तम ! त्रित्त्रेकी श्रीसम्पन्न हो गयी और देवताओंगे श्रेष्ठ इन्द्र भी पुनः श्रीमान् हो गये॥ ११५॥ तदनन्तर इन्द्रने स्वर्गलोकमें जाकर फिरसे देवराज्यपर अधिकार पाया और राजसिंहासनपर आरूद हो पदाहस्ता श्रीरूक्ष्मीजीकी इस प्रकार स्तृति की ॥ ११६ ॥ **इन्द्र बोले—सम्पूर्ण** लोकोको जननी, विकसित

कमलके सदुदा नेत्रोवाली, भगवान् विष्णुके वक्षःस्थलमे विराजमान कमलोद्भवा श्रीलक्ष्मोदेवीको मैं नगस्कार करता हैं॥ ११७ ॥ कमल हो जिनका निवासस्थान है, कमल ही जिनके कर-कमलोमें सुशोधित है, तथा कमल-इलके समान ही जिनके नेत्र हैं उन कमलमुखी कमलनाभ-प्रिया श्रीकमलादेवीकी मैं बन्दना करता हूँ ॥११८॥ है देवि ! तुम सिद्धि हो, स्वधा हो, स्वाहा हो, सुधा हो और त्रिलोकोको पवित्र करनेवाली हो तथा तुम ही सन्ध्या, रात्रि. प्रभा, विभृति, मेधा, अस्य और सरस्वती हो ॥ ११९ ॥

यज्ञविद्या पहाविद्या गृहाविद्या च शोभने । आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी ॥ १२० आन्वीक्षिकी त्रयीवार्ता दण्डनीतिस्त्वमेव च । सौम्यासौम्यैर्जगद्र्पैस्त्वयैत्तद्देवि पूरितम् ॥ १२१ का त्वन्यां त्वामृते देवि सर्वयज्ञमयं वपुः । अध्यास्ते देवदेवस्य योगिचिन्सं गदाभृतः ॥ १२२ त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनप्रयम् । विनष्टप्रायमभवत्त्वयेदानी समेधितम् ॥ १२३ दाराः पुत्रास्तथागारसृहृद्धान्यधनादिकम् । भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणात्रृणाम् ॥ १२४ शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम्। देखि त्वददुष्टिदृष्टानां पुरुषाणां न दुर्लभम् ॥ १२५ त्वं माता सर्वलोकानां देवदेवो हरिः पिता । त्वयैतद्विष्णुना चाम्ब जगद्व्याप्तं चराचरम् ॥ १२६ मा नः कोशं तथा गोष्ठं मा गृहं मा परिच्छदम् । मा शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः सर्वपावनि ॥ १२७ मा पुत्रान्मा सुहद्वर्गं मा पशुन्मा विभूषणम् । त्यजेशा यम देवस्य विष्णोर्वश्चः स्थलालये ॥ १२८ सत्त्वेन सत्यशौचाभ्यां तथा शोलादिभिर्गुणैः । त्यज्यन्ते ते नसः सद्यः सन्त्यक्ता ये त्वयामले ॥ १२९ त्वया विलोकिताः सद्यः शीलाईरसिलैर्गुणैः । कुलैश्वर्वेश्च युज्यन्ते पुरुषा निर्गुणा अपि ॥ १३० स इलाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् । स शुरः स च विकान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥ १३१ सद्यो वैगुण्यपायान्ति शीलाद्याः सकला गुणाः । पराङ्मुखी जगद्धात्री यस्य त्वं विष्णुवल्लभे ॥ १३२

श्रीपरासर उवास एवं श्रीः संस्तुता सम्यक् प्राह देवी शतक्रतुम् । शृण्यतां सर्वदेवानां सर्वभूतस्थिता द्विज ॥ १३४

प्रसीद देवि पद्माक्षि मास्मास्याक्षीः कदाचन ॥ १३३

न ते वर्णीयतुं शक्ता गुणाञ्जिह्वापि वेधसः ।

है शोभने ! यज्ञ-विद्या (कर्म-व्यव्ह), महाविद्या (उपासना) और गृह्यविद्या (इन्द्रजाल) तुम्हीं हो तथा है देवि ! तुन्तीं मुक्ति-फल-वायिनी आत्मविद्या हो ॥ १२० ॥ हे देवि ! आन्वीक्षिको (तकीवद्या), वेदत्रयी, वार्ता (ज़िल्पवाणिज्यादि) और दण्डनीति (राजनीति) भी तुम्हीं हो । तुर्ग्हीने अपने ज्ञान्त और उग्न रूजोंसे यह समस्त संसार व्याप्त किया हुआ है ॥ १२१ ॥ हे देवि ! तुन्हारे विना और ऐसी कौन स्त्री है जो देवदेव भगवान् गदाधरके योगिजन-चिन्तित सर्वयज्ञमय शरीरका आश्रय पा सके ॥ १२२ ॥ है देनि ! तुम्हारे छोड देनेपर सम्पूर्ण त्रिलोकी नष्टप्राय हो गयी थी; अब तुम्हींने उसे पुनः जीवन-दान दिया है ॥ १२३ ॥ है। महाभागे ! स्त्री, पुत्र, गृह, धन, धान्य तथा सुहुद् ये सख सदा आपहीके दृष्टिपातसे मनुष्योंको मिलते हैं ॥ १२४ ॥ हे देवि ! तुम्हारी कृषा-दृष्टिके यात्र पुरुषोके स्टिये शारीरिक आरोग्य, ऐक्षर्य, राष्ट्र-पक्षका नारा और सुख आदि कुछ भी दुर्लभ नहीं है ॥ १२५ ॥ तुम सम्पूर्ण लोकोंकी माता हो और देवदेव भगवान हरि पिता हैं | हे मातः ! तुमसे और श्रीविष्णुभगवान्से यह सक्छ चराचर जगत् स्याप है।। १२६॥ हे सर्वपावनि मातेश्वरि! हमारे कोश (साजाना), गोष्ठ (पद्म-शाला), गृह, भोगसामग्री, शरीर और रही आदिको आप कभी न ल्यागे अर्थात् इनमें भरपुर रहें ॥ १२७ ॥ अयि विष्णुवश्वःस्थल निवासिनि ! हमारे पुत्र, सुहृद्, पञ्च और भूषण आदिको आप कभी न छोड़े ॥ १२८ ॥ है अमले ! जिन पनुष्योंको तुप छोड़ देती हो उन्हें सत्व (मारसिक बल), सत्व, शीच और शील आदि गुण भी जीव ही त्याग देते हैं ॥ १२९ ॥ और तुम्हारी कृषा-दृष्टि होनेपर तो गुणहीन पुरुष भी शीव ही शील आदि सम्पूर्ण गुण और कुटीनता तथा ऐश्वर्य आदिसे सम्पन्न हो जाते हैं ॥ १३० ॥ है देखि ! जिसपर तुम्हारी कृपादृष्टि है वही प्रशंसनीय है, वही गुणी है, वही धन्यभान्य है, वही कुलीन और युद्धिमान् है तथा बही शुरबीर और पराक्रमी है ॥ १३१ ॥ हे विष्णुप्रिये ! हे जगज्जननि ! तुम जिससे विमुख हो उसके तो जील आदि सभी गुण तुरना अक्रमुणरूप हो जाते हैं ॥ १३२ ॥ हे देनि ! तुम्हारे गुणींका वर्णन करनेमें तो श्रीब्रह्माजीवने रसना भी समर्थ नहीं है। [फिर मैं क्या कर सकता हूँ ?] अतः हे कमलनयने ! अब मुझपर प्रसन्न हो और मुझे कभी न छोड़ो ॥ १३३ ॥

श्रीपराशरजी बोले--हे द्विज । इस प्रकार सम्यक् स्तुति किये जानेपर सर्वभूतस्थिता श्रीलक्ष्मीजी सब देवताओंके सुनते हुए इन्द्रसे इस प्रकार बोली ॥ १३४ ॥ श्रीरुवाच

परितुष्टास्मि देवेश स्तोत्रेणानेन ते हरे। वरं वृणीष्ट्र यस्त्वष्टी वरदाहं तवागता॥ १३५ इन्द्र उवाच

बस्दा यदि मे देवि बराहों यदि वाप्यहम् ।

त्रैलोक्सं न त्वया त्याज्यमेष मेऽस्तु वरः परः ॥ १३६

स्तोत्रेण यस्तथैतेन त्वां स्तोध्यत्यव्यिसम्भवे ।

स त्वया न परित्यांज्यो द्वितीयोऽस्तु वरो मम ॥ १३७

श्रीखाच

त्रैलोक्यं त्रिदशश्रेष्ठं न सन्त्यक्ष्यामि वासव । दत्तो करो मया यस्ते स्तोत्राराधनतुष्ट्या ॥ १३८

यश्च सायं तथा प्रातः स्तोत्रेणानेन मानवः ।

मां स्तोष्यति न तस्याहं भविष्यामि यराङ्मुखी ॥ १३९

श्रीपराश्चर क्याच

एवं ददौ वरं देवी देवराजाय वै पुरा । मैत्रेय श्रीमंहाभागा स्तोत्राराधनतोषिता ॥ १४०

भृगोः ख्यात्यां समुत्यन्ना श्रीः पूर्वपुद्धेः पुनः ।

देवदानवयलेन प्रसृताऽमृतमन्थने ॥ १४१

एवं यदा जगत्त्वामी देवदेवो जनार्दनः।

र्व पदा जनस्माना व्यवका जनावनः

अवतारं करोत्येषा तदा श्रीस्तत्सहायिनी ॥ १४२

पुनश्च पदादुत्पन्ना आदित्योऽभूद्यदा हरिः ।

यदा तु भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्वियम् ॥ १४३

राधवत्वेऽभवत्सीता रुविमणी कृष्णजन्मनि ।

अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेषानपायिनी ॥ १४४

देवत्वे देवदेहेयं मनुष्यत्वे च मानुषी।

विष्णोर्देहानुरूपां वै करोत्येषात्मनस्तनुम् ॥ १४५

यश्चैतच्छणुयाजन्म लक्ष्या यश्च पठेत्ररः ।

श्रियो न विच्युतिस्तस्य गृहे यावत्कुरुत्रयम् ॥ १४६

पठाते येषु चैवेयं गृहेषु श्रीस्तुतिर्मुने ।

अलक्ष्मीः कलहाधारा न तेष्ट्रास्ते कदावन ॥ १४७

एतत्ते कथितं ब्रह्मन्यन्मां त्वं परिपृच्छित् । क्षीराव्यौश्रीर्यथाजातापूर्वं भृगुसुतासती ॥ १४८ श्रीलक्ष्मीजी बोर्ली—हे देवेश्वर इन्द्र ! मैं तेर इस स्तोत्रसे अति प्रसन्न हुँ; तुझको जो अमीष्ट हो वही वर माँग ले । मैं तुझे वर देनेके लिये ही यहाँ आयी हूँ ॥ १३५ ॥

इन्द्र बोले—हे देवि ! यदि आप वर देना चाहती हैं और मैं भी यदि वर पानेयोग्य हूँ तो मुझको पहला वर तो यही दीजिये कि आप इस ब्रिलोकीका कभी त्याग म करें ॥ १३६ ॥ और हे समुद्रसम्भवे ! दूसरा वर मुझे यह दीजिये कि जो कोई आपकी इस स्तोबसे स्तृति करे उसे आप कभी न त्यागे ॥ १३७ ॥

श्रीलक्ष्मीजी बोर्ली—हे देवश्रेष्ठ इन्द्र । मै अब इस जिलोकीको कभी न छोडूँगी। तेरे स्तोत्रसे प्रसन्न होकर मै तुझे यह वर देती हूँ ॥ १३८॥ तथा जो कोई मनुष्य प्रातःकाल और सायंकालके समय इस स्तोत्रसे मेरी स्तुति करेगा उससे भी मैं कभी बिमुख न होऊँगी॥ १३९॥

श्रीपराञ्चरजी बोलें—हे मैत्रेय ! इस प्रकार पूर्वकालमें महाभागा श्रीलक्ष्मीजीने देवराजकी स्तोत्ररूप आराधनासे सन्तुष्ट होकर उन्हें ये वर दिये॥ १४०॥ लक्ष्मीजी पहले भृगुजीके द्वारा क्यांति नामक स्वीसे उत्पन्न हुई थीं, फिर अमृत-मन्थनके समय देव और दानवीके प्रथलसे वे समुद्रसे प्रकट हुई ॥ १४१ ॥ इस प्रकार संसारके स्वामी देवाधिदेव श्रीविष्णुभगवान् जब-जब अवतार धारण करते हैं तभी लक्ष्मीजी उनके साथ रहती हैं ॥ १४२ ॥ जब श्रीहरि आदित्यरूप हुए तो वे पदसे फिर उत्पन्न हुई [और पदा कहत्व्ययो] । तथा जब वे परशुराम हुए तो ये पृथिवी हुई ॥ १४३ ॥ श्रीहरिके सम होनेपर ये सीताजी हुई और कुल्णावतारमें श्रीहिक्मणीजी हुई । इसी प्रकार अन्य अवतारोंमें भी ये भगवान्से कभी पुथक नहीं होती ॥ १४४ ॥ भगवानुके देवरूप होनेपर ये दिव्य शरीर धारण करती हैं और मनुष्य होनेपर मानवीरूपसे प्रकट होती हैं। विष्णुभगवानके दारीरके अनरूप ही ये अपना शरीर भी बना छेती है ॥ १४५ ॥ जो मनुष्य छश्योजीके जनकी इस कथाको सुनेगा अथवा पढ़ेगा उसके घरमें (वर्तमान आगामी और गृत) तीनों कुलोके रहते हुए कभी लक्ष्मीका नाश न होगा ॥ १४६ ॥ हे मुने ! जिन घरोमें लक्ष्मीजीके इस स्तोतका पाठ होता है उनमें कलहर्की आधारभूता दरिदता कभी नहीं उहर सकती। ॥ १४७ ॥ हे बहान् ! तुमने जो मुझसे पूछा था कि पहले मृगुजीकी पुत्री होकर फिर लक्ष्मीजी

शीर-समुद्रसे कैसे उत्पन्न हुई सो मैंने तुमसे यह सब

इति सकलविभूत्यवाप्तिहेतुः स्तुतिरियमिन्द्रमुखोद्गता हि लक्ष्म्याः । अनुदिनमिह पठ्यते नृधिर्यै-र्वसति न तेषु कदाचिदप्यलक्ष्मीः ॥ १४९ ।

युतान्त कह दिथा॥ १४८॥ इस प्रकार इन्द्रके मुखसे प्रकट हुई यह लक्ष्मीजीकी स्तुति संकल विभूतियोंकी प्रक्षिका कारण है, जो लोग इसका निस्पर्धात पाठ करेंगे उनके घरमें निर्धनता कभी नहीं रह सकेगी॥ १४९॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽदो नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दसवाँ अध्याय

भृगु, अप्ति और अप्तिष्वात्तादि पितरोंकी सन्तानका वर्णन

श्रीमैत्रेष उवाच

कथितं मे त्वया सर्वं चत्पृष्टोऽसि मया मुने । भृगुसर्गात्प्रभृत्येष सर्गो मे कथ्यतां पुनः ॥ श्रीपाशर उवाव

भृगोः स्थात्मां समुत्यन्ना रुक्ष्मीविष्णुपरिव्रहः । तथा धातृविधातारो स्थात्यां जातौ सुतौ भृगोः ॥ आवतिर्नियतिश्चैव मेरोः कन्ये महात्मनः । भार्ये धातृविधात्रोस्ते तथोर्जातौ सुतावुभौ ॥ प्राणश्चैव मृकण्डुश्च मार्कण्डेयो मृकण्डुतः । ततो वेदशिस जज्ञे प्राणस्थापि सुतं शृणु ॥

प्राणस्य द्युतिमान्युत्रो राजवांश्च ततोऽभवत् । ततो वंशो महाभाग विस्तरं भार्गवो गतः ॥ ५ पत्नी मरीचेः सम्भृतिः पौर्णमासमस्यत ।

विरजाः पर्वतश्चैव तस्य पुत्रौ महात्मनः ॥ वंशसंकीर्तने पुत्रान्वदिष्येऽहं ततो द्विज । स्मृतिश्चाङ्गिरसः पत्नी प्रसृता कन्यकास्तथा ।

सिनीवाली कुर्श्रेय राका चानुमतिस्तथा ॥

अनसूया तथैवात्रेजीते निष्कल्मषान्सुतान् । सोमं दुर्वाससं चैव दत्तात्रेयं च योगिनम् ॥

प्रीत्यां पुलस्यभार्यायां दत्तोलिस्तत्सुतोऽभवत् ।

पूर्वजन्मनि योऽगस्यः स्मृतः स्वायम्भुवेऽन्तरे ॥ कर्दमञ्जोर्वरीयांश्च सहिष्णुञ्च सुतास्रयः ।

क्षमा तु सुकुवे भार्या पुलहस्य प्रजापतेः ॥ १०

श्रीमैनेयजी बोले—हे मुने ! मैंने आपसे जो कुछ पूछा या वह सब आपने वर्णन किया; अब भृगुजीकी सत्तानसे लेकर सम्पूर्ण सृष्टिका आप मुझसे फिर वर्णन कीजिये ॥ १ ॥

श्रीपराशरजी बोले—भृगुजीके द्वारा स्थातिसे विक्युपत्री रुक्ष्मीजी और धाता, विकाता नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए॥ २॥ महात्मा मेरुकी आयित और नियति-नाम्नी कन्याएँ घाता और विचाताको स्थियों थीं; उनसे उनके प्राण और मृकण्डु नामक दो पुत्र हुए। मृकण्डुसे मार्कण्डेय और उनसे थेदशिसका जन्म हुआ। अब भ्राणकी सन्तानका वर्णन सुनो ॥ ३-४॥ प्राणका पुत्र दुतिमान् और उसका पुत्र राजवान् हुआ। हे महाभाग! उस राजवान्से फिर मृगुवंशको बड़ा विस्तार हुआ॥ ५॥

मरीचिको पत्नी सन्पूर्तिने पौर्णमासको उत्पन्न किया।
उस महात्माके विराजा और पर्वत दो पुत्र थे॥ ६॥ है
द्विज ! उनके वंदाका वर्णन करते समय मै उन दोनोंकी
सन्तानका वर्णन करूँगा। अंगिराकी पत्नी स्मृति थी, उसके
सिनीवाली, कुहू, राका और अनुमति नामकी कन्याएँ हुई
॥ ७॥ अत्रिकी भार्या अनस्त्याने चन्द्रमा, दुर्यासा
और योगी दत्तात्रेय—इन निष्याप पुत्रोको जन्म
दिया॥ ८॥ पुलस्यकी स्त्री प्रीतिसे दत्तोलिका जन्म
दुआ जो अपने पूर्व जन्ममें स्त्रायम्भुव मन्यत्तरमें अगस्य
कहा जाता था॥ ९॥ प्रजापित पुलस्तको पत्नी धानासे
कर्तम, उर्वरीयान् और सहिष्णु ये तीन पुत्र हुए॥ १०॥

क्रतोश्च सन्ततिर्भार्या वालखिल्यानसूयत । षष्टिपुत्रसहस्राणि मुनीनामूध्वरितसाम् । अङ्गुष्ठपर्वमात्राणां ज्वलद्भास्करतेजसाम् ॥ ११ ऊर्जायां तु वसिष्ठस्य सप्ताजायन्त वै सुताः ॥ १२ रजो गोत्रोर्द्ध्वबाहुश्च सवनश्चानघस्तथा। सुतपाः शुक्र इत्येते सर्वे सप्तर्वयोऽमलाः ॥ १३ योऽसावग्न्यभिमानी स्याद् ब्रह्मणस्तनयोऽप्रजः। तस्मात्स्वाहा सुताँल्लेभे त्रीनुदारौजसो द्विज ॥ १४ पावकं पवमानं तु शूचिं चापि जलाशिनम् ॥ १५ तेषां तु सन्ततावन्ये चत्वारिशश पञ्च छ । कथ्यन्ते बहुयश्चैते पितापुत्रत्रयं च यत् ॥ १६ एवमेकोनपञ्चाशद्वह्नयः परिकीर्तिताः ॥ १७ पितरो ब्रह्मणा सृष्ट्रा व्याख्याता ये मया द्विज । अग्निष्टाता बर्हिषदोऽनग्नयः साम्रयश्च ये ॥ १८ तेभ्यः स्वधा सुते जज्ञे मेनां वै धारिणीं तथा । ते उभे ब्रह्मवादिन्यौ योगिन्यावयुभे द्विज ॥ १९ उत्तमज्ञानसम्पन्ने सर्वैः समुद्रितैर्गुणैः ॥ २० इत्येषा दक्षकन्यानां कथितापंत्यसन्ततिः।

ऋतुकी सन्तित नामक मार्यान अंगूठेके पोरुओंके समान शरीरवाले तथा प्रसर सूर्यके समान तेजस्वी वालखिल्यादि साठ हजार ऊर्ध्यरता मुनिगोंको जन्म दिया ॥ ११ ॥ वसिष्ठकी कर्जा नामक खोले रज, गोत्र, कर्ध्वबाहु, सवन, अनय, सुत्तम और शुक्र में सात पुत्र उत्पन्न हुए। ये निर्मल खमाबवाले समस्त मुनिगण [तीसरे मन्यन्टरमें] सप्तर्थि हुए॥ १२-१३॥

हे द्विज ! अप्रिका अभिमानी देव, जो बहाजीका ज्येष्ठ पुत्र है, उसके द्वारा स्वाहा नामक पत्नीसे अति तेजस्वी पावक, पवमान और जलको भक्षण करनेवाला श्रुचि—ये तीन पुत्र हुए ॥ १४-१५ ॥ इन तोनोके [प्रत्येकके पन्द्रह-पन्द्रह पुत्रके कमसे] पैतालीस सन्तान हुई । पिता अप्रि और उसके तीन पुत्रोंको मिलाकर ये सब अप्रि ही कहलाते हैं । इस प्रकार कुल उनचास (४९) अप्रि कहे गये हैं ॥ १६-१७ ॥ हे द्विज ! बहाजीद्वास स्वे गये जिन अनुप्रिक अगिष्ठता और सामिक बर्हिषद् आदि पितरोके विषयमें तुमसे कहा था । उनके द्वारा स्वधाने मेना और घारिणी नामक दो कन्याएँ उत्पन्न कीं। वे दोनों हो उत्तम ज्ञानसे सम्पन्न और सभी-पुणोंसे युक्त ब्रह्मवादिनी तथा नोगिनी थीं ॥ १८—२०॥

इस प्रकार यह दक्षकन्याओंकी वंशपरम्पराका वर्णन किया। जो कोई श्रद्धापूर्वक इसका स्मरण करता है वह निःसन्तान नहीं रहता॥ २१॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवाँ अध्याय

धुवका वनगमन और मरीचि आदि ऋषियोंसे भेंट

श्रीपताशर उचाव प्रियव्रतोत्तानपादौ मनोः स्वायंभुवस्य तु । द्वौ पुत्रौ तु महावीयौँ धर्मज्ञौ कश्चितौ तव ॥ तयोक्तानपादस्य सुरुच्यामृत्तमः सुतः । अभीष्टायामभूद्वद्वान्यितुरत्यन्तवरुरुभः ॥ सुनीतिनाम या राज्ञस्तस्यासीन्यद्विषी द्विज ।

स नातिप्रीतिमांस्तस्यामभूद्यस्या ध्रुवः सुतः ॥

श्रद्धावान्संस्परन्नेतामनपत्यो न जायते ॥ २१

श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैत्रेय ! मैंने तुम्हें स्वायम्भुवमनुके प्रियवत एवं उत्तानपाद नामक दो महावलवान् और धर्मज्ञ पुत्र बतलाचे थे॥१॥ हे बहान् ! उनमेंसे उत्तानपादकी प्रेयती पत्नी सुरुचिसे पिताका अत्यन्त लाइला उत्तम नामक पुत्र हुआ॥२॥ हे द्विज ! उस एजाकी जो सुनीति नामक राजमहिषी थी उसमें उसका विशेष प्रेम न था। उसका पुत्र धुव हुआ॥३॥

राजासनस्थितस्याङ्कं पितुभ्रांतरमाभितम् ।
दृष्ट्वोत्तमं धुवश्चके तमारोदुं मनोरथम् ॥ ४
प्रत्यक्षं भूपतिस्तस्याः सुरुच्या नाभ्यनन्दतः ।
प्रणयेनागतं पुत्रमुत्सङ्गारोहणोत्सुकम् ॥ ५
सपत्नीतनयं दृष्ट्या तमङ्कारोहणोत्सुकम् ॥ ६
स्वपुत्रं च तथारूढं सुरुच्चिवांक्यमद्रवीत् ॥ ६
क्रियते कि वृथा वत्स महानेष मनोरथः ।
अन्यत्नीगर्भजातेन ह्यसम्भूय ममोदरे ॥ ७
उत्तमोत्तमपप्राप्यमविवेको हि वाञ्चिस ।
सत्यं सुतस्त्यमप्यस्य किन्तु न स्वं मया धृतः ॥ ८
एतद्राजासनं सर्वभूभृत्संश्रयकेतनम् ।
योग्यं ममैव पुत्रस्य किमात्मा क्रिश्यते त्वया ॥ ९
उत्तमीत्यामात्मनो जन्म कि त्वया नावगम्यते ॥ १०

उत्सृज्य पितरं बालस्तच्युत्वा मातृभाषितम् । जगरम कुपितो मातुनिजाया क्षिज मन्दिरम् ॥ ११ तं दृष्ट्वा कुपितं पुत्रमीषत्प्रस्फुरिताधरम् । सुनीतिरङ्कमारोष्य मैन्नेयेदमभाषत् ॥ १२ वत्स कः कोपहेतुस्ते कश्च त्वां नाभिनन्दति । कोऽवजानाति पितरं वत्स यस्तेऽपराध्यति ॥ १३ श्रीणाजर उन्नव

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तः सकलं मात्रे कथयामास तद्यथा । सुरुचिः प्राह भूपालप्रत्यक्षमतिगर्विता ॥ १४ विनिःश्वस्पेति कथिते तस्मिन्युत्रेण दुर्पनाः । श्वःसक्षामेक्षणा दीना सुनीतिर्वाक्यमद्रवीत् ॥ १५

सुनीतिरुवाच

सुरुचिः सत्यमाहेदं मन्दभाग्योऽसि पुत्रक । न हि पुण्यवतां वत्स सपलैरेवमुच्यते ॥ १६ नोद्वेगस्तातं कर्त्तव्यः कृतं यद्भवता पुरा । तत्कोऽपहर्तुं शक्कोति दातुं कक्षाकृतं त्वया ॥ १७ तत्त्वया नात्र कर्त्तव्यं दुःखं तद्वाक्यसम्भवम् ॥ १८

एक दिन राजसिंहासनपर बैठे हुए पिताको गोदमें अपने भाई उत्तमको बैठा देख घुवकी इच्छा भी गोदमें वैउनेकी हुई ॥ ४ ॥ किन्तु राजाने अपनी प्रेयसी सुरुचिके सामने, गोदमें चढ़नेके दिये उत्कण्डित होकर प्रेमवदा आबे हुए उस पुत्रका आदर नहीं किया ॥ ५ ॥ अपनी सीतके पुत्रको गोदमें चड़नेके लिये उत्सुक और अपने पुत्रको गोदमें बैडा देख सुरुचि इस प्रकार कहने लगी ॥ ६ ॥ "अरे छल्ला ! बिना मेरे पेटसे उत्पन्न हुए किसी अन्य खोका पुत्र होकर भी तु व्यर्थ क्यों ऐसा बड़ा मनोर्थ करता है ? ॥ ७ ॥ तु अविवेकी है, इसीलिये ऐसी अरुभ्य उतमोत्तम बस्तको इच्छा करता है। यह ठीक है कि तु भी इन्हों राजाका पुत्र है, तथापि पैने तो तुझे अपने गर्भमें भारण नहीं किया ! ॥ ८ ॥ समस्त चक्रवर्ती एजाओंका आश्रयरूप यह एजसिंहासन तो मेरे ही पृत्रके योग्य हैं; तु व्यर्थ क्यों अपने चितको सन्ताप देता है ? ॥ ९ ॥ मेरे पुत्रके समान तुझे वृथा हो यह ऊँचा मनोरथ क्यों होता है ? क्या तु नहीं जानता कि तेरा जन्म सुनीतिसे हुआ है ?" ॥ १०॥

श्रीपराशरजी बोलं—है डिज ! विमाताका ऐसा कथन सुन वह बालक कुपित हो पिताको छोड़कर अपनी माताके महलको चल दिया ॥ ११ ॥ हे मैत्रेय ! जिसके ओष्ठ कुछ-कुछ काँप रहे थे ऐसे अपने पुत्रको क्रोधयुक्त देख सुनीतिने उसे गोदमें बिठाकर पूछा ॥ १२ ॥ "चेटा ! तेरे क्रोधका क्या कारण है ? तेरा किसने आदर नहीं किया ? तेरा अपराध करके कीन तेर पिताजीका अपमान करने चला है ?" ॥ १३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—देसा पूछनेपर भुवने अपनी मातासे ये सब बातें कह दों जो अति गर्वीली सुरुचिने उससे पिताके सामने कही थीं॥ १४॥ अपने पुत्रके सिसक-सिसककर ऐसा कहनेपर दुःखिनो सुनीतिने खिन्न चित्त और दोषं निःश्वासके कारण पलिननक्या होकर कहा ॥ १५॥

सुनीति बोली—बेटा! सुरुचिने ठाँक ही कहा है, अबदय ही तू मन्दभाग्य है। हे बत्स! पुण्यवानीसे उनके विपक्षो ऐसा नहीं कह सकते॥ १६॥ बचा! तू व्याकुरू यत हो, क्योंकि तूने पूर्व-जन्मोमे जो कुछ किया है उसे दूर कौन कर सकता है? इसल्लिये तुझे उसके बाक्योंसे खेद राजासनं राजच्छत्रं वराधवरवारणाः । यस्य पुण्यानि तस्यैते मत्वैतच्छाम्य पुत्रकः ॥ १९ अन्यजन्पकृतैः पुण्यैः सुरुत्यां सुरुत्तिनृपः । भार्येति प्रोच्यते चान्या महिधा पुण्यवर्जिता ॥ २० पुण्योपचयसम्पन्नस्तस्याः पुत्रस्तथोत्तमः । मम पुत्रस्तथा जातः स्वरूपपुण्यो धुवो भवान् ॥ २१ तथापि दुःखं न भवान् कर्त्तुमहीत पुत्रकः । यस्य यावस्स तेनैव स्वेन तुष्यति यानवः ॥ २२ यदि ते दुःस्वयत्यर्थं सुरुद्धाः वचसाभवत् । तत्पुण्योपचये यत्रं कुठ सर्वफलप्रदे ॥ २३

निम्नं यश्चापः प्रवणाः पात्रमावान्ति सम्पदः ॥ २४ ध्रुवतवाव

सुशीलो भव धर्मात्मा मैत्रः प्राणिहिते स्तः ।

अस्व यस्त्वमिदं प्रात्य प्रशमाय वचो मम । नैतदुर्वचसा भिन्ने हृदये मम तिष्ठति ॥ २५ सोऽहं तथा यतिष्यामि यथा सर्वोत्तमोत्तमम् । स्थानं प्राप्याम्यशेषाणां जगतामभिपूजितम् ॥ २६ सुरुचिदंयिता राञ्चस्तस्या जातोऽस्मि नोदरात् । प्रभावं पश्य मेऽम्ब त्वं वृद्धस्यापि तवोदरे ॥ २७ उत्तमः स मम भ्राता यो गर्भेण धृतस्तया । स राजासनमामोतु पित्रा दत्तं तथास्तु तत् ॥ २८ नान्यदत्तमभीष्सामि स्थानमम्ब स्वकर्मणा । इन्छामि तदहं स्थानं यञ्च प्राप पिता मम ॥ २९

औपसशर उनाच

प्रश्रयायनतः 🏢

निर्जगाम गृहान्मातुरित्युक्त्वा मातरं ध्रुवः । पुराद्य निर्गम्य ततस्तद्वाद्वोपवनं ययौ ॥ ३० स ददर्श मुनींस्तत्र सप्त पूर्वागतान्ध्रुवः । कृष्णाजिनोत्तरीयेषु विष्टरेषु समास्थितान् ॥ ३१ स राजपुत्रस्तान्सर्वात्र्यणिपत्याभ्यभाषत ।

भुव उनाच

सम्यगभिवादनपूर्वकम् ॥ ३२

उत्तानपादतनयं मां निबोधत सत्तमाः । जातं सुनीत्यां निर्वेदाद्युष्माकं प्राप्तमन्तिकम् ॥ ३३ नहीं करना चाहिये ॥ १७-१८ ॥ हे दत्स ! जिसका पुण्य होता है उसीको राजासन, राजाद्ध्य तथा उत्तम-उत्तम मोड़े और हाथो आदि मिलते हैं—ऐसा जानकर तू शान्त हो जा ॥ १९ ॥ अन्य जन्मीमें किये हुए पुण्य-कर्मोंक कारण हो सुरुचिमें राजाको सुरुचि (प्रीति) है और पुण्यहीना होनेसे ही मुझ-जैसी स्त्री केवल भार्या (भरण करने योग्य) ही कही जाती है ॥ २० ॥ उसी प्रकार उसका पुष उत्तम भी बड़ा पुण्य-पुक्षसम्पन्न है और मेरा पुत्र तू हुस मेरे समान ही

अल्प पुण्यवान् है ॥ २१ ॥ तथापि बेटा ! तुझे दुःसी नहीं होना चाहिये, क्योंकि जिस मनुष्यको जितना मिलता है वह अपनी ही पूँजीमें मग्न रहता है ॥ २२ ॥ और यदि सुरुचिके वाक्योंसे तुझे अल्पन्त दुःस ही हुआ है तो सर्वफलदायक पुण्यके संग्रह करनेका प्रयत्न कर ॥ २३ ॥ तु सुसील,

पुण्याच्या, प्रेमी और समस्त प्राणियोंका हितैषी बन, क्योंकि बैसे नीची भूगिकी और बलकता हुआ जल अपने-आप ही पात्रमें आ जाता है वैसे ही सत्यात्र मनुष्यके प्रास स्वतः ही समस्त सम्पत्तियाँ आ जाती हैं॥ २४॥

श्रव बोला---माताजी ! तुमने मेरे चित्तको शान्त

करनेके लिये जो वचन कहे हैं वे दुर्याक्योंसे बिये हुए मेरे हदयमें तिनक भी नहीं उहरते ॥ २५ ॥ इसलिये मैं तो अब बही प्रथल करूँगा जिससे सम्पूर्ण त्येकोंसे आदरणीय सर्वश्रेष्ठ पदको प्राप्त कर सर्कू ॥ २६ ॥ स्वाकी प्रेयसी तो अवश्य सुरुचि ही है और मैंने उसके उदरसे जन्म भी नहीं लिया है, तथापि हे माता । अपने गर्भमें बढ़े हुए मेरा प्रभाव भी तुम देखना ॥ २७ ॥ उत्तम, जिसको उसने अपने गर्भमें घारण किया है, मेरा भाई ही है । पिताका दिया हुआ राजासन बही प्राप्त करे । [भगवान करें] ऐसा ही हो ॥ २८ ॥ माताजी ! मैं किसी दुसरेके दिये हुए पदका

करता हूँ जिसको पिताजीने भी नहीं प्राप्त किया है ॥ २९ ॥ श्रीपराशरजी बोले — मातासे इस प्रकार कह बुव उसके महलसे निकल पड़ा और फिर नगरसे बाहर आकर बाहरी उपवनमें पहुँचा ॥ ३० ॥

इच्छुक नहीं हूँ; मैं तो अपने पुरुषार्थसे ही उस पदको इच्छा

बहाँ धुवने पहलेसे ही आये हुए सात मुनोधरीको कृष्ण मृग-चर्मके बिक्रीनोंसे युक्त आसनीपर बैठे देखा ॥ ३१ ॥ उस राजकुमारने उन सबको प्रणाम कर आंत नम्रता और समुचित अभिवादनादिपूर्वक उनसे कहा ॥ ३२ ॥

े **शुवने कहा** — हे महात्माओः! मुझे आप सुनीतिसे

ल कि करण करूप कर्युः।

चतुःपञ्चाब्दसम्भूतो बालस्त्वं नृपनन्दन । निर्वेदकारणं किञ्चित्तव नाद्यापि वर्तते ॥ ३४ न विन्त्यं भवतः किञ्चिद्धियते भूपतिः पिता । न चैतेष्टवियोगादि तव पश्याम बालकः ॥ ३५ शरीरे न च ते व्याधिरस्माभिस्पलक्ष्यते । निर्वेदः किञ्चिमित्तस्ते कथ्यतां यदि विद्यते ॥ ३६

श्रीपराश्तर उद्माच

ततः स कथयामास सुरुव्या यदुदाहृतम् । तित्रशम्य ततः प्रोचुर्मुनयस्ते परस्परम् ॥ ३७ अहो क्षात्रं परं तेजो बालस्पापि यदक्षमा । सपल्या मातुरुक्तं यद्शृद्यान्नापसपीते ॥ ३८ भो भो क्षत्रियदायाद निर्वेदाद्यस्वयाधुना । कर्तुं व्यवसितं तत्रः कथ्यतां यदि रोचते ॥ ३९ यद्य कार्यं तवास्माभिः साहाय्यस्मितद्युते । तदुव्यतां विवक्षुस्त्वमस्माभिरुपलक्ष्यसे ॥ ४०

भुव उवाच

नाहमर्थमभीष्मामि न राज्यं द्विजसत्तमाः । तत्स्थानमेकमिच्छामि भुक्तं नान्येन यत्पुरा ॥ ४१ एतन्मे क्रियतां सम्बद्धध्यतां प्राप्यते यथा ।

स्थानमञ्ज्यं समस्तेभ्यः स्थानेभ्यो मुनिसत्तमाः ॥ ४२

म्सीचरुवाच

अनाराधितगोविन्दैनीरैः स्थानं नृपात्मज । न हि सम्प्राप्यते श्रेष्ठं तस्मादाराधयाच्युतम् ॥ ४३

अत्रिरुवाच

परः पराणां पुरुषो यस्य तुष्टो जनार्दनः । स त्रात्रोत्यक्षयं स्थानमेतत्सत्यं मयोदितम् ॥ ४४

अङ्गिच उवाच

यस्यान्तः सर्वमेवेदमच्युतस्याव्ययस्यनः। तमाराधय गोविन्दं स्थानमप्र्यं यदीच्छसि ॥ ४५ *एलस्य उवाच*

परं ब्रह्म परं धाम योऽसौ ब्रह्म तथा परम् । तमाराध्य हरि याति मुक्तिमप्यतिदुर्लभाम् ॥ ४६ उत्पन्न हुआ राजा उत्तानपादका पुत्र जाने । मै आरम-रत्मनिके कारण आपके निकट आया है ॥ ३३ ॥ .

ऋषि बोले—राजकुमार ! अभी तो तू चार-पाँच वर्षका ही बालक है। अभी तेरे निवेंदका कोई कारण नहीं दिखायी पड़ता ॥ ३४ ॥ तुझे कोई चिन्ताका विषय भी नहीं है, क्योंकि अभी तेरा पिता राजा जीवित है और है बालक ! तेरी कोई इष्ट बस्तु खो गयी हो ऐसा भी हमें दिखायी नहीं देता ॥ ३५ ॥ तथा हमें तेर चारीसे भी कोई व्याधि नहीं दोख पड़ती फिर बता, तेरी ग्लोनिका क्या कारण है ? ॥ ३६ ॥

श्रीपराझरजी बोले—तब सुरुचिने उससे जो कुछ कहा या वह सब उसने कह सुनाया। उसे सुनकरे वे ब्रह्मिंगण आपसमें इस प्रकार कहने छगे।। ३७॥ 'अहो ! क्षांत्रतंज कैसा प्रबल है, जिससे बालकमें भी इतने अक्षमा है कि अपनी विपाताका कथन उसके इटपसे नहीं टलता'॥ ३८॥ हे क्षांत्रियकुमार ! इस निवेंदके जारण तूने जो कुछ करनेका निश्चय किया है, यदि तुशे रुचे तो, वह हमलोगोंसे कह दे॥ ३९॥ और हे अतुल्तितेजस्वी ! यह भी बता कि हम तेरी क्या सहायता करें, क्योंकि हमें ऐसा प्रतीत होता है कि तू कुछ कहना चहता है॥ ४०॥

धुवने कहा — है डिजशेष्ट ! मुझे न तो धनकी इच्छा है और न एज्यकी; मैं तो केवल एक उसी स्थानको चाहता हूँ जिसको पहले कभी किसोने न भोगा हो ॥ ४१ ॥ हे मुनिशेष्ट ! आपकी यही सहायता होगी कि आप मुझे भली प्रकार यह बता दें कि क्या करनेसे कह सबसे अग्रगण्य स्थान प्राप्त हो सकता है ॥ ४२ ॥

मरीचि बोले—हे राजपुत्र ! विना गोविन्दकी आराधना किये मनुष्यको यह श्रेष्ठ स्थान नहीं मिल सकता; अतः तू श्रीअच्युतकी आराधना वर ॥४३॥

अत्रि कोले—जो परा प्रकृति आदिसे भी परे हैं वे परमपुरुष जनाईन जिससे सन्तुष्ट होने हैं उसीको बह अक्षयपद मिलता है यह मैं सत्य-सत्य कहता हूँ ॥ ४४॥

अङ्गिरा बोस्टे—यदि तृ अय्यस्थानका इच्छुक है तो किंग अव्ययात्मा अच्युतमें यह सम्पूर्ण जगत् ओतप्रोत है उन पोविन्दको हो आराधना कर ॥४५॥

पुरुस्य बोर्ले—जो परबद्ध परमधान और परस्वरूप हैं उन हरिकी आराधना करनेसे मनुष्य अति दुर्लभ मोक्षपदको भी प्राप्त कर लेता है॥४६॥ पुल्ल उवाच

ऐन्द्रमिन्द्रः परं स्थानं यमाराध्य जगत्पतिम् । प्राप यज्ञपति विष्णुं तमाराधय सुव्रत ॥ ४७

क्रतुरुवाच

यो यज्ञपुरुषो यज्ञो योगेशः परमः पुमान् । तस्मिंस्तुष्टे यदप्राप्यं कि तदस्ति जनार्दने ॥ ४८ विषय उवाच

प्राप्नोच्याराधिते विष्णौ मनसा यद्यदिस्कृसि । प्रैलोक्यान्तर्गतं स्थानं किमु वत्सोत्तमोत्तमम् ॥ ४९

धुव उवाच

आराध्यः कथितो देवो भवद्धिः प्रणतस्य मे । मया तत्परितोषाय यज्जप्तस्यं तदुच्यताम् ॥ ५० यथा चाराधनं तस्य मया कार्यं महात्पनः । प्रसादसुमुखास्तन्मे कथयन्तु महर्षयः ॥ ५१ ऋषय ऊषुः

राजपुत्र यथा विष्णोराराधनपरैनरैः।
कार्यपाराधनं तत्रो यथावच्छ्रोतुमहीस ॥ ५२
बाह्यार्थादिखलाचित्तं त्याजयेत्रयमं नरः।
तिसम्नेव जगद्धाप्ति ततः कुर्वीत निश्चलम् ॥ ५३
एवमेकाप्रचित्तेन तत्मयेन धृतात्मना।
जप्तव्यं यम्निबोधैतत्तन्नः पार्थिवनन्दनः॥ ५४
हिरण्यगर्भपुरुषप्रधानाव्यक्तरूपिणे ॥ ५५
एतज्जजाप भगवान् जप्यं स्वायम्भुवो मनुः।
पितामहस्तव पुरा तस्य तृष्टो जनार्दनः॥ ५६
ददौ यथाभिलवितां सिद्धि त्रैलोक्यदुर्लभाम्।
तथा त्वमपि गोविन्दं तोषयैतत्सदा जपन्॥ ५७

पुलह बोले—हे सुवत ! जिन जगस्पतिकी आराधनासे इन्द्रने अत्युक्तम इन्द्रपद प्राप्त किया है तू उन यज्ञपति भगवान् विष्णुकी आराधना कर ॥ ४७ ॥

कतु बोले—जो परमपुरूष यज्ञपुरूष, यज्ञ और योगेश्वर हैं उन जनार्दनके सन्तुष्ट होनेपर कौन-सी वस्तु दुर्लभ रह सकती हैं ? ॥ ४८ ॥

वसिष्ठ बोले—हे वत्स! विष्णुमगवान्की आराधना करनेपर तू अपने मनसे जो कुछ चाहेगा वहीं प्राप्त कर लेगा, फिर विलोकोंके उत्तमोत्तम स्थानको तो बात ही क्या है ? ॥ ४९ ॥

भुवने कहा — हे नहविंगण ! मुझ विनीतको आपने आराष्ट्रपदेव तो बता दिया | अब उसको प्रसन्न करनेके लिये मुझे क्या जपना चाहिये — यह बताइये | उस महापुरुषकी मुझे जिस प्रकार आराधना करनी चाहिये, वह आपलोग मुझसे प्रसन्नतापूर्वक कहिये ॥ ५०-५१ ॥

ऋषिगण बोले—हे राजकुमार! विष्णुभगवान्की आराधनामें तस्पर पुरुषोंको जिस प्रकार उनकी
उपासना करनी चाहिये वह तू हमसे यथावत् अवण कर
॥ ५२ ॥ मनुष्यको चाहिये कि पहले सम्पूर्ण बाह्य
विषयोंसे चित्तको हटावे और उसे एकमात्र उन
जगदाधारमें ही स्थिर कर दे ॥ ५३ ॥ हे राजकुमार! इस
प्रकार एकाग्रचित होकर तन्मर-भावसे जो कुछ जपना
चाहिये, वह सुन— ॥ ५४ ॥ 'ॐ हिरण्यगर्म, पुरुष,
प्रधान और अव्यक्तरूप शुद्धज्ञानस्वरूप बासुदेवको
नमस्कार है'॥ ५५ ॥ इस (ॐ नमो भगवते वासुदेवको
नमस्कार है'॥ ५५ ॥ इस (ॐ नमो भगवते वासुदेवाय)
मन्तको पूर्वकारूमें तेरे पितामह भगवान् स्वायणुवगनुने
जपा था। तब उनसे सन्तुष्ट होकर श्रीजनार्दनने उन्हें
त्रिलोकोमें दुर्लम मनोवान्छित सिद्धि दी था। उसी
प्रकार तू भी इसका निरन्तर जप करता हुआ श्रीगोविन्दको
प्रसन्न कर ॥ ५६-५७॥

🖈 💳 विकास स्थाप - ्राची प्राप्त 🕸

बारहवाँ अध्याय

धुवकी तपस्यासे प्रसन्न हुए भगवान्का आविर्भाव और उसे धुवपद-दान

श्रीपराशर उवास निशम्यैतदशेषेण मैत्रेय नुपतेः स्तः। निर्जगाम बनात्तस्मात्प्रणिपत्य स तानुषीन् ॥ कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यमानस्ततो हिन । मधुसंज्ञं महायुण्यं जनाम यमुनातटम् ॥ पुनश्च मधुसंज्ञेन दैत्येनाधिष्टितं यतः। ततो मधुवनं नाम्ना ख्यातमत्र महीतले ॥ हत्वा च लवणं रक्षो मध्यूत्रं महाबलम् । शबुब्रो मधुरी नाम पुरी यत्र चकार वै ॥ यत्र वै देवदेवस्य सान्निध्यं हरियेधसः। सर्वपापहरे तस्मिस्तपस्तीर्थे चकार सः॥ मरीचिमुख्यैर्मुनिभिर्यथोद्दिष्टमभूतथा आत्मन्यशेषदेवेशं स्थितं विष्णुमपन्यतः ॥ अनन्यचेतसस्तस्य ध्यायतो भगवान्हरिः । सर्वभूतगतो विप्र सर्वभावगतोऽभवत् ॥ मनस्यवस्थिते तस्मिन्विष्णौ भैत्रेय योगिनः । न शशाक धरा भारमुद्रोढुं भूतधारिणी॥ बामपादस्थिते तस्मिन्नामार्द्धेन मेदिनी । ब्रितीयं च ननामार्द्धं क्षितेर्दक्षिणतः स्थिते ॥ पादाङ्गष्टेन सम्पीड्य वदा स वसुधां स्थितः । तदा समस्ता वसुधा चचाल सह पर्वतै: ॥ १० नद्यो नदाः समुद्राश्च सङ्कोभं परमं ययुः । तत्क्षोभादमराः क्षोभं परं जग्मुर्महामुने ॥ ११ यामा नाम तदा देवा मैत्रेय परमाकुलाः । इन्द्रेण सह सम्मन्त्र्य ध्यानभङ्गं प्रचक्रमुः ॥ १२ कुष्पाण्डा विविधै रूपैमहिन्द्रेण महामुने।

समाधिभङ्गमत्यन्तमारब्धाः कर्तुमातुराः ॥ १३

पुत्रेति करुणां बाचमाह मायामयी तदा ॥ १४

सुनीतिर्नाम तन्याता सास्त्रा तत्पुरतः स्थिता ।

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय ! यह सब युनकर राजपुत्र सूत्रं उन ऋषियोंको प्रणामकर उस वनसे चल दिया॥ १॥ और हे द्विज ! अपनेको कृतकृत्य-सा मानकर वह यमनातटवर्ती अति एवित्र मधु नामक बनमें आया। आगे चलकर उस वनमें मधु नामक दैत्य रहने लगा था, इसलिये वह इस पृथ्वीतलमें मधुवन नामसे विख्यात हुआ ॥ २-३ ॥ वहीं मधुके पुत्र रुवण नामक महाबली राक्षसको मारकर दात्रुप्रने मधुर (मधुर) नामकी पूरी बसायी॥ ४ ॥ जिस (मधुवन) में निरन्तर देवदेव श्रीहरिकी सन्निधि रहती है उसी सर्वपापापहारी तीर्थमें भूवने तपस्या की ॥ ५ ॥ मरीचि आदि मुनीशरीने उसे जिस प्रकार उपदेश किया था उसने उसी प्रकार अपने इदयपे विराजमान निखिलदेवेश्वर श्रीविष्णुभगवानुका ध्यान करना आरम्भ किया ॥ ६ ॥ इस प्रकार हे विप्र ! अनन्य-चित्त होकर ध्यान करते रहनेसे उसके हृदयमें सर्वभृतान्तर्यामा भगवान् हरि सर्वतोभावसे प्रकट स ल्या जुड

हे मैश्रेष ! योगी शुबके चित्तमे भगवान् विष्णुके स्थित हो जानेपर सर्वभूतोंको धारण करनेवाली पृथिवी उसका भार न सैभाल सकी ॥ ८ ॥ उसके बार्य चरणपर खड़े होनेसे पृथिवीका बार्गी आधा भाग झुक गया ॥ ९ ॥ और जिस समय वह पैरके अगूउसे पृथिवीको (बीचसे) दबाकर खड़ा हुआ तो भवतिक सहित समल भूगण्डल विचलित हो गया ॥ १० ॥ हे महामुने ! उस समय नदी, नद और समुद्र आदि सभी अत्यन्त कुब्ध हो गये और उनके क्षोमसे देवताओंमें भी बड़ी हलचल मची ॥ ११ ॥ हे मैतेय ! तब याम नामक देवताओंने अत्यन्त व्याकुल हो इन्द्रके साथ परामर्श कर उसके ध्यानको भङ्ग करनेका आयोजन किया ॥ १२ ॥ हे महामुने ! इन्द्रके साथ अति आतुर कूष्माण्ड नामक उपदेवताओंने नानारूप धारणकर उसकी समाधि भङ्ग करना आरम्भ किया ॥ १३ ॥

उस समय मायाहीसे रची हुई उसकी माता सुनीति नेत्रोमें ऑस् भरे उसके सामने प्रकट हुई और 'हे पुत्र ! हे पुत्र !' ऐसा कहकर करुणायुक्त वचन बोलने लगी पुत्रकास्मात्रिवर्त्तस्व दारीरात्ययदारुणात् । ः निर्वन्थतो मया लब्धो बहुभिस्त्वं मनोरश्रैः ॥ १५ दीनामेकां परित्यक्तमनाथां न त्वमहैसि । सपत्नीवचनाद्वत्स अगतेस्त्वं गतिर्मम् ॥ १६ क्र च त्वं पञ्चवर्षीयः क्र चैतहारुणं तपः। निवर्ततां मनः कष्टान्निर्बन्धात्फलवर्जितात् ॥ १७ कालः क्रीइनकानान्ते तदन्तेऽध्ययनस्य ते । ततः समस्तभोगानां तदन्ते चेष्यते तपः ॥ १८ कालः क्रीइनकानां यस्तव बालस्य पुत्रक । तस्मिस्त्वमिच्छसि तयः किं नाशायात्मनो रतः ॥ १९ मत्प्रीतिः परमो धर्मो वयोऽवस्थाक्रियाक्रमम् । अनुवर्त्तस्व मा मोहान्निवर्त्तास्मादधर्मतः ॥ २० परित्यजीत बत्साद्य यद्येतन्न भवांस्तपः। त्यक्याम्यहमिह प्राणांस्ततो वै पश्यतस्तव ॥ २१ श्रीपरादार उवाच तां प्रकापवतीमेवं वाष्पाकुलविलोचनाम् । समाहितमना विष्णौ पश्यन्नपि न दृष्टवान् ॥ २२ वत्स वत्स सुघोराणि रक्षांस्थेतानि भीषणे ।

वनेऽभ्युद्धतशस्त्राणि समायान्यपगम्यताम् ॥ २३ इत्युक्त्वा प्रययौ साथ रक्षांस्याविर्वभुस्ततः । अभ्युद्धतोप्रशस्त्राणि ज्वालामालाकुलैर्पुर्तः ॥ २४ ततो नादानतीवोग्रात्राजपुत्रस्य ते पुरः । मुमुबुर्दीप्रशस्त्राणि भ्रामयन्तो निशाचराः ॥ २५ शिवाश्च शतशो नेदुः सज्वालाकवलैर्मुर्सः । त्रासाय तस्य बालस्य योगयुक्तस्य सर्वदा ॥ २६ हन्यतां हन्यतामेष श्विद्यतां खिद्यतामयम् । भक्ष्यतां भक्ष्यतां चायमित्युक्तते निशाचराः ॥ २७

ततो नानाविधान्नादान् सिंहोष्ट्रमकराननाः । त्रासाय राजपुत्रस्य नेदुस्ते रजनीवराः ॥ २८ रक्षांसि तानि ते नादाः शिवास्तान्यायुधानि व । गोविन्दासक्तवित्तस्य ययुर्नेन्द्रियगोवरम् ॥ २९ एकाप्रवेताः सततं विष्णुमेवात्मसंश्रयम् । दृष्टवान्पृथिवीनाथपुत्रो नान्यं कथञ्चन ॥ ३० [|उसने कहा | — बेटा ! तू शरीरको पुल्पनेवाले इस भयक्कर तपका आयह स्टोड दे। मैंने बड़ी-बड़ी कामनाओंद्वार तुसे प्राप्त किया है ॥ १४-१५ ॥ अरे ! मुझ अंकर्ली, अनाथा, दुखियाको सौतके कटु वाक्योंसे छोड़ देना तुझे उचित नहीं है । बेटा ! मुझ आश्रयहोनाका तो एकमात्र तू ही सहारा है ॥ १६ ॥ कहाँ तो पाँच वर्षका तू और कहाँ तेरा यह अति उम्र तप ? अरे ! इस निष्फल हेशकारी आग्रहसे अपना मन मोड़ ले ॥ १७ ॥ अभी तो तेरे खेलने कुदनेका समय है, फिर अध्ययनका समय

सुकुमार बालकका 'जो खेल-कूदका समय है उसीमें तू तपस्या करना चाहता है। तू इस प्रकार क्यों अपने सर्वनाशमें तत्पर हुआ है? ॥ १९ ॥ तेए परम धर्म तो मुझको असन रखना ही है, अतः तू अपनी आयु और अवस्थाके अनुकूल कर्मोमें ही लग, मोहका अनुवर्तन न कर और इस तपरूपी अधर्मसे निकृत हो ॥ २० ॥ वेटा । यदि आज तू इस तपस्याको न छोड़ेगा तो देख तेरे सामने

आयेगा, तदनन्तर समस्त भोगोंके भोगनेका और फिर

अन्तमें तपस्या करना भी ठीक होगा ॥ १८ ॥ बेटा ! तुझ

ही मैं अपने प्राण छोड़ दूंगी ॥ २१ ॥ श्रीपराशरजी बोले—हे मैंत्रेय ! भगवान् विष्णुमें चित्त स्थिर रहनेके वंबरण छुवने उसे औद्योगे औसू भरकर इस प्रकार विराण करती देखकर भी नहीं देखा ॥ २२ ॥ तब, 'अरे बेटा ! यहाँसे भाग-भागः! देख, इस महाभयद्वर वनमें ये कैसे शोर राशस अस्न शस्त्र उठाये

आ रहे हैं — ऐसा कहती हुई यह चली गयी और वहाँ जिनके मुखसे अभिकी लगरे निकल रही थीं ऐसे अनेको सक्षसगण अख-शख संभाले पकट हो गये ॥ २२-२४ ॥ उन सक्षसोंने अपने आंत चमकीले शखोंको सुमाते हुए उस राजपुत्रके सामने बड़ा भयदूर कोलाहल किया ॥ २५ ॥ उस निख-योगयुक्त जलकको भयभीत करनेके लिये अपने मुखसे अग्रिकी लपरे निकालती हुई सैकड़ों स्थारिखाँ भीर नाद करने लगों ॥ २६ ॥ वे सक्षसगण भी

नाना प्रकारसे गरजने छगे ॥ २८ ॥ किन्तु उस भगवदासक्तिनत बालकको वे राक्षस, उनके शब्द, स्वारियाँ और अख-शखादि कुछ भी दिखायाँ नहीं दिये॥ २९ ॥ वह राजपुत्र एकाअनितसे निरन्तर अपने आश्रयभूत विष्णुभगवानुको ही देखता रहा और

'इसको मारो-मारो, काटो-काटो, खाओ-खाओ' इस

प्रकार चिल्लाने लगे ॥ २७ ॥ फिर सिंह, ऊँट और सकर

आदिके-से मुख्याले वे एक्स एजपूजको ज्ञाण देनेके रूपे

ततः सर्वासु मायासु विलीनासु पुनः सुराः । सङ्कोभं परमं जग्मुस्तत्पराभवशङ्किताः ॥ ३१ ते समेत्य जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् । इारण्यं द्वारणं यातास्तपसा तस्य तापिताः ॥ ३२ देवा कवः

देवदेव जगन्नाथ परेश पुरुषोत्तम । धुवस्य तपसा तप्तास्त्वां वर्ध शरणे गताः ॥ ३३ दिने दिने कलालेशैः शशाङ्कः पूर्वते यथा । तथायं तपसा देव प्रयात्पृद्धिमहर्निशम् ॥ ३४ औत्तानपादितपसा वयमित्यं जनार्दन । भीतास्त्वां शरणं यातास्तपसस्तं निवर्तय ॥ ३५ म विद्यः कि शक्रत्वं सूर्यत्वं किमभीपसित । वित्तपाम्बुपसोमानां साभिलाषः पदेषु किम् ॥ ३६ तदस्माकं प्रसीदेश हृद्याच्छल्यमुद्धर । उत्तानपादतनयं तपसः सन्निवर्त्य ॥ ३७ श्रीभगवानुकव

नेन्द्रत्वं न च सूर्यत्वं नैवाम्बुपधनेशताम् । प्रार्थयत्वेष यं कामं तं करोम्यखिलं सुराः ॥ ३८ यात देवा यश्चाकामं स्वस्थानं विगतज्वराः । निवर्त्तयाम्यहं बालं तपस्यासक्तमानसम् ॥ ३९ श्रीपशस्त जनाव

इत्युक्ता देवदेवेन प्रणम्य त्रिटशास्ततः । प्रययुः स्वानि धिष्ण्यानि शतकतुपुरोगमाः ॥ ४० भगवानपि सर्वातमा तन्मयत्वेन तोषितः । गत्वा श्रुवमुवाचेदं चतुर्भुजवपुर्हरिः ॥ ४१ औभगवानुवाव

औत्तानपादे भद्रं ते तपसा परितोषितः। बरदोऽहमनुप्राप्तो वरं वस्य सुव्रतः॥ ४२ बाह्यार्थैनिरपेक्षं ते मयि चित्तं यदाहितम्। तुष्टोऽहं भवतस्तेन तद्वृणीषु वरं परम्॥ ४३ श्रीपश्चर उवाच

शुत्वेत्थं गदितं तस्य देवदेवस्य बालकः । उन्मीलिताक्षो दद्शे ध्यानदृष्टं हरि पुरः ॥ ४४ उसने किसीकी ओर किसी भी प्रकार दृष्टिपात नहीं किया॥ ३०॥

तब सम्पूर्ण मायाके लीन हो जानेपर उससे हार जानेकी आशंकासे देवताओंको बढ़ा भय हुआ ॥ ३१ ॥ अतः उसके तपसे सन्तप्त हो वे सब आपसमें मिलकर जगत्के आदि-कारण, शरणागतवत्सल, अनादि और अनन्त श्रीहरिकी शरणमें गये॥ ३२ ॥

देवता बोले — हे देवाधिदेव, जगन्नाथ, परमेश्वर, पुरुषोत्तम ! हम सब घुवकी तपस्यासे सन्तव होकर आपकी जरणमें आये हैं ॥ ३३ ॥ हे देव ! जिस प्रकार चन्द्रमा अपनी कल्पओं से प्रतिदिन बढ़ता है उसी प्रकार वह भी वपस्याके कारण राव-दिन उन्नत हो रहा है ॥ ३४ ॥ हे जनार्दन ! इस उत्तानपादके पुत्रकी तपस्यासे भयभीत होकर हम आपकी नारणमें आये हैं, आप उसे तपसे निवृत्त कीन्निये ॥ ३५ ॥ हम नहीं जानते, वह इन्द्रल चाहता है या सूर्यत्व अथवा उसे कुनेर, वरुण या चन्द्रमाके पदकी अभिल्ला है ॥ ३६ ॥ अतः हे ईश ! आप इपपर प्रसन्न होइये और इस उत्तानपादके पुत्रको तपसे निवृत्त करके हमारे हृदयका काँटा निकालिये ॥ ३७ ॥

श्रीधगवान् बोले---हें सुरगण ! उसे इन्द्र. सूर्यं, यरुण अथवा कुबेर आदि किसीके पदकी अभिलाषा नहीं है, उसकी जो कुछ इन्छा है वह मैं सब पूर्ण करूँगा॥ ३८॥ हे देवयण ! तुम निशिन्त होकर इन्छानुसार अपने-अपने स्थानीको जाओ। मैं तपस्यामें रुगे हुए उस बालकको निवृत्त करता हूँ॥ ३९॥

भ्रोपराद्वारजी बोले—देवाधिदेव भगवान्के ऐसा कहनेपर इन्द्र आदि सगस्त देवगण उन्हें प्रणामकर अपने-अपने स्थानोको गये॥४०॥ सर्वात्मा भगवान् हरिने भी धुवकी तन्मयतासे प्रसन्न हो उसके निकट चतुर्भुजरूपसे जाकर इस प्रकार कहा॥४१॥

श्रीभगवान् बोले—हे उतानपादके पुत्र धुव ! तेरा कल्याण हो। मैं तेरी तपस्यासे प्रसन्न होकर तुझे वर देनेके लिये प्रकट हुआ हूँ, हे सुबत ! तू वर माँग ॥ ४२ ॥ तूने सम्पूर्ण बाह्य विषयोसे उपरत होकर अपने चित्तको मुझमे ही लगा दिया है। अतः मैं तुझसे अति सन्तुष्ट हूँ। अब तू अपनी इच्छनुसार श्रेष्ठ वर माँग ॥ ४३ ॥

श्रीपरादारजी बोले—देवाधिदेव मगवान्के ऐसे वचन सुनकर बालक धुवने आँखें खोलीं और अपनी ध्यानावस्थामें देखे हुए भगवान् हरिको साक्षात् अपने शङ्क्षचक्रगदाशाङ्गंबरासिघरमच्युतम् । किरीटिनं समालोक्य जगाम शिरसा महीम् ॥ ४५ रोमाञ्चिताङ्गः सहसा साध्वसं परमं गतः । स्तवाय देवदेवस्य स चक्रे मानसं धुवः ॥ ४६ किं वदामि स्तुतावस्य केनोक्तेनास्य संस्तुतिः । इत्याकुलमतिर्देवं तमेव शरणं ययौ ॥ ४७

भगवन्यदि मे तीवं तपसा परमं गतः। स्तीतुं तदहमिन्छामि वरमेनं प्रयन्छ मे॥ ४८ [ब्रह्माद्यैर्थस्य वेदक्रीर्जायते यस्य नो गतिः।

धुय उयाच

तं त्वां कथमहं देव स्तोतुं शक्नोमि बालकः ॥ त्वद्धक्तिप्रवर्ण होतत्वरमेश्वर मे मनः । स्तोतुं प्रकृतं त्वत्यादौ तत्र प्रज्ञां प्रयच्छ मे ॥ }

श्रीपराशर उवाच

शङ्कप्रान्तेन गोविन्दस्तं पस्पर्शं कृताञ्चलिम् । उत्तानपादतनयं द्विजवर्य जगत्पतिः ॥ ४९ अथ प्रसन्नवदनः स क्षणाञ्चपनन्दनः । तुष्टाव प्रणतो भूत्वा भूतधातास्मच्युतम् ॥ ५०

भूमिरापोऽनलो वायुः सं मनो बुद्धिरेव च । भूतादिरादिप्रकृतिर्यस्य रूपं नतोऽस्मि तम् ॥ ५१ शुद्धः सृक्ष्मोऽस्तिलव्यापी प्रधानात्पत्तः पुमान् । यस्य रूपं नमस्तस्मै पुरुषाय गुणाशिने ॥ ५२ भूसदीनां समस्तानां गन्धादीनां च शाश्वतः । बुद्ध्यादीनां प्रधानस्य पुरुषस्य च यः परः ॥ ५३ तं ब्रह्मभूतमात्मानमशेषजगतः पतिम् । प्रपद्ये शरणं शुद्धं त्वद्वपं परमेश्वर ॥ ५४

बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच यहूपं ब्रह्मसंज्ञितम् । तस्मै नमस्ते सर्वात्मन्योगि चिन्त्याविकारिणे ॥ ५५

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात । सर्वव्यापी भुवः स्पर्शादत्यतिष्ठहृशाङ्गलम् ॥ ५६ सम्पुरत खड़े देखा ॥ ४४ ॥ श्रीअच्युतको किरीट तथा श्रृष्टु, चक्र, गदा, शाङ्गे धनुष और सद्ग धारण किये देख उसने पृथिवीपर सिर रखकर प्रणाम किया ॥ ४५ ॥ और सहस्रा रोमाञ्चित तथा परम भयभीत होकर उसने देवदेवकी स्तुति करनेकी इच्छा की ॥ ४६ ॥ किन्तु 'इक्की स्तुतिके लिये मैं क्या कहूँ ? क्या कहनेसे इनका स्तवन हो सकता है ?' यह न जाननेके कारण वह चित्तमें व्याकुल हो गया और अन्तमें उसने उन देवदेवकी ही शरण लो ॥ ४७ ॥

धुवने कहा — भगवन् ! आप यदि मेरी तपत्यासे सन्तुष्ट हैं तो ये आपकी स्तृति करना चाहता हूँ, आप मुझे यही वर दीजिये [जिससे मैं स्तृति कर सक्तृं] ॥ ४८ ॥ [हे देव ! जिनको गति ब्रह्मा आदि वेदङ्गजन भी, नहीं जानते; उन्हीं आपका में बारुक कैसे स्तवन कर सकता हूँ। किन्तु हे परम प्रभो ! आपकी भक्तिसे द्रवीभूत हुआ मेरा चित आपके चरणोकी स्तृति करनेमें प्रवृत हो रहा है। अतः आप इसे उसके लिये बुद्धि प्रदान कीजिये] ।

श्रीपराशरजी बोले—हे द्विजवर्य ! तव जगत्पति श्रीगोविन्दने अपने सामने हाथ जोड़े कहे हुए उस उत्तानपादके पुत्रको अपने (बेदमय) शहुके अन्त (बेदान्तमय) भागसे छू दिया॥४९॥ तब तो एक क्षणमे हो वह राजकुमार शसक-मुखसे अति विनीत हो सर्वभृताधिष्ठान श्रीअच्युतको स्तृति करने स्या॥ ५०॥

ध्य बोले—पृथिबी, जल, अग्नि, वायु, आकारा, मन, बुद्धि, अहंकार और मूल-प्रकृति---ये सब जिनके रूप हैं उन चगवानुको में नमस्कार करता हैं॥ ५१ ॥ जो अति शुद्ध, सुक्ष्म, सर्वव्यापक और प्रधानसं भी परे हैं, वह पुरुष जिनका रूप है उन गुण-भोक्ता परमपुरुषको मैं तमस्कार करतो है।। ५२ ॥ हे परमेश्वर ! पृथियी आदि समस्त भूत, गन्धादि उनके गुण, युद्धि आदि अन्तःकरण-चतुष्ट्य तथा प्रधान और पुरुष (जीव) से भी परे जो सनतान पुरुष हैं, उन आप निसिलबह्याण्डनायकके बहाभूत शुद्धस्वरूप आत्माको मैं आरण हैं।। ५३-५४ ॥ है सर्वात्मन् ! हे योगियोंके चिन्तनीय ! व्यापक और वर्धनशील होनेके कारण आपका जो बहा नामक स्वरूप है, उस विकार/हित रूपको मै नमस्कार करता हूँ ॥ ५५ ॥ हे प्रधी ! आप हजारों मस्तकींबाले, हजारों नेत्रींबाले और हजारों चरणीवारहे परमप्रव हैं, आप सर्वत्र ब्लाप्त हैं और [पथिबी आदि आवरणोंके सहित] सम्पूर्ण बहाएंडको व्याप्त कर दस गुण महाप्रमाणसे स्थित हैं॥ ५६ ॥ 🦠

यद्धतं यस वै भव्यं पुरुषोत्तम तद्धवान्। त्वनो विराद् खराद् सम्राद् त्वनशाप्यधिपूरुषः ॥ ५७ अत्यरिच्यत सोऽयश्च तिर्वगृथ्वं च वं भुवः । त्वतो विश्वमिदं जातं त्वत्तो भूतभविष्यती ॥ ५८ त्वद्ररूपधारिणश्चान्तर्भूतं सर्विपिदं जगत्। त्वत्तो यज्ञः सर्वहतः पृषदाज्यं पशुर्द्धिधा ॥ ५९ त्वतः ऋचोऽथ सामानि त्वत्तश्छन्दांसि जज़िरे । त्वत्तो यज्ञंच्यजायन्त त्वतोऽश्वाश्चैकतो दतः ॥ ६० गावस्वत्तः समुद्धतास्वतोऽजा अवयो मृगाः । त्वन्युस्तादुब्राह्मणास्त्वतो वाहोः क्षत्रमजायत ॥ ६१ वैद्यास्तवोरुजाः शुद्रास्तव पद्भवां समुद्रताः । अक्ष्णोः सूर्योऽनिलः प्राणाबन्द्रमा मनसस्तव ॥ ६२ प्राणोऽन्तःसुषिराजातो मुखादप्रिरजायत । नाभितो गगनं द्यौश्च शिरसः समवर्तत ॥ ६३ दिशः श्रोत्रात्क्षितिः पद्भयां त्वत्तः सर्वमभृदिदम् ॥ ६४ न्यत्रोधः समहानल्ये यथा वीजे व्यवस्थितः । संयमे विश्वमिखलं बीजभूते तथा त्वयि ॥ ६५ बीजादङ्कुरसम्भूतो न्यप्रोधस्तु समुस्थितः। विस्तारं च यथा याति त्वत्तः सृष्टी तथा जगत् ॥ ६६ यथा हि कदली नान्या त्वक्पत्रादिप दुश्यते । एवं विश्वस्य नान्यस्त्वं त्वतस्थायीश्वर दृश्यते ॥ ६७ द्वादिनी सन्धिनी संवित्त्वय्येका सर्वसंस्थितौ । ह्रादतापकरी मिश्रा त्वयि नो गुणवर्जिते ॥ ६८ पृथाभूतैकभूताय भूतभूताय ते नमः।

प्रभूतभूतभूताय तुभ्यं भूतात्मने नमः॥ ६९

विभाव्यतेऽन्तःकरणे पुरुषेष्ठक्षयो भवान् ॥ ७०

सर्वं त्वत्तस्ततञ्च त्वं नमः सर्वात्मनेऽस्तु ते ॥ ७१

व्यक्तं प्रधानपुरुषौ विराद् सम्राद्स्यराद् तथा ।

सर्वस्थि-सर्वभूतस्त्वं सर्वः सर्वस्वरूपधृक् ।

हे पुरुगोतम ! भूत और भविष्यत् जो कुछ पदार्थ है वे सब आप ही हैं तथा विराद, स्वराद, सम्राद और अधिपुरुष (ब्रह्मा) आदि भी सब आपहीसे उत्पन्न हुए हैं ॥ ५७ ॥ वे ही अहप इस पृथिबीके नीचे-उत्पर और इधर-उधर सब और बढ़े हुए हैं। यह सम्पूर्ण जगत् आपहीसे उत्पन्न हुआ है तथा आपक्षेसे भूत और भविष्यत् हुए हैं ॥ ५८ ॥ यह सम्पूर्ण जगत् आपके स्वरूपभृत ब्रह्माण्डके अन्तर्गत है | फिर आपके अन्तर्गत होनेकी तो बात ही क्या है] जिसमें सभी पुरोडाओंका इक्न होता है वह यह, पृषदान्य (दिध और युन) तथा । आध्य और बन्य] दो प्रकारके पश् आपहीसे उत्पन्न हुए है ॥ ५९ ॥ आपहीसे ऋक, साम और गायत्री आदि छन्द प्रकट हुए हैं, आपहीसे यजुर्वेदका प्रादुर्भाव हुआ है और आपहोसे अश्व तथा एक ओर दाँतवाले महिष आदि कीच तत्पन्न हुए हैं ॥ ६० ॥ आपहीसे गौओं, वकरियों, भेड़ों और मृगोंकी उत्पत्ति हुई है; आपहीके मुखसे बाह्यण, बाहुओंसे श्विक, जंबाओंसे बैठ्य और चरणोंसे शुद्र प्रकट हुए हैं तथा आपहीके नेहोंसे सुर्य, प्राणसे वायु, मनसे चन्द्रमा, भीतरी छिद्र (भारतस्थ) से प्राण, मुखसे आँग्र, नाभिसे आन्त्रश, सिरसे स्त्रर्ग, श्रोत्रसे दिशाएँ और चरणोंसे पृथिनी आदि उत्पन्न हुए हैं; इस प्रकार हे प्रभी ! यह सम्पूर्ण जगत् आपहीसे प्रकट हुआ है ॥ ६१—६४ ॥ जिस प्रकार नहेंसे बीजने बड़ा भारी वट-वक्ष रहता है उसी प्रवास प्रलय-कालमें यह सम्पूर्ण जगत्। बीज-स्वरूप आपहीमें लीन रहता है ॥ ६५ ॥ जिस प्रकार बीजसे अहुररूपमें प्रकट हुआ वट-वृक्ष बढ़कर अत्यन्त विसारकार्को हो जाता है उसी प्रकार सृष्टिकारुमें यह जगत्। आपहोसे प्रकट होकर फैल जाता है ॥ ६६ ॥ हे ईश्वर ! जिस प्रकार केलेका पौधा छिल्के और फ्तोस अलग दिखायो नहीं देता उसी प्रकार जगत्से आप पृथक् नहीं हैं, वह आपदीमें स्थित देशा जाता है।।६७।। सबके आधारभृत आपमे हादिनी (निरन्तर आहादित करनेवासी) और सन्धिनी (विच्छेदरहित) संवित् (विद्याशक्ति) अधित्ररूपसे रहती है। आपमे (विषयकस्य) आहाद या ताप देनेवाली (सात्त्वको या तामसो) अथवा उभयमिश्रा (राजसी) कोई भी संवित् नहीं है, क्योंकि आप निर्मण है।। ६८ ॥ आप [कार्यदृष्टिसे] पृथक्-रूप और [कारणदृष्टिसे] एकरूप है । आप ही भूतसुक्ष्म है और आप ही नाना जीवरूप हैं । है भृतान्तरात्मम् ! ऐसे आपको में अमस्कार करता है ॥ ६९ ॥ | योगियोंके द्वारा | अन्तःकरणमें अप दी महत्तकः, प्रधान, पुरुष, विराद, समाद और खराद आदि रूपोंसे भावनः क्रिये जाते हैं और [क्षयशील] पुरुषीमे आप नित्य अक्षय हैं॥७०॥ आन्न्रज्ञादि सर्वभूतोमें सार अर्थात् उनके गुणरूप आप ही हैं, समस्त रूपीको धारण

सर्वात्मकोऽसि सर्वेश सर्वभूतस्थितो यतः । कथयामिततः किते सर्वं वेत्सि हृदि स्थितम् ॥ ७२ सर्वात्मन्सर्वभूतेश सर्वसन्त्वसमुद्भव । सर्वभूतो भवान्वेत्ति सर्वसन्त्वमनोरथम् ॥ ७३

यो मे मनोरश्रो नाथ सफलः स त्वया कृतः । तपश्च तप्तं सफलं यददुष्टोऽसि जगत्यते ॥ ७४

श्रीधगवानुवाच

तपसस्तत्फलं प्राप्तं यद्दृष्टोऽहं त्वया श्रुव । महर्शनं हि विफलं राजपुत्र न जायते ॥ ७५ वरं वरय तस्मात्त्वं यथाभिमतमात्मनः । सर्वं सम्पद्यते पुंसां मयि दृष्टिपर्थं गते ॥ ७६ धुव उवाच

भगवन्धूतमध्येश सर्वस्यास्ते भवान् हृदि । किमज्ञातं तव ब्रह्मन्धनसा यन्धयेक्षितम् ॥ ७७ तथापि तुभ्यं देवेश कथिप्यामि यन्पया । प्रार्थ्यते दुर्विनीतेन हृदयेनातिदुर्लभम् ॥ ७८ कि वा सर्वजगत्स्रष्टः प्रसन्ने त्विच दुर्लभम् । त्वत्प्रसादफलं भुक्ते त्रैलोक्यं मधवानिप ॥ ७९ नैतद्राजासनं योग्यमजातस्य ममोदरात् ।

इतिगर्वादवोचन्मां सपत्नी मातुरुवकैः ॥ ८० आधारभूतं जगतः सर्वेषामुत्तमोत्तमम् । प्रार्थयामि प्रभो स्थानं त्वस्रसादादतोऽज्ययम् ॥ ८१

श्रीभगवानुवाच

यत्त्वया प्रार्थ्यते स्थानमेतत्प्राप्यति वै भवान् । त्वयाऽहं तोषितः पूर्वमन्यजन्मनि बालकः ॥ ८२ त्वमासीर्माह्मणः पूर्वं मय्येकाप्रमतिः सदा । मातापित्रोश्च शुश्रृषुर्निजधर्मानुपालकः ॥ ८३ कालेन गच्छता मित्रं राजपुत्रस्तवाभवत् । यौवनेऽखिलभोगास्त्रो दर्शनीयोज्ज्वलाकृतिः ॥ ८४ तत्सङ्गात्तस्य तामृद्धिमवलोक्पानिदुर्लभाम् । भवेयं राजपत्रोऽहमिति वाञ्छा त्वया कता ॥ ८५ करनेवाले होनेसे सब कुछ आप ही है; सब कुछ आपहीसे हुआ है; अतएव सबके द्वारा आप ही हो रहे हैं इसिलये आप सर्वात्मको नमस्कार है ॥ ७१ ॥ हे सर्वेश्वर ! आप सर्वात्मक है; क्योंकि सम्पूर्ण पूर्तीमें व्याप्त हैं; अतः मैं आपसे क्या कहूँ ? आप स्वयं ही सब इट्यस्थित वातोंको बानते हैं ॥ ७२ ॥ हे सर्वात्मन् ! हे सर्वपूर्तेश्वर ! हे सब पूर्तोके आदि-स्थान ! आप सर्वपूर्तरूपसे सभी प्राणियोंके मनोरयोंको बानते हैं ॥ ७३ ॥ हे नाथ ! मेरा जो कुछ मनोरथ था बह तो आपने सफल कर दिया और हे बगत्यते ! मेरी तपस्या भी सफल हो गयी, क्योंकि मुझे आपका साक्षात् दर्शन प्राप्त हुआ ॥ ७४ ॥

श्रीभगवान् बोले—हे भुव ! तुमको मेरा साक्षात् दर्शन प्राप्त हुआ, इससे अवस्य ही तेरी तपस्या तो सफल हो गयी; परन्तु हे राजकुमार ! मेरा दर्शन भी तो कभी निष्मल नहीं होता ॥ ७५ ॥ इसलिये तुझको जिस वरकी इच्छा हो वह माँग ले । मेरा दर्शन हो जानेपर पुरुषको सभी कुछ प्राप्त हो सकता है ॥ ७६ ॥

श्रुल बोले—हे भूतभव्येशर भगवन्! आप सभीके अन्तःकरणोमें विराजमान हैं। हे ब्रह्मन्! मेरे मनकी जो कुछ अभिलाया है वह क्या आपसे छिया हुई है ? ॥७७॥ तो भी, हे देवेशर! मैं दुर्विनीत जिस अति दुर्लग वस्तुकी हदयसे इच्छा करता हूँ उसे आपकी आज्ञानुसार आपके प्रति निवेदन करूँगा॥७८॥ हे समस्त संसारको रचनेवाले परमेश्वर! आपके प्रसन्न होनेपर (संसारमें) क्या दुर्लभ है ? इन्द्र भी आपके कृपाकटाशके फल्हणसे ही जिलोकीको भोगता है॥७९॥

प्रभो ! मेरी सौतेली माताने गर्वसे अति बढ़-बढ़कर मुझसे यह कहा था कि 'जो मेरे उदरसे उत्पन्न गर्ही है उसके योग्य यह राजासन नहीं है' ॥ ८० ॥ अतः हे प्रभो ! आपके प्रसादसे मैं उस सर्वोत्तम एवं अव्यय स्थानको प्राप्त करना चाहता है जो सम्मूर्ण विश्वका आधारभूत हो ॥ ८१ ॥

श्रीभगवान् बोले — अरं बालक ! तूने अपने पूर्वजन्यमें भी मुझे सन्तुष्ट किया था, इसिल्ये तू जिस स्थानकी इच्छा करता है उसे अवश्य प्राप्त करेगा ॥ ८२ ॥ पूर्व-जन्ममें तू एक ब्राह्मण था और मुझमें निरन्तर एकाप्रचित रहनेवाला, माता-पिताका सेवक तथा स्वधर्मका पालन करनेवाला था॥ ८३ ॥ कालान्तरमें एक राजपुत्र तेस मित्र हो गया। वह अपनी युवावस्थामें सम्पूर्ण भोगोंसे सम्पन्न और अति दर्शनीय रूपलावण्ययुक्त था॥ ८४॥ उसके सङ्गसे उसके दुर्लभ वैभवको

ततो यथाभिलविता प्राप्ता ते राजपुत्रता । उतानपादस्य गृहे जातोऽसि ध्रुव दुर्लभे ॥ 65 अन्येषां दुर्लभं स्थानं कुले स्वायम्भवस्य यत् ॥ 613 तस्यैतदपरं बाल येनाहं परितोषितः। मामाराध्यं नरो मुक्तिमवाप्रोत्यविलम्बिताम् ॥ 44 मर्व्यर्पितमना बाल किम् स्वर्गादिकं पदम् ॥ 69 त्रैलेक्याद्धिके स्थाने सर्वताराग्रहाश्रयः । भविष्यति न सन्देहो महासादाद्भवाश्यव ॥ 90 सुर्यात्सोमात्तथा भौमात्सोमपुत्रादबुहस्पतेः । सितार्कतनयादीनां सर्वक्षांणां तथा धुव ॥ 88 सप्तर्षीणामशेषाणां ये च वैमानिकाः सुराः । सर्वेचामुपरि स्थानं तव दत्तं मया धुव ॥ 83 केचिश्चतुर्युगं याबत्केचिन्यन्वन्तरं सुराः । तिष्ठन्ति भवतो दत्ता मया वै कल्पसंस्थितिः ॥ 69 सुनीतिरपि ते पाता त्वदासञ्जातिनिर्मला । विमाने तारका भूत्वा तावत्कालं निवत्स्यति ॥ 68 ये च त्वां मानवाः प्रातः सायं च सुसमाहिताः । कीर्त्तविष्यन्ति तेषां च महत्युण्यं भविष्यति ॥ 24 श्रीपराशर उवाच एवं पूर्व जगन्नाथाद्देवदेवाजनार्दनात्। वरं प्राप्य श्रुवः स्थानमध्यास्ते स महापते ॥ 39 खयं राश्रुषणाद्धर्म्यान्यातापित्रोश्च वै तश्रा । द्वादशाक्षरमाहात्म्यात्तपस्रश 919 तस्याभिमानमृद्धिं च महिमानं निरीक्ष्य हि । देवासुराणामाचार्यः इस्त्रोकमन्नोहाना जगौ ॥ 28 अहोऽस्य तपसो वीर्यमहोऽस्य तपसः फलम्। यदेनं पुरतः कृत्वा ध्रुवं सप्तर्षयः स्थिताः ॥

धुबस्य जननी चेयं सुनीतिनांय सुनृता ।

अस्याश्च महिपानं कः शक्तो वर्णयितं भवि ॥ १००

होर्जै' ॥ ८५ ॥ अतः हे धूव ! तुझको अपनी मनोवाञ्छित राजपुत्रता प्राप्त हुई और जिन खायम्भुवमनुके कुलमें और किसीको स्थान मिलना अति दुर्लभ है, उन्होंके घरमें तुने उतानपादके यहाँ जन्म लिया ॥ ८६-८७ ॥ अरे बालक ! [औरोंके किये यह स्थान कितना ही दुर्लभ हो परन्तु] जिसने मुट्टो सन्तृष्ट किया है उसके रूपि तो यह अत्यन्त तुच्छ है। मेरी आराधना करनेशे तो मोक्षपद भी तत्काल प्राप्त हो सकता है, फिर जिसका चिन निरन्तर पृहापें ही लगा हुआ है उसके लिये स्वर्गाद लोकोंका तो कहना ही क्या है ? ॥ ८८-८९ ॥ हे धूब ! मेरी कृपासे तु निस्सन्देह उस स्थानमें, जो जिलोकीमें सबसे उत्कृष्ट है, सम्पूर्ण प्रह और तारामण्डलका आश्रय बनेगा ॥ ९० ॥ हे ध्रव ! मैं तुझे वह धुव (निश्चरू) स्थान देता हूँ जो सूर्थ, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि आदि प्रही, सभी नक्षत्रों, सप्तर्षियों और सम्पूर्ण विमानचारी देवगणोंसे उपर है।। ९१-९२।। देवतःओमिसे कोई तो केवल चार युगतक और कोई एक मन्बन्तरतक ही रहते हैं; किन्तु तुझे मैं एक कल्पतककी स्थिति देता हैं ॥ २३ ॥ तेरी माता सुनीति भी अति स्वच्छ तारारूपसे उतने ही समयतक तेरे पास एक विधानपर निवास करेगी ॥ ९४ ॥ और जो लोग समाहित-चित्तसे सायद्वाल और

देखकर तेरी ऐसी इच्छा हुई कि 'मैं भी राजपुत्र

पुण्य होगा ॥ १५ ॥

श्रीपराशरजी बोरहे—हे महामते ! इस प्रकार
पूर्वकालमें जगत्पति देवाधिदेव भगवान् जनार्दनसे वर
पाकर धुन उस अखुतम स्थानमें स्थित हुए ॥ १६ ॥ हे
मुने ! अपने माता-पिताकी धर्मपूर्वक सेवा करनेसे तथा
हादशाक्षर-मन्त्रके माहात्स्य और तपके प्रभावसे उनके
मान, वैभव एवं प्रभावकी वृद्धि देखकर देव और असुरेंके
आचार्य शुक्रदेवने ये इस्लेक कहे हैं— ॥ १७-१८ ॥

प्रातःकालके समय तेरा गुण-कोर्तन करेगे उनको महान्

'अहो ! इस धुवके तपका कैसा प्रभाव है ? अते ! इसकी तपस्याका कैसा अन्दुत फल है जो इस धुवको ही आगे रखकर सप्तर्षिगण स्थित हो रहे हैं॥ ९९॥ इसकी यह सुनीति नामवार्ल्ड माता भी अवस्य ही सत्य और हितकर वचन बोलनेवार्ल्ड हैं । संसारमें ऐसा कौन है

[्]र क^{ा क} सुनीतिने धुवको पुण्योपार्जन करनेका उपदेश दिया था, जिसके आचरणसे उन्हें उत्तम छोक प्राप्त हुआ। अत्तर्थ 'सुनीति' सृनुता कही गयी है।

त्रैलोक्याश्रयतां प्राप्तं परं स्थानं स्थिरायति । स्थानं प्राप्ता परं धृत्वा या कुश्चिविवरे धुवम् ॥ १०१ यश्चैतत्कीत्तंयेन्नित्यं धुवस्यारोहणं दिवि । सर्वपापविनिर्मुक्तः स्वर्गलोके महीयते ॥ १०२ स्थानभंदो न चाप्रोति दिवि वा यदि वा भुवि । सर्वकल्याणसंयुक्तो दीर्घकालं स जीवति ॥ १०३ जो इसको महिमाका वर्णन कर सके ? जिसने अपनी कोखने उस भुवको धारण करके त्रिलोकीका आश्रयभूत आंत उत्तम स्थान प्राप्त कर लिया, जो भविष्यमें भी स्थिर रहनेबाला हैं ॥ १००-१०१॥

जो व्यक्ति ध्रुवके इस दिव्यलोक-प्राप्तिके प्रसङ्गका वर्धतेन करता है वह सब पापोसे मुक्त होकर स्वर्गलोकमें पूजित होता है ॥ १०२ ॥ वह स्वर्गमें रहे अथवा पृथिवीमें, कभी अपने स्थानसे च्युत नहीं होता तथा समस्त मङ्गलोंसे भरपूर रहकर बहुत कालतक जीवित रहता है ॥ १०३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे द्वादशोऽभ्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवाँ अध्याय

राजा क्षेत्र और पृथुका चरित्र

श्रीपराश्चर उवाच

ध्वान्त्रिष्ट्रिं स भव्यं स भव्यान्त्रभृत्यंजायत । शिष्टेराधत्त सुच्छाया पञ्चपुत्रानकल्मवान् ॥ १ रिप् रिपुञ्जयं विश्रं वृकलं वृकतेजसम्। रिपोराधत्त बृहती चाक्षुर्घ सर्वतेजसम् ॥ २ अजीजनत्युष्करिण्यां वारुण्यां चाक्षयो मनुम् । प्रजापतेरात्मजायां वीरणस्य महात्मनः ॥ ३ मनोरजायन्त दश नडवलायां महीजसः। कन्यायां तपतां श्रेष्ठ वैराजस्य प्रजापते:॥४ कुरुः पुरुः शतद्यप्रस्तपस्वी सत्यवाञ्छूचिः । अग्निष्टोमोऽतिरात्रश्च सुद्धप्रश्चेति ते नव । अभिमन्युश्च दशमो नड्बलायां महोजसः ॥ ५ कुरोरजनयत्पुत्रान् वडाप्नेयी महाप्रभान्। अङ्कं सुमनसं ख्याति क्रतुमङ्किरसं शिबिम् ॥ ६ अङ्गात्सुनीथापत्यं वै वेनमेकमजायत् । प्रजार्श्वमुखयस्तस्य ममन्थुर्दक्षिणं करम् ॥ ७ वेनस्य पाणौ मश्चिते सम्बभूव महापुने । वैन्यो नाम महीपालो यः पृथः परिकीर्तितः ॥ ८ येन दुग्धा मही पूर्व प्रजानां हितकारणात् ॥ ९

श्रीपराक्षरजी बोले — हे मैत्रेय ! ध्रवसे [उसकी पत्नीने] ज़िष्टि और भव्यको उत्पन्न किया और भव्यसे शम्भुकः जन्म हुआ तथा शिष्टिके द्वारा उसकी पत्नी सुद्धायाने रिप्, रिपुज़य, विप्र, वृक्तल और वृक्तनेजा नामक पाँच निष्पाप पुत्र ठत्पन्न किये । उनमेंसे रिपुके द्वारा बृहतीके गर्धसे महातेजस्वी चाक्षुपका जन्म हुआ ।: १-२ ।। चाक्ष्पने अपनी भार्या पुष्करणीसे, जो वरुण-कलमें उत्पन्न और महात्मा वीरण प्रजापतिको पुत्री थी, मनुको उत्पन्न कियां [जो छठे मन्वन्तरके अधिपति हुए } ॥ ३ ॥ तपस्वियोमें श्रेष्ठ मनुसे वैराज प्रजापतिकी पूर्वा नहनलाके गर्भमें दस महातेवस्वी पुत्र उत्पन्न हुए ॥ ४ ॥ बहुबलासे कुरु, पुरु, शतसुर, तपस्वी, सत्यवान्, शुन्ति, अन्निष्टोम्, अतिरात्र तथा नवी सुद्धस्र और दसर्वा अभिमन्य इन महातेजस्ती पुत्रोंका जन्म हुआ ॥ ५ ॥ कुरुके द्वारा उसकी पत्नी आप्नेयोने अङ्ग, सुमनः, स्त्याति, कत्, अद्भिरा और शिवि इन छः परम तेजस्वी पूत्रीको उत्पन्न किया ॥ ६ ॥ अङ्गसे सुनीथाके बेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ । ऋषियाँनै तस (बेन) के दाहिने <u>ध्रथका सन्तानके लिये मन्धन किया था॥७॥ है</u> महामुने ! वेनके हाथका मन्यन करनेपर उससे वैन्य नामक महीपाल उत्सन्न हुए जो पृथु नामसे विख्यात हैं और जिन्होंने प्रजाके हितके रूपें पूर्वकालमें पृथिवीको दुहा था॥ ८-९॥

श्रीमैत्रेय उवाच

किमर्थं मश्चितः पाणिर्वेनस्य परमर्थिभिः । यत्र जज्ञे महायीर्यः स पृथुर्मनिसत्तम ॥ १०

औपराशर उवाच

सुनीथा नाम या कन्या मृत्योः प्रथमतोऽभवत् । अङ्गस्य भार्या सा दत्ता तस्यां वेनो व्यजायत ॥ ११ स मातामहदोषेण तेन मृत्योः सुतात्मजः। निसगदिव मैत्रेय दृष्ट एव व्यजायत ॥ १२ अभिषिक्तो यदा राज्ये स वेन: परमर्षिभि: । घोषवामास स तदा पृथिव्यां पृथिवीपतिः ॥ १३

न यष्ट्रक्यं न दातक्यं न होतक्यं कथञ्चन । भोक्ता बज्ञस्य कस्त्वन्यो हाहं यज्ञपतिः प्रभुः ॥ १४ ततस्तपृषयः पूर्वं सम्पूज्य पृश्चिवीपतिम्।

ऊबुः सामकलं वाक्यं मैत्रेय समुपस्थिताः ॥ १५

ऋषय कन्।

भो भो राजन् भृणुषु त्वं यहदाम महीपते । राज्यदेहोपकाराय प्रजानां च हितं परम् ॥ १६ दीर्घसत्रेण देवेशं सर्वयज्ञेश्वरं हरिम्। पुजयिष्याम भद्रं ते तस्यांशस्ते भविष्यति ॥ १७ यज्ञेन यज्ञपुरुषो विष्णुः सम्प्रीणितो नृप । अस्माभिर्भवतः कामान्सर्वानेव प्रदास्पति ॥ १८ यज्ञैर्यज्ञेश्वरो येषां राष्ट्रे सम्पूज्यते हरिः। तेषां सर्वेप्सितावाप्तिं ददाति नृप भूभृताम् ॥ १९

मनः कोऽभ्यधिकोऽन्योऽस्ति कश्चाराध्यो ममापरः । कोऽयं हरिरिति ख्यातो यो वो यज्ञेश्वरो मतः॥२० ब्रह्मा जनार्दनः राष्पुरिन्द्रो वायुर्यमो रविः । हतभुग्वरूणो धाता पूर्वा भूमिर्निशाकरः ॥ २१ एते चान्ये च ये देवाः शापानुबहकारिणः । नुपस्यैते शरीरस्थाः सर्वदेवमयो नृपः॥२२ एवं ज्ञात्वा मयाज्ञप्तं यद्यथा कियतां तथा । न दातव्यं न यष्टव्यं न होतव्यं च भो द्विजा: ॥ २३ भर्तृशुक्षणं धर्मो यथा स्त्रीणां परो मतः । ममाज्ञापालनं धर्मो भवतां च तथा विजा: ॥ २४

श्रीमैत्रेयजी खोले—हे मृतिश्रेष्ठ ! परमर्षियोने वेनके हाथको क्यों पथा जिससे महापराक्रमी पृथका जन्म हुआ ? ॥ १० ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे मुने ! मृत्युकी सुनीधा नामवाली जो प्रथम पुत्री थी वह अङ्गको प्रतीरूपसे दी (व्याही) यसी थी। उसीसे वेनका जन्म हुआ ॥ ११ ॥ हे मैत्रेय ! वह मृत्युकी कन्याका पुत्र अपने मातामह (नाना)। के दोषसे स्वभावसे ही दुष्टप्रकृति हुआ ॥ १२ ॥ उस वेनका जिस समय महर्षियोद्वारा राजपट्पर अभिषेक हुआ उसी समय उस पृथिबीपतिने संसारभरमें यह बीषणा कर दो कि 'भगवान, यज्ञपुरुष मैं हो हैं, मुझसे अतिरिक्त यशका भोका और सामी हो ही कौन सकता है ? इसलिये कभी कोई यज्ञ, दान और हवन आदि न करें ॥ १३-१४ ॥ हे मैत्रेय ! तय ऋषियोंने उस पृथिबीपतिके पास उपस्थित हो पहले उसकी खुब प्रशंसा कर सान्वना-युक्त मधुर वाणीसे कहा ॥ १५ ॥

ऋषिगण कोले—हे राजन् ! हे पृथिवीपते ! तुम्हारे राज्य और देहके उपकार तथा प्रशाके हितके लिये हम जो बात कहते हैं, सुनो ॥ १६ ॥ तुम्हारा कल्याण हो; देखो, हम बड़े-बड़े यज्ञोद्वारा जो सर्व-यज्ञेश्वर देवाधिपति भगवान् हरिका पूजन करेंगे उसके फलमेंसे तुमको भी [छटा] भाग मिलेगा। १७॥ हे उप ! इस प्रकार यज्ञीक द्वारा यज्ञपुरुष भगवान् विष्णु प्रसन्न होकर हमलोगोंके साथ तुम्हारी भी सकल कामनाएँ पूर्ण करेंगे ॥ १८ ॥ हे राजन् जिन राजाओंके राज्यमें बज्जेश्वर भगवान् हरिका यज्ञोंद्वारा पूजन किया जाता है, वे उनकी सभी कामनाओंको पूर्ण कर देते हैं ॥ १९ ॥

खेन खोला—मुझसे भी बढकर ऐसा और कौन है जो मेरा भी पूजनीय है ? जिसे हम यज्ञेश्वर मानते हो वह 'हरि' कहरूनेवाल्य कौन् है ?,॥ २० ॥ ब्रह्मा, विष्णु, महादेव, इन्द्र, वायु, सम, सूर्य, अग्नि, वरुण, धाता, पूषा, पृथिवी और चन्द्रमा तथा इनके अतिरिक्त और भी जितने देवता शाप और क्या करनेमें समर्थ हैं वे सभी राजाके शरीरमें निवास करते है, इस प्रकार राजा सर्वदेवमय है ॥ २१-२२ ॥ हे बाह्मणी ! ऐसा जानकर मैंने जैसी जो कुछ आज़ा को है वैसा ही करी। देखों, कोई भी दान, यज्ञ और हबन आदि न करे ॥ २३ ॥ हे द्विजगण । स्त्रीका परमधर्म जैसे अपने पतिकों सेवा करना ही माना गया है वैसे ही आपलोगोंका धर्म भी मेरी आज्ञाका पालन करना ही है ॥ २४ ॥

ऋषय ऊच्

देहानुजां महाराज मा धर्मो यातु सङ्खयम् । हविषां परिणामोऽयं यदेतदस्त्रिलं जगत्॥ १५ ओपराशर उवाच

इति विज्ञाप्यमानोऽपि स वेनः परमर्विभिः । यदा ददाति नानुज्ञां प्रोक्तः प्रोक्तः पुनः पुनः ॥ २६ ततस्ते मुनयः सर्वे कोपामर्षसमन्त्रिताः।

हन्यती हन्यती पाप इत्युचुस्ते परस्परम् ॥ २७

यो यज्ञपुरुषं विष्णुधनादिनिधनं प्रभुम्।

विनिन्दत्यधमाचारो न स बोस्यो भुवः पतिः ॥ २८ इत्युक्त्वा मन्त्रपृतैस्तैः कुशैर्मुनिगणा नृपम् ।

निजञ्जनिहतं पूर्वं भगवित्रन्दनादिना ॥ २९ ततश्च मुनयो रेणुं ददुशुः सर्वतो द्विज।

किमेनदिति चासन्नान्यप्रकुस्ते जनांस्तदा ॥ ३०

आख्यातं च जनैस्तेषां चोरीभृतैरराजके । राष्ट्रे तु लोकैरारव्यं परस्वादानमातुरै: ॥ ३१

तेषामुद्रीर्णवेगानां चोराणां मुनिसत्तमाः ।

सुमहान् दुश्यते रेणुः परवित्तापहारिणाम् ॥ ३२

ततः सम्पन्त्र्य ते सर्वे मुनयस्तस्य भूभृतः ।

ममन्युरूर्क पुत्रार्थमनपत्यस्य यवतः ॥ ३३

मध्यमानात्सभुत्तस्थौ तस्योरोः पुरुषः किल ।

दग्धस्थूणाप्रतीकाशः खर्व्वाटास्योऽतिह्रस्वकः ॥ ३४ किं करोमीति तान्सर्वान्स विप्रानाह चात्रः ।

निषीदेति तमृजुस्ते निषादस्तेन सोऽभवत् ॥ ३५

ततस्तत्सम्भवा जाता विन्ध्यशैलनिवासिनः ।

निषादा मुनिशार्द्ल पापकर्षोपलक्षणाः ॥ ३६

तेन द्वारेण तत्पापं निष्कान्तं तस्य भूपतेः ।

निषादास्ते ततो जाता वेनकल्पषनाञ्चाः ॥ ३७ तस्यैच दक्षिणं हस्तं ममन्युस्ते ततो द्विजाः ॥ ३८

मध्यमाने च तत्राभूत्पृथ्वैन्यः प्रतापवान् ।

दीप्यमानः स्वयपुषा साक्षादन्निरिव ज्वलन् ॥ ३९

आद्यमाजगर्व नाम खात्यपात ततो धनुः । शराश्च दिव्या नभसः कवर्च च पपात ह ॥ ४०

ऋषिगण बोले—महाराज ! आप ऐसी आज्ञा दीजिये, जिससे धर्मका क्षय न हो। देखिये, यह सारा जगत् हॉब (यज्ञमें हवन की हुई सामग्री) का ही

परिणाम है ॥ २५ ॥ श्रीपराशरजी खोले—महर्षियोके इस प्रकार बारम्बार समझाने और कहने-सुननेपर भी जब वेनने ऐसी

आज्ञा नहीं दी तो वे अत्यन्त क्रुद्ध और अमर्थयुक्त होकर आपसमें कहने लगे—'इस पापीको मारो, मारो! ॥ २६-२७ ॥ जो अनादि और अनन्त यज्ञपुरुष प्रभु

विष्णुकी निन्दा करता है वह अनाचारी किसी प्रकार पृथियोपति होनेके योग्य नहीं हैं ॥ २८ ॥ ऐसा कह मुनिगर्योने, भगवान्की निन्दा आदि करनेके कारण पहले

ही मरे हुए उस राजाको मन्त्रसे पवित्र किये हुए कुझाओंसे मार डाला । २९ ॥

करनेवाले हुए ॥ ३७ ॥

हे द्विज ! तदनत्तर उन मुनीश्वरोने सब ओर बड़ी धृलि उठती देखी, उसे देखकर उन्होंने अपने निकटवती लोगोंसे पूछा—"यह क्या है ?"॥ ३०॥ उन पुरुषोने कहा—''राष्ट्रके राजाहीन हो जानेसे दीन-दु:स्विया खोगोंने चौर बनकर दूसरोंका धन लूटना आरम्भ कर दिया है ॥ ३१ ॥ हे मुनिवरो ! उन तील वेगवाले परधनहारी चौरोंके उत्पातसे ही यह बड़ी भारी धृष्टि उड़ती दीख रही है" ॥ ३२ ॥

तब उन सब मुनीश्चरीने आपसमें सत्प्रह कर उस पुत्रहीन राजाकी जंघाका पुत्रके लिये यलपूर्वक मन्थन किया ॥ ३३ ॥ उसकी जंघाके मधनेपर उससे एक पुरुष उत्पन्न हुआ जो जले ठूँठके समान काला, अत्यन्त नाटा गौर छोटे मुखवासा था ॥ ३४ ॥ उसने अति आतुर होकर **उन सब ब्राह्मणोसे कहा—'मैं क्या करूँ ?'' उन्हों**ने कहा—"निषोद (बैठ)" अतः यह 'निषाद' कहरूाया ॥ ३५ ॥ इसल्यि हे मुनिशार्द्छ ! उससे उत्पन्न हुए

लोग विस्थाचलनिवासी पाप-परायण निवादगण हुए ॥ ३६ ॥ उस निवादरूप द्वारसे राजा वेनका सम्पूर्ण पाप निकल गया। अतः निषादगण वेनके पापीका नाञ

फिर उन बाह्यणीन उसके दाये हाथका मन्यन किया । उसका मन्धन करनेसे परमप्रतापी वेनस्वन पृथ् प्रकट हुए, जो अपने शरीरसे फ्रन्यरित अप्रिके समान देदीऱ्यान थे ॥ ३८-३९ ॥ इसी समय आजगव नामक आद्य (सर्वप्रथम) शिव-धन्ष और दिव्य वाण तथा

तस्मिन् जाते तु भूतानि सम्प्रहृष्टानि सर्वशः ॥ ४१ सत्पन्नेणैव जातेन वेनोऽपि त्रिदिवं ययौ । पुत्राप्रो नरकात् त्रातः सूतेन सुमहात्मना ॥ ४२ तं समुद्राश्च नद्यश्च रह्नान्यादाय सर्वज्ञः । तोयानि चाभिषेकार्थं सर्वाण्येवोपतस्थिरे ॥ ४३ पितामहश्च भगवान्देवैराङ्किरसैः सह । स्थावराणि च भूतानि जङ्गमानि च सर्वदाः । समागम्य तदा वैन्यमध्यसिञ्चत्रराधिपम् ॥ ४४ हस्ते तु दक्षिणे चक्रं दृष्टवा तस्य पितामहः । विष्णोरंशं पृथुं मत्वा परितोषं परं यया ॥ ४५ विष्णुचक्रं करे चिह्नं सर्वेषां चक्रवर्तिनाम् । भवत्यव्याहतो यस्य प्रभावस्त्रिदशैरपि॥४६ महता राजराज्येन पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् । सोऽभिषिक्तो महातेजा विधिवद्धर्मकोविदैः ॥ ४७ पित्राऽपरञ्जितास्तस्य प्रजास्तेनान्रिञ्जताः । अनुरागात्ततस्तस्य नाम राजेत्यजायत् ॥ ४८ आपस्तस्तस्थिरे चास्य समुद्रमभियास्यतः । पर्वताश्च दद्वर्मार्गं ध्वजभङ्गश्च नाभवत् ॥ ४९ अकृष्टुपच्या पृथिवी सिद्ध्यन्यन्नानि चिन्तया। सर्वकामद्वा गाव: पुरके पुरके मधु ॥ ५० तस्य वै जातमात्रस्य यज्ञे पैतामहे शुभै। सुतः सुत्यां समुत्यन्नः सौत्येऽहनि महामतिः ॥ ५१ तस्मिन्नेय महायज्ञे जज्ञे प्राज्ञोऽख मागधः । प्रोक्तौ तदा पुनिवरैस्तावुभौ सुतमागधौः। ५२ स्तुयतामेष नृपतिः पृथुर्वैन्यः प्रतापवान् । कर्मैतदनुरूपं वां पात्रं स्तोत्रस्य चापरम् ॥ ५३ ततस्तावचतुर्विप्रान्सर्वानेव कृताञ्चली । अद्य जातस्य नो कर्म जायतेऽस्य महीपतेः ॥ ५४ गुणा न चास्य ज्ञायन्ते न चास्य प्रथितं यदाः । म्तोत्रं किमाश्रयं त्वस्य कार्यमस्माभिरुव्यताम् ॥ ५५

ऋषयञ्जः करिष्यत्येष यत्कर्म चक्रवर्ती महाबरुः । गुणा भविष्या ये चास्य तैरयं स्तूयतां नृषः ॥ ५६ कवच आकाशसे गिरे ॥ ४० ॥ उनके उत्पन्न होनेसे सभी जीवोंको अति आनन्द हुआ और केवल सस्पन्नके हो जन्म लेनेसे बेन भी स्वर्गलोकको चला गया। इस प्रकार महास्मा पुत्रके कारण ही उसकी पुम् अर्थात् नरकसे रक्षा हुई ॥ ४१-४२ ॥

रक्षा हुइ ॥ ४१-४२ ॥

महाराज पृथुके अभिषेकके किये सभी समुद्र और
नदियाँ सब प्रकारके रल और जल लेकर उपस्थित हुए
॥ ४३ ॥ उस समय ऑगिरस देवगणोंके सहित पितागह
बह्याजीने और समस्त स्थावर-जंगम प्राणियोंने वहाँ
आकर महाराज वैन्य (वेनपुत्र) का राज्याभिषेक किया
॥ ४४ ॥ उनके दाहिने हाथमें चक्रका चिह्न देखकर उन्हें
विष्णुका अंद्रा जान पितागह बह्याजीको परम आनन्द हुआ
॥ ४५ ॥ यह श्रीविष्णुभगवान्के चक्रका चिद्र सभी
चक्रवती राज्याओंके हाथमें हुआ करता है । उनका प्रभाव
कभी देवताओंसे मी कुण्डित नहीं होता ॥ ४६ ॥

इस प्रकार महातेजस्वी और परम प्रतापी केनपुत्र धर्मकुदाल महानुपावोद्वारा विधिपूर्वक अति महान् राजराजेश्वरपद्पर अभिषिक्त हुए॥४७॥ जिस प्रजाको पिताने अपरक (अप्रसन्न) किया था उसीको उन्होंने अनुरक्षित (प्रसन्न) किया, इसिलये अनुरक्षन करनेसे उनका नाम 'राजा' हुआ॥४८॥ जब वे समुद्रमे चलते थे, तो जल बहनेसे रुक जाता था, पर्वत उन्हें मार्ग देते थे और उनको ध्वजा कभी भेग नहीं हुई॥४९॥ पृथिवी विना जोते-बोये थान्य प्रकानेवाली थी; केवल चिन्तन-मात्रसे ही अन्न सिद्ध हो जाता था, गीएँ कामधेनु-रूपा थीं और पत्ते-पत्तेमें मधु भरा रहता था॥ ५०॥

राजा पृथुने उत्पन्न होते ही पैतामह यहा किया; उससे तोमाभिष्ठवके दिन सूर्ति (सोमाभिष्ठवभूमि) से महामित सूतकी उत्पत्ति हुई॥ ५१॥ उसी महायक्षमें बुद्धिमान् मागधका भी जन्म हुआ। तब मुनिवरीने उन दोनों सूत और मागधींसे कहा — ॥ ५२॥ 'तुम इन प्रतापवान् वेनपुत्र महाराज पृथुकी स्तुति करो । तुम्हारे योग्य यही कार्य है और राजा भी सुतिके हो योग्य हैं ॥ ५३॥ तब उन्होंने हाथ बोड़कर सब महाराजोंसे कहा — "ये महाराज तो अस्म ही उत्पन्न हुए हैं, तम इनके कोई कर्म तो जानते ही नहीं हैं ॥ ५४॥ अभी इनके न तो कोई गुण प्रकट हुए हैं और न यहा ही विस्थात हुआ है; फिर कहिये, हम किस आधारमर इनकी सुति करें"॥ ५५॥

ऋषिगण बोले—ये महाबली चक्रवर्ती महाराज भविष्यमें खे-जो कर्म करेंगे और इनके जो-जो भावी गुण होंगे उन्होंसे तुम इनका सावन करो ॥ ५६ ॥ ्त्रीपराशा उवाच

ततः स नृपतिस्तोषं तच्छ्त्वा परमं ययौ । सदुणैः इलाध्यतमेति तस्माल्कभ्या गुणा मम ॥ ५७ तस्माद्यदद्य स्तोत्रेण गुणनिर्वर्णनं त्विमौ । करिष्येते करिष्यामि तदेवाई समाहित: ॥ ५८ यदिमौ वर्जनीयं च किञ्चिदत्र वदिष्यतः । तदहं वर्जीयच्यामीत्येदं चक्रे मति नुपः ॥ ५९ अथ तौ चक्रतः स्तोत्रं पृथोर्वैन्यस्य धीपतः । भविष्यै: कर्मभि: सभ्यवसुखरौ सुतमागधौ ॥ ६० सत्यवान्दानशीलोऽयं सत्यसन्धो नरेश्वरः । हीमान्मैत्रः क्षमाशीलो विक्रान्तो दृष्टशासनः ॥ ६९ धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च दयावान् प्रियभाषकः । मान्यान्मानविता यज्वा ब्रह्मण्यः साधुसम्मतः ॥ ६२ समः रात्रौ च मित्रे च व्यवहारस्थितौ नृपः ॥ ६३ सुतेनोक्तान् गुणानित्यं स तदा मागधेन च । चकार हृदि तादुक् च कर्पणा कृतवानसौ ॥ ६४ ततस्तु पृथिबीपालः पालयन्पृथिवीमिमाम् । विविधैर्यज्ञैर्महद्भिपृतिदक्षिणै: ॥ ६५ इयाज तं प्रजाः पृथिवीनाथमुपतस्थः श्रुपार्दिताः । ओषधीषु प्रमष्टासु तस्मिन्काले हाराजके । तमुचुस्ते नताः पृष्टास्तत्रागमनकारणम् ॥ ६६

अराजके नुपश्रेष्ठ धरित्या सकलौषधी: । त्रस्तास्ततः क्षयं यान्ति प्रजाः सर्वाः प्रजेश्वर ॥ ६७ त्वल्लो वृत्तिप्रदो बाला प्रजापालो निरूपितः । देहि नः क्षुत्परीतानां प्रजानां जीवनौषधीः ॥ ६८

श्रीपराशर उवाच

ततस्तु नृपतिर्दिच्यमादायाजगर्व धनुः। शरांश्च दिव्यान्कुपितः सोन्बधाबद्वसुन्धराम् ॥ ६९ ततो ननाशं त्वरिता गौर्भृत्वा च वसुन्धरा । सा लोकान्ब्रह्मलोकादीन्सन्तासादगमन्पही ॥ ७० यत्र यत्र यथौ देवी सा तदा भूतधारिणी। तत्र तत्र तु सा वैन्यं ददुरोऽभ्युद्यतायुधम् ॥ ७१

श्रीपराञ्चरजी बोले-पह सुनकर राजाको भी परम सन्तोष हुआ; उन्होंने सोचा 'मनुष्य सद्गुणोंके कारण ही प्रशंसाका पात्र होता है; अतः मुझको भी गुण उपार्जन करने चाहिये ॥ ५७ ॥ इसलिये अब स्तृतिके द्वारा थे जिन गुणोंका वर्णन करेंगे मैं भी सावधानतापूर्वक वैसा ही करूँगा ॥ ५८ ॥ यदि यहाँपर ये कुछ त्याज्य अवगुणोंको भी कहेंगे तो मैं उन्हें त्यागृंगा ।' इस प्रकार राजाने अपने चित्तमें निश्चय किया ॥ ५९ ॥ तदनत्तर उन (सुत और माराध) दोनोने परम बुद्धिमान् बेननन्दन महाराज पृथुका, उनके भावी कमेंकि आश्रयसे खरसहित भली प्रकार स्तवन किया ॥ ६० ॥ [उन्होंने कहा—] 'ये महाराज सत्यवादी, दानशोल, सलमर्यादाबाले, लब्बाशील, सुद्रद्, क्षमाशील, पराक्रमी और दुष्टोंका दमन करनेवाले हैं ॥ दर् ॥ ये धर्मज्ञ, कृतज्ञ, दयावान, प्रियभाषी, माननीयोको मान देनेवाले, यज्ञपरावण, ब्रह्मण्य, साधुसमाजभे सम्मानित और शत्रु तथा मित्रके साथ समान व्यवहार करनेवाले हैं' ॥ ६२-६३ ॥ इस प्रकार सूत और मागधके कहे हुए गुणोंको उन्होंने अपने चित्तमें धारण किया और इसी प्रकारके कार्य किये ॥ ६४ ॥ तब उन पृथिबीपतिने पृथिबीका पालन करते हुए बड़ी-बड़ी दक्षिणाओंबाले अनेकों महान् यज्ञ किये॥६५॥ अग्रजकताके समय ओषधियोंके नष्ट हो जानेसे भूखसे व्याकुरु हुई प्रजा पृथियीनाथ पृथुके पास आयी और उनके पूछनेपर प्रणाम करके उनसे अपने आगेका कारण

प्रजाने कहा — हे प्रजापति नृपश्रेष्ठ ! अराजकराके समय पृथिबीने समस्त ओषधियाँ अपनेमें लीन कर ली है, अतः आपकी सम्पूर्ण प्रजा क्षीण हो रही है॥ ६७॥ विधातने आपको हमारा जीवनदायक प्रजापति बनाया है: अतः श्वारूप महारोगसे पीडित हम प्रजाजनीको आप जीवनरूप ओषधि दीजिये ॥ ६८ ॥

निवेदन किया ॥ ६६ ॥

श्रीपराज्ञरजी बोले—यह सुनकर महाराज पृथ् अपना आजगव नामक दिव्य धनुष और दिव्य बाण लेकर. अत्यन्त क्रोधपूर्वक पृथिवीके पीछे दौड़े ॥ ६९ ॥ तब भयसे अत्यन्त व्याकुरू हुई पृथिवी गौका रूप धारणकर भागी और ब्रह्मलोक आदि सभी लोकोमें गयी॥ ७० ॥ समसा भूतीको धारण करनेकालो पश्चिती जहाँ-जहाँ भी गयी वहीं-बहीं उसने बेनपुत्र पृथ्को दाख-सन्धान किये

ततस्तं प्राप्त वसुधा पृश्च पृश्चपराक्रमम् । प्रवेपमाना तद्वाणपरित्राणपरावणा ॥ ७२ प्रवेक्युवाच

स्त्रीवधे त्वं महापापं कि नरेन्द्र न पश्यसि । येन मां हन्तुमत्यर्थं प्रकरोषि नृपोद्यमम् ॥ ७३

पृषुस्याच

एकस्मिन् यत्र निधनं प्रापिते दुष्टकारिणि । बहुनां भवति क्षेपं तस्य पुण्यप्रदो वधः ॥ ७४ पुण्यस्यान

प्रजानामुपकाराय यदि मां त्वं हनिष्यति । आधारः कः प्रजानां ते नृपश्रेष्ठ भविष्यति ॥ ७५ प्रशस्त्राच

त्वां हत्वा वसुधे बार्णैर्मच्छासनपराङ्सुखीम् । आत्मबोगबलेनेमा धारियच्याम्यहं प्रजाः ॥ ७६

औपगरुर वयाच ततः प्रणम्य वसुषा तं भूयः प्राह पार्श्वियम् ।

प्रवेपिताङ्गी परमं साध्यसं समुपागता ॥ ७७

पृथिञ्युवाच

उपायतः समारक्याः सर्वे सिद्ध्यन्युपक्रमाः । तस्माद्भयम्युपायं ते तं कुरुष्ट्र यदीक्किस् ॥ ७८ समस्ता या मया जीर्णा नरनाय महौषधीः । यदीकिस प्रदास्यामिताः श्लीरपरिणामिनीः ॥ ७९ तस्माठाजाहितार्थाय मय धर्मभृतां वर । तं तु वस्सं कुरुष्ट्र त्यं क्षरेयं येन वत्सला ॥ ८० समा च कुरु सर्वत्र येन क्षीरं समन्ततः । वरीषधीबीजभृतं बीजं सर्वत्र भावये ॥ ८१

श्रीपराशस उदाच

तत उत्सारयामास शैलान् शतसहस्रशः । धनुष्कोट्या तदा वैन्यस्तेन शैला विवर्द्धिताः ॥ ८२ न हि पूर्वविसर्गे वै विषमे पृथिवीतले । प्रविभागः पुराणां वा प्रामाणां वा पुराऽभवत् ॥ ८३

न सस्यानि न गोरक्ष्यं न कृषिनं वणिक्षयथः ।

वैन्यात्मभृति मैन्नेय सर्वस्यैतस्य सम्भवः ॥ ८४

अपने पीछे आते देखा ॥ ७१ ॥ तब उन प्रवार पराक्रमी महाराज पृथुसे, उनके वाणप्रहारसे वचनेकी कामनासे काँपती हुई पृथियो इस प्रकार बोली ॥ ७२ ॥

पृथिवीने कहा—हे राजेन्द्र ! क्या आपको स्त्री-वधका महापाप नहीं दीख पड़ता, जो मुझे मारनेपर आप ऐसे ठतारू हो रहे हैं ? ॥ ७३ ॥

पृशु बोले—जहाँ एक अनर्थकारीको भार देनेसे बहुतीको सुख प्राप्त हो उसे मार देना ही पुण्यप्रद है॥ ७४॥

पृथिवी बोली—हे न्यश्रेष्ठ ! यदि आप प्रजाके हितके लिये ही मुझे मारना चाहते हैं तो [मेरे मर जानेपर] आपकी प्रजाका आधार क्या होगा ? ॥ ७५ ॥

पृ**युने कहा**—असे वसुधे ! अपनी आज्ञाका उल्लब्धन करनेवाली तुझे मास्कर मैं अपने योगबलसे ही इस प्रजन्मो धारण करूँगा ॥ ७६ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोरुं — तब अत्यन्त भथभीत एवं काँपती हुई पृथिवीने उन पृथिवीपतिको पुनः प्रणाम करके कहा॥ ७७॥

पृथ्वित बोली—हे राजन्! यलपूर्वक आरम्भ किये हुए सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। अतः मैं भी आपको एक उपाय बताती हुँ, यदि आपको इच्छा हो तो वैसा ही करें ॥ ७८ ॥ हे तरनाथ! मैंने जिन समस्त ओविधयोंको पचा लिया है उन्हें यदि आपकी इच्छा हो तो दुग्धरूपसे मैं दे सकती, हूँ ॥ ७९ ॥ अतः हे धर्मात्माओंने श्रेष्ठ महाराज! आप भजाके हितके लिये कोई ऐसा वत्स (बछड़ा) बनाइये जिससे वात्सत्यवश मैं उन्हें दुग्धरूपसे निकाल सकूँ ॥ ८० ॥ और मुझको आप सर्वत्र समतल कर दीजिये जिससे मैं उत्तमोत्तम ओविधयोंके बोजरूप दुग्धको सर्वत्र उत्पन्न कर सकूँ ॥ ८१ ॥

श्रीपराशरजी बोले—तब महाराज पृथुने अपने धनुषकी कोटिसे सैकड़ो-हजारों पर्वतींको उलादा और उन्हें एक स्थानपर इकड़ा कर दिया ॥ ८२ ॥ इससे पूर्व पृथिवोंके समतल व होनेसे पुर और ग्राम आदिका कोई नियमित विभाग नहीं था ॥ ८३ ॥ हे मैंग्रेय ! उस समय अत्र, गोरक्षा, कृषि और व्यापारका भी कोई क्रम न था । यह सल तो वेनमुत्र पृथुके संध्यरों ही आरम्भ हुआ है ॥ ८४ ॥

यत्र यत्र समं त्वस्या भूमेरासीदृद्विजोत्तम । तत्र तत्र प्रजाः सर्वा निवासं समरोचयन् ॥ ८५ आहारः फलमुलानि प्रजानामभवत्तदाः। कुच्छ्रेण महता सोऽपि प्रणष्टास्त्रोषधीषु वै ॥ ८६ स कल्पयित्वा वत्सं तु मनुं स्वायम्भुवं प्रभुम् । स्त्रपाणौ पृथिवीनाथो दुदोह पृथिवीं पृथुः । सस्यजातानि सर्वाणि प्रजानां हितकाम्यया ॥ ८७ तेनान्नेन प्रजास्तात वर्तन्तेद्यापि नित्यक्षः ॥ ८८ प्राणप्रदाता स पृथुर्यस्माद्धमेरभृत्यिता। ततस्तु पृथिवीसंज्ञामवापाखिलधारिणी ॥ ८९ ततश्च देवैर्मुनिषिर्दैत्यै रक्षोधिरद्विभि:। गन्धर्वेरुरगैर्यक्षैः पितृभिस्तरुभिस्तथा ॥ ९० तत्तत्पात्रमुपादाय तत्तद्दुग्धं मुने पयः। वत्सदोग्धृविशेषाश्च तेषां तद्योनयोऽभवन् ॥ ९१ सैषा धात्री विधात्री च धारिणी पोषणी तथा । सर्वस्य तु ततः पृथ्वी विष्णुपादतलोद्भवा ॥ ९२ एवं प्रभावस्स पृथुः पुत्रो वेनस्य वीर्यवान् । जज्ञे महीपतिः पूर्वो राजाभूजनरञ्जनात्॥ ९३ य इदं जन्म वैन्यस्य पृथोः संकीर्त्तयेष्टरः । न तस्य दुष्कृतं किञ्चित्फलदायि प्रजायते ॥ ९४ दुस्यप्रोयशर्म नृणां शृण्वतायेतदुत्तपम्। पृथोर्जन्य प्रभावश्च करोति सततं नृणाम् ॥ ९५ हे दिजोत्तम ! जहाँ-जहाँ भूमि समतल थी वहीं-वहींपर प्रजाने निवास करना पसन्द किया ॥ ८५ ॥ उस समयतक प्रजाका आहार केवल फल मुखादि ही था; वह भी ओवधियोंके नष्ट हो जानेसे बहा दुर्लभ हो गया था ॥ ८६ ॥

तब पृथिवीपति पृथुने स्वायन्पुरमनुको बख्डा बनाकर अपने हाथमें ही पृथिवीसे प्रजाके हितके लिखे समस्त धान्योंको दुहा। है तात ! उसी अन्नके आधारसे अब भी सदा प्रजा जीवित रहती है ॥ ८७-८८ ॥ महाराज पृथु प्राणदान करनेके कारण भूमिके पिता हुए, " इसलिये उस सर्वभूतधारिणीको 'पृथिवी' नाम मिला ॥ ८९ ॥

हे मुने ! फिर देवता, मुनि, दैत्य, राक्षस, पर्वत, गन्धर्व, सर्प, यक्ष और पितृगण आदिने अपने-अपने पात्रीमें अपना अभिमत दूध दुहा तथा दुहनेवालोंके अनुसार उनके सजातीय ही दोग्धा और बस्स आदि हुए ॥ १०-९१ ॥ इसीलिये विष्णुभगवान्के बरणोंसे प्रकट हुई यह पृथिवी ही सक्को जन्म देनेवाली, बनानेवाली तथा धारण और पोषण करनेवाली है ॥ १२ ॥ इस प्रकार पूर्वकालमें वेनके पुत्र महाराज पृथु ऐसे प्रभावकाली और वीर्यवान् हुए। प्रजाका रक्षन करनेके कारण वे 'राजा' कहलाये ॥ ९३ ॥

जो मनुष्य महाराज पृथुके इस चरित्रका कीर्तन करता है उसका कोई भी दुष्कर्म फल्रदायी नहीं होता॥ ९४॥ पृथुका यह अत्युक्तम जन्म-वृत्ताना और उनका प्रभाव अपने सुननेवाले पुरुषोंके दुःखप्रोंको सर्वदा शाना कर देता है॥ ९५॥

an or other particular of the second second

ा का एक साम्बद्धाः विश्वविद्धाः ।

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे त्रयोदशोऽध्यायः॥ १३ ॥

[&]quot; जन्म देनेबात्म, यज्ञोपबीत करानेवात्म, असदाता, भयसे रक्षा करनेवात्म तथा जो विद्यादान करे—ये पाँचो पिता माने गये हैं: जैसे कहा है—

जनकशोपनेता च यक्ष विद्याः प्रयन्त्वति । अनदाता प्रयन्तता प्रश्रेते पिछः स्मृतः ॥

चौदहवाँ अध्याय

प्राचीनबर्हिका जन्म और प्रचेताओंका भगवदाराधन

€

19

श्रीपरादार उवाच

पृथोः पुत्रौ तु धर्मज्ञौ जज्ञातेऽन्तर्द्धिवादिनौ ।

शिखप्डिनी हविर्धानमन्तर्धानाहुयजायत ॥

हविर्धानात् षडाग्नेयी विषणाऽजनयत्सतान् ।

प्राचीनबर्हिषं शुक्तं गयं कृष्णं वृजाजिनौ ॥ प्राचीनवर्हिर्भगवान्पहानासीत्प्रजापतिः

हविर्धानान्यहाभाग येन संवर्धिताः प्रजाः ॥

प्राचीनाग्राः कुशास्तस्य पृथिख्यां विश्वता मुने ।

प्राचीनबर्हिरभवत्स्यातो भृवि महाबलः ॥

समुद्रतनयायां तु कृतदारो महीपतिः। महतस्तपसः पारे सवर्णायां महामते ॥

सवर्णांबन सामुद्री दश प्राचीनबर्हिव:। सर्वे प्रचेतसो नाम धनुर्वेदस्य पारगाः॥

अपृथग्धर्मचरणास्तेऽतप्यन्त महत्तपः

दशवर्षसङ्खाणि समद्रसलिलेशयाः ॥

श्रीमंत्रेय उताच

महात्मानस्तपस्तेपुर्महामुने । यदर्थ ते प्रचेतसः सम्ब्राम्भस्येतदास्थातमहीसः ॥

श्रीपराशर उवाच

पित्रा प्रचेतसः प्रोक्ताः प्रजार्श्वममितात्पना ।

प्रजापतिनियुक्तेन ब्रह्मानपुरस्सरम् ॥

प्रचीनबर्दिस्वाच

ब्रह्मणा देवदेवेन समादिष्टोऽस्म्बहं सताः । प्रजाः संवर्द्धनीयास्ते पया चोक्तं तथेति तत् ॥ १०

तन्मम प्रीतये पुत्राः प्रजावृद्धिमतन्द्रिताः ।

कुरुध्वं माननीया वः सम्यगाज्ञा प्रजापतेः ॥ ११

श्रीपराञर उद्याच

ततस्ते तत्पितुः श्रुत्वा वचनं नृपनन्दनाः । तथेत्युक्त्वा च तं भूयः पप्रच्छः पितरं मुने ॥ १२

प्रचेतस ऊन्:

येन तात प्रजावृद्धौ समर्थाः कर्मणा वयम् । भवेम तत् समस्तं नः कर्म व्याख्यातुमहंसि ॥ १३

वि॰ पु॰ ३--

श्रीपराशरजी बोले-- हे मैत्रेय ! पृथके अन्तर्द्धान और वादी नामक दो धर्मज पुत्र हुए; उनमेंसे अन्तर्द्धानसे उसकी पत्नी शिखण्डिनोने हविद्यनिको उत्पन्न किया

and the second

॥ १ ॥ त्रविर्धानसे अग्निकुलीना धिषणाने प्राचीनवर्हि, रहक, गय, कृष्ण, वृज और अजिन—ये छः पुत्र उत्पन्न

किये ॥ २ ॥ हे यहाभाग ! हविधीनसे उत्पन्न हुए भगवान्

प्राचीनबर्हि एक महान् प्रजापति थे, जिन्होंने यक्के द्वारा अपनी प्रजाको बहुत वृद्धि की ॥ ३ ॥ हे मुने ! उनके

समयमें [यज्ञानुष्टानकी अधिकताके कारण] प्राचीनाम कदा समस्त पृथिवीमें फैले हुए ये, इसलिये वे महाबली

'प्राचीनवॉर्ह' नामसे विख्यात हुए 🛭 😽 🕮 🦠 🦈 🧢 हे महामते ! उन महीपतिने महान् तपस्याके अनन्तर

समुद्रको पुत्री सवर्णासे विवाह किया ॥ ५ ॥ उस समुद्र-कन्या सवर्णाके प्राचीनवर्हिसे दस पुत्र हुए । वे प्रचेता-नामक सभी पुत्र धनुर्विद्याके पारगामी थे ॥ ६ ॥ उन्होंने

सपुत्रके जलमें रहकर दस हजार वर्षतक समान धर्मका आचरण करते हुए घोर तपस्या को ॥ ७ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे महामूने ! उन महात्मा प्रचेताओंने जिस लिये समुद्रके जलगें तपस्या की थी सो आप कहिये ॥ ८ ॥

श्रीपराञ्चरजी कहने लगे — हे मैत्रेय । एक यार प्रजापतिकी प्रेरणासे प्रचेताओंक महात्या प्राचीनबहिने उनसे अदि सम्मानपूर्वक सत्तानीत्पत्तिके लिये इस प्रकार कहा ॥ ९ ॥

प्राचीनवर्धि बोले—हे पूत्रो ! देवाचिदेव बहाजीने मुझे आज़ा दी है कि 'तुम प्रजाकी बुद्धि करे।' और मैंने भी उनसे 'बहुत अच्छा' कह दिया है ॥ १० ॥ अतः हे पुत्रनण ! तुम भी मेरी प्रसन्नताके लिये सावधानतापूर्वक प्रजाकी कृद्धि करो, क्योंकि प्रजापतिकी आज्ञा तुमको भी सर्वथा मानतीय है।। ११॥ 💎

श्रीयराञ्चरजी बोले — हे मुने ! उन राजकुमारीने पिताको ये वचन सुनकर उनसे 'जो आज्ञा' ऐसा कहकर फिर पूछा ॥ १२ ॥

प्रबेता बोले-हे तत ! जिस कमसे हम प्रजा-वृद्धिम समर्थ हो सके उसकी आप हमसे मस्त्री प्रकार व्याख्या केंजिये ॥ १३ ॥ १ 🔻 🥫

पितोवाच

आराध्य वरदं विष्णुमिष्टप्राप्तिमसंशयम् । समेति नान्यया मर्ताः किमन्यत्कथयामि वः ॥ १४ तस्मात्मजाविवृद्ध्यश्चै सर्वभूतप्रभुं हरिम् । आराध्यत गोविन्दं यदि सिद्धिमभीप्सय ॥ १५ धर्ममर्थं च कामं च मोक्षं चान्तिच्छतां सदा । आराधनीयो भगवाननादिपुरुषोत्तम ॥ १६ यहिमझाराधिते सर्ग चकारादौ प्रजापतिः । तमाराध्याच्युतं वृद्धिः प्रजानां वो भविष्यति ॥ १७

न्नीपरागर उत्ताच इत्येवमुक्तास्ते पित्रा पुत्राः प्रचेतसो दश ।

मग्नाः पयोधिसिक्तिले तपस्तेषुः समाहिताः ॥ १८ दशवर्षसहस्राणि न्यस्तिचता जगत्पतौ । नारायणे मुनिश्रेष्ठ सर्वलोकपरायणे ॥ १९ तत्रैयावस्थिता देवमेकाधमनसो हरिम् । तुष्टुवुर्यस्तुतः कामान् स्तोतुरिष्टान्प्रयक्त्रित ॥ २० श्रीमैत्रेय उवाच

स्तवं प्रचेतसो विच्छोः समुद्राष्ट्रसि संस्थिताः । चक्रुस्तन्ये मुनिश्रेष्ट सुपुण्यं वक्तुमहीसि ॥ २१

श्रीपराद्वार उवाच

शृणु पैत्रेय गोबिन्दं यथापूर्वं प्रचेतसः । तुष्टुबुस्तन्पयीभूताः समुद्रसिक्ठिशयाः ॥ २२ प्रवेतसकाः

नताः स्म सर्ववचसां प्रतिष्ठा यत्र शाश्रती ।

तमाद्यन्तमशेषस्य जगतः परमं प्रभुम् ॥ २३ ज्योतिराद्यमनौपम्यमण्यनन्तमपारवत् । योनिभूतमशेषस्य स्थावरस्य चरस्य च ॥ २४ यस्याहः प्रथमं रूपमरूपस्य तथा निशा ।

सन्ध्या च परमेशस्य तस्मै कालात्पने नमः ॥ २५

भुज्यतेऽनुदिनं देवैः पितृभिश्च सुधात्मकः । जीवभूतः समस्तस्य तस्मै सोमात्मने नमः ॥ २६

यस्तमांस्वति तीव्रात्मा प्रभाभिर्मासयत्रभः । धर्मशीताम्भसां योनिस्तस्मै सुर्यात्मने नमः ॥ २७ चिताने कहा — वरदायक भगवान् विष्णुकी आराधना करनेसे ही मनुष्यको निःसन्देह इष्ट वस्तुको प्राप्ति होती है और किसी उपायसे नहीं । इसके सिवा और मैं

तुमसे क्या कहूँ॥ १४॥ इसलिये यदि तुम सफलता चाहते हो तो प्रजा-शृद्धिके लिये सर्वभूतेकि स्वामी श्रीहरि गोविन्दकी उपासना करो॥ १५॥ धर्म, अर्थ, काम या

मोक्षकी इच्छावालोंको सदा अनाहि पुरुषोत्तम भगवान् विष्णुको ही आराधना करनो चाहिये॥ १६॥ कल्पके आरम्भमें जिनकी उपासना करके प्रजापतिने संसारकी

रचना की है, तुम उन अञ्चलको हो आराधना करो। इससे तृम्हारी सन्तानकी वृद्धि होगी।। १७॥

श्रीपराशरजी खोले—पिताको ऐसी आजा होनेपर प्रचेता नामक दसो पुत्रोंने समुद्रके जलमें हुने रहकर सावधानतापूर्वक तम करना आरम्भ कर दिया॥ १८॥ हे मुनिश्रेष्ठ । सर्वलोकाश्रय जगत्पति श्रीनारायणमें चित लगाये हुए उन्होंने दस हजार वर्षतक वहीं (जलमें ही) स्थित रहकर देवाधिदेव श्रीहरिको एकाश-चित्तसे स्तुति की, जो अपनी स्तुति की जानेपर स्तुति करनेवालोंको सभी कामनाएँ सफल कर देते हैं॥ १९-२०॥

श्रीमैत्रेयजी खोले—हे मुनिश्रेष्ठ ! समुद्रके जलमें स्थित रहकर प्रचेताओंने भगवान् विष्णुकी जो अति पवित्र स्तुति को थी वह कृषया मुझसे कहिये ॥ २१ ॥

श्रीपराशरजी बोल्डे—हे मैत्रेय ! पूर्वकालमें समुद्रमें स्थित रहकर प्रचेताओंने तन्मय-भावसे श्रीगोविन्स्को को स्तुति की, यह सुनो ॥ २२ ॥

प्रचेताओंने कहा — जिनमें सम्पूर्ण वाक्योंकी नित्य-प्रतिष्ठा है [अर्थात् जो सम्पूर्ण वाक्योंके एकमात्र प्रतिपादा है] तथा जो जगत्की उत्पत्ति और प्रलयके कारण है उन निखिल-जपन्नायक परमप्रभुको हम नमस्कार करते हैं ॥ २३ ॥ जो आद्य ज्योतिस्वरूप, अनुषम, अणु, अनन्त, अषार और समस्त चराचरके कारण है, तथा जिन रूपहीन परमेश्वरके दिन, रात्रि और सन्थ्या ही प्रथम रूप है, उन कालस्कूप भगवान्को नमस्कार है ॥ २४-२५ ॥ समस्त प्राण्यिके जीवनरूप जिनके अमृतमय स्वरूपको देव और पितृगण नित्यप्रति भोगते हैं — उन सोमस्वरूप प्रभुको नमस्कार है ॥ २६ ॥ जो तीक्षणस्वरूप अपने तेजसे आकादामण्डलको प्रकाशित करते हुए अन्यकारको भक्षण कर जाते हैं तथा

जो चाम, ज्ञीत और जलके उद्गमस्थान है उन सुर्यस्वरूप

काठिन्यवान् यो विभर्त्ति जगदेतदशेषतः। शब्दादिसंश्रयो व्यापी तस्मै भूम्यात्मने नमः ॥ २८ यद्योविभूतं जगतो बीजं यत्सर्वदेहिनाम् । तत्त्रोयरूपपीशस्य नमामो इरिमेधसः॥ २९ यो मुखं सर्वदेवानां हट्यभुक्कव्यभुक् तथा । पितृणां च नमस्तस्मै विष्णवे पावकात्मने ॥ ३० पञ्चधावस्थितो देहे यश्चेष्टां कुस्तेऽनिशम्। आकाशयोनिर्भगवांस्तस्मै वाय्वात्मने नमः ॥ ३१ अवकाशमशेषाणां भूतानां यः प्रयक्ति । अनन्तमूर्तिमाञ्जूद्धस्तस्मै व्योमात्मने नमः ॥ ३२ समस्तेन्द्रियसर्गस्य यः सदा स्थानमृत्तमम्। तस्मै शब्दादिरूपाय नमः कृष्णाय वेधसे ॥ ३३ गृह्णाति विषयात्रित्यमिन्द्रियात्मा क्षराक्षरः । यस्तस्यै ज्ञानपूलाय नताः स्य हरिपेथसे ॥ ३४ गृहीतानिन्द्रियैरधनितस्ने यः प्रयच्छति । अन्तःकरणरूपाय तस्मै विश्वात्मने नमः ॥ ३५ यस्मिन्ननन्ते सकलं विश्वं यस्मात्तवो दूतम् । लबस्थानं च यस्तस्मै नमः प्रकृतिधर्मिणे ॥ ३६ शुद्धः सँल्लक्ष्यते भ्रान्या गुणवानिव योऽगुणः । तमात्मरूपिणं देवं नताः स्म पुरुषोत्तमम् ॥ ३७ अविकारमर्ज शुद्धं निर्गुणं यत्रिरञ्जनम् । नताः स्म तत्परं ब्रह्म विद्योर्थत्वरमं पदम् ॥ ३८ अदीर्घद्वस्यमञ्जूलयनण्यश्यामलोहितम् अस्रेह्च्छायमतनुषसक्तमशरीरिणम् अनाकाशमसंस्पर्शमगन्धमरसं च यत्। अचक्षुश्रोत्रमचलमवाकुपाणिममानसम् ॥ ४० अनामगोत्रमसुखमतेजस्कमहेतुकम् अभयं भ्रान्तिरहितमनिद्रमजरामरम् ॥ ४१ अरजोऽशब्दममृतमप्रतं यदसंवृत्तम् । पूर्वापरे न वै यस्मिसाहित्योः परमं पदम् ॥ ४२ यरमेशत्वगुणवत्सर्वभूतपसंश्रयम् नताः स्म तत्पदं विष्णोर्जिह्वादगोचरं न यत् ॥ ४३

[नारायण] को नमस्कार है ॥ २७ ॥ जो कठिनतायुक्त होकर इस सम्पूर्ण संसारको भारण करते हैं और शब्द आदि पाँची विषयोंके आधार तथा व्यापक है, उन भृमिरूप भगवानुको उमस्कार है ॥ २८ ॥ जो संसारका योनिरूप है और समस्त देहधारियोंका बीज है, भगवान् हरिके उस जलखरूपको हम नमस्कार करते हैं ॥ २९ ॥ जो समस्त देवताओंका हव्यभक्त और पितृगणका कर्यभुक मुख है, उस अग्रिसक्य विष्णुभगवानुको नमस्कार है ॥ ३० ॥ जो प्राण, आपान आदि पाँच प्रकारसे देहमें स्थित होकर दिन-रात चेष्टा करता रहता है तथा जिसकी योनि आकारा है, उस वायुरूप भगवानुको नमस्कार है ॥ ३१ ॥ जो समस्त भूतोंको अवकारी देता है उस अनन्तपृति और परम शुद्ध आकादाखरूप प्रमुको नमस्कार है ॥ इर ॥ समस्त इन्द्रिय-सृष्टिके जो उत्तम स्थान हैं उन इन्द्र-स्पर्शादिरूप विधाना श्रीकृष्णचन्द्रको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ जो क्षर और अक्षर इन्द्रियरूपसे नित्य विषयोंको प्रहण करते हैं उन ज्ञानमूल हरिको नमस्कार है ॥ ३४ ॥ इन्द्रियोंके द्वारा घहण किये विषयोंको जो आत्माके सम्मृख उपस्थित करता है उस अन्त:करण-रूप विश्वातमाको नमस्कार है॥ ३५॥ जिस अनलमें सकल विश्व स्थित है, जिससे वह उत्पन्न हुआ है और जो उसके लयका भी स्थान है उस प्रकृतिसारूप परमात्माको नमस्कार है ॥ ३६॥ जो द्वाद और निर्मूण होकर भी धमलका गुणयुक्त-से दिखायी देते हैं उन आत्मस्वरूप पुरुषोत्तमदेवको हम नमस्कार करते हैं ॥ ३७ ॥ जो अविकारी, अजन्मा, शुद्ध, निर्मुण, निर्मल और श्रीविष्णुका परमपद है उस ब्रह्मस्त्रस्यको हम नमस्कार करते हैं ॥ ३८ ॥ जो न लम्बा है, न पतला है, न मोटा है. न छोटा है और न काला है, न लाल है; जो छोड़ (इब), कान्ति तथा शरीरसे रहित एवं अनासक्त और अशरीरी (जीवसे भिन्न) है ॥ ३९ ॥ जो अवकादा स्पर्दा, गन्ध और रससे रहित तथा आँख-कान-विहोन, अचल एवं जिहा, हाथ और भनसे एहित है।। ४०॥ जो नाम, गोत्र, सुख और तेजसे शन्य तथा कारणहीन है; जिसमें भय, आन्ति, निद्रा, जस और मरण—इन (अवस्थाओं) का अपाव है ॥ ४१ ॥ जो अरज (रजोगणरहित), अञ्चल, अमृत, अप्नत (गतिज्ञून्य) और असंयुत (अनान्खदित) है एवं जिसमें पूर्वापर व्यवहारको गति नहीं है वही भगवान् विष्णुका परमपद है ॥ ४२ ॥ जिसका ईशन (शासन) ही

श्रीपग्नसः स्थान

एवं प्रचेतसो विष्णुं स्तुवन्तस्तत्समाधयः ।

दशवर्षसहस्राणि तपश्चेरुमंहाणेवे ॥ ४४

ततः प्रसन्नो भगवांस्तेषामन्तजेले हरिः ।

ददौ दर्शनमुत्रिद्रनीलोत्पलदलच्छविः ॥ ४५

पतित्रराजमारूढमवलोक्य प्रचेतसः ।

प्रणिपेतुः शिरोभिस्तं भिक्तभारावनामितैः ॥ ४६

ततस्तानाह भगवान्त्रियतामीपिसतो वरः ।

प्रसादसुमुखोऽहं वो वरदः समुपस्थितः ॥ ४७

ततस्तम् चुवंरदं प्रणिपत्य प्रचेतसः ।

यथा पित्रा समादिष्टं प्रजानां वृद्धिकारणम् ॥ ४८

स चापि देवस्तं दत्त्वा यशाधिलवितं वरम् ।

अन्तर्धानं जगामाशु ते च निश्चक्रमुर्जलात् ॥ ४९

परमगुण है, जो सर्वरूप और अनाधार है तथा जिद्धा और दृष्टिका अविषय है, भगवान् विष्णुके उस परमपदको हम नमस्त्रार करते हैं ॥ ४३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—इस प्रकार श्रीविष्णु-भगवान्में समाधिस्थ होक्द्र प्रचेताओंने महासागरमे रहकर उनकी स्तृति करते हुए दस हजार वर्षतक तपस्या की ॥४४ ॥ तब भगवान् श्रीहरिने प्रसन्न होकर उन्हें खिले हुए नील कमलकी-सी आभायुक्त दिव्य छविसे जलके भीतर ही दर्शन दिया ॥४५ ॥ प्रचेताओंने पक्षिराज गरुइपर चढ़े हुए श्रीहरिको देखकर उन्हें भक्तिभावके भारसे झुके हुए मस्तकोंद्वारा प्रणाम किया ॥४६ ॥

तब भगवान्ने उनसे कहा—"मै तुमसे प्रसन्न होकर तुन्हें तर देनेके लिये आया हूँ, तुम अपना अभीष्ट तर माँगों"॥४७॥ तब प्रचेताओंने वरदायक श्रीहरिको प्रणाम कर, जिस प्रकार उनके पिताने उन्हें प्रजा-वृद्धिके लिये आज्ञा दी थी वह सब उनसे निबंदन की ॥४८॥ तदनन्तर, भगवान् उन्हें अभीष्ट वर देकर अन्तर्धान हो गये और वे जलसे बाहर निकल आये॥४९॥

इति श्रीविष्णुपुराणं प्रथमेऽदो चतुर्दहोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवाँ अध्याय

प्रचेताओंका मारिषा नामक कन्याके साथ विवाह, दक्ष प्रजापतिकी उत्पत्ति एवं व्याप्तिकी उत्पत्ति एवं व्याप्तिकी उत्पत्ति एवं व्याप्तिकी अति कन्याओंके वंशका वर्णन

11 8

श्रीपगरम् उवाद स्रोतिकारम्

तपश्चरत्सु पृथिवीं प्रचेतःसु महीरुहाः । अरक्ष्यमाणामावद्गुर्वभूवाय प्रजाक्षयः ॥ १

नाशकन्मरुतो वार्तु वृतं खमभवदहुर्यैः । दशवर्षसहस्राणि न शेकुश्चेष्टितुं प्रजाः ॥ २

तान्द्रष्ट्वा जलनिकान्ताः सर्वे कुद्धाः प्रचेतसः । मुखेभ्यो वायुमप्रिं च तेऽसृजन् जातमन्यवः ॥ ३

उन्पूलानथ तान्वृक्षान्कृत्वा वायुरशोषयत्।

तानप्रिरदहद्घोरस्तत्राभृदद्गुमसङ्ख्यः ॥ दुमक्षयमध्ये दुष्टा किञ्चिच्छिष्टेषु शासिषु ।

उपगम्याक्रवीदेतात्राजा सोमः प्रजापतीन् ॥ ५

श्रीपराशरजी बोले—प्रचेताओंक तपस्वामें लगे रहनेसे [कृषि आदिद्वारा] किसी प्रकारकी रक्षा न होनेके कारण पृथिवीको वृशीने हैंक लिया और प्रणा बहुत कुछ नष्ट हो गयी॥ १॥ आकाश वृशीसे भर गया था। इसिलये दस हजार वर्षतक न तो वायु ही चला और न प्रवा ही किसी प्रकारकी चेष्टा कर सक्ते॥ २॥ जलसे निकलनेपर उन वृश्वोंको देखकर प्रचेतागण अति क्रोधित हुए और उन्होंने रोषपूर्वक अपने मुखसे वायु और अधिको छोड़ा॥ ३॥ बायुने वृश्वोंको उखाइ-उखाइकर सुसा दिया और प्रचण्ड अधिने उन्हों जला डाला। इस प्रकार उस समय वहाँ बृशोंका नाइ। होने लगा। ॥ ४॥

तब वह भयंकर वृक्ष-प्रख्य देखकर थोड़े-से वृक्षोंके रह जानेपर उनके राजा सोमने प्रजापति

कोपै यच्छत राजानः शृणुध्वं च बचो मम । सन्धानं वः करिष्यामि सह क्षितिरुहैरहम् ॥ रलभूता च कन्येयं वार्क्षेयी वरवर्णिनी। भविष्यज्ञानता पूर्वं मया गोभिर्विवर्द्धिता ॥ मारिषा नाम नाप्रैषा वृक्षाणामिति निर्मिता । भार्या वोऽस्तु महाभागा धूवं वंशविवर्द्धिनी ॥ युष्पार्क तेजसोऽर्द्धेन मम चार्द्धेन तेजसः। अस्वामुत्पत्स्यते विद्वान्दक्षो नाम प्रजापतिः ॥ ९ मम चांद्रोन संयुक्तो युष्यतेजोमयेन वै। तेजसाप्रिसमो भूयः प्रजाः संवर्द्धविष्यति ॥ १० कणुर्नाम मुनिः पूर्वमासीहेदविदां वरः। सुरम्ये गोमतीतीरे स तेषे परमं तपः ॥ ११ तत्क्षोभाव सुरेन्द्रेण प्रम्लोचाख्या वराष्ट्रराः । प्रयुक्ता शोभयामास तमृषि सा शृत्तिस्मिता ॥ १२ क्षोपितः स तया सार्द्धं वर्षाणामधिकं शतम्। अतिष्ठन्यन्दरहोण्यां विषयासक्तमानसः ॥ १३ तं सा प्राह महाभाग गन्तुमिच्छाम्यहं दिवम् । प्रसादसुमुखो ब्रह्मन्ननुज्ञां दातुमहींस ॥ १४ तयैवयुक्तः स मुनिस्तस्यामासक्तमानसः। दिनानि कतिचिद्धद्धे स्थीयतामित्यभाषत् ॥ १५ एवमुक्ता ततस्तेन साधं वर्षशतं पुनः। बुभुजे विषयांस्तन्वी तेन साकं पहात्मना ॥ १६ अनुज्ञां देहि भगवन् व्रजामि त्रिदशालयम् । उक्तस्तथेति स पुनः स्त्रीयतापित्यभाषत ॥ १७ पुनर्गते वर्षशते साधिके सा शुभानना। यामीत्याह दिवं ब्रह्मन्प्रणयस्मितशोधनम् ॥ १८ उक्तस्तयैवं स मुनिरुपगृह्यायतेक्षणाम् । इहास्यतां क्षणं सुभू चिरकालं गमिष्यसि ॥ १९ सा क्रीडमाना सुश्रोणी सह तेनर्षिणा पुनः । ञ्चतद्वयं किस्तिद्वनं वर्षाणामन्यतिष्ठत ॥ २० गमनाय महाभाग देवराजनिवेशनम्।

प्रोक्तः प्रोक्तस्तया तन्त्र्या स्थीयतामित्यभाषत ॥ २१

प्रचेताओंके पास जाकर कहा— ॥ ५ ॥ "हे नृपतिगण ! आप क्रोध शान्त कीणिये और मैं जो कुछ कहता हूँ, सुनिये। मैं वृशोंके साथ आपलेगोंकी सन्धि करा दूँगा ॥ ६ ॥ वृशोंसे उत्पन्न हुई इस सुन्दर वर्णवाली रवस्वरूपा कन्याका मैंने पहलेसे ही भविष्यको जानकर अपनी [अमृतम्पी] किरलोंसे पालन-पोषण किया है ॥ ७ ॥ वृशोंको यह कन्या मारिया समसे प्रसिद्ध है, यह महाभागा इसिलये ही उत्पन्न की गयी है कि निश्चय हो तुन्हारे वंशको बद्धानेवाली तुन्हारो भार्या हो ॥ ८ ॥ भेरे और तुन्हारे आधे-आधे तेजसे इसके परम विद्वान् दक्ष नामक प्रजापति उत्पन्न होगा ॥ ९ ॥ वह तुन्हारे तेजके सहित मेरे अंशसे युक्त होकर अपने वेजके कारण अग्निके समान होगा और प्रजाकी खूब वृद्धि करेगा ॥ ९० ॥

पूर्वकालमें वेदवेताओं में श्रेष्ठ एक कप्यु नामक मुनीश्वर थे। उन्होंने गोमती नदीके परम रमणीक तटपर घोर तप किया॥ ११॥ तब इन्द्रने उन्हें तपोश्रष्ट करनेके लिये प्रस्कोचा नामकी उत्तप अप्शयको नियुक्त किया। उस मञ्जूहासिनीने उन ऋषिश्रेष्ठको विचलित कर दिया॥ १२॥ उसके द्वारा शुब्ध होकर वे सौसे भी अधिक वर्षतक विषयासक्त-चित्तसे मन्द्राचलको कन्द्रारामें रहे॥ १३॥

तब, हे महाभाग ! एक दिन उस अप्सराने कप्दू ऋषिसे कहा—"हे ब्रह्मन् ! अब मैं स्वर्गलोकको जाना चाहती हैं, आप प्रसन्नतापूर्वक मुझे आज्ञा दोजिये" ॥ १४ ॥ उसके ऐसा कहनेपर उसमें आसक-चित्त हुए मुनिने कहा—"गद्रे! अभी कुछ दिन और रही" ॥ १५ ॥ उनके ऐसा कहनेपर उस सन्दरीने पहात्या कण्डुके साथ अगले सौ वर्षतक और रहकर नाना प्रकारके भोग भोगे ॥ १६ ॥ तब भी, उसके यह पूछनेपर कि 'मगवन् ! मुझे स्वर्गस्त्रोकको वानेकी आज्ञा दीजिये' ऋषिने यही कहा कि 'अभी और उहरो' ॥ १७ ॥ तदनत्तर सी वर्षसे कुछ अधिक बीत जानेपर उस सुमुखीने प्रणययुक्त मुसकानसे सुशोषित अवनोंमें फिर कहा-"ब्रह्मन् ! अब भै स्वर्गको जाती है" ॥ १८ ॥ यह सुनकर मुनिने उस विज्ञासाक्षीको आसिङ्गनकर कहा—'अपि सुभू ! अब तो तू बहुत दिनोंके लिये चर्ली जायगी इसिल्ये शणभर तो और उहर" ॥ १९ ॥ तब वह सुश्रोणी (सुन्दर कमस्थाली) उस ऋषिके साथ क्रीड़ा करती हुई दो सौ वर्षसे कुछ कम और रही॥ २०॥

है महाभाग ! इस प्रकार जब-अब वह सुन्दरी

तस्य शायभयाद्धीता दाक्षिण्येन च दक्षिणा । प्रोक्ता प्रणयभङ्गार्त्तिवेदिनी न जहाँ मुनिम् ॥ २२ च रमतस्तस्य परमर्षेरहर्निशम्। तया नवमभूत्रेम मन्यशाविष्ट्वेतसः ॥ २३ नवं एकदा तु त्वरायुक्तो निश्चकामोठजान्मनिः। निष्कामनं च कुत्रेति गम्यते प्राह सा शुभा ॥ २४ इत्युक्तः स तया प्राह परिवृत्तमहः शुभे ।

सन्धोपास्ति करिष्यामि क्रियालोपोऽन्यथा भवेत् ॥ ततः प्रहस्य सुदती तं सा प्राह महामुनिम् ।

सर्वधर्मज परिवृत्तमहस्तव ॥ २६

बहुनां वित्र वर्षाणां परिवृत्तमहस्तवः। गतमेतन्न कुरुते विस्मयं कस्य कथ्यताम् ॥ २७

प्रातस्त्वमागता भद्रे नदीतीरमिदं शुभम्। मवा दुष्टासि तन्वङ्गि प्रविष्टासि ममाश्रमम् ॥ २८

इयं च वर्तते सन्ध्या परिणामपहर्गतम् । उपहासः किमधोऽयं सद्धावः कथ्यतां मम ॥ २९

प्रमुखेखेखाच

प्रत्युषस्यागता ब्रह्मन् सत्यमेतन्न तन्मुवा। नन्वस्य तस्य कारुस्य गतान्यब्दशतानि ते ॥ ३० सोध उवाच

ततस्ससाध्वसो विप्रस्तां पप्रच्छायतेक्षणाम् । कथ्यतां भीरु कः कालस्त्वया मे रमतः सह ॥ ३१

प्रम्लोबोबाच

सप्रोत्तराण्यतीतानि नववर्षञ्चतानि ते । मासाश्च पदतथैवान्यत्समतीतं दिनत्रयम् ॥ ३२ ऋधिस्याच

सत्यं भीरु वदस्येतत्परिहासोऽध वा शुभे।

दिनपेकमहं मन्ये त्वया सार्द्धमिहासितम् ॥ ३३

* दक्षिणा नायिकाका रूक्षण इस प्रकार कहा है-

या गौरतं भवं प्रेम सद्भवं पूर्वनायके।

न मुखलन्यसकापि सा हेया दक्षिणा बूधैः ॥

अन्य नायकमें आसक्त रहते हुए भी जे अपने पूर्व-नायकको गौरक, भय, प्रेम और सद्भावके कारण न छोड़ती हो उसे 'दक्षिणा' आनमा चाहिये। दक्षिणाके गुणको 'दाक्षिण्य' कहते हैं।

देवलोकको जानेके लिये कहती तभी-तभी कपड़ ऋषि उससे यहीं कहते कि 'अभी उद्धर जा' ॥ २१ ॥ मुन्कि इस प्रकार कहनेपर, प्रणयर्भगको पीड़ाको जाननेवाली उस दक्षिणाने* अपने दाक्षिण्यवदा तथा मुनिके द्यापसे भयभीत होकर उन्हें न छोड़ा॥ २२ ॥ तथा उन महर्षि महोदयका भी,

कामासक्तवित्तसे उसके साथ अज्ञानित रमण करते-करते. उसमें नित्य नृतन प्रेम बद्दता गया ॥ २३ ॥ एक दिन वे मृतिवर बडी शीवतासे अपनी बृतीसे

निकले। उनके निकलते समय वह सुन्दर्य बोली--"आप कहाँ जाते हैं" ॥ २४ ॥ उसके इस प्रकार पृष्ठनेपर मुनिने कहा---''हे शूभे ! दिन अस्त हो चुका है, इसलिये मैं सक्योपासना करूँगा; नहीं तो नित्य-क्रिया नष्ट ही

जायणी" ॥ २५ ॥ तब उस सुन्दर दाँतीकालीने उन भुनीश्वरसे हैंसकर कहा—"हे सर्वधर्मन्न ! क्या आज ही आपका दिन अस्त हुआ है ? ॥ २६ ॥ है बिप्र ! अनेकी

वर्षकि पक्षात् आज आपका दिन अस्त हुआ है; इससे कहिये, किसको आधर्ष न होगा ?" ॥ २७ ॥

मृनि बोर्ले—भद्रे ! नदीके इस सुन्दर तरपर तुप आज संबेरे ही तो आयी हो। [मुझे भली प्रकार स्मरण है] मैंने आज ही तुमको अपने आश्रममें प्रवेश करते

देखा था। २८॥ अब दिनके समझ होनेपर यह

सन्ध्याकाळ हुआ है। फिर, सच तो कहो, ऐसा उपहास क्यो करती हो ? ॥ २९ ॥ प्रम्लोचा बोली-बहान ! आपका यह कथन कि

'तुम सबेरे ही आयो हो' ठोक ही है, इसमें झुठ नहीं; परन् उस समयको तो आज सैकड़ों वर्ष बीत चुके ॥ ३० ॥

सोमने कहा — तब उन विप्रवरने उस विशासप्रशीसे क्छ घवडाकर पूछा-"असी भीरु ! ठीक-ठीक बता, तेरे साथ रमण करते मुझे कितना समय बोत गया ?" ॥ ३१ ॥

प्रमुक्तेचाने कहा-अबतक नौ सौ सात वर्ष, छः

महीने तथा तीन दिन और भी बीत चुके हैं ॥ ३३ ॥ ऋषि बोले-अपि भीरु ! यह तू ठीक कहती है,

या है शुभे ! मेरी हँसी करती है ? मुझे तो ऐसा ही प्रतीत होता है कि मैं इस स्थानपर तेरे साथ केवल एक ही दिन रहा है ॥ ३३ ॥

प्रम्लेखेखाच

वदिष्याम्यनृतं ब्रह्मन्कथमत्र तवान्तिके । विशेषणाद्य भवता पृष्टा मार्गानुवर्तिना ॥ ३४

सोग उवाच

निशम्य तद्ववः सत्यं स मुनिर्नृपनन्दनाः । धिग्धिङ्ग मामित्यतीवेत्यं निनिन्दातमानमात्मना ॥

मुनिस्वाच

तपांसि मम नष्टानि हतं ब्रह्मिवदां धनम् । हतो विवेकः केनापि योषिन्मोहस्य निर्मिता ॥ ३६ कर्मिषद्कातिगं ब्रह्म होयमात्मजयेन मे । मतिरेषा हता येन धिक् तं कामं महाग्रहम् ॥ ३७ व्रतानि वेदवेद्याप्तिकारणान्यखिलानि च । नरकत्राममार्गेण सङ्गेनापहतानि मे ॥ ३८ विनिन्दोत्थं स धर्मज्ञः खयमात्मानमात्मना । तामप्रसरसमासीनामिदं वचनमञ्जवीत् ॥ ३९

गच्छ पापे यथाकामं यत्कार्यं तत्कृतं त्वया । देवराजस्य मत्क्षोभं कुर्वन्त्या भावचेष्टितै: ॥ ४०

न त्वां करोम्यहं भस्म क्रोधतीव्रेण बह्निना । सतां सप्तपदं मैत्रमुषितोऽहं त्वया सह ॥ ४१

अधवा तव को दोषः कि वा कुप्याम्यहं तव । ममैव दोषो नितरां येनाहमजितेन्द्रियः ॥ ४२

यया शक्तप्रियार्थिन्या कृतो मे तपसो व्ययः ।

त्वया धिक्तां महामोहमञ्जूषां सुजुगुप्सिकम् ॥ ४३

सीम् उवाच

यावदित्यं स विप्रर्षितां ब्रवीति सुमध्यमाम् । ताव दलत्त्वेदजला सा बभूवातिवेपथुः ॥ ४४ प्रवेपमानां सततं स्वित्रगात्रलतां सतीम् । गच्छ गच्छेति सक्रोधमुवाच मुनिसत्तमः ॥ ४५ सा तु निर्भत्तिंता तेन विनिष्कम्य तदाश्रमात् । आकाशगामिनी स्वेदं ममार्ज तरुपल्लयैः ॥ ४६ प्रस्लोचा बोली—हे बहात् ! आपके निकट मैं झूठ कैसे बोल सकती हूँ ? और फिर विदोषतया उस समय जब कि आज आप अपने धर्म-मार्गका अनुसरण करनेमें तत्पर होकर गुझसे पूछ रहे हैं॥ ३४॥

सोमने कहा—हे राजकुमाये ! उसके ये सत्य वचन सुनकर मुनिने 'मुझे धिकार है ! मुझे धिकार है !' ऐसा कहकर स्वयं हो अपनेको बहुत कुछ धला-युग कहा॥ ३५॥

मुनि बोले—ओह ! मेरा तप नष्ट हो गया, जो ब्रह्मवेताओंका धन था वह लूट गया और विवेकखुढि मारी गयी ! अही | स्त्रीको तो किसीने मीट उपजानेके लिये ही रचा है ! ॥ ३६ ॥ 'मुझे अपने मनको जीतकर छहीं ऊर्मियी" से अतीत परब्रह्मको जानना चाहिये'— जिसने मेरी इस प्रकारकी बुद्धिको नष्ट कर दिया, उस कामरूपी महाग्रहको धिकार है ॥ ३७ ॥ नरकग्रामके मार्गरूप इस स्त्रीके संगसे बेदबेदा भगवान्की प्रक्रिके कारणरूप मेरे समस्त बत नष्ट हो गये॥ ३८ ॥

इस प्रकार उन वर्मज्ञ मुनिवरने अपने-आप ही अपनी निन्दा करते हुए वहाँ बैठी हुई उस अपस्यसे कहा— ॥ ३९ ॥ "अरी पापिनि ! अब तेरी वहाँ इच्छा हो चली जा, तूने अपनी भावभंगीसे मुझे मोहित बरके इन्द्रका जो कार्य था वह पूरा कर लिया ॥ ४० ॥ मैं अपने क्रोबसे प्रज्वलित हुए अग्निद्वारा तुझे मस्म नहीं करता हूं, क्योंकि सम्बन्धि मित्रता सात पग साथ रहनेसे हो जाती है और मैं तो [इतने दिन] तेरे साथ निवास कर चुका हूँ ॥ ४१ ॥ अथवा इसमें तेरा दोष मी क्या है, जो मैं तुझपर क्रोध कहें ? दोष तो सारा मेरा हो है, क्योंकि मैं बड़ा हो अजितेन्त्रिय हूँ ॥ ४२ ॥ तू महामोहकी पिटारी और अत्यन्त निन्दनीया है। हाय । तूने इन्द्रके स्वार्थिक लिये मेरी तपस्था गष्ट कर दी !! तुझे थिकार है !!! ॥ ४३ ॥

सोमने कहा — वे ब्रह्मर्षि उस सुन्दरीसे जवतक ऐसा कहते रहे तबतक वह [भयके कारण] पसीनेमें सरावोर होकर अत्यन्त काँपती रही ॥४४ ॥ इस प्रकार जिसका समस्त शरीर पसीनेमें डूबा हुआ था और जो भयसे थर-धर काँप रही थी उस अग्लोबास मुनिश्रेष्ठ कण्डुने क्रोधपूर्वक कहा—'अर्ग ! तू चल्मे जा ! चल्मे जा !!॥४५॥

तब बारम्बार फटकारे जानेपर वह उस आश्रमसे

सूचा, पिपासा, स्त्रोभ, मोह, जरा और मृत्यु—ये छः कर्मियाँ हैं।

निर्मार्जमाना गात्राणि गलत्त्वेदजलानि वै । वृक्षाद्वक्षं ययौ बाला तदग्रारुणपल्लवैः ॥ ४७ ऋषिणा यस्तदा गर्भस्तस्या देहे समाहितः । निर्जगाम स रोमाञ्चखंदरूपी तदङ्गतः ॥ ४८ तं वृक्षा जगृहर्गर्थमेकं चक्रे तु मास्तः। मया चाप्यायितो गोभिः स तदा ववृधे शनैः ॥ ४९ बुक्षात्रगर्भसम्भूता मारिषाख्या वरानना । तां प्रदास्यन्ति वो वृक्षाः कोप एव प्रशाम्यताम् ॥ ५० कण्डोरपत्यमेवं सा वृक्षेभ्यश्च समुद्रता । मपापत्यं तथा वायो: प्रप्लोचातनया च सा ॥ ५१ औपराधार उदान स चापि भगवान् कण्डुः श्लीणे तपसि सत्तमः । पुरुषोत्तमाख्यं मैत्रेय विच्छोरायतनं ययौ ॥ ५२ तत्रैकाग्रमतिर्भृत्वा चकाराराधनं हरेः। कुर्वञ्जपमेकाग्रमानसः । ब्रह्मपारमयं ऊर्ध्वबाहर्महायोगी स्थित्वासौ भूपनन्दनाः ॥ ५३ प्रचेतस कचुः ब्रह्मपारं मुनेः श्रोतुमिच्छामः परमं स्तवम् । जपता कण्डना देवो येनाराध्यत केशवः ॥ ५४ स्रोप उवाच पारं यरं विष्णुरपार्यार्

परमार्थरूपी। पर: परेभ्य: परपारभूत: ब्रह्मपार:

पराणामपि पारपारः ॥ ५५

कारणे कारणतस्ततोऽपि तस्यापि हेत्ः परहेतुहेतुः । कार्येषु चैवं सह कर्मकर्त्-

रूपैरशेषैरवतीह सर्वम् ॥ ५६

ब्रह्म प्रभुब्रह्म स सर्वभूतो ब्रह्म प्रजानां पतिरच्युतोऽसौ । ब्रह्माच्ययं नित्यमजं स विष्णु-

रपक्षबाद्यैरखिलैरस ङ्वि

निकली और आकाश-मार्गसे जाते हुए उसने अपना पसीना वृक्षके पत्तीसे पोला ॥ ४६ ॥ वह बाला वृक्षीके नवीन लाल-लाल पत्तोंसे अपने पसीनेसे तर शरीरको पेंछती हुई एक वृक्षसे दूसरे वृक्षपर चटनो गयी ॥ ४७ ॥ उस समय ऋषिने उसके इसीरमें जो गर्भ स्थापित किया था वह भी रोमाञ्चसे निकले हुए पसीनेके रूपमें उसके शरीरसे बाहर निकल आया ॥ ४८ ॥ इस गर्भको वक्षीने महण कर रिज्या, उसे वायने एकजित कर दिया और मैं अपनी किरणोंसे उसे पोषित करने लगा । इससे वह धीर-धीर बढ गया ।: ४९ ॥ वृक्षाप्रसे उत्पन हुई वह मारिक नामकी सुमुखी कन्या तुन्हें वृक्षगण समर्पण करेंगे । अतः अब यह क्रोध शान्त करो ॥ ५० ॥ इस प्रकार बुधोंसे उत्सन हुई वह कन्या प्रम्लोचाकी पुत्री है तथा कण्ड मुनिकी, मेरी और

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे भैत्रेय ! [तब यह सोचकर कि प्रचेतागण योगप्राष्ट्रकी कन्या होनेसे मारिपाको अभ्राह्य न समझे सोमदेवने कहा— | साध्श्रेष्ठ भगवान् कण्ड भी तपके शीण हो जानेसे पुरुषोत्तमक्षेत्र नामक भगवान विष्णुकी निवास-भृमिको गये और हे राजपुत्री ! वहाँ वे महायोगी एकनिष्ठ होकर एकाम चित्तसे महापार-मन्त्रका जप दस्ते हुए ऊर्ध्वबाह् रहकर श्रीविष्णुभगवान्को आराधना करने लगे ॥ ५२-५३ ॥ 🐃 🖂 🚉

वायुक्ते भी सन्तान है ॥ ५१ ॥

प्रचेतायण बौरहे-ह्य कण्ड मुनिका ब्रह्मपार नामक परमस्तोत्र सुनना चाहते हैं, जिसका जप करते हुए उन्होंने श्रीकेशवकी आराधना की थी ॥ ५४ ॥...

सोमने कहा— [हे राजकृमारे ! वह मन्त्र इस प्रकार है—] 'श्रीविष्णुभगवान् संसार-मार्गको अन्तिम अवधि हैं, उनका पार पाना कठिन है, वे पर (आकाशादि)। से भी पर अर्थात् अनन्त है, अतः सत्यखरूप है। तपोनिष्ट महात्माओंको ही वे प्राप्त हो सकते हैं, क्योंकि वे पर (अनात्म-प्रपञ्च) से परे हैं तथा पर (इन्द्रियों)के अगोचर परमात्मा है और [भक्तोंके] पालक एवं [उनके अभीष्टको] पूर्ण करनेवाले हैं ॥ ५५ ॥ वे कारण (पञ्चपुत) के कारण (पञ्चतनात्रा) के तेत् (तामस-अहंकार) और उसके भी हेतु (महत्तत्व) के हेतु (प्रधान) के भी परम हेतु हैं और इस प्रकार समस्त कर्म और कर्ता आदिके सहित कार्यरूपसे स्थित सकल प्रपञ्चका पारत्न करते हैं ॥ ५६ ॥ बहा ही प्रभु है, बहा ही

सर्वजीवरूप है और ब्रह्म ही सकल प्रजाका पति (रक्षक)

ब्रह्माक्षरमजं नित्यं यथाऽसी पुरुवोत्तमः । तथा सगादयो दोषाः प्रयान्तु प्रशमं मम ॥ ५८

एतद्ब्रह्मपरास्यं वै संस्तवं परमं जपन् । अवाप परमां सिद्धिं स तमाराध्य केशवम् ॥ ५९

्रिमं स्तवं यः पठित शृणुबाह्यपि नित्यशः।

स कामदोषैरखिलैर्मुक्तः प्राप्नोति वाञ्छितम् ॥] इयं च मारिषा पूर्वमासीद्या तां ब्रवीमि वः ।

कार्यगौरवमेतस्याः कथने फलदायि यः ॥ ६० अपुत्रा प्रागियं विष्णुं मृते भत्तीरे सत्तमा ।

भूपपत्नी महाभागा तोषयामास भक्तितः ॥ ६१

आराधितस्तया विष्णुः प्राह प्रत्यक्षतां गतः । वरं वृणीष्ट्रेति शुभे सा च प्राहात्मवाञ्चितम् ॥ ६२

भगवन्बालवैधव्याद् वृशाजन्माहमीदृशी । मन्दंभाग्या समुद्धता विफला च जगत्यते ॥ ६३

भवन्तु पतयः इलाध्या मम जन्मनि जन्मनि । त्वत्प्रसादात्तथा पुत्रः प्रजापतिसमोऽस्तु मे ॥ ६४

कुलं ज्ञीलं वयः सत्यं दाक्षिण्यं क्षिप्रकारिता ।

अविसंवादिता सत्त्वं वृद्धसेवा कृतज्ञता॥ ६५

रूपसम्पत्समायुक्ता सर्वस्य प्रियदर्शना । अयोनिजा च जायेयं त्वत्रसादादधोक्षज ॥ ६६

सोम उवाच

तयैवमुक्ती देवेशी हषीकेश उवाच ताम् । प्रणामनम्रामुखाय्य वरदः परमेश्वरः ॥ ६७

देव उवाच

भविष्यन्ति महावीर्या एकस्मिन्नेव जन्मनि । प्रस्थातोदारकर्माणो भवत्याः पतयो दश ॥ ६८

पुत्रं च सुमहाबीयं महाबलपराक्रमम् । प्रजापतिगुणीर्युक्तं त्वमवाप्स्यसि शोभने ॥ ६९

वंशानां तस्य कर्तृत्वं जगत्यस्मिन्भविष्यति । त्रैलोक्यमिक्तला सुतिस्तस्य चापूरविष्यति ॥ ७० तथा अविनाशी है। वह ब्रह्म अव्यय, नित्य और अवन्या है तथा वही क्षय आदि समसा विकारोंसे दान्य विष्णु है ॥ ५७॥ क्योंकि वह अक्षर, अज और नित्य ब्रह्म ही पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु हैं,इसिट्ये [उनका नित्य अनुरक्त

मक होनेके कारण] मेरे राप आदि दोष शान्त हों ॥ ५८ ॥ इस ब्रह्मपर नामक परम स्तोत्रका जप करते हुए श्रीकेशककी आराधना करनेसे उन मुनीश्वरने परमसिद्धि श्राप्त की ॥ ५९ ॥ [जो पुरुष इस स्तवको नित्यप्रति पढ़ता या सुनता है वह काम आदि सकल दोगोंसे मुक्त होकर अपना मनोवाज्लित फल प्राप्त करता हैं।] अब मैं तुम्हें यह बताता हूँ कि यह मारिया पूर्वजन्ममें कीन थी। यह बता देनेसे तुम्हारे कार्यका गौरव सफल होगा। [अर्थात् तुम प्रजा-वृद्धिरूप फल श्राप्त कर सकोगे] ॥ ६० ॥

यह साध्वी अपने पूर्व जन्ममें एक महारानी थीं। पत्रहीत-अवस्थामें ही पतिके मर जातेपर इस महाभागाते अपने भक्तिभावसे विष्णुभगवान्को सन्तृष्ट किया ॥ ६१ ॥ इसकी आराधनासे प्रसन्न हो विष्णुभगवान्ने प्रकट होकर कहा—"हे श्र्वे ! वर माँग।" तब इसने अपनी यनोभिलामा इस प्रकार कह सुनायी— ॥ ६२ ॥ ''भगवन् । बाल-विधवा होनेके कारण मेरा जन्म व्यर्थ ही हुआ। हे जगत्पते ! मैं येसी अभागिनी है कि फलहीन (पृत्रहीन) ही उत्पन्न हुई ॥ ६३ ॥ अतः आपकी कृषासे जन्म-जन्ममें मेरे बड़े प्रशंसनीय पति हो और प्रजापति (ब्रह्मजी) के समान पुत्र हो ॥ ६४ ॥ और हे अधोक्षज ! आपके प्रसादसे मैं भी कुल, शील, अवस्था, सत्य, दाक्षिण्य (कार्य-कुशलता), शीघकारिता, अविसंवादिता (उलटा न कहना), सत्त्व, युद्धसेवा और कृतज्ञता आदि ग्णीसे तथा सुन्दर रूपसम्पत्तिसे सम्पन्न और सबको प्रिय लगनेवाली अवीतिजा (माताके गर्भसे जन्म लिये बिना) ही उत्पन्न होर्डैं ॥ ६५-६६ ॥

सोम बोले—उसके ऐसा कहनेपर बरदायक परमेश्वर देवाधिदेव श्रीहषीकेशने प्रणामके लिये झुकी हुई उस वालाको उठाकर कहा ॥ ६७ ॥

भगवान् बोले—तेर एक ही जन्ममें बड़े पराक्रमी और विख्यात वर्मवीर दस पति होंगे और हे शोधने! उसी समय तुझे प्रजापतिके समान एक नहावीर्यवान् एवं अल्यन्त बल-विक्रमयुक्त पुत्र भी प्राप्त होगा ॥ ६८-६९॥ वह इस संसारमें कितने ही वंशोंको वल्लनेवाला होगा और उसकी सन्तान सम्पूर्ण जिल्लोकीमें त्वं चाष्ययोनिजा साध्वी रूपौदार्यगुणान्विता । मनःप्रीतिकरी नृणां मत्प्रसादाद्धविष्यसि ॥ ७१ इत्युक्त्वान्तर्दधे देवसां विशालविलोचनाम् । सा वेथं मारिषा जाता युष्पत्पत्नी नृपात्मजाः ॥ ७२

श्रीपराशर उवाच

ततः सोमस्य वचनाजगृहुते प्रचेतसः ।
संहत्य कोपं वृक्षेण्यः पत्नीधर्मेण मारिषाम् ॥ ७३
दशभ्यस्तु प्रचेतोभ्यो मारिषायां प्रजापतिः ।
जशे दक्षो महाभागो यः पूर्व ब्रह्मणोऽभवत् ॥ ७४
स तु दक्षो महाभागस्मृष्ट्रवर्थं सुमहामते ।
पुत्रानुत्पादयामास प्रजासृष्ट्रवर्थमात्मनः ॥ ७५
अवरांश्च वरांश्चैव द्विपदोऽथ चतुष्पदान् ।
आदेशं ब्रह्मणः कुर्वन् सृष्ट्यर्थं समुपस्थितः ॥ ७६
स सृष्ट्रा मनसा दक्षः पश्चादस्जत स्वियः ।
दवौ स दश धर्माय कञ्चपाय त्रयोदश ।

कालस्य नयने युक्ताः सप्तविंशतिमिन्दवे ॥ ७७ तासु देवास्तथा दैत्या नागा गावस्तथा खगाः ।

गन्धर्वाप्सरसञ्जैव दानवाद्याश्च जज्ञिरे ॥ ७८ ततः प्रभृति मैत्रेय प्रजा मैश्रुनसम्भवाः ।

सङ्कल्पादर्शनात्स्यर्शात्पूर्वेयामभवन् प्रजाः । तपोविशेषैः सिद्धानां तदात्यन्ततपस्विनाम् ॥ ७९

श्रीमैत्रेय उवाच

अङ्गुष्ठाइक्षिणादक्षः पूर्व जातो मया श्रुतः । कथं प्राचेतसो भूयः समुत्यन्नो महामुने ॥ ८० एष मे संशयो ब्रह्मन्सुमहान्हदि वर्नते । यद्यौहितश्च सोमस्य पुनः श्वज्ञुस्तां गतः ॥ ८१

श्रीपरासर उकाच

उत्पत्तिश्च निरोधश्च नित्यो भूतेषु सर्वदा। ऋषयोऽत्र न मुहान्ति ये चान्ये दिव्यचश्चषः॥ ८२ युगे युगे भवन्त्वेते दक्षाद्या मुनिसत्तम। पुनश्चैवं निरुद्धान्ते विद्वांस्तत्र न मुहाति॥ ८३

पुनश्चव ।नरुद्धस्ता ।वद्धास्तत्र न मुह्यात ॥ ८३ कानिष्ठ्यं ज्येष्ठ्यमध्येषां पूर्व नाभूद्द्विजोत्तम । तप एव गरीयोऽभूत्रभावश्चैव कारणम् ॥ ८४ फैल जायगी॥ ७०॥ तथा तू भी नेसे कृपासे उदाररूप-गुणसम्पन्ना, सुशीला और मनुष्योंके जितको प्रसन्न

करनेयाली अयोनिजा ही उत्पन्न होगी॥७१॥ हे राजपुत्रो ! उस विशास्त्रक्षीसे ऐसा कह भगवान् अन्तर्धान हो गये और वही यह मारिषाके रूपसे उत्पन्न हुई तुन्हारी

पत्नी है ॥ ७२ ॥

श्रीपराहारजी बोले—तब सोमदेवके कहनेसे प्रचेताओंने अपना क्रोध शान्त किया और उस मारिवाको यक्षोंसे प्रक्रीरूपसे ग्रहण किया ॥ ७३ ॥ उन दसों प्रचेताओंसे मारिवाके महाभाग दक्ष प्रजापतिका जन्म हुआ, जो पहले ब्रह्माजीसे उत्पन्न हुए थे ॥ ७४ ॥ हे महामते ! उन महाभाग दक्षने, ब्रह्माजीको आजा

पालते हुए सर्ग-रचनाके लिये उद्यत होकर उनकी अपनी सृष्टि बढ़ाने और सत्तान उत्पन्न करनेके लिये नीच-केंच तथा द्विपद्चतुष्पद आदि नाना प्रकारके जीवोंको पुत्ररूपसे उत्पन्न किया ॥ ७५-७६ ॥ प्रजापति दक्षने पहले मनसे ही सृष्टि चरके फिर खियोंकी उत्पत्ति की । उनमेंसे दस धर्मको और तेरह कृदयपको दों तथा काल-परिवर्तनमें नियुक्त [अश्रिनी आदि] सताईस चन्द्रमाको विवाह दों ॥ ७७ ॥ उन्होंसे देवता, दैत्य, नाग, गौ, पक्षी, गन्धर्व, अपरार और दानव आदि उत्पन्न हुए ॥ ७८ ॥ हे मैत्रेय । दक्षके समयसे ही प्रजाका मैथुन (स्वी-पुरुष-सम्बन्ध) द्वारा उत्पन्न होना आरम्भ हुआ है । उससे पहले तो अत्यन्त तपस्वी प्राचीन सिद्ध पुरुषोंके तपोबलसे उनके संकल्प, दर्शन अथवा स्पर्शमात्रसे ही प्रजा उत्पन्न होती थी ॥ ७९ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे महापुते ! मैंने तो सुना घा कि दक्षका जन्म बहाजोंके दायें अंगूठेसे हुआ था, फिर वे प्रचेताओंके पुत्र किस प्रकार दुए ? ॥ ८० ॥ हे ब्रह्मन् ! मेरे इदयमें यह बड़ा सन्देह है कि सोमदेवके दीहित्र (धेवते) होकर भी फिर वें उनके धशर हए ! ॥ ८१ ॥

श्रीपराद्यरजी बोले—हे मैत्रेय | प्राणियोंके उत्पत्ति और नारा [प्रवाहरूपसे] निरन्तर हुआ करते हैं। इस विषयमें ऋषियों तथा अन्य दिच्यदृष्टि-पुरुषोंकों कोई मोह नहीं होता ॥ ८२ ॥ हे पुनिश्रेष्ठ ! ये दशादि युग-युगमें होते हैं और फिर लीन हो जाते हैं, इसमें विद्वान्कों किसी प्रकारका सन्देह नहीं होता ॥ ८३ ॥ हे द्विजोत्तम ! इनमें पहले किसी प्रकारकी ज्येष्ठता अथवा कनिष्ठता भी नहीं थी । उस समय तप और प्रभाव ही उनकी ज्येष्ठताका कारण होता था ॥ ८४ ॥

ऑमेंबेय उपाच

देवानां दानवानां च गन्धर्वोरगरक्षसाम्। उत्पत्तिं विस्तरेणेह यम ब्रह्मग्रकीर्त्तय ॥ ८५

औपरांशर उवाच

प्रजाः सुजेति व्यादिष्टः पूर्वं दक्षः स्वयम्भूवा । यथा ससर्ज भूतानि तथा शृणु महामुने ॥ ८६

मानसान्येव भूतानि पूर्वं दक्षोऽसुजत्तदा ।

देवानुषीन्सगन्धवनिसुरान्यत्रगांस्तथा 11 69

यदास्य सुजमानस्य न व्यवर्धन्त ताः प्रजाः ।

ततः सञ्चित्त्य स पुनः सृष्टिहेतोः प्रजापतिः ॥ ८८

मैथुनेनैव धर्मेण सिसुक्षविविधाः प्रजाः । असिक्कीमावहत्कन्यां वीरणस्य प्रजापतेः ।

सुतां सुतपसा युक्तां महतीं लोकधारिणीम् ॥ ८९

अय पुत्रसहस्राणि वैरूपयो पञ्च वीर्यवान् । असिक्त्यां जनवामास सर्गहेतोः प्रजापतिः ॥ ९०

तान्द्रष्टा नारदो वित्र संविवर्द्धयिषुन्राजाः ।

सङ्घय प्रियसंवादो देवर्षिरिदमद्रवीत ॥ ९१

हे हर्यश्चा महावीर्याः प्रजा यूयं करिष्यथ । ईंदुशो दुश्यते यत्नो भवतां श्रुयतामिदम् ॥ ९२

बालिशा बत यूयं वै नास्या जानीत वै भूवः ।

अन्तरूर्ध्वमध्यैव कथं सृक्ष्यय वै प्रजा: ॥ १३

ऊर्ध्व तिर्यगधश्चेव यदाऽप्रतिहता गतिः ।

तदा कस्माद्धवो नान्तं सर्वे द्रक्ष्यश्च बालिशाः ॥ ९४ ते तु तह्ववनं श्रुत्वा प्रयाताः सर्वतो दिशम् ।

अद्यापि नो निवर्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ॥ ९५

हर्यश्रेष्ठय नष्टेषु दक्षः प्राचेतसः पुनः।

वैरुण्यामध्य पुत्राणां सहस्रमसुजत्प्रभुः॥ ९६

विवर्द्धयिषवस्ते तु शबलाधाः प्रजाः पुनः ।

पूर्वोक्तं वचनं ब्रह्मन्नारदेनैव नोदिताः ॥ ९७

भ्रीमैत्रेयजी कोले-डे ब्रह्मन् ! आप मुझसे देव, दानव, गन्धर्व, सर्प और राक्षसोंकी उत्पत्ति विस्तारपूर्वक कहिये॥ ८५॥

श्रीपराशरजी बोले—हे महामुने ! स्वयम्पृ-भगवान् बद्धाजीको ऐसी आज्ञा होनेपर कि 'तुम प्रजा उत्पन्न करो' दक्षने पूर्वकालमे जिस प्रकार प्राणियोंकी रचना की थी वह सुनो ॥ ८६ ॥ उस समय पहले तो दक्षने ऋषि, गन्धर्व, असुर और सर्व आदि मानसिक प्राणियोंको ही उत्पन्न किया॥ ८७॥ इस प्रकार रचना करते हुए जब उनकी वह प्रजा और न बढ़ी तो उन प्रजापतिने सृष्टिकी वृद्धिके लिये मनमें विचारकर मैथुनधर्मसे नाना प्रकारको प्रजा उत्पन्न करनेकी इच्छासे बीरण प्रजापतिकी अति तपस्थिनी और स्त्रेकघारिणी पुत्री असिक्रीसे विवाहं किया ॥ ८८-८९ ॥

तदनन्तर वीर्यवान् प्रलापति दक्षने सर्गको वृद्धिके लिये वीरणसूता असिक्रीसे पाँच सहस्र पुत्र उत्पन्न किये ॥ ९० ॥ उन्हें प्रजा-वृद्धिके हच्छुक देख प्रियवादी देवर्षि नारतने उनके निकट जाकर इस प्रकार कहा-- ॥ ९१ ॥ ''हे महापरक्रमी हर्वश्चगण ! आप लोगोकी ऐसी चेट्टा प्रतीत होती है कि आप प्रजा उत्पन्न करेंगे, सो मेरा यह कथन सुनो ॥ ९२ ॥ खेदकी बात है, तुम लोग अभी निरे अनिपन्न हो क्योंकि तुम इस पृथियीका मध्य, ऊर्ध्य (ऊपरी भाग) और अधः (नीचेका भाग) कुछ भी नहीं जानते, फिर प्रजाकी रचना किस प्रकार करोगे ? देखो, तुभ्हारी गति इस ब्रह्माण्डमें ऊपर-नीचे और इघर-उधर सब ओर अप्रतिहत (बे-रोक-टोक) हैं; अतः है अज्ञानियो ! तुम सब मिलकर इस पृथिवीका अन्त क्यों नहीं देखते ?" ॥ ९३-९४ ॥ नास्दजीके ये वचन सनकर वे सब भिन्न-भिन्न दिशाओंको चले गये और सग्द्रमें जाकर जिस प्रकार नदियाँ नहीं स्नैटर्ही उसी प्रकार वे भी

हर्यश्रोंके इस प्रकार चले जानेपर प्रचेताओंके पुत्र दक्षने वैरुणीसे एक सहस्र पुत्र और उत्पन्न किये ॥ ९६ ॥ वे अवसाधगण भी प्रजा बढ़ानेके इच्छुक हुए, किन्तु है बहान् ! उनसे नारदजीने ही फिर पूर्वोक्त बातें कह दीं।

आजतक नहीं लीटे ॥ ९५ ॥

अन्योऽन्यपृत्नुस्ते सर्वे सम्यगाह महामुनिः । **भातृणां पदवी चैव गन्तव्या नात्र संशय: ॥** ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्व्याश्च प्रजास्सक्ष्यामहे ततः । तेऽपि तेनैव मार्गेण प्रयाताः सर्वतोमुखम् । अद्यापि न निवर्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ॥ ततः प्रभृति वै भ्राता भ्रातुरन्वेषणे द्विज । प्रयातो नश्यति तथा तश्र कार्यं विजानता ॥ १०० तांश्चापि नष्टान् विज्ञाय पुत्रान् दक्षः प्रजापतिः । क्रोधं चक्रे महाभागो नारदं स शशाप च ॥ १०१ सर्गकामस्ततो बिद्धान्स मैत्रेय प्रजापति: । षष्टिं दक्षोऽसुजत्कन्या वैरुण्यामिति न: श्रुतम् ॥ १०२ ददौ स दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश । सप्तविंशति सोमाय चतस्रोऽरिष्ट्रनेमिने ॥ १०३ द्वे चैव बहुपुत्राय द्वे चैवाङ्गिरसे तथा। हे कुशाश्चाय विदुषे तासां नामानि मे शृणु ॥ १०४ अरुखती बसुर्यामिलंग्बा भानुर्मरुखती। सङ्कल्पा च मुहर्ता च साध्या विश्वा च तादशी । धर्मपत्त्यो दश त्वेतास्तास्वपत्यानि मे शुणु ॥ १०५ विश्वेदेवास्तु विश्वायाः साध्या साध्यानजायत । मरुत्वत्यां मरुत्वन्तो वसोश्च वसवः स्मृताः। भानोस्तु भानवः पुत्रा मुहूर्तायां मुहूर्तजाः ॥ १०६ लम्बायाश्चैय घोषोऽथ नागवीश्ची तु यामिजा ॥ १०७ पृथिवीविषयं सर्वेषरूयत्यामजायत् । सङ्कल्पायास्तु सर्वात्मा जज्ञे सङ्कल्प एव हि ॥ १०८ ये त्वनेकवसुप्राणदेवा ज्योतिःपुरोगमाः । बसबोऽष्ट्री समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम् ॥ १०९ आपो ध्वश्च सोमश्च धर्मश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्युषश्च प्रभासश्च वसको नामभिः स्मृताः ॥ ११० आपस्य पुत्रो वैतण्डः श्रमः शान्तो ध्वनिस्तथा । श्रुवस्य पुत्रो भगवान्कालो लोकप्रकालनः ॥ १११ सोपस्य भगवान्यर्ज्ञा वर्जस्वी येन जायते ॥ ११२ धर्मस्य पुत्रो द्वविणो हतहव्यवहस्तथा। मनोहरायां शिक्षिरः प्राणोऽथ वरुणस्तथा ॥ ११३

तब वे सब आपसमें एक-दूसरेसे कहने लगे—'महामुनि नारतजो ठोंक कहते हैं; हमको भी, इसमें सन्देह नहीं, अपने भाइयोंके मार्गका ही अवलम्बन करना चाहिये। इस भी पृथियोका परिमाण जानकर ही सृष्टि करेंगे।'इस प्रकार वे भी उसी मार्गसे समस्त दिशाओंको चलें गये और समुद्रगत नदियोंके समस्त आजतक नहीं लौटे ॥ ९७—९९॥ हे द्विज! तबसे ही यदि भाईको खोजनेके लिये भाई ही जाय तो वह नष्ट हो जाता है, अतः निज्ञ पुरुषको ऐसा न करना चाहिये॥ १००॥

महाभाग दक्ष प्रजापतिने उन पुत्रीको भी गये जान नारदजीपर बड़ा क्रोध किया और उन्हें शाप दे दिया॥ १०१॥ हे मैत्रेय ! हमने सुना है कि फिर उस विद्वान् प्रजापतिने सर्गवृद्धिकी इच्छासे वैरुणीमें साठ कन्याएँ उत्पन्न की ॥ १०२ ॥ उनमेंसे उन्होंने दस धर्मको, तेरह कङ्यपको, सत्ताईस सोम (चन्द्रमा) को और चार अरिष्टनेमिको दीं ॥ १०३ ॥ तथा दो बहुपुत्र, दो अङ्गिरा और दो कुशाधको विवाहीं । अब उनके नाम सुनो ॥ १०४ ॥ अरुअती, वसु, यामी, लम्बा, भानु, मरुव्वती, सङ्कल्या, मुहुर्ता, साध्या और विधा—ये दस धर्मको परिवर्ष भी; अब तुम इनके पुत्रोका विवरण सुनो ॥ १०५॥ विश्वकि पुत्र विश्वेदेवा थे, साध्यासे साध्यगण हुए, मरुत्वतीसे मरुत्वान् और वसुसे वसुगण हुए तथा भानुसे भानु और मुहुर्तासे मुहुर्तिभिमानी देवगण हुए॥ १०६॥ रूम्बासे घोष, यामीसे नागवीथी और अरुखतीसे समस्त पृथिवी-विषयक प्राणी हुए तथा सङ्करपासे सर्वात्मक सङ्करपकी तत्पति हुई ॥ १०७-१०८ ॥

नाना प्रकारका वसु (तेज अथवा सन) ही जिनका प्राण है ऐसे ज्योति आदि जो आठ वसुगण विख्यात हैं, अब मैं उनके वेशका विस्तार बताता हूँ ॥ १०९ ॥ उनके नाम आप, भुल, सोम, धर्म, अनिल (वायु), अनल (अमि), प्रत्यूष और प्रभास कहें जाते हैं ॥ ११० ॥ आपके पुत्र वैतण्ड, श्रम, शान्त और ध्यनि हुए तथा धुवके पुत्र लोक-संहारक भगवान् कल हुए ॥ १११ ॥ भगवान् वर्चा सोमके पुत्र थे जिनसे पुरुष वर्चस्वी (तेजस्वी) हो जाता है और धर्मक उनकी भार्या मनोहरासे द्रविण, हुत एवं ह्व्यवह तथा शिशिर, प्राण और वरुण नामक पुत्र हुए ॥ ११२-११३ ॥ अनिलस्य शिखा भार्या तस्याः पुत्रो मनोजवः ।

अग्निपुत्रः कुमारस्तु शरस्तम्बे व्यजायत ।

प्रत्यूषस्य विदुः पुत्रं ऋषि नाम्राथ देवलम् ।

अविज्ञातगतिश्चेव ह्रौ पुत्रावनिलस्य तु ॥ ११४

तस्य शास्त्रो विशास्त्रश्च नैगमेयश्च पृष्ठजाः ॥ ११५

अपत्यं कृत्तिकानां तु कार्त्तिकेय इति स्मृतः ॥ ११६

ह्रौ पुत्रौ देवलस्यापि क्षमावन्तौ मनीविणौ ॥ ११७ बृहस्पतेस्तु भगिनी वरस्त्री ब्रह्मचारिणी । योगसिद्धा जगत्कृत्स्त्रमसक्ता विचरत्युत । प्रभासस्य तु सा भार्या वसूनामष्टमस्य तु ॥ ११८ विश्वकर्मा महाभागस्तस्यां जज्ञे प्रजापतिः । कर्ता शिल्पसहस्राणां त्रिदशानां च वर्द्धकी ॥ ११९ भूषणानां च सर्वेषां कर्ता शिल्पवर्ता वरः । यः सर्वेषां विषानानि देवतानां चकार ह । मनुष्याञ्चोपजीवन्ति यस्य ज्ञिल्पं महात्मनः ॥ १२० तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु । अजैकपादहिर्बुघ्यस्त्वष्टा स्द्रश्च वीर्यवान् । त्वष्टश्चाय्यातमजः पुत्रो विश्वरूपो महातयाः ॥ १२१ हरश्च बहुरूपश्च ज्यम्बकश्चापराजितः। वृषाकपिश्च शास्त्रश्च कपदीं रैवतः स्मृतः ॥ १२२ मुगव्याधश्च शर्वश्च कपाली च महामुने । एकादशैते कथिता रुद्राक्षिभुवनेश्वराः । शतं त्वेकं समाख्यातं स्द्राणाममितौजसाम् ॥ १२३ कश्यपस्य तु भार्या यास्तासां नामानि मे शृणु । अदितिर्दितिर्दनुश्चैवारिष्टा च सुरसा खसा ॥ १२४ सूरभिर्विनता चैव ताम्रा क्रोधवशा इरा । कदुर्मुनिश्च धर्मज्ञ तद्यत्यानि मे शृणु ॥ १२५ पूर्वमन्वन्तरे श्रेष्टा द्वादशासन्सुरोत्तमाः ।

तुषिता नाम तेऽन्योऽन्यमूजुर्वैवस्वतेऽन्तरे ॥ १२६

समवायीकृताः सर्वे समागम्य परस्परम् ॥ १२७

उपस्थितेऽतियशसश्चाक्षुषस्यान्तरे मनोः।

और अविज्ञातगति—ये दो पुत्र हुए॥ ११४॥ अग्निके पुत्र कुमार शरस्तम्ब (सरकण्डे)से उत्पन्न हुए थे, ये कृतिकाओंके पुत्र होनेसे कार्तिकेय कहत्वये। शाख, विशास और नैगमेय इनके छोटे भाई थे ॥ ११५-११६ ॥ देवल नामक प्रत्येषको प्रस्तृषका पुत्र कहा जाता है। इन देवलके भी दो क्षमाशील और मनीषी पुत्र हुए ॥ ११७ ॥ बृहस्पतिजीको बहिन वरसी, जो ब्रह्मचारिणी और सिद्ध योगिनी घी तथा अनासक्त-भावसे समस्त भूमण्डलमे विचरतो थी, आठवे यसु प्रभासको भागी हुई ॥ ११८ ॥ उससे सहस्रों जिल्पो (कारीपरियों) के कर्ता और देवताओंके शिल्पी महाभाग प्रजापति विश्वकर्माका जन्म हुआ॥ ११९॥ जो समस्त शिल्पकारोंमें श्रेष्ट और सब प्रकारके आभूषण बनानेवाले हुए तथा जिन्होंने देवताओंके सम्पूर्ण विमानोंकी रचना की और जिन महात्माकी [आविष्कृता] शिल्प-विद्याके आश्रयसे बहुत-से मनुष्य जीवन-निर्वीह करते है।। १२०॥ उन विश्वकर्मिक चार पुत्र थे; उनके नाम रानो । वे अजैकपाद, आहेर्ब्यन्य, त्वष्टा और परमपुरुषार्थी स्द्र थे। उनमेंसे त्वष्टाके पुत्र महातपस्वी विश्वरूप थे॥ १२१॥ हे महासुरे ! हर, बनुरूप, व्याबक, अपराजित, बुवाकपि, शम्भु, कपदी, रैवत, मृगव्याध, शर्व और कपाली—ये विलोकीके अधीश्वर ग्यारह हर् कहे गये हैं। ऐसे सैकड़ी महातेजस्वी एकादश रुद्र प्रसिद्ध है ॥ १२२-१२३ ॥ जो [दक्षकन्याएँ] करवपजीकी स्वियाँ हुई उनके

ऑनलकी पत्नी विावा थी; उससे अनिलके मनोजव

जो [दक्षकन्याएँ] करमपजीकी स्नियाँ हुई उनके नाम सुनो-—वे अदिति, दिति, दन्, अरिष्ठा, सुरसा, ग्रसा, सुर्राभ, विनता, ताझा, क्रोधवज्ञा, इस, कद्ग और मुनि श्री। हे धर्मज्ञ | अब तुम उनकी सन्तानका विवरण श्रवण करो॥ १२४-१२५॥ पूर्व (चाक्षुष) मन्त्रन्तरमें तुषित नामक बारह श्रेष्ठ

देवगण थे। वे यहास्त्री सुरश्रेष्ठ चाधूष मन्त्रत्तरके पक्षात् तैवस्त्रत-मन्त्रत्तरके उपस्थित होनेपर एक-दूसरेके पास जाकर मिले और परस्पर कहने लगे— ॥ १२६-१२७॥

आगच्छत दूतं देवा अदिति सम्प्रविदय वै । मन्वन्तरे प्रसूयामस्तन्नः श्रेयो भवेदिति ॥ १२८ एवमुक्ता तृ ते सर्वे चाक्षपस्यान्तरे मनोः । मारीचात्कद्यपाजाता अदित्या दक्षकन्यया ॥ १२९ तत्र विष्णुश्च शक्रश्च जज्ञाते पुनरेव हि। अर्थमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा तथैव च ॥ १३० विवस्वान्सविता चैव मित्रो वरुण एव च । अंशुर्भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश संताः ॥ १३१ चाक्षुषस्यान्तरे पूर्वमासन्ये तुषिताः सुराः । वैवस्वतेऽन्तरे ते वै आदित्या द्वादश स्पृताः ॥ १३२ याः सप्तविंशतिः प्रोक्ताः सोपपल्योऽथ सुन्नताः । सर्वा नक्षत्रयोगिन्यस्तन्नाप्न्यश्चैव ताः स्पृताः ॥ १३३ तासामपत्यान्यभवन्दीप्रान्यमितनेजसाम् अरिष्ट्रनेमिपत्नीनामपत्यानीह षोड्श 11 638 बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्त्रो विद्युतः स्मृताः ॥ १३५ प्रत्यङ्किरसजाः श्रेष्ठा ऋचो ब्रह्मर्षिसत्कृताः । कृञाश्वस्य तु देवर्षेर्दवप्रहरणाः स्मृताः ॥ १३६ एते युगसहस्रान्ते जायन्ते पुनरेव हि। सर्वे देवगणास्तात त्रयस्त्रिंशनु छन्दजाः ॥ १३७ तेषामपीह सततं निरोधोत्पत्तिरुच्यते ॥ १३८ यथा सूर्यस्य मैत्रेय उदयास्तमनाविह । एवं देवनिकायास्ते सम्भवन्ति युगे युगे ॥ १३९ दित्या पुत्रहुयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम् । हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च दुर्जयः ॥ १४०

"हे देवगण ! आओ, हमस्त्रेग शीव ही अदितिके मर्भमें प्रवेश कर इस वैवस्तत-मन्वत्तरमें जन्म लें, इसीमें हमारा हित है"॥ १२८॥ इस प्रकार चाक्षुप-मन्वत्तरमें विध्यकर उन सबने मरीचिपुत्र कर्र्यपजीके यहाँ देशकत्या अदितिके गर्भसे जन्म लिया॥ १२९॥ ये अति तेजसी उससे उत्पत्र होकर विध्यु, इन्द्र, अर्थमा, धाता, त्वष्टा, पूषा, विध्यान, सविता, भेत्र, बहण, अंत्रु और भग नामक हादश आदित्य कहलाये॥ १३०-१३१॥ इस प्रकार पहले चाक्षुप-मन्वत्तरमें जो तुषित नामक देवगण थे वे ही वैवस्तत-मन्वत्तरमें द्वादश आदित्य हुए॥ १३२॥

सोमको जिन सत्ताईस सुवता पहियोंके विषयमें पहले कह चुके हैं वे सब नक्षत्रयोगिनी हैं और दन गमोसे ही विख्यात है ॥ १३३ ॥ उन आंत तेजस्विनियोंसे अनेक प्रतिभाशास्त्री पुत्र उत्पन्न हुए। अरिष्टनेमिकी प्रतियोके सोलह पुत्र हुए। बुद्धिमान् बहुपुत्रकी भार्या (कपिला, अतिलोहिता, पीता और अज़िता * नामक] चार प्रकारकी विद्युत् कही जाती हैं॥१३४-१३५॥ बदार्षियोसे संस्कृत ऋचाओंके अभिमानी देवश्रेष्ठ प्रत्यक्षिरासे उत्पन्न हुए हैं तथा शास्त्रोंके अभिमानी देवप्रहरण नागक देवगण देवर्षि कुदाश्वकी सन्तान कहे जाते हैं॥ १३६ ॥ हे तात ! [आठ वसु, ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, प्रजापति और वषट्कार] ये तैतीस वैदोक्त देवता अपनी इच्छानुसार जन्म लेनेवाले हैं। कहते हैं, इस ख्रेकमें इनके उत्पत्ति और निरोध निरन्तर हुआ करते हैं। ये एक इआर भुगके अनन्तर पुनः-पुनः उत्पन्न होते रहते है ॥ १३७-१३८ ॥ हे मैत्रेय ! जिस प्रकार लोकमें सुर्यक अस्त और उदय निरन्तर हुआ करते हैं उसी प्रकार थे देवगण भी युग-युगमें उत्पन्न होते रहते हैं ॥ १३९ ॥

हमने सुना है दितिके कर्यपजीके वीर्यसे परम दुर्जय हिरण्यकिताषु और हिरण्याक्ष नामक दो पुत्र तथा सिंहिका नामकी एक कन्या हुई जो विश्वचित्तिको विवाही गयी ॥ १४०-१४१ ॥ हिरण्यकित्तिपुके अति तेजस्वी और महापराक्रमी अनुह्युद, ह्युद, बुद्धिमान् प्रह्युद और सहाद नामक चार पुत्र हुए जो दैत्यवेशको बढ़ानेबाले थे ॥ १४२ ॥

ज्योतिःदशस्यम् कहा है—

सिंहिका चाभवत्कन्या विप्रचित्तेः परिप्रहः ॥ १४१

संद्वादश्च पहाबीर्या दैत्यवंशविवर्द्धनाः ॥ १४२

हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः प्रधितीजसः।

अनुद्वादश द्वादश प्रद्वादशैव बुद्धिमान्।

वाताय कपिरुव विश्वदातमायातिरुवेहिता। पीता वर्षाय विश्लेख दुर्भिक्षाय सिता भवेत् ॥

अर्थात् कपिल (भूरी) वर्णकी बिजली बायु स्मनेवाली, अत्यन्त लोहित भूप विकालनेवाली, पीतवर्णा पृष्टि लनेवाली और सिता (धेत) दुर्भिशकी सूचना देनेवाली होती है।

तेषां मध्ये महाभाग सर्वत्र समदुग्वशी । प्रहादः परमां भक्ति य उवाच जनार्दने ॥ १४३ दैत्येन्द्रदीपितो वहिः सर्वाङ्गोपचितो हिज । न ददाह च यं वित्र वासुदेवे हृदि स्थिते ॥ १४४ महार्णवान्तः सिलले स्थितस्य चलतो मही । चचाल सकला यस्य पाशबद्धस्य धीमतः ॥ १४५ न भिन्नं विविधैः शस्त्रैर्यस्य दैत्येन्द्रपातितैः । शरीरमद्भिकठिनं सर्वत्राच्युतचेतसः ॥ १४६ विषानलोज्ज्वलमुखा यस्य दैत्यप्रचोदिताः । नान्ताय सर्पंपतयो बभूवुरुरुतेजसः ॥ १४७ दौलैराकान्तदेहोऽपि यः स्मरन्पुरुषोत्तमम् । तत्याज नात्मनः प्राणान् विष्णुस्मरणदंशितः ॥ १४८ पतन्तम्बादवनिर्वम्पेत्य महामतिम् । दधार दैत्यपतिना क्षिप्तं स्वर्गनिवासिना ॥ १४९ यस्य संशोषको वायुदेहे दैत्येन्द्रयोजितः । अवाप सङ्क्षयं सद्यश्चित्तस्ये मधुसुद्दने ॥ १५० विषाणभङ्गमुन्यत्ता यदहानि च दियाजाः । यस्य वक्षःस्थले प्राप्ता दैत्येन्द्रपरिणामिताः ॥ १५१ यस्य चोत्पादिता कृत्या दैत्यराजपुरोहितैः । बभूव नान्ताय पुरा गोविन्दासक्तचेतसः ॥ १५२ शम्बरस्य च मायानां सहस्रमतिमायिनः । यस्मिन्प्रयुक्तं चक्रेण कृष्णस्य वितथीकृतम् ॥ १५३ दैत्येन्द्रसुदोपहृतं यस्य हालाहुलं विषम्। जरवामास मतिमानविकारममृतसरी ॥ १५४ समनेता जगत्यस्मिन्यः सर्वेञ्चेव जन्तुषु । यशात्मनि तशान्येषां परं मैत्रगुणान्वितः ॥ १५५ धर्मात्मा सत्यशौर्यादिगुणानामाकरः परः ।

उपमानमशेषाणां साधूनां यः सदाभवत् ॥ १५६

हे महाभाग ! उनमें प्रह्लादबी सर्वत्र समदर्शी और जितेन्द्रिय थे, जिन्होंने श्रीविष्णुभगवानुकी परम भक्तिका वर्णन किया था॥ १४३॥ जिनको दैल्यराजद्वारा दीप्त किये हुए अग्रिने उनके सर्वाहुमें ज्याप होकर भी, हदयमें वासुदेव भगवानुके स्थित रहनेसे नहीं जला पाया ॥ १४४ ॥ जिन महाबुद्धिमान्के पाशबद्ध होकर समुद्रके जलमें पड़े-पड़े इधर-उधर हिलने-इलनेसे सारी पृथिची हिलने लगी थी ॥ १४५॥ जिनका पर्यतके समान कटोर शरीर, सर्वत्र भगवधित रहनेके कारण दैत्यराजके चेलाये हुए अन्न-रान्नोंसे भी छिन्न-मिन्न नहीं हुआ ॥ १४६ ॥ दैल्पराजद्वारा प्रेरित विषाग्रिसे प्रज्वलित मुखवाले सर्प भी जिन महातेजस्वीका अन्त नहीं कर सके ॥ १४७ ॥ जिन्होंने भगवत्स्मरण्डूपी कवच धारण किये रहनेके कारण पुरुषोत्तम भगवानुका स्मरण करते हुए पत्थरोंकी मार पड़नेपर भी अपने प्राणीको नहीं छोड़ा ॥ १४८ ॥ स्वर्गीनेवासी दैलपतिद्वारा ऊपरसे गिराये जानेपर जिन महामतिको पृथिवीने पास जाकर बीचहीमें अपनी गोदमें धारण कर लिया ॥ १४९ ॥ चित्तमें श्रीमधुसूदनभगवान्के स्थित रहनेसे दैलराजका नियक किया हुआ सबका शोषण करनेवात्स्र वायु विनके शरीरमें लगनेसे शान्त हो गया ॥ १५० ॥ दैत्येन्द्रद्वारा आक्रमणके लिये नियुक्त उत्पत्त दियाजीके दाँत जिनके वक्षःस्थलमें लगनेसे ट्रंट गये और उनका सारा मद चुर्ण हो गया ॥ १५१ ॥ पूर्वकारुमें दैत्यराजके पुरोहितोंकी उत्पन्न की हुई कृत्या भी जिन गोविन्दासक्तवित मक्तराजके अन्तका कारण नहीं हो सकी॥ १५२॥ जिनके उत्पर प्रयुक्त की हुई अति मायाबी शम्बरास्त्रकी हजारों माबाएँ श्रीकृष्णचन्द्रके चक्रसे व्यर्थ हो गर्यो ॥ १५३ ॥ जिन मतिमान् और निर्मत्सरने दैल्यराजके रसोइयोके छाये हुए हलाहरू विषको निर्विकार-भावसे पचा लिया ॥ १५४ ॥ जो इस संसारमें समस्त प्राणियोंके प्रति समानचित्त और अपने समान ही दूसरोंके लिये भी परमप्रेमयुक्त थे ॥ १५५ ॥ और जो परम धर्मात्या महापुरुष, सस्य एवं शौर्य आदि गुणोंकी सानि तथा समस्त साधु-पुरुषोंके रूपे। उपमाखरूप हुए थे ॥ १५६ ॥

· 下面 前 可行的

सोलहवाँ अध्याय

₹

X

Ċη,

नृसिंहाबतारविषयक प्रश्न

श्रीमैत्रेय उवाच

किषितो भवता वंशो मानवानां महात्मनाम् । कारणं चास्य जगतो विष्णुरेव सनातनः ॥ यत्त्वेतद् भगवानाह प्रह्लादं दैत्यसत्तमम् । द्दाह नाम्निनंस्रेश्च क्षुण्णास्तत्याज जीवितम् ॥ जगाम वसुधा क्षोभं यत्राव्यिसलिले स्थिते । पाशैर्बद्धे विचलित विक्षिप्ताङ्गैः समाहता ॥ शैलैराक्रान्तदेहोऽपि न ममार च यः पुरा । त्वया चातीव माहात्य्यं कथितं यस्य धीमतः ॥ श्रोतुमिन्छामि यस्यैतद्यरितं दीप्ततेजसः ॥ श्रोतुमिन्छामि यस्यैतद्यरितं दीप्ततेजसः ॥ किन्निमित्तमसौ शर्छविक्षिप्तो दितिजैर्मृने । किमर्थं चाव्यसलिले विक्षिप्तो धर्मतत्यरः ॥ आक्रान्तः पर्वतैः कस्मादृष्टश्चैव महोरगैः । श्रिप्तःकिमद्रिशिखरालिकं वा पावकसञ्चये ॥

संशोषकोऽनिलश्चास्य प्रयुक्तः कि महासुरैः ॥ ८ कृत्यां च दैत्यगुरवो युयुजुस्तत्र कि मुने । शम्बरश्चापि मायानां सहस्रं कि प्रयुक्तवान् ॥ ९

दिग्दन्तिनां दन्तभूमिं स च कस्मान्निरूपितः ।

हालाहलं विषयहो दैत्यसूदैर्महात्पनः । कस्माहतं विनाशाय यञ्जीर्णं तेन धीमता ॥ १०

एतत्सर्व महाभाग प्रह्लादस्य महात्मनः । चरितं श्रोतुमिच्छामि महामाहात्म्यसूचकम् ॥ ११ न हि.कौतुहलं तत्र यहैत्यैनं हतो हि सः ।

न ह_्कातूहरू तत्र यहत्यन हता ।ह सः । अनन्यमनसो विष्णो कः समर्थो निपातने ॥ १२ तस्मिन्धर्मपरे नित्यं केशवाराधनोद्यते ।

स्ववंशप्रभवैदेंत्यैः कृतो द्वेषोऽतिदुष्करः ॥ १३ धर्मात्मनि महाभागे विष्णुभक्ते विमत्सरे ।

दैतेयैः प्रहतं कस्मात्तन्यमाख्यातुमहीसि ॥ १४

श्रीमैंत्रेयजी बोले—आपने महात्म मनुपुरोके वंशोका वर्णन किया और यह भी बताया कि इस जगत्के सनातन बारण भगवान् विष्णु ही हैं॥१॥ किन्तु, भगवन् ! आपने जो कहा कि दैत्यश्रेष्ठ प्रह्मद्वजीको न तो

अग्निन ही अस्म किया और न उन्होंने अस्न-शस्त्रोंसे आधान किये जानेपर ही अपने प्राणीको छोड़ा ॥ २ ॥ तथा पाशबद्ध होकर समुद्रके जलमें पड़े रहनेपर उनके हिल्दो-डुलते हुए अंगोसे आहत होकर पृथियो डगमणाने लगी ॥ ३ ॥ और शरीरपर पत्थरोंकी बौखर पदनेपर भी ये

नहीं मरे। इस प्रकार जिन यहाबुद्धिमान्का आफ्ने बहुत ही माहात्य वर्णन किया है। ४॥ हे मुने! जिन अति तेजस्वी माहात्य वर्णन किया है। ४॥ हे मुने! जिन अति तेजस्वी माहात्मके ऐसे चरित्र हैं, मैं उन परम विष्णुशक्तका अतुलित प्रभाव सुनना चाहता हूँ॥ ५॥ हे मुनियर! वे तो चड़े ही धर्मपरायण थे; फिर दैत्योंने उन्हें क्यों अख-शखोंसे पीड़ित किया और क्यों समुद्रके जलमें डाला ?॥ ६॥ उन्होंने किसलिये उन्हें पर्वतींसे दवाया ? किस कारण सपींसे डैसाया ? क्यों पर्वतिशवस्से गिराया

दिग्पजोंके दॉतोंसे क्यों रूधवाया और क्यों सर्वाशेषक वायुको उनके लिये नियुक्त किया ? ॥ ८ ॥ है भुने ! उनपर दैल्यपुरुओंने किसलिये कृत्याका प्रयोग किया और शम्बरासुरने क्यों अपनी सहस्रों मायाओंका बार किया ? ॥ ९ ॥ उन महात्माको मारनेके लिये दैल्यराजुके रसोइयोंने, जिसे के महाबुद्धिमान पद्मा गये थे ऐसा

हलाहल विष क्यों दिया ? ॥ १० ॥

और क्यों आंग्रमें इल्बाया ? ॥ ७ ॥ उन महादैत्येनि उन्हें

दे महाभाग ! महात्मा प्रहादका यह संप्पूर्ण चरित्र, जो उनके महान् पाहात्यका सूचक है, मैं सुनना चाहता हूँ ॥ ११ ॥ यदि दैत्यगण उन्हें नहीं मार सके तो इसका मुझे कोई आक्षर्य नहीं है, क्योंकि जिसका मन अनत्यभावसे भगवान् विष्णुमें रूना हुआ है उसको भला कौन मार सकता है ? ॥ १२ ॥ [आखर्य तो इसीका है कि] जो नित्यधर्मपरायण और भगवदाराधनामें तत्पर रहते थे, उनसे उनके ही कुलमें उत्पन्न हुए दैत्योंने ऐसा अति दुष्कर हेण किया ! [क्योंकि ऐसे समदर्शी और धर्मधीरु पुरुषोंसे तो किसीका भी द्वेष होना अत्यन्त कठिन है] ॥ १३ ॥ उन धर्मात्मा, महाभाग, मत्सरहीन विष्णु-भक्तको दैत्योंने किस कारणसे इतना कह दिया, सो आप मुझसे कहिये ॥ १४ ॥ प्रहरित्त महात्मानो विपक्षा अपि नेदृरो । गुणैस्समन्विते साधौ कि पुनर्यः स्वपक्षजः ॥ १५ तदेतत्कथ्यतां सर्वं विस्तरान्युनिपुङ्गव । दैत्येश्वरस्य चरितं श्रोतुमिच्छाम्यशेषतः ॥ १६ महाब्माकोग तो ऐसे गुण-सम्पन्न साधु पुरुषोंके विपक्षी होनेपर भी उनपर किसी प्रकारका प्रहार नहीं करते. फिर स्वपक्षमें होनेपर तो कहना ही क्या है ? ॥ १५ ॥ इसिक्स्ये हे मुनिश्रेष्ठ ! यह सम्पूर्ण कृतकत विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिये । मैं उन दैत्यराजका सम्पूर्ण चरित्र सुनना चाहता है ॥ १६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे षोडशोऽभ्यायः ॥ १६ ॥

सतरहवाँ अध्याय

हिरण्यकशिपुका दिग्विजय और प्रह्लाद-चरित

19

श्रीपराश्चर उथाच

मैत्रेय श्रूयतां सम्बक् चरितं तस्य धीमतः । प्रह्लादेखः सदोदारचरितस्य महात्मनः ॥ दितेः पुत्रो महाबीयों हिरण्यकशिपुः पुरा । त्रैलोक्यं वशमानिन्ये ब्रह्मणो वरदर्पितः ॥ इन्द्रत्यमकरोद्दैत्यः स चासीत्सविता स्वयम् ।

वायुरित्ररणं नाथः सोमश्चाभूत्महासुरः ॥ धनानामधिपः सोऽभूत्स एवासीत्स्वयं यमः । यज्ञभागानशेषांस्तु स स्वयं बुभुजेऽसुरः ॥

देवाः स्वर्गं परित्यन्य तत्त्रासान्मुनिसत्तम । विचेस्रस्वनौ सर्वे बिश्राणा मानुषीं तनुम् ॥

जित्वा त्रिभुवनं सर्वं त्रैलोक्यैश्वर्यदर्पितः । उपगीयमानो गन्धर्वेर्बुभुजे विषयान्त्रियान् ॥

पानासक्तं महात्मानं हिरण्यकशिपुं तदा । उपासाञ्चक्रिरे सर्वे सिद्धगन्धर्वपन्नगाः ॥

अवादयम् जगुशान्ये जयशब्दं तथापरे । दैत्यराजस्य पुरतशक्तः सिद्धा मुदान्विताः ॥

तत्र प्रनृत्ताप्सरसि स्फाटिकाभ्रमयेऽसुरः । पपौ पानं मुदा युक्तः प्रासादे सुमनोहरे ॥

तस्य पुत्रो महाभागः प्रह्लादो नाम नामतः । पपाठ बालपाठ्यानि गुरुगेहङ्गतोऽर्भकः ॥ १०

एकदा तु स धर्मात्मा जगाम गुरुणा सह ।

पानासक्तस्य पुरतः पितुर्दैत्यपतेस्तदा ॥ ११

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय ! उन सर्वदा उदारचरित परमबुद्धिमान् महात्मा प्रहादजीका चरित्र तुम

ध्यानपूर्वक श्रवण करो ॥ १ ॥ पूर्वकालमें दितिके पुत्र महाबली हिरण्यकशिपुरे, ब्रह्माओंके वरसे गर्वयुक्त (सशक्त) होकर सम्पूर्ण विस्त्रेकीको अपने वशोधूत कर लिया था ॥ २ ॥ वह दैत्य इन्द्रपदका भोग करता था। वह

महान् असुर स्वयं ही सूर्य, बायु, आप्ति, वरुण और चन्द्रमा बना हुआ था ॥ ३ ॥ वह स्वयं ही क्वेर और यमराज भी था और चह असुर स्वयं ही सम्पूर्ण सक्ष-भागीको मोगुना

था॥ ४ ॥ हे मुनिसत्तन ! उसके भयसे देवगण स्वर्गको छोड़कर मनुष्य-शरीर धारणकर भूमण्डलमें विचरते रहने थे॥ ५ ॥ इस प्रकार सम्पूर्ण जिलोकीको जीतकर त्रिभुवनके वैभवसे गर्वित हुआ और गरावोंसे अपनी

स्तुति सुनता हुआ वह अपने अभीष्ट भौगोंको भोगता था॥६॥

ठस समय उस महापानासक्त महाकाय हिरण्यकदिएको ही समस्त सिद्ध, गन्धर्व और नाग आदि उपासना करते थे॥ ७॥ उस दैत्यराजके सामने कोई सिद्धगण तो बाजे बजाकर उसका यहाँगान करते और कोई अति प्रसान होकर ज्याजयकार करते॥ ८॥ तथा वह असुरग्रज वहाँ स्फटिक एवं अभ-शिलाके बने हुए मनोहर महलमें, जहाँ अप्सराओंकर उत्तम नृत्य हुआ करता था, प्रसानताके साथ महापान करता रहता था॥ ९॥ उसका प्रहाद नामक महाभाग्यकान् पुत्र था। यह बालक गुल्के यहाँ बाकर बालोचित पाठ पड़ने लगा॥ १०॥ एक दिन वह धर्मात्मा बालक गुल्डीके साथ अपने पिता दैत्यराजके पास-गना जो उस समय पादप्रणामावनतं तमुखाप्य पिता सुतम् । हिरण्यकशिपुः प्राह प्रह्मादममितोजसम् ॥ १२ *हिरण्यकशिपुःवाच*

पट्यता भवता वत्स सारभूतं सुभावितम् । कालेनैतावता यत्ते सदोद्युक्तेन शिक्षितम् ॥ १३ प्रहाट उथान

श्रूयतां तात वक्ष्यामि सारभूतं तवाज्ञया । समाहितमना भूत्वा यन्मे चेतस्यवस्थितम् ॥ १४ अनादिमध्यान्तमजपवृद्धिक्षयमच्युतम् । प्रणतोऽस्म्यन्तसन्तानं सर्वकारणकारणम् ॥ १५ श्रीपरशर उन्तम

एतत्रिशम्य दैत्येन्द्रः सकोपो रक्तलोचनः । विलोक्य तद्गुरुं प्राह स्फुरिताधरपल्लवः ॥ १६ *हिरण्यवा*शिपुरुवाच

ब्रह्मबन्धो किमेतते विपक्षस्तुतिसंहितम् । असारं ग्राहितो बालो मामवज्ञाय दुर्मते ॥ १७ गुरस्यान

दैत्येश्वर न कोपस्य वशमायन्तुमहीसि । ममोपदेशजनितं नायं वदति ते सुतः ॥ १८ हिरणकशिपुरुवान

अनुशिष्टोऽसि केनेदृग्वत्स प्रह्लाद् कथ्यताम् । मयोपदिष्टं नेत्येष प्रव्रवीति गुरुस्तव ॥ १९

प्रहाद उठाच

शास्ता विष्णुरशेषस्य जगतो यो हदि स्थितः । तमृते परमात्पानं तात कः केन शास्यते ॥ २०

डिरण्यकशित्युरुवाच

कोऽयं विष्णुः सुदुर्बुद्धे यं ब्रवीवि पुनः पुनः । जगतामीश्वरस्थेह पुरतः प्रसभं मम ॥ २१ प्रकृत उकान

न शब्दगोचरं यस्य योगिध्येयं परं पदम् । यतो यश्च स्वयं विश्वं स विष्णुः परमेश्वरः ॥ २२

हिरण्यकश्चिपुरुवाच

परमेश्वरसंज्ञोऽज्ञ किमन्यो मय्यवस्थिते । तथापि मर्तुकामस्त्वं प्रव्रवीषि पुनः पुनः ॥ २३ मरापानमें रूगा हुआ था॥ ११॥ तब, अपने चरणॉमें भुके हुए अपने परम तेजस्वी पुत्र प्रह्लादजीको उठाकर पिता हिरण्यकशिपुने कहा ॥ १२॥

हिरण्यकदिापु बोला—वत्स ! अवत्क अध्ययनमें निरन्तर तत्वर रहकर तुमने जो कुछ पढ़ा है उसका सारभूत शुभ भाषण तमें सुनाओ ॥ १३ ॥

प्रह्लादजी खोले—पिताजी ! मेरे मनमें जो सबके सारांदारूपसे स्थित है वह मैं आपकी आझानुसार सुनाता हूँ, सावधान होकर सुनिये ॥ १४ ॥ जो आदि, मध्य और अन्तसे रहित, अजन्मा, वृद्धि-क्षय-शून्य और अच्युत हैं, समस्त कारणोंके कारण तथा जगत्के स्थिति और अन्तकर्ता उन श्रीहरिको मैं प्रणाम करता हूँ ॥ १५ ॥

श्रीपराशरजी बोले—यह सुन दैस्यक हिरण्यकशिपुने झोधसे तेत्र लाल कर प्रहादके गुरुकी और देसकर काँपते हुए ओटॉसे कहा॥ १६॥

हिरण्यकशिपु बोत्म—रे दुर्वृद्धि ब्राह्मणाधम ! यह नगा ? तूने मेरी अवज्ञा कर इस बालकको मेरे विपक्षीकी सुतिसे युक्त असार शिक्षा दो है । ॥ १७ ॥

गुरुजीने कहा—दैखराज ! आपको क्रोधके वद्मीभूत न होना चाहिये। आपका यह पुत्र मेरी सिखायी हुई बात नहीं कह रहा है॥ १८॥

हिरण्यकशिषु खोला — बेटा प्रहाद ! बताओं तो तुमको यह शिक्षा किसने दी हैं ? तुम्हारे गुरुजी कहते हैं कि मैंने तो इसे ऐसा उपदेश दिया नहीं है ॥ १९ ॥

प्रह्वादजी बोले—पिताजी ! हदयमें स्थित भगवान् विष्णु ही तो सम्पूर्ण जगत्के उपदेशक हैं। उन परमात्माको छोड़कर और कौन किसीको कुछ सिखा सकता है ?॥ २०॥

हिरण्यकशिषु बोला — अरे मूर्स ! जिस विष्णुका तू मुझ जगदीश्वरके सामने धृष्टतापूर्वक निश्शक होकर बारम्बार वर्णन करता है, वह कीन है ? ॥ २१ ॥

प्रहादजी बोले—योगियोंके ध्यान करनेयोग्य जिसका परमपद वाणीका विषय नहीं हो सकता तथा जिससे विश्व प्रकट हुआ है और जो स्वयं विश्वरूप है वह परमेश्वर ही विष्णु है ॥ २२ ॥

हिरण्यकदिायु बोला—अरे मूट ! मेरे रहते हुए और औत परमेश्वर कहा जा सकता है ? फिर भी तू मौतके मुखमें जानेकी इच्छासे जारण्यार ऐसा बक रहा है ॥ २३ ॥ अहार डवान

न केवलं तात मप प्रजानां स ब्रह्मभूतो भवतश्च विष्णुः ।

विद्याता परमेश्वरश्च धातः

प्रसीद कोपं कुरुषे किमर्थम् ॥ २४

हिरण्यकदि।पुरुवाच

प्रविष्टः कोऽस्य हृदये दुर्बुद्धेरतिपापकृत्। येनेदशान्यसाधृनि वदत्याविष्टमानसः ॥ २५

प्रहाद उचान

न केवलं मद्धृदयं स विद्यु-

राक्रम्य लोकानस्विलानवस्थितः । स मां त्यदादींश्च पितस्समस्ता-

न्समस्तचेष्टास् युनक्ति सर्वगः ॥ २६

हिरण्यकदिग्एस्याच

निष्कास्यतामयं पापः शास्यतां च गुरोगृहे । योजितो दुर्मतिः केन विपक्षविषयसुतौ ॥ २७

श्रीपराध्य उत्ताच

इत्युक्तोऽसौ तदा दैत्यैनीतो गुरुगृहं पुनः। जप्राह विद्यामनिशं गुरुश्रुषणोद्यतः ॥ २८

कालेऽतीतेऽपि महति प्रह्वादमसुरेश्वरः ।

समाह्याव्रवीदाधा कावित्युत्रक गीयताम् ॥ २९

प्रहाद खवाच

प्रधानपुरुषौ यतश्चेतद्यराचरम् । कारणं सकलस्यास्य स नो विष्णुः प्रसीदतु ॥ ३०

हिरण्यकतित्पुरुवाच

दुरात्मा वध्यतामेष नानेनार्थोऽस्ति जीवता ।

स्वपश्चहानिकर्तृत्वाद्यः कुलाङ्गारतां गतः ॥ ३१

श्रीपराशर उद्याच

इत्याज्ञप्रास्ततस्तेन प्रगृहीतमहायुधाः ।

उद्यतास्तस्य नाशाय दैत्याः शतसहस्रशः ॥ ३२

महाद उदान

विष्णुः शस्त्रेषु युष्मासु मयि चासौ व्यवस्थितः ।

दैतेयास्तेन सत्येन माक्रमन्दायुधानि मे ॥ ३३

प्रहादनी बोले—हे तात ! वह ब्रह्मभूत विष्णु तो केवल मेरा ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण प्रजा और आपका भी कर्ता, दियन्ता और परमेखर है। आप प्रसन्न होइये, व्यथं क्रीध क्यों करते हैं ॥ २४ ॥

हिरण्यकशिपु बोला-अरे कौन पापी इस दुर्बुद्धि बालकके हृदयमें घुस बैठा है जिससे आविष्ट-

चित्त होकर यह ऐसे अमङ्गल वचन बोलता है ? ॥ २५ ॥ प्रह्लादजी बोले-पिताजी ! वे विष्णभगवान तो

भेरे ही हृदयभें नहीं, बल्कि सम्पूर्ण लोकोमें स्थित है। वे सर्वगामी तो पुसको, आप सबको और समस्त प्राणियोंको अपनी-अपनी चेष्टाओंमें प्रवृत्त करते हैं ॥ २६ ॥

हिरण्यकशिषु बोला-इस पापीको यहाँसे निकालो और गुरुके यहाँ हे जाकर इसका भली प्रकार शासन करो । इस दुर्मतिको न जाने किसने मेरे विपक्षीकी प्रशंसामें नियुक्त कर दिया है ? ॥ २७ ॥

श्रीपराशरजी बोले-उसके ऐसा कहनेपर

दैलगण उस बालकको फिर गुरुजीके यहाँ छे गये और वे वहाँ गुरुजीकी रात-दिन भारी प्रकार सेवा-शुश्रूण करते हुए विद्याध्ययन करने लगे ॥ २८ ॥ बहुत काल व्यतीत हो जानेपर दैत्यराजने प्रहादजीको फिर बल्जमा और कहा---'बेटा ! आज कोई गाथा (कथा) सुनाओं ॥ २९ ॥

प्रहादजी बोले--जिनसे प्रधान, पुरुष और यह चराचर जगत् उत्पन्न हुआ है वे सक्क प्रपन्नके कारण श्रीविष्णुभगवान् हमपर प्रसन्न हो ॥ ३० ॥

हिरण्यकशिषु बोला---- और ! यह बढ़ा दुससा है ! इसको मार डालो; अब इसके जीनेसे कोई लाभ नहीं है, क्योंकि स्वपक्षकी हानि करनेवाला होनेसे यह हो अपने कुलके लिये अंगाररूप हो गया है ॥ ३१ ॥

श्रीपराशरजी बोल्टे— उसकी ऐसी आज्ञा होनेपर सैकड़ो-हजारों दैत्यगण बड़े-बड़े अख-दास लेकर उन्हें मारनेके लिये तैयार हुए ॥ ३२ ॥

प्रहाद्गी बोले-अरे दैत्यो ! भगवान् विष्णु तो शस्त्रोमें, तुपलोगोंमें और मुद्रामें—सर्वत्र ही रिश्वत हैं। इस सत्यके प्रभावसे इन अस्त्र-शखोंका पेरे ऊपर कोई प्रमाय न हो ॥ ३३ ॥ 🕟 🛸 🦈

श्रीपरादार उचान

ततस्तैरशतशो दैत्यैः शस्त्रीधैसहतोऽपि सन् । नावाप वेदनामल्पामभूखैव युनर्नवः ॥ ३४

हिरम्बकतिपुरुवाच

दुर्बुद्धे विनिवर्तस्व वैरिपश्चस्तवादतः । अभवं ते प्रयच्छापि मातिमृहमतिर्भव ॥ ३५

प्रह्माद उपाच

भयं भयानामपद्यरिणि स्थिते

मनस्यनन्ते भम कुत्र तिष्ठति ।

यस्मिन्स्पते जन्मजरात्तकादि-

भयानि सर्वाण्यपयान्ति तात ॥ ३६

हिरण्यकशिपुरुवाच

भो भो सर्पाः दुराचारमेनमत्यन्तदुर्मतिम् । विषज्वालाकुलैर्वक्त्रैः सद्यो नयत सङ्गयम् ॥ ३७

श्रीपसशर उक्षाच

इत्युक्तास्ते ततः सर्पाः कुहकास्तक्षकादयः ।

अदशन्त समस्तेषु गात्रेषुतिविषोत्वणाः ॥ ३८

स त्वासक्तमतिः कृष्णे दश्यमानो महोरगैः ।

न विवेदात्मनो गात्रं तत्स्मृत्याह्वादसुस्थितः ॥ ३९ सर्पा कतः

दंष्ट्रा विशोर्णा मणयः स्फुटन्ति

फणेषु तापो हृदयेषु कम्पः।

नास्य त्यचः स्वरूपमपीह भिन्न

प्रशाधि दैत्येश्वर कार्यमन्यत् ॥ ४०

हिरण्यक्रिशुरुवाच

हे दिगाजाः सङ्कटदत्तमिश्रा

इतैनमस्मद्रिपुपक्षभिन्नम्

तजा विनाशाय भवन्ति तस्य

यथाऽरणेः प्रज्वलितो हुतादाः ॥ ४१

औपराक्त स्वाच

ततः स दिगाजैबांलो भूभृच्छिखरसन्निभैः ।

पातितो धरणीपृष्ठे विषाणैर्वावपीडित: ॥ ४२

स्परतस्तस्य गोविन्दमिभदन्ताः सहस्रदाः।

द्मीर्णा वक्षःस्थलं प्राप्य स प्राह पितरं ततः ॥ ४३

श्रीपराशरकीने कहा—तब तो उन सैकड़ों दैलोंके शख-समृहका आपात होनेपर पी उनको तनिक-सी पी बेदना न हुई, वे फिर पी ज्यों-के-त्यों नवीन बळ-सम्पन्न ही रहे ॥ ३४॥ —

हिरण्यकश्चिषु बोला—रे दुर्बुद्धे ! अब तू विपक्षीकी स्तृति करना छोड़ दे; जा, मैं तुझे अगय-दान देता हूं, अब और अधिक नादान मत हो ॥ ३५॥

प्रह्मादजी बोले—हें तात ! जिनके स्मरणमानसे जन्म, जरा और मृत्यु आदिके समस्त भय दूर हो जाते हैं, उन सकल-भयहारी अनन्तके हृदयमें स्थित रहते पुझे भय कहाँ रह सकता है॥ ३६॥

हिरण्यकशिषु बोला—अरे सर्पो । इस अत्यन्त दुर्बुद्धि और दुराचारीको अपने विधाधि-सन्तप्त मुलोसे काटकर शोध हो नष्ट कर दो ॥३७॥

श्रीपराद्मरजी बोले — ऐसी आज्ञा होनेपर अतिकूर और विषयर तक्षक आदि संपानि उनके समस्त अंपोंमें काटा ॥ ३८ ॥ किन्तु उन्हें तो श्रीकृष्णचन्द्रमें आसक्त-चित्त रहनेके कारण भगवत्स्मरणके परमानन्द्रमें डूबे रहनेसे उन महासंपंकि काटनेपर भी अपने दारीरकी कोई सुधि नहीं हुई ॥ ३९ ॥

सर्प बोले --- हे दैत्यराज ! देखो, हमारो दाहें टूट गर्थी, मणियाँ चटखने लगीं, फणोंने पीड़ा होने लगी और हृदय कॉपने लगा, तथापि इसकी लगा तो जरा भी नहीं कटी। इसलिये अब आप हमें कोई और कार्य बताहरे ॥ ४०॥

हिरण्यकशिषु बोला—हे दिणली ! तुम सब अपने संबीण दाँतोंको मिलाकर मेरे शतु-पश्चारा [बहकाकर] मुझसे विमुख किये हुए इस बालकको मार डालो । देखो, जैसे अरणीसे उत्पन्न हुआ अग्नि उसीको जला डालता है उसी प्रकार कोई-कोई जिससे उत्पन्न होते हैं उसीके नहा करनेवाले हो जाते हैं ॥ ४१ ॥

श्रीपराशरजी बोले—तथ पर्वत-शिलाके समान विशालकाय दिग्गजोंने उस बालकको पृथिवीपर पटककर अपने दाँतोंसे खूब ग्रैंदा ॥ ४२ ॥ किन्तु श्रीगोविन्दका स्मरण करते रहनेसे हाथियोंके हजारी दाँत उनके वक्षःस्थलसे टकराकर टूट गये; तब उन्होंने पिता दत्ता गजानां कुलिशायनिष्ठराः शीर्णा यदेते न बलं ममैतत्।

महाविपत्तापविनाशनोऽयं

जनार्दनानुस्मरणानुभावः

11.88

हिरण्यकशिपुरुवाच

ज्वाल्यतामस्रा बह्रिरपसर्पत दिगाजाः । वायो समेधयामि त्वं दहातामेष पापकत् ॥ ४५

श्रीपराशर उवाच

महाकाष्ट्रचयस्थं तमसूरेन्द्रसूतं ततः । प्रज्वाल्य दानवा वहि ददहः स्वामिनोदिताः ॥ ४६

प्रहाद उवाच

तातैष बहिः पवनेरितोऽपि

न मां दहत्यत्र समन्ततोऽहम्। पश्यामि पद्मास्तरणास्तुतानि

शीतानि सर्वाणि दिशाम्पुखानि ॥ ४७

श्रीपराशस द्याच

अथ दैत्येश्वरं प्रोचुर्भागंवस्यात्मजा द्विजाः । पुरोहिता महात्मानः साम्रा संस्तुय वाग्पिनः ॥ ४८

पुरोहिता ऊच्-

राजन्नियम्बतां कोपो बालेऽपि तनये निजे ।

कोपो देवनिकायेषु तेषु ते सफलो यतः ॥ ४९ तथातथैनं बालं ते शासितारो वयं नृप ।

यथा विपक्षनाञ्चाय विनीतस्ते भविष्यति ॥ ५०

बालत्वं सर्वदोषाणां दैत्यराजास्पदं यतः । ततोऽत्र कोपमत्यर्थ योक्तमईसि नार्भके ॥ ५१

न त्यक्ष्यति हरेः पक्षमस्माकं वचनाद्यदि ।

ततः कृत्यां वधायास्य करिय्यामोऽनिवर्त्तिनीय् ॥ ५२

श्रीपराज्ञार उवाच

एवमभ्यर्थितस्तैस्तु दैत्यराजः पुरोहितैः। दैत्यैनिष्कासयामास पुत्रं पावकसञ्चयात् ॥ ५३

ततो गुरुगृहे बालः स वसन्बालदानवान् ।

अध्यापयामास मुहरुपदेशान्तरे गुरोः ॥ ५४

हिरण्यकशिपुसे कहा — ॥ ४३ ॥ "ये जो हाथियोंक क्कफ समान कठोर दाँत ट्रट गये हैं इसमें मेरा कोई बल नहीं हैं; यह तो श्रीजनार्दम्भगवान्के महाविपत्ति और

क्रेशोंके नष्ट करनेवाले स्मुरणका ही प्रभाव है' ॥ ४४ ॥ हिरण्यकशिषु बोला-अरे दिणजो ! तुम हट जाओ । दैत्यगण । तुम अग्नि जल्मओ, और हे बाबू । तुम

अग्रिको प्रज्यस्तित करो जिससे इस पापीको जला डाला आध्या ४५ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले-तब अपने खामोकी आज्ञासे दानवगण काहके एक बड़े डेएमें स्थित उस असूर राजकुमारको आग्नि प्रज्वलित् करके जलाने लगे ॥ ४६ ॥

प्रहादजी बोले - है तात ! पवनसे प्रेरित हुआ भी यह अग्नि मुझे नहीं जलाता। मुझको तो सभी दिशाएँ ऐसी शीतल प्रतीत होती हैं मानो मेरे चारो ओर कमल बिछे हुए हो ॥ ४७ ॥ 🌼 🐃 🚉 🕬

श्रीपराद्यारजी खोले--तदनन्तर, शुक्रजीके पुत्र बड़े वाग्मी महात्मा [चण्डामर्क आदि] प्रोहितगण सामनीतिसे दैत्यराजको बड़ाई करते हुए बोले॥ ४८॥

पुरोहित बोल्डे—हे राजन् ! अपने इस बालक

पुत्रके प्रति अपना क्रीथ ज्ञास कोजिये; आपको तो देवताओंपर ही क्रोध करना चाहिये, क्योंकि उसकी सफलता तो वहीं है ॥ ४९ ॥ हे राजन् ! हम आपके इस वालकको ऐसी शिक्षा देगे जिससे यह विपक्षके नाशका कारण होकर अधके प्रति अति विनीत हो. जायमा ॥ ५० ॥ हे दैत्यराज ! बाल्यावस्था तो सब प्रकारके दोपाँका आश्रय होती ही है, इसिल्ये आपको इस वासकपर अत्यन्त क्रोधका प्रयोग नहीं करना चाहिये ॥ ५१ ॥ यदि इमारे कहनेसे भी यह विष्णुका पक्ष नहीं छोड़ेगा तो हम इसको नष्ट करनेके लिये किसी प्रकार न

श्रीपराद्यारजीने कहा-पुरोहितोंके इस प्रकार प्रार्थना करनेपर दैल्यराजने दैल्योद्वारा प्रह्लादको अदिसमृहसे बाहर निकल्याया ॥ ५३ ॥ फिर प्रहादजी, गुरुजीके यहाँ रहते हुए उनके पढ़ा चुकनेपर अन्य दानवकुमारोंको बार-बार उपदेश देने लगे ॥ ५४ ॥

टलनेवाली कुला उत्पन्न करेंगे ॥ ५२ ॥

प्रहाद उवाच

श्रूयतां परमार्थो मे दैतेया दितिजात्मजाः।
न चान्यश्रैतन्मन्तव्यं नात्र लोभादिकारणम् ॥ ५५
जन्म बाल्यं ततः सर्वो जन्तः प्राप्नोति यौवनम् ।
अव्याहतैव भवति ततोऽनुदिवसं जरा ॥ ५६
ततश्च मृत्युमभ्येति जन्तुर्दैत्येश्वरात्मजाः ।
प्रत्यक्षं दृश्यते चैतदस्माकं भवतां तथा ॥ ५७
मृतस्य च पुनर्जन्म भवत्येतस् नान्यश्च ।
आगमोऽयं तथा यस् नोपादानं विनोद्धवः ॥ ५८
गर्भवासादि यावतु पुनर्जन्मोपपादनम् ।
समस्तावस्थकं तावदुः समेवावगम्यताम् ॥ ५९
श्रुतृष्णोपशमं तद्वजीताद्यपशमं सुखम् ।
मन्यते बालबुद्धित्वादुः समेव हि तत्युनः ॥ ६०
अत्यन्तिस्तिमताङ्गानां व्यायायेन सुखीवणाम् ।

क शरीरमशेषाणां श्लेब्यादीनां महाचयः । क कान्तिशोभासीन्दर्यस्मणीयादयो गुणाः ॥ ६२

भ्रान्तिज्ञानावृताक्षाणां दुःखमेव सुखायते ॥ ६१

भासासुक्पूयविण्मूत्रस्त्रायुमज्जास्थिसंहतौ ।

देहे चेत्प्रीतिमान् मूढो भविता नरकेऽप्यसौ ॥ ६३ अग्रेः शीतेन तोयस्य तृषा भक्तस्य च क्षुथा ।

क्रियते सुस्तकर्तृत्वं तद्विलोमस्य चेतरैः ॥ ६४

करोति हे दैत्यसुता यावन्मात्रं परिश्रहम् । तावन्यात्रं स एवास्य दुःसं चेतसि यच्छति ॥ ६५

वावन्यात्र स एवास्य दुःख चतास यच्छात ॥ ६५ यावतः कुरुते जन्तुः सम्बन्धान्यनसः प्रियान् ।

वावतः कुरुतं जन्तुः सम्बन्धान्मनसः ।प्रवान् । तावन्तोऽस्य निखन्यन्ते हृदये शोकशङ्कवः ॥ ६६

तावन्ताऽस्य निस्तन्यन्ते हृदये शकिशङ्कवः ॥ ६६ यद्यदगृहे तन्यनसि यत्र तत्रावतिष्ठतः ।

यद्यपृहं तन्मनास यत्र तत्रावातष्ठतः। नाशदाहोपकरणं तस्य तत्रैव तिष्ठति॥ ६७ प्रद्वादजी बोले—हे दैत्यकुलोत्पन्न असुर-बालको ! सुनो, मै तुन्हें परमार्थका उपदेश करता हूं, तुम इसे अन्यथा न समझना, क्योंकि मेरे ऐसा कहनेमें किसी प्रकारका लोगाँद

कारण नहीं है ॥ ५५ ॥ सभी जीव जन्म, बाल्यावस्था और फिर यौबन प्राप्त करते हैं, तत्पश्चात् दिन-दिन वृद्धावस्थाकी प्राप्ति भी अनिवार्य ही है ॥ ५६ ॥ और हे दैत्यराजकमारी !

फिर यह जीव मृत्युके मुखमें चल्त्र जाता है, यह हम और तुम सभी प्रत्यक्ष देखते हैं ॥ ५७ ॥ मरनेपर पुनर्जन्म होता है, यह

नियम भी कभी नहीं टल्ता। इस विषयमें [श्रुति-स्मृतिरूप] आजम भी प्रमाण है कि बिना उपादानके कोई वस्तु उत्पन्न नहीं होती* ॥ ५८॥ पुनर्जन्म प्राप्त करानेवारले गर्भवास आदि जितनी अवस्थाएँ हैं उन सबको दुःखरूप ही

जानो ॥ ५९ ॥ पनुष्य पूर्खताबश क्षुधा, तृष्णा और शीवादिकी शक्तिको सुख मानते हैं, परन्तु वास्तवमें तो वे दुःखमात्र ही हैं॥ ६० ॥ जिनका शरीर [वातादि दोषसे] अस्यन्त शिथिल हो जाता है उन्हें जिस प्रकार व्यायाम सुखप्रद प्रतीत

होता है उसी प्रकार जिनको दृष्टि भ्रान्तिज्ञानसे उँकी हुई है उन्हें दुःख हो सुखरूप जान पड़ता है ॥ ६१ ॥ अहो ! कहाँ तो कफ आदि महार्याणत पदार्थीका समूहरूप झग्रेर और कहाँ कान्ति, शोभा, सौन्दर्य एवं रमणीयता आदि दिख्य गण ? [तथापि

मनुष्य इस घृषित शरीरमें कान्ति आदिका आरोप कर सुख मानने लगता है] ॥ ६२ ॥ यदि किसी मृद पुरुषकी मांस, रुधिर, भीब, बिक्षा, मूत्र, सामु, भव्चा और अस्थिकोंके समूहरूप इस शरीरमें प्रीति हो सकती है तो उसे नरक भी प्रिय लग सकता है ॥ ६३ ॥ अग्नि, जल और भात शीत, तुन्ना और

भुधाके कारण ही सुखकारी होते हैं और इनके प्रतियोगी जरू

आदि भी अपनेसे भिन्न अग्नि आदिके कारण ही सुखके हेतु होते हैं ॥ ६४ ॥

है दैलकुमारो ! विषयोंका जितना-जितना संग्रह किया जाता है उतना-उतना हो वे मनुष्यके चित्तमे दुःख बढ़ाते हैं ॥ ६५ ॥ जीव अपने मनको प्रिय लगनेवाले जितने ही सम्बन्धोंको बढ़ाता जाता है उतने ही उसके हृदयमें शोकरूपी शल्प (काँटे) स्थिर होते जाते है ॥ ६६ ॥ घरमें जो कुछ धन-धान्यादि होते हैं मनुष्यके जहाँ-तहाँ (फरदेशमें) रहनेपर भी वे पदार्थ उसके वित्तमें बने रहते हैं, और उनके नाश और दाह आदिकी समग्री भी उसीमें मौजूद रहती है। [अर्थात् घरमें स्थित घदार्थोंक सुरक्षित रहनेपर भी मनःस्थित घदार्थेक नाश

^{*} यह पुतर्जन्म होनेमें युक्ति है क्योंकि जबतक पूर्व-जन्मके किये हुए, शुभादाभ कर्मरूप कारणका होना उ माना जाय तबतक वर्तमान जन्म भी सिद्ध नहीं हो सकता। इसी प्रकार, जब इस जन्ममें शुभाशुभका आरम्भ हुआ है तो इसका कार्यरूप पुनर्जन्म भी अवदय होगा।

जन्मन्यत्र महद्दुःखं भ्रियमाणस्य चापि तत् । यातनासु यमस्योत्रं गर्भसङ्क्रमणेषु च ॥ ६८ गर्भेषु सुखलेशोऽपि भवद्भिरनुमीयते। यदि तत्कथ्यतामेवं सर्वं दुःखमयं जगत्॥ ६९ तदेवमतिदुःखानामास्पदेऽत्र भवार्णवे । भवतां कथ्यते सत्यं विष्णुरेकः परायणः ॥ ७० मा जानीत वयं बाला देही देहेषु शाश्चतः । जरायौवनजन्माद्या धर्मा देहस्य नात्मनः ॥ ७१ बालोऽहं तावदिकातो यतिष्ये श्रेयसे युवा । युवाहं वार्द्धके प्राप्ते करिष्यास्यात्मनो हितम् ॥ ७२ वृद्धोऽहं मम कार्याणि समस्तानि न गोचरे । किं करिष्यामि मन्दात्मा समर्थेन न यत्कृतम् ॥ ७३ एवं दुराशया क्षिप्तमानसः पुरुषः सदा। श्रेयसोऽभिमुखं याति न कदाचित्पिपास्तिः ॥ ७४ बाल्ये क्रीडनकासक्ता यौवने विषयोन्मुखाः । अज्ञा नयन्यशक्त्या च वार्द्धकं समुपस्थितम् ॥ ७५ तस्माद्वाल्ये विवेकात्मा यतेत श्रेयसे सदा । बाल्ययौवनवृद्धाद्यैदेहभावैरसंयुतः ॥ ७६ तदेतह्ये मयाख्यातं यदि जानीत नानृतम्। तदस्मत्त्रीतये विष्णुः स्पर्यतां बन्धमुक्तिदः ॥ ७७ प्रयासः स्मरणे कोऽस्य स्मृतो यन्त्रति शोधनम् । पापक्षयश्च भवति स्मरती तमहर्निशम् ॥ ७८ सर्वभृतस्थिते तस्मिन्मतिमैत्री दिवानिशम् । भवतां जायतामेवं सर्वक्केशान्प्रहास्यथ ॥ ७९ तापत्रयेणाभिहतं बदेतदर्शिलं

तवा शोच्येषु भूतेषु द्वेषं प्राज्ञः करोति कः ॥ ८०

मुदं तदापि कुर्वीत हानिर्देषफलं यतः ॥ ८१

अञ्च भद्राणि भूतानि हीनशक्तिरहं परम्।

आदिकी भावनासे पदार्थ-नावाका दुःख प्राप्त हो आता है] ॥ ६७ ॥ इस प्रकार जीते-जी तो यहाँ महान् दुःख होता ही है, मरनेपर भी यम-सातनाओंका और गर्भ-प्रवेशका उप कष्ट भोगना पड़ता है॥ ६८॥ यदि तन्हें गर्भवासमें लेशमात्र भी सुसका अनुमान होता हो। तो कहो। सारा संसार इसी प्रकार अत्यन्त दुःखमय है ॥ ६९ ॥ इसल्यि दुःखोंके परम आश्रय इस संसार-समुद्रमें एकमात्र विष्णुभगवान् ही आप लोगोंकी परमगति हैं—यह मैं सर्वधा सत्य कहता है ॥ ७० ॥ ऐसा मत समझो कि हम तो अभी बालक हैं, क्वोंकि जरा, योवन और जन्म आदि अवस्थाएँ तो देहके ही धर्म हैं. शरीरका अधिष्ठाता आत्मा तो नित्य है, उसमे यह कोई धर्म नहीं है ॥ ७१ ॥ जो मनुष्य ऐसी दुसलाओंसे विक्सिप्रचित्त रहता है कि 'अभी मैं बालक हैं इसलिये इच्छानुसार खेल-कृद हूं, युवावस्था प्राप्त होनेपर कल्कण-साधनका यक्ष करूँगा।' [फिर युवा होनेपर कहता है कि] 'अभी तो मैं युवा हूँ, बुढ़ापेमें आत्मकल्याण कर लूँगा।' और [बुद्ध होनेपर सोचता है कि] 'अब मैं बुद्धा हो गया, अब तो मेरी इन्द्रियाँ अपने कर्मींधे प्रवृत्त ही नहीं होती, दारीरके दिशिष्ट हो जानेपर अब मैं क्या कर सकता है ? सामर्थ्य रहते तो मैंने कुछ किया ही नहीं।' वह अपने कल्याण-पथपर कभी अग्रसर नहीं होता; केवल गोग-तृष्णामें ही व्याकुल रहता है॥७२—७४॥ मुर्खलोग अपनी बाल्यावरधार्मे खेल-कृदमें छगे रहते हैं, युवावस्थामें विषयोंमें फैंस जाते हैं और बुढ़ाया आनेपर असे असमर्थताके कारण व्यर्थ ही काटते हैं ॥ ७५ ॥ इसलिये विवेकी पुरुषको चाहिये कि देहकी बाल्प, यौवन और सुद्ध आदि अवस्थाओंकी अपेक्षा न करके बाल्यावस्थामें ही अपने कल्याणका यस करे ॥ ७६ ॥

मैंने तुम लोगोंसे जो कुछ कहा है उसे यदि तुम मिश्रा नहीं समझते तो मेरी प्रसन्नताके लिये ही बन्धनको छुटानेवाले श्रीविष्णुभगवानका स्मरण करो॥ ७७॥ उनका स्मरण करनेमें परिश्रम भी क्या है ? और स्मरणमावसे ही वे अति शुभ फल देते हैं तथा रात-दिन उन्होंका स्मरण करनेवालोंका पाप भी नष्ट हो जाता है॥ ७८॥ उन सर्वभूतस्थ प्रभुमे तुन्हारी बुद्धि अहर्निश लगी रहे और उनमें निरन्तर तुन्हारा प्रेम बढ़े; इस प्रकार तुन्हारे समस्त हेला दूर हो जायैंगे॥ ७९॥ जब कि यह सभी संसार तापत्रयसे दन्ध हो रहा है

जब कि यह सभी संसार तापत्रयसे दग्ध है। रहा है तो इन बेचोरे शोचनीय जीवोंसे कीन बुद्धिमान् हेर करेगा ? ॥ ८० ॥ यदि [ऐसा दिखानी दे कि] 'और

बद्धवैराणि भूतानि हेथं कुर्वन्ति चेन्ततः । सुशोच्यान्यतिमोहेन व्याप्तानीति मनीविणाम् ॥ ८२ एते भिन्नदशां दैत्या विकल्पाः कथिता मया । कृत्वाभ्युपगमं तत्र सङ्क्षेपः श्रुपतां मम ॥ ८३ विस्तारः सर्वभूतस्य विष्णोः सर्वमिदं जगत् । द्रष्ट्रव्यमात्मवत्तस्माद्भेदेन विवक्षणै: ॥ ८४ समुत्सुज्यासुरं भावं तस्मत्त्युयं तथा वयम् । तथा यत्नं करिष्यामो यथा प्राप्याम निर्वृतिम् ॥ ८५ या नाप्रिना न चार्केण नेन्द्रना च न वायुना । पर्जन्यवरुणाभ्यां वा न सिन्द्वैर्न च राक्षसै: ॥ ८६ न यक्षेर्न च दैत्येन्द्रैनोरगैर्न च किन्नरै:। न मनुष्यैर्न पशुभिद्धिर्नैवात्मसम्भवैः ॥ ८७ ज्वराक्षिरोगातीसारप्रीहगुल्मादिकैस्तथा हेवेर्ष्यामत्सराद्वीर्वा रागलोभादिभिः क्षयम् ॥ ८८ न चान्यैनीयते कैश्चित्रित्वा यात्यन्तनिर्मला। तामाप्रोत्यमले न्यस्य केशवे हृदयं नरः ॥ ८९ असारसंसारविवर्तनेषु मा यात तोषं प्रसभं ब्रबीमि। दैत्यास्समतामुपेत सर्वत्र समत्वमाराधनमञ्जूतस्य 11 80 तस्मित्रसन्ने किमिहास्यलभ्यं

धर्मार्थकामैरलम्लपकास्ते सपाश्रितादृद्धतरोरनन्ता-

त्रिःसंशयं प्राप्यथ वै महत्फलम् ॥ ९१

जीव तो आनन्दमें है, मैं ही परम शक्तिहीन हैं' तब भी प्रसन्न ही होना चाहिये, क्योंकि द्वेषका फल तो दु:सारूप ही है ॥ ८१ ॥ यदि कोई प्राणी वैरमाबसे द्रेष भी करें तो विचारवानोंके लिये तो वे 'अहो ! ये महामोहसे व्याप्त

हैं !' इस प्रकार अत्यन्त शोचनीय ही हैं ॥ ८२ ॥ ृ हे दैत्यगण ! ये मैंने भिन्न-भिन्न दृष्टिवास्त्रीके विकल्प (भिन्न-भिन्न उपाय) कहै। अब जनका समन्वयपूर्वक संक्षिप्र विचार सुनो ॥ ८३ ॥ यह सम्पूर्ण जगत् सर्वभृतमय भगवान् विष्णुका विस्तार है, अतः विचक्षण पुरुषोको इसे आत्माके समान अभेदरूपसे देखना चाहिये ॥ ८४ ॥ इसल्यि दैत्यभावको छोडकर हम और तम ऐसा यह करें जिससे शक्ति स्त्रम कर सके ॥ ८५॥। जो [परम शान्ति] अप्रि, सूर्यं, चन्द्रमा, वायु, मेघ, वरुण, सिद्ध, राक्षस, यक्ष, दैत्यराज, सर्प, कित्रर, मनुष्य, पशु और अपने दोवांसे तथा ज्वर, नेत्ररोग, अतिसार, ध्रीहा (तिल्ली) और गुल्म आदि रोगोंसे एवं हेष, ईंच्यी, मत्सर, राग. लोभ और किसी अन्य भावसे भी कभी श्लीण नहीं होती, और जो सर्वदा अलग्त निर्मल है उसे मनव्य अपलख्डू श्रीकेशवर्षे मनोनिवेश करनेसे प्राप्त कर लेता है।। ८६ — ८९ ॥

हे दैत्यो ! मैं आप्रहपूर्वक कहता हैं, तुम इस असार संसारके विषयोंमें कभी सन्तृष्ट मत होना। तुम सर्वत्र समदृष्टि करो, क्योंकि समता ही श्रीअच्युतकी [वास्तविक] आध्यमा है॥ ९०॥ उन अच्युतके प्रसन्न होनेपर फिर संसारमें दुर्लभ ही क्या है ? तुम यर्म, अर्थ और कामकी इच्छा कभी न करना; वे तो अत्यन्त तुन्छ हैं। उसे ब्रह्मरूप महावृक्षका आश्रय लेनेपर तो तुम निःसन्देह [मोक्षरूप] महाफल प्राप्त कर लोगे॥ ९१ ॥ The Table

THE THE PARTY OF T

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवाँ अध्याय

प्रद्वादको मारनेके लिये विष, शस्त्र और अग्नि आदिका प्रयोग एवं प्रद्वादकृत भगवत्-स्तृति

ę

8

Ę

15

श्रीपरासर उवाच

तस्यैतां दानवाश्चेष्टां दृष्टा दैत्यपतेर्भयात् । आवचरस्युः स चोवाच सूदानाह्य सत्वरः ॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

हे सूदा मम पुत्रोऽसाबन्येषामपि दुर्मतिः । कुमार्गदेशिको दुष्टो हन्यतामविलम्बितम् ॥

हालाहलं विषं तस्य सर्वभक्षेषु वीयताम् । अविज्ञातमसौ पापो हन्यतां मा विचार्यताम् ॥

श्रीपगदार स्वाच

ते तथैव ततश्चकुः प्रह्लादाय महात्मने । विषदानं यायाज्ञप्तं पित्रा तस्य महात्मनः ॥

हालाहलं विषं घोरमनन्तोद्यारणेन सः।

अभिमन्त्र्य सहात्रेन मैत्रेय बुभुजे तदा ॥

अविकारं सत्तद्भुक्त्वा प्रह्वादः स्वस्थमानसः । अनन्तस्त्वातिनिर्वीर्ये जरवामास तद्विषम् ॥

ततः सूदा भयत्रस्ता जीणै दृष्ट्वा महद्विषम्।

दैत्येश्वरमुपागम्य प्रणिपत्येदमङ्गुवन् ॥

सूदा ऊचुः

दैत्यराज विषं दत्तमस्माभिरतिभीषणम्। जीर्णं तेन सहान्नेन प्रह्लादेन सुतेन ते॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

त्वर्यतां त्वर्यतां हे हे सद्यो दैत्यपुरोहिताः।

कृत्यां तस्य विनाशाय उत्पादयत मा चिरम् ॥

श्रीपरासर उवाच

सकाशमागम्य ततः प्रह्लादस्य पुरोहिताः । सामपूर्वमधोचुस्ते प्रह्लादं विनयान्वितम् ॥ १०

प्रोहिता अचुः

जातस्रैलोक्यविख्यात आयुष्यन्त्रहाणः कुले ।

दैत्यराजस्य तनयो हिरण्यकशियोर्भवान् ॥ ११

कि देवैः किमनन्तेन किमन्येन तवाश्रयः ।

पिता ते सर्वलोकानां त्वं तथैव भविष्यसि ॥ १२

श्रीपराझरजी बोले—उनकी ऐसी चेष्टा देख दैल्योंने दैल्यक हिरण्यकशिपुसे डरकर उससे सारा वृत्तान्त कह सुनाया, और उसने भी तुरन्त अपने रसोइयोको बुल्पकर कहा ॥ १ ॥

हिरण्यकदिापु बोला — अरे सूदगण ! मेरा यह दुष्ट और दुर्मीत पुत्र औरोंको भी कुमार्गका उपदेश देता है, अतः तुम शीघ ही इसे मार डालो ॥ २ ॥ तुम उसे उसके बिना जाने समस्त खाद्यपदार्थीमें हलाहल विष मिलाकर दो और किसी प्रकारका शोच-विचार न कर उस पापीको मार डालो ॥ ३ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले — तब उन रसोइयोने महात्मा प्रहादको, जैसी कि उनके पिताने आज्ञा दी भी उसीके अनुसार विष दे दिया ॥ ४ ॥ हे मैत्रेय ! तब वे उस घोर हलाहल विषको भगवज्ञामके उचारणसे अभिमन्त्रित कर अत्रके साथ खा गये ॥ ५ ॥ तथा भगवज्ञामके प्रभावसे निस्तेज हुए उस विषको खाकर उसे बिना किसी विकारके पचाकर स्वस्य चित्तसे स्थित रहे ॥ ६ ॥ उस महान् विषको पचा हुआ देख रसोइयोने भयसे व्याकुल हो हिरण्यकशिपुके पास जा उसे प्रणाम करके कहा ॥ ७ ॥

सूदगण बोलें — हे दैत्यराज ! हमने आपकी आज्ञासे अत्यन्त तीक्ष्ण तिय दिया था, तथापि आपके पुत्र प्रह्लादने उसे अन्नके साथ पचा लिया ॥ ८ ॥

हिरण्यकद्वियु बोला — हे पुरोहितगण ! शीवता करो, शीवता करो ! उसे नष्ट करनेके लिये अब कृत्या उत्पन्न करो; और देरी न करो ॥ ९ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले — तब पुरोहितोने अति विनीत प्रह्लादसे, उसके पास जाकर शान्तिपूर्वक कहा॥ १०॥

पुरोहित बोले—हे आयुष्पन् ! तुम त्रिलोकीमें विल्यान ब्रह्माजीके कुलमें उत्पन्न हुए हो और दैत्यराज हिरण्यकशिपुके पुत्र हो ॥ ११ ॥ तुम्हें देवता अनन्त अथवा और भी किसीसे क्या प्रयोजन है ? तुम्हारे पिता तुम्हारे तथा सम्पूर्ण लोकोंके आश्रय हैं और तुम भी ऐसे तस्मात्परित्यजैनां त्वं विपक्षस्तवसंहिताम् । इलाच्यः पिता समस्तानां गुरूणां परमो गुरुः ॥ १३ अद्यव अवाच

एवमेतन्महाभागाः २लाघ्यमेतन्महाकुलम् । मरीजेः सकलेऽप्यस्मिन् त्रैलोक्ये नान्यक्षा वदेत् ॥ १४

पिता च मम सर्वस्मिञ्जगत्पुत्कृष्टचेष्टितः । एतदम्यवगच्छामि सत्यमत्रापि नानृतम्॥१५

गुरूणामपि सर्वेषां पिता परमको गुरुः । यदुक्तं भ्रान्तिस्तत्रापि स्वल्पापि हि न विद्यते ॥ १६

पिता गुरुनं सन्देहः पूजनीयः प्रयत्नतः । तत्रापि नापराध्यामीत्येवं मनसि मे स्थितम् ॥ १७

यत्त्वेतत्किमनन्तेनेत्युक्तं युष्माभिरीदृशम् । को क्रवीति यथान्याच्यं किं तु नैतहचोऽर्थवत् ॥ १८

इत्युक्त्वा सोऽधवन्यौनी तेवां गौरवयन्त्रितः । प्रहस्य च पुनः प्राह किमनन्तेन साध्विति ॥ १९

साधु भो किमनत्तेन साधु भो गुरवो मम । श्रूयतां यदनत्तेन यदि खेदं न यास्प्रथ ॥ २०

धर्मार्थकाममोक्षाश्च पुरुषार्था उदाहुताः ।

चतुष्ट्रयमिदं यस्मात्तस्मात्कं किमिदं वचः ॥ २१ मरीचिमिश्रैर्दक्षाद्यैस्तर्थवान्यैस्नन्ततः ।

धर्मः प्राप्तस्तथा चान्यैरर्थः कामस्तथाऽपरैः ॥ २२

तत्तत्त्ववेदिनो भूत्वा ज्ञानध्यानसमाधिभिः । अवापुर्मृक्तिमपरे पुरुषा ध्वस्तवन्धनाः ॥ २३

अवापुमुक्तमपर पुरुषा ध्वस्तबन्धनाः ॥ २३

सम्पदेश्वर्यमाहात्म्यज्ञानसन्ततिकर्मणाम् । विमुक्तेश्चैकतो लभ्यं मूलमाराथनं हरे: ॥ २४

यतो धर्मार्थकामास्यं मुक्तिश्चापि फलं हिजाः ।

तेनापि किं किमित्येवमनन्तेन किमुच्यते ॥ २५

कि चापि बहुनोक्तेन भवन्तो गुरवो मम । बदन्तु साधु वासाधु विवेकोऽस्माकमल्पकः ॥ २६ ही होगे ॥ १२ ॥ इसिल्पे तुम यह विपक्की स्तुति करना छोड़ दो । तुम्हारे पिता सब प्रकार प्रशंसनीय हैं और वे ही समस्त गुरुऑमें परम गुरु हैं ॥ १३ ॥

प्रह्लादजी बोले—हे महाभागगण ! यह ठीक ही है। इस सम्पूर्ण जिलोकीमें भगवान् मरीविका यह महान् कुल अवश्य ही प्रशंसनीय है। इसमें कोई कुछ भी अन्यथा नहीं कह सकता ॥ १४ ॥ और मेरे पिताजी भी सम्पूर्ण जगत्में बहुत बड़े परक्रमी हैं; यह भी मैं बावता है। यह बात भी बिलकुल ठीक है, अन्यथा नहीं ॥ १५ ॥

और आपने जो कहा कि समस्त गुरुओंमें पिता ही परम गुरु हैं—इसमें भी मुझे लेशमात्र सन्देह नहीं है ॥ १६ ॥ पिताजी परम गुरु हैं और प्रयत्नपूर्वक पूजनीय हैं—इसमें

कोई सन्देह नहीं । और मेरे चित्तमें भी यही विचार स्थित है कि मैं उनका कोई अपराध नहीं करूपा ॥ १७ ॥ किन्तु आपने जो यह कहा कि 'तुझे अनन्तसे क्या प्रयोजन है ?'

सो ऐसी बातको मरग कौन न्यायोचित कह सकता है ? आपका यह कथन किसी भी तरह ठीक नहीं है ॥ १८ ॥

ऐसा कहकर वे उनका गौरव रखनेके लिये चुप हो गये और फिर हैंसकर कहने लगे— 'तुझे अनन्तसे क्या प्रयोजन है ? इस विचारको धन्यवाद है ! ॥ १९ ॥ है मेरे

भूगणन ह ? इस क्वारका धन्यवाद ह ! ॥ १९ ॥ ह मर पुरुगण ! आप कहते हैं कि तुझे अनन्तसे क्या प्रयोजन है ? धन्यवाद है आपके इस विचारको ! अच्छा, यदि

ः : पन्यपाद ६ जानक १स लियाएका : जन्छ, पाद आपको बुरा न रूगे तो मुझे अनन्तसे जो प्रयोजन है सो सुनिये ॥ २० ॥ धर्म, अर्थ काम और मोक्ष—ये चार

पुरुषार्थ कहे जाते हैं। ये चारों ही जिनसे सिद्ध होते हैं, उनसे क्या प्रयोजन ?—आपके इस कथनको क्या कहा जाय ! ॥ २१ ॥ उन अनन्तसे ही दक्ष और मरीचि आदि

तथा अन्यान्य ऋषीश्वरोंको धर्म, फिन्हीं अन्य मुनीश्वरोंको अर्थ एवं अन्य किन्हींको कामकी प्राप्ति हुई है ॥ २२ ॥

किन्हीं अन्य महापुरुषीने ज्ञान, ध्यान और समाधिके द्वारा उन्होंके राखको जानकर अपने संसार-बन्धनको काटकर

भोक्षपद प्राप्त किया है॥ २३॥ अतः सम्पत्ति, ऐसर्थ, माहारम्य, ज्ञान, सन्तति और कर्म तथा मोक्स—इन

सबकी एकमात्र मूल श्रीहरिको आराधना ही उपार्जनीय है॥ २४॥ हे द्विजगण ! इस प्रकार, जिनसे अर्थ, धर्म,

है।। २४॥ है। हुजगण ! इस प्रकार, जिनस अथ, घम, काम और मोक्स—ये चारों ही फल प्राप्त होते हैं उनके

ल्प्यि भी आप ऐसा क्यों कहते हैं कि 'अनन्तसे तुझे क्या प्रयोजन है ?' ॥ २५ ॥ और बहुत कहनेसे क्या लाम ?

आपलोग तो मेरे गुरु हैं; उचित-अनुचित सभी कुछ बङ

बहुनात्र किमुक्तेन स एव जगतः पतिः।

स कर्तां च विकर्त्तां च संहर्तां च हदि स्थित: ॥ २७

स भोक्ता भोज्यमप्येवं स एव जगदीश्वरः । भवद्भिरेतत्क्षन्तव्यं बाल्यादुक्तं तु यन्पया ॥ २८

पुरोहिता कर्नुः

दह्यमानस्त्वमस्माभिरमिना बाल रक्षितः ।

भूयो न वक्ष्यसीत्येवं नैव ज्ञातोऽस्यबुद्धिमान् ॥ २९

यदास्मद्वचनान्मोहप्राहं न त्यक्ष्यते भवान् । ततः कृत्यां विनाशाय तव स्रक्ष्याम दुर्यते ॥ ३०

प्रह्माद उवान

कः केन हन्यते जन्तुर्जन्तुः कः केन रक्ष्यते । हन्ति रक्षति चैवातमा ह्यसत्साधु समाचरन् ॥ ३१

कर्मणा जायते सर्वं कर्मेव गतिसाधनम् । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन साधुकर्म समाचरेत् ॥ ३२

औपगदार तवाच

इत्युक्तास्तेन ते क्रुद्धा दैत्यराजपुरोहिताः।

कृत्यामृत्यादयामासूर्ज्यालामालोग्ज्यलाकृतिम् ॥ ३३ अतिभीमा समागम्य पादन्यासक्षतक्षितिः ।

शुलेन साथु सङ्कुद्धा तं जद्यानाश् वक्षसि ॥ ३४

तत्तस्य इदयं प्राप्य शूलं बालस्य दीप्तिमत् । जगाम खण्डितं भूमौ नत्रापि शतधा गतम् ॥ ३५

यत्रानपायी भगवान् हद्यास्ते हरिरीश्वरः । भङ्गो भवति वज्रस्य तत्र शुलस्य का कथा ॥ ३६

अपापे तत्र पापैश्च पातिता दैत्ययाजकै: ।

तानेव सा जद्यानाशु कृत्या नाशं जगाम च ॥ ३७

कृत्यया दह्यमानांस्तान्वित्येक्य स महापतिः । त्राहि कृष्णेत्यनत्तेति बदन्नभ्यवपद्यतः ॥ ३८

प्रहार, उथाच

सर्वव्यापिन् जगद्रूप जगत्त्रप्टर्जनार्दन ।

पाहि विप्रानिमानस्माहुःसहान्यन्त्रयावकात् ॥ ३९

सकते हैं। और भुझे तो विचार भी बहुत ही कम है ॥ २६ ॥ इस विषयमें अधिक क्या कहा जाय ? [मेरे

विचारसे तो] सबके अन्तःकरणोमें स्थित एकमात्र वे ही संसारके स्वामी तथा उसके स्वयिता, पालक और संहारक

हैं ॥ २७ ॥ वे हो भोक्त और भोज्य तथा वे हो एकमात जगदीश्वर है। हे गुरुगण ! मैंने बास्त्यभावसे यदि कुछ

अनुचित कहा हो तो आप क्षमा करें"॥ २८॥ पुरोहितगण बोले---अरे बालक ! हमने तो यह

समझकर कि तू फिर ऐसी बात न कहेगा तुझे अग्रिमें जलनेसे बचाया है। हम यह नहीं जानते थे कि तू ऐसा बुद्धिहीन है ? ॥ २९ ॥ रे दुर्मते ! यदि तु हमारे कहनेसे

अपने इस मोहमय आग्रहको नहीं छोड़ेगा तो हम तुझे नष्ट करनेके लिये कृत्या उत्पन्न करेंगे ॥ ३० ॥

प्रह्लादजी बोले-कौन जीव किरासे गारा जाता है और कौन किससे रक्षित होता है ? ज्ञून और अञ्चूम आचरणोंके द्वारा आत्मा स्वयं ही अपनी रक्षा और नाठा करता है ॥ ३१ ॥ कमेंकि कारण ही सब उत्पन्न होते हैं और कमें ही उनको ज्ञुभाञ्चभ गतियोंके साधन है।

इसलिये प्रयक्षपूर्वक शुभकर्मीका ही आचरण करना चाहिये ॥ ३२ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले---उनके ऐसा कहनेपर उन दैत्यराजके पुरोदितोंने क्रोधित होकर अग्निशिखाके समान

प्रज्वलित शरीरवासी कृत्या उत्पन्न कर दी॥ ३३॥ उस अदि भयंकरीने अपने पादापातसे पृथिवीको कप्पित करते हुए वहाँ प्रकट होकर यहे क्रोधसे प्रहादजीकी ख़ातीमें त्रिशुलसे प्रहार किया॥ ३४॥ किन्तु उस बालकके

पृथिवीपर गिर पड़ा और वहाँ गिरनेसे भी उसके सैकड़ों टुकड़े हो गये ॥ ३५ ॥ जिस हृदयमें निरन्तर असूरणभावसे श्रीहरिमगवान् विराजते हैं उसमें लगनेसे तो वजके भी टक-टुक हो जाते हैं, त्रिश्लकी तो बात ही क्या है ? ॥ ३६ ॥

वक्षःस्थलमें लगते ही वह तेजोमय त्रिश्ल टुटकर

उन पापी प्रोहितोंने उस निष्याप बालकपुर कलाकः प्रयोग किया था: इसल्पिये तुरन्त ही उसने उनपर वार किया और स्वयं भी नष्ट हो गयी॥३७॥ अपने गुरुओंको कृत्वाद्वारा जलाये जाते देख महामति प्रह्याद 'हे कृष्ण ! रक्षा करो ! हे अनन्त ! बचाओ !' ऎसा कहते

हुए उनकी ओर दीड़े ॥ ३८ ॥ प्रह्लादजी कहने लगे -- हे सर्वव्यापी, विश्वरूप,

विश्वसद्या जनादैन ! इन ब्राह्मणीकी इस मन्त्राजिरूप

दुःसह दुःखसे रक्षा करो॥ ३९॥ 'सर्वव्यापी जगदुरु

भगवान् विष्णु सभी प्राणियोमे व्याप्त हैं'—इस सत्पके प्रभावसे ये पुरोहितगण जीवित हो जायें॥ ४०॥ यदि

मैं सर्वव्यापी और अक्षय श्रीविष्णुभगवानुको अपने

विपक्षियोंमें भी देखता हैं तो ये पुरोहितगण जीवित हो जायै

॥ ४१ ॥ जो लोग मुझे मारनेके लिये आये, जिन्होंने मुझे

क्वि दिया, जिन्होंने आगमें जलाया, जिन्होंने दिणजोसे पीडित कराया और जिन्होंने सपेंसि इँसाया उन सबके प्रति

यदि मैं समान मित्रभावसे रहा हैं और मेरी कभी पाप -

बुद्धि नहीं हुई तो उस सत्यके प्रभावसे ये दैलपुरोहित

करते हो ये ब्राह्मण स्वस्थ होकर उठ बैठे और उस

दीर्घाय, निर्दुन्द्र, बल-बीर्यसम्पन्न तथा पुत्र, पीत्र एवं

पुरोहितीने दैत्यराज हिरण्यकशिपुके पास जा उसे सारा

विनयावनत बालकसे कहने लगे ॥ ४४ ॥

धन-ऐश्वर्यदिसे सम्पन्न हो ॥ ४५ ॥

ब्रीपराहारजी बोले—ऐसा कहवर उनके स्पर्श

पुरोहितगण सोले —हे बत्स ! तू बड़ा शेह है । तू

श्रीपरादारजी बोले—हे महामुने ! ऐसा कह

जी इंद्रे ॥ ४२-४३ ॥

यथा सर्वेषु भूतेषु सर्वव्यापी जगदगुरुः । विष्णुरेव तथा सर्वे जीवन्त्वेते पुरोहिता: ॥ ४० यथा सर्वगतं विष्णुं मन्यमानोऽनपायिनम् । चिन्तयाम्यरिपक्षेऽपि जीवन्त्वेते पुरोहिताः ॥ ४१ ये हन्तुमागता दत्तं यैर्विषं यैर्हताशनः। यैर्दिगाजैरहं क्षुण्णो दष्टः सपैश्च यैरपि ॥ ४२ तेष्ट्रहं मित्रभावेन समः पापोऽस्मि न क्रचित् । यथा तेनाद्य सत्येन जीवन्त्वसुरवाजकाः ॥ ४३ श्रीपराञार उवाच इत्युक्तास्तेन ते सर्वे संस्पृष्टाश्च निरापयाः ।

समुत्तस्बुर्द्धिजा भूयस्तमृत्युः प्रश्रयान्विसम् ॥ ४४ प्रोहिता कवः दीर्घायुरप्रविहतो बलवीर्यसमन्वतः ।

पुत्रपौत्रधनैश्वर्वेर्युक्तो बत्स भवोत्तयः॥ ४५

श्रीपराशर इवाच

इत्युक्त्वा तं ततो गत्वा यथाक्तं पुरोहिताः । सकलमाचचल्युर्महामुने ॥ ४६

समाचार ज्यों-का-त्यों सुना दिया ॥ ४६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽदो अष्टादद्दोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवाँ अध्याय

प्रहादकृत भगवत्-गुण-वर्णन और प्रहादकी रक्षाके लिये भगवान्का सदर्शनचक्रको भेजना

श्रीपराश्तर उनाच

हिरण्यकशिषुः श्रुत्वा तां कृत्यां वितथीकृताम् ।

आह्य पुत्रं पप्रच्छ प्रभावस्थास्य कारणम् ॥

हिरण्यका द्वापुरुवा च

प्रह्लाद सुप्रभावोऽसि किमेत्तत्ते विचेष्टितम् । एतन्यन्त्रादिजनितयुताहो सहजं

तव ॥

श्रीपराच्या उद्याच

एवं पृष्टस्तदा पित्रा प्रहादोऽसुरबालकः। प्रणिपत्य पितः पादाविदं वसनमञ्ज्ञतीत् ॥

श्रीपराशरजी बोले-हिरण्यकशिपुने कृत्याको भी विफल हुई सुन अपने पुत्र प्रहादको बुलाकर उनके इस प्रभावका कारण पूछा ॥ १ ॥

हिरण्यकशिषु बोला—और प्रहाद! तु बड़ा प्रभावशास्त्री है! तेरी ये चेष्टाएँ मन्त्रादिजनित है या स्वाभाविक ही है ॥ र ॥

श्रीपरादारजी बोले--पिताके इस प्रकार पृछनेपर दैत्यकुमार प्रह्लादजीने उसके चरणोमें प्रणाम कर इस

न मन्त्रादिकृतं तात न च नैसर्गिको मम । प्रभाव एव सामान्यो बस्य यस्याच्युतो हृदि ॥ अन्येषां यो न पापानि चिन्तयत्यातमनो यथा । तस्य पापागमस्तात हेत्वभावान्न विद्यते ॥ कर्मणा मनसा वाचा परपीड़ां करोति यः । तद्गीजं जन्म फरुति प्रभूतं तस्य चान्नुभम् ॥ सोऽहं न पापमिच्छामि न करोमि वदामि वा । चिन्तयन्सर्वभूतस्थमात्मन्यपि च केशवम् ॥

शारीरं मानसं दुःखं दैवं भूतभवं तथा। सर्वत्र शुभवित्तस्य तस्य मे जायते कुतः॥ एवं सर्वेषु भूतेषु भक्तिस्व्यभिचारिणी।

कर्तव्या पण्डितैर्ज्ञात्वा सर्वभूतमयं हरिम् ॥ श्रीपराहार उचाच

इति शुत्वा स दैत्येन्द्रः प्रासादशिखरे स्थितः । क्रोधान्धकारितमुखः प्राह दैतेयकिङ्करान् ॥ १० हिरयकशिपुरुकाच

दुरात्मा क्षिप्यतामस्मात्मासादाच्छतयोजनात् । गिरिपृष्ठे पतत्वस्मिन् शिलाभिन्नाङ्गसंहतिः ॥ ११ ततस्तं चिक्षिपुः सर्वे बालं दैतेयदानवाः । पपात सोप्यधः क्षिप्तो हृदयेनोद्वहन्हरिम् ॥ १२

पतमानं जगद्धात्री जगद्धातरि केशवे । भक्तियुक्तं दधारैनमुपसङ्गम्य मेदिनी ॥ १३ ततो विलोक्य तं स्वस्थमविशीर्णास्थिपञ्चरम् । हिरण्यकशिपुः प्राह शम्बरं भायिनां वरम् ॥ १४

म्बर माायना वरम् ॥ १४ *र्भशपञ्जाच*

हरण्यकश्चिपुरुवाच नास्माभिः शक्यते हन्तुमसौ दुर्बुद्धिबालकः । मायां बेत्ति भवांस्तस्मान्याययैनं निष्द्य ॥ १५

शुम्बर उवान

सुद्यान्येव दैत्येन्द्र पश्य मायावलं मम । सहस्रमत्र मायाना पश्य कोटिशतं तथा ॥ १६ श्रीपण्यार उनाच

ततः स ससृजे मायां प्रह्लादे शम्बरोऽसुरः ।

ततः स सस्ज माया प्रह्लाद शम्बराऽसुरः । विनाशमिखन्दुर्बुद्धिः सर्वत्र समदर्शिनि ॥ १७ भ्रकार कहा--- ॥ ३ ॥ "पिताओ ! भेग्र यह प्रभाव न तो मन्त्रादिबनित है और न स्वामाविक ही है, बल्कि जिस-जिसके हृदयमें श्रीअच्युतभगवान्का निवास होता है उसके खिये यह सामान्य बात हैं ॥ ४ ॥ जो मनुष्य अपने समान दूसरोका बुरा नहीं सोचता, हे तात ! कोई कारण न

समान दूसरीका बुरा नहीं सोचता, हे तात ! कोइ कारण न रहनेसे उसका भी कभी बुरा नहीं होता ॥ ५ ॥ जो मनुष्य मन, बचन या कर्मसे दूसरोंको कष्ट देता है उसके उस परपीडारूप बीजसे ही उत्पन्न हुआ उसको अल्पन्त अशुभ फल मिलता है ॥ ६ ॥ अपनेसहित समस्त प्राणियोंमें श्रीकेशवको वर्तमान समझकर मैं न तो किसीका बुरा चाहता है और न कहता या करता ही हैं ॥ ७ ॥ इस प्रकार

सर्वत्र शूभिचत्त होनेसे पुझको शारीरिक, मानसिक, दैविक अथवा भौतिक दुःख किस प्रकार प्राप्त हो सकता है ? ॥ ८ ॥ इसी प्रकार भगवान्को सर्वभृतमय जानकर विद्वानोंको सभी प्राणियोमें अविचल भक्ति (प्रेम) करनी

श्रीपराशरजी बोले — अपने महरूकी अङ्गाल्यक्रपर बैठे हुए उस दैल्यरजने यह सुनकर क्रोधान्य हो अपने दैल्य-अनुचरोसे कहा॥ १०॥

चालिये" ॥ १ ॥

दिसम्बक्तियु बोला — यह बड़ा दुग्रसा है, इसे इस सौ योजन केंचे महलसे गिरा दो, जिससे यह इस पर्वतके कपर गिरे और शिलाओंसे इसके अंग-अंग छिन्न-भिन्न हो जायें॥ ११॥

तब उन समस्त देख और दानवीने उन्हें महलसे गिरा दिया और वे भी उनके बकेलनेसे हदयमें श्रीतरिका स्मरण करते-करते नीचे गिर गये॥ १२॥ जगल्कर्ता भगवान् केशक्के परमभक्त प्रह्लादजीके गिरते समय उन्हें जगद्धात्री पृथिवीने निकट जकर अपनी गोदमें के लिया ॥ १३॥ तब बिना किसी हड्डी-पसलीके टूटे उन्हें स्वस्थ देख दैत्यराज हिरण्यकशिपुने परमामामाबी शम्बरासुरसे कहा॥ १४॥

हिरण्यकशिषु बोला — यह दुर्बुद्धि बालक कोई ऐसी माया जानता है जिससे यह हमसे नहीं घाए जा सकता, इसलिये आप मायासे ही इसे घार डालिये ॥ १५॥

शम्बरासुर बोला—हे दैत्वेन्द्र ! इस बालकको मैं अभी मारे डालता हूँ, तुम मेरी मायाका बल देखो। देखो, मैं तुम्हें सैकड़ो-हजारो-करोड़ों मायारी दिखलाता हूँ॥ १६॥

भीपराशस्त्री बोले—तब उस दुर्वृद्धिः शम्बरासुरने समदशीं प्रहादके लिये, उनके नाशकी समाहितमतिर्भृत्वा शम्बरेऽपि विमत्सरः। मैत्रेय सोऽपि प्रह्वादः सस्मार मधुसुदनम् ॥ १८ ततो भगवता तस्य रक्षार्थं चक्रमुत्तमम्। आजगाम समाज्ञप्तं ज्वालामालि सुदर्शनम् ॥ १९ तेन मायासहस्रं तच्छम्बरस्याशुगामिना । बालस्य रक्षता देहमेकैकं च विशोधितम् ॥ २० एक-एक करके नष्ट कर दिया॥ २०॥

संशोषकं तथा वायुं दैत्येन्द्रस्त्वद्मव्रवीत् । ञ्जीव्रमेष ममादेशाहुरात्मा नीयतां क्षयम् ॥ २१

तथेत्युक्ता तु सोऽप्येनं विवेश पवनो लघु । शीतोऽतिरूक्षः शोषाय तहेहस्यातिदुःसहः ॥ २२

तेनाविष्टमधात्मानं स बुद्ध्वा दैत्यबालकः । हृद्येन महात्पानं द्यार धरणीधरम् ॥ २३

हृदयस्थास्ततस्तस्य तं वायुमितभीवणम् । पपौ जनार्दनः क्रुद्धः स यथौ पवनः क्षयम् ॥ २४

श्रीणास् सर्वधायास् पवने च श्रयं गते । जगाम सोऽपि भवनं गुरोरेव महामतिः ॥ २५

अहन्यहन्यथाचार्यो नीति राज्यफलप्रदाम् । प्राहयामास ते वाले राज्ञामुशनसा कृताम् ॥ २६

गृहीतनीतिशास्त्रं तं विनीतं च यदा गुरु: । मेने तदैनं तत्पित्रे कथयामास शिक्षितम् ॥ २७

आचार्य उपाच

गृहीतनीतिशास्त्रस्ते पुत्रो दैत्यपते कृतः। प्रहादस्तत्त्वतो वेति भार्गवेण यदीरितम् ॥ २८

हिरञ्चकशिप्रवाच

मित्रेषु वर्तेत कथमरिवर्गेषु भूपतिः। प्रह्लाद त्रिषु लोकेषु मध्यस्थेषु कथं चरेत् ॥ २९

कद्यं मन्त्रिष्टमात्येषु बाह्येष्ट्राभ्यन्तरेषु च। वारेषु पौरवर्गेषु शङ्कितेष्वितरेषु च ।। ३०

कृत्याकृत्यविधानञ्च दुर्गाटविकसाधनम्। प्रहाद कथ्यतां सम्बक् तथा कण्टकशोधनम् ॥ ३१ इच्छासे बहत-सी मायाएँ रचीं ॥ १७ ॥ किन्तु, हे मैत्रेयः! राम्बरासुरके प्रति भी सर्वथा देवहीन रहकर प्रहादजी

सावधान चितसे श्रीमधुसुदरभगवानुका स्मरण करते रहे ॥ १८ ॥ उस समय भगवानुकी आज्ञासे उनकी रक्षाके

लिये वहाँ ज्वाल-यालक्ष्मीसे युक्त सुदर्शनचक्र आ गया ॥ १९ ॥ उस शीधगामी सुदर्शनचक्रने उस बालककी रक्षा करते हुए शम्बरासुरकी सहस्तों मायाओंको

तब दैत्यराजने सबको सुखा डालनेवाले वायुसे कहा कि मेरी आज्ञासे तुम जीव ही इस दसत्माको नष्ट कर

दो ॥ २१ ॥ अतः उस अति तीव शीतक और रूक्ष वायुने, जो अति असहनीय था 'जो आज्ञा' कह उनके शरीरको सुखानेके लिये उसमें प्रयेश किया ॥ २२ ॥ अपने शरीरमें

वायुका आवेश हुआ जान दैत्यकुमार प्रह्लादने भगवान् घरणीधरको हृदयमें भारण किया ॥ २३ ॥ उनके हृदयमें स्थित हुए श्रीजनार्दनने ऋड होकर उस भीषण वायुको पी

क्रिया, इससे वह क्षीण हो गया ॥ २४ ॥ इस प्रकार पवन और सम्पूर्ण मायाओंके क्षीण हो

जानेपर महामति प्रहादजी अपने गुरुके घर चले गये ॥ २५ ॥ तदनसार गुरुजी उन्हें नित्यप्रति सुक्राचार्यर्जीकी बनायी हुई राज्यफलप्रदायिनी राजनीतिका अध्ययन कराने

रुगे ॥ २६ ॥ जब गुरुजीने उन्हें नीतिकाखमें निपुण और

विनयसम्पन्न देखा तो उनके पितासे कहा—'अब यह सिंशिक्षित हो गया है ॥ २७॥

आचार्य बोले — हे दैत्यराज ! अब हमने तुम्हारे पुत्रको नीतिशास्त्रमें पूर्णतया निपूण कर दिया है, भृगु-नन्दन शुक्राचार्यजीने जो कुछ कहा है उसे प्रहाद तत्त्वतः

जानता है ॥ २८ ॥

हिरण्यकशिपु बोला—प्रह्वाद ! बता] राजाको मित्रीसे कैसा बर्ताव करना चाहिये ? और राष्ट्रओंसे कैसा ? तथा ब्रिलोकीमें जो मध्यस्थ (रोनों पक्षोंके हितचिन्तक) हो, उनसे किस प्रकार आचरण करे ? ॥ २९ ॥ मन्तियो, अमात्यो, बाह्य और अन्तःपुरके सेवको, गुप्तचरी, पुरवासियों, राङ्किती (जिन्हें जीतकर बलाह् दास बना लिया हो) तथा अन्यान्य जनोके प्रति किस प्रकार व्यवहार करना

चाहिये ? ॥ ३० ॥ हे प्रह्लाद ! यह ठीक-ठीक बता कि करने और न करनेयोग्य कार्योका विधान किस प्रकार करे, दर्ग और आटविक (जंगली मनुष्य) आदिको किस प्रकार बज़ीभूत करे और गुप्त ज़बुरूप कटिकी

एतद्यान्यच सकलमधीतं भवता यथा। तथा मे कथ्यतां ज्ञातुं तवेच्छामि मनोगतम् ॥ ३२ श्रोपयशर उवाच

प्रणिपत्य पितुः पादौ तदा प्रश्रयभूषणः। प्रहादः प्राह दैत्येन्द्रं कृताञ्चलिपुटस्तथा॥ ३३

प्रहादः प्राह दस्तन्त्र कृताझालपुटस्तथा ॥ ३३
प्रहाद उकाव
प्रमोपदिष्टं सकलं गुरुणा नात्र संशयः ।
गृहीतन्तु प्रया किन्तु न सदेतन्यतं प्रम ॥ ३४
साम चोपप्रदानं च भेददण्डौ तथापरौ ।
उपायाः कथिताः सर्वे पित्रादीनो च साथने ॥ ३५
तानेवाहं न पश्यापि पित्रादींस्तात मा क्रुधः ।
साध्याभावे महाबाहो साधनैः कि प्रयोजनम् ॥ ३६
सर्वभूतात्मके तात जगन्नाथे जगन्मये ।
परमात्मिन गोविन्दे पित्रामित्रकथा कुतः ॥ ३७
त्वस्यस्ति भगवान् विष्णुमीय चान्यत्र चास्ति सः ।
यतस्ततोऽयं पित्रं मे शत्रुश्चेति पृथक्कतः ॥ ३८
तदेभिरत्नमत्यर्थं दुष्टारम्भोक्तिवस्तरैः ।
अविद्यान्तर्गतैर्यंत्रः कर्त्तव्यसात शोभने ॥ ३९
विद्याबुद्धिरविद्यायामन्नानात्त जायते ।
बास्प्रेऽग्नि कि न खद्योतमसुरेश्वर मन्यते ॥ ४०

तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये । आयासायापरं कर्म विद्यान्या ज्ञिल्पनैपुणम् ॥ ४१

तदेतदवगम्याहमसारं सारमुत्तमम् । निशामय महाभाग प्रणिपत्य ब्रवीमि ते ॥ ४२

न चिन्तपति को राज्यं को धनं नाभिवाज्छति । तथापि भाव्यमेवैतदुभयं प्राप्यते नरैः ॥ ४३

सर्व एव महाभाग महत्त्वं प्रति सोद्यमाः । तथापि पुंसो भाग्यानि नोद्यमा भृतिहेतवः ॥ ४४

जडानामविवेकानामञ्जूराणामपि प्रभो ।

भाग्यभोज्यानि राज्यानि सन्त्यनीतिमतामपि ॥ ४५ तस्माद्यतेत पुण्येषु य इच्छेन्पहर्ती श्रियम् ।

यतितव्यं समत्वे च निर्वाणमपि चेकाता ॥ ४६

कैसे निकाले ? ॥ ३१ ॥ यह सब तथा और भी जो कुछ तूने पड़ा हो वह सब मुझे सुना, मैं तेरे मनके भावीको जाननेके लिये बहुत उत्सुक हूँ ॥ ३२ ॥

श्रीपराशास्त्री कोले—तब विनयभूषण प्रह्लादजीने पिताके चरणोंमे प्रणाम कर दैत्यराज हिरण्यकशिपुरी हाथ जोड़कर कहा ॥ ३३ ॥

प्रद्वादजी बोले-पिताजी ! इसमें सन्देह नहीं, गुरुखीने तो मुझे इन समी विषयीकी शिक्षा दी है, और मैं उन्हें समझ भी गया हैं; परन्तु मेरा विचार है कि वे नीतियाँ अच्छी नहीं है।। ३४।। साम, दान तथा दण्ड और भेद—ये सब उपाय मित्रादिके साधनेके छिये बतलाये गये हैं ॥ ३५ ॥ किन्तु, पिताजी ! आप क्रोध न करें, मुझे तो कोई शत्र-पित्र अर्धाद दिखायी ही नहीं देते; और हे महाबाही ! जब कोई साध्य ही नहीं है तो इन साधनींसे क्षेत्रा ही क्या है ? n ३६ n है तात ! सर्वभूताताक जगन्नाथ जगन्मय परमातमा गोविन्दमं भल्त्र शत्र-भित्रकी बात ही कहाँ है ? ॥ ३७ ॥ श्रीविष्णभगवान तो आपमें, मुझमें और अन्यत्र भी सभी जगह वर्तमान हैं, फिर 'यह मेरा मित्र है और यह दल्नु है' ऐसे भेदभावको स्थान ही कहाँ है ? ॥ ३८ ॥ इसलिये, हे तात ! अविद्याजन्य दुष्कर्मोंने प्रवृत्त करनेवाले इस वाग्जालको सर्वथा छोड़कर अपने शुभके लिये ही यह करना चाहिये॥ ३९॥ हें दैत्यराज । अज्ञानके कारण ही मनुष्योंकी अतिद्यामें विद्या-बृद्धि होती हैं । बालक क्या अज्ञानक्श खद्योतको ही आग्ने नहीं समझ लेता ? ॥ ४० ॥ कर्म वही है जो बन्धनका कारण न हो और विद्या भी वही है जो मुक्तिकी साधिका हो। इसके अतिरिक्त और कर्म तो परिश्रमरूप तथा अन्य विद्याएँ कला-कौशलमात्र ही हैं ॥ ४१ ॥

हे महाभाग ! इस प्रकार इन सक्की असार समझकर अब आपको प्रणाम कर मैं उत्तम सार बतलाता है, आप श्रवण कीविये ॥ ४२ ॥ राज्य पानेकी विन्ता किसे नहीं होती और धनकी अधिलाया भी किसको नहीं है ? तथापि ये दोनों मिलते उन्होंको हैं जिन्हें मिलनेवाले होते हैं ॥ ४३ ॥ हे महाभाग ! महत्त्व-प्राप्तिके ल्यि सभी यक्ष करते हैं, तथापि वैभवका कारण तो मनुष्यका भाग्य ही हैं, उद्मम नहीं ॥ ४४ ॥ हे प्रभो ! जह, आंवियेकी, निर्वल और अनीतिज्ञोंको भी भाग्यवदा नाना प्रकारके भीग और राज्यादि प्राप्त होते हैं ॥ ४५ ॥ इसल्विये जिसे महान् वैभयकी इन्छा हो उसे केवल पुण्यसञ्चयका ही यक्ष देवा मनुष्याः पश्चवः पश्चिवृक्षसरीस्पाः । रूपमेतदनन्तस्य विष्णोभिन्नमिव स्थितम् ॥ ४७ एतद्विजानता सर्व जगत्स्थावरजङ्गमम् । द्रष्टव्यमात्मयद्विष्णुर्वतोऽयं विश्वरूपधृक् ॥ ४८ एवं ज्ञाते स भगवाननादिः परमेश्वरः । प्रसीदत्यच्युतस्तस्मिन्यसन्ने क्षेत्रसङ्ख्यः ॥ ४९

श्रीपराशर स्वाच

एतच्छुत्वा तु कोपेन समुत्याय वरासनात् । हिरण्यकशिपुः पुत्रं पदा वक्षस्यताडयत् ॥ ५० उवाच च स कोपेन सामर्षः प्रज्वलन्त्रिव । निष्यस्य पाणिना पाणिं हन्तुकामो जगद्यथा ॥ ५१

हे विश्वचित्ते हे राहो हे बलैष महाणंवे। नागपाशैदृंदैर्बद्ध्वा क्षिप्यतां मा विलम्ब्यताम्॥ ५२ अन्यत्रा सकला लोकास्तथा दैतेयदानवाः। अनुवास्यन्ति मृद्धस्य मतमस्य दुरात्मनः॥ ५३ बहुशो वारितोऽस्माभिरयं पापस्तथाप्यरेः। स्तुर्ति करोति दुष्टानां वध एवोपकारकः॥ ५४

ततस्ते सत्वरा दैत्या बद्ध्या तं नागवन्धनैः । भर्तुराज्ञो पुरस्कृत्य विक्षिपुः सिललार्णवे ॥ ५५ ततश्च्याल बलता प्रद्वादेन महार्णवः । उद्वेलोऽभूत्परं क्षोभमुपेत्य च समन्ततः ॥ ५६ भूलोकमिखलं दृष्ट्वा प्राव्यमानं महाम्मसा । हिरण्यकशिपुर्दैत्यानिदमाह महामते ॥ ५७

हिरण्यकश्चित्रपुरुवाच

दैतेयाः सकतैः शैर्लस्त्रैव वरुणालये । निश्चिद्धैः सर्वशः सर्वैश्चीयतामेष दुर्मीतः ॥ ५८ निश्चिद्धैति नैवायं शस्त्रैश्चित्रत्रो न चोरगैः । क्षयं नीतो न वातेन न विषेण न कृत्यया ॥ ५९ न मायाभिनं चैवोद्धात्पातितो न च दिगाजैः । बालोऽतिदुष्टवित्तोऽयं नानेनाथौंऽस्ति जीवता ॥ ६० करना चाहिये; और जिसे मोक्षको इच्छा हो उसे भी समत्वरूपका ही प्रयत्न करना चाहिये॥ ४६,॥ देव, मनुष्य, पशु, पक्षो, वृक्ष और सरीस्य— ये सब मगवान् विष्णुसे भिन्न-से स्थित हुए भी वास्तवमें श्रीअनन्तके ही रूप हैं॥ ४७॥ इस बातको जाननेवास्त्र पुरुष सम्पूर्ण चराचर जगत्को आत्मवत् देखे, क्योंकि यह सब विश्व-रूपघारी भगवान् विष्णु ही हैं॥ ४८ ॥ ऐसा जान् रुनेपर वे अनदि परमेश्वर भगवान् अच्युत प्रसन्न होते हैं और उनके प्रसन्न होनेपर सभी क्रेश सीण हो जाते हैं॥ ४९ ॥

श्रीपराशरजी बोले — यह सुनकर हिरण्यकशिपुने क्रोधपूर्वक अपने राजसिंहासनसे उठकर पुत्र प्रहादके वधःस्थलमें छात मारी॥ ५०॥ और क्रोघ तथा अमुर्वसे जलते हुए मानो सम्पूर्ण संसारको मार डालेगा इस प्रकार हाथ मलता हुआ बोला॥ ५१॥

हिरण्यकिशिपुने कहा — हे विश्वविते ! हे सही । हे बल ! तुमलोग इसे भली प्रकार नागपाशसे बाँधकर पहासागरमें डाल दो, देरी पत करो ॥ ५२ ॥ नहीं तो सम्पूर्ण लोक और दैल्य-दानव आदि भी इस मृद्ध दुरात्माके मतका ही अनुगमन करेंगे [अर्थात् इसकी तरह वे भी विष्णुभक्त हो जायँगे] ॥ ५३ ॥ हमने इसे बहुतेस रोका, तथापि यह दुष्ट शतुकी ही स्तुति किये जाता है । ठीक है, दुष्टोको तो मार देना ही लामदायक होता है ॥ ५४ ॥

भीपराद्दारजी बोले—तथ उन दैत्येनि अपने लामोकी आज्ञाको शिरोधार्य कर तुरत्त ही उन्हें नागपाशसे बॉबकर समुद्रमें डाल दिया ॥ ५५ ॥ उस समय प्रह्लाटजीके हिलने-इलनेसे सम्पूर्ण महासागरमें हलचल मच गयी और अत्यन्त थोभके कारण उसमें सब ओर ऊँची-ऊँची लहरें उठने लगीं ॥ ५६ ॥ हे महामते । उस महान् जल-पूरसे सम्पूर्ण पृथिवीको डूबती देख हिरण्यकशिपुने दैत्योंसे इस प्रकार कहा ॥ ५७ ॥

हिरण्यकशिषु बोला—और दैत्यों ! तुम इस दुर्मितको इस समुद्रके भीतर ही किसी ओरसे खुला न रखकर सब ओरसे सम्पूर्ण पर्नतीसे दबा दो ॥ ५८ ॥ देखो, इसे न तो अग्निने जलाया, न यह शब्तीसे कटा, न सपेंसे नष्ट हुआ और न वायु, विष और कृत्यासे ही क्षीण हुआ, तथा न यह मायाओंसे, ऊपरसे गिरानेसे अथवा दिग्नजोंसे ही गारा गया। यह बालक अल्पन्त दुष्ट-कित्त है, अब इसके जीवनका कोई तदेष तोयमध्ये तु समाक्रान्तो महीधरै:। तिष्ठत्वब्दसहस्रान्तं प्राणान्त्रास्यति दुर्मति: ॥ ६१ ततो दैत्या दानवाश्च पर्वतैस्तं महोदधौ । आक्रम्य वयनं चक्कयोंजनानि सहस्रशः ॥ ६२ स चित्तः पर्वतैरन्तः समुद्रस्य महामतिः । तुष्टावाह्विकवेलायामेकाश्रमतिरच्यतम् ॥ ६३ पहुंचद् उदाच नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते पुरुषोत्तम । नमस्ते सर्वलोकात्मन्नमस्ते तिग्मचक्रिणे ॥ ६४ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च। जगद्धिताय कृष्णाय गोकिन्दाय नमो नमः ॥ ६५ ब्रह्मत्वे सुजते विश्वं स्थितौ पालयते पुनः । स्द्ररूपाय कल्पान्ते नमस्तुभ्यं त्रिमूर्तये ॥ ६६ देवा यक्षासूराः सिद्धा नागा गन्धर्वीकेत्रराः । पिञाचा राक्षसाश्चेव मनुष्याः पशवस्तथा ॥ ६७ पश्चिणः स्थावराश्चैव पिपीलिकसरीसृपाः । भूम्यापोऽप्तिर्नभो वायुः शब्दःस्पर्शस्तथा रसः ॥ ६८ रूपं गन्धो मनो बुद्धिरात्मा कालस्तथा गुणाः । एतेपां परमार्थश्च सर्वमेतत्त्वमच्युत ॥ ६९ विद्याविद्ये भवान्सत्यमसत्यं त्वं विषामृते । प्रवृत्तं च निवृत्तं च कर्मं वेदोदितं भवान् ॥ ७० समस्तकर्मभोक्ता च कर्मोपकरणानि च। त्वमेव विष्णो सर्वाणि सर्वकर्मफलं च यत् ॥ ७१ प्रव्यन्यत्र तथान्येषु भूतेषु भुवनेषु च। तवैव व्याप्तिरैश्चर्यंगुणसंसूचिकी प्रभो ॥ ७२ त्वां योगिनश्चित्तयन्ति त्वां यजन्ति च याजकाः । हव्यकव्यभुगेकस्त्वं पितृदेवस्वरूपधृक् ॥ ७३ रूपं महत्ते स्थितमत्र विश्वं जगदेतदीश । स्थ्म ततश

रूपाणि सर्वाणि च भूतभेदा-

बि॰ प॰ ४—

स्तेष्टन्तरात्माख्यमतीव सूक्ष्मम् ॥ ७४

प्रयोजन मही है ॥ ५९-६० ॥ अतः अब यह पर्वतीसे लदा हुआ हजारी वर्षतक जलमें ही पड़ा रहे, इससे यह दुर्भीत स्वयं हो प्राण छोड़ देगा ॥ ६१ ॥ तब दैस्य और दानवीने उसे समुद्रमें ही पर्वतीसे देककर उसके ऊपर हजारों योजनका देर कर दिया ॥ ६२ ॥ उन महामतिने समुदमें पर्वतीसे लाद दिये जानेपर अपने नित्यक्रमेंकि समय एकाम चित्रसे श्रीअञ्चतभगवान्की इस प्रकार स्तृति की ॥ ६३ ॥ प्रहादनी बोले—हे कमलनयन! आपको नमस्कार है। हे पुरुषोत्तम ! आफ्को नमस्कार है। हे सर्वलोकात्पन् ! आपको नमस्कार है । हे तीक्ष्णच्क्रधारी प्रमो ! आपको बारम्बार उमस्बार है॥ ६४॥ गो-ब्राह्मण-हितकारी ब्रह्मण्यदेव भगवान् कृष्णको नमस्कार है । जगत्-हितकारी श्रीगोविन्दको बारम्बार नमस्कार है ॥ ६५ ॥ आप वहारूपसे विश्वकी रचना करते हैं, फिर इसके रिचत हो जानेपर विष्णुरूपसे पालन करते हैं और अन्तमें रुद्ररूपसे संहार करते हैं—ऐसे त्रिमुर्तिधारी आपको नमस्कार है ॥ ६६ ॥ हे अच्युत ! देव, यक्ष, असूर, सिद्ध, नाग, गञ्चनं, किन्नर, पिकाच, शक्तम, मनुष्य, पद्मा, पक्षी, स्थावर, पिपीलिका (चींटी), सरीसप, पृथियी, जल, अप्रि, आकाश, बायु, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, मन, बृद्धि, आत्मा, काल और गुण-इन सबके पारमार्थिक रूप आप हो हैं, बासावमें आप ही ये संब हैं ॥ ६७—६९ ॥ आए ही विद्या और अविद्या, सत्य और असल्य तथा विष और अमृत हैं तथा आप ही वेदोक्त प्रवृत्त और निवृत्त कर्म हैं॥ ७०॥ है विष्णो ! आप हो समस्त कमोंके पोस्त्र और उनकी सामग्री हैं तथा सर्व कमेंकि जितने भी फल हैं वे सब भी आप ही हैं॥ ७१॥ हे प्रभो ! मुझमें तथा अन्यत्र समस्त भूतों और भुवनोंमें आपहोके गुण और ऐश्वर्यको सुनिका व्यक्ति हो रही है ॥ ७२ ॥ योगिगण आपहीका ध्यान धरते हैं और याज्ञिकराण आगडीका यजन करने हैं, तथा पिहराण और देखगणके रूपसे एक आप हाँ हक्द और कल्पके भोक्स है ॥ ७३ ॥ हे ईश ! यह निखिल बहाएड ही आपका स्थल रूप है, उससे सुक्ष्म यह संसार (पृथिवीमण्डल) है, उससे भी सुक्ष्य ये भित्र-भित्र रूपधारी समस्त प्राणी हैं; उनमें भी जो अत्तरात्मा है वह और भी अत्यन्त सुक्ष्म है।। ७४।। तस्माद्य सुक्ष्मादिविशेषणाना-मगोचरे यत्परमात्मरूपम् । किमप्यचित्त्यं तब रूपमस्ति नमस्ते 🕆 पुरुषोत्तमाय ॥ ७५ सर्वभृतेषु सर्वात्मन्या शक्तिरपरा तव । गुणाश्रया नमस्तस्यै शाश्चतायै सुरेश्वर ॥ ७६ यातीतगोचरा वाचां मनसां चाविशेषणा । ज्ञानिज्ञानपरिच्छेद्या तां वन्दे स्वेश्वरीं पराम् ॥ ७७ 🕉 नमो बासुदेवाय तस्मै भगवते सदा। व्यतिरिक्तं न यस्यास्ति व्यतिरिक्तोऽचिलस्य यः ॥ ७८ नमस्तस्मै नमस्तस्मै नमस्तस्मै महात्मने । नाम रूपं न यस्यैको योऽस्तित्वेनोपलभ्यते ॥ ७९ यस्यावताररूपाणि समर्चन्ति दिवौकसः। अपञ्चन्तः परं रूपं नमस्तस्मै महात्मने ॥ ८० योऽन्तस्तिष्ठन्नदोषस्य पश्यतीशः शुभाशुभम् । तं सर्वसाक्षिणं विश्वं नमस्ये परेश्वरम्॥ ८१ नमोऽस्तु विष्णवे तस्मै यस्याभिन्नमिदं जगत् । ध्येयः स जगतामाद्यः स प्रसीदत् मेऽव्ययः ॥ ८२ यत्रोतमेतत्रोतं च विश्वमक्षरमध्ययम् । आधारभूतः सर्वस्य स प्रसीदतु मे हरिः ॥ ८३ 🕉 नमो विष्णवे तस्मै नमस्तस्मै पुनः पुनः । यत्र सर्व यतः सर्व यः सर्व सर्वसंश्रयः ॥ ८४ एवाहमवस्थितः । सर्वगत्वादनन्तस्य स मत्तः सर्वपहं सर्वं मयि सर्वं सनातने ॥ ८५

अहमेवाक्षयो नित्यः परमात्पात्मसंश्रयः ।

ब्रह्मसंज्ञोऽहमेवात्रे तथान्ते च परः पुमान् ॥ ८६

उससे भी परे जो सुक्ष्म आदि विशेषणोंका अविषय आपका कोई अचिन्त्य परमात्मस्वरूप है उन पुरुषोत्तमरूप आपको नमस्कार है ॥ ७५ ॥ हे सर्वात्पन् ! समस्त भूतोंभें आपकी जो गुणाश्रया पराशक्ति है, हे स्रेश्वर ! उस नित्यस्वरूपिणीको नमस्त्रार है ॥ ७६ ॥ जो वाणी और मनके परे है, विशेषणरहित तथा ज्ञानियोंके ज्ञानसे परिच्छेद्य है उस खतन्त्रा पराशक्तिकी मै वन्द्रना करता है ॥ ७७ ॥ ॐ उन भगवान् नासुदेक्को सदा नमस्कार है, जिनमें अतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं है तथा जो स्वयं सबसे अतिरिक्त (असङ्ग) है ॥ ७८ ॥ जिनका कोई भी नाम अथवा रूप नहीं है और जो अपनी सत्तामात्रसे ही उपलब्ध होते हैं उन महात्माको नमस्कार है, नमस्कार है, नमस्कार है ॥ ७९ ॥ जिनके पर-स्वरूपको न जानते हुए ही देवतागण उनके अवतार-शरीरीका सम्यक् अर्चन करते हैं उन महात्माको नमस्कार है ॥ ८० ॥ जो ईश्वर सबके अन्तःकरणोमें स्थित होकर उनके शुभाशुभ कर्मीको देखते हैं उन सर्वसाधी विश्वरूप परमेश्वरको मैं नमस्कार करता है ॥ ८१ ॥

जिनसे यह जगत् सर्वथा अभिन्न है उन श्रीविष्णु-भगवान्को नमस्कार है वे जगत्के आदिकारण और बोगियोंके ध्येय अव्यय हरि मुझपर प्रसन्न हो ॥ ८२ ॥ जिनमें यह सम्पूर्ण विश्व औत्त्रोत है वे अक्षर, अव्यय और सबके आधारभूत हरि मुझपर प्रसन्न हो ॥ ८३ ॥ ३% जिनमें सब कुछ स्थित है, जिनसे सब उत्पन्न हुआ है और जो स्वयं सब कुछ तथा सबके आधार है, उन श्रीविष्णु-भगवान्को नमस्कार है, उन्हें बारम्बार नमस्कार है ॥ ८४ ॥ भगवान् अनन्त सर्वगामी हैं; अतः वे ही मेरे रूपसे स्थित है, इस्तिक्ये यह सम्पूर्ण जगत् मुझहीसे हुआ है, मैं ठी बह सब कुछ हूँ और मुझ स्वातनमें ही यह सब स्थित है ॥ ८५ ॥ मैं ही अक्ष्यं, नित्य और आसाधार परमात्मा हूँ, तथा मैं ही जगत्के आदि और अन्तमें स्थित ब्रह्मसंज्ञक परमपुरम हूँ ॥ ८६ ॥

eg. 1 e.J.

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽशे एकोनविंशतितमोऽध्यायः॥ १९॥

बीसवाँ अध्याय

प्रह्लादकृत भगवत्-स्तुति और भगवान्का आविर्माव

श्रीपरास अवाव एवं सञ्चित्तयन्त्रिष्णुमभेदेनात्मनो द्विज । तन्त्रयत्वमवाण्यात्र्यं मेने चात्मानमच्युतम् ॥ विसस्मार तथात्मानं नान्यितकञ्चिदजानत । अहमेवाव्ययोऽनत्तः परमात्मेत्यचित्तवत् ॥ तस्य तद्धावनायोगात्क्षीणपायस्य वै क्रमात् । शुद्धेऽन्तःकरणे विष्णुस्तस्यौ ज्ञानमयोऽच्युतः ॥ योगप्रभावात्प्रहृादे जाते विष्णुभयेऽसुरे । चलत्युरगबन्धैसौमेत्रय त्रृटितं क्षणात् ॥

भ्रान्तप्राहगणः सोर्मिर्ययौ क्षोभं महार्णवः । चचाल च मही सर्वा सशैलवनकानना ॥ स च तं शैलसङ्घातं दैत्यैर्न्यस्तमश्रोपरि । उत्कारय तस्मात्सलिलान्निश्चकाम महामतिः ॥

दृष्टा च स जगद्भूयो गगनासुपलक्षणम् । प्रद्वादोऽस्मीति सस्मार पुनरात्मानमात्मनि ॥ तुष्टाव च पुनर्थीमाननादि पुरुषोत्तमम् । एकात्रमतिरव्ययो यतवाकायमानसः ॥

श्रहार उवाच ॐ नमः परमार्थार्थ स्थूलसूक्ष्म अराक्षर ।

व्यक्ताव्यक्त कलातीत सकलेश निरञ्जन ॥ गुणाञ्जन गुणाधार निर्गुणात्मन् गुणस्थित ।

मूर्तामूर्तमहामूर्ते सुश्चमपूर्ते स्फुटास्फुट ॥ १०

करालसौम्यरूपात्पन्विद्याऽविद्यामयाच्युतः । सदसद्भुपसद्धावः सदसद्धावभावनः ॥ ११

नित्यानित्यप्रपञ्चात्मन्निष्मपञ्चामलाश्रित । एकानेक नमस्तुभ्यं वासुदेवादिकारण ॥ १२

यः स्थूलसूक्ष्मः प्रकटप्रकाशो

यः सर्वभूतो न च सर्वभूतः।

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे हिज ! इस प्रकार भगवान् विष्णुको अपनेसे अभिन्न चिन्तन करते-करते पूर्ण तन्मयता

प्राप्त हो आनेसे उन्होंने अपनेको अच्युत रूप हो अनुभव किया ॥ १ ॥ वे अपने-आफ्को भूल गये; उस समय उन्हें श्रीविष्णुभगवान्के अतिरिक्त और कुछ भी प्रतीत न होता

श्रीविष्णुभगवान्के अतिरिक्त और कुछ भी प्रतित न होता था। बस, फेवल यही भावना चित्तमें थी कि मैं ही अव्यय और अनन्त परमात्मा हूँ ॥ २ ॥ उस भावनाके योगसे वे श्रीण-पाग हो पये और उनके शुद्ध अन्तःकरणमे

हे मैत्रेय ! इस प्रकार योगवलसे असुर प्रह्लादजिके विष्णुमय हो जानेपर उनके विच्चित्रत होनेसे ये नागपादा एक शणभरमें ही टूट गये ॥ ४ ॥ अमणशील माहगण और तरलतरंगींसे पूर्ण सम्पूर्ण महासागर शुंध्य हो गया, तथा पर्वत और बनोपवनींसे पूर्ण समस्त पृथिवी हिलने लगी ॥ ५ ॥ तथा महामति प्रह्लादजी अपने ऊपर

दैत्योंद्वारा लादे गये उस सम्पूर्ण पर्वत-समूहको दूर

ज्ञानस्वरूप अच्यतः श्रीविष्णभगवान् विराजमान हुए ॥ ३ ॥

फेंककर जलसे बाहर निकल आये। ६॥ तब आकाशादिरूप जगत्को फिर देखकर उन्हें चित्तमें यह पुनः भान हुआ कि मैं प्रक्षाद हूँ॥ ७॥ और उन महाबुद्धिभान्ने मन, बाणी और शरीरक संवयपूर्वक धेर्य धारणकर एकाय-चित्तसे पुनः भगवान् अनादि पुरुषोत्तमकी स्तुति की ॥ ८॥ प्रह्मादजी कहने लगे—हे परमार्थ ! हे अर्थ

(दृइयरूप) ! हे स्यूलसूश्म (जावत्-स्वप्रदृश्य-स्वरूप) ! हे शराक्षर (कार्य-कारणरूप) हे व्यक्ताव्यक्त (दृश्यादृश्यस्वरूप) ! हे कलातीत ! हे सकलेश्वर ! हे निरञ्जन देव ! आपको नमस्कार है ॥ ९ ॥ हे गुणीको अनुर्रञ्जित करनेवाले ! हे गुणाधार ! हे निर्गुणात्मन् ! हे भुणस्थित ! हे मूर्त और अमृतीरूप महामूर्तिमन् ! हे सुश्यमूर्ते ! हे प्रकाशाप्रकाशस्वरूप ! [आपको नमस्कार

अविद्यामय अन्युतः! हे सदसत् (कार्यकारण) रूप जगत्के उद्भवस्थान और सदसञ्जगत्के पालकः! [आपको नमस्कार है]॥११॥ हे नित्यानित्य (आकाशपटादिरूप) प्रपञ्जासन्! हे प्रपञ्चसे पृथक्

है] ॥ १० ॥ हे विकसल और सुन्दररूप ! हे बिद्या और

रहनेवाले हे ज्ञानियोंके आश्रयरूप ! हे एकानेकरूप आदिकारण वासुदेव ! [आपको नगस्कार है] ॥ १२ ॥ जो स्थूल-सूक्ष्यरूप और स्फुट-प्रकाशमय हैं, जो

38 विश्व यतश्चैतदविश्वहेतो-र्नमोऽस्त तस्मै परुयोत्तमाय ॥ १३ श्रीपराशास उकान तस्य तचैतसो देवः स्तुतिमित्धं प्रकुर्वतः । आविर्वभूव भगवान् पीताम्बरधरो हरिः ॥ १४ ससम्प्रमस्तमालोक्य समुत्थायाकुलाक्षरम् । नमोऽस्तु विष्णवेत्येतद् व्याजहारासकृद् द्विज ॥ १५ महाद उपाय देव प्रपन्नात्तिंहर प्रसादं कुरु केशव। अवलोकनदानेन भूयो मां पावबाच्युत ॥ १६ श्रीधगवानुवाच कुर्वतस्ते प्रसन्नोऽहं भक्तिमव्यभिचारिणीम्। यथाभिलवितो मत्तः प्रह्लाद व्रियतां वरः ॥ १७ महाद उवाव -नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाप्यहम्। तेषु तेषुच्युताभक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि ॥ १८ प्रीतिरविवेकानां विषयेषुनपायिनी । सा मे हृदयान्यापसर्पत् ॥ १९ त्वामनुस्मरतः श्रीभगवानवाच मयि भक्तिस्तवास्येव भूयोऽप्येवं भविष्यति। वरस्तु मत्तः प्रह्वाद क्रियतां यस्तवेष्मितः ॥ २० मयि द्वेषानुबन्धोऽभूत्संस्तुताबुद्यते तव। मत्पितुस्तत्कृतं पापं देव तस्य प्रणक्यतु ॥ २१ शस्त्राणि पातितान्यङे क्षिप्तो यद्याजिसंहतौ । दंशितश्चोरगैर्दतं यद्विषं मम भोजने ॥ २२ बद्धा समुद्रे यत्क्षिप्तो यचितोऽस्मि शिलोचर्यैः ।

अन्यानि चाप्यसाधूनि यानि पित्रा कृतानि मे ॥ २३ त्वयि भक्तिमतो द्वेषादधं तत्सम्भवं च यत् । त्वत्रसादात्रभो सद्यस्तेन मुच्चेत मे पिता ॥ २४

श्रीभगवानुबाच प्रहाद सर्वपेतत्ते मह्मसादाद्धविष्यति । अन्यश्च ते वरं दक्षि ब्रियतामसुरात्मज ॥ २५ अधिष्ठानरूपसे सर्वगृतस्वरूप तथापि वस्तृतः सन्पूर्ण भुतादिसे परे हैं, विश्वके कारण न होनेपर भी जिनसे यह समस्त विश्व उत्पन्न हुआ है; उन पुरुषोत्तम भगवानुको नमस्कार है ॥ १३ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले --- उनके इस प्रकार तन्पयता-पूर्वक स्तृति करनेपर पोताम्बरधारी देवाधिदेव भगवान् हरि प्रकट हुए ॥ १४ ॥ हे द्विज ! उन्हें सहसा प्रकट हुए देख वे खड़े हो गये और महद वाणीसे 'विष्णुभगवानको नमस्कार है ! विष्णुभगवानुको नगस्कार है !' ऐसा बारम्बार कहने रूपे ॥ १५॥

अहादजी बोले—हे शरणागत-दुःखहारी श्रीकेशबदेव ! प्रसन्न होइये । हे अच्यत ! अपने पुण्य-रहिनोसे मुझे फिर भी पवित्र कीजिये ॥ १६ ॥ श्रीभगवान् बोले—हे प्रह्लाद् मिं तेरी अनन्यमक्तिसे अति प्रसन्न हुँ; तुझे जिस वरकी इच्छा हो।

माँगे ले ॥ १७ ॥ प्रह्लादजी बोले-हे नाथ ! सहस्रो योनियोंमेंसे मै जिस-जिसमें भी जाऊँ उसी-उसीमें, हे अध्यत ! आपमें मेरी सर्वदा अक्षुण्ण भक्ति रहे॥ १८॥ अविवेकी

पुरुषोंकी विषयोंमें जैसी अविचल प्रीति होती है वैसी ही आपका समरण करते हुए भेरे हदयसे कभी दर न हो ॥ १९॥ श्रीभगवान् बोले —हे प्रहाद ! मुझमें तो तेरी भक्ति

है ही और आगे भी ऐसी ही रहेगी; किन्तु इसके अतिरिक्त भी बुझे और जिस करकी इच्छा हो मुझसे माँग ले ॥ २० ॥ 🦈 प्रह्लादजी बोले—हे देव ! आपकी स्तृतिमें प्रयुत्त होनेसे मेरे पिताके चित्तमें मेरे प्रति जो द्वेष हुआ है उन्हें इससे जो पाप लगा है वह नष्ट हो जाय ॥ २१ ॥ इसके

अतिरिक्त [उनको आज्ञासे] भेरे इस्रोस्पर जो इस्लायात किये गये—मुझे अभिसमृहमें डाल्प्र गया; सपीसे कटवाया गया, भोजनमें दिव दिया गया, बाँधकर समुद्रमें डाला गया, शिलाओंसे दबाया गया तथा और भी जो-जो दुर्व्यवहार पिताजीने मेरे साथ किये हैं, वे सब आपमें भक्ति रखनेवाले प्रथक प्रति द्वेष होनेसे, उन्हें उनके कारण जो पाप लगा है, हे प्रभो ! आपकी कृपासे मेरे पिता उससे शीघ ही मुक्त हो जाये ॥ २२ — २४ ॥

श्रीभगवान् बोले—हे प्रह्लाद ! मेरी कृपासे तुम्हारी ये सब इच्छाएँ पूर्ण होंगी । है असुरकुमार ! मैं तुसको एक वर और भी देता हैं, तुम्हें जो इच्छा हो माँग लो ॥ २५ ॥

महार उवाच

कृतकृत्योऽस्मि भगवन्यरेणानेन यत्त्वयि । भवित्री त्वत्प्रसादेन भक्तिरव्यभिचारिणी ॥ २६ धर्मार्थकामैः कि तस्य मुक्तिस्तस्य करे स्थिता । समस्तजगतां मुले यस्य भक्तिः स्थिरा त्वयि ॥ २७

श्रीभगवानुबाच

बधा ते निश्चलं चेतो मयि भक्तिसमन्वितम् । तथा त्वं मत्त्रसादेन निर्वाणं परमाप्स्यसि ॥ २८

श्रीपराश्चर उवाच

इत्युक्त्वान्तर्दथे विष्णुस्तस्य मैत्रेय पश्यतः ।

स चापि पुनरागप्य ववन्दे चरणौ पितुः ॥ २९ तं पिता पूर्व्युपाष्राय परिष्रुज्य च पीडितम् । जीवसीत्थाह वत्सेति बाष्पार्द्रनयनो द्विज ॥ ३० प्रीतिमांश्चाऽभवतस्मित्रनुतापी महासुरः । गुरुपित्रोश्चकारैतं शुश्रूषां सोऽपि धर्मवित् ॥ ३१ पितर्युपरितं नीते नरसिंहस्वरूपिणा । विच्युना सोऽपि दैत्यानां मैत्रेयाभूत्पतिस्ततः ॥ ३२ ततो राज्यद्युति प्राप्य कर्मशुद्धिकरीं द्विज । पुत्रपौत्रांश्च सुबहूनवाप्यैश्चर्यमेव च ॥ ३३ श्लीणाधिकारः स यदा पुण्यपापविवर्जितः । तदा स भगवद्ध्यानात्परं निर्वाणमाप्रवान् ॥ ३४ एवं प्रभावो दैत्योऽसौ मैत्रेयासीन्पहापतिः ।

प्रह्लादो भगवद्धको ये त्वं मामनुपृच्छित ॥ ३५ यस्त्वेतचरितं तस्य प्रह्लादस्य महात्मनः । शृष्णोति तस्य पापानि सद्यो गच्छन्ति सङ्खयम् ॥ ३६ अहोरात्रकृतं पापं प्रह्लादचरितं नरः । शृष्वन् पठंश्र मैत्रेय व्यपोहति न संशयः ॥ ३७

पौर्णमास्याममावास्थामष्ट्रस्थामथ वा पठन् । ह्रादश्यां वा तदाञ्रोति गोञ्रदानफलं द्विज ॥ ३८

ब्रादरथा या तदाशात गाञ्चदानफल द्विज ॥ ३ प्रह्लादं सकलापत्सु यथा रक्षितवान्हरिः ।

तथा रक्षति यस्तस्य शृणोति चरितं सदा ॥ ३९

अहुद्जी बोले—हे भगवन् ! मैं तो आपके इस बरसे ही कृतंकृत्य हो गया कि आपकी कृपासे आपमें मेरी निरत्तर अविचल भक्ति रहेगी ॥ २६ ॥ हे प्रभो ! सम्पूर्ण बगत्के कारणरूप आपमें जिसकी निश्चल मक्ति है, मुक्ति भी उसकी मुद्दीमें रहती है, फिर धर्म, अर्थ, कामसे तो उसे लेना ही क्या है ? ॥ २७ ॥

श्रीभगवान् बोले--- हे प्रह्वाद ! मेरी भक्तिसे युक्त तेस चित्त जैसा निश्चल है उसके कारण तू मेरी कृपासे परम निर्वाणपद प्राप्त करेगा ॥ २८ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे मैत्रेय! ऐसा कह भगवान उनके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये: और उन्होंने भी फिर आकर अपने पिताके चरणोंकी बन्दना की ॥ २९ ॥ हे द्विज ! तब पिता हिरण्यकशिपुने, जिसे नाना प्रकारसे पीडित किया था उस पुत्रका शिर सुँघकर, ऑसोमें ऑस् भरकर कहा—'बेटा, जीता तो है !' ॥ ३० ॥ वह महान् असुर अपने कियेपर पछताकर फिर प्रह्लादसे प्रेम करने लगा और इसी प्रकार धर्मज्ञ प्रहादजी भी अपने गुरु और माता-पिताकी सेवा-शृक्षवा करने रूपे ॥ ३१ ॥ हे मैत्रेय ! तदनत्तर मुसिंहरूपधारी भगवान् विष्णुद्वारा पिताके मारे कानेपर वे देखेंकि राजा हुए॥ ३२॥ हे द्विज ! फिर प्रारब्धक्षयकारिणी राज्यलक्ष्मी, बहुत-से पुत्र-पौत्रादि तथा परम ऐश्वर्य पाकर, कर्माधिकारके क्षीण होनेपर पुण्य-पापसे रहित हो भगवानुका च्यान करते तुए उन्होंने परम निर्वाणपद प्राप्त किया ॥ ३३-३४ ॥

हे मैत्रेय ! जिनके विषयमें तुमने पूछा था वे परम भगवन्तक महामति दैत्यप्रवर प्रहादजी ऐसे प्रभावज्ञाली हुए ॥ ३५ ॥ उन महात्मा प्रहादजीके इस चरित्रको जो पुरुष सुनता है उसके पाप शींप्र हो नष्ट हो जाते हैं ॥ ३६ ॥ हे मैत्रेय ! इसमें सन्देह नहीं कि मनुष्य प्रहाद-चरित्रके सुनने या पढ़नेसे दिन-गतके (निरत्तर) किये हुए पापसे अवस्य कृट जाता है ॥ ३७ ॥ हे द्विज ! पूर्णिमा, अमावास्या, अष्टमी अथवा द्वादशीको हसे पढ़नेसे मनुष्यको गोदानका फल मिलता है ॥ ३८ ॥ जिस प्रकार भगवान्ते प्रहादबीकी सम्पूर्ण आपत्तियोंसे रक्षा की थी उसी प्रकार वे सर्वदा उसकी भी रक्षा करते हैं जो उनका चरित्र सुनता है ॥ ३९ ॥

इक्कीसवाँ अध्याय

कञ्चपजीकी अन्य स्वियोंके वंदा एवं मरुद्रणकी उत्पत्तिका वर्णन

औपरादार उवाच

संद्वादपुत्र आयुष्पाञ्छिबिर्बाष्कल एव च । विरोचनस्तु प्राह्मदिबीलर्जज्ञे विरोचनात् ॥ 8 बले: पुत्रदातं त्वासीद्वाणज्येष्टं महामुने । हिरण्याक्षसुताश्चासन्सर्व एव महाबलाः ॥ उत्कुरः शकुनिश्चैव भूतसन्तापनस्तथा। महानाभो महाबाहुः कालनाभस्तथापरः ॥ अभवन्दनुषुत्राश्च द्विमूर्द्ध शम्बरस्तथा। अयोमुखः सङ्क्षत्रियः कपिलः सङ्करस्तथा ॥ एकचको महाबाह्स्तारकश्च महाबलः। स्वर्भानुर्वृषपर्वा च पुलोमश्च महाबल: ॥ ч एते दनोः सुताः ख्याता विप्रचित्तिश्च वीर्यवान् ॥ Ę स्वर्भानोस्तु प्रभा कन्या शर्मिष्ठा वार्षपर्वणी । उपदानी हयशिराः प्रख्याता वरकन्यकाः ॥ वैश्वानरसूते बोधे पुल्प्रेमा कालका तथा। उभे सुते महाभागे मारीचेस्तु परिग्रह: ॥ 6 ताभ्यां पुत्रसहस्राणि षष्टिर्दानवसत्तमाः। पौलोपाः कालकेयाश्च मारीचतनयाः स्पृताः ॥ ततोऽपरे महावीर्या दारुणास्त्वतिनिर्धृणाः । सिंहिकायामश्रोत्पन्ना विप्रचित्तेः सुतास्तया ॥ १० व्यंदाः शल्यश्च बलवान् नभश्चैव महाबलः । वातापी नमुचिश्चैव इल्वलः खसुमस्तथा ॥ ११ अन्यको नरकश्रैव कालनाभसाधैव च । स्वर्भानुश्च महावीर्यो वक्त्रयोधी महासुरः ॥ १२ एते वै दानवाः श्रेष्ठा दनुवंशविवर्द्धनाः । एतेषां पुत्रपौत्राश्च शतशोऽध सहस्रशः ॥ १३

प्रह्लादस्य तु दैत्यस्य निवातकवचाः कुले ।

षद् सुताः सुमहासत्त्वास्तान्नायाः परिकोर्त्तिताः ।

समुत्पन्नाः सुमहता तपसा भावितात्पनः ॥ १४

ञ्चकी रूयेनी च भासी च सुग्रीवीशुचिगृद्धिकाः ॥ १५

श्रीपराशस्त्री कोले—संहादके पुत्र आयुष्पान् शिव और वाष्कल थे तथा प्रहादके पुत्र विगेचन ये और विगेचनसे विल्का जन्म हुआ ॥ १ ॥ हे महापुने ! बलिके सौ पुत्र थे जिनमें बाणासुर सबसे बद्धा वा । हिरण्याक्षके पुत्र उत्कुर, शकुनि, भृतसन्तापन, पहानाभ, पहाबाहु तथा कालनाभ आदि सभी महाबलवान् थे ॥ २-३ ॥

(करवपर्णाकी एक दूसरी स्त्री) दनुके पुत्र द्विमूर्थी,

शम्बर, अयोमुख, शंकुशिय, ऋपिल, शंकर, एकच्छा, महाबाहु, तारक, महाबल, स्वर्भानु, कृषपर्वा, महाबली पुरुषेम और परमपराक्रमी विप्रचिति थे। ये सब दनुके पुत्र विख्यात हैं ॥ ४—६ ॥ स्वर्भानुकी कन्या प्रभा थी तथा रामिष्टा, उपदानी और हयशिश —ये वृष्पवीकी परम सुन्दरी कन्याएँ विख्यात हैं ॥ ७ ॥ वैश्वानरकी पुलोमां और कालका दो पुत्रियाँ धाँ। हे महाभाग ! से दोनों कन्याएँ मरीचितन्दन करवपजीकी भाषी नुई ॥ ८ ॥ उनके पुत्र साठ हजार दानव-श्रेष्ठ हुए। मर्रीचनन्दन कञ्चपजीके वे सभी पुत्र पौलोम और कालकेय कहलाये॥ ९॥ इनके सिवा विप्रचित्तिके सिहिकाके गर्भसे और भी बहुत-से महाबल्यान्, भवकर और अतिकृर पुत्र उत्पन्न हुए ॥ १० ॥ वे व्यंश, शल्य, बलवान् नम, महाबली वातापी, नमुचि, इल्चल, स्रसृम, अन्धक, नरक, कालनाभ, महाजीर, स्वर्भानु और महादैत्य वक्त्र योधी थे। ॥ ११-१२ ॥ ये सब दानवश्रेष्ट दनुके वंशको बढ़ानेवाले थे। इनके और भी सैकड़ों-हजारों पुत्र-पीत्रादि हुए ॥ १३ ॥ महान् तपस्याद्वारा आत्मज्ञानसम्पन्न दैत्यवर प्रह्लादजीके कुलमें निवासकवच नामक दैख उत्पन्न हुए ॥ इत्र ॥

कश्यपजीको स्त्री ताम्राकी शुकी, श्येनी, भासी, सुप्रीकी, शुचि और गृद्धिका—ये छः अति प्रभाव-शास्त्रिमी कन्माएँ कही जाती हैं॥ १५॥

शुकी शुकानजनयदुलुकअत्युलुकिकान्। रयेनी रूपेनांस्तथा भासी भासान्मद्धांश्च गृद्ध्व्यपि ॥ १६ ञुच्योदकान्पक्षिगणान्सुप्रीवी तु व्यजायत । अश्वानुष्टान्गर्दभांश्च ताप्रावंशः प्रकीर्त्तितः ॥ १७ विनतायास्तु द्वौ पुत्रौ विख्याती गरुडारुणौ । सुपर्णः पततां श्रेष्टो दारुणः पन्नगाशनः ॥ १८ सुरसायां सहस्रं तु सर्पाणाममितौजसाम् । अनेकशिरसां ब्रह्मन् खेचराणां महात्मनाम् ॥ १९ काद्रवेयास्तु बलिनः सहस्रममितौजसः। सुपर्णवशागा ब्रह्मन् जित्तरे नैकमस्तकाः ॥ २० तेषां प्रधानभूतास्त् शेषवासुकितक्षकाः । शङ्कश्वेतो महापद्मः कम्बलाश्वतरौ तथा ॥ २१ एलापुत्रस्तथा नागः कर्कोटकधनञ्जयौ । एते जान्ये च बहवो दन्दशुका विषोल्बणाः ॥ २२ गणं क्रोधवरां विद्धि तस्याः सर्वे च दंष्टिणः । स्थलजाः पश्चिणोऽक्जाश्च दारुणाः पिदिःताशनाः ॥ २३ क्रोचा तु जनयामास पिशाचांश्च महाबलान् । गास्तु वै जनयामास सुर्राधर्महिषांस्तथा । इरावृक्षलतावल्लीस्तृणजातीश्च सर्वशः ॥ २४ खसा तु यक्षरक्षांसि मुनिरप्सरसस्तथा। अरिष्टा तु महासत्त्वान् गन्धर्वान्समजीजनत् ॥ २५ एते कश्यपदायादाः कीर्त्तिताः स्थाणुजङ्गमाः । तेषां पुत्राश्च यौत्राश्च शतकोऽथ सहस्रकाः ॥ २६ एष मन्वन्तरे सर्गो ब्रह्मन्वारोचिये स्पृत: ॥ २७ वैवस्तते च महति वारुणे वितते कृतौ । जुह्यानस्य ब्रह्मणो वै प्रजासर्ग इहोच्यते ॥ २८ पूर्वं यत्र तु सप्तर्षीनुत्पन्नान्सप्तमानसान्। पितृत्वे कल्पयामास स्वयमेव पितामहः । गन्धर्वभोगिदेवानां दानवानां च सत्तम ॥ २९ दितिर्विनष्टपुत्रा वै तोषयामास काञ्चपम्।

तया चाराधितः सम्यक्काश्यपस्तपतां वरः ॥ ३०

पुत्रमिन्द्रवधार्थांय समर्थममितौजसम् ॥ ३१

वरेणच्छन्द्यामास सा च यत्रे ततो यरम् ।

हुई । इस प्रकार यह ताब्राका वंदा कहा जाता है ॥ १७ ॥ विनताके गरुड और अरुण ये दो पुत्र विख्यात है। इनमें पक्षियोंमें श्रेष्ट सुपर्ण (गरुडजो) अति भयंकर और सपैंको खानेवाले हैं ॥ १८ ॥ हे ब्रह्मन् ! सुरसासे सहस्रों सर्प उत्पन्न हुए जो बड़े ही प्रभावशाली, आकाशमें विचरनेवाले, अनेक शिरॉबाले और बड़े विशासकाय थे ॥ १९ ॥ और बदुके पुत्र भी महाबली और अमित तेजस्वी अभेक सिरवाले सहस्रों सर्प ही हुए जो गरुडजीके वशवर्ती थे॥ २०॥ उनमेंसे शेष, वास्कि, तक्षक इंक्सित, महापदा, कम्बल, अश्वतर, एलापुत्र, भाग, ककोंटक, धनञ्जय तथा और भी अनेकों ठप्र विषधर एवं काटनेवार्ल सर्प प्रधान हैं ॥ २१-२२ ॥ क्रोधवशाके पुत्र क्रोधवदागण है। वे सभी बड़ी-बड़ी दाड़ीवाले, भयंकर और कचा मोस लानेवाले जलवर, स्थलवर एवं पक्षिगण हैं ॥ २३ ॥ महाबली पिशाचोंको भी ब्रवेधाने ही जन्म दिया है । स्रभिसे गौ और महिन आदिकी उत्पत्ति हुई तथा इरासे वृक्ष, लता, बेल और सब प्रकारके तुण उत्पन हुए हैं॥२४॥ खसाने यक्ष और ग्रक्षसंक्ते, मुनिन अप्सरऑको तथा अस्ट्रिने अति समर्थ मध्यवीको जन्म दिया ॥ २५ ॥ ये सब स्थावर-जंगम कश्यपजीकी सन्तान हुए। इनके और भी सैकड़ों-हजारों पुत्र-पौत्रादि हुए ॥ २६ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह स्वारोचिय-मन्यन्तरकी सृष्टिका वर्णन कहा जाता है॥ २७॥ वैदस्वत-मन्वन्तरके आरम्भमें महान् वारण यज्ञ हुआ, उसमें ब्रह्माजी होता थे, अब मैं उनकी प्रजाका वर्णन करता हूँ ॥ २८ ॥ है साधुश्रेष्ठ ! पूर्व-मन्वन्तरमें जो सप्तर्षिगण स्वयं। ब्रह्माजीके मानसपुत्ररूपसे उत्पन्न हुए थे, उन्होंको ब्रह्माजीने इस कल्पमें गन्धवं, नाग, देव और दानवादिके पितृरूपसे निश्चित किया ॥ २९ ॥ पुत्रोके नष्ट हो जानेपर दितिने कदयपुजीको प्रसन्न किया। उसकी सम्यक् आराधनासे सन्तुष्ट हो तपस्तियोंमें श्रेष्ट कश्यपजीने उसे वर देकर प्रसन्न किया। उस समय उसने इन्द्रके वध करनेमें समर्थ एक अति तेजस्वी पुत्रका वर माँगा ॥ ३०-३१ ॥

शुक्रीसे शुक्र, उल्क एवं उल्क्रोंके प्रतिपश्नी कक आदि

उत्पन्न हुए तथा श्येनीसे इचेन (बाब), भासीसे भास और मृद्धिकासे मृद्धीका जन्म हुआ ॥ १६ ॥ मृद्धिसे जरुके

एक्षिगण और सुग्रीवीसे अश्व, डष्ट् और गर्दभोंकों इताति

स च तस्मै वरं प्रादाद्धार्यायै मुनिसत्तमः । दत्त्वा च वरमत्युशं कश्यपस्तामुबाच ह ॥ ३२ शक्रं पुत्रो निहन्ता ते यदि गर्भ शरच्छतम् । समाहितातिप्रयता जाँचिनी धारियष्यसि ॥ ३३ इत्येवमुक्त्वा तां देवीं सङ्गतः कश्यपो मुनिः । दक्षार सा च तं गर्भ सम्ववछीचसमन्विता ॥ ३४ गर्भमात्मवधार्थाय ज्ञात्वा तं मधवानपि । र्श्रिषुस्तामधागकाद्विनयादमराधिपः तस्याश्चेवान्तरप्रेप्स्रतिष्ठत्याकशासनः **ऊने वर्षशते चास्या ददर्शान्तरमात्मना ॥ ३६** अकृत्वा पादयोः श्रीचं दितिः शयनमाविशत्। निद्रा चाहारयामास तस्याः कृक्षिं प्रविरुय सः ॥ ३७ वक्रपाणिर्महागर्भ चिच्छेदाथ स सप्तधा । सम्पीड्यमानो क्ट्रोण स स्तौदातिदारुणम् ॥ ३८ मा रोदीरिति तं शकः पुनः पुनरभाषत । सोऽभवत्सप्तधा गर्भस्तमिन्द्रः कुपितः पुनः ॥ ३९ एकैकं सप्तथा चक्रे बद्रेणारिविदारिणा । मस्तो नाम देवास्ते बभूब्रुरतिवेगिनः ॥ ४० यदक्तं वै भगवता तेनैव मस्तोऽभवन् । देवा एकोनपञ्चाशत्सहाया वज्रपाणिनः ॥ ४१

मुनिश्रेष्ठ कद्मपणीने अपनी भार्या दितिको वह वर दिया और उस अति उम्र करको देते हुए वे उससे बोले— ॥ ३२॥ "यदि तुम भगवान्के ध्यानमें तत्पर रहकर अपना गर्भ शोच" और संयमपूर्वक सो वर्षतक धारण कर सकोगी तो तुन्हार पुत्र इन्द्रको मारनेवाला होगा"॥ ३३॥ ऐसा कहकर पुनि कद्मपणीने उस देवीसे संगमन किया और उसने बड़े शौचपूर्वक रहते हुए बह गर्भ धारण किया॥ ३४॥

उस गर्थको अपने वधका कारण जान देवराज इन्द्र भी विनयपूर्वक उसकी सेवा करनेके लिये आ गर्य ॥ ३५ ॥ उसके शीचादिमें कभी कोई अन्तर पड़े— यही देखनेकी इच्छासे इन्द्र वहाँ हर समय उपस्थित रहते थे । अन्तमें सौ वर्षमें कुछ हो कमी रहनेपर उन्होंने एक अन्तर देख ही लिया ॥ ३६ ॥ एक दिन दिति बिना चरण-शुद्धि किये ही अपनी शय्यापर लेट गर्बी । उस समय निद्राने उसे घेर लिया। तब इन्द्र हाथमें क्या लेकर उसकी कक्षिमें घस गये और उस महागर्भके सात टकड़े कर डाले। इस प्रकार वज्रसे पीडित होनेसे वह गर्भ जोर-कोरसे रोने लगा ॥ ३७-३८ ॥ इन्द्रने उससे पुनः-पुनः कहा कि 'मत रो' । किन्तु जब वह गर्भ सात भागोंमें विमक्त हो गया. [और फिर भी न भरा] तो इन्द्रने अत्यन्त कपित हो अपने रुख्न-विनाशक वक्से एक-एकके सात-सात ट्रकडे और कर दिये । वे ही अति वेगवान् मरुत् नामक देवता हुए ॥ ३९-४० ॥ भगवान् इन्द्रने जो उससे कहा था कि 'मा रोदीः' (मत रो) इंसीलिये वे मरुत् कहस्त्रये । ये उनचास भरुद्रण इन्द्रके सहायक देवता हुए॥ ४१॥

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽहो एकविंहोऽध्यायः॥ २१॥

'सन्ध्यायां नैव मोक्तव्यं गर्भिण्या वरवर्णिन । न स्थातव्यं न गलव्यं बृश्चनूरेषु सर्वदा ॥ वर्जयेत् कलहं लोके गात्रभक्षं तथैव च । नोन्मुककेशी विष्टेच नाश्चिः स्थात् कदाचन ॥ '

हे सुन्दरि ! गर्भिणी स्त्रीको चाहिये कि सायंकालमें भोजन न करे, वृक्षीके नीचे न जाय और न वहाँ तहरे ही तथा स्त्रीमोंके साथ करूह और अंगड़ाई होना होड़ दें, कभी केश खुला न रखें और न अपवित्र ही रहे ।

तथा भागवतमें भी कहा है—'न हिस्सात्सर्वमृतानि न श्रमेत्रानृतं क्देत्' इत्यादि। अर्थात् प्राणियोकी हिसा न करे, किसीको बुरा-भला न कहे और कभी झूठ न बोले।

शौच आदि नियम मत्यपूराणमें इस प्रकार बतलाये गये है—

बाईसवाँ अध्याय

विष्णुभगवान्की विभूति और जगत्की व्यवस्थाका वर्णन

ŧ

P

X

5

15

श्रीपराशर तथाच

यदाभिषिक्तः स पृथुः पूर्वं राज्ये महर्विभिः । ततः क्रमेण राज्यानि ददौ लोकपितामहः ॥ नक्षत्रग्रहविप्राणां वीरुधां चाप्यशेषतः । सोमं राज्ये दशहुद्धा यज्ञानां तपसामपि॥ राज्ञां वैश्रवणं राज्ये जलानां वरुणं तथा । आदित्यानां पति विष्णुं वसुनामश्च पावकम् ॥ प्रजापतीनां दक्षं तु वासवं महतामपि। दैत्यानां दानवानां च प्रह्लादपधिपं ददौ ॥ पितृणां धर्मराजं तं यमं राज्येऽभ्यवेचयत् । ऐरावतं गजेन्द्राणामशेषाणां पति ददौ ॥ पतित्रणां तु गरुडं देवानामपि वासवम् । उद्यै:श्रवसमञ्चानां वृषभं तु गवामपि॥ मुगाणां चैव सर्वेषां राज्ये सिंहं ददौ प्रभुः । शेषं तु दन्दशुकानामकरोत्पतिमव्ययः ॥ हिमालयं स्थावराणां मुनीनां कपिलं मुनिम् । निवनां देष्टिणां चैव मुगाणां व्याघ्रमीश्वरम् ॥ वनस्पतीनां राजानां प्रक्षमेवाभ्यवेचयत्।

एवमेवान्यजातीनां प्राधान्येनाकरोत्प्रभून् ॥ १ एवं विभव्य राज्यानि दिशां पालाननन्तरम् । प्रजापतिपतिर्व्रह्मा स्थापयामास सर्वतः ॥ १० पूर्वस्यां दिशि राजानं वैराजस्य प्रजापतेः । दिशापालं सुधन्वानं सुतं वै सोऽभ्यषेचयत् ॥ ११ दक्षिणस्यां दिशि तथा कर्त्मस्य प्रजापतेः ।

पुत्रं शङ्क्षपदं नाम राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ १२ पश्चिमस्यां दिश्चि तथा रजसः पुत्रमच्युतम् । केतुपन्तं महात्पानं राजानं सोऽभ्यषेचयत् ॥ १३ तथा हिरण्यरोमाणं पर्जन्यस्य प्रजापतेः ।

उदीच्यां तिशि दुर्द्धर्षं राजानमभ्यवेचयत् ॥ १४ तैरियं पृथिवी सर्वा सप्तद्वीपा सपत्तना । यथाप्रदेशमद्यापि धर्मतः परिपाल्यते ॥ १५ सीपराञ्चरजी बोले—पूर्वकालमे महर्षियोने जब महाराज पृथुको राज्यपदपर अभिषिक किया तो

जब महाराज पृथुका राज्यपद्पर आभावक किया ता लोक-पितामह श्रीब्रह्माजीने भी क्रमसे राज्योंका बैटवारा

किया ॥ १ ॥ ब्रह्माजीने नक्षत्र, प्रह, ब्राह्मण, सम्पूर्ण वनस्पति और यञ्ज तथा तप आदिके राज्यपर चन्द्रमाको नियक्त किया ॥ २ ॥ इसी प्रकार विश्ववाके पृत्र कुबेरजीको

राजाओंका, वरुणको जलोंका, विष्णुको आदित्योंका और आंग्रको वसुगणोंका अधिपति बनाया॥३॥ दक्षको प्रजापतियोंका, इन्हको मरुद्रणका तथा प्रहादजीको दैत्य

और दानबाँका आधिपत्य दिया॥४॥ पितृगणके राज्यपदपर धर्मराज यमको अभिविक्त किया और सम्पूर्ण मजराजीका स्वामित्व ऐरावतको दिया॥५॥ गरुडको

पक्षियोंका, इन्द्रको देवताओंका, उसै:श्रवाको घोड़ोका और वृषभको गौओंका अधिपति बनाया॥६॥

प्रमु बह्याजीने समस्त मृगों (चन्यपद्युओं) का राज्य सिंहको दिया और सर्पोंका स्वामी शेषनामको बनाया ॥ ७॥ स्थावरोंका स्वामी हिमालयको, मृनिजनींका

किंपिलदेवजीको और नख तथा दाढ़वाले मृगगणका राजा व्याप्त (बाध) को बनाया ॥ ८ ॥ तथा प्रश्न (पाकर) को वनस्पतियोका राजा किया। इसी प्रकार बहााजीने और-और जातियोंके प्राधान्यकी भी व्यवस्था की ॥ ९ ॥

इस प्रवार राज्योंका विभाग करनेके अनन्तर प्रजापतियोंके खामी ब्रह्माजीने सब और दिक्पालीकी स्थापना की ॥ १० ॥ उन्होंने पूर्व-दिशामें वैराज प्रजापतिके पुत्र राजा सुध-वाको दिक्पालपदपर अभिषिक किया ॥ ११ ॥ तथा दक्षिण-दिशामें कर्दम प्रजापतिके पुत्र राजा शंखपदकी नियुक्ति की ॥ १२ ॥ कभी च्युत न होनेवाले रजसपुत्र महात्मा केतुमान्को उन्होंने पश्चिप-दिशहमें स्थापित किया ॥ १३ ॥ और पर्जन्य प्रजापतिके

पुत्र अति दुर्द्धर्य राजा हिरण्यरोमाको उत्तर-दिशामें अभिनिक्त किया ॥ १४ ॥ वे आजतक सात द्वीप और अनेकों नगरोसे युक्त इस सम्पूर्ण पृथिवीका अपने-अपने

विभागानुसार धर्मपूर्वक पालन करते हैं ॥ १५॥

एते सर्वे प्रवृत्तस्य स्थितौ विष्णोर्महात्मनः । विभृतिभूता राजानो ये चान्ये मुनिसत्तम ॥ १६ ये भविष्यन्ति ये भूताः सर्वे भूतेश्वरा द्विज । ते सर्वे सर्वभूतस्य विष्णोरंशा द्विजीत्तम् ॥ १७ ये त् देवाधिपतयो ये च दैत्याधिपास्तथा । दानवानां च ये नाथा ये नाथाः पिशिताशिनाम् ॥ १८ पश्चां ये च पत्यः पतयो ये च पक्षिणाम् । मनुष्याणां च सर्पाणां नागानामधिपाश्च ये ॥ १९ वृक्षाणां पर्वतानां च प्रहाणां चापि येऽधिपाः । अतीता वर्त्तमानाश्च वे भविष्यन्ति चापरे । ते सर्वे सर्वभृतस्य विष्णोरंशसमुद्भवाः ॥ २० न हि पालनसामर्थ्यपृते सर्वेश्वरं हरिम्। स्थितं स्थितो महाप्राज्ञ भवत्यन्यस्य कस्यचित् ॥ २१ सुजत्येष जगत्सुष्टी स्थिती पाति सनातनः । इन्ति जैवान्तकत्वेन रजःसत्त्वादिसंश्रयः ॥ २२ चतुर्विभागः संसृष्टौ चतुर्धा संस्थितः स्थितौ । प्ररूपं च करोत्यनो चतुर्भेदो जनार्दनः ॥ २३ एकेनांशेन ब्रह्मासी भवत्यव्यक्तमूर्तिमान् । मरीचिमिश्राः पतयः प्रजानां चान्यभागदाः ॥ २४ कालस्तृतीयस्तस्यांद्राः सर्वभूतानि चापरः । इत्यं चतुर्घा संसृष्टी वर्ततेऽसौ रजोगुणः ॥ २५ एकांशेनास्थितो विष्णुः करोति प्रतिपालनम् । मन्दादिरूपशान्येन कालरूपोऽपरेण च ॥ २६ सर्वभूतेषु चान्येन संस्थितः कुरुते स्थितिम् । सक्तं गुणं समाश्रित्य जगतः पुरुषोत्तमः ॥ २७ आश्रित्य तमसो बुत्तिमन्तकाले तथा पुनः । स्द्रस्वरूपो भगवानेकांशेन भवत्यजः ॥ २८ अग्न्यन्तकादिरूपेण भागेनान्येन वर्तते । कालस्वरूपो भागो यसर्वभूतानि चापरः ॥ २९ विनाशं कुर्वतस्तस्य चतुर्द्धेवं महात्मनः । विभागकल्पना ब्रह्मन् कथ्यते सार्वकारिन्की ॥ ३०

ब्रह्मा दक्षादयः कालस्तथैवाखिलजन्तवः ।

विभृतयो हरेरेता जगतः सृष्टिहेतवः ॥ ३१

हे मुनिसत्तम ! ये तथा अन्य भी जो सम्पूर्ण राजालीम हैं वे सभी विश्वके पालनमें प्रवृत्त परमात्मा श्रीविष्णुभगवान्के विभृतिरूप है ॥ १६ ॥ हे द्विजोत्तम ! जो-जो भूताधिपति पहले हो गये हैं और जो-जो आगे होंगे वे सभी सर्वभूत भगवान् विष्णुके अंश हैं ॥ १७ ॥ जो-जो भी देवताओं, दैत्यों, दानवों और मासभोजियोंके अधिपति है, जो-जो पशुओं, पक्षियों, मनुष्यों, सर्पो और नार्विके अधिनायक है, जो-जो बुक्षों, पर्वती और प्रहोंके स्वामी है तथा और भी भूत, भविष्यत् एवं वर्तमानकालीन जितने भूतेश्वर है वे सभी सर्वभृत भगवान् विष्णुके अंशसे उत्पन्न हुए हैं॥ १८---२०॥ है महाप्राञ्ज! सृष्टिके पालन-कार्यमें प्रवृत्त सर्वेश्वर श्रीहरिको छोड़कर और किसीमें भी पालन करनेकी शक्ति नहीं है ॥ २१ ॥ रजः और सत्त्वादि गुणोंके आश्रयसे वे सनातन प्रभु ही जगतुकी रचनाके समय रचना करते हैं, स्थितिके समय पालन करते हैं और अन्तसमयमें कालरूपसे संहार वस्ते हैं ॥ २२ ॥

ये जनाईन चार विभागसे सृष्टिके और चार विभागसे ही स्थितिके समय रहते हैं तथा चार रूप धारण करकें ही अन्तमें प्रस्टय करते हैं॥ २३ ॥ एक अंशसे वे अव्यक्तस्वरूप बह्या होते हैं, दुसरे अंशसे मरीचि आदि प्रजापति होते हैं, उनका तीसरा अंश करल है और चौथा सम्पूर्ण प्राणी । इस प्रकार वे रजोगुणविद्यष्ट होकर चार प्रकारसे सृष्टिक समय स्थित होते हैं ॥ २४-२५ ॥ फिर वे पुरुषोत्तम सन्वगुणका आश्रय लेकर जगत्की स्थिति करते हैं। उस समय वे एक अंशसे विष्णु होकर पालन करते हैं, दुसरे अंशसे मन् आदि होते हैं तथा तीसरे अंशसे काल और चौधेसे सर्वभूतोंमें स्थित होते हैं॥२६-२७॥ तथा अन्तकालमें वे अजन्मा भगवान् तमोगुणकी बृत्तिका आश्रय ले एक अंशसे रुद्ररूप, दूसरे भागसे अग्रि और अन्तकादि रूप, तीसरेसे कालरूप और चौधेसे सम्पूर्ण भूतस्वरूप हो जाते हैं॥ २८-२९ ॥ हे ब्रह्मन् ! विनाज्ञा करनेके लिये उन महात्याकी यह चार प्रकारकी सार्वकालिक विभागकल्पना कही जाती है ॥ ३० ॥ ब्रह्मा, दक्ष आदि प्रजापतिगण, काल तथा समस्त प्राणी-ये श्रीहरिकी विभृतियाँ जगतुकी सृष्टिकी कारण हैं॥ ३१ ॥

विष्णुर्मन्वादयः कालः सर्वभूतानि च द्विज । स्थितेर्निमत्तभूतस्य विष्णोरेता विभूतयः ॥ ३२ रद्रः कालान्तकाद्याश्च समस्ताश्चेव जन्तवः। चतुर्धा प्ररूपार्यंता जनार्दनविभृतयः ॥ ३३ जगदादी तथा मध्ये सृष्टिराप्रलया द्विज। धात्रा मरीचिमिश्रैश्च क्रियने जन्तुभिस्तथा ॥ ३४ ब्रह्मा सञ्ज्यादिकाले परीचित्रमुखास्ततः । उत्पादयन्यपत्यानि जन्तवश्च प्रतिक्षणम् ॥ ३५ कालेन न विना ब्रह्मा सृष्टिनिष्पादको द्विज । न प्रजापतयः सर्वे न जैवाखिलजन्तवः ॥ ३६ एवमेव विभागोऽयं स्थितावप्युपदिश्यते। चतुर्भा तस्य देवस्य मैत्रेय प्रलये तथा॥ ३७ यत्किञ्चित्सुज्यते येन सत्त्वजातेन वै द्विज । तस्य सुज्यस्य सम्भूतौ तत्सर्व वै हरेस्तनुः ॥ ३८ इन्ति यावच यत्किञ्चित्सन्तं स्थावरजङ्गमम्। जनार्दनस्य तद्दौद्रं मैन्नेयान्तकरं वपुः ॥ ३९ एसमेष जगत्स्रष्टा जगत्पाता तथा जगत्। जगद्धक्षयिता देवः समस्तस्य जनार्दनः ॥ ४० सृष्टिस्थित्यन्तकालेषु त्रिधैवं सम्प्रवर्तते । गुणप्रवृत्त्या परमं पदं तस्यागुणे महत्।। ४१ तच ज्ञानमयं व्यापि स्वसंवेद्यमनीपपम् । चतुष्प्रकारं तदपि खरूपं परमात्मनः ॥ ४२ श्रोपैत्रेय उतास

चतुष्प्रकारतां तस्य ब्रह्मभूतस्य हे मुने। ममाचक्ष्व यथान्यायं यदुक्तं परमे पदम्॥४३ औपराजस उवाच

मैत्रेय कारणं प्रोक्तं साधनं सर्ववस्तुषु । साध्यं च वस्त्वभिमतं यत्साधिवतुमात्मनः ॥ ४४ योगिनो मुक्तिकामस्य प्राणायामादिसाधनम् । साध्यं च परमं ब्रह्म पुनर्नावर्तते यतः ॥ ४५ हे द्विज ! विष्णु, मनु आदि, काल और समस्त भूतगण—ये जगत्की स्थितिके कारणक्रम भगवान् विष्णुकी विभृतियां हैं॥३२॥ तथा रुद्र, काल, अन्तकादि और सकल जीव—श्लीजनार्दनकी ये चार विभृतियाँ भ्रल्यकी कारणक्रम हैं॥३३॥

हे हिज ! जगतके आदि और मध्यमें तथा प्ररूप-पर्यन्त भी ब्रह्मा, बरीचि आदि तथा भिन्न-भित्र जीवोसे ही सृष्टि हुआ करती है ॥ ३४ ॥ सृष्टिके आरम्पमें पहले ब्रह्माजी रचना करते हैं, फिर मरीचि आदि प्रजापतिगण और तदनकर समस्त जीव क्षण-क्षणमें सन्तान उत्पन्न करते रहते हैं॥ ३५॥ हे द्विज ! कालके बिना ब्रह्मा, प्रजापति एवं अन्य समस्त प्राणी भी सृष्टि-रचना नहीं कर सकते [अतः भगवान् कालरूप विष्णु ही सर्वदा सृष्टिके कारण है] ॥ ३६ ॥ हे मैत्रेय ! इसी प्रकार जगतुकी स्थिति और प्रलयमें भी उन देवदेवके चार-चार विभाग बताये जाते हैं ।) ३७ ॥ हे द्विज ! जिस किसी जीवदारा जो कुछ भी रचना की जाती है उस उत्पन्न हुए जीवकी उत्पत्तिमें सर्वथा श्रीहरिका इसिर ही कारण है ॥ ३८ ॥ हे मैंब्रेय ! इसी प्रकार जो कोई स्थावर-जेगम भूतोमेंसे किसीको नष्ट करता है, यह नारा करनेवाला भी श्रीजनार्दनका अन्तकारक रॉड्स्प हो है॥३९॥ इस प्रकार वे जनार्दनदेव ही समस्रा संसारके रचित्रता, पालनकर्ता और संहारक है तथा वे ही स्वयं जगत्-रूप भी है ॥ ४० ॥ जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और अन्तके समय वे इसी प्रकार तीनों गुणोंकी प्रेरणासे प्रयुत्त होते हैं, तथापि उनका परमपद यहान् निर्मुण है ॥ ४१ ॥ परमात्माका वह स्वरूप ज्ञानपय, व्यापक, स्वसंबेद्ध (स्वयं-प्रकाश) और अनुषम है तथा यह भी चार प्रकारका ही है ॥ ४२ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे मुने ! आपने जो भगवान्का परम पद कहा, वह चार प्रकारका कैसे है ? यह आप मुझसे विधिपूर्वक कहिये ॥ ४३ ॥

श्रीपराज्ञरजी बोले—हे मैत्रेय! सब वस्तुओंका जो कारण होता है वही उनका साधन भी होता है और जिस अपनी अभिमत वस्तुको शिद्धि की जाती है वही साध्य कहलाती है॥ ४४॥ मुक्तिको इच्छावाले योगिजनोंके लिये प्राणायाम आदि साधन है और परब्रह्म ही साध्य है,

साधनालम्बनं ज्ञानं मुक्तये योगिनां हि यत् । स भेदः प्रथमस्तस्य ब्रह्मभूतस्य वै मुने ॥ ४६ युक्तः क्रेशमुक्त्यर्थं साध्यं यद्वहा योगिनः । तदालम्बनविज्ञानं द्वितीयोंऽशो महामुने ॥ ४७ उभयोस्त्वविभागेन साध्यसाधनयोहि यत् । विज्ञानमद्वैतमयं तद्धागोऽन्यो मयोदितः ॥ ४८ ज्ञानत्रयस्य वै तस्य विशेषो यो महामुने । तन्निसकरणद्वारा दर्शितात्मस्वरूपवत् ॥ ४९ निर्व्यापारमनास्थेयं व्याप्तिमात्रमनृपमम् । आत्मसम्बोधविषयं सत्तामात्रमलक्षणम् ॥ ५० प्रशान्तमभयं शुद्धं दुर्विभाव्यमसंश्रयम् । विष्णोर्ज्ञानमयस्योक्तं तज्ज्ञानं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ५१ तत्र ज्ञाननिरोधेन योगिनो यान्ति ये लयम् । संसारकर्षणोस्रौ ते यान्ति निर्वीजतां द्विज ॥ ५२ एवंत्रकारममलं नित्यं व्यापकमक्षयम्। समस्तहेयरहितं विष्णवास्यं परमं पदम् ॥ ५३ तद्भार परमं योगी यतो नावर्तते पुनः । अयत्वपुण्योपरमे क्षीणक्केशोऽतिनिर्मलः ॥ ५४ द्वे रूपे ब्रह्मणस्तस्य मूर्तं चामूर्तमेव च । क्षराक्षरस्वरूपे ते सर्वभूतेष्ट्रवस्थिते ॥ ५५ अक्षरं तत्परं ब्रह्म क्षरं सर्वमिदं जगत्। एकदेशस्थितस्याप्रेज्योत्स्रा विस्तारिणी यश्चा । परस्य ब्रह्मणः शक्तिस्तथेदमस्तिलं जगत् ॥ ५६ तत्राप्यासन्नद्रस्वाह्नहत्वस्वल्पतामयः ज्योत्स्राभेदोऽस्ति तच्छक्तेस्तद्वन्यैत्रेय विद्यते ॥ ५७ ब्रह्मविष्णुशिवा ब्रह्मन्त्रधाना ब्रह्मशक्तयः। ततश्च देवा मैत्रेय न्यूना दक्षादयस्ततः ॥ ५८ ततो मनुष्याः पश्चो मृगपक्षिसरीसृपाः। न्यूनाञ्जयूनतराश्चेव वृक्षगुल्माद्यस्तथा ॥ ५९ तदेतदक्षरं नित्यं जगन्यनिवसस्विलम्। आविर्भावतिरोभावजन्मनाशविकल्पवत् ॥ ६०

वहाँसे फिर स्ट्रीटना नहीं पड़ता॥ ४५॥ हे मुने ! जो योगीको मुक्तिका कारण है, वह 'साधनालम्बन-ज्ञान' ही उस ब्रह्मभूत परमपदका प्रथम भेद हैं* ॥ ४६॥ क्रेडा-बन्धनसे मुक्त होनेके छिये योगाध्यासी योगीका साध्यरूप जो बदा है, है महामूने ! उसका ज्ञान ही 'आलम्बन-विज्ञान' नामक धुसरा भेद है।। ४७॥ इन दोनों साध्य-साधनींका अभेदपर्वक तो 'अर्द्वतमय ज्ञान' है उसीको में तीसरा भेद कहता हूँ ॥ ४८ ॥ और हे महामुने ! उक्त तीनों प्रकारके ज्ञानकी विशेषताका निराकरण करनेपर अनुभव हुए आत्मस्यरूपके समान ज्ञानस्वरूप भगवान् विष्णुका जो निर्वापार अनिर्वचनीय, व्याप्तिमात्र, अनुपम, आत्मबोधस्वरूप, सत्तामत्र, अलक्षण, शन्त, अभय, शुद्ध, भावनातीत और आश्रयहीन रूप है, वह 'बहा' नामक ज्ञान [उसका चौथा भेद] है ॥ ४९ —५१ ॥ हे द्विज ! जो योगिजन अन्य ज्ञानीका निरोधका इस (बोबे भेद) में ही लीन हो जाते हैं वे इस संसार-क्षेत्रके भीतर बीजारोपणरूप कर्म करनेमें निर्वीज (बासनारहित) होते है। अर्थात वे लोकसंग्रहके लिये कमें करते भी रहते हैं। तो भी उन्हें उन कमीका कोई पाप-पुण्यरूप फंल प्राप्त नहीं होता । ॥ ५२ ॥ इस प्रकारका वह निर्मल, नित्य, व्यापक, अक्षय और समस्त हेय गुणेंसे रहित विष्णु नामक परमपद है। ५३॥ पुण्य-पापका क्षय और क्केज़ोंबरी निवसि होनेपर जो अत्यन्त निर्मल हो जाता है वही योगी उस परवहाका आश्रय लेता है जहाँसे वह फिर नहीं लोटता ॥ ५४ ॥

उस बहाके मूर्त और अमूर्त दो रूप है, जो क्षर और अक्षररूपसे समस्त प्राणियों में रियत हैं ॥ ५५ ॥ अक्षर ही वह परबहा है और क्षर सम्पूर्ण जगत् है। जिस प्रकार एकदेशीय अग्निका प्रकाश सर्वत्र फेला रहता है उसी प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् परबंदाकी ही शक्ति है।। ५६ ॥ हे मैत्रेथ ! अग्निकी निकटता और दूरताके भेदसे जिस प्रकार उसके प्रकाशों भी अधिकता और न्यूनताका भेद रहता है उसी प्रकार बहाकी शक्ति भी तारतम्य है ॥ ५७ ॥ हे बहान् ! बहा, विष्णु और शिव बहाकी प्रभान शक्ति हैं, उनसे न्यून देवगण है तथा उनके अनन्तर दक्ष आदि प्रजापतिगण हैं ॥ ५८ ॥ उनके भी न्यून पनुष्य, पद्म, पृथ्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं तथा उनसे भी अत्यन्त न्यून वृक्त, गुल्म और सरीस्पादि हैं। ५९ ॥

^{*} प्राणायामादि साधनविषयक जानको 'साधनरूपन-जान' ४६ते हैं ।

सर्वज्ञक्तिमयो विष्णुः स्वरूपं ब्रह्मणः परम् ।
पूर्तं यद्योगिभिः पूर्वं योगारम्भेषु विन्त्यते ॥ ६१
सालम्बनो महायोगः सब्बोजो यत्र संस्थितः ।
मनस्यव्याहते सम्यग्युखतां जायते मुने ॥ ६२
स परः परशक्तीनां ब्रह्मणः समनन्तरम् ।
मूर्तं ब्रह्म महाभाग सर्वब्रह्ममयो हरिः ॥ ६३
तत्र सर्वोमदं प्रोतमोतं चैवासिलं जगत् ।
ततो जगजगत्तस्मन्स जगश्चासिलं मुने ॥ ६४
क्षराक्षरमयो विष्णुर्विभर्त्यासिललमीश्वरः ।
पुरुषाच्याकृतमयं भूषणास्त्रस्वस्त्यवत् ॥ ६५
क्षारीयाज्ञव्यव

भूषणास्त्रस्वरूपस्थं यद्यैतदिखलं जगत्। बिभर्ति भगवान्विष्णुस्तन्यमास्व्यातुमईसि ॥ ६६ औपग्रहार उवाच

नमस्कृत्याप्रमेयाय विष्णवे प्रभविष्णवे । कथयामि यथास्यातं वसिष्ठेन ममाभवत् ॥ ६७ आत्मानमस्य जगतो निर्लेपमगुणामलम् । विभक्तिं कौस्तुभमणिस्वरूपं भगवान्हरिः ॥ ६८ श्रीवत्ससंस्थानघरमनन्तेन समाश्रितम् । प्रधानं बुद्धिरप्यास्ते गदारूपेण माधवे ॥ ६९ भूतादिमिन्द्रियादि च द्विधाहङ्कारमीश्वरः । विभक्तिं शङ्करूपेण शार्ङ्गरूपेण च स्थितम् ॥ ७० चलस्वरूपमत्यन्तं जवेनान्तरितानिलम् । चक्रस्वरूपं च मनो धन्ते विष्णुकरे स्थितम् ॥ ७१ पञ्चरूपा तु या माला वैजयन्ती गदाभृतः । सा भूतहेतुसङ्घाता भूतमाला च वै द्विज ॥ ७२ यानीन्द्रियाण्यशेषाणि बुद्धिकर्मात्मकानि वै । शररूपाण्यशेषाणि तानि धन्ते जनार्दनः ॥ ७३ विभक्तिं यद्यासिरस्त्रमन्यतोऽत्यन्तनिर्मलम् ।

विद्यामयं तु तञ्ज्ञानमविद्याकोशसंस्थितम् ॥ ७४

विद्याविद्ये च मैत्रेय सर्वमेतत्समाश्रितम् ॥ ७५

इस्थं पुमान्प्रधानं च बुद्धप्रहङ्कारमेव च।

भुतानि च ह्रषीकेशे मनः सर्वेन्द्रियाणि च ।

(छिप जाना) जन्म और नादा आदि विकल्पयुक्त भी यह सम्पूर्ण जगत् वास्तवमें नित्य और अक्षय ही है ॥ ६० ॥

सम्पूर्ण जगत् वास्तवमें नित्य और अक्षय हो है ॥ ६० ॥
सर्वदातितमय विष्णु ही ब्रह्मके पर-स्वरूप तथा
मूर्तरूप है जिनका योगिजन योगारम्भके पूर्व चिन्तन करते
हैं ॥ ६१ ॥ हे मुने ! जिनमें मनको सम्यक्-प्रकारसे
निरन्तर एकाय करनेवालोंको आकृष्वनयुक्त सबीज
(सम्प्रज्ञात) महायोगको प्राप्ति होती है, हे महाभाग ! हे
सर्वब्रह्मय श्रीविष्णुभगवान् समस्त परा इक्तियोंमें प्रधान
और ब्रह्मके अल्पन्त निकटवर्ती मूर्त-ब्रह्मसरूप
हैं ॥ ६२-६३ ॥ हे पुने ! उन्हींमें यह सम्पूर्ण जगत्
ओतप्रोत है, उन्हींसे उत्पन्न हुआ है, उन्हींमें स्थित है और
स्वयं वे हो समस्त जगत् हैं ॥ ६४ ॥ क्ष्यक्षस्य (कार्यकारण-रूप) ईक्षर विष्णु हो इस पुरुष-प्रकृतिमय सम्पूर्ण
जगत्को अपने आणूषण और आयुध्यूष्यसे धारण
करते हैं ॥ ६५ ॥

श्रीपैत्रेयजी बोले—भगवान् विष्णु इस संसारको भूषण और आयुषरूपसे किस प्रकार घारण करते हैं यह आप मुझसे कहिये॥ ६६॥

श्रीपराद्यारजी बोले—हे मुने ! जगत्का पालन करनेवाले अप्रमेय श्रोविष्णुभगवानुको नमस्त्रार कर अब मैं, जिस प्रकार वसिष्ठजीने मुद्दारों कहा था वह तुम्हें सुनाता हैं ॥ ६७ ॥ इस जगतुके निर्लेष तथा निर्मुण और निर्मल आत्माको अर्थात् शुद्ध क्षेत्रज्ञ-स्वरूपको श्रीहरि कौस्तुभमणिरूपसे धारण करते हैं ॥ ६८ ॥ श्रीअनन्तने प्रधानको श्रीवत्सरूपमे आश्रय दिया है और बुद्धि श्रीमाधवकी गदारूपसे स्थित है ॥ ६९ ॥ भृतेकि कारण तामस अहंकार और इन्द्रियोंके कारण राजस अहंकार इन दोनोंको वे शंख और शाले धनुषरूपसे धारण करते है ॥ ७० ॥ अपने वेगसे पवनको भी पराजित करनेवाला अत्यन्त चञ्चल, सास्त्रिक अहंकाररूप मन श्रीविष्ण्-भगवानुके कर-कमलीमें स्थित चक्रका रूप भारण करता है।। ७१ ।। हे द्विज ! भगवान गदाधरकी जो [मुक्ता, माणिक्य, मरकत, इन्द्रनील और होरकमर्यः] पञ्चरूपा वैजयत्ती माला है वह पञ्चतत्पात्राओं और पश्चभतीका ही। संघात है॥ ७५॥ जो ज्ञान और कर्ममयो इन्द्रियाँ है उन सबको श्रीजनार्दन भगवान बाणरूपसे धारण करते हैं॥ ७३ ॥ भगवान् अच्युत जो अल्वन्त निर्मल खद्दग घारण करते हैं वह अविद्यागय कोशसे आच्छादित विद्यामय ज्ञान ही है ॥ ७४ ॥ हे मैत्रेय ! इस प्रकार पुरुष, प्रधान, बृद्धि, अहंकार, पञ्चभृत, मन, इन्द्रियाँ तथा विद्या

अख्यभूषणसंस्थानस्वरूपं रूपवर्जितः । विभक्तिं मायारूपोऽसौ श्रेयसे प्राणिनां हरिः ॥ ७६ सविकारं प्रधानं च पुर्यासमितिलं जगत्। बिभर्त्ति पुण्डरीकाक्षास्तदेवं परमेश्वर: ॥ ७७ या विद्या या तथाविद्या यत्सद्यद्यासदस्ययम् । तत्सर्वं सर्वभूतेशे पैत्रेय मधुसुद्वे ॥ ७८ कलाकाष्ट्रानिमेषादिदिनर्खयनहायनैः कालस्वरूपो भगवानपापो हरिरव्ययः ॥ ७१ भूलोंकोऽथ भुवलोंकः खलोंको मुनिसत्तम । महर्जनस्तपः सत्यं सप्त लोका इमे विभः ॥ ८० लोकात्ममूर्तिः सर्वेषां पूर्वेषामपि पूर्वजः । आधारः सर्वविद्यानां स्वयमेव हरिः स्थितः ॥ ८१ देवमानुषपश्चादिस्वरूपैर्बहभिः स्थितः । ततः सर्वेश्वरोऽनन्तो भृतमृर्तिरमृर्तिमान् ॥ ८२ ऋचो यजंषि सामानि तथैवाधर्वणानि वै। इतिहासोयवेदाश्च वेदान्तेषु तथोक्तयः ॥ ८३ वेदाङ्गानि समस्तानि मन्वादिगदितानि च। शास्त्राण्यशेषाण्यास्यानान्यनुवाकाश्च ये क्रवित् ॥ ८४

काव्यालायाश्च ये केचिद्रीतकान्यखिलानि च। शब्दमूर्तिधरस्यैतद्वपूर्विष्णोर्महात्मनः

यानि मूर्तान्यमूर्तानि यान्यब्रान्यत्र वा कवित् । सन्ति वै वस्तुजातानि तानि सर्वाणि तहुपु: ॥ ८६

अहं हरिः सर्वमिदं जनार्दनो

नान्यत्ततः कारणकार्यजातम् ।

ईंदुडूनो यस्य न तस्य भूयो

भवोद्धवा द्वन्द्वगदा भवन्ति ॥ ८७

इत्येष तेंऽञ्: प्रथम: प्राणस्यास्य वै द्विज । यथावत्कथितो यस्पिञ्जूते पापै: प्रमुच्यते ॥ ८८

कार्तिक्यां पुष्करस्राने द्वादशाब्देन यत्फलम् । तदस्य श्रवणात्सर्वं मैत्रेयाप्रोति मानवः ॥ ८९

देवर्षिपितृगन्धर्वयक्षादीनां च सम्भवम्।

भवन्ति शृण्वतः पुंसी देवाद्या वरदा मुने ॥ ९०

इति श्रीविष्णुपुराणे प्रथमेंऽरी द्वाविशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

इति श्रीपराशरमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके श्रीमति विष्णु-महापुराणे प्रथमोऽशः समाप्तः ॥

और अविद्या सभी श्रीहर्षकेकामें आश्रित है। ७५॥ श्रीहरि रूपरहित होकर भी मायामयरूपसे प्राणियोंके कल्याणके लिये इन सबको अस्त और भूषणरूपसे धारण करते हैं ॥ ७६ ॥ इस प्रकार वे कमलनयन परमेश्वर संविकार प्रधान [निर्विकार], पुरुष तथा सम्पूर्ण जगत्को धारण करते हैं॥ ७७ ॥ जो कुछ भी विद्या-आविद्या, सत्-असत् तथा अञ्चयक्रप है, हे मैत्रेय ! वह सब सर्वभृतेश्वर श्रीमधुसुदुनमें ही स्थित है॥ ७८॥ कला, ज्वष्टा, निमेष, दिन, ऋत्, अयन और वर्षस्पसे वे कालस्वरूप निष्पाप अञ्चय श्रीहरि ही विराजमान हैं ॥ ७९ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ ! भुलींक, भुवलींक और खलींक तथा मह, बन, तप और सत्य आदि सातों लोक भी सर्वव्यापक भगवान् ही है ॥ ८० ॥ सभी पूर्वजेकि पूर्वज तथा समस्त विद्याओंके आधार श्रीहरि ही स्वयं लोकमयखरूपसे स्थित है ॥ ८१ ॥ निराकार और सर्वेश्वर श्रीअनन्त ही मृतस्वरूप होकर देव, मनुष्य और पञ्च आदि नानारूपोसे स्थित है ॥ ८२ ॥ ऋक्, यजुः, साम और अथर्चबेद, इतिहास (महाभारतादि), उपवेद (आयुर्वेदादि), वेदान्तवावय, समस्त वेदांग, मनु आदि कथित समस्त धर्मशास्त्र, पुराणादि सकल शास्त्र, आख्यान, अनुवाक (कल्पसूत्र) तथा समस्त काव्य-चर्चा और रागरागिनी आदि जो कुछ भी है वे सब शब्दमर्तिधारी परमात्मा विष्णुका ही शरीर है। ८३ — ८५॥ इस लोकमें अथवा कहीं और भी जितने मृत, अमृतं पदार्थ हैं, वे सब उन्होंका इस्तर है ॥ ८६ ॥ 'मैं तथा यह सम्पूर्ण जगत् जनार्दन श्रीहरि ही है; उनसे भिन्न और कुछ भी कार्य-कारणादि नहीं हैं ----जिसके चित्तमें ऐसी माचना है उसे फिर देहजन्य राग-द्रेषादि इन्द्ररूप रोगकी प्राप्ति वहाँ होती ॥ ८७ ॥

है द्विन ! इस प्रकार तुमसे इस पुराणके पहले अंशका यथावत् वर्णन किया। इसका श्रवण करनेसे मनुष्य समस्त पापोसे मुक्त हो जाता है ॥ ८८ ॥ हे मैत्रेय ! बारह वर्षतक कार्तिक मासमें पूष्करक्षेत्रमें सान करनेसे जो फल होता है; वह सब मनुष्यको इसके श्रवणमात्रसे मिल जाता है ॥ ८९ ॥ हे मने ! देव, ऋषि, गन्धर्व, पितु और यक्ष आदिकी उत्पत्तिका श्रवण करनेवाले पुरुषको वे देवादि वरदायक हो जाते हैं ॥ ९०॥

पहला अध्याय

प्रियव्रतके वंशका वर्णन

श्रीमैत्रेय उवाच

भगवन्सम्बगाख्यातं ममैतदस्त्रिलं त्वया। जगतः सर्गसम्बन्धि वत्पृष्टोऽसि गुरो मया॥१ योऽयमंशो जगत्सृष्टिसम्बन्धो गदितस्त्वया। तत्राहं श्रोतुमिच्छामि भूयोऽपि मुनिसत्तम ॥ २ प्रियव्रतोत्तानपादौ सुतौ स्वायम्भुवस्य यौ । तयोस्तानपादस्य ध्रुवः पुत्रस्तयोदितः॥३ प्रियव्रतस्य नैवोक्ता भवता द्विज सन्ततिः । तामहं श्रोतुमिच्छामि प्रसन्नो वक्तुमहीस ॥ ४ श्रीपराधार उवाच

कर्दमस्यात्मजां कन्यामुपयेमे प्रियव्रतः । सम्राट् कुक्षिश्च तत्कन्ये दशपुत्रास्तथाऽपरे ॥ ५ महाप्रज्ञा महावीर्या विनीता दियता पितुः । प्रियव्रतसूताः ख्यातास्तेषां नामानि मे शृणु ॥ ६ आग्नीध्रश्चात्रिबाहुश्च वपुष्पान्युतिपांस्तथा ! मेघा मेघातिथिभंद्यः सबनः पुत्र एव च ॥ ७ ज्योतिष्यान्दशमस्तेषां सत्यनामा सुतोऽभवत् । प्रियन्नतस्य पुत्रास्ते प्रख्याता बलवीर्यतः ॥ ८ मेघाप्रिबाहपुत्रास्तु त्रयो योगपरायणाः ।

जातिस्परा महाभागा न राज्याय मनो दधुः ॥ ९

श्रीमैन्नेयजी बोले---हे भगवन् ! हे गुरो ! मैंने जगत्की सृष्टिके विषयमें आपसे जो कुछ पूछा था वह सब आपने मुझसे पत्नी प्रकार कह दिया ॥ १ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! जगत्की सृष्टिसम्बन्धी आपने जो यह प्रथम अंश बढ़ा है, उसको एक बात मैं और सुनना चाहता है॥२॥ स्वायम्भूवयमुके जो प्रियवत और उत्तानपाद दो पुत्र थे, डनमेंसे उत्तानपादके पुत्र धुबके विषयमें तो आपने कहा ॥ ३ ॥ किंतु, हे द्विज ! आपने प्रियवतकी सन्तानके विषयमें कुछ भी नहीं कहा, अतः मैं उसका वर्णन सुनना चाहता हैं, सो आप प्रसन्नतापूर्वक कहिये ॥ ४ ॥

श्रीपराशरजी बोले--प्रियनतने कर्दमजीकी पुत्रीसे विवाह किया था। उससे उनके सम्राट् और कुश्चि नामकी दो कन्याएँ तथा इस पुत्र हुए ॥ ५ ॥ प्रियत्रतके पुत्र बड़े बुद्धिमान्, बलवान्, विनयसम्पन्न और अपने धाता-पिताके अत्यन्त प्रिय कहे जाते हैं; उनके नाम सुनी---॥ ६ ॥वे आयोध, अभिबाह, बपुष्पान, द्युतिमान, मेधा, मेश्रातिथि, भव्य, सवन और पुत्र थे तथा दसर्वी यथार्थनामा ज्योतिष्यान् था। वे प्रियव्यक्के पुत्र अपने बल-पराक्रमके कारण विख्यात थे॥ ७-८॥ उन्भे महत्थान मेथा, अख़िबाह् और पुत्र—ये तीन योगपरायण क्षथा अपने पूर्वजन्मका वृतात्त जाननेवाले थे। उन्होंने

निर्मलाः सर्वकालन्तु समस्ताथेषु वै मुने । चकुः क्रियां यथान्यायमफलाकाङ्क्षिणो हि ते ॥ १० प्रियव्रतो ददौ तेषां सप्तानां मुनिसत्तम । सप्तद्वीपानि मैत्रेय विभज्य सुमहात्मनाम् ॥ ११ जम्बृद्वीपं महाभाग सामीधाय ददौ पिता । पेधातिथेस्तथा प्रादात्मक्षद्वीपं तथापरम् ॥ १२ शाल्मले च वपुष्पन्तं नरेन्द्रमभिषिक्तवान् । ज्योतिष्मन्तं कुशद्वीपं राजानं कृतवान्त्रभुः ॥ १३ द्युतिमन्तं च राजानं क्रोखद्वीपं समादिशत् । शाकद्वीपेश्वरं चापि भव्यं चक्रे प्रियव्रतः । पुष्कराधिपति चक्रे सवनं चापि स प्रभुः ॥ १४ जम्बृद्वीपेश्वरो यस्तु आश्रीश्रो मुनिसत्तम् ॥ १५

नाभिः किम्पुरुषश्चैव हरिवर्ष इलावृतः ॥ १६ रम्यो हिरण्यान्यष्टश्च कुरुर्भद्राश्च एव च । केतुपालस्तथैवान्यः साधुन्नेष्टोऽभवन्नपः ॥ १७ जम्बूद्वीपविभागांश्च तेषां विप्र निशामय । पित्रा दत्तं हिमाहं तु वर्षं नाभेस्तु दक्षिणम् ॥ १८ हेमकूटं तथा वर्षं ददौ किम्पुरुषाय सः । तृतीयं नैषधं वर्षं हरिवर्षाय दत्तवान् ॥ १९ इलावृताय प्रददौ मेरुर्यत्र तु मध्यमः । नीलाचलाश्चितं वर्षं रम्याय प्रददौ पिता ॥ २०

तस्य पुत्रा वभूवुस्ते प्रजापतिसमा नव ।

गन्धमादनवर्षं तु केतुमालाय दत्तवान् । इत्येतानि ददौ तेथ्यः पुत्रेथ्यः स नरेश्वरः ॥ २३ वर्षेष्ठेतेषु तान्पुत्रानिभिषच्य स भूमिपः । शालवामं महापुण्यं मैत्रेय तपसे ययौ ॥ २४ यानि किम्पुस्वादीनि वर्षाण्यष्टौ महामुने । तेषां स्वाभाविको सिद्धिः सुखप्राया ह्ययत्नतः ॥ २५

क्षेतं तदुत्तरं वर्षं पित्रा दत्तं हिरण्वते ॥ २१

मेरो: पूर्वेण यद्वर्ष भद्राश्वाय प्रदत्तवान् ॥ २२

यदुत्तरं शृङ्कवतो वर्षं तत्कुरवे दहौ।

राज्य आदि भोगोमें अपना चित्त नहीं लगाया॥९॥ हे मुने ! वे निर्मलचित्त और कर्म-फलकी इच्छासे रहित थे तथा समस्त विषयोमें सदा न्यायानुकूल ही प्रकृत होते थे॥ १०॥

हे मुनिश्रेष्ट ! राजा प्रियन्नतने अपने द्रोष सात महात्मा पुत्रोंको सात द्वीप बाँट दिखे ॥ ११ ॥ हे महाभाग ! पिता प्रियन्नतने आप्रीधको जम्बूद्वीप और मेधातिथिको प्रश्च नामक दूसरा द्वीप दिया ॥ १२ ॥ उन्होंने शाल्मरुद्वीपमे वपुष्पान्को अभिष्ठिक किया; ज्योतिष्मान्को कुशद्वीपका राजा चनाया ॥ १३ ॥ द्युतिमान्को क्रीश्वद्वीपके शासनपर नियुक्त किया, भव्यको प्रियन्नतने शाकद्वीपका स्वामी बनाया और सवनको पुष्करद्वीपका अधिपति किया ॥ १४ ॥ हे मुनिसत्तम ! उनमें जो जम्बूद्वोपके अधीधर राजा

आग्रीक्ष ये उनके प्रजापतिके समान ही पुत्र हुए। बे नाभि; किम्युरुष, हरिवर्ष, इस्त्रवृत, रस्य, हिरण्यान्, कुरु, भग्नाध और सत्कर्मशील राजा केतुमाल थे॥ १५— १०॥ हे विप्र ! अब उनके जम्बूद्वीपके विभाग सुनो । पिता आग्रीक्षने दक्षिणको ओरका हिमवर्ष [जिसे अब भारतवर्ष कहते हैं] नाभिको दिया॥ १८॥ इसी प्रकार किम्युरुषको हेमकूटवर्ष तथा हरिवर्षको तीसरा नेषधवर्ष दिया॥ १९॥ जिसके मध्यमें मेरपर्वत है वह इस्तवृतवर्ष उन्होंने इस्त्रवृतको दिया तथा नोस्त्रवर्ष रूपा हुआ वर्ष रूपको दिया॥ २०॥

पिता आग्नीशने उसका उत्तरवर्ती श्रेतवर्ष हिरण्यान्को दिया तथा जो वर्ष शृंगवान्पर्यतके उत्तरमें स्थित है वह कुरुको और जो मेरुके पूर्वमें स्थित है वह भदाशको दिया तथा केतुगालको गन्धमादनवर्ष दिया। इस प्रकार एका आग्नीश्चने अपने पुत्रोंको ये वर्ष दिये॥ २१—२३॥ हे मैंतेय ! अपने पुत्रोंको इन वर्षों में अधियिक कर वे तपस्यांक लिये ज्ञालग्राम नामक महापवित्र क्षेत्रको चले गये॥ २४॥

हे पतापुने ! किन्युरुष आदि जो आठ वर्ष है उनमें सुखकी बहलता है और बिना यलके स्वभावसे

विपर्ययो न तेष्वस्ति जरामृत्युभयं न च। धर्माधर्मी न तेष्ट्रास्तां नोत्तमाधममध्यमाः । न तेष्ट्रस्ति युगावस्था क्षेत्रेष्ट्रष्टसु सर्वदा ॥ २६ हिमाह्नयं तु वै वर्षं नाभेरासीन्पहात्पनः। तस्यर्षभोऽभवत्पुत्रो मेरुदेव्यां महाद्युतिः ॥ २७ ऋषभाद्धरतो जज्ञे ज्येष्ठः पुत्रशतस्य सः। कृत्वा राज्यं स्वधमेंण तथेष्ट्रा विविधान्यखान् ॥ २८ अभिविच्य सुतं वीरं भरतं पृष्टिवीपतिः। तपसे स महाभागः पुरुद्धस्याश्रमं ययौ ॥ २९ वानप्रस्थविधानेन तत्रापि कृतनिश्चयः। तपस्तेपे यथान्यायमियाज स महीपतिः ॥ ३० तपसा कर्षितोऽत्यर्थं कुञो धमनिसन्ततः । ततश्च भारतं वर्षमेतल्लोकेषु गीवते । सुमतिर्भरतस्याभृत्युत्रः परमधार्मिकः । पुत्रसङ्क्रामितश्रोस्तु भरतः स महीपतिः। अजायत च विप्रोऽसौ योगिनां प्रवरे कुले । सुमतेस्तेजसस्तस्मादिन्द्रद्युन्नो व्यजायतः ।

नम्रो वीटां मुखे कृत्वा वीराध्वानं ततो गतः ॥ ३१ भरताय यतः पित्रा दत्तं प्रातिष्ठता वनम् ॥ ३२ कृत्वा सम्यग्ददौ तस्मै राज्यमिष्टमसः पिता ॥ ३३ योगाभ्यासरतः प्राणाव्यालग्रामेऽत्यजन्मुने ॥ ३४ मैत्रेय तस्य चरितं कश्रयिष्यामि ते पुन: ॥ ३५ परमेष्ठी ततस्तस्मात्प्रतिहारस्तद्न्वयः ॥ ३६ प्रतिहर्तेति विख्यात उत्पन्नस्तस्य चात्मजः । भवस्तस्पादश्रोद्दीशः प्रस्तावस्तत्सुतो विभुः॥ ३७ पृथुस्ततस्ततो नक्तो नक्तस्यापि गयः सृत: । नरो गयस्य तनयस्तत्पुत्रोऽभूद्विराद् ततः ॥ ३८ तस्य पुत्रो महावीयों धीमांस्तस्मादजायत । महान्तस्तत्सुतश्चाभून्यनस्युस्तस्य चात्मजः ॥ ३९ त्वष्टा त्वष्टुश्च विरजो रजस्तस्याप्यभूतसुतः । शतजिद्रजसस्तस्य जज्ञे पुत्रशतं मुने ॥ ४०

ही समस्त भोग-सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती है ॥ २५ ॥ उनमें किसी प्रकारके विपर्यय (असूख या अकाल-मृत्यु आदि) तथा जरा-मृत्यु आदिका कोई भय नहीं होता और न धर्म, अधर्म अथवा उत्तम, अधम और मध्यम आदिका ही भेद है। उन आढ़ वर्षीमें कभी कोई युगपरिवर्तन भी नहीं होता ॥ २६ ॥ महातमा नाभिका हिम नामक वर्ष था; उनके मेरुदेवीसे अतिहास कान्तिमान् ऋषभं नामक प्त्र हुआ ॥ २७ ॥ ऋषभजीके भरतका जन्म हुआ जो उनके सी पुत्रोमें सबसे बड़े थे। महापाग पृधिबीपति ऋषभदेवजी धर्मपूर्वक राज्य-शासन तथा विविध यहीका अनुष्ठान करनेके अनन्तर अपने चीर पुत्र भरतको राज्याधिकार सौपका तपस्याके लिये पुलडाश्रमको चले गये ॥ २८-२९ ॥ महाराज ऋषभने बहाँ भी बानप्रस्थ-आश्रमकी विधिसे रहते हुए निश्चयपूर्वक तपस्या की तथा नियमानुकूल पञ्चानुष्टान किये ॥ ३० ॥ वे तपस्याके कारण सूखकर अत्यन्त कृदा हो गये और उनके शरीरकी शिराएँ (रक्तवाहिनो नाड़ियाँ) दिखायी देने छर्गी । अन्तमे अपने मुखर्मे एक परवरकी बटिया रखकर उन्होंने नदावस्थामे महाप्रस्थान किया ॥ ३१ ॥ पिता ऋषभदेवजीने वन जाते समय अपना राज्य भरतजीको दिया था; अतः तबसे यह (हिमवर्ष) इस लोकमें भारतवर्ष नामसे प्रसिद्ध हुआ ॥ ३२ ॥ भरतजीके सुमति नामक परम धार्मिक पुत्र हुआ। पिता (भरत) ने

हे मैजेय ! इनका वह चरित्र मैं तुमसे फिर कहैगा ॥ ३५ ॥ तदनन्तर सुमतिके वीर्यसे इन्द्रह्मुखका जन्म हुआ, उससे परमेष्ठी और परमेष्ठीका पुत्र प्रतिहार हुआ ॥ ३६ ॥ प्रतिहारके प्रतिहर्ता नामसे विख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ तथा प्रतिहर्ताका पुत्र भव, भवका उद्गोध और उद्गीधका पुत्र अति समर्थ प्रस्ताव हुआ ॥ ३७ ॥ प्रस्तावका पृथु, पृथुका २क्त और २क्तका पुत्र गय हुआ । गयके नर और उसके विराद: नामक पुत्र हुआ ॥ ३८ ॥ उसका पुत्र महावीर्य था, उससे धोगान्का जना हुआ तथा धोपान्का पुत्र महान्त और उसका पुत्र मनस्यु हुआ॥३९॥

मनस्युका पुत्र त्वष्टा, त्वष्टाका विरज और विरजका पुत्र

रज हुआ। हे पुने ! रजके पुत्र शतजित्के सी पुत्र

यज्ञानुष्टानपूर्वक यथेच्छ राज्य-लुख भोगकर उसे सुमतिको सौँप दिया ॥ ३३ ॥ हे मुने ! महाराज भरतने

पुत्रको राज्यलक्ष्मी सौंपकर योगान्यासमें तत्पर हो अन्तमें

शालयामक्षेत्रमे अपने जाण छोड़ दिये ॥ ३४ ॥ फिर

इन्होंने योगियोंके पवित्र कुल्गों ब्राह्मणरूपसे जन्म किया ।

विषुण्योतिः प्रधानास्ते यैरिमा वर्द्धिताः प्रजाः ।

तैरिदं भारतं वर्षं नवभेदमलङ्कृतम् ॥ ४१

तेषां वंशप्रस्तैश्च भुक्तेयं भारती पुरा। कृतत्रेतादिसर्गेण युगाख्यामेकसप्ततिम् ॥ ४२

एष स्वायम्भुवः सर्गो येनेदं पूरितं जगत्।

वाराहे तु मुने कल्पे पूर्वमन्वन्तराक्षिपः ॥ ४३

इति श्रीकिष्णुपुराणे द्वितीर्वेऽहो प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

भूगोलका विवरण

श्रीमेंत्रेय उवाच

कथितो भवता ब्रह्मन्सर्गः स्वायन्भ्वश्च मे । श्रोतमिच्छाम्यहं त्वत्तः सकलं मण्डलं भूवः ॥ १

यावन्तः सागरा द्वीपास्तथा वर्षाणि पर्वताः ।

वनानि सरितः पूर्वी देवादीनां तथा मुने ॥ २

यत्रमाणमिदं सर्वं यदाधारं यदात्मकम्। संस्थानमस्य च मुने यथावद्वकुपहेंसि ॥ ३

श्रीपराश्चर उद्याच

मैत्रेय

श्रूयतामेतत्सङ्केषाद्भदतो मम्।

नास्य वर्षशतेनापि वक्तं शक्यो हि विस्तरः ॥ ४

जम्बुप्रशाह्नयौ द्वीपौ शाल्मलशापरो द्विज।

कुराः क्रीञ्चस्तथा शाकः पुष्करश्चेव सप्तमः ॥ ५ एते द्वीपाः समुद्रैस्तु सप्त सप्तभिरावृताः।

लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिदुग्धज्लैः जम्बद्धीयः समस्तानामेतेषां मध्यसंस्थितः।

तस्यापि मेरुमेंत्रेय मध्ये कनकपर्वतः॥ ७

चतुरशीतिसाहस्रो योजनैरस्य बोच्छ्यः ॥ ८ प्रविष्टः षोडशाधस्तादद्वात्रिशन्पुर्धि विस्तृतः ।

मुले षोडशसाहस्रो विस्तारस्तस्य सर्वशः॥ ९

भारतवर्षको नौ विभागोंसे विभूषित किया। [अर्थात् वे सब इसको नौ भागोंमें बाँटकर भोगने रूगे 🕽 ॥ ४१ ॥ उन्होंक वंशधरीने पूर्वकालमें कृतवेतादि युगक्रमसे इकट्टतर युगपर्यन्त इस भारतभूमिको भोगा था ॥ ४२ ॥ हे

उत्पन्न हुए ॥ ४० ॥ उनमें विष्युग्ज्योति प्रधान था । उन सौ पुत्रोंसे यहाँकी प्रजा बहुत यद गयी। तब उन्होंने इस

मृते ! यही इस वाराहकरूपमें सबसे पहले मन्वन्तराधिप स्वायम्भुवमनुका वंश है, जिसने उस समय इस सम्पूर्ण संसारको व्याप्त किया हुआ था ॥ ४३ ॥

दूसरा अध्याय

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे बहान्! आपने मुझसे स्वायम्भुवमन्तेः वंशका वर्णन किया । अव मैं आपके

मुखारविन्दसे सम्पूर्ण पृथिवीमण्डलका विवरण सुनना चाहता है ॥ १ ॥ हे मुने ! जितने भी सागर, द्वीप, वर्ष,

पर्वत, वन, नदियाँ और देवता आदिकी पुरियाँ हैं, उन सबका जितना-जितना परिमाण है, जो आधार है, जो

उपादान-कारण है और जैसा आकार है, वह सब आप यथावत् वर्णन कीजिये ॥ २-३ ॥

श्रीपराक्षरजी बोले--- हे मैत्रेय ! सूतो, मैं इन सब वातीका संक्षेपसे वर्णन करता हैं, इनका विस्तारपूर्वक वर्णन तो भी वर्षमें भी नहीं हो सकता ॥ ४ ॥ है द्विज !

जम्बू, प्रक्ष, शाल्मल, कुश, ऋष्ट्र, शाक और सातवाँ पुष्कर-ये सातों द्वीप चारों ओरसे खारे पानी, इक्ष्रस, भदिरा, युत, दथि, दुग्ध और मीटे जलके सात समुद्रोंसे

थिरे हुए हैं ॥ ५-६ ॥ हे मैंत्रेय ! जम्बुद्वीप इन सबके मध्यमें स्थित है और उसके भी बीचों-बीचमें सुवर्णमय सुमेरुपर्वत है॥ ७॥

इसकी ऊँचाई चौग्रसी हजार योजन है और नीचेको ओर यह सोलह हजार योजन पथिवीमें घुसा हुआ है। इसका विस्तार ऊपरी भागमें बतीस हजार बोजन है तथा नीचे

(तलैटीमें) केवल सोलह हजार योजन है। इस प्रकार

भूपदास्यास्य शैलोऽसौ कर्णिकाकारसंस्थितः ॥ १० हिमवान्हेमकुटश्च निषधश्चास्य दक्षिणे। नील: श्वेतश्च शृङ्गी च उत्तरे वर्षपर्वता: ॥ ११ लक्षप्रमाणी ही मध्यी दशहीनास्तथापरे । सहस्रद्वितयोच्छ्रयास्तावद्विस्तारिणश्च ते ॥ १२ भारतं प्रथमं वर्षं ततः किम्पुरुषं स्मृतम् । हरिवर्ष तथैवान्यन्मेरोर्दक्षिणतो ह्विज ॥ १३ रम्यकं चोत्तरं वर्षं तस्यैवान् हिरण्पयम् । उत्तराः कुरवश्चैव यथा वै भारतं तथा ॥ १४ नवसाहस्रमेकैकमेतेषां द्विजसत्तम । इलावृतं च तन्मध्ये सौवर्णो मेरुरुच्छितः ॥ १५ पेरोश्चतुर्दिशं तत्तु नवसाहस्रविस्तृतम्। इलावृतं महाभाग चत्वारश्चात्र पर्वताः ॥ १६ विष्कम्भा रचिता मेरोयॉजनायुतमुच्छिताः ॥ १७ पूर्वेण मन्दरो नाम दक्षिणे गन्धमादनः । विपुलः पश्चिमे पार्श्वे सुपार्श्वश्चोत्तरे स्मृतः ॥ १८ कदम्बस्तेषु जम्बुश्च पिप्पलो वट एव च । एकादशञ्जातायामाः पादपा गिरिकेतवः ॥ १९ जम्बद्धीपस्य सा जम्बूर्नामहेतुर्महासूने। महागजप्रभाणानि जम्बास्तस्याः फलानि वै। पतन्ति भूभृतः पृष्ठे शीर्यमाणानि सर्वतः ॥ २० रसेन तेषां प्रस्थाता तत्र जाम्बनदीति वै। सरित्प्रवर्तते चापि पीयते तन्निवासिभिः ॥ २१ न खेदो न च दौर्गन्ध्यं न जरा नेन्द्रियक्षयः । तत्पानातवळपनसां जनानां तत्र जायते ॥ २२ तीरमृतद्वसं प्राप्य सुखवायुविद्योषिता । जाम्बूनदाख्यं भवति सुवर्णं सिद्धभूषणम् ॥ २३ भद्राश्चं पूर्वतो मेरोः केतुमालं च पश्चिमे ।

वर्षे हे तु मुनिश्रेष्ठ तयोर्पध्यमिलावृतः ॥ २४

यह पर्वत इस पृथिबीरूप कमरुकी कर्णिका (कोश) के समान है ॥ ८— १० ॥ इसके दक्षिणमें हिमवान, डेमकुट और निषध तथा उत्तरमें नील, श्वेत और शृङ्गी नामक वर्षपर्वत हैं [जो भिन्न-भिन्न वर्षोक्त विधाग करते हैं] ॥ ११ ॥ उनमें बोचके दो पर्वत [निषध और नील] एक-एक लाल योजनतक फैले हुए हैं, उनसे दूसरे-दूसरे दस-दस इजार योजन कम हैं। [अर्थात् हेमकुट और श्रेत नव्ये-नव्ये हजार योजन तथा हिमदान् और शुद्धी असरी-असरी सहस्र योजनतक फैले हुए हैं ।] वे सभी हो-हो सहस्र योजन ऊँचे और इतने ही चौड़े हैं ॥ १२ ॥ हे द्विज ! मेरुपर्वतके दक्षिणकी और पहला भारतवर्ष है तथा दूसरा किप्पुरुषवर्ष और तीसरा हरिवर्ष है ॥ १३ ॥ उत्तरको ओर प्रथम रम्यक, फिर हिरण्मय और तदनन्तर उत्तरकरवर्ष है जो [द्वीपमण्डलको सीमापर होनेके कारण) भारतवर्षके समान [धनपाकार] है ॥ १४ ॥ हे द्विजञ्जेष्ठ ! इनमेंसे प्रत्येकका विस्तार नौ-नौ हजार योजन है तथा इन सबके बीचमें इलावृतवर्ष है जिसमें सुवर्णमय सुमेरपर्वत खड़ा हुआ है॥ १५॥ हे महाभाग ! यह

इस्प्रवृतवर्ष सुमेरके चार्ये और नौ हजार योजनतक फैला

हुआ है। इसके चार्रे ओर चार पर्वत हैं ॥ १६ ॥ ये चारों

पर्वत मानो सुमेरको धारण करनेके छिपे ईश्वरकृत कीलियाँ

हैं [क्योंकि इनके बिना ऊपरसे विस्तृत और मूलमें संकृषित होनेके कारण मुमेरुके गिरनेकी सम्भावना है]।

इनमें हे मन्दराचल पूर्वमें, यन्धमादन दक्षिणमें, बिपुल

पश्चिममें और सुपार्श्व उत्तरमें है । ये सभी दस-दस हजार योजन ऊँचे है ॥ १७-१८ ॥ इनुपर पर्वतीकी ध्वजाओंके

समान क्रमंदाः ग्यप्तह-न्यारह सौ योजन ऊँचे कदम्ब,

जम्बू, पीपल और बटके वृक्ष हैं ॥ १९ ॥
हे महामुने ! इनमें जम्बू (जामुन) कृक्ष जम्बूद्वीपके नामका कारण है। उसके फल महान् राजराजके समान बड़े होते हैं। जब वे पर्वतपर गिरते हैं तो फटकर सब ओर फैल जाते हैं ॥ २० ॥ उनके रससे निकली जम्बू नामकी प्रसिद्ध नदी वहाँ बहती है, जिसका जल बहाँक रहनेवाले पीते हैं ॥ २१ ॥ उसका पान करनेसे बहाँक शुद्धांचत लोगोंको पसीना, दुर्गन्थ, बुढ़ापा अथवा इन्द्रियक्षय नहीं होता ॥ २२ ॥ उसके किनारेको मृतिका उस रससे मिलकर मन्द-मन्द वायुसे सूखनेपर जाम्बूनद नामक सुवर्ण हो जाती है, जो सिद्ध पुरुषोक्त भूषण है ॥ २३ ॥ मेरके पूर्वमें भद्राश्वयपं और पक्षिममें केतुमालवर्ष है तथा हे मुनिश्रेष्ट ! इन दोनोंके

वनं जैत्रस्थं पूर्वे दक्षिणे गन्धमादनम्। वैभ्राजं पश्चिमे तब्रदुत्तरे नन्दनं स्मृतम्॥ २५ अरुणोदं महाभद्रमसितोदं समानसम् । सरांस्येतानि चत्वारि देवभोग्वानि सर्वदा ॥ २६ शीतरम्भश्च कुमुन्दश्च कुररी माल्यवांस्तथा । वैकङ्कप्रमुखा मेरोः पूर्वतः केसराजलाः ॥ २७ त्रिकृटः शिशिरश्चेव पतङ्गो स्वकस्तथा। निषदाद्या दक्षिणतस्तस्य केसरपर्वताः ॥ २८ शिखिवासाः सबैडर्यः कपिलो गन्धमादनः । जारुधिप्रमुखास्तद्दत्पश्चिमे केसराचलाः ॥ २९ मेरोरनन्तराङ्केषु जठरादिष्टवस्थिताः । शङ्खक्टोऽय ऋषभी हंसी नागस्तथापरः । कालञ्जाद्याश्च तथा उत्तरे केसराचला: ॥ ३० चतुर्दशसहस्राणि योजनानां महापुरी। मेरोरुपरि मैत्रेय ब्रह्मणः प्रथिता दिवि ॥ ३१ तस्यास्समन्ततश्चाष्ट्री दिशासु विदिशासु च । इन्द्रादिलोकपालानां प्रस्थाताः प्रवराः पुरः ॥ ३२ विष्णुपादविनिष्क्रात्ता ग्लावियत्वेन्त्रपण्डलम् । समन्ताद् ब्रह्मणः पुर्या गङ्गा पतति वै दिवः ॥ ३३ सा तत्र पतिता दिक्षु चतुर्द्धा प्रतिपद्यते । सीता चालकनन्दा च चक्षुभंद्रा च वै क्रमात् ॥ ३४ पूर्वेण शैलात्सीता तु शैलं यात्यन्तरिक्षगा । ततश्च पूर्ववर्षेण भद्राश्वेनैति सार्णवम् ॥ ३५ तथैवालकनन्दापि दक्षिणेनैत्य भारतम्। प्रयाति सागरं भूत्वा सप्तभेदा महामुने ॥ ३६ चक्षश्च पश्चिमगिरीनतीत्य सकलांस्ततः। पश्चिमं केतुमालास्यं वर्षं गत्वैति सागरम् ॥ ३७ भद्रा तथ्रोत्तरगिरीनुत्तरांश्च तथा कुरून्।

अतीत्योत्तरमम्भोधिं समभ्येति महामुने ॥ ३८

तयोर्मध्यगतो मेरुः कर्णिकाकारसंस्थितः ॥ ३९

पत्राणि लोकपद्मस्य मर्यादाशैलबाह्मतः॥४०

आनीलनिषधायामा माल्यवदृत्यमादनी ।

भारताः केतुमालाश्च भद्राश्चाः कुरवस्तथा ।

हे पैत्रेय ! शीताम्प, कुमृन्द, कुररी, पाल्यवान तथा वैकंक आदि पर्वत (भूपचको कर्णिकारूप) मेरके पूर्व-दिशाके केररएचल हैं॥ २७॥ त्रिकृट, शिशिर, पहलू, रुचक और निवाद आदि केसराचल उसके दक्षिण ओर हैं ॥ २८ ॥ दिशिखवासा, बैद्धर्य, कपिल, गन्धमादन और जार्रांश आदि उसके पश्चिमीय केसरपूर्वत है ॥ २९ ॥ तथा मेसके अति समीपस्थ इलावतवर्षमें और जठरादि देशोंने स्थित सहकुट, ऋषभ, हंस, नाग तथा कालक आदि पर्यंत उत्तरदिशाके केसराचल हैं॥ ३०॥ हे मैत्रेय ! मेरके ऊपर अन्तरिक्षमें चीदह सहस्र योजनके विस्तारवाली ब्रह्माजीकी महापुरी (ब्रह्मपूर्ध) है ॥ ३१ ॥ उसके सब ओर दिशा एवं बिदिशाओं में इन्हादि लेकपालोके आठ अति रमणीक और विख्यात नगर है ॥ ३२ ॥ विष्णुपादोस्ट्या श्रीगङ्गाजी चन्द्रमण्डलको चारी ओरसे आग्नावित कर स्वर्गलोकसे ब्रह्मपुरीमें गिरती हैं ॥ ३३ ॥ वहाँ गिरनेपर वे चारो दिशाओं में क्रपसे सीता. अलकनन्दा, चक्षु और भद्रा नामसे चार भागोंमें विभक्त हो जाती है ॥ ३४ ॥ उनमेंसे सीता पूर्ववर्ष ओर आकाश-मार्गसे एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर जाती हुई अत्तमे पूर्वस्थित महाश्रवर्षको पारकर समुद्रमें मिल जाती है ॥ ३५ ॥ इसी प्रकार, है महामूने ! अलकनन्द्रा दक्षिण-दिशाकी और भारतवर्षमें आती है और सात भागोंमें विभक्त होकर समुद्रमें मिल जाती है॥ ३६॥ चक्ष पश्चिमदिशाके समस्त पर्वतींको पारकर केत्माल नामक वर्षमें बहती हुई अन्तमे सागरमें जा गिरती है ॥ ३७ ॥तथा हे महामुने ! भद्रा उत्तरके पर्वतों और उत्तरकुरुवर्षको पार करती हुई उत्तरीय समुद्रमें मिल जाती है।। ३८॥ माल्यवान और गन्धमादनपर्वत उत्तर तथा दक्षिणकी ओर नीकाचक और निषधपर्यततक फैले हुए हैं। उन दोनोंके बीचमें कर्णिकाकार मेहपर्वत स्थित है ॥ ३९ ॥ हे मैंबेय ! मर्याटापर्वतीके बहिर्भागमें स्थित भारत, केतुमाल, भद्राश्व और कुरुवर्ष इस लोकपदाके पत्तीके

बीचमे इत्यवृतवर्ष है ॥ २४ ॥ इसी प्रकार उसके पूर्वकी ओर चैत्ररण, दक्षिणको ओर गुन्धमादन, पश्चिमको ओर

विभाज और उत्तरको ओर नन्दन नामक वन है ॥ २५ ॥

तथा सर्वदा देवताओंसे सेवनीय अरुणोद, महाभद्र,

असितोद और मानस—ये चार सरोवर हैं॥ २६॥..

जठरो देवकुटश्च मर्यादापर्वतावुभौ। दक्षिणोत्तरायामावानीलनिषधायतौ ॥ ४१ गन्धमादनकैलासौ पूर्वपश्चायतावुभौ । अञ्चीतियोजनायामावर्णवान्तर्व्यवस्थितौ ॥ ४२ निषयः पारियात्रश्च मर्यादापर्वतावुभौ । मेरो: पश्चिमदिग्भागे यथा पूर्वे तथा स्थितौ ॥ ४३ त्रिशृङ्को जारुधिश्चैव उत्तरी वर्षपर्वतौ । पूर्वपश्चायतावेतावर्णवान्तर्व्यवस्थिती इत्येते मुनिवर्योक्ता मर्यादापर्यतास्तव । जठराद्याः स्थिता मेरोस्तेषां द्वौ द्वौ चतुर्दिशम् ॥ ४५ मेरोश्चतुर्दिशं ये तु प्रोक्ताः केसरपर्वताः । शीतान्ताद्या मुने तेषामतीव हि मनोरमाः । शैलानामन्तरे द्रोण्यः सिद्धवारणसेविताः ॥ ४६ सुरम्याणि तथा तासु काननानि पुराणि च । लक्ष्मीविष्णविष्रसूर्योदिदेवानां मुनिसत्तम । तास्वायतनवर्याणि जुष्टानि वरकिन्नरै: ॥ ४७ गन्धर्वयक्षरक्षांसि तथा दैतेबदानवाः। कीडन्ति तासु रम्यासु शैलब्रोणीष्ट्रहर्निशम् ॥ ४८ भौमा होते स्पृताः स्वर्गा धर्मिणामालया पुने । नैतेषु पापकर्माणो यान्ति जन्मशतैरपि ॥ ४९ भद्राश्चे भगवान्त्रिक्षुसस्ते हवशिरा द्विज । वराहः केतुमाले तु भारते कूर्मरूपधृक् ॥ ५० मत्यरूपश्च गोविन्दः कुरुष्वास्ते जनार्दनः । विश्वरूपेण सर्वत्र सर्व: सर्वत्रगो हरि: ॥ ५१ सर्वस्याधारभूतोऽसी मैत्रेयास्तेऽखिलात्मकः ॥ ५२ यानि किम्पुरुवादीनि वर्षाण्यष्टौ महामुने । न तेषु शोको नायासो नोह्नेगः शुद्धयादिकम् ॥ ५३ स्वस्थाः प्रजा निरातङ्कास्सर्वदुःखविवर्जिताः । दशद्वादशयर्षाणां सहस्राणि स्थिरायुवः ॥ ५४ न तेष वर्षते देवो भौमान्यष्मांसि तेषु वै। कृतत्रेतादिकं नैव तेषु स्थानेषु कल्पना ॥ ५५ सर्वेष्ट्रेतेषु वर्षेषु सप्त सप्त कुलावलाः। मद्यश्च शतशस्तेभ्यः प्रसुता या द्विजोत्तम् ॥ ५६

समान हैं ॥ ४० ॥ जठर और देवकूट—ये दोनों मर्यादापर्वत है जो उत्तर और दक्षिणकी ओर नील तथा निषधपर्वततक फैले हुए हैं ॥ ४१ ॥ पूर्व और पश्चिमकी ओर फैले हुए गन्धमादन और कैलास—ये दो पर्वत जिनका विस्तार अस्सो योजन है, समुद्रके भीतर स्थित हैं ॥ ४२ ॥ पूर्वके समान मेस्की पश्चिम ओर भी निषध और पारियात्र नामक दो मर्यादापर्वत स्थित हैं ॥ ४३ ॥ उत्तरकी और तिशृङ्ग और जारुधि नामक वर्षपर्वत हैं । ये दोनों पूर्व और पश्चिमकी और समुद्रके गर्पमें स्थित हैं ॥ ४४ ॥ इस प्रकार, हे मुनिकर ! तुमसे जठर आदि मर्यादापर्वतींका वर्णन किया, जिनमेसे दो-दो मेरुकी चारी दिशाओंमें स्थित हैं ॥ ४५ ॥

हे मुने ! मेरुके चारों और स्थित जिन शीतान्त आदि केसरपर्वतीके विषयमें तुमसे कहा था, उनके बीचमें सिद्ध-चारणादिसे सेंजित अति सुन्दर कन्दराएँ हैं ॥ ४६ ॥ हे भुनिसत्तम ! उनमें सुरम्य नगर तथा उपवन है और रुक्ष्मी, विष्णु, अग्नि एवं सूर्य आदि देवताओंके अत्यन्त सुन्दर मन्दिर हैं जो सदा किस्रक्षेष्ठींसे सेंजित रहते हैं ॥ ४० ॥ उन सुन्दर पर्वत-द्रोणियोंसे मन्धर्व, यक्ष, राक्षस, दैत्य और दानवादि अहर्निश क्रोड़ा करते हैं ॥ ४८ ॥ हे मुने ! ये सम्पूर्ण स्थान भीम (पृथिवीके) स्वर्ण कहरूरते हैं; ये धार्मिक पुरुषोंके निवासस्थान हैं। पापकमी पुरुष इनमें सौ जन्ममें भी नहीं जा सकते ॥ ४९ ॥

हे द्विज ! श्रीविष्णुभगवान् भद्राश्चवर्षमें हयमीक-रूपसे, केतुगालवर्षमें वग्रहरूपसे और भारतवर्षमें सूर्मरूपसे रहते हैं॥ ५०॥ तथा वे भक्तप्रतिपालक श्रीगोविन्द कुरुवर्षमें मत्स्यरूपसे रहते हैं। इस प्रकार वे सर्वमय सर्वगामी हरि विश्वरूपसे सर्वत्र ही रहते हैं॥ ५१-५२॥ हे महामुने । किम्पुरुष आदि जो आठ वर्ष है अन्में शोक, श्रम, उद्देग और श्रुपाका मय आदि कुछ भी नहीं है॥ ५३॥ वहाँकी प्रजा स्वस्थ, अतङ्कृहीन और समस्त दुःखाँसे रहित है तथा वहाँके छोग दस-वारह हजार वर्षकी स्थिए आयुवाले होते हैं॥ ५४॥ उनमें वर्षा कभी नहीं होती, केवल पार्थिव जल ही है और न उन स्थानोमें कृतत्रेतादि युगोको हो करपना है॥ ५५॥ है द्विजोत्तम ! इन सभी वर्षीमें सात-सात कुलगर्वत हैं और उनसे निकली हुई सैकड़ों नदियाँ है॥ ५६॥

तीसरा अध्याय

भारतादि नौ खण्डोंका विभाग

श्रीपराशर उवास उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम् ।

वर्षे तद्धारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥ १
नवयोजनसाहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने ।
कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गं च गच्छताम् ॥ २
महेन्द्रो मलयः सहाः शुक्तिमानृक्षपर्वतः ।
विक्यश्च पारियात्रश्च सप्तात्र कुल्पर्वताः ॥ ३
अतः सम्प्राप्यते स्वर्गो मुक्तिमस्मात्प्रयान्ति वै ।
तिर्यक्षतं नरकं चापि यान्त्यतः पुरुषा मुने ॥ ४
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्यं चान्तश्च गप्यते ।
न सल्वन्यत्र मर्त्यानां कर्म भूमौ विधीयते ॥ ५
भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदान्त्रिशामय ।
इन्द्रद्वीपः कसेरुश्च ताम्रपणों गभस्तिमान् ॥ ६
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारुणः ।
अर्थ तु नवमस्तेषां द्वीपः सागरसंवृतः ॥ ७

योजनानां सहस्रं तु द्वीपोऽयं दक्षिणोत्तरात् । पूर्वे किराता यस्यान्ते पश्चिमे यवनाः स्थिताः ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या मध्ये शुद्राश्च भागशः ।

इञ्चायुधवाणिज्याद्यैर्वर्तयन्तो व्यवस्थिताः ॥

शतदूचन्द्रभागाद्या हिमवत्पादनिर्गताः । वेदस्पृतिमुखाद्याश्च पारियात्रोद्धवा मुने ॥ १०

नर्मदा सुरसाद्याश्च नद्यो विन्ध्याद्विनिर्गताः । तापीपयोष्णीनिर्विन्ध्याप्रमुखा ऋक्षसम्भवाः ॥ ११

गोदावरी भीमरथी कृष्णवेण्यादिकास्तथा । सह्यपादोद्धवा नद्यः स्पृताः पापभयापहाः ॥ १२ कृतमाला ताम्रपणीप्रमुखा मलयोद्धवाः ।

त्रिसामा चार्यकुल्याद्या महेन्द्रप्रभवाः स्मृताः ॥ १३

ऋषिकुल्याकुमाराद्याः शुक्तिमत्पादसम्पवाः । आसां नद्यपनद्यश्च सन्त्यन्याश्च सहस्रशः ॥ १४ श्रीपराशस्जी बोले—हे मैत्रेय ! जो समुद्रके उत्तर तथा हिमालयके दक्षिणमें स्थित है वह देश भारतवर्ष

कहलाता है। उसमें भरतको सन्तान बसी हुई है ॥ १ ॥ है महामुने ! इसका बिस्तार नी हजार योजन है । यह स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्त करनेवालोकी कर्मभूमि है ॥ २ ॥ इसमें

महेन्द्र, मरूब, सहा, शुक्तिमान, ऋक्ष, विश्य और पारियात—ये सात कुरूपर्वत है॥ ३॥ हे मुने ! इसी देशमे मनुष्य शूधकर्मीद्वारा स्वर्ग अथवा मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं और यहींसे [पाप-कमोंमें प्रवृत होनेपर] वे

नरक अथवा तिर्यग्योनिमें पड़ते हैं॥४॥ यहींसे [कर्मानुसार] स्वर्ग, मोश, अन्तरिश अथवा पाताल आदि लोकोंको प्राप्त किया वा सकता है, पृथिवीमें

यहाँक सिया और कहीं भी मनुष्यके लिये कर्मकी विधि नहीं है ॥ ५ ॥

इस भारतवर्षक नौ भाग है; उनके नाम ये हैं-इन्द्रद्वीप, कसेरु, ताम्रपर्ण, गभस्तिमान, नागद्वीप, सीव्य, गन्धर्व और बारुण तथा यह समृदसे घिरा हुआ द्वीप उनमें नर्वा है॥ ६-७॥ यह द्वीप उत्तरसे दक्षिणतक सहस्र योजन है। इसके पूर्वीय भागमें बिरात लोग और पश्चिमीयमें यवन बसे हुए हैं ॥ ८ ॥ तथा यज्ञ, युद्ध और व्यापार आदि अपने-अपने क्योंकी व्यवस्थाके अनुसार आचरण करते हुए आहाण, श्रुष्टिय, बैदय और शुद्रगण वर्णविभागानुसार मध्यमे रहते हैं ॥ ९ ॥ हे मुने े इसकी शतद्व और चन्द्रभाग। आदि नरियाँ हिमालयुकी तलैटीसे वेद और स्भृति आदि पारियात्र पर्वतसे, नर्मदा और सुरसा आदि विस्थाचलसे तथा तापी, पयोष्णी और निर्विस्था आदि ऋक्षणिरिसे निकली है।। १०-११।। गोदायरी, धीमरथी और कृष्णवेणी आदि पापहारिणी नदियाँ सह्यपर्वतसे उत्पन्न हुई कही जाती हैं॥ १२॥ कृतमाला और ताग्रपणीं आदि मलयाचलसे, त्रिसामा और आर्यः कृत्या आदि महेन्द्रगिरिसे तथा ऋषिकृत्या और कुमारी आदि नदियाँ शक्तिमान् पर्वतसे निकली हैं। इनकी और

भी सहस्रो बाखा नदियाँ और उपनदियाँ हैं ॥ १३-१४ ॥

तास्विमे कुरूपाञ्चाला मध्यदेशादयो जनाः । पुर्वदेशादिकाश्चैव कामरूपनिवासिनः ॥ १५ पुण्डाः कलिङ्गा पगधा दक्षिणाद्याश्च सर्वशः । तथापरान्ताः सौराष्टाः शूराभीरास्तथार्बुदाः ॥ १६ कारूषा मालवाश्चैष पारियात्रनिवासिनः । सौवीराः सैन्धवा हुणाः साल्वाः कोशलवासिनः । माद्रारामास्तथाम्बद्धाः पारसीकादयस्तथा ॥ १७ आसां पिबन्ति सलिलं वसन्ति सहिताः सदा । समीपतो महाभाग हृष्टपृष्टजनाकुलाः ॥ १८ चत्वारि भारते वर्षे युगान्यत्र महामुने। कृतं त्रेता द्वापरञ्ज कालिश्चान्यत्र न कवित् ॥ १९ तपस्तव्यन्ति मुनयो जुह्नते चात्र यज्विनः । दासनि चात्र दीयने परलोकार्थमादरात् ॥ २० पुरुषैर्यज्ञपुरुषो जम्बुद्वीपे सदेज्यते । यज्ञैर्यज्ञमयो विष्णुरन्यद्वीपेषु चान्यशा ॥ २१ अत्रापि भारतं श्रेष्टं जम्बुद्वीपे महामुने। यतो हि कर्मभूरेषा हातोऽन्या भोगभूमयः ॥ २२ अत्र जन्मसहस्राणां सहस्रीरपि सत्तम। कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् ॥ २३ गायन्ति देवाः किल गीतकानि धन्यास्तु ते भारत भूमिभागे। स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥ २४ कर्माण्यसङ्खल्पततत्फलानि संन्यस्य विष्णौ परमात्मभूते । तां कर्ममहीमनन्ते अवाप्य तर्सिल्लयं ये त्वमलाः प्रयान्ति ॥ २५

जानीम नैतत्क वयं विलीने

प्राप्याम धन्याः खल् ते मनुष्या

स्वर्गप्रदे कर्मणि

देहबन्धम् ।

भारते नेन्द्रियविप्रहीनाः ॥ २६

इन निर्देशिक तरपर कुरु, पाञ्चाल और मध्यदेशादिक रहनेवाले, पूर्वदेश और कामरूपके निवासी, पुण्ड्, कलिंग, भगध और दक्षिणात्मलोग, अपरान्तदेशवासी, सौराष्ट्रगण तथा शूर, आभीर और अर्बुदगण, कारूब, मालव और पारियात्रनिवासी, सौबीर, सैन्धव, हूण, सारूब और कोशल-देशवासी तथा माद, आराम, अम्बष्ट और पारसींगण रहते हैं ॥ १५—१७॥ हे सहाभाग ! वे लोग सदा आपसमें मिलकर रहते हैं और इन्हींका जल पान करते हैं। इनकी सिर्विधिके कारण वे बड़े इष्ट-पुष्ट रहते हैं॥ १८॥

हे मुने ! इस भारतवर्षमें ही सत्ययुग, बेता, द्वापर और कॉल नामक चार युग हैं, अन्यत्र कहीं नहीं ॥ १९ ॥ इस देशमें परलोकके लिये गुनिजन तपस्या करते हैं, याजिक लोग यज्ञानुद्यान करते हैं और दानीजन आदरपूर्वक दान देते हैं ॥ २० ॥ जम्बूद्वीपमें यज्ञमय यज्ञपुरुष भगवान विष्णुका सदा यजीहारा यजन किया जाता है, इसके अतिहिक्त अन्य द्वीपोमें उनकी और-और प्रकारसे उपासना होती है।। २१ ॥ हे महामुने ! इस जम्बद्वीपमें भी भारतकर्ष सर्वश्रेष्ठ हैं, क्योंकि यह कर्मभूमि है इसके ऑतरिक्त अन्यान्य देश घोग-धृमियाँ हैं ॥ २२ ॥ हे सतम ! जीवको सहस्रो जन्मीके अनन्तर महान् प्ण्योका उदय होनेपर ही कभी इस देशमें मनुष्य-जन्म प्राप्त होता है ॥ २३ ॥ देवगण भी निरन्तर यही गान करते है कि 'जिन्होंने सार्ग और अपवर्गके मार्गभृत भारतवर्षमे जन्म लिया है वे पुरुष हम देवताओं की अपेक्षा भी अधिक धन्य (बडुमागी) है ॥ २४ ॥ जो लोग इस कर्मभूमिमें जन्म लेकर अपने फलाकाक्कासे रहित कर्मीको परमात्म-खरूप श्रीविष्णुभगवानुको अर्पण करनेसे निर्मेल (पापपुण्यसे रहित) होकर उन अनन्तमें ही लीन हो जाते हैं | वे घन्य हैं !] ॥ २५॥

'पता नहीं, अपने स्वगंप्रदक्तमेंका क्षय होनेपर हम कहाँ जन्म प्रहण करेंगे ! धन्य तो वे ही मनुष्य हैं जो भारतभूमिने उत्पन्न होकर इन्द्रियोंकी शक्तिसे हीन नहीं हुए हैं ॥ २६ ॥ नववर्षं तु भैत्रेय जम्बूद्वीपमिदं मया। लक्षयोजनविस्तारं सङ्केपात्कथितं तव ॥ २७ जम्बद्वीपं समावृत्य लक्षयोजनविस्तरः। मैत्रेय वलयाकारः स्थितः क्षारोदधिबंहिः ॥ २८

हे मैत्रेय ! इस प्रकार लाख योजनके विस्तारवाले नक्वर्य-विदिष्ट इस जम्बुद्वीपका पैने तुमसे संक्षेपसे वर्णन किया ॥ २७ ॥ हे मैत्रेय ! इस जम्बुद्वीपको बाहर चारी ओरसे लाख योजनके विस्तारवाले वलगाकार खारे पानीके समुद्रने घेरा हुआ है ॥ २८ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेंऽशे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय

प्रक्ष तथा शाल्मल आदि द्वीपोंका विशेष वर्णन

श्रीपराशर उवाच क्षारोदेन यथा द्वीपो जम्बूसंज्ञोऽभिवेष्टित: ।

संबेष्ट्य क्षारमुद्धिं प्रक्षद्वीपस्तथा स्थित: ॥ जम्बुद्वीपस्य विस्तारः शतसाहस्रसम्मितः। स एव द्विगुणो ब्रह्मन् प्रक्षद्वीप उदाहतः ॥ सम पेधातिथे: पत्रा: प्रश्नद्वीपेश्वरस्य वै। ज्येष्ठः शान्तहयो नाम शिक्षिरस्तदनन्तरः॥

सुखोदयस्तथानन्दः शिवः क्षेमक एव च । ध्वश्च सप्तमस्तेषां प्रश्नद्वीपेश्वरा हि ते॥ पूर्वं शान्तह्यं वर्षं शिशिरं च सुखं तक्षा ।

आनन्दं च शिवं चैव क्षेपकं ध्रुवमेव च ॥ मर्यादाकारकास्तेषां तथान्ये वर्षपर्वताः ।

सप्तैव तेषां नामानि शृणुषु मुनिसत्तम ॥ गोमेदश्रेव चन्द्रश्च नारदो दुन्दुभिस्तथा। सोमकः सुमनाश्चैव वैभ्राजश्चैव सप्तमः॥

वर्षाचलेषु रम्येषु वर्षेष्ठतेषु जानधाः। वसन्ति देवगन्धर्वसहिताः सततं प्रजाः॥

तेषु पुण्या जनपदाश्चिराद्य प्रियते जनः।

नाधयो व्याधयो वापि सर्वकालसुर्खं हितत् ॥ तेषां नद्यस्तु सप्तैव वर्षाणां व समुद्रगाः ।

नामतस्ताः प्रवक्ष्यामि श्रुताः पापं हरन्ति याः ॥ १० अन्तप्ता शिखी चैव विपाशा त्रिदिबाकुमा । अमृता सुकृता चैव सप्तैतास्तत्र निष्नगाः ॥ ११

श्रीपराशरजी बोले--निस

₹

6

বিধাৰ । ও ॥

क्षारसमुद्रसे चिरा हुआ है उसी प्रकार भारसमुद्रको घेरे हए प्रश्नद्वीप स्थित है ॥ १ ॥ जम्बृद्वीपका विस्तार एक स्था योजन है; और हे ब्रह्मन् ! प्रश्नद्वीपका उससे दूनः कहा जाता है ॥ २ ॥ प्रश्नद्वीपके स्वामी मेघातिथिके सात

पुत्र हुए। उनमें सबसे बड़ा शान्तहय था और उससे छोटा शिदिस् ॥ ३ ॥ उनके अनन्तर क्रमशः सुस्रोदय, आनन्द, ज़िल और क्षेमक थे तथा सातवीं सूच था। ये

सल प्रसादीपके अधीधर हए॥४॥ अपने-अपने अधिकृत वर्षीमें] प्रथम शान्तहयवर्ष है तथा अन्य शिशिरवर्ष, सुखोदयवर्ष, आनन्दवर्ष, क्तिवयर्ष, क्षेमकवर्ष और भूववर्ष हैं ॥ ५ ॥ तथा उनको

मर्यादा निश्चित करनेबाले अन्य सात पर्वत है। है मुनिश्रेष्ठ ! उनके नाम ये हैं, सुनो— ॥६॥ गोमेद. चन्द्र, नारद, दुन्द्भि, सोमक, सुमना सौर सातवाँ

इन अति सुरम्य वर्ष-पर्वते और वर्षोपे देवता और गन्धवेंकि सहित सदा निष्पुष प्रजा निवास करती है ॥ ८ ॥ वहाँके निवासीगण पुण्यवान् होते हैं और वे चिरकालतक

जीविन रहकर मस्ते हैं: उनको किसी प्रकारकी आधि-व्याचि नहीं होती, निरन्तर सुख ही रहता है ॥ ९ ॥ उन वर्षोको सारा हो समुद्रगामिनी नदियाँ है । उनके नाम मैं तुन्हें बतलाता है जिनके श्रवणमात्रसे वे पापीको दूर कर देती

हैं ॥ १० ॥ वहाँ अनुतप्ता, दिखी, विपादा, विदिवा, अद्वरमा;

अमृता और सुकृता-- वे ही सात नदियाँ हैं॥ ११॥

एते शैलास्तथा नद्यः प्रधानाः कथितास्तव । क्षुद्रशैलास्तथा नद्यस्तत्र सन्ति सहस्रशः । ताः पिबन्ति सदा हृष्टा नदीर्जनपदास्तु ते ॥ १२ अपसर्पिणी न तेषां वै न चैवोत्सर्पिणी द्विज । न त्वेवास्ति युगावस्था तेषु स्थानेषु सप्तमु ॥ १३ त्रेतायुगसमः कालः सर्वदैव महायते। प्रक्षद्वीपादिषु ब्रह्मञ्छाकद्वीपान्तिकेषु वै ॥ १४ पञ्च वर्षसहस्राणि जना जीवन्यनामयाः। धर्माः पञ्च तथैतेषु वर्णाश्रमविभागनः ॥ १५ वर्णाश्च तत्र चत्वारस्तात्रिबोध वदामि ते ॥ १६ आर्यकाः कुरराश्चैव विदिश्या भाविनश्च ते । वित्रक्षत्रियवैश्यास्ते सूद्राश्च मुनिसत्तम ॥ १७ जम्बुवक्षप्रमाणस्तु तन्मध्ये सुमहास्तरः। प्रक्षस्तज्ञामसंज्ञोऽयं प्रक्षद्वीपो द्विजोत्तम ॥ १८ इज्यते तत्र भगवास्तैवंणैरायंकादिभिः। सोमरूपी जगत्त्रष्टा सर्वः सर्वेद्यरी हरिः ॥ १९ प्रश्नद्वीपप्रमाणेन प्रश्नद्वीपः समावृतः । तथैवेक्षुरसोदेन परिवेषानुकारिणा ॥ २० इत्येवं तव मैत्रेय प्रश्नद्वीप उदाहतः। सङ्केयेण मया भूयः ज्ञाल्यलं मे निज्ञामय ॥ २१ शाल्पलस्येश्वरो स्रीरो सपुष्पांस्तत्सुताञ्छूषु । तेषां तु नामसंज्ञानि सप्तवर्षाणि तानि वै ॥ २२ श्चेतोऽथ हरितश्चैय जीमूनो रोहितस्तथा। वैद्युतो मानसश्चैव सुप्रभश्च महामुने ॥ २३ शाल्पलेन समुद्रोऽसौ द्वीपेनेक्षुरसोदकः । विस्तारद्विगुणेनाथ सर्वतः संवृतः स्थितः ॥ २४ तत्रापि पर्वताः सप्त विज्ञेया रत्नयोनयः । वर्षाभिव्यञ्जका ये तु तंबा सप्त च निष्नगाः ॥ २५

कुमुदश्चोत्रतश्चैय तृतीयश्च बलाहकः।

कङ्कुस्तु पञ्चमः धष्टो महिषः सप्तमस्तथा।

द्रोणो यत्र महौषथ्यः स चतुर्थो महोधरः ॥ २६

ककुराज्यर्वतवरः सरिन्नामानि मे शृणु ॥ २७

यह मैंने तुमसे प्रधान-प्रधान पर्वत और निदयोंका वर्णन किया है; वहां छोटे-छोटे पर्वत और निदयों तो और भी सहस्रों हैं। उस देशके हष्ट-पुष्ट लोग सदा उन निदयोंका जल पान करते हैं ॥ १२ ॥ हे दिज ! उन लोगोंमें हत्स अथवा कृद्धि नहीं होती और न उन सात वर्षोंमें युगकों ही कोई अवस्था है ॥ १३ ॥ हे महामते ! हे बहान् ! प्रश्नद्वीपसे लेकर शाकद्वीपपर्यन्त छही द्वीपोंमें सदा नेतायुगके समान समय रहता है ॥ १४ ॥ इन द्वीपोंके मनुष्य सदा नीरोग रहकर पाँच हजार वर्षतक जीते हैं और इनमें वर्णाश्रम-विभागानुसार पाँचों धर्म (अहिसा, सत्य, अस्तेय, बहाचर्य और अयिद्धि) वर्तमान रहते हैं ॥ १५ ॥ वहां जो चार वर्ण है यह मैं तुमको सुनाता हूं ॥ १६ ॥ हे मुनिसत्तम ! उस द्वीपमें जो आर्यक, कुरर, विदिश्य और भावी नामक चातियां हैं; वे ही क्रमसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व और शुद्द हैं ॥ १७ ॥ हे द्विजोत्तम । उसीमें जम्बूवृक्षके हो परिमाणवाला एक प्रश्न (पाकर) का वृक्ष

जम्बूवृक्षके हो परिमाणवाला एक प्रश्न (पाकर) का वृक्ष है, जिसके नामसे उसकी संज्ञा प्रक्रिय हुई है ॥ १८ ॥ वहाँ आर्यकादि वणोद्वारा जगत्स्रष्टा, सर्वरूप, सर्वेश्वर भगवान् हरिका सोमरूपसे यजन किया जाता है ॥ १९ ॥ प्रश्नद्वीप अपने ही बराबर परिमाणवाले वृताकार इक्षुरसके समुद्रसे चिरा हुआ है ॥ २० ॥ हे मैत्रेय ! इस प्रकार मैंने तुमसे संक्षेपमें प्रश्नद्वीपका वर्णन किया, अब तुम ज्ञाल्मलद्वीपका विवरण सुनो ॥ २१ ॥ ज्ञाल्मलद्वीपके स्वामी वीरवर वपुष्पान् थे । उनके पुत्रोंके नाम सुनो—हे पहामुने ! वे श्वेत, हरित, जीमृत, सेहित, वैद्यत, मानस और सम्रभ थे । उनके सात वर्ष उन्हींके

वैद्युत, भानस और सुप्रभ थे। उनके सात वर्ष उन्होंके नामानुसार संज्ञावाछे हैं ॥ २२-२३ ॥ यह (प्रश्नद्वीपको घेरनेवाला) इश्वुरसका समृद्र अपनेसे दूने विस्तारवाले इस शाल्मलद्वीपसे चारों ओरसे विरा हुआ है ॥ २४ ॥ वहाँ भी स्वोंके उद्धवस्थानरूप सात पर्वत है, जो उसके सातों वर्षेकि विभाजक है तथा सात नहियाँ है ॥ २५ ॥ पर्वतोंमें पहला कुमुद, दूसरा उन्नत और तीसरा बलाहक है तथा चौथा द्रोणाचल है, जिसमें नाना प्रकारकी महौषधियाँ है ॥ २६ ॥ पाँचवाँ कङ्का, छठा महिष और सातवाँ गिरिवर कमुद्धान् है । अब नदियोंके नाम सुनो ॥ २७ ॥

योनिस्तोया विदृष्णा च चन्द्रा मुक्ता विमोचनी । निवृत्तिः सप्तमी तासी सुतास्ताः पापशान्तिदाः ॥ २८ श्वेतञ्च हरितं चैव वैद्युतं मानसं तथा। जीमृतं रोहितं चैव सुप्रभं चापि श्रोभनम् । सप्तैतानि तु वर्षाणि चातुर्वर्ण्ययुतानि वै ॥ २९ शाल्पले ये त वर्णाश्च वसन्त्येते महामुने । कपिलाश्चारुणाः पीताः कृष्णाश्चैव पृथक् पृथक् ॥ ३० ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शुद्राश्चैव वजन्ति तम् । भगवन्तं समस्तस्य विकामात्मानमव्ययम् । वायुभूतं मखश्रेष्ठैर्यञ्चानो यज्ञसंस्थितिम् ॥ ३१ देवानामत्र सान्निध्यमतीव सुमनोहरे । शाल्यलिः सुमहान्वृक्षो नाम्ना निर्वृतिकारकः ॥ ३२ एव द्वीपः समुद्रेण सुरोदेन समावृतः। विस्ताराच्छाल्मलस्पैव समेन तु समन्ततः ॥ ३३ सुरोदकः परिवृतः कुशहीपेन सर्वतः। शाल्मलस्य तु विस्ताराद् द्विगुणेन समन्ततः ॥ ३४ ज्योतिष्मतः कुशद्वीपे सप्त पुत्राञ्कृणुष्ट तान् ॥ ३५ उद्भिदो वेणुमांश्रैव वैरथो लम्बनो धृति:। प्रभाकरोऽश्र कपिलस्तन्नामा वर्षपद्धतिः ॥ ३६ तस्पिन्वसन्ति पनुजाः सह दैतेयदानवैः। तथैव देवगन्धर्वयक्षकिम्पुरुषादयः ॥ ३७ वर्णास्तत्रापि चत्वारो निजानुष्टानतत्पराः । दमिनः शुष्पिणः स्त्रेहा मन्देहाश्च महामुने ॥ ३८ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शुद्राश्चानुकमोदिताः ॥ ३९ यथोक्तकर्पकर्तृत्वात्स्वाधिकारक्षयाय ते । तत्रैव ते कुशद्वीपे ब्रह्मरूपं जनार्दनम्। यजन्तः क्षपयन्युग्रमधिकारफलप्रदम् ॥ ४० विद्वमो हेमशैलश्च द्यतिमान् पुष्पवांस्तथा । कुशेशयो हरिश्चैव सप्तमो मन्दराचलः ॥ ४१

वर्षाचलास्तु सप्तैते तत्र द्वीपे महामुने।

धृतपापा शिवा चैव पवित्रा सम्मतिस्तथा ।

नद्यश्च सप्त तासां तु शृषु नामान्यनुक्रमात् ॥ ४२

विद्युदम्भा मही चान्या सर्वपापहरास्त्विमाः ॥ ४३

वे योनि, तोया, वितृष्णा, चन्द्रा, मुक्ता, विमोचनी और निवृत्ति हैं तथा स्परणमात्रसे ही सारे पापीको शान्त कर देनेवाली हैं ॥ २८ ॥ श्वेत, हरित, बैद्युत, मानस, जीमृत, रोहित और अति शोभायमान सुप्रम—ये उसके चारी क्णेंसि युक्त सात वर्ष है।। २९॥ हे महामुने ! ञाल्मलद्वीपमें कपिल, अरुण, पीत और कृष्ण—ये चार वर्ण निवास करते हैं जो पृथक्-पृथक् ऋमञः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र हैं। ये यजनशील लोग सबके आत्मा, अञ्चय और यज्ञके आश्रय वायुरूप विष्णु-भगवानुका श्रेष्ठ यज्ञोद्वारा यजन करते हैं ॥ ३०-३१ ॥ इस अल्पन्त मनोहर द्वीपमें देवगण सदा विराजमान रहते हैं। इसमें शाल्पल (सेमल) का एक महान् वृक्ष है जो अपने नामसे ही अत्यन्त शान्तिदायक है ॥ ३२ ॥ यह द्वीप अपने समान ही विस्तारवाले एक मदिराके समुद्रसे सब ओरसे पूर्णतया बिरा हुआ है ॥ ३३ ॥ और यह सुरासमुद्र शाल्मलद्वीपसे दुने जिस्तारवाले कुशद्वीपद्वाय सब ओरसे परिवेष्टित है ॥ ३४ ॥

कुशद्रीपमें [बहाँक अधिपति] ज्योतिशान्के सात पुत्र थे, उनके नाम सुनो! वे उद्भिद, वेणुमान्, वैरथ, रूम्बन, धृति, प्रभाकर और कपिल थे। उनके नामानुसार ही वहाँके वर्षोंके नाम पड़े॥ ३५-३६॥ उसमें दैत्य और दानवोंके सहित मनुष्य तथा देव, गन्धर्य, यक्ष और किन्नर आदि नियास करते हैं॥ ३७॥ हे महामुने! वहाँ भी अपने-अपने कमोंमें तत्पर दमी, शुष्यी, खेह और मन्देहनामक चार ही वर्ण है, जो क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र ही है॥ ३८-३९॥ अपने प्रारक्षक्षयके निमित शास्त्रानुकुल कर्म करते हुए वहाँ कुशद्दीपमें ही बे

कुशेशय, हरि और सातवाँ मन्दराचळ—ये सात वर्षपर्वत हैं । तथा इसमें सात ही नदियाँ हैं, उनके नाम क्रमशः सुनो — ॥४१-४२ ॥ वे धूतपापा, शिवा, पवित्रा,

सम्मति, विद्युत्, अम्भा और मही हैं। ये सम्पूर्ण पत्पोंको

ब्रह्मरूप जनार्दनकी उपासनाद्वारा अपने प्रारब्धफलके

देनेवाले अल्युप्र आहंकारका क्षय करते हैं ॥ ४० ॥ हे

महाम्ने ! उस द्वीपमें बिदुम, हेमशैल, द्युतिमान्, पुष्पकन्,

अन्याः सहस्रशस्तत्र क्षद्रनद्यस्तथाचलाः । कुशद्वीये कुशस्तम्बः संज्ञया तस्य तत्स्मृतम् ॥ ४४ तत्प्रयाणेन स द्वीपो घृतोदेन समावृतः।

धृतोदश्च समुद्रो वै क्रौञ्चद्वीपेन संवृतः ॥ ४५ क्रौञ्चद्वीपो महाभाग श्रृयताञ्चापरो महान्।

कुराद्वीपस्य विस्ताराद् द्विगुणो यस्य विस्तरः ॥ ४६

क्रोञ्चद्वीपे द्वतिमतः पुत्रास्तस्य महात्मनः । तज्ञामानि च वर्षाणि तेषां चक्रे महीपतिः ॥ ४७

कुशलो मन्दगश्लोष्णः पीवरोऽधान्यकारकः। मुनिश्च दुन्दुभिश्चैव सप्तैते तत्सुता मुने ॥ ४८

तत्रापि देवगन्धर्वसेविताः सुमनोहराः।

वर्याचला महाबुद्धे तेवां नामानि मे शृणु ॥ ४९ क्रौञ्चश्च वामनश्चैव तृतीयश्चान्यकारकः ।

चतुर्थो रत्नशैलश्च खाहिनी हयसन्निमः ॥ ५०

दिवावत्पञ्चमश्चात्र तथान्यः पृष्डरीकवान् ।

दुन्दुभिश्च महाशैलो द्विगुणास्ते परस्परम् । द्वीपा द्वीपेषु वे शैला यक्षा द्वीपेषु ते तथा ॥ ५१

वर्षेष्ट्रेतेषु रम्येषु तथा शैलवरेषु च।

निवसन्ति निरात्क्षाः सह देवगणैः प्रजाः ॥ ५२ पुष्कराः पुष्कला धन्यास्तिष्याख्याश्च महामृते ।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शुद्राश्चानुक्रमोदिताः ॥ ५३

नदीपैत्रेय ते तत्र याः पिखन्ति शृणुष्ट्र ताः । सप्तप्रधानाः शतशस्तत्रान्याः शुद्रनिम्नगाः ॥ ५४

गौरी कुमुद्रती चैव सन्ध्या रात्रिर्मनोजवा । क्षान्तिश्च पुण्डरीका च सप्तैता वर्षनिम्नगाः ॥ ५५

तत्रापि विष्णुर्भगवान्यष्कराद्यैर्जनार्दनः । यागै सहस्वरूपश्च इज्यते यज्ञसन्निधौ ॥ ५६

कौञ्चद्वीपः समुद्रेण दधिमण्डोदकेन च।

आवृतः सर्वतः क्रीझद्वीपतुल्येन मानतः ॥ ५७ दिधमण्डोदकश्चापि शाकद्वीपेन संवृतः ।

क्रौञ्चद्वीपस्य विस्ताराद् द्विगुणेन महामुने ॥ ५८

शाकडीपेश्वरस्यापि भव्यस्य सुमहात्मनः । सप्नैव तनयास्तेषां ददौ वर्षाणि सप्न सः ॥ ५९ हरनेवाली है ॥ ४३ ॥ वहाँ और भी सहस्रों छोटी-छोटी नदियाँ और पर्वत हैं । कुशद्वीपमें एक कुशका झाड़ है । उसीके कारण इसका यह नाम पड़ा है ॥ ४४ ॥ यह द्वीप

अपने ही बराबर विस्तारवाले घीके समुद्रसे विरा हुआ है और वह चुन-समुद्र क्रीब्रद्वीपसे परिवेष्टित है ॥ ४५ ॥ है महाभाग ! अब इसके अगले व्रौद्धनामक महाद्वीपके विषयमें सुनो, जिसका विस्तार कुशद्वीपसे दुना

है ॥ ४६ ॥ ऋतैद्वद्वीपमें महात्मा द्वतिमान्के जो पुत्र थे: उनके नामानुसार ही महाराज द्यतिमान्ने उनके वर्षकि नाम रखें ॥ ४७ ॥ हे मुने ! उसके कुश्छ, मन्दग, उष्ण, पीबर, अन्यकारक, मृति और इन्द्रभि—ये सात पूत्र थे ॥ ४८ ॥ वहाँ भी देवता और गन्धवाँसे सेवित अति मनोहर सात

वर्षपर्वत हैं। हे महाबुद्धे | उनके नाम सूनो--- ॥ ४९ ॥ उनमें पहला क्रौन्न, दूसरा वामन, तीसरा अन्यकारक, चौथा घोड़ीके मुखके समान रत्नमय स्वाहिनो पर्यंत, पाँचवां दिवावृत्, इन्छा पुण्डरीकवान् और सातवां महापर्वत दुन्तुभि है । वे द्वीप परस्पर एक-दुनरेसे दुने हैं:

और उन्होंको भाँति उनके पर्वत भी [उत्तरोत्तर द्विगुण] हैं ॥ ५०-५१ ॥ इन सुरम्य वर्षी और पर्वतश्रेष्ट्रीमें देवगणीके सहित सम्पूर्ण प्रजा निर्भय होकर रहती है ॥ ५२ ॥ हे महामुने ! वहाँके ब्राह्मण, स्रविय, वैश्य और शुद्र क्रमसे

मैत्रेय ! वहाँ जिनका जल पान किया जाता है उन नदियोंका विवरण सुनो । उस द्वीपमें सात प्रधान तथा अन्य सैकड़ों क्षुद्र निंद्यों हैं॥ ५४ ॥ वे सात वर्षनदियाँ गौरी, कुमुद्रती, सन्ध्या, रात्रि, मनोजवा, क्षान्ति और

पुष्कर, पुष्करु, धन्य और तिष्य कहरूति है ॥ ५३ ॥ हे

पुण्डरीका हैं ॥ ५५ ॥ वहाँ भी रुद्ररूपी जनार्दन भगकान् विष्णुकी पुष्करादि वणौद्वारा यज्ञादिसे पूजा की जाती है ॥ ५६ ॥ यह क्रीलक्षंप चारों ओरसे अपने तुल्य परिमाणवाले दक्षिमण्ड (मट्टे) के समृद्रसे चिरा हुआ है ॥ ५७ ॥ और हे महामुने ! यह महेका समुद्र भी

शाकहीपके राजा महात्मा भव्यके भी सात ही

शाकद्वीपसे बिरा हुआ है, जो विस्तारमें ऋँअद्वीपसे

पुत्र थे। उनको भी उन्होंने पृथक्-पृथक सात वर्ष

दूता है ॥ ५८ ॥

जलदश्च कुमारश्च सुकुमारो मरीचकः। कुसुमोदश्च मौदाकिः सप्तमश्च महाद्वुपः ॥ ६० तत्संज्ञान्येव तत्रापि सप्त वर्षाण्यनुक्रमात्। तत्रापि पर्यताः सप्त वर्षविच्छेदकारिणः ॥ ६१ पूर्वस्तत्रोदयगिरिजेलाधारस्तधापरः तथा रैवतकः इयामस्तर्थवास्तगिरिर्द्धिज । आम्बिकेयस्तथा रम्यः केसरी पर्वतोत्तमः ॥ ६२ शाकस्तत्र महावृक्षः सिद्धगन्धर्वसेवितः। यत्रत्यवातसंस्पर्शादाह्वादो जायते परः ॥ ६३ तत्र पुण्या जनपदाश्चातुर्वर्ण्यसमन्विताः । नद्यश्चात्र महापुण्याः सर्वपापभयापहाः ॥ ६४ सुकुमारी कुमारी च नलिनी धेनुका च या । इक्षुश्च वेणुका चैव गभस्ती सप्तमी तथा ॥ ६५ अन्याञ्च शतशस्तत्र शुद्रनद्यो महामुने । महीधरास्तथा सन्ति शतशोऽध सहस्रशः ॥ ६६ ताः पिबन्ति मुदा युक्ता जलदादिषु ये स्थिताः । वर्षेषु ते जनपदाः स्वर्गादश्येत्य मेदिनीम् ॥ ६७ धर्महानिर्न तेषुस्ति न सङ्घर्यः परस्परम्। मर्यादाव्युत्कमो नापि तेषु देशेषु सप्नसु ॥ ६८ बङ्गाश्च मागधाश्चेव मानसा मन्दगारतथा । वङ्गा ब्राह्मणभृथिष्ठा मागधाः क्षत्रियास्तथा । वैश्यास्तु मानसास्तेषां शुद्रास्तेषां तु मन्दगाः ॥ ६९ शाकद्वीपे तु तैर्विच्याः सूर्यरूपधरो मुने। यशोक्तीरज्यते सम्यक्कर्मभिर्नियतात्मभिः ॥ ७० शकद्वीपस्तु मैत्रेय क्षीरोदेन समावृतः। शासद्वीपप्रमाणेन वलयेनेव वेष्टितः॥ ७१ क्षीराब्धिः सर्वतो ब्रह्मन्युष्कराख्येन वेष्टितः । हीपेन शाकद्वीपातु द्विगुणेन समन्ततः ॥ ७२ पुष्करे सवनस्पापि महावीरोऽभवत्सुतः। धातकिश्च तयोस्तत्र द्वे वर्षे नामचिद्विते । महावीरं तथैवान्यद्धातकीखण्डसंज्ञितम् ॥ ७३ एकश्चात्र महाभाग प्रख्यातो वर्षपर्वतः । मानसोत्तरसंज्ञो वै मध्यतो बलयाकृतिः ॥ ७४

दिये ॥ ५९ ॥ वे सात पुत्र जलद, कुमार, सुकुमार, परीचक, कुसुमोद, मौदाकि और महाहुम थे। उन्हींक नामानुसार वहाँ क्रमशः सात वर्ष है और वहाँ भी वर्षीका विभाग करनेवाले सात ही पर्वत हैं॥ ६०-६१ ॥ हे द्विज । वहाँ पहला पर्यंत उदयाचल है और दूसरा जलाधार; तथा अन्य पर्वत रैवतक, इयाम, अस्ताचल, आम्बिकेय और अति सूरम्य गिरिश्रेष्ठ केसरी है ॥ ६२ ॥ वहाँ सिद्ध और गन्धवाँसे सेवित एक अति महान् इक्क्युक्ष है, जिसके वायुका स्पर्श करनेसे हृदयमें परम आह्यद उत्पन्न होता है।। ६३।। वहाँ चार्खण्यसे युक्त अति पवित्र देश और समस्त पाप तथा भयको दूर करनेवाली सुकुपारी, कुपारी, नलिनी, धेनुका, इक्षु, नेपुका और गभस्ती—ये सात महापवित्र गदियाँ हैं ॥ ६४-६५ ॥ हे महामुने ! इनके सिवा उस द्वीपमें और भी सैकड़ों छोटी-छोटी नदियाँ और सैकड़ों-हजारों पर्वत है ॥ ६६ ॥ स्वर्ग-भोगके अनन्तर जिन्होंने पृथिवी-तरूपर आकर जलद आदि क्वेंमि जन्म ग्रहण किया है वे छोग प्रसंद होकर उनका जल पान करते हैं ॥ ६७ ॥ उन साती वर्षीमें धर्मका हास पारस्यरिक संघर्ष (कलह) अथवा मर्यादाका उल्लंघन कभी नहीं होता॥ ६८॥ वहाँ वंग, मागघ, मानस और मन्दग—ये चार वर्ण है । इनमें वंग सर्वश्रेष्ठ बाह्मण है, मागम क्षत्रिय है, मानस वैश्य है तथा मन्दग शुद्र है।। ६९ ॥ हे मुने ! शाकदीपमें शास्त्रानुकुल कर्म करनेवाले पूर्वोक्त चारी वर्णोद्वारा संयत चित्तसे विधिपूर्वक सूर्यरूपपार्ध भगवान् विष्णुकी उपासना की जाती है ॥ ७० ॥ हे मैब्रेय ! वह शाकद्वीप अपने ही बराबर विस्तारवाले मण्डलाकार दुग्धके समुद्रसे विरा हुआ है॥७१॥ और हे बहान्। वह बीर-समुद्र शक्तद्वीपसे दुने परिमाणवाले पुष्करद्वीपसे परिवेष्टित है ॥ ७२ ॥

पुष्करहीयमें वहाँके आँखपति महाराज सननके महाबीर और धातकिनामक दो पुत्र हुए। अतः उन दोनोंके नामानुसार उसमें महाबीर-खण्ड और धातकी-खण्डनामक दो वर्ष हैं॥ ७३॥ हे महाभाग! इसमें मानसोत्तरनामक एक ही वर्ष-पर्वत कहा जाता है जो इसके मध्यमें बलयाकार स्थित है

योजनानां सहस्राणि ऊर्ध्वं पञ्चाशदच्छितः । तावदेव च विस्तीर्ण: सर्वत: परिमण्ड्ल: ॥ ७५ पुष्करद्वीपवलयं मध्येन विभजन्निव। स्थितोऽसौ तेन विच्छिन्नं जातं तद्वर्षकद्वयम् ॥ ७६ वलयाकारमेकैकं तबोर्वर्षं तथा गिरि: ॥ ७७ दशवर्षसहस्राणि तत्र जीवन्ति मानवाः । निरामया विशोकाश्च रागद्वेषादिवर्जिताः ॥ ७८ अधमोत्तमौ न तेष्ठास्तां न वध्यवधकौ द्विज । नेर्व्यासुया भयं हेवो दोषो लोभादिको न च ॥ ७९ महावीरं बहिर्वर्षे धातकीखण्डमन्ततः । मानसोत्तरशैलस्य देवदैत्यादिसेवितम् ॥ ८० सत्यानृते न तत्रास्तां द्वीपे पुष्करसंज्ञिते। न तत्र नद्यः शैला वा द्वीपे वर्षद्वयान्विते ॥ ८१ तुल्यवेषास्तु मनुजा देवास्तत्रैकरूपिणः । वर्णाश्रमाचारहीनं धर्माचरणवर्जितम् ॥ ८२ त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्श्रुषारहितञ्ज यत्। वर्षह्यं तु पैत्रेय भौमः स्वर्गोऽयमुत्तमः ॥ ८३ सर्वर्तस्रवदः कालो जरारोगादिवर्जितः। धातकीखण्डसंज्ञेऽथ महावीरे च वै मुने ॥ ८४ न्यप्रोधः पुष्करद्वीपे ब्रह्मणः स्थानमृत्तमम् । तस्मिन्नियसति ब्रह्मा पूज्यमानः सुरासुरैः ॥ ८५ स्वाद्दकेनोद्धिना पुष्करः परिवेष्टितः। समेन पुष्करस्यैव विस्तारान्मण्डलं तथा ॥ ८६ एवं द्वीपाः समुद्रैश्च सप्त सप्तभिरावृताः । द्वीपश्चैव समुद्रश्च समानी द्विगुणौ परौ ॥ ८७ पर्यासि सर्वदा सर्वसमद्वेष समानि वै। न्यूनातिरिक्तता तेषां कदाचित्रैव जायते ॥ ८८ स्थालीस्थमभिसंयोगादुदेकि सलिलं यथा। तथेन्द्रवृद्धौ सलिलमम्भोधौ मुनिसत्तम् ॥ ८९ अन्युनानतिरिक्ताश्च वर्धन्यापो हसन्ति च । उदयास्तमनेष्ट्रिन्दोः पक्षयोः शुक्ककृष्णयोः ॥ ९०

तथा पचास सहस्र योजन ऊँचा और इतना ही सब ओर गोलाकार फैला हुआ है।। ७४-७५।। यह पर्वत पुष्करद्वीपरूप गोलेको मानो बीचमेंसे विभक्त कर रहा है और इससे विभक्त होनेसे उसमें दो वर्ष हो गये हैं; उनमेंसे प्रत्येक वर्ष और वह पर्वत वलयाकार ही है॥ ७६-७७॥ वहाँकि मनुष्य रोग, शोक और रागद्वेपादिसे रहित हुए दस सहस्र वर्षतक जीवित रहते है ॥ ७८ ॥ हे द्विज ! उनमें उतम-अध्यम अधवा वध्य-वधक आदि (बिरोधी) भाव नहीं है और न उनमें ईर्प्या, असुया, पय, द्वेष और लोभादि दोष ही है ॥ ७९ ॥ महावीरवर्ष मानसोत्तर पर्वतके बाहरकी ओर है और धातकी-खण्ड भीतरकी ओर । इनमें देव और दैत्य आदि निवास करते हैं ॥ ८० ॥ दो खण्डोंसे युक्त उस पृष्करद्वीपमें सत्य और मिध्याका व्यवहार नहीं है और न उसमें पर्वत तथा नदियाँ हो हैं ॥ ८१ ॥ वहाँके मनुष्य और देवगण समान तेष और समान रूपवाले होते हैं। हे मैंबेय ! वर्णाश्रमाचारसे हीन, काप्य कर्मीसे रहित तथा वेदत्रयी, कृषि, दण्डनीति और श्रृश्रुपा आदिसे जुन्य वे दोनों वर्ष तो मानो अल्पूत्तम भीष (पृथिबीके) स्वर्ग है।। ८२-८३।। हे म्ले ? उन महाबीर और धातकी-खण्डनामक वर्षीमें काल (समय) समस्त ऋतुऑमें सुकदायक और जरा तथा रोगादिसे रहित रहेता है ॥ ८४ ॥ पष्करद्वीपमें ब्रह्माजीका उत्तम निवासस्थान एक न्यप्रोध (वट) का बुक्ष है, जहाँ देवता और दानवादिसे पजित श्रीब्रह्मानी विराजते है।। ८५।। पुष्करद्वीप चारों ओरसे अपने ही समान विस्तारकले मीठे पानीके समुद्रसे मण्डलके समान घिरा हुआ है।। ८६॥ इस प्रकार सातों द्वीप सात समुद्रोंसे भिरे हुए हैं और वे द्वीप तथा [उन्हें घेरनेवाले] समुद्र परस्पर समान हैं, और उत्तरोत्तर दुने होते गये हैं॥ ८७॥ सभी समुद्रोमें सदा

समान जल रहता है, उसमें कभी न्यूनता अधवा अधिकता नहीं होती ॥ ८८ ॥ हे भूनिश्रेष्ठ ! पत्रका जल जिस भकार

अग्निका संयोग होनेसे उचलने रूपता है उसी प्रकार

चन्द्रमाको कलाओंके बद्दनेसे समुद्रवर जल भी बद्दने

लगता है।। ८९ ।। शुक्रु और कृष्ण पक्षोंने चन्द्रमाके

उदय और असासे न्यनाधिक न होते हुए ही जल घटता

दशोत्तराणि पश्चैव ह्यङ्गुलानां शतानि वै।
अयां वृद्धिक्षयौ दृष्टौ सामुद्रीणां महामुने ॥ ९१
भोजनं पुष्करद्वीपे तत्र स्वयमुपस्थितम् ।
यद्भसं भुञ्जते वित्र प्रजाः सर्वाः सदैव हि ॥ ९२
स्वाद्दकस्य परितो दृश्यतेऽलोकसंस्थितिः ।
द्विगुणा काञ्चनी भूमिः सर्वजन्तुविवर्जिता ॥ ९३
लोकालोकस्ततश्शैलो योजनायुतिवस्तृतः ।
उच्छ्रयेणापि तावन्ति सहस्राण्यचलो हि सः ॥ ९४
ततस्तमः समावृत्य तं शैलं सर्वतः स्थितम् ॥ ९५
पञ्चाशत्कोदिवस्तारा सेयमुर्वी महामुने ।
सहैवाण्डकटाहेन सर्वभूत्वगुणाधिका ।
आधारभूता सर्वेषां मैत्रेय जगतामिति ॥ ९७

और बढ़ता है ॥ ९० ॥ हे मझमुने ! समुद्रके जरूकी वृद्धि और क्षय पाँच सी दस (५१०) अंगुरुतक देवी जाती हैं ॥ ९१ ॥ हे वित्र ! पुष्करद्वीपमें सम्पूर्ण प्रवाबर्ग सर्वदा [बिना प्रयावके] अपने-आप ही प्राप्त हुए षह्रस भोजनका आहार करते हैं ॥ ९२ ॥

स्वाद्दक (मीठे पानीके) समुद्रके चारों और लेक-निवाससे शून्य और समस्त बोकोंसे रहित उससे दूनों सूवर्णमयी भूमि दिखायी देती है ॥ ९३ ॥ वहाँ दस सहस्र योजन विस्तारवाला लोकालोक-पर्वत है ॥ ९४ ॥ उसके ऊँचाईमें भी उतने ही सहस्र योजन है ॥ ९४ ॥ उसके आगे उस पर्वतको सब ओरसे आवृतकर चोर अन्धकार हाया हुआ है, तथा वह अन्धकार चारों ओरसे ब्रह्माण्ड-कटाइसे आवृत है ॥ ९५ ॥ हे महामुने ! अण्डकटाइके सहित द्वीप, समुद्र और पर्वतादियुक्त यह समस्त पूमण्डल पचास करोड़ योजन विस्तारवाला है ॥ ९६ ॥ हे मैत्रेय ! आकाशादि समस्त भूतोसे अधिक गुणवाली वह पृथिवी सम्पूर्ण जगत्को आधारभूता और उसका पालन तथा उद्देव करनेवाली है ॥ ९७ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेऽशे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय

सात पाताललोकोंका वर्णन

श्रीपराशर उनाच

विस्तार एव कथितः पृथिव्या भवतो मया ।
सप्तिस्तु सहस्राणि द्विजोच्छ्रयोऽपि कथ्यते ॥
दशसाहस्रपेकैकं पातालं मुनिसत्तम ।
अतलं वितलं चैव नितलं च गर्भस्तिमत् ।
महाख्यं सुतलं चाप्र्यं पातालं चापि सप्तमम् ॥
सुक्रकृष्णारूणाः पीताः शर्कतः शैलकाञ्चनाः ।
भूमयो यत्र पैत्रेय वरप्रासादमण्डिताः ॥
तेषु दानवदैतेया यक्षाश्च शतशस्तवा ।
निवसन्ति महानागजातयश्च महामुने ॥
स्वलींकादपि स्म्याणि पातालप्रनीति नारदः ।
प्राह स्वर्गसदां मध्ये पातालाभ्यागतो दिवि ॥
आह्वादकारिणः शुप्रा मणयो यत्र सुप्रभाः ।
नागाभरणभूषास् पातालं केन तस्तमम् ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे द्विज! मैंने तुमसे यह पृथिवीका विस्तार कहा; इसको ऊँचाई भी सत्तर सहस्र योजन कही जाती है।।१॥ हे मुनिसत्तम! अंतल, वितल, नितल, गंभस्तिमान, महातल, सुतल और पाताल इन सातामेंसे प्रत्येक दस-दस सहस्र योजनको दूरीपर है॥२॥ हे मैंत्रेय! सुन्दर महलींसे सुशोधित वहाँकी धूमियाँ शुक्र, कृष्ण, अरुण और पीत वर्णकी तथा शर्करामयी (कॅकरोली), शैली (पत्थरकी) और सुवर्णमयी है॥३॥ हे महासुने! उनमें दानव, दैत्य, यक्ष और बढ़े-बढ़े नाग आदिकाँकी सैकड़ी जातियाँ निवास करती है॥४॥

एक बार नारदजीने पाताललोकसे स्वर्गमें आकर वहाँके निवासियोंसे कहा था कि 'पाताल तो स्वर्णसे भी अधिक सुन्दर हैं'॥ ५॥ जहां नागगणके आपूर्णोंमें सुन्दर प्रभायुक्त आह्वादकारियी शुप्र मणियाँ जड़ी हुई हैं शोभिते ।

दैत्यदानवकन्याभिरितश्चेतश्च

पाताले कस्य न प्रीतिर्विमुक्तस्यापि जायते ॥ दिवार्करञ्मयो यत्र प्रमां तन्वन्ति नातपम् । शशिरहिमर्न शीताय निशि द्योताय केवलम् ॥ भक्ष्यभोज्यमहापानमृदितैरपि भोगिभिः। यत्र न ज्ञायते कालो गतोऽपि दनुजादिभिः ॥ वनानि नद्यो रम्याणि सरांसि कमलाकराः । पुंस्कोकिलाभिलापाञ्च मनोज्ञान्यम्बराणि च ॥ १० भूषणान्यतिशुभाणि गन्धाढ्यं चानुलेपनम् । वीणावेणुमुदङ्गानां स्वनास्तुर्याणि च द्विज ॥ ११ एतान्यन्यानि चोदारभाग्यभोग्यानि दानवैः । दैत्योरगैश्च भुज्यन्ते पातालान्तरगोचरैः ॥ १२ पातालानामधश्चास्ते विष्णोर्या तामसी तनुः । शेषाख्या यहणान्त्रकुं न शक्ता दैत्यदानवाः ॥ १३ योऽनन्तः पठ्यते सिद्धेदैवो देवर्षिपुजितः । स सहस्रशिरा व्यक्तस्वस्तिकामलभूषणः ॥ १४ फणामणिसहस्रेण यः स विद्योतयन्दिशः । सर्वान्करोति निर्वीर्यान् हिताय जगतोऽसुरान् ॥ १५ पदाधूर्णितनेत्रोऽसौ यः सदैवैककृण्डलः। किरीटी सम्धरो भाति साम्निः श्वेत इवाचलः ॥ १६ नीलबासा मदोत्सिकः श्वेतहारोपशोभितः। साभगङ्गप्रवाहोऽसौ कैलासाद्रिरिवापरः ॥ १७ लाङ्कलासक्तहस्ताओ विश्वन्युसलमुत्तमम् । उपास्यते स्वयं कान्त्या यो वारुण्या च मूर्त्तया ॥ १८ कल्पान्ते यस्य वक्त्रेभ्यो विद्यानलशिखोञ्ज्वलः । सङ्कर्षणात्मको सदो निष्क्रम्यात्ति जगत्त्रयम् ॥ १९ स बिप्रच्छेखरीभूतमशेषं क्षितिमण्डलम्। आस्ते पातालमूलस्थः शेषोऽशेषसुरार्चितः ॥ २०

तस्य वीर्थं अभावश्च स्वरूपं रूपमेव च।

यसँषा सकला पृथ्वी फणार्माणशिखारुणा ।

न हि वर्णयितुं शक्यं जातुं च त्रिदशैरपि ॥ २१

आस्ते कुसुममालेव कस्तद्वीर्यं वदिष्यति ॥ २२

उस पातालको किसके समान कहें ? ॥ ६ ॥ जहाँ-तहाँ दैत्य और दानवांकी कन्याओंसे सुशोधित पाताललोकमें किस मुक्त पुरुषकी भी प्रीति न होगी ॥ ७ ॥ जहाँ दिनमें सूर्यकी किरणें केवल प्रकाश ही करती हैं, वाम नहीं करतीं; तथा रातमे चन्द्रमाकी किरणेंसे शीत नहीं होता, केवल चाँदनी ही फैलती है ॥ ८ ॥ जहाँ भक्ष्य, भोज्य और महापानादिके भोगोंसे आनन्दित सर्पी तथा दानवादिकोको समय जाता हुआ भी प्रतीत नहीं होता ॥ ९ ॥ जहाँ सुन्दर थन, नदियाँ, रमणीय सरोवर और कमलोंके वन हैं, जहाँ नरकोकिलोंकी सुमधुर कुक गुजती है एवं आकाश पनोहारी है ॥ १० ॥ और है द्विज ! जहाँ पातालमिवासी दैत्य, दानव एवं नागगणद्वारा अति स्वच्छ आधुषण, सुगन्धमय अनुलेपन, वीणा, वेणु और एदंगादिके स्वर तथा तूर्य — ये सब एवं भाग्यशास्त्रियोक्त भोगनेयोग्य और भी अनेक भोग भोगे जाते हैं ॥ ११-१२ ॥ पातालोंके नीचे विष्णभगवानका शेष्ट नामक जो

तमोमय विपह है उसके गुणींका दैत्य अथवा दानवगण भी वर्णन नहीं कर सकते ॥ १३ ॥ जिन देवविष्जित देवका सिद्धगण 'अनन्त' कहकर बखान करते हैं वे अति निर्मल. स्पष्ट स्वस्तिक चिह्नोंसे विभूषित तथा सहस्र सिरवाले हैं ॥ १४ ॥ ओ अपने फणोंकी सहस्र मणियोंसे सम्पूर्ण दिज्ञाओंको देदीप्यमान करते हुए संसारके कल्थाणके रिज्ये समस्त असरोको जीर्यहीन करते रहते हैं ॥ १५ ॥ मदके कारण अरुणनयन, सदैब एक ही कुण्डल पहने हुए तथा मुकुट और माला आदि धारण किये जो अग्नियुक्त खेत पर्वतके समान सुझोभित हैं ॥ १६ ॥ मदसे उन्पन्न हुए जो नीत्सम्बर तथा श्रेत हारोसे सुशोमित होकर मेचमाला और गंनाप्रवाहसे युक्त दूसरे कैलास-पर्वतके समान विश्वजमान हैं ॥ १७ ॥ जो अपने हाथीमें हरू और उत्तम मुसल धारण किये हैं तथा जिनको उपासना शोभा और वारुणी देवी खुय मृर्तिमती होकर करती हैं॥ १८॥ कल्पान्तमे जिनके मुसोसे विषाधिशिखांके समान देदीप्यमान संकर्षण-नामक रुद्र निकटकर तीनों लोकोंका भक्षण कर जाता है ॥ १९ ॥ वे समस्त देवगणीसे वन्द्रित दोषभगवान अशेष भूमण्डलको मुकुटबत् धारण किये हए पाताल-तलमें विराजमान है।। २०३। उनका बल-वीर्य, प्रभाव, स्वरूप (तत्व) और रूप (आकार) देवताओंसे भी नहीं जाना और कहा जा सकता ॥ २१ ॥ जिनके फणोंकी मणियोंकी आभासे अरुण वर्ण हुई यह समस्त पृथिवी फुलोंकी मालाके समान रखी हुई है उनके बल-बीर्यका वर्णन भला कौन करेगा?॥२२॥

तदा चलति भूरेषा साव्यितोया सकानना ॥ २३
गन्धर्वाप्सरसः सिद्धाः किन्नरोरणचारणाः ।
नान्तं गुणानां गच्छन्ति तेनानन्तोऽयपव्ययः ॥ २४
यस्य नागवधृहस्तैलेंपितं हरिचन्दनम् !
सुहुः श्वासानिलापास्तं याति दिश्कृदवासताम् ॥ २५
यमाराध्य पुराणिवर्गगों ज्योतीिष तस्वतः ।
ज्ञातवान्सकलं बैव निमित्तपठितं फलम् ॥ २६
तेनेयं नागवर्थेण शिरसा विश्वता मही ।
बिभर्ति मालां लोकानां सदेवासुरमानुषाम् ॥ २७
इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीर्थे

श्रीपराशर उवाच

यदा विज्ञस्मतेऽनन्तो मदाघूणिंतलोचनः ।

जिस समय मदमत्तनयन शेषजी जमुहर्द लेते हैं उस समय समुद्र और का आदिके सहित यह सन्पूर्ण पृथिवी चलायमान हो जाती है ॥ २३ ॥ इनके गुणोंका अन्त गम्थर्व, अप्सरा, सिद्ध, कियर, नाम और चारण आदि कोई भी नहीं भा सकते; इसिलये ये अविनाशी देव 'अनन्त' कहत्यते हैं ॥ २४ ॥ जिनका नाम-वशुओंद्वारा लेपित हरिचन्दन पुनः-पुनः श्वास-वायुसे छूट-छूटकर दिशाओंको सुगन्धित करता रहता है ॥ २५ ॥ जिनकी आराधनासे पूर्वकरतीन महर्षि गमी समस्त ज्योतिर्मण्डल (प्रहनश्रादि) और शकुन-अपशकुनादि नीमिक्क फलोंको तत्वतः जाना था ॥ २६ ॥ उन नामश्रेष्ठ शेषजीने इस पृथिवीको अपने मस्तकपर धारण किया हुआ है, जो स्वयं भी देव, असुर और मनुष्योंके सहित सम्पूर्ण लोकमाला (पातालगदि समस्त लोकों) को धारण किये हुए हैं ॥ २० ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेंऽहो पञ्चमोऽध्यायः॥ ५ ॥

छठा अध्याय

भिन्न-भिन्न नरकोंका तथा भगवन्नामके माहात्यका वर्णन

ततश्च नरका विप्र भुवोऽयः सिललस्य च । पापिनो येषु पात्यन्ते ताञ्कुणुषु महामुने ॥ १ रौरवः सूकरो रोधस्तालो विदासनस्तथा । महाज्वालस्तप्तकुम्भो लवणोऽथ विलोहितः ॥ २ स्रिथराष्मो वैतर्राणः कृमीशः कृमिभोजनः । असिपत्रवनं कृष्णो लालाभक्षश्च दारुणः ॥ ३

सन्दंशः कालसूत्रश्च तमश्चावीचिरेव च ॥ श्वभोजनोऽधाप्रतिष्ठश्चाप्रचिश्च तथा परः ।

तथा प्यवहः पापो बहिज्वालो हाधःशिराः ।

श्वभाजनाऽथात्रानष्ठश्चात्राचश्च तथा परः । इत्येवमादयञ्चान्ये नरका भृशदारुणाः॥

यमस्य विषये घोराः शस्त्राज्ञिभयदायिनः ।

पर्तात्त येषु पुरुषाः पाषकर्मस्तास्तु ये ॥ कटसाक्षी तथाऽसम्यक्पक्षपातेन यो वदेत् ।

कूटसाक्षा तथाऽसम्यक्पक्षपातन या वदत् । यश्चान्यदनुतं वक्ति स नरो याति रौरवम् ॥

भूणहा पुरहत्ता च गोन्नश्च मुनिसत्तम । यान्ति ते नरकं रोधं यशोच्छवासनिरोधकः ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—हे विश्र ! तदननार पृथिवी और जलके नीचे नरक हैं जिनमें पापी लोग गिराये जाते हैं। हे महामुने ! उनका विवरण सुनी ॥ १ ॥ रैरव, सृक्त, रोध, ताल, विश्वसन, महाज्वाल, तसकुन्भ, लवण, विल्लेहित, रुविश्वसन, महाज्वाल, कृमांश, कृमिभोजन, असिपन्नवन, कृष्ण, लालभक्ष, दारुण, पूयवह, पाप, विहुज्वाल, अधःशिए, सन्देश, कालसूत्र, तमस्, आवीचि, श्रभोजन, अप्रतिष्ठ और अप्रचि—ये सब तथा इनके सिवा और भी अनेको महाभयकुर नरक हैं, जो यमराजके शासनाथीन है और अति दारुण शस्त्र-भय तथा अग्रि-भय देनेवाले हैं और जिनमें जो पुरुष पापरत होते हैं वे ही गिरते हैं ॥ २—६॥

जो पुरुष क्टसाक्षी (झूटा गवाह अर्थात् जानकर भी म बतलानेवाला या कुछ-का-कुछ कहनेवाला) होता है अथना जो पद्मपातसे यथार्थ नहीं बोलता और जो मिथ्या-भाषण करता है वह रीरजनरकमें जाता है॥ ७॥ हे मुनिसत्तम ! भूण (गर्भ) नष्ट करनेवाले प्रापनाशक और गो-हत्यारे लोग रोच नामक नरकमें जाते हैं जो

सुरापो ब्रह्महा हर्ता सुवर्णस्य च सुकरे। प्रयान्ति नरके यश्च तैः संसर्गमुपैति वै ॥ राजन्यवैदयहा ताले तथैव गुरुतल्पगः। तप्तकुण्डे स्वसुगामी हन्ति राजधटांश्च यः ॥ १० साध्वीविक्रयकुङ्ग्धपालः केसरिविक्रयी । तप्तलोहे पतन्त्येते यश्च भक्तं परित्यजेत् ॥ ११ सूर्षा सुतो चापि गत्वा महाज्वाले निपात्वते । अवयन्ता गुरूणां यो यश्चाक्रोष्टा नराधमः ॥ १२ वेददुषयिता यश्च वेदविक्रयिकश्च यः। अगम्यगामी यश्च स्याते यान्ति लवणं द्विज ॥ १३ चोरो वित्रोहे पतित मर्यादादपकस्तथा ॥ १४ देवद्विजिपतृद्वेष्टा रत्नदृषयिता च यः। स याति कृमिभक्षे वै कृमीशे च दुरिष्टकृत् ॥ १५ पितदेवातिथींस्यक्तवा पर्यश्राति नराधमः । लालाभक्षे स यात्यप्रे शरकर्ता च वेधके ॥ १६ करोति कर्णिनो यश्च यश्च खड्गादिकुन्नरः । प्रवास्थेते विशसने नरके भुशदारुणे ॥ १७ असत्प्रतिगृहीता तु नरके यात्यधोमुखे। अयाज्ययाजकश्चैव तथा नक्षत्रसूचकः ॥ १८ वेगी पूचवहे चैको याति पिष्टान्नभुद्धनरः ॥ १९ लाक्षामांसरसानां च तिलानां लवणस्य च । विक्रेता ब्राह्मणो याति तमेव नरकं हिज ॥ २० पार्जारकुकुटच्छागश्चराहविहङ्गमान् । योषयञ्जरकं याति तमेव द्विजसत्तम् ॥ २१

रङ्गोपजीवी कैवर्त्तः कुण्डाञ्ची गरदस्तथा ।

@ q 4-

सूची माहिषकश्चैय पर्वकारी च यो द्विज: ॥ २२

श्वासोच्छ्वासको रोकनेवाला है॥८॥ मद्य-पान करनेवाला, ब्रह्मघाती, सूवर्ण चुरानेवाला तथा जो पुरुष इनका संग करता है ये सब सुकरनरकमें जाते हैं ॥ ९ ॥ श्रिय अथवा वैश्यका वय करनेवाला तालनरकमें तथा गुरुखोके साथ गमन करनेवाला, भगिनोगामी और राजदुर्तीको भारनेवाला पुरुष तक्षकण्डनरकमें पड़ता है॥ १०॥ सती खीको बेचनेवाला, कारागृहरक्षक, अधिकेता और मक्तपुरुषका त्याग करनेवाला ये सब लोग तप्तलोहनस्कमें गिरते हैं ॥ ११ ॥ पुत्रवध् और पुत्रीके साथ विषय करनेवाल्य पुरुष महाज्वालनस्कर्मे गिराया जाता है, तथा जो नरायम गुरूजर्नाका अपमान करनेवाला और उनसे दर्वचन बोलनेवाला होता है तथा जो बेदकी निन्दा करनेवाला, वेद बेचनेवाला या अगम्या स्त्रीसे सम्भोग करता है, हे द्विज ! वे सब स्व्वणनरकमें जाते हैं ॥ १२-१३ ॥ चोर तथा मर्यादाका उल्लङ्कन करनेवाला पुरुष विल्लोहितनस्कमें गिरता है।। १४ ।। डेब, द्विज और पितगणसे द्वेष करनेवास्त्र तथा रत्नको दृषित करनेवाला कृमिभक्षनरकमें और अनिष्ट यह करनेवाला कमीशनरकमें जाता है ॥ १५॥ जो नराधम पितुगण, देवगण और अतिधियोंको

छोड़कर उनसे पहले भोजन कर लेता है वह आति उप लालाभक्षनरकमें पडता है; और बाण बनानेवाला वेधकनरकमें जाता है॥ १६॥ जो मनुष्य कर्णी नामक बाण बनाते हैं और जो खड़गादि शख बनानेवाले हैं दे अति दारुण विदासननरकमें गिरते हैं ॥ १७ ॥ असत्-प्रतिग्रह (दृषित टपायोर) घन-संग्रह) करनेवाला, अयाज्य-पाजक और नक्षत्रोपजीवी (नक्षत्र-विद्याको न जानकर भी उसका डोंग रचनेवाला) पुरुष अधोमुख-नरकमें पड़ता है ॥ १८ ॥ साहस (निष्ठर कर्म) करनेवाला पुरुष पुरावहनस्वामें जाता है, तथा [पुत्र-मित्रादिकी वहना करके] अकेले ही स्वाद् भोजन करनेवाला और छाख, मांस, रस, तिल तथा सक्य आदि बेचनेवाला ब्राह्मण भी उसी (पृथवह) क्रकमें गिरता है ॥ १९-२० ॥ है द्विजन्नेष्ठ ! बिलाव, कुकुट, छाग, अध, शुकर तथा पक्षियोंको [जीविकाके लिये] पालनेसे भी पुरुष उसी नरकमें जाता है॥ २१॥ नट या मल्ल-वृतिसे रहनेवाला, धीवरका कर्ष करनेवाला, कृष्ट (उपपतिसे उठान सन्तान) का अन्न खानेवाला, विष देनेवात्म, चुगलसोर, स्रोकी असद्वृत्तिके आश्रव एनेवाला. धन आदिके स्त्रेभसे बिना पर्वके अमावास्या

मखहा ग्रामहन्ता च याति वैतरणीं नरः ॥ २४ रेतःपातादिकत्तरि मर्यादाभेदिनो हि ये। ते कृष्णे यात्त्यशीचाश्च कुहकाजीविनश्च ये ॥ २५ असिपत्रवनं याति वनच्छेदी वृथैव यः। औरप्रिको मुगव्याधो बह्विज्वाले पतन्ति वै ॥ २६ यान्येते द्विज तत्रैव ये चापाकेषु वद्विदाः ॥ २७ व्रतानां लोपको यश्च खाश्रमाद्विच्युतश्च यः । सन्दंशयातनामध्ये पततस्तावुभावपि ॥ २८ दिवा स्वप्ने च स्कन्दन्ते ये नरा ब्रह्मचारिणः । पुत्रैरध्यापिता ये च ते पतन्ति श्वभोजने ॥ २९ एते चान्ये च नरकाः शतशोऽध सहस्रशः । येषु दुष्कृतकर्माणः पच्यन्ते यातनागताः ॥ ३० यथैव पापान्येतानि तथान्यानि सहस्रदाः । भुज्यन्ते तानि पुरुषैर्नरकान्तरगोचरैः ॥ ३१ वर्णाश्रमविरुद्धं च कर्म कर्वन्ति ये नराः । कर्मणा मनसा वाचा निरयेषु पतन्ति ते ॥ ३२ अधःशिरोभिर्दश्यन्ते नारकैर्दिव देवताः । देवाञ्चाधोपुरवान्सर्वानधः पश्यन्ति नारकान् ॥ ३३ स्थावराः कुमयोऽब्जाश्च पक्षिणः पश्चवो नराः । घार्मिकास्त्रिदशास्तद्वन्योक्षिणश्च यथाक्रमम् ॥ ३४ सहस्रभागप्रथमा द्वितीयानुक्रमास्तथा । सर्वे होते महाभाग यावन्युक्तिसमाश्रयाः ॥ ३५ यावन्तो जन्तवः खर्गे तावन्तो नरकौकसः । पापकृद्याति नरकं प्रायश्चित्तपराङ्मुखः ॥ ३६ पापानामनुरूपाणि प्रायश्चित्तानि यद्यथा । तथा तथैव संस्मृत्व प्रोक्तानि परमर्विभि: ॥ ३७ पापे गुरुणि गुरुणि खल्यान्यल्पे च तद्विदः । प्रावश्चित्तानि मैत्रेय जगुः स्वायम्भुवादयः ॥ ३८ प्रायश्चित्तात्यशेषाणि तपःकर्मात्यकानि वै । यानि तेवामशेषाणां कृष्णानुस्परणं परम् ॥ ३९

आगारदाही मित्रघः शाकनिर्प्रामयाजकः ।

रुधिरान्धे पतन्येते सोमं विक्रीणते च ये ॥ २३

आदि पर्वदिनोंका कार्य करानेवाला दिज, घरमें आग लगानेवाल्य, मित्रकी हत्या करनेवाला, शकुन आदि बतानेवाला, प्रामका प्रोहित तथा सोम (मदिरा) बैचने-वाला—ये सब रुधिगुन्धनरकमें गिरते हैं॥ २२-२३॥ यज्ञ अथवा प्रामको नष्ट करनेवारम पुरुष वैतरणीनरको जाता है, तथा जो लोग चौर्यपतादि करनेवाले. खेतींकी बाइ तोइनेवाले. अपवित्र और छलवृत्तिके आक्षय रहनेवाले होते हैं वे कणानरकमें गिरते हैं ॥ २४-२५ ॥ जो वथा ही बनोंको कारता है वह असिपत्रवननरकमें जाता है। पेथोपजीवी (गड़रिये) और व्याधगण वहिज्वालनस्कमे गिरते हैं तथा है हिज ! जो कसे घड़ी अथवा ईंट आदिको फ्कानेके लिये उनमें अप्रि डाकते हैं. वे भी इस (बह्विज्वालनएक) में ही जाते हैं ॥ २६-२७ ॥ व्रतीको लोप करनेवाले तथा अपने आश्रमसे पतित दोनों ही प्रकारके पुरुष सन्देश नामक नरकमें गिरते हैं ॥ २८ ॥ जिन ब्रह्मचारियोंका दिनमें तथा सोते समय (बरी भावनासे) वीर्यपात हो जाता है, अथवा जो अपने ही पुत्रोंसे पढ़ते है वे होग श्रधोबननएकमे गिरते हैं ॥ २९ ॥ इस प्रकार, ये तथा अन्य सैकड़ों-हजारों नरक हैं, जिनमें दष्कर्मी त्येग नाना प्रकारकी यातनाएँ भोगा करते

है ॥ ३० ॥ इन उपरोक्त पापीक समान और भी सहस्रो पाप-कर्म हैं, उनके फल मनुष्य भिन्न-भिन्न नरकॉमें भोगा करते हैं ॥ ३१ ॥ जो लोग अपने वर्णाश्रम-धर्मके विरुद्ध मन, बचन अथवा वार्मसे कोई आचरण करते हैं वे नरकमें गिरते हैं॥ ३२ ॥ अशोम्खनस्कनिवासियोंको स्वर्ग-लोकमें देवगण दिखायी दिया करते हैं और देवता लोग नीचेके लोकोंमें नारकी जीवोंको देखते हैं ॥ ३३ ॥ पापी लोग नरकभोगके अनन्तर क्रमसे स्थावर, कृमि, जलचर, पक्षी, पञ्च, अनुष्य, धार्मिक पुरुष, देवराण तथा मुमुक्ष् होकर जन्म ब्रहण करते हैं॥ ३४॥ हे महाभाग ! मुम्क्ष्पर्यस्त इन सलमें दूसरोकी अपेक्षा पहले प्राणी [संख्यामें] सहस्रगुण अधिक है। ३५॥ जितने जीव स्वर्गमें हैं उतने ही नरकमें हैं, जो पापी पुरुष [आपने पापका) प्रायक्षित नहीं करते वे ही नरकमें जाते हैं ॥ ३६ ॥ भिन्न-भिन्न पापेंके अनुरूप जो-जो प्रायश्चित हैं

उन्हों-उन्होंको महर्षियोने वेदार्थका स्मरण करके बताया

है ॥ ३७ ॥ हे मैत्रेय ! स्वायम्ब्यम्नू आदि स्मृतिकसीने

महान पापोंके लिये महान और अल्पेंके लिये अल्प

प्राथिश्वतींकी व्यवस्था की है।।३८॥ किन्तु जितने

भी तपस्पातमक और कर्मात्मक श्रायश्चित है उन सबमे

कृते यापेऽनुतापो वै यस्य पुंसः प्रजायते । प्रायश्चित्तं तु तस्यैकं हरिसंस्मरणं परम् ॥ ४० प्रातर्निशि तथा सन्ध्यामध्याह्नादिषु संस्मरन् । नारायणमवाप्नोति सद्यः पापक्षयात्ररः ॥ ४१ विष्णुसंसारणात्क्षीणसमस्तक्षेशसञ्जयः युक्ति प्रयाति स्वर्गाप्तिस्तस्य विद्योऽनुमीयते ॥ ४२ वासदेवे मनो यस्य जपहोमार्चनादिषु। तस्यान्तरायो मैत्रेय देवेन्द्रत्वादिकं फलम् ॥ ४३ नाकपृष्ठगमनं पुनरावृत्तिलक्षणम्। क जपो वासुदेवेति मुक्तिबीजमनुत्तमम् ॥ ४४ तस्मादहर्निशं विष्णुं संस्मरन्युरुषो मुने । न याति नरकं मर्त्यः सङ्खीणाखिलपातकः ॥ ४५ मनःश्रीतिकरः स्वर्गो नरकस्तव्रिपर्ययः। नरकस्वर्गसंज्ञे वै पापपुण्ये द्विजोत्तम ॥ ४६ वस्त्वेकमेव दुःखाय सुखायेर्घ्यागमाय च । कोपाय च यतस्तस्माद्वस्तु वस्त्वात्मकं कृत: ॥ ४७ तदेव प्रीतये भूत्वा पुनर्दुःखाय जायते । तदेव कोपाय यतः प्रसादाय च जायते ॥ ४८ तस्माद्दुःखात्पकं नास्ति न च किञ्चित्सुखात्मकप् । मनसः परिणामोऽयं सुखदुःखादिलक्षणः ॥ ४९ ज्ञानमेव परं ब्रह्म ज्ञानं बन्धाय चेव्यते । ज्ञानात्मकमिदं विश्वं न ज्ञानाद्विद्यते परम् ॥ ५० विद्याविद्येति मैत्रेय ज्ञानमेबोपधारय ॥ ५१ एवमेतन्पयाख्यातं भवतो मण्डलं भुवः। पातालानि च सर्वाणि तथैव नरका द्विज ॥ ५२ समुद्राः पर्वताश्चेव द्वीपा वर्षाणि निम्नगाः । सङ्खेषात्सर्वमाख्यातं कि भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ५३

श्रीकृष्णस्मरण सर्वश्रेष्ठ है ॥ ३९ ॥ जिस पुरुषके चित्तमें पाप-कर्मके अनन्तर पश्चाताप होता है उसके लिये ही प्रायक्षित्तीका विधान है । किंद्रु यह हरिस्मरण तो एकमात्र स्वयं ही परम प्रायक्षित्त है ॥ ४० ॥ प्रातःकाल, सार्यकाल, सार्यकाल, सार्यकाल, सार्यकाल, सार्यकाल कर्तिसे पुरुषके समस्त पाप तत्काल श्रीण हो जाते हैं ॥ ४१ ॥ श्रीविष्णुमगवान्के स्मरणसे समस्त पापग्रशिके भस्म हो जातेसे पुरुष मोक्षपद प्राप्त कर लेता है, स्वर्ग-लाभ तो उसके किये विद्यक्षण माना जाता है ॥ ४२ ॥ हे मैत्रेय ! जिसका चित्त जप, होम और अर्चनादि करते हुए निरन्तर भगवान् वासुदेवमें लगा रहता है उसके लिये इन्त्रपद आदि फल तो अन्तराय (विप्र) है ॥ ४३ ॥ कहाँ तो पुनर्जन्यके चक्रमें डालनेवाली स्वर्ग-प्राप्ति और कहाँ मोक्षका सर्वोत्तम वीज 'वासुदेव' नामका जप ! ॥ ४४ ॥

इसल्यि हे मुने ! श्रीविष्णुभगवानुका अहर्निश स्मरण करनेसे सम्पूर्ण पाप श्रीण हो जानेके कारण मनुष्य फिर नरकमें नहीं जाता ॥ ४५ ॥ चित्तको प्रिय लगनेबाला ही स्वर्ग है और उसके विपरीत (अप्रिय लगनेवाला) ही नरक है । हे द्विजोत्तम ! पाप और पुण्यहाँके दुखरे नाम नरक और रवर्ग हैं ॥ ४६ ॥ जब कि एक ही वस्तु सुख और दुःख तथा ईंग्यों और कोपका कारण हो जाती है तो उसमें वस्तुतः (नियतस्वभावत्व) ही कहाँ है ? ॥ ४७ ॥ क्योंकि एक ही वस्तु कमी श्रीतिकी कारण होती है तो वही दूसरे समय दुःखदायिनी हो जाती है और वहाँ कभी क्रोधकों हेतु होती है तो कभी प्रसन्नता देनेवाली हो जाती है ॥ ४८ ॥ अतः कोई भी पदार्थ दु:खमय नहीं है और न कोई सुखमय है । ये सुख-दु:ख तो मनके ही विकार है ॥ ४९ ॥ [परमार्थत:] ज्ञान ही परब्रह्म है और [अविद्याकी उपाधिसे] वही वन्धनका कारण है । यह सम्पूर्ण विश्व ज्ञानमय ही है; ज्ञानसे भिन्न और कोई बस्त नहीं है। हे मैंनेय ! बिह्या और अविद्याको भी तुम ज्ञान ही समझो ॥ ५०-५१ ॥

हे द्विज ! इस प्रकार मैंने तुमसे समस्त भूमण्डल, सम्पूर्ण पाताल्लोक और नरकोंका वर्णन कर दिया॥ ५२॥ समुद्र, पर्वत, द्वीप, वर्ष और नदियाँ—इन सभीकी मैंने संक्षेपसे व्याख्य कर दो; अब, तुम और क्या सुनना चाहते हो ?॥ ५३॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीर्थेऽशे षष्ट्रोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

भूर्युवः आदि सात कर्ध्वलोकोंका वृत्तान्त

श्रीमैत्रेय उवाच

कथितं भूतलं ब्रह्मन्यमैतद्गिलं त्वया । भुवलीकादिकौल्लोकाञ्च्छोतुमिच्छाम्यहं मुने ॥ १ तथैव भ्रहसंस्थानं भ्रमाणानि यथा तथा । समाचक्ष्व महाभाग तन्महो परिपृच्छते ॥ २ श्रीप्यासः उनान

रविचन्द्रमसोर्यावन्त्रयूखैरवभास्यते ।
ससमुद्रमरिकैला तावती पृथिवी स्मृता ॥
यावत्रमाणा पृथिवी विस्तारपरिमण्डलात् ।
नभस्तावद्रमाणं वै व्यासमण्डलतो द्विज ॥
भूमेर्योजनलक्षे तु सौरं मैत्रेय मण्डलम् ।
लक्षादिवाकरस्यापि मण्डलं द्राद्दीनः स्थितम् ॥
पूर्णे द्रातसहस्रे तु योजनानां निद्दाकरात् ।
नक्षत्रमण्डलं कृत्व्रमुपरिष्टात्रकादाते ॥
द्वे लक्षे चोत्तरे ब्रह्मन् बुधो नक्षत्रमण्डलात् ।
तावत्रमणभागे तु बुधस्याष्युद्दानाः स्थितः ॥
अङ्गारकोऽपि चुक्रस्य तत्यमाणे व्यवस्थितः ।
लक्षद्वये तु भौमस्य स्थितो देवपुरोहितः ॥
द्वीरिबृहस्यतेश्लोध्यं द्विलक्षे समवस्थितः ।

ऋषिभ्यस्तु सहस्राणां शतादूध्वं व्यवस्थितः ।
मेढीभूतः समस्तस्य ज्योतिशक्कस्य वं भ्रुवः ॥ १०
श्रैलोक्यमेतत्कथितमुस्तेधेन महामुने ।
इज्याफलस्य भूरेषा इज्या चात्र प्रतिष्ठिता ॥ ११
भ्रुवाद्ध्वं महलाँको यत्र ते कल्पवासिनः ।
एकयोजनकोटिस्तु यत्र ते कल्पवासिनः ॥ १२
हे कोटी तु जनो लोको यत्र ते ब्रह्मणः सुताः ।
सनन्दनाद्याः प्रथिता मैत्रेयामलचेतसः ॥ १३

चतुर्गुणोत्तरे चोर्ध्वं जनलोकात्तपः स्थितम् ।

वैराजा यत्र ते देवाः स्थिता दाहविवर्जिताः ॥ १४

सप्तर्विमण्डलं तस्माल्लक्षमेकं द्विजोत्तम ॥

श्रीपैत्रेयजी बोले—बहान् । आपने मुझसे समस्त भूमण्डलका वर्णन किया। है मुने ! अब मैं भुक्लोंक आदि समस्त लोकोंके विषयमें सुनना चाहता हूँ ॥ १ ॥ है महाभाग । मुझ जिज्ञासुसे आप प्रहगणको स्थित तथा उनके परिमाण आदिका यथायत् वर्णन कीजिये ॥ २ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—जितनी दूरतक सूर्य और वन्त्रमाकी किरणेंका प्रकाश जाता है; समुद्र, नदी और पर्वतादिसे युक्त उतना प्रदेश पृथिवी कहलाता है।। ३ ॥ है द्विज! जितना पृथिवीका विस्तार और परिमण्डल (भेरा) है उतना ही विस्तार और परिमण्डल भुवलोंकका भी है॥ ४ ॥ है मैत्रेय! पृथिवीसे एक लाख योजन दूर सूर्यमण्डल है और सूर्यमण्डलसे भी एक लक्ष योजनके अक्तरपर चन्द्रमण्डल है॥ ५ ॥ चन्द्रमासे पूरे सौ हजार (एक लाख) योजन ऊपर सम्पूर्ण नक्षत्रमण्डल प्रकाशित हो रहा है॥ ६॥

हे ब्रह्मन् ! नक्षत्रमञ्डलसे दो लाख योजन ऊपर बुध और बुधसे भी दो लक्ष योजन ऊपर शुक्र स्थित हैं ॥ ७ ॥ शुक्रसे इतनी ही दूरीपर मंगल हैं और मंगलसे भी दो लाख योजन ऊपर बृहस्पतिजी हैं ॥ ८ ॥ हे द्विजोत्तम ! बृहस्पतिजीसे दो लाख योजन ऊपर शनि हैं और शनिसे एक लक्ष योजनके अन्तरपर सप्तर्षिमण्डल है ॥ ९ ॥ तथा सप्तर्षियोसे भी सौ हजार योजन ऊपर समस्त ज्योतिश्वक्रकी नामिलप सुवमण्डल स्थित है ॥ १० ॥ है महामुने ! नैने तुमसे यह जिलोकीकी ठक्षताके विषयमें वर्णन किया । यह जिलोकी यक्षफलकी भीग-भूमि है और यज्ञानुहानकी स्थिति इस भारतवर्षमें ही है ॥ ११ ॥

धुवसे एक करोड़ योजन ऊपर महलोंक है, जहाँ कल्पान्त-पर्यन्त रहनेवाले भृषु आदि सिद्धगण रहते हैं॥ १२॥ हे मैत्रेय । उससे भी दो करोड़ योजन ऊपर जनलोक है जिसमें ब्रह्माबीके प्रख्यात पुत्र निर्मलचित्त सनकादि रहते हैं॥ १३॥ जनलोकसे चौगुना अर्थात् आठ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है; बहाँ वैराज नामक देवगणोका निवास है जिनका कभी दाह नहीं होता॥ १४॥

वडुगुणेन तपोलोकात्मत्मलोको विराजते । अपुनमरिका यत्र ब्रह्मरहोको हि स स्पृतः ॥ १५ पादगम्बन्तु बत्किञ्चिद्धस्त्वस्ति पृथिवीमवम् । स भूलोंकः समाख्यातो विस्तरोऽस्य पयोदितः ॥ १६ भूमिसुर्यान्तरं यस सिद्धादिपुनिसेवितम्। भुवलोंकस्तु सोऽप्युक्तो द्वितीयो मुनिसत्तम ॥ १७ शुवसुर्यान्तरं यद्य नियुतानि चतुर्दश । खलाँकः सोऽपि गदितो लोकसंस्थानचिन्तकैः ॥ १८ त्रैलोक्यमेतत्कृतकं मैत्रेय परिपठधते । जनस्तपस्तथा सस्यमिति चाकृतकं त्रयम् ॥ १९ कृतकाकृतयोर्मध्ये महलींक इति स्मृतः। शुन्यो भवति कल्पान्ते योऽत्यन्तं न विनश्यति ॥ २० एते सप्त मया लोका मैत्रेय कथितास्तव। पातालानि च समैव ब्रह्माण्डस्यैव विस्तरः ॥ २१ एतदण्डकटाहेन तिर्यक् चोध्वंमधस्तथा। कपित्यस्य यथा बीजं सर्वतो वै समावृतम् ॥ २२ दशोत्तरेण पयसा मैत्रेयाण्डं च तद्वतम्। सर्वोऽम्युपरिधानोऽसौ बह्विना वेष्टितो बहिः ॥ २३ विद्विश्च वायना वायमैत्रिय नभसा वृतः। भूतादिना नभः सोऽपि महता परिवेष्टितः । दशोत्तराण्यशेषाणि मैत्रेयैतानि सप्त वै ॥ २४ महान्तं च समावृत्य प्रधानं समयस्थितम् । अनन्तस्य न तस्यान्तः संख्यानं चापि विद्यते ॥ २५ तुवनन्तमसंख्यातप्रमाणं चापि वै यतः । हेतुभूतमहोषस्य प्रकृतिः सा परा मुने ॥ २६ अण्डानां तु सहस्राणां सहस्राण्ययुतानि च । ईंदुशानां तथा तत्र कोटिकोटिशतानि च ॥ २७ दारुण्यप्रियंथा तैलं तिले तद्वत्युमानपि। प्रधानेऽवस्थितो व्यापी चेतनात्पात्पवेदनः ॥ २८ प्रधानं च पुर्मार्श्वव सर्वभूतात्मभूतया।

विष्णुशक्त्या महाबुद्धे वृती संश्रयधर्मिणौ ॥ २९

तपलोकसे छःगुना अर्थात् बारह करोड योजनके अत्तरपर सत्पलोक सुशोभित है जो ब्रह्मलोक भी कहलाता है और जिसमें फिर न मरनेवाले अमरगण निकास करते हैं॥१५॥ जो भी पार्थिक वस्तु चरणसञ्चारके योग्य है यह भुलीक ही है। उसका विस्तार मैं कह चुका ॥ १६ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! पृथिवी और सुर्वके मध्यमें जो सिद्धगण और मृनिगण-सेवित स्थान है, वही दूसरा भुवलॉक है ॥ १७ ॥ सुर्य और धुवके बीचमें जो चौदह लक्ष योजनका अन्तर है, उसीको लोकस्थितिका विचार करनेवालीन स्वलींक कहा है ॥ १८ ॥ हे मैत्रेय ! ये (भू:, भूव:, स्व:) 'कृतक' त्रैलोक्य कहलाते हैं और जन, तप तथा सल्य—ये तोनी 'अकृतक' लोक हैं ॥ १९ ॥ इन कृतक और अकृतक त्रिलोकियोंके मध्यमें महलॉक कहा जाता है, जो कल्पान्तमें केवल जनशून्य हो जाता है, अत्यन्त मष्ट नहीं होता [इसिटिये यह 'कृतकाकृत' कहस्त्रता है] ॥ २०॥

हे मैन्नेय ! इस प्रकार मैंने तुमसे ये सात लोक और सात ही पाताल कहे। इस ब्रह्माण्डका बस इतना ही विस्तार है॥ २१॥ यह जहान्य कपित्थ (कैथे) के बीजके समान कपर-नीचे सब ओर अण्डकटाहरी बिरा हुआ है ॥ २२ ॥ हे मैत्रेय ! यह अण्ड अपनेसे दसगुने जलसे आवृत है और वह जलका सम्पूर्ण आवरण अग्निसे पिरा हुआ है ॥ २३ ॥ अग्नि वायुसे और वायु आकारासे परिवेष्टित है तथा आकारा भृतेकि कारण तामस अहंकार और अहंकार महत्तत्त्वसे घिरा हुआ है। है मैत्रेय ! ये सातो उत्तरोत्तर एक-दूसरेसे दसगुने हैं ॥ २४ ॥ महत्तत्त्वको भी प्रधानने आवृत कर रखा है । वह अनन्त है; तथा उसका न कभी अन्त (नाश) होता है और न कोई संख्या ही है; क्योंकि हे मुने! वह अनल, असंख्येय, अपरिमेय और सम्पूर्ण जगत्का कारण है और वहीं परा प्रकृति है।। २५-२६ ॥ उसमें ऐसे-ऐसे हजारों, लाखों तथा सैकड़ों करोड़ ब्रह्माण्ड है ॥ २७ ॥ जिस प्रकार काष्ट्रमें अप्रि और तिलमें तैल रहता है उसी प्रकार स्वप्रकारा चेतनातमा व्यापक पुरुष प्रधानमें स्थित है।। २८॥ हे महाबुद्धे ! वे संश्रयशील (आपसमें मिले हुए) प्रधान और पुरुष भी समस्त भूतोंकी स्वरूपभूता विष्णु-शक्तिसे आवृत है।। २९॥

तयोः सैव पृथग्भावकारणं संश्रयस्य च । श्लोभकारणभूता च सर्गकाले महामते ॥ ३० यथा सक्तं जले वातो बिभर्ति कणिकाशतम्। राक्तिः सापि तथा विष्णोः प्रधानपुरुवात्मकम् ॥ ३१ यथा च पादपो मूलस्कन्धशास्त्रादिसंयुतः । आदिबीजात्प्रभवति बीजान्यन्यानि वै ततः ॥ ३२ प्रभवन्ति ततस्तेभ्यः सम्भवन्यपरे द्रमाः। तेऽपि तल्लक्षणद्रव्यकारणानुगता मुने ॥ ३३ एवमच्याकृतात्पूर्वं जायन्ते महदादयः । विशेषान्तास्ततसोभ्यः सम्भवन्यसुरादयः। तेभ्यश्च पुत्रास्तेषां च पुत्राणामपरे सुताः ॥ ३४ बीजाहश्चप्ररोहेण यथा नापचयस्तरोः। भूतानां भूतसर्गेण नैवास्यपचयस्तथा ॥ ३५ सन्निधानाद्यथाकाञ्चलालाद्याः कारणं तरोः । तथैवापरिणामेन विश्वस्य भगवान्हरिः ॥ ३६ व्रीहिबीजे यथा मूलं नालं पत्राङ्कुरौ तथा । काण्डं कोषस्तु पुष्पं च श्रीरं तहुश तण्डुलाः ॥ ३७ तुषाः कणाश्च सन्तो वै यान्त्वाविर्भावमात्मनः । प्ररोहहेतुसामग्रीमासाद्य मुनिसत्तम ॥ ३८ तथा कर्मस्वनेकेषु देवाद्याः समवस्थिताः । विष्णुशक्ति समासाद्य प्ररोहमुपयान्ति वै ॥ ३९ स च विष्णुः परं ब्रह्म यतः सर्वमिदं जगत् । जगञ्च यो यत्र चेदं यस्मिश्च लयमेष्यति ॥ ४० तद्भुद्धाः तत्परं धामः सदसत्परमं पदम्।

कर्ता क्रियाणां सच इञ्चते कृत्ः

यत्साधनमध्यशेष

सुगादि

सर्वमभेदेन यतश्चितश्चराचरम् ॥ ४१ स एव मूलप्रकृतिर्व्यक्तरूपी जगद्य सः। तस्मिन्नेव लयं सर्वं याति तत्र च तिष्ठति ॥ ४२ स एव तत्कर्मफले च तस्य। हरेर्न किञ्चद्व्यतिरिक्तमस्ति ॥ ४३

हे ! महामते ! यह विष्णु-शक्ति ही [प्ररूपके समय]। उनके पार्थक्य और [स्थितिके समय] उनके सम्मिलनकी हेत् है तथा सर्गारम्थके समय वही उनके क्षोभकी कारण है ॥ ३० ॥ जिस प्रकार जलके संसर्गसे वायु सैकड़ों जल-कर्णोंको धारण करता है उसी प्रकार भगवान विष्णकी शक्ति भी प्रधान-पुरुषमय जगतुको धारण करती है ॥ ३१ ॥ हे मुने ! जिस प्रकार आदि-बीजसे ही मुल, स्कन्ध और शाखा आदिके सहित वक्ष उत्पन्न होता है और तदमन्तर उससे और भी बीच उत्पन्न होते हैं, तथा उन बीजोंसे अन्यान्य वृक्ष उत्पन्न होते हैं और वे भी उन्हीं लक्षण, द्रव्य और कारणींसे युक्त होते हैं, उसी प्रकार पहले अव्याकृत (प्रधान) से महत्तत्त्वसे लेकर पञ्चभूतपर्यन्त [सम्पूर्ण विकार] उत्पन्न होते हैं तथा उनसे देव, असूर आदिका जन्म होता है और फिर उनके पुत्र तथा उन पुत्रेकि अन्य पत्र होते हैं ॥ ३२---३४ ॥ अपने बीजसे अन्य वृक्षके उत्पन्न होनेसे जिस प्रकार पूर्ववृक्षकी कोई क्षति नहीं होती उसी प्रकार अन्य प्राणियोंके उत्पन्न होनेसे उनके जन्मदाना प्राणियोंका हास नहीं होता ॥ ३५ ॥ जिस प्रकार आकारा और काल आदि सर्विधमात्रसे हों वक्षके कारण होते हैं उसी प्रकार भगवान ओहरि भी बिना परिणामके ही विश्वके कारण हैं॥ ३६॥ है मुनिसतम ! जिस प्रकार धानके बीजमें मूल, नाल, पत्ते, अहूर, तना, कोष, पुष्प, श्लोर, तण्डल, तुष और कण सभी रहते हैं; तथा अङ्कुरोत्पत्तिकी हेतुभूत [भूमि एवं जल आदि। सामग्रीके प्राप्त होनेपर वे प्रकट हो जाते हैं, उसी प्रकार अपने अनेक पूर्वकर्गीमें रिधत देवता आदि थिप्णु-इक्तिका आश्रय पानेपर आविर्भृत हो जाते है ॥ ३७— ३९ ॥ जिससे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जो स्वयं जगत्रूपसे स्थित है, जिसमें यह स्थित है तथा जिसमें यह स्त्रीन हो जायगा वह परब्रह्म हो विष्णुभगवान हैं॥४०॥ वह ब्रह्म ही उन (विष्णु) का परमधाम (परस्वरूप) है, वह पद सन् और असन् दोनोंसे विलक्षण है तथा उससे ऑभन्न हुआ ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् उससे उत्पन्न हुआ है ॥ ४१ ॥ वहीं अञ्यक्त मुलप्रकृति है, वही व्यक्तस्वरूप संसार है, उसीमें यह सन्पूर्ण जगत् लीन होता है तथा उसीके आश्रय स्थित है ॥ ४२ ॥ यजादि क्रियाओंका कर्ता वहीं है, यज्ञरूपसे उसीका यजन किया जाता है, और उन यज्ञादिका फलस्वरूप भी बही है तथा यज्ञके साधनरूप जो सवा आदि है वे सब भी हरिसे अहिरिक्त और कुछ महीं है ॥ ४३ ॥

सूर्य, नक्षत्र एवं राशियोंकी व्यवस्था तथा कालचक, लोकपाल और गङ्गाविभावका वर्णन

श्रीपराञर उवाच

व्यास्यातमेतद्वह्याण्डसंस्थानं तव सुव्रत । ततः प्रमाणसंस्थाने सूर्वादीनां शृणुषु मे ॥

योजनानां सहस्राणि भास्करस्य रथो नव ।

ईषादण्डस्तथैवास्य द्विगुणो मुनिसत्तम ॥

सार्धकोटिस्तथा सप्त नियुतान्यधिकानि वै ।

योजनानां तु तस्याक्षस्तत्र चक्कं प्रतिष्ठितम् ॥

त्रिनाभिमति पञ्चारे वण्नेमिन्यक्षयात्मके ।

संवत्सरमये कृत्स्रं कालचकं प्रतिष्ठितम् ॥ हवाश्च सप्तच्छन्दांसि तेषां नामानि मे शृणु ।

गायत्री च बृहत्युष्णिग्जगती त्रिष्टुचेव च ।

अनुष्टपङ्किरित्युक्ता छन्दांसि हरयो रवे:॥ चत्वारिंशत्सहस्राणि हितीयोऽश्लो विवस्वतः ।

पञ्चान्यानि तु सार्धानि खन्दनस्य महामते ॥

अक्षप्रमाणमुभयोः प्रमाणं तद्युगार्द्धयोः । ह्रस्वोऽक्षस्तद्यगार्द्धेन ध्रवाधारो स्थस्य वै।

द्वितीयेऽक्षे तु तचर्क संस्थितं मानसाचले ॥

मानसोत्तरशैलस्य पूर्वतो वासवी पुरी। दक्षिणे तु यमस्यान्या प्रतीच्यां वरुणस्य च ।

उत्तरेण च सोमस्य तास्रो नामानि मे शृणु ॥

वस्वौकसारा शक्रस्य याग्या संयमनी तथा । पुरी सुखा जलेशस्य सोमस्य च विभावरी ॥

काष्ट्रां गतो दक्षिणतः क्षिप्तेषुरिव सर्पति ।

पैत्रेय भगवान्भानुर्ज्योतिषां चक्रसंयुतः ॥ १०

अहोरात्रव्यवस्थानकारणं भगवात्रवि: । देवयानः परः पन्था योगिनां क्षेत्रसङ्ख्ये ॥ ११

दिवसस्य रविर्मध्ये सर्वकालं व्यवस्थितः ।

सर्वद्वीपेषु मैत्रेय निशार्द्धस्य च सम्मुखः ॥ १२

श्रीपराञ्चारजी खोले—हे सुवत ! मैंने तुमसे यह ब्रह्माण्डकी स्थिति बद्धी, अब सूर्य आदि प्रहोकी स्थिति

और उनके परिमाण सुनो ॥ १ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! सुर्यदेवके

रथका विस्तार नौ हजार योजन है तथा इससे दना उसका ईवा-दण्ड (जुआ और रथके बीचका भाग) है॥२॥

उसका धुरा डेढ़ करोड़ सात लाख योजन लम्बा है जिसमें उसका पहिया लगा हुआ है ॥ ३ ॥ उस पूर्वाह, मध्याह

और पराहरूप तीन नाभि, परिवसारादि पाँच और और षड्-ऋतुरूप छः नेमिवाले अक्षयसारूप संवत्सरात्मक

चक्रमें सम्पूर्ण कालचक्र स्थित है॥४॥ सात छन्द ही उसके थोड़े हैं, उनके नाम सुनो—गायत्री, बृहवी,

उन्मिक्, जगती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप् और पंक्ति---ये छन्द ही सुर्यके सात घोड़े कहे गये हैं ॥ ५ ॥ हे महामते ! भगवान् सूर्यके रथका दूसरा धुरा साढ़े पैतालीस सहस्र योजन

लम्बा है ॥ ६ ॥ दोनों भुरोके परिमाणके तुल्य ही उसके युगादों (जुओं) का परिमाण है, इनमेंसे छोटा धुरा उस रथके एक युगार्द्ध (जूए) के सहित ध्रुवके आधारपर

स्थित है और दूसरे धुरेका चक्र मानसोत्तरपर्वतपर स्थित 養用も日

इस मानसोत्तरपर्वतके पूर्वमे इन्द्रकी, दक्षिणमें यमकी, पश्चिममें वरुणको और उत्तरमें चन्द्रमावी पुरी है; उन पुरियोके नाम सुनो ॥ ८ ॥ इन्द्रकी पुरी वरबीकसारा है, यमको संयमनो है, वरुणको सुखा है तथा चन्द्रमाकी विभावरी है॥ ९॥ है मैत्रेय ! ज्योतिश्रक्तके सहित भगवान् भान् दक्षिण-दिशामें प्रवेशकर छोड़े हुए बाणके समान तील वेगसे चलते हैं ॥ १० ॥

भगवान सुर्यदेव दिन और राजिकी व्यवस्थाके कारण है और एगादि क्रेडोंके क्षीण हो जानेपर वे ही क्रममुक्तिभागी योगिजनोंके देक्यान नामक श्रेष्ट मार्ग हैं ॥ ११ ॥ हे मैत्रेय ! सभी द्वीपोमें सर्वदा मध्याद्व तथा मध्यराधिके समय सुर्यदेव मध्य-आकाशमें सामनेकी और रहते हैं*॥१२॥

^{*} अधांत् जिस द्वीप या सण्डमें सूर्यदेव मध्याहुके समय सम्मुख पड़ते हैं उसकी समान रेखापर दूसरी और स्थित द्वीपान्तरमे के उसी प्रकार मध्यराष्ट्रिके समय रहते हैं।

उदयास्तमने चैद सर्वकालं तु सम्मुखे। विदिशासु त्वशेषासु तथा ब्रह्मन् दिशासु च ॥ १३

यैर्यत्र दुश्यते भारवान्स तेषामुदयः स्मृतः । तिरोभावं च यत्रैति तत्रैवास्तमनं रवे: ॥ १४

नैवास्तमनमर्कस्य नोदयः सर्वदा सतः।

उदयास्तमनाख्यं हि दर्शनादर्शनं रवेः ॥ १५

शक्रादीनां पुरे तिष्ठन् स्पृशत्येष पुरत्रयम् । विकोणों हो विकोणस्थलीन कोणान्हे पूरे तथा ॥ १६

उदितो वर्द्धमानाभिरामध्याह्यात्तपन्नविः ।

ततः परं हसन्तीभिगोंभिरस्तं नियच्छति ॥ १७

उदयास्तमनाभ्यां च स्मृते पूर्वापरे दिशौ । यावत्पुरस्तात्तपति तावत्पृष्ठे च पार्श्वयोः ॥ १८

ऋतेऽमरगिरेमेरोरुपरि ब्रह्मणः सभाम्। ये ये परीचयोऽर्कस्य प्रयान्ति ब्रह्मणः सभाम् ।

ते ते निरस्तास्तद्भासा प्रतीपपुपयान्ति वै ॥ १९ तस्माद्दिश्युत्तरस्यां वै दिवारात्रिः सदैव हि । सर्वेषां द्वीपवर्षाणां मेरुरुत्तरतो यतः॥२०

प्रभा विवस्वतो रात्रावस्तं गच्छति भास्करे । विश्रत्यप्रिमतो रात्रौ वहिर्दूरात्प्रकाशते ॥ २१

वहे: प्रभा तथा भानुदिनेषाविश्वति हिज। अतीव वहिसंयोगादतः सुर्यः प्रकाशते ॥ २२

तेजसी भारकराञ्चेये प्रकाशोष्णस्वरूपिणी । परस्परानुप्रवेशादाप्यायेते दिवानिशम् ॥ २३

दक्षिणोत्तरभूष्यर्दे समुत्तिष्ठति भास्करे । अहोरात्रं विदात्यम्भस्तमः प्राकाइयङ्गीलवत् ॥ २४

आताम्रा हि भवन्यापो दिवा नक्तप्रवेशनात्। दिनं विश्वति चैवाम्भो भास्करेऽस्तमुपेयुचि । तस्मान्त्रह्मा भवन्यापो नक्तमद्वः प्रवेशनात् ॥ २५

इसी प्रकार उदय और असा भी सदा एक-दूसरेके सम्पुख ही होते हैं। हे बहान्! समस्त दिशा और बिदिशाओंमें जहाँके लोग [सन्निका अन्त होनेपर] सूर्यको

जिस स्थानपर देखते हैं उनके लिये वहाँ उसका उदय होता है और जहाँ दिनके अन्तमें सुर्यका तिरोभाव होता है वहीं उसका अस्त कहा जाता है।। १३-१४॥ सर्वदा एक

रूपसे स्थित सुर्मदेवका, वास्तवमें न उदय होता है और न अस्तः बस, उनका देखना और न देखना ही उनके उदय और असा है ॥ १५ ॥ मध्याहकालमें इन्हादिमेंसे

किसोको पुरीपर प्रकाशित होते हुए सुर्यदेव [पार्शवर्ती दो पुरियंकि सहित] तीन पुरियों और दो कोणों (बिदिशाओं) को प्रकाशित करते हैं, इसी प्रकार अग्नि आदि कोणोमिसे

किसी एक कोणमें प्रकाशित होते हुए वे [पार्श्ववर्ती दो कोणीके सहित] तीन कोण और दो पुरियोंको प्रकाशित करते हैं॥ १६॥ सूर्यदेव उदय होनेके अनन्तर

मध्याइपर्यन्त अपनी बढ़ती हुई किरणोसे तपते हैं और फिर क्षीण होती हुई किरणींसे अस्त हो जाते हैं 🍍 ॥ १७ ॥ सर्वके उदय और अस्तसे ही पूर्व तथा पश्चिम दिशाओंकी व्यवस्था हुई है । वास्तवमें तो, वे जिस प्रकार

पूर्वमें प्रकाश करते हैं उसी प्रकार पश्चिम तथा पार्श्ववर्तिनी [उत्तर और दक्षिण] दिशाओंमें भी करते हैं॥१८॥ सुर्यदेव देवपर्वत सुमेरके ऊपर स्थित ब्रह्माजीकी सभाके अतिरिक्त और सभी स्थानोंको प्रकाशित करते हैं: उनकी जो किरणें ब्रह्माओको सभामें जाती है वे उसके तेजसे निस्त होकर उल्टी लौट आती हैं॥ १९ ॥ सुमेरपर्वत समस्त

द्वीप और वर्षेकि उत्तरमें है इसिल्ये उत्तरदिशामें (मेरुपर्वतपर) सदा [एक ओर] दिन और [दूसरी ओर] रात रहते हैं ॥ २० ॥ रात्रिके समय सुर्थके अस्त हो जानेपर उसका तेज अग्निमें प्रविष्ट हो जाता है: इसलिये उस समय ऑप्र दुरहीसे प्रकाशित होने रूपता है ॥ २१ ॥ इसी

प्रकार, हे द्विज ! दिनके समय अधिका तेज सुर्यमें प्रविष्ट हो।

जाता है; अतः अधिके संयोगसे ही सूर्य अलन्त प्रखरतासे प्रकाशित होता है॥ २२॥ इस प्रकार सूर्य और अधिके

प्रकाश तथा उष्णतामय तेज परस्पर मिलकर दिन-रातमें वृद्धिको प्राप्त होते रहते हैं ॥ २३ ॥ मेरुके दक्षिणी और उत्तरी मूम्यईमें सूर्यके प्रकाशित होते समय अन्धकारमयी रात्रि और प्रकाशमय दिन

क्रमशः जलमें प्रवेश कर जाते हैं ॥ २४ ॥ दिनके समय रात्रिके प्रवेश करनेसे ही जल कुछ ताप्रवर्ण दिखायी देता

[🍍] किरणोंकी युद्धि, हास एवं तीवता-मन्दता आदि सूर्वके समीप और दूर होनेसे मनुष्यके अनुभवके अनुसार कही गयी है।

3F ℃] एवं प्ष्करमध्येन यदा याति दिवाकरः। त्रिंशद्भागन्तु मेदिन्यास्तदा मौहूर्तिकी गतिः ॥ २६ कुलालचक्रपर्यन्तो भ्रमन्नेष दिवाकरः। करोत्यहस्तथा रात्रि विमुद्धन्मेदिनी हिज ॥ २७ अयनस्योत्तरस्यादौ मकरं याति भारकरः । ततः कुष्पं च मीनं च राहो राहयन्तरं द्विज ॥ २८ त्रिश्वेतेष्ट्रथ भुक्तेषु ततो वैषुवर्ती गतिम्। प्रयाति सर्विता कुर्वन्नहोरात्रं ततः समम् ॥ २९ ततो रात्रिः क्षयं याति वर्द्धतेऽनुदिनं दिनम् ॥ ३० ततश्च मिधुनस्थान्ते परां काष्ट्रामुपागतः। राहिं। कर्कटकं प्राप्य कुरुते दक्षिणायनम् ॥ ३१ कुलालचक्रपर्यन्तो यशा शीघ्रं प्रवर्तते। दक्षिणप्रक्रमे सूर्यस्तथा शीघ्रं प्रवर्तते ॥ ३२ अतिवेगितया कालं वायुवेगबलाश्चरन्। तस्मात्प्रकृष्टां भूमिं तु कालेनाल्पेन गच्छति ॥ ३३ सूर्यो द्वादशभिः शैध्यान्युहर्तैर्दक्षिणायने । त्रयोदशार्द्धमुक्षाणामहा तु चरति द्विज। मुहर्तस्तावदृक्षाणि नक्तमष्टादशेश्चरन् ॥ ३४ कुलालचक्रमध्यस्थो यथा मन्दं प्रसर्पति । तथोदगयने सूर्यः सर्पते मन्दविक्रमः॥३५ तस्माद्दीर्घेण कालेन भूमिमल्यां तु गच्छति । अष्टादशमुहर्तं यदुत्तरायणपश्चिमम् ॥ ३६ अहर्भवति तद्यापि चरते मन्दविक्रमः ॥ ३७ त्रयोदशार्द्धमहा तु ऋक्षाणां चरते रविः। मुहुर्तेस्ताबदुक्षाणि रात्रौ द्वादशभिश्चरन् ॥ ३८

अतो मन्दतरं नाभ्यां चक्कं भ्रमति वै यथा ।

पृत्यिण्ड इव मध्यस्थो ध्रुवो भ्रमति वै तथा ॥ ३९

है, किन्तु सूर्य-अस्त हो जानेपर उसमें दिनका प्रवेश हो। जाता है; इसलिये दिनके प्रवेशके कारण ही रात्रिके समय वह शुह्नवर्ण हो जाता है ॥ २५ ॥ इस प्रकार जब सुर्य पुष्करहीपके मध्यमें पहेंचकर पृथ्वीका तीसवाँ भाग पार कर लेता है तो उसकी वह गति एक मुहुर्तकी होती है। [अर्थात् उतने भागके अतिक्रमण करनेमें उसे जितना समय लगता है वही मुहर्त कहलाता 🖁] ॥ २६ ॥ है द्विज ! कुलाल-चक्र (कुन्हारके चाक)। के सिरेपर घूमते हुए जीवके समान भ्रमण करता हुआ यह सूर्य पृथिवीके तीसी भागीका अतिक्रमण करनेपर एक दिन-सन्नि करता है॥२७॥ हे द्वित्र ! उत्तरायणके आरम्भमें सूर्य सबसे पहले मफरसूद्दिमें जाता है, उसके पश्चात् वह कुम्भ और मीन राज्ञियोंमें एक राज्ञिसे दूसरी गर्शिमें जाता है ॥ २८ ॥ इन तीनों ग्रिशियोंको भीग चुकनेपर सुर्थ रात्रि और दिनको समान करता हुआ वैषुवती गतिका अवलम्बन करता है, [अर्थात् वह भूमध्य-रेखाके बीचमें ही चलता है] ॥ २९ ॥ उसके अनन्तर नित्यप्रति राप्ति क्षीय होने लगती है और दिन बढ़ने लगता है। फिर [मेथ तथा वय गरि।का अतिक्रमण कर] मिथ्नराहि।से निकलकर उत्तरायणकी अन्तिम सीमापर उपस्थित हो। वह कर्कराशिमें पहुँचकर दक्षिणायनका आरम्भ करता है ॥ ३०-३१ ॥ जिस प्रकार कुलाल-चक्रके सिरेपर स्थित जीव अति शीम्रतासे पूपता है उसी प्रकार सूर्य भी दक्षिणायनको पार करनेमें अति शीधतासे चलता है ॥ ३२ ॥ अतः यह अति शीवतापूर्वक वायुवेगसे चलते हुए अपने उत्कृष्ट मार्गको थोड़े समयमें ही पार कर लेता हैं॥ ३३ ॥ हे द्विज ! दक्षिणायनमें दिनके समय शीघतापूर्वक चलनेसे उस समयके साहे तेरह नक्षत्रीको सुर्थ बारह मृहताँमि पार कर लेता है, किन्तु राजिके समय (मन्द्रवामी होनेसे) उतने ही नक्षत्रोंको अठलह पृहर्तीमें पार करता है ॥ ३४ ॥ कुलाल-चक्रके मध्यमें स्थित जीव जिस प्रकार धीर-धीर चलता है उसी प्रकार उत्तरायणके समय सुर्थ मन्दगतिसे चलता है ॥ ३५ ॥ इसलिये उस समय वह घोडी-सी भूमि भी अति दीर्घकालमें पार करता है, अतः उत्तरायणका अन्तिम दिन अठारह मुहर्तका होता है, उस दिन भी सुर्य अति मन्दगतिसे चलता है और ज्योतिक्षकार्थके साढ़े तेरह नक्षत्रोंको एक दिनमें पार करता है किन्तु रात्रिके समय वह उतने ही (साढ़े तेरह) नक्षत्रोको बारह मुहूर्तीमें हो पार कर लेखा है ॥ ३६---३८ ॥ अतः जिस प्रकार नाभिदेशमें चक्रके मन्द-मन्द घमनेसे बहाँका मुत्-पिण्ड भी मन्दर्गतिसे धूमता है उसी प्रकार

कुलालचक्रनाभिस्तु यथा तत्रैव वर्तते। ध्रवस्तथा हि मैत्रेय तत्रैव परिवर्तते ॥ ४० उभयोः काष्ट्रयोर्मध्ये भ्रमतो मण्डलानि त् । दिवा नक्तं च सूर्यस्य मन्दा शीघ्रा च वै गतिः ॥ ४१ मन्दाद्धि यस्पित्रयने शीघा नक्तं तदा गतिः । शीब्रा निशि यदा चास्य तदा मन्दा दिवा गतिः ॥ ४२ एकप्रमाणमेवैष मार्ग याति दिवाकरः। अहोरात्रेण यो भुद्धे समस्ता राज्ञयो हिज ॥ ४३ षडेव राशीन् यो भुद्धे रात्रावन्यांश्च षडदिवा ॥ ४४ राशिप्रमाणजनिता दीर्घह्नस्वात्मता दिने । तथा निशायां राशीनां प्रमाणैलंघुदीर्घता ॥ ४५ दिनादेदीर्घद्वस्वत्वं तद्धोगेनैव जायते। उत्तरे प्रक्रमे शीघ्रा निश्चि मन्दा गतिर्दिवा ॥ ४६ दक्षिणे त्वयने चैव विपरीता विवस्ततः ॥ ४७ उषा रात्रिः समास्याताव्यष्टिश्चाप्युच्यते दिनम् । प्रोच्यते च तथा सन्ध्या उदाव्युष्ट्रशोर्यदन्तरम् ॥ ४८ सन्ध्याकाले च सम्प्राप्ते रीद्रे परमदारूपे । मन्देहा सक्षसा घोराः सुर्यमिच्छन्ति सादितुम् ॥ ४९ प्रजापतिकृतः शापस्तेषां मैत्रेय रक्षसाम् । अक्षयत्वं शरीराणां मरणं च दिने दिने ॥ ५० ततः सूर्यस्य तैर्युद्धं भवत्यत्यन्तदारुणम् । ततो द्विजोत्तमास्तोयं सङ्क्षिपन्ति महामुने ॥ ५१ ॐकारब्रह्मसंयुक्तं गायत्र्या चाभिमन्तितम् । तेन दहान्ति ते पापा व्रजीभूतेन वारिणा ॥ ५२ अप्रिहोत्रे हयते या समन्ता प्रथमाहतिः । सूर्यो ज्योतिः सहस्रोशुस्तया दीव्यति भास्करः ॥ ५३ ओङ्कारो भगवान्त्रिकृत्तिधामा वचसां पतिः । तदुबारणतस्ते तु विनाशं यान्ति राक्षसाः ॥ ५४ वैष्णवोऽशः परः सूर्यो योऽन्तर्ज्योतिरसम्प्रवम् । अभिधायक ॐकारसास्य तहोरकः परः॥ ५५

ज्योतिश्चक्रके मध्यमें स्थित धुव अति मन्द गतिसे घूमता है ॥ ३९ ॥ हे मैंत्रेय ! जिस फ्कार कुलाल-चक्रकी नामि अपने स्थानपर ही घूमती रहती है, उसी प्रकार धुव भी अपने स्थानपर ही घूमता रहता है ॥ ४० ॥

इस प्रकार ततर तथा दक्षिण सीमाओके मध्यमें मण्डलाकार घूमते रहनेसे सूर्यको गति दिन अथवा राजिक समय मन्द अथवा शीव्र हो जाती है ॥ ४१ ॥ जिस अयनमें सूर्वको गति दिनके समय मन्द होती है उसमें रात्रिके समय शीव होती है तथा जिस समय राजि-कालमें शीव होती है उस समय दिनमें मन्द हो जाती है।। ४२ ॥ हे दिज । सुर्यको सदा एक बराबर मार्ग ही पार करना पड़ता है; एक दिन-रात्रिमे यह समस्त राशियोका भीग कर रेस्ता है ॥ ४३ ॥ सुर्य छः राह्मियांको रात्रिके समय भोगता है और छःको दिनके समय । राशियोंके परिमाणानुसार ही दिनका बदना-घटना होता है तथा सबिकी लघता-दीर्घता भी सशियोंके परिमाणसे ही होती है ॥ ४४-४५ ॥ राज्ञियोंके भोगानुसार ही दिन अथवा राजिको लघुता अथवा दोर्घता होती है। उतरायणमें सुर्यकी गति सुविकालमें सीव होती है तथा दिनमें मन्द । दक्षिणायनमें उसकी गति इसके विपरीत होती है।। ४६-४७॥

रात्रि उषा कहरूति है तथा दिन व्यृष्टि (प्रभात) कहा जाता है; इन उपा तथा व्यष्टिके बीचके समयको सक्या कहते हैं * ॥ ४८ ॥ इस अति दारुण और भयानक सस्या-कालके उपस्थित होनेपर मन्देहा नामक भयंकर राक्षसगण सुर्वको स्ताना चाइते हैं ॥ ४९ ॥ हे मैद्रेय ! उन राक्षसीको प्रजापतिका यह शाप है कि उनका शरीर अक्षय रहकर भी मरण नित्यप्रति हो ॥ ५० ॥ अतः सन्ध्या-कारूमें उनका सुर्वसे अति भीषण युद्ध होता है: हे महामुने ! उस समय द्विजोतमगण जो बह्मस्वरूप ॐकार तथा गायवीसे अभिमन्तित जल छोडते हैं उस क्षप्रसम्प जलसे वे दष्ट राक्षमां दग्ध हो जाते हैं ॥ ५१-५२ ॥ अधिहोत्रमें जो 'सूयों ज्योतिः' इत्यादि मन्तरे प्रथम आहति दी जाती है उससे सहस्राञ्च दिननाथ देदीप्यमान हो जाते हैं ॥ ५३ ॥ ॐज्बर विश्व, तैजस और प्राज्ञरूप तीन धामोंसे युक्त भगवान् विष्णु है तथा सम्पूर्ण वाणियों (वेदों) का अधिपति हैं, उसके उचारणभात्रसे ही वे राक्षसमण नष्ट हो जाते हैं ॥ ५४ ॥ सूर्य विष्णुधगवानुका अति श्रेष्ठ अंदा और विकासहित अन्त-ज्योंति:स्वरूप है। ॐकार उसका जाचक है और वह उसे उन राक्षसोके वधमें अत्यन्त प्रेरित करनेवाला है ॥ ५५ ॥

^{&#}x27;व्यृष्टि' और 'तवा' दिन और राष्ट्रिक वैदिक नाम है; बचा--'ग्रविर्धा तवा अहल्बृष्टि: ।'

तेन सम्प्रेरितं ज्योतिरोङ्कारेणाश्च दीप्तिमत् । दहत्यशेषरक्षांसि मन्देहास्यान्यघानि वै ॥ ५६ तस्मात्रोल्लङ्कनं कार्यं सन्ध्योपासनकर्मणः । स हन्ति सूर्यं सन्ध्याया नोपास्ति कुरुते तु यः ॥ ५७ ततः प्रयाति भगवान्त्राह्यणैरभिरक्षितः। बालिक्तस्यादिभिश्चेव जगतः पालनोद्यतः ॥ ५८ काष्ट्रा निमेषा दश पञ्च चैव त्रिंश्च काष्ट्रा गणयेत्कलां च। त्रिंशत्कलश्चेव भवेन्पूहर्त-स्तैस्त्रिशता रात्र्यहुनी समेते॥ ५९ हासवृद्धी त्वहर्भागैर्दिवसानां यथाक्रमम् । सन्ध्या मुहूर्तमात्रा वै हासवृद्ध्योः समा स्मृता ॥ ६० रेखाप्रभृत्यधादित्ये त्रिमुहर्तगते रवौ । प्रातः स्मृतस्ततः कालो भागश्चाहः स पञ्चमः ॥ ६१ तस्मात्मातस्तनात्कालात्त्रिमृहर्तस्त् सङ्गवः । मध्याह्नस्त्रिमुहुर्तस्तु तस्मात्कालानु सङ्गवात् ॥ ६२ तस्मान्याध्याद्विकात्कालाद्यराह्न इति स्मृतः । त्रय एव पुहर्तास्तु कालभागः स्पृतो बुधैः ॥ ६३ अपराह्ने व्यतीते तु कालः सावाह्न एव च । दशपञ्चमुहूर्ता वै मुहूर्तास्त्रय एव च ॥ ६४ दशपञ्चमुहूर्त वै अहवैंषुवतं स्मृतम् ॥ ६५ वर्द्धते हसते वैवाप्ययने दक्षिणोत्तरे। अहस्तु यसते रात्रिं रात्रिर्यसति वासरम् ॥ ६६ शरद्वसन्तयोर्पध्ये विषुवं तु विभाव्यते । तुलामेषगते भानी समरात्रिदिनं तु तत्।। ६७ कर्कटावस्थिते भानौ दक्षिणायनमुच्यते । उत्तरायणमप्युक्तं मकरस्थे दिवाकरे ॥ ६८ त्रिशन्पहर्तं कथितमहोरात्रं त् यन्यया । तानि पञ्चदश ब्रह्मन् पक्ष इत्यभिधीयते ॥ ६९ मासः पक्षद्वयेनोक्तो ही मासी वार्कजावृतुः । ऋतुत्रयं चाप्ययनं द्वेऽयने वर्षसंज्ञिते ॥ ७०

उस ॐकारकी प्रेरणासे अति प्रशीप होकर वह ज्योति मन्देश नामक सम्पूर्ण पापी सक्षसोंको दण्ध कर देती है ॥ ५६ ॥ इसिल्पे सम्योपासनकर्मका उल्लंबन कभी न करना चाहिये । जो पुरुष सन्ध्योपासन नहीं करता वर भगवान् सूर्यका घात करता है ॥ ५७ ॥ तदनत्तर [उन स्थासींका वध करनेक प्रशात्] भगवान् सूर्य संसारके पालनमें प्रवृत्त हो बाल्पिक्षल्यादि ब्राह्मणींसे सुरक्षित होकर गमन करते हैं ॥ ५८ ॥

पन्द्रह निमेक्को एक काष्ट्रा होती है और तीस काष्ट्राको एक बल्स गिनी जाती है। तीस कलाओंका एक मुहुर्त होता है और तीस मुहतेंकि सम्पूर्ण रात्रि-दिन होते हैं ॥ ५९ ॥ दिनोंको हास अथवा वृद्धि ऋपशः प्रातःकाल, मध्यद्धकाल आदि दिवसोदोंकि हास-वृद्धिक कारण होते हैं; किन्तू दिनोंके घटते-बढ़ते रहनेपर भी सन्ध्या सर्वदा समान भावसे एक महर्तको ही होती है।। ६०॥ उदयसे लेकर सुयंको तीन मुहुर्तकी गतिके कालको 'प्रातःकाल' कहते हैं, यह सम्पूर्ण दिनका पाँचवाँ भाग होता है।। ६१ ॥ इस प्रातःकालके अनन्तर तीन मुहुर्तका समय 'सङ्ग्रच' कहलाता है तथा सङ्गलकालके पञ्चात् तीन मुहुर्तका 'मध्याह्र' होता है ॥ ६२ ॥ नध्याह्रकालसे पीछेका समय 'अपगुद्ध' कहत्वता है इस काल-भागको भी वृधकन तीन मृहर्तका ही बताते हैं ॥ ६३ ॥ अपराहके बीदनेपर 'सायाह्र' आता है । इस प्रकार [सम्पूर्ण दिनमें] पन्द्रह मुहर्त और [प्रत्येक दिवसांशमें] तीन मृहते होते है ॥ ६४ ॥

वैज्ञात दिवस पन्द्रह मुहूर्तका होता है, किन्तु उत्तरायण और दक्षिणायनमें क्रमहाः उसके बृद्धि और हास होने रूगते हैं। इस प्रकार उत्तरायणमें दिन राजिका आस करने रूगता है और दक्षिणायनमें राजि दिनका पास करती रहती है॥ ६५-६६॥ इतद् और वसन्तप्रहतुके मध्यमें सूर्यके तुक्त अथवा मेपराहिमें जानेगर 'विणुव' होता है। उस समय दिन और राजि समान होते हैं॥ ६७॥ सूर्यके कर्कराशिमें उपस्थित होनेगर दक्षिणायन कहा जाता है और उसके मकरराशिपर आनेसे उत्तरायण कहरवाता है॥ ६८॥

है ब्रह्मन् ! मैंने जो तीस मुहूर्तक एक रात्रि-दिन कहे हैं ऐसे पन्द्रह रात्रि-दिवसका एक 'एश्व' कहा जाता है॥ ६९॥ दो पश्चका एक मारा होता है, दो सौरमासको एक ऋतु और तीन ऋतुका एक अयन होता है तथा दो अयन ही [मिलाकर] एक वर्ष कहे जाते हैं॥७०॥

संवत्सरादयः पञ्च चतुर्मासविकरूपताः । निश्चयः सर्वकालस्य युगमित्यभिधीयते ॥ ७१ संवत्सरस्तु प्रथमो द्वितीयः परिवत्सरः। इद्बत्सरस्तृतीयस्तु चतुर्धश्चानुवत्सरः । वत्सरः पञ्चमश्चात्र कालोऽयं युगसंज्ञितः ॥ ७२ यः श्रेतस्योत्तरः शैलः शुरुवानिति विश्रतः । त्रीणि तस्य त् शृङ्काणि यैरयं शृङ्कवान्स्रतः ॥ ७३ दक्षिणं चोत्तरं चैव मध्यं वैषुवतं तथा। शरद्वसन्तयोर्मध्ये तद्धानुः प्रतिपद्यते । मेषादौ च तुलादौ च मैत्रेय विदुवत्स्थितः ॥ ७४ तदा तुल्यमहोरात्रं करोति तिमिरापहः। दशपञ्चमुहुर्त वै तदेतदुभयं स्मृतम् ॥ ७५ प्रथमे कृत्तिकाभागे यदा भारबास्तदा राशी । विशासानां चतुर्थेऽशे मुने तिष्ठत्यसंशयम् ॥ ७६ विशासानां यदा सूर्यश्चरत्यंशं तृतीयकम्। तदा चन्द्रं विजानीयात्कृतिकाशिरसि स्थितम् ॥ ७७ तदैव विषुवाख्योऽयं कालः पुण्योऽभिधीयते । तदा दानानि देवानि देवेच्यः प्रथतात्मिषः ॥ ७८ ब्रह्मणेभ्यः पितृभ्यश्च मुखमेतत्तु दानजम्। दत्तदानस्तु विषुवे कृतकृत्योऽभिजायते ॥ ७९ अहोरात्रार्द्धमासास्तु कलाः काष्ट्राः क्षणास्त्रथा । पीर्णमासी तथा ज्ञेया अमावास्या तक्षेत्र स । सिनीवाली कुहुशैव राका चानुमतिस्तथा ॥ ८० तपस्तपस्मी मधुमाधवी च शुक्तः शुचिश्चायनमुत्तरं स्यात्। नभोनभस्यौ च इषस्तथोर्ज-स्सहःसहस्याविति दक्षिणं तत् ॥ ८१

[सौर, सावन, चान्द्र तथा नाश्वन-इन] चार प्रकारके मासँकि अनुसार विविधकपसे कल्पित संबद्धसर्वाद पाँच प्रकारके वर्ष 'युग' कहलाते हैं यह युग ही [मलमासादि] सब प्रकारके काल-निर्णयका कारण कहा जाता है ॥ ७१ ॥ उनमें पहला संबद्धार, दूसरा परिवद्धार, तीसरा इद्वत्सर, चौधा अनुबद्धार और पाँचवाँ वत्सर है । यह काल 'युग' नामसे विख्यात है ॥ ७२ ॥

श्रेतवर्षके उत्तरमें जो शक्कवान नामसे विख्यात पर्वत है उसके तीन श्वा हैं, जिनके कारण यह शृङ्खान् कहा जाता है ॥ ७३ ॥ उनमेंसे एक शङ्क उत्तरने, एक दक्षिणमें तथा एक मध्यमें है। मध्यशक ही 'वैषयत' है। शस्त और वसन्तऋतुके मध्यमें सूर्व इस वैवृवतशृक्षपर आते हैं; अतः हे मैत्रेय ! मेष अधवा तुलाराशिके आएभमें तिमिरापहारी सूर्यदेव विषुवतपुर स्थित होकर दिन और रात्रिको समान-परिमाण कर देते हैं। उस समय ये दोनों पन्द्रह-पन्द्रह मुहर्तके होते हैं ॥ ७४-७५ ॥ हे मुने ! जिस समय सुर्य कृतिकान सम्रके प्रथम भाग अर्थात् मेक्सदिके अन्तमें तथा चन्द्रमा निश्चय ही विशासाके चतुर्धौश [अर्थात् वृश्चिकके आरम्भ] में हों; अथवा जिस समय सूर्य विशाखाके तृतीय भाग अर्थात् तुलाके अन्तिमोद्याका भोग करते हीं और चन्द्रमा कृतिकाके प्रथम भाग अर्थात् मेषान्तमें स्थित जान पहें तभी यह 'विष्व' नामक अति पवित्र काल कहा जाता है; इस समय देवता, ब्राह्मण और पितृगणके उद्देश्यसे संयतिवत्तं होकर दानादि देने चाहिये। यह समय दानबहणके लिये मानो देवताओंके खुले हुए मुखके समान है । अतः 'वियुव' कालमें दान करनेवाला मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है ॥ ७६---७९ ॥ यागादिके काल-निर्णयके लिये दिन, रात्रि, पक्ष, कला, काष्ट्रा और क्षण आदिका विषय भली प्रकार जानना चाहिये। सका और अनुमति हो प्रकारकी पूर्णमासी* तथा सिनीवाली और कुड़ दो प्रकारकी अमावास्या † होती हैं॥ ८०॥ माघ-फाल्युन, चैत्र-वैद्यास तथा ज्येष्ट-आबाद-—ये छः मास उत्तरायण होते हैं और श्रावण-भाद, आश्वन-कार्तिक तथा अगहन-पौप--- ये छः दक्षिणायन कहलाते हैं ॥ ८१ ॥

विस पूर्णियामें पूर्णचन्द्र विराजमान होता है वह 'सका' कहलाती है तथा जिसमें एक कलाहीन होती है यह 'अनुमति' कही जाती है ।

[े] दृष्टचन्द्रा अमाजस्याका नाम 'सिनीवाली' है और नष्टचन्द्राक्ष नाम 'कुह' है।

लोकालोकश्च यहशैलः प्रागुक्तो भवतो मया । लोकपालास्तु चत्वारस्तत्र तिष्ठन्ति सुव्रताः ॥ ८२ सुधामा शङ्कपार्धेव कर्दमस्यात्मजो द्विज । हिरण्यरोमा जैवान्यश्चतुर्थः केतुमानपि ॥ ८३ निर्द्वन्द्वा निरभिमाना निस्तन्द्रा निष्परिश्रहाः । लोकपालाः स्थिता होते लोकालोके चतुर्दिशम् ॥ ८४ उत्तरं यदगस्त्यस्य अजबीध्याश्च दक्षिणम् । पितुयानः स वै पन्था वैश्वानरपथाइहिः ॥ ८५ तन्नासते महात्पान ऋषयो येऽग्रिहोत्रिणः । भूतारम्भकृतं ब्रह्म शंसन्तो ऋत्विगुद्यताः । प्रारभन्ते तु ये लोकास्तेषां पन्धाः स दक्षिणः ॥ ८६ चलितं ते पुनर्बह्य स्थापयन्ति युगे युगे । सन्तत्या तपसा चैव मर्यादाभिः श्रुतेन च ॥ ८७ जायमानास्तु पूर्वे च पश्चिमानां गृहेषु वै। पश्चिमाश्चेव पूर्वेषां जायन्ते निधनेष्ट्रिह ॥ ८८ एवमावर्तमानास्ते तिष्ठन्ति नियतव्रताः । सवितुर्दक्षिणं मार्गं श्रिता ह्याचन्द्रतारकम् ॥ ८९ नागवीध्युत्तरं यस सप्तविंध्यश्च दक्षिणम् । उत्तरः सवितुः पन्था देवयानश्च स स्मृतः ॥ ९० तत्र ते वशिनः सिद्धा विमला ब्रह्मचारिणः । सन्तति ते जुगुप्सन्ति तस्मान्यस्युर्जितश्च तैः ॥ ९१ अष्ट्राशीतिसहस्राणि पुनीनापुष्टरितसाम् । उद्क्षन्थानमर्थम्णः स्थितान्याभृतसम्प्रुवम् ॥ १२ तेऽसम्प्रयोगाल्लोभस्य मैथुनस्य च वर्जनात् । इच्छाद्वेवाप्रवृत्त्वा च भूतारम्भविवजंनात् ॥ ९३ पुनश्च कामासंयोगाच्छब्दादेदेविदर्शनातः । इत्येभिः कारणैः शुद्धास्तेऽमृतत्वं हि भेजिरे ॥ ९४ आभृतसम्पूर्वं स्थानममृतत्वं विभाव्यते । त्रैलोक्यस्थितिकालोऽयमपुनर्मार उच्यते ॥ ९५

ब्रह्महत्याश्चमेधाभ्यां पापपुण्यकृतो विधिः ।

आभूतसमूखान्तन् फलमुक्तं तयोर्द्विज ॥ ९६

जो अगस्यके उत्तर तथा अजवीधिके दक्षिणमें वैधानरमार्गसे भिन्न [मृगर्वीधि नामक] मार्ग है वही पितृयानमध्य है ॥ ८५ ॥ उस पितृयानमार्गमे महात्या-मुनिजन रहते हैं। जो लोग अग्रिहोत्री होकर प्राणियोकी उत्पत्तिके आरम्भक बहा (बेद) की स्तृति करते हुए यज्ञानुष्टानके लिये उद्यत हो कर्मका आरम्भ करते हैं वह (पितृयान) उनका दक्षिणमार्ग है।। ८६।। वे युग-युगान्तरमें विच्छित्र हुए वैदिक धर्मको, सन्तान तपस्या वर्णाश्रम-मर्यादा और विविध शास्त्रोंके द्वारा पुनः स्थापना करते हैं ॥ ८७ ॥ पूर्वतन धर्मप्रवर्तक ही अपनी उत्तरकालीन सन्तानके यहाँ उत्पन्न होते हैं और फिर उत्तरकाछीन धर्म-प्रचारकगण अपने यहाँ सन्तानरूपसे उत्पन्न हुए अपने पितृगणके कुलोमें जन्म लेते हैं ॥ ८८ ॥ इस प्रकार, वे बतशील महर्षिगुण चन्द्रमा और तारागणको स्थितिपर्यन्त सूर्यके दक्षिणमानीमें पुनः-पुनः आते-जाते रहते हैं ॥ ८९ ॥ नागवीधिके उत्तर और सप्तर्षियोके दक्षिणमें जो सूर्यका उसरीय मार्थ है उसे देवयानमार्ग कहते हैं ॥ ९० ॥ उसमें जो प्रसिद्ध निर्मलस्वभाव और जितेन्द्रिय बह्मचारिगण निवास करते हैं वे सन्तानकी इच्छा नहीं करते, अतः उन्होंने मृत्युको जीत लिया है ॥ ९१ ॥ सुर्यंके उत्तरमार्गमें अस्तो हजार ऊध्वरेता मुनियण प्रलयकालपर्यन्त निवास करते हैं॥ ९२ ॥ उन्होंने लोभके असंयोग, मैथूनके स्याय, इच्छा और द्वेषकी अप्रवृत्ति, कर्मानुष्टानके त्याग, काम-वासनाके असंयोग और शब्दादि विषयोंके दोष-दर्शन इत्यादि कारणीसे शुद्धचित होकर अमरता प्राप्त कर ली है ॥ ९३-९४ ॥ भृतीके प्रस्त्यपर्यन्त स्थिर रहनेको ही अमरता कहते हैं। त्रिलोकीकी स्थितितकके इस कालको ही अपूनर्मार (पुनर्मुखुरहित) कहा जाता

है। ९५॥ हे द्विज ! ब्रह्महत्या और अध्यमेषयज्ञसे

जो पाप और पुण्य होते हैं उनका फल प्रलयपर्यन्त कहा

गया है ॥ ९६ ॥

मैंने पहले तुमसे जिस लोकालोकपर्वतका वर्णन किया

है, उसीपर चार व्रतशील लोकपाल निवास करते हैं॥ ८२ ॥ हे द्विज ! सुधामा, कर्दमके पुत्र शंखपाद और

हिरण्यरोमा तथा केत्मान्—ये चारो निर्द्वन्द्व, निर्राभयान,

निरालस्य और निभ्यरिप्रह लोकपालगण लोकालोक-

पर्वतकी चारों दिशाओंमें स्थित है ॥ ८३-८४ ॥

919

38

यावन्मात्रे प्रदेशे तु मैत्रेयावस्थितो ध्वः ।

क्षयमायाति तावनु भूमेराभृतसम्प्रवात् ॥

ऊध्वोत्तरमृषिभ्यस्त ध्रवो यत्र व्यवस्थितः ।

एतद्विष्णुपदं दिव्यं तृतीयं व्योप्नि भासुरम् ॥

निर्धृतदोषपङ्कानां यतीनां संयतात्मनाम् ।

स्थानं तत्परमं वित्र पुण्यपापपरिक्षये ॥

अपुण्यपुण्योपरमे क्षीणाशेषाप्तिहेतवः ।

यत्र गत्वा न शोचन्ति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ १००

धर्मध्रवाद्यास्तिष्ठन्ति यत्र ते लोकसाक्षिणः । तस्साष्ट्रजॉत्पन्नयोगेद्धास्तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ १०१ यत्रोतमेतत्प्रोतं च यद्धतं सचराचरम्। भारवं च विश्वं मैत्रेच तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ १०२ दिखीव चक्षुराततं योगिनां तन्ययात्मनाम् । विवेकज्ञानदृष्टं च तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ १०३ यस्मित्रातिष्ठितो भारवान्येढीभूतः स्वयं ध्रवः । श्रवे च सर्वज्योतींषि ज्योति:पुम्योम्चो द्विज ॥ १०४ मेघेषु सङ्गता वृष्टिर्वृष्टेः सृष्टेश्च पोषणम् । आप्यायनं च सर्वेषां देवादीनां महामुने ॥ १०५ ततश्चाज्याहृतिद्वारा पोषितास्ते हृविर्भुजः । वृष्टे: कारणता यान्ति भूतानां स्थितये पुन: ॥ १०६ एवमेतत्पदं विष्णोस्तृतीयममलात्मकम् । आधारभूतं लोकानां त्रयाणां वृष्टिकारणम् ॥ १०७ ततः प्रभवति ब्रह्मन्सर्वपापहरा सरित्। देवाङ्गनाङ्गानामनुलेपनपिञ्जरा ॥ १०८ वामपादाम्बुजाङ्गृष्ठनखस्रोतोविनर्गताम् विष्णोबिंभर्ति यो भक्त्या ज्ञिरसाहर्निज्ञं ध्रुवः ॥ १०९ ततः यप्तर्षयो यस्याः प्राणायामपरायणाः । तिष्ठन्ति वीचिमालाभिरुग्धमानजटा जले ॥ ११० वार्बोधैः सन्ततैर्यस्याः प्रावितं शशिमण्डलम् । भूयोऽधिकतरां कान्तिं वहत्येतदुह क्षये ॥ १११

हे मैत्रेय ! जितने प्रदेशमें धुव स्थित है, पृथिवीसे केकर उस प्रदेशपर्यन्त सम्पूर्ण देश प्रकथकालमें नष्ट हो जाता है ॥ ९७ ॥ सप्तर्षियोंसे उत्तर-दिशामें ऊपरकी ओर जहाँ घुव स्थित है वह अति तेजीमय स्थान ही आकाशपें विष्णुभगवानुका तीसरा दिव्यधाम है ॥ ५८ ॥ हे विप्र ! पुण्य-पापके श्रीण हो जानेपर दोष-पंकजून्य संवतात्रम मुनिजनीका यही परमस्थान है॥ ९९॥ पाप-पुण्यके नियत हो जाने तथा देह-प्राप्तिक सम्पूर्ण कारणोंके नष्ट हो जानेपर प्राणियण जिस स्थानपर जाकर फिर शोक नहीं करते वही भगवान् विष्णुका परमपद है ॥ १०० ॥ जहाँ भगवानुकी समान ऐश्वर्यतासे प्राप्त हुए योगद्वारा सतेज होकर धर्म और ध्रुव आदि लोक-साक्षिमण निवास करते हैं वही भगवान् विष्णुका परमपद है ॥ १०१ ॥ हे मैत्रेय ! जिसमें यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान वरावर जगत् ओतप्रोत हो रहा है बही भगवान विष्णुका परमधद है ॥ १०२ ॥ जो तल्लीन योगिजनोंको आकाशमण्डलमें देदीप्यमान सूर्यके समान सबके प्रकाशकरूपसे प्रतीत होता है तथा जिसका विवेक-ज्ञानसे ही प्रत्यक्ष होता ै वही भगवान् विष्णुका परमपद है ॥ १०३ ॥ हे द्विज ! उस विष्णुपदमें हो सबके आधारभृत परम-तेजरवी ध्रव स्थित हैं, तथा धुवजीमें समस्त नक्षत्र, नक्षत्रीमें मेश और मेघोमें वृष्टि आधित है। हे महामुने ! उस वृष्टिसे ही समस्त सृष्टिका पोषण और सम्पूर्ण देव-मनुष्यादि प्राणियोंकी पृष्टि होती है॥ १०४-१०५॥ तदनसर मी आदि प्राणियोंसे उत्पन्न दुग्ध और घुत आदिकी आहतिबोसे परितृष्ट अघिदेव ही प्राणियोंको स्थितिके लिये पुरः वृष्टिके कारण होते हैं ॥ १०६ ॥ इस प्रकार विष्णुभगवान्का यह निर्मल तृतीय लोक (धूव) ही प्रिलोकीका आधारभूत और वृष्टिका आदिकारण ॥ ए०७ ॥ है हे बहान्! इस विष्णुपदसे ही देवाहुनाओंके

अंगरागसे पाण्डुरवर्ण हुई-साँ सर्वपापायहारिणी श्रीमहाजी उत्पन्न हुई हैं॥ १०८॥ विष्णुभगवान्के लाम चरण-कमरुके अंगृठेके नखरूप स्रोतसे निकली हुई उन पक्षाजीको धुव दिन-रात अपने पस्तकपर भारण करता है॥ १०९॥ तदनन्तर जिनके जलमें खड़े होकर प्राणायाप-परायण सप्तर्षिगण उनकी तर्रणभगीरों जटाकरूपके कम्पायमान होते हुए, अपमर्थण-मन्तका

जप करते हैं तथा जिनके विस्तृत जलसमृहसे आग्नावित

मेरुपृष्ठे पतत्युधैर्निषकान्ता शशिमण्डलात्। जगतः पावनार्थाय प्रयाति च चतुर्दिशम्॥ ११२ सीता चालकनन्दा च चक्षुर्भद्रा च संस्थिता। एकैवं या चतुर्भेदा दिग्भेदगतिरूक्षणा ॥ ११३ भेदं चालकनन्दास्यं यत्याः शवींऽपि दक्षिणम् । दधार शिरसा प्रीत्या वर्षाणापधिकं शतम् ॥ ११४ शम्प्रोजेंटाकलापाच विनिष्कान्तास्थिशर्कराः । प्राविधत्वा दिवं निन्ये या पापान्सगरात्मजान् ॥ ११५ स्नातस्य सलिले यस्याः सद्यः पापं प्रणाज्यति । अपूर्वपुण्यप्राप्तिश्च सद्यो मैत्रेय जायते ॥ ११६ दत्ताः पितुभ्यो यत्रापस्तनयैः श्रद्धयान्वितैः । समारातं प्रयच्छन्ति तृप्ति मैत्रेय दुर्लभाम् ॥ ११७ यस्यामिष्टा महायज्ञैर्यज्ञेशं पुरुषोत्तमम्। द्भिज भूपाः परां सिद्धिमवापुर्दिवि चेह च ॥ ११८ स्नानाद्विधृतपापाश्च यज्ञलैर्यतयस्तथा । केशवासक्तमनसः प्राप्ता निर्वाणमुक्तमम् ॥ ११९ श्रुताऽभिलविता दृष्टा स्पृष्टा पीताऽवगाहिता। या पावयति भूतानि कीर्तिता च दिने दिने ॥ १२० गङ्गा गङ्गेति वैर्नाम योजनानां शतेषुपि । स्थितैरुद्यारितं हन्ति पापं जन्मत्रयार्जितम् ॥ १२१ यतः सा पावनायालं त्रयाणां जगतामपि । समुद्भुता परं तत्तु तृतीयं भगवत्पदम् ॥ १२२

होकर चन्द्रमण्डल क्षयके अनन्तर पुनः पहलेसे भी अधिक कान्ति धारण करता है, वे श्रीमङ्गाजी बन्द्र-मण्डलसे निकलकर मेरुपर्वतके ऊपर गिरती हैं और संसाको पवित्र करनेके लिये चारी दिशाओंमें जाती हैं ॥ ११० —११२ ॥ चारों दिशाओं में जानेसे वे एक ही सीता, अल्कनन्दा, चक्षु और भद्रा इन चार भेदोंबाली हो। जाती हैं ॥ ११३ ॥ जिसके अलकनन्दा नामक दक्षिणीय भेटको भगवान् इंकरने अत्यन्त प्रीतिपूर्वक सौ वर्गसे भी अधिक अपने मस्तकपर धारण किया था, जिसने श्रीशंकरके जटाकछापसे निकलकर पापी सगरपुत्रीके अस्थिन्पीको आग्नावित कर उन्हें स्वर्गमे पहुँचा दिया। हे मैत्रेय ! जिसके जलमे स्नान करनेसे शीघ ही समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और अपूर्व पुण्यकी प्राप्ति होती। है।। १९४---११६॥ जिसके प्रवाहमें पूरोद्वारा पितरोंके लिये श्रद्धापूर्वक किया हुआ एक दिनका भी तर्पण उन्हें सौ वर्षतक दुर्लभ तृप्ति देता है ॥ १९७॥ हे द्विज ! जिसके तटपर राजाओंने महायज्ञोंसे यज्ञेश्वर भगवान् पुरुषोत्तमकः यजन करके इहलोक और खगैलोकमें परमसिद्धि लाभ की है ॥ ११८ ॥ जिसके जलमें स्नान करनेसे निष्याप हुए यतिजनोने भगवान् केशक्यें चित्त लगाकर अत्युत्तम निर्वाणपद प्राप्त किया है ॥ ११९ ॥ जो अपना क्षयण, इच्छा, दर्शन, स्पर्धा, जलपान, स्नान तथा यशोगान करनेसे ही नित्यप्रति प्राणियोंको पवित्र करती रहती है ॥ १२० ॥ तथा जिसका 'गङ्गा, गङ्गा' ऐसा जम सौ योजनको दुरीसे भी उचारण किये जानेपर | जीवके | तीन जन्मोंके सञ्चित पापीको नष्ट कर देता है।। १२१।। त्रिलोकोको पवित्र करनेमें समर्श वह गङ्गा जिससे उत्पन्न हुई है, यही भगवानुका तीसरा परमपद है ॥ १२२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीबैंडशे अष्टमोडध्यायः ॥ ८ ॥

नवाँ अध्याय

ज्योतिश्रक्त और शिशुमारचक्र

श्रीपराशर उवाच

तारामयं भगवतः शिशुमाराकृति प्रभोः। दिवि रूपं होर्यंच तस्य एक्ट्रे स्थितो धवः॥

दिवि रूपं हरेर्यंतु तस्य पुच्छे स्थितो ध्रवः ॥ १ सैष भ्रमन् भ्रामयति चन्द्रादित्यादिकान् प्रहान् । भ्रमन्तमनु तं यान्ति नक्षत्राणि च चक्रवत् ॥ २ जो शिशुमार (गिरणिट अथका गोधा) के समान आकार-वाला तारामय खड़प्य देखा जाता है, उसके पुच्छ-भागमें धुव अवस्थित है ॥ १ ॥ वह धुव स्वयं धूमता हुआ चन्द्रमा और सर्व आहि पर्वेको शासना है। उस भागाशील भवके

और सूर्य आदि प्रहोंको चुमाता है। उस प्रमणशील भुवके साथ नक्षत्रगण भी चक्रके समान घुमते रहते हैं॥ २॥

श्रीपराद्वारजी बोर्छ—आकादामें भगवाद विल्लुका

सूर्याचन्द्रमसौ तारा नक्षत्राणि प्रहै: सह। वातानीकमयैर्बन्धैर्सुवे बद्धानि तानि वै ॥ शिश्माराकृति प्रोक्तं यद्वपं ज्योतिषां दिवि । नारायणोऽयनं धाम्नां तस्याधारः स्वयं हृदि ॥ उत्तानपादपुत्रस्तु तमाराध्य जगत्पतिम् । स ताराशिशुमारस्य ध्रुवः पुच्छे व्यवस्थितः ॥ आधारः शिशुमारस्य सर्वाध्यक्षो जनार्दनः । श्रुवस्य शिशुमारस्तु ध्रुवे भानुव्यवस्थितः ॥ तदाधारं जगसेदं सदेवासुरमानुषम् ॥ येन विप्र विधानेन तनार्मकमनाः शुणु । विवस्वानष्ट्रभिर्मासैरादायापो रसात्मिकाः । वर्षत्यम्बु ततशात्रमन्नादप्यस्विलं जगत्॥ विवस्वानंशुभिस्तीक्ष्णैरादाय जगतो जलम् । सोमं पुष्णात्यथेन्दुश्च वायुनाडीमवैदिवि । नालैविक्षिपतेऽभ्रेषु धूमाग्न्यनिलमूर्तिषु ॥ न भ्रञ्चन्ति यतस्तेभ्यो जलान्यभ्राणि तान्यतः । अभ्रस्थाः प्रपतन्त्वापो वायुना समुदीरिताः । संस्कारं कालजनितं मैत्रेयासाद्य निर्मलाः ॥ १० सरित्समुद्रभौमास्तु तथापः प्राणिसम्भवाः । चतुष्प्रकारा भगवानादत्ते सविता मुने ॥ ११ आकाशगङ्कासिललं तथादाय गभस्तिमान् । अनभ्रगतमेवोर्व्यां सद्यः क्षिपति रहिमभिः ॥ १२ तस्य संस्पर्शनिर्धृतपापपङ्को द्विजोत्तम । न याति नरकं मत्यों दिव्यं स्नानं हि तत्स्पृतम् ॥ १३ दृष्टसूर्यं हि यद्वारि पतत्यभैर्विना दिवः । आकाशगङ्कासिललं त द्वोभि: क्षिप्यते रवे: ॥ १४ कृतिकादिषु ऋक्षेषु विषमेषु च यदिवः। दृष्टार्कपतितं ज्ञेयं तदाङ्गं दिगाजोन्झितम् ॥ १५ यग्पक्षेषु च यत्तीयं पतत्यकोन्डितं दिवः । तत्सूर्यरिमिभः सर्वं समादाय निरस्यते ॥ १६ उभयं युण्यमत्यर्थं नृणो पापभयापहम् । आकाशगङ्कासिललं दिव्यं स्नानं महामूने ॥ १७

सूर्य, चन्द्रमा, तारे, नक्षत्र और अन्यान्य समस्त ब्रह्मण वायु-मण्डलमयी डोरीसे शुक्के साथ बँधे हुए हैं ॥ ३ ॥ मैंने तुमसे आकाशमें फ्रह्मणके जिस शिशुमार-स्वरूपका वर्णन किया है, अनन्त तेजके आश्रय स्वयं भगवान नारायण ही उसके हदशस्थित आधार हैं ॥ ४ ॥

उत्तानपादके पुत्र ध्रुपने उन जगत्मतिकी आराधना करके तारामय शिशुमारके पुच्छस्थानमें स्थिति प्राप्त की है ॥ ५ ॥ शिशुमारके आधार सर्वेश्वर श्रीनारायण हैं, शिशुमार धुवका आश्रम है और धुवमें सूर्यदेव स्थित हैं तथा है विश्व ! जिस प्रकार देय, असुर और मनुष्यादिके सहित यह सम्पूर्ण जगत् सूर्यके आश्रित है, वह तुम एकाम होकर सुनो ।

होकर सुनो ।

सूर्य आठ मासतक अपनी किरणोंसे छः स्सोसे युक्त
जलको ग्रहण करके उसे चार महोनोंमें बरसा देता है उससे
अक्षको उत्पत्ति होती है और अन्नहींसे सम्पूर्ण जगत् पोषित
होता है ॥ ६ — ८ ॥ सूर्य अपनी तीक्षण रिंडमयोंसे
संसारका जल खींचकर उससे चन्द्रमाका पोषण करता है
और चन्द्रमा आकाशमें वायुमयी नाहियोंके मार्गसे उसे
धूम, अग्नि और वायुमय मेघोंमें पहुँचा देता है ॥ ९ ॥ यह
चन्द्रमाद्वारा प्राप्त जल मेघोंसे तुरन्त ही प्रष्ट नहीं होता
इसलिये 'अप्न' कहलाता है ॥ हे मैत्रेय । कालजनित
संस्कारके प्राप्त होनेपर यह अग्नस्थ जल निर्मल होकर
वायुकी प्रेरणासे पृथियीपर बरसने लगता है ॥ १० ॥
हे मुने ! घगवान सूर्यदेव नदी, संयुद्ध, पृथिबी तथा

प्राणियांसे उत्पन्न-इन चार प्रकारके जलोका आकर्षण करते हैं ॥ ११ ॥ तथा आकाशगङ्काके जलको यहण करके वे उसे बिना मेघादिके अपनी किरणोंसे ही तुरना पुथिबीपर बरसा देते हैं ॥ १२ ॥ हे द्विजीतम ! उसके स्पर्शमात्रसे पाप-पंकके घुळ जानेसे मनुष्य नरकमें नहीं जाता । अतः वह दिव्यस्तान कहत्त्रता है ॥ १३ ॥ सूर्यके दिखलायी देते इए, बिना मेघोंके ही जो जल बरसता है वह सूर्वको किरणोंद्वारा वस्साया तुआ आकाशगङ्काका ही जल होता है ॥ १४ ॥ कृतिका आदि विषम (अयुम्म) नक्षत्रोमें जो जल सूर्यके प्रकाशित रहते हुए बरसता है उसे दिणजोदारा बरसाया हुआ आकाशगङ्गाका जल समझना चाहिये ॥ १५ ॥ ﴿ रोहिणी और आर्द्री आदि] सम संख्यावाले नक्षत्रीमें जिस जलको सूर्य बरसाता है वह सुर्वरित्मयोद्वारा [आकाशयङ्गासे] प्रहण करके ही बरसाया जाता है ॥ १६ ॥ हे पहासूने ! आकाशगङ्गाके ये [सम तथा विषय नक्षत्रीमें बरसनेवाले] दोनों प्रकारके जलमय दिव्य स्नाग अत्यन्त पवित्र और मनुष्योंके परप-भयको दुर करनेवाले है ॥ १७ ॥

यत्तु मेघैः समुत्सृष्टं वारि तद्माणिनां द्विज । पुष्णात्योषधयः सर्वा जीवनायामृतं हि तत् ॥ १८

तेन वृद्धिं पर्रा नीतः सकलश्रीषधीगणः ।

साधकः फलपाकान्तः प्रजानां द्विज जायते ॥ १९

तेन यज्ञान्यथाप्रोक्तान्यानवाः शास्त्रचक्षुषः ।

कुर्वन्यहरहस्तैश्च देवानाप्याययन्ति ते ॥ २० एवं यज्ञाञ्च बेदाञ्च वर्णाञ्च बृष्टिपूर्वकाः ।

सर्वे देवनिकायाश्च सर्वे भूतगणाश्च ये ॥ २१

वृष्ट्या धृतमिदं सर्वमन्नं निष्पाद्यते यया ।

सापि निष्पाद्यते वृष्टिः सवित्रा मुनिसत्तम् ॥ २२ आधारभूतः सवितुर्ध्वो मुनिवरोत्तम्।

श्रुवस्य ज्ञिज्ञुमारोऽसौ सोऽपि नारायणात्मकः ॥ २३

हृदि नारायणस्तस्य शिशुमारस्य संस्थितः ।

बिभर्ता सर्वभूतानामादिभूतः सनातनः॥ २४

है द्रिज । जो जल मेघोंद्वारा बरसाया जाता है वह प्राणियाँके जीवनके लिये अमृतरूप होता है और

ओषधियोका पोषण करता है ॥ १८ ॥ हे विष्र ! उस वृष्टिके जलसे परम वृद्धिको प्राप्त होकर समस्त ओषधियाँ

और फल पकनेपर सुख जानेवाले [गोशूम, यव आदि अञ्] प्रजावर्गके[शरीरकी उत्पत्ति एवं पोषण आदिके] साधक होते हैं ॥ १९ ॥ उनके द्वारा शास्त्रविद्

मनीवगण नित्वपति यथाविधि यज्ञानुष्ठान कर्के देवताओंको सन्तष्ट करते हैं ॥ २० ॥ इस प्रकार सम्पूर्ण

यज्ञ, वेद, ब्राहाणादि वर्ण, समस्त देवसमूह और प्राणिगण वृष्टिके ही आश्रित हैं॥ २१॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! अञ्चको उत्पन्न करनेवाली वृष्टि ही इन सबको धारण करती है तथा

उस वृष्टिकी उत्पत्ति सूर्यसे होती है ॥ २२ ॥ 🐃 🛒 हे मुन्तियरोत्तम ! सूर्यका आधार धूव है, धूवका शिशुमार है तथा शिश्मारके आश्रय श्रीनारायण है ॥ २३ ॥ उस शिशुमारके हृदयमें श्रीनारायण स्थित है जो समस्त प्राणियोंके पालनकर्ता तथा आदिभृत समातम पुरुष है ॥ २४ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेऽदो नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दसवाँ अध्याय

ह्यदश सूर्योंके नाम एवं अधिकारियोंका वर्णन

श्रीपराञ्चर उवान

साशीतिमण्डलशतं काष्ट्रयोरन्तरं हुयोः।

आरोहणावरोहाभ्यां भानोरब्देन या गतिः ॥ सं रथोऽधिष्ठितो देवैरादित्यैर्ऋपिभिस्तथा ।

यन्धवैरप्सरोभिश्च प्रामणीसपैराक्षसै: ॥ थाता क्रतुस्थला चैव पुलस्त्यो वासुकिस्तथा ।

रथभुद्प्रामणीहॅतिस्तुम्बुरुश्चैव

एते वसन्ति यै चैत्रे मधुमासे सदैव हि। मैत्रेय स्यन्दने भानोः सप्त मासाधिकारिणः ॥

अर्थमा पुलहश्चैव रथौजाः पुञ्जिकस्थला ।

प्रहेतिः कच्छवीरश्च मारदश्च रश्चे स्वेः ॥ माधवे निवसन्येते शुचिसंज्ञे निबोध मे ॥

श्रीपराशस्त्री बोले---आरोह और अवरोहके

द्वारा सूर्यकी एक वर्षयें जितनी गति है उस सम्पूर्ण मार्गकी दोनों काष्टाओंका अन्तर एक सौ अस्सी मण्डल है।। १।।

सूर्यका रथ [प्रति मास] मिन्न-भिन्न आदित्य, ऋषि, गन्धर्व, अपराग, यक्ष, सर्प और राक्षसगणोंसे अधिष्ठित होता है ॥ २ ॥ हे मैंबेय ! मधुमास चैत्रमें सुर्वके स्थमें

सर्वदा धाता नामक आदित्य, ब्रातुस्थला अपसरा, पुरुस्त्य ऋषि, वासुकि सर्प, रथमृत् यथा, हेति ग्रक्षस और तुम्बुरु

गन्धर्व—ये सात मासाधिकारी स्टेत हैं॥ ३-४॥ तथा अर्यमा नामक आदित्य, पुलह ऋषि, रश्रीजा यक्ष,

पुंजियस्थला अप्सरा, प्रहेति राक्षस, कच्छवोरं सर्प और नारद नामक गन्धर्व—ये वैज्ञाख-मासमें सूर्यक रथपर निवास करते हैं। हे मैत्रेय ! अब ज्येष्ठ मासमें

[निवास करनेवालोंके जाम] .. सुतो ॥ ५:६ ॥

मित्रोऽत्रिस्तक्षको रक्षः पौरुषेयोऽय मेनका । हाहा रथस्वनश्चैव मैत्रेयेते वसन्ति वै॥ वरुणो वसिष्ठो नागश्च सहजन्या हुहु रथः । रश्रचित्रस्तथा शुक्रे वसन्त्याषाढसंज्ञके ॥ इन्द्रो विश्वावसुः स्रोत एलापुत्रस्तथाङ्किराः । प्रम्लोचा च नभस्येते सर्पिश्चार्के वसन्ति वै ॥ विवस्वानुप्रसेनश्च भृगुरापूरणस्तथा । अनुम्लोचा शृह्वपालो व्यामो भाद्रपदे तथा ॥ १० पूषा वसुरुविर्वातो गौतमोऽध घनझयः। सुषेणोऽन्यो धृताची च वसन्याध्यको रवौ ॥ ११ विश्वावसुर्परद्वाजः पर्जन्यैसवतौ तथा। विश्वाची सेनजिद्धाप: कार्तिके च वसन्ति वै ॥ १२ अंशकाञ्यपतार्क्ष्यांस्त् महापद्मस्तक्षोर्वज्ञी । चित्रसेनस्तथा विद्यन्यार्गहीवेंऽधिकारिणः ॥ १३ ऋतुर्भगस्तद्योणांयुः स्फूर्जः कर्कोटकस्तवा । अरिष्ट्रनेमिश्चैवान्या पूर्वीचतिर्वराप्सराः ॥ १४ पौषमासे वसन्त्येते सप्त भास्करमण्डले । लोकप्रकाञ्चनार्थाय विप्रवर्याधिकारिणः ॥ १५ त्वष्टाथ जमदप्रिश्च कम्बलोऽथ तिलोत्तमा । ब्रह्मोपेतोऽश्व ऋतजिद् धृतराष्ट्रोऽश्व सप्तमः ॥ १६ माधमासे वसन्येते सप्त मैत्रेय भास्करे । भ्रयतां चापरे सूर्वे फाल्गुने निवसन्ति ये ॥ १७ विष्णुरश्वतरो राष्पा सूर्यवर्चाश्च सत्यजित् ।

मासेष्ट्रेतेषु मैत्रेय वसन्त्येते तु सप्तकाः ।

स्तुबन्ति मुनयः सुर्यं गन्धवैर्गीयते परः।

बहन्ति पत्रमा यक्षैः क्रियतेऽभीषुसङ्ग्रहः ॥ २१

सर्प, पौरुषेय राक्षस, मेनका अप्सरा, हाहा गन्धर्व और रथस्वन नामक यक्ष—ये उस रथमें बास करते हैं ॥ ७ ॥ घुताची नामकी अप्सराका उसमें वास होता है ॥ ११ ॥ कार्तिक-मासमें उसमें विश्वावसु नामक गन्धर्व, भरहाज ऋषि, पर्जन्य आदित्य, ऐरावत सर्प, विश्वाची अपसरा, विश्वामित्रस्तथा रक्षो यज्ञोपेतो महासुने ॥ १८ सवितुर्मण्डले ब्रह्मन्विष्णुशक्त्युपवृहिताः ॥ १९ नुत्यन्त्यप्सरसो यान्ति सूर्यस्थान् निशाचराः ॥ २०

तथा आषाइ-मासमें वरुण नामक आदित्य, वसिष्ट ऋषि, नाग सर्प, सहजन्या अप्यरा, हह गन्धर्व, रथ राक्षस और रथिवत्र नामक यक्ष उसमें रहते हैं ॥ ८ ॥ श्रावण-मासमें इन्द्र नामक आदित्य, विश्वावस गन्धर्व, स्रोत यक्ष, प्लापुत्र सर्प, अङ्गिरा ऋषि, प्रम्लोचा अपसरा और सर्पि नामक राक्षस सुर्यके स्थमें बसते है ॥ ९ ॥ तथा भाद्रपदमें विवस्तान् मामक आदित्य, उप्रसेन गन्धर्वी, भृगु ऋषि, आपूरण यक्ष, अनुम्लोचा अप्सरा, शंखपाल सर्प और व्याघ नामक राक्षसका उसमें निवास होता है।। १०॥ आधिन-मासमें पूत्रा नामक आदित्य, वसुरुचि गन्धर्व, बात राक्षस, गौतम ऋषि, धनक्षय सर्प, सूपेण गन्धर्व और

उस समय मित्र नामक आदित्व, अति ऋषि, तक्षक

सेनजित् यक्ष तथा आप नामक राक्षस रहते है ॥ १२ ॥ मार्गशीर्वके अधिकारी अंश नामक आदित्य, काइयप ऋषि, ताक्ष्ये यक्ष, पहापदा सर्प, उर्वशी अपसरा, चित्रसेन गन्धर्व और विद्युत् नामक राक्षस हैं ॥ १३ ॥ हे विप्रवर ! पौष-मासमें कतु ऋषि, भग आदित्य, कर्णायु गन्धर्य, स्फूर्ज राक्षस, ककोंटक सर्प, आर्रहनेमि यक्ष तथा

पूर्वचिति अग्सरा जगतको प्रकृदिति करनेके लिये सुर्वमण्डलमें रहते हैं ॥ १४-१५॥

हे मैत्रेय । त्वष्टा नामक आदित्य, जमदत्रि ऋषि, कम्बल सर्प, तिलोत्तमा अप्सरा, ब्रह्मोपेत राक्षस. ऋतजित् यक्ष और धृतराष्ट्र गन्धर्व--ये सात माथ-गासमें भास्करमण्डलमें स्हते हैं। अब, जो फाल्युन-मासमें सूर्वके रथमें रहते हैं उनके नाम सुनी ॥ १६-१७ ॥ हे महामुने ! वे विष्णु नामक आदित्य, अश्वतर सर्प, रम्भा अप्सरा, सुर्यवर्चा गन्धर्व, सत्यजित् यक्ष, विश्वापित्र ऋषि और यज्ञोपेत नामक राक्षस हैं ॥ १८ ॥ हे ब्रह्मन् ! इस प्रकार विष्णुभगवान्की शक्तिसे

तेजोमय हुए ये सात-सात गण एक-एक मासतक सुर्वमण्डलमें रहते हैं॥ १९॥ मुनिगण सुर्वकी स्तृति करते हैं, रान्धर्व सम्मुख रहकर उनका यशोगान करते हैं, अपाराएँ नृत्य करती हैं. राक्षस रथके पीछे चलते हैं, सर्प वहन करनेके अनुकृत रथको सुसज्जित करते हैं और यक्षगण रथकी वागड़ोर सँभालते हैं बारुस्तित्यास्तर्थैवैनं परिवार्य समासते ॥ २२ सोऽयं सप्तगणः सूर्यमण्डले मुनिसत्तम । हिमोण्णवारिवृष्टीनां हेतुः स्वसमयं गतः ॥ २३

तथा नित्यसेवक बालसिल्यादि इसे सब ओरसे घेरे रहते हैं॥ २०—२२॥ हे , मुनिसत्तम ! सूर्यमण्डलके ये सात-सात गण ही अपने-अपने समयपर उपस्थित होकर जीत, प्रोप्प और वर्षा आदिके कारण होते हैं॥ २३॥

📉 🗶 🛪 🛪 इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेँउदो दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

— * — ग्यारहवाँ अध्याय

सुर्वेशक्ति एवं वैष्णवी शक्तिका वर्णन

श्रीमैत्रेय उवाच

यदेतद्भगवानाह् गणः सप्तविधो रवेः।
मण्डले हिमतापादेः कारणं तन्धया श्रुतम् ॥ १
व्यापारश्चापि कथितो गन्धवीरगरक्षसाम्।
ऋषीणां बालस्तिल्यानां तथैवाप्सरसां गुरो ॥ २
यक्षाणां च रथे भानोविंग्णुझिक्तभृतात्मनाम्।
किं चादित्यस्य यत्कर्मं तन्नात्रोक्तं त्वया मुने ॥ ३
यदि सप्तगणो वारि हिममुष्णं च वर्षति।
तिकमत्र रवेर्थेन वृष्टिः सूर्यादितीर्थते॥ ४
विवस्तानुदितो मध्ये यात्यस्तमिति किं जनः।
ऋषीत्येतसमं कर्म यदि सप्तगणस्य तत्॥ ५

श्रीपगशर उवास मैत्रेय श्रूयतामेतद्यद्भवान्यरिपृच्छति । यथा सप्तगणेऽप्येकः प्राधान्येनाथिको रविः ॥ ६ सर्वशक्तिः परा विष्णोर्त्रश्यजुःसामसंज्ञिता । सैषा त्रयी तपत्यंहो जगतञ्च हिनस्ति या ॥ ७ सेष विष्णुः स्थितः स्थित्यां जगतः पालनोद्यतः । ऋग्यजुःसामभूतोऽन्तः सवितुर्द्विज तिष्ठति ॥ ८ मासि मासि रवियों यस्तत्र तत्र हि सा परा । त्रयीमयी विष्णुशक्तिरवस्थानं करोति वै ॥ ९ ऋचः स्तुवन्ति पूर्वाह्मे मध्याह्मेऽश्र यजूषि वै । बृहद्रश्रक्तरादोनि सामान्यहः क्षये रविम् ॥ १० श्रीमैनेयजी बोले— धगवन् ! आपने जो कहा कि सूर्यमण्डलमें स्थित सातों गण जीत-मौष्य आदिके करण होते हैं, सो मैंने सुना ॥ १ ॥ हे पुरे ! आपने सूर्यके रथमें स्थित और विष्णु-झिक्ति प्रभावित गन्धर्व, सर्प, राक्षरा, व्हर्णि, बालिसल्पादि, अप्सरा तथा यक्षोंके तो पृथक्-पृथक् व्यापार बतलाये, किंतु हे मुने ! यह नहीं बतलाया कि सूर्यका कार्य क्या है ? ॥ २-३ ॥ यदि सातों गण ही जीत, प्रीष्म और क्यकि करनेवाले हैं तो फिर सूर्यका क्या प्रयोजन है ? और यह कैसे कहा जाता है कि बृष्टि सूर्यसे होती है ? ॥ ४ ॥ यदि सातों गणोंका यह वृष्टि आदि कार्य समान ही है तो 'सूर्य उदय हुआ, अब मध्यमें है, अब अस्त होता है' ऐसा लोग क्यों कहते हैं ? ॥ ५ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय ! जो कुछ तुमने पूछा है उसका उत्तर सुनो, सूर्य सात गणींमेंसे ही एक है तथापि उनमें प्रधान होनेसे उनकी विशेषता है ॥ ६ ॥ भगवान् विष्णुकी जो सर्वशक्तिमयी ऋक्, यजुः, साम नामकी परा शक्ति है वह वेदत्रयी ही सूर्यको ताप प्रदान करती है और [उपस्पना किये जानेपर] संसारके समस्त पाणेंको नष्ट कर देती है ॥ ७ ॥ हे हिज ! जगत्की स्थिति और पालनके लिये वे ऋक्, यजुः और सामस्थ्य विष्णु सूर्यके भीतर निवास करते हैं ॥ ८ ॥ प्रत्येक माससे जो-जो सूर्य होता है उसी-उसीमें वह वेदत्रयीरूपिणी विष्णुकी परा शक्ति निवास करती है ॥ ९ ॥ पूर्वाहमें ऋक्, मध्याहमें बृहद्रयन्तरादि यजुः तथा सार्यकालमें सामश्रुतियाँ सूर्यकी स्तृति करती है । ॥ १० ॥

^{ः 🐣 🖈} इस विषयमें यह श्रुति भी हैं---

अङ्गपेषा त्रयी विष्णोर्जन्यजुःसामसंज्ञिता । विष्णुशक्तिरवस्थानं सदादित्ये करोति सा ॥ ११ न केवलं रबे: शक्तिवैंच्यवी सा त्रयीमयी। ब्रह्माथ पुरुषो स्ट्रह्मययेतस्त्रवीपयम् ॥ १२ सर्गादौ ऋङ्भयो ब्रह्मा स्थितौ विष्णुर्यजुर्मयः। रुद्धः सामभयोऽन्ताय तस्मात्तस्याशृत्तिर्ध्वनिः ।। १३ एवं सा सान्विकी शक्तिवैंच्यवी या त्रवीमयी। आत्मसप्तगणस्थं तं भास्यत्तमधितिष्ठति ॥ १४ तया चार्थिष्टितः सोऽपि जाञ्चलीति खरश्मिभः । तमः समस्तजगतां नाशं नयति चाखिलम् ॥ १५ स्तुवन्ति चैनं मुनयो गन्धवैंगींयते पुरः। नृत्यन्त्योऽप्सरसो यान्ति तस्य बानु निशाचराः ॥ १६ वहन्ति पन्नगा सक्षैः क्रियतेऽभीवुसङ्ग्रहः । बालखिल्यास्तर्थवैनं परिवार्य समासते ॥ १७ नोदेता नास्तमेता च कदाचिकक्तिरूपधृक् । विष्णुर्विष्णोः पृथक् तस्य गणस्तप्तविधोऽप्ययम् ॥ १८ स्तम्पस्थदर्पणस्येच योऽयमासञ्चतां गतः। छायादर्शनसंयोगं स तं प्राप्नोत्यथात्मनः ॥ १९ एवं सा वैष्णवी शक्तिनैंबापैति ततो द्विज । मासानुमासं भारवन्तमध्यास्ते तत्र संस्थितम् ॥ २० पितृदेवमनुष्यादीन्स सदाप्याययग्रभुः।

परिवर्तत्यहोरात्रकारणं सविता द्विज ॥ २१ सूर्यरिक्तः सुबुम्णा यस्तर्यितस्तेन चन्द्रमाः । कृष्णपक्षेऽमरैः शश्वत्यीयते वै सुधामयः ॥ २२ पीतं तं द्विकरूं सोमं कृष्णपक्षश्चये द्विज । पिबन्ति पितरस्तेषां भास्करात्तर्पणं तथा ॥ २३

आदत्ते रहिमभिर्यन्तु क्षितिसंस्थं रसं रवि: ।

तमुत्स्जति भूतानां पुष्ट्यर्थं सस्यवृद्धये ॥ २४

यह ऋक्-यजु:-सामस्वरूपिणी वेदत्रयी भगवान् विष्णुका ही अङ्ग है। यह विष्णु-शक्ति सर्वदा आदिस्यमें

रहती है ॥ ११ ॥ यह त्रयोगयो वैष्णवी शक्ति केवल सुर्यहीकी ऑघहात्री

हो, सो नहीं; बल्कि बहुग, विष्णु और महादेव भी त्रवीसय हीं हैं।। १२ ।। सर्गके आदिमें ब्रह्म ऋङ्मय हैं, उसकी स्थितिके समय विष्णु यजुर्मय हैं तथा अन्तकारूमें स्ट्र साममय है। इसीलिये सामगानकी ध्वनि अपवित्र" मानी गयी है ॥ १३ ॥ इस प्रकार, वह त्रयीमयी सास्त्रिकी वैष्णवी

शक्ति अपने सामगणोमें स्थित आदित्यमें ही [अतिशय-रूपसे] अवस्थित होती है॥ १४॥ उससे अधिष्ठित सूर्यदेव भी अपनी प्रखर रहिममोंसे अत्यन्त प्रज्वलित होकर संसारके सम्पूर्ण अन्यकारको नष्ट कर देते हैं ॥ १५॥

उन सूर्यदेवकी मुनिगण स्तृति करते हैं, गन्धर्वगण

उनके सम्मुख यज्ञोगान करते हैं । अप्सराएँ नृस्य करती हुई चलती है, राक्षस रथके पीछे रहते हैं, सर्पगण रथका साज सजाते हैं और यक घोड़ोंकी बागडोर सैंभारते हैं तथा वालिखल्यादि रथको सब ओरसे घेरै रहते हैं ॥ १६-१७ ॥ त्रयोशक्तिरूप भगवान् विष्णुका न कभी उदय होता है और न अस्त [अर्थात् वे स्थायीरूपसे सदा विद्यमान रहते हैं] ये सात प्रकारके गण तो उनसे पृथक हैं ॥ १८ ॥ स्तम्भमें रूपे हुए दर्पणके निकट जो कोई जाता है उसीको अपनी खाया दिखायी देने लगती है।। १९ ॥ हे द्विज ! इसी प्रकार यह वैद्यावी शक्ति स्येके रथसे कभी चलायमान नहीं होती और प्रत्येक

स्थित होनेपर वह उसकी अधिष्ठात्री होती है।। २०॥ हे द्विज ! दिन और रात्रिके कारणस्वरूप भगवान् सूर्य पितृगण, देवगण और मनुष्यादिको सदा तप्त करते चूमते रहते हैं ॥ २१ ॥ सूर्यकी जो सुबुधा नामकी किरण है उससे शुक्रपक्षमें चन्द्रमाका पोषण होता है और फिर कुरुगपक्षमें उस अमृतमय चन्त्रमाकी एक-एक कलाका देवगण निरन्तर पान करते हैं॥२२॥ हे द्विज ! कृष्णपक्षके क्षय होनेपर [चतुर्दशीके अनन्तर] दो कलायुक्त चन्द्रमाका पितृषण पान करते हैं। इस प्रकार सूर्यद्वारा पितृगणका सर्पण होता है ॥ २३ ॥

मासमें पृथक्-पृथक् सूर्यके [परिवर्तित होकर] उसमें

सूर्य अपनी किरणोसे पृथिनीसे जितना जरु र्जीचता है उस सकको प्राणियोंकी पृष्टि और अन्नकी

^{*} रुद्रके नाराकारी होनेसे उनका साम अपवित्र माना गया है अतः सामगानके समय (रातमें) ऋक् तथा यजुर्वेदके अध्ययनका निषेध किया गया है। इसमें गौतमकी स्मृति प्रमाण है—'न सामध्यनावृत्यानुषी' अर्धीत् सामधानके समय ऋक्-यजुःका अध्ययन न करे ।

तेन त्रीणात्यशेषाणि भूतानि भगवात्रविः । पितृदेवमनुष्यादीनेवभाष्याययत्यसौ ॥ २५ पक्षतृप्तिं तु देवानी पितृणां चैव मासिकीम् । शक्षतृप्तिं च मत्यानां मैत्रेयाकंः प्रयक्कति ॥ २६

वृद्धिके लिये बरसा देता है ॥ २४ ॥ उससे मगवान् सूर्य समस्त प्राणियोंको आर्नान्दत कर देते हैं और इस प्रकार वे देव, मनुष्य और पितृगण आदि सभीका पोषण करते हैं ॥ २५ ॥ हे मैत्रेय ! इस रीतिसे सूर्यदेव देवताओंकी पाक्षिक, पितृगणकी मासिक तथा मनुष्योंकी नित्यप्रति तृप्ति करते रहते हैं ॥ २६ ॥

श्रीपराशरजी बोले-चन्द्रमाका

इति श्रीविक्युपुराणे द्वितीर्थेऽशे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

बारहवाँ अध्याय

नवप्रहोंका वर्णन तथा लोकान्तरसम्बन्धी व्याख्यानका उपसंहार

श्रीपरास्त उदाव

रथित्वकः सोमस्य कुन्दाभासस्य वाजिनः । वामदक्षिणतो युक्ता दश तेन चरत्यसौ ॥ वीध्याभयाणि ऋक्षाणि ध्रुवाधारेण वेगिना । ह्यासवृद्धिक्रमस्तस्य रञ्मीनां सवितुर्यथा ॥ अर्कस्पेय हि तस्याश्वाः सकुद्धका वहन्ति ते । कल्पमेकं मुनिब्रेष्ठ वारिगर्भसमुद्भवाः॥ क्षीणं पीतं सुरै: सोयमाध्यस्ययति दीप्तिमान् । मैत्रेयैककलं सन्तं रहिमनैकेन भास्करः ॥ क्रमेण येन पीतोऽसी देवैस्तेन निशाकरम् । आप्याययत्मनुद्रिनं भारकरो वारितस्करः ॥ सम्भृतं चार्थमासेन तत्सोमस्यं सुधामृतम् । पिबन्ति देवा मैत्रेय सुधाहारा यतोऽमराः ॥ 6 त्रयसिंशत्सहस्राणि त्रयसिंशच्छतानि च । प्रयक्षिंशत्तथा देवाः पिबन्ति क्षणहाकरम् ॥ कलाइयावशिष्टस्त प्रविष्टः सर्यमण्डलम् । अमाख्यरइमी बसति अमाबास्या ततः स्मृता ॥ अप्सु तस्मित्रहोरात्रे पूर्व विश्वति चन्द्रमाः । ततो बीरुत्स् वसति प्रयात्यकं ततः क्रमात् ॥ छिनत्ति वीरुधो यस्तु वीरुत्संस्थे निशाकरे । पत्रं वा पातयत्येकं ब्रह्महत्यों स विन्दति ॥ १० सोमं पश्चदशे भागे किश्चिच्छिष्टे कलात्मके । अपराह्ने पितृगणा जघन्यं पर्युपासते ॥ ११

पहियोबाला है, उसके बाम तथा दक्षिण और कुन्द-कुसुमके समान श्वेतवर्ण दस घोड़े जुते हुए हैं। सुवके आधारमर स्थित उस चेगशाली रथसे चन्द्रदेव भ्रमण करते है और नागवीधिपर आश्रित अश्विनी आदि नक्षत्रोका भोग करते हैं। सूर्यके समान इनकी किरणोंके भी घटने-बढ़नेका निश्चित क्रम है ॥ १-२ ॥ हे मुनिश्रेष्ट ! सूर्यके समान समुद्रगर्भसे उत्पन्न हुए उसके घोड़े भी एक बार जोत दिये जानेपर एक कल्पपर्यन्त रथ खींचते रहते है ॥ ३ ॥ हे मैत्रेय ! सुरगणके पान करते रहनेसे छीण हुए कलागात्र चन्द्रमाका प्रकाशमय सुयदिव अपनी एक किरणसे पुनः पोषण करते हैं ॥ ४ ॥ जिस क्रमसे देवगण चन्द्रमाका पान करते हैं उसी क्रमसे जलापहारी सुर्यदेव उन्हें शुक्रा प्रतिपदासे प्रतिदिन पुष्ट करते हैं॥ ५॥ हे मैत्रेय ! इस प्रकार आधे महीनेमें एकत्रित हुए चन्द्रमाके अमृतको देवगण फिर पीने लगते हैं क्योंकि देवताओंका आहार तो अमृत हो है ॥ ६ ॥ तैतीस हजार, वैतीस सी, तैतीस (३६३३३) देवगण चन्द्रस्थ अपृतका पान करते है ॥ ७ ॥ जिस समय दो कलामात्र रहा हुआ चन्द्रमा सुर्यमण्डलमें प्रवेश करके उसकी अमा नामक किरणमें रहता है वह तिथि अमावास्या कहलाती है ॥ ८ ॥ उस दिन राजिमें वह पहले तो जलमें प्रवेश करता है, फिर बुक्ष-लता आदिमें निवास करता है और तदनत्तर क्रमसे सूर्यमें चला जाता है।। १॥ वृक्ष और लता आदिमें चन्द्रमाकी स्थितिके समय (अमावास्याको) जो उन्हें काटता है अथवा उनका एक पत्ता भी तोड़ता है उसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है॥ १०॥ केवल पन्द्रहवीं कलारूप यत्किञ्चित् भागके बच रहनेपर उस श्रीण

पिबन्ति द्विकलाकारं शिष्टा तस्य कला तु या । सुधामृतमयी पुण्या तामिन्दोः पितरो मुने ॥ १२ निस्सतं तदमावास्यां गभस्तिभ्यः सुधामृतम् । मासं तृष्ट्रिमवाप्यायुवां पितरः सन्ति निर्वृताः । सौम्या बर्हिषदश्चैव अग्निष्ठाताश्च ते त्रिया॥ १३ एवं देवान् सिते पक्षे कृष्णपक्षे तथा पितृन् । वीरुधश्चामृतमयैः शीतैरप्परमाणुभिः ॥ १४ वीरुधौषधिनिष्यस्था मनुष्यपशुकीटकान् । आप्याययति शीतांशुः प्राकाश्याद्वादनेन तु ॥ १५ वाय्वशिद्रव्यसम्भूतो रथश्चन्द्रसुतश्च च। पिशङ्कैस्तुरगैर्युक्तः सोऽष्ट्राभिवायुवेगिभिः ॥ १६ सवस्त्र्यः सानुकर्षो युक्तो भूसम्पर्वहर्यैः । सोपासङ्गयताकस्तु शुक्रस्थापि रश्चो महान् ॥ १७ अष्ट्राश्चः काञ्चनः श्रीमान्धौमस्यापि रथो महान् । पन्तरागारुणैरश्वैः संयुक्तो वहिसम्भवैः ॥ १८ अष्ट्राभिः पाण्डरैर्युक्तो वाजिमिः काञ्चनो रथः । तस्मिस्तष्ट्रित वर्षान्ते राज्ञौ राज्ञौ बृहस्पति: ॥ १९ आकाशसम्भवैरश्वैः शबलैः स्यन्दनं युतम् । तमारुह्य शनैर्याति मन्दगामी शनैश्चरः ॥ २० स्वर्धानोस्तुरमा हुष्टौ भृङ्गाभा धूसरं रथम् । सकुद्यकास्त् मैत्रेय वहन्यविस्तं सदा ॥ २१ आदित्यात्रिस्सतो सहः सोमं गच्छति पर्वस् । आदित्यमेति सोमाद्य पुनः सौरेषु पर्वसु ॥ २२ तथा केतुरथस्याश्चा अप्यष्टौ वातरहसः । पलालधूमवर्णाभा लाक्षारसनिभासणाः ॥ २३ एते मया प्रहाणां वै तवाख्याता रथा नव । सर्वे ध्रवे महाभाग प्रबद्धा वायुरश्मिभिः ॥ २४

चन्द्रमाको पितृगण मध्याद्वोत्तर कारूमें चारो ओरसे घेर छेते हैं ॥ ११ ॥ हे मुने ! उस समय उस द्विकलाकार चन्द्रमाकी बची हुई अधृतमयी एक कलाका वे पितृगण, पान करते हैं ॥ १२ ॥ अमावास्याके दिन चन्द्र-रिमसे निकले हुए उस सुधामृतका पान करके अल्पन्त दृष्ठ हुए, सौम्य, बहिंषद् और अग्निशाता तीन प्रकारके पितृगण एक मासपर्यन्त सन्तुष्ट रहते हैं ॥ १३ ॥ इस प्रकार चन्द्रदेव सुष्ट्रपक्षमें देनताओंको और कृष्णपक्षमें पितृगणकी पुष्ट्रि करते हैं तथा अमृतपय शीतल जलकणोंसे लता-वृक्षादिका और लता-ओपधि आदि उत्पन्न करके तथा अपनी चन्द्रिकाद्वारा आहादित करके ने मनुष्य, पश्च, एवं कीट-पतंगादि सभी प्राणियोंका पीपण करते। है ॥ १४-१५ ॥

चन्द्रमाके पुत्र सुधका स्य वायु और अग्निषय द्रव्यका बना हुआ है और उसमें वायुके समान वेगशाली आठ पिशंग,वर्ण थोड़े जुते हैं॥ १६॥ वरूथ², अनुकर्ष², उपासङ्ग² और पताका तथा पृथिवीसे उत्सन हुए मोड़ोंके सहित शुक्रका रथ भी अति महान् है॥ १७॥ तथा मङ्गलका अति शोभायनान सुवर्ण-निर्मित मधान् रथ भी अग्निसे उत्पन्न हुए, पद्मराग-मणिके समान, अरुणवर्ण, आठ घोड़ोसे युक्त है॥ १८॥ वो आठ पाण्डुरवर्ण धोड़ोसे युक्त सुवर्णका रथ है उसमें वर्षके अन्तमें प्रत्येक राशिमें नृहस्पतिजी विराजनान होते हैं॥ १९॥ आकाशसे उत्पन्न हुए जिच्जवर्ण घोड़ोसे युक्त रथमें आरूढ़ होकर मन्द्रणामी श्रीश्ररजी धीरे-धीर चरुते हैं॥ २०॥

राहुका रथ धूसर (मटियाले) वर्णका है, उसमें धमरके समान कृष्णवर्ण आट बोड़े जुते हुए हैं। हे मैत्रेय ! एक बार जोत दिये जानेपर वे मोड़े पिरत्तर चलते रहते हैं॥ २१॥ चन्द्रमधीं (मूर्णिमा) पर यह राहु सूर्यमें निकलकर चन्द्रमाके पास आता है तथा सौरपवीं (अमावास्था) पर यह चन्द्रमासे निकलकर सूर्यके निकट जाता है॥ २२॥ इसी प्रकार केतुके रथके वासुवेगशाली आढ घोड़े भी पुआलके धुएँकी-सी आभावाले तथा लाखके समान लाल रहुके हैं॥ २३॥

हे महाभाग ! मैंने तुमसे यह नवीं ब्रहोंके स्थॉका वर्णने किया; ये सभी वायुमयी डोरीसे भुवके साथ बैंधे हुए

१. रंधकी रक्षाके लिये बना हुआ खोहेका आवरण । २. रथका नेचेका चाग । ३. शस्त्र रसभेका स्थान । 🗥

अहर्क्षताराधिक्ययानि धृवे बद्धान्यशेषतः । भ्रमन्युचितचारेण मैत्रेयानिलरिहमभि: ॥ २५ यावन्यश्रैव तारास्तास्तावन्तो वातरश्मवः । सर्वे ध्रवे निबद्धास्ते भ्रमन्तो भ्रामयन्ति तम् ॥ २६ तैल्यीडा यथा चक्रं भ्रमन्तो भ्रामयन्ति वै । तथा भ्रमन्ति ज्योतींषि वातविद्धानि सर्वशः ॥ २७ अलातचक्रवद्यान्ति वातचक्रेरितानि तु । यस्माञ्ज्योतींषि वहति प्रवहस्तेन स स्मृतः ॥ २८ शिशुमारस्तु यः प्रोक्तः स ध्रुवो यत्र तिष्ठति । सन्निवेशं च तस्यापि शृणुषु मुनिसत्तम् ॥ २९ यदह्रा कुरुते पापं तं दुष्टा निश्चि मुच्यते । यायन्यश्चेव तारास्ताः दिश्माराश्चिता दिवि । तावन्येव तु वर्षाणि जीवत्यभ्यधिकानि च ॥ ३० उत्तानपादस्तस्याधो विज्ञेयो ह्यत्तरो हुनुः। यज्ञोऽधरश्च विजेबो धर्मो मृद्धानमाश्चितः ॥ ३१ हृदि नारायणश्चास्ते अश्विनी पूर्वपादयोः । वरुणश्चार्यमा चैव पश्चिमे तस्य सक्थिनी ॥ ३२ शिश्रः संबत्सरस्तस्य मित्रोऽपानं समाश्रितः ॥ ३३ पुच्छेऽग्रिश्च महेन्द्रश्च कश्यपोऽध ततो धुवः। तारका शिशुमारस्य नास्तमेति चतुष्टयम् ॥ ३४ इत्येथ सन्निवेद्गोऽयं पृथिव्या ज्योतियां तथा । द्वीपानामुद्धीनो च पर्वतानां च कीर्तितः ॥ ३५ वर्षाणां च नदीनां च ये च तेषु वसन्ति वै । तेषां स्वरूपमाख्यातं सङ्ग्रेयः श्रूयतां पुनः ॥ ३६ यदम्ब वैष्णवः कायस्ततो विप्र वसन्धरा । पराकारा समुद्धता पर्वताब्ध्यादिसंयुता ॥ ३७ ज्योतीषि विष्णुर्भुवनानि विष्णु-र्वनानि विष्णुर्गिरयो दिशश्च। नद्यः समुद्राश्च स एव सर्व यदस्ति यन्नास्ति च वित्रवर्य ॥ ३८

ज्ञानस्वरूपो भगवान्यतोऽसा-

वशेषमूर्तिर्न

त

वस्तुभृतः ।

भूवको भूमाते रहते हैं ॥ २६ ॥ जिस प्रकार तेस्त्री स्त्रोग स्वयं युमते हुए कोल्हुको भी युमाते रहते हैं उसी प्रकार समस्त यहगण वायुसे बैध कर घूमते रहते है ॥ २७ ॥ क्योंकि इस वायुचक्रसे प्रेरित होकर समस्त प्रहशण अलातचक्र (बनैती) के समान घुपा करते हैं, इसलिये यह 'प्रयह' कहलाता है ॥ २८ ॥ जिस जिज्ञुमारचक्रका पहले वर्णन कर चुके हैं, तथा जहाँ धूब स्थित है, हे मुनिश्रेष्ठ ! अब तुम उसकी स्थितिका वर्णन सुनो ॥ २९ ॥ रात्रिके समय उनका दर्धन करनेसे मनुष्य दिनमें जो कुछ पापकर्म करता है उनसे मुक्त हो। जाता है तथा आकाशमण्डलमें जितने तारे इसके आश्रित है उतने ही अधिक वर्ष यह जीवित रहता है।। ३०॥। उतानपाद उसकी ऊपरकी हुनू (ठोड़ी) है और यज्ञ नीचेकी तथा धर्मने उसके मस्तकपर अधिकार कर रखा है ॥ ३१ ॥ उसके हृदय-देशमें नारायण है, दोनों चरणोंमें अश्विनीकृपार है तथा जंबाओंमें वरूण और अर्थमा है ॥ ३२ ॥ संवत्सर उसका जिन्न है, मित्रने उसके अपान-देशको आश्रित कर रखा है, तथा अप्रि, महेन्द्र, कश्यप और धृव पृच्छभागमें स्थित है। शिशुभारके पुच्छभागमें स्थित ये अग्नि आदि चार तारे कभी अस्त नहीं होते ॥ ३३-३४ ॥ इस प्रकार मैंने तुमसे पृथियी, यहगण, द्वीप, समृद्र, पर्वत, वर्ष और मदियोका तथा जी-जो उनमें बसड़े हैं उन सभीके स्वरूपका वर्णन कर दिया। अब इसे संक्षेपसे फिर सुनी ॥ ३५-३६ ॥ हे विप्र ! भगवान् विष्णुका जो मृतंरूप जल है उससे पर्वत और समुद्रादिके सहित कमरूके समान आकारवारी पृथिवी उतात हुई ॥ ३७ ॥ हे विष्रवर्ष ! तारागण, त्रिभुवन, वन, पर्वत, दिशाएँ, नदियाँ और समुद

सभी भगवान् विष्ण् हो है तथा और भी जो कुछ है अथवा

नहीं है वह सब भी एकमात्र वे ही हैं॥ ३८॥ क्योंकि

भगवान् विष्णु ज्ञानस्वरूप हैं इसलिये वे सर्वमय है, परिच्छित्र पदार्थाकार नहीं हैं। अतः इन पर्वत, समुद्र और

हैं ॥ २४ ॥ हे मैत्रेय ! समस्त ग्रह, नक्षत्र और तारामण्डल वायुमर्या रुजुसे भूवके साथ वैधे हुए यथोचित प्रकारसे

घुमते रहते हैं॥ २५॥ जितने तारायण हैं उतनी ही

वायुमयी डोरियाँ है। उनसे बैधकर वे सब स्वयं धूमते तथा

ततो हि शैलाब्धिधरादिभेदा-ञ्जानीहि विज्ञानविजुम्भितानि ॥ ३९ त शुद्धं निजरूपि सर्व कर्मक्षये ज्ञानम्पास्तदोषम् । तदा हि सङ्कल्पतरोः फलानि भवन्ति नो वस्तुषु वस्तु भेदाः ॥ ४०

वस्त्वस्ति किं कुत्रचिदादिमध्य-पर्यन्तहीनं सततैकरूपम् ।

यद्यान्यथात्वं द्विज वाति भूयो

न तत्तथा तत्र कुतो हि तत्त्वम् ॥ ४१ मही घटत्वं घटतः कपालिका

कपालिका चूर्णरजस्ततोऽणुः । जनैः खकर्मस्तिपितात्प्रनिश्चर्य-

रालक्ष्यते ब्रुहि किमन्न वस्तु ॥ ४२

तस्मान्न विज्ञानमृतेऽस्ति किञ्चि-

त्क्रचित्कदाचिद्द्विज वस्तुजातम् ।

निजकम्भेट-विज्ञानमेक विभिन्नचित्तैर्बह्धाभ्युपेतम्

ज्ञानं विशुद्धं विमलं विशोक-मशेषलोभादिनिरस्तसङ्गम् ।

एक सदैकं परमः परेशः

स वासुदेवो न यतोऽन्यदस्ति ॥ ४४

सद्भाव एवं भवतो मयोक्तो

ज्ञानं यथा सत्यपसत्यमन्यत् । यत्संव्यवहारभूतं एतन्

तत्रापि चोक्तं भुवनाश्चितं ते ॥ ४५

पशुर्विद्धिरशेषऋत्विक यज्ञ: सोमः सुराः खर्गमयश्च कामः ।

इत्यादिकमश्चितमार्गदुष्टं

भूरादिभोगाश्च फलानि तेवाम् ॥ ४६

यद्यैतद्भवनगरं मधा तवोक्तं सर्वत्र त्रजित हि तत्र कर्मवश्यः ।

ज्ञात्वेवं ध्वमचलं सदैकरूपं तत्कुर्याद्विशति हियेन वासुदेवम् ॥ ४७ | वासुदेवमें लीन हो जाय ॥ ४० ॥

पृथियी आदि भेदोंको तुम एकमात्र विज्ञानका हो विलास जानो ॥ ३९ ॥ जिस समय जीव आत्मज्ञानके द्वारा दोषरहित होकर सम्पूर्ण कमीका क्षय हो जानेसे अपने

शुद्ध-स्वरूपमे स्थित हो जाता है उस समद आत्मवस्तुमें संकल्पवृक्षके फलरूप पदार्थ-मेदोकी प्रतीति नहीं

होती ॥ ४० ॥

है दिज ! कोई भी घटादि वस्तु है ही कहाँ ? आदि, मध्य और अन्तसे रहित नित्य एकरूप वित् ही तो सर्वत्र ज्याप्त है । जो वस्तु पुनः-पुनः बदलती रहती है, पुर्ववत् नहीं रहती, उसमें वास्तविकता ही बया है ? ॥ ४१ ॥ देखो, मृत्तिका ही घटरूप हो जाती है और फिर वर्डा घटसे कंपाल, कपालसे चूर्णरब और रजसे अगुरूप हो जाती है। तो फिर बताओ अपने कमेंकि वशीभृत हुए यनुष्य आत्मस्वरूपको भूलकर इसमें कौन-सी सत्य यस्तु देखरो हैं ॥ ४२ ॥ अतः हे द्विज ! विज्ञानसे अतिरिक्त कमी कहीं कोई पदार्थादि नहीं हैं। अपने-अपने कमेंकि मेदसे भिन्न-भिन्न चित्तोंद्वारा एक ही विज्ञान नाना प्रकारसे मान लिया यया है ॥ ४३ ॥ वह विज्ञान अति विश्वद्ध, निर्मल, निःशोक और लेभादि समस्त दोषोंसे रहित है। वही एक सत्स्वरूप परम परमेश्वर वासुदेव हैं, बिससे पृथक् और

इस प्रकार मैंने तुमसे यह परमार्थका वर्णन किया है, केवल एक ज्ञान ही सत्य है, उससे भिन्न और सब असला है। इसके अतिरिक्त जो केवल व्यवहारमात्र है उस विभुवनके विषयमें भी मैं तुमसे कह चुका ॥ ४५ ॥ [इस इान-मार्गके अतिरिक्त] मैंने कर्म-मार्ग-सम्बन्धी

यज्ञ, पञ्च, चिंह, समस्त ऋत्विक, सोम, सुरगण तथा स्वर्गमय कामना आदिका भी दिग्दर्शन करा दिया। भुलोंकादिके सम्पूर्ण भोग इन कर्म-कलापेकि ही फल

है ॥ ४६ ॥ यह जो मैंने तुमसे द्विभुबनगत खोकोका वर्णन किया है इन्होंमें जीव कर्मबदा पुमा करता है ऐसा

जानकर इससे विरक्त हो मनुष्यको वही करना चाहिये जिससे धुव, अचल एवं सदा एकरूप भगवान्

COUNTY THE

कोई पदार्थ नहीं है ॥ ४४ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेंऽशे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवाँ ग्रध्याय

भरत-चरित्र

श्रीमैंज्य उद्यान
भगवन्सम्यगाख्यातं यत्पृष्टोऽसि मया किल ।
भूसमुद्रादिसरितां संस्थानं प्रहसंस्थितिः ॥ १
विष्णवाद्यारं यथा वैतत्रैलोक्यं समवस्थितम् ।
परमार्थस्तु ते प्रोक्तो यथा ज्ञानं प्रधानतः ॥ १
यत्त्वेतद्भगवानाह भरतस्य महीपतेः ।
श्रोतुमिच्छामि चरितं तन्यमाख्यातुमहींस ॥ ३
भरतः स महीपालः शालग्रामेऽवसत्किल ।
योगयुक्तः समाधाय वासुदेवे सदा मनः ॥ ४
पुण्यदेशप्रभावेण ध्यायतश्च सदा हरिम् ।
कथं तु नाऽभवन्युक्तिर्यदभूत्स द्विजः पुनः ॥ ५
विप्रत्वे च कृतं तेन यद्भृयः सुमहात्यना ।
भरतेन मुनिश्रेष्ठ तत्सर्वं वक्तुमहींस ॥ ६
श्रीपग्रस्यक्रव्य

स उवास चिरं कालं मैत्रेय पृथिवीपतिः ॥ ७ अहिंसादिष्वशेषेषु गुणेषु गुणिनां वरः । अवाप परमां काष्ठां मनसञ्चापि संयमे ॥ ८ यज्ञेशाच्युत गोविन्द माधवानन्त केशव । कृष्ण विष्णो हषीकेश वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ ९ इति राजाह भरतो हरेर्नामानि केवलम् । नान्यज्ञगाद मैत्रेय किञ्चित्स्वप्रान्तरेऽपि च । एतत्पदन्तदर्थं च विना नान्यदिचन्तयत् ॥ १० समित्युष्पकुशादानं चक्रे देवक्रियाकृते । नान्यानि चक्रे कर्माणि निस्सङ्गो योगतापसः ॥ १९ जगाम सोऽभिषेकार्थमेकदा तु महानदीम् ।

सस्रौ तत्र तदा चक्रे स्नानस्यानन्तरक्रियाः ॥ १२

आसन्नप्रसवा ब्रह्मनेकैव हरिणी वनात्॥ १३

अथाजगाम तत्तीरं जलं पातुं पिपासिता ।

शालपामे महाभागो भगवत्र्यस्तमानसः ।

भ्रामेनेकजी बोले—है भगवन् ! मैंने पृथिवी, समुद्र, निदयों और प्रहणणकी स्थिति आदिके विषयमें जो कुछ पूछा था सो सब आपने वर्णन कर दिया ॥ १ ॥ उसके साथ ही आपने यह भी बतला दिया कि किस प्रकार यह समस्त विलोकी भगवान् विष्णुके ही आश्रित है और कैसे परमार्थस्वरूप ज्ञान ही सबमें प्रवान है ॥ २ ॥ किन्तु भगवन् ! आपने पहले जिसकी चर्चा की थी वह राजा भरतका चरित्र में सुनना चाहता हूँ, कृषा करके कहिये ॥ ३ ॥ कहते हैं, वे राजा भरत निरन्तर योगयुक्त होकर भगवान् वासुदेवमें चित्त लगाये शालआमक्षेत्रमें रहा करते थे ॥ ४ ॥ इस प्रकार पुण्यदेशके प्रभाव और हरि-चिन्तमसे भी उनके मुक्ति क्यों नहीं हुई, जिससे उन्हें फिर ब्राह्मणका जन्म लेना पड़ा ॥ ५ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! ब्राह्मण होकर भी उन महात्मा भरतजीने पित्र जो कुछ किया वह सब आप कृपा करके मुझसे कहिये ॥ ६ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैत्रेय! वे महाभाग पृथिवीपति भरतजी भगवान्में चित्त लगाये विस्कालतक शालग्रामक्षेत्रमें रहे ॥ ७ ॥ गुणवानोंमें श्रेष्ठ उन भरतजीने अहिंसा आदि सम्पूर्ण गुण और मनके संयममें परम उत्कर्ष लाभ किया ॥ ८ ॥ हे यहेश ! हे अच्युत ! हे गोविन्द ! हे माथव ! हे अनला ! हे केशव ! हे कृष्ण ! हे विष्णो ! हे हणिकेश ! हे वासुदेव ! आपको नमस्कार है —इस प्रकार राजा भरत निरत्तर केवल भगवजामीका ही उद्यारण किया करते थे । हे मैत्रेय ! वे स्वप्नमें भी इस पदके अतिरिक्त और कुछ चित्तन हो करते थे और न कभी इस पदके अतिरिक्त और कुछ चित्तन हो करते थे ॥ १-१० ॥ वे निःसंग, योगयुक्त और तपत्वी राजा भगवान्की पूजाके लिये केवल समिथ, पुष्प और कुशका ही सञ्चय करते थे । इसके अतिरिक्त वे और कोई कमें नहीं करते थे ॥ ११ ॥

एक दिन वे स्नानके लिये नदीपर गये और वहाँ स्नान करनेके अनन्तर उन्होंने स्नानोत्तर क्रियाएँ कों॥ १२॥ हे श्रह्मन्! इतनेहीमें उस नदी-तीरपर एक आसलप्रस्था (शोध ही बच्चा जननेवाली) प्यासी हरिणी कामेसे जल पीनेके लिये आगी॥ १३॥ ततः समभवतत्र पीतप्राये जले तथा। सिंहस्य नादः सुमहान्सर्वप्राणिभयङ्करः ॥ १४ ततः सा सहसा त्रासादाप्रता निप्रगातटम्। अत्युचारोहणेनास्या नद्यां गर्भः पपात ह ॥ १५ तमूह्यमानं वेगेन वीचिमालापरिप्रतम्। जप्राह स नृषो गर्भात्पतितं मृगपोतकम् ॥ १६ गर्भप्रच्युतिदोयेण प्रोत्तुङ्गाक्रमणेन च। मैत्रेय सापि हरिणी पपात च ममार च ॥ १७ हरिणीं तां विलोक्याथ विपन्नां नुपतापसः । मृगपोतं समादाय निजमाश्रममागतः ॥ १८ चकारानुदिनं चासौ मृगपोतस्य वै नृपः । पोषणं पुष्पमाणश्च स तेन ववृधे मुने ॥ १९ चचाराश्रमपर्यन्ते तुणानि गहनेषु सः। द्रं गत्वा च ज्ञाद्लिबासादध्याययौ पुनः ॥ २० प्रातर्गत्वातिद्रं च सायमायात्यश्राश्रमम्। पुनश्च भरतस्याभूदाश्रमस्योटजाजिरे ॥ २१ तस्य तस्मिन्युगे दुरसमीपपरिवर्तिनि । आसीग्रेतः समासक्तं न ययावन्यतो द्विज ॥ २२ विमुक्तराज्यतनयः प्रोन्झिताशेषबान्धवः। ममत्वं स चकारोचैस्तस्मिन्हरिणवारुके ॥ २३ किं वुकैर्भक्षितो व्यार्ज्ञैः कि सिंहेन निपातितः । चिरायमाणे निष्कान्ते तस्यासीदिति मानसम् ॥ २४ एषा वसुमती तस्य खुराप्रक्षतकर्बुरा। प्रीतये पम जातोऽसौ क पमैणकबालकः ॥ २५ विषाणाप्रेण महाहं कण्डुयनपरो हि सः। क्षेपेणाध्यागतोऽरण्यादपि मां सुखिष्यति ॥ २६ एते लुनशिखास्तस्य दशनैरचिरोद्धतैः।

कुशाः काशा विराजन्ते बटवः सामगा इव ॥ २७

प्रीतिप्रसन्नवदनः पार्श्वस्थे वाधवन्तुगे ॥ २८

इत्थं चिरगते तस्मिन्स चक्रे मानसं भुनिः ।

उस समय जब यह प्रायः जल पी चुको थी, वहाँ सब प्राणियोंको भयभीत कर देनेवाली सिंहकी गम्भीर गर्जना सुनायी पड़ी ॥ १४ ॥ तब वह अत्यन्त भयभीत हो अकस्मात् उक्कलक नदीके तटपर यह गयी; अतः अत्यन्त उचस्थानपर चढ़नेके कारण उसका गर्भ नदीमें गिर गया ॥ १५ ॥ नदीकी तरङ्गमालाओंमें पड़कर बहते हुए उस गर्भ-

नदीकी तरङ्गमालाओंमें पड़कर बहते हुए उसे गर्भ-भ्रष्ट मृगबालकको राजा भरतने पकड़ लिया ॥ १६ ॥ है मैत्रेय ! गर्भपातके दोषसे तथा बहुत ऊँचे उछलके कारण वह हरिणी भी पछाड़ खाकर गिर पड़ी और मर गयी ॥ १७ ॥ उस हरिणीको मंरी हुई देख तपस्वी भरत उसके बसेको अपने आश्रमपर ले आये ॥ १८ ॥ है मने ! फिर राजा भरत उस मृगछीनेका निलामित

पालन-पोषण करने रूगे और वह भी उनसे पोषित होकर दिन-दिन बढ़ने लगा ॥ १९ ॥ वह बढ़ा कभी तो उस आश्रमके आसपास ही घास चरता रहता और कभी बनमें दूरतक जाकर फिर सिंडके भयसे लौट आता ॥ २० ॥ प्रातःकाल यह बहुत दूर भी चला जाता, तो भी सायंकालको फिर आश्रममें ही लौट आता और भरतजींके आश्रमको पर्णशालाके आँगनमें पड़ रहता ॥ २१ ॥

हे द्विज ! इस प्रकार कभी पास और कभी दूर रहनेवाले उस मुगमें ही राजाका चित्त सर्वदा आतक्त रहने लगा, वह अन्य विषयोंकी और जाता ही नहीं था ॥ २२ ॥ जिन्होंने सम्पूर्ण राज-पाट और अपने पुत्र तथा बन्धु-बान्धवोंको छोड़ दिया था वे ही भरतजो उस हरिएके बर्षेपर अत्यत्त ममता करने लगे॥ २३॥ उसे बाहर जानेके अनन्तर यदि सीटनेमें देरी हो जाती तो ने यन-ही-मन सोचने लगते 'अहो ! उस बचेको आज किसी भेड़ियेने तो नहीं खा लिया ? किसी सिंहके पक्षेमें तो आज वह नहीं पड़ गया ? ॥ २४ ॥ देखो, उसके खुरोंके चिहाँसे वह पृथियी कैसी चित्रित हो रही है ? मेरी ही प्रसन्नताके लिये उत्पन्न हुआ वह मुगर्छना न जाने आज कहाँ रह गया है ? ॥ २५ ॥ क्या वह बनसे कुझलपूर्वक लौटकर अपने सींगोंसे मेरी भूजाको खुजलाकर मुझे आनन्दित करेगा ? ॥ २६ ॥ देखो, उसके नवजात दाँतीसे कटी हुई शिखाबाले ये कुश और काश सामाध्यायी [शिखाहीन] ब्रह्मचारियेकि समान कैसे सुशोधित हो रहे हैं ? ॥ २७ ॥ देखे गये हुए उस बसेके निमित्त भरत मुनि इसी प्रकार विन्ता करने लगते थे और

समाधिभङ्कस्तस्यासीत्तन्ययत्वादुतात्पनः । सन्यक्तराज्यभोगद्धिस्वजनस्यापि भूपतेः ॥ २९ चपलं चपले तस्मिन्द्रस्यं दरगामिनि । मुगपोतेऽभवश्चित्तं स्थैर्यवत्तस्य भूपतेः ॥ ३० कालेन गच्छता सोऽथ कालं चक्रे महीपति: । पितेव सास्त्रं पुत्रेण मृगपोतेन वीक्षितः ॥ ३१ मृगमेव तदाद्राक्षीत्यजन्त्राणानसाविष । तन्मयत्वेन मैत्रेय नान्यत्किञ्चिदचिन्तयत् ॥ ३२ ततश्च तत्कालकृतां भावनां प्राप्य तादशीम्। जम्बूमार्गे महारण्ये जातो जातिस्मरो मृग: ॥ ३३ जातिस्मरत्वादुद्विग्नः संसारस्य द्विजोत्तमः। विहाय मातरं भूयः शालग्राममुपाययौ ॥ ३४ शुष्कैस्तुणैसाथा पणैः स कवंत्रात्मपोषणम् । मुग़त्वहेतुभूतस्य कर्मणो निष्कृति ययौ ॥ ३५ तत्र चोत्सृष्टदेहोऽसी जज्ञे जातिस्मरो द्विजः । सदाचारवतां शुद्धे योगिनां प्रवरे कुले ॥ ३६ सर्वविज्ञानसम्पन्नः सर्वशास्त्रार्थतन्त्रवित् । अपञ्चलस च मैत्रेय आत्मानं प्रकृतेः परम् ॥ ३७ आत्मनोऽधिगतज्ञानो देवादीनि महामुने। सर्वभूतान्यभेदेन स ददर्श तदात्मनः ॥ ३८ न ददर्श च कर्माणि शास्त्राणि जगृहे न च ॥ ३९ तद्य्यसंस्कारगुणं प्राम्यवाक्योक्तिसंश्रितम् ॥ ४०

न पपाठ गुरुप्रोक्तं कृतोपनयनः श्रुतिम् । उक्तोऽपि बहुदाः किञ्चिजडवाक्यमभाषतः। अपध्यस्तवपुः सोऽपि मिलनाम्बरधृन्द्वजः।

सम्मानना परां हानि योगद्धें: कुरुते यत: । जनेनावमतो योगी योगसिद्धिं च विन्टति ॥ ४२

क्रिजदत्तान्तरः सर्वैः परिभृतः स नागरैः ॥ ४१

जब वह उनके निकट आ जाता तो उसके प्रेमसे उनका मुख खिल जाता था ॥ २८ ॥ इस प्रकार उसीयें आसक्तचित्त रहनेसे, राज्य, भोग, समृद्धि और स्वजनोंकी ल्याग देनेबाले भी राजा भरतको समाधि भेग हो गयी॥ २९॥ इस राजाका स्थिर चित्त उस मुगके चानल होनेपर बञ्चल हो जाता और दुर चले जानेपर दुर चला जाता ॥ ३० ॥

कालान्तरमे राजा भरतमे, उस मुगवालकद्वारा पुत्रके सबल नयनोंसे देखे जाते हुए पिताके समान अपने प्राणींका त्याम किया ॥ ३१ ॥ हे मैजेय ! राजा भी प्राण **औ**डते समय क्षेत्रवश उस मगको हो देखता रहा तथा उसीमें तन्मय रहनेसे उसने और कुछ भी चिन्तन नहीं किया ॥ ३३ ॥ तदननार, उस समयकी सुदृङ् भावभक्ते कारण बहु जम्बुमार्ग (काळज्ञरपर्वत) के घोर वनमें अपने पूर्वजन्मकी स्मृतिसे युक्त एक मग हुआ ॥ ३३ ॥ है द्विजोत्तम । अपने पूर्वजन्मका स्मरण रहनेके कारण वह संसारसे उपरत हो गया और अपनी माताको छोड़कर फिर शालकामक्षेत्रमें आकर ही रहने लगा ॥ ३४ ॥ वहाँ सुन्ने थास-फुँस और पत्तीसे ही अपना दारीर-पोषण करता हुआ। वह अपने मुगल्य-प्राप्तिके हेतुभूत कमीका निराकरण करने लगा ॥ ३५ ॥

तदनन्तर, उस दारीरको छोड्कर उसने सदाचार-सम्पन्न योगियोंके पवित्र कुलमें ब्राह्मण-जन्म ग्रहण किया। उस देहमें भी उसे अपने पूर्वजन्मका स्मरण बना रहा ॥ ३६ ॥ हे मैत्रेय ! वह सर्वविज्ञानसम्पन्न और समस्त शास्त्रोंके मर्गको जाननेवाला था तथा अपने आत्माको निरन्तर प्रकृतिसे परे देखता था ॥ ३७ ॥ हे पहामुने ! आहाज्ञानसम्पन्न होनेके कारण वह देवता आदि सम्पूर्ण प्राणियोंको अपनेसे अभिन्नरूपसे देखता था ॥ ३८ ॥ उपनयन-संस्कार हो जानेपर वह गुरुके पदानेपर भी वेद-पाठ नहीं करता था तथा न किसी क्योंकी ओर ध्यान देता और न कोई अन्य शास्त्र ही. पढ़ता था ॥ ३९ ॥ जब कोई उससे बहुत पुछताछ करता तो जडके समान कुछ असंस्कृत, असार एवं ब्रामीण वाक्योंसे मिले हुए बचन बोल देता॥ ४०॥ निरन्तर मैला-कुचैला शरीर, मिलन वस्त्र और अपरिमार्जित दन्तयतः स्हनेके कारण वह बाह्मण सदा अपने नगरनिवासियोसे अपमानित होता रहता था ॥ ४१ ॥

हे मैंत्रेय ! योगश्रीके लिये सबसे अधिक हानिकारक सम्मान ही है, जो योगी अन्य मनुष्योंसे अपपानित होता है

तस्माचरेत वै योगी सतां धर्ममदूषयन्। जना यथायमन्येरत्गच्छेयुनैव सङ्गतिम् ॥ ४३ हिरण्यगर्भवचनं विचिन्त्येत्थं महामतिः। आत्मानं दर्शयामास जडोन्पत्ताकृति जने ॥ ४४ भुद्धक्ते कुल्पायबीह्यादिशाकं वन्यं फलं कणान् । यद्यदाप्रोति सुबहु तदत्ते कालसंयमम् ॥ ४५ पितर्युपरते सोऽध भ्रातभातुव्यवान्धवै:। कारितः क्षेत्रकर्मादि कदन्नाहारपोषितः ॥ ४६ सत्क्षपीनावयवो जडकारी च कर्मणि। सर्वलोकोपकरणं बभूवाहारवेतनः ॥ ४७ तं तादुशमसंस्कारं विष्ठाकृतिविचेष्टितम् । क्षता पृषदराजस्य काल्यै पशुमकल्पयत् ॥ ४८ रात्रौ तं समलङ्कल्य वैदासस्य विधानतः। अधिष्ठितं महाकाली ज्ञात्वा योगेश्वरं तथा ॥ ४९ ततः खद्भं समादाय निवितं निवित् सा तथा । **अ्तारं क्रुरकर्माणमन्ध्रिनत्कण्ठम्**लतः । स्वपार्षदयुता देवी पर्पो रुधिरमुल्बणम् ॥ ५० ततस्तीवीरराजस्य प्रयातस्य महात्मनः। विष्टिकर्ताथ मन्येत विष्टियोग्योऽयमित्यपि ॥ ५१ तं तादशं महात्मानं भस्मक्रश्रमिवानलम् । क्षता सौवीरराजस्य विष्टियोग्यममन्यतः ॥ ५२ स राजा दिविकारूढो गन्तुं कृतमतिर्द्धिज । बभूवेश्वमतीतीरे कपिलर्षेवंराश्रमम् ॥ ५३ श्रेयः किमन्न संसारे दुःखप्राये नृणापिति । प्रष्टुं तं मोक्षधर्मज्ञं कपिलाख्यं महामुनिम् ॥ ५४ उवाह शिविकां तस्य क्षतुर्वचनचोदितः। नृणां विष्टिगृहीसानामन्येषां सोऽपि मध्यगः ॥ ५५ गृहीतो विष्टिना विप्रः सर्वज्ञानैकभाजनः । जातिस्मरोऽसौ पापस्य क्षयंकाम उबाह ताम् ॥ ५६ ययौ जडमतिः सोऽय युगमात्रावलोकनम् । कुर्वन्मतिमता श्रेष्ठस्तदन्ये त्वरितं ययुः ॥ ५७

योगीको, सन्धार्गको दूषित न करते हुए ऐसा आचरण करना चाहिये जिससे लोग अपमान करें और संगतिसे दूर रहें ॥ ४३ ॥ हिरण्यगर्थके इस सारयुक्त बचनको स्मरण रखते हुए वे महामति विश्वर अपने-आपको लोगोंमें जह और उत्पत्त-सा ही प्रकट करते थे ॥ ४४ ॥ कुल्याय (जी आदि) घान, शाक, जंगली फल अथवा कम आदि जो उसीको खा लेते और अपना कालक्षेप करते रहते ॥ ४५ ॥

वह शीव ही सिद्धि लाभ कर लेता है।।४२॥ अतः

फिर पिताके झान्त हो जानेपर उनके भाई-बन्धु उनका सड़े-गर्छ अससे पोषण करते हुए उनसे खेती-बारीका कार्य कराने लगे ॥ ४६ ॥ वे बैलके समान पुष्ट दारीखाले और कमीमें जडवत् निश्चेष्ट थे । अतः केवल आहारमात्रसे हो वे सब लोगोंके यन बन जाते थे । [अर्थात् सभी लोग उन्हें आहारमात्र देकर अपना-अपना काम निकाल लिया करते थे] ॥ ४७ ॥

उन्हें इस प्रकार संस्कारशून्य और ब्राह्मणवेषके विरुद्ध आचरणवाला देख रात्रिक समय पृषतराजके सेवकोन बिलिकी विधिसे सुसज्जितकर कालीका बलिपशु बनाया। किन्तु इस प्रकार एक परमयोगीश्वरको बलिके लिये उपस्थित देख महाकालीने एक तीक्ष्म खड्स ले उस क्रूरकर्मा राजसेवकका गला काट डाला और अपने पार्षदीसहित उसका तीखा राधिर पान किया। ४८—५०।

तदनत्तर, एक दिन महात्मा सौबोरएक कहीं जा रहे थे। उस समय उनके बेगारियोंने समझा कि यह भी बेगारके हो योग्य है॥ ५१ ॥ राजाके सेवकोंने भी भस्ममें छिपे हुए अग्निके समान उन महात्माका रङ्ग-बङ्ग देखकर उन्हें बेगारके योग्य समझा॥ ५२॥ हे द्विज। उन सौबीरएजिने मोक्षधर्मके ज्ञाता महामुनि कपिलसे यह पूछनेके लिये कि 'इस दुःखनय संसारमें मनुष्योंका श्रेय किसमें हैं शिबिकापर बढ़कर इश्वुमती नदीके किनारे उन महर्षिके आश्रमपर जानेका विचार किया॥ ५३-५४॥

तब राजसेवकके कहनेसे भरत मुनि भी उसकी पालकीको अन्य बेगारियोंके बीचमे लगकर बड़न करने लगे॥ ५५॥ इस प्रकार बेगारमें पकड़े जाकर अपने पूर्वजन्मका स्मरण रखनेवाले, सम्पूर्ण विज्ञानके एकमात्र पात्र वे विज्ञान अपने पापमय प्रारब्धका क्षय करनेके लिये उस जिविकाको उठाकर चलने लगे॥ ५६॥ वे वृद्धिमानोंमें श्रेष्ठ द्विज्ञान तो चार श्राथ भूमि देखते हुए मन्द-गतिसे चलते थे, किन्तु उनके अन्य साथी जल्दी-

विलोक्य नृपतिः सोऽय विषमां शिविकागतिम् । किमेतदित्याह समं गम्यतां शिविकावहाः ॥ ५८ पुनस्तथैव शिविकां विलोक्य विषमां हि सः । नृपः किमेतदित्याह भवन्द्रिर्गम्यतेऽन्यथा ॥ ५९ भूपतेर्वदतस्तस्य श्रुत्वेत्यं बहुशो वचः । शिविकावाहकाः प्रोचुरयं यातीत्यसत्वरम् ॥ ६०

राजीपाच

कि श्रान्तोऽस्यत्पमध्वानं त्वयोदा शिविका मम । किमायाससहो न त्वं पीवानसि निरीक्ष्यसे ॥ ६१

माहरण उवाच

नाई पीवान्न चैवोदा शिबिका भवतो मया । न श्रान्तोऽस्मि न चावासो सोढव्योऽस्ति महीपते ॥ ६२

राजीवान

प्रत्यक्षं दृश्यसे पीवानद्यापि शिविका त्वयि । श्रमश्च भारोद्वहने भवत्येव हि देहिनाम् ॥ ६३

ब्राह्मण उवाच

प्रत्यक्षं भवता भूप यद्दुष्टं मम तह्द ! बलवानबलक्षेति वाच्यं पश्चाहिशेषणम् ॥ ६४ त्ययोडां शिविकां चेति लय्यद्यापि च संस्थिता । मिथ्यैतद्त्र तु भवाञ्छुणोतु वचनं, मम ॥ ६५ भूमौ पादयुगं त्वास्ते जक्के पादद्वये स्थिते । कर्वीर्जकुगह्वयावस्थौ तदाधारं तथोदरम् ॥ ६६ वक्षःस्थलं तथा बाह् स्कन्धौ चोदरसंस्थितौ । स्कन्धाश्रितेयं शिविकां मम भारोऽत्र किं कृतः ॥ ६७ शिविकायां स्थितं चेदं वपुस्तदुपलक्षितम् । तत्र त्वमहमण्यत्र प्रोच्यते चेदमन्यथा ॥ ६८ अहं त्वं च तथान्ये च भूतेरुग्राम पार्शिव । गुणप्रवाहपतितो भूतवरगोंऽपि यात्ययम् ॥ ६९ कर्मवश्या गुणाश्चैते सत्त्वाद्याः पृथिवीपते ।

अविद्यासञ्चितं कर्म तद्याशेषेषु जन्तुषु ॥ ७०

प्रवृद्धयपचयौ नास्य एकस्याखिलजन्तुष् ॥ ७१

आत्मा शुद्धोऽक्षरः शान्तो निर्गुणः प्रकृतेः परः ।

जल्दी चल रहे थे ॥ ५७ ॥ 🛷

कहा—"और विविकावाहको ! यह क्या करते हो ? समान गतिसे चल्ने"॥ ५८ ॥ किन्तु फिर भी उसकी गति उसी प्रकार विषम देखकर राजीने फिर कहा—"और क्या है ? इस प्रकार असमान भावसे क्यों चलते हो ?" ॥ ५९ ॥ राजाके बार-बार ऐसे वचन सुनकर वे शिविकावाहक [भरतजीको दिखाकर] कहने लगे—

इस प्रकार दिविकाकी विषय-गति देखकर राजाने

''हममेंसे एक वहां धारे-धीर चलता है''॥ ६०॥

राजाने कहा—अरे, तुने तो अभी मेरी शिविकाकी थोड़ी ही दूर वहन किया है; क्या इतनेहीमें थक गया ? तू वैसे तो बहुत मोटा-मुष्टण्डा दिखायी देता है, फिर क्या तुझसे इतना भी अम नहीं सहा जाता ? ॥ ६१ ॥ ब्राह्मण बोस्टे—राजन ! मैं न मोटा है और न मैंन

ब्राह्मण बोले—राजन् । मैं न मोटा हूँ और न मैंने आपको शिविका हो उटा रखो है । मैं थका भी नहीं हूँ और न मुझे अम सहन करनेकी हो आवश्यकता है ॥ ६२ ॥

राजा बोले — ओर, तू तो घत्यक्ष ही मोटा दिखायी दे रहा है, इस समय भी शिविका तेरे कन्धेपर रखी हुई है और बोझा डोनेसे देहधारियोंको भ्रम होता ही है ॥ ६३ ॥

बोझा डॉनेसे देह धारियोंको श्रम होता हो है ॥ ६३ ॥

ब्राह्मण बोले — एजन् ! तुम्हें प्रत्यक्ष क्या दिखायी दे
रहा है, मुझे पहले यही बताओ । उसके 'बलवान्'
अथवा 'अबलवान्' आदि विशेषणोंकी बात तो पीछे
करना ॥ ६४ ॥ 'तुने मेरी दिखिकाका यहन किया है, इस
समय भी वह तेरे ही कन्थोंपर रखी हुई है' — तुम्हारा ऐसा
कहना सर्वधा मिध्या है, अच्छा मेरी बात सुनो —
॥ ६५ ॥ देखो, पृथिवीचर तो मेरे पैर रखे हैं, पैरोके कपर
जंधाएँ है और जंधाओंके कपर दोनो कह तथा कर्थोंके
कपर उदर है ॥ ६६ ॥ उदरके कपर वह शिवका रखी
है । इसमें मेरे कपर कैसे योहा रहा ? ॥ ६७ ॥ इस
शिविकामें जिसे तुम्हारा कहा जाता है वह शरीर रखा हुआ
है । वास्तवमें तो 'तुम वहाँ (शिविकामें) हो,और मैं यहाँ

है। वास्तवमें ता 'तुम वहाँ (शिक्षकामें) हो,और में यहाँ (पृथिवीपर) हूँ'—ऐसा कहना सर्वधा मिथ्या है।। ६८॥ हे राजन् ! मैं, तुम और अन्य भी समस्त जीव पद्धभृतोले ही वहन किये जाते हैं। तथा यह भूतवर्ग भी गुणेंके प्रवाहमें पड़कर ही बहा जा रहा है।। ६९॥ हे पृथिवीपते ! ये सत्त्वादि गुण भी कमेंकि वशोभृत हैं और समस्त जीवोंमें कर्म अविद्याजन्य ही हैं।। ७०॥ आत्मा तो शुद्ध, अक्षर,

ञान्त, निर्गण और प्रकृतिसे परे है तथा समस्त जीवोंसे

यदा नोपवयस्तस्य न चैवापचयो नृप । तदा पीवानसीतीत्थं कया युक्त्यात्वयेक्तिम् ॥ ७२ भूपादजङ्काकट्यूरुजठरादिषु संस्थिते । शिविकेयं यथा स्कन्धे तथा भारः समस्त्वया ॥ ७३ तथान्यैर्जन्तुभिर्भूप शिविकोडा न केवलम् । शैलद्रुमगृहोत्थोऽपि पृथिवी सम्भवोऽपि वा ॥ ७४ यदा पुंसः पृथग्भावः प्राकृतैः कारणैर्नृप ।

सोडब्यस्तु तदायासः कथं वा नृपते मया ॥ ७५ यदद्रव्या शिविका चेयं तद्दद्व्यो भृतसंग्रहः ।

भवतो मेऽखिलस्यास्य ममत्येनोपबृहितः॥ ७६

श्रीपरासर उत्राच

एवमुक्त्वाभवन्मौनी स वहञ्जिबिकां द्विज । सोऽपि राजावतीयोंक्यां तत्पादी जगृहेत्यरन् ॥ ७७

राजीयाच

भो भो विस्ज्य शिबिकां प्रसादं कुरु में द्विज । कथ्यतां को भवानत्र जाल्मरूपधरः स्थितः ॥ ७८

यो भवान्यन्निमित्तं वा यदागमनकारणम् । तत्सर्व कथ्यतां विद्वन्यहां शुश्रृषवे त्वया ॥ ७९

ब्राह्मण उदान

श्रूवतां सोऽहमित्येतद्वकुं भूप न शक्यते । उपभोगनिमित्तं च सर्वत्रागमनिकया ॥ ८० सुखदुःखोपभोगौ तु तौ देहाद्युपपादकौ । धर्माधर्मोद्धवौ भोक्तं जन्तुदेहादिमृक्ठति ॥ ८१

सर्वस्थैव हि भूषाल जन्तोः सर्वत्र कारणम् । धर्माधर्मौ यतः कस्मात्कारणं पृच्छयते त्वया ॥ ८२

राजीकाच

धर्माधर्मी न सन्देहस्सर्वकार्येषु कारणम् । उपभोगनिमित्तं च देहादेहान्तरागमः ॥ ८३ यन्त्रेतद्भवता प्रोक्तं सोऽहमित्येतदात्मनः ।

यत्त्वेतद्भवता प्रक्ति सोऽहमित्यंतदात्मनः। वक्तुं न-शक्यते श्रोतुं तन्ममेच्छा प्रवर्तते ॥ ८४ कभी नहीं होते॥ ७१॥ हे नृप! जब इसके उपच्य (बृद्धि), अपवय (क्षय) ही नहीं होते तो तुमने यह बत किस युक्तिये कहीं कि 'तृ मोटा है ?'॥ ७१॥ यदि क्रमशः पृथिवी, पाद, जंभा, काँट, कर और उदस्पर स्थित कर्मोपर रखी हुई यह शिविका मेरे ठिये भारकप हो सकती है तो उसी प्रकार तुम्हारे ठिये भी तो हो सकती है ? [ज्योंकि ये पृथिवी आदि तो जैसे तुमसे पृथक् हैं वैसे ही मुझ आत्यासे भी सर्वथा भिन्न हैं]॥ ७३॥ तथा इस पृक्तिसे तो अन्य समस्त जीवोने भी केवल शिविका ही भहीं, बहिक सम्पूर्ण पर्वत, बूख, गृह और पृथिवी आदिका भार उता रखा है॥ ७४॥ हे राजन्! जब प्रकृतिजन्य कारणींसे पुरुष सर्वथा भिन्न है तो उसका परिश्रम भी मुझको कैसे हो सकता है ?॥ ७५॥ और किस इक्यसे यह शिविका वनी हुई है उसीसे यह आपका, मेरा अथवा और सवका शारेर भी बना है; जिसमें कि ममत्वका आरोप

वह एक ही ओतप्रोत है। अतः उसके बृद्धि अथवा क्षय

श्रीपराशरजी वोले—ऐसा कह वे द्विजवर शिविकाको धारण किये हुए ही मौन हो गये, और राजने भी तुरन्त पृथिकीपर उत्तरकर उनके चरण प्रकड़ लिये ॥ ७७ ॥ राजा श्रीला—अही दिकराज ! इस शिक्किको

किया इअ। है ॥ ७६ ॥

पुछते हो ? ॥ ८२ ॥

छोड़कर आप मेरे ऊपर कृषा कीजिये। प्रभी ! कृषया बताइये इस जड़बेबको धारण किये आप कीन हैं ? ॥ ७८ ॥ टे बिहन् ! आप कीन हैं ? किस निमित्तसे यहाँ आपका आगा हुआ ? तथा आनेका क्या कारण है ? यह सब आप मुझसे कहिये । मुझे आपके विषयमें सुननेकी बड़ी उत्कण्डा से रही हैं ॥ ७९ ॥

ब्राह्मण बोले—हे राजन् ! सुनो, मैं अमुक हुँ—

यह यात कही नहीं जा सकती और तुमने जो मेरे यहाँ आनेका कारण पूछा सो आना-जाना आदि सभी क्रिक्स् फर्मफरूके उपभोगके लिये ही हुआ करती हैं ॥ ८० ॥ सुख-दुःखका भोग हो देह आदिकी प्राप्ति करानेकाल है तथा धर्माधर्मजन्य सुख-दुःखोंको भोगनेके लिये ही जीव देहादि धारण करता है ॥ ८१ ॥ हे भूपाल ! समस्त जीवोंकी सम्पूर्ण अवस्थाओंके कारण ये धर्म और अधर्म हो हैं, फिर विशेषरूपसे मेरे आपमनस्त्र कारण तम क्यो

राजा बोला—अवश्य ही, समस्त कारोंने धर्म और अधर्म ही कारण है और कर्मफलके उपभोगके लिये ही एक देहसे दूसरे देहमें जाना होता है ॥ ८३ ॥ किन्तु अपने जो कहा कि 'मैं कौन हूं—यह नहीं बताया जा योऽस्ति सोऽहमिति ब्रह्मन्त्रथं बक्तं न शक्यते । आत्मन्येष न दोषाय शब्दोऽहमिति यो द्विज ॥ ८५

बाह्यण उवाच शब्दोऽहमिति दोषाय नात्मन्येष तथैव तत् । अनात्मन्यात्मविज्ञानं शब्दो वा भ्रान्तिरुक्षणः ॥ ८६ जिह्ना ब्रबीत्यहमिति दन्तोष्ठी तालुके नृप । एते नाहं यतः सर्वे वाङ्निध्यादनहेतवः ॥ ८७ किं हेत्भिर्वदत्येषा वागेवाहमिति स्वयम् । अतः पीवानसीत्येतह्कुमित्यं न युज्यते ॥ ८८ पिण्डः पृथम्यतः पुंसः द्विरःपाण्यादिलक्षणः । ततोऽहमिति कुत्रैतां संज्ञां राजन्करोग्यहम् ॥ ८९ यद्यन्तोऽस्ति परः कोऽपि मत्तः पार्थिवसत्तम । तदैषोऽहमयं चान्यो वक्तुमेवमपीष्यते ॥ ९० यदा समस्तदेहेषु पुमानेको व्यवस्थितः। तदा हि को भवान्सोऽहमित्येतद्विफलं वचः ॥ ९१ त्वं राजा शिबिका चेर्यांममे वाहाः पुरःससः । अयं च भवतो लोको न सदेतत्रूपोच्यते ॥ ९२ वृक्षाहारु ततश्चेयं शिविका त्वदधिष्ठिता । कि वृक्षसंज्ञा वास्याः स्याद्वारुसंज्ञाथ वा नृप ॥ ९३ वक्षारुको महाराजो नायं बदति ते जनः। न च दारुणि सर्वस्त्वां ब्रवीति शिविकागतम् ॥ ९४ शिविका दारुसङ्कातो रचनास्थितिसंस्थितः । अन्विष्यतां नृपश्रेष्ठ तद्धेदे शिविका त्वया ॥ ९५ एवं छत्रशलाकानां पृथम्भावे विमृश्यताम् । क्क यातं छत्रमित्येष न्यायस्त्वयि तथा मयि ॥ ९६ पुमान् स्त्री गौरजो वाजी कुञ्जरो विहगस्तरः । देहेषु लोकसंज्ञेयं विज्ञेया कमहितुषु॥ ९७ युमान्न देवो न नरो न पञ्ज च पादपः। शरीराकृतिभेदास्तु भूपैते कर्मयोनयः ॥ ९८

सकता' इसी बातको सुननेकी मुझे इच्छा हो रही है ॥ ८४ ॥ हे ब्रह्मन्] 'जो है [अर्थात् जो आहम कर्ता-भोक्तारूपसे प्रतीत होता हुआ सदा सत्तरूपसे वर्तमान है] वहीं मैं हूं —ऐसा क्यों नहीं कहा जा सकता ? है द्विज ! यह 'अहं' शब्द तो आत्मामें किसी प्रकारके दोषका कारण नहीं होता ॥ ८५ ॥

ब्राह्मण बोले—हे राजन् ! तुमने जो कहा कि 'अहे' शब्दसे आत्मामें कोई दोष नहीं आता सो ठीफ ही है, किन्त अनात्माचे हो आत्मत्यका ज्ञान करानेवाला प्रान्तिमृलक 'अहं' शब्द ही दोषका कारण है ॥ ८६ ॥ है नृप ! 'अहं' इक्टको उचारण जिहा, दत्त, आष्ट और तालुसे ही होता है, किन्तु ये सब उस शब्दके उचारणके कारण हैं, 'अहं' (मैं)। नहीं ॥ ८७ ॥ तो क्या जिह्नादि कारणेंके द्वारा यह याणी ही ख्वयं अपनेक्षे 'अहं' कहता है ? नहीं । अतः ऐसी स्थितिमें 'त मोटा है' ऐसा कहना भी उचित नहीं है ॥ ८८ ॥ सिर तथा कर-चरणादिरूप यह शरीर भी आत्मासे पथक ही है । अतः हे राजन् ! इस 'अहं' शब्दका में कहाँ प्रयोग करूँ ? ॥ ८९ ॥ तथा है जुपश्रेष्ट ! यदि पुझरी गिन्न कोई और भी सजातीय आत्मा हो तो भी 'यह मैं है और यह आय हैं — ऐसा कहा जा सकता था॥ ९०॥ किन्तु, जब समस्य दारीरोमें एक ही आता विश्वच्यान है दय 'आप कौन है ? मैं वह है।' ये सब वाक्य निष्कल ही है ॥ ९१ ॥ 'तु राजा है, यह जिल्ला है, ये सामने जिबिकत्वाहक है तथा ये सब तेरी प्रजा हैं —हे नुप ! इनमेंसे कोई भी बात परमार्थतः सत्य नहीं है ॥ ९२ ॥ है राजन् । वृक्षसे लकड़ी हुई और उससे तेरी यह शिबिका बनी; तो बहा इसे एकड़ी कहा जाय या युक्ष ? ॥ ९३ ॥ किन्तु 'महाराज वृक्षपर बैठे हैं' ऐसा कोई नहीं कहता और न कोई तुझे लकड़ीपर बैठा हुआ ही बताता है ! सब लोग शिविकामें बैठा हुआ ही कहते हैं ॥ ९४ ॥ है नुपश्रेष्ट ! रचनाविशेषमें स्थित स्वकड़ियोंका समृह ही ती हिजिका है। याँद वह उससे कोई भिन्न वस्तु हैं तो काहको अलग करके उसे देंद्रो ॥ ९५ ॥ इसी प्रकार छत्रकी शलाकाओंको अलग रहाकर छत्रका विचार करो। कि वह कहाँ रहता है। यहाँ न्याय तुममें और मुझमें लागू होता है [अर्थात् मेरे और तुम्हारे दारीर भी पञ्चभृतसे आतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं हैं] ॥ ९६ ॥

पुरुष, स्त्री, गौ, अज (बकरा) अश्व, गज, पक्षी और वक्ष आदि स्त्रीकिक संज्ञाओंका प्रयोग कमेंहेतक शरीरीमें

ही जानना चाहिये ॥ ९७ ॥ हे राजन् । पुरुष (जीव) तो

न देखता है, न मनुष्य है, न पश् है और न अक्ष है। ये

वस्तु राजेति यत्लोके यद्य राजभटात्पकम् ।
तथान्यद्य नृपेत्थं तत्र सत्सङ्कल्पनामयम् ॥ ९९
यत्तु कालान्तरेणापि नान्यां संज्ञामुपैति वै ।
परिणामादिसम्भूतां तद्वस्तु नृप तद्य किम् ॥ १००
त्वं राजा सर्वलोकस्य पितुः पुत्रो रिपो रिपुः ।
पत्याः पतिः पिता सुनोः किंत्वां भूप वदाप्यहम् ॥ १०१
त्वं किमेतिन्छिरः किं नु प्रीवा तव तथोदरम् ।
किमु पादादिकं त्वं वा तवैतित्कं महीपते ॥ १०२
समस्तावयवेभ्यस्त्वं पृथम्भूय व्यवस्थितः ।
कोज्जमित्यत्र निपुणो भूत्वा चिन्तय पार्थिव ॥ १०३
एवं व्यवस्थिते तत्त्वे मयाहमिति भाषितुम् ।
पृथक्करणनिष्पाद्यं श्वय्यते नृपते कथम् ॥ १०४

सब तो कर्मजन्य रागरीकी आकृतिबंकि ही धेद हैं ॥ ९८ ॥ लोकमें धन, राजा, राजाके सैनिक तथा और भी जोन्जो वस्त्र्षे हैं, हे एजन् ! वे परमार्थतः सत्य नहीं हैं, केवल कल्पनापय ही हैं ॥ ९९ ॥ जिस वस्तुकी परिणापादिके कारण होनेवाली कोई संज्ञा कालान्तरमें भी नहीं होती. बही परमार्थ-वस्तु है । हे शंजन् ! ऐसी वस्तु कीन-सी है ? ॥ १०० ॥ [तु अपनेहीको देख—] सगस्त प्रजाके लिये तु राजा है, पिताके लिये पुत्र है, राज़के लिये राज़ है, पलीका पति है और पुत्रका iपता है । हे राजन् ! बतला, भैं तहो क्या कहें ? ॥ १०१ ॥ हे महीपते ! तु क्या यह सिर है, अधवा प्रीवा है या पेट अधवा पादादिमेंसे कोई है ?. तथा वे सिर आदि भी 'तेरे' क्या हैं ? ॥ १०२ ॥ हे पृथिबीधर ! तु इन समस्त अवयवींसे पथक है: अतः सावधान होकर विचार कि 'मैं कौन हैं ॥ १०३ ॥ हे महाराज ! आत्मतत्त्व इस प्रकार व्यवस्थित हैं । उसे सबसे पृथक करके ही बताया जा सकता है । तो फिर, मैं उसे 'अहं' शब्दसे कैसे बतला सकता हैं ? ॥ १०४ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेऽशे त्रयोदशोध्यायः ॥ १३ ॥

चौदहवाँ अध्याय

जडभरत और सौबीरनरेशका संवाद

श्रीपराञ्चर उवाच

निशम्य तस्येति वचः परमार्थसमन्त्रितम् । प्रश्रयावनतो भूत्वा तमाह नृपतिर्द्विजम् ॥

गजीवाच
भगवन्यत्त्वया प्रोक्तं परमार्थमयं वचः।
श्रुते तस्मिन्ध्रमन्तीव मनसो मम वृत्तयः॥
एतद्विवेकविज्ञानं यदशेषेषु जन्तुषु।
भवता दर्शितं विष्र तत्परं प्रकृतेर्महत्॥
नाहं वहामि शिविकां शिविका न मियं स्थिता।
शरीरमन्यदस्मत्तो येनेयं शिविका पृता॥
गुणप्रवृत्त्या भूतानां प्रवृत्तिः कर्मचोदिता।
प्रवर्तन्ते गुणा होते कि ममेति त्वयोदितम्॥
एतस्मिन्यरमार्थज्ञ मम श्रोन्नपर्थं गते।
मनो विद्वलतामेति परमार्थार्थितां गतम्॥

श्रीपरादारजी बोले—उनके ये परमार्थमय वचन सुनव्य राजाने विभयावनत होवार उन विप्रवरसे कडा ॥ १ ॥

राजा बोल्डे—अगवन्! आपने जो परमार्थमय वचन कहे हैं उन्हें सुनकर मेरी मनोवृतियों धान-सी हो गयी हैं ॥ २ ॥ है विष्र ! आपने सम्पूर्ण जीवोंमें व्याप्त जिस असम विश्वानका दिग्दर्शन कराया है वह प्रकृतिसे परे बंहा ही है [इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है] ॥ ३ ॥ परंतु आपने जो कहा कि मैं शिविकाको वहन नहीं कर रहा हूँ, शिविका मेरे ऊपर नहीं है, जिसने इसे तहा रहा है वह शरीर मुझसे अत्यन्त पृथवा है। जीवोंकी प्रवृत्ति गुणों (सत्व, रज, तम) को प्रेरणारी होती है और गुण कमौसे प्रेरित होकर प्रवृत्त होते हैं—इसमें नेस कतृत्व कैसे माना जा सकता है ? ॥ ४-५ ॥ हे परमार्थक ! यह बात मेरे कानोंमें पड़ते ही मेरा भन परमार्थका जिज्ञासु होकर बड़ा उताबादा हो रहा है ॥ इ ॥

प्रष्टुमध्युद्यतो गत्वा श्रेयः किं त्वत्र शंस मे ॥ तदत्तरे च भवता यदेतद्वाक्यमीरितम्। तेनैव परमार्थार्थं त्वयि चेतः प्रधावति ॥ कपिलर्षिर्भगवतः सर्वभूतस्य वै द्विज। विष्णोरंशो जगन्मोहनाशायोवींमुपागतः ॥ स एव भगवाञ्चनमस्माकं हितकाम्यया। प्रत्यक्षतामत्र गतो यश्रैतद्भवतोच्यते ॥ १० तन्पह्मं प्रणताय त्वं यच्छेयः परमं द्विज । तद्वदाखिलविज्ञानजलवीच्यदधिर्भवान् भूप पुच्छसि कि श्रेयः परमार्थं नु पुच्छसि । श्रेयांस्यपरमार्थानि अदोषाणि च भूपते ॥ १२ देवताराधनं कृत्वा धनसम्पदमिच्छति । पुत्रानिच्छति राज्यं च श्रेयस्तस्यैव तञ्जूष ॥ १३ कर्म बज्ञात्मके श्रेयः फलं स्वर्गाप्तिलक्षणम् । श्रेयः प्रधानं च फले तदेवानभिसंहिते ॥ १४ आत्मा ध्येयः सदा भूष योगयुक्तैस्तथा परम्। श्रेयस्तस्यैव संयोगः श्रेयो यः परमात्सनः ॥ १५ श्रेयांस्येवमनेकानि शतशोऽथ सहस्रशः। सन्त्यत्र परमार्थस्तु न त्वेते श्रूवतां च मे ॥ १६ धर्माय त्यज्यते किञ्च परमाश्री धनं यदि। व्ययश्च क्रियते कस्मात्कामप्राप्त्युपलक्षणः ॥ १७ पुत्रक्षेत्परमार्थः स्वात्सोऽप्यन्यस्य नरेश्वरः। परमार्थभूतः सोऽन्यस्य परमार्थो हि तत्पिता ॥ १८ एवं न परमाश्रींऽस्ति जगत्यस्मिञ्चराचरे । परमार्थो हि कार्याणि कारणानामञ्जेषतः ॥ १९ राज्यादिप्राप्तिरत्रोक्ता परमार्थतया यदि। परमार्था भवन्यत्र न भवन्ति च वै ततः ॥ २० ऋग्यजुःसामनिष्याद्यं यज्ञकर्म मतं तव । परमार्श्वभूतं तत्रापि श्रूयतां गदतो मम ॥ २१

वि॰ पु॰ ६-

पूर्वमेव महाभागं कपिलविंमहं द्विज।

हे द्विज ! मैं तो पहले ही महाभाग कपिलमुनिसे यह पुछनेके छित्रे कि बताइये 'संसारमें मनुष्योंका श्रेय किसमें हैं' उनके पास जानेको तत्पर हुआ हूं ॥ ७ ॥ किन्तु बीबहोंमें, आपने जो बाक्य कहे हैं उन्हें सुनकर मेरा चित्त परमार्थ-अवण करनेके लिये आपको ओर झुक गया है ॥ ८ ॥ हे द्विज ! ये कपिलभूनि सर्वभूत भगवान् विष्णुके ही अंश है। इन्होंने संसारका मोह दर करनेके लिये ही पृथिवीपर अवतार लिया है ॥ ९ ॥ किन्तु आप जो इस प्रकार भाषण कर रहे हैं उससे यूझे निक्षय होता है कि वे ही धगवान् कपिलदेव मेरे दिवकी कामनासे यहाँ आपके रूपमें प्रकट हो गये हैं ॥ १० ॥ अतः हे द्विज ! हमारा जो परम श्रेष हो वह आप मुझ विनीतसे कहिये। हे प्रपी ! आप सम्पूर्ण विज्ञान-तरंगीके मानो समुद्र ही है ॥ ११ ॥ ब्राह्मण बोले —हे राजन् ! तुम श्रेय पूछना चाहते हो या परमार्थ ? क्योंकि हे भूपते ! श्रेय तो सब अपारमार्थिक ही है। १२॥ हे नृप ! जो पुरुष देवताओंको आराधना करके धन, सम्पत्ति, पुत्र और राज्यादिकी इच्छा करता है उसके लिये तो वे ही परम श्रेय है ॥ १३ ॥ जिसका फल खर्गलोकको प्राप्ति है वह यज्ञात्मक कर्म भी श्रेय है; किन्तू प्रधान श्रेय तो उसके फलकी इच्छा न करनेमें ही है ॥ १४ ॥ अतः हे राजन् । योगयुक्त पुरुषोंको प्रकृति आदिसे अतीत दस आत्माका ही ध्यान करना चाहिये, क्योंकि उस परमात्माका संयोगरूप श्रेय ही वास्तविक श्रेय है ॥ १५॥। इस प्रकार श्रेय तो सैकडो-हजारों प्रकारके अनेकों है, किंतु ये सब परमार्थ नहीं हैं। अब जो परमार्थ है सो सुनो — ॥ १६ ॥ यदि धन ही परमार्थ है तो धर्मके लिये टसका त्याग क्यों किया जाता है ? तथा इच्छित भोगोकी प्राप्तिके रित्ये उसका रुपय क्यों किया जाता है ? [अत: वह परमार्थ नहीं है] ॥ १७ ॥ है नरेश्वर ! यदि पुत्रको परनार्थ कहा जाय तो वह तो अन्य (अपने पिता) का परपार्थभूत है, तथा उसका पिता भी दूसरेका पुत्र होनेके कारण उस (अपने पिता) का परमार्थ होगा॥ १८॥ अतः इस चराचर जगत्में पिताका कार्यरूप पुत्र भी परमार्थ नहीं है। क्योंकि फिर तो सभी कारणोंके कार्य परमार्थ हो जायेंगे ॥ १९ ॥ यदि संसारमें राज्यादिकी प्राप्तिको परमार्थ कहा जाय तो ये कभी रहते है और कभी नहीं रहते। अतः परमार्थ भी आगमापाची हो जायमा । । इसल्जिं राज्यादि भी परमार्थ नहीं हो। सकते] ॥ २०॥ यदि ऋक्, यजुः और सामरूप

वेदत्रयीसे सम्पन्न होनेवाले यज्ञकर्मको परमार्थ मानते हो

यत्तु निष्पाद्यते कार्य मुदा कारणभूतया । तत्कारणानुगमनाञ्जायते नृष मृण्मयम् ॥ २२ एवं विनाशिभिर्द्रव्यैः समिदाज्यकुशादिभिः। निष्पाद्यते क्रिया या तु सा भवित्री विनाशिनी ॥ २३ अनाशी परमार्थश प्राज्ञैरभ्यूपगम्यते । तत् नाशि न सन्देहो नाशिद्रव्योपपादितम् ॥ २४ तदेवाफलदं कर्म परमार्थो मतस्तव। मुक्तिसाधनभूतत्वात्परमार्थो न साधनम् ॥ २५ ध्यानं चैवात्मनो भूप परमार्थार्थशक्दितम् । भेदकारि परेभ्यस्तु परमार्थो न भेदवान् ॥ २६ परमात्मात्मनोर्चोगः परमार्ध इतीष्यते । मिश्यैतदन्यदृद्रव्यं हि नैति तदृद्रव्यतां यतः ॥ २७ तस्माच्छेयांस्यशेषाणि नुपैतानि न संशयः । परमार्शस्तु भूपाल सङ्खेपाच्छ्रयता मम ॥ २८ एको व्यतपी समः शुद्धो निर्गुणः प्रकृतेः परः । जन्मवृद्ध्यादिरहित आत्मा सर्वगतोऽव्ययः ॥ २९ परज्ञानमयोऽसद्धिर्नामजात्यादिभिर्विभुः न योगवात्र युक्तोऽभूत्रैय पार्थिय योक्ष्यते ॥ ३० तस्यात्मपरदेहेषु सतोऽप्येकमयं हि यत्। विज्ञानं परमार्थोऽसौ द्वैतिनोऽतथ्यदर्शिनः ॥ ३१ वेणुरन्धप्रभेदेन भेदः पङ्जादिसंज्ञितः। अभेदव्यापिनो वायोस्तथास्य परमात्मनः ॥ ३२ एकस्वरूपभेदश बाह्यकर्मप्रवृत्तिजः । देवादि भेदेऽपध्यस्ते नास्त्येवावरणे हि सः ॥ ३३

तो उसके किलामें मेरा ऐसा विचार है — ॥ २१ ॥ हे नृप ! जो यस्तु कारणरूपा मृतिकाका कार्य होती है वह कारणकी अनुगाधिनी होनेसे पुत्तिकारूप ही जानी जाती है ॥ २२ ॥ अतः जो क्रिया समिध, पुरा और फुशा आदि नाशवान् इट्योंसे सम्पन्न होती है वह भी नादावान् ही होगी ॥ २३ ॥ किन्तु परमार्थको तो प्राज्ञ पुरुष अविनाशी बतत्स्रते हैं और नाशवान द्रव्योंसे निष्यन होनेके कारण कर्म [अथवा उनसे निष्पन्न होनेवाले खर्गादि] नाक्षवान् हो है—इसमें सन्देह नहीं ॥ २४ ॥ यदि फलाशासे र्राहत निष्कामकर्मको परमार्थ भारते हो तो वह तो मक्तिरूप फलका साधन होनेसे साधन ही है, परमार्थ नहीं ॥ २५ ॥ यदि देहादिसे आत्माका पार्थक्य विचारकर उसके ध्वान करनेको परमार्थ कहा जाय तो बह तो अनात्मासे आत्मका भेट करनेवाला है और परमार्थमें मेद है नहीं [अह: वह भी परमार्थ नहीं हो सकता] ॥ २६ ॥ यदि परमातमः और जीवात्माके संयोगको परमार्थ कहें तो ऐसा कहना भर्वथा मिश्या है, क्योंकि अन्य द्रव्यसे अन्य द्रव्यकी एकता कभी नहीं हो सकतो * ॥ २७ ॥

अतः हे राजन् ! निःसन्देह ये सब श्रेय ही हैं, । परमार्थ नहीं] अच जो परमार्थ है वह मैं संक्षेपसे सुनाता हैं, श्रवण करो ॥ २८ ॥ आत्मा एक, व्यापक, सम, शुद्ध, निर्मुण और प्रकृतिसे परे हैं; वह जन्म-बृद्धि आदिसे रहित, सर्वव्यापी और अञ्चय है ॥ २९ ॥ है राजन् ! बहु परम ज्ञानमय है, अस्तन् नाम और जाति आदिसे उस सर्वव्यापकका संयोग न कभी हुआ, ने हैं। और न होगा ॥ ३०॥ धह, अपने और अन्य प्राणियोंके शरिरमें विद्यमान रहते हुए भी, एक ही हैं —इस प्रकारका जो विद्येव ज्ञान है यही परनार्थ है; द्वैत भावनावाले पुरुष तो अपरमार्धदर्शी है ॥ ३१ ॥ जिस प्रकार आधिप्र भावसे च्याप्त एक हो नायुक्तेः वाँसरीके किट्रोंके भेड़से एडज आदि भेद होते हैं उसी प्रकार [अरीरादि उपाधियोके कारण] एक ही परमात्माके [देवता-मनुष्यादि] अनेक भेद प्रतीत होते हैं ॥ ३२ ॥ एकरूप आत्माके जो नाना भेद हैं से बाह्य देहादिन्ही कर्मप्रवृत्तिके कारण हो हुए है । देवादि इसीरीके भेदका निरम्करण हो जानेपर वह नहीं रहता । उसकी स्थिति तो अविद्याके आवर्णतक ही है ॥ ३३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेंऽशे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ==== ★ ====

^{ें} अर्थात् यदि आत्या परमात्यासे थित्र है तय तो गी और अश्वके समान उनकी एकता हो नहीं सकती और वदि बिम्बे-प्रतिक्रिम्बेकी भौति अभित्र है तो उपाधिके निराबद्रणके अतिरिक्त और उनका संयोग हो तथा होगा ?

पन्द्रहवाँ अध्याय

ऋभुका निदाधको अद्वैतज्ञानोपदेश

औपस्थार उचाच

इत्युक्ते मौनिनं भूयश्चिन्तयानं महीपतिम् । प्रत्युवाचाथ विप्रोऽसावद्वैतान्तर्गतां कथाम् ॥

ब्राह्मण उवाच

श्रूयतां नृपशार्द्ल यद्गीतमृभुणा पुरा।
अववोधं जनयता निदाधस्य महात्मनः ॥ २
ऋभुनांमाऽभवत्पुत्रो ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
विज्ञानतत्त्वसद्धावो निसगदिव भूपते ॥ ३
तस्य शिष्यो निदाधोऽभूत्पुलस्यतनयः पुरा ।
प्रादादशेषविज्ञानं स तस्मै परया मुदा ॥ ४
अवाप्तज्ञानतत्त्तस्य न तस्याद्वैतवासना ।
स ऋभुस्तर्कयामास निदाधस्य नरेश्वर ॥ ५
देविकायास्तटे वीरनगरं नाम वै पुरम् ।
समृद्धमितरम्यं च पुलस्येन निवेशितम् ॥ ६
रम्योपवनपर्यन्ते स तस्मिन्यार्थिवोत्तम् ॥ ६
रम्योपवनपर्यन्ते स तस्मिन्यार्थिवोत्तम् ॥ ७
दिव्ये वर्षसहस्रे तु समतीतेऽस्य तत्पुरम् ।
जगाम स ऋभुः शिष्यं निदाधमयलोककः ॥ ८

उवाच स द्विजश्रेष्ठो भुज्यतामिति सादरम् ॥ १० अस्पृरुणन

स तस्य वैश्वदेवान्ते द्वारालोकनगोचरे ।

स्थितस्तेन गृहीतार्घ्यो निजवेश्म प्रवेशितः ॥

प्रक्षालिताङ्घिपाणि च कृतासनपरिप्रहम् ।

भो विप्रवर्य भोक्तव्यं यदत्रं भवतो गृहे। तत्कथ्यतां कदत्रेषु न प्रीतिः सततं मस ॥ ११

निदाय उवाच

सक्तुयावकवाट्यानामपूपानां च मे गृहे । यहोचते द्विजश्रेष्ठ तत्त्वं भुङ्क्ष्त्र यथेच्छ्या ॥ १२

ऋभुरुवाच

कदन्नानि द्विजैतानि पृष्टपत्रं प्रयच्छ मे । संयावपायसादीनि द्रप्सफाणितवन्ति च ॥ १३ श्रीपराशस्त्री खोले—हे मैतेय ! ऐसा कहनेपर, राजाको मीन होकर मन-ही-मन सोच-विचार करते देख वे विप्रवर यह अद्रैत-सम्बन्धिनी कथा सुनाने लगे॥ १॥

ब्राह्मण बोस्ने — हे राजदाार्ट्स ! पूर्वकालमें महर्षि अः भुने महात्मा निदासको उपदेश करते हुए जो कुछ कहा था वह लुनो ॥ २ ॥ हे भृषते ! परमेष्ठी श्रीक्रवाजीका ऋ मू नामक एक पुत्र था, वह स्वचालते ही परमार्थतत्त्वको जाननेवाला था ॥ ३ ॥ पूर्वकालमें महर्षि पुलस्यका पुत्र निदास उन ऋ मुका शिष्य था । उसे उन्होंने अति प्रसन्न होकर सम्पूर्ण तत्त्वज्ञानका उपदेश दिया था ॥ ४ ॥ हे नरेश्वर ! ऋभुने देखा कि सम्पूर्ण शास्त्रोंका ज्ञान होते हुए भी निदासकी अद्देशमें निशा नहीं है ॥ ५ ॥

उस समय देविकानदीके तीरपर पुलस्वजीका बसाया हुआ वीरनगर नामक एक अति रमणीक और समृद्धि-सम्पन्न नगर था॥ ६॥ है पार्थिबोत्तम है रम्य उपवनीसे सुशोभित उस पुरमें पूर्वकालमें ऋपुका शिष्य योगवेता निदाब रहता था॥ ७॥ महर्षि ऋपु अपने शिष्य निदाबको देखनेके लिखे एक सहस्र दिव्यवर्ष बीतनेपर उस नगरमें गयं॥ ८॥ जिस समय निदाब बलिबेश्वदेवके अनन्तर अपने द्रारपर [अतिथियोंकी] प्रतीक्षा कर रहा था, वे उसके दृष्टिगोबर हुए और बह उन्हें द्वारपर पहुँच अर्ग्यदानपूर्वक अपने घरमें हे गया॥ ९॥ उस द्विजनेश्वदेव उनके हाथ-पर धुलाबे और फिर आसनपर बिठाकर आदरपूर्वक कहा—'भोजन कोंकियें ॥ १०॥

ऋभु खोरें —हे विषयर ! आपके यहाँ क्या-क्या अन्न भीजन करना होगा — यह बताइये, क्योंकि कुस्सित अन्नमें मेरी रुचि नहीं है ॥ ११ ॥

निदाधने कहा —हे द्विजश्रेष्ट ! मेरे घरमे सनू , जीकी रुप्सी , कन्द-मूळ-फर्लाद तथा पूर् बने है । आपको इनमेंसे जो कुछ रुचे यही भोजन क्वेजिये ॥ १२ ॥

ऋभु बोले — हे द्विज ! ये तो सभी कुल्सित अब हैं, पुड़ों तो तुम इसका. स्वीर तथा मद्दा और लॉड़से बने स्वादिष्ट भोजन कराओं॥ १३॥ निदाब उद्यान

हे हे शालिनि मदेहे यत्किञ्चिदतिशोभनम् । भक्ष्योपसाधनं मृष्टं तेनास्यात्रं प्रसाधय ॥ १४

ब्राह्मण उद्याच

इत्युक्ता तेन सा पत्नी मृष्टमत्रं द्विजस्य यत् । प्रसाधितवती तद्वै भर्तुर्वचनगौरवात् ॥ १५ तं भुक्तवन्तमिच्छातो मृष्टमत्रं महामुनिम् । निदाधः प्राह भूपाल प्रश्रवावनतः स्थितः ॥ १६

निदाय उदाय

अपि ते परमा तृप्तिरुत्पन्ना तुष्टिरेव च। अपि ते मानसं स्वस्थमाहारेण कृतं द्विज ॥ १७ क्क निवासो भवान्वित्र क्र च गन्तुं समुद्यतः । आगम्यते च भवता यतस्तद्य द्विजोच्यताम् ॥ १८

ऋभुरूकाच

क्षुसम्य तस्य भुक्तेऽत्रे तृष्टिब्राह्मण जायते । न मे श्रुजाभवनुप्तिः कस्मान्मां परिपृच्छसि ॥ १९ वहिना पार्थिवे धातौ क्षपिते क्षत्समृद्धवः । भवत्यस्प्रसि च क्षीणे नृणां तृडपि जायते ॥ २० क्षत्तको देहधर्माख्ये न मर्मते यतो द्विज। ततः क्षुत्सम्भवाभावानृप्तिरस्त्येव मे सदा ॥ २१ मनसः स्वस्थता तृष्टिश्चित्तधर्माविमौ द्विजः चेतसो यस्य तत्प्रच्छ पुमानेधिर्न युज्यते ॥ २२ क निवाससबेत्युक्तं कं गन्तासि च यत्त्वया। कुतश्चागम्यते तत्र त्रितयेऽपि निबोध मे ॥ २३ पुमान्सर्वगतो व्यापी आकाशबद्यं यतः । कुत: कुत्र क गन्तासीत्येतद्प्यर्थवत्कथम् ॥ २४ सोऽहं गन्ता न चागन्ता नैकदेशनिकेतनः । त्वं चान्ये च न च त्वं च मान्ये नैवाहमध्यहम् ॥ २५ मुष्टं न मुष्टमप्येषा जिज्ञासा मे कृता तव। किं वक्ष्यसीति तत्रापि श्रृयतां द्विजसत्तम ॥ २६ किमस्वाद्वथ वा मृष्टं भुक्ततोऽस्ति द्विजोत्तम । यदामृष्टं तदेबोद्देगकारकम् ॥ २७ मुष्ट्रमेख

तद निदाधने [अपनी स्त्रीसे] कहा—है भृष्टेहिंद ! हमारे घरमें जो अच्छी-से-अच्छी वस्तु हो उसीरे इनके किये अति स्वारिष्ट भोजन बनाओ ॥ १४॥

द्वाह्मण (जडभरत) ने कहा—उसके ऐसा करनेपर उसकी पत्नीने अपने पतिकी आज्ञासे उन विधवरके लिये आंत स्वादिष्ट अन्न तैयार किया ॥ १५.॥

हे राजन् ! ऋभुके यथेच्छ मोजन कर चुकनेपर निदाधने अति विनोत होकर उन महामुनिसे कहा ॥ १६ ॥

निदास बोले—हे डिज ! कहिये भोजन करके आपका जित स्वस्य हुआ न ? आप पूर्णतया तृप्त और सन्तृष्ट हो गये न ? ॥ १७ ॥ हे विप्रवर ! कहिये आप कहाँ रहनेवाले हैं ? कहाँ जानेकी तैयारीमें हैं ? और कहींसे प्रधारे हैं ? ॥ १८ ॥

ब्रह्म बोले-हे ब्राह्मण ! जिसको क्षुणा लगती है उसीकी तृति भी हुआ करती हैं। मुझवते तो कभी क्षया ही नहीं लगी, फिर तुमिके विषयमें तुम क्या पुछते हो ? ॥ १९ ॥ जठरातिके द्वारा पार्थिय (छोस) धातुओंके श्रीण हो अदिसे मनुष्यको शुधाको प्रतीति होती है और जलकं श्लीण होनेसे तुषाका अनुभव होता है।। २०॥ है हिज ! ये क्षया और राषा तो देहके ही धर्म है, मेरे नहीं; अतः कभी श्रुधित न होनेके कारण मैं तो सर्वदा तुप्त हो हूँ ॥ २१ ॥ स्वरूपता और तरि भी मनहीमें होते हैं, अतः ये मनहीके धर्म हैं; पुरुष (आदम्) से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। इसकिये है द्विज ! ये जिसके धर्म हैं उसीसे इनके विषयमें वुद्धो ॥ २२ ॥ और हमने जो पुद्धा कि 'आप कहाँ रहनेवाले है ? कहाँ जा रहे है ? तथा कहाँसे आये हैं' सो इन तीनीके विषयमें मेरा मत सुनो-- ॥ २३ ॥ आज्ञा सर्वंगत है, क्योंकि यह आकाशके समान च्यापक है; अतः 'कहाँसे आरे' ही, कहाँ रहते हो और कहाँ जाओंगे ?' यह कथन भी कैसे सार्थक हो सकता है ? ॥ २४ ॥ वे तो २ कहीं जाता हैं. २ आता है और न किसी एक स्थानपर रहता है। [तू , मैं और अन्य पुरुष भी देहादिके कारण जैसे पृथक्-पृथक् दिखायी देते हैं बास्तवमें वैसे नहीं हैं। बस्ततः इ.स. मही है, अन्य अन्य नहीं है और मैं में नहीं हूं ॥ २५ ॥

वास्तवमें मधुर मधुर है भी नहीं; देखों, मैंने नुमसे जो मधुर अश्वकी याचना की भी उससे भी में यही देखना चाहता था कि 'तुम क्या कहते हो ।' है दिजशेष्ठ ! भीजन करनेवारेओं लिये स्वादु और अस्त्रादु भी क्या है ? क्योंकि स्वादिष्ट पदार्थ ही जब समयान्तरसे अस्तादु हो जाता है तो बही उद्देगजनक होने लगता है।। २६-२०॥ अमृष्टं जायते पृष्टं मृष्टादुद्विजते जनः । आदिमध्यावसानेषु किमन्नं रुचिकारकम् ॥ २८ मृण्मयं हि गृहं यद्वन्मृदा लिप्तं स्थिरं भवेत् । पार्थिवोऽयं तथा देहः पार्थिवैः परमाणुभिः ॥ २९ यवगोधूममुद्धादि घृतं तैलं पयो दिध । गुडं फलादीनि तथा पार्थिवाः परमाणवः ॥ ३० तदेतद्भवता ज्ञात्वा मृष्टामृष्टविचारि यत् । तन्मनससमतालिय कार्यं साम्यं हि मुक्तये ॥ ३१

ब्राह्मण उवाच

इत्याकर्ण्य वचस्तस्य परमार्थाश्रितं नृप । प्रणिपत्य महाभागो निदाघो वाक्यमब्रवीत् ॥ ३२ प्रसीद मद्भितार्थाय कथ्यतां यत्त्वमागतः । नष्टो मोहस्तवाकर्ण्यं वचांस्पेतानि मे ह्रिज ॥ ३३

श्रमुखाव

ऋभुरस्मि तवाचार्यः प्रज्ञादानाय ते द्विज । इहागतोऽहं सास्यामि परमार्थस्तवोदितः ॥ ३४ एवमेकमिदं विद्धि न भेदि सकलं जगत् । वासुदेवाभिधेयस्य स्वरूपं परमात्मनः ॥ ३५

ब्राह्मण उद्याच

तथेत्युक्त्वा निदाधेन प्रणिपातपुरःसरम् । पूजितः परया भक्त्या इच्छातः प्रययावृभुः ॥ ३६ इसी प्रकार कभी अरुचिकर पदार्थ रुचिकर हो जाते हैं और रुचिकर पदार्थीसे मनुष्यको उद्देग हो जाता है। ऐसा अब भला बीन-सा है जो आदि, मध्य और अन्त तीनी कालमें स्विकर ही हो ? ॥ २८ ॥ जिस प्रकार निट्टीका घर मिट्टीसे लीपने-पोतनेसे दृइ होता है, उसी प्रकार यह पार्थिव देह पार्थिव अबके परमाणुओंसे पृष्ट हो जाता है ॥ २९ ॥ जी, मेहूँ, मूँग, घृत, तेल, दूध, दही, गुड़ और फल आदि सभी पदार्थ पार्थिव परमाणु हो तो हैं । [इनमेंसे किसको स्वादु कहें और किसको अस्तादु ?] ॥ ३० ॥ अत: ऐसा आनकर तुन्हें इस स्वादु-अस्वन्त्रमा विचार करनेवाले चितको समदार्थी बनाना चाहिये, क्योंकि मोक्षको एकमात्र डपाय समता ही है॥ ३१॥

माक्षका एकमात्र वृपाय समता हा हा। इर ॥ ब्राह्मण बोरुं — हे शजन्! उनके ऐसे परमार्थमय वचन सुनक्द महाभाग निदाबने उन्हें प्रणाम करके कहा— ॥ इर ॥ "प्रभो! आप-असन्न होइये! कृपया बतत्प्रह्ये, मेरे कल्याणको कामनारो आये हुए आप कीन है ? हे हिज! आपके इन बचनोंको सुनकर मेरा सम्पूर्ण मोह नष्ट हो गया है ॥ इइ ॥

ऋभु बोले—हे द्विज ! मैं तेरा पुरु ऋभु हैं, तुझकें सदस्रदिवेकिनी बुद्धि प्रदान करनेके रूप्ये मैं बहाँ आया था। अब भैं जाता हैं, जो कुछ परमार्थ है वह मैंते तुझसे कह ही दिया है ॥ ३४ ॥ इस परमार्थतत्त्वका विचार करते हुए तू इस सम्पूर्ण जगत्को एक वासुदेव परमात्मानीका स्वरूप जान; इसमें भेद-भाव बिलकुल नहीं है ॥ ३५ ॥

ज्ञाह्मण जोले — तदनत्तर निदायने 'बहुत अन्छा' कह उन्हें प्रणाम किया और फिर उससे परम भक्तिपूर्वक पूछित हो ऋभु लेन्छानुसार बले गये ॥ ३६॥

🖢 🚃 വിവസന ഉട്ടി നെയും വ

इति श्रीविष्णुपुराणे द्वितीयेऽदो पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ 🚟 💛 💛 🕬

सोलहवाँ अध्याय

ऋपुकी आज्ञासे निदाधका अपने घरको लौटना

ब्राह्मण उवाच

ऋभुर्वर्षसहस्रे तु समतीते नरेश्वर । निदाधज्ञानदानाय तदेव नगरं ययौ ॥

नगरस्य बहिः सोऽथ निदाधं ददृशे पुनिः । महाबलपरीवारे पुरं विश्वति पार्थिवे ॥

3

द्राह्मणः बोर्छ--हे नरेश्वर । तदनन्तर सहस्र वर्ष व्यतीत होनेपर महर्षि ऋभु निदाधको ज्ञानोपदेश करनेके लिये फिर उसी नगरको गये॥ १॥

वहाँ पहुँचनेपर उन्होंने देखा कि वहाँका राजा बहुत-सी सेना आदिके साथ बड़ी धूम-धामसे नगरमे प्रवेश कर दूरे स्थितं महाभागं जनसम्मर्दवर्जकम् । क्षुत्क्षामकण्ठमायान्तमरण्यात्ससमित्कुशम् ॥ ३ दृष्ट्वा निदाधं स ऋभुरूपमम्याभिवाद्य च । उवाच करमादेकान्ते स्थीयते भवता द्विज ॥ ४

निदाय उपाच

भो वित्र जनसम्मदीं महानेष नरेश्वरः । प्रविविक्षुः पुरं रम्यं तेनात्र स्थीयते मया ॥ ५

स् पुरुवाच

नराधिपोऽत्र कतमः कतमश्चेतरो जनः। कथ्यतां मे द्विजश्रेष्ठ त्वमभिज्ञो मतो ममः॥

निदाय उवाच

योऽयं गजेन्द्रमुन्मत्तमद्रिशृङ्गसमुद्धित्तम् । अधिरूखे नरेन्द्रोऽयं परिलोकस्तथेतरः ॥

ऋषुरुवाच

एतौ हि गजराजानौ युगपहर्शितौ मम । भवता न विशेषेण पृथक्चिह्नोपलक्षणौ ॥ ८ तत्कथ्यतां महाभाग विशेषो भवतानयोः । ज्ञातुमिन्छाप्यहं कोऽत्र गजः को वा नराधिपः ॥ १

निदाच तथाच

गजो योऽयमधो ब्रह्मत्रुपर्यस्यैष भूपति: । वाह्यवाहकसम्बन्धं को न जानाति वै द्विज ॥ १०

स्भुखाच

जानाम्यहं यथा ब्रह्मस्तथा मामवद्योधय । अधःशब्दनिगद्यं हि कि चोर्ध्वमभिधीयते ॥ ११

बाह्मण उवाच

इत्युक्तः सहसारुद्धा निदायः प्राह तमृशुम् । श्रूयतां कथयाम्येष यन्मां त्वं परिपृच्छसि ॥ १२ उपर्यहं यथा राजा त्वमधः कुक्करो यथा । अवबोधाय ते ब्रह्मन्द्रष्टान्तो दर्शितो मया ॥ १३

माभुरवाच

त्वं राजेव द्विजश्रेष्ठ स्थितोऽहं गजवद्यदि। तदेतत्त्वं समाचक्ष्व कतमस्त्वमहं तथा॥ १४ रहा है और वनसे कुशा तथा समिध केंकर आया हुआ महाभाग निवाध जनसमृहसे हटकर भूखा-प्यासा दूर खड़ा है ॥ २-३ ॥

निदायको देखधर ऋभु उसके निकट गये और उसका अभिवादन करके बोले—'हे द्विज! यहाँ, एकान्तमे आप कैसे खड़े हैं' ॥ ४॥

निदाध बोले — है विश्वयर ! आज इस आंत रमणीक नगरमें राजा जाना चाहता है, सो मार्गमें बड़ी भीड़ हो रही है; इस्रस्थिये मैं यहाँ खड़ा हूँ ॥ ५॥

त्रहमु **बोले**—हे द्विजन्नेष्ट ! मालूम होता है आप यहाँकी सब श्रातें जानते हैं । अतः कहिये इनमें राजा कौन है ? और अन्य पुरुष कीन हैं ? ॥ ६ ॥

निदाध बोले—यह जो प्रयंतके समान कैंचे मत गजराजपर चढ़ा हुआ है वही राजा है, तथा दूसरे लोग परिजन हैं॥ ७॥

ऋभू बोले — आपने राजा और गज, दोनों एक माथ हो दिखाये, किंतु इन दोनोंके पृथ्क्-पृथक् विशेष चिह्न अथवा रूक्षण नहीं बतलाये ॥ ८ ॥ अतः हे महाभाग ! इन दोनोंमें क्या-क्या विशेषताएँ हैं, यह बतलाइये ! मैं यह जानना चाहता हूं कि इनमें कीन राजा है और कीन गज है ? ॥ ९ ॥

निदाध बोले—इनमें जो नीचे है वह गज है और उसके ऊपर राजा है। हे द्विज ! इन दोनोंका बाह्य-बाहक-सम्बन्ध है—इस बातको कीन नहीं जानता ? ॥ १०॥

ऋभु बोले—[ठीक है, किन्तु] हे बहान् ! मुझे इस प्रकार समझाइये, जिससे मैं यह जान सकूँ कि 'नीचे' इस सब्दका याच्य क्या है ? और 'ऊपर' किसे कहते हैं ॥ ११॥

्रहाह्मणने कहा—ऋभुके ऐसा कहनेपर निदायने अकस्मात् उनके ऊपर चड़कर कहा—"सुनिये, आपने जो पूछा है यही बतलाता हूँ—॥१२॥ इस समय राजाकी भौति में तो ऊपर हूँ और गड़को भौति आप नीने हैं। हे बह्मन्! आपको समझानेके लिये ही मैंने वह इम्रान्त दिखलाया हैं'॥१३॥

ऋभू बोले—हे द्विजश्रेष्ठ ! यदि आप राजाके समान है और मैं मजके समान हूँ तो यह बताइये कि आप कौन है ? और मैं कौन हूँ ? ॥ १४ ॥ आहाण उवान

इत्युक्तः सत्वरं तस्य प्रगृहा चरणावुभो । निदाघस्त्वाह भगवानाचार्यस्त्वमृभुर्धुवम् ॥ १५ नान्यस्थाद्वैतसंस्कारसंस्कृतं मानसं तथा । यथाचार्यस्य तेन त्यां मन्ये प्राप्तमहं गुरुम् ॥ १६

तवोपदेशदानाय । पूर्वशृक्षणादृत: । गुरुखेहादुभूनीम निदाघ समुपागतः ॥ १७

तदेतद्वपदिष्टं ते सङ्केपेण महामते । परमार्थसारभूतं यत्तदद्वैतमदोयतः ॥ १८

बाह्यण उनाच

एवमुक्ता ययौ बिहान्निदाघं स ऋभुर्गुरुः । निदाघोऽप्युपदेशेन तेनाद्वैतपरोऽभवत् ॥ १९ सर्वभूतान्यभेदेन ददुशे स तदात्मनः।

यथा ब्रह्मपरो मुक्तिमबाप परमां द्विजः ॥ २०

तथा त्वमपि धर्मज्ञ तुल्यात्मरिपुद्यान्धवः । जानब्रात्मानमवनीयते ॥ २१

सितनीलादिभेदेन यथैकं दुश्यते नभः।

भ्रान्तिदृष्टिभिरात्मापि तथैक: सन्पृथवपृथक् ॥ २२

एकः समस्तं यदिहास्ति किञ्चि त्तदच्यतो नास्ति परं ततोऽन्यत्।

सोऽहं स च त्वं स च सर्वमेत-दात्मस्वरूपं त्यज भेदमोहम् ॥ २३

श्रीपरादार उवाच

इतीरितस्तेन राजवर्य-H

स्तत्याज भेदं परमार्थदृष्टिः ।

स चापि जातिस्परणाप्तबोध-ः जन्मन्यपवर्गमाप ॥ २४

इति भरतनरेन्द्रसारवृत्तं

कथयति यश्च शृणोति भक्तियुक्तः ।

स विमलमतिरेति नात्ममोहं

भवति च संसरणेषु मुक्तियोग्यः ॥ २५

इति श्रोविष्णुपूराणे द्वितीयेऽदी बोडदो।ऽध्यायः ॥ १६ ॥

इति श्रीपराशरमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके श्रीमति विष्णुमहापुराणे द्वितीयॉऽशः समाप्तः ॥

ब्राह्मणने कहा-अधुके ऐसा कहनेपर निदायने तुरन्त ही उनके योनों चरण पकड़ लिखे और कड़ा-निश्चय ही आप आचार्यचरण महर्षि ऋभू है ॥ १५ ॥

हमारे आवार्यजीके समान अदैत-संस्कारयुक्त चित्त और किसीका नहीं है; अतः मेरा विचार है कि आप हमारे गुरुजी ही आकर उपस्थित हुए हैं।। १६ ॥

ऋभु बोले—हे निटाय ! पहले तुमने सेवा-दाश्रवा करके मेरा बहुत आदर किया था अतः तुम्हरि छोडवडा मैं त्रहभू नामक तुम्हारा गुरु हो तुमको उपदेश देनेके लिये आया है॥ १७ ॥ हे महामते ! 'समस्त पदाधीमें अर्द्धत-आत्म-वृद्धि रखना' यही परमार्थका सार है जो मैने तुन्हें संक्षेपवें उपदेश कर दिया ॥ १८ ॥

ब्राह्मण बोले--निदायसे ऐसा कह परम विद्वान गुरुवर भगवान् बरुभु चले गये और उनके उपदेशसे निदाय भी अर्द्धत-चिन्तनमें तत्पर हो गया ॥ १९ ॥ और समस्त प्राणियोंको अपनेसे अभित्र देखने लगा हे धर्मज ! हे पृथिवीपते ! जिस प्रकार उस ब्रह्मपरायण बाह्मणने परम मोक्षपद प्राप्त किया, उसी प्रकार सु भी आत्मा, शतु और मित्रादिमें समान भाव रतकर अगनेको सर्वगत जानता. इआ मृक्ति लाभ कर ॥ २०-२१ ॥ जिस प्रकार एक ही आकाश श्रेत-नील आदि फेदीवाला दिखायी देता है, उसी प्रकार भ्रान्तदृष्टियोको एक हो आत्मा पृथक्-पृथक् दौखता

है ॥ २२ ॥ इस संसारमें जो कुछ है वह सब एक आत्मा ही हैं और वह अविनाशों हैं, उससे अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है; मैं, तु और ये सब आत्मखरूप हो है। अतः

भेद-ज्ञानरूप मोहको छोड ॥ २३ ॥ श्रीपराज्ञरजी बोले-उनके ऐसा कहनेपर

सीवीरराजने परमार्थदिष्टिका आश्रय छेकर भेद-विद्वकी

छोड़ दिया और वे जातिस्मर ब्राह्मणश्रेष्ट भी बीधयुक्त

होनेसे उसी जन्ममें मुक्त हो गये॥ २४॥ इस प्रकार महाराज भरतके इतिहासके इस सारभृत वृत्तान्तको जो

पुरुष भक्तिपूर्व कहता या युगता है उसकी युद्धि निर्मेल हो जाती है, उसे कभी आत्म-चिस्मृति नहीं होती और

वह जन्म-जन्मान्तरमें मुक्तिकी योग्यता प्राप्त कर रेजा है ॥ २५ ॥



श्रीमञ्जारायणाय नमः

श्रीविष्णुपुराण

तृतीय अंश

पहला अध्याय

पहले सात मन्यन्तराँके मनु, इन्द्र, देवता, सप्तर्षि और मनुपुत्रांका वर्णन

श्रीमैत्रेय उताच

कथिता गुरुणा सम्यग्भूसमुद्रादिसंस्थितिः । सुर्यादीनां च संस्थानं ज्योतिषां चातिविस्तरात् ॥ देवादीनां तथा सृष्टिर्ऋषीणां चापि वर्णिता । चातुर्वण्यंस्य चोत्पत्तिस्तिर्यग्योनिगतस्य च ॥ ध्रवप्रह्वादचरितं विस्तराद्य त्वयोदितम्। मन्यन्तराण्यरोषाणि श्रोतुमिन्छाप्यनुक्रमात् ॥ मन्वन्तराधिपांश्चेव ः शक्रदेवपुरोगमान् । भवता कथितानेताञ्छोतुमिच्छाप्यहं गुरो ॥ ४

ओपराञार उवाच

अतीतानागतानीह यानि मन्वन्तराणि वै। तान्यहं भवतः सम्यक्तथयामि यथाक्रमम् ॥ स्वायम्भुवो मनुः पूर्व परः स्वारोचिषस्तक्षा । उत्त**मसामस**श्चेव रैवतश्चाक्ष्यस्तथा ॥ बडेते मनवोऽतीतास्साम्प्रतं तु रवेस्सुतः। वैवस्वतोऽयं यस्यैतत्सप्तमं वर्तनेऽन्तरम् ॥ स्वायम्भुवं तु कथितं कल्पादावन्तरं मया । देवास्सप्तर्पयश्चेव यथावत्कथिता मया॥ अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि मनोस्स्वारोविषस्य तु । मन्त्रन्तराधिपान्सम्यग्देवर्षीस्तत्सुतांस्तथा ॥ पारावतास्सतुषिता देवास्स्वारोचिषेऽन्तरे । विपश्चित्तत्र देवेन्द्रो मैत्रेवासीन्महाबल: ॥ १० ऊर्जः स्तम्पस्तथा प्राणो वातोऽथ पृषभस्तथा । निरयञ्ज परीवांश्च तत्र सप्तर्वयोऽभवन् ॥ ११ चैत्रकिम्पुरुषाद्याञ्च सुतास्खारोचिषस्य तु । द्वितीयमेतद्वयाख्यातमन्तरं शृणु चोत्तमम् ॥ १२

श्रीमैत्रेयजी बोले — हे गुरुदेव ! आपने पृथियी और समुद्र आदिकी स्थिति तथा सूर्य आदि प्रहगणके संस्थानका मुझसे भली प्रकार अति विस्तारपूर्वक वर्णन किया ॥ १ ॥ आपने देवता आदि और ऋषिवणोकी सृष्टि तथा चातुर्वर्ण्य एवं तिर्यक्-योनियत जीवोंकी उत्पतिन्ध भो वर्णन किया ॥ २ ॥ धूच और प्रह्लादक चरित्रोंको भी आपने विस्तारपूर्वक सूना दिया । अतः हे गुरो ! अब में आपके मुखार्रावन्दसे सन्पूर्ण मन्वन्तर तथा इन्द्र और देवनाओके सहित मन्वनारीके अधिपति समस्त मनुओंका बर्णन सुनना चाहता है [आप वर्णन कीजिये] ॥ ३-४ ॥

श्रीपराञारजी बोले--- भूतकालमें जितने मन्वन्तर हुए है तथा आगे भी जो-जो होंगे, उन सबका मैं तुमसे क्रमशः वर्णन करता हैं ॥ ५ ॥ प्रथम पनु खायम्भुय थे । उनके अनुसर क्रमञः खारीचिष, उत्तम, तामस, रेवत और बाध्युष हुए ॥ ६ ॥ ये छः मनु पूर्वकालमें हो चुके हैं । इस समय सूर्यपुत्र वैयस्वत मन् हैं, जिनका यह सातवाँ मन्द्रकार वर्तमान है ॥ ७ ॥

कल्पके आदिमें विस स्थायम्भव-भन्वनारके विषयमें मैंने कहा है उसके देवता और सप्तर्षियोका तो मै पहले ही यथावत् वर्णन कर चुका है ॥ ८ ॥ अब आगे मैं स्वारोजिय मनुके मन्यन्तराधिकारी देवता, ऋषि और मन्पूर्वोका स्वष्टतया वर्णन कर्कमा ॥ ९ ॥ हे मैत्रेय ! खारोचिषम-बन्तरमं पारावत और तृषितगण देवता थे. महाबली विपक्षित् देवराज इन्द्र थे ॥ १० ॥ ऊर्ज, स्तम्भ, प्राण, बात, पुषभ, निरय और परीवान्—ये उस समय सप्तर्षि थे।। ११।। तथा चैत्र और किम्पुरुष आदि व्यातीकियमनुके पुत्र थे। इस प्रकार तुमसे द्वितीय मन्बन्तरका वर्णन इस दिया। अब उत्तम-मन्बन्तरका विकास भने ग १२॥

सुशान्तिर्नाम देवेन्द्रो मैत्रेवासीत्सुरेश्वरः ॥ १३ सुधामानस्तथा सत्या जषाश्चाध प्रतर्दनाः । वशवर्तिनश्च पञ्चेते गणा द्वादशकारस्पृताः ॥ १४ वसिष्ठतनया होते सप्त सप्तर्वयोऽभवन् । अजः परशुदीमाद्यास्तथोत्तममनोस्सुताः ॥ १५ तामसस्यान्तरे देवास्सुपारा हरयस्तथा । सत्याश्च सुधियश्चेव सप्तविंशतिका गणाः ॥ १६

तृतीयेऽप्यन्तरे ब्रह्मञ्जूतमो नाम यो मनुः।

शिबिरिन्द्रस्तथा चासीच्छतयज्ञोपलक्षणः। सप्तर्वयश्च ये तेवां नेवां नामानि मे शृणु ॥ १७ ज्योतिर्धामा पृथुः काव्यक्षैत्रोऽप्रिवनकस्तथा। पीवरश्चर्ययो होते सप्त तत्रापि चान्तरे॥ १८

नरः स्थातिः केतुरूपो जानुजङ्गादयस्तथा । पुत्रास्तु तामसस्यासत्राजानसुमहाबलाः ॥ १९

पञ्चमे वापि मैत्रेय रैवतो नाम नामतः । मनुर्विभुश्च तत्रेन्द्रो देवांश्चात्रान्तरे शृणु ॥ २०

अमिताभा भूतरया वैकुण्ठास्ससुमेधसः । एते देवगणास्तत्र चतुर्दश चतुर्दश ॥ २१

हिरण्यरोमा वेदश्रीरूर्घ्वबाहुस्तश्रापरः ।

वेदबाहुस्सुधामा च पर्जन्यश्च महामुनिः। एते सप्तर्षयो विप्र तत्रासन्नैवतेऽन्तरे॥ २२

बलबन्युश्च सम्भाव्यस्सत्यकाद्याश्च तत्सुताः । नरेन्द्राश्च महाबीर्या बभूवुर्गुनिसत्तम् ॥ २३

स्वारोचिषश्चोत्तमश्च तामसो रैवतस्तथा ।

प्रियव्रतान्त्रया होते चत्वारो मनवस्स्मृताः ॥ २४

विष्णुमाराध्य तपसा स राजर्षिः प्रियवतः ।

मन्वन्तराधिपानेताँल्लक्ष्यवानात्पवंशजान् ॥ २५ षष्ठे मन्वन्तरे चासीद्याक्षुषाख्यातया मनुः ।

मनोजवस्तथैवेन्द्रो देवानपि निबोध मे ॥ २६ आप्याः प्रसता भव्याश्च पृथकाश्च दिवौकसः ।

आप्याः प्रसूता भव्याश्च पृथुकाश्च दिवौकसः । महानुभावा लेखाश्च पञ्चेते ह्यष्टका गणाः ॥ २७ हे ब्रह्मन् ! तीसरे पन्वन्तरमें उत्तम नामक मनु और सुशान्ति नामक देवाधिपति इन्द्र थे ॥ १३ ॥ उस समय सुधाम, सत्म, जप; प्रतर्दन और वशवर्ती—ये पाँच बारह-बारह देवताओंक गण थे ॥ १४ ॥ तथा वसिष्ठजीके सात पुत्र सप्तर्षिगण और अज, परशु एवं दोप्त

आदि उत्तममनुके पुत्र थे ॥ १५ ॥

तामस-मन्वत्तरमें सुपार, हरि, सत्य और सुधि— थे चार देवताओंके वर्ग थे और इनमेरे प्रत्येक वर्गमें सत्ताईस-सत्ताईस देवगण वे॥ १६॥ सौ अधमेध यक्तवाला राजा शिवि इन्द्र या तथा उस समय जी सप्तर्षिगण थे उनके नाम मुझसे सुनों— ॥ १७॥ ज्योतिर्धामा, पृथु, काक्य, चैंज, ऑग्न, बनक और पीवर—ये उस मन्वन्तरके सप्तर्षि थे॥ १८॥ तथा नर, ख्याति, केतुरूप और जानुजङ्क आदि तामसमनुके महाबस्त्रे पृष्ठ ही उस समय राज्याधिकारी थे॥ १९॥

हे मैत्रेय ! पाँचवे मन्यन्तरमे रेवत नामक मनु और विधु नामक इन्द्र हुए तथा उस समय जो देवगण हुए उनके नाम सुनो — ॥ २० ॥ इस मन्वन्तरमें चौदह-चौदह देवताओंके अमिताभ, भूतरय, वैकुण्ड और सुमेधा नामक गण थे ॥ २१ ॥ हे विष्र ! इस रैवत-मन्वन्तरमें हिरण्यरोमा, वेदश्री, कर्ष्यवाहु, वेदबाहु, सुधामा, पर्जन्य और महापुनि—ये सात सप्तर्षिणण थे ॥ २२ ॥ हे मुनिसत्तम ! उस समय रैवतमनुके महावीर्यज्ञाली पुत्र बरुवन्यु, सम्भाव्य और सस्यक आदि राजा थे ॥ २३ ॥

हे मैत्रेय ! स्वारोचिय, उत्तम, तामस और रैवत—ये चार मनु, राजा व्रियवातके वंशधर कहे जाते हैं॥ २४॥ राजर्षि व्रियवतने तपस्याद्वारा भगवान् विष्णुकी आराधना करके अपने वंशमें उत्पन्न हुए इन चार मन्वन्तराधियोंको प्राप्त किया था॥ २५॥

छटे पन्तन्तरमें चासूप नामक मनु और मनोजव नामक इन्द्र थे। उस समय जो देवगण थे उनके नाम सुनो-----।। २६॥ उस समय आप्य, प्रसृत, पव्य, पृथुक और ठेख----ये पाँच प्रकारके महानुभाव देवगण वर्तमान थे और इनमेंसे प्रत्येक गणमें आठ-आठ देवता थे॥ २७॥

सुमेधा विरजाश्रैव हविष्मानुतमो मधुः। अतिनामा सहिष्णुश्च सप्तासन्निति चर्चयः ॥ २८ **ऊरु: पुरुशतद्युग्नप्रमुखास्सुमहाबला: ।** चाक्षुषस्य मनोः पुत्राः पृथिवीपतयोऽभवन् ॥ २९ विवस्वतस्सुतो विप्र श्राद्धदेवो महाद्युति: । मनुस्संवर्तते धीमान् साम्प्रतं सप्तमेऽन्तरे ॥ ३० आदित्यवसुरुद्राद्या देवाश्चात्र महामुने । पुरन्दरस्तथैवात्र मैत्रेय त्रिदशेश्वरः ॥ ३१ वसिष्ठः काञ्यपोऽधात्रिर्जमदक्षिसार्गतमः । विश्वामित्रभरद्वाजौ सप्त सप्तर्घयोऽभवन् ॥ ३२ इक्ष्वाकुश्च नृगश्चेव थृष्टः शर्यातिरेव च । नरिष्यन्तश्च विख्यातो नाभागोऽरिष्ट एव च ॥ ३३ करूषञ्च पुषधञ्च सुमहाँल्लोकविश्रुतः । मनोर्वेवस्वतस्यैते नव पुत्राः सुधार्मिकाः ॥ ३४ विष्णुशक्तिरनौपम्या सत्त्वोद्रिका स्थितौ स्थिता । मन्यन्तरेषुशेषेषु देवत्वेनाधितिप्रति ॥ ३५ अंशेन तस्या जज्ञेऽसी वज्ञस्स्वायम्भुवेऽन्तरे । आकृत्यां मानसो देव उत्पन्न: प्रथमेऽन्तरे ॥ ३६ ततः पुनः स वै देवः प्राप्ते स्वारोचियेऽन्तरे । तुषितायां समुत्पन्नो ह्याजितस्तुषितैः सह ॥ ३७ औत्तमेऽप्यन्तरे देवस्तुचितस्तु पुनस्स वै। सत्यायामभवत्सत्यः सत्यैसाह सुरोत्तमैः ॥ ३८ तापसस्यान्तरे चैव सम्प्राप्ते पुनरेव हि । हयांयां हरिभिस्सार्ध हरिरेव वभूव ह ॥ ३९ रैवतेऽप्यन्तरे देवस्सम्भूत्यां मानसो हरिः। सम्भूतो रैवतैस्सार्ध देवैदेववरो हरि: ॥ ४० चाक्षुषे चान्तरे देवो वैकुण्ठः पुरुषोत्तमः । विकुण्ठायामसौ जज्ञे वैकुण्ठैर्दैवतै: सह ॥ ४१ मन्वन्तरेऽत्र सम्प्राप्ते तथा वैवस्वते द्विज । वामनः कश्यपाद्विष्णुरदित्यां सम्बध्नव ह ॥ ४२ त्रिभिः क्रमैरिमाँल्लोकाञ्चित्वा येन महात्मना । पुरन्दराय त्रैलोक्यं दत्तं निहतकण्टकम् ॥ ४३

उस मन्यन्तरमें सुमेथा, विस्त्रा, हविष्मान, उत्तम, मधु, अतिनामा और सहिष्णु — ये सात सप्तर्षि थे ॥ २८ ॥ तथा वाक्षुषके अति बलवान् पुत्र ऊरु, पुरु और शतसुत्र आदि राज्यधिकारी थे ॥ २९ ॥

हे विष ! इस समय इस सातवें मन्तन्तरमें सूर्यके पुत्र महातेजस्ती और बुद्धिमान् श्राह्मदेवजी मतु है ॥ ३० ॥ हे महामुने ! इस मन्यक्तमें आदित्य, यसु और रह आदि देवशण है तथा पुरन्दर तामक इन्द्र है ॥ ३१ ॥ इस समय वसिष्ठ, काश्यण, अति, जगदिश, गीतम, विश्वामित्र और भरद्वाज—ये सात सप्तर्षि है ॥ ३२ ॥ तथा वैवस्थत मनुके इश्वाकु, नृम, धृष्ठ, हार्याति, नरिष्यन्त, नाभाग, औरष्ट, यक्त्य और पृथ्ध—ये अत्यन्त लोकप्रसिद्ध और धर्मात्मा नी पुत्र है ॥ ३३-३४ ॥

समस्त मन्दन्तरीमें देवरूपसे स्थित भगवान् विष्णुको अनुपम और सलप्रधाना शक्ति ही संसारकी स्थितिमे उसकी अधिष्ठात्री होती है ॥ ३५ ॥ सबसे पहले स्वायम् व-मन्त्रन्तरमें मानसदेव यज्ञपुरुष उस विष्यु-शक्तिके अंशसे ही आवृतिक गर्भसे उत्पन्न हुए थे ॥ ३६ ॥ ६३ स्वासेचिय-पन्चन्तरकं उपस्थित होनेपर वे मानसदेव श्रीअजित हो तुषित नामक देवगणेकि साथ नुष्टिनासे उत्पन्न इए ॥ इंश । फिर उत्तम-मन्यन्तरमें वे तुष्तिदेव हो देवश्रेष्ठ सत्यगुणके सहित सत्यरूपसे सल्वाके उदरसे प्रकट हुए ॥ ३८ ॥ तामस-मन्वन्तरके प्राप्त होनेपर वे हार-जाम देवगणके सहित हरिरूपसे हर्याके गर्भसे उत्पन्न हुए॥ इए॥ तत्पश्चात् वे देवन्नेष्ठ हरि, रैयत-मनानारमें तल्हालीन देवगणके सहित एम्पृतिके उदरसे प्रकट होकर मानस नामसे विख्यात हुए ॥ ४० ॥ तथा चाक्ष्य-मन्यन्तरमे ये पुरुषोत्तम भगवान् वैकुण्ट नामक देवगणोंक सहित विकुण्ठासे उत्पन्न होकर वैकुण्ठ कटलाये ॥ ४१ ॥ और है द्विज । इस वैवस्वत-मन्वन्तरके प्राप्त होनेपर भगवान् विष्ण् कञ्चपजीद्वारा अदितिके गर्भसे वामनरूप होकर प्रकट हुए॥ ४२ ॥ उन महातमा वामनजीने अपनी तीन हर्गोसे सम्पूर्ण लोकीको जीतकर यह निष्कण्टक बिलोकी इन्ह्रको दे दी थी॥ ४३॥

इत्येतास्तनवस्तस्य सप्तमन्वन्तरेषु वै। हे विश्व ! इस श्र सप्तम्वेवाभवन्वित्र याभिः संवर्धिताः प्रजाः ॥ ४४ सात मूर्तियाँ प्रकट यस्माद्विष्टमिदं विश्वं तस्य शक्स्या महात्मनः । तस्मात्स प्रोच्यते विष्णुविशिर्धातोः प्रवेशनात् ॥ ४५ परमात्माको ही शक्तिरं सर्वे च देवा मनवस्समस्ता-स्तप्तप्रयो ये मनुसूनवश्च । इन्द्रश्च योऽयं त्रिदशेशभूतो समस्त देवता, सनु, र अधिपति इन्द्रगण— विष्णोरशेषास्तु विभूतयस्ताः ॥ ४६ विश्वतियाँ है ॥ ४६ ॥

हे विश्र ! इस प्रकार साती मन्त्रन्तरोमें भगवान्त्री ये सात मूर्तियाँ प्रकट हुई, जिनसे (भविष्यमें) सम्पूर्ण प्रजाको कृद्धि हुई॥ ४४॥ यह सम्पूर्ण विश्व उन परमात्माकी ही शक्तिसे व्याप्त है; अतः वे 'विष्णु' कहलाते हैं, क्योंकि: 'विश्' शतुका अर्थ प्रवेश करना है॥ ४५॥ समस्त देवता, मनु, सप्तर्षि तथा मनुपुत्र और देवताओंके अधिपति इन्द्रगण—के सब भगवान् विष्णुको ही विश्वतियाँ है॥ ४६॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽरो प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय

सावर्णिमनुकी उत्पत्ति तथा आगामी सात मन्द्रन्तरोके मनु, मनुपुत्र, देवता, इन्द्र और सप्तर्षियोंका वर्णन

श्रीमैंबेय उदाच

प्रोक्तान्येतानि भवता सप्तमन्यक्तराणि वै । भविष्याण्यपि विप्रर्थे ममाख्यातुं त्वमहेंसि ॥ १

औपराहार उवाचा - १००१ न १०

सूर्यस्य पत्नी संज्ञाभूतनया विश्वकर्मणः।

पनुर्यमो यमी जैव तदपत्यानि वै मुने ॥ २

असहन्ती तु सा भर्तुस्तेजञ्ज्ञायां युयोज वै ।

भर्तुशुष्रणोऽरण्यं स्वयं च तपसे ययौ ॥ ३

संज्ञेयमित्यथार्कश्च छायायामात्मज्ञ्ञयम् ।

श्चनैश्चरं मनुं चान्यं तपतीं चाप्यजीजनत् ॥ ४

छायासंज्ञा ददौ शापं यमाय कुपिता यदा ।

तदान्येयमसौ बुद्धिरित्यासीद्यमसूर्ययोः ॥ ५

ततो विवस्तानाख्याते तयैवारण्यसंस्थिताम् ॥ ६

याजिरूपधरः सोऽथ तस्यां देवावधाश्चिनौ ।

जनयामास रेवन्तं रेतसोऽन्ते च भास्तरः ॥ ७

आनिन्ये चपुनः संज्ञां स्वस्थानं भगवात्रविः ।

तेजसश्चमनं चास्य विश्वकर्मा चकार ह ॥ ८

श्रीमैत्रेयजी बोस्डे—हे विप्रधें ! आपने यह सात अतीत मन्वन्तरीकी कथा कहीं, अब आप गुड़ासे आगामी मन्वन्तरीका भी वर्णन कॉन्डिये ॥ १ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले — हे मुने ! विश्वकर्मकी पुत्री संज्ञा सूर्यकी भागी थी। उससे उनके मनु, यम और यमी — तीन सत्तानें हुई ॥ २ ॥ कालात्तरमें पतिका तेज सहन न कर सकनेके कारण लंका छात्राको पतिको सेवामें निश्क कर स्त्रयं तपस्याके दिये वनको चली गयी ॥ ३ ॥ सूर्यदेवने यह समझकर कि यह संज्ञा हो है, छात्रासे शर्मधर, एक और मनु तथा तपतो — ये तीन सन्तानें उत्पन्न कीं ॥ ४ ॥

्क दिन जब छायारूपिणी संज्ञाने क्रोधित होकर [अपने पुत्रके पश्चपातसे] यमको ज्ञाप दिया तब सूर्य और यमको विदित हुआ कि यह तो कोई और है ॥ ५ ॥ तब छायाके द्वारा ही सारा रहस्य खुल जानेपर सूर्यदेवने समाधिमें स्थित होकर देखा कि संज्ञा घोड़ीका रूप भारण कर यममें तपस्या कर रही है ॥ ६ ॥ अतः उन्होंने भी अधरूप होकर उससे दो अधिनीकुमार और रेतःसावके अननार ही रेवन्तको उत्पन्न किया ॥ ७ ॥

फिर-भगवान् सूर्यं संज्ञाको अपने स्थानपर ले आये

कृतवानष्टमं भागं स व्यशातयदव्ययम् ॥ यत्तस्माद्वैष्णवं तेजञ्जातितं विश्वकर्मणा । जाज्वल्यमानमपतत्तद्धमौ मुनिसत्तम ॥ १० त्वष्टैव तेजसा तेन विष्णोश्चक्रमकल्पयत् । त्रिशूलं चैव शर्वस्य शिविकां धनदस्य च ॥ ११ शक्ति गृहस्य देवानामन्येषां च यदाय्थम् । तत्सर्वं तेजसा तेन विश्वकर्मा व्यवधंयत्।। १२ छायासंज्ञासतो योऽसौ द्वितीयः कथितो मन्: । पूर्वजस्य सवर्णोऽसौ सावर्णिस्तेन कथ्यते ॥ १३ तस्य मन्वन्तरं होतत्सावर्णिकमधाष्ट्रमम्। तच्छ्रणुषु महाभाग भविष्यत्कथयामि ते ॥ १४ सावर्णिस्तु मनुर्योऽसौ मैत्रेय भविता ततः । सुतपाक्षामिताभाश्च मुख्याश्चापि तथा सुराः ॥ १५ तेषां गणश्च देवानामेकैको विशकः स्पृतः । सप्तर्षीनिप वक्ष्यामि भविष्यान्युनिसत्तम ॥ १६ दीक्षिमान् गालवो रामः कृपो द्रौणिस्तथा परः । मत्पुत्रश्च तथा व्यास ऋष्यशृङ्गश्च सप्तमः ॥ १७ विष्णुप्रसादादनघः पातालान्तरगोचरः । विसेचनसुतस्तेषां बलिरिन्द्रो भविष्यति ॥ १८ विरजाशोर्वरीवांश निर्मोकाद्यास्त्रधापरे । सावर्णेस्तु मनोः पुत्रा भविष्यन्ति नरेश्वराः ॥ १९ नवमो दक्षसावर्णिभविष्यति मुने मनुः॥ २० पारा मरीचिगभांश्च सुधर्माणसाधा त्रिधा । भविष्यन्ति तथा देवा होकैको द्वादशो गणः ॥ २१ तेषामिन्द्रो महाबीर्यो भन्निष्यत्यद्धतो द्विज ॥ २२ सवनो द्यतिपान् भच्यो वसुर्येधातिधिस्तथा । ज्योतिष्मान् सप्तमः सत्यस्तत्रेते च महर्षयः ॥ २३ धृतकेतुर्द्रीप्तिकेतुः पञ्चहस्तनिरामधौ । पृथुश्रवाद्याश्च तथा दक्षसावर्णिकात्मजा: ॥ २४ दशमो ब्रह्मसावर्णिर्भविष्यति स्ने मनुः। सुवामानो विशुद्धाश्च शतसंख्यास्तवा सुराः ॥ २५

भ्रममारोप्य सूर्यं तु तस्य तेजोनिशातनम् ।

तथा विश्वकर्मीन उनके तेजको शान्त कर दिया॥ ८॥ उन्होंने सूर्यको भ्रमियन्त्र (सान) पर चढ़ाकर उनका तेज छाँटा, किन्तु ने उस अश्रुण्ण तेजका केजल अष्ट्रमांश ही श्लीण कर सके॥ ९॥ हे मुनिसत्तम ! सूर्यके जिस जान्वल्यनान वैष्णव-तेजको विश्वकर्माने छाँटा था वह पृथिवीपर गिरा॥ १०॥ उस पृथिवीपर गिरे हुए सूर्यन्तेजसे ही विश्वकर्माने विष्णुभगवान्त्रम चक्र, शङ्करका विश्वक, कुर्वरका विश्वान, कार्तिकेयकी शक्ति बनायी तथा अन्य देवताओंके भी जो-को शस्त्र थे उन्हें उससे पृष्ट किया॥ ११-१२॥ जिस अयासंज्ञाक पुत्र दूसरे मनुका उत्तर वर्णन कर चुके हैं वह अपने अग्रज मनुका सवर्ण होनेसे सावर्णि कहलाया॥ १३॥ है महाभग ! सुनो, अब मैं उनके इस

क महामागाः सुना, अन्य म उनका इस सार्वाणंकनाम आठवें मन्वस्तरका, जो आगे होनेवाला है, वर्णन करता हूँ ॥ १४ ॥ हे मैंन्नेय! यह सार्वाणं ही उस समय मनु होगे तथा सुतप, अमिताभ और मुख्यगण देवता होंगे ॥ १५ ॥ उन देवताओंका प्रस्केक गण बीस-बासका समूह कहा जाता है। हे मुनिसत्तम ! अब मैं आगे होनेवाले सप्तर्षि भी बतलाता हूँ ॥ १६ ॥ उस समय दीप्तिमान, गालव, सभ, कृप, द्रोण-पुत्र अश्वत्थाना, मेरे पुत्र व्यास और सनवें ऋष्यशृङ्ग—चे सप्तर्वि होंगे ॥ १७ ॥ तथा पाताल-स्वेकवासी विरोचनके पुत्र विल श्रीकिष्णुभगवानकी कृपासे तत्कालीन इन्द्र और सावर्णिमनुके पुत्र विरखा, उर्वरीवान् एवं निर्मोक आदि तत्कालीन सजा होंगे ॥ १८-१९ ॥

हे मुने ! नवें मन् दक्षसावर्णि होंगे। उनके समय पार, मरीचिगर्भ और सुधर्मा नामक तोन देववर्ग होंगे, जिनमेंसे प्रत्येक वर्गमे बारह-बारह देवता होंगे; तथा हे दिज ! उनका नायक महापराक्रमी अन्दुत नामक इन्द्र होगा । ॥ २०—२२ ॥ सवन, झुतिमान, भव्य, वसु, मेधातिर्धि, ज्योतिष्मान् और सातवें सत्य—ये उस समयके समर्थि होंगे ॥ २३ ॥ तथा धृतकेतु, दीसिकेत्, पश्चहस्त, निरामय और पृथुक्षधा आदि दक्षसावर्णिमनुके पुत्र होंगे ॥ २४ ॥

हे मुने ! दसवें मनु अहरसावर्णि तींगे । उनके समय

तेषामिन्द्रश्च भविता शान्तिर्नाम महाबलः । सप्तर्षयो भविष्यन्ति ये तथा ताञ्छुणुषु ह ॥ २६ हविष्मान्सुकृतस्मत्यस्तपोमूर्तिस्तथापरः । नाभागोऽप्रतिमौजाश्च सत्यकेतुस्तश्चेय च ॥ २७ सुक्षेत्रश्चोत्तमौजाश्च भूरिषेणादयो दश । ब्रह्मसावर्णिपुत्रास्तु रिक्षिष्यन्ति वसुन्धराम् ॥ २८ एकादशश्च भविता धर्मसावर्णिको मनुः ॥ २९ विहङ्गमाः कामगमा निर्वाणस्तयस्तथा । गणास्वेते तदा मुख्या देवानां च भविष्यताम् ।

एकैकस्त्रिंशकस्तेषां गणशेन्द्रश्च वै वृषः ॥ ३०

निःस्वरश्चामितेजाश्च वपुष्पान्यृणिरारुणिः ।
हविष्पाननधश्चैव भाव्याः सप्तर्षयस्तथा ॥ ३१
सर्वत्रगस्तुथर्मा च देवानीकादयस्तथा ॥ ३२
स्वर्पत्रस्तु सावणिर्भविता द्वादशो मनुः ।
ऋतुथामा च तत्रेन्द्रो भविता शृणु मे सुरान् ॥ ३३
हरिता रोहिता देवास्तथा सुमनसो द्विज ।
सुकर्माणः सुरापाश्च दशकाः पञ्च वै गणाः ॥ ३४
तपस्त्री सुतपाश्चैव तपोमूर्तिस्तपोरितः ।
तपोधृतिद्यंतिश्चान्यः सप्तमस्तु तपोधनः ।
सप्तर्षयस्त्विम तस्य पुत्रानिष निबोध मे ॥ ३५
देववानुपदेवश्च देवश्रेष्ठादयस्तथा ।
मनोस्तस्य महावीर्या भविष्यत्ति महानृपाः ॥ ३६
त्रयोदशो रुचिर्नामा भविष्यति मुने मनुः ॥ ३५

सुत्रामाणः सुकर्माणः सुधर्माणस्त्रथामराः ।

निर्मोहस्तत्त्वदर्शी च निष्प्रकम्प्यो निरुत्सकः ।

धृतिमानव्ययशान्यसाप्तमस्तृतपा

त्रवर्स्त्रिशिद्यस्ते देवानां यत्र वै गणाः ॥ ३८

दिवस्पतिर्महाबीर्यस्तेषामिन्द्रो भविष्यति ॥ ३९

सप्तर्षयस्त्वमी तस्य पुत्रानपि निखोध मे ॥ ४०

चित्रसेनविचित्राद्या भविष्यन्ति महीक्षितः ॥ ४१

सुधामा और विद्युद्ध नामक सौ-सौ देवताओंके दो गण होंगे ॥ २५ ॥ महाचलवान् दान्ति उनका इन्द्र होगा तथा उस समय जो सप्तर्षिगण होंगे उनके नाम सुनो — ॥ २६ ॥ उनके नाम इविष्मान्, सुकृत, सख, तपोमूर्ति, नाभाग, अप्रतिमीजा और सख्येत्वु हैं ॥ २७ ॥ उस समय बहासावर्णिमनुके सुक्षेत्र, उत्तमीजा और भूष्टिण आदि दस पुत्र पृथिवीको रक्षा करेंगे ॥ २८ ॥

न्यारहवाँ यनु धर्मसावणि होगा। उस समय होनेवाले देवताओंके बिहक्षण, कामगम और निर्वाणरित नामक मुख्य गण होंगे—इनमेंसे प्रत्येकमें तीस-तीस देववा रहेंगे और वृथ नामक इन्द्र होगा॥ २९-३०॥ उस समय होनेवाले सप्तर्षियोंके नाम निःस्वर, अग्नितेजा, वपुष्पान, घृषि, आरुणि, हविष्णान् और अनघ है॥ ३१॥ तथा धर्मसावर्षि मनुके सर्वत्रम, सुधर्मा, और देवानीक आदि पुत्र उस समयके राज्याधिकारी पृथिवोपति होंगे॥ ३२॥

रहरपुत्र सावणि बारहवाँ मनु होगा। उसके समय ऋतुधाना नामक इन्द्र होगा तथा तत्कारहैन देवताओंक नाम से हैं सुनो—॥ ३३॥ हे हिज! उस समय दस-दस देवताओंक हरित, सेहित, सुमना, सुकर्मा और सुराप नामक पाँच गण होंगे॥ ३४॥ तपस्वी, सुतपा, तपोमूर्ति, तपोसंति, तपोधृति, तपोधृति तथा तपोधन—ये सात सर्ह्या होंगे। अब मनुपुत्रोंक नाम सुनो—॥ ३५॥ उस समय उस मनुके देववान, उपदेव और देवश्रेष्ट आदि महावीर्यशास्त्रों पुत्र तत्कारतेन सम्राद् होंगे॥ ३६॥

है मुने ! तेरहवाँ रुचि नामक मनु होगा। इस मन्बन्तरभें सुत्रामा, सुकर्मा और सुधर्मा नामक देवगण होंगे इनमेंसे प्रत्येकमे तैतास-तैतास देवता रहेंगे; तथा महाबस्रवान् दिवस्पति उनका इन्द्र होगा॥ ३७— ६९ ॥ निर्मोह, तत्त्वदशों, निष्कस्प, निरुत्सुक, धृतिमान, अव्यय और सुत्रपा—ये तत्कालीन सप्तर्षि होंगे। अब मनुपुत्रोंक नाम भी सुनो॥ ४०॥ उस मन्बन्तरमें चित्रसेन और विचित्र आदि मनुप्र एखा होंगे॥ ४१॥

शुचिरिन्द्रः सुरगणास्तत्र पञ्च शृणुष्न तान् ॥ ४२ चाक्षपाश्च पवित्राश्च कनिष्ठा प्राजिकास्तथा। वाचावृद्धाश्च वै देवास्सप्तर्वीनपि मे शृणु ॥ ४३ अग्निबाहः शुचिः शुक्रो मागधोऽग्निध एव च । युक्तस्तव्या जितशान्यो मनुपुत्रानतः शृणु ॥ ४४ ऊरुगम्भीरबुद्ध्याद्या मनोस्तस्य सृता नृपाः । कथिता मुनिशार्दुल पालविष्यन्ति ये महीम् ॥ ४५ बतुर्युगान्ते बेदानां जायते किल विप्रवः। प्रवर्तयन्ति तानेत्य भुवं सप्तर्षयो दिवः ॥ ४६ कृते कृते स्मृतेर्विष्ठ प्रणेता जायते मनुः । देवा यज्ञभुजस्ते तु यावन्यन्वन्तरं तु तत्।। ४७ भवन्ति ये मनोः पुत्रा यावन्यन्वन्तरं तु तैः । तदन्वयोद्धवैश्वेव तावद्धः परिपाल्यते ॥ ४८ मनुस्सप्तर्षयो देवा भूपालाश्च मनोः सताः । मन्वन्तरे भवन्येते शक्रश्चैवाधिकारिणः ॥ ४९ चतुर्दशभिरेतैस्तु गतैर्मन्वन्तरैर्द्धिज । सहस्रयुगपर्यन्तः कल्पो निश्शेष उच्यते ॥ ५० तावत्प्रमाणा च निशा ततो भवति सत्तम । ब्रह्मरूपधरक्शेते शेषाहावम्बुसम्प्रवे ॥ ५१ त्रैलोक्यमस्त्रिलं प्रस्त्वा भगवानादिकृद्विभुः । स्वमायासंस्थितो वित्र सर्वभूतो जनार्दनः ॥ ५२ ततः प्रवृद्धो भगवान् यथा पूर्वं तथा पुनः । सृष्टि करोत्यव्ययात्मा कल्पे कल्पे रजोगुणः ॥ ५३ मनवो भूभुजस्तेन्द्रा देवास्सप्तर्षयस्तथा। सात्त्रिकोऽशः स्थितिकरो जगतो द्विजसत्तम ॥ ५४ चतुर्युगेऽप्यसौ विष्णुः स्थितिव्यापारलक्षणः। युगव्यवस्थां कुरुते यथा मैत्रेय तच्छणु ॥ ५५ कृते युगे परं ज्ञानं कपिलादिस्वरूपधृक् । ददाति सर्वभूतात्मा सर्वभूतहिते रतः॥ ५६ चक्रवर्त्तिस्वरूपेण त्रेतायामपि स प्रभुः। दृष्टानां निषष्ठं कुर्वन्यरिपाति जगत्त्रयम् ॥ ५७

भौपश्चतुर्दशश्चात्र मंत्रेय भविता मनुः।

हे मैत्रेय! बौदहर्बी मनु भीम होगा। उस समय इक्ति नामक इन्द्र और पाँच देवगण होंगे; इनके नाम सुनो—वे चाक्षुष, पवित्र, कनिष्ठ, भ्राजिक और वाचावृद्ध, नामक देवता है। अब तत्कालीन सप्तर्षियोंके नाम भी सुनो ॥ ४२-४३ ॥ उस समय अग्निवाह, शूचि, शुक्र, मागध, आग्निश्च, युक्त और जित—ये सप्तर्षि होंगे। अब मनुपूत्रोंके विषयमें सुनो ॥ ४४ ॥ हे मुनिशार्यूल! कहते है, उस मनुके कठ और गम्भीरबुद्धि आदि पुत्र होंगे जो सन्तराधिकारी होकर पृथिवीका पालन वरेंगे॥ ४५ ॥

प्रत्यास्वरंति हाकर गृत्यायो पाठम प्रत्या कर्या प्रत्येक चतुर्युगके अन्तमें नेदीका लोग हो जाता है, उस समय सप्तर्षिगण ही स्वर्गलोकसे पृथिवीमें अवतीर्ण होकर उनका प्रचार करते हैं ॥ ४६ ॥ उत्लेक सत्ययुगके आदिमें [मनुष्योको धर्म-मर्यादा स्थापित करनेके लिये] स्मृति-शास्त्रके रचयिता मनुका प्रादुर्भाव होता है; और उस मन्यन्तरके अन्त-पर्यन्त तत्कालीन देवगण यज्ञ-भागोंको भोगते हैं ॥ ४७ ॥ तथा मनुके पुत्र और उनके वंशाधर मन्यन्तरके अन्ततक पृथिवीका पाठन करते रहते हैं ॥ ४८ ॥ इस प्रकार मनु सप्तर्षि, देवता, इन्द्र तथा मनु-पुत्र राजागण—ये प्रत्येक मन्वन्तरके अधिकारी होते हैं ॥ ४९ ॥

हे द्विज ! इन चौदह मन्वन्तरोंके बीत जानेपर एक सहस्र युग रहनेवाला करूप समाप्त हुआ कहा जाता है ॥ ५० ॥ हे साधुश्रेष्ठ ! फिर इतने ही समयको गाँउ होती है। उस समय ब्रह्मरूपभारी श्रीविष्णुभणवान् प्रलयकालीन जलके ऊपर शेव-शब्यापर शयन करते हैं॥ ५१ ॥ हे विष्ठ ! तब आदिकती सर्वव्यापक सर्वभूत मगयान् जनार्दन सम्पूर्ण त्रिलोकीका ग्रास कर अपनी मायामें स्थित रहते हैं॥ ५२ ॥ फिर [प्रलय-राजिका अन्त होनेपर] प्रत्येक कल्पके आदिमें अव्ययात्मा भगवान् जाग्रत् होकर रजोगुणका आश्रय कर सृष्टिकी रचना करते हैं॥ ५३ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! मनु, मनु-पृत्र गजागण, इन्द्र देवता तथा सप्तार्थ—ये सब जगत्का पालन करनेवाले भगवान्के सात्विक अंश है॥ ५४ ॥ हे मैत्रेय ! स्थितिकारक भगवान् विष्णु नारों

हे मैत्रेय ! स्थितिकारक भगवान् विष्णु नारी युनीमें जिस प्रकार व्यवस्था करते हैं, सो सुनी— ॥ ५५ ॥ समस्त प्राणियोके कल्याणमें तत्पर वे सर्वभूतात्मा सल्ययुगर्में कपिल आदिरूप धारणकर परम ज्ञानका उपदेश करते हैं ॥ ५६ ॥ त्रेतायुगर्से वे सर्वसमर्थ प्रभु चक्रवर्ती भूपाल होकर दुष्टींका दमन करके त्रिलोकीकी रक्षा करते हैं ॥ ५७ ॥ वेदमेकं चतुभेंदं कृत्वा शास्ताशतैविंभुः । करोति बहुलं भूवो वेदव्यासस्वरूपधृक् ॥ ५८ वेदांस्तु द्वापरे व्यस्य कलेरन्ते पुनर्हरिः । कल्किस्वरूपी दुर्वृत्तान्मार्गे स्थापयित प्रभुः ॥ ५९ एवमेतज्जगत्सर्व शश्चत्याति करोति च । इति वान्तेष्ठनन्तात्मा नास्यस्माद्व्यतिरेकि यत् ॥ ६० भूतं भव्यं भविष्यं च सर्वभूतान्महात्मनः । तद्त्रान्यत्र वा विप्र सद्धावः कथितस्तव ॥ ६१ मन्वन्तराण्यशेषाणि कथितानि मया तव । मन्वन्तराथिपांश्चैव किमन्यत्कथयामि ते ॥ ६२ तदनन्तर द्वापरयुगमें वे वेदव्यासरूप धारणकर एक वेदक चार विभाग करते हैं और सैकड़ी शास्त्राओंमें बॉटकर उसका बहुत विस्तार कर देते हैं ॥ ५८ ॥ इस प्रकार द्वापरमें

उसका बहुतावजार कर देत है। ५८ में इस अपनर है नर्त बेदोंका बिस्तार कर कॉल्युगके अन्तमें भगवान कल्किस्प धारणकर दुराचारी लोगोंको सन्मार्गमें भवृत करते हैं॥ ५९ ॥ इसो प्रकार, अनन्तात्मा प्रभु निरन्तर इस सम्पूर्ण जगत्के उत्पत्ति, पालन और नाश करते रहते हैं। इस संसारमें ऐसो कोई बस्तु नहीं है जो उनसे भिन्न हो॥ ६०॥

हे जिप्न ! इहलोक और परलेकमें भूत, भविष्यत् और वर्तमान जितने भी पदार्थ हैं वे सब महात्मा भगवान् विष्णुरे ही उत्पन्न हुए है— यह सब मैं तुमसे कह चुका हूँ ॥ ६१ ॥ मैंने तुमसे सम्पूर्ण मन्त्रन्तरों और मन्त्रन्तराधिकारियोंका

वर्णन कर दिया। कही, अब और क्या सुनाऊँ ? ॥ ६२ ॥-

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीर्थेऽशे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरा अध्याय

वतुर्युगानुसार भिन्न-भिन्न व्यासोके नाम तथा ब्रह्म-ज्ञानके माहात्म्यका वर्णन

श्रीमैत्रेय उवाच

ज्ञातमेतन्यया स्वनो यथा सर्वमिदं जगत्। विष्णुर्विष्णौ विष्णुतश्च न परं विद्यते ततः॥ १ एतत्तु श्रोतुमिच्छामि व्यस्ता वेदा महात्मना। वेदव्यासस्वरूपेण तथा तेन युगे युगे॥ २

यस्मिन्यस्मिन्युगे व्यासो यो य आसीन्महापुने । तं तमाचक्ष्व भगवञ्जाखाभेदांश्च मे वद ॥

श्रीपरादार उवाच

वेदहुमस्य मैत्रेय शाखाभेदास्सहस्रशः । न शक्तो विस्तराहुकुं सङ्क्षेपेण शृणुषु तम् ॥ द्वापरे द्वापरे विष्णुर्व्यासरूपी महामुने ।

वेदमेकं सुबहुधा कुस्ते जगतो हितः॥ बीदं तेजो बलं चारुपं मनुष्याणामवेदय च ।

वीर्यं तेजो बलं चारूपं मनुष्याणामवेक्ष्य च । हिताय सर्वभूतानां वेदभेदान्करोति सः ॥

ययासौ कुरुते तन्त्रा वेदमेकं पृथक् प्रभुः । वेदव्यासाभिधाना तु सा च पूर्तिर्मधृद्विषः ॥ **श्रीमैत्रेयजी बोल्टे**—हे भगवन् ! ओफ्के कथनसे मैं यह जान गया कि किस प्रकार यह सम्पूर्ण जगत् विष्णुरूप

है, जिब्बुमें ही स्थित है, जिब्बुसे ही उत्पन्न हुआ है तथा जिब्बुमें अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है ? ॥ १ ॥ अब मै यह सुनन। चाहता हैं कि भगवानने नेदल्यासरूपसे

युग-युगमें किस प्रकार वेदोंका विभाग किया ॥ २ ॥ है महामुने ! हे भगवन् ! जिस-जिस युगमें जो-जो बेदव्यास हुए उनका तथा बेदोंके सम्पूर्ण शास्ता-भेदोंका आप गुझसे वर्णन कीजिये ॥ ३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे पैत्रेय ! बेदरूप वृक्षके सहस्रो शास्त्र-भेद हैं, उनका विस्तारसे वर्णन करनेमें तो कोई भी समर्थ नहीं है, अतः संक्षेपसे सुनो—॥ ४॥ हे

महामुने ! प्रत्येक द्वापरयुगमें भगवान् विष्णु व्यासरूपस अबतीर्ण होते है और संसारके कल्याणके लिये एवं बेटके अनेक भेद कर देते हैं॥ ५॥ मनुष्योंके बल, बीर्य और केकको अल्प जानकर वे समस्त प्राणियोंके हितके लिये

वेदोंका विभाग करते हैं ॥ ६ ॥ जिस शरीरके द्वारा वे प्रभु एक वेदके अनेक विभाग करते हैं भगवान मध्यूदनकी उस मुर्तिका नाम वेदव्यास है ॥ ७ ॥

यस्मिन्यन्वन्तरे व्यासा ये ये स्युस्तान्निबोध मे । यथा च भेद्दशाखानां व्यासेन कियते मुने ॥ अष्टाविंशतिकृत्वो वै वेदो व्यस्तो महर्षिभि: । वैवस्वतेऽन्तरे तस्मिन्द्वापरेषु पुनः पुनः॥ वेदव्यासा व्यतीता ये ह्यष्टाविंशति सत्तम । चतुर्था यैः कृतो वेदो हापरेषु पुनः पुनः ॥ १० द्वापरे प्रथमे व्यस्तस्त्वयं वेदः स्वयम्भवा । द्वितीये द्वापरे चैव वेदव्यासः प्रजापतिः ॥ ११ तृतीये चौञ्चना व्यासश्चतुर्थे च बहस्पतिः । सविता पञ्चमे व्यासः षष्टे मृत्युस्स्पृतः प्रभुः ॥ १२ संप्रमे च तथैवेन्द्रो वसिष्टश्चाष्ट्रमे स्मृतः। सारस्वतश्च नवमे त्रिधामा दशमे स्मृतः ॥ १३ एकादशे तु त्रिक्तिखो सरद्वाजस्ततः परः । त्रयोदशे चान्तरिक्षो वर्णी चापि चतुर्दशे ॥ १४ त्रय्यारुणः पञ्चदशे षोडशे तु धनञ्जयः। ऋतुक्रयः सप्तदशे तद्ध्वं च जयसमृतः ॥ १५ ततो व्यासो भरद्वाजो भरद्वाजाच गौतमः। गौतमादुत्तरो व्यासो हर्यात्मा योऽभिधीयते ॥ १६ अश्व हर्यात्मनोऽन्ते च स्पृतो वाजश्रवा मुनिः । सोमशुष्पायणस्तस्मानुणबिन्दुरिति स्मृतः ॥ १७ ऋक्षोऽभुद्धार्गवस्तस्माद्वाल्मीकियोंऽभिधीयते । तस्मादस्मत्यिता शक्तिर्व्यासस्तस्मादहं मुने ॥ १८ जातुकणोंऽभवन्मतः कृष्णद्वैपायनस्ततः। अष्टाविश्वतिरित्येते वेदव्यासाः पुरातनाः ॥ १९ एको वेदशतुर्धा तू तै: कृतो द्वापसदिषु ॥ २० भविष्ये द्वापरे चापि द्रौणिव्यस्ति । व्यतीते मम पुत्रेऽस्मिन् कृष्णद्वैपायने मुने ॥ २१ ध्वमेकाक्षरं ब्रह्म ओमित्येव व्यवस्थितम् । बृहत्वाद्बुंहणत्वाच तद्ब्रह्मेत्वभिधीयते ॥ २२ प्रणवावस्थितं नित्यं भूभृंवस्त्वरितीर्यते । ऋग्यजुस्सामाधर्वाणो यत्तस्मै ब्रह्मणे नमः ॥ २३

हे मुने ! जिस-जिस मन्वन्तरमें जो-जो व्यास होते हैं और वे जिस-जिस फ्रांस शासाओंका विभाग करते हैं—वह मुझसे सुनो ॥ ८ ॥ इस वैवस्वत-मन्वन्तरके प्रत्येक द्वापरयुगमें व्यास महर्षियोने अवतक पुन:-पुन: अद्वाईस बार वेदोंके विभाग किये हैं ॥ ९ ॥ हे साधुश्रेष्ठ ! जिन्होंने पुन:-पुन: द्वापरयुगमें वेदोंके चार चार विभाग किये हैं उन अद्वाईस व्यासोंका विवरण सुनो — ॥ १०॥ पहले द्वापरमें स्वयं भगवान् ब्रह्माजीने वेटीका विभाग किया था। दूसरे द्वापरके बेदब्यास प्रजापति हुए ॥ ११ ॥ तीसरे हापरमे शुक्राचार्यजी और चौथेमें बृहस्पतिनी व्यास हुए, तथा पाँचवेंमें सूर्य और छडेमें भगवान् मृत्यु व्यास कहलाये ॥ १२ ॥ सातवें द्वापरके वेदव्यास इन्द्र, आठवेके वसिष्ठ, नवेंके सारस्वत और दसवेंके त्रिधामा कहे जाते हैं॥ १३॥ स्यारहवेंमें त्रिशिख, बारहवेंमें भरद्वाज, तेरहवेमें अन्तरिक्ष और चौदहवेमें वर्णी नामक व्यास हुए॥ १४॥ पन्द्रहुवैमें प्रव्यारुण, सोलहबेपें धनञ्जय, सन्नत्वेमें ऋतुञ्जय और तदनन्तर अठारहवेंने जय नामक व्यास हुए॥ १५॥ फिर उन्नीसने व्यास भरदाज हुए, भरद्वाजके पीछे गौतम हुए और गौतमके पीछे जो व्यास हुए वे हर्यात्मा कहे जाते हैं।। १६।। हर्यात्मक अनन्तर वाजश्रवामृति क्यास हुए तथा उनके पश्चात् सोमशुष्पवंदी तृणविन्दु (तेईसवें) चेदच्यास कड्लाचे ॥ १७ ॥ उनके पीछे भुग्वंशी ऋक्ष व्यास हर, जो वाल्मीकि कहलाये, तदननार हमारे पिना शक्ति हुए और फिर मैं हुआ ॥ १८ ॥ मेरे अनन्तर जातुकर्ण व्यास हुए और फिर कृष्णद्वैपायन—इस प्रकार ये अञ्चाईस व्यास प्राचीन हैं। इन्होंने द्वापरादि युगोंमें एक ही वेदके चार-चार विभाग किये हैं॥१९-२०॥ हे मने! मेरे एव क्ष्णहेपायनके अनन्तर आगाधी द्वापरयगर्धे द्रोण-पुर अश्वत्थामा वेदल्यास होने ॥ २१ ॥

ॐ यह अविनाशी एकाक्षर ही ब्रह्म है। यह बृहत् और व्यापक है इसिल्ये 'ब्रह्म' कहत्वता है।। २२॥ भ्लॉक, भुवलेंक और स्वलेंक— ये तीनों प्रणवरूप ब्रह्ममें ही स्थित हैं तथा प्रणव ही ब्रह्म, यजुः, साम और अथवंरूप है; अतः उस ऑकाररूप ब्रह्मको नमस्कार है।। २३॥

जगतः प्ररूपोत्पस्योर्यत्तत्कारणसंज्ञितम् । महतः परमं गुह्यं तस्मै सुब्रह्मणे नमः ॥ २४ अगाधापारमक्षय्यं जगत्सम्मोहनालयम् । स्वप्रकाशप्रवृत्तिभ्यां पुरुषार्थप्रयोजनम् ॥ २५ सांख्यज्ञानवतां निष्ठा गतिदशमदमात्मनाम् । यनद्वयक्तममृतं प्रवृत्तिब्रह्य शाश्चतम् ॥ २६ प्रधानमात्मयोनिश्च गुहासंस्थं च शब्द्यते । अविभागं तथा शुक्रमक्षयं बहुधात्मकम् ॥ २७ परमब्रह्मणे तस्मै नित्यमेख नमो नमः। यद्भुपं वासुदेवस्य परमात्मस्वरूपिणः ॥ २८ एतदब्रह्म त्रिधा भेदमभेदमपि स प्रभुः। सर्वभेदेषुभेदोऽसौ भिद्यते भित्रवृद्धिभिः ॥ २९ स ऋङ्मयस्सामययः सर्वात्मा स यजुर्मयः । ऋग्यजुस्सामसारात्मा स एवात्मा शरीरिणाम् ॥ ३० स भिद्यते वेदपयस्ववेदं करोति भेदैर्बह्भिस्सशाखम्। शाखात्रणेता स समस्तशाखा-

ज्ञानस्वरूपो भगवानसङ्गः ॥ ३१

जो संसारके उत्पत्ति और प्रतयका कारण कहलाता है तथा महतत्त्वसे भी परम नृह्य (सक्ष्म) है उस औकाररूप बह्मको नमस्कार है।। २४॥ जो आगाध, अपार और अक्षय है, संसारको मोहित करनेवाले तपोगुणका आश्रय है, तथा प्रकाशमय सत्वगुण और प्रयुक्तिरूप रजोगुणके द्राश प्रवीके भोग और मोक्षरूप प्रमप्रपार्थका हेत् है। २५॥ जो सांस्यज्ञानियोकी परमनिष्ठा शम-दमशालियोंका मन्तव्य स्थान है, जो अव्यक्त और अविनाशी है तथा जो सक्रिय ब्रह्म क्षेत्रर भी सदा रहनेवाला है ॥ २६ ॥ जो स्वयम्भ, प्रधान और अन्दर्भमी कहलाता है। तथा जो अविभाग, दीप्तिमान, अक्षय और अनेक रूप है ॥ २७ ॥ और जो परमात्मस्वरूप भगवान् वान्देवका हो। रूप (प्रतीक) है, उस ऑकाररूप परब्रह्मको सर्वदा वारम्बार नमस्कार है ॥ २८ ॥ यह ऑकाररूप बहा अभित्र होक्टर भी [अकार, उकार और मकारस्थारी] तीन भेटोबारम है। यह समस्त भेटोमें अभित्ररूपसे स्थित है द्रथापि भेदबुद्धिसं भिन्न-भिन्न प्रतीत होता है ॥ २९ ॥ वह सर्वत्मा ऋङ्मय, सामान्य और यजुर्भव है तथा ऋग्यज्ः-सामका साररूप वह ओकार ही सब शरीरधारियोंको आत्मा है ॥ ३० ॥ वह चेदमय है, वही कुम्बेटाटिरूपसे भिन्न हो जाता है और वहां अपने वेदरूपको नाना शासाओंमें विभक्त करता है तथा यह असंग भगवान ही समस्त दाखाओंका स्वयिता और उनका ज्ञानस्वरूप है।। ३१।।

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेऽङो तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय

ऋग्वेदकी शाखाओंका विस्तार

श्रीपराइस्र उन्नाच

आद्यो वेदश्चतुष्पादः शतसाहस्रसम्मितः।
ततो दशगुणः कृत्स्रो यज्ञोऽयं सर्वकामधुक् ॥
ततोऽत्र मत्सुतो व्यासो अष्टाविंशतिमेऽन्तरे।
वेदमेकं चतुष्पादं चतुर्धां व्यभजत्मभुः॥
यथा च तेन वै व्यस्ता वेदव्यासेन धीमता।
वेदास्तथा समस्तैसौर्व्यस्ता व्यस्तैस्तथा मया॥
तदनेनव वेदानां शास्ताभेदान्द्रिजोत्तम।
चतुर्युगेषु पठितान्समस्तेषुवधारय॥

श्रीपराइारजी बोले — सृष्ट्रिक आदिमें ईश्वरस आविश्वेत बेट क्राक् यक्त आदि चार पार्टीसे युक्त और एक रुख्त मन्त्रवाला था। उसीसे समस्त कामनाओंकी देनेवाले अग्निहोग्नांट दस प्रकारके यहाँका प्रचार हुआ॥१॥ तदनलर अहाईसवें द्वापरपुगमें मेरे पुत्र कृष्णद्विपायनने इस चतुष्णादयुक्त एक ही बेटके चार भाग किये॥२॥ परम बुद्धिमान वेदल्यासने उनका जिस प्रकार विभाग किया है, ठीक उसी प्रकार अन्यान्य बेदल्यासीने तथा मेने भी पहले किया था॥३॥ अतः है द्विज! समस्त चतुर्युगोमें इन्हीं ज्ञालाभेदीसे बेटका पाउ होता है—ऐसा जानो॥४॥

अ• ४] कृष्णद्वैपायनं व्यासं विद्धि नारायणं प्रभुम् । को हान्यो भृवि मैत्रेय महाभारतकृद्भवेत् ॥ तेन व्यस्ता यथा वेदा मत्पुत्रेण महात्पना । द्वापरे ह्यत्र मैत्रेयं तस्मिञ्डूणु यथातथम् ॥ ब्रह्मणा चौदितो व्यासी वेदान्व्यस्तुं प्रचक्रमे । अथ शिष्यान्त्रजग्राह चतुरो वेदपारगान् ॥ ऋग्वेदपाठकं पैलं जग्राह स पहापुनिः । वैशम्पायननामानं यजुवेंदस्य चायहीत्॥ जैमिनि सामवेदस्य तथैवाधर्ववेदवित्। सुमन्तुस्तस्य शिष्योऽभृद्वेदव्यासस्य धीमतः ॥ रोपहर्षणनामानं महाबुद्धिं महामुनिः। सुतं जन्नाह शिष्यं स इतिहासपुराणयोः ॥ १० एक आसीद्यजुर्वेदस्तं चतुर्धा व्यक्तल्पयत् । चातुहींत्रमभूत्तिसंस्तेन यज्ञमथाकरोत् ॥ ११ आध्वर्यवं वजुर्भिस्तु ऋग्भिहाँत्रं तथा मुनि: । औदात्रं सामभिश्चके ब्रह्मत्वं चाप्यथर्वभिः॥ १२ ततसः ऋच उद्धृत्य ऋग्वेदं कृतवान्युनिः । यजूषि च यजुर्वेदं सामवेदं च सामभि: ॥ १३ राज्ञां बाधर्ववेदेन सर्वकर्पाणि च प्रभुः। कारयामास मैत्रेय ब्रह्मत्वं च यश्वास्थिति ॥ १४ सोऽयमेको यथा वेदस्तमस्तेन पृथकृतः। चतुर्धाथ ततो जातं वेदपादपकाननम् ॥ १५ बिभेदं प्रथमं विप्र पैलो ऋग्वेदपादपम्। इन्द्रप्रमितये प्रादाद्वाष्कलाय च संहिते ॥ १६ चतुर्भा स विभेदाध बाष्क्रलोऽपि च संहिताम्।

बोध्यात्रिमाङ्कौ तद्वह्याज्ञबल्क्यपराङ्गरौ ।

इन्द्रप्रमितिरेकां तु संहितां स्वसुतं ततः।

अन्ततक अध्ययम करनेमें समर्थ चार ऋषियोंको शिष्य बोध्यादिश्यो ददौ ताञ्च शिष्येभ्यस्स महामुनिः ॥ १७ प्रतिशाखास्तु शाखायास्तस्यास्ते जगृहुर्मुने ॥ १८ माण्डुकेयं महात्मानं मैत्रेयाध्यापयनदा ॥ १९ तस्य शिष्यप्रशिष्येभ्यः पुत्रशिष्यक्रमाद्ययौ ॥ २० शास्त्राका उनके पुत्र और शिष्योंमें प्रचार हुआ । इस

बनाया ॥ ७ ॥ उनमेसे उन महामृतिने पैलको ऋखेद. वैशम्पायनको यज्ञेंद और जैमिनिको सामवेद पदाया तथा उन मतिमान् व्यासचीका सुमन्तु नामक शिष्य अथर्ववेदका झाता हुआ॥ ८-९॥ इनके सिवा स्तजातीय महाबुद्धिमान् रोमहर्षणको महामुदि व्यासजीने अपने इतिहास और पुराणके विद्यार्थीरूपसे महण किया ॥ १० ॥ पूर्वकारूमें यज्**वेंद्र एक ही था।** उसके उन्होंने चर विभाग किये, अतः उसमें चातुर्होत्रकी प्रवृत्ति हुई और इस चात्रहोत्र-विधिसे ही उन्होंने यज्ञानुष्ठानकी व्यवस्था की॥ ११ ॥ व्यासजीने यजुःसे अध्वयंके, ऋक्से होताके, सामसे उदानाके तथा अधर्यनेद्धे ब्रह्माके कर्मकी स्थापना की ॥ १२ ॥ तदगन्तर उन्होंने ऋष्, तथा यज्ञश्रुतियोंका उद्धार करके ऋग्वेट एवं यज्वेदकी और सामश्रुतिबाँसे सामबेदकी रचना की ॥ १३ ॥ हे मैत्रेय ! अधर्ववेदके द्वारा भगवान् व्यासजीने सम्पूर्ण राज-कर्म और ब्रह्मत्वकी यथावत् व्यवस्था को ॥ १४ ॥ इस प्रकार व्यासजीने बेटरूप एक वृक्षके चप विभाग कर दिये फिर विभक्त हुए उन चारोंसे बेदरूपो बुक्षोका वन उत्पन्न हअस्या १५॥ हे विप्र ! पहले पैलमे अमेदरूप वृक्षके दो विभाग किये और उन दोनों शास्त्राओंको अपने शिष्य इन्द्रप्रमिति और वाष्कलको पहाया॥ १६॥ फिर बाष्कलने भी अपनी शास्त्रके चार भाग किये और उन्हें बोध्य आदि अपने दिष्योंको दिया॥ १७॥ हे मूने ! काकालको शालाकी उन चारों प्रतिशाखाओंको उनके शिष्य बोध्य, आफ्रिमाटक, याजवर्क्य और परादारने यहण किया ॥ १८ ॥ हे भैत्रेयजी ! इन्द्रप्रामितिने अपनी प्रतिशाखाको अपने पुत्र महात्मा पढ़ाया ॥ १९ ॥ इस बकार विषय-प्रविषय-क्रमसे उस

भगवान् कृष्णद्वैपायनको तुम साक्षात् नारायण् हो समझो, क्योंकि हे मैत्रेस ! संसारमे नारायणके अतिरिक्त और कीन

जिस प्रकार बेदोंका विभाग किया था वह यशावत्

सुनी ॥ ६ ॥ जब अह्माजीकी प्रेरणारी व्यासाजीने थेटींका विभाग करनेका उपक्रम किया, तो उन्होंने बेदका

है मैंबेय ! डापरयुगमें मेरे पुत्र महात्मा कृष्णहैपायनने

महाभारतका रचयिता हो सकता है 🖁 ॥ ५ ॥

वेदिमित्रस्तु शाकल्यः संहितां तामधीतवान् । चकार संहिताः पञ्च शिष्येभ्यः प्रदर्धं च ताः ॥ २१ तस्य शिष्यास्तु ये पञ्च तेषां नामानि मे शृणु । सुद्रलो गोमुखश्चैव वात्स्यश्यालीय एव च । शरीरः पञ्चमश्चासीन्मैत्रेय सुमहामितः ॥ २२ संहितात्रितयं चके शाकपूर्णस्तश्चेतरः । निस्त्तमकरोत्तद्वचतुर्थं मुनिसत्तम् ॥ २३ क्रौञ्चो वैतालिकस्तहद्वलाकश्च महामुनिः । निस्त्तकृचतुर्थोऽभूद्वेदवेदाङ्गपारगः ॥ २४ इत्येताः प्रतिशास्त्रभ्यो हानुशासा द्विजोत्तम् । बाष्कलश्चापरस्तिस्त्रसंहिताः कृतवान्द्वज् । शिष्यः कालायनिर्गार्ग्यस्तृतीयश्च कथाजवः ॥ २५

शिष्य-परम्यरासे ही शाकल्य वेदभित्रने उस संहिताको पदा। और उसको पाँच अनुजाखाओंमें विभक्त कर अपने पाँच शिष्योको पढाया ॥ २०-२१ ॥ उसके जो पाँच शिष्य थे उनके टाम सुनी । हे मैत्रेय ! वे मुद्रल, गोमुख, बास्य और शालीय तथा पाँचवे महामति शरीर थे।। २२ ।। है मुनिसतम ! उनके एक दूसरे शिष्य शाक्षपूर्णीन तीन वेदसंहिताओंको तथा चौथे एक निरुक्त-प्रन्थकी रचना की ॥ २३ ॥ [उन संहिताओंका अध्ययन करनेवाले उनके शिष्य । महामृति क्रीज्ञ, नैतालिक और बलाक थे तथा [निरुक्तका अध्ययन करनेवाले] एक चौधे शिष्य वेद-बेदाहुके पारगामी निरुक्तकार हुए ॥ २४ ॥ इस प्रकार वेदरूप वृक्षकी प्रतिशाखाओंसे अनुशाखाओंको उत्पत्ति हुई । हे द्विजोत्तम ! बाष्कलने और भी तीन संहिताओंकी रचना को। उनके [उन संहिताओंको पहनेवाले] शिष्य कारणयनि, भार्य तथा कथाजव थे। इस प्रकार जिन्होंने संहिताओं के रचना की वे बहुबूच कहलाये ॥ २५-२६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽदो चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय

शुक्रवजुर्वेद तथा तैतिरीय यजुःशाखाओंका वर्णन

श्रीपगरम उवाव

यजुर्वेदतरोरशास्त्रास्त्रप्तिवंशन्यहामुनिः ।
वैशम्पायननामासौ व्यासिशच्यश्रकार वै ॥ ६
दिष्ट्येभ्यः प्रददौ ताश्च जगृहुस्तेष्ठव्यनुक्रमात् ॥ ६
याज्ञवल्क्यस्तु तत्राभृद्वस्यस्तस्ततो द्विज ।
शिष्यः परमधर्मज्ञो गुरुवृत्तिपरस्सदा ॥ इ
ऋषियोंऽद्य महामेरोः समाजे नागमिष्यति ।
तस्य वे सप्तरात्रात्तु ब्रह्महत्या भविष्यति ॥ ६
पूर्वमेवं मुनिगणैस्समयो यः कृतो द्विज ।
वैशम्पायन एकस्तु तं व्यतिक्रान्तवांस्तदा ॥ ६

स्वसीयं बालकं सोऽथ पदा स्पृष्टमघातयत् ॥

शिष्यानाह स भो शिष्या ब्रह्महत्यापहं व्रतम् ।

चरध्वं मत्कृते सर्वे न विचार्यमिदं तथा ॥

श्रीपरादारजी बोले — हे महामने ! व्यासजीके शिष्ट वैदाम्पायनने यजुर्वेदरूपी वृक्षको सताईस शाकाओंको रचना की; और उन्हें अपने शिष्योंको पढ़या तथा शिष्योंने भी क्रमशः ब्रहण किया ॥ १-२ ॥ हे द्वित ! उनका एक परम भार्मिक और सदैव गुरुसेवामें तत्पर रहनेवाल शिष्य बहारातकः पुत्र याहवत्कः। भा १: ३ ॥ [एक समय समस्त ऋषिगणने मिलकर यह नियम किया कि] जो कोई महामेठपर स्थित हमारे इस समाजमे सम्मिक्ति न होगा उसको सात रावियोंके भीतर ही ब्रह्महत्या रूगेगी ॥ ४ ॥ है द्विज ! इस प्रकार मुनियोंने पहले जिस समयको नियत किया था उसका केवल एक वैद्यायायनने ही अतिक्रमण कर दिया ॥ ५ ॥ इसके पश्चात् उन्होंने (प्रमादवश) धैरसे खुए हुए अपने भागजेकी दृत्या कर डाली; तब उन्होंने अपने दिष्योंसे कहा—'हे शिष्यगण ! तुम सब लोग किसी प्रकारका विचार न करके मेरे लिये ब्रह्महत्याको दुर करनेवाल्प ब्रत करो' ॥ ६-७ ॥

अधाह वाज्ञवल्क्यस्तु किमेभिर्भगवन्द्रिजैः । हेशितैरल्पतेजोभिश्चरिष्वेऽहमिदं व्रतम् ॥ ८ ततः क्रुद्धो गुरुः प्राह याज्ञवल्क्यं महामुनिम् । मुच्यतां यस्त्रवाधीतं मत्तो विप्रावमानक ॥ ९ निस्तेजसो वदस्येनान्यत्त्वं ब्राह्मणपुङ्गवान् । तेन शिष्येण नार्थोऽस्ति ममाज्ञाभङ्गकारिणा ॥ १० याज्ञवल्क्यस्ततः प्राह भक्त्यैतते मयोदितम् । ममाप्यलं स्वयाधीतं यन्यया तदिदं द्विज ॥ ११

शीनगरत उयाच इत्युक्ती रुधिराक्तानि सरूपाणि यंजूषि सः । छर्दियत्वा द्वौ तस्मै ययौ स स्वेच्छया मुनिः ॥ १२ यजूंच्यथ विस्षृष्टानि याज्ञवल्क्येन वै द्विज । जगृहुस्तित्तिरा भूत्वा तैत्तिरीयास्तु ते ततः ॥ १३ ब्रह्महत्याव्रतं चीणं गुरुणा चोदितस्तु यैः । चरकाध्वर्यवस्ते तु चरणान्मुनिसत्तम ॥ १४ याज्ञवल्क्योऽपि मैत्रेय प्राणायामपरायणः । तुष्टाय प्रयतस्तूर्यं यजूंच्यभिलवंसतः ॥ १५

वाज्ञवत्त्वय उवाच

नमस्सवित्रे द्वाराय मुक्तेरिमततेजसे । ऋग्यजुस्सामभूताय त्रयोधामे च ते नमः ॥ १६ नमोऽग्रीयोमभूताय जगतः कारणात्मने । भास्कराय परं तेजस्तौषुप्रस्रचिविश्वते ॥ १७ कलाकाष्ट्रानिमेषादिकालज्ञानात्मरूपिणे ॥ १८ विभित्तं यस्तुरगणानाप्यायेन्दुं स्वरिमिभः । स्वधामृतेन च पितृंस्तस्मै तृष्यात्मने नमः ॥ १९ हिमाम्बुधर्मवृष्टीनां कर्ना भर्ता च चः प्रभुः । तस्मै त्रिकालक्ष्मय नमस्तूर्याय त्रेधसे ॥ २० अपहन्ति तमो यश्च जगतोऽस्य जगत्पतिः । सत्त्वधामधरो देवो नमस्तस्मै विवस्तते ॥ २१ सत्त्वधामधरो देवो नमस्तस्मै विवस्तते ॥ २१

यस्मित्रनुदिते तस्मै नमो देखाय भाखते ॥ २२

तय याज्ञवल्क्य बोले "भगवन् ! ये सब ब्राह्मण अत्यन्त निस्तेज हैं, इन्हें कष्ट देनेकी क्या आवश्यकता है ? मैं अकेला ही इस ब्रतका अनुष्ठान करूँ गा" ॥ ८ ॥ इससे पुरु वैशम्पायनजीने क्रोधित होकर महामुनि वाज्ञवल्क्यसे कहा—"और ब्राह्मणीका अपमान करनेवाले ! तूने मुझसे जो कुछ पढ़ा है, वह सब त्याग दे ॥ ९ ॥ तू इन समस्त द्विजश्रेष्ठीको निस्तेज बताना है, मुझे तुझ-जैसे आज्ञा-भङ्ग-कारी शिष्यसे कोई प्रयोजन नहीं है" ॥ १० ॥ याज्ञवल्क्यने कहा, "हे द्विज ! मैंने तो भक्तिवश आपसे ऐसा कहा था, पुझे भी आपसे कोई प्रयोजन नहीं है; त्विजिये, मैंने आपसे जो कुछ पढ़ा है वह यह मौजूद है" ॥ १६ ॥

श्रीपराश्यकी बोले—ऐसा कह महामृति याज्ञवल्क्यजोने संधिरसे भरा हुआ मृर्तिमान् यकुवेद वनन करके उन्हें दे दिया; और स्वेच्छ्यनुसार चले गये॥ १२॥ है द्विज! थाज्ञवल्क्यद्वारा वमन की हुई तन यनुःश्रृतियोंको अन्य दिक्योंने तितिर (तीतर) होकन यहण कर लिया, इसलिये ये सब तैतिरीय कहलाये॥ १३॥ हे मृनिसत्तम! जिन विप्रगणन गुरुको प्रेरणासे ब्रह्महत्या-विनाशक बतका अनुष्टान किया था, वे सब ब्रताचरणके कारण यनुः आस्वाध्यायी चरकांध्यक्षं हुए ॥ १४॥ तहनन्तर, याज्ञवल्यनं भी यनुवेंदकी प्राप्तिकी इन्छासे प्राण्नोका संयम कर संयतचित्तसे सूर्यभग्वान्त्ये स्तुति की ॥ १५॥

याज्ञवल्क्यजी बोले-अतुलित तेजली, मुक्तिके द्वारस्थरूप तथा वेदत्रयरूप तेजसे सम्पन्न एवं ऋक, यजुः तथा सामखरूप सवितादेवको नमस्कार है॥ १६॥ जो अप्ति और ऋन्द्रमारूप, जगतुके कारण और सुब्रम्न नामक परमतेजको भारण करनेनाले हैं, उन भगवान् भारकरको नमस्कार है।। १७॥ कला, काष्टा, निमेष आदि कालज्ञानके कारण तथा ध्यान करनेयोग्य परव्रह्मस्वरूप विष्णुमय श्रीसृपेदेवको नमस्कार है ॥ १८ ॥ जो अपनी किरणोसे चन्द्रमाको फेणित करते हुए देवताओंको तथा स्वधारूप अमृतसे पितृगणको तप्त करते हैं, इन तप्तिरूप सुर्यदेवको नमस्कार है।। १९।। जो हिम, जल और उष्णताके कर्ता (अर्थात् शीत, वर्षा और ग्रीष। आदि ऋतुओंके कारण] है और [जगतुका] चोषण करनेवाले हैं, उन विकालनृति विधाता भगवान् सूर्यको नमस्कार है :। २० ॥ जो जगत्पति इस संस्पूर्ण जगत्के अन्यकारको दूर करते हैं, उन सत्त्वमूर्तिधारी-विवस्वानुको नमस्कार है।। २१।। जिनके उदित हुए बिना मनुष्य सत्कर्ममें प्रवृत्त नहीं हो सकते और जल शुद्धिका कारण नहीं हो सकतः, उन भारवान्देवको नगरकार है ॥ २२ ॥

31- 5

स्पृष्टी यदंशुभित्लेंकः क्रियायोग्यो हि जायते। पवित्रताकारणाय तस्मै शुद्धात्मने नमः ॥ २३ नमः सिवत्रे सूर्याय भास्कराय विवस्तते। आदित्यायादिभूताय देवादीनां नमो नमः ॥ २४ हिरण्मयं रश्चं यस्य केतवोऽमृतवादिनः। वहन्ति भुवनालोकिचशुषं तं नमाम्यहम् ॥ २५

श्रीपराकार उचाच

इत्येवमादिभिस्तेन स्तूयमानस्स वै रविः । वाजिरूपधरः प्राह व्रियतामिति वाञ्छितम् ॥ २६ याज्ञवल्क्यस्तदा प्राह प्रणिपत्य दिवाकरम् । यजूषि तानि मे देहि यानि सन्ति न मे गुरौ ॥ २७ एवमुक्तौ ददौ तस्मै यजूषि भगवान्नविः । अयातयामसंज्ञानि यानि वेत्ति न तदुरुः ॥ २८ यजूषि वैरधीतानि तानि विप्रैर्हिजोत्तम । वाजिनस्ते समाख्याताः सूर्योऽप्यश्वोऽभवद्यतः ॥ २९ शास्त्राभेदास्तु तेवां वै दश्च पञ्च च वाजिनाम् । काञ्चाह्यस्सुमहाभाग याज्ञवल्क्याः प्रकीर्तिताः ॥ ३० जिनके किरण-समूहका स्पर्श होनेपर लोक कर्मानुष्ठानके योग्य होता है, उन पवित्रताके कारण, शुद्धस्वस्प सूर्यदेवको नमस्कार है ॥ २३ ॥ भगवान् सविता, सूर्य, भास्कर और विवत्वान्को नमस्कार है; देवता आदि समस्त भूतोंके आदिभूत आदित्यदेवको बारम्बार नमस्कार है ॥ २४ ॥ जिनका तेजोमय रथ है, [प्रज्ञारूप] ध्वजाएँ हैं, जिन्हें [छन्दोमय] अमर अक्षयण बहन करते हैं तथा जो विभुवनको प्रकाशित करनेवाले नेत्ररूप है, उन सूर्यदेवको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ २५ ॥

श्रीपराश्वरजी बोले—उनके इस प्रकार स्तृति करनेपर भगवान् सूर्व अश्वरूपसे प्रकट होकर जोले—'तुम अपना अभीष्ट वर माँगो'॥ २६॥ तम याज्ञवल्क्यजीने उन्हें प्रणाम करके कहा—''आप मुझे उन यजुःश्रुतिचौंका उपदेश कीजिये जिन्हें मेरे गुरुजो भी न जानते हो''॥ २०॥ उनके ऐसा कहनेपर भगवान् सूर्यने उन्हें अयातयाम नामक यजुःश्रुतियोंका उपदेश दिया जिन्हें उनके गुरु वैश्वम्यायनजी भी नहीं जानते थे॥ २८॥ हे द्विजोत्तम । उन श्रुतियोंको जिन ब्राह्मणोंने पढ़ा था वे वाजी-नामसे विख्यात हुए स्थोंकि उनका उपदेश करते समय सूर्य भी अश्वरूप हो गये थे॥ २९॥ हे महाभाग ! उन वाजिश्रुतियोंको काण्य आदि पन्द्रह शासाएँ हैं; वे सब शासाएँ महर्षि याज्ञवल्क्यको प्रवृत्त की हुई कही जाती हैं॥ ३०॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेऽहो पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

छठा अध्याय

सामवेदकी शाखा, अठारह पुराण और जौदह विद्याओंके विभागका वर्णन

श्रीपराशर उदाच

सामवेदतरोश्शासा व्यासशिष्यसः जीविनः । क्रमेण येन मैत्रेय विभेद शृणु तन्यम ॥ समन्तुस्तस्य पुत्रोऽभूत्सुकर्मास्याप्यभूत्सुतः । अधीतवन्तौ चैकैकां संहितां तौ महामती ॥ सहस्रसंहिताभेदं सुकर्मा तत्सुतस्ततः । चकार तं च तिक्कियौ जगृहाते महाव्रतौ ॥ हिरण्यनाभः कौसल्यः पौष्पिञ्जिश्च विजोत्तम । उदीच्यास्तामगाः शिष्यास्तस्य पश्चशतं स्मृताः ॥ श्रीपराहारजी बोले—हे मैंबेय ! जिस कमसे व्यासजीके शिष्य जैमिनिने सामबेदकी शाखाओंका विभाग किया था, वह मुझसे सुनो ॥ १ ॥ जैमिनिका पुत्र सुमन्तु था और उसका पुत्र सुकर्मा हुआ। उन दोनों महामित पुत्र-पीत्रोंने सामबेदकी एक-एक शाखाका अध्ययन किया ॥ २ ॥ तदनन्तर सुमन्तुके पुत्र सुकर्माने अपनी सामबेदसंहिताके एक सहस्र शाखाभेद किये और हे द्विजोचम ! उन्हें उसके कौरत्स्य हिरण्यनाभ तथा पौष्पित्रि गामक दो महावती शिष्योंने प्रहण किया। हिरण्यनाभके पाँच सौ शिष्य थे जो उदीच्य सामग कहलाये॥ ३-४॥

हिरण्यनाभात्तावत्यस्पंहिता यैर्द्विजोत्तमैः । गृहीतास्तेऽपि चोच्यन्ते पण्डितैः प्राच्यसामगाः ॥ लोकाक्षिनौंधमिश्चेव कक्षीबाँल्लाङ्गलिखया । पौष्पिञ्जिशिष्यास्तद्धेदैस्संहिता बहलीकृताः ॥ हिरण्यनाभशिष्यस्त् चतुर्विशतिसंहिताः । प्रोवाच कृतिनामासौ शिष्येभ्यश्च महामुनिः ॥ तैञ्चापि सामवेदोऽसौ शाखाभिबंहलीकृत: । अथर्वणामधो वक्ष्ये संहितानां समुख्यम् ॥ अथर्ववेदं स मुनिस्सुमन्तुरमितद्यृतिः । शिष्यमध्यापयामास् कबन्धं सोऽपि तं द्विधा । कृत्वा तु देवदर्शीय तथा पथ्याय दत्तवान् ॥ देवदर्शस्य शिष्यास्त् मेधोब्रहाबलिस्तथा । शौल्कायनिः पिप्पलादातधान्यो द्विजसत्तम् ॥ १० पथ्यस्मापि त्रयश्जिष्याः कृता यैद्विज संहिताः । जाबालिः कुमुदादिश्च तृतीयश्शौनको द्विज ॥ ११ शौनकस्तु द्विधा कृत्वा ददावेकां तु बभवे । द्वितीयां संहितां प्रादात्सैन्धवाय च संज्ञिने ॥ १२ सैन्धवान्युञ्जिकेशञ्च द्वेधाभित्रास्त्रिधा प्नः । नक्षत्रकरूपो बेदानां संहितानां तथैव च ॥ १३ चतुर्थस्यादाङ्गिरसञ्ज्ञान्तिकल्पश्च पञ्चमः । श्रेष्ट्रास्त्वथर्वणामेते संहितानां विकल्पकाः ॥ १४ आस्यानैश्चाप्युपास्यानैर्गाशाभिः कल्पशुद्धिभिः । पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविद्याखः ॥ १५ प्रख्यातो व्यासशिष्योऽभूत्सूतो वै रोमहर्षणः । पुराणसंहिनां तस्मै ददौ व्यासो महामति: ॥ १६ सुमतिश्चाप्रिवर्चाञ्च मित्रायुक्कांसपायनः । अकृतव्रणसावर्णी यद् शिष्यास्तस्य चाभवन् ॥ १७ काञ्चपः संहिताकर्ता सावर्णिश्शांसपायनः । रोमहर्षणिका चान्या तिसृणां मूलसंहिता ॥ १८ चतुष्ट्रयेन भेदेन संहितानामिदं मुने ॥ १९ आद्यं सर्वेपुराणानां पुराणं ब्राह्ममुच्यते । अष्टादशपुराणानि पुराणज्ञाः प्रचक्षते ॥ २०

इसी प्रकार जिन अन्य हिजोत्तमीने इतनी ही संहिताएँ हिरण्यनामसे और प्रहण की उन्हें पण्डितजन प्राच्य सामग कहते हैं ॥ ५ ॥ पौष्पिक्षिके शिष्य त्येकािश्च, नौधिम, कसोवान् और स्वंगिस्ट थे। उनके शिष्य-प्रशिष्योने अपनी-अपनी संहिताओंके विभाग करके उन्हें बहुत बढ़ा दिया ॥ ६ ॥ महामुनि कृति नामक हिरण्यनाभके एक और शिष्यने अपने शिष्योंको सामवेदकी चौबीस संहिताएँ पद्मार्यों ॥ ७ ॥ फिर उन्होंने भी इस सामवेदका शासाओंहारा सूब विस्तार किया। अब मैं अथवेवेदकी संहिताओंके समुख्यका वर्णन करता हूँ ॥ ८ ॥ अथवेवेदको सर्वप्रथम अमिततेजोमय सुमन्तु मुनिने

अपने शिष्य कवन्धवर्ते पढ़ाया था फिर कबन्धने उसके दो भाग कर उन्हें देवदर्श और पथ्य नामक अपने शिष्योंको दिया ॥ १ ॥ हे द्विवसत्तम ! देवदर्शके शिष्य मेथ, ब्रह्मबर्कि, शौल्कायनि और पिष्मछ थे ॥ १० ॥ हे द्विव ! पथ्यके भी जाबालि, कुमुदादि और शौनक नामक तीन शिष्य थे, जिन्होंने संहिताओंका विभाग किया ॥ ११ ॥ शौनकने भी अपनी संहिताओंका विभाग करके उनमेंसे एक वशुको तथा दूसरी सैन्धव नामक अपने शिष्यको दी ॥ १२ ॥ सैन्धवसे भद्रकर मुक्किशने अपनी संहिताके पहले दो और फिर तीन [इस प्रकार पाँच] विभाग किये । नक्षत्रकल्प, वेदकल्प, संहिताकल्प. ऑगिरसकल्प और शान्तिकल्प—उनके रचे हुए ये पाँच विकल्प अथवनेद-संहिताओंमें सर्वश्रेष्ठ है ॥ १३-१४ ॥ तदनन्तर, पुराणार्थविशास्त्र व्यासर्वाने आख्यान,

तदनत्तर, पुराणाथावदारिक व्यासवान आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्पसुद्धिक सहित पुराण-सहिताकी रचना की ॥ १५ ॥ रोमहर्षण सूत व्यासवीके प्रसिद्ध शिष्य थे। महास्रति व्यासवीने उन्हें पुराण-संहिताको अध्ययन कराया॥ १६ ॥ उन सूतवीके सुमति, अग्निवर्चा, मित्रायु, शांसपायन, अकृतवण और सावाणि—थे छः शिष्य थे॥ १०॥ काश्यप-गोत्रीय अकृतवण, सावणि और शांसपायन—ये तीनों संहिताकार्त हैं। उन तीनों संहिताओंको आधार एक रोमहर्षणजीकी संहिता है। हे मुने! इन चारों संहिताओंको सारभूत मैंने यह विष्णुपुराणसंहिता बनायी है॥ १८-१९॥ पुराणश्च पुरुष कुछ अठारह पुराण बतलाते हैं, उन सबमें प्राचीततम ब्रह्मपुराण है॥ २०॥

ब्राह्मं पार्क वैष्णवं च शैवं भागवतं तथा । तथान्यं नारदीयं च मार्कण्डेयं च सप्तमम् ॥ २१ आग्नेयम्हमं चैव भविष्यत्रवमं स्पृतम्। दशमं ब्रह्मवैवर्तं लेङ्गमेकादशं स्मृतम् ॥ २२ वाराहं द्वादशं चैव स्कान्दं चात्र त्रयोदशम् । चतुर्दशं वामनं च कौर्मं पञ्चदशं तथा ॥ २३ मात्स्यं च गारुडं चैव ब्रह्माण्डं च ततः परम् । महायुराणान्येतानि हाष्ट्रादश महामुने ॥ २४ तथा चोपपुराणानि मुनिभिः कथितानि च । सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशमन्वन्तराणि च । सर्वेष्ट्रेतेषु कथ्यने वंशानुचरितं च यत् ॥ २५ यदेतत्तव मैत्रेय पुराणं कथ्यते मया। एतद्वैष्णवसंज्ञं वै पादास्य समनन्तरम् ॥ २६ सर्गे च प्रतिसर्गे च वंशमन्वन्तरादिषु । भगवान्विष्णुरशेषेष्ट्रेय सत्तम ॥ २७ अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः। पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या होताश्चतुर्दश ॥ २८ आयुर्वेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्चैव ते त्रयः। अर्थशास्त्रं चतुर्थं तु विद्या ह्यष्टादशैव ताः ॥ २९ ज्ञेया ब्रह्मर्षयः पूर्वं तेभ्यो देवर्षयः पुनः । पनस्तेभ्य ऋषिप्रकृतयस्त्रयः ॥ ३० राजर्षय: इति ज्ञाखास्तमाख्याताञ्जाखाभेदास्तश्रेव च। कर्तारश्चेव शाखानां भेवहेतुस्तथोदितः ॥ ३१ सर्वमन्वन्तरेष्ट्रेवं शास्त्राभेदासमाः स्पृताः । प्राजापत्या श्रुतिर्नित्या तद्विकल्पास्त्वमे द्विज ॥ ३२ एतने कथितं सर्वं यत्पृष्टोऽहमिह त्वया। मैत्रेय वेदसम्बन्धः किमन्यत्कथयामि ते ॥ ३३

प्रथम पुराण ब्राह्म है, दूसरा पादा, तीसरा बैणाव, बीथा रीव, पाँचवाँ भागवत, छटा नारदीय और सातवाँ मार्कण्डेय है ॥ २१ ॥ इसी अकार आठवाँ आग्नेय, नवाँ भविष्यत्, दसवाँ ब्रह्मवैक्त और ग्यारहवाँ पुराण लैक्न कहा जाता है ॥ २२ ॥ तथा बारहवाँ वासह, तेस्हबाँ स्कान्द, गौदहवाँ वासन, पन्नहवाँ कौर्म तथा इनके पश्चात् मास्य, गारुड और ब्रह्माण्डपुराण है । हे महामुने ! ये ही अठारह महापुराण है ॥ २३-२४ ॥ इनके अतिरिक्तः मुनिजनेनि और भी अनेक उपपुराण बतस्वये हैं । इन सभीमें सृष्टि, प्रक्रम, देवता आदिकंकि वंदा, मन्यन्तर और भिन्न-भिन्न राजवंद्योंके चरिन्नोंका वर्णन किया गया है ॥ २५ ॥

नेपा है ॥ २५ ॥ है मैत्रेय ! जिस पुराणकों मैं तुम्हें सुना रहा हूँ वह पादापुराणके अनन्तर कहा हुआ बैष्णव नामक महापुराण है ॥ २६ ॥ हे साधुश्रेष्ठ ! इसमें सर्ग, प्रतिसर्ग, वैद्य और मन्वन्तरादिका वर्णन करते हुए सर्वत्र केवल विष्णु-भगवान्का ही वर्णन किया गया है ॥ २७ ॥

छः वेदाङ्ग, चार वेद, मीमांसा, न्याय, पुराण और धर्मशास—ये हो चौदह विद्याएँ हैं॥ २८ ॥ इन्होंमें आयुर्वेद, धनुर्वेद और गान्धर्व इन तीनोंको तथा चौथे अर्थशास्त्रको मिला लेनेसे कुल अठारह विद्या हो जाती है। ऋषियोंके तीन भेद है—प्रथम ब्रह्मर्षि, द्वितीय देविंगि और फिर राजर्वि॥ २९-३०॥ इस प्रकार मैंने तुमसे वेदोंकी शाखा, शाखाओंके भेद, उनके रचिता तथा शाखा-भेदके कारणोंका भी वर्णन कर दिया॥ ३१॥ इसी प्रकार समस्त मन्वन्तरोंमें एक-से शाखाभेद रहते हैं; हे द्विज! प्रजापति ब्रह्माजीसे प्रकट होनेवाली श्रुप्ति पी नित्य है, ये तो उसके विकल्पमात्र हैं॥ ३२॥ हे मैत्रेय! वेदके सम्बन्धमें तुमने मुझसे जो कुछ पूछा था वह पैने सुना दिया; अब और क्या कहूँ ?॥ ३३॥

14 17/21

中一大河上

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीर्थेऽशे षष्टोऽध्यायः ॥ ६ ॥

__ + -

सातवाँ अध्याय

यमगीता

श्रीमैत्रेय उद्याच

यथावत्कथितं सर्वं यत्पृष्टोऽसि मया गुरो । श्रोतुमिच्छाप्यहं त्वेकं तद्भवान्प्रव्रवीतु मे ॥ सप्त द्वीपानि पातालविधयश्च महामुने । सप्तत्येकाश्च येऽन्तःस्था ब्रह्माण्डस्थास्य सर्वतः ॥ स्थूलैः स्क्ष्मैसाथा सूक्ष्मसूक्ष्मात्सूक्ष्मतरैताथा । स्थूलात्स्थूलतरेश्चैव सर्व प्राणिभिरावृतम् ॥

अङ्गुलस्याष्ट्रभागोऽपि न सोऽस्ति मुनिसत्तम । न सन्ति प्राणिनो यत्र कर्मबन्धनिबन्धनाः ॥ सर्वे चैते वर्श यान्ति यमस्य भगवन् किल ।

आयुषोऽन्ते तथा यान्ति यातनास्तरप्रचोदिताः ॥ यातनाभ्यः परिभ्रष्टा देवाद्यास्तथः योनिषु ।

जन्तवः परिवर्तन्ते शास्त्राणामेष निर्णयः ॥

सोऽहमिच्छामि तच्छ्रोतुं यमस्य वशवर्तिनः । न भवन्ति नरा येन तत्कर्म कथयस्य मे ॥

औपग्रशर उत्पच

अयमेव मुने प्रश्नो नकुलेन महात्मना। पृष्टः पितामहः प्राह भीष्मो यत्तव्हणुषु मे ॥

भीष्य उवाच

पुरा ममागतो बत्स सखा कालिङ्गको द्विजः । स मामुबाच पृष्टो वै यथा जातिस्मरी मुनिः ॥ १ तेनाख्यातिमर्दं सर्वमित्थं जैतद्भविष्यति । तथा च तदभूद्वस यथोक्तं तेन धीमता ॥ १० स पृष्टश्च मया भूयः श्रद्द्धानेन वै द्विजः । यद्यदाह न तददृष्टमन्यथा हि मया कवित् ॥ ११ एकदा तु मया पृष्टमेतद्यद्भवतोदितम् । प्राह कालिङ्गको विप्रस्स्मृत्या तस्य मुनेर्वचः ॥ १२ जातिस्मरेण कथितो रहस्यः परयो मय । यमिक्करयोगेऽमृत्संवादस्तं व्रवीमि ते ॥ १३

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे गुरो ! मैंने जो कुछ पूछा था वह सब आपने यथावत् वर्णन किया । अब मैं एक बात और सुनना चाहता है, वह आप मुझसे कॉहबे ॥ १ ॥ हे महामुने ! सातों द्वीप, सातों पाताल और सातों लोक—ये सभी स्थान जो इस ब्रह्माण्डके अन्तर्गत है, स्थूल, पुश्म, स्थ्यतर, स्थ्यातिस्थ्य तथा स्थूल और स्थूलतर जीवोंसे भरे हुए हैं॥२-३॥ हे मुनिसतम। एक अङ्गलका आठवाँ भाग भी कोई ऐसा स्थान नहीं है जहाँ कर्म-बन्धनसे बैंचे हुए जीव न रहते हो ॥ ४ ॥ कितु हे भगवन् ! आयुके समाप्त होनेपर ये सभी यमराजके वशीभूत हो जाते. हैं और उन्हेंकि आदेशानुसार नरक आदि नाना प्रकारकी यातुनाएँ भोगते हैं ॥ ५ ॥ तदनन्तर पाप-भोगके समाप्त होनेपर वे देखाँदि योतियोंमें घुमते रहते हैं—सकल शास्त्रोंका ऐसा ही मत है ॥ ६ ॥ अतः आप मुझे वह कर्म वताइये जिसे करनेसे मनुष्य यमराजके वशीभृत नहीं होता; मैं आपसे यही सुरना चाहता है ॥ ७ ॥

श्रीपराश्राजी खोले—हे मुने । यहाँ प्रश्न महात्मा नकुलने पितायह भीव्यसे पूछा था। उसके उत्तरमें उन्होंने जो कुछ कहा था यह सुनो ॥ ८ ॥

भीषाजीने कहा—है बत्स ! पूर्वकालमें मेरे पास एक कलिक्नदेशीय ब्राह्मण-मित्र आया और मुझसे बोला—'मेरे पूजनेपर एक जातिस्मर मुनिने बतल्वया था कि ये सब बातें अमुक्त अमुक प्रकार ही होगी।'हे बत्स ! उस बुद्धिमान्ने जो-जो बातें जिस-जिस प्रकार होनेको कही थीं वे सब ज्यों-को-त्यों हुई ॥ ९-१० ॥ इस प्रकार उसमें अजा हो जानेसे मैंने उससे फिर कुछ और भी प्रश्न किये और उनके उत्तरमें उस द्विजश्रेष्ठने जो-जो बातें बतलायों उनके विपरीत मैंने कभी कुछ नहीं देखा ॥ ११ ॥ एक दिन, जो बात तुम मुझसे पूछते हो वहीं मैंने उस कालिंग बाह्मणसे पूछते। उस समय उसने उस मुनिके वचनोंको याद करके कहा कि उस जातिस्मर बाह्मणने, यम और उनके दूतोंके बीचमें जो संवाद हुआ था, वह अति मुझ रहस्म मुझे सुनाया था। वहीं मैं तुमसे कहता हैं ॥ १२-१३ ॥

कारिक स्थाप स्यपुरुषमभिवीक्ष्य पाञहस्त बदति यमः किल तस्त्र कर्णमूले । मधुसूदनप्रपन्नान्-प्रभुरहमन्यनृ**णामवैष्णवानाम्** 11 58 अहममस्वराचितेन यम इति लोकहिताहिते नियुक्तः । हरिगुरुवद्यागोऽस्मि न स्वतन्त्रः प्रभवति संयमने ममापि विष्णुः ॥ १५ कटकमुकुटकर्णिकादिभेदै: कनकमभेदमपीध्यते यथैकम् । सुरपशुयनुजादिकल्पनाधि-इरिरस्थिलाभिरुदीयी तथेकः ॥ १६ क्षितितलपरमाणवोऽनिलान्ते पुनस्पयान्ति यथैकतां धरित्र्याः। **मुख्यशुभनुजादयस्तथान्ते** गुणकलुषेण सनातनेन हरिममस्वरार्चिताङ्ग्रिपदां प्रणमति यः परमार्थतो हि मर्स्यः । तमपगतसमस्तपापबन्धं व्रज परिद्वत्य यथाग्निमाज्यसिक्तम् ॥ १८ इति यमवचनं निशम्य पाशी धर्मराजम् । यमपुरुषस्तपुवाच कश्रय मम विभो समस्त्रधातु-र्भवति हरेः खल् यादुशोऽस्य भक्तः ॥ १९ न चलति निजवर्णधर्मतो यः सममतिरात्मसुहद्विपक्षपक्षे न हरति न च हन्ति किञ्चिद्देः सितमनसं तमवेहि विष्णुभक्तम् ॥ २० कलिकलुपमलेन यस्य नगत्पा विमलमतेर्मलिनीकृतस्तमेनम् मनसि कृतजनार्द्नं मनुष्यं हरेरतीवभक्तम् ॥ २१ सततमवेहि

कालिङ्ग बोला—अपने अनुचरको हाथमें पाश लिये देखकर यमराजने उसके कानमें कहा—'भगतान् मधुसूरतके दारणागत व्यक्तियोंको छोड़ देना, क्योंकि मैं वैद्यावांसे अविरिक्त और सब मनुष्योंका ही खामी हूँ॥ १४॥ देव-पूज्य विधाताने मुझे 'यम' नामसे लोकोंके पाप-पुण्यका विचार करनेके लिये नियुक्त किया है। मैं अपने गुरु श्रीहरिके वशीमूत हूँ, स्थतन्तः नहीं हूँ। भगवान् विष्णु मेश भी नियन्तण करनेमे समर्थ हैं॥ १५॥ जिस प्रकार सुवर्ण भेदरहित और एक होकर भी कटक, मुकुट तथा कर्णिका आदिके भेदसे नानारूप प्रतीत होता है उसी प्रकार एक ही हरिका देवता, मनुष्य और पशु आदि नाना-विध कल्पनाओंसे निर्देश किया जाता है॥ १६॥

जिस प्रकार वायुके शाल होनेपर उसमें उड़ते हुए परमाणु पृथिवीसे मिलकर एक हो जाते हैं उसी प्रकार गुण-क्षोभसे उत्पन्न हुए सपस्त देवता, मनुष्य और पशु आदि [उसका अन्त हो जानेपर] उस सनातन परमात्मामें लीन हो जाते हैं॥ १७ ॥ जो भगवान्के सुख्यस्विद्दत चरण-कमलोको परमार्थ-बुद्धिसे बन्दना करता है, घृताहुतिसे प्रज्वलित अग्निके समान समसा पाप-बन्धनसे मुक्त हुए उस पुरुषको तुम दूरहोसे छोड़कर निकल जाना ॥ १८ ॥

यमराजके ऐसे क्चन सुनकर पाशहस्त यमदुतने उनसे पृछा— 'प्रभो ! सबके विद्याता भगवान् हरिका भक्त कैसा होता है, यह आप मुझसे कहिये'॥ १९॥

समराज बोले—जो पुरुष अपने वर्ण-धर्मसे विचलित नहीं होता, अपने सुहद् और विचिक्षियोंके प्रति समान भाव रखता है, किसीका द्रव्य हरण नहीं करता तथा किसी जीवकी हिसा नहीं करता उस अत्यन्त समादि-शून्य और निर्मल्जिवत व्यक्तिको भगवान् विष्णुका भक्त जानो ॥ २० ॥ जिस निर्मलमितका चित्त कलि-कल्मचरूप मलसे मिलन नहीं हुआ और जिसने अपने हदयमें श्रीजनार्दनको बसाया हुआ है उस मनुष्यको भगवान्का अतीव भक्त समझो ॥ २१ ॥

कनकमपि रहस्यवेक्ष्य बुद्धशा तुणमिय यस्समवैति वै परस्वम्। भवति च भगवत्यनन्यचेताः पुरुववरं तमवेहि विष्णुभक्तम्॥ २२ स्फटिकगिरिशिलामलः के विष्णु-र्मनिस नृणां क्क च मत्सरादिदोषः । तुहिनमयूखरदिमपुझे भवति ह्ताशनदीप्तिजः प्रतापः॥ २३ विमलमतिरमत्सरः प्रशान्त-रश्चिचरितोऽख्तिलसत्त्वमित्रभृतः । प्रियहितवज्ञनो अत्तमानमायो वसति सदा इदि तस्य वासुदेवः ॥ २४ वसति हृदि सनातने च तस्मिन् भवति पुमाञ्जगतोऽस्य सौम्यरूपः । क्षितिरसमतिरम्यमात्मनोऽन्तः कथयति चास्तयैव शालपोतः ॥ २५

मनुदिनमञ्जुतसक्तमानसानाम् । अपगतमदमानमत्सराणां त्यज भट दूरतरेण मानवानाम् ॥ २६

हृदि यदि भगवाननादिरास्ते हरिरसिशङ्ख्यादाधरोऽय्ययात्मा तद्यमधनियातकर्तृभिन्नं

यमनियमविधुतकल्पषाणा-

भवति कथं सति चान्धकारमर्के ॥ २७ हरति परधनं निहन्ति जन्तून् वदति तथाऽनृतनिष्ठुराणि यश्च ।

अञ्चभजनितदुर्मेदस्य पुंसः कलुषमतेहेदि तस्य नास्त्यनन्तः॥ २८

मनसि न तस्य जनार्दनोऽधमस्य ॥ २९

न सहित परसम्पदं विनिन्दां कलुषमितः कुस्ते सतामसाधुः । न कजि न ददाति यश्च सन्तं जो एकान्तमें पड़े हुए दूसरेके सोनेको देखकर भी उसे अपनी बुद्धिद्वारा तृषके समान समझता है और निरन्तर

भगवान्का अनन्यभावसे चिन्तन करता है उस नरश्रेष्ठको विष्णुका भक्त जानो ॥ २२॥ कहाँ तो स्फटिकिंगिरि-शिलाके समान अति निर्मल भगवान् विष्णु और कहाँ मनुष्योंके चित्तमें रहनेवाले सग-द्रेषादि दोष? [इन दोनोंका संयोग किसी प्रकार नहीं हो सकता] हिमकर

(चन्द्रमा) के किरण जालमें अग्नि-तेजको उष्णता कभी नहीं रह सकती है।॥२३॥ जो व्यक्ति निर्मल-चित्त, मात्सर्यरहित, प्रशास्त, शुद्ध-चरित्र, समस्त जीवींका

सुहद्, प्रियं और हितवादी तथा अभिमान एवं मायासे रहित होता है उसके हृदयमें भगवान् वासुदेव सर्वदा विराजमान रहते हैं॥ २४॥ उन सनातन पगवान्के हृदयमें विराजमान होनेपर पुरुष इस जगतमें सौयामृति हो

जाता है, जिस प्रकार नवीन शास्त्र बुक्ष अपने सीन्दर्यसे

ही भीतर भरे हुए अति सुन्दर पार्थिव रसको बतला

देता है ॥ २५ ॥

हे दूत ! यम और नियमके द्वारा जिनकी पापराकि दूर हो गयी है, जिनका दृदय निरन्तर श्रीअच्युतमें हो अवसक रहता है, तथा जिनमें गर्व, अभिमान और मात्सर्यका लेका भी नहीं रहा है उन मनुष्योंको तुम दूरहोसे त्याग देना ॥ २६ ॥ यदि खड्ग, शक्क और गदाधारी अञ्चयातमा

भगवान्के द्वारा उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। सूर्यके रहते हुए भला अन्धकार कैसे उहर सकता है ? ॥ २७ ॥ जो पुरुष दूसरोंका धन हरण करता है, जीवोंकी हिंसा करता है तथा मिथ्या और कटुभाषण करता है उस

भगवान् हरि हदयमें विराजमान है तो उन पापनाइकि

नहीं टिक सकते ॥ २८ ॥ जो कुमति दूसरोके बैभवको नहीं देख सकता, जो दूसरोकी निन्दा करता है, साधुजनोंका अपकार करता है तथा [सम्पन्न होकर मी] न

अश्व कमोन्मत दुष्टबुद्धिके हदयमें भगवान् अनन्त

तो श्रीविष्णुभगवान्की पूजा ही करता है और प्र [उनके भक्तोंको] दान ही देशा है उस अध्यके हृदयमें श्रीजनार्दनका निवास कथी नहीं हो सकता॥ २९॥

परमसुद्वदि बान्धवे कलत्रे **मुततनयापितृपातृभृत्यवर्गे** शठमतिरूपयाति योऽर्थतृष्णां तमधमचेष्टमवेहि नास्य भक्तम्॥ ३० अशुभगतिरसत्प्रवृत्तिसक्त-स्सततमनार्यकुशीलसङ्गमतः । अनुदिनकृतपापबन्धयुक्तः पुरुषपञ्चि हि वासुदेवभक्तः ॥ ३१ सकलमिदमहं च वासुदेवः परमपुमान्यरमेश्वरस्स एकः । इति मतिरचला भवत्यनन्ते हृदयगते व्रज तान्विहाय दूरात्॥३२ कमलनयन वासुदेव विष्णो थरणिधराच्युत श्रह्मचक्रपाणे । शरणमितीरयन्ति ये त्यज भट दूरतरेण तानपापान्॥ ३३ वसति मनसि यस्य सोऽव्ययात्मा पुरुषवरस्य न तस्य दृष्टिपाते।

तव गतिरश्च वा ममास्ति चक्रप्रतिहतवीर्यंबलस्य सोऽन्यलोक्यः ॥ ३४
काल्द्रि उवाच
इति निजभटशासनाय देवो
रिवतनयसा किलाह धर्मराजः ।
मम कश्चितमिदं च तेन तुभ्यं
कुरुवर सम्यगिदं मयापि चोक्तम् ॥ ३५

श्रीमीय उवाच नकुलैतन्ममाख्यातं पूर्वं तेन द्विजन्मना । कलिङ्गदेशादभ्येत्य प्रीतेन सुमहात्मना ॥ ३६ मयाय्येतदाश्चान्यायं सम्यग्वत्स तवोदितम् ।

यथा विष्णुमृते नान्यत्वाणं संसारसागरे ॥ ३७ किङ्कराः पाशदण्डाश्चन यमो न च यातनाः ।

समर्थास्तस्य यस्यात्मा केशवालम्बनसादा ॥ ३८

जो दुशबुद्धि अपने परम सुहद्द, बन्धु-बान्धब, स्त्री, पुत्र, सन्या, पिता तथा भृत्यवर्गके प्रति अर्थतृष्णा

प्रकट करता है उस पापाचारीको भगवान्का भक्त मत सगझो॥ ३०॥ जो दुर्बुद्धि पुरुष अरस्कमीमें लगा रहता है, नीच पुरुषोके आचार और उन्होंके संगमें उन्मत रहता

है तथा नित्यपति पापमय कर्मबन्धनसे ही बैंशता जाता है वह मनुष्यरूप पशु ही है; वह भगवान् वासुदेवका भक्त

नहीं हो सकता ॥ ३१ ॥ यह सक्त प्रपञ्च और मैं एक परमपुरुष परभेश्वर वासुदेव ही हैं, द्वयमें भगवान् अनन्तके स्थित होनेसे जिनकी ऐसी स्थिर बुद्धि हो गयी हो, उन्हें तुम दूरहीसे छोड़कर चले जाना ॥ ३२ ॥ 'हे कमलनयन ! हे वासुदेव ! हे विष्णो ! हे धर्मणधर ! हे

जो लोग इस प्रकार पुकारते ही उन निष्पाप व्यक्तियोंको तुम दूरसे ही त्याग देना ॥ ३३ ॥ जिस पुरुषश्रेष्ठके अन्तःकरणमें वे अख्ययात्मा

भववान् विराज्ते हैं उसका जहाँतक दृष्टिपात होता

अच्युत ! हे इह्कु-चक्र-पाणे ! आप हमें दारण दीजिये'—

है वहाँतक भगवान्के चक्रके प्रभावसे अपने बल-वीर्य नष्ट हो जानेके कारण तुम्हारी अथवा मेरी गति नहीं हो सकती। वह (महापुरुष) तो अन्य (वैकुण्ठादि)

लोकोंका पात्र है ॥ ३४ ॥ कालिङ्ग बोला—हे कुरुवर ! अपने दूतको शिक्षा

नहीं विगाड़ सकते ॥ ३८ ॥

देनेके लिये सूर्यपुत्र धर्मराजने उससे इस प्रकार कहा।
मुझसं यह प्रसंग उस जातिस्तर मुनिने कहा था और मैंने
यह सम्पूर्ण कथा तुमको सुना दी है।। ३५॥
श्रीभीष्मजी बोले—हे नकुल! पूर्वकालमे
कलिङ्गदेशसे आये हुए उस महात्मा ब्राह्मणने प्रसन्न होकर

सम्पूर्ण वृताल, जिस प्रकार कि इस सेसार-सागरमें एक विष्णुभगवान्को छोड़कर जीवका और कोई भी रक्षक नहीं है, मैंने ज्यों-का-त्यों तुन्हें सुना दिया॥ ३७॥ जिसका हृदय गिरन्तर भगवत्मरायण रहता है उसका यम, यमदुन, यमपाश, यमदण्ड अथवा यस-यातना कुछ भी

मुझे यह सब विषय सुनाया था ॥ ३६ ॥ हे बत्स ! वही

श्रीपराश्चर उवाच

एतन्यूने समाख्यातं गीतं वैवस्ततेन यत्।

श्रीपराहारजी बोले-हे मुने ! तुन्हारे प्रश्नके अनुसार जो कुछ समने कहा था, वह सब मैंने तुम्हें भर्ली प्रकार सुना स्वत्यश्चानुगतं सम्यक्किमन्यच्छोतुमिच्छसि ॥ ३९ । दिया, अब और क्या सुनना चाहते हो ? ॥ ३९ ॥

इति श्रीविष्ण्पराणे तृतीयेंऽशे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

आठवाँ अध्याय

विष्णुभगवानकी आराधना और चातुर्वर्ण्य-धर्मका वर्णन

श्रीपैत्रेय उवाच

संसारविजिगीषुभिः। भगवन्भगवान्देवः समाल्याहि जगन्नाथो विष्णुराराध्यते यथा ॥

आराधिताच गोविन्दादाराधनपरैनरैः ।

यत्प्राप्यते फलं श्रोतुं तश्चेच्छामि महामुने ॥

श्रीपराशर उद्याच

यत्पुच्छति भवानेतत्सगरेण महात्मना । और्वः प्राह यथा पृष्टस्तन्ये निगदतस्थुणु ॥

सगरः प्रणिपत्यैनमौर्व पप्रच्छ भागवम् ।

विष्णोराराधनोपायसम्बन्धं मुनिसत्तम ॥

फलं चाराधिते विष्णौ यत्युंसामिपजायते । स चाह पृष्टो यत्रेन तस्मै तन्येऽखिलं शृणु ॥

और्ष उदाच

भौमं मनोरशं खर्ग खर्गे रम्यं च यत्पद्म ।

प्राप्नोत्याराधिते विष्णौ निर्वाणमपि चोत्तमम् ॥

यद्यदिन्छति यावस फलमाराधितेऽन्युते । तत्तदाञ्जोति राजेन्द्र भूरि स्वरूपमथापि वा ॥

यत्तु पुच्छसि भूपाल कश्रमाराध्यते हरिः ।

तदहं सकलं तुभ्यं कथयामि निबोध मे ॥

वर्णाश्रमाचारवता पुरुवेण परः पुमान्।

विष्णुसराध्यते पन्था नान्यस्तत्तोषकारकः ॥

यजन्यज्ञान्यजत्येनं जपत्येनं जयञ्जप ।

निम्नन्यान्त्रिनस्त्येनं सर्वभूतो यतो हरिः ॥ १०

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे भगवन् ! जो लोग संसारको जोतन। चाहते हैं वे जिस प्रकार जगत्पति भगवान विष्णुकी उपासना करते हैं, वह वर्णन कीजिये ॥ १ ॥ और हे महामुने ! उन गोबिन्दकी आराधना करनेपर आराधन-परायण पुरुषोंको जो फल मिलता है, यह भी मैं सुनन।

चाहता हैं ॥ २ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैबेब ! तुम जो कुछ पूछते हो यही बात पहात्मा सगरने और्वसे पूछी थी। उसके उत्तरमें उन्होंने जो कुछ कहा वह मैं तुमको सुनाता है, श्रवण करो ॥ ३ ॥ हे मुनिश्रेष्ट ! सगरने भुगुवंशी महात्मा और्वको प्रणाप करके उनसे भगवान् विष्णुकी आराधनाके उपाय और विष्णुको उपासना करनेसे सनुत्यको जो फल मिलता है उसके विश्वकों पूछा था। उनके पूछनेपर और्चने यलपूर्वक जो कुछ कहा था वह सब सुनो ॥ ४-५ ॥

और्व बोले—धगवान् विष्णुकी आराधना करनेसे मनुष्य भूमण्डल-सम्बन्धी समस्त मनोरथ, स्वर्ग, स्वर्गसे भी श्रेष्ठ ब्रह्मपद और परम निर्वाण-पद भी प्राप्त कर लेता है ॥ ६ ॥ हे राजेन्द्र । वह जिस-जिस फरकारी जितनी-जितनी इच्छा करता है, अल्प हो या अधिक, श्रीअच्युतको आराधनासे निश्चय ही वह सब प्राट कर लेता. है ॥ ७ ॥ और हे भूपाल ! तुमने जो पूछा कि हरिकी आराधना किस प्रकार की जाय, सो सब मैं तुमसे कहता हैं, सावधान होकर सुनी ॥ ८ ॥ जो पुरुष वर्णाश्रम-धर्मका पालन करनेवाला है वही परमपुरुष विष्णुकी आराधना कर सकता है; उनको सन्तुष्ट करनेका और कोई मार्ग नहीं है ॥ ९ ॥ हे नृप ! यज्ञोंका यजन करनेवाला पुरुष उन (बिल्मू) श्रीका यजन करता है, जप करनेवाला उन्होंका जप करता है और दुसरोकी हिसा करनेवाला उन्हींकी हिसा. करता है; क्योंकि भगवान् हरि सर्वभूतमय हैं॥ १०॥

तस्मात्सदाचारवता पुरुषेण जनाईनः । आराध्यते स्ववर्णोक्तधर्मानुष्टानकारिणा ॥ ११ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शुद्धश्च पृथिवीपते । स्वधर्मतत्परो विष्णुमाराधयति नान्यथा ॥ १२ परापवादं पैशुन्यमनृतं च न भाषते । अन्योद्वेगकरं वापि तोष्यते तेन केशवः ॥ १३ परदारपरद्रव्यपरहिंसास् यो रतिम् । न करोति पुमान्भूप तोष्यते तेन केशवः ॥ १४ न ताडयति नो हन्ति प्राणिनोऽन्यांश्च देहिनः । यो मनुष्यो मनुष्येन्द्र तोष्यते तेन केशवः ॥ १५ देवद्विजगुरूणां च शुश्रुपासु सदोद्यतः। तोष्यते तेन गोविन्दः पुरुषेण नरेश्वर ॥ १६ यथात्मनि च पुत्रे च सर्वभूतेषु यस्तथा । हितकामो हरिस्तेन सर्वदा तोष्यते सुखम् ॥ १७ यस्य रागादिदोषेण न दुष्टं नृप मानसम्। विशुद्धचेतसा विष्णुस्तोष्यते तेन सर्वदा ॥ १८ वर्णाश्रमेषु ये धर्माइशास्त्रोक्ता नृपसत्तम । तेषु तिष्ठत्ररो विष्णुमाराधयति नान्यथा ॥ १९

सगर उवाच

तदहं श्रोतुमिच्छामि वर्णधर्मानशेषतः। तथैवाश्रमधर्माञ्च द्विजवर्यं व्रवीहि तान्॥ २०

और्व उवाच ब्राह्मणक्षत्रियविक्तां शूद्राणां च यथाक्रमम् । त्वमेकात्रमतिर्भृत्वा शृणु धर्मान्ययोदितान् ॥ २१

दानं दद्याद्यजेहेवान्यज्ञैस्त्वाध्यायतत्परः । नित्योदकी भवेद्विपः कुर्याचात्रिपरित्रहम् ॥ २२

वृत्त्यर्थे याजयेकान्यानन्यानध्यापयेत्तथा । कुर्यात्प्रतिप्रहादानं सुक्रार्थात्र्यायतो द्विजः ॥ २३

सर्वभूतहितं कुर्यात्राहितं कस्यचिद् द्विजः । मैत्री समस्तभूतेषु त्राह्मणस्योत्तमं धनम् ॥ २४ त्राव्यि रत्ने च पारक्ये समबुद्धिभवेद द्विजः ।

ऋतावभिगमः पत्यां शस्यते चास्य पार्थिव ॥ २५

अतः सदाचारयुक्त पुरुष अपने वर्णके लिये विहित धर्मका आचरण करते हुए श्रीजनार्दनहांकी उपासना करता है ॥ ११ ॥ हे पृधिवीपते ! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अपने-अपने धर्मका पालन करते हुए ही विष्णुकी आराधना करते हैं अन्य प्रकारने नहीं ॥ १२ ॥

आराधना करते हैं अन्य प्रकारसे नहीं ॥ १२ ॥ जो पुरुष दूसरोको निन्दा, चुगलो अथवा मिथ्याभाषण नहीं करता तथा ऐसा बचन भी नहीं बोलता जिससे इसरोको खेद हो, उससे निश्चय हो भगवान केशव प्रसन्न रहते हैं।। १३॥ हे सजन् ! जो पुरुष दुसरोंकी स्त्री. धन और हिसानें रुचि नहीं करता उससे सर्वदा ही भगवान् केशब सन्तुष्ट रहते हैं॥ १४ ॥ हे नरेन्द्र ! जो मनुष्य ! किसी प्राणी अथवा [वृक्षादि] अन्य देहधारियोंको पीड़ित अथवा नष्ट नहीं करता उससे श्रीकेशय सन्तुष्ट रहते हैं ॥ १५ ॥ जो पुरुष देवता, ब्राह्मण और गुरुजनोंकी सेवामें सदा तत्पर रहता है, हे नरेश्वर ! उससे गोविन्द सदा प्रसन्न रहते हैं ॥ १६ ॥ जो व्यक्ति स्वयं अपने और अपने पुत्रोंके समान ही समस्त प्राणियोंका भी हित-चित्तक होता है वह स्यमतासे ही श्रीहरिको प्रसन्न कर लेता है।। १७॥ हे नुष ! जिसका चित्त रागादि दोषोंसे दूषित नहीं है उस विश्वद-चित्र पुरुषसे घगवान् विष्णु सदा सन्तुष्ट रहते है ॥ १८ ॥ हे नुपश्रेष्ठ] इत्रहोंमें जो-जो वर्णाक्षम-धर्म कहे हैं उन-उनका ही आचरण करके पुरुष विष्णुकी आराधना कर सकता है और किसी बकार नहीं ॥ १९ ॥

सगर बोले—हे हिजश्रेष्ठ ! अब मैं सप्पूर्ण वर्णधर्म और आश्रमधर्मीको सुनना चाहता हूँ, कृपा करके वर्णन कीजिये ॥ २०॥

और्व बोले—जिनका मैं वर्णन करता हूँ, उन आद्मण, अत्रिय, वैश्य और शूद्रोंक धर्मीका तुम एकप्रचित्त होकर क्रमजा श्रवण करो ॥ २१ ॥ ब्राह्मणका कर्तव्य है कि दान दे, यज्ञोंद्रास देवताओंका यजन करे, स्वाध्यायशील हो, निख स्नान-तर्पण करे और अग्न्याधान आदि कर्म करता रहे ॥ २२ ॥ ब्राह्मणको उचित है कि वृत्तिके लिये दूसरोंसे यज्ञ करावे, औरोंको पदावे और न्यायोपार्जित शुद्ध धनमेरी न्यायानुकूल इब्य-संग्रह करे ॥ २३ ॥ ब्राह्मणकर कभी किसोबा अहित नहीं करना चाहिये और सर्वदा समस्त प्राणियोंके हितमें तर्भर रहना चाहिये और सर्वदा समस्त प्राणियोंके हितमें तर्भर रहना चाहिये । संपूर्ण प्राणियोंमें मैत्री रखना हो ब्राह्मणका परम धन है ॥ २४ ॥ पत्थरमें और पराये रखमें ब्राह्मणको समान-भुद्धि रखनी चाहिये । हे राजन् ! प्रलोके

दानानि दद्यादिन्छातो द्विजेभ्यः क्षत्रियोऽपि वा । यजेष विविधैर्यजैरधीयीत च पार्थिव: ॥ २६ शस्त्राजीयो महीरक्षा प्रवरा तस्य जीविका । तत्रापि प्रथमः कल्पः पृथिवीपरिपालनम् ॥ २७ धरित्रीपालनेनैव कृतकृत्या नराधिपाः। भवन्ति नृपतेरंशा यतो यज्ञादिकर्मणाम् ॥ २८ दृष्टानां शासनाद्राजा शिष्टानां परिपालनात् । प्राप्नोत्यभिमताँल्लोकान्वर्णसंस्थां करोति यः ॥ २९ पाश्पाल्यं च वाणिज्यं कृषि च मनुजेश्वर । वैश्याय जीविकां ब्रह्मा ददी ल्प्रेकपितामहः ॥ ३० तस्याप्यध्ययनं यज्ञो दानं धर्मश्च शस्यते । नित्यनैमित्तिकादीनामनुष्ठानं च कर्मणाम् ॥ ३१ द्विजातिसंश्रितं कर्म तादर्थ्यं तेन पोषणम् । क्रयविक्रयजैर्वापि धनैः कास्प्द्रवेन वा ॥ ३२ शहस्य सन्नतिश्शौचं सेवा स्वामिन्यमायया । अमन्त्रयज्ञो ह्यस्तेयं सत्सङ्गो विप्ररक्षणम् ॥ ३३ दानं च दद्याच्छद्रोऽपि पाकयजैर्यजेत च। पित्र्यादिकं च तत्सर्वे शुद्धः कुर्वीत तेन वै ॥ ३४ भुत्यादिभरणार्थायं सर्वेषां च परित्रहः । ऋतुकालेऽभिगमनं स्वदारेषु महीपते ॥ ३५ दया समस्तभूतेषु तितिक्षा नातिमानिता। सत्यं शौचमनायासो सङ्गलं प्रियवादिता ॥ ३६ पैत्र्यस्पृहा तथा तद्वद्रकार्पण्यं नरेश्वर । अनसूया च सामान्यवर्णानां कथिता गुणाः ॥ ३७ आश्रमाणां च सर्वेषामेते सामान्यलक्षणाः । गुणांस्तथापद्धमाँश विप्रादीनामिमाञ्कूणु ॥ ३८ क्षात्रं कर्म द्विजस्योक्तं वैदयं कर्म तथाऽपदि । राजन्यस्य च वैञ्योक्तं शुद्रकर्मं न चैतयोः ॥ ३९

विषयमें ऋतुगापी होना ही ब्राह्मणके लिये प्रशंसनीय कर्म है ॥ २५ ॥

सवियको उचित है कि ब्राह्मणोंको यथेच्छ दान दे, विविध बज्ञोंका अनुष्ठान करे और अध्ययन करे ॥ २६ ॥ शस्त्र धारण करना और पृषिवीको रक्षा करना हो स्वियकी उत्तम आजीविका है; इनमें भी पृषिवी-पालन हो उल्कृष्टतर है ॥ २७ ॥ पृथिवी-पालनसे ही राजालोग कृतकृत्य हो जाते हैं, क्योंकि पृथिवीमें होनेवाले राजादि क्योंका अंश राजाको मिलता है ॥ २८ ॥ जो राजा अपने वर्णधर्मको स्थिर रखता है वह दुष्टीको दण्ड देने और साधुक्रनीका पालन करनेसे अपने अभीष्ट लोकोंको प्राप्त कर लेता है ॥ २९ ॥

है नरनाथ! लोकपितामह ब्रह्माजीन वैद्योक्द्रे पशु-पालन, बाणिज्य और कृषि—ये जीविकारूपसे दिये हैं॥३०॥ अध्ययन, यज्ञ, दान और नित्य-नैमितिकादि कर्मोंका अनुष्ठान—ये कर्मे उसके लिये भी विहित है॥३१॥

शदका कर्तव्य यहां है कि दिजातियोंकी भयोजन-मिद्धिके लिये कमें करे और उसीसे अपना पालन-पोपण करे, अथवा [आपत्कालमें, जब उक्त उपायसे जीविना-निर्वाह न हो सके तो। यस्तुओंके छेने-बेचने अथवा कारीगरीके कामोंसे निर्वाट करे॥ ३२॥ अति नसता. शीच, निष्कपट स्वामि-सेवा, मन्त्रहीन यज्ञ, अस्तेय, सत्सङ्घ और ब्राह्मणकी रहा करना-ये शुद्रके प्रधान कर्म हैं ॥ ३३ ॥ हे राजन् । शुद्रको भी त्रचित है कि दान दे, बल्लिश्चदेव अथवा नयस्कार आदि अल्प यज्ञोंका अनुष्ठान करे, पितृश्राद्ध आदि कर्म करे, अपने आश्रित कुटुम्बियोंके भरण-पोषणके लिये सकल वर्णीसे द्रव्य-संग्रह करे और त्रहतुकालमें अपनी ही खीसे प्रसङ्ख करे ॥ ३४-३५ ॥ हे नरेश्वर | इनके अतिरिक्त समस्त प्राणियोंपर दया, सहनशोलता, अमानिता, सत्य, शीच, अधिक परिश्रम न करना, मङ्गलाचरण, प्रियवादिता, मैत्री, निष्कामता, अकृपणता और किसीके दोष न देखना---वे समस्त वर्षोके सामान्य गुण है ॥ ३६-३७॥

सय वर्णोंक सामान्य रुक्षण इसी प्रकार हैं। अब इन ब्राह्मणदि चारों वर्णोंक आपद्धर्म और गुणोंका श्रवण करो ॥ ३८ ॥ आपत्तिके समय ब्राह्मणको क्षत्रिय और वैइय-वर्णोंकी बृतिका अवरुम्बन करना चाहिये तथा श्रियको केवल वैइयवृतिका हो आश्रय लेना चाहिये। ये बोनों शूद्रका कर्म (सेवा आदि) कथी न करें ॥ ३९ ॥ सामर्थ्यं सित तस्याज्यमुभाभ्यामपि पार्श्वंब । तदेवापदि कर्तव्यं न कुर्यात्कर्मसङ्करम् ॥ ४० इत्येते कथिता राजन्वर्णधर्मा मया तव । धर्मानाश्रमिणां सम्यम्ब्रुवतो मे निशामय ॥ ४१ है राजन् ! इन उपरोक्त यृतियोंको भी सामर्थ्य होनेपर त्याग दे; केवल आपत्कालमें हो इनका आश्रय ले, कर्म-सङ्कृता (कर्मीवत पेल) न करे ॥ ४० ॥ हे राजन् ! इस प्रकार वर्णधर्मीका वर्णन तो मैंने तुमसे कर दिया; अब आश्रम-धर्मीका निरूपण और करता हूँ, सायधान होकर सुनो ॥ ४१ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीर्येऽशे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवाँ अध्याय

ब्रह्मचर्य आदि आश्रमोंका वर्णन

और्व उद्यान बालः कृतोपनयनो वेदाहरणतत्परः । गुरुगेहे वसेद्धप ब्रह्मचारी समाहित:॥ शौचाचारव्रते तत्र कार्य शुश्रुषणं गुरोः। व्रतानि चरता प्राह्मी वेदश कृतबुद्धिना ॥ उभे सन्ध्ये रविं भूप तथैवाग्निं समाहितः । उपतिष्ठेत्तदा कुर्याद्वरोरप्यभिवादनम् ॥ स्थिते तिष्ठेद्वजेद्याते नीचैरासीत चासित । शिष्यो गुरोर्नुपश्रेष्ठ प्रतिकूलं न सङ्घरेत्।। तेनैवोक्तं पठेद्वेदं नान्यचित्तः पुरस्स्थितः । अनुज्ञातश्च भिक्षात्रपश्चीयादुरुणा ततः॥ अवगाहेदपः पूर्वमाचार्येणावगाहिताः । समिञ्न्लादिकं चास्य कल्यं कल्यम्पानयेत् ॥ गृहीतब्राह्मबेदश्च ततोऽनुज्ञामवाप्य गार्हस्थ्यमाविशेळाजो निष्यन्नग्रुतिष्कृतिः ॥ विधिनावाप्तदारस्तु धनं प्राप्य स्वकर्पणा । गृहस्थकार्यमेखिलं कुर्याद्धपाल शक्तितः ॥ विवापेन पितृनर्चन्यज्ञैर्देवांस्तथातिथीन् । अत्रैर्मुनोञ्च स्वाध्यायैरपत्येन प्रजापतिम् ॥ भूतानि बलिभिश्चैय वासस्येनाखिलं जगत्।

प्राप्नोति लोकान्युरुषो निजकर्मसमार्जितान् ॥ १०

और्व बोले—हे भूपते ! बालकको चाहिये कि ठपनयन-संस्कारके अनन्तर वेदाध्ययनमें तत्पर**्होकर** ब्रह्मचर्यका अवलम्बन कर सावधानतापूर्वक गुरुगृहमे निकस करे ॥ १ ॥ वहाँ रहकर उसे शौच और आचार-व्रतका पालन करते हुए गुरुकी सेवा-शृक्ष्या करनी चाहिये तथा व्रतादिका आचरण करते हुए स्थिर-खुंद्धसे खेदाध्ययन करना चाहिये ॥ २ ॥ हे राजन् ! [प्रातःकाल और सार्थकाल। दोनों सञ्चाओंमें एकाव होकर सुर्व और अग्निको उपासना करे तथा गुरुका अभिवादन करे॥ ३ ॥ गुरुके खड़े होनेपर खड़ा हो जाय, चलनेपर पीछे पीछे चलने लगे तथा बैठ जानेपर नीचे बैठ जाय । हे न्यश्रेष्ठ ! इस प्रकार कभी गुरुके विरुद्ध कोई आचरण न करे॥४॥ गुरुजीके कहनेपर ही उनके सामने बैठकर एकाप्रचित्तसे वेदाध्ययन करे और उनकी आजा होनेगर ही भिक्षात्र भोजन करे ॥ ५ ॥ जरूमें प्रथम आचार्यके सान कर चकनेपर फिर खयं आन करे तथा प्रतिदिन प्रातःकाल गुरुजीके लिये समिधा, जल, कुश और पृथादि लाकर जुटा दे ॥ ६ ॥ इस प्रकार अपना अभिमत वेदपाउ समात कर चक्रनेपर बृद्धिमान् शिष्य गुरूजीकी आज्ञासे उन्हें गुरू-दक्षिणा देकर गृहस्थाश्रममें प्रवेश करे ॥ ७ ॥ हे राजन् !

फिर विधिपूर्वक पाणियहण कर अपनी वर्णानुकुल

वृत्तिसे द्रय्योपार्जन करता हुआ सामर्थ्यानुसार समस्त

गृहकार्य करता रहे ॥ ८ ॥ पिण्ड-दानादिसे पितृगणकी,

यज्ञादिसे देवताओंको, अन्नदानसे अतिथियोकी, स्याध्यायसे ऋषियोंकी, पुत्रोत्पत्तिसे प्रजापतिको, यक्तियों

(अनभाग) से भृतगणको तथा वात्सल्यभावसे सम्पूर्ण

जगत्की पूजा करते हुए पुरुष अपने कर्मीद्वारा मिले हुए

उत्तमीत्तम लोकोंको प्राप्त कर लेता है॥ ९-१०॥

भिक्षाभुजञ्ज ये केचित्परित्राङ्क्रहाचारिणः । तेऽप्यत्रेव प्रतिष्ठन्ते गार्हास्यं तेन वै परम् ॥ ११ वेदाहरणकार्याय तीर्थस्त्रानाय च प्रभो। अटन्ति वसुधां विष्राः पृथिवीदर्शनाय च ॥ १२ अनिकेता ह्यनाहारा यत्र सायंगुहाश्च ये। तेषां गृहस्थः सर्वेषां प्रतिष्ठा योनिरेव च ॥ १३ तेषां स्वागतदानादि वक्तव्यं मधुरं नृपः। गृहागतानां दद्याच शयनासनभोजनम् ॥ १४ अतिथिर्यस्य भन्नाञो गृहात्प्रतिनिवर्तते । स दत्त्वा दुष्कृतं तस्मै पुण्यमादाय गच्छति ॥ १५ अवज्ञानमहङ्कारो दम्मश्रैव गृहे सतः। परितापीपधाती च पारुष्यं च न शस्यते ॥ १६ यस् सम्बक्तरोत्येवं गृहस्यः परमं विधिम् । सर्वेबन्धविनिर्मुक्तो लोकानाप्रोत्यनुत्तमान् ॥ १७ वयःपरिणतो राजन्कृतकृत्यो गृहाश्रमी । पुत्रेषु भार्या निश्चिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा ॥ १८ पूर्णमूलफलाहारः केशश्मश्रुजटाधरः । भूमिशायी भवेत्तत्र मुनिस्सर्वातिथिर्नृप ॥ १९ चर्मकाशकृशैः कुर्यात्परिधानोत्तरीयके । तद्वत्त्रिषवणं स्त्रानं शस्तमस्य नरेश्वर ॥ २० देवताभ्यर्चनं होपस्पर्वाभ्यागतपूजनम् । भिक्षा बलिप्रदानं च शस्तमस्य नरेश्वर ॥ २१ वन्यस्त्रेहेन गात्राणामभ्यक्षश्चास्य शस्यते । तपश्च तस्य राजेन्द्र शीतोष्णादिसहिष्णुता ॥ २२ यस्त्वेतां नियतश्चर्यां वानप्रस्थश्चरेन्युनिः । स दहत्यप्रिवद्दोषाञ्चयेल्लोकांश शाश्वतान् ॥ २३ चतुर्वञ्चाश्रमो भिक्षोः प्रोच्यते यो मनीविभिः। तस्य स्वरूपं गदतो मम श्रोतुं नृपार्हसि ॥ २४ पत्रद्रव्यकलत्रेषु त्यक्तस्त्रेहो नराधिप । चतुर्थमाश्रमस्थानं गच्छेन्निर्धतमत्तरः ॥ २५

বিশ্বপুণ ড—

जो केवल भिक्षावृत्तिसे ही रहनेवाले परिवाजक और ब्रह्मचारो आदि हैं उनका आश्रय भी गृहस्थाश्रम ही है, अतः यह सर्वश्रेष्ठ है ॥ ११ ॥ हे राजन् ! विष्रगण वेदाध्ययन, तीर्धस्त्रान और देश-दर्शनके लिये पृथिकी-पर्यटन किया करते है ॥ १२ ॥ उनमेंसे जिनका कोई निश्चित गृह अथवा भोजन-प्रयन्थ नहीं होता और जो जहाँ सायंकाल हो जाता है वहीं तहर जाते हैं, उन सबका आधार और मूल गहस्थाश्रम ही है ॥ १३ ॥ हे राजन् ! ऐसे लोग जब घर आवे तो उनका कुराल-प्रश्न और मधुर वचनोंसे खानत वहे तथा शब्या, आसन और भोजनके द्वारा तनका वंशाहाकि सत्कार करे ॥ १४ ॥ जिसके घरसे अहिथि निरादा होकर लौट जाता है उसे अपने समस्त दुष्कर्म देकर वह (अतिथि) उसके पण्यकर्मीको स्वयं छे जाता है॥ १५॥ मृहस्थके छिये अतिधिके प्रति अपमान, अहकूर और दश्भका आधरण करना, उसे देकर पंछताना, उसपर प्रहार करना अथवा उससे कटणाध्य करना उचित नहीं है ॥ १६ ॥ इस प्रकार जो गृहस्थ अपने परम धर्मका पूर्णतया पालन करता है वह समस्त बन्धनीसे भुक्त होकर अत्युक्तम लोकोको प्राप्त कर रहेता है ॥ १७ ॥ हे राजन् । इस प्रकार गृहस्योचित कार्य करते-करते जिसको अवस्था ढल गयी हो उस गृहस्थको उचित है कि स्त्रीको पुत्रोके प्रति सौंपकर अथवा अपने साथ लेकर बनको चला जाय ॥ १८ ॥ वहाँ पत्र, मूल, फल आदिका आहार करता हुआ, लोध, इमश्रु (दाढ़ां-मूंछ) और जटाओंको घारण कर पृथिवीपर शयन करे और मुनिबृतिका अवलम्बन कर सब प्रकार अतिधिकी सेवा करे ॥ १९ ॥

तैलादिको शरीरमें मलना और शीवोष्णका सहन करते हुए तपस्यामें रूपे रहना उसके प्रशस्त कमें हैं॥ २२॥ जो बानप्रस्थ मुनि इन नियत कमेंका आचरण करता है वह अपने समस्त दोषोंको अग्निक समान प्रस्म कर देता है और नित्य-लोकोंको प्राप्त कर लेता है॥ २३॥ हे नृप! पण्डितगण जिस चतुर्थ आश्रमको भिक्ष-आश्रम कहते हैं अब मैं उसके स्वरूपका वर्णभ करता हूँ, सावधान होकर सुनो॥ २४॥ हे नरेन्द्र! तृतीय आश्रमके अनन्तर पुत्र, द्रव्य और स्त्री आदिके स्वेहको सर्वथा

उसे चर्म, काञ्च और कुशाओंसे अपना विखीन। तथा

ओड़नेका वस बनाना चाहिये। हे नरेश्वर ! उस गुनिके लिये विकाल-सानका विश्वन है ॥ २०॥ इसी प्रकार देवपुत्रन,

होम, सब अतिथियोका सत्कार, भिक्षा और बलिनेधरेब

भी उसके विहित कर्म है॥ २१॥ हे राजेन्द्र ! बन्य

त्रैवर्गिकांस्यजेत्सर्वानारम्भानवनीपते मित्रादिषु समो मैत्रस्समस्तेष्ट्रेव जन्तुषु ॥ २६ जरायुजाण्डजादीनां वाहुनःकायकर्मभिः । युक्तः कुर्वीत न द्रोहं सर्वसङ्घाश वर्जयेत् ॥ २७ एकरात्रस्थितिर्वामे पञ्चरात्रस्थितिः पुरे । तथा तिष्टेद्यथात्रीतिर्देषो वा नास्य जायते ॥ २८ प्राणयात्रानिमित्तं च व्यङ्गारे भुक्तवज्ञने । काले प्रशस्तवर्णानां भिक्षार्थं पर्यटेद् गृहान् ॥ २९ कामः क्रोधस्तथा दर्पमोहलोभादयश्च ये। तांस्तु सर्वान्यरित्यज्य परिव्राह् निर्पमो भवेत् ॥ ३० अभवं सर्वभूतेभ्यो दत्त्वा यश्चरते मुनिः। तस्यापि सर्वभूतेभ्यो न भयं विद्यते क्रचित् ॥ ३१ कुत्वाग्निहोत्रं स्वज्ञरीरसंस्थं शारीरमप्रि स्वमुखे जुहोति । विप्रस्तु भैक्ष्योपहितैर्हिविधि-श्चिताञ्चिकानां व्रजित स्म लोकान् ॥ ३२ यशोक्त मोक्षाश्रमं यश्चरते

श्चिस्स्तं कल्पितबुद्धियुक्तः । अनिन्धनं ज्योतिरिव प्रशासः स ब्रह्मलोकं श्रयते द्विजातिः ॥ ३३

त्यागकर तथा मात्सर्यको छोडकर चतुर्थ आश्रममें प्रवेदः करे ॥ २५ ॥ हे पृथिजीपते ! भिक्षको उचित है कि कर्ष, धर्म और कामरूप त्रिवर्गसम्बन्धी समस्त कर्मीको छोड़ दे, ऋतु-पिश्रदिमें समान भाव रखे और सभी जीवोंका सहद हो ॥ २६ ॥ निरन्तर समाहित १हक्त अरायुज, अण्डज और स्वदेज आदि समस्त जीवोंसे मन, वाणी अथवा कर्मद्वारा कभी द्रोह न करे तथा सब प्रकारकी आसक्तियोंकी त्यांग दे ॥ २७ ॥ ग्रामपे एक एत और पुरमें पाँच रात्रितक रहे तथा। इतने दिन भी तो इस प्रकार रहे जिससे किसीसे प्रेम अथका डेप न हो ॥ २८ ॥ जिस समय घरोंमें अग्नि शान्त हो जाय और लोग भोजन कर चके उस समय प्राणस्थाके लिये उत्तम वर्णोमें भिक्षाके लिये जाय ॥ २९ ॥ परिवाजकाने चाहिये कि

कान, क्रोध तथा दर्प, छोभ और मोह आदि समस्त दुर्गुणोंको छोड़कर ममताशुन्य होकर रहे ॥ ३० ॥ जो मुनि समसा प्राणियोंको अभयदान देकर विचरता है उसको भी किसीसे कभी कोई भय नहीं होता ॥ ३१ ॥ जो ब्राह्मण चतुर्थ आश्रममें अपने ऋरीरमें स्थित प्राणादिसहित ज्ञापिके उद्देश्यसे अपने मुखर्मे भिक्षात्ररूप हविसे हवन करता है, वह ऐसा अग्रिहोत्र करके अग्निहोत्रियोंके लोकांको प्राप्त हो जात: है ॥ ३२ ॥ जो ब्राह्मण [ब्रह्मसे भिन्न सभी मिथ्या है, सम्पूर्ण लगत् भगवानुका ही संकल्प है—ऐसे] बुद्धियोगरी युक्त होकर, वधाविधि आचरण करना हुआ इस मोक्षाश्रमका पवित्रता और सुखपूर्वक आचरण करता है, यह निरिन्धन अधिके समान शान्त होता है और अन्तमें बहारतेक प्राप्त करता है ॥ ३३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽदो नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ - + ---

दसवाँ अध्याय

जातकर्म, नामकरण और विवाह-संस्कारकी विधि

सगर तथाच

कथिते चातुराश्रम्यं चातुर्वण्यक्रियास्तश्रा । पुंसः क्रियामहं श्रोतृमिच्छामि द्विजसत्तम ॥ नित्यनैमित्तिकाः काम्याः क्रियाः पुंसामशेषतः ।

समाख्याहि भृगुश्रेष्ट सर्वज्ञो हासि मे मतः ॥

और्य उवाच

यदेतदुक्तं भवता नित्यनैमित्तिकाश्रयम्। तदहं कथविष्यामि शृणुष्ट्रैकमना सम ॥ सगर बोले— हे हिजश्रेष्ट ! आपने चारों आश्रम

और चारों वर्णीके कमीका वर्णन किया। अब मैं आपके द्वारा पनुष्योंके (पोडश संस्काररूप) कर्मीको सनना चाइता हूँ ॥ १ ॥ हे भुगुश्रेष्ठ ! मेरा विचार है कि आप सर्वक्र हैं। अतएव आप मनुष्योंके नित्य-नैमितिक और कान्य आदि सब प्रकारके कर्मोंका निरूपण कीजिये ॥ २ ॥

और्व बोले-हे राजन्! आपने जे नित्य-नैमित्तिक आदि क्रियाकलापके विषयमें पूछा सो मैं संबक्त वर्णन करता है, एकाश्रचित्त होकर सुनो ॥ ३ ॥

जातस्य जातकर्मादिक्रियाकाण्डमशेषतः । पुत्रस्य कुर्वीत पिता श्रार्द्धं चाभ्युदयात्मकम् ॥ युग्मांस्तु प्राङ्मखान्विप्रान्भोजयेन्यनुजेश्वर । यथा यृत्तिस्तर्थों कुर्यादैवं पित्र्यं द्विजन्पनाम् ॥ द्ह्या यवैः सबदरैमिंश्रान्पिण्डान्युदा युतः । नान्दीमुखेभ्यस्तीर्थेन दद्यादैवेन पार्थिव ॥ प्राजापत्येन वा सर्वमुपचारं प्रदक्षिणम् । कुर्वीत तत्तथाशेषवृद्धिकालेषु भूपते ॥ ततश्च नाम कुर्वीत पितैव दशमेऽहनि। देवपूर्वं नराख्यं हि शर्मवर्मादिसंयुतम् ॥ शर्मेति ब्राह्मणस्योक्तं वर्मेति श्वत्रसंश्रयम् । गुप्तदासात्मकं नाम प्रशस्तं वैश्वशृद्धयोः ॥ नार्थहीनं न चारास्तं नापसब्दयुतं तथा । नामङ्गल्यं जुगुप्स्यं वा नाम कुर्यात्समाक्षरम् ॥ १० नातिदीर्घं नातिहस्यं नातिगुर्वक्षरान्वितम्। सुंखोद्यार्थं तु तन्नाम कुर्याद्यत्प्रवणाक्षरम् ॥ ११ ततोऽनन्तरसंस्कारसंस्कृतो गुरुवेङ्मनि । यथोक्तविधिमाश्रित्य कुर्याद्विद्यापरिग्रहम् ॥ १२ गृहीतविद्यो गुरवे दत्त्वा च गुरुदक्षिणाम् । गार्हस्थ्यमिच्छन्भूपाल कुर्याद्वारपरित्रहम् ॥ १३ ब्रह्मचर्येण या कालं कुर्यात्संकल्पपूर्वकम् । गुरोश्शुश्रूषणं कुर्यात्तत्पुत्रादेरथापि वा ॥ १४

वैसानसो वापि भवेत्परिवाड्य वेक्क्या ।

वर्षेरेकगुणां भार्यामुद्रहेत्त्रगुणस्वयम् ।

निसर्गतोऽधिकाङ्गी वा न्यूनाङ्गीपपि नोइहेत् ।

न दुष्टां दुष्टवाक्यां वा व्यङ्गिनीं पितृमातृत: ।

पूर्वसङ्कल्पितं यादुक् तादुकुर्यात्रराधिप ॥ १५

नातिकेशामकेशां वा नातिकृष्णां न पिङ्गलाम् ॥ १६

नाविशुद्धां सरोमां वाकुलजां वापि रोगिणीम् ॥ १७

न रमशुट्यञ्चनवर्ती न बैव पुरुषाकृतिम् ॥ १८

पुत्रके उत्पन्न होनेपर पिताको चाहिये कि उसके जातकर्म आदि सफल क्रियाकाण्ड और आभ्युदियक श्राद्ध करे ॥ ४ ॥ हे नरेश्वर ! पूर्वाधिमुख बिठाकर युग्म त्रह्मणोंको भोजन करावे तथा द्विजातियोके व्यवहारके अनुसार देव और पितृपक्षकी तृष्ठिके लिये श्राद्ध करे ॥ ५ ॥ और हे राजन् ! प्रसनतापूर्वक दैवतीर्थ (अंगुल्ब्यंकि अयभाग) द्वारा नान्दीमुख पितृगणको दही. जी और बदरीफल मिलाकर बनाये हुए पिण्ड दे ॥ ६ ॥ अथवा प्राजापत्यतीर्थ (कनिष्टिकाके मूल) दूसा सम्पूर्ण उपचार् प्रव्योका दान करे। इसी प्रकार [कन्या अथवा पुत्रेकि विवाह आदि] समस्त बृद्धिकालेमि भी करे ॥ ७ ॥ तदनत्तर, पुत्रोत्पत्तिके दसवें दिन पिता वामकरण-संस्कार करे । पुरुषका नाम पुरुषवाचक होना चाहिये । उसके पूर्वमें देववाचक शब्द हो तथा पीछे शर्मा, वर्मा आदि होने चाहिये ॥ ८ ॥ ब्राह्मणके नामके अन्तमे रामाँ, क्षत्रियके अन्तमें वर्मा तथा वैदय और शुद्रोंके नःमान्तमें क्रमञः गुप्त और दास शब्दोका प्रयोग करना चाहिये ॥ ९ ॥ नाम अर्थहीन, अविहित, अपराष्ट्युक्त, अमञ्जलिक और निन्दनीय न होना चाहिये तथा उसके अक्षर समान होने चाहिये ॥ १० ॥ अति दीर्य, अति लघु

अथवा कठिन अक्षरींसे युक्त नाम न रखे । जो सुखपूर्वक उचारण किया जा सके और जिसके पीछेके वर्ण लघु हों ऐसे नामका व्यवहार करे ॥ ११ ॥ तदनन्तर उपनयन-संस्कार हो जानेपर गुरुगुहर्गे रहकर विधिपूर्वक विद्याध्ययन करे॥ १२ ॥ हे भूपाल ! फिर विद्याध्ययन कर चुकनेपर गुरुको दक्षिणा देकर यदि गृहस्थाश्रममे प्रवेश करनेकी इच्छा हो तो विवाह कर ले ॥ १३ ॥ या दृढ़ संकल्पपूर्वक नैष्ठिक ब्रह्मचर्य ब्रह्मकर गुरु अधवा गुरुपुत्रोंको सेवा-शुश्रुषा करता रहे ॥ १४ ॥ अथया अपनी इन्छानुसार वानप्रस्थ या संन्यास महण कर ले। हे राजन् ! पहले जैसा संकल्प किया हो वैसा ही करे ॥ १५ ॥ [यदि विवाह करना हो तो] अपनेसे तृतीयांश अवस्थावाली वन्यासे विवाह करे तथा अधिक या अल्प केशवाली अथवा अति सौंबली क पाण्डवर्णा (भरे रंगकी) स्त्रीसे सम्बन्ध न करे ॥ १६ ॥ जिसके जन्मसे ही अधिक या न्यून अंग हों, जो अपवित्र, रोमयुक्त,

अकुलीना अथवा रोगिणी हो उस सासे पाणियहण न

करे॥ १७॥ बुद्धिमान् पुरुषको उचित् है कि जो दुष्ट

स्ममानवास्त्री हो, कटुभाषिणी हो, माता अधवा पिताके

न धर्धरस्वरां क्षामां तथा काकस्वरां न च । नानिबन्धेक्षणां तद्वद्वताक्षीं नोड्हेट्स्थः ॥ १९ यस्याश्च रोमहो जङ्के गुल्फौ यस्यास्तथोन्नतौ । गण्डयोः कृपरौ यस्या हसन्त्यास्तां न चोड्रहेत् ॥ २० नातिरूक्षच्छवि पाण्डकरजामुरुणेक्षणाम् । आपीनहस्तपादां च न कन्यामुद्वेहेद् बुधः ॥ २१ न वामनां नातिदीधौ नोइहेत्संहतभूवम्। न चातिच्छिद्रदशनां न करालमुखीं नरः ॥ २२ पञ्चमीं मातुपक्षाच पितुपक्षाच सप्तमीम् । गृहस्थश्चोद्वहेत्कन्यां न्यायेन विधिना नृप ॥ २३ ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः। गान्यवराक्षसौ चान्यौ पैशाचश्चाष्ट्रमो मतः ॥ २४ एतेषां यस्य यो धर्मो वर्णस्थोक्तो महर्विभिः। कुर्वीत दारप्रहणं तेनान्वं परिवर्जयेत् ॥ २५ सधर्मेवारिणी प्राप्य गाईस्थ्यं सहितस्तया । समुद्रहेददात्येतत्सम्यगृहं महाफलम् ॥ २६

अनुसार अङ्गरीना हो, जिसके इमश्रु (मूँखेंके) चिह्न हों, जो पुरुषके-से आकारवाली हो अधवा वर्धर शब्द करनेवाले अति मन्द्र या कीएके समान (कर्णकर) खरवाली हो तथा पक्ष्मशुन्य या गोल नेप्रीवाली हो उस स्त्रीसे विवाह न करे ॥ १८-१९ ॥ जिसकी जंघाओंपर रोम हों, जिसके गुलक (टखने) ऊँचे हों तथा हँसते समय जिसके कपोलींमें गई पहते हों उस कन्यासे विवाह न करे ॥ २० ॥ जिसकी कान्ति अत्यन्त उदासीन न हो, नख पाण्डवर्ण हों, नेत्र छरछ हों तथा हाथ-पेर कुछ भारी हों, बुद्धिमान् पुरुष उस कत्यासे सम्बन्ध न करे॥ २१॥ जो आति वागन (ताटी) अथवा आति दीर्घ (लम्बी) हो, जिसकी भृतुदियाँ जुड़ी हुई हो, जिसके दतिमि अधिक अत्तर हो तथा वो दनुर (आगेको दाँत निकले हुए) मुखबाली हो उस खीसे कभी विवाह न करे॥ २२ ॥ हे राजन् ! मातपक्षसे पाँचवीं पीढीतक और पितपक्षसे सातवीं पीढ़ीतक जिस कन्याका सम्बन्ध न हो, गृहस्थ पुरुषको नियमानुसार उसीसे विवाह करना चाहिये ॥ २३ ॥ ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आस्त्रर, नान्धर्व, ग्रक्षस और पैशाच—ये आठ प्रकारके विवाह है।। २४॥ इनमेंसे जिस विवाहको जिस वर्णके लिये महर्षियोंने धर्मानुकुल कहा है उसीके द्वारा दार-परिवह करे, आन्य विधियोको छोड दे ॥ २५ ॥ इस प्रकार सहधरिंगीको प्राप्तकर उसके साथ गाईस्थ्यधर्मका पाठन करे, क्वोंकि उसका पालन करनेपर बहु महान् फल देनेवाला होता है ॥ २६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेऽदो ददामोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवाँ अध्याय

गृहस्थसम्बन्धी सदाचारका वर्णन

सगर उद्याच

गृहस्थस्य सदाचारं श्रोतुमिच्छाम्यहं मुने । लोकादस्मात्परस्माच यमातिष्ठन्न हीयते ॥

श्रीर्व उत्राच श्रूयतां पृथिवीपाल सदाचारस्य लक्षणम् । सदाचारवता पुंसा जितौ लोकावुभाविष ॥ साधवः श्लीणदोषास्तु सच्छव्दः साधुवाचकः । तेषामाचरणं यत्तु सदाचारस्य उच्यते ॥ सप्ताषीऽथ मनवः प्रजानां पतयस्तथा । सदाचारस्य वक्तारः कर्तारश्च महीपते ॥ सगर बोले—हे मुने ! मैं गृहस्थके सदाकारीको सुनना चाहता हूँ, जिनका आवरण करनेसे वह इहलोक और परलोक दोनों जगह पतित नहीं होता ॥ १ ॥

और्व बोले — है पृथिवीपाल ! तुम सदाचारके रूक्षण सुनो । सदाचारी पुरुष इस्टलेक और परलोक दोनोहीको जोत लेता है ॥ २ ॥ 'सत्' शब्दका अर्थ साभु है और साथु वही है जो दोषरहित हो । उस साथु पुरुषका जो आचरण होता है उसीको सदाचार कहते है ॥ ३ ॥ हे राजन् ! इस सदाचारके वक्ता और कर्ता सहिंगिण, मनु एवं प्रजापति है ॥ ४ ॥

ब्राह्मे मुहुते चोत्थाय मनसा मतिमात्रुप । प्रबुद्धश्चिन्तयेद्धर्ममर्थं चाप्यविरोधिनम् ॥ अपीड्या तयोः काममुभयोरपि चिन्तयेत्। दृष्टादृष्टविनाशाय त्रिवर्गे समदर्शिता ॥ परित्यजेदर्थकामौ धर्मपीडाकरौ नृप । धर्ममप्यसुखोदकै लोकविद्विष्टमेव च ॥ ततः कल्यं समुत्थाय कुर्यानमूत्रं नरेश्वर ॥ नैर्ऋत्यामिषुविक्षेपमतीत्याभ्यधिकं भुवः । दूरादावसधान्मूत्रं पुरीषं च विसर्जयेत्॥ पादायनेजनोव्छिष्टे प्रक्षिपेत्र गृहाङ्गणे ॥ १० आत्मकायां तरुकायां गोसूर्यान्यनिलांसत्या । गुरुद्विजादीस्तु बुधो नाधिमेहेत्कदावन ॥ ११ न कृष्टे सस्यमध्ये वा गोवजे जनसंसदि। न वर्त्यनि न नद्यादितीर्थेषु पुरुषर्थभ ॥ १२ नाप्स् नैवाम्भसस्तीरे इमशाने न समाचरेत् । उत्सर्ग वै पुरीषस्य मूत्रस्य च विसर्जनम् ॥ १३ उदङ्खलो दिवा मूत्रं विपरीतमुखो निशि। कुर्वीतानापदि प्राज्ञो मूत्रोत्सर्ग च पार्थिव ॥ १४ तुणैरास्तीर्ये वसुधां वस्त्रप्रावृतमस्तकः । तिष्टेज्ञातिचिरं तत्र नैव किञ्चिदुदीरयेत्।। १५ वल्मीकमूषिकोद्धृतां मृदं नान्तर्जलां तथा । शौचावशिष्टां गेहास नादद्याल्लेपसम्भवाम् ॥ १६ अणुप्राण्युपपन्नां च हलोत्खातां च पार्थिव । परित्यजेन्मुदो होतास्सकलाइशौचकर्मीण ॥ १७ एका लिङ्के गुद्दे तिस्त्रो दश वामकरे नृप। हस्तद्वये च सप्त स्युर्मृदङ्शौचोपपादिकाः ॥ १८ अच्छेनागन्धलेपेन जलेनाबुद्बुदेन च। आचामेश मृदं भूयस्तथादद्यात्समाहितः ॥ १९ निष्पदिताङ्ग्रिशौचस्तु पादावभ्युक्ष्य तैः पुनः । त्रिःपिबेत्सलिलं तेन तथा द्विः परिमार्जयेत् ॥ २० रीर्षण्यानि ततः स्वानि मूर्द्धानं च समालभेत्।

बाहु नाभिं च तोयेन हृदयं चापि संस्पृशेत् ॥ २१

हे नृप ! बुद्धिमान् पुरुष स्वस्थ नित्तसे ब्राह्ममुहूर्तमें जगकर अपने धर्म और धर्माविरोधी अर्थका चिन्तन करे ॥ ५॥ तथा जिसमें धर्म और अर्थकी खति न हो ऐसे कामका भी चिन्तन करें। इस प्रकार दृष्ट और अदृष्ट अनिष्टकी निवृत्तिके लिये धर्म, अर्थ और काम इस त्रिवर्गके प्रति समान भाव रखना चाहिये॥ ६॥ हे नृप ! धर्मविरुद्ध अर्थ और काम दोनोंका त्याग कर दे तथा ऐसे धर्मका भी आचरण न करे जो उत्तरकालमें दुःखमय अथवा समाज-विरुद्ध हो॥ ७॥

हे नरेश्वरं ! तदनत्तर ब्राह्मसृहतेमें उठकर प्रथम मृत्रत्याग करे । प्रामसे नैक्ट्लकोणमें जितनी दूर बाज जा सकता है उससे आगे बढ़बर अथवा अपने निवास स्थानसे दुर जाकर मल-मृत्र त्याग करे। पैर घोषा हुआ और जुड़ा जल अपने घरके आँगनमें न डाले ॥ ८ — १० ॥ अपनी या वृक्षकी छायाके ऊगर तथा गौ, सुर्थ, अग्नि, वासु, गुरु और द्विजातीय पुरुषके सामने बुद्धिमान् पुरुष कभी महन्युत्रत्वागं न करे॥ ११ ॥ इसी प्रकार है पुरुवर्षम ! जुते हुए खेतमें, सस्यसम्पत्र भूमिमे, गौओंके गोष्टमें, जन-समाजमें, मार्गके बीचमें, नदी आदि तीर्थरषानीमें, जल अर्थना जलाशयके तटपर और इमशानमें भी कभी मल-मुत्रका त्याग न करे ॥ १२-१३ ॥ है राजन् । कोई विशेष आपत्ति न हो तो प्राप्त पुरुषको चाहिय कि दिनके समय उत्तर-मुख और रात्रिके समय दक्षिण-मुख होकर मृत्रत्याग करे ॥ १४ ॥ मल-त्यागके समय पृथिवीको तिनकोसे और सिरको वस्त्रसे डॉप ले तथा उस स्थानपर अधिक समयतक न रहे और न कुछ बोले हो ॥ १५॥

हे राजन् ! बाँबीकी, बूहोंद्वारा बिलसे निकाली हुई, जलके भीतरकी, शीचकमंस बची हुई, घरके लीमनकी, चाँठी आदि छोटे-छोटे जीबोंद्वारा निकाली हुई और हलसे उखाड़ी तुई—इन सब प्रकारकी मृत्तिकाओंका शौच कमेंमें उपयोग न करे ॥ १६-१७ ॥ हे नृप ! लिंगमें एक बार, पुढ़ामें तीन बार, बावें हाथमें दस बार और दोनों हाथोंमें सात बार मृतिका लगानेसे शौच सम्मन्न होता है ॥ १८ ॥ तदनन्तर गन्ध और फेनरहित खच्छ जलसे आचमन करे । तथा फिर सावधानतापूर्वक बहुत-सी मृतिका ले ॥ १९ ॥ उससे चरण-शुद्धि करनेके अनन्तर फिर पैर घोकर तीन बार बुल्ल्झ करे और दो बार सुख धोचे ॥ २० ॥ तदाश्चान् जल लेकर शिरोदेशमें स्थित धोचे ॥ २० ॥ तदाश्चान् जल लेकर शिरोदेशमें स्थित

खाञान्तरतु ततः कुर्यात्पुमान्केशप्रसाधनम्। आदर्शाञ्चनमाङ्गरूयं दूर्वाद्यालम्पनानि च ॥ २२ ततस्ववर्णधर्मेण वृत्त्यर्थं च धनार्जनम्। कुर्वीत श्रद्धासम्पन्नी यजेच पृथिवीपते ॥ २३ सोमसंस्था हविस्तंस्थाः पाकसंस्थास्तु संस्थिताः । धने यतो मनुष्याणां यतेतातो धनार्जने ॥ २४ नदीनदतटाकेषु देवस्वातजलेषु च। नित्यक्रियार्थं स्रायीत गिरिप्रस्रवणेषु च ॥ २५ कृपेषुद्धततोयेन स्नानं कुवींत वा भुवि। गृहेषुद्धृततोयेन ह्यथवा भुव्यसम्मवे ॥ २६ श्चिवस्बधरः स्नातो देवर्षिपितृतर्पणम् । तेवामेव हि तीर्थेन कुर्वीत सुसमाहित: ॥ २७ त्रिरपः त्रीणनार्थाय देवानामपकर्जयेत्। ऋषीणां च यथान्यायं सकुचापि प्रजापते: ॥ २८ पितृणां प्रीणरार्थाय त्रिरपः पृथिवीपते । पितामहेभ्यश्च तथा प्रीणयेटापितामहान् ॥ २९ मातामहाय तत्पित्रे तत्पित्रे च समाहितः । दद्यात्पेत्रेण तीर्थेन काम्यं चान्यच्छणुषु मे ॥ ३० मात्रे प्रमात्रे तन्मात्रे गुरुयत्न्यै तथा नृप । गुरूणां मातुलानां च स्त्रिग्धमित्राय भूभुजे ॥ ३१ इदं चापि जपेदम्ब दह्यादात्मेच्छ्या नृप । उपकाराय भूतानां कृतदेवादितर्पणम् ॥ ३२ देवासुरास्तथा यक्षा नागगन्धर्वराक्षसाः । पिशाचा गुह्यकासिद्धाः कृष्माण्डाः पश्चवः खगाः ॥ ३३ जलेचरा भूनिलया वाय्वाहाराश्च जन्तवः । तृप्तिमेतेन यान्त्वाशु मद्दत्तेनाम्बुनाखिलाः ॥ ३४

इन्द्रियरनभ, मूर्डा, बाहु, नाभि और इदयको स्पर्श करे ॥ २१ ॥ फिर भूकी प्रकार खान करनेके अनन्तर केश संबारे और दर्पण, अञ्चन तथा दुवां आदि माङ्गलिक ट्रव्योंका यथाविधि व्यवसार करे। २२॥ तदननार हे पृथिवीपते ! अपने वर्णभर्मके अनुसार आजीविकाके लिये चनोपार्जन करे और श्रद्धापूर्वक यज्ञानुष्टान करे ॥ २३ ॥ सोपसंस्था, हविसंस्था और पाकसंस्था— इन सब धर्म-कमीका आधार धन ही है।* अतः मन्ष्योको धनोपार्जनका यक्ष करना चाहिये॥ २४॥ नित्यकसँकि सम्पादनके लिये नदी, नद, तढाग, देवालयोंकी मायडी और पर्वतीय झरनोमें छान करना चाहिये ॥ २५ ॥ अथवा कुँएसे जल खोंचकर उसके पासकी भूमिपर स्नान करे और यदि वहाँ भूमिपर स्नान करना सम्भव न हो तो कुँएसे खींचकर रुस्ये हुए जलसे घरहीमें नहा रहे ॥ २६ ॥

स्तान करनेके अनन्तर शुद्ध बस्त धारण कर देवता, ऋषियण और पित्रगणका उन्हेंकि तीथींसे तर्पण करे ॥ २७ ॥ देवता और ऋषियोंके तर्पणके लिये तीन-तीन बार तथा प्रजापतिके लिये एक बार जल छोड़े ॥ २८ ॥ हे पृथिबीपते । पितृगण और पितामहोंकी प्रसन्नताके लिये तीन बार जल छोड़े तथा इसी प्रकार प्रिपतामहोंको भी सन्तृष्ट करे एवं मातामह (नाना) और उनके पिता तथा उनके पिताको भी सावधानतापूर्वक पित-तीर्थसे जलदान करे। अब काम्य तर्पणका वर्णन करता हैं, श्रवण करो ॥ २९-३० ॥

'यह जल माताके लिये हो, यह प्रमाताके लिये हो, यह वृद्धाप्रमाताके लिये हो, यह गुरुपलीको, यह गुरुको, यह मामाको, यह प्रिय मित्रको तथा यह राजाको प्राप्त हो—हे राजन् । यह जपता हुआ समस्त भूतोंके हितके लिये देवादितर्पण करके अपनी इच्छानुसार अभिलिपत सम्बन्धीके लिये जलदान करें ॥ ३१-३२ ॥ [देवादि-तर्पणके समय इस प्रकार कहे---] देव, असूर, यक्ष, नाग, गन्धर्त, राक्षस, पिद्याच, गुद्धक, सिद्ध, कुष्माण्ड, पत्रु, पक्षी, जलकर, स्थलकर और वायु-भक्षक आदि सभी प्रकारके जीव मेरे दिये हुए इस जलसे तृत हो ॥ ३३-३४ ॥

" गीतमस्मृतिके अष्टम अध्ययमें कहा है--

'औपासनगृष्टकः पार्वणश्राद्धः श्रावण्याग्रहायणी कैकश्युर्जनि सप्त पाकयञ्जसंस्थाः । अञ्च्याधेयपप्रिकेते दर्शपूर्णमासा-बाप्रयणं चातुर्मास्यानि निरूद्धपशुचन्धस्तीत्रांमणीति सप्त इक्षियंज्ञसंस्थाः । अग्रिष्टोमोऽस्यप्रिष्टोम उक्ष्यः षोढशी वाजपेयोऽति-रात्राप्नोर्यामा इति सप्त सोमसंस्थाः।'

औपासन, अष्टका श्राद्ध, पार्वण श्राद्ध तथा श्रावण अमहारण चैव और आधिन मासकी पूर्णिमाएँ—ये सारा "पानयज्ञ-संस्था' है, अञ्चाचेष, अतिहोत्र, दर्श, पूर्णमास, आप्रमण, चानुर्णस्य, यज्ञपश्रवश्च और श्रीक्षमणी—ये सात 'हविर्वज्ञसंस्था' हैं, यथा अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ, पोडशो, वाजपेच, अतिरात्र और आहोर्याम—ये सात 'सोमयज्ञसंस्था' हैं।

नरकेषु समस्तेषु यातनासु च ये स्थिताः। तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया॥३५ ये बान्धवाबान्धवा वा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः । ते तृष्ट्रिमिखला यान्तु ये चास्मतोयकाङ्क्षिणः ॥ ३६ यत्र क्रव्यनसंस्थानां क्षुत्रुष्णोपहतात्मनाम् । इदमाप्यायनायास्तु मया दत्तं तिलोदकम् ॥ ३७ काम्बोदकप्रदानं ते मयैतत्कश्चितं नृप । यद्त्त्वा प्रीणयत्येतन्पनुष्यसाकलं जगत्। जगदाप्यायनोद्धतं पुण्यमाप्रोति चानघ ॥ ३८ दत्त्वा काम्योदकं सम्यगेतेभ्यः श्रद्धयान्वितः । आचम्य च ततो दद्यात्सूर्याय सलिलाञ्चलिम् ॥ ३९ नमो विवस्तते ब्रह्मभास्तते विष्णुतेजसे। जगत्सवित्रे शुचये सवित्रे कर्मसाक्षिणे॥४० ततो गृहार्चनं कुर्यादभीष्टसुरपूजनम्। जलाभिषेकै: पुष्पेश्च धूपाद्येश्च निवेदनम् ॥ ४१ अपूर्वमित्रहोत्रं च कुर्यात्प्राग्ब्रह्मणे नृप ॥ ४२ प्रजापति सुमुद्दिश्य दद्यादाहृतिमादरात् । गुह्येभ्यः काञ्चयायाथ ततोऽनुमतये क्रमात् ॥ ४३ तच्छेषं मणिके पृथ्वीपर्जन्येभ्यः क्षिपेत्ततः । द्वारे धातुर्विधातुश्च मध्ये च ब्रह्मणे क्षिपेत् ॥ ४४ गृहस्य पुरुषच्याघ्र दिग्देवानपि मे शृणु ॥ ४५ इन्द्राय धर्मराजाय वरुणाय तथेन्दवे । प्राच्यादिषु बुधी दद्याद्धुतशेषात्मकं बलिम् ॥ ४६ प्रागुत्तरे च दिग्धागे धन्वन्तरिवलिं बुधः । निर्वपेद्वैश्वदेवं च कर्म कुर्यादतः परम् ॥ ४७ वायव्यां वायवे दिक्ष् समस्तासु यथादिशम् । ब्रह्मणे चात्तरिक्षाय भानवे च क्षिपेइलिम् ॥ ४८

जो प्राणी सम्पूर्ण नरकोंने नाना प्रकारकी यातनाएँ भोग रहे हैं उनकी तृप्तिके लिये मैं यह जलदान करता हैं ॥ ३५ ॥ जो मेरे बन्धु अथवा अबन्धु है, तथा जो अन्य जन्मीमें मेरे बन्धु थे एवं और भी जो-जो मुझसे जरूकी इन्छा रखनेवाले हैं वे सब मेरे दिये हुए जलसे परितृप्त हो ॥ ३६ ॥ श्रुषा और तृष्णारो व्याकुल जीव कहीं भी क्यों न हों मेरा दिया हुआ यह तिलोदक उनको तृति प्रदान करे' ॥ ३० ॥ है नृप ! इस प्रकार भैंने तुमसे यह काम्प-तर्पणका निरूपण किया, जिसके करनेसे मनुष्य सकल संसारको तुह कर देता है और हे अनय ! इससे उसे जगतुकी तृप्तिसे होनेबाला पुण्य प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥

593

इस प्रकार उपरोक्त जीवोंको श्रद्धापूर्वक काम्यजल-दान करनेके अनन्तर आचमन करे और फिर सुर्यदेवको जलालाल दे ॥ ३९ ॥ [उस समय इस प्रकार कहे---] 'भगवान विवस्तानको नमस्कार है जो वेद-वेद्य और विष्णुके तेजरस्वरूप हैं तथा जगतुको उत्पन्न करनेजाङे, अति पवित्र एवं कर्मीके साक्षी हैं' ॥ ४० ॥

तदनन्तर अलाभिषेक और पुष्प तथा भूपादि निवेदन करता हुआ गुरुदेव और इष्टदेवका पूजन करे ॥ ४१ ॥ है नृप ! फिर अपूर्व अग्निहोत्र करे, उसमें पहले ब्रह्माको और तदनन्तर क्रमञः प्रजापति, गृह्य, काञ्चप और अनुमतिको आदरपूर्वक आहतियाँ दे ॥ ४२-४३ ॥ उससे बचे हुए हच्यको पृथिची और मेघके उद्देश्यसे उदक्यात्रमें,* घाता और विधाताके उद्देश्यसे हारके दोनो ओर तथा बह्माके उद्देश्यसे परके मध्यमें छोड़ दे। हे पुरुषव्याच ! अब मैं दिक्यालगणकी पृजाका वर्णन करता हैं, अवण करो ॥ ४४-४५ ॥

अुद्धिमान् पुरुवको चाहिये कि पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशाओंमें क्रमशः इन्द्र, यम, वरूण और चन्द्रमाके ख्यि हुतशिष्ट सामग्रीसे बल्जि प्रदान करे ॥ ४६ ॥ पूर्व और उत्तर-दिशाओंमें धन्वन्तरिके स्मिने बीठ दे तथा इसके अनन्तर, बल्विश्वदेव-कर्म, करे ॥ ४७ ॥ बल्विश्वदेवके समय वायव्यकोणमें वायुको तथा अन्य सपस्त दिशाओंमें बायु एवं उन दिशाओंको बलि दे, इसी प्रकार ब्रह्मा, अन्तरिक्ष और सूर्यको भी उनकी दिशाओंके अनुसार [अर्थात् मध्यमे] बलि प्रदान करे ॥ ४८ ॥

[🗴] वह जरूर भरा पात्र भी अधिदांत करते समय सम्रोपमे रख लिया जाता है और 'इट न मम' जहबार आहुतिका शेष भाग छोड़ा जाता है।

विश्वेदेवान्विश्वभूतानथ विश्वपतीन्पितृन् । यक्षाणां च समुद्दिश्य बलिं दद्यान्नरेश्वर ॥ ४९ ततोऽन्यदन्नमादाय भूमिभागे शुचौ बुधः । दद्यादशेषभूतेभ्यस्वेच्छया सुसमाहितः ॥ ५० देवा मनुष्याः पश्चो वयांसि

सिद्धास्सयक्षोरगदैत्यसङ्घाः

प्रेताः पिशाचास्तरवस्समस्ता

ये चात्रमिच्छन्ति मयात्र दत्तम् ॥ ५१

पिपीलिकाः कीटपतङ्गकाद्या

बुभुक्षिताः कर्मनिबन्धबद्धाः।

प्रयान्तु ते तृप्तिमिदं मयात्रं वेश्यो विस्तां स्टिन

तेभ्यो विस्ष्टं सुखिनो भवन्तु ॥ ५२

येषां न माता न पिता न बन्धु-नैवान्नसिद्धिनं तथात्रमस्ति ।

तत्तृप्तयेऽत्रं भुवि दत्तमेतत्

ते यान्तु तृप्तिं मुदिता भवन्तु ॥ ५३ भूतानि सर्वाणि तथान्नमेत-

दहं च विष्णुनं ततोऽन्यदस्ति।

तस्मादहं भूतनिकायभूत-

मत्रं प्रयच्छामि भवाय तेषाम् ॥ ५४ चतुर्दशो भूतगणो य एव

तत्र स्थिता येऽखिलभूतसङ्घाः । तुप्सर्थमत्रं हि यया विसृष्टं

तेषामिदं ते मुदिता भवन्तु ॥ ५५

इत्युद्यार्थ नरो दद्यादत्रं श्रद्धासमन्वितः । भुवि सर्वोपकाराय गृही सर्वाश्रयो यतः ॥ ५६

श्वचाण्डालविहङ्गानां भृति दद्यात्ररेश्वर । ये चान्ये पतिताः केचिद्रपत्राः भन्ति मानवाः ॥ ५।

ये चान्ये पतिताः केचिदपुत्राः सन्ति मानवाः ॥ ५७ ततो गोदोहमात्रं वै कालं तिष्ठेद् गृहाङ्गणे ।

अतिथियहणार्थाय तदूर्यं तु यश्चेक्कवा ॥ ५८

फिर हे नरेश्वर ! विश्वेदेवी, विश्वभूती, विश्वपतियों, पिनरों और यक्षोंके उद्देश्यसे [यथास्थान] बलि दान करें ॥ ४९ ॥

तदनन्तर बृद्धिमान् व्यक्ति और अत्र लेकर पवित्र पृथिवीपर समाहित चित्तसे बैठकर खेच्छानुसार समस्त प्राणियोंको बल्डि प्रदान करे ॥ ५० ॥ [उस समय इस प्रकार कहे --] 'देवता, मनुष्य, पश्च, पक्षी, सिद्ध, यक्ष, सर्प, देत्य, पेत, पिद्माच, वृक्ष तथा और भी चींटी आदि कोट-पतङ्ग जो अपने कर्मकश्वास वैधे हुए क्षुधातुर होकर मेरे दिये हुए अनकी इच्छा करते हैं, उन सबके लिये में यह अन्न दान करता हूँ। वे इससे परितृप्त और आनन्दित हो ॥ ५१-५२ ॥ जिनके माता, पिता अथवा कोई और बन्धु नहीं है तथा अत्र प्रस्तुत करनेका साधन और अस भी नहीं है उनकी दृष्टिके लिये पृथिवीपर मैंने यह अन्न रखा है; वे इससे तुस होकर आनन्दित हो ॥ ५३ ॥ सम्पूर्ण प्राणी, यह अन्न और मैं-—सभी विष्णु हैं; क्योंकि उनसे भिन्न और कुछ है ही नहीं। अतः मैं समस्त भूतीका दारीररूप यह अत्र उनके पोषणके रूपे दान करता हूँ ॥ ५४ ॥ यह जो चौदह प्रकारका 🔭 भूतसमुदाय है उसमें जितने भी प्राणिगण अवस्थित है उन सबकी तृत्रिके लिये मैंने यह अन्न प्रस्तृत किया है; वे इससे प्रसन्न हों ॥ ५५ ॥ इस प्रकार उचारण करके गृहस्य पुरुष श्रद्धापूर्वक समस्त जीवीके उपकारके हिन्ने पृथिवीमे अभदान करे, क्वाँकि गृहस्थ ही सबका आश्रय है॥ ५६॥ हे नरेश्वर ! तदनन्तर कुत्ता, चाण्डाल, पक्षिगण तथा और भी जो कोई पतित एवं पुत्रहोन पुरुष हो उनको तुष्त्रिके क्रिये पृथिसीमें बलिभाग रखे ॥ ५७ ॥

फिर गो-दोहनकालपर्यन्त अथवा इच्छानुसार इससे भी कुछ अधिक देर अतिथि ब्रहण करनेके लिये घरके

अर्थात् आठ प्रकारका देवसम्बन्धी, पाँच प्रकारका तिर्वन्धीनिसम्बन्धी और एक प्रकारका मनुष्ययोगिसम्बन्धी—यह

संक्षेपसे भौतिक सर्ग कहरूता है। इनका पृथक् पृथक् विकरण इस प्रकार है—

सिद्धगुराकागन्धर्वयक्षराक्षसमत्रमाः । विद्याधराः पिदाचाश्च निर्दिष्टा देवयोनयः ॥

चौदह भूतसमृद्ययोका वर्णन इस प्रकार किया गया है—
 'अष्टविश्व देवलं तैर्यंग्योन्यश्च पञ्चथा भवति । सानुष्यं चैकविश्व समासतो भौतिकः सर्गः ॥

अतिश्विं तत्र सम्प्राप्तं पूजवेत्स्वागतादिना । तथासनप्रदानेन पादप्रक्षालनेन च ॥ ५९ श्रद्धया चान्नदानेन प्रियप्रश्नोत्तरेण च। गच्छतञ्चानुयानेन प्रीतिमुत्पादयेद् गृही ॥ ६० अज्ञातकुरुनामानमन्यदेशादुपागतम् । पूजयेदतिथि सम्यङ् नैकश्रामनिवासिनम् ॥ ६१ अकिञ्चनमसम्बन्धमञ्जातकलशीलिनम् । असम्पूज्यातिथिं भुक्त्वा भोक्तुकामं व्रजत्यधः ॥ ६२ स्वाध्यायगोत्राचरणमपृष्टा च तथा कुलम् । हिरण्यगर्भबुद्ध्या तं मन्येताभ्यागतं गृही ॥ ६३ पित्रर्थं चापरं विप्रमेकमप्याशयेश्वय । तदेश्यं विदिताचारसम्भूति पाञ्चयज्ञिकम् ॥ ६४ अन्नायञ्च समुद्धृत्य इन्तकारोपकल्पितम् । निर्वापभृतं भूपाल श्रोत्रियायोपपादयेत् ॥ ६५ दत्त्वा च भिक्षात्रितयं परिवाड्ब्रह्मचारिणाम् । इच्छया च बुधो दद्याद्विभवे सत्यवारितम् ॥ ६६ इत्येतेऽतिथयः प्रोक्ताः प्रागुक्ता भिक्षवश्च ये । चतुरः पूजयित्वैतात्रृप पापात्प्रमुच्यते ॥ ६७ अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात्प्रतिनिवर्तते ।

स तसी दुष्कृतं दत्त्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥ ६८ श्राता प्रजापतिः शको बह्रिर्वसुगणोऽर्यमा । प्रविज्ञ्यातिश्चिमेते वै भुद्धन्तेऽत्रं नरेश्वर ॥ ६९ तस्मादतिश्चिपूजायां यतेत सततं नरः। स केवलमधं भुङ्क्ते यो भुङ्क्ते हातिथि विना ॥ ७० ततः स्ववासिनीदुःखिगर्भिणीवृद्धवालकान् ।

भोजयेत्संस्कृतान्नेन प्रथमं चरमं गृही ॥ ७१

ऑगनमें रहे ॥ ५८ ॥ यदि अतिथि आ जाय तो उसका खागतादिसे तथा आसन देकर और चरण घोकर संस्कार करे ॥ ५९ ॥ फिर श्रद्धापूर्वक भोजन क्यक्ट मधुर वाणीसे प्रश्नोत्तर करके तथा उसके जानेके समय पीछे-पीछे जाकर उसको प्रसन्न करे ॥ ६० ॥ जिसके कल और नामका कोई पता न हो तथा अन्य देशसे आया हो उसी अतिथिका सत्कार करे, अपने ही गाँवमें रहनेवाले प्रथकी अतिथिरूपसे पूजा करनी उचित नहीं है ॥ ६१ ॥ जिसके पास कोई सामग्री न हो, जिससे कोई सम्बन्ध न हो, जिसके कुल-शिलका कोई पता न हो और जो भोजन करना चाहता

हो उस अतिधिका सत्कार किये बिना घोजन करनेसे मनुष्य

अधोगतिको प्राप्त होता है ॥ ६२ ॥ यहस्थ प्रुपको चाहिये

कि आये हुए अतिथिके अध्ययन, गोन्न, आचरण और कुल आदिके विषयमें कुछ भी न पुछकर हिरागगर्भ-बृद्धिसे

उसकी पूजा करे ॥ ६३ ॥ हे नृप ! अतिथि-सत्कारके

अनन्तर अपने ही देशके एक और पाञ्चयक्रिक बाहाणको जिसके आचार और कुछ आदिका ज्ञान हो पितृगणके छिये। भोजन करावे ॥ ६४ ॥ हे भूपाल ! [मनुष्ययज्ञकी विधिसे 'मनुष्येभ्यो हन्त' इत्यादि मन्तोत्तारणपूर्वक } पहले ही निकालकर अलग रखे हुए हत्ताकार नामक अबसे उस श्रोत्रिय ब्राह्मणको भोजन करावे ॥ ६५ ॥ इस प्रकार [देवता, अतिथि और ब्राह्मणको] ये तीन भिशाएँ देकर, यदि सामर्थ्य हो तो परिकारक और ब्रह्मचारियोंको भी विना छीटाये हुए इच्छानुसार भिक्षा

दे ॥ ६६ ॥ तीन पहले तथा भिक्षगण---ये चारो अतिथि कहलाते हैं । हे राजन् ! इन चारोंका पूजन करनेसे मनुष्य समस्त पापोसे पुक्त हो जाता है।। ६७॥ जिसके घरसे अतिथि निराष्टा होकर लौट जाता है उसे वह अपने पाप देकर उसके शुभकर्मीको छे जाता है ॥ ६८ ॥ हे नरेशर ! धाता, प्रजापति, इन्द्र, अग्नि, बसुगण और अर्यमा—ये समस्त देवगण अतिथिमें प्रविष्ट होकर अन्न मोजन करते हैं ॥ ६९ ॥ अतः मनुष्यको अतिथि-पूजाके लिये निरत्तर प्रयत करना चाहिये। जो पुरुष अतिथिके बिना मोजन करता है वह हो केवल पाप ही भोग करता है ॥ ७० ॥ तदनन्तर गृहस्थ पुरुष पितृगृहमें रहमेवाको विवाहिता

सरीसुपा धानगश पदावो सुगपश्चिणः । तिर्यञ्च इति कथ्यन्ते पञ्चैताः प्राणिजातयः ॥ अर्थ—सिद्ध, गुहुक, गुन्धर्थ, यक्ष, सक्षस, सर्प, विद्यापर और विशाय—वे आठ देख्वेनियाँ मानी गुरी हैं तथा

सरीसुप, वानर, पशु, मुग, (जंगली प्राणी) और पशी—ये पाँच निर्वेण योगियाँ कही गर्य है।

अभुक्तवस् वैतेषु भुञ्जनभुद्दके स दुकृतम्।
मृतश्च गत्वा नरकं श्लेष्मभुग्जायते नरः॥ ७२
अस्नाताशी पलं भुद्दके हाजपी पृषशोणितम्।
असंस्कृतात्रभुद्दपृत्रं वालादिप्रथमं शकृत्॥ ७३
असोमी च कृमीन्भुद्दके अदत्त्वा विषमश्चते॥ ७४
तस्माच्छ्रणुषु राजेन्द्र यथा भुञ्जीत वै गृही।
भुद्धतश्च यथा पुंसः पायबन्धो न जायते॥ ७५
इह चारोग्यविपुलं बलबुद्धिस्तथा नृप।

इह चारोग्यविपुलं बलबुद्धिस्तथा नृप । भवत्यरिष्ट्रशान्तिश्च वैरिपक्षाभिचारिका ॥ ७६ स्त्रातो यथावस्कृत्वा च देवर्षिपितृतर्पणम् ।

प्रशस्तरत्वपाणिस्तु भुझीत प्रयतो गृही ॥ ७७ कृते जपे हुते बह्नौ शुद्धवस्त्रधरो नृप । दत्त्वातिथिभ्यो विष्रेभ्यो गुरुभ्यसंश्चिताय च । पुण्यगन्धश्शस्तमाल्यधारी चैव नरेश्वर ॥ ७८

एकवस्त्रधरोऽधार्द्रपाणिपादो महीपते । विशुद्धवदनः प्रीतो भुझीत न विदिङ्गुखः ॥ ७९

प्राङ्मुखोदङ्मुखो वापि न चैवान्यमना नरः । अत्रं प्रशस्तं पथ्यं च प्रोक्षितं प्रोक्षणोदकैः ॥ ८० न कुत्सिताइतं नैव जुगुप्सावदसंस्कृतम् ।

न कुत्सिताहत नव जुगुप्सावदसंस्कृतम् । दस्ता तु भक्तं शिष्येभ्यः क्षुधितेभ्यसाचा गृही ॥ ८१

प्रशस्तशुद्धपात्रे तु भुक्षीताकुपितो द्विजः ॥ ८२ नासन्दिसंस्थिते पात्रे नादेशे च नरेश्वर ।

नाकाले नातिसङ्कीणें दत्त्वाग्रं च नरोऽप्रये ॥ ८३ मन्त्राधिमन्त्रितं शस्तं न च पर्युषितं नृप । अन्यत्रफलमूलेभ्यश्शुष्कशास्त्रादिकात्त्रश्चा ॥ ८४ कत्या, दुरितया और गर्भिणी स्त्री तथा वृद्ध और बालकोंको संस्कृत अनसे भोजन कराकर अन्तमें स्वयं भोजन करे ॥ ७१ ॥ इन सबको भोजन कराये बिना जो स्वयं भोजन कर लेता है वह भाषमय भोजन करता है और अन्तमें मरकर

नरकमें इलेम्बाभोजी कीट होता है ॥ ७२ ॥ जो व्यक्ति स्त्रान किये जिना भोजन करता है वह मरू भक्षण करता है, जय किये जिना भोजन करनेवास्त्र रक्त और पूच पान करता है, संस्कारहीन अज खानेवास्त्र मृत्र पान करता है तथा जो

बालक-मृद्ध आदिसे पहले आहार करता है वह विद्वाहारी है। इसी प्रकार खिना होम किये भोजन करनेवाला मानो कीड़ॉको खाता है और बिना दान किये खानेवाला विष-भोजी है॥ ७३-७४॥

अतः हे राजेन्द्र ! गृहस्थको जिस प्रवार पोजन करना चाहिये—जिस प्रकार भोजन करनेसे पुरुषको पाप-बन्धन नहीं होता तथा इह लोकमें अत्यन्त आरोग्य, अल-बुद्धिको प्राप्ति और ऑर्ड्डोको शान्ति होती है और जो शतुपक्षका हास करनेवाली है—वह भोजनविधि सुनो ॥ ७५-७६ ॥ गृहस्थको चाहिये कि स्तान करनेके अनन्तर यथाविधि देव, व्हणि और पितृगणका तर्पण करके शायमें उत्तम रत्न थारण किये पवित्रतापूर्वक भोजन करे ॥ ७७ ॥ हे नृप ! जप तथा अग्निहोबके अनन्तर शुद्ध वस्त्र धारण कर अतिथि, ब्राह्मण,

गुरुजन और अपने आश्रित (बालक एवं बृद्धी) को

भोजन करा सुन्दर सुगन्धयुक्त उत्तम पुष्पमाला तथा एक ही

वस धारण किये हाथ-पाँच और मुँह धोकर प्रोतिपूर्वक भोजन करे। हे राजन् ! भोजनके समय इधर-उधर न देखे॥ ७८-७९॥ भनुष्यको चाहिये कि पूर्व अथवा उत्तरको ओर मुख करके, अन्यमना न होकर उत्तम और पथ्य अन्नको प्रोक्षणके लिये रखे हुए मन्तपूत जलसे छिड़क कर भोजन करे॥ ८०॥ जो अन्न दुराचारी

व्यक्तिका लाया हुआ हो, घृणाजनक हो अथवा:

बल्जिशदेव आदि संस्कारशून्य हो उसको महण न करे। है हिज ! गृहस्थ पुरुष अपने खाद्यमेसे कुछ अंश अपने शिष्य तथा अन्य भूखे-प्यासींको देकर उत्तम और शुद्ध पात्रमें शान्त-चित्तसे भोजन करे॥ ८१-८२॥ हे गरेशर !

किसी बेत आदिके आसन (कुर्सी आदि) पर रखे हुए

पात्रमें,अयोग्य स्थानमें, असमय (सञ्या आदि काल) में अथवा अत्यन्त संकुचित स्थानमें कभी भोजन न करे। मनुष्यको चाहिये कि [परोसे हुए भोजनका] अम-भाग अधिको देकर भोजन करे॥ ८३॥ है नृप! जो अश्र

मन्तपूत और प्रशस्त हो तथा जो बासी न हो उसींको भोजन करे । परंतु फल, मूल और सूखी शासाओंको तथा विना मकाये हुए लेहा (चटनी) आदि और गुड़के परार्थिक

तदुद्धारीतकेभ्यश्च गुडभक्ष्येभ्य एव च। भुञ्जीतोद्धृतसाराणि न कदापि नरेश्वर ॥ ८५ नादोषं पुरुषोऽश्रीयादन्यत्र जगतीपते । मध्यप्यद्धिसर्पिभ्यस्सक्तभ्यश्च विवेकवान् ॥ ८६ अश्रीयातन्ययो भूता पूर्व तु मधुरं रसम्। लवणाम्ली तथा मध्ये कटुतिकादिकांस्ततः ॥ ८७ प्राग्द्रवं पुरुषोऽश्रीयान्मध्ये कठिनभोजनः । अन्ते पुनर्द्रवाशी तु बलारोग्ये न पुञ्चति ॥ ८८ अनिन्दां भक्षयेदित्यं वाग्यतोऽग्रमकुत्सयन्। पञ्चप्रासं महामौनं प्राणाद्याप्यायनं हि तत्।। ८९ भुक्ता सम्यगश्रासम्य प्राङ्गमुस्रोदङ्गमुस्रोऽपि वा । यक्षावत्पुनराचामेत्पाणो प्रक्षाल्य मूलतः ॥ ९० खस्थः प्रशान्तिचत्तस्तु कृतासनपरित्रहः। अभीष्टदेवतानां तु कुर्वीत स्मरणं नरः ॥ ९१ अग्रिराप्याययेद्धातुं पार्श्विवं पवनेरितः । दत्तावकाशं नधसा जरवत्वस्तु मे सुखम् ॥ ९२ अन्नं बलाय में भूमेरपामण्यनिलस्य च। भवत्येतत्परिणतं ममास्त्वव्याहृतं सुखम् ॥ ९३ प्राणापानसमानानामुदानव्यानयोस्तथा अत्रं पुष्टिकरं चास्तु ममाध्यव्याहतं सुखम् ॥ ९४ अगस्तिरप्रिर्बडवानलक्ष भुक्तं मयात्रं जरवत्वशेषम्। सुखं च मे तत्परिणामसम्भवं यच्छन्त्वरोगो मम जास्तु देहे ॥ १५ विष्णुस्समस्तेन्द्रियदेहदेही प्रधानभूतो भगवान्यश्रैकः । तेनात्तमशेषमञ्ज-सत्येन मारोग्यदं मे परिणाममेत् ॥ ९६ विष्णुरत्ता तथैवात्रं परिणामश्च वै तथा।

सत्येन तेन मद्धक्तं जीर्यत्वन्नमिदं तथा ॥ ९७

अनायासप्रदायीनि कुर्यात्कर्माण्यतन्द्रितः ॥ ९८

इत्युद्धार्यं स्वहस्तेन परिमृज्य तथोदरम्।

लिये ऐसा नियम नहीं है । हे नरेश्वर ! सारहीन पदार्शीको कभी न खाय ॥ ८४-८५ ॥ हे पृथिलीपते ! वियेकी पुरुष मध्, जल, दहो, घी और ससुके सिवा और किसी पदार्थको पुरा न साय ॥ ८६ ॥ भीजन एकायचित होका करे तथा प्रथम मधुररस, फिर लवण और अम्ल (खट्टा) रस तथा अन्तमे कटु और तोखे पदार्थीको खाय ॥ ८७ ॥ जो पुरुष पहले द्रव पदार्थीको. बीचमें कटिन वस्तुओंको तथा अन्तमें फिर द्रव पदार्थीको ही खाता है वह कभी बल तथा आरोग्यसे होन नहीं होता॥ ८८॥ इस प्रकार वाणीका संयम करके अनिषिद्ध अप्र भोजन करे । अलकी निन्दा न करे । प्रथम पाँच प्राप्त अत्यन्त मौन होकर प्रहण करे, उनसे पञ्चप्राणीकी तृष्टि होती है ॥ ८९ ॥ भोजनके अनन्तर मली प्रकार आन्त्यन करे और फिर पूर्व या उत्तरकी और मुख करके हाथोंको उनके मुलदेशतक धोकर विधिपूर्वक आसमन करे ॥ २० ॥ तदनन्तर, स्वस्थ और शान्त-चित्तसे आसनपर बैठकर अपने इष्टदेवोंका चिन्तन करे ॥ ९१ ॥ [और इस प्रकार कहे---] "[प्राणरूप] पवनसे प्रन्यलित हुआ जडरात्रि आकाशके द्वारा अवकाशयुक्त अन्नका परिपाक करे और [फिर अन्नरसंसे] मेरे शरीरके पार्थिक चातओंको पृष्ट करे जिससे युझे सूख प्राप्त हो ॥ ९२ ॥ यह अन्न मेरे इसीरस्थ पुचिनी, जल, आमि और वायुका यल बढ़ानेवाला हो और इन चारों तत्वोंके रूपमें परिणत हुआ यह अत्र ही मुझे निरन्तर सुख देनेवाला हो ॥ ९३ ॥ यह अन्न पेरे प्राण, अपान, समान, उदान और व्यानकी पृष्टि करे तथा मुझे भी निर्वाध सुस्तको प्राप्ति हो॥९४॥ मेरे खादे हुए सम्पूर्ण अन्नका अगस्ति नामक अग्नि और बडवानल परिपाक करें, मुझे उसके परिपामसे होनेवाला सुख प्रदान करें और उससे मेरे करीरको आरोग्यता प्राप्त हो ॥ ९५ ॥ 'देह और इन्द्रियादिके अधिष्ठाता एकमात्र भगवान् विष्णु ही प्रधान हैं — इस सत्यके बलसे पेरा खाया हुआ समस्त अत्र परिपक होकर मुझे आरोग्यता प्रदान करे॥ ९६॥ 'भोजन करनेवाला, भोज्य अत्र और उसका परिपाक— ये सब विष्णु ही हैं — इस सत्य भावनाके बरूसे मेरा खाया हुआ यह अन्न पच जाय"॥ ५७॥ ऐसा कहकर अपने उदरपर हाथ फेरे और सावधान होकर अधिक

श्रम उत्पन्न न करनेवाले कार्यमि लग जाय ॥ ९८ ॥

सच्छासादिविनोदेन सन्मार्गादविसेधिना । दिनं नयेत्ततस्मन्ध्यामुपतिष्ठेतसमाहितः ॥ 99 दिनान्तसस्यां सूर्येण पूर्वापृक्षेर्युतां बुधः । उपतिष्ठेद्यथान्याय्यं सम्यगाचम्य पार्थिव ॥ १०० सर्वकालमपस्थानं सन्ध्ययोः पार्थिवेध्यते । अन्यत्र सूतकाशौचविभ्रमातुरभीतितः ॥ १०१ सूर्येणाभ्युदितो यञ्च त्यक्तः सूर्येण वा स्वपन् । अन्यत्रातुरभावातु प्रायश्चित्ती भवेत्ररः ॥ १०२ तस्पादनुदिते सूर्ये समुत्थाय महीपते। उपतिष्ठेन्नरस्तन्ध्यामस्वयंश्च दिनान्तजाम् ॥ १०३ उपतिव्यक्ति वै सन्ध्यां ये न पूर्वी न पश्चिमाम् । क्रजन्ति ते दुरात्यानस्तामिस्रं नरकं नृप ॥ १०४ पुनः पाकपुपादाय सायमप्यवनीपते । वैश्वदेवनिमित्तं वै पत्न्यमन्तं विलं हरेत् ॥ १०५ तत्रापि श्वपचादिभ्यस्तशैवान्नविसर्जनम् ॥ १०६ अतिथिं चागतं तत्र स्वशब्स्या पूजयेद् बुधः । पादशौचासनप्रहुस्वागतोक्त्या च पूजनम् । ततश्चात्रप्रदानेन शयनेन च पार्थिव ॥ १०७ दिवातिथी तु विमुखे गते यत्पातकं नुप । तदेवाष्ट्रगुणं पुंसस्सूर्योहे विमुखे गते ॥ १०८ तस्मात्स्वज्ञक्त्या राजेन्द्र सूर्योडमतिथि नरः । पूजयेत्पूजिते तस्मिन्यूजितास्मर्वदेवताः ॥ १०९ अन्नज्ञाकाम्बुदानेन स्वज्ञक्त्या पूजयेत्पुमान् । ञ्चनप्रस्तरमहीप्रदानैरथवापि तम् ॥ ११० कृतपादादिशौचस्तु भुक्त्वा सायं ततो गृही । गच्छेच्छय्यामस्फुटितामपि दारुमर्यी नृप ॥ १११

नाविशालां न वै भग्नां नासमां मिलनां न च ।

न च जन्तुमयी श्रय्यामधितिष्ठेदनास्तृताम् ॥ ११२

सच्छाओंका अवलोकन आदि सन्मार्गके अविरोधी विनोदोसे दोष दिनको व्यतीत करे और फिर साथकालके समय सावधानतापूर्वक सन्योपासन करे॥ १९॥

है राजन् ! बुद्धिमान् पुरुषको चाहिये कि सायंकालके समय सूर्यके रहते हुए और प्रातःकाल तारागणके चमकते हुए ही भली प्रकार आचमनादि करके विधिपूर्वक सन्योपासन करे ॥ १०० ॥ है पार्थित ! सूतक (पुत्रक्तादिसे होनेवाला अशुचिता), अशौच (मृत्युसे होनेवाली अशुचिता), उत्पाद, ग्रेग और भय आदि कोई वाधा न हो तो प्रतिदिन ही सन्योपासन करना चाहिये॥ १०१॥ जो पुरुष रुगणावस्थाको छोड़कर और कभी सूर्यके उदय अथवा अस्तके समय सोता है वह प्रायक्षित्तका मागो होता है ॥ १०२॥ अतः हे महीपते ! गृहस्थ पुरुष सूर्योदयसे पूर्व ही उठकर प्रातःसन्या करे और सायंकालमे भी तत्कालीन सन्यावन्दन करे; सोबे नहीं॥ १०३॥ हे नृप ! जो पुरुष प्रातः अथवा सायंकालीन सन्योपासन नहीं करते वे दुगल्या अन्यतामिस्त नरकमें पड़ते हैं॥ १०४॥

तदनन्तर, हे पश्चिवीपते ! सायंकालके समय सिद्ध किये हुए अन्नसे गृहपत्नी मन्त्रहीन बलिवैसदेव करे; उस समय भी उसी प्रकार श्वपच आदिके लिये अञ्चान किया जाता है ॥ १०५-१०६ ॥ बुद्धिपान् पुरुष उस समय आये हुए अतिथिका भी सामर्थ्यानुसारं सत्कार करे । हे राजन् ! प्रथम पाँच भुरुपने, आसन देने और खागत-सुबक विनग्न बचन कहनेसे तथा फिर भोजन कराने और शयन करानेसे अतिथिका संस्कार किया जाता है ॥ १०७ ॥ हे नृप ! दिनके समय अतिथिके छौट जानेसे जितना पाप छगता है उससे आउगुना पाप सूर्यास्तके समय लौटनेसे होता है ॥ १०८ ॥ अतः हे राजेन्द्र ! सुर्यासके समय आये हुए अतिथिका गृहस्थ पुरुष अपनी सामर्थ्यानुसार अवस्य सतकार करे क्योंकि उसका पूजन करनेसे ही समस्त देवताओंका पूजन हो जाता है ॥ १०९ ॥ पनुष्यको चाहिये कि अपनी शक्तिके अनुसार इसे भोजनके लिये अन्न, शाक या जल देकत तथा सोनेके लिये शय्या या वास-फुसका बिछीना अथवा पृथिवी ही देकर उसका सत्कार करे॥ ११०॥ . हे नृष ! तदनन्तर, गृहस्य पुरुष सार्यकालका भोजन

करके तथा हाथ-पाँच धोकर छिदादिहीन काष्ट्रमय

शय्यापर लेट जाय ॥ १११॥ जो काफी बडी न हो, ट्रंटी

हुई हो, ऊँची-नीची हो, मस्टिन हो अथवा जिसमें जीव हों

प्राच्यां दिक्षि दिारश्शास्तं याम्यायामश्र वा नृप । सदैव स्वपतः पुंसो विपरीतं तु रोगदम् ॥ ११३ ऋतावुपगमञ्जास्तरस्वपत्न्यामवनीपते पुत्रामक्षे शुभे काले ज्येष्टायुग्पासु रात्रिषु ॥ ११४ नाद्युनां तु स्त्रियं गच्छेन्नातुरां न रजस्वलाम् । नानिष्टां न प्रकृपितां न त्रस्तां न च गर्भिणीम् ॥ १९५ नादक्षिणां नान्यकामां नाकामां नान्ययोषितम् । श्वत्क्षामी नातिभुक्तां वा स्वयं चैभिर्गुणैर्युतः ॥ ११६ स्रातस्त्रगन्ययुक्त्रीतो नाध्मातः क्षुधितोऽपि वा । सकानस्सानुरागश्च व्यवायं पुरुषो व्रजेत् ॥ ११७ चतुर्दश्यष्टमी चैव तथामा चाथ पूर्णिमा । पर्वाण्येतानि राजेन्द्र रविसंक्रान्तिरेव च ॥ ११८ तैलस्त्रीमांससम्भोगी सर्वेष्ट्रेतेषु वै पुमान् । विण्मृत्रभोजनं नाम प्रयाति नरकं मृतः ॥ ११९ अशेषपर्वस्वेतेषु तस्मात्संयमिभिर्बुधैः । भाव्यं सच्छास्त्रदेवेज्याध्यानजप्यपरैनरै: ॥ १२० नान्ययोनावयोनौ वा नोपयुक्तीषधस्तथा । द्विजदेवगुरूणां च व्यवायी नाश्रमे भवेत् ॥ १२१ चैत्यचत्वस्तीर्थेषु नैव गोष्टे चतुष्पथे। नैय रमशानोपवने सिललेषु महीपते ॥ १२२ प्रोक्तपर्वस्वशेषेष् नैव भूपाल सस्ययोः । गच्छेद्वयवायं मतिमात्र मूत्रोश्चारपीडितः ॥ १२३ पर्वस्वभिगमोऽधन्यो दिवा पापप्रदो नृप । भुवि सेगावहो नृणामप्रशस्तो जलाशये ॥ १२४ परदारान्न गच्छेच मनसापि कथञ्चन । किम् वाचारिश्रवन्धोऽपि नास्ति तेषु व्यवायिनाम् ॥ १२५

या जिसपर कुछ बिसा हुआ न हो उस शब्यापर न सोबे ॥ ११२ ॥ हे नृप ! सोनेक समय सदा पूर्व अथवा दक्षिणकी और सिर रखना चाहिये । इनके विपरीत दिशाओंकी ओर सिर रखनेसे रोगोकी उत्पत्ति होती है ॥ ११३ ॥

हे पृथ्वीपते । ऋतुकालमें अपनी ही खीसे सङ्ग करना उचित है । पुँल्लिक नक्षत्रमें युग्म और उनमें भी पीढ़ेकी रात्रियोंमें सुम समयमें सीप्रसङ्ग करे ॥ ११४ ॥ किन्तु यदि स्त्री अप्रसन्ना, रोगिणी, रजस्तल, निरम्कितिणी, क्रोधिता, दुःखिनी अथवा गर्मिणी हो तो उसका सङ्ग न करे ॥ ११५ ॥ जो सीधे समावकी न हो, पराभिलाविणी अथवा निर्णमलाविणी हो, क्षुधार्ता हो, अधिक मोजन किये हुए हो अथवा परस्त्री हो उसके पास न जाय; और पदि अपनेमें वे दोव हों तो भी स्त्रीगमन न करे ॥ ११६ ॥ पुरुषके उचित है कि स्त्रान करनेके अनन्तर माला और गन्य चारण कर काम और अनुसग्युक्त होकर स्त्रीगमन करे । जिस समय अति भोजन किया हो अथवा क्षुधित हो उस समय उसमें प्रयुत्त न हो ॥ ११७॥

हे राजेन्द्र! चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा और सूर्यकी संक्रान्ति— ये सब पर्वदिन हैं॥ ११८॥ इन पर्वदिनोमें तैल, की अथवा मांसका भोग करनेवाला पुरुष मरनेपर विष्ठा और मूत्रसे भेरे नरकमें पड़ता है॥ १९९॥ संयमी और बुद्धिमान् पुरुषोंको इन समस्त पर्वदिनोमें सच्छाखायलोकन, देवोपासना, यशानुप्रान, ध्यान और जप आदिमें लगे रहना चाहिये॥ १२०॥ गौ-खाग आदि अन्य योनियोसे, अयोनियोसे, औषध-प्रयोगसे अथवा ब्राह्मण, देवता और गुरुके आश्रमोमें कभी मैखून न करे ॥ १२१॥ है पृथिबीपते! चैत्यवृक्षके नीचे, ऑगनमें, तीर्थमें, पशुशालामें, चौराहेपर, इमशानमें, उपवनमें अथवा जलमें भी मैथून करना उचित नहीं है॥ १२२॥ हे राजन्! पूर्वोक्त समस्त पर्वदिनोमें प्रातःकाल और सायेकालमें तथा मल-मूत्रके वेगके समय बुद्धिमान् पुरुष मैथुनमें प्रवृत्त न हो॥ १२३॥

मेथुनमें प्रवृत न हो ॥ १२३ ॥
हे नूप ! पर्वदिनोंसे स्वीगमन करनेसे धनकी हानि होती
है; दिनमें करनेसे पाप होता है, पृथिबीपर करनेसे रोग होते
हैं और जलाशयमें स्वीपसङ्ग करनेसे अमेगल होता
है ॥ १२४ ॥ परस्तीसे तो वाणीसे क्या, मनसे भी प्रसङ्ग न करे, व्योकि उनसे मेथुन करनेवालोंको आस्थि-बन्धन मो नहीं होता [अर्थात् उन्हें अस्थिशून्य कीटादि होना पड़ता है ?] ॥ १२५ ॥ अप

मृतो नरकमभ्येति हीयतेऽत्रापि चायुवः । परदाररितः पुंसामिह चामुत्र भीतिदा ॥ १२६ इति मत्वा स्वदारेषु ऋतुमत्सु बुध्नो व्रजेत् । यथोक्तदोषहीनेषु सकामेष्ट्रनृतावपि ॥ १२७

परस्रोकी आसक्ति पुरुषको इहलोक और परलोक दोनों जगह भय देनेवाली हैं; इहलोकमें उसकी आयु शोण हो जाती है और गरनेपर वह नरकमें जाता है ॥ १२६ ॥ ऐसा जानकर बुद्धिमान् पुरुष उपरोक्त दोषोंसे रहित अपनी स्त्रीस ही ऋतुकालमें प्रसङ्ख करे तथा उसकी विद्रोप अभिलापा हो तो बिना ऋतुकालके भी गमन करे ॥ १२७ ॥

और्ख बोलै—गृहस्य पुरुषको नित्यप्रति देवता, गौ,

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽदो एकप्रदक्षोऽध्यायः ॥ ११ ।

बारहवाँ अध्याय

गृहस्थसम्बन्धी सदाचारका वर्णन

और्व स्वाच

देवगोब्राह्मणान्सिद्धान्युद्धाचार्यास्तथार्चयेत् । द्विकालं च नमेसांच्यामग्रीनुपचरेत्तथा ॥ सदाऽनुपहते वस्त्रे प्रशस्ताश्च महौषधीः । गारुडानि च रत्नानि विभयात्मवतो नरः॥ प्रस्निग्धांमलकेशश्च सुगन्धश्चारुवेषधृक् । सितास्तुमनसो हुद्या विभुवाच नरसादा ॥ किञ्चित्परस्वं न हरेन्नाल्पमप्यप्रियं बदेत्। प्रियं च नानृतं ब्रुयान्नान्यदोषानुदीरयेत् ॥ नान्यस्त्रियं तथा वैरं रोचयेत्पृरुपर्वभ । न दुष्टं यानमारोहेत्कृलच्छायां न संश्रयेत् ॥ विद्विष्टपतितोन्मत्तवहवैरादिकीटकैः बन्धकी बन्धकीभर्त्तः क्षद्रानृतकर्यस्सह ॥ तथातिव्ययशीलैश परिवादरतैरुराठैः । बुधो मैत्री न कुर्वीत नैकः पन्धानमाभ्रयेत् ॥ नावगाहेजलीघस्य वेगमग्रे प्रदीप्तं वेरम न विशेन्नारोहेन्छिखरं तरोः ॥ न कुर्याद्दत्तसङ्गर्यं कुष्णीयाद्य न नासिकाम् । नासंवृतमुखो जुम्भेच्यासकासौ विसर्जयेत् ॥ नोसैर्हसेत्सशब्दं च न युक्केत्यवनं बुधः । नखाञ्च सादयेकिन्द्राञ्च तुर्ण न महीं लिखेत् ॥ १०

ब्राह्मण, सिद्धगण, वयोबुद्ध तथा आचार्यकी पूजा करनी चाहिये और दोनों समय सन्धाबन्दन तथा अग्रिहीत्रादि कर्म करने चाहिये ॥ १ ॥ गृहस्थ पुरुष सदा ही संयमपूर्वक रहकर बिना कहींसे कटे हुए दो बस, उत्तम ओषधियाँ और गाम्ह (मरकत आदि विष नष्ट करनेवाले) स्व घारण करे ॥ २ ॥ वह केशोंको स्वच्छ और चिवला रखे तथा सर्वदा सगन्धयुक्त सन्दर वेष और मनोहर शेवपूर्ण थारण करे ॥ ३ ॥ किसीका थोडा-सा भी धन हरण न करे और थोज़-सा भी अप्रिय भाषण न करे। जो मिथ्या हो ऐसा प्रिय क्चन भी कभी न बोले और न कभी दूसरीके दोषोंको ही कहे ॥ ४ ॥ है पुरुषश्रेष्ठ ! दूसरोकी स्त्री अथवा दूसरोंके साथ कर करनेमें कभी रुचि न करे, निन्दित सवारोमें कभी न चढे और नदीतीरको छायाका कभी आश्रय न ले ॥ ५ ॥ बुद्धिमान् पुरुष लोकविद्विष्टं, पतित्, उन्पत्त और जिसके बहुत-से शत्रू हों ऐसे परपोड़क पुरुषोके साथ तथा कुलटा, कुलटाके खामी, शुद्र, मिध्याबादी अति व्ययशील, निन्दापरायण और दृष्ट पुरुषेकि साथ कभी मित्रता न करे और न कभी मार्गमें अकेला चले ॥ ६-७ ॥ हे गरेश्वर ! जलप्रवाहके वेगमे सामने पड़कर स्नान न करे, जलते हुए घरमें अवेश न करे और वृक्षकी बोटीपर न चढ़े ॥ ८ ॥ दाँतीको परस्पर न चिसे, नाकको न कुरेदे तथा मुखको बन्द किये हुए जमहाई न ले और न बन्द मुखसे खाँसे या श्वास छोड़े ॥ ९ ॥ बुद्धिमान् पुरुष जोरसे न हैंसे और शब्द करते हुए अधोवायु न छोड़े; तथा नखोको न चवावे, तिनका न तोड़े और पृथिवीपर भी न लिखे ॥ १० ॥

न इमझ् भक्षबेल्लोष्टं न मृदनीबाद्विवक्षणः । ज्योतींष्यमेध्यशस्तानि नाभिवीक्षेत च प्रभो ॥ ११ नम्नां परिश्वयं चैव सूर्यं चास्तमयोदये। न हुदूर्याञ्चर्य गन्धं शवगन्धो हि सोमजः ॥ १२ बतुष्पश्चं चैत्यतर्रः इमशानोपवनानि च । दुष्टलीसन्निकर्षं च वर्जयेन्निशि सर्वदा ॥ १३ पूज्यदेवद्विजज्योतिश्रुगयां नातिक्रमेद् बुधः । नैकर्शून्याटवीं गच्छेत्तथा शून्यगृहे वसेत्॥ १४ केशास्थिकण्टकामेध्यबलिभस्पतुर्वास्तथा । स्त्रानाईधरणी जैव दूरतः परिवर्जयेत् ॥ १५ नानायांनाश्रयेत्कांश्चित्र जिहां रोचयेद् बुधः। उपसपेंच्न वै व्यालं चिरं तिष्ठेच्न वोस्थित: ॥ १६ अतीव जागरस्वप्रे तहुत्स्नानासने बुधः। न सेवेत तथा शब्यां व्यायामं च नरेश्वर ॥ १७ देष्टिणस्भृङ्गिणश्चैव प्राज्ञो दुरेण कर्जबेत्। अवश्यायं च राजेन्द्र पुरोवातातपौ तथा ॥ १८ न स्त्रायात्र स्वयेत्रयो न चैवोपस्पृशेद् बुधः । मुक्तकेशश्च नाचामेदेवाद्यर्ची च वर्जयेत् ॥ १९ होमदेवार्चनाद्यास् क्रियास्वाचमने तथा । नैकवस्त्रः प्रवर्तेत द्विजवाचनिके जपे॥२० नासमञ्जसशीलैस्तु सहासीत कथञ्चन। सद्वृत्तसत्रिकवों हि क्षणार्द्धमपि शस्यते ॥ २१ विरोधं नोत्तमैंगीच्छेन्नाधमैश्च सदा बुधः। विवाहश्च विवादश्च तुल्यशीलैर्नुपेष्यते ॥ २२ नारभेत कलि प्राजुश्चाष्कवैरं च वर्जयेत्। अप्यल्पहानिस्सोढव्या वैरेणार्थागमं त्यजेत् ॥ २३ स्त्रातो नाङ्गानि सम्माजेंत्स्नानशास्त्रा न पाणिना । न च निर्धृनयेत्केशाञ्चाचामेष्ठैव चोत्थितः ॥ २४ पादेन नाक्रमेत्पादं न पूज्याभिमुखं नयेत । नोशासनं गुरोरमे भजेताविनयान्वितः ॥ २५ अपसब्यं न गच्छेस्र देवागारचतुष्पथान्। माङ्गल्यपूज्यांश्च तथा विपरीतात्र दक्षिणम् ॥ २६

हे प्रभो ! विचक्षण पुरुष मुँछ-दाढीके बालोंको न चबावे, दो ढेलॉको परस्पर न रगड़े और अपवित्र एवं निन्दित नक्षत्रीको न देखे॥ १९॥ नग्न परस्रीको और उदय अथवा अस्त होते हुए सूर्यको न देखे तथा शब और शय-गन्धसे घुणा न करे, क्योंकि शब-गन्ध सोमका अंश है ॥ १२ ॥ चीराहा, चैत्यवृक्ष, इमझान, उपवन और दुष्टा स्त्रीको समीपता—इन सबका गुत्रिके समय सर्वदा त्याग करे ॥ १३ ॥ बुद्धिमान् पुरुष अपने पूजनीय देवता, बाह्यण और तेजोमय पदार्थीकी छायाको कभी न लॉप तथा शुन्य वनसण्डी और शुन्य घरमें कभी अकेला न रहे ॥ १४ ॥ केटा, ऑस्थ, कण्टक, अपवित्र वस्तु, बलि, भस्म, तुष तथा स्त्रानके कारण भीगी हुई पृथिचीका दुरहीसे त्याग करे ॥ १५ ॥ प्राञ्च पुरुषको चाहिये कि अनार्य व्यक्तिका सङ्ग न करे, कृटिल पुरुषमें आसत्त न हो, सर्पके पास न जाथ और जग पड़नेपर अधिक देरतक रुटा न रहे ॥ १६ ॥ हे नरेश्वर ! बुद्धिमान् पुरुष जागने, सोने, स्त्रान करने, बैठने, शस्यासेवन करने और व्याचाम करनेमें अधिक समय न रूगावे ॥ १७ ॥ हे राजेन्द्र ! प्राक्त पुरुष दाँत और सींगवाले पशुओंको, ओसको तथा सामनेकी वाय और धुपको सर्वदा परित्याग करे ॥ १८ ॥ नम्र होकर **कान, शयन और आस्त्रमन न करे तथा केश खोलकर** आचमन और देव-पूजन न करे ॥ १९ ॥ होम तथा देवार्चन आदि क्रियाओंमें, आचमनमें, पुण्याहवाचनमें और जपमें एक वस्त्र धारण करके प्रवृत्त न हो ॥ २० ॥ संदायशील व्यक्तियोंके साथ कभी न रहे। सदाचारी पुरुषोंका तो आधे सणका सङ्ग भी अति प्रशंसनीय होता है ॥ २१ ॥ बुद्धिमान् पुरुष उत्तम अधवा अधम व्यक्तियोंसे विरोध न करे । है राजन् ! विवाह और विवाद सदा समान व्यक्तियोंसे ही होना चाहिये॥ २२॥ प्राज्ञ पुरुष कलह न बढ़ाचे तथा व्यर्थ वैरका भी त्याग करे। थोडी-सी हानि सह छे, किन्तु वैरसे कुछ लाभ होता हो तो उसे भी छोड़ दे॥ २३॥ स्नान करनेके अनन्तर स्नानसे भीगी हुई घोती अथवा हाथोंसे शरीरको न पीछे तथा खड़े-खड़े केशोंको न आहे और आचमन भी न करे ॥ २४ ॥ पैरके ऊपर पैर न रखे, गुरुवनोके सामने पैर न फैलावे और धृष्टतापूर्वक उनके सामने कभी उन्नासनपर न बैठे ॥ २५ ॥

रेवालय, चीराता, माङ्गलिक द्रव्य और पूज्य व्यक्ति—इन सबको बार्थी और रखका न निकट तथा

सोमार्कान्यम्बुवायूनां पूज्यानां च न सम्मुखम् । कुर्यान्निष्ठीवविण्युत्रसमुत्सर्गं च पण्डित: ॥ २७ तिष्ठन मूत्रयेत्तद्दत्पश्चिष्ठपि न मूत्रयेत्। श्लेष्मविण्मूत्ररक्तानि सर्वदैव न लङ्कयेत् ॥ २८ इलेष्मशिङ्काणिकोत्सर्गो नात्रकाले प्रशस्यते । बलिमङ्गलजप्यादौ न होमे न महाजने ॥ २९ योषितो नावमन्येत न चासां विश्वसेद् बुध: । न चैवेर्ष्या भवेतासु न धिक्कुर्यात्कदाचन ॥ ३० मङ्गल्यपुष्परत्नाज्यपूज्याननभिवाद्य न निष्क्रमेद् गृहात्प्राज्ञस्सदाचारपरो नरः ॥ ३१ चतुष्पधान्नमस्कूर्यात्काले होमपरो भवेत्। दीनानभ्युद्धरेत्साधृनुपासीत बहुश्रुतान् ॥ ३२ देवर्षिपूजकसम्यक्यित्रपिण्डोदकप्रदः सत्कर्ता चानिथीनां यः स लोकानुत्तमान्त्रजेत् ॥ ३३ हितं मितं प्रियं काले वश्यात्मा योऽभिभावते । स याति लोकानाह्वादहेतुभूतान्नृपाक्षयान् ॥ ३४ थीपान्हीमान्क्षमायुक्तो ह्यास्तिको विनयान्वितः । विद्याभिजनवृद्धानां याति लोकाननुत्तमान् ॥ ३५ अकालगर्जितादौ च पर्वस्वाशौचकादिय । अनध्यायं बुधः कुर्यादुपरागादिके तथा ॥ ३६ शमं नयति यः क्रुद्धान्सर्वबन्धुरमत्सरी। भीताश्वासनकृत्साधुस्त्रर्गस्तस्याल्पकं फलम् ॥ ३७ वर्षातपादिषु च्छन्नी दण्डी राज्यटवीषु च । शरीरत्राणकामो वै सोपानत्कसादा व्रजेत् ॥ ३८ नोर्ध्वं न तिर्यन्द्रं वा न पश्यन्पर्यटेद् बुधः । युगमात्रं महीपृष्ठं नरो गच्छेद्विलोकयन् ॥ ३९ दोषहेतूनशेषांश्च खञ्चात्मा यो निरस्यति । तस्य धर्मार्थकामानां हानिर्नाल्यापि जायते ॥ ४० सदाचारस्तः प्राज्ञो विद्याविनयशिक्षितः । पापेऽप्यपापः परुषे हाभिधत्ते त्रिवाणि यः ।

पैत्रीद्रवान्तःकरणस्तस्य मुक्तिः करे स्थिता ॥ ४१

इनके विपरीत बस्तुओंको दायाँ ओर रखकर न जाय ॥ २६ ॥ चन्द्रमा, सूर्य, अग्नि, जल, वायु और फूब्य् व्यक्तियंकि सम्मुख पण्डित पुरुष मल-मूब-त्याग न करे और न यूके ही ॥ २७ ॥ खड़े-खड़े अथवा मार्गमें मूत्र-त्याग न करे तथा इलेप्सा (थूक), विष्ठा, मृत्र और रक्तको कभी न लाँचे ॥ २८ ॥ भोजन, देख-पूजा, माङ्गलिक कार्य और जप-होमादिके समय तथा महापुरुषोंके सामने यूकना और छोंकना उचित नहीं है ॥ २९ ॥ खुँद्धमान् पुरुष स्त्रियोंका अपमान न करे, उनका विश्वास भी न करे तथा उनसे इंप्या और उनका तिरस्कार भी कभी न करे ॥ ३० ॥ सदान्यर-परायण प्राज्ञ पुरुष माङ्गलिक इच्य, पुष्प, रल, यूत और पुज्य व्यक्तियोंका अभिवादन किये बिना कभी अपने घरसे न निकले ॥ ३९ ॥ चौराहोंको नमस्कार करे, प्रथासमय अग्निहोत्र करे, दीन-पु:च्यियोंका उद्धार करे और बहुश्चत खाधु पुरुषोंका सत्संग करे ॥ ३२ ॥

जो पुरुष देवता और ऋषियोंकी पूजा करता है, पितृगणको पिण्डोदक देता है और आंतर्थिका सत्कार करता हैं यह पुण्यत्येक्षेंको कता है ॥ ३३ ॥ को व्यक्ति जितेन्द्रिय होकर समयानुसार हित, मित और प्रिय भाषण करता है, हे राजन् ! यह आगन्दके हेतुभूत अक्षय लोकोंको प्राप्त होता है ॥ ३४ ॥ बुद्धिमान, कजावान, कमाशील, आस्तिक और जिनयो पुरुष बिद्धानु और कुलीन पुरुषोके योग्य उत्तम लोकीमें जाता है।। ३५॥ अकाल मेघगर्जनके समय, पर्व-दिनोपर, अशौन कालमें तथा चन्द्र और सूर्यप्रहणके समय बुद्धिमान परुष अध्ययन न करे ॥ ३६ ॥ जो व्यक्ति क्रोधितको ज्ञान्त करता है, सबका बन्धु है, महारशुन्य है, भयभीतको सान्त्वना देनेवाला है और साधु-स्वभाव है उसके लिये स्वर्ग तो बहुत थोड़ा फल है ॥ ३७ ॥ जिसे शरीर-रक्षाकी इच्छा हो वह पुरुष वर्षा और घूपमें छाता लेकर निकले, राजिके समय और बनमें दण्ड लेकर जाय तथा जहाँ कहीं जाना हो। सर्वदा जुते पहनकर जाय ॥ ३८ ॥ बुद्धिमान् पुरुषको ऊपरको ओर, इधर-उधर अथवा दुरके फ्टाधॉको देखते हुए नहीं चलना चाहिये, केवल युगमात्र (चार हाथ) पृथिवीको देखता हुआ चुछै ॥ ३९ ॥

जो जितेन्द्रिय दीवके समस्त हेतुओंको त्याग देता है उसके धर्म, अर्थ और कामको थोड़ी-सी भी हानि नहीं होती ॥४०॥ जो विद्या-विनय-सम्पन्न, सदाचारी प्राञ्च पुरुष पापीके प्रति पापमय व्यवहार नहीं करता, कुटिल पुरुषोंसे प्रिय भाषण करता है तथा जिसका अन्तःकरण मैत्रीसे इत्योभूत रहता है, मुक्ति उसकी मुद्दीमें रहती है ॥४१॥

ये कामकोधलोभानां वीतरागा न गोचरे । सदाचारस्थितास्तेषामनुभावेर्धता मही ॥ ४२ तस्मात्सत्यं वदेत्राज्ञो यत्परप्रीतिकारणम् । सत्यं यत्परदुःस्वाय तदा भीनपरो भवेत्।। ४३ त्रियमुक्तं हितं नैतदिति मत्वा न तह्नदेत्। श्रेयस्तत्र हितं बाच्यं यद्यप्यत्यन्तमप्रियम् ॥ ४४ प्राणिनामुपकाराय यथैवेह परत्र च कर्मणा मनसा वाचा तदेव मतिमान्भजेत् ॥ ४५

जो वीतरागमहापुरुष कभी काम, क्रोध और लोभादिके वद्मीभृत नहीं होते तथा सर्वदा सदाचारमें स्थित रहते हैं उनके प्रभावसे ही पृथिवी टिकी हुई है ॥ ४२ ॥ अतः प्राञ्ज पुरुषको वही सत्य कहना चाहिये जो दूसरोंकी प्रसन्नताका कारण हो। यदि किसी सत्य वाक्यके कहनेसे दूसरोंको दुःख होता जाने तो मौन रहे ॥ ४३ ॥ यदि प्रिय वाक्यको मी अहितकर समझे तो उसे न कहे; उस अवस्थामें तो हितकर याक्य ही कहना अच्छा है, भले ही वह अत्यना अप्रिय क्यों न हो ॥ ४४ ॥ जो कार्य इहल्लेक और परलोकमें प्राणियोंके हितका साधक हो मतियान पुरुष मन, बचन और कर्मसे उसीका आचरण करे ॥ ४५ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तुर्वीवेऽशे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवाँ अध्याय

आभ्युद्धिक श्राद्ध, प्रेतकर्म तथा श्राद्धादिका विचार आर्व बोले—पत्रके उत्पन्न होनेपर पिताको सचैल

और्ष उत्पान

सचैलस्य पितुः स्नानं जाते पुत्रे विधीयते । जातकर्म तदा कुर्याच्छाद्धमध्यद्ये च यत् ॥ युपान्देवांश्च पित्र्यांश्च सप्यवसव्यक्रमाद् हिजान् । पूजयेद्धोजयेशैव तन्पना नान्यमानसः ॥ दध्यक्षतैसाबदौः प्राङ्भुखोदङ्भुखोऽपि वा। देवतीर्थेन वै पिण्डान्दद्यात्कायेन वा नुप ॥ नान्दीमुखः पितृगणस्तेन श्राद्धेन पार्थिव । प्रीयते तत्तु कर्त्तव्यं पुरुषैसार्ववृद्धिषु ॥ कन्यापुत्रविवाहेषु प्रवेशेषु च वेश्मनः। नामकर्मणि बालानां चूडाकर्मादिके तथा ॥ सीयन्तोन्नयने चैव पुत्रादिपुखदर्शने । नान्दीमुखं पितृगणं पूजवेतायतो गृही॥ पितपुजाक्रमः प्रोक्तो वद्धावेष सनातनः । अयतामवनीपाल प्रेतकर्मक्रियाविधिः ॥ प्रेतदेहं शुभै: स्नानैस्क्रापितं स्नम्बिभूषितम् ।

(वर्खासहित) स्नान करना चाहिये। उसके पश्चात जात-बर्म-संस्कार और आध्युदिक्क श्राद्ध करने चाहिये ॥ १ ॥ फिर तन्मयभावसे अनन्यचित्त होकर देवता और पितनणके लिये क्रमशः दायीं और बायीं ओर बिठाकर दो-दो ब्राह्मणोंका पूजन करे और उन्हें भोजन करावे ॥ २ ॥ है राजन् ! पूर्व अथवा उत्तरकी ओर पुख करके दक्षि, अक्षत और बदरीफलसे बने हुए पिण्डोको देवतीर्यं या प्रजापतितीर्थसे रान् करे ॥ ३ ॥ हे पृथिवीनाथ ! इस आभ्युदियक आद्धरे नान्दीमुख नामक पितृगण प्रसन्न होते है, अतः सब प्रकारकी अभिवृद्धिके समय पुरुषोंको इसका अनुष्ठान करना चाहिये ॥ ४ ॥ कन्या और पुत्रके विवाहमें, गृहप्रवेदामें, बालकोक नायकरण तथा चुड़ाकर्म आदि संस्कारोंमें, सीमनोजयन-संस्कारमें और पुत्र आदिके मुख देखनेके समय गृहस्थ पुरुष एकाश्रवित्तसे नान्दीमुख नामक पितृभणका पूजन करे॥ ५-६॥ हे पृथिबीपाल ! आभ्युद्धिक श्राद्धमें पितृपूजाका यह सनातन क्रम तुमको सुनाया, अब प्रेतक्रियाकी विधि सुनी ॥ ७ ॥

दण्या प्रामाद्वहिः स्त्रात्वा सचैलसालिलाशये ॥

यत्र तत्र स्थितायैतदमुकाबेति वादिनः। दक्षिणाभिमुखा दशुर्बान्यवास्सलिलाञ्चलीन् ॥ प्रविष्टाश्च समं गोधिर्प्रामं नक्षत्रदर्शने । कटकर्म ततः कुर्युर्भूमौ प्रस्तरशायिनः ॥ १० दातव्योऽनुदिनं पिण्डः प्रेताय भुवि पार्थिव । दिवा च भक्तं भोक्तव्यमसांसं सनुजर्षभ ॥ ११ दिनानि तानि चेच्छातः कर्तव्यं विप्रभोजनम् । त्रेता यान्ति तथा तृप्ति बन्धवर्गेण भुक्कता ॥ १२ भीजन करनेसे मृत जीवकी तृप्ति होती है॥ १२॥ प्रथमेऽह्नि तृतीये च सप्तमे नवमे तथा। अशीचके पहले, तीसरे, सातने अथवा नवे दिन वस वस्त्रत्यागबहिस्स्नाने कृत्वा दद्यात्तिलोदकम् ॥ १३ त्यागकर और बहिदेंशमें स्नान करके तिलोडक दे॥ १३॥ चतुर्थेऽद्वि च कर्तव्यं तस्यास्थिचयनं नृप । तत्र्थ्वमङ्गसंस्पर्शस्सपिण्डानामपीस्यते 11 68 योग्यासर्विक्रियाणां तु समानसिल्लास्तथा । अनुलेपनपुष्पादिभोगादन्यत्र पार्थिव ॥ १५ शय्यासनोपभोगश्च सपिण्डानामपीध्यते । भस्पास्थिचयनादुर्ध्वं संयोगो न तु योषिताम् ॥ १६ बाले देशान्तरस्थे च पतिते च पुनौ मृते । सद्यदशौचं तथेकातो जलाग्न्युद्धन्धनादिषु ॥ १७ मृतबन्धोर्दशाहानि कुलस्यात्रं न भुज्यते । दानं प्रतिप्रहो होयः स्वाध्यायश्च निवर्तते ॥ १८

विप्रस्थैतद् द्वादशाहं राजन्यस्याय्यशौचकम् ।

अर्धमासं तु वैश्यस्य मासं शुद्रस्य शुद्धये ॥ १९

वाहर दाह करें और फिर जलाशयमें वस्त्रसहित स्नान कर-दक्षिण-मुख होकर 'यत्र तत्र स्थितायैतदमुकाय' 🔭 आदि वाक्यका उद्यारण करते हुए जलाञ्चलि हैं ॥ ८-९ ॥ तदनत्तर, मोधूलिके समय तारा-मण्डलके दीसने

लगनेषर प्राममें प्रवेदा करें और कटकर्म (अद्यीच कल्प) सम्पन्न करके पृथिवीपर तृशादिकी शय्यापर शयन करें ॥ १० ॥ हे पश्चिपते ! मत परुषके लिये नित्यप्रति पृथियीपर विष्डदान करना चाहिये और हे पुरुषश्रेष्ठ ! केवल दिनके समय मांसहीन भात खाना चाहिये॥ ११॥ अशीच कालमें, यदि बाह्यणोंको इच्छा हो तो उन्हें भोजन कराना चाहिये, क्योंकि उस समय ब्राह्मण और बन्धवर्गके

हे नुष ! अशीलके चौथे दिन अस्थिचयन करना चाहिये; उसके अनन्तर अपने सपिण्ड बन्धुजनीका अंग स्पर्श किया जा सकता है ॥ १४ ॥ हे राजन् ! उस समयसे समानोदक : पुरुष चन्दन और पृथ्यधारण आदि क्रिजाओंके सिवा [पद्मयज्ञादि] और सब कर्म कर सकते हैं ॥ १५ ॥ भस्म और ऑस्थ्रनयनके अनत्तर सपिण्ड पुरुषोद्वारा शय्या और आसनका उपयोग तो किया जा सकता है किन्त स्ती-संसर्ग नहीं किया जा सकता ॥ १६॥ बालक, देशान्तरस्थित व्यक्ति, पतित और तपस्त्रीके मरनेपर तथा जरू, अग्नि और उद्घापन (फाँसी लगाने) आदिद्वारा अत्प्रधात करनेपर शीध ही अशीचकी निवृत्ति हो जाती है 🛊 ॥ १७ ॥ मृतकके कुटम्बका अन्न दस दिनतक न साना चाहिये तथा अझीच कालमें दान, परित्रह, होम और स्वाभ्याय आदि कर्म भी न करने चाहिये॥ १८॥ यह (दस दिनका) अशीच ब्राह्मणका है; क्षत्रियका अशीय बारह दिन और वैश्यका पन्त्रह दिन रहता है तथा शहको अशीच-शब्दि एक मासमें होती है।। १९॥

अर्थात् हमल्येग अगुक नाम-गोत्रवाले प्रेतके निमित्त, ये जहाँ कहीं भी हीं, यह जल देते हैं ।

[ं] समानोदक (तपंणादिमें समान जलाधिकारी अर्थात् रागोद) और सपिन्ड (पिण्डाधिकारी) की व्याख्या कुर्मपुराणमें इस प्रकार की है —

^{&#}x27;सपिण्डता हु पुरुषे सप्तमे बिनिबर्तते । समानोदकभाजस्तु । अश्वेत्—सातवीं पीदीपे पुरुषकी राषिण्डता निवृत्त हो जाती है फिन्तु समानोदकभाव उसके जन्म और नामका पता न रहनेपर दूर होता है।

[्]र परन्तु मारा-पिराके विषयमें यह निवम नहीं है; जैसा कि कहा है— र्वितरी-लेप्पुर्तः स्वातां दुरस्थोऽपि हि पुत्रकः । श्रुत्वा तदिनमारभ्य दशादं सुतर्कः भवेत् ॥

अयुजो भोजयेत्कामं द्विजानन्ते ततो दिने । दद्याहभेषु पिण्डं च प्रेतायोज्जिष्टसन्निधौ ॥ २० वार्यायधप्रतोदास्त दण्डश्च द्विजभोजनात् । स्प्रष्टव्योऽनन्तरं वर्णैः शुद्धेरन्ते ततः क्रमात् ॥ २१ ततस्ववर्णधर्मा ये विप्रादीनामुदाहुताः । तान्क्रवीत पुपाञ्जीवेद्गिजधर्मार्जनैस्तथा ॥ २२ मृताहनि च कर्तव्यमेकोटिष्टमतः परम् । आह्वानादिकियादैवनियोगरहितं हि तत् ॥ २३ एकोऽर्घ्यस्तत्र दातव्यस्तथैवैकपवित्रकम् । प्रेताय पिण्डो दातव्यो भुक्तवत्सु द्विजातिषु ॥ २४ प्रश्नश्च तत्राभिरतिर्यजमानैर्द्विजन्मनाम् । अक्षय्यममुकस्येति वक्तव्यं विस्तौ तथा ॥ २५ एकोदिष्टमयो धर्म इत्थमावत्सरात्स्मृतः। संपिण्डीकरणं तस्मिन्काले राजेन्द्र तच्छ्रणु ॥ २६ एकोद्दिष्टविधानेन कार्यं तद्पि पार्थिव। संवत्सरेऽध षष्ठे वा मासे वा द्वादरोऽद्वि तत् ॥ २७ तिलगन्धोदकेर्युक्तं तत्र पात्रचतुष्ट्रयम् ॥ २८ पात्रं प्रेतस्य तत्रैकं पैत्रं पात्रत्रयं तथा। सेचयेत्पत्पात्रेषु प्रेतपात्रं ततस्त्रिषु॥ २९ ततः पितृत्वमापन्ने तस्मिन्ग्रेते महीपते। श्राद्धधर्मेरशेषेस्तु तत्पूर्वानर्चयेत्पितृन् ॥ ३० पुत्रः पौत्रः प्रयौत्रो वा भ्राता वा भ्रातुसन्ततिः । सपिण्डसन्ततिर्वापि क्रियाहीं नृप जायते ॥ ३१ तेषामधावे सर्वेषां समानोदकसत्ततिः । मातुपक्षसपिप्डेन सम्बद्धा ये जलेन वा॥ ३२ कुलहुयेऽपि चोच्छिन्ने स्त्रीभिः कार्याः क्रिया नृप ॥ ३३ सङ्घातान्तर्गतैर्वापि कार्याः प्रेतस्य च क्रियाः । उत्सन्नबन्धरिक्बाद्वा कारयेदवनीपतिः ॥ ३४

अशीचके अन्तमें इच्छानुसार अयुग्म (तीन, पाँच, सात, नौ आदि) ब्राह्मणोंको पोजन कराने तथा उनकी उच्छिष्ट (जूठन) के निकट प्रेतकी तृप्तिके छिपे कुशापर पिण्डदान करे॥ २०॥ अशीच-शृद्धि हो जानेपर ब्रह्मभोजके अनन्तर ब्राह्मण आदि चारों वर्णोंको क्रमशः बल, श्रस, प्रतोद (कोड़ा) और लाठीका स्पर्श करना चाहिये॥ २१॥

तदनन्तर, ब्राह्मण आदि वर्णीक जो-जो जातीय धर्म बतलाये गये हैं उनका आचरण करे; और स्वधर्मानुसार उपार्जित जीविकासे निबांह करे ॥ २२ ॥ फिर प्रतिमास मृत्यृतिधपर एकोदिष्ट-श्राद्ध करे जो आवाहनदि क्रिया और विश्वेदेवसम्बन्धी ब्राह्मणके आमन्तण आदिसे रहित होने चाहिये॥ २३॥ उस समय एक अर्घ्य और एक पवित्रक देना चाहिये तथा बहत-से ब्राह्मणोंके भोजन करनेपर भी मृतकके लिये एक ही पियड-दान करना वाहिये ॥ २४ ॥ तदनचार, यजमानके 'अधिरायताम्' ऐसा कहनेपर ब्राह्मणगण 'अफिरता: स्म:' ऐसा कहें और फिर पिण्डदान समाप्त होनेपर 'अमुकस्य अक्षय्यमिद-मुप्रतिष्टताम्' इस वाक्यका उसारण करे ॥ २५॥ इस प्रकार एक वर्षतक प्रतिगास एकोट्टिप्टकर्प करनेका विधान है। हे राजेन्द्र ! वर्षके समाप्त होनेपर सपिण्डीकरण करे; उसकी विधि सनी ॥ २६ ॥ हे पार्थिव ! इस सरिण्डोकरण कर्मको भी एक वर्ष,

छः मास अथवा बारह दिनके अनन्तर एकोहिप्टश्राद्धको विधिसे ही करना चाहिये॥ २७ ॥ इसमें तिल, गन्ध और जलसे युक्त चार पात्र रखे । इनमेंसे एक पात्र मृत-पुरुषका होता है तथा तीन पितृगणके होते हैं। फिर मृत-पुरुषके पात्रस्थित जल्प्रदिसे पितृगणके पात्रीका सिञ्चन करे ॥ २८-२९ ॥ इस प्रकार मृत-पुरुषको पितृत्व प्राप्त हो। जानेपर सम्पूर्ण श्राद्धधर्मिक द्वारा उस मृत-पुरुषसे ही आरण कर फितुमणका पूजन करे ॥ ३० ॥ हे राजन् !-पुत्र, पीत्र, प्रपीत्र, भाई, भतीजा अथवा अपनी सपिण्ड सन्तरिमें उत्पन्न हुआ पुरुष ही श्राद्धादि क्रिया करनेका अधिकारी होता है ॥ ३१ ॥ यदि इन सबका अभाव हो तो रुमानेदकको सन्तति अथवा मातुपक्षके सपिण्ड अथवा समानोदकको इसका अधिकार है॥ ३२॥ हे राजन् ! मातुकुल और पितुकुल दोनीक नष्ट हो जानेपर स्त्री ही इस कियाको करे; अथवा [यदि स्त्री भी न हो हो] साधियोंनेसे ही कोई करे या बान्धवहीन मृतकके धनसे राजा हो उसके सम्पूर्ण प्रेत-कर्म करें ॥ ३३-३४ ॥

पूर्वाः क्रिया मध्यमाश्च तथा चैवोत्तराः क्रियाः ।

त्रिप्रकाराः क्रियाः सर्वास्तासां भेदं शृणुष्ठ मे ॥ ३५

आदाहवार्यायुधादिस्पर्शाद्यन्तास्तु याः क्रियाः ।

ताः पूर्वा मध्यमा मासि मास्येकोदिष्टसंज्ञिताः ॥ ३६

प्रेते पितृत्वमापन्ने सपिण्डीकरणादनु ।

क्रियन्ते याः क्रियाः पित्र्याः प्रोच्यन्ते ता नृपोत्तराः ॥ ३७

पितृमातृसपिण्डैस्तु समानसिल्लैस्तथा ।

सङ्घातान्तर्गतैर्वापि राज्ञा तद्धनहारिणा ॥ ३८

पूर्वाः क्रियाश्च कर्तव्याः पुत्राद्यैरेव चोत्तराः ।

दौहित्रैर्वा नृपश्चेष्ठ कार्यास्तत्तनयैस्तथा ॥ ३९

मृताहनि च कर्तव्याः स्तीणामण्युत्तराः क्रियाः ।

प्रतिसंवत्सरं राजन्नेकोदिष्टविधानतः ॥ ४०

तस्मादत्तरसंज्ञायाः क्रियास्ताः शृणु पार्थिव ।

सम्पूर्ण प्रेत-कर्म तीन प्रकारके है-पूर्वकर्म, मध्यमकर्म तथा उत्तरकर्म । इनके पृथक्-पृथक् लक्षण सुनो ॥ ३५ ॥ दाहसे लेकर जल और शक्त आदिके स्पर्शपर्यन्त जितने कर्म हैं उनको पूर्वकर्म कहते हैं तथा प्रत्येक मासमें जो एकोदिष्ट शाद्ध किया जाता है यह मध्यमकर्म कहलाता है ॥ ३६ ॥ और हे नृप ! सांपण्डी-करणके पश्चात् गृतक व्यक्तिके पितृत्वको प्राप्त हो जानेपर जो पितकर्म किये जाते हैं वे उत्तरकर्म कहलाते हैं ॥ ३७ ॥ माता, पिता, सपिण्ड, समानोदक, समृहके लोग अधवा उसके धनका अधिकारी राजा पूर्वकर्म कर सकते हैं; कित् उत्तरकर्प केवल पुत्र, दौहित्र आदि अथवा उनकी सन्तानको 'दी करना चाहिये ।। इट-इ९ ॥ हे राजन् ! प्रतिवर्ष मरण-दिनपर खियोंका मी उत्तरकर्म एकोहिष्ट श्राद्धकी विधिसे अवश्य करना चाहिये ॥ ४० ॥ अतः है अनप ! उन उत्तरक्रियाओंको शिस-जिसको जिस-जिस विधिसे करना चाहिये, वह सुनो ॥ ४१ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽदो त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ==== ★ ====

चौदहवाँ अध्याय

श्राद्ध-प्रशंसा, श्राद्धमें पात्रापात्रका विचार

और्व उदाच

यथा यथा च कर्तव्या विधिना येन चानव ॥ ४१

व्रह्मेन्द्रस्वनासत्यसूर्यात्रिवसुमास्तान् । विश्वेदेवान्पितृगणान्वयांसि मनुजान्पश्न् ॥ १ सरीसृपानृषिगणान्यद्यान्यस्त्तसंज्ञितम् । श्राबं श्रस्तान्वितः कुर्वन्त्रीणयत्यस्तिलं जगत् ॥ २ मासि मास्यसिते पक्षे पञ्चदश्यां नरेश्वर । तथाष्ट्रकासु कुर्वित काम्यान्कालाञ्ज्णुष्टमे ॥ ३ श्रान्द्राहंमागतं द्रव्यं विशिष्टमथ वा द्विजम् । श्रान्द्रं कुर्वित विज्ञाय व्यतीपातेऽयने तथा ॥ ४ विषुवे चापि सम्प्राप्ते प्रहणे शिक्सूर्ययोः । समस्तेष्ठेव भूपाल राशिषुके च गच्छति ॥ ५ नक्षत्रप्रहपीडासु दुष्टस्वप्रावलोकने । इच्छाआद्वानि कुर्वितः नवसस्यागमे तथा ॥ ६ और्ष बोले—हे राजन्। श्रद्धासहित श्राद्धकर्म करनेसे मनुष्य ब्रह्मा, इन्द्र, क्रह्न, अश्विनीकुमार, सूर्य, अश्वि, वसुगण, मरुदण, विधेदेव, पितृगण, पश्ची, मनुष्य, पशु, सरीस्प, ऋषिगण तथा भूतगण आदि सम्पूर्ण जगत्को प्रसन्न कर देता है ॥ १-२ ॥ हे गरेश्वर ! प्रत्येक भारतके कृष्णपक्षको पश्चदशो (अमावास्या) और अष्टका (हेमन्त और शिहिर ऋतुओंके चार महोनोकी शुक्काष्टमियो) पर श्राद्ध करे । [यह नित्यश्चाद्धकाल है] अब काम्यश्चाद्धका काल बतलाता हूँ, श्रवण करें ॥ ३ ॥

जिस समय श्राद्धयोग्य पदार्थ। या किसी विशिष्ट ब्राह्मणको घरमें आया जाने अथवा जब उत्तरायण या दक्षिणायनका आरम्भ या व्यतीपात हो तब काम्यश्राद्धका अनुष्ठान करे॥ ४॥ विषुवसंक्रात्मिपर, सूर्य और चन्द्रबहणपर, सूर्यके प्रत्येक राशिमें प्रवेश करते समय, नक्षत्र अशवा प्रहक्ती पीडा होनेपर, दुंस्त्रप्त देखनेपर और घरमें नवीन अन्न आनेपर भी काम्यश्राद्ध करे॥ ५-६॥ 19

अमावास्या यदा मैत्रविशास्त्रास्वातियोगिनी । श्राद्धैः पितृगणस्तृप्तिं तथाप्रोत्यष्टवार्षिकीम् ॥ अमावास्था यदा पृष्ये रीद्रे चक्षे पनर्वसौ । द्वादशाब्दं तदा तृप्तिं प्रयान्ति पितरोऽर्चिताः ॥ वासवाजैकपादक्षें पितृणां तृप्तिमिच्छताम् । बारुणे वाष्यमावास्या देवानामपि दुर्लभा ॥ नवस्त्रक्षेष्ट्रमावास्या यदैतेषुवनीपते । तदः हि तृप्तिदं श्राद्धं पितृणां शृणु चापरम् ॥ १० गीतं सनत्कुमारेण यथैलाय महात्मने । पुच्छते पितृभक्ताय प्रश्नयावनताय च ॥ ११ श्रीसनत्कृत्सार उवाच वैशाखमासस्य च या तृतीया नवम्यसौ कार्तिकशृह्यक्षे । नभस्य मासस्य च कृष्णपक्षे त्रयोदशी पञ्चदशी च माघे ॥ १२ एता युगाद्याः कथिताः पुराणे-षुनन्तपुण्यास्तिथयश्चतस्त्रः उपप्रवे चन्द्रमसो रवेश त्रिष्ट्रष्टकास्वप्ययनद्वये च ॥ १३ पानीयमप्यत्र तिलैबिंगिश्रं दद्यात्पतुभ्यः प्रयतो मनुष्यः ।

श्राद्धं कृतं तेन समासहस्र रहस्यमेतस्पितरो बदन्ति ॥ १४ माघेऽसिते पञ्चदशी कदाचि-दुपैति योगं यदि वारुणेन। ऋक्षेण कालस्स परः पितृणां न हाल्पपुण्येर्नुप लभ्यतेऽसौ ॥ १५ काले धनिष्ठा यदि नाम तस्मि-न्भवेनु भूपाल तदा पितृभ्यः।

दर्त जलान्नं प्रददाति तृप्ति वर्षायुतं तत्कुलर्जर्मनुष्यैः ॥ १६

तत्रैय चेद्भाइपदा मु पूर्वा काले यथावितकयते पितृभ्यः।

जो अमावास्या अनुराधा, विशासा या स्वातिनक्षत्रकृतव हो उसमें श्राद्ध करनेसे पितृगण आठ वर्षतक तुप्त रहते हैं ॥ ७ ॥ तथा जो अमावास्या पुष्य, आही या पुनर्वसु नशक्तयुका हो उसमें पूजित होनेसे पितृगण बारह वर्षतक तुप्त रहते है ॥ ८ ॥

जो पुरुष पितृगण और देवगणको तुप्त करना चाहते हों उनके लिये धनिष्ठा, पूर्वपादपदा अथवा शतिपण नक्षत्रयुक्त अमावास्या अति दुर्लभ है॥९॥ है पृथिवीपते ! जब अभावास्या इन नी नक्षत्रीसे युक्त होती है उस समय किया हुआ श्राद्ध पितृगणको अत्यन्त तृप्तिदायक होता है। इनके अतिरिक्त पितृभक्त इलापुव महात्मा पुरूरवाके अति विनीत भावसे पूछनेपर श्रीसनसुरुभारजीने जिनका वर्णन किया था वे अन्य तिधियाँ भी सुनो ॥ १०-११ ॥

श्रीसनत्कुमारजी बोले—वैशाखमासकी शुहा तृतीया,कार्तिक सुक्का नवमी, भाइपद कृष्णा त्रयोदशी तथा गांघमासको अमाबास्या—इन चार तिथियोको पुराणीमें 'युगाद्या' कहा है। ये चारो तिथियाँ अनन्त पुण्यदायिनी है। चन्द्रमा या सूर्यके प्रहणके समय, तीन अष्टकाओंमें अथवा उत्तरायण या दक्षिणायनके आरम्भमें वो पुरुष एकायचित्रसे चितृगणको तिलसहित जल भी दान करता है वह मानो एक सहस्र वर्षके लिये आद्ध कर देता है-यह परम रहस्य स्क्य पितृगण ही कहते हैं ॥ १२ — १४ ॥

यदि कदाचित् माधवी अमावास्याका शतिभणा-नक्षत्रसे योग हो जाय तो पितृगणको तुप्तिके लिये यह परम उत्कृष्ट कारु होता है। हे रजन् ! अल्पपुण्यतान् पुरुषोको ऐसा समय नहीं मिलता ॥ १५ ॥ और यदि उस समय (माचकी अमावास्यामें) धनिष्ठानक्षत्रका योग हो तब तो अपने ही कुरूमें उत्पन्न हुए पुरुषद्वारा दिये हुए अन्नोदकसे पित्रगणकी दस सहस्र वर्षतक तिम रहती है ॥ १६ ॥ तथा यदि उसके साथ पूर्वभादपदनक्षत्रका योग हो और उस समय पितृगणके लिये श्राद्ध किया जाय ते उन्हें

श्राद्धं परं तृप्तिमुपेत्य तेन
युगं सहस्रं पितरस्वपन्ति ॥ १७
गङ्गं शतद्भं यमुनां विपाशां
सरस्वतीं नैमिषगोमतीं वा ।
तत्रावगाह्यार्चनमादरेण
कृत्वा पितृणां दुरितानि हन्ति ॥ १८
गायन्ति चैतत्पितरः कदानु
वर्षामघातृप्तिमवाष्य भूयः ।
माधासितान्ते शुभतीर्थतोयैयस्थिम तृप्ति तनयादिद्तौः ॥ १९

चित्तं च वित्तं च नृणां विशुद्धं शस्तश्च कालः कथितो विधिश्च । पात्रं यश्चोक्तं परमा च भक्ति-

पात्र वयाक्त परमा च भाक-र्नृणां प्रयन्छन्त्यभिवाञ्छितानि ॥ २० पितृगीतान्तथैवात्र इलोकांस्ताञ्छणु पार्थिव ।

श्रुत्वा तथैव भवता भाव्यं तत्रादृतात्मना ॥ २१

अपि धन्यः कुरुं जायादस्माकं मतिमान्नरः । अकुर्वन्वित्तशाठ्यं यः पिण्डान्नो निर्विपच्यति ॥ २२ रत्नं वस्तं महायानं सर्वधोगादिकं वसु ।

विभवे सति विप्रेभ्यो योऽस्मानुद्दिश्य दास्यति ॥ २३ अग्रेन वा यथाशक्त्या कालेऽस्मिन्भक्तिनप्रधीः । भोजयिष्यति विज्ञात्र्यांस्तन्मात्रविभवो नरः ॥ २४

असमधौऽन्नदानस्य धान्यमामं स्वरुक्तितः ।

प्रदास्यति द्विजाश्येभ्यः स्वल्पाल्पां वापि दक्षिणाम् ॥ २५ तत्राप्यसामर्थ्ययुतः करामात्रस्थितांतिस्टान् ।

प्रणम्य द्विजमुख्याय कत्मैचिळूप दास्थति ॥ २६ तिलैस्तमाष्ट्रभिवापि समवेतं जलाञ्चलिम् ।

भक्तिनग्रस्समुद्दिश्य भुव्यस्माकं प्रदास्यति ॥ २७ यतः कृतश्चित्तम्प्राप्य गोभ्यो वापि गवाहिकम् ।

अभावे श्रीणयत्रसाञ्च्यद्भायुक्तः प्रदास्पति ॥ २८

सर्वाभावे वनं गत्वा कक्षमूलप्रदर्शकः । सूर्यादिलोकपालानामिदमुश्चैवंदिष्यति ॥ २९ परम तृति श्राप्त होती है और वे एक सहस्र युगतक शयन करते रहते हैं॥ १७॥ मङ्गा, शतदू, यमुना, विभाशा, सरस्वती और नैमियारण्यस्थिता गोमतीमें स्नान

करके पितृगणका आदरपूर्वक अर्चन करनेसे मनुष्य समस्त पापोको नष्ट कर देता है॥ १८॥ पितृगण सर्वदा

समस्त पापाका नष्ट कर दता है। एट ॥ प्रकृषण सक्दः यह गान करते हैं कि वर्षाकाल (भाइपद शुक्रा त्रयोदशी) के मधानक्षत्रमें तृप्त होकर फिर माधको

अमावास्याको अपने पुत्र-पौत्रादिद्वारा दी गयी पुण्यतीथौकी जलाङालिसे हम कन तृप्ति छाभ करेंगे'॥ १९॥ विशुद्ध वित, शुद्ध धन, प्रशस्त काल,

उपर्युक्त विधि, योग्य पात्र और परम भक्ति—ये सब मनुष्यको इच्छित फल देते हैं॥ २०॥

है पार्थिय! अब तुम पितृगणके गाये हुए कुछ इलोकोंका श्रवण करो, उन्हें सुनकर तुम्हें आदरपूर्वक वैसा ही आयरण करना चाहिये॥ २१॥ [पितृगण कहते हैं—] 'हमारे कुलमें क्या कोई ऐसा मतिमान् धन्य पुरुष उत्पन्न होगा जो वित्तरहोलुपताको छोड़कर हमें पिएडदान देगा॥ २१॥ जो सम्मति होनेपर हमारे उदेश्यसे बाहाणोंको रत, वस्त, यान और सम्पूर्ण भोगसामग्री देना॥ २१॥ अथवा अस-वस्त मात्र वैभव होनेसे जो आद्धकालमें भक्ति-विनम्न चित्तसे उत्तम बाहाणोंको यथाशक्ति अत्र ही भोजन करायेगा॥ २४॥ या अत्रदानमें भी असमर्थ होनेपर जो क्रह्मणश्रेष्ठोंको कम्मा भान्य और थोड़ी-सी दक्षिणा ही देगा॥ २५॥ और यदि इसमें भी असमर्थ होनेपर जो क्रिक्टी दिजश्रेष्ठको कम्मा भान्य और थोड़ी-सी दक्षिणा ही देगा॥ २५॥ और यदि इसमें भी असमर्थ होना तो किन्ही दिजश्रेष्ठको

प्रणाम कर एक मुद्री तिल ही देगा॥ २६॥ अथवा हमारे उदेश्यसे पृथिवीपर भक्ति-विनम्न वित्तसे सात-आठ तिलेंसे युक्त जलाञ्जलि ही देगा॥ २७॥ और यदि इसका भी अभाव होगा तो कहीं-न-कहींसे एक दिनका चारा लाकर प्रीति और श्रद्धापर्वक हमारे

एक दिनका चारा लाकर प्रीति और श्रद्धापूर्वक हमारे उद्देश्यसे गौको खिल्लयेगा॥ २८॥ तथा इन सभी वस्तुओंका अभाव होनेपर जो वसमें जाकर अपने

कश्चमूल (बगल) को दिखता हुआ सूर्य आदि दिक्यालोंसे उचस्वरसे यह कहेगा—॥२९॥

नः मेऽस्ति वित्तं न धनं च नान्य-च्छ्राद्धोपयोग्यं स्विपनुत्रतोऽस्मि । तुष्यन्तु भक्त्या पितरो मयैती कृतौ भूजौ वर्त्सनि मास्तस्य ॥ ३० और्व उक्तन इत्येतित्पत्विर्गीतं भावाभावप्रयोजनम् । यः करोति कृतं तेन श्राद्धं भवति पार्थिव ॥ ३१

'मेरे पास श्राद्धकर्मके योग्य न वित्त है, न धन है और न कोई अन्य सामग्री हैं, अतः मैं अपने पितृगणको नमस्कार करता हूँ, वे मेरी भक्तिसे ही तुप्ति लाभ करें। मैंने अपनी दोनों भूजाएँ आकाशमें उता रखी हैं"॥ ३०॥

और्व बोले—हे राजन् ! धनके होने अथवा न होनेपर पितृगणने जिस प्रकार बतलाया है वैसा ही जो पुरुष आचरण करता है वह इस आचारसे विधिपूर्वक शाद्ध ही कर देता है ॥ ३१ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽशे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवाँ अध्याय

श्राद्ध-विधि

और्व उवाच

ब्राह्मणान्भोजयेच्छ्रद्धे यद्गुणांस्तान्निबोध मे ॥ त्रिणाचिकेतस्विमधुस्त्रिस्पर्णव्यडङ्गवित् । वेदविच्छेत्रियो योगी तथा वै ज्येष्ठसामगः॥ २ **ऋ**त्विक्स्वसेयदौहित्रजामातृश्चशुरास्तथा मातुलोऽध तपोनिष्ठः पञ्चाग्न्यभिरतस्तथा । शिष्यासम्बन्धिनश्चैव मातापित्रतश्च यः ॥ ३ एतान्नियोजयेच्छाद्धे पूर्वोक्तान्प्रथमे नृप । ब्राह्मणान्यितृतुष्ट्यर्थमनुकल्पेष्टनत्तरान् ॥ ४ मित्रधुक्तनस्वी क्रीवश्स्यावदन्तस्तथा द्विजः। कन्यादूषियता विद्विवेदोग्झसोमविक्रयी॥ ५ अभिशस्तस्तथा स्तेनः पिशुनो प्रापयाजकः । भृतकाध्यापकस्तद्वद्भृतकाध्यापितश्च यः ॥ ६ परपूर्वापतिश्चैव मातापित्रोस्तथोज्झकः । वृषलीसृतिपोष्टा च वृषलीपतिरेव च ॥ ७ तथा देवलकश्रैय श्राद्धे नार्हीत केतनम् ॥ ८

और्व बोले---हे राजन् ! श्राद्धकालमें जैसे गुणशील ब्राह्मणॉको भोजन कराना चाहिये वह बतलाता हैं, सुनो । त्रिणाचिकेत¹, त्रिमध्³, त्रिसुपर्ण³, छहां वेदाङ्गोंके जाननेवाले, बेदबेता, श्रोत्रिय, योगी और ज्येष्टसामग, तथा ऋत्विक, भानजे, दौहित्र, जामाता, धरुए, मामा, तपस्थी, पञ्चाचि तपनेवाले, शिष्य, सम्बन्धी और माता-पिताके प्रेमी इन ब्राह्मणोको श्राद्धकर्ममें नियुक्त करे । इनमेंसे [त्रिणाचिकेत आदि] पहले कहे हुआंको पूर्वकारूमें नियुक्त करे और [ऋत्विक् आदि] पीछे बतलाये हुओंक्ये पितराँकी तृप्तिके लिले उत्तरकर्मपें भोजन करावे ॥ १---४ ॥ मित्रपाती, स्वभावसे ही विकृत नखेंबाल्य, नपुंसक, काले दाँतींबाल्य, कन्यागामी, अग्रि और बेदका त्याग करनेवाला, सोमरस बेचनेवाला, लोकनिन्दित, चौर, चुगलखोर, आपपुरीहित, बेतन लेकर पडानेवाला अथवा पढनेवाला, पनर्विवाहिताका पति. माता-पिताका त्याग करनेवाला, शुद्रको सन्तानका पालन करनेवाला, शहाका पति तथा देवोपजीयी ब्राह्मण श्राद्धमें निमन्त्रण देने बोग्य नहीं है ॥ ५—८ ॥

१ — द्वितीय कठके अन्तर्गत 'अयं वाय यः पवते' इत्यादि तीन अनुवाकाँको 'त्रिणाचिकेत' कहते हैं, उसको पढ़नेवारम था उसका अनुष्टान करनेवाला ।

२—'मधुवाताः' इत्यादि ऋचका अध्ययन और मधुवतका आचरण करनेवाला ।

३—'बहमेटु माम्' इत्यदि तान अनुवाकोका अध्ययन और तत्यव्यक्षी तत्र करनेवाला किम्पानिकार विकास निर्माण

प्रथमेऽह्नि बुधइशस्ताञ्ज्रोत्रियादीन्निमन्त्रयेत्। कथबेख तथैवैषां नियोगान्यतृदैविकान् ॥ ततः क्रोधव्यवायादीनायासं तैर्द्धिजैस्सह । यजमानो न कुर्वीत दोषस्तत्र महानयम् ॥ १० श्राद्धे नियुक्तो भुक्ता वा भोजवित्वा नियुज्य च । व्यवावी रेतसो गर्ते मज्जयत्यात्मनः पितृन् ॥ ११ तस्माद्यथममत्रोक्तं द्विजाञ्चाणां निमन्त्रणम् । द्विजानेवमागताऱ्योजयेद्यतीन् ॥ १२ पादशौचादिना गेहमागतान्यूजयेद हिजान् ॥ १३ पवित्रपाणिराचान्तानासनेषुपवेशयेत् पितृणामयुजो युग्मान्देवानामिच्छया द्विजान् ॥ १४ देवानामेकमेकं वा पितृणां च नियोजयेत्॥ १५ तथा मातामहभ्राद्धं वैश्वदेवसमन्वितम्। कुर्वीत भक्तिसम्पन्नस्तन्ते वा वैश्वदैविकम् ॥ १६ प्राइसुस्थान्योजयेद्विप्रान्देवानामुभयात्मकान् । पितृमातामहानां च भोजयेष्ठाप्युदङ्मुखान् ॥ १७ पृश्वक्तयोः केचिदाहुः श्राद्धस्य करणं नृप । एकत्रैकेन पाकेन वदस्यन्ये महर्षयः ॥ १८ विष्टरार्थं कुर्श दत्त्वा सम्युज्यार्घ्यं विधानतः । कुर्यादावाहनं प्राज्ञो देवानां तदनुज्ञया ॥ १९ यवाम्बुना च देवानां दद्यादव्यं विधानवित् । स्रगन्धधूपदीपांश्च तेभ्यो दद्याद्यश्चाविधि ॥ २० पितृणामपसय्यं तत्सर्वमेवोपकल्पयेत्। अनुज्ञो च ततः प्राप्य दत्त्वा दर्भान्द्रिधाकृतान् ॥ २१ मन्तपूर्व पितृणां तु कुर्याद्यावाहनं बुधः । तिलाम्बुना चापसव्यं दद्याद्व्यादिकं नृप ॥ २२ काले तत्रातिथिं प्राप्तमत्रकामं नृपाध्यगम् । ब्राह्मणैरभ्यनुज्ञातः कामं तमपि भोजयेत् ॥ २३

श्राद्धके पहले दिन बुद्धिमान् पुरुष श्रोतिय आदि विहित ब्राह्मणोंको निमन्तित करे और उनसे यह कह दे कि 'आपको पितृ-श्राद्धमें और आपको विश्वेदेव-श्राद्धमें नियुक्त होना है' ॥ १ ॥ उन निमन्तित ब्राह्मणोंके सहित श्राद्ध करनेवाला पुरुष उस दिन क्रोबादि तथा स्नीममन और परिश्रम आदि न करे, क्योंकि श्राद्ध करनेमें यह महान् दोष माना पया है ॥ १० ॥ श्राद्धमें निमन्तित होकर या मोजन करके अथवा निमन्त्रण करके या मोजन कराकर वो पुरुष स्नी-प्रसंग करता है वह अपने पितृगणको मानो वीर्यके कुण्डमें दुवोता है ॥ ११ ॥ अतः श्राद्धके प्रथम दिन पहले तो उपरोक्त गुणविद्याष्ट द्विजश्रेष्ठोंको निमन्तित करे और यदि उस दिन कोई अनिमन्तित तपस्वी ब्राह्मण घर आ जायें तो उन्हें भी भोजन करावे ॥ १२ ॥

यर आये हुए ब्राह्मणोंका पहले पाद-शृद्धि आदिसे सत्कार करे; फिर हाथ धोकर उन्हें आचमन करानेके अनन्तर आसनपर बिटावे। अपनी सामर्थ्यानुसार पितृगणके रूखे अयुग्न और देवगणके रूखे युग्न ब्राह्मण नियुक्त करे अथवा दोनों पक्षोंके लिये एक-एक ब्राह्मणकी ही नियुक्ति करे॥१३—१५॥ और इसी प्रकार वैश्वदेवके सहित मातामह-श्राद्ध करे अथवा पितृपक्ष और मातामह-पक्ष दोनोके लिये भक्तिपूर्वक एक ही वैधदेव-श्राद्ध करे ॥ १६ ॥ देव-पक्षके ब्राह्मणोंको पुर्वीभिनुख बिठाकर और पित्-पक्ष तथा मातामत्-पद्मके ब्राह्मणीको उत्तर-मुख बिठाकर भोजन करावे ॥ १७ ॥ हे नृप ! कोई तो पित्-पक्ष और मातामह-पक्षके श्राद्धोंको अलग-अलग करनेके लिखे कहते हैं और कोई महर्षि दोनोंका एक साथ एक पाकमें ही अनुष्ठान करनेके पक्षमें हैं ॥ १८ ॥ विज्ञ व्यक्ति प्रथम निमन्तित ब्राह्मणोंके बैठनेके लिये कुशां विकाकर फिर अर्घ्यदान आदिसे विधिपूर्वक पूजा कर उनकी अनुमतिसे देवताओका आवाहन करे॥ १९॥ त्तरनन्तर श्राद्धविधिको जाननेवारक पुरुष यव-मिश्रित जलसे देवताओंको अर्घ्यदान करे और उन्हें विधिपूर्वक धप, दीप, गन्ध तथा माला आदि निवेदन करे ॥ २० ॥ ये समस्। उपचार पितृगणके स्थि अपस्थ्य भावसे " निवेदन करे; और फिर ब्राह्मणोंकी अनुभतिसे दो भागोंमें बैटे हुए कुञ्चाओंका दान करके मन्त्रोचारणपूर्वक पित्रगणका आबाहन करे, तथा है राजन् । अपसञ्य-भावसे तिल्प्रेड्कसे अध्यदि दे ॥ २१-२२ ॥

हे नृप ! इस समय यदि कोई मुखा पश्चिक अतिथि-

^{*} यज्ञोपक्षेतको दाये कन्धेपर् करके ।

योगिनो विविधै रूपैर्नराणामुपकारिणः। भ्रमन्ति पृथिबीमेतामविज्ञातस्वरूपिणः ॥ २४ तस्पादभ्यचीयेत्राप्तं श्राद्धकालेऽतिथि बुधः । श्राद्धक्रियाफलं हन्ति नरेन्द्रापूजितोऽतिथिः ॥ २५ ज्ह्रयाद्वयञ्चनक्षारवर्जमत्रं ततोऽनले । अनुज्ञातो हिर्जस्तैस्तु त्रिकृत्वः पुरुषर्पभः ॥ २६ अग्रये कव्यवाहाय स्वाहेत्यादौ नुपाहतिः। सोमाय वै पितृमते दातव्या तदनन्तरम् ॥ २७ वैवस्वताय चैवान्या तृतीया दीवते ततः । हुताबिशिष्टमल्पाञ्चं विश्वपात्रेषु निर्वपेत् ॥ २८ ततोऽत्रं मृष्ट्रपत्पर्धमभीष्ट्रपतिसंस्कृतम् । दस्या जुषध्वमिच्छातो बाच्यमेतदनिष्ठरम् ॥ २९ भोक्तव्यं तैश्च तक्षिक्तभौनिभिस्युमुखैः सुखप्। अकुद्भाता चात्वरता देवं तेनापि भक्तितः ॥ ३० रक्षोच्चमन्त्रपठनं भूमेरास्तरणं तिलै:। कृत्वा ध्येयास्त्वपितरस्त एव द्विजसत्तमाः ॥ ३१ पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः। मम तृप्ति प्रयान्त्वच विप्रदेहेषु संस्थिताः ॥ ३२ पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः। मम तृप्ति प्रयान्त्वद्य होमाप्यायितमूर्तयः ॥ ३३ षिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः। तृप्तिं प्रयान्तु पिण्डेन मया दत्तेन भूतले ॥ ३४ पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः। तृप्तिं प्रयान्तु मे भक्त्या मर्यतत्समुदाहतम् ॥ ३५ मातामहस्त्रप्रिम्पैत तथा पिता तस्य पिता ततोऽन्यः । विश्वे च देवाः परमां प्रयान्तु तुर्मि प्रणश्यन्तु च यातुधानाः ॥ ३६ यज्ञेश्वरो हुळ्यसमस्तकळ्य-भोक्ताव्ययातमा हरिरीश्वरोऽत्र ।

रूपसे आ जाय तो निर्मालत ब्राह्मणोंकी आज्ञासे उसे भी यशेच्छ भोजन कराते ॥ २३ ॥ अनेक अज्ञात-खरूप योगिगण मनुष्योंके करूयाणकी कामनासे नाना रूप धारणकर पृथ्वितरूपर विचरते रहते हैं ॥ २४ ॥ अतः विज्ञ पुरुष श्राह्मकारूमें आगे हुए अतिथिका अवस्य सत्कार करे। हे नरेन्द्र ! उस समय अतिथिका सत्कार न करनेसे वह श्राद्ध-क्रियांके सम्पूर्ण फरूको नष्ट कर देता है ॥ २५ ॥

हे पुरुषश्रेष्ठ ! तदनन्तर उन बाह्मणोंकी आज्ञासे शाक और लवणहीन अनसे अग्निमें तीन बार आहुति दे ॥ २६॥ हे राजन् ! उनमेंसे 'अग्नवे कव्यवाहनाय स्वाहा' इस मन्तसे पहली आहुति, 'सोमाय पितृमते स्वाहा' इससे दूसरी और 'वैवस्वताय स्वाहा' इस मन्तसे तीसरी आहुति दे । तदनन्तर आहुतियोंसे बचे हुए अन्नको थोड़ा-थोड़ा सब बाह्मणोंके पानोंमें परोस दे ॥ २७-२८॥

फिर रचिके अनुकूल अति संस्कारयुक्त मधुर अञ सबको परोसे और अति मृदुल वाणीसे कहे कि 'आप भोजन कीजिये'॥ २९॥ ब्राह्मणोंको भी तहर्ताचत और मौन होकर प्रसत्रमुखसे सुखपुर्वक भोजन करना चाहिये तथा यजमानको क्रोध और उताबलेयनको छोडकर भक्तिपूर्वक परोसते रहना चाहिये॥ ३०॥ फिर 'रक्षोघ्न'* मन्त्रका पाठ कर श्राद्धभूमियर तिल छिड़के, तथा अपने पितृरूपसे उन द्विजश्रेष्टोंका ही चिन्तन क्ते ॥ ३१ ॥ [और कहे कि] 'इन ब्राह्मणेकि रागीरोमें स्थित मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह आदि आज दक्षि लाभ करें ।। ३२ ॥ होमद्वारा सबल होकर मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह आज तुप्ति रूप्रभ करें ॥ ३३ ॥ मैंने जो पृथिवीपर पिण्डदान कियां है उससे मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह तृप्ति लाभ करें ॥ ३४ ॥ [श्राद्धरूपसे कुछ भी निवेदन न कर सकनेके कारण] मैंने भक्तिपूर्वक जो कुछ कहा है उस मेरे भक्ति-भावसे ही मेरे पिता, पितामह और प्रपितामह तृप्ति राभ करें ॥ ३५ ॥ मेरे पातामह (नाना), उनके पिता और उनके भी पिता तथा विश्वेदेवयण परम तृति स्त्राभ करें तथा समस्त राक्षसगण नष्ट हो ॥ ३६ ॥ यहाँ समस्त हव्यकव्यके भोक्ता यज्ञेश्वर भगवान् हरि विराजमान है,

^{🏞 &#}x27;ॐ अ पहता असूरा रक्षां कि बेरिषद' इत्यादि ।

तत्सिष्रधानादपद्यान्त रक्षांस्यशेषाण्यसूराश्च सर्वे ॥ ३७ तृप्तेष्ट्रेतेषु विकिरेदमं विप्रेषु भूतले। दद्यादाचमनार्थाय तेभ्यो वारि सकुत्सकृत् ॥ ३८ स्तुप्तैस्तैरनुज्ञातस्सर्वेणान्नेन भूतले । सतिलेन ततः पिण्डान्सम्बग्द्धात्समाहितः ॥ ३९ पितृतीर्थेन सतिलं तथैव सलिलाञ्चलिम्। मातामहेभ्यस्तेनैव चिण्डांस्तीर्थेन निर्विपत् ॥ ४० दक्षिणाग्रेष दर्भेष पुष्पधूपादिपृजितम्। स्विपत्रे प्रथमं पिण्डं दद्यादुच्छिष्टसन्निधौ ॥ ४१ पितामहाय चैवान्यं तत्वित्रं च तथापरम् । दर्भमूले लेपभुजः प्रीणयेल्लेपधर्यणैः ॥ ४२ पिण्डैर्मातामहांस्तद्व द्रश्यमाल्यादिसंयुतैः पुजियत्वा द्विजाञ्चाणां दद्याद्याचमनं ततः ॥ ४३ पितभ्यः प्रथमं भक्त्या तन्यनस्को नरेश्वर । सुखबेत्याशिषा युक्तां दद्याच्छक्त्या च दक्षिणाम् ॥ ४४ दत्त्वा च दक्षिणां तेभ्यो वाचयेद्वैश्वदेविकान् । प्रीयन्तायिह ये विश्वेदेवास्तेन इतीरवेत् ॥ ४५ तथेति चोक्ते तैर्विप्रैः प्रार्थनीयास्तवाशिषः । पश्चाद्विसर्जयेद्देवान्यूर्वं पित्र्यान्महीपते ॥ ४६ मातामहानामप्येवं सह देवैः क्रमः स्पृतः । भोजने च स्वशक्त्या च दाने तहहिसर्जने ॥ ४७ आपादशौचनात्पूर्व कुर्यादेवद्विजन्मसु । विसर्जनं तु प्रथमं पैत्रमातामहेषु वै ॥ ४८ विसर्जयेत्प्रीतिवचस्सम्मान्याध्यर्थितांस्ततः । निवर्तेताभ्यकुतात आद्वारं ताननुबजेत् ॥ ४९ ततस्त वैश्वदेवास्यं कुर्यात्रित्यक्रियां बुधः । भुञ्चासैव समं पूज्यभृत्यबन्युभिरात्मनः ॥ ५० एवं श्राद्धं बुधः कुर्यात्प्रियं मातामहं तथा । श्राद्धैराप्यायिता दश्चस्सर्वान्कामान्यितामहाः ॥ ५१

अतः उनकी सञ्जिधिके कारण समस्त यक्षसः और असुरगण यहाँसे तुरन्त भाग जायै |॥ ३७ ॥

तदनन्तर बाह्मणेंकि तुप्त हो जानेपर थोड़ा-सा अन्न पृथिवीपर डाले और आचमनके लिये उन्हें एक-एक बार और जल दे॥ ३८॥ फिर मली प्रकार तुस हुए उन ब्राह्मणोकी आज्ञा होनेपर समाहितचित्रसे पृथिवीपर अत्र और तिलके पिण्ड-दान करे॥ ३९॥ और पितृतीर्थसे तिलयुक्त जलाञ्जलि दे तथा भारतमह आदिको भी उस चिततीर्यसे ही पिण्ड-दान करे ॥ ४० ॥ ब्राह्मणींकी अच्छिष्ट (जुटन) के निकट दक्षिणकों और अग्रभाग करके विकाये हुए कुशाओंदर पहुछे अपने पिताके सिये पुष्प-थुपादिसे पुजित पिण्डदान करे ॥ ४१ ॥ तत्पक्षात् एक पिण्ड पितामहके लिये और एक प्रपितामहके लिये दे और फिर कुशाओंके मुख्यें हाधमें छंगे अन्नको पेंडिकर ['लेपभागभुजातृष्यन्ताम्' ऐसा उत्तारण करते हुए] लेपभोजी पितगणको तुप्त करे ॥ ४२ ॥ इसी प्रकार गन्ध और मालादियुक्त पिण्डोंसे भातामह आदिका पूजन कर फिर हिजश्रेश्रोको आचमन करावे॥४३॥ और हे नरेश्वर ! इसके पीछे भक्तिभावसे तन्मय होकर पहले पितपक्षीय ब्राह्मणीका 'सुस्बधा' यह आशीर्वीद यहण करता हुआ यथादाकि दक्षिणा दे ॥ ४४ ॥ फिर वैश्वदेविक ब्राह्मणोंके निकट जा उन्हें दक्षिणा देकर कहे कि इस दक्षिणासे विश्वेदेवगण प्रसन्न हों'॥ ४५ ॥ उन बाह्मणेकि 'तथास्त्' कहनेपर उनसे आशीर्वादके लिये प्रार्थना को और फिर पहले पितृपक्षके और पीछे देवपक्षके ब्राह्मणोको विदा करे॥ ४६॥ विश्वेदेवगणके सहित मातामह आदिके श्राद्धमें भी बाह्यण-भोजन, दान और विसर्जन आदिको यही विधि बतलायी गयी है ॥ ४७ ॥ पित और मातामह दोनों ही पश्लोके श्राद्धीमें पादशीच आदि सभी कर्म पहले देवपक्षके ब्राह्मणैकि करे परन् विदा पहले पितपक्षीय अथवा मातामहपक्षीय ब्राहाणींकी ही करे ॥ ४८ ॥

तदनतर, श्रीतिवचन और सम्मानपूर्वक बाह्मणोंकी विदा करे और उनके जानेके समय द्वारतक उनके पीछे-पीछे जाय तथा जब वे आज्ञा दे तो छीट आहे ॥ ४९ ॥ फिर विञ्च पुरुष वैश्वदेव नामक निरमकर्म करे और अपने पूज्य पुरुष, बन्धुजन तथा भृत्यगणके सहित स्वयं भीजन करे ॥ ५० ॥

बुद्धिमान् पुरुष इस प्रकार पैत्र्य और मातामह-श्राद्धका अनुधान करे। श्राद्धसे तृप्त होकर पितृगण समस्त त्रीणि श्राद्धे पवित्राणि दौहितः कुतपस्तिलाः । रजतस्य तथा दानं कथासङ्कीर्तनादिकम् ॥ ५२ वन्यीनि कुर्वता श्राद्धं क्रोधोऽध्वगमनं त्वरा । भोक्तुरप्यत्र राजेन्द्र त्रयमेतत्र शस्यते ॥ ५३ विश्वेदेवास्सपितरस्तथा मातामहा नृप । कुर्ल चाप्यायते पुंसां सर्व श्राद्धं प्रकुर्वताम् ॥ ५४ सोमाधारः पितृगणो योगाधारश्च चन्द्रमाः । श्राद्धे योगिनियोगस्तु तस्माद्धूपाल शस्यते ॥ ५५ सहस्रस्यापि विप्राणां योगी चेत्पुरतः स्थितः । सर्वान्थोक्तंस्तारयति यजमानं तथा नृप ॥ ५६ कापनाओंको पूर्ण कर देते हैं ॥ ५१ ॥ दौह्य (रूडकीका लड़का), कुतप (दिनका आठवाँ मुहूर्त) और तिल्—ये तीन तथा चाँदीका दान और उसकी बातचीत करना—ये सब श्राद्धकालमें पवित्र माने गये हैं ॥ ५२ ॥ हे राजेन्द्र ! श्राद्धकांकि लिये कोच, मार्गगमन और उतावलापन—ये तीन बातें वार्जित है; तथा श्राद्धमें भोजन करनेवालोंको भी इन तीनोंका करना उचित नहीं है ॥ ५३ ॥

हे राजन्ं! श्राद्धं करनेवाले पुरुषसे विश्वेदेवगण, पितृगण, मातामह तथा कुदुम्बीजन—सभी सन्तृष्ट रहते हैं॥ ५४ ॥ हे भूपाल ! पितृगणका आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमाका आधार योग है, इसलिये श्राद्धमें योगिजनको नियुक्त करना अति उत्तम है॥ ५५ ॥ हे राजन् ! यदि श्राद्धभोजी एक सहस्र ब्राह्मणीके सम्मुख एक योगी भी हो तो बह यजमानके सहित उन सबका उद्धार कर देता है॥ ५६॥

इति श्रीविष्णुपुराणे हृतीबेंऽरो पञ्चदशोऽभ्यायः ॥ १५ ॥

सोलहवाँ अध्याय

श्राद्ध-कर्पमें विहित और अविहित यसुओंका विचार ।

और्व उक्तन
हविष्यमत्स्यमांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च ।
सौकरच्छागलैणेयरौरवैगंवयेन च ॥ १ औरभ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्ध्या पितामहाः । प्रयान्ति तृप्ति मांसैस्तु नित्यं वाधीणसामिषैः ॥ २ सङ्गमांसमतीबात्र कालशाकं तथा मधु । शस्तानि कर्मण्यत्यन्ततृप्तिदानि नरेश्वर ॥ ३ और्व बोरों — हवि, मत्स्य, शशक (खरगोश), बकुल, शूकर, छाग, कस्तूरिया मृग, कृष्ण मृग, गथथ (वन-गाय) और मेवके मासोसे तथा गव्य (गौके दूध-घी आदि) से पितृगण क्रमशः एक-एक मास अधिक तृति रूपभ करते हैं और वाशीणस पसीके मोससे सदा तृत रहते हैं ॥ १-२ ॥ हे नरेश्वर !! श्राद्धकर्ममें गेंडेका मांस काळशाक और मधु अत्यन्त प्रशस्त और अत्यन्त तृतिदायक हैं " ॥ ३ ॥

न दश्चादामियं श्राद्धे न वाद्याद्धर्मतत्त्वयित्। मुन्यर्भः स्थात्परः प्रीतिर्यथा न प्रसृत्धियः॥ ७॥ नैतादृशः परो धर्मो नृणां सद्धर्ममिच्छताम्। त्यासो दण्डस्य पूतेषु मनोवाक्ययवस्य यः॥ ८॥ इञ्ययज्ञैर्यस्यमार्गः दृष्टाः भूतानि विभ्यति। एव पाऽभरूणो हन्यादतज्जो हासुतृप् शुक्यः॥ १०॥

अर्थ — धर्मके मर्पको समझनेवाला पूरेण श्राह्में [स्वानेके लिये] मांस न दे और न खबं ही बाब, क्योंके पितृगणकी तृषि जैसी मुनिजनोचित आहारसे होती है वैसी पशुहिसासे नहीं होती ॥ ७ ॥ सदर्भकी इच्छावाले पुरुषेके लिये 'सम्पूर्ण प्राणियेकि प्रति मन, वाणी और प्रारंग्से दण्डका त्याग कर देना'—इसके समान और कोई श्रेष्ठ धर्म नहीं है ॥ ८ ॥ पुरुषको द्रव्ययङ्गसे बजन करते देखकर जीव उस्ते हैं कि यह अपने ही प्राणीवत्र पोषण बरनेवाल्य निर्दय अज्ञानी मुझे अवदय मार हालेगा ॥ १० ॥

^{*} इन तीन इस्त्रेकोका मूलके अनुसार अनुवाद कर दिया गया है। संमंद्रामें नहीं आता, इस व्यवस्थाका क्या रहस्य है ? मासूम होता है, श्रुति-स्मृतिमें नहीं कहीं मांसका विधान है, वह स्वाभाविक मांसभोजी मनुष्योंकी प्रवृत्तिको संकुर्त्वत और नियमित करनेक लिये हीं है। सभी जगह उल्कृष्ट धर्म तो मांसभक्षणका सर्वधा लाग ही पाना गया है। मनुस्मृति अ॰ ५ में मांसप्रकरणका उपसंहार करते हुए इस्लेक ४५ से ५६ तक मांसभक्षणकी निन्दा और निरामित्र आहारको भूरि-पूर्त प्रशंसा की गयी है। श्रादकमोंने मांस किठना निन्दनीय है, यह श्रीमन्द्रागवत सप्तमकृत्य अध्याय १५ के इन इस्लोकोंसे स्पष्ट हो जाता है—

गयामुपेत्य यः श्राद्धं करोति पृथिवीपते । सफलं तस्य तजन्म जायते पितृतुष्टिदम् ॥ ४ प्रशान्तिकासानीवाराश्स्यामाका द्विविधासाथा । वन्यौषधीप्रधानास्तु श्राद्धार्हाः पुरुषर्वम ॥ यवाः प्रियङ्गवो मुद्रा गोधूमा ब्रीहयस्तिलाः । निष्पावाः कोविद्रराश्च सर्वपाश्चात्र शोधनाः ॥ अकृताभ्रयणं यस धान्यजातं नरेश्वर । राजमाषानणूंश्चेव मसूरोश विसर्जयेत्॥ ७ अलाबुं गुझनं चैव पलाण्डुं पिण्डमुलकम् । गान्धारककरम्बादिलवणान्यौषराणि च।। आरक्ताश्चैव निर्यासाः प्रत्यक्षलवणानि च । वर्ज्यान्येतानि वै श्राद्धे यद्य वाचा न शस्यते ॥ नक्ताहृतमनुच्छित्रं तृष्यते न च यत्र गौः। दुर्गीन्ध फेनिलं चाम्बु श्राद्धयोग्यं न पार्धिव ॥ १० क्षीरमेकशफानां यदौष्ट्रमाविकमेव च। मार्गं च माहिषं चैव वर्जयेच्युद्धकर्मणि ॥ ११ षण्डापविद्धचाण्डालपापिपाषण्डिरोगिभिः । कुकवाकुश्वनप्रश्च वानरप्रामस्करैः ॥ १२ उद्दवयासूतकाशीचिमृतहारैश्च वीक्षिते । आर्डे सुरा न पितरो भुक्कते पुरुषर्थभ ॥ १३ तस्मात्परिश्रिते कुर्याच्छाद्धं श्रद्धासमन्त्रितः । उर्व्या च तिलविक्षेपाद्यातुधानान्निवारवेत् ॥ १४ नखादिना चोपपन्ने केशकीटादिभिन्प। न चैवाभिषवैर्मिश्रमन्नं पर्युषितं तथा ॥ १५ श्रद्धासमन्दितैर्दत्तं पित्तभ्यो नामगोत्रतः । यदाहारास्तु ते जातास्तदाहारत्वमेति तत्॥ १६ श्रुयते चापि पितुभिर्गीता गाथा महीपते। इक्ष्वाकोर्मनुपुत्रस्य कलापोपवने पुरा ॥ १७ अपि नस्ते भविष्यन्ति कुले सन्पार्गशीलिनः । गयापुपेत्य ये पिण्डान्दास्यन्यस्याकमादरात् ॥ १८

अपि नस्स कुले जायाहो नो दहास्त्रबोदशीम्।

पायसं मधुसर्पिभ्यां वर्षास् च मद्यास् च ॥ १९

हे पृथिवीपते ! जो पुरुष गयामें आकर श्राद्ध करता है उसका पितृगणको तृप्ति देनेवाला वह जन्म सफल हो बाता है ॥ ४ ॥ हे पुरुषश्रेष्ठ ! देवधान्य, नीवार और इयाम तथा श्रेत वर्णके इयामांक (सार्वा) एवं प्रधान-प्रधान बनौषधियाँ श्राद्धके उपयुक्त इत्य हैं ॥ ५ ॥ जौ, कर्मेग्वी, मूँग, गेहूँ, यान, तिल, मटर, कचनार और सरसों इन सबका श्राद्धमें होना अच्छा है ॥ ६ ॥

हे राजेश्वर ! जिस अन्नसे नवान यहा न किया गया हो तथा बड़े उड़द, छोटे उड़द, मसूर, कदू, गाजर, प्याज, शलजम, गान्धारक (शालिविशोष) बिना तुषके गिरे हुए धान्यका आटा, ऊसर भूमिमें उत्पन्न हुआ लवण, हींग आदि बुळ-कुछ लाल रंगकी वस्तुएं, प्रत्यक्ष लवण और कुछ अन्य बस्तुएँ जिनका शास्त्रमें विधान नहीं है, श्राद्धकर्ममें त्याच्य हैं॥७—९॥ हे राजन् ! जो राजिके समय लाया गया हो, अप्रतिष्ठित जलाशयका हो, जिसमें गौ तृह न हो सकती हो ऐसे गहुका अथवा दुर्गन्य या फेनयुक्त जल श्राद्धके योग्य नहीं होता॥ १०॥ एक सुरवालोका, ऊँटनीका, भेड़का, पृगीका तथा पैसका दूध श्राद्धकर्ममें काममें न ले॥ ११॥

है पुरुषर्षम ! नपुंसक, अपविद्ध (सत्पुरुषोद्वारा बहिष्कृत), चाण्डाल, पापी, पाषण्डी, रोगी, कुकुट, चान, नम्म (शैदिक कर्मको त्याम देनेवाला पुरुष) जानर, प्राम्यशूकर, रजस्वला स्त्री, जन्म अधवा मरणके अशीचसे युक्त व्यक्ति और शब ले जानेवाले पुरुष—इनमेंसे किसीको भी दृष्टि पड़ जानेसे देवगण अथवा पितृगण कोई भी श्राद्धगें अपना भाग नहीं लेते॥ १२-१३॥ अतः किसी घिरे हुए स्थानमें श्रद्धापूर्वक श्राद्धकर्म करे तथा पृथिवीमें तिल छिड़ककर राक्षसोंको निवृत्त कर दे॥ १४॥ हे राजन ! श्राद्धमें ऐसा अन्न न दे जिसमें नल केश या

पृथियोमें तिल छिड़ककर राक्षसोंको नियुत्त कर दे ॥ १४ ॥ हे राजन् ! आद्धमें ऐसा अज न दे जिसमें नल, केवा या कीड़े आदि हो या जो निचोड़कर निकाले हुए रससे युक्त हो या बाती हो ॥ १५ ॥ अद्धायुक्त व्यक्तियोद्धारा नाम और गोउके उसारणपूर्वक दिया हुआ अञ्च पितृगणको वे जैसे आहारके योग्य होते हैं बैसा हो होकर उन्हें मिलता है ॥ १६ ॥ है राजन् ! इस सन्वन्धमें एक पाथा सुनी जाती है जो पूर्वकालमें मनुपुत्र महाराज इक्ष्वाकुके प्रति पितृगणने कलाप उपनामें कही थी ॥ १७ ॥

'क्या हमारे कुलमें ऐसे सन्मार्ग-चील व्यक्ति होने वो गयामें जाकर हमारे लिये आदरपूर्वक फिडदान करेंगे ? ॥ १८॥ क्या हमारे कुलमें कोई ऐसा पुरुष होगा वो वर्षाकालकी मधानश्चत्रयुक्त त्रयोदशीको हमारे उद्देश्यसे मधु और यृतयुक्त पायस (खोर) का दान करेगा ?॥ १९॥ गौरीं वाष्युद्धहेत्कन्यां नीलं वा वृषमुत्सुजेत् ।

अथवा गौरी कन्यासे विवाह करेगा, नीला वृषभ छोड़ेगा या वाश्वमेधेन विधिवद्क्षिणावता ॥ २० दक्षिणासहित विधिपूर्वक अधमेध यज्ञ करेगा ?' ॥ २० ॥

इति श्रीविष्णुपराणे ततीबेंऽदी योडदोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सत्रहवाँ अध्याय

नप्रविषयक प्रक्ष, देवताओंका पराजय, उनका भगवानुकी हारणमें जाना और भगवानका मायामोहको प्रकट करना

श्रीपरादार तबाच

भगवानौर्वसागराय महात्पने । सदाचारं पुरा सम्यङ् मैत्रेय परिपुच्छते॥ मबाप्येतदशेषेण कथितं भवतो हिज। समुल्लङ्ख्य सदाचारं कश्चित्राप्नोति शोभनम् ॥

श्रीमंत्रिय उत्पाच

वण्हापविद्धप्रमुखा विदिता भगवन्यया। उदक्याद्याक्ष में सम्यङ् नग्नमिन्छामि वेदितुम् ॥ ३ को नग्नः किं समाचारो नग्नसंज्ञां नरो लभेत् । नप्रसारूपमिच्छामि यथावत्कथितं त्वया। श्रोतं धर्मभुतां श्रेष्ट न ह्यस्यविदितं तव ॥ ४ श्रीपरादार उवाच

ऋग्यज्ञस्तामसंज्ञेयं त्रयी वर्णावृतिर्द्विज । एतामुज्झति यो मोहात्स नवः पातकी द्विजः ॥ त्रयी समस्तवर्णानां द्विज संवरणं यतः। नग्नो भवत्युञ्जितायामतस्तस्यां न संदायः ॥ इदं च श्रूयतामन्यद्यद्वीष्माय महात्मने । कश्रयामास धर्मज्ञो वसिष्ठोऽस्मरिपतामहः ॥ मयापि तस्य गदतश्श्रुतमेतन्पहात्मनः। नग्रसम्बन्धि मैत्रेय यत्पृष्टोऽहमिह त्वया ॥ देवासुरमभूद्युद्धं दिव्यमब्दशतं पुरा। तस्मिन्यराजिता देवा दैत्यैहृदिपुरोगमैः॥ क्षीरोदस्योत्तरं कूलं गत्वातप्यन्त वै तपः। विष्णोसराधनार्थाय जगुश्चेमं स्तवं तदा ॥ १०

श्रीपराञ्चरजी बोले — हे मैत्रेय ! पूर्वकालमें महाला सगरसे उनके पृष्ठनेपर भगवान् और्वने इस प्रकार गृहस्थके सदाचारका निरूपण किया था॥ १॥ हे द्विज ! मैंने भी तुमसे इसका पूर्णतया वर्णन कर दिया। कोई भी पुरुष सदाचारका उल्लाहन करके सद्गति नहीं पा सकता ॥ २ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले — भगवन् ! नपुंसक, अपविद्र और रजस्वला आदिको तो मैं अच्छी तरह जानता हैं [किन्तु यह नहीं जानता कि 'नव्र' किसको कहते हैं]। अतः इस समय मै नप्रके विषयमे जातना चाहता है ॥ ३ ॥ नम कौन है ? और किस प्रकारके आचरणवाला पुरुष नप्र-संज्ञा प्राप्त करता है ? हे धर्मीत्माओं में श्रेष्ट ! मैं आपके द्वारा नप्तके स्वरूपका यथावत् वर्णन सुनना चाहता है; क्योंकि आपको कोई भी बात अविदित नहीं है ॥ ४ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे द्विज! ऋकू, साम और यजुः यह वेदत्रयी वर्णीका आवरणस्वरूप है। जो पुरुष मोहसे इसका त्यान कर देता है वह पापी 'नप्र' कहरूता है ॥ ५ ॥ हे ब्रह्मन् ! समस्त वर्णीका संवरण (देकनेवाला वस्त्र) वेदत्रयी ही है; इसल्प्रिये उसका त्याग कर देनेपर पुरुष 'नम्न' हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं 🛚 ६ 🗷 हमारे पितामह धर्मज्ञ विसष्टजीने इस विषयमें महात्मा भीष्मजीसे जो कुछ कहा था वह श्रयण ऋरो॥ ७॥ है मैत्रेय ! तुमने जो मुझसे नग्नके विषयमें पूछा है इस सम्बन्धमें भीष्मके प्रति वर्णन करते समय मैंने भी महात्मा वसिष्ठजीका कथन सुना था॥ ८॥

पूर्वकालमें किसी समय सौ दिव्यवर्षतक देवता और असूरोका परस्पर युद्ध हुआ। उसमें हाद प्रमृति दैत्योद्दारा देवगण पराजित हुए ॥ ९ ॥ अतः देवगणने क्षीरसागरके उत्तरीय तटपर जाकर तपस्या की और भगवान विष्णुकी आराधनाके लिये उस समय इस स्तवका गान किया ॥ १० ॥

देवा अनुः आराधनाय लोकानां विष्णोरीइाख यो गिरम्। बक्ष्यामो भगवानाद्यस्तया विष्णुः प्रसीदतु ॥ ११ यतो भृतान्यशेषाणि प्रसृतानि महात्मनः। यस्मिश्च लयमेष्यन्ति कस्तं स्तोतुमिहेश्वरः ॥ १२ तश्राप्यरातिविध्वंसध्वस्तवीर्याभयार्थिनः । त्वां स्तोष्यामस्तवोक्तीनां याथार्थ्यं नैव गोचरे ॥ १३ त्वमुर्वी सलिलं बह्निर्वायुराकाञ्चमेव च। समस्तमन्तःकरणं प्रधानं तत्परः पुपान् ॥ १४ एकं तर्वतद्भतात्मन्यूत्तांमूर्तमयं वपुः। आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं स्थानकालविभेदवत् ॥ १५ तत्रेश तव यत्पूर्वं त्वन्नाभिकमलोद्धवम्। रूपं विश्वोपकाराय तस्मै ब्रह्मात्मने नमः ॥ १६ शकार्करुद्रवस्वस्थिमरुत्सोमादिभेदवत् त्रयमेकं स्वरूपं ते तस्मै देवात्मने नमः ॥ १७ दम्भप्रायमसम्बोधि तितिक्षादमवर्जितम्। यद्भुषं तब गोविन्द तस्मै दैत्यात्मने नमः ॥ १८ नातिज्ञानवज्ञ यस्पिद्धाङ्क्यः स्तिमिततेजसि । शब्दादिलोभि यत्तस्मै तुष्यं यक्षात्मने नमः ॥ १९ क्रौर्यमायामयं घोरं यच रूपं तवासितम् । निशाचरात्मने तस्मै नमस्ते पुरुषोत्तम् ॥ २० स्वर्गस्वधर्मिसद्धर्मफलोपकरणं धर्माख्यं च तथा रूपं नमस्तस्मै जनार्दन ॥ २१ हर्वप्रायमसंसर्गि गतिमदूसनादिषु । सिद्धाख्यं तव बहुपं तस्मै सिद्धात्मने नमः ॥ २२ अतितिक्षायनं कुरमूपभोगसहं हरे। द्विजिद्धं तव यदूपं तस्मै नागात्मने नमः ॥ २३ अवबोधि च यच्छान्तमदोषमयकल्मषम्। ऋषिरूपात्मने तस्मै विष्णो रूपाय ते नमः ॥ २४ धक्षयत्यथ कल्पान्ते भूतानि यदवारितम् ।

त्वदूर्वं पुण्डरीकाक्ष तस्मै कालात्मने नमः ॥ २५

देवगण बोले—हमलेग लोकनाथ भगवान् विष्णुकी आराधनाके लिये जिस वाणीका उसारण करते हैं उससे वे आद्य-पुरुष श्रीविष्णुभगवान् प्रसंत्र हो ॥ ११ ॥ जिन परमात्मासे सम्पूर्ण भूत उत्पन्न हुए हैं और जिनमें वे सब अन्तमें लीन हो जायेंगे, संसारमें उनकी स्तृति करनेमें कीन समर्थ है ? ॥ १२ ॥ हे प्रभो ! यद्यपि आपका यथार्थ खरूप वाणीका विषय नहीं है तो भी शत्रओंके हाथसे विध्वस्त होकर पराक्रमहीन हो जानेके कारण हम अभय-प्राप्तिके लिये आपकी स्तति करते हैं ॥ १३ ॥ पृथिवी, बल, अग्नि, बाबू, आकाश, अन्तःकरण, मूल-प्रकृति और प्रकृतिसे परे पुरुष—ये सब आप ही है ॥ १४ ॥ है सर्वभृतात्मन् ! बहाासे लेकर साम्यपर्यन्त स्थान और कास्त्रदि भेदयुक्त यह यूर्नीयुर्त-पदार्थमय सम्पूर्ण प्रपञ्च आपहोका दारीर है॥ १५॥ आपके नाभि-कमलसे विश्वके उपकारार्थ प्रकट हुआ जो आपका प्रथम रूप है, हे ईश्वर ! उस बहुपस्वरूपको नमस्कार है ॥ १६ ॥ इन्द्र, सूर्य, हद्र, बसु, अधिनोकुमार, मरुद्रण और सोम आदि भेदयुक्त हमलोग भी आपहीका एक रूप है, अतः आपके उस देवरूपको नमस्कार है ॥ १७ ॥ हे गोविन्द ! जो दम्भगयी, अज्ञानमधी तथा तितिक्षा और दम्भसे शुन्य है आपकी उस दैत्य-मर्तिको गमस्कार है ॥ १८ ॥ जिस गन्दसत्त्व स्वरूपमें हृदयको नाडियाँ अत्यन्त ज्ञानवाहिनी नहीं होती तथा जो शब्दादि विषयोका लोभी होता है आपके उस यक्षरूपको नमस्कार है ॥ १९ ॥ हे पुरुषोत्तम ! आपका जो क्रुरता और मायासे यक्त घोर त्योगय रूप है उस राक्षसस्वरूपको नमस्कार है ॥ २० ॥ हे जनार्दन ! जो स्वर्गमें रहनेवाले धार्मिक जनोंके यागादि सद्धमेंकि फल (सुसादि) की प्राप्ति करानेवाला आपका धर्म नामकारूप है उसे नमस्कार है ॥ २१ ॥ जो जल-अग्नि आदि गमनीय स्थानोंपें जाकर भो सर्वदा निर्लिप्त और प्रसन्नतामय रहता है वह सिद्ध नायक रूप आपहीका है; ऐसे सिद्धस्तरूप आपको नमस्कार है।। २२ ॥ हे हरे ! जो अक्षमाका आश्रय अत्यन्त कृर और कामोपभोगमें समर्थ आपका द्विजिह (दो जीभवाला) रूप है, उन नागस्वरूप आपको नगस्कार है ॥ २३ ॥ हे विष्णो ! जो ज्ञानमय, ज्ञान्त, दोषर्राहत और कल्मपहीन है उस आपके मृतिमय स्वरूपको नमस्कार है ॥ २४ ॥ जो कल्पान्तमें अनिवार्यरूपसे समस्त भूतोंका भक्षण कर जाता है, हे पुण्डरीकाक्ष ! आपके उस कालस्करूपको नमस्कार है ॥ २५ ॥

सम्मक्ष्य सर्वभूतानि देवादीन्यविशेषतः । नृत्यत्यन्ते च यद्वपं तस्मै रुद्रात्मने नमः ॥ २६ प्रवृत्त्वा रजसो यस कर्मणां करणात्पकम् । जनार्दन नमस्तस्में त्वद्रपाय नरात्मने ॥ २७ अष्टाविंशद्वधोपेतं यद्भपं तामसं तव । उन्मार्गगामि सर्वात्मंस्तस्मै वश्यात्मने नमः ॥ २८ यज्ञाङ्गभूतं यद्भुपं जगतः स्थितिसाधनम्। वृक्षादिभेदैव्बङ्भेदि तस्मै मुख्यात्मने नमः ॥ २९ तिर्यङ्मनुष्यदेवादिव्योमशब्दादिकं च यत् । रूपं तवादेः सर्वस्य तस्मै सर्वात्यने नमः॥ ३० प्रधानबुद्धचादिमयादशेषा-द्यदन्यस्मात्परम परमात्मन् । रूपं तवाद्यं यदनन्यतुल्यं तस्मे नमः कारणकारणाय ॥ ३१ ञुक्कादिदीर्घादिघनादिहीन-मगोचरं यद्य विशेषणानाम्। शुद्धातिशुद्धं परमर्षिदृश्यं रूपाय तस्मै भगवत्रताः स्मः ॥ ३२ शरीरेषु यदन्यदेहे-यशः **बुशेषवस्तुब्रुजमक्ष्**यं यत्। तस्माद्य नान्यदृव्यतिरिक्तमस्ति ब्रह्मस्वरूपाय नताः स्म तस्मै ॥ ३३

सकलमिद्मजस्य यस्य रूपं परमपदात्मवतस्सनातनस्य

तमनिधनमशेषबीजभूतं

प्रभुममलं प्रणतासम् वासुदेवम् ॥ ३४

श्रीपराज्य उवाच

स्तोत्रस्य चावसाने ते ददृशुः परमेश्वरम् ।

शङ्ख्यकॅगदापाणिं गरुडस्थं सुरा हरिम्।। ३५

जो प्रलयकालमें देवता आदि समस्त प्राणियोंकी सामान्य भावसे भक्षण करके नृत्य करता है आपके उस रुद्र-स्वरूपको नमस्कार है ॥ २६ ॥ रबोगुणकी प्रवृत्तिके कारण जो कमॉका करणरूप है, हे जनार्दन ! आपके उस मनुष्यात्मक स्वरूपको नमस्कार है ॥ २७ ॥ हे सर्वात्मन् ! जो अट्टाईस वघ-युक्त* तमोमय और उन्मार्गगामी है आपके उस पद्मुख्यको नमस्कार है ॥ १८ ॥ जो जगत्की स्थितिका साधन और यज्ञका अंगभूत है तथा वक्ष, लता, गुल्प, बोरुष, तृण और गिरि—इन छः भेदासे युक्त है उंट मुख्य (उद्धिद्) रूप आपको नगस्कार है ॥ २९ ॥ तिर्यक् मनुष्य तथा देवता आदि प्राणी, आकाशादि पञ्चभूत और राब्दादि उनके गुण—ये सब, सबके आदिभूत आपहीके रूप हैं; अतः आप सर्वात्पाको नमस्कार है ॥ ३० ॥

हे परमात्मन् ! प्रधान और महतत्त्वादिरूप इस सम्पूर्ण जगत्से जो परे हैं, सबका आदि कारण है तथा जिसके समान कोई अन्य रूप नहीं है, आपके उस प्रकृति आदि कारणोंके भी कारण रूपको नमस्कार है।। ३१॥ हे भगवन् ! जो शुक्कादि रूपसे, दीर्घता आदि परिमाणसे तथा पनता आदि गुणोंसे रहित है, इस प्रकार जो समस्त विशेषणोंका अतिषय है तथा परमर्पियोका दर्शनीय एवं शुद्धातिशुद्ध है आपके उस स्वरूपको हम नमस्कार करते। है ॥ ३२ ॥ जो हमारे शरीरोमें, अन्य प्राणियंकि शरीरोमें तथा समस्त वस्तुओंमें वर्तमान है, अजन्मा और अविनाशी है तथा जिससे अतिरिक्त और कोई भी नहीं है, उस बहास्वरूपको हम नमस्कार करते हैं ॥ ३३ ॥ परम पद ब्रह्म ही जिसका आत्मा है ऐसे जिस समातन और अजन्मा भगवान्का यह सकल प्रपञ्च रूप है, उस सबके बोजभूत, अविनाशी और निर्मल प्रभु बासुरेवको हम नमस्कार करते हैं ॥ ३४ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—हे मैद्रेय! सभाप्त हो जानेपर देवताओंने परमात्मा श्रीहरिको हाथमें शहूर, चक्र और गदा लिये तथा गरुडपर आरूढ़ अपने सम्मुख विग्रजमान देखा ॥ ३५ ॥

^{🦥 🌁} भारह इन्द्रिय-वध, नौ नुष्टि-वध और आठ सिद्धि-वध — ये कुल अहाईस वध हैं। इक्का प्रथमांचा पञ्चमाध्याय इल्प्रेक दसकी टिप्पणीमें विस्तारपूर्वक वर्णन किया है।

तमूबुस्सकला देवाः प्रणिपातपुरस्सरम्।
प्रसीद नाथ दैत्येभ्यस्ताहि नश्शरणार्थिनः ॥ ३६
प्रैलोक्ययज्ञभागाश्च दैत्यैहांदपुरोगमैः ।
हता नो ब्राह्मणोऽप्याज्ञामुल्लक्ष्य परमेश्वर ॥ ३७
यद्यप्यशेषभूतस्य वयं ते च तवांशजाः ।
तथाप्यविद्याभेदेन भिन्नं पश्यामहे जगत् ॥ ३८
स्वयणंधर्माभिरता वेदमार्गानुसारिणः ।
न शक्यास्तेऽरयो हन्तुमस्माभिस्तपसावृताः ॥ ३९
तमुपायमशेषात्मन्नसमकं दातुमहीस ।
येन तानसुरान्हन्तुं भवेम भगवन्समाः ॥ ४०

इत्युक्तो भगवांस्तेभ्यो मायामोहं शरीरतः । समुत्पाद्य ददौ विष्णुः प्राह चेदं सुरोत्तमान् ॥ ४१ मायामोहोऽयमिखलान्दैत्यांस्तान्योहिष्ण्यति । ततो वध्या भविष्यन्ति वेदमार्गबहिष्कृताः ॥ ४२ स्थितौ स्थितस्य मे वध्या यावन्तः परिपन्थिनः । ब्रह्मणो हाधिकारस्य देवदैत्यादिकाः सुराः ॥ ४३ तद्रब्छत न भीः कार्या मायामोहोऽयमप्रतः । गच्छन्नद्योपकाराय भवतां भविता सुराः ॥ ४४ श्रीपराधा उत्राच इत्युक्ता प्रणिपत्यैनं ययुर्देवा यथागतम् ।

मायामोहोऽपि तैस्सार्द्ध ययौ यत्र महासुराः ॥ ४५

उन्हें देखकर समस्त देवताओंने प्रणाम करनेके अनन्तर उनसे कहा— है नाथ ! प्रसन्न होड्ये और हम शरणागतोंकी दैत्योंसे रक्षा कीजिये ॥ ३६ ॥ है परमेश्वर ! हाद प्रभृति दैत्यगणने ब्रह्माजोंकी आज्ञाका भी उल्ल्ब्सन कर हमारे और त्रिलेकीके यज्ञमागोंका अपहरण कर लिया है ॥ ३७ ॥ यद्याप हम और वे सर्वधूत आपहीके अंशज हैं तथापि अविद्यावश हम जगत्को परस्पर भिन्न-भिन्न देखते हैं ॥ ३८ ॥ हमारे शतुगण अपने वर्णधर्मका पालन करनेवाले, वेदमार्गावलम्बी और तपोनिष्ठ हैं, अतः वे हमसे नहीं मारे जा सकते ॥ ३९ ॥ अतः हे सर्वात्मन् ! जिससे हम उन असुरोका वध करनेमें समर्थ हो ऐसा कोई उपाय आप हमें बतलाइये" ॥ ४० ॥

श्रीपराशरजी बोले—उनके ऐसा कहनेपर भगवान् विष्णु ने अगने शरीरसे मायामोहको उत्पन्न किया और उसे देवताओंको देकर कहा—॥४१॥ "यह मायामोह उन सम्पूर्ण दैत्यगणको मोहित कर देगा, तब वे चेदमार्गका उल्ल्यून करनेसे तुमलोगोंसे मारे जा सकेंगे॥४२॥ हे देवगण! जो कोई देवता अथवा दैत्य ब्रह्माजींके कार्यमें बावा डालते हैं वे मृष्टिकी रक्षामें तत्पर पेरे विष्य होते हैं॥४३॥ अतः हे देवगण! अब तुम जाओ। ढरो मत। यह मायामोह आगेसे जाकर तुम्हारा उपकार करेगा"॥४४॥

श्रीपराशरजी बोले—भगवान्को ऐसी आहा होनेपर देवगण उन्हें प्रणाम कर जहाँसे आये थे वहाँ चले गये तथा उनके साथ मायामोह भी जहाँ असुरगण थे वहाँ गया ॥ ४५ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेंऽशे सप्तदशोऽभ्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवाँ अध्याय

भायामोह और असुरोंका संवाद तथा राजा शतधनुकी कथा

श्रीपरशर उक्तम तपस्यभिरतान्सोऽश्व मायामोहो महासुरान् । मैत्रेय ददृशे गत्वा नर्मदातीरसंश्रितान् ॥ १ ततो दिगम्बरो मुण्डो बर्हिपिच्छधरो द्विज । मायामोहोऽसुरान् श्लक्ष्णियदं वचनमङ्गवीत् ॥ ३ श्रीपराकरकी बोले—हे मैत्रेय! तदनत्तर माथामोहने [देवताओंक साथ] वाकर देखा कि असुरगण नर्मदाके तटपर तपस्यानें लगे हुए हैं॥ १॥ तब उस मयूरपिन्छभारी दिगम्बर और मुण्डितकेश मायामोहने असुरोसे अति मधुर वाणीमें इस प्रकार कहा॥ २॥ मायामोह उवाच

हे दैत्यपतयो ब्रूत यदर्थ तप्यते तपः।

ऐहिकं वाथ पारत्यं तपसः फलमिन्छथ ।।

असुरा ऊनुः

पारव्यफललाभाय तपश्चर्या महामते । अस्माभिरियमारब्धा किं वा तेऽत्र विवक्षितम् ॥

भाषामोह उवाच

कुरुष्वं मम वाक्यानि यदि मुक्तिमभीप्सथ ।

अर्हध्यमेनं धर्मं च मुक्तिद्वारमसंवृतम् ॥ धर्मो विमुक्तेरहींऽयं नैतस्मादपरो वरः ।

थमा । वमुक्तरहाऽथ नतस्मादपरा वरः । अत्रैव संस्थिताः स्वर्गं विमुक्तिं वा गमिष्यथ ॥

अर्हध्वं धर्ममेतं च सर्वे यूवं महाबलाः ॥ ।

श्रीपराश्तर उवाच

एवंत्रकारैर्बहुभिर्युक्तिदर्शनचर्चितैः । मायामोहेन ते दैत्या वेदमार्गादपाकृताः॥

धर्मांयैतवधर्माय सदेतन्न सदित्यपि ।

विमुक्तये त्विदं नैतद्विमुक्ति सम्प्रयक्तति ॥ परमार्थोऽयमत्पर्थं परमार्थो न चाप्ययम् ।

कार्यमेतदकार्यं च नैतदेवं स्फूटं त्विदम् ॥ १०

दिम्बाससामयं धर्मो धर्मोऽयं बहुवाससाम् ॥ ११

इत्यनेकान्तवादं च मायामोहेन नैकधा।

तेन दर्शनता दैत्यास्त्वधर्म त्याजिता द्विज ॥ १२

अर्हतैतं महाधर्मं मायामोहेन ते यतः। प्रोक्तास्त्रमाश्चिता धर्ममाईतास्त्रेन तेऽभवन् ॥ १३

त्रयीधर्मसमुत्सर्गं मायापोहेन तेऽसुराः।

कारितास्तन्यया ह्यासंस्ततोऽन्ये तत्र्यचोदिताः ॥ १४

तैरप्यन्ये परे तेश तैरप्यन्ये परे च तै:।

अल्पैरह्येभिस्सन्त्रका तैदेंत्यैः प्रायशस्त्रयी ॥ १५

पुनश्च रक्ताम्बरधृङ् मायामोहो जितेन्द्रियः ।

अन्यानाहासुरान् गत्वा मृद्धल्पमधुराक्षरम् ॥ १६

स्वर्गार्थं यदि वो वाञ्छा निर्वाणार्थमथासुराः ।

तदलं पशुघातादिदुष्टधमैर्निबोधत ॥ १७

भाषामोह बोल्ज--हे दैत्यंपतिगण ! कहिये, आपलोग किस उद्देश्यसे तपस्या कर रहे हैं, आपको किसी लोकिक फलकी इन्छा है या पारलैकिकको ?॥ ३॥

असुरगण बोले—हे महामते | हमलोगॅनि पारलीकिक फलकी कामनासे तपस्या आरम्भ की है । इस

विषयमें तुमको हमसे क्या कहना है ? ॥ ४ ॥ मायामोह बोला—यदि आपलोगोंको मुक्तिकी

इच्छा है तो जैसा मैं कहता हूँ वैसा करो। आपलोग मुक्तिके खुले द्वाररूप इस धर्मका आदर कीजिये॥ ५॥ यह धर्म मुक्तिमें परमोपयोगी है। इससे श्रेष्ठ अन्य कोई

धर्म नहीं है। इसका अनुष्ठान करनेसे आपलोग स्वर्ग अथवा मुक्ति जिसकी कामना करेंगे प्राप्त कर स्वेगे।

आप सबलोग महाबलनान् है, अतः इस धर्मका आदर

कीजिये ॥ ६-७ ॥

श्रीपराशरजी बोले—इस: अकार नाना प्रकारकी युक्तियोंसे अतिरक्षित बाक्योद्वारा मायामोहने दैत्यगणको वैदिक मार्गसे प्रष्ट कर दिया ॥ ८ ॥ 'यह धर्मयुक्त है और यह धर्मविरुद्ध है, यह सत् है और यह असत् है, यह

मुक्तिकारक है और इससे मुक्ति नहीं होती, यह आत्यन्तिक परमार्थ है और यह परमार्थ नहीं है, यह कर्तव्य है और

यह अकर्तरूष है, यह ऐसा नहीं है और यह साष्ट ऐसा ही है, यह दिगम्बरोका धर्म है और यह साम्बरोका धर्म

हैं —हे द्विज! ऐसे अनेक प्रकारके अनन्त बादोंकी

दिखलाकर मायामोहने उन दैत्योंको स्वधर्मसे च्युत कर दिया ॥ ९----१२ ॥ मायामोहने दैत्योंसे कहा था कि

आगलेग इस महाधर्मको 'अईत' अर्थात् इसका आदर

कीजियं। अतः उस धर्मका अवलम्बन करनेसे वे 'आर्टन' कहलाये॥ १३॥

मायामीहने असुरगणको त्रयीधर्मसे विमुख कर दिया और वे मोहमस्त हो यथे; तथा पीछे उन्होंने अन्य दैत्योंको भी इसी धर्ममें प्रवृत किया ॥ १४ ॥ उन्होंने दूसरे दैत्योंको,

दूसरोने तीसरोको, तीसरोने चीथोंको तथा उन्होने औरोको इसी धर्ममें प्रवृत किया। इस प्रकार बोड़े ही दिनोंमें

दैत्यगणने वेदत्रयोका प्रापः ल्याय कर दिया ॥ १५ ॥

तदनन्तर जितेन्द्रिय मायामोहने रक्तवस्त्र धारणकर अन्यान्य असुरोके पास जा उनसे मृदु, अल्प और मधुर शब्दोंमें कहा—॥ १६॥ "है असुरगण! यदि तुमलोगोंको स्वर्ग अथवा मोक्षको इच्छा है तो पशुहिसा आदि दुष्टकमोंको त्यागकर बोधान्नाम्न करो॥ १७॥

何 す とー

विज्ञानमयमेवैतदशेषमवगच्छत बुध्यध्वं मे तन्नः सम्यग्बुधैरेवमिहोदितम् ॥ १८ जगदेतदनाधारं भ्रान्तिज्ञानार्थतत्परम् । रागादिदुष्टमत्यर्थं भ्राम्यते भवसङ्क्रहे ॥ १९ एवं बुध्यत बुध्यध्वं बुध्यतैविमतीरयन्। मायामोहः स दैतेयान्धर्ममस्याजयन्निजम् ॥ २० नानाप्रकारबचनं स तेषां युक्तियोजितम्। तथा तथा प्रयोधमें तत्क्जुस्ते यथा यथा ॥ २१ तेऽप्यन्येषां तथैयोचुरन्यैरन्ये तथोदिताः। मैत्रेय तत्यजुर्धमं वेदस्मृत्युदितं परम् ॥ २२ अन्यानप्यन्यपाषण्डप्रकारैर्बहर्शिर्द्धज दैतेयान्योहयामास मायामोहोऽतिमोहकृत् ॥ २३ खल्पेनैव हि कालेन मायामोहेन तेऽसुराः । मोहितास्तत्पजुस्सर्वा त्रयीयस्गक्तितां कथाम् ॥ २४ केचिद्विनिन्दां वेदानां देवानामपरे द्विज। यज्ञकर्मकलापस्य तथान्ये च द्विजन्मनाम् ॥ २५ नैतद्यक्तिसहं वाक्यं हिंसा धर्माय चेष्यते । हर्वीच्यनलद्रम्यानि फलायेत्यर्भकोदितम् ॥ २६ यज्ञैरनेकैर्देवत्वमवाप्येन्द्रेण भुज्यते । शम्यादि यदि चेत्काष्टं तहुरं पत्रभुक्पशुः ॥ २७ निहतस्य पञ्जोर्यज्ञे स्वर्गप्राप्तिर्यदीच्यते । खपिता यज्ञमानेन किञ्च तस्यात्र हन्यते ॥ २८ तृष्यते जायते पुंसी भूक्तपन्येन चेत्ततः। कुर्याच्यादं अमायात्रं न वहेयुः प्रवासिनः ॥ २९ जनश्रद्धेयमित्येतदवगम्य ततोऽत्र वः । उपेक्षा श्रेयसे वाक्यं रोचतां यन्मयेरितम् ॥ ३० न ह्याप्तवादा नभसो निपतन्ति महासुराः। युक्तिमहुचनं बाह्यं मयान्येश्च भवद्वियै: ॥ ३१

यह सम्पूर्ण जगत् विज्ञानमय है—ऐसा जानो । मेरे वाज्योंपर पूर्णतया ध्यान दो । इस विषयमें मुधजनीका ऐसा ही मत है कि यह संसार अनाधार है, धमजन्य पदार्थीकी प्रतीतिपर ही स्थिर है तथा रागादि दोषोंसे दृषित है। इस संसारसङ्घर्मे जीव अत्यन्त भटकता रहा है" ॥ १८-१९ ॥ इस प्रकार 'बुध्यत (जानो), बुध्यध्वं (समझो), बुध्यत (जानो)' आदि सन्दोंसे बुद्धधर्मका निर्देश कर मायामोहने दैल्योंसे उनका निजयमं छड़ा दिया ॥ २० ॥ मायामोहने पेसे नाना प्रकारके युक्तियुक्त वाक्य कहे जिससे उन दैत्यगणने त्रयीधर्मको स्थाग दिया ॥ २१ ॥ उन दैत्यगणने अन्य दैस्पोसे तथा उन्होंने अन्यान्यसे ऐसे ही वाक्य कहे। हे मैत्रेय ! इस प्रकार उन्होंने श्रुतिस्मृतिविद्यित अपने परम धर्मको त्याग दिया ॥ २२ ॥ हे द्विज ! मोहकारी मायामोहने और भी अनेकानेक देंत्योंको भिन्न-भिन्न प्रकारके विविध पाधण्डीसे योहित कर दिया ॥ २३ ॥ इस प्रकार थोड़े ही समयमें मायामोहके द्वारा मोहित होकर असुरगणने वैदिक धर्मकी वातचीत करना भी छोड़ दिया ॥ २४॥

हे द्विज ! उनमेरी कोई वेदोकी, कोई देवताओंकी, कोई यात्रिक कर्म-कलापोंकी तथा कोई ब्राह्मणोंकी निन्दा करने लगे ॥ २५ ॥ [वे कहने लगे :--] "हिंसासे भी धर्म होता है-यह बात किसी प्रकार युक्तिसंगत नहीं है। अप्रिमें हिंब जलानेसे फल होगा—यह भी बच्चोंकी-सी बात है ॥ २६ ॥ अनेकों यहाँकि द्वारा देवत्व लाभ करके यदि इन्द्रको रामी आदि काष्ट्रका हो भोजन करना पडता है। तो इससे हो पत्ते सानेवाला पश्च ही अच्छा है ॥ २७ ॥ यदि यज्ञमें बलि किये गये पश्को स्वर्गकी प्राप्ति होती है तो यजमान अपने पिताको ही क्यो नहीं मार डालता ? ॥ २८ ॥ यदि किसी अन्य पुरुषके भोजन करनेसे भी किसी पुरुषको तुप्ति हो सकती है तो विदेशकी यात्राके समय खाद्यपदार्थ ले जानेका परिश्रम करनेकी क्या आवश्यकता है: पुत्रमण घरपर ही श्राद्ध कर दिया करे ॥ २९ ॥ अतः यह समझकर कि 'यह (श्राद्धादि कर्मकाण्ड) लोगोंकी अन्ध-श्रद्धा ही है' इसके प्रति उपेक्षा करनी चाहिये और अपने श्रेय:साधनके किये जो कुछ सैने कहा है उसमें रुचि करनी चाहिये॥ ३०॥ हे असुराण ! श्रृति आदि आप्तवाक्य कुछ आकाशसे नहीं गिरा करते । हम, तुम और अन्य सबको भी युक्तियुक्त बाक्योंको प्रहण कर लेना चाहिये' ॥ ३१ ॥

श्रीपराशर ढवाच

मायामोहेन ते दैत्याः प्रकार्रबंहुभिस्तथा। व्युत्यापिता यथा नैवां त्रयी कश्चिद्ररोच्चवत् ॥ ३२ इत्यपुन्पार्गयातेषु तेषु दैत्येषु तेऽपराः । उद्योगं परमं कृत्वा युद्धाय समुपस्थिताः ॥ ३३ ततो दैवासूरं युद्धं पुनरेवाधवद् हिज। हताञ्च तेऽसुरा देवैः सन्धार्गपरिपन्थिनः ॥ ३४ खधर्मकवचं तेषामभूद्यत्प्रथमं हिज। तेन रक्षाभवत्पूर्व नेज्ञुर्नष्टे च तत्र ते ॥ ३५ ततो मैत्रेय तन्यार्गवर्तिनो येऽभवञ्चनाः । नप्रास्ते तैर्यतस्यक्तं त्रयीसंवरणं तथा ॥ ३६ ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थस्तथाश्रमी। परिव्राह् वा चतुर्थोऽत्र पञ्चमो नोपपद्यते ॥ ३७ यस्तु सन्बज्य गार्हस्थ्यं वानप्रस्थो न जायते । परिवाद् चापि मैत्रेय स नज्ञः पापकुन्नरः ॥ ३८ नित्यानां कर्मणां विप्र तस्य हानिरहर्निशम् । अकुर्वन्विहितं कर्म शक्तः पति तद्दिने ॥ ३९ प्रायञ्जितेन महता शक्तिमाप्रोत्यनापदि। पक्षं नित्यक्रियाहानेः कर्त्ता मैत्रेय मानवः ॥ ४० संवत्सरं क्रियाहानिर्यस्य पुंसोऽभिजायते । तस्यावलोकनात्सूयों निरीक्ष्यस्साथुभिस्सदा ॥ ४१ स्पृष्टे स्नानं सचैलस्य शुद्धेहेंतुर्महामते। पुंसो भवति तस्योक्ता न शुद्धिः पापकर्मणः ॥ ४२ देवर्षिपितभूतानि यस्य निःश्वस्य वेदमनि । प्रवान्यनर्चितान्यत्र लोके तस्मात्र पापकृत् ॥ ४३ सम्भाषणानुप्रशादि सहास्यां चैव कुर्वतः । जायते तुल्यता तस्य तेनैय द्विज वस्सरात् ॥ ४४ देवादिनि:शासहतं शरीरं यस्य वेश्म च। न तेन सङ्करं कुर्याद् गृहासनपरिच्छदैः ॥ ४५ अश्र भुद्धे गृहे तस्य करोत्यास्यां तथासने । होते चाप्येकहायने स सहस्तत्समो भवेत् ॥ ४६

श्रीपराशरजी बोले-इस प्रकार अनेक यक्तियाँसे मायामोहने दैलोंको विचलित कर दिया जिससे उनमेंसे किसीकी भी बेदत्रयोमें रुचि नहीं रही ॥ ३२ ॥ इस प्रकार दैत्योंके विपर्तत मार्गमें प्रवृत्त हो जानेपर देवगण खुब तैयारी करके उनके पास युद्धके लिये उपस्थित हुए ॥ ३३ ॥

हे द्विज । तब देवता और अस्रोंमें युनः संप्राम छिड़ा । उसमें सन्धार्गविरोधी दैत्यगण देवताओंद्वारा मारे गये ॥ ३४ ॥ हे द्विज ! पहले दैत्योंके पास जो स्वधर्मरूप कवच था उसीसे उनकी रक्षा हुई थी। अबकी बार उसके नष्ट हो जानेसे वे भी नष्ट हो गये ॥ ३५ ॥ हे मैत्रेय ! उस समयसे जो लोग माबामोहद्वारा प्रवर्तित मार्गका अवलम्बन करनेवाले हुए। वे 'नम्' कहलाये क्योंकि उन्होंने बेदब्र**यीरूप बस्तको त्याग दिया था ॥** ३६ ॥

ब्रह्मचारी, गृहस्य, वानप्रस्य और संन्यासी—ये चार ही आश्रमी हैं । इनके अतिरिक्त पाँचवाँ आश्रमी और कोई नहीं है ॥ ३७ ॥ हे मैत्रेय ! जो पुरुष गृहस्थाश्रमको छोडनेके अनन्तर वानप्रस्थ या सन्यासी नहीं होता वह पापी भी नग्न ही है ॥ ३८ ॥

हे विष्र ! सामर्थ्य स्हते हुए भी जो बिहित कर्म नहीं करता बहु उसी दिन पवित हो जाता है और उस एक दिन-रातमें ही उसके सम्पूर्ण नित्यकर्मीका क्षय हो जाता है॥ ३९॥ हे मैंप्रेय ! आपत्तिकालको छोड्कर और किसी समय एक पक्षतक नित्यकर्मका त्याग करनेवाला पुरुष महान् प्रायश्चित्तसे ही झुद्ध हो सकता है ॥ ४० ॥ जो पुरुष एक वर्गतक नित्य-क्रिया नहीं करता उसपर दृष्टि पड़ जानेसे साधु पुरुषको सदा सूर्यका दर्दान करना चाहिये ॥ ४१ ॥ हे महामते ! ऐसे पुरुषका स्पर्श होनेपर वस्त्रसहित स्नान बरनेसे शुद्धि हो सकती है और उस पांपालाकी शुद्धि तो किसी भी प्रकार नहीं हो सकती ॥ ४२ ॥

जिस मनुष्यके घरसे देवगण, ऋषिगण, पितृगण और भूतगण बिना पुजित हुए नि:श्वास छोड़ते अन्यत्र चले जाते हैं, लोकमें उससे बढ़कर और कोई पापी नहीं है ॥ ४३ ॥ हे द्विज ! ऐसे पुरुषके साथ एक वर्षतक सम्भाषण, क्शलप्रश्र और उठने बैठनेसे मनुष्य उसीके समान पापातमा हो जाता है॥४४॥ जिसका शरीर अथवा गृह देवता आदिके निःश्वाससे निहत है उसके साथ अपने गृह, आसन् और वस्त्र आदिको न मिलावे ॥ ४५ ॥ जो पुरुष उसके घरमें भोजन करता है, उसका आसन प्रहण करता है अथवा उसके साथ एक ही शय्यापर शयन

देवतापितृभूतानि तथानभ्यर्च्य योऽतिथीन् । भुङ्क्ते स पातकं भुङ्क्ते निष्कृतिस्तस्य नेष्यते ॥ ४७ ब्राह्मणाद्यास्तु ये वर्णास्त्वधर्मादन्यतोपुरवाः । यान्ति ते नप्रसंज्ञी तु हीनकर्मस्ववस्थिताः ॥ ४८ चतुर्णा यत्र वर्णानां मैत्रेयात्यन्तसङ्करः । तत्रास्या साधुवृत्तीनापुपघाताय जायते ॥ ४९ अनभ्यर्च्य ऋषीन्देवान्यित्भृतातिर्धीस्तथा । यो भुङ्क्ते तस्य सँक्लापात्पतन्ति नस्के नराः ॥ ५० तस्मादेतात्रसे नप्नांस्वयीसन्त्यागदूषितान् । सर्वदा वर्जयेत्प्राज्ञ आलापस्पर्शनादिषु ॥ ५१ श्रद्धावद्धिः कृतं यह्नाहेवान्पितृपितामहान् । न प्रीणयति तच्छाद्धं यद्येभिरवलोकितम् ॥ ५२ श्र्यते च पुरा ख्यातो राजा शतधनुर्भृति । पत्नी च शैट्या तस्याभृदतिधर्मपरायणा ॥ ५३ पतिव्रता महाभागा सत्यशौचदयान्विता । सर्वलक्षणसम्पन्ना विनयेन नयेन च ॥ ५४ स तु राजा तथा सार्द्ध देवदेवं जनार्दनम्। आराधवामास विभुं परमेण समाधिना ॥ ५५ होमैर्जपैस्तथा दानैरुपवासैश्च भक्तितः। पूजाभिश्चानुदिवसं जन्मना नान्यमानसः ॥ ५६ एकदा तु समं स्नातौ तौ तु भार्यापती जले । भागीरथ्यास्तमुत्तीर्णौ कार्त्तिक्यां समुपोषितौ । पाषण्डिनमपश्येतायायान्तं सम्मुखं द्विज ॥ ५७ चापाचार्यस्य तस्यासौ संखा राज्ञो महात्पनः । अतस्त द्वीरवातेन स्वाभावमधाकरोत् ॥ ५८ न तु सा वाम्यता देवी तस्य पत्नी पतिव्रता । उपोषितास्मीति रविं तस्मिन्द्रष्टे ददर्श च ॥ ५९ समागम्य यथान्यायं दम्पती तौ यथाविधि । बिष्णो: पूजादिकं सर्वं कृतवन्तौ द्विजोत्तम ॥ ६० कालेन गच्छता राजा मधारासौ सपत्रजित् । अन्वारुरोह तं देवी चितास्थं भूपति पतिम् ॥ ६१

करता है वह शीघ्र ही उसीके समान हो जाता है ॥ ४६ ॥ ओ मनुष्य देवता, पितर, भूतगण और अतिथियोंका पूजन किये बिना खयं भोजन करता है वह पापमय भोजन करता है; उसकी शुभगति नहीं हो सकती ॥ ४७ ॥

हः उसकर शुमगात नहां हा सकता ॥ ४७ ॥
जो ब्राह्मणादि वर्ण स्वधर्मको छोड़कर परधर्मीमें प्रवृत्त
होते हैं अथया हीनवृत्तिका अवस्त्रम्बन करते हैं वे 'नम्'
कहल्पते हैं ॥ ४८ ॥ हे मैक्रेय ! जिस स्थानमें चारों वर्णोकर
अस्यन्त मिश्रण हो उसमें रहनेसे पुरुषकी साधुवृत्तियोंका
क्षय हो जाता है ॥ ४९ ॥ जो पुरुष ऋषि, देव, पितृ, भूत,
और अतिथिगणका पूजन किये जिना भोजन करता है
उससे सम्याषण करनेसे भी लोग नरकमें पढ़ते हैं ॥ ५० ॥
अतः बेदत्रयोंके त्यागसे दूषित इन नमेंके साथ प्राज्ञपुरुष
सर्वदा सम्याषण और स्पर्श अदिका भी लगम कर
दे ॥ ५१ ॥ यदि इनकी दृष्टि पड़ जाय तो ब्रद्धानम्
पुरुषोका यत्रपूर्वक किया हुआ श्राद्ध देवता अथवा
पितृपितामहण्याकी तृष्टि नहीं करता ॥ ५२ ॥

सुना जाता है, पूर्वकालमें पृथिबीतलपुर शतधन् नामसे विख्यात एक राजा था। उसको पत्नी दौदया अत्यन्त धर्मपरायणा थी ॥ ५३ ॥ वह महाभागा पतिव्रता, सत्य, शौच और दयासे युक्त तथा विनय और नीति आदि सम्पूर्ण सुरुक्षणोसे सम्पन्न थी ॥ ५४ ॥ उस महारानीके साथ राजा अतयनुने परम-समाधिद्वारा सर्वव्यापक, देवदेव श्रीजनार्दनकी आराधना की ॥ ५५ ॥ वे प्रतिदिन तन्मय होकर अनन्यभावसे होम, जप, दान, उपवास और पूजन आदिहारा भगवानुकी भक्तिपूर्वक आराधना करने लगे ॥ ५६ ॥ हे द्विज] एक दिन कार्तिकी पूर्णियाकी उपवास कर उन दोनों पति-पक्षियोंने श्रीगङ्गाजीमे एक साथ ही स्नाम करनेके अनन्तर बाहर आनेपर एक पाषण्डीको सामने आता देखा ॥ ५७ ॥ यह ब्राह्मण उस मधाला राजाके धनवेंदाचार्यका मित्र था: अतः आचार्यके गौरवक्श राजाने भी उससे मित्रवत् व्यवहार किया ॥ ५८ ॥ किन्तु उसकी पतिवदा पतीने उसका कुछ भी आदर नहीं किया: वह मीन रही और यह सोचकर कि में उपोषिता (उपवासयुक्त) हैं उसे देशकर सूर्यका दर्शन किया ॥ ५९ ॥ हे द्विजोत्तम ! फिर इन स्त्री-पुरुषोने यथारीति आकर भगवान् विष्णुके पूजा आदिक सम्पूर्ण कर्म विधिपूर्वक किये ॥ ६० ॥

कालान्तरमें वह शतुनित् राजा मर गया। तब, देवी शैन्याने भी चितारूढ़ महाराजका अनुगमन किया॥ ६१॥

तयैव तन्त्र्या विस्तो विवाहारम्भतो नुपः ॥ ६४ ततस्मा दिव्यया दृष्ट्या दुष्ट्वा श्वानं निजं पतिम् । विदिशास्त्रं पुरं गत्वा तदवस्यं ददर्श तम् ॥ ६५ तं दृष्ट्रैव महाभागं श्वभृतं तु पति तदा। ददो तस्मै वराहारं सत्कारप्रवर्ण शुभा ॥ ६६ भुझन्दतं तथा सोऽञ्जमतिमृष्टमभीप्सितम्। स्वजातिललितं कुर्वन्बह् चादु चकार वै ॥ ६७ अतीव ब्रीडिता बाला कुर्वता चादु तेन सा । प्रणामपूर्वमाहेदं दिवतं तं कुयोनिजम् ॥ ६८ स्मर्थतां तन्महाराज दाक्षिण्यललितं त्वया । येन श्रयोनिमापन्नो मम चादुकरो भवान् ॥ ६९ पाषिण्डनं समाभाष्य तीर्थक्षानादनन्तरम् । प्राप्तोऽसि कुस्सितां योनिं किन्न स्मरसि तस्त्रभो ॥ ७० · श्रीपराश्य उताच । तयैवं स्मारिते तस्मिन्पूर्वजातिकृते तदा । दथ्यौ चिरमथावाप निर्वेदमतिदुर्लभम् ॥ ७१ निर्विष्णिचित्तस्य ततो निर्गम्य नगराद्वहिः । मरुद्रपतनं कृत्वा शार्गार्ली योनिमागतः ॥ ७२ सापि द्वितीये सम्प्राप्ते वीक्ष्य दिव्येन चक्षुषा । ज्ञात्वा शृगालं ते द्रष्टुं ययी कोलाहलं गिरिम् ॥ ७३ तत्रापि दृष्टा तं प्राह शार्गालीं योनियागतम्। भर्त्तारमपि चार्बङ्गी तनया पृथिवीक्षितः ॥ ७४ अपि स्मरसि राजेन्द्र श्वयोनिस्थस्य यन्पया । प्रोक्तं ते पूर्वचरितं पाषण्डालापसंश्रयम् ॥ ७५

पुनस्तयोक्तं स ज्ञात्वा सत्यं सत्यवतां वरः ।

कानने स निराहारस्तत्याज स्वं कलेवरम् ॥ ७६

स तु तेनापचारेण श्वा जल्ले वसुधाधिपः ।

सा तु जातिस्परा जज्ञे काशीराजसुता शुधा ।

तो पिता दातुकामोऽभूद्वराय विनिवारितः ।

उपोषितेन पाषण्डसँल्लापो यत्कृतोऽभवत् ॥ ६२

सर्वविज्ञानसम्पूर्णा सर्वलक्षणपूजिता ॥ ६३

राजा शतधनुने उपवास-अवस्थामें पाखण्डीसे वार्तात्वप किया था। अतः उस पापके कारण उसने कृतेका जन्म स्थिता॥ ६२॥ तथा वह द्युगलक्षणा काशीनरेशकी कन्या हुई, जो सब प्रकारके विज्ञानसे युक्त, सर्वलक्षणसम्पन्न और जातिस्मरा (पूर्वजन्मका वृत्तान्त जाननेवाली) थी॥ ६३॥ राजाने उसे किसी वरको देनेकी इच्छा की, किन्तु उस सुन्दरीक ही रोक देनेपर यह उसके विवाहादिसे उपरत हो गये॥ ६४॥

तब उसने दिव्य दृष्टिसे अपने पतिको धान हुआ जान विदिशा नामक नगरमें जाकर उसे वहाँ कुलेकी अवस्थामें देखा ॥ ६५ ॥ अपने महाभाग पतिको धानरूपमें देखकर उस सुन्दरीने उसे सत्कारपूर्वक अति उत्तम भोजन कथया ॥ ६६ ॥ उसके दिये हुए उस अति मधुर और इच्छित अन्नको खाकर बह अपनो जातिके अनुकूल नाना प्रकारकी चाटुता प्रदर्शित करने छगा ॥ ६५ ॥ उसके चाटुता करनेसे अत्यन्त संकुचित हो उस बारिकाने कुत्सित योनिमें उत्पन्न हुए उस अपने प्रियतमको प्रणाम कर उससे इस प्रकार कहा — ॥ ६८ ॥ "महाराज ! आप अपनी उस उदारताका समरण कीजिये जिसके कारण आज आप धान-योनिको प्राप्त होकर मेरे चाटुकार हुए हैं ॥ ६९ ॥ हे प्रभो ! क्या आपको यह स्मरण नहीं है कि तीर्थकानके अनन्तर पालण्डीसे वार्तालाय करनेके कारण ही आपको यह कुत्सित योनि मिली है ?" ॥ ७० ॥

श्रीपराशरजी बोले—काशिराजसुनाद्वारा इस प्रकार स्मरण कराये जानेपर उसने बहुत देरतक अपने पूर्वजन्मका चिन्तन किया। तब उसे अति दुर्लभ निवेंद्र प्राप्त दुआ ॥ ७१ ॥ उसने अति उदास चिनसे नगरके बाहर आ प्राण त्याग दिये और फिर श्रीति क्या दिय दृष्टिसे उसे लिया ॥ ७२ ॥ तब, काशिराजकन्मा दिय्य दृष्टिसे उसे दूसरे जनमें श्रीति हुआ जान उसे देखनेक लिये कोलहरू-पर्वतपर गयी ॥ ७३ ॥ वहाँ भी अपने पतिको श्रीति जन्म तेति आपसे उत्पन्न तुआ देख वह सुन्दरी राजकन्या उससे बोली— ॥ ७४ ॥ "हे राजेन्द्र ! श्रान-योनिमें जन्म रेनेपर मैंने आपसे जो पाखण्डसे वार्तालगाविषयक पूर्वजन्मका पूर्वान कहा था क्या वह आपको स्मरण है ?" ॥ ७५ ॥ तब सत्यनिष्ठोंमें श्रेष्ठ राजा शत्यानुने उसके इस प्रकार कहनेपर सारा सत्य वृत्तान्त जानकर निराहार रह बनमें अपना शरीर छोड़ दिया ॥ ७६ ॥

भूयस्ततो वृको जज्ञे गत्वा तं निर्जने वने । स्मारयामास भर्तारं पूर्ववृत्तमनिन्दिता ॥ ७७ न त्वं वृको महाभाग राजा शतधनुर्भवान्। क्षा भूत्वा त्वं शृगालोऽभूर्वृकत्वं साम्प्रतं गतः ॥ ७८ स्मारितेन यदा त्यक्तस्तेनात्मा गुध्रतां गतः । अयापा सा पुनश्चैनं बोधयामास भामिनी ॥ ७९ नरेन्द्र स्मर्यतामात्मा हालं ते गुधचेष्टवा। पाषण्डालापजातोऽयं दोषो यदगुद्यतां गतः ॥ ८० ततः काकत्वमापन्नं समनन्तरजन्मनि । उवाच तन्वी भर्त्तारमुपलभ्यात्मयोगतः ॥ ८१ अशेषभूभृतः पूर्वं वश्या यस्मै बलि रहः । स त्वं काकत्वमापत्रो जातोऽग्र बलिभुक् प्रभो ॥ ८२ एवमेव च काकत्वे स्मारितस्स पुरातनम् । तत्याज भूपतिः प्राणान्ययूरत्यमवाप च ॥ ८३ मयूरत्वे ततस्सा वे चकारानुगति शुभा। दत्तैः प्रतिक्षणं भोज्यैर्वाला तजातिभोजनैः ॥ ८४ ततस्तु जनको राजा वाजिमेधं महाऋतुम्। चकार तस्यावभृथे स्नापयामास तं तदा ॥ ८५ सस्त्रौ स्वयं च तन्बङ्गी स्मारबामास चापि तम् । यश्रासौ श्रृष्ट्गालादियोनि जन्नाह पार्थिव: ॥ ८६ स्पृतजन्मक्रमस्सोऽथ तत्याज स्वकलेबरम् । जज्ञे स जनकस्यैव पुत्रोऽसौ सुमहात्मनः ॥ ८७ ततस्सा पित्तरं तन्वी विद्याष्ट्रार्थयचोदयत् । स चापि कारयामास तस्या राजा स्वयंवरम् ॥ ८८ खबंबरे कते सा तं सम्प्राप्तं पतिमात्मनः । वरवापास भूयोऽपि भर्तुभावेन भाषिती ॥ ८९ बुभुजे च तया सार्द्धं सम्भोगान्नपनन्दनः। पितर्युपरते राज्यं विदेहेषु चकार सः॥ ९० इयाज यज्ञान्सुबहुन्ददौ दानानि चार्थिनाम् । पुत्रानुत्पादयामास युयुधे च सहारिभिः ॥ ९१ राज्यं भुक्ता यथान्यायं पालयित्वा वसुन्धराम् । तत्याज स प्रियात्राणान्संत्रामे धर्मतो नृपः ॥ ९२

फिर वह एक भेड़िया हुआ; उस समय भी अनिन्दिता राजकन्याने उस निर्जन बनमें जाकर अपने पतिको उसके पूर्वजन्मका वृत्तान्त स्मरण कराया॥ ७७॥ [उसने कहा—] "हे महाभाग! तुम भेड़िया नहीं हो, तुम राजा शतभनु हो। तुम [अपने पूर्वजन्योंमें] क्रमशः कुकुर और शृगाल होकर अब भेड़िया हुए हो"॥ ७८॥ इस अकार उसके स्मरण करानेपर राजाने जब मेड़ियेके शरीरको छोड़ा तो गृध-योनिमें जन्म लिया। उस समय भी उसकी निष्पाप भायनि उसे फिर बोध कराया॥ ७९॥ 'हे गेरेन्द्र । तुम अपने स्वरूपका स्मरण करो; इन गृध-, चेष्टाओंको छोड़ो। पासान्दके साथ वार्तालाय करनेके दोषसे ही तुम गृध हुए हो"॥ ८०॥

फिर दूसरे जन्ममें काक-योनिको प्राप्त होनेपर भी अपने पतिको योगबलसे पाकर उस सुन्दरीने कहा — ॥ ८१ ॥ "है प्रभो ! जिनके वशीभूत होकर सम्पूर्ण सामन्तगण नाना प्रकारकी वस्तुर्ण भेंट करते थे वही आप आज काक-योनिको प्राप्त होकर बिल्पोजी हुए हैं"॥ ८२ ॥ इसी प्रकार काक-योनिमें भी पूर्वजन्मका स्मरण कराये जानेपर राजाने अपने प्राण छोड़ दिये और फिर मयूर-योनिमें जन्म लिखा ॥ ८३ ॥

मयूरावस्थामें भी काशिराजकों कन्या उसे क्षण-क्षणमें अति सुन्दर मयूरोजित आहार देती हुई उसकी टहल करने लगी ॥ ८४ ॥ उस समय राजा जनकने अश्वमेध नहमक महायक्षका अनुष्टान किया; उस यक्षमें अवभूथ-खानके समय उस मबूरको खान कराया ॥ ८५ ॥ तब उस सुन्दरीने स्वयं भी खान कर राजाको यह स्मरण कराया कि किस प्रकार उसने श्वान और शृंगाल आदि योनियाँ प्रहण की थीं ॥ ८६ ॥ अपनी जन्म-परम्पराका स्मरण होनेपर उसने अपना जारीर त्याग दिया और फिर महस्मा जनकजीके यहाँ ही पुत्ररूपसे जन्म लिया ॥ ८७ ॥

तब उस सुन्दर्शने अपने पिताको विवाहके लिये प्रेरित किया । उसकी प्रेरणासे राजाने उसके स्वदंबरका आयोजन किया ॥ ८८ ॥ स्वयंवर होनेपर उस राजकन्याने स्वयंवरमें आये हुए अपने उस पतिको पित्र पतिभावसे वरण कर रित्या ॥ ८९ ॥ उस राजवुत्मारने काशिराजसुताके साथ नाना प्रकारके भोग भोगे और फिर पिताके परलोकवासी होनेपर विदेहनगरका राज्य किया ॥ ९० ॥ उसने बहुत-से यह किये, याचकोंको नाना प्रकारसे दान दिये, बहुत-से पुत्र उत्यन्न किये और शत्रुओंके साथ अनेको युद्ध किये ॥ ९१ ॥ इस प्रकार उस राजाने पृथिवीको न्यायानुकूल पालन करते हुए राज्य-भोग किया और अन्तमें अपने प्रिय प्राणींको धर्मयुद्धमें ततश्चितास्यं तं भूयो भर्तारं सा शभेक्षणा । अन्वारुरोह् विधिवद्यथापूर्वं मुदान्विता ॥ 23 ततोऽवाप तथा सार्द्ध राजपुत्र्या स पार्थिवः । ऐन्द्रानतीत्य वै रजेकॉल्लोकान्प्राप तदाक्षयान् ॥ 88 खर्गाक्षयत्वमतुलं दाम्पत्यमतिदुर्लभम्। प्राप्ने पुण्यफले प्राप्य संशुद्धिं तां द्विजोत्तम ॥ 94 एव पाषपडसम्भाषाद्येषः प्रोक्तो मया द्विज । तथाऽश्वमेधावभृथसानमाहात्य्यमेव च ॥ 29 तस्मात्पावपिडिमिः पापैरालापस्पर्शनं त्यजेत्। विशेषतः क्रियाकाले यज्ञादी चापि दीक्षितः ॥ क्रियाहानिगृहे यस्य मासमेकं प्रजायते। तस्यावलोकनासूर्यं पश्येत मतिमान्नरः ॥ 86 कि पुनर्वेस्तु सन्त्यक्ता त्रथी सर्वात्पना द्विज । पाषण्डभोजिभिः पापैर्वेदवादविरोधिभिः ॥ सहालापस्तु संसर्गः सहास्या बातिपापिनी । पाषण्डिभिर्दुराचारैस्तस्मात्तान्परिवर्जयेत् ॥ १०० पाचिष्डनो विकर्मस्थान्वैद्धालव्रतिकाञ्छ्यन् । हैतुकान्यकवृत्तींश वाङ्कान्नेणापि नार्चयेत्॥ १०१

दुरतस्तैस्तुः सम्पर्कस्याज्यश्चाप्यतिपापिभिः । पाषण्डिभिर्दुराचारैस्तस्मात्तान्परिवर्जयेत् एते नग्रास्तवाख्याता दृष्टाः आञ्चोपघातकाः । येवां सम्भावणात्वुंसां दिनपुण्यं प्रणक्यति ॥ १०३ एते पाषण्डिनः पापा न होतानारूपेट् बुधः । पुण्यं नश्यति सम्भाषादेतेषां तद्दिनोद्धवय् ॥ १०४ पुंसां जटाधरणमीण्ड्यवतां वृथैव

मोघाशिनामसिक्कशौचनिराकृतानाम् । तोयप्रदानपितुपिण्डबहिण्कृतानां

> इति श्रीविष्णुपुराणे तृतीयेऽशे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ इति श्रीपरादारमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके

श्रीमति विष्णुमहापुराणे तृतीयोऽशः समाप्तः।

 'प्रच्छमानि च पापानि वैद्याले नाम तद्वम्' अर्धात् छिपे-छिपे पाप करना वैद्याल नामक वत है। जो वैसा करते हैं 'वे विद्याल-बतवाले' कहलाते हैं।

छोड़ा ॥ ९२ ॥ तम उस स्लोचनाने पहलेके समान फिर अपने चितारूढ पतिका विधिपूर्वक प्रसन्न-मनसे अनुगमन किया॥ ९३ ॥ इससे वह एका उस एअकन्यके सहित इन्द्रलोकसे भी उत्कृष्ट अक्षय लोकोंको प्राप्त हुआ ॥ ९४ ॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! इस प्रकार शुद्ध हो जानेपर उसने अतुलनीय अक्षय स्वर्ग, अति दुर्लभ दाम्पत्य और अपने

पूर्वीर्जित सम्पूर्ण पृण्यका फल जात कर लिया ॥ ९५ ॥ हे द्विज ! इस प्रकार यैंने तुमसे पाखण्डीसे सम्बद्धण करनेका दोव और अधमेध-यत्रमें स्नान करनेका महारूप क्र्यन कर दिया ॥ ९६ ॥ इसिलये पाखण्डी और पापाचारियोंसे

कभी वार्तास्त्रप और स्पर्श न करे; विशेषतः नित्य-नैमितिक क्रमेंकि समय और जो यजादि क्रियाओंके लिये दीक्षित हो उसे

तो उनका संसर्ग त्यागना अत्यन्त अववस्यक है।। ९७ ॥ जिसके धरमें एक मासतक नित्यकर्मीका अनुष्ठान ने हुआ हो

उसको देख लेनेपर बुद्धिमान् मनुष्य सूर्यका दर्शन करे ॥ ९८ ॥ फिर जिन्होंने बेटवर्यीका सर्वेधा स्वाग कर दिया है तथा जो पासप्तियोक्त अत्र साते और वैदिक महकर विरोध करते हैं उन पापालाओंके दर्शनादि करनेपर तो कहना ही क्या

है ? ॥ ९९ ॥ इन दूराचारी पासन्डियोंके साथ वार्तालय करने, सम्पर्क रखने और उठने-बैठनेमें महान् पाप होता है; इसल्पि इन सब बातोका त्याग करे॥ १००॥ पाखण्डी, विकर्मी, विडाल-जतवाले,* दुष्ट, स्वार्थी और बगुल्प-भक्त

लोगोंका वाणीसे भी आदर न करे ॥ १०१ ॥ इन पासप्डी, दुराचारी और अति पापियोका संसर्ग दुरहीसे त्यागने योग्य है । इसिल्म्ये इनका सर्वदा त्याग करे ॥ १०२ ॥

इस प्रकार मैंने तुमसे नमोंको व्यास्था की, जिनके दर्शनमात्रसे आद्ध नष्ट हो जाता है और जिनके साथ सम्मापण करनेसे मनुष्यका एक दिनका पुण्य श्रीण हो जाता है ॥ १०३ ॥ ये पाखण्डी बड़े पापी होते हैं, बुद्धिमान् पुरुष इनसे कभी

सम्भावण न करे । इनके साथ सम्भावण करनेसे उस दिनका

पुष्य नष्ट हो जाता है ॥ १०४ ॥ जो बिना कारण हो जटा धारण करते अथवा पृंह मुझते हैं, देवता, अतिबि आदिको भीजन कराये बिना खर्य ही भोजन कर छेते हैं. सब प्रकारसे शीचहीन

हैं तथा जल-दान और पितृ-पिण्ड आदिसे भी बहिष्कृत हैं, उन सम्भाषणाद्वि नरा नरकं प्रयास्ति ॥ १०५ िकोगोसे वार्वालाप करनेसे भी लोग नरकमें जाते हैं ॥ १०५ ॥



श्रीमञ्जारायणाय नमः

श्रीविष्णुपुराण

चतुर्थ अंश

पहला अध्याय

वैवस्त्रतमनुके वंशका विवरण

श्रीमैत्रेय उवाच

भगवन्यत्ररैः कार्यं साधुकर्मण्यवस्थितैः। तन्महां गुरुणाख्यातं नित्यनैमित्तिकात्मकम्॥ १ वर्णधर्मास्तथाख्याता धर्मा ये चाश्रमेषु च। श्रोतुमिच्छाम्यहं वेशं राज्ञां तद् ब्रृहि मे गुरो ॥ २

औपरासर उवाच

मैत्रेय श्रृयतामयमनेकयज्वश्र्तिरधीरभूपाला-लङ्कृतो ब्रह्मदिर्मानवो वंशः ॥ ३ ॥ तदस्य वंशस्यानुपूर्वीमशेषवंशपापप्रणाशनाय मैत्रेयैतां कथां शृष्यु ॥ ४ ॥

तद्यश्वा सकलजगतामादिरनादिभूतसः ऋग्य-जुस्सामादिमयो भगवान् विष्णुस्तस्य ब्रह्मणो पूर्तं रूपं हिरण्यगभी ब्रह्माण्डभूतो ब्रह्मा भगवान् प्राग्वभूव ॥ ५ ॥ ब्रह्मणश्च दक्षिणाङ्गुष्ठजन्मा दक्षप्रजापतिः दक्षस्याण्यदितिरदितेविवस्वान् विवस्ततो मनुः ॥ ६ ॥ मनोरिक्ष्वकुनृगभृष्ठ-अर्थातिनरिष्यन्तप्रांशुनाभागदिष्टकरूपपृष्धाख्या दश्चावभूवः ॥ ७ ॥

हर्ष्टिं च मित्रावसणयोर्मनुः पुत्रकामश्चकार ॥ ८॥ तत्र ताबदपहुते होतुरपचारादिला नाम कन्या बभूव ॥ ९ ॥ सैव च मित्रावरणयोः प्रसादात्सुद्युन्नो नाम मनोः पुत्रो मैत्रेय आसीत् ॥ १० ॥ पुनश्चेश्वरकोपात्स्वी सती सा तु सोमसुनोर्व्धस्याभ्रमसमीपे वभाम ॥ ११ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले—हे भगवन्! सत्कर्ममें प्रवृत रहनेवाले पुरुषींको जो करने चाहिये ७२ सम्पूर्ण नित्य-नैमित्तिक कर्मीका आपने वर्णन कर दिया ॥ १ ॥ हे गुर्वे ! आपने वर्ण-धर्म और आश्रम-धर्मीको व्याख्या भी कर दी। अब मुझे राजवंशींका विवरण सुननेकी इच्छा हैं, अतः उनका वर्णन कीजिये ॥ २ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे मैनेय ! अब तुम अनेकीं यहकर्ता, श्रूप्तीर और धैर्यशाली भूपालोंसे सुशोधित इस मनुवंशका वर्णन सुनो जिसके आदिपुरुष श्रीब्रह्माजी है॥३॥ हे मैनेय ! अपने वंशके सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेके लिये इस वंश-परम्पराकी कथाका क्रमशः श्रूपण करो॥४॥

उसका विवरण इस प्रकार है—सकल संसारके आदिकारण भगवान् विष्णु है। वे अनादि तथा प्रस्कृ-साम-यजु-स्वरूप है। उन ब्रह्मस्वरूप भगवान् विष्णुके मृत्तेरूप ब्रह्मान्डमय हिरण्यगर्थ भगवान् ब्रह्मानी सबसे पहले प्रकट हुए॥ ५॥ ब्रह्मानीके दाये अगृठेसे दक्षप्रजापति हुए, दक्षसे अदिति हुई तथा अदितिसे विवस्तान् और विवस्तान्से मनुका जन्म हुआ॥ ६॥ मनुके इश्याकु, नृग, धृष्ट, शर्माति, नरिष्यन्त, प्रांशु, नाभाग, दिष्ट, करूप और प्रांध नामक दस पुत्र हुए॥ ७॥

मनुने पुत्रकी इच्छासे मिन्नाबरण नामक दो देवताओं के यहका अनुष्ठान किया ॥ ८ ॥ किन्तु होताके विपरीत सङ्करनासे यहामें विपरीय हो जानेसे उनके 'इस्म' नामकी कन्या हुई ॥ १ ॥ हे मैत्रेय ! मिन्नाबरणकी कृपासे वह इस्म ही मनुका 'सूध्रम' नामक पुत्र हुई ॥ १० ॥ फिर गतादेवजीके कोष (कोषप्रयुक्त शाप) से वह स्त्री होकर चन्द्रमाफ पुत्र सुधके आश्रमके निकट धूमने रूपी ॥ ११ ॥

सानुरागश्च तस्यां बुधः पुरूरवसमात्मजमुत्पा-दयामास ॥ १२ ॥ जातेऽपि तस्मिन्नमिततेजोभिः परमर्षिभिरिष्टिमयः ऋङ्मयो यजुर्मयस्माम-मयोऽथर्वणमयस्मवंदेदमयो मनोमयो ज्ञानमयो न किञ्चिन्मयोऽन्नमयो भगवान् यज्ञपुरूवस्वरूपी सुद्युप्तस्य पुंस्त्वमभिलवद्भिर्वथावदिष्टस्तत्प्रसादा-दिला पुनरपि सुद्युप्नोऽभवत् ॥ १३ ॥ तस्याप्यु-त्कलगयविनतास्त्रयः पुन्ना बभूवः ॥ १४ ॥ सुद्युप्तस्तु स्त्रीपूर्वकत्वाद्वाज्यभागं न लेभे ॥ १५ ॥ तत्पित्रा तु वसिष्ठवचनात्प्रतिष्ठानं नाम नगरं सुद्युप्ताय दत्तं तद्यासौ पुक्तरवसे प्रादात् ॥ १६ ॥

तदन्वयाश क्षत्रियासार्वे दिक्ष्यभवन् । पृषद्यस्तु मनुपुत्रो गुरुगोवधाच्छ्रद्रत्वमगमत् ॥ १७ ॥ मनोः पुत्रः करूषः करूपात्कारूपाः क्षत्रिया महाबल-पराक्रमा बभूवुः ॥ १८ ॥ दिष्टपुत्रस्तु नाभागो वैश्यतामगमत्तस्माद्वलन्थनः पुत्रोऽभवत् ॥ १९ ॥ बलम्बनाद्वत्सप्रीतिस्दारकीर्त्तिः ॥ २० ॥ वत्सप्रीतेः प्रांशुरभवत् ॥ २१ ॥ अजापतिश्च प्रांशोरेकोऽभवत् ॥ २२ ॥ ततश्च खनित्रः ॥ २३ ॥ तस्माद्याक्षुषः ॥ २४ ॥ चाक्षुषाद्याति-बलपराक्रमो विंद्योऽभवत् ॥ २५ ॥ ततो विविशकः ॥ २६ ॥ तस्पाद्य खनिनेत्रः ॥ २७ ॥ ततश्चातिविभूतिः ॥ २८ ॥ अतिविभूतेरति-बलपराक्रमः करन्धमः पुत्रोऽभवत् ॥ २९ ॥ तस्पाद्य्यविक्षित् ॥ ३० ॥ अविक्षितोऽप्यति-बलपराक्रमः पुत्रो मस्तो नामाभवत्; यस्येपावद्यापि इलोको गीयेते ॥ ३१ ॥ मरुतस्य यथा यज्ञस्तथा कस्याभवद्भवि ॥ ३२ ॥ सर्व हिरण्मयं यस्य यज्ञवस्त्वतिशोभनम् ॥ ३२ अमाद्यदिन्द्रस्सोमेन दक्षिणाभिर्द्विजातयः। मस्तः परिवेष्टारसस्दस्याश्च दिवौकसः ॥ ३३

स मस्त्रश्चक्रवर्ती मरिष्यन्तनामानं पुत्रमवाप ॥ ३४ ॥तस्माच दमः ॥ ३५ ॥दमस्य पुत्रो राजवर्द्धनोः जज्ञे ॥ ३६ ॥ राजवर्द्धनात्सुवृद्धिः ॥ ३७ ॥ बुधने अनुरक्त होकर उस स्त्रीसे पुरुरवा नामक पुत्र उसक किया॥ १२॥ पुरुरवाके जन्मके अनक्तर भी परमर्षिगणने सुद्युसको पुरुषत्वलभक्ती आर्काक्षासे क्रतुमय ऋग्यजुःसामाधर्वमय, सर्ववेदमय, मनोमय, ज्ञानमय, अञ्चमय और परमार्थतः अकिञ्चित्मय भगवान् यञ्चपुरुषका यथावत् यजन किया। तब उनकी कृपासे इला फिर भी सुद्युस हो गयी॥ १३॥ उस (सुद्युस) के भी उत्कल, गय और विनत नामक तोन पुत्र हुए॥ १४॥ पहले स्त्री होनेके कारण सुद्युसको राज्याधिकार प्राप्त नहीं हुआ॥ १५॥ वसिष्ठजीके कड़नेसे उनके पिताने उन्हें प्रतिष्ठान नामक नगर दे दिया था, तही उन्होंने पुरुरवाको दिया॥ १६॥

पुरूरवाको सन्तान सम्पूर्ण दिशाओंमें फैले हुए क्षत्रियगण हुए । मनुका पृषध नामक पुत्र गुरुकी गौका वध करनेके कारण शूद्र हो गया॥ १७॥ मनुका पुत्र करूप था। करूपसे कारूप नामक महाबली और पराक्रमी क्षत्रियगण उत्पन्न हुए ॥ १८ ॥ दिष्टका पुत्र नाभाग वैरूप हो गया था; उससे बलन्धन नामका पुत्र हुआ ॥ १९ ॥ वलन्धनसे महान् कीर्तिमान् वत्सप्रीति, वत्सप्रीतिसे प्रांशु और प्रांशुसे प्रजापति नामक इकल्पैवा पुत्र हुआ॥२०—२२॥ प्रजापतिसे खनित्र, सनित्रसे चाशुष तथा चाशुषसे अति बल-पराक्रम-सम्पन्न विश हुआ॥२३---२५॥ विंशसे विविशक, विविशकसे खनिनेत्र, सनिनेत्रसे अतिविभृति और अतिविभृतिसे अति बलवान् और शुरवीर करन्यम नामक पुत्र हुआ॥ २६ — २९॥ करत्वमसे अविक्षित् हुआ और अविक्षित्के मरून नामक अति बल-पराक्रमयुक्त पुत्र हुआ, जिसके विषयमें आजकरू भी ये दो श्लोक गाये जाते हैं ॥ ३०-३२ ॥

'मरुतका जैसा यश हुआ था वैसा इस पृथिवीपर और किसका हुआ है, विसकी सभी याजिक वस्तुएँ सुवर्णमय और अति शुन्दर थीं॥ ३२ ॥ उस वज़में इन्द्र सीमरसते और ब्राह्मणगण दक्षिणासे परितृश हो गये थे, तथा उसमें मरुद्रण परोसनेवाले और देवनण सदस्य थे'॥ ३३॥

उस चक्रवर्ती मरुतके नरिश्यक्त नामक पुत्र हुआ तथा नरिष्यन्तके दम और दमके राजवर्द्धन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ ३४—३६ ॥ राजवर्द्धनसे सुवृद्धि, सुवृद्धिसे सुबृद्धेः केवलः ॥ ३८ ॥ केवलात्सुधृति-रभूत् ॥ ३९ ॥ ततश्च नरः ॥ ४० ॥ तस्माचन्द्रः ॥ ४९ ॥ ततः केवलोऽभूत् ॥ ४२ ॥ केवला-द्वश्यमान् ॥ ४३ ॥ बन्युमतो वेगयान् ॥ ४४ ॥ वेगवतो बुधः ॥ ४५ ॥ ततश्च तृणबिन्दुः ॥ ४६ ॥ तस्याप्येका कन्या इलविला नाम ॥ ४७ ॥ ततश्चालम्बुसा नाम वरापररा-स्तृणबिन्दुं भेजे ॥ ४८ ॥ तस्यामप्यस्य विशालो जहे यः पुरी विशालां निर्ममे ॥ ४९ ॥

हेमचन्द्रश्च विशालस्य पुत्रोऽभवत् ॥ ५० ॥ ततश्चन्द्रः ॥ ५१ ॥ तत्तनयो धूम्राक्षः ॥ ५२ ॥ तस्यापि सृक्षयोऽभूत् ॥ ५३ ॥ सृक्षयात्सहदेवः ॥ ५४ ॥ ततश्च कृशाश्चो नाम पुत्रोऽभवत् ॥ ५५ ॥ सोमदत्तः कृशाश्चाज्ज्ञते योऽश्वमेषानां शतमाजहार ॥ ५६ ॥ तत्पुत्रो जनमेजयः ॥ ५७ ॥ जनमेजयात्सुमतिः ॥ ५८ ॥ एते वैशालिका भूभृतः ॥ ५९ ॥ श्लोकोऽप्यत्र गीयते ॥ ६० ॥

तृणविन्दोः प्रसादेन सर्वे वैशालिका नृपाः । दीर्घायुर्वे महात्मानो वीर्यवन्तोऽतिधार्मिकाः ॥ ६१

शर्यातेः कन्या सुकन्या नामाभवत् यामुपयेमे च्यवनः ॥ ६२ ॥ आनर्त्तनामा परमधार्मिक-श्शर्यातिपुत्रोऽभवत् ॥ ६३ ॥ आनर्त्तस्यापि रेवतनामा पुत्रो यज्ञे योऽसावानर्त्तविषयं बुभुजे पुरी च कुशस्थलीमध्युवास ॥ ६४ ॥

रेवतस्यापि रैवतः पुत्रः ककुश्चिनामा धर्मात्मा भ्रातृशतस्य ज्येष्ठोऽभवत् ॥ ६५ ॥ तस्य रेवती नाम कन्याभवत् ॥ ६६ ॥ स तामादाय कस्येय-मर्हतीति धगवन्तमब्जयोनि प्रष्टुं ब्रह्मलोकं जगाम ॥ ६७ ॥ तावद्य ब्रह्मणोऽन्तिके हाहाह्डूसंज्ञाभ्यां गन्धवंभ्यामतितानं नाम दिव्यं गान्धवंमगीयत ॥ ६८ ॥ तद्य ब्रिमार्गपरिकृतैरनेकयुगपरिवृत्तिं तिष्ठन्नपि रैवतस्थुण्वन्मुहूर्तीमव मेने ॥ ६९ ॥

ागीतावसाने च भगवन्तमकायोनि प्रणम्य रैवतः

केवल और केवलसे सुघृतिका जन्म हुआ ॥ ३७— ३९ ॥ सुघृतिसे नर, नरसे चन्द्र और चन्द्रसे केवल हुआ ॥ ४०— ४२ ॥ केवलसे वन्धुमान्, बन्धुमान्से वेगवान्, वेगवान्से बुध, बुधसे तृणबिन्दु तथा तृणबिन्दुसे पहले तो इलविला नामकी एक कन्या हुई थी, किन्तु पीछे अलम्बुसा नामकी एक सुन्दरी अप्सरा उसपर अनुरक्त हो गयो । उससे तृणबिन्दुके विशाल नामक पुत्र हुआ, जिसने विशाला नामकी पुरी बसायी ॥ ४३ — ४९ ॥

विशालका पुत्र हेमचन्द्र हुआ, हेमचन्द्रका चन्द्र, चन्द्रका धूमाझ, धूमाझका सृद्धय, सृक्षयका सहदेव और सहदेवका पुत्र कृशाश्च हुआ ॥ ५०—५५ ॥ कृशाश्चके सोमदत नामक पुत्र हुआ, जिसने सौ अश्चमेध-यज्ञ किये थे । उससे जनमेजय हुआ और जनमेजयसे सुमितिका जन्म हुआ । ये सब विशालवंशीय राजा हुए । इनके विषयमें यह शलोक प्रसिद्ध है ॥ ५६—६० ॥ 'तृणविन्दुके प्रसादसे विशालवंशीय समस्त राजालोग दीर्घायु, महात्मा, वीर्यवान् और अति धर्मपरायण हुए ॥ ६१ ॥

मनुपुत्र शर्यातिके सुकत्या नामवाली एक कन्या हुई, जिसका विवाद च्यवन ऋषिके साथ हुआ ॥ ६२ ॥ शर्यातिके आनर्त्त नामक एक परम धार्मिक पुत्र हुआ । आनतिके रेवत नामका पुत्र हुआ जिसने कुशस्थली नामकी पुरीमे रहकर आनर्तदेशका राज्यभोग किया ॥ ६३-६४ ॥

रेक्तका भी रेक्त ककुची नामक एक आति धर्मात्मा पुत्र था, जो अपने सौ भाइयोमें सबसे बढ़ा था॥ ६५॥ उसके रेक्तो नामको एक कन्या हुई॥ ६६॥ महाराज रेक्त उसे अपने साथ लेकर बद्धाजीसे यह पूछनेके लिये कि 'यह कन्या किस वरके योग्य हैं बद्धालोकको गये ॥ ६७॥ उस समय ब्रह्माजीके समीप हाह्म और हुहू नामक दो गन्धर्व अतितान नामक दिल्य गान गा रहे थे ॥ ६८॥ वहाँ [गान-सम्बन्धी चित्रा, दक्षिणा और धात्री नामक] त्रिमार्गके परिवर्तनके साथ उनका विलक्षण गान सुनते हुए अनेको युगोंके परिवर्तन-कालतक उहरनेपर भी रेक्तजीको केक्ट एक मुहूर्त ही बोता-सा मालूम हुआ॥ ६९॥

ागान समाप्त हो जानेपर रैंबतने भगवान् कमलयोनिको

कन्यायोग्यं वरमपृच्छत् ॥ ७० ॥ ततश्चासी भगवानकथयत् कथय योऽभिमतस्ते वर इति ॥ ७१ ॥ पुनश्च प्रणम्य भगवते तस्मै यथाभि-मतानात्मनस्स वरान् कथयामास । क एषां भगवतोऽभिमत इति यस्मै कन्यामिमां प्रयक्का-मीति ॥ ७२ ॥

ततः किञ्चिद्वनतिश्वरास्तिसतं भगवानब्ज-योनिसह ॥ ७३ ॥ य एते भवतोऽभिमता नैतेषां साम्प्रतं पुत्रपौत्रापत्यापत्यसन्तितरस्यवनीतले ॥ ७४ ॥ बहूनि तवात्रव गान्धवै शृण्वत-श्रुतुर्युगान्यतीतानि ॥ ७५ ॥ साम्प्रतं महीतले-श्र्वाविद्यतितममनोश्चर्युगमतीतप्रार्थं वर्तते ॥ ७६ ॥ आसन्नो हि कलिः ॥ ७७ ॥ अन्यस्मै कन्यास्त्रमिदं भवतैकािकनािभमताय देयम् ॥७८॥ भवतोऽपि पुत्रमित्रकलत्रमन्तिभृत्य-बन्धुबलकोशादयसमस्ताः काले नैतेनात्यन्त-मतीताः ॥ ७९ ॥ ततः पुनरप्युत्पन्नसाध्वसो सजा भगवन्तं प्रणम्य पत्रच्छ ॥ ८० ॥ भगवन्नेव-मवस्थिते मयेषं कस्मै देयेति ॥ ८१ ॥ ततस्स भगवान् किञ्चदवनम्रकन्यरः कृताञ्चलिर्मृत्वा सर्वलोकगुरुरम्भोजयोनिसह ॥ ८२ ॥

श्रीबद्धोवाच

न ह्यादिमध्यान्तयजस्य यस्य विद्यो वर्ष सर्वमयस्य धातुः । न च स्वरूपं न परं स्वभावं

न चैव सार्र परमेश्वरस्य ॥ ८३

कलामुहूर्तादिमयञ्च कालो

न यद्विभूतेः परिणामहेतुः।

अजन्मनाशस्य सदैकपूर्ते-

रनामरूपस्य सनातनस्य ॥ ८४

यस्य प्रसादादहमच्युतस्य

भूतः प्रजासृष्टिकरोऽन्तकारी।

क्रोधाच रुद्रः स्थितिहेतुभूतो

यस्माच मध्ये पुरुषः परस्मात् ॥ ८५

प्रणास कर उनसे अपनी कन्यांके योग्य वर पूछा ॥ ७०॥। भगवान् ब्रहाने कहा—"दुग्हें जो वर अभिमत हों उन्हें बताओं" ॥ ७१ ॥ तब उन्होंने भगवान् ब्रह्माजीको पुनः प्रणाय कर अपने समस्त अभिमत वरोंका वर्णन किया और पूछा कि 'इनमेंसे आपको कौन वर पसन्द है जिसे मैं यह कन्या दूँ ?'॥ ७२॥

इसपर भगवान् कमल्योनि कुछ सिर झुकाकर मुसकाते हुए बोले—॥७३॥ "तुमको जो-जो वर अभिमत हैं उनमेंसे तो अब पृथिवीपर किसीके पुत्र-पौत्रादिकी सन्तान भी नहीं है।। ७४ ॥ क्योंकि यहाँ गन्धवींका गान सुनते हुए तुम्हें कई चतुर्युग बीत चुके हैं ॥ ७५ ॥ इस समय पृथिवीतरूपर अट्टाईसवें मनुका चतुर्युग प्रायः समाप्त हो चुका है॥७६॥ तथा कलियुगका प्रारम्भ होनेवाला है॥ ७७॥ अब तुम [अपने समान] अकेले ही रह गये हो, अतः यह कृत्या-रत्न किसी और योग्य वरको दो। इतने समयमें तुम्हारे पुत्र, मित्र, कलत, मन्तिवर्ग, भूत्यगण, अन्धुगण, सेना और कोशादिका भी सर्वधा अभाव हो चुका है" ॥ ७८-७९ ॥ तब तो राजा रैवतने अत्यन्त भयुभीत हो भगवान् ब्रह्माजीको पुनः प्रणाम कर पूछा ॥ ८० ॥ 'भगवन् ! ऐसी बात है, तो अब मैं इसे किसकों दूँ ?' ॥ ८१ ॥ तब सर्वलोकगुरु भगवान् कमलपोनि कुछ स्सि द्धकाए हाथ जोड़कर बोले ॥ ८२ ॥

श्रीब्रह्माजीने कहा — जिस अजन्मा, सर्वमय, विधाता परमेश्वरका आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते ॥ ८३ ॥ करूपमूहूर्त्तीदमय काल भी जिसकी विभृतिके परिणामका कारण नहीं हो सकता, जिसका जन्म और मरण नहीं होता, जो सनातन और सर्वदा एकरूप है तथा जो नाम और रूपसे रहित है ॥ ८४ ॥ जिस अच्युतकी कृपासे मैं प्रजावन उत्पत्तिकर्ता है, जिसके क्रोधसे उत्पन्न हुआ रह सृष्टिका अन्तकर्ता है तथा जिस परमात्मासे मध्यमें जगितस्थितिकारी विष्णुरूप पुरुषका

मद्रूपमास्थाय सृजत्यजो यः स्थितौ च योऽसौ पुरुषस्वरूपी ।

स्द्रस्वरूपेण च योऽति विश्वं

धते तथानन्तवपुस्समस्तम् ॥ ८६ पाकाय योऽप्रित्वपुर्पेति लोका-

न्बिभर्ति पृथ्वीवपुरव्ययात्मा ।

िन्सभति पृथ्वीवपुरव्ययात्मा । शक्रादिरूपी परिपाति विश्व-

मर्केन्दुरूपश्च तमो हिनस्ति ॥ ८७

करोति चेष्टारश्चसनस्वरूपी लोकस्य तृप्ति च जलाञ्चरूपी।

लोकस्य तृप्तिं च जलाञ्चरूपी । ददाति विश्वस्थितिसंस्थितस्तु

सर्वावकाशं च नभस्त्वरूपी ॥ ८८

यस्पृत्यते सर्गकृदात्मनैव

यः पाल्यते पालयिता च देवः । स्मेरियतेऽसम्बन्धी

विश्वात्मकसंहियतेऽन्तकारी पृथक् त्रयस्यास्य च योऽव्ययात्मा ॥ ८९

यस्मिञ्जगद्यो जगदेतदाद्ये

यशाश्रितोऽस्मिञ्चगति स्वयम्भूः । ससर्वभृतप्रभवो धरित्र्यां

स्वांशेन विष्णुर्नृपतेऽवतीर्णः ॥ ९०

कुशस्थली या तव भूप रम्या पुरी पुराभूदमरावतीव । सा द्वारका सम्प्रति तत्र चास्ते

स केशवांशो बलदेवनामा॥ ९१

तस्मै त्वमेनां तनयां नरेन्द्र

प्रथच्छ माथामनुजाय जायाम् । इलाच्यो वरोऽसौ तनया तवेयं

स्त्रीरलभूता सदृशो हि योगः॥ ९२

श्रीपराशर डवाच

इतीरितोऽसौ कमलोद्धवेन

ा भुवं समासाद्य पतिः प्रजानाम् । ददर्श ह्रस्यान् पुरुषान् विरूपा-

प्यस्य कृत्यान् पुरुषान् ।यक्तयाः त्राच्यान् सस्यस्यव्यविवेकवीर्यान् ॥ ९३ प्रादुर्भाव हुआ है ॥ ८५ ॥ ्जो अजन्मा मेरा रूप धारणकर संसारकी रचना करता है, स्थितिके समय जो पुरुषरूप है तथा जो स्टब्स्पसे सम्पूर्ण विश्वका प्रास कर

जाता है एवं अनन्तरूपसे सम्पूर्ण जगत्को धारण करता है ॥ ८६ ॥ जो अञ्चयातमा पाकके लिये अग्निरूप हो जाता है, पृथिबीरूपरो सम्पूर्ण सोसोको धारण करता है,

इन्द्रादिरूपसे विश्वका पालन करता है और सूर्य तथा चन्द्ररूप होकर सम्पूर्ण अन्धकारका नाश करता

है ॥ ८७ ॥ जो श्वास-प्रश्वासकपसे जीवोंमें चेष्टा करता है, जल और अञ्चलपसे लोककी तृष्टि करता है तथा विश्वकी स्थितिमें संलग्न रहकर जो आकाशकपसे

सबको अवकाश देता है॥ ८८॥ जो सृष्टिकर्ती होकर भी विश्वरूपसे आप ही अपनी रचना करता है, जगत्का पालन करनेवाला होकर भी आप ही पालित होता है तथा संहारकारों होकर भी स्वयं ही संहत

होता है और जो इन तीनोंसे पृथक् इनका अविनाशो आत्मा है।। ८९ ॥ जिसमें यह जगत् स्थित है, जो अदिपुरुष जगत्-स्वरूप है और इस जगत्के ही

आश्रित तथा स्वयम्भ है, हे नृषते ! सम्पूर्ण भूतीका

उद्भवस्थान वह विष्णु धरातलमें अपने अंशसे अवतीर्ण हुआ है ॥ ९० ॥

हे राजन्। पूर्वकालमें तुम्हारी जो अमरावतीके समान कुशस्थली नामकी पुरी थी वह अब हारकापुरी हो गयी है। वहीं वे बलदेव नामक भगवान् विष्णुके अंश विराजपान् है॥ ९१॥ हे नरेन्द्र! तुम यह कन्या उन मायामानव श्रीबलदेवजीको प्रतीरूपसे दो। ये बलदेवजी संसारमें अति प्रशंसनीय है और तुम्हारी कन्या भी सियोंमें स्वस्वरूपा है, अतः इनका योग सर्वथा उपयुक्त है॥ ९२॥

श्रीपराशरजी बोले—भगवान् ब्रह्माजीके ऐसा कहनेपर प्रजापति रैवत पृथिवीतलपर आये तो देशा कि सभी मनुष्य छोटे-छोटे, कुरूप, अल्प-तेजोमय, अल्पवीर्य तथा विवेकतीन हो गये हैं॥ १३॥ कुशस्थली तां च पुरीमुपेत्य दृष्ट्वान्यरूपां प्रददौ स कन्याम् । सीरायुधाय स्फटिकाचलाभ-

वक्षःस्थलायातुलधीनीन्द्रः ॥ ९४

उद्यप्रमाणामिति तामवेक्ष्य स्वलाङ्गलाग्रेण च तालकेतुः । विनप्रयामास ततश्च साधि बभूव सद्यो वनिता यथान्या ॥ ९५ तां रेवर्ता रैवरभूपकन्यां सीरायुषोऽसां विधिनोपयेमे । दत्त्वाश्च कन्यां स नृपो जगाम्

हिमालयं वै तपसे घृतातमा ॥ ९६

अतुल्बुद्ध गताराज रैकतने अपनी कुशस्थली नामकी पुरी और ही प्रकारकी देखी तथा स्फटिक-पर्वतके समान जिनका वक्षःस्थल है उन भगवान् हलायुक्को अपनी कन्या दे दी॥ ९४॥ भगवान् बल्देकवीने उसे बहुत केंची देखकर अपने हलके अपभागसे दबाकर नीची कर ली। तब रेबती भी तत्कालीन अन्य सियोंके समान (छोटे शरीरकी) हो गयी॥ ९५॥ तदनस्तर बल्दामजीने महाराज रैवतको कन्या रेवतीसे विधिपूर्वक विवाह किया नथा एजा भी कन्यादान करनेके अनस्तर एकाप्यवित्तसे तपस्या करनेके लिये हिमालयपर चले गये॥ ९६॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे प्रथमोऽभ्यायः॥ १ ॥

दूसरा अध्याय

इक्ष्वाकुके वंशका वर्णन तथा सौभरिवरित्र

श्रीपराञ्चर उवाच

यावस ब्रह्मलोकात्स ककुची रैवतो नाभ्येति तावत्पुण्यजनसंज्ञा राक्षसास्ताभस्य पुरी कुशस्थलीं निजश्चः ॥ १ ॥ तद्यास्य भ्रातृशतं पुण्यजन-त्रासादिशो भेजे ॥ २ ॥ तदन्वयाश्च क्षत्रिया-सर्विदेश्वभवन् ॥ ३ ॥ शृष्टस्यापि धार्षृकं क्षत्रमधवत् ॥ ४ ॥ नाभागस्यात्मजो नाभाग-संज्ञोऽभवत् ॥ ५ ॥ तस्याप्यम्बरीषः ॥ ६ ॥ अन्वरीषस्यापि विरूपोऽभवत् ॥ ७ ॥ विरूपा-त्पृषदश्चो जज्ञे ॥ ८ ॥ ततश्च रश्चीतरः ॥ ९ ॥ अत्रायं श्लोकः — एते क्षत्रप्रसूता वै पुनश्चाङ्गिरसाः स्मृताः । रश्चीतराणां प्रवराः क्षत्रोपेता द्विजातयः ॥ १० ॥ इति

क्षुतवतश्च मनोरिक्ष्वाकुः पुत्रो जज्ञे ब्राणतः ॥ ११ ॥ तस्य पुत्रशतप्रधाना विकुक्षिनिमिदण्डा-ख्यास्त्रयः पुत्रा बभूदुः ॥ १२ ॥ शकुनिप्रमुखाः पद्धाशत्पुत्रा उत्तरापथरक्षितारो बभूदुः ॥ १३ ॥ श्रीपराञ्चरकी बोले—जिस समय रैवत ककुदी ब्रह्मलोकसे लौटकर नहीं आये ये उसी समय युण्यजन नामक राक्षसोंने उनकी पुरी कुशस्थलीका ध्यस कर दिया॥१॥ उनके सौ भाई पुण्यजन राक्षसोंके भयसे दसों दिशाओं में भाग गये॥२॥ उन्हेंकि वंशमें उत्पन्न हुए क्षत्रियगण समस्त दिशाओं में फैले॥३॥ घृष्टके वंशमें धार्षक नामक धन्न हुए॥४॥

नाभागके नाभाग नामक पुत्र हुआ, नाभागक।
अम्बरीय और अम्बरीयका पुत्र विरूप हुआ, विरूपसे
पृषदश्चका जन्म हुआ तथा उससे रशीतर हुआ
॥ ५—९॥ रथीतरके सम्बन्धमें यह इस्तोक प्रसिद्ध
है—'रथीतरके वंशज शतिय सन्तान होते हुए भी
आंगिरस कहस्त्रचे; अतः वे शत्रोपेत ब्राह्मण
हुए'॥ १०॥

डींकनेके समय मनुकी घाणेन्द्रियसे इश्लाकु नामक पुत्रका जन्म हुआ ॥ ११ ॥ उनके सौ पुत्रोंनेसे विकुक्षि, निर्मि और दण्ड नामक तीन पुत्र प्रधान हुए तथा उनके शकुनि आदि पचास पुत्र उत्तरापथके और शेष चत्वारिशत्ष्टी च दक्षिणापथभूपालाः ॥ १४ ॥ स चेश्वाकुरष्टकायास्त्राद्धभृत्याद्य श्राद्धार्हं मांसमानयेति विकुक्षिमाज्ञापयामास ॥ १५ ॥ स तथेति गृहीनाज्ञो विधृतशरासनो चनमभ्ये-त्यानेकशो मृगान् इत्वा श्रान्तोऽतिक्षुत्परीतो विकुक्षिरेकं शशमभक्षवत् । शेषं च मांसमानीय पित्रे निवेदयामास ॥ १६ ॥

इक्ष्वाकुकुलावार्यो वसिष्ठस्तत्प्रोक्षणाय बोदितः प्राह । अलमनेनामेध्येनामिषेण दुरात्पना तब पुत्रेणेतन्मांसमुपहतं यतोऽनेन शशो भक्षितः ॥ १७ ॥ ततश्चासौ विकुक्षिगुंरुणैवमुक्त-श्शशादसंज्ञामवाप पित्रा च परित्यक्तः ॥ १८ ॥ पितर्युपरते चासाविक्षलामेतां पृथ्वीं धर्मत-श्शशास ॥ १९ ॥ शशादस्य तस्य पुरस्रयो नाम पुत्रोऽभवत् ॥ २० ॥

तस्येदं चान्यत् ॥ २१ ॥ पुरा हि त्रेतायां देवासुरबुद्धमितभीषणमभवत् ॥ २२ ॥ तत्र चातिबिलिभिरसुरैरमराः पराजितास्ते भगवन्तं विष्णुमाराधयाञ्चकुः ॥ २३ ॥ प्रसन्नश्च देवानामनादिनिधनोऽसिलजगत्परायणो नारायणः प्राह ॥ २४ ॥ ज्ञातमेतन्यया युष्पाभिर्यद्भिलिवतं तदर्थमिदं श्रूयताम् ॥ २५ ॥ पुरज्ञयो नाम राजवेंद्शशादस्य तनयः क्षत्रियवरो यस्तस्य शरीरेऽहमंशेन स्वयमेवावतीर्य तानशेषा-नसुरात्रिहनिष्यामित्वज्ञवद्धिः पुरज्जयोऽसुरवधार्थ-मुद्योगं कार्यतामिति ॥ २६ ॥

एतस श्रुत्वा प्रणम्य भगवन्तं विष्णुममसः पुरञ्जयसकाशमाजग्मुरूबुश्चैनम् ॥ २७ ॥ भो भो क्षत्रियवर्यास्माभिरभ्यष्ठितेन भवतास्माक-मरातिवधोद्यतानां कर्तव्यं साहाय्यमिच्छाम-स्तद्भवतास्माकमभ्यागतानां प्रणयभङ्गो न कार्य इत्युक्तः पुरञ्जयः प्राह ॥ २८ ॥ त्रैलोक्यनाथो बोऽयं युष्पाकमिन्द्रः शतक्रतुरस्य यद्यहं स्कन्धाधिरूढो युष्पाकमरातिभिस्सह योत्स्ये तदहं भवतां सहायः स्थाम् ॥ २९ ॥

अइतालीस दक्षिणापथेके शासक हुए ॥ १२—१४ ॥ इक्ष्वाकुने अष्टकाश्राद्धका आरम्भ कर अपने पुत्र विकुक्षिको आशा दीकिश्राद्धके योग्यमांस लाओ ॥ १५ ॥ उसने 'बहुत अच्छा' कह उनकी आशाको शिरोधार्य किया और धनुष-बाग लेकर बनमें आ अनेको मृगोका वथ किया, किंतु अति थका-माँदा और अत्यन्त भूखा होनेके कारण विकुक्षिने उनमेंसे एक शशक (खरगोश) खा लिया और बचा हुआ मोंस लाकर अपने पिताको निवेदन किया ॥ १६ ॥

उस मांसका प्रोक्षण करनेके लिये प्रार्थना किये जानेपर इक्ष्वाकुके कुल-पुरोहित विस्तृत्वाने कहा—''इस अपित्र मांसकी क्या आवश्यकता है ? तुन्हारे दुएला पुत्रने इसे अष्ट कर दिया है, क्योंकि उसने इसमेंसे एक शशक खा लिया है''॥ १७॥ गुरुके ऐसा कहनेपर, सभीसे विकुक्षिका नाम शशाद पड़ा और पिताने उसको त्याग दिया॥ १८॥ पिताके परनेके अनन्तर उसने इस पृथिवीका धर्मानुसार शासन किया॥ १९॥ उस शशादके पुरक्षय नामक पुत्र हुआ ॥ २०॥

पुरञ्जयका भी यह एक दूसरा नाम पड़ा—॥ २१॥ पूर्वकालमें नेतायुगमें एक बार अति भीषण देवासुरसंग्राम हुआ॥ २२॥ उसमें पहाबलवान् दैत्यगणसे पराजित हुए देवताओंने भगवान् विष्णुकी आराधना की॥ २३॥ दब आदि-अन्त-शून्य, अशेष जगत्मतिपालक, श्रीनारायणने देवताओंसे प्रसन्न होकर कहा—॥ २४॥ "आप-लोगोंका वो कुछ अभीष्ट है वह मैंने बान लिया है। उसके विषयमें यह बात सुनियं—॥ २५॥ राजार्ष शशादका जो पुरञ्जय नामक पुत्र है उस वाजियश्रेष्ठके शरीरमें मैं अंशमात्रसे स्वयं अवतीणं होकर उन सम्पूर्ण दैत्योंका नाश करूँगा। अतः तुमलोग पुरञ्जयको दैत्योंके वश्यके लिये तैयार करों ॥ २६॥

यह सुनकर देवताओंने विष्णुभगवान्को प्रणाम किया और पुरक्षावके पास आकर उससे कहा— ॥ २७ ॥ "है श्रित्रयश्रेष्ठ ! हमलोग चाहते हैं कि अपने शत्रुओंके बधमें प्रवृत हमलोगोंकी आप सहायता करें । हम अभ्यागत जनोंका आप मानभंग न करें ।" यह सुनकर पुरक्रयने कहा— ॥ २८ ॥ "ये जो जैलोक्यनाथ शतकतु आपलोगोंके इन्द्र हैं यदि मैं इनके क्रभोगर चढ़कर आपके शत्रुओंने युद्ध कर सक्तु तो आपलोगोंका सहायक हो सकता हूँ"॥ २९ ॥

इत्याकपर्य समस्तदेवैरिन्द्रेण च बाढिमत्येवं समन्वीप्सितम् ॥ ३० ॥ ततश्च शतक्रतोर्वृषरूप-घारिणः ककुदि स्थितोऽतिरोषसमन्वितो भगवत-श्चराचरगुरोरच्युतस्य तेजसाप्यायितो देवासुर-सङ्ग्रामे समस्तानेवासुरान्निजधान ॥ ३१ ॥ यतश्च वृषभककुदि स्थितेन राज्ञा दैतेयबलं निष्दितमतश्चासौ ककुत्स्थसंज्ञामवाप ॥ ३२ ॥ ककुत्स्थस्याय्यनेनाः पुत्रोऽभवत् ॥ ३३ ॥ पृथुरनेनसः ॥ ३४ ॥ पृथोर्विष्टराश्वः ॥ ३५ ॥ तस्यापि चान्द्रो युवनाश्वः ॥ ३६ ॥ चान्द्रस्य तस्य युवनाश्चस्य शावस्तः यः पुरी शावस्ती निवेशयामास ॥ ३७ ॥ शावस्तस्य बृहदश्वः ॥ ३८॥ तस्यापि कुवल्याश्वः॥ ३९॥ योऽसावुदकस्य महर्षेरपकारिणं धुन्धुनामानमसुरं वैष्णवेन तेजसाप्यायितः पुत्रसहस्रैरेकविंशद्धिः परिवृतो जघान धुन्युमारसंज्ञामवाप ॥ ४० ॥ तस्य च तनयास्समस्ता एव धुन्धुमुखनिःश्वासाप्रिना विप्रुष्टा विनेशुः ॥ ४१ ॥ दृढाश्चनदाश्च-

दृहास्राद्धर्यश्वः ॥ ४३ ॥ तस्माच निकुम्भः ॥ ४४ ॥ निकुम्भस्यामिताश्चः ॥ ४५ ॥ ततश्च कुशाश्चः ॥ ४६ ॥ तस्याच प्रसेनजित् ॥ ४७ ॥ प्रसेनजितो युवनाश्चोऽभवत् ॥ ४८ ॥ तस्य चापुत्रस्यातिनिर्वेदान्पुनीनामाश्रममण्डले निवसतो दबालुभिर्मुनिभिरपत्योत्पादनायेष्टिः कृता ॥४९॥ तस्यां च मध्यरात्रौ निवृत्तायां मन्त्रपूतजलपूर्णं कलशं वेदिमध्ये निवेश्य ते मुनयः सुषुपुः ॥ ५० ॥ सुप्तेषु तेषु अतीव तृद्धरीतस्स भूपालस्तमाश्रमं विवेश ॥ ५१ ॥ सुप्तांश्च तानृवीत्रेवोत्यापयामास ॥ ५२ ॥ तद्य कलश-पपरिमेयमाहात्य्यमन्तपूर्तं पपौ ॥ ५३ ॥ प्रबुद्धाश्च ऋषयः पप्रच्छः केनैतन्यन्त्रपूतं वारि पीतम् ॥ ५४ ॥ अत्र हि राज्ञो युवनाश्वस्य पत्नी महाबलपराक्रमं पुत्रं जनयिष्यति । इत्याकर्ण्यं स

कपिलाश्वाश्च त्रयः केवलं शेषिताः ॥ ४२ ॥

यह सुनकर समस्त देवगण और इन्द्रने 'बहुत अच्छा'—ऐसा कहकर उनका कथन स्वीकार कर लिया ।। ३० ।। फिर बृषभ-रूपधारी इन्द्रकीः पीठपर चढ़कर चराचरगुरु भगवान् अच्युतके तेजसे परिपूर्ण होकर राजा पुरज्ञयने रोक्पूर्वक सभी दैत्योंको मार डाला ॥ ३१ ॥ उस राजाने बैलके ककुद् (कन्धे) पर बैठकर दैत्यसेनाका वध किया था, अतः उसका नाम ककुतस्य पढ़ा ॥ ३२ ॥ ककुत्स्थके अनेना नामक पुत्र हुआ ॥ ३२ ॥ अनेनाके पृथु, पृथुके विष्टराश्च, उनके चन्द्र युवनाश्च तथा उस चान्द्र युवनाश्चके ज्ञावस्त नामक पुत्र हुआ जिसने झावस्ती पुरी बसायी थी।। ३४—३७॥ शावसके बृहदश्च तथा बृहदशके कुवलयाश्वका जन्म हुआ, जिसने वैष्णवतेजसे पूर्णता लाभ कर अपने इष्प्रीस सहस्र भुजोंके साथ मिलकर महर्षि उदकके अपकारी धुन्धु नामक दैत्यको मारा था: अतः उनका नाम पुन्युमार हुआ॥ ३८—४०॥ उनके सभी पुत्र धुन्बुके मुखसे निकले हुए नि:श्वासाप्रिसे जलकर मर गये॥ ४१॥ उनमेंसे केवल दृढाश्व, चन्द्राश्व और कॉपलाश्व—ये तीन ही बचे थे ॥ ४२ ॥

दृढाश्वसे हर्यश्व, हर्यश्वसे निकुम्भ, निकुम्भसे अमितःध, अमिताधरे कृशाध, कृशाधरे प्रसेनजित् और प्रसेनजित्से युवनाश्चका जन्म हुआ ॥ ४३—४८ ॥ युवनाश्च निःसन्तान होनेके कारण खिन्न चित्तसे मुनीश्चरेके आश्रमोमें रहा करता था; उसके दुःखसे द्रवीभृत होकर दयान्तु मुनिजनेनि उसके पुत्र उत्पन्न होनेके लिये वज्ञानुष्टाव किया॥४९॥ आधी रातके समय उस यज्ञके समाप्त होनेपर मुनिजन मन्तपूत जलका कलश वेदीमें रखकर सो गये ॥ ५० ॥ इनके सो जानेपर अत्यन्त प्रिपासाकुरु होकर राजाने उस स्थानमें प्रवेश किया । और सोधे होनेके कारण उन ऋषियोको उन्होंने नहीं जगाया॥ ५१-५२ ॥ तथा उस अपरिमित माहतन्यशाली कलशके मन्त्रपूर जलको पी लिया॥५३॥ जागनेपर ऋषियोने पूछा, 'इस मन्त्रपूत जलको किसने पिया है ? ॥ ५४ ॥ इसका पान करनेपर ही युक्ताश्चकी पत्नी महाचलविक्रमंशीलं पुत्र उरपन्न करेगी।' यह सुनकर राजाने कहा— ''मैंने ही बिना जाने यह जल पी लिया है''॥५५॥

राजा अजानता मया पीतमित्याह ॥ ५५ ॥ गर्भश्च युवनाग्रस्योदरे अभवत् क्रमेण च ववृषे ॥ ५६ ॥ प्राप्तसमयश्च दक्षिणं कुक्षिमव-निपतेर्निर्भिद्य निश्चकाम ॥ ५७ ॥ न चासौ राजा ममार ॥ ५८ ॥

जातो नामेष के धास्यतीति ते मुनयः प्रोचुः ॥ ५१ ॥ अथागत्य देवराजोऽव्रवीत् मामयं धास्यतीति ॥ ६० ॥ ततो मान्यातृनामा सोऽभवत् । वक्त्रे चास्य प्रदेशिनी देवेन्द्रेण न्यस्तातां पपौ ॥ ६१ ॥ तां चामृतस्त्राविणीमास्वाद्याद्वैव स व्यवर्द्धत् ॥ ६२ ॥ ततस्तु मान्धाता चक्रवर्ती सप्तद्वीपां महीं बुभुजे ॥ ६३ ॥ तत्रायं इलोकः ॥ ६४ ॥

यावत्सूर्य उद्देत्यस्तं यावश्च प्रतितिष्ठति । सर्व तद्यौवनाश्चस्य मान्यातुः क्षेत्रमुच्यते ॥ ६५

मान्धाता शतिबन्दोर्देहितरे बिन्दुमती-मुपयेमे ॥ ६६ ॥ पुरुकुत्समम्बरीषं मुचुकुन्दं च तस्यां पुत्रत्रयमुत्पादयामास ॥ ६७ ॥ पञ्चाशदु-हितरस्तस्यामेव तस्य नृपतेर्वभूषुः ॥ ६८ ॥

तस्मिन्नसरे बह्नुचश्च सौभिर्माम महर्षि-रन्तर्जले द्वादशाब्दं कालमुवास ॥ ६९ ॥ तत्र चान्तर्जले सम्मदो नामातिबहुष्रजोऽतिमान्नप्रमाणो मीनाधिपतिरासीत् ॥ ७० ॥ तस्य च पुत्रपौत्र-दौहित्राः पृष्ठतोऽम्रतः पार्श्वयोः पक्षपुच्छिरारसां चोपरि भ्रमन्तरतेनैव सदाहर्निशमितिनिर्वृता रेमिरे ॥ ७१ ॥ स चापत्यस्पशिपचीयमानप्रहर्ष-प्रकर्षे बहुप्रकारं तस्य ऋषेः पश्यतस्तैरात्मजपुत्र-पौत्रदौहित्रादिभिः सहानुदिनं सुतरां रेमे ॥ ७२ ॥ अधान्तर्जलावस्थितस्तौभिरिरकाप्रतस्तमाधि-मपहायानुदिनं तस्य मत्स्यस्यात्मजपुत्रपौत्र-दौहित्रादिभिस्सहातिरमणीयतामवेश्व्याचिन्तयत् ॥ ७३ ॥ अहो धन्योऽयमीदृशमनिष्मतं चोन्यन्त-

रमवाप्यैभिरात्मजपुत्रपौत्रदौहित्रादिभिस्सह

रममाणोऽतीवास्माकं स्पृहामुत्पादयति ॥ ७४ ॥

अतः युवनाश्वके उदरमें गर्भ स्थापित हो गया और क्रमशः बढ़ने रूपा ॥ ५६ ॥ यथासमय बालकः राजाको दायीं कोल फाड़कर निकल आया ॥ ५७ ॥ किंतु इससे राजाकी मृत्यु नहीं हुई ॥ ५८ ॥

उसके जन्म लेनेपर मुनियोंने कहा—"यह बालक क्या पान करके जीवित रहेगा ?" ॥ ५९ ॥ उसी समय देवराज इन्द्रने आकर कहा—"यह मेरे आश्रय-जीवित रहेगा' ॥ ६० ॥ उरतः उसका नाम मान्याता हुआ । देवेन्द्रने उसके मुखमें अपनी तर्जनी (अंगूटेके पासकी) अंगुलीका उसके मुखमें अपनी तर्जनी (अंगूटेके पासकी) अंगुलीका आखादन करनेसे वह एक ही दिनमें वह गया ॥ ६१-६२ ॥ तभीसे चक्रवर्ती सान्याता सप्तद्रोपा पृथिवीका राज्य भोगने लगा ॥ ६३ ॥ इसके विषयमें यह इलोक कहा जाता है ॥ ६४ ॥

'जहाँसे सूर्य उदय होता है और जहाँ अस्त होता है वह सभी क्षेत्र युवनाधके पुत्र मान्याताका है' ॥ ६५ ॥

मान्याताने शतिबन्दुकी पुत्री बिन्दुमतीसे विवाह किया और उससे पुरुकुत्स, अम्बरीष और मुचुकुन्द नामक तीन पुत्र उत्पन्न किये तथा उसी (बिन्दुमती) से उनके प्रवास कन्याएँ हुई ॥ ६६—६८॥

उसी समय बहुवच सौमरि नामक महर्षिने बारह वर्षतक जलमें निवास किया ॥ ६९ ॥ उस जलमें सम्पद् नामक एक बहुत-सी सन्तानोबाला और अति दोर्पकाय मत्यसज था ॥ ७० ॥ उसके पुत्र, पौत्र और दौहिय आदि उसके आपे-पीछे तथा इधर-उधर पक्ष, पुच्छ और हिसके ऊपर घूमते हुए अति आनन्दित होकर रात-दिन उसीके साथ क्रीडा करते रहते थे ॥ ७१ ॥ तथा वह भी अपनी सन्तानके सुकोमल स्पर्शरो अल्पन्त हर्ययुक्त होकर उन मुनिश्चरके देखते-देखते अपने पुत्र, पौत्र और दौहित आदिके साथ अहर्निश क्रीडा करता रहता था ॥ ७२ ॥

इस प्रकार जलमें स्थित सौभरि ऋषिने एकव्यतारूप समाधिको छोड़कर रात-दिन उस मतस्यराजकी अपने पुत्र, पौत्र और दौतित्र आदिके साथ अति रमणीय ब्रीहाओंको देखकर विचार किया ॥ ७३ ॥ 'अहो ! यह धन्य है, जो ऐसी अनिष्ट योनिमें उत्पन्न होकर भी अपने इन पुत्र, पौत्र और दौहित्र आदिके साथ निरन्तर रमण करता हुआ हमारे हृदयमें डाह उत्पन्न करता है ॥ ७४ ॥ वयमध्येतं पुत्रादिभिस्सह ललितं रंस्यामहे इत्येवमभिकाङ्गुन् स तस्मादत्तर्जलान्निष्कम्य सन्तानाय निवेष्टुकामः कन्यार्थं मान्धातारं राजानमगच्छत्॥ ७५॥

आगमनश्रवणसमनन्तरं चोत्थाय तेन राज्ञा सम्यगर्व्यादिना सम्यूजितः कृतासनपरिश्रहः सौभरिकताच राजानम् ॥ ७६ ॥

सौभरिखाच

निवेष्टुकामोऽस्मि नरेन्द्र कन्यां प्रयक्त्र मे मा प्रणयं विभाङ्कीः ।

न हार्थिनः कार्यवशादुपेताः ककुतस्थवंशे विमुखाः प्रथान्ति ॥ ७७

अन्वेऽपि सन्त्येव नृपाः पृथिव्यां

मान्धातरेषां तनयाः प्रस्ताः । कि त्वर्धिनामर्थितदानदीक्षा-

कृतव्रतं रलाध्यमिदं कुलं ते ॥ ७८

ञ्चतार्थसंख्यास्तव सन्ति कन्या-स्तासां ममैकां नृपते प्रयच्छ । यत्प्रार्थनाभङ्गभयाद्विभेषि

तस्मादहं राजवरातिदुःस्नात् ॥ ७९

श्रीपराश्चर उचान

इति ऋषिवचनमाकण्यं स राजा जराजर्जरित-देहमृषिमालोक्य प्रत्याख्यानकातरस्तस्माध शायभीतो विभ्यत्किञ्चिद्धोमुखिश्चरं दच्यौ च ॥ ८०॥

. सीभरिठवाच

नरेन्द्र कस्मात्समुपैषि चिन्ता-मसह्यमुक्तं न मयात्र किञ्चित् । यावश्यदेया तनया तथैव कतार्थता नो यदि किं न लब्या ॥ ८१

श्रीपरादार उवाच

अथ तस्य भगवतश्शापभीतस्सप्रश्रयस्तमुवा-चासौ राजा ॥ ८२ ॥ हम भी इसी प्रकार अपने पुतादिके साथ अति लिलत क्रीहाएँ करेंगे।' ऐसी अभिलावा करतें हुए वे उस जलके भीतरसे निकल अत्ये और सन्तानार्थ गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेकी कामनासे कन्या ब्रहण करनेके लिये राजा मान्याताके पास आये॥ ७५॥

मुनिवरका आगमन सुन राजाने उठकर अर्घ्यदानादिसे उनका मली प्रकार पूजन किया। तदनन्तर सीमरि मुनिने असमा प्रहण करके राजासे कहा—॥७६॥

सीभरिजी बोले—हे एजन्! मैं कन्या-परिम्नटका
अभिलापी हूँ, अतः तुम मुझे एक कन्या दो; भेरा प्रणय
भङ्ग मत करो। ककुल्स्ववंदामें कार्यवदा आया हुआ
कोई मी प्रार्थी पुरुष कभी खाली हाथ नहीं लौटता
॥ ७७॥ हे मान्धाता! पृथिवीतलमें और भी अनेक
राजालोग हैं और उनके भी कन्याएँ उत्पन्न हुई हैं; किंतु
याचकोंको माँगी हुई वस्तु दान देनेके निमममें दृढमित्रा
तो यह तुम्हारा प्रदासनीय कुल ही है॥ ७८॥ हे
राजन्! तुम्हारे पचास कन्याएँ हैं, उनमेंसे तुम मुझे
केवल एक ही दे दो। है नुपश्रेष्ठ! मैं इस समय

श्रीपराशरजी बोले--- ऋषिके ऐसे वचन सुनकर राजा उनके जराजींग देहको देखकर शापके भयसे अखीकार करनेमें कातर हो उनसे डरते हुए कुछ नीचेको मुख करके मन-ही-मन चिन्ता करने लगे।। ८०॥

प्रार्थनाभङ्गकी आशङ्कासे उत्पन्न अतिशय दुःखसे

भयभीत हो रहा है ॥ ७९ ॥

सौभरिजी बोले—हे नरेन्द्र ! तुम चिन्तित क्यों होते हो ? मैंने इसमें कोई असहा बात तो कही नहीं है; जो कन्या एक दिन तुन्हें अवस्य देनी हो है उससे ही यदि हम कृतार्थ हो सके तो तुम क्या नहीं प्राप्त कर सकते हो ? ॥ ८१ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—तत्र भगवान् सौभरिके शापसे भयभीत हो राजा मान्याताने नमतापूर्वक उनसे कहा ॥ ८२ ॥ राजीवाच

भगवन् अस्मत्कुलिस्थितिरियं य एव कन्याभि-रुचितोऽभिजनवान्वरस्तस्म कन्यां प्रदीयते भगवद्याच्या चास्मचनोरथानामध्यतिगोचर-वर्त्तिनी कथमध्येषा सञ्जाता तदेवमुपस्थिते न विद्यः किं कुर्म इत्येतच्यया चिन्यत इत्यभिहिते च तेन भूभुजा पुनिरचिन्तयत् ॥ ८३ ॥ अयमन्योऽ-स्यक्रत्याख्यानोपायो वृद्धोऽधमनिममतः स्त्रीणां किमृत कन्यकानामित्यमुना सिञ्चन्द्यैतद्भिहित-मेवपस्तु तथा करिष्यामीति सिञ्चन्द्य पान्धातार-मुवाच ॥ ८४ ॥ यद्येवं तदादिश्यतामस्माकं प्रवेशाय कन्यान्तःपुरवर्षवरो यदि कन्यैव काचिन्यामिक्षलित तदाहं दारसङ्ग्रहं करिष्यामि अन्यथा चेत्तदलमस्माकमेतेनातीतकालारम्भणे-नेत्यक्त्वा विरराम ॥ ८५ ॥

ततश्च मान्धात्रा मुनिशापशङ्कितेन कन्यान्तःपुर-वर्षवरस्तमाज्ञप्तः ॥ ८६ ॥ तेन सह कन्यान्तःपुरं प्रविशत्रेव भगवानित्तलसिद्धगन्धवेंभ्योऽति-शयेन कमनीयं रूपमकरोत् ॥ ८७ ॥ प्रवेश्य च तमृषिमन्तःपुरं वर्षवरस्ताः कन्याः प्राह ॥ ८८ ॥ भवतीनां जनियता महाराजस्तमाञ्ञापयित् ॥ ८९ ॥ अयमस्मान् ब्रह्मर्षिः कन्यार्थं समभ्यागतः ॥ ९० ॥ मया चास्य प्रतिज्ञातं यद्यस्पत्कन्या या काव्वद्भगवन्तं वरयित् तत्कन्यायाञ्चन्दे नाहं परिपन्थानं करिष्यमी-त्याकपर्यं सर्वा एवताः कन्याः सानुरागाः सप्रमदाः करेणव इवेभयूथपति तमृषिमहमहमिकया वरयाम्बभृवुरूषुश्च ॥ ९१ ॥ अलं भगिन्योऽहिपमं वृणोपि वृणोम्यहं नैष तवानुरूपः ।

ममैष भर्ता विधिनैव सुष्ट-

वृतो मयायं प्रथमं मयायं

स्सृष्टाहमस्योपशमं

गृहं विशन्नेव विहन्यसे किम्।

प्रयाहि ॥ १२

राजा बोले—भगवन् ! हमारे कुलकी यह रीति है कि जिस सत्कुलोत्पन्न बरको कत्या पसन्द करती है वह उसीको दी जाती है । आपकी प्रार्थना तो हमारे मनोरथीसे भी परे है। न जाने, किस प्रकार यह उत्पन्न हुई है ? ऐसी अवस्थामें मैं नहीं जानता कि क्या कहें ? बस, मुझे यही चिन्ता है। महाएज मान्धाताके ऐसा कहनेपर मनिवर सौंभरिने विचार किया — ॥ ८३ ॥ 'मझको टाल देनेका यह एक और ही उपाय है। 'यह बुढ़ा है, प्रौढ़ा खियाँ भी इसे पसन्द नहीं कर सकतीं, फिर कन्याओंकी तो बात ही क्या है ?' ऐसा सोचकर ही राजाने यह बात कही है। अच्छा, ऐसा ही सही, मैं भी ऐसा ही उपाय करूँगा ।' यह सब सोचकर उन्होंने मान्यातासे कहा—॥ ८४॥ "यदि ऐसी बात है तो कन्याओंके अन्तःपुर-रक्षक नपुसकको वहाँ मेरा प्रदेश करानेके लिये आज्ञा दो । यदि कोई कन्या हीं मेरी इच्छा करेगी तो हो मैं सी-प्रहण करूँगा नहीं तो इस ढलती अवस्थामे मुझे इस व्यर्थ उद्योगका कोई प्रयोजन नहीं है ।'' ऐसा कहकर वे मौन हो गये ॥ ८५ ॥ तब मुनिके शापको आशङ्कासे मान्धाताने कन्याओंके

अन्तःपुर-रक्षकको आज्ञा दे दी॥ ८६॥ उसके साथ अन्तःपुरमें प्रबेश करते हुए भगवान् सौभरिने अपना रूप सकल सिद्ध और गन्धर्वगणसे भी अतिशय मनोहर बना लिया ॥ ८७ ॥ उन ऋषिवरको अन्तःपुरमें ले जाकर अन्तःपर-रक्षकने उन कन्याओंसे कहा — ॥ ८८ ॥ "तुम्हारे पिता महाराज मान्धाताकी आज्ञा है कि ये बहार्षि हमारे पास एक कन्याके लिये पधारे हैं और मैंने इनसे प्रतिज्ञा की है कि मेरी जो कोई कन्या श्रीमानुको करण करेगी उसकी स्थच्छन्दतामें मैं किसी प्रकारकी बाधा नहीं डार्लुगा।" यह सुनकर उन सभी कन्याओंने यूथपति गजराजका वरण करनेवाली हथिनियोंके समान अनुराग और आनन्दपूर्वक 'अकेली मैं ही—अकेली मैं ही वरण करती हैं' ऐसा कहते हुए उन्हें बरण कर लिया। वे परस्पर कहने लगी॥ ८९—९१॥ 'अरी बहिनो । व्यर्थ चेष्टा क्यों करती हो ? मैं इनका वरण करती हैं, ये तुम्हारे अनुरूप है भी नहीं । विधाताने ही इन्हें मेरा भत्ती और मुझे इनकी भार्या बनाया है। अतः तुम ज्ञाना हो जाओ ॥ ९२ ॥ अन्तःप्रमें आते ही सबसे पहले मैंने ही इन्हें बरण किया था, तुम क्यों मरी जाती हो ?' इस प्रकार 'मैंने 69 11

मया मबेति क्षितिपात्मजानां तदर्थमत्यर्थकलिबीभव यदा मुनिस्ताभिरतीवहार्दाद्-

वृतसः कन्याभिरनिन्द्यकीर्तिः ।

तदा स कन्याधिकृतो नृपाय यथाक्दाचष्ट् विनम्रपूर्तिः ॥ ९४

श्रीपराशर उद्याच

तदवगमात्किङ्किमेतत्कथमेतत्कं किं करोमि कि मयाभिहितमित्याकुलमितरनिज्ञत्रपि कथमपि राजानुमेने ॥ ९५ ॥ कृतानुरूप-विवाहश्च महर्षिसाकला एव ताः कन्यास्य-माश्रममनयत् ॥ १६ ॥

तत्र चाशेषशिल्पकल्पप्रणेतारं धातारमिवान्यं

विश्वकर्माणमाह्य सकलकन्यानामेकैकस्याः प्रोत्फुल्लपङ्कुजाः कृजत्कलहंसकारण्डवादि-विहुङ्गमाभिरामजलाशयास्त्रोपधानाः सावकाशा-

स्ताधुराय्यापरिच्छदाः प्रासादाः क्रियन्ता-मित्यादिदेश ॥ ९७ ॥

तद्य तथैवानुष्टितमशेषशिल्पविशेषाचार्य-स्त्वष्टा दर्शितवान् ॥ ९८ ॥ ततः परमर्विणा रशैभरिणाञ्चप्रस्तेषु गृहेष्ट्रनिवार्यानन्दनामा महानिधिरासाञ्चके ॥ ९९ ॥ वतोऽनवरतेन

भक्ष्यभोज्यलेह्याद्यपभोगैरागतानुगतभृत्या-दीनहर्निशमशेषगृहेषु ताः क्षितीशदृहितरो

भोजवामासुः ॥ १०० ॥

एकदा तु दृहितुस्त्रेहाकृष्टहृदयस्य महीपति-रतिदुः खितास्ता उत सुखिता वा इति विचिन्स तस्य महर्वेराश्रमसमीपमुपेत्य स्फुरदंशुमालाललामां स्फटिकमयप्रासादमालामतिरम्योपवनजलाशयां वदर्श ॥ १०१ ॥

प्रविदय चैके प्रासादपात्मजां परिषुज्य कृतासनपरिवहः प्रवृद्धस्रेहनयनाम्बुगर्भ-नयनोऽब्रवीत् ॥ १०२ ॥ अप्यत्र वत्से भवत्याः सरवमत किञ्चिदसरवमपि ते महर्षिस्स्रेहवानत न.

बरण किया है—पहले मैंने वरण किया है' ऐसा कह-कहकर उन राजकन्याओंमें उनके लिये बड़ा कल्ह मच गया ॥ ९३ ॥

जब उन समस्त कन्याओंने अतिशय अनुसम्बद्धा उन अनिन्धकीर्ति मुनिवरको घरण कर लिया तो कन्या-रक्षकने नम्रतापूर्वक राजासे सम्पूर्ण वृतान्त ज्यों-का-त्यो

कह स्नाया ॥ ९४ ॥ श्रीपराञ्चरजी जोरहे-यह जानकर राजाने 'यह क्या

कहता है ?' 'यह कैसे हुआ ?' 'मैं क्या करूँ ?' 'मैंने क्यों उन्हें [अन्दर जानेके लिये] कहा था ?' इस प्रकार सोचते हुए अत्यन्त व्याकुल जितसे इच्छा न होते हुए भी जैसे-तैसे अपने वचनका पालन किया और अपने अनुरूप विवाह-संस्कारके समाप्त होनेपर महर्षि सौभरि उन समस्त कन्याओको अपने आश्रमपर ले गये ॥ ९५-९६ ॥ 🌃 बहाँ आकर उन्होंने दूसरे विधाताके समान अशेष-

शिल्प-कल्प-प्रणेता विश्वकर्माको बळाकर कहा कि इन समस्त कन्याओंमेंसे प्रत्येकके लिये पृथक्-पृथक् महरू बनाओ, जिनमें जिले हुए कमल और कुजते हुए सुन्दर हंस तथा कारण्डव आदि जल-पश्चियोंसे सुशोधित जलाशेय हों, सुन्दर टपधान (मसनद), दाव्या और परिच्छद (ओइनैके वस्त) हो तथा प्रयोह खुला हुआ स्थान हो ॥ ९७ ॥ 🗥 🗥 तय सम्पूर्ण शिल्प-विद्याके विशेष आचार्य

उन्हें दिखलाया ॥ ९८ ॥ तदनत्तर महार्ष सीभरिकी आज्ञासे उन महलोंमें अनिवायीनन्द नामकी महानिधि निवास करने लगी ॥ ९९ ॥ तव तो उन सम्पूर्ण महलोमें नाना प्रकारके भक्ष्य, भोज्य और लेख आदि सामग्रियोंसे वे राजकन्याएँ आये हुए अतिथियों और अपने अनुगत

विश्वकर्माने भी उनकी आज्ञानुसार सब कुछ तैयार करके

भुत्यवर्गीको तप्त करने लगों ॥ १०० ॥

एक दिन पत्रियोंके स्नेडसे आकर्षित होकर राजा मान्याता यह देखनेके लिये कि वे अत्यन्त दुःजी है या सुखी 7 महर्षि सौभरिके आश्रमके निकट आये, तो उन्होंने वहाँ अति रमणीय उपवन और जलाशयाँसे यक्त रफटिक-शिलाके महलोकी पंक्ति देखी जो फैलती हुई मयुख-मालाओंसे अस्पन्त मनोहर माल्म पडती थी ॥ १०१ ॥ तदनन्तर वे एक महलमें जाकर अपनी कत्याका

खेहपूर्वक आलिङ्गन कर आसनपर बैठे और फिर बढते हुए प्रेमके कारण नयनोंगे जल भरकर बोले-॥ १०२ ॥ "बेटी ! तुमलोग यहाँ सुखपूर्वक हो न ? तुम्हें किसी प्रकारका कष्ट तो नहीं है ? महर्षि सौभरि

स्मर्यतेऽस्मद्गृहवास इत्युक्ता तं तनवा पितरमाह ॥ १०३ ॥ तातातिरमणीयः प्रासादोऽत्रातिमनोज्ञमुपवनमेते कलवाक्यविहङ्ग-माभिरुताः प्रोत्फुल्लपद्माकरजलाशया मनोऽनुकूलभक्ष्यभोज्यानुलेपनवस्त्रभूषणादि-भोगो मुद्नि शयनासनानि सर्वसप्यत्समेतं मे गार्हस्थ्यम् ॥ १०४ ॥ तथापि केन वा जनमभूमिनी सर्यते ॥ १०५ ॥ व्यत्प्रसादादिदमशेषमति-शोधनम् ॥ १०६ ॥ किं त्वेकं ममैतद्व:खकारणं यदस्मद्गुहान्यहर्षिरयम्बद्धर्ता न निष्कार्मात ममैव केवलमतिप्रीत्या समीपपरिवर्ती नान्यासाम-सम्द्रिगनीनाम् ॥ १०७ ॥ एवं च मम सोदयोंऽति-दुःखिता इत्येवमतिदुःखकारणमित्युक्तस्तया हितीयं प्रासादम्पेत्य स्वतनयां परिषुज्योपविष्ट-स्तर्थेव पृष्टवान् ॥ १०८ ॥ तयापि सर्वमेतत्तत्त्रासादासुपभोगसुखं भृशमाख्यातं पमैव केवलमतिप्रीत्या पार्श्वपरिवर्ती, नान्या-सामस्यद्धगिनीनापित्येवमादि श्रुत्वा समस्त-प्रासादेषु राजा प्रविवेदा तनयां तनयां तथैवापुक्तत् ॥ १०९ ॥ सर्वाभिश्च ताभिस्तथैवाभिहितः परितोषविस्मयनिर्भरविवशहदवो भगवन्ते सौभरिमेकान्तावस्थितमुपेत्य कृतपूजोऽब्रवीत् ॥ ११० ॥ दृष्टस्ते भगवन् सुमहानेष सिद्धिप्रभावो नैवंविधयन्यस्य कस्यविद्स्माधिविंभृतिभि-विलिसतमुपलक्षितं यदेतद्भगवतस्तपसः फल-मित्यभिपूज्य तमृद्धि तत्रैव तेन ऋषिवर्धेण सह किञ्चित्कालमभिमतोपभोगान् बुभुजे स्वपुरं च जगाम ॥ १११ ॥

कालेन गच्छता तस्य तासु राजतनयासु पुत्रशतं सार्धमभवत् ॥ ११२ ॥ अनुदिनानुरूढस्रेह-प्रसरश्च स तत्रातीच यमताकृष्टहदयोऽभवत् ॥ ११३ ॥ अप्येतेऽस्मत्पुत्राः कलभाषिणः पद्भ्यां गच्छेयुः अप्येते यौवनिनो भवेषुः, अपि कृतदारानेतान् पश्येयमप्येषां पुत्रा भवेषुः तुमसे सेंट करते हैं या नहीं ? क्या तुम्हें हमारे घरकी भी याद आती है ?" पिताके ऐसा कहनेपर तस राजपूत्रीने कहा— ॥ १०३ ॥ "पिताजो ! यह महरू अति रमणीय है, ये उपवनादि भी अतिशय मनोहर हैं, खिले हुए कमलेंसे युक्त इन जलाशबीमें जलपक्षिगण सुन्दर बोली बोलते रहते हैं, भक्ष्य, भोज्य आदि खाद्य पदार्थ, उबरन और बस्तापुषण आदि भोग तथा सुकोमल राज्यासन्।दि सभी मनके अनुकुल हैं; इस प्रकार हमारा गाईस्थ्य यदापि सर्वसम्पतिसम्पन्न है ॥ १०४ ॥ तथापि जन्मभूमिकी याद भला किसको नहीं आती ? ॥ १०५॥ आपकी कपासे बद्यपि सब कढ़ मङ्गलम्ब है ॥ १०६ ॥ तथापि मुझे एक बड़ा दु:ख है कि हमारे पति वे महर्षि मेरे घरसे वाहर कभी नहीं जाते। अत्यन्त प्रीतिके कारण ये केवल मेरे ही पास रहते हैं, मेरी अन्य बहिनोंके पास ये जाते ही नहीं है ॥ १०७ ॥ इस कारणसे मेरी बहिने अति दु:सी होगी। यही मेरे अति दु:सका कारण है।" उसके ऐसा कहनेपर राजाने इसरे महलमें आकर अपनी कन्याका आलिङ्गर किया और आसनपर बैठनेके अनन्तर उससे भी इसी प्रकार पूछा ॥ १०८ ॥ उसने भी उसी प्रकार महरू आदि सम्पूर्ण उपभोगीके सुखका वर्णन किया और कहा कि अतिहास प्रीतिके कारण महर्षि केवल मेरे ही पास रहते हैं और किसी बहिनके पास नहीं जाते। इस प्रकार पूर्ववत् सनकर राजा एक-एक करके प्रत्येक महरूमें गये और प्रत्येक कन्यासे इसी प्रकार पूछा ॥ १०९ ॥ और उन सबने भी वैसा हो उत्तर दिया। अन्तमें आनन्द और विस्मयके भारसे विजञ्जित डोकर उन्होंने एकान्तमें स्थित भगवान सीभरिकी पूजा करनेके अनन्तर उनसे कहा ॥ ११० ॥ "भगवन् ! आपकी ही योगसिद्धिका यह महान् प्रभाव देशा है। इस प्रकारके महान् वैभवके साथ और किसीको भी विलास करते हुए इपने नहीं देखा; सो यह सब आपकी तपस्याका ही फल है।" इस प्रकार उनका अभिवादन कर वे कुछ कालतक उन मुनिवरके साथ ही अधिमत चोग भोगते रहे और अन्तमें अपने दगरको चले आरं ॥ १११ ॥

कालक्रमसे उन राजकन्याओंसे सौभरि मुनिके डेढ़ सौ पुत्र हुए॥११२॥ इस प्रकार दिन-दिन छोहका प्रसार होनेसे उनका हृदय अतिराय मपतामय हो गया ॥११०॥ वे सोचने छगे—'क्या मेरे ये पुत्र मधुर

अप्येतत्पुत्रान्पुत्रसमन्वितान्यश्यामीत्वादि-मनोरबानन्दिनं कालसम्पत्तिप्रवृद्धानु-पेक्ष्यैतचिन्तयामास ॥ ११४ ॥ अहो मे मोहस्याति-विस्तारः ॥ ११५ ॥ मनोरथानां न समाप्तिरस्ति वर्षायुतेनापि तथाब्दलक्षैः। पूर्णेषु पूर्णेषु मनौरथाना-पुत्पत्तयस्पन्ति पुनर्नवानाम् ॥ ११६ पद्भ्यां गता योवनिनश्च जाता दारैश्च संयोगमिताः प्रसृताः। सुतास्तत्तनयप्रसृति दृष्टाः द्रष्टं पुनर्वाञ्छति मेऽन्तरात्मा ॥ ११७ द्रक्ष्यामि तेषामिति चेळसूति मनोरथो मे भविता ततोऽन्यः । पूर्णेऽपि तत्राप्यपरस्य जन्म निवार्यते केन मनोरथस्य ॥ ११८ आमृत्युतो नैव मनोरथाना-मन्तोऽस्ति विज्ञातमिदं मयाद्य । मनोरथासक्तिपरस्य ਚਿਚੰ न जायते वै परमार्थसङ्गि॥ ११९ स मे समाधिर्जलवासमित्र-

मत्स्यस्य सङ्गात्सहसैव नष्टः। परित्रहस्सङ्गकतो मयायं परित्रहोत्था च ममातिलिप्सा ॥ १२० यदैवैकश्रीरजन्म दःखं

शतार्द्धसंख्याकमिदं प्रसृतम्। परिप्रहेण क्षितियात्मजानां सुतरनेकर्बह्लीकृतं तत्॥ १२१

सुतात्मजैस्तत्तनयैश्च भूयो भूयश्च तेषां च परित्रहेण।

विस्तारमेष्यत्यतिदुः खहेतुः

परित्रहो वै ममताभिद्यानः ॥ १२२

बोलीसे बोलेंगे ? अपने पाँवोंसे चलेंगे ? क्या ये युवावस्थाको भाग होंगे ? उस समय क्या मैं इन्हें सपलीक देख सकूँगा ?'फिर क्या इनके पुत्र होंगे और मैं इन्हें अपने पुत्र-पौत्रोंसे युक्त देखुँगा?' इस प्रकार कालक्रमसे दिरानुदिन बढ़ते हुए इन मनोरधोंकी उपेक्षा कर वे सोचने खरो- ॥ ११४ ॥ 'अहो ! मेरे मोहका कैसा विस्तार है ? ॥ ११५॥

इन मनोरथोंकी तो हजारी-लाखों वर्षीमें भी समाप्ति नहीं हो सकती। उनमेंसे यदि कुछ पूर्ण भी हो जाते है तो उनके स्थानपर अन्य नये मनोरथींकी उत्पत्ति हो जाती है।। ११६।। मेरे पुत्र पैरोसे चलने लगे, फिर वे युवा हुए, उनका विकाह हुआ तथा उनके सन्तानें हुई—यह सब तो मैं देख चुका; किन्तु अब मेरा चित्त उन पौत्रोंके पुत्र-जन्मको भी देखना चाहता है ! ॥ ११७ ॥ यदि उनका जन्म भी मैंने देख लिया तो फिर मेरे चित्तमें दूसरा मनोरध डडेगा और यदि वह भी पूरा हो गया तो अन्य मनोरधकी उत्पत्तिको ही कौन रोक सकता है ? ॥ ११८ ॥

मैंने अब भली प्रकार समझ लिया है कि मृत्यूपर्यन्त मनोरथोंका अन्त तो होना नहीं है और जिस चित्तमें मनोरशोंकी आसक्ति होती है वह कभी परमार्थमें लग नहीं सकता॥११९॥ अहो ! मेरी वह समाधि जलवासके साथी मत्स्यके संगसे अकस्मात् नष्ट हो गयी और उस संगके कारण ही मैंने की और धन आदिका परिव्रह किया तथा परिव्रहके कारण ही अब मेरी तथ्णा बढ़ गयी है॥ १२०॥

एक शरीरका प्रहण करना ही महान् दुःख है और मैंने तो इन राजकत्याओंका परिप्रह करके उसे पचास मुना कर दिया है। तथा अनेक पुत्रोंके कारण अब वह बहुत ही बढ़ गया है॥ १२१॥ अब आगे भी पुत्रोंके पुत्र तथा उनके पुत्रोंसे और उनका पुनः-पुनः विवाह-सम्बन्ध करनेसे वह और भी बढ़ेगा। यह ममतारूप विवाहसम्बन्ध अवस्य बडे ही दुःसका कॉरण है।। १२२॥

चीणं सपो यत्तु जलाश्रयेण तस्यद्धिरेषा तपसोऽन्तरायः। मत्स्यस्य सङ्घादभवश्य यो मे सुतादिरागो मुषितोऽस्मि तेन ॥ १२३

निस्सङ्घता मुक्तिपदं यतीनां

सङ्घादशेषाः प्रभवन्ति दोषाः । आरूढयोगो विनिपात्यतेऽध-

स्सङ्गेन योगी किमुताल्पबुद्धिः ॥ १२४

अहं चरिष्यामि तदात्मनोऽर्थे परिश्रहपाहगृहीतबुद्धिः यदा हि भूयः परिहीनदोषो

जनस्य दुःर्लंभीवता न दुःस्ती ॥ १२५

सर्वस्य धातारमचिन्यरूप-मणोरणीयांसमतिप्रमाणम् ।

सितासितं चेश्वरमीश्वराणा-माराधियच्ये तपसैव विष्णुम् ॥ १२६

तस्मित्रशेषौजिस सर्वरूपि-ण्यव्यक्तविस्पष्टतनावनन्ते ।

ममाचलं चित्तमपेतदोष

सदास्तु विष्णावभवाय भूयः ॥ १२७ समस्तभृतादमलादनन्ता-

त्सर्वेश्वरादन्यदनादिमध्यात् यस्मात्र किञ्चित्तमहं गुरूणां

परं गुरुं संअयमेमि विष्णुम् ॥ १२८

श्रीपसदार उदाच

इत्यात्मानमात्मनैवाभिधायासौ सौभरिरपहाय पूजगृहासनपरिच्छदादिकमशेषमर्थजातं सकल-भावांसमन्वितो वनं प्रविवेश ॥ १२९ ॥ तत्राप्यन्दिनं वैखानसनिष्पाद्यमशेषक्रियाकलापं

निष्पाद्य क्षपितसकलपापः परिपक्रमनोवत्ति-रात्मन्यग्रीन्समारोप्य भिक्षुरभवत् ॥ १३० ॥ भगवत्यासज्याखिलं कर्मकलापं हित्वानन्तमज-

पनादिनिधनपविकारमरणादिधर्मपवाप परमनन्तं

परवतामच्युतं पदम् ॥ १३१ ॥

जलाशयमं रहकर मैंने जो तपस्या की थी उसकी फलस्वरूपा यह सम्पत्ति तपस्याकी बाधक है। मतस्यके संगसे मेरे चित्तमें जो पुत्र आदिका राग उत्पत्र हुआ था उसीने मुझे उप लिया ॥ १२३ ॥ निःसंगता ही बतियोको

मुक्ति देनेवाली है, सम्पूर्ण दोष संग्रसे ही उत्पन्न होते हैं। संगक्षे कारण तो योगारूढ यति भी पतित हो जाते हैं, फिर मन्दगति मनुष्योंकी तो बात ही क्या है ? ॥ १२४ ॥

परिवहरूपी बाहने मेरी बुद्धिको पकड़ा हुआ है। इस समय में ऐसा उपाय करूँमा जिससे दोषोंसे मुक्त होकर फिर अपने कुटुम्बियोंके द:स्तसे द:स्ती न होर्ऊ ॥ १२५ ॥ अब मैं सबके विधाता, अचिन्त्यरूप, अण्से भी अण्

और सबसे महान् सत्य एवं तमःस्वरूप तथा ईश्वरेकि भी ईश्वर भगवान् विष्णुकी तपस्या करके आराधना करूँगा ॥ १२६ ॥ उन सम्पूर्णतेजीमय, सर्वस्वरूप, अञ्चल, विस्पष्टशरीर, अनन्त श्रीविष्णुभगवान्में मेरा दोषरहित चित्र सदा निश्चल रहे जिससे मुझे फिर जन्म न लेना

पड़े ॥ १२७ ॥ जिस सर्वरूप, अमल, अनन्त, सर्वेश्वर और आदि-मध्य-शुन्यसे पृथक् और कुछ मी नहीं है उस गुरुजनोंके भी परम गुरु भगवान् विष्णुकी मैं शरण रेखा हैं ॥ १२८ ॥

श्रीपरादारजी बोले---इस प्रकार पन-ही-भन सोचकर सीधरि मृनि पुत्र, गृह, आसन, परिच्छद आदि सम्पूर्ण पदार्थीको छोडकर अपनी समस्त सियोंके सहित वनमें चले गये॥ १२९॥ वहाँ, बानप्रस्थेकि योग्य समस्त क्रियाकस्त्रपका अनुष्ठान करते हुए सम्पूर्ण पापोका क्षय हो जानेपर तथा मनीवृत्तिक राग-द्रेषहीन हो जानेपर, आह्वनीयादि अग्नियोको अपनेमें स्थापित कर संन्यासी हो गये॥ १३०॥ फिर भगवान्में आसक्त हो सम्पूर्ण कर्मकलापका त्याय कर परमात्म-परायण पुरुषोके अच्युतपद (मोक्ष) को प्राप्त किया, जो अजन्म, अनादि, अविनाशी, विकार और मरणादि धर्मीसे रहित, इन्द्रियादिसे अतीत तथा

अनन्त है ॥ १३१ ॥

इत्येतन्यान्धातृदुहितृसम्बन्धादास्थातम् ॥ १३२ ॥ यञ्चैतत्सीभरिचरितमनुस्मरति पठित पाठवति शृणोति श्रावयति धरत्यवधारयति लिखति लेखयति शिक्षयत्यध्यापयत्युपदिशति वा तस्य षड् जन्मानि दुस्सन्ततिरसञ्जूमों वाङ्गनसयो-रसन्मार्गाचरणमशेषहेतुषु वा ममत्वं न भवति ॥ १३३ ॥ इस प्रकार मान्याताको कन्याओके सम्बन्धमें मैंने इस चरित्रका वर्णन किया है। जो कोई इस सीभरि-चरित्रका स्मरण करता है, अथवा पढ़ता-पढ़ाता, सुनता-सुनाता, धारण करता-कराता, लिखता-लिखवाता तथा सीवाता-सिखाता अथवा उपदेश करता है उसके छः जन्मीतक दुःसन्तति, असद्धर्म और वाणी अथवा मनकी कुमर्गमें प्रचृत्ति तथा किसी भी पदार्थमें ममता नहीं होती॥ १३२ १३३॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तीसरा अध्याय

मान्धाताकी सन्तति, त्रिशङ्कुका खर्गारोहण तथा सगरकी उत्पत्ति और विजय

अतञ्च मान्यातुः पुत्रसन्ततिरिमधीयते ॥ १ ॥ अम्बरीषस्य मान्धातृतनयस्य युवनाश्चः पुत्रोऽभूत् ॥ २ ॥ तस्माद्धारीतः, यतोऽङ्गिरसो हारीताः ॥ ३ ॥ रसातले मौनेया नाम गन्धर्वा वभूतुष्पद्-कोटिसंख्यातास्तैरशेषाणि नरगकुलान्यपहत-प्रधानरत्नाधिपत्यान्यक्रियन्त ॥ ४ ॥ गन्धर्ववीर्यावधूतैरुरगेश्वरैः स्तूवमानो नशेषदेवेशः स्तवच्छ्यणोन्मीलितोन्निद्रपुण्डरीक-नवनी जलशयनो निद्रायसानात् प्रबुद्धः प्रणिपत्याभिहितः । भगवन्नसाकमेतेभ्यो गन्धर्वेभ्यो भयमुत्पन्नं कथमुपराममेष्यतीति ॥ ५ ॥ आह च भगवाननादिनिधनपुरुषोत्तमो योऽसी यौद्यनाश्चस्य मान्धातुः पुरुकुत्सनामा पुत्रस्तमहमनुप्रविरुय तानशेषान् दुष्टगन्धर्वानुपशमं नियध्यामीति ॥ ६ ॥ तदाकपर्य जलक्षायिने कृतप्रणामाः पुनर्नागलोकमागताः पन्नगाविपतयो नर्मदां च पुरुकुत्सानयनाय चोदयामासुः ॥ ७॥ सा चैन रसातलं नीतवती ॥ ८ ॥

रसातलगतञ्चासौ भगवत्तेजसाप्यायितात्प-

अब हम मान्धाताके युत्रोको सन्तातका वर्णन करते हैं ॥ १ ॥ मान्धाताके पुत्र अम्बरीषके युवनाश्च नामक पुत्र हुआ ॥ २ ॥ उससे हारीत हुआ जिससे अंग्रिय-गोत्रीय हारीतगण हुए ॥ ३ ॥ पूर्वकालमें स्सातलमें मौनेय नामक छः करोड़ राज्यर्व रहते थे। उन्होंने समस्त नागकुरुषेके प्रधान-प्रधान रह और अधिकार छीन लिये थे ॥ ४ ॥ गन्धलेंकि पराक्रमसे अपमानित उट नागेश्वरोद्वारा स्तुति किये जानेपर उसके क्षवण करनेसे जिनकी विकसित कमलसद्श आँखें खुल गर्यी है निदाके अन्तमे जगे हुए उन जलदायी भगवान् सर्वदेवेश्वरको प्रणाम कर उनसे नागगणने कहा, "भगवन् ! इन गन्धर्वेसि उत्पन्न हुआ हमारा भव किस प्रकार ज्ञान्त होगा ?"॥५॥ तब आदि-अन्तरहित भगवान् पुरुषोत्तमने कहा—'युवनाश्चके पुत्र मान्धाताकाः जो यह पुरुकुता नामक पुत्र है उसमें प्रविष्ट होकर मैं उन सम्पूर्ण दुष्ट गन्धवीका नाश कर दुँगा ॥ ६ ॥ यह सुनकर भगवान् जलकायीको प्रणाम कर समस्त नागाधिपतिगण नागलोकमें सौट आवे और पुरुकुत्सको स्त्रनेके सिये [अपनी बहिन एवम् पुरुकुत्सकी भाषाँ] वर्मदाको प्रेरित किया ॥ ७ ॥ तदनन्तर वर्मदा पुरुकुत्सको रसातलमें ले आयी ॥ ८ ॥

रसातलमें पहुँचनेपर पुरुकुत्सने भगवान्के तेजसे

वीर्यस्सकलगन्धर्वान्निज्ञचान ॥ १ ॥ पुनश्च स्वपुरमाजगाम ॥ १० ॥ सकलपन्नगाधि-पतयश्च नर्मदायै वरं ददुः । यस्तेऽनुस्मरणसमवेतं नामप्रहणं करिष्यति न तस्य सर्पविषभयं भविष्य-तीति ॥ ११ ॥ अत्र च श्लोकः ॥ १२ ॥ नर्मदायै नमः प्रातन्मदायै नमो निश्चि ।

नमोऽस्तु नमदि तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः ॥ १३

इत्युद्धार्थाहर्निशमन्धकारप्रवेशे वा सपैर्ने दश्यते न चापि कृतानुस्मरणभुजो विषमपि भुक्तमुपघाताय भवति ॥ १४ ॥ पुरुकुत्साय सन्ततिविच्छेदो न भविष्यतीत्युरगपतयो वरं रदु: ॥ १५ ॥

॥ १६ ॥ त्रसद्दस्युतस्मय्भूतोऽनरण्यः, यं रावणो दिग्विजये जधान ॥ १७ ॥ अनरण्यस्य पृषदश्वः पृषदश्वस्य हर्यश्वः पुत्रोऽभवत् ॥ १८ ॥ तस्य च हस्तः पुत्रोऽभवत् ॥ १९ ॥ ततश्च सुमनास्तस्यापि विधन्ता त्रिधन्तनस्वयास्त्रणः ॥ २० ॥ त्रय्यास्त्रणे-

पुरुकुत्सो नर्मदायां त्रसद्दस्युमजीजनत्

स्सत्यव्रतः,योऽसौ व्रिश्ह्युसंज्ञामवाप ॥ २१ ॥ स चाण्डालतामुपगतश्च ॥ २२ ॥ द्वादश-वार्षिक्यामनावृष्ट्यां विश्वामित्रकल्वापत्य-पोषणार्थं चाण्डालप्रतिमहपरिहरणाय च जाह्नवी-तीरन्यप्रोधे मृगमांसमनुद्दिनं बबन्ध ॥ २३ ॥ स तु परितृष्ट्रेन विश्वामित्रेण सद्दारीरस्स्वर्ग-

मारोपितः ॥ २४ ॥

त्रिशङ्कोहीरश्चन्द्रस्तस्माच रोहिताश्वस्तनश्च हरितो हरितस्य चञ्चश्रञ्जोविंजयवसुदेवौ स्रस्को विजयाहुरुकस्य वृकः ॥ २५ ॥ ततो वृकस्य बाहुर्योऽसौ हैहयतालजङ्कादिभिः पराजितोऽ-त्तर्वत्त्वा महिष्या सह वनं प्रविवेश ॥ २६ ॥ तस्याश्च सपत्त्या गर्भस्तप्रवर्षाण जटर एव तस्यौ ॥ २८ ॥ स च बाहुर्वृद्धभावादौर्वाश्रम-समीपे पमार ॥ २९ ॥ सा तस्य भार्या चितां कृत्वा अपने सरीरका बल बढ़ जानेसे सम्पूर्ण गन्धवींको मार डाला और फिर अपने नगरमें लौट आया ॥ ९-१० ॥ उस समय समस्त नागराजोंने नर्मदाको यह घर दिया कि जो कोई तेरा स्मरण करते हुए तेरा नाम लेगा उसको सर्प-विषसे कोई भय न होगा ॥ ११ ॥ इस विषयमें यह इलोक भी है— ॥ १२ ॥

'नर्मदाको प्रातःकाल नमस्कार है और रात्रिकालमें भी नर्मदाको नमस्कार है। हे नर्मदे ! तुमको बारम्बार नमस्कार है, तुम मेरी विष और सर्पसे रक्षा करो'॥ १३॥

इसका उचारण करते हुए दिन अथवा रात्रिमें किसी समय भी अन्धकारमें जानेसे सर्प नहीं काटता तथा इसका स्मरण करके मोजन करनेवालेका खाया हुआ विष भी धातक नहीं होता ॥ १४ ॥ पुरुकुत्सको नागपतियोने यह वर दिया कि तुम्हारी सन्तानका कभी अन्त न होगा ॥ १५ ॥

पुरुकुत्सने नर्भदासे त्रसंद्रस्यु नामक पुत्र उत्पन्न किया ॥ १६ ॥ त्रसद्स्युसे अनरण्य हुआ, जिसे दिम्बिजयके समय सम्वणने मारा था ॥ १७ ॥ अनरण्यके पृषद्ध, पृषद्धके हर्मश्च, हर्मश्चके हाल, हस्तके सुमना, सुमनाके त्रिधन्या, त्रिधन्याके त्रस्यासीण और त्रस्यासीणके सत्यवत नामक पुत्र हुआ, जो पीछे त्रिसंकु कहत्वया ॥ १८—२१ ॥

हुआ, जा पास्त त्रशकु कहत्वया ॥ १८—- ११ ॥ एक वह त्रिशंकु चाण्डाल हो गया था॥ २२ ॥ एक बार बारह वर्षतक अनावृष्टि रही ! उस समय विश्वामित्र मृनिके खी और बाल-बन्नोंक पोषणार्थ तथा अपनी चाण्डालताको छुड़ानेके लिये वह गङ्गाजीके तटपर एक वटके वृक्षपर प्रतिदिन मृगका मांस बाँध आता था॥ २३ ॥ इससे प्रसन्न होकर विश्वामित्रजीने उसे सदेह खगै भेज दिया॥ २४ ॥

विशंकुसे हरिक्षन्त्र, हरिक्षन्त्रसे रोहितास, रोहिताससे हरित, हरितसे सञ्च, सञ्चसे विजय और वसुदेव, विजयसे रुख्क और रुख्कसे वृक्का जन्म हुआ॥ २५॥ वृक्के बाहु समक पुत्र हुआ जो हैहय और ताल्जंब आदि क्षत्रियोंसे पर्राजित होक्स अपनी गर्भवती पटरानीके सहित बनमें चला गया था॥ २६॥ पटरानीकी सौतने उसका गर्भ रोकनेकी इच्छासे उसे विव खिला दिया॥ २७॥ उसके प्रमावसे उसका गर्भ सात वर्षतक गर्भाहाय ही में रहा॥ २८॥ अन्तमें, बाहु वृद्धावस्थाके कारण और्व मुनिके आश्रमके समीप मर गया॥ २९॥ तब उसकी पटरानीने चिता बनाकर तमारोप्यानुमरणकृतनिश्चयाऽभूत् ॥ ३० ॥ अर्थतामतीतानागतवर्त्तमानकालत्रयवेदी भगवानौर्वस्वाश्चमान्निर्गत्याद्ववीत् ॥ ३१ ॥ अलमलपनेनासद्वाहेणाखिलभूमण्डलपति-रतिवीर्यंपराक्रमो नैकयज्ञकृदरातिपक्षश्चयकर्त्ता तवोदरे चक्रवर्ती तिष्ठति ॥ ३२ ॥ नैवमति-साहसाध्यवसायिनी भवती भवत्वित्युक्ता सा तस्मादनुमरणनिर्वन्याद्विरराम ॥ ३३ ॥ तेनैव च भगवता स्वाश्चममानीता ॥ ३४ ॥

तत्र कतिपयदिनाभ्यन्तरे च सहैव तेन गरेणाति-तेजस्वी बालको जज्ञे ॥ ३५ ॥ तस्यौदों जातकमादि-क्रिया निष्पाद्य सगर इति नाम चकार ॥ ३६ ॥ कृतोपनयनं चैनमौद्यों वेदशास्त्राण्यस्त्रं चान्नेयं भार्गवास्यमध्यापयामास ॥ ३७ ॥

उत्पन्नबृद्धिश्च मातरमञ्जवीत् ॥ ३८ ॥ अम्ब कथमत्र वयं क वा तातोऽस्माकमित्येव-मादिपुच्छन्तं माता सर्वमेवावोचत् ॥ ३९ ॥ ततश्च पितुराज्यापहरणादमर्षितो हैहयतालजङ्गादि-प्रतिज्ञामकरोत् ॥ ४० ॥ हैहयतालजङ्गाञ्चाचान ॥ ४१ ॥ शक्यवन-काम्बोजपारदपह्ननाः इन्यमानास्तत्कुलगुरु वसिष्ठं अर्थनान्यसिप्रो जग्मः ॥ ४२ ॥ जीवन्पृतकान् कृत्वा सगरमाह ॥ ४३ ॥ वत्सालमेभिजीवन्पृतकैरनुसुतैः ॥ ४४ ॥ एते च मयैव त्वत्रतिज्ञापरिपालनाय निजधर्मद्विजसङ्ग-परित्यागं कारिताः ॥ ४५ ॥ तथेति तद्गुरुवचन-मभिनन्द्यः तेषां वेषान्यत्वमकारयत् ॥ ४६ ॥ यवनान्पण्डितशिरसोऽर्द्धपुण्डिताञ्खकान् प्रलम्बकेशान् पारदान् पह्नवाज्रमश्रुधरान् निस्त्वाध्यायवयद्कारानेतानन्यांश्च क्षत्रिया-श्वकार ॥ ४७ ॥ एते चात्पधर्मपरित्यागाद्वाहाणैः परित्यक्ता म्लेन्छतां ययुः ॥ ४८ ॥ सगरोऽपि स्वमधिष्ठानमागम्यास्वलितचक्रस्सप्तद्वीपवती-पिमामुर्वी प्रश्रशास ॥ ४९ ॥

उसपर पतिका शव स्थापित कर उसके साथ सती होनेका निश्चय किया ॥ ३० ॥ उसी समय भृत, भविष्यत् और वर्तमान तीनी कालके जाननेवाले भगवान् और्वने अपने आश्चमसे निकटकर उससे कहा — ॥ ३१ ॥ 'अयि साध्य ! इस व्यर्थ दुग्नग्रहको छोड़ । तेर उदरमें सम्पूर्ण भूमण्डलका स्वामी, अत्यन्त बल-पराक्रमञ्जील, अनेक यज्ञीका अनुष्ठान करनेवाला और शबुओंका नाश करनेवाला चक्रवर्ती राजा है ॥ ३२ ॥ तू ऐसे दुस्साहसका उद्योग न कर ।' ऐसा कहे जानेपर वह अनुपरण (सती होने) के आग्रहमें विस्त हो गयी ॥ ३३ ॥ और भगवान् और्व उसे अपने आश्चम्पर ले आये ॥ ३४ ॥

वहाँ कुछ ही दिनोंने, उसके उस गर (विष) के साथ ही एक आंत तेजस्वी बालकने जन्म लिया ॥ ३५ ॥ भगवान् और्वने उसके बातकर्म आदि संस्कार कर उसका नाम 'सगर' रसा,तथा उसका उपनयनसंस्कार होनेपर और्वने ही उसे बेद, शास्त्र एवं भागव नामक आग्रेय शास्त्रोकी शिक्षा हो ॥ ३६-३० ॥ बहिका विकास होनेपर उस बालकने अपनी मातारे

कहा--- ॥ ३८ ॥ "माँ ! यह तो बता, इस तपोवनमें हम क्यों रहते हैं और हमारे पिता कहाँ हैं ?'' इसी प्रकारके और भी प्रश्न पृक्षनेपर माताने उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त कह दिया ॥ ३९ ॥ तब तो पिताके राज्यापहरणको सहन न कर सकनेके कारण उसने हैहय और तालबंध आदि क्षत्रियोंको मार डालनेकी प्रतिज्ञा की और प्रायः सभी हैहय एवं तालजंघवंशीय गुजाओंको तष्ट कर दिया ॥ ४०-४१ ॥ उनके पश्चात शक. यवन, काम्बोज, पारद और पह्नवगण भी हताहत होकर सगरके कुलगृह वसिष्ठजीकी दारणमें गये॥४२॥ वसिष्ठजीने उन्हें जीवन्यत (जीते हुए ही मरेके समान) करके सगरसे कहा -- "बेटा इन जोते-जो मोर हुओका पोछा करनेसे क्या लाभ है ? ॥ ४४ ॥ देख, तेरी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये मैंने ही इन्हें स्वधर्म और द्विजातियोंके संसर्गसे विश्वत कर दिया है" ॥ ४५॥ राजाने 'जो आज्ञा' कहकर गुरुजीके कथनका अनुमोदन किया और उनके वेप बदलवा दिये ॥ ४६ ॥ उसने यचनोंके सिर मुडवा दिये, शकोंको आर्द्धभृष्टित कर दिया, पारहेंके लम्बे-लम्बे केडा रखवा दिये, पहुर्वोके मुँछ-दाढ़ी रहाया ही तथा इनको और इनके समान अन्यान्य क्षत्रियोंको मी स्वाध्याय और वषटकारादिसे बहिष्कृत कर दिया ॥ ४७ ॥ अपने धर्मको छोड देनेके कारण बाह्मणीने भी इनका परित्याम कर दिया: अतः ये म्लेच्छ हो गये ॥ ४८ ॥ तद्वसर महाग्रज सगर अपनी राजधानीमे आकर अप्रतिहत सैन्यसे युक्त हो इस सम्पूर्ण सप्तद्वीपवंती पुथियोका शासन करने समै ॥ ४९ ॥

चौथा अध्याय

सगर, सौदास, खद्बाङ्ग और भगवान् रामके चरित्रका वर्णन

श्रीपराशः उवाच

काश्यपदुहिता सुमितिर्विदर्भराजननया केशिनी च हूं भार्ये सगरस्यास्ताम् ॥ १ ॥ ताभ्यां चापत्यार्थमौर्वः परमेण समाधिनाराधितो वरमदात् ॥ २ ॥ एका वंशकरमेकं पुत्रमपरा षष्टि पुत्रसहस्राणां जनियव्यतीति यस्या यद्भिमतं तदिच्छया गृह्यतामित्युक्ते केशिन्येकं वरयामास ॥ ३ ॥ सुमितः पुत्रसहस्राणि षष्टि वर्षे ॥ ४ ॥

तथेत्युक्ते अल्पैरहोधिः केदिनी पुत्रमेक-यसमञ्जसनामानं वंद्यकरमसूत ॥ ५ ॥ काद्यप-तनयायास्तु सुमत्याः षष्टिः पुत्रसहस्ताण्यभवन् ॥ ६ ॥ तस्मादसमञ्जसादंशुमाञ्चाम कुमारो जज्ञे ॥ ७ ॥ स त्यसमञ्जसो वाल्प्रे बाल्यादेवा-सद्युत्तोऽभूत् ॥ ८ ॥ पिता जास्याज्ञिन्तयद्य-मतीतबाल्यः सुबुद्धिमान् भविष्यतीति ॥ ९ ॥ अथ तत्रापि च वयस्यतीते असन्नरितमेनं पिता तत्याज ॥ १० ॥ तान्यपि षष्टिः पुत्रसहस्रा-ण्यसमञ्जसचरितमेवानुचकुः ॥ १९ ॥

ततश्चासमञ्जसचरितानुकारिभिस्सागरैरप-ध्वस्तयज्ञादिसन्मार्गे जगति देवास्सकलविद्या-मयमसंस्पृष्टमशेषद्वेषैर्यगवतः पुरुषोत्तमस्यांश-मृतं कपिलं प्रणम्य तदर्थमृबुः॥१२॥ भगवन्नेभिस्सगरतनयैरसमञ्जसचरितमनु-गम्यते॥१३॥ कथमेभिरसद्वृत्तमनुसरिद्ध-जंगद्धविद्यतीति॥१४॥अत्यार्तजगत्परित्राणाय च भगवतोऽत्र शरीरप्रहणमित्याकण्यं भगवाना-हाल्पैरेव दिनैर्विनङ्कयन्तीति॥१५॥ श्रीपराशरजी बोले—काश्यपसुता सुमित और विदर्भराज-कन्या केशिनी ये राजा सगरकी दो स्थिमों भी ॥ १ ॥ उनसे सन्तानोत्पनिके किये परम समाधिद्वारा आराधना किये जानेपर भगवान और्तन यह दर दिया ॥ २ ॥ 'एकसे वंशकी षृद्धि करनेवाला एक पृत्र तथा दूसरीसे साठ हजार पृत्र उत्पन्न होंगे, इनमेंसे जिसकी जो अभीष्ट हो वह इच्छापूर्वक उसीको यहण कर सकती है ।' उनके ऐसा कहनेपर केशिनीन एक तथा सुमितने साठ हजार पुत्रीका वर मीणा ॥ ३-४ ॥

महर्षिक 'तथास्तु' कड़नेपर कुछ ही दिनोंमें केदिनीने वंशको बढ़ानेवाले असमझस नामक एक पुत्रको जन्म दिया और काश्यपकुमारी सुमतिसे साठ सहस्त्र पुत्र करपत्र हुए ॥ ५-६ ॥ राजकुमार असमझसके अंशुमान नामक पुत्र हुआ ॥ ७ ॥ यह असमझस बाल्यावस्थासे ही बझ दुराचारी था ॥ ८ ॥ पिताने सोचा कि बाल्यावस्थाके बीत जानेपर यह बहुत समझदार होगा ॥ ९ ॥ किन्तु योवनके बीत जानेपर भी जब उसका आचरण न सुध्य दो पिताने उसे स्थाग दिया ॥ १० ॥ उनके साठ हजार पुत्रोंने भी असमझसके चरित्रका हो अनुकरण किया ॥ १९ ॥

तब, असमञ्जसके चरित्रका अनुकरण करनेवाले उन सगरपुत्रोद्वारा संसारमें यज्ञादि सन्मार्गका उच्छेद हो जानेपर सकल-विद्यानिधान, अशेपदोषहीन, धनवान् पुरुषोत्तमके अशभूत श्रीकपिलदेवसे देवताओंने प्रणाम करनेके अनन्तर उनके विषयमें कहा—॥१२॥ "भगवन्! राजा सगरके ये सभी पुत्र असमञ्जसके चरित्रका ही अनुसरण कर रहे हैं॥१३॥ इन सबके असन्मार्गमें प्रवृत्त रहनेसे संसारकी क्या दशा होगो ?॥१४॥ प्रभो! संसारमें दीनजनोंकी रक्षाके लिये हो आपने यह शरीर प्रहण किया है [अतः इस घोर आपतिसे संसारकी रक्षा कीजिये]।" यह सुनकर घरवान् कपिलने कहा, "ये सब धोड़े ही दिनोमें नष्ट हो जायेंगे"॥१५॥ अत्रान्तरे च सगरो हयमेधमारभत ॥ १६ ॥
तस्य च पुत्रैरिधष्ठितमस्याश्चं कोऽप्यपहृत्य भुवो बिलं
प्रविवेश ॥ १७ ॥ ततस्तत्तनयाश्चाश्चखुरगतिनिर्वन्धेनावनीमेकैको योजनं चर्लुः ॥ १८ ॥
पाताले चाश्चं परिश्रमन्तं तमवनीपतितनयासे
ददृशुः ॥ १९ ॥ नातिदूरेऽवस्थितं च
भगवन्तमपथने शरकालेऽकीमव
तेजोभिरनवरतपूर्व्वमधश्चाशेषदिशश्चोद्धासयमानं
हयहर्त्तारं कपिलविंभपश्यन् ॥ २० ॥

ततश्चोद्यतायुघा दुरात्मानोऽयमस्मद्यकारी यज्ञविञ्चकारी हन्यतां हयहत्तां हन्यतामित्यवोच-त्रभ्यथावंश्च ॥ २१ ॥ ततस्तेनापि भगवता किञ्जदीवत्यरिवर्त्तितलोचनेनावलोकितास्ख-

श्ररीरसमुखेनाऽब्रिना दहामाना विनेशः ॥ २२ ॥

सगरोऽप्यवगम्यश्थानुसारि तत्पुत्रबलमहोषं परमर्षिणा कपिलेन तेजसा दर्धा ततोऽश्मन्त-मसमञ्जसपुत्रमश्चानयनाय युवोज ॥ २३ ॥ स तु सगरतनयसातमार्गेण कपिलमुपगम्य भक्तिनग्रस्तदा तुष्टाव ॥ २४ ॥ अथैनं भगवानाह ॥ २५ ॥ गच्छैनं पितामहायाशं प्रापय वरं कुणीषु च पुत्रक पौत्रश्च ते स्वर्गाहुङ्गां भूवमानेष्यत इति ॥ २६ ॥ अर्थाशुमानपि स्वर्यातानां ब्रह्मद्प्यद्वतानापस्पत्पितृणामस्वर्ग-योग्यानां स्वर्गप्राप्तिकरं वरमस्माकं प्रयच्छेति प्रत्याह ॥ २७ ॥ तदाकर्ण्य तं च भगवानाह उक्तमेवैतन्प्रयाद्य पौत्रस्ते त्रिदिवादुङ्गा भुवमानेष्यतीति ॥ २८ ॥ तदम्भसा संस्पृष्टेष्ट्रस्थियस्यस् एते च स्वर्गमारोक्ष्यन्ति ॥ २९ ॥ भगविह्रेष्णुपादाङ्गृष्ठनिर्गतस्य जलस्यतन्याहातयम् ॥ ३० ॥ यस केवलमभि-सन्धिपूर्वकं स्त्रानाद्यूपभोगेश्रूपकारकमनभि-संहितमप्यपेतप्राणस्थास्थिचर्मस्रायुकेशाद्यपस्पृष्टं अरीरजमपि पतितं सद्यञ्ज्ञरीरिणं नयतीत्यक्तः प्रणम्य भगवतेऽश्वमादाय पिता-

इसी समय सगरने अखमेघ-यह आरम्भ किया ॥ १६ ॥ उसमें उसके पुत्रोंद्वारा सुरक्षित घोड़ेको कोई व्यक्ति चुराकर पृथिवीमें घुस गया ॥ १७ ॥ तब उस घोड़ेके सुरोंके चिह्नोंका अनुसरण करते हुए उनके पुत्रोंमेंसे प्रत्येकने एक-एक योजन पृथिवी स्रोत डाली ॥ १८ ॥ तथा-पातालमें पहुँचकर उन राजकुमारोंने अपने घोड़ेको फिरता हुआ देखा ॥ १९ ॥ पासहीमें मेघायरणहीन प्रारक्तालके सुरकि समान अपने तेजसे सम्पूर्ण दिशाओंको प्रकाशित करते हुए घोड़ेको चुरानेवाले परमर्थि कपिलको सिर सुकाये बैठे देखा ॥ २० ॥

तब तो वे दुरात्मा अपने अख-शस्त्रोंको उठाकर 'यही हमारा अपकारी और यश्चमें विश्व टालनेवाला है, इस घोड़ेको चुरानेवालेको मारो, मारो ऐसा चिल्लाते हुए उनकी ओर दौड़े ॥ २१ ॥ तब मणवान् किपलदेवके कुछ औस बदलकर देखते ही वे सब अपने हो शरीरसे उत्पन्न हुए अग्निमें जलकर नष्ट हो गये ॥ २२ ॥ महाराज सगरको जब मालूम हुआ कि बोड़ेका

अनुसरण करनेवाले उसके समस्त पुत्र महर्षि कपिलके तेजसे दन्य हो गये है तो उन्होंने असमञ्जसके पुत्र अंश्मानुको घोड़ा ले आनेके लिये नियुक्त किया ॥ २३ ॥ वह सगर-पुत्रेंद्वारा खोदे हुए मार्गसे कपिलजीके पास पहुँचा और भक्तिविज्ञप्र होकर उनकी स्तृति की ॥ २४ ॥ तब भगवान् कपिछने उससे कहा, "बेटा ! जा, इस घोड़ेको ले जाकर अपने दादाको दे और तेरी जो इच्छा हो। बही दर माँग ले। तेरा पौत्र गङ्गाजीको स्वर्गसे पृथियोपर कायेगा" ॥ २५-२६ ॥ इसपर अंश्मान्ने यही कहा कि मुझे ऐसा वर दीजिये जो ब्रह्मदण्डसे आहत होकर मरे हए मेरे अस्वर्ग्य पितृगणको स्तर्गकी प्राप्ति करानेवाला हो ॥ २७ ॥ यह सुनकर भगवानुने कहा, "मैं तुझसे पहले ही कह चुका है कि तेस पौत्र सङ्गाजीको स्वर्गसे पृथिवीपर लायेगा ॥ २८ ॥ उनके जलसे इनकी अस्थियोंकी भस्मका स्पर्श होते ही ये सब स्वर्गको चले जायँगे॥२९॥ भगवान् विष्णुके चरणनखरी निकले हुए उस जलका ऐसा माहाल्य है कि वह कामनापूर्वक केवल स्नानादि कार्योमें हो उपयोगी हो ---सो नहीं, अपितु, बिगा कामनाके मृतक पुरुषके अस्थि, दर्म, स्नायु अथवा केश आदिका स्पर्श हो। जानेसे या उसके शरीरका कोई अंग गिरनेसे भी बह देहधारीको तुरंत स्वर्गमें ले जाता है।" भगवान् कपिलके ऐसा कहनेपर वह उन्हें प्रणाम कर घोडेको हेकर

महयज्ञमाजगाम ॥ ३१ ॥ सगरोऽप्यश्वमासाद्य तं यज्ञं समापयामास ॥ ३२ ॥ सागरं चात्मजंत्रीत्या

पुत्रत्वे कल्पितवान् ॥ ३३ ॥ तस्यांशुमतो दिलीपः पुत्रोऽभवत् ॥ ३४ ॥ दिलीपस्य भगीरथः योऽसौ

गङ्गां स्वर्गादिहानीय भागीरथीसंज्ञां चकार ॥ ३५ ॥

भगीरधात्सुहोत्रस्सुहोत्राच्छुतः,तस्यापि नाभागः ततोऽम्बरीषः , तत्पुत्रस्सिन्धुद्वीपः सिन्धुद्वीपा-

दयुतायुः ॥ ३६ ॥ तत्पुत्रश्च ऋतुपर्णः , योऽसौ

न्लसहायोऽश्रहदयज्ञोऽभूत् ॥ ३७ ॥ ऋतुपर्णपुत्रस्सर्वकामः ॥ ३८ ॥

स्तुदासः ॥ ३९ ॥ स्दासात्सौदासो मित्र-सहनामा ॥ ४० ॥ स चाटव्यां मृगवार्थी पर्यटन् व्याघ्रद्वयमपश्यत् ॥ ४१ ॥ ताभ्यां तद्वनमपमृगं कृतं भत्वैकं तयोर्वाणेन जघान ॥ ४२ ॥ प्रियमाणश्चासावतिभीषणाकृतिरतिकरात्वदनो राक्षसोऽभृत् ॥ ४३ ॥ द्वितीयोऽपि प्रतिक्रियां ते

करिष्यामीत्युक्त्वान्तर्धानं जगाम ॥ ४४ ॥ कालेन गच्छता सौदासो यज्ञमयजत् ॥ ४५ ॥ परिनिष्ठितयज्ञे आचार्ये वसिष्ठे निष्कान्ते तद्रक्षो वसिष्ठरूपमास्थाय यज्ञावसाने मम नरमांसभोजनं

देयमिति तत्संस्कियतां क्षणादागमिष्यामी-त्युक्त्वा निष्कान्तः ॥ ४६ ॥ भूयश्च सूदवेषं कृत्वा राजाज्ञया मानुषं मांसं संस्कृत्य राज्ञे न्यवेदयत् ॥ ४७ ॥ असावपि हिरण्यपात्रे मांसमादाय

वसिष्ठायमनप्रतीक्षाकोऽभवत् ॥ ४८ ॥ आगताय वसिष्ठाय निवेदितवान् ॥ ४९ ॥

स चाप्यचिन्तयदहो अस्य राज्ञो दौरशिल्यं येनैतन्मांसमस्माकं प्रयक्कति किमेतद्ब्रस्य-जातमिति ध्यानपरोऽभवत् ॥ ५० ॥ अपश्यष्ठ तन्मांसं मानुष्य् ॥ ५१ ॥ अतः क्रोधकलुषी-कृतचेता राजिन शापमुत्ससर्जे ॥ ५२ ॥ यस्मादभोज्यमेतदस्मद्विधानां तपस्विनामव-गक्कत्रपि भवान्मद्वी ददाति तस्मानवैवात्र लोल्पता भविष्यतीति ॥ ५३ ॥ अपने पितामहकी यज्ञज्ञालामें आया ॥ ३०-३१ ॥ एजा सगरने भी बोड़ेके मिल जानेपर अपना यज्ञ समाप्त किया और [अपने पुत्रोंके खोदे हुए] सागरको ही अपस्य-खेड़से अपना पुत्र माना ॥ ३२-३३ ॥ उस अंजुमान्के दिलीप नामक पुत्र हुआ और दिलीपके भगीरथ हुआ जिसने गृङ्गाजीको स्वर्गरो पृथिवीपर लाकर उनका नाम भागीरथी कर दिया ॥ ३४-३५ ॥

भगीरथसे सुहोत्र, सुहोत्रसे श्रुति, श्रुतिसे नाभाग, नाभगासे अम्बरीय, अम्बरीयसे सिन्धुद्वीप, सिन्धुद्विपसे अयुतायु और अतुतायुसे ऋतुपर्ण नामक पुत्र हुआ जो राजा नलका सहायक और द्यूतक्रीडाका पारदर्शी था॥ ३६-३७॥

्र ऋतुपर्णका पुत्र सर्वकाम था, उसका सुदास और सुदासका पुत्र सौदास मित्रसह हुआ ॥ ३८—४० ॥ एक दिन मृगयाके लिये वनमें घुमते-घुमते उसने दो व्याघ

देखे ॥ ४१ ॥ इन्होंने सम्पूर्ण वनको मृगहीन कर दिया है—ऐसा समझकर इसने उनगेरी एकको वाणसे मार

हाला ॥ ४२ ॥ मस्ते समय यह अति भयङ्कररूप हुर-बदन सक्षस हो गंबा ॥ ४३ ॥ तथा दूसस भी 'मैं इसका

बदला लूँगा' ऐसा कहकर अन्तर्थान हो गया ॥ ४४ ॥ । कालान्तरमें सीदासने एक वश किया ॥ ४५ ॥ यज्ञ समाप्त हो जानेपर जब आचार्य बसिष्ठ बाहर चले गये तब

यह रक्षस वसिष्ठजीका रूप बनाकर बोला, 'यज्ञके पूर्ण होनेपर मुझे नर-मांसबुक्त भोजन कराना चाहिये; अतः तुम

ऐसा अन्न तैयार कराओ, भैं अभी आहा हूँ ऐसा कहकर यह बाहर चला गया ॥ ४६ ॥ फिर रसोइयेक्ट येव बनाकर

राजाको आज्ञासे उसने मनुष्यका मांस पकाकर उसे निवेदन किया ॥ ४७ ॥ राजा भी उसे सुवर्णपात्रमें रखकर वसिष्ठजीके आनेकी प्रतीका करने लगा और उनके आते

ही वह मांस निवेदन कर दिया ॥ ४८-४९ ॥

[अर्थात् तु राक्षस हो जावगा] ॥ ५३ ॥

चसिष्ठजीने सोचा, 'अही ! इस राजाकी कुटिलता तो देखो जो यह जान-बूझकर भी मुझे खानेके रिल्ये यह मांस देता है।' फिर यह जाननेके लिये कि यह किसका है वे ध्यानस्थ हो। गये॥ ५०॥ ध्यानावस्थामें उन्होंने देखा कि यह तो नरनांस है॥ ५१॥ तब तो क्रोधके कारण शुक्यचित्त होकर उन्होंने राजाको यह शाप दिया॥ ५२॥ 'क्योंकि तुने जान-बूझकर भी हमारे-जैसे तप्रस्थियोंके लिये अत्यन्त अभक्ष्य यह नरमांस मुझे खानेको दिया है इसलिये तेरी इसीये छोलुपता होगी अनन्तरं च तेनापि भगवतैवाभिहितोऽस्मीत्युक्ते कि कि मयाभिहितमिति मुनिः पुनरपि समाधौ तस्त्रौ ॥ ५४ ॥ समाधिविज्ञानावगतार्धश्चानु-प्रहं तस्मै चकार नात्यान्तिकमेतद्द्वादशस्त्रदं तब भोजनं भविष्यतीति ॥ ५५ ॥ असावपि प्रति-गृह्योदकाञ्चलि मुनिशापप्रदानायोद्यतो भगव-त्रयमस्म हुर्ज्नार्हस्येनं कुलदेवताभृतमाचार्ये शमुमिति मदयन्त्रा स्वपत्या प्रसादितस्सस्या-स्वुद्दरक्षणार्थं तच्छापास्तु नोर्व्यां न चाकाशे चिश्चेप कि तु तेनैव स्वपदौ सिषेच ॥ ५६ ॥ तेन च कोधाश्चितेनास्त्रुना दम्धच्छायौ तत्पादौ कल्याषता-मुपगतौ ततस्स कल्याषपादसंज्ञामवाप ॥ ५७ ॥ वसिष्ठशापाद्य षष्ठे षष्ठे काले राक्षसस्वभाव-मेत्याटव्यां पर्यटन्ननेकशो मानुषानभक्षयत् ॥ ५८ ॥

एकदा तु कञ्चिमुनिमृतुकाले भार्यासङ्गतं ददर्श ॥ ५९ ॥ तबोझ तमतिभीषणं राक्षस-खरूपमयलोक्य त्रासाद्दम्पत्योः प्रधावितयो-ब्रांह्यणं जन्नाह ॥ ६० ॥ ततस्सा ब्राह्यणी बहुशस्तमभियाचितवती ॥ ६९ ॥ प्रसीदेक्ष्वाकु-कुलतिलकभूतस्व महाराजो मित्रसहो न राक्षसः ॥ ६२ ॥ नाहींस स्त्रीधर्मसुखाभिन्नो मय्य-कृतार्थायामस्रक्तारं हन्तुमित्येवं बहुअकारं तस्यां विलपन्त्यां व्यावः पशुमिवारण्येऽभिमतं तं ब्राह्यणमभक्षयत् ॥ ६३ ॥

ततश्चातिकोपसमन्विता ब्राह्मणी तं राजानं शशाप ॥ ६४ ॥ यस्मादेवं मय्यतृप्तायां त्वयायं मत्पतिभीक्षितः तस्मात्त्वमपि कामोपभोगप्रवृत्तो-उन्तं प्राप्यसीति ॥ ६५ ॥ शप्ता चैवं सावि प्रविवेश ॥ ६६ ॥

ततस्तस्य द्वादशाब्दपर्वये विमुक्तशापस्य स्रोतिषयाधिलाविणो मदयन्ती तं स्मारयामास ॥ ६७ ॥

तदनन्तर राजाके यह कहनेपर कि 'भगवन् आपहीने ऐसी आज्ञा की थी, ' वसिष्टजी यह कहते हुए कि 'क्या मैंते ही ऐसा कहा था ?' फिर समाधिस्थ हो गये॥ ५४ ॥ समाधिद्वारा यथार्थ बात जानकर उन्होंने राजापर अनुप्रह करते हुए कहा, "तू अधिक दिन नरमांस भीजन न करेगा, केवर बारह वर्ष हाँ तुझे ऐसा करना होगा" ॥ ५५ ॥ वसिष्ठजीके ऐसा कहनेपर राजा सौदास भी अपनी अञ्जलिमें जल लेकर मुनीश्वरको शाप देनेके लिये उद्यत हुआ । किन्तु अपनी पत्नी मदयन्तीद्वारा 'भगवन् ! ये हमारे कलगुरु है, इन कुलदेबरूप आचार्यको ऋप देना उचित नहीं है' — ऐसा कहे जानेसे शान्त हो गया तथा अन्न और मेचकी रक्षाके कारण उस ज्ञाप-जलको पृथियी या आकाशमें नहीं फेका, बरिक उससे अपने पैरोंको ही भिगो लिया ॥ ५६ ॥ उस क्रोधयुक्त जलसे उसके पैर झ्लसकर कल्यायवर्ण (चितकबरे) हो गये। तभीसे उनका नाम कल्मायपाद हुआ॥ ५७॥ तथा वसिष्ठजांके शायके प्रभावसे छठे कालमें अर्थात् तीसरे दिनके अत्तिम भागमें वह राक्षस-स्वभाव धारणकर वनमें घुमते हुए अनेकों मन्त्र्योको खाने लगा ॥ ५८ ॥

एक दिन उसने एक मुनीश्वरको ऋतुकालके समय अपनी धायांसे सङ्गम करते देखा ॥ ५१ ॥ उस अति भीषण राक्षस-रूपको देखकर भयसे भागते हुए उन दम्पतियोमेसे उसने ब्राह्मणको पकड़ लिया ॥ ६० ॥ तव ब्राह्मणीने उससे नाना प्रकारसे प्रार्थना की और कहा— "हे राजन् ! प्रसन्न होइये । आप राक्षस नहीं है बिल्फ इक्ष्याकुकुलतिलक महाराज मित्रसह है ॥ ६१-६२ ॥ आप खो-संयोगके सुसको जाननेवाले हैं, मैं अतृम हूँ, भेरे पतिको मारना आपको उचित नहीं है ।' इस प्रकार उसके नाना प्रकारसे विलाप करनेपर भी उसने उस ब्राह्मणको इस प्रकार भक्षण कर लिख जैसे नाघ अपने अधिमत पश्चको वनमें फ्याइकर सा जाता है ॥ ६३ ॥

तब ब्राह्मणीने अत्यन्त क्रोधित होकर राजाको जाप दिया— ॥ ६४ ॥ 'अरे ! तूने मेरे अतुप्त रहते हुए भी इस प्रकार मेरे पतिको खा लिया, इसलिये कामोपभोगमें प्रवृत्त होते ही तेस अन्त हो जायगा' ॥ ६५ ॥ इस प्रकार जाप देकर वह अग्रिमें प्रविष्ट हो गयी ॥ ६६ ॥

तदनन्तर बारह वर्षके अन्तमें शापभुक्त हो जानेपर एक दिन विषय-कायनामें प्रवृत्त होनेपर रानी मदयनीने उसे ब्राह्मणीके शापका स्मरण करा दिया॥ ६७॥ ततः परमसौ स्त्रीथोगं तत्याज ॥ ६८ ॥ वसिष्ठ-श्चापुत्रेण राज्ञा पुत्रार्थमध्यश्चितो मदयन्त्यो गर्भाधानं चकार ॥ ६९ ॥ यदा च सप्तवर्याण्यसौ गर्भो न जज्ञे ततस्तं गर्भमश्चना सा देवी जघान ॥ ७० ॥ पुत्रश्चाजायत ॥ ७१ ॥ तस्य चाश्मक इत्येव नामाभवत् ॥ ७२ ॥ अश्मकस्य मूलको नाम पुत्रोऽभवत् ॥ ७३ ॥ योऽसौ निःक्षत्रे क्ष्मातलेऽस्मिन् क्रियमाणे स्त्रीभिर्विवस्त्राभिः परिवार्य रक्षितस्ततस्तं नारीकवचमुदाहरन्ति ॥ ७४ ॥ मूलकाद्दारथस्तस्मादिलिविलस्ततश्च

विश्वसहः ॥ ७५ ॥ तस्माच खद्वाङ्गो योऽसौ देवासुरसङ्ग्रामे देवैरध्यर्थितोऽसुराञ्ज्ञघान ।। ७६ ।। स्वर्गे च कृतप्रियैदेवैर्वरग्रहणाय चोदितः प्राह ॥ ७७ ॥ यद्यवद्यं वरो ब्राह्मस्तन्ममायुः कथ्यतामिति ॥ ७८ ॥ अनन्तरं च एकमुहर्त्तप्रमाणं तवायुरित्युक्तोऽश्वास्विलन-गतिना विमानेन लिघमगुणो मर्त्यलोकमागम्ये-दमाइ ॥ ७९ ॥ यथा न ब्राह्मणेभ्यस्सकाञा-दात्मापि मे प्रियतरो न च स्वधर्मोल्लङ्कनं मया कदाचिदप्यनृष्टितं न च सकलदेवमानुषपशुपक्षि-वृक्षादिकेषुव्यतव्यतिरेकवती दृष्टिर्ममाभूत् तथा तमेवं मुनिजनानुस्पृतं भगवन्तमस्खलितगतिः प्रापयेयमित्यशेषदेवगुरी भगवत्यनिर्देश्यवपृषि सत्तामात्रात्मन्यात्मानं परमात्मनि वासुदेवाख्ये युयोज तत्रैव च लयमवाप ॥ ८० ॥ अत्रापि श्रूयते रुलोको गीतस्सप्तर्विभिः पुरा । खद्वाङ्गेन समो नान्यः कश्चिद्व्यां भविष्यति ॥ ८१

त्रयोऽभिसंहिता लोका बुद्ध्या सत्येन चैव हि ॥ ८२ खट्वाङ्काद्दीर्घवाहुः पुत्रोऽभवत् ॥ ८३ ॥ ततो खुरभवत् ॥ ८४ ॥ तस्मादप्यजः ॥ ८५ ॥ अजाद्दशरथः ॥ ८६ ॥ तस्यापि भगवानक्जनाभो जगतः स्थित्यर्थमात्मोदोन रामलक्ष्मणभरत-राष्ट्रप्ररूपेण चतुर्द्धा पुत्रत्वमायासीत् ॥ ८७ ॥

येन स्वर्गादिहागम्य मुहर्तं प्राप्य जीवितम् ।

तभीसे राजाने स्नी-सम्भोग त्याग दिया ॥ ६८ ॥ पीछे पुत्रहोन राजाके प्रार्थना करनेपर चस्तिष्ठजीने मदयन्तीके गर्भाश्वान किया ॥ ६९ ॥ जब उस गर्भने सात वर्ष व्यतीत होनेपर भी जन्म न लिया तो देवों मदयन्तीने उसपर प्रत्यरसे प्रहार किया ॥ ७० ॥ इससे उसी समय पुत्र उत्पन्न हुआ और उसका नाम अञ्चल हुआ ॥ ७१-७२ ॥ अञ्चलके मूलक नामक पुत्र हुआ ॥ ७३ ॥ जब परशुरामजीद्वारा यह पृथिवीतल क्षत्रियहीन किया जा रहा था उस समय उस (मूलक) की रक्षा बखड़ीना क्षियोंने घेरकर की थी, इससे उसे नारीकनच भी कहते हैं ॥ ७४ ॥

पुलकके दशस्य, दशस्यके इलिबिल, इलिबिलके विश्वसह और विश्वसहके सहवाहं नामक पुत्र हुआ, जिसने देवासुरसंभाममें देवताओंके प्रार्थना करनेपर दैत्योंका वध किया था॥ ७५-७६ ॥ इस प्रकार स्वर्गमें देवताओंका प्रिय करनेसे उनके द्वारा वर मॉगनेके लिये प्रेरित किये जानेपर उसने कहा--- ॥ ७७ ॥ "यदि मुझे वर प्रहण करना ही पड़ेगा तो आपलोग मेरी आयु बतलाइये" ॥ ७८ ॥ तब देवताओंके यह कहनेपर कि तुन्हारी आयु केवल एक मुहुर्त और रही है वह [देवताओंके दिये हुए] एक अनवरुद्धगति विमानपर बैठकर बड़ी शोधतासे मर्सलोकमें आया और कहने लगा— ॥ ७९ ॥ 'यदि मुझे ब्राह्मणोकी अपेक्षा कभी अपना आत्मा भी वियतर नहीं हुआ, यदि मैंने कभी स्वधर्मका उल्लब्धन नहीं किया और सम्पूर्ण देव, मनुष्य, पद्म, पक्षी और बृधादिमें श्रीअच्युतके अतिरिक्त मेरी अन्य दृष्टि नहीं हुई तो मैं निर्विष्ठतापूर्वक उन मुनिजनवन्दित प्रभुको प्राप्त होऊँ।' ऐसा कहते हुए राजा खट्वाड्वो रान्पूर्ण देवताओंके गृह, अकंधनीयस्वरूप, सत्तामात्र-शरीर, परमात्मा भगवान वासदेवमें अपना चित्त रुगा दिया और उन्होंमें स्त्रीन हो गये ॥ ८० ॥

इस विषयमें भी पूर्वकालमें सप्तर्षियोद्वार कहा हुआ इलोक सुना जाता है। [उसमें कहा है—] 'खट्वाङ्गके समान पृथिवीदलमें अन्य कोई भी राजा नहीं होगा, जिसने एक मुहूर्तमात्र जीवनके रहते ही स्वर्गलोकसे भूमण्डलमें आकर अपनी बुद्धिश तोनों लोकोंको सत्यस्वरूप भगवान् वासुदेवमय देखा' ॥ ८१-८२ ॥

सद्बाहुसे दीर्घवाहु भामक पुत्र हुआ। दीर्घवाहुसे रहु, राषुसे अज और अजसे दशरधने जन्म लिया ॥ ८३ — ८६ ॥ दशरधजीके भगवान् कमलनाभ जगत्की स्थितिके रिज्ये अपने अंशोंसे राम, लक्ष्मण, चरत और शत्रुष्ट्र रामोऽपि बाल एव विश्वामित्रवागरक्षणाय गच्छेस्ताटकां जवान ॥ ८८ ॥ यहे च मारीच-मियुवाताहतं समुद्रे चिक्षेप ॥ ८९ ॥ सुबाहु-प्रमुखांश्च क्षयमनवत् ॥ ९० ॥ दर्शनमात्रे-णाहल्यामपापां चकार ॥ ९१ ॥ जनकगृहे च माहेश्वरं चापमनायासेन बभञ्ज ॥ ९२ ॥ सीतामयोनिजां जनकराजतनवां वीर्यशुल्कां लेमे ॥ ९३ ॥ सकलक्षत्रियक्षयकारिणमशेष-हैहयकुलशूमकेतुभूतं च परशुराममपास्तवीर्य-बलावलेपं चकार ॥ ९४ ॥

पितृषचनाद्यागिणतराज्याभिलाषो भ्रातृ-भार्यासमेतो वनं प्रविवेश ॥ १५ ॥ विराधस्वर-दूषणादीन् कबन्धसारिजनौ च निजधान ॥ १६ ॥ बद्धा चाम्मोनिधिमशेषराक्षसकुलक्षयं कृत्वा दश्चाननापहृतां भार्या तद्वधादपहृतकलङ्का-मण्यनलप्रवेशशुद्धामशेषदेवसङ्घैः स्तूयमानश्चीलां जनकराजकन्यामयोध्यामानिन्ये ॥ १७ ॥ तत-श्चाभिषेकमङ्गलं मैत्रेय वर्षशतेनापि वक्तुं न शक्यते सङ्क्षेपेण श्रूयताम् ॥ १८ ॥

लक्ष्मणभरतशत्रुश्चविभीषणसुग्रीवाङ्गद-जाम्बवद्धनुमत्रभृतिभिस्समृत्फुल्लवद्दैरेख्त्र-चामरादियुतैः सेव्यमानो दाशरिधर्षहोन्द्राग्नि-यमनिर्व्हतिवरूणवायुकुबेरेशानप्रभृतिभि-स्सवामरेविसिष्ठवामदेववाल्मीकिमार्कण्डेय-विश्वामित्रभरद्वाजागस्त्यप्रभृतिभिर्मुनिवरैः ऋग्यजुस्सामाथविभिस्संस्तूयमानो नृत्यगीत-वाद्याद्यस्तिम्ललोकमङ्गलवाद्यैवीणावेणुमृदङ्गभेरी-पट्टशङ्खकाहलगे पुखप्रभृतिभिस्सुनादैस्समस्त-भूभृतो मध्ये सकललोकरक्षार्थं यथोचित-मभिषिक्तो दाशरिथः कोसलेन्द्रो रघुकुलतिलको जानकीप्रियो भातृत्रयप्रियस्सिहासनगत एकादशाब्दसहस्र राज्यमकरोत् ॥ ९९ ॥ इन चार रूपोंसे पुत्र-भावको प्राप्त हुए ॥ ८७ ॥ 🐃

रामजीने बाल्यावस्थामें ही विश्वामित्रजीकी यहारशाके लिये जाते हुए मार्गमें ही ताटका सक्षरोको मास, फिर यहारालमें पहुँचकर मारीचको बाणरूपी वायुसे आहत कर समुद्रमें फेंक दिया और सुबादु आदि सक्षरोंको नष्ट कर हाला ॥ ८८ — ९० ॥ उन्होंने अपने दर्शनमञ्जसे अहल्याको निष्माप किया, जनकजीके राजभवनमें बिना अम ही महादेवजीका धनुष तोड़ा और पुरुषार्थसे ही प्राप्त होनेवाली अयोनिजा जनकराजनिद्दी श्रीसीताजीको प्रविक्तियों प्राप्त किया ॥ ९१ — ९३ ॥ और तदनन्तर सम्पूर्ण श्रिक्तिकर परशुसमंजीके बल-वीर्यको सर्व तष्ट किया ॥ ९४ ॥

फिर पिताके वचनसे राज्यलक्ष्मीको कुछ भी न गिनकर भाई लक्ष्मण और धर्मपत्नी सीताके सहित वनमें चले गये ॥ ९५ ॥ वहाँ विरोध, खर, दूषण आदि सक्षस तथा कवन्य और वालीका वध किया और समुद्रका पुल बाँधकर सम्पूर्ण राक्षसकुलका विध्वंस किया तथा रावणद्वारा हरी हुई और उसके थधसे कल्क्कूहोना होनेपर भी अग्नि-प्रवेशसे शुद्ध हुई समसा देवगणींसे प्रशीसित स्वभावंवाली अपनी भार्या जनकराजकत्या सीताको अयोध्यामें ले आये ॥ ९६-९७ ॥ हे मैंग्रेय । उस समय उनके राज्याभिषेक-जैसा मङ्गल हुआ उसका तो सौ वर्षमें भी वर्णन नहीं किया जा सकता; तथापि संदोपसे सुनी ॥ ९८ ॥

दशस्य-नन्दन श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्नवदन रुश्सण, भरत, धावुन, विभोषण, सुप्रीव, अङ्गद, जाम्बवान् और हनुभान् आदिसे छन्न-चामरादिद्वारा सेवित हो, बह्मा, इन्द्र, अग्नि, यम, निर्मृति, वरुण, वायु, कुबेर और ईशान आदि सम्पूर्ण देवराण, चिसष्ठ, चामदेव, वाल्मोकि, मार्करहेव, विभागित, भरद्वाज और अगस्य आदि मुनिजन तथा ऋक्, यजुः, साम और अध्यववदांसे स्तृति किये जाते हुए तथा नृत्य, गीत, बाद्य आदि सम्पूर्ण मङ्गलसामग्नियों-सहित बीणा, वेणु, मृदङ्ग, भेरी, पटह, प्रह्म, काहल और पोसुख आदि बाबोके घोषके साथ समस्त राजाओंके मध्यमें सम्पूर्ण लोकोंको स्थान हित विधिपूर्वक अभिवत्त हुए। इस प्रकार दशस्यकुमार कोसलाविपति, रमुकुलितलक, जानकीवल्लम, तीनो धाताओंके प्रिय श्रीरामचन्द्रजीने सिहासनारूढ़ होकर प्यारह हजार वर्ष राज्य-शासन किया॥ १९॥

भरतोऽपि गन्धर्वविषयसाधनाय गन्छन् संप्रामे गन्धर्वकोटीस्तिस्रो जधान ॥ १०० ॥ शत्रुघ्ने-नाप्यमितबलपराक्रमी मधुपुत्रो लवणी नाम राक्षसो निहतो मथुरा च निवेशिता ॥ १०१ ॥ इत्येवमाद्यतिबलपराक्रमविक्रमणैरतिदुष्ट-संहारिणोऽशेषस्य जगतो निष्पदितस्थितयो राम-

लक्ष्मणभरतराश्रुद्धाः पुनरपि दिवमारूढाः ॥ १०२ ॥ येऽपि तेषु भगवदंशेष्ट्रनुरागिणः कोसलनगर-जानपदास्तेऽपि तन्यनसस्तत्सालोक्यतामवापुः ॥ १०३ ॥

अतिदुष्टसंहारिणो रामस्य कुशलवौ ह्रौ पुत्रौ

लक्ष्मणस्याङ्गदचन्द्रकेत् तक्षपुष्कलो भरतस्य सुबाहुशूरसेनी शत्रुघ्रस्य ॥ १०४ ॥ कुशस्या-तिथिरतिथेरपि निषध: पुत्रोऽभूत् ॥ १०५ ॥ निषधस्याप्यनलस्तस्पादपि नभाः नभसः पुण्डरीकस्तत्तनयः क्षेमधन्या तस्य च देवानीक-स्तस्याप्यहीनकोऽद्वीनकस्यापि स्तस्तस्य पारियात्रकः पारियात्रकाद्देवलो देवलाद्वरालः, तस्याप्युत्कः, उत्काच वज्रनाभस्तस्माच्यञ्जणस्तस्मा-द्युषिताश्चस्ततश्च विश्वसहो जज़े ॥ १०६ ॥ तस्माद्धरण्यनाभो यो महायोगीश्वराजैमिनेश्शिष्या-द्याज्ञवल्क्याद्योगपवाप ॥ १०७॥ हिरण्यनाभस्य पुत्रः पुष्यस्तस्माद्ध्वसन्धिस्ततस्मुदर्शनस्तस्मा-द्रशिवर्णस्तत्रशीव्रगस्तस्मादपि पुत्रोऽभवत् ॥ १०८ ॥ योऽसौ योगपारथायाद्यापि

कलापत्राममाश्रित्य तिष्ठति ॥ १०९ ॥ आगामियुगे सूर्यवंशक्षत्रप्रवर्त्तीयता भविष्यति ॥ ११० ॥ तस्यात्मजः प्रसुश्रुतस्तस्यापि सुसन्धि-स्ततश्चाप्यमर्षस्तस्य च सहस्यांस्ततश्च विश्वभवः

॥ १११ ॥ तस्य बृहद्बलः बोर्ज्जुनतनवेनाभि-मन्युना भारतयुद्धे क्षयमनीयत ॥ ११२ ॥

एते इक्ष्वाकुभूपालाः प्राधान्येन मयेरिताः। एतेषां चरितं शृण्वन् सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ११३ ॥

भरतजीने भी गन्धर्वछोकको जीतनेके लिये जाकर युद्धमें तीन करोड़ गन्धवींका वध किया और शतुभ्रजीने भी अतुलित बलशाली महापराक्रमी मधुपुत्र लक्षण राक्षसका संहार किया और मधुरा नामक नगरकी स्थापना की ॥ १००-१०१ ॥ इस प्रकार अपने अतिहास बल-पराक्रमसे महान् दुष्टोको नष्ट करनेवाले भगवान् राम, रुक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न सम्पूर्ण जगत्की यथोचित व्यवस्था करनेके अनुत्तर फिर स्वर्गलोकको प्रधारे ॥ १०२ ॥ उनके साथ ही जो अयोध्यानिवासी उन भगवर्दशस्वरूपोंके अतिशय अनुरागी थे उन्होंने भी तन्मय होनेके कारण सालोक्य-मुक्ति प्राप्त की ॥ १०३ ॥

दुष्ट-दरल मगवान् समके कुश और लव नामक दो पुत्र

346

हुए। इसी प्रकार लक्ष्मणजीके अङ्गद और चन्द्रकेतु, भरतजीके तक्ष और पुष्कल तथा शत्रुघ्नजीके सुबाहु और शुरसेन नामक पुत्र हुए॥१०४॥ कुशके अतिथि, अतिथिके निषध, निषधके अनल, अनलके नभ, नृभके पुण्डरीक, पुण्डरीकके क्षेमधन्या, क्षेमधन्याके देवानीक, देवानीकके अहीनक, अहीनकके रुठ, रुठके पारियात्रक, पारियात्रकके देवल, देवलके बद्धल, बद्धलके उत्क, उत्कके कब्रनाभ, वब्रनाभके शङ्खण, शङ्खणके युषिताश्च और युषिताशके विश्वसह नामक पुत्र हुआ ॥ १०५-१०६ ॥ विश्वसहके हिरण्यनाभ नामक पुत्र हुआ जिसने जैमिनिके दिख्य महायोगोश्वर याञ्चवल्क्यजीसे थोगविद्या पाप्त की थी॥ १०७॥ हिरण्यनाभका पुत्र पुष्य था, उसका धुवसन्धि, घुवसन्धिका सुदर्शन, सुदर्शनका अग्निवर्ण, अग्निवर्णका शोद्यग तथा शोद्यगका पुत्र मरु हुआ जो इस समय भी योगाभ्यासमें तत्पर हुआ कल्अपग्राममें स्थित है ॥ १०८-१०९ ॥ आगामी युगमें यह सूर्यवंशीय

इस प्रकार मैंने यह इक्ष्याकुकुरुके प्रधान-प्रधान राजाओंका वर्णन किया। इनका चरित्र सुननेसे मनुष्य सकल पापोसे मुक्त हो जाता है ॥ ११३ ॥

क्षत्रियोक्त प्रवर्तक होगा ॥ ११० ॥ मरुका पुत्र प्रसुश्रुत, प्रसुश्रुतका सुसन्धि, सुसन्धिका अमर्ष, अमर्षका सहस्वान्,

सहसान्का विश्वभव तथा विश्वभवका पुत्र बृहद्वरू

हुआ विसको भारतीय युद्धमें अर्जुनके पुत्र अभिमन्युने

मारा था ॥ १११-११२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पाँचवाँ अध्याय

निमि-वरित्र और निमिवंशका वर्णन

श्रीपराशर उपाच

इक्ष्वाकुतनयो योऽसौ निमिनीम सहस्रं वत्सरं सत्रमारेभे ॥ १ ॥ वसिष्ठं च होतारं वरवामास ॥ २ ॥ तमाह वसिष्ठोऽहमिन्द्रेण पञ्चवर्षशत-यागार्थं प्रथमं वृतः ॥ ३ ॥ तदनन्तरं प्रतिपाल्यता-मागतस्तवापि ऋत्विग्भविष्यामोत्युक्ते स पृथिवीपतिनं किञ्चिदुक्तवान् ॥ ४ ॥

वसिष्ठोऽप्यनेन समन्वीधिसतमित्यमरपते-र्यागमकरोत् ॥ ५ ॥ सोऽपि तत्काल एवान्यैगौत-मादिभिर्यागमकरोत् ॥ ६ ॥

समाप्ते चांमरपतेयांगे त्वरथा वसिष्ठो निमियज्ञं करिष्यामीत्याजगाम ॥ ७ ॥ तत्कर्मकर्तृत्वं च गौतमस्य दृष्ट्वा त्वपते तस्मै राज्ञे मां प्रत्याख्यायैतद्देन गौतमाय कर्मान्तरं समर्पितं यस्मात्तस्मादयं विदेहो भविष्यतीति ज्ञापं ददौ ॥ ८ ॥ प्रबुद्धशास्तववनि-पतिरपि प्राह ॥ १ ॥ यस्मान्यामसम्भाष्या-ज्ञानत एव ज्ञयानस्य ज्ञापोत्सर्गमसौ दृष्टगुरुशकार तस्मात्तस्यापि देहः पतिष्यतीति ज्ञापं दत्त्वा देहमत्यजत् ॥ १० ॥

तच्छापाच मित्रावरूणयोस्तेजसि वसिष्ठस्य चेतः प्रविष्टम् ॥ ११ ॥ उर्वशीदर्शनादुद्धृत-बीजप्रपातयोस्तयोस्तकाशाह्यसिष्ठो देहमपरं लेभे ॥ १२ ॥ निमेरपि तच्छरीरमतिमनोहर-गन्धतैलादिभिरुपसंस्क्रियमाणं नैव क्रेट्सदिकं दोषमवाप सहो मृत इव तस्थौ ॥ १३ ॥

यज्ञसमाप्तौ भागप्रहणाय देवानागतानृत्विज अचुर्यजमानाय वरो दीयतामिति ॥ १४ ॥ देवैश्च छन्दितोऽसौ निमिराह ॥ १५ ॥ भगवन्तोऽखिल-संसारदुःखहन्तारः ॥ १६ ॥ म होतादुगन्यद्-दुःखमस्ति यच्छरीरात्मनोर्वियोगे भवति ॥ १७ ॥ तदहमिच्छामि सकललोकलोचनेषु वस्तुं न पुनश्शरीरप्रहणं कर्तुमित्येवमुक्तैदेवैरसावशेष- श्रीपराशरजी बोल्डे—इश्वाकुका जो निम नामक पुत्र था उसने एक सहस्रवर्षमें समाग्न होनेवाले यज्ञया आरम्य किया ॥ १ ॥ उस यज्ञमें उसने वसिष्ठजीको होता वरण किया ॥ २ ॥ वसिष्ठजीने उससे कहा कि पाँच सी वर्षके यज्ञके लिये इन्द्रने मुझे पहले ही वरण कर लिया है ॥ ३ ॥ अतः इतने समय तुम ठहर जाओ, वहाँसे आनेपर में तुम्हारा भी ऋत्विक् हो जाऊँगा । उनके ऐसा कहनेपर राजाने उन्हें कुछ भी उत्तर नहीं दिया ॥ ४ ॥ वसिष्ठजीने यह समझक्य कि राजाने उनका कथन

स्वीकार कर लिया है इन्द्रका यज्ञ आरम्थ कर दिया ॥ ५ ॥ किंतु राजा निथि भी उसी समय पौतमादि अन्य होताओंद्वारा अपना यज्ञ करने लगे ॥ ६ ॥ देवराज इन्द्रका यज्ञ समाप्त होते ही 'मुझे निमिक्ता यज्ञ

कराना हैं इस विचारसे वसिष्ठजी भी तुरंत ही आ गये ॥ ७ ॥ उस यज्ञमें अपना [होताका] कर्म गौतमको करते देख उन्होंने सोते हुए राजा निमिको यह शाप दिया कि 'इसने मेरी अवज्ञा करके सम्पूर्ण कर्मका भार गौतमको सौंपा है इसिल्ये यह देहहीन हो जायगा' ॥ ८ ॥ सोकर उठनेपर राजा विमिने भी कहा— ॥ ९ ॥ "इस दुष्ट गुरुने मुझसे विना बातजीत किये अज्ञानतापूर्वक मुझ सोये हुएको शाप दिया है, इसिल्ये इसका देह भी नष्ट हो जायगा।" इस प्रकार शाप रेकर राजाने अपना शरीर स्नोड़ दिया॥ १० ॥

राजा निभिके शापसे वसिष्ठजीका लिङ्गदेह मित्रावरूणके वीर्यमें प्रविष्ट हुआ ॥ ११ ॥ और उर्वशीके देखनेसे उसका वीर्य स्वतिलत होनेपर उसीसे उन्होंने दूसरा देह धारण किया ॥ १२ ॥ निभिका शरीर भो आंत मनोहर गन्ध और तैल आदिसे सुरक्षित रहनेके कारण गला-सड़ा नहीं, बॉल्क तत्काल मरे हुए देहके समान ही रहा ॥ १३ ॥

यज्ञ समाप्त होनेपर जब देवगण अपना भाग प्रहण करनेके किये आये तो उनसे ऋत्विणण बोले कि— "यजमानको वर दीजिये"॥ १४ ॥ देवताओद्वारा प्रेरणा किये जानेपर राजा निमिने उनसे कहा— ॥ १५ ॥ "भगवन् ! आपलोम सम्पूर्ण संसार-दुःखको दूर करनेथाले हैं॥ १६ ॥ मेरे विचारमें हारीर और आत्माके वियोग होनेमें बैसा दुःख होता है वैसा और कोई दुःख नहीं है॥ १७ ॥ इसक्तिये मैं अब फिर हारीर प्रहण करना नहीं चाहता, समस्त लोगोंके नेत्रोंमे ही वास करना चाहता हूँ ।" भूतानां नेत्रेषुवतास्तिः ॥ १८ ॥ ततो भूतान्यु-न्मेषनिमेषं चक्रुः ॥ १९ ॥

अपुत्रस्य च भूभुजः शरीरमराजकभीरवो मुनयोऽरण्या ममन्थुः ॥ २० ॥ तत्र च कुषारो जज्ञे ॥ २१ ॥ जननाजनकसंज्ञां चावाप ॥ २२ ॥ अभूद्विदेहोऽस्य पितेति वैदेहः, मधनान्मिधिरिति ॥ २३ ॥ तस्योदावसुः पुत्रोऽभवत् ॥ २४ ॥ उदावसोर्नन्दिवर्द्धनस्ततस्सुकेतुः तस्माद्देवरात-स्ततश्च बृहदुक्यः तस्य च महावीर्यस्तस्यापि सुधृतिः ॥ २५ ॥ ततश्च धृष्टकेतुरजायत ॥ २६ ॥ धृष्टकेतोईर्यश्चस्तस्य च मनुर्मनोः प्रतिकः, तस्मात्कृतरथस्तस्य देवपिदः, तस्य च विखुधो विबुधस्य महाधृतिस्ततश्च कृतरातः, ततो महारोमा तस्य सुवर्णरोमा तत्पुत्रो हुखरोमा हुखरोम्णस्तीर-ध्वजोऽभवत् ॥ २७ ॥ तस्य पुत्रार्थं यजनभुवं कृवतः सीरे सीता दृहिता समुत्यन्न ॥ २८ ॥

सीरथ्वजस्य भ्राता साङ्काश्याधिपतिः कुश-ध्वजनामासीत् ॥ २९ ॥ सीरध्वजस्यापत्यं भानुमान् भानुमतश्शतद्युम्नः तस्य तु शुचिः तस्माद्योर्जनामा पुत्रो जज्ञे ॥ ३० ॥ तस्यापि शतध्वजः, ततः कृतिः कृतेरञ्जनः, तत्पुत्रः कुरुजित् ततोऽरिष्टनेमिः तस्माच्छ्रतायुः श्रुतायुषः सुपार्श्वः तस्मात्सुञ्जयः, ततः क्षेमावी क्षेमाविनोऽनेनाः तस्माद्धीमस्थः, तस्य सत्यरथः, तस्मादुपगु-रुपगोरुपगुप्तः, तत्पुत्रः स्वागतस्तस्य च स्वानन्दः, तस्माच सुबर्जाः, तस्य च सुपार्श्वः, तस्यापि सुभावः, तस्य सुश्रुतः तस्मात्सुश्रुताज्जयः तस्य पुत्रो विजयो विजयस्य ऋतः, ऋतात्सूनयः सुनयाद्वीतह्व्यः तस्माद्धृतिर्धृतेर्बहुलाश्चः, तस्य पुत्रः कृतिः ॥ ३१ ॥ कृतौ सन्तिष्ठतेऽयं जनकवंशः ॥ ३२ ॥ इत्येते मैथिलाः ॥ ३३ ॥ प्रायेणैते आत्मविद्याश्रयिणो भूपाला भवन्ति ॥ ३४ ॥

राजाके ऐसा कहनेपर देवताओंने उनको समस्त जीवेकि नेत्रोंमें अवस्थित कर दिया ॥ १८ ॥ तभीसे प्राणी निमेकेन्पेप (पठक खोठना-मूँदना) करने छगे हैं ॥ १९ ॥

तदनन्तर अराजकताके भयसे मुनिजनोने उस पुत्रहीन राजाके शरीरको अरणि (शमीदण्ड) से मैथा॥ २०॥ उससे एक कुमार उत्पन्न हुआ जो जन्म लेनेके कारण 'जनक' कहलाया ॥ २१-२२ ॥ इसके पिता विदेह थे इसलिये यह 'वैदेह' कहलाता है, और मन्धनसे उत्पन्न होनेके कारण 'पिथि' भी कहा जाता है ॥ २३ ॥ उसके उदावसु नामक पुत्र हुआ ॥ २४ ॥ उदावसुके नन्दिवर्द्धन, नन्दिलर्जनके सुकेतु, सुकेतुके देवरात, देवरातके बृहदुवथ, बृहदुवथके महावीर्य, महावीर्यके सुध्ति, सुधृतिके पृष्टकेतु, पृष्टकेतुके हर्यश्च, हर्यश्चके पन्, पनुके प्रतिक, प्रतिकके कृतरथ, कृतरथके देवपीट, देवपीढके चिबुध, चिबुधके महाधृति, महाधृतिके कृतरात. कृतरातके महारोमा, महारोमाके सुवर्णरोमा, सुवर्णरोमाके इस्वरोमा और इस्वरोमाके सीरध्वज नामक पुत्र हुआ ॥ २५----२७ ॥ वह पुत्रकी कामनासे यज्ञभूमिको जोत रहा था। इसी समय हलके अब भागमें उसके सीता नामको कन्या उत्पन्न हुई ॥ २८ ॥

सीरध्वजका भाई सांकाश्यनरेश कुशध्वज था॥ २९॥ सीरध्वजके भानुमान् नामक पुत्र हुआ। भानुमान्के शतद्युप्त, शतद्युप्तके शुचि, शुचिके ऊर्जनामा, ऊर्जनामाके शतध्वज, शतध्वजके कृति, कृतिके अञ्जन, अञ्चनके कुरुजित्, कुरुजित्के अरिष्टनेमि, अरिष्टनेमिके श्रुतायु, श्रुतायुके सुपार्श्व, सुप्रार्थके सुञ्जय, सुञ्जयके क्षेगाबी, क्षेमाबीके अनेना, अनेनाके भीमरथ, भीमरथके सत्वरथ, सत्वरथके डपगु, डपगुके डपगुत, डपगुप्तके स्वागत, स्वागतके स्वानन्द्र, स्वानन्द्रके सुवर्चा, सुवर्चीके सुपार्श्व, सुपार्श्वक सुभाष, सुभाषके सुश्रुत, सुश्रुतके जय, जयके विजय, विजयके ऋत, ऋतके सुनय, सुनयके वीतहरूप, वीतहरूपके धृति, धृतिके बहुत्सभ और बहुलाश्वके कृति नामक पुत्र हुआ ॥ ३०-३१ ॥ कृतिमें ही इस जनकवंशकी समाप्ति हो जाती है।। ३२ ॥ ये ही मैथिलभूपालगण है ॥ ३३ ॥ प्रायः ये सभी राजालोगः आत्मविद्याको आश्रय देनेवाले होते हैं ॥ ३४ ॥

छठा अध्याय

सोमवंशका वर्णन; चन्द्रमा, बुध और पुरुरवाका चरित्र

श्रीपेत्रेय उवाच

सूर्यस्य वंदया भगवन्कथिता भवता मम । सोमस्याप्यसिलान्वंदयाञ्ज्ञेतुमिन्छामि पार्घिवान् ॥ १ कीर्त्यते स्थिरकीर्तीनां येषामद्यापि सन्ततिः । प्रसादसुमुखस्तान्मे ब्रह्मसास्थातुमहीसः ॥ २

श्रीपराद्यार उद्याच

श्रूयतो मुनिशार्दूल वंशः प्रश्विततेजसः। सोमस्यानुक्रमारख्याता यत्रोवींपतयोऽभवन्॥३

अयं हि वंशोऽतिबलपराक्रमद्युतिशीलचेष्टा-वद्भिरतिगुणान्वितैर्नहुषययातिकार्तवीर्यार्जुनादि-भिर्भूपालैरलङ्कृतस्तमहं कथयामि श्रूयताम् ॥ ४ ॥

अखिलजगत्त्रब्रुभंगवती नारायणस्य नाभिसरोजसमुद्भवावजयोनेर्ज्रह्मणः पुत्रोऽत्रिः ॥ ५ ॥ अत्रेस्तोमः ॥ ६ ॥ तं च भगवानव्ज-योनिः अशेषौषधिद्विजनक्षत्राणामाधिपत्ये-ऽभ्यषेचयत् ॥ ७ ॥ स च राजसूयमकरोत् ॥ ८ ॥ तद्मभावादत्युत्कृष्टाधिपत्याधिष्ठातृत्वाचैनं मद् आविवेश ॥ ९ ॥ मदावलेपाच सकलदेवगुरो-वृहस्पतेस्तारां नाम पत्नी जहार ॥ १० ॥ बहुशश्च बृहस्पतिचोदितेन भगवता ब्रह्मणा चोद्यमानः सकलेश्च देवर्षिभियांच्यमानोऽपि न मुमोच ॥ ११ ॥

तस्य चन्द्रस्य च बृहस्पतेर्द्वेषादुश्चना पार्ष्णि-प्राहोऽभूत् ॥ १२ ॥ अङ्किरसञ्च सकाशादुप-लब्धविद्यो भगवान्त्र्यो बृहस्पतेः साहाय्य-मकरोत् ॥ १३ ॥

यतश्चोशना ततो जम्मकुम्भाद्याः समस्ता एव दैत्यदानवनिकायाः महान्तमुद्यमं चक्कः ॥ १४ ॥ मैत्रेयजी बोले—गगवन् ! आपने सूर्यवंशीय राजाओका वर्णन तो कर दिया, अब मैं सम्पूर्ण चन्द्रवंशीय भूपतियोंका युतान्त भी सुनना चाहता हूँ । जिन स्थिरकीर्ति महाराजोंकी सन्ततिका सुयश आज भी गान किया जाता है, है ब्रह्मन् ! प्रसन्न-मुखसे आप उन्होंका वर्णन मुझसे कीजिये ॥ १-२॥

श्रीपराझरजी बोले—हे मुनिशार्दूल ! परम तेजस्वी चन्द्रमाके वंशका क्रमशः श्रवण करो जिसमें अनेको बिख्यात राजालोग हुए हैं॥ ३॥

यह यंश नहुष, ययाति, कार्तवीर्य और अर्जुन आदि अनेको अति वल-परक्रमशील, कान्तिमान्, क्रियावान् और सद्गुणसम्पन्न राजाओंसे अलङ्कृत हुआ है। सुनी, मैं उसका वर्णन करता हूँ॥ ४॥

सम्पूर्ण जगत्के रचयिता भगवान् नारायणके नाभि-कमलसे उरपन्न हुए भगवान् ब्रह्माजीके पुत्र अति प्रजापति थे ॥ ५ ॥ इन अत्रिके पुत्र चन्द्रमा हुए ॥ ६ ॥ कमल-योनि भगवान् ब्रह्माजीने उन्हें सम्पूर्ण ओषधि, द्विजजन और नक्षत्रगणके आधिपत्यपर अभिषिक्त कर दिया था ॥ ७ ॥ चन्द्रमाने राजसूय-यज्ञका अनुद्रान किया ॥ ८ ॥ अपने प्रभाव और अति उत्कृष्ट आश्रिपत्यके अधिकारी होनेसे चन्द्रमापर राजमद सवार हुआ ॥ ९ ॥ तब मदोन्मच हो जानेके कारण उसने समस्त देवताओंके गुरु भगवान् बृहस्पतिजीकी भार्या ताराको हरण कर लिया ॥ १० ॥ तथा बृहस्पतिजीकी प्रेरणासे भगवान् ब्रह्माजीके बहुत कुछ कहने-सुनने और देविषयोंके माँगनेपर भी उसे न छोड़ा ॥ ११ ॥

वृहस्पतिजीसे द्रेष करनेके कारण शुक्रकी भी चन्द्रमांके सहायक हो गये और अंगियसे विद्या-स्त्रभ करनेके कारण भगवान् रुद्रने बृहस्पतिकी सहायता की क्योंकि बृहस्पतिजी अंगिराके पुत्र हैं]॥ १२-१३॥

जिस पक्षमें शुक्रजी थे उस ओरसे जम्भ और कुम्भ आदि समस्त दैल्य-दानवादिने भी [सहायता बृहस्पतेरिय सकलदेवसैन्ययुतः सद्धयः शकोऽभवत् ॥ १५ ॥ एवं च तयोरतीवोप्रसंप्रामस्तारानिमित्तस्तारकामयो नामाभूत् ॥ १६ ॥
ततश्च समस्तशस्त्राण्यसुरेषु स्द्रपुरोगमा देवा देवेषु
चाशेषदानवा मुमुचुः ॥ १७ ॥ एवं देवासुराहवसंक्षोभक्षुव्यहृदयमशेषयेव जगद्रह्माणं शरणं
जगम ॥ १८ ॥ ततश्च भगवानक्जयोनिरप्युशनसे शङ्करमसुरान्देवांश्च निवार्य बृहस्यतये
तारामदाययत् ॥ १९ ॥ तां चान्तः प्रसवामवलोवय बृहस्पतिरप्याह ॥ २० ॥ नैय मम क्षेत्रे
भवत्यान्यस्य सुतो धार्यस्समुत्सृजैनमलमलमलमितधाष्ट्येनित ॥ २१ ॥

सा च तेनैवमुक्तातिपतिव्रता भर्तृवचनानन्तरं तिमयीकास्तम्बे गर्भमुत्ससर्जं ॥ २२ ॥ स चोत्सृष्टमात्र एवातितेजसा देवानां तेजांस्या-चिक्षेप ॥ २३ ॥ बृहस्पतिमिन्दुं च तस्य कुमार-स्यातिचास्तया साभिलायौ दृष्ट्वा देवास्समृत्यन्न-सन्देहास्तारां पत्रचुः ॥ २४ ॥ सत्यं कथया-स्माकमिति सुभगे सोमस्याथ वा बृहस्पतेरयं पुत्र इति ॥ २५ ॥ एवं तैस्का सा तारा द्विया किन्निन्नोवाच ॥ २६ ॥ बहुशोऽप्यभिहिता यदासौ देवेभ्यो नाचचक्षे ततस्य कुमारस्तां शामुमुद्यतः प्राह्त ॥ २७ ॥ दुष्टेऽम्च कस्मान्यम तातं नाख्यासि ॥ २८ ॥ अद्यैव ते व्यलीकलजा-वत्यास्तथा शास्तिमहं करोमि ॥ २९ ॥ यथा च नैवमद्याप्यतिमन्थरवचना भविष्यसीति ॥ ३० ॥

अथ भगवान् पितामहः तं कुमारं सन्निवार्यं स्वयमपृच्छतां ताराम् ॥ ३१ ॥ कथय वत्से कस्यायमात्मजः सोमस्य वा बृहस्पतेर्वा इत्युक्ता लज्जमानाह सोमस्येति ॥ ३२ ॥ ततः प्रस्कुर-दुक्क्वसितामलकपोलकान्तिर्भगवानुहुपति:-

कुमारमालिङ्ग्य साधु साधु वत्स प्राज्ञोऽसीति बुध इति तस्य च नाम चक्रे ॥ ३३ ॥ देनेमें] बड़ा उद्योग किया ॥ १४ ॥ तथा सकरू देव-सेनाके सहित इन्द्र बृहस्पतिजीके सहायक हुए ॥ १५ ॥ इस प्रकार तासके लिये उनमें तारकामय नामक अत्यन्त घोर युद्ध छिड़ गया ॥ १६ ॥ तब रह आदि देवगण दानवीके प्रति और दानवगण देवताओंके प्रति नाना प्रकारके दाख छोड़ने लगे ॥ १७ ॥ इस प्रकार देवासुर-संग्रामसे धूब्ध-चित्त हो सम्पूर्ण संसारने

ब्रह्माजीकी दारण ली ॥ १८ ॥ तब भगवान् कमल-योनिने भी द्कुत, रुद्र, दानव और देवगणको युद्धसे निवृत कर बृहस्पतिजीको तास दिलवा दी ॥ १९ ॥ उसे गर्भिणी देखकर बृहस्पतिजीने कहा— ॥ २० ॥ ''मेरे क्षेत्रमें तुझको दुसरेका पुत्र धारण करना उचित नहीं हैं: इसे दूर कर, अधिक धृष्टता करना ठीक नहीं'॥ २१ ॥

बृहस्पतिजीके ऐसा कहनेपर उस पतिव्रताने पतिके वचनानुसार वह गर्भ इक्षेकास्तम्ब (सींकको झाड़ी) में छोड़ दिया ॥ २२ ॥ उस छोड़े हुए गर्भने अपने तेजसे समस्त देवताओंके तेजको मिलन कर दिया॥ २३॥ तदनन्तर उस बारुकको सुन्दरताके कारण यहस्पति और चन्द्रमा दोनोंको उसे लेनेके लिये उत्सक देख देवताओंने सन्देह हो.जानेके कारण तासरो पूछा- ॥ २४ ॥ " हे सुभगे ! तू हमको सन-सन बता, यह पुत्र बृहस्पतिका है या चन्द्रमाका ?" ॥ २५ ॥ उनके ऐसा कहनेपर ताराने रूजावरा कुछ भी न कहा॥ २६॥ जब बहुत कुछ कहनेपर भी वह देवताओंसे न बोली तो वह बालक उसे ज्ञाप देनेके लिये उद्यत होबर बोला— ॥ २७ ॥ "अरी दुष्टा माँ ! तू मेरे पिताका नाम क्यों नहीं बतलाती ? तुश व्यर्थ रुजावतीकी मैं अभी ऐसी गति करूँगा जिससे त् आजसे ही इस प्रकार अत्यन्त धीर-धीरे बोलना भूल जायपी" ॥ २८—३० ॥

तदनन्तर पितामह श्रीब्रह्माजीने उस बालकको ग्रेककर ताग्रसे त्वयं हाँ पूछा ॥ ३१ ॥ ''बेटी ! टीक-ठीक बता यह पुत्र किसका है—बृहस्पतिका या चन्द्रसाका ?'' इसपर उसने ल्ल्जापूर्वक कहा, ''चन्द्रमाका''॥ ३२ ॥ तब तो नक्षत्रपति भगवान् चन्द्रने उस बालकको हृदयसे लगाकर कहा—''बहुत ठीक, बहुत ठीक, बेटा ! हुम बड़े बुद्धिमान् हो;'' और उनका नाम 'बुध' रहा दिया। इस समय उनके निर्मल कपोलोको कान्ति उच्छ्वसित और देदीप्यमान हो रही थी॥ ३३॥ तदास्थातमेवैतत् स च यथेलायामात्मजं पुरूरवस्त्ममृत्पादयामास् ॥ ३४ ॥ पुरूरवास्त्वितिदानशीलोऽतियज्वातितेजस्वी । यं सत्यवादिनमतिरूपवन्तं मनस्विनं मित्रावरुणशापान्मानुषे
लोके मया वस्तव्यपिति कृतमितरूर्वशी
ददर्श ॥ ३५ ॥ दृष्टमात्रे च तस्मित्रपहाय
मानमशेषमपास्य स्वर्गसुखाभिलावं तन्मनस्का
भूत्वा तमेवोपतस्थे ॥ ३६ ॥ सोऽपि च तामितशयितस्रकललोकस्त्रीकान्तिसौकुमार्यलावण्यपतिविलासहासादिगुणामवलोक्य तदायत्तचित्तवृत्तिर्वभूव ॥ ३७ ॥ उभयमपि तन्मनस्कमनन्यदृष्टि परित्यक्तसमस्तान्यप्रयोजनमभूत् ॥ ३८ ॥

राजा तु प्रागलक्यातामाह ॥ ३९ ॥ सुभु त्वामहमभिकामोऽस्मि प्रसीदानुरागमुद्धहेत्युका रूजावर्खण्डितमुर्वेशी तं प्राह ॥ ४० ॥ भवत्वेवं यदि मे समयपरिपालनं भवान् करोतीत्याख्याते पुनरपि तामाह ॥ ४९ ॥ आख्याहि मे समयमिति ॥ ४२ ॥ अथ पृष्टा पुनरप्यत्रवीत् ॥ ४३ ॥ शबनसमीपे ममोरणकद्वयं पुत्रभूतं नापनेयभ् ॥ ४४ ॥ भवांश्च मया न नत्रो द्रष्ट्वयः ॥ ४५ ॥ धृतपात्रं च ममाहार इति ॥ ४६ ॥ एवमेवेति भूपतिरायाह ॥ ४७ ॥

तया सह स बावनिपतिरलकायां चैत्रस्थादि-वनेष्ठमलपद्यसम्बेषु मानसादिसरस्वतिरमणी-येषु रममाणः षष्ट्रिवर्षसहस्राण्यनुदिनप्रवर्द्धमान-प्रमोदोऽनयत् ॥ ४८ ॥ उर्वशी च तदुपमोगा-ठातिदिनप्रवर्द्धमानानुसमा अमस्लोकवासेऽपि न स्मृहां चकार ॥ ४९ ॥

विना चोर्वश्या सुरलोकोऽप्सरसां सिद्ध-गन्धर्वाणां च नातिरमणीयोऽभवत् ॥ ५० ॥ तत्रश्चोर्वशीपुरूरक्सोस्समयविद्विश्वावसुर्गन्धर्व-समवेतो निश्चि शयनाभ्याशादेकमुरणकं जहार ॥ ५१ ॥ तस्याकाशे नीयमानस्योर्वशी बुधने जिस प्रकार इलासे अपने पुत्र पुरुत्वाको उत्तंत्र किया था उसका वर्णन पहले ही कर चुके हैं ॥ ३४ ॥ पुरुत्वा अति दानशील, अति योज्ञिक और अति तेजस्ती था। 'मित्रावरुणके ज्ञापसे मुझे मर्व्यलोकमें रहना पड़ेगा' ऐसा विचार करते हुए उर्वशी अपसराकी दृष्टि उस अति सत्यवादी, रूपके घनो और मितमान् राजा पुरुत्वापर पड़ी ॥ ३५ ॥ देखते ही वह सम्पूर्ण मान तथा स्वर्ग-सुखकी इन्छाको छोड़कर तन्मयभावसे उसीके पास आयी ॥ ३६ ॥ राजा पुरुद्वाका चित्त भी उसे संसारको समस्त खियोंमें विशिष्ट तथा कान्ति-सुकुमारता, सुन्दरता, गतिबिलास और मुसकान आदि गुणोंसे युक्त देखकर उसके वशीभूत हो गया ॥ ३७ ॥ इस प्रकार वे दोनों हो परस्पर तन्मय और अनन्यनित होकर और सब कामोंको भूल गये ॥ ३८ ॥

निदान राजाने निःसंकोच होकर कहा— ॥ ३९ ॥ "हं सुधु ! मैं तुम्हारी इच्छा करता हूँ, तुम घसत्र होकर मुझे प्रेम-दान दो।" राजांके ऐसा कहनेपर उर्वशीने भी लज्जावश स्थलित स्थरमें कहा— ॥ ४० ॥ "यदि आप मेरी प्रतिज्ञाको निभा सकें तो अवश्य ऐसा ही हो सकता है।" यह सुनकर राजाने कहा— ॥ ४१ ॥ अच्छा, तुम अपनी प्रतिज्ञा मुझसे कहो ॥ ४२ ॥ इस प्रकार पूछनेपर वह फिर बोली— ॥ ४३ ॥ "मेरे पुत्रक्य इन दो मेथों (भेड़ों) को आप कभी मेरी शब्यासे दूर न कर सकेंगे॥ ४४ ॥ मैं कभी आपको नम्न न देखने पाऊँ॥ ४५ ॥ और केवल घृत हो मेरा आहार होगा—[यही मेरी तीन प्रतिज्ञाएँ हैं] "॥ ४६ ॥ तब राजांने कहा— "ऐसा हो होगा।"॥ ४७ ॥

तदनन्तर राजा पुरूरवाने दिन-दिन बढ़ते हुए आनन्दके साथ कभी अलकापुरांके अन्तर्गत चैत्ररथ आदि वनीमें और कभी सुन्दर पद्मखण्डीसे युक्त अति रमणीय मानस आदि सरोवरोमें विहार करते हुए साठ हजार वर्ष विता रिये॥ ४८॥ उसके उपभीगसुस्तसे प्रतिदिन अनुसमके बढ़ते रहनेसे उर्वजीको भी देवलोकमें रहनेकी इच्छा नहीं रही॥ ४९॥

इधर, उर्वश्लोके विना अप्सपओं, सिद्धी और गन्धवीको स्वर्गलेक अत्यन्त सम्मीय नहीं मालूम होता था॥ ५०॥ अतः सर्वश्लो और पुरूरवाकी प्रतिक्रके जानोवाले विश्वावसुने एक दिन रात्रिके समय गन्धवीके साथ बाकर उसके शयनागारके पाससे एक पेषका हरण कर लिया॥ ५१॥ उसे आकाशमें ले जाते समय उर्वश्लोने सन्दमभूणोत् ॥ ५२ ॥ एवमुवाच च ममा-नाथायाः पुत्रः केनापह्नियते कं शरणमुपया-मीति ॥ ५३ ॥ तदाकर्ण्य राजा मां नत्रं देवी वीक्ष्यतीति न ययौ ॥ ५४ ॥ अधान्यमप्युरणक-मादाय गन्धर्वा ययुः ॥ ५५ ॥ तस्याप्यपह्निय-माणस्याकर्ण्य शब्दमाकारो पुनरप्यनाथा-स्म्यहमभर्तृका कापुरुषाश्रयेत्यार्त्तराविणी वसूव ॥ ५६ ॥

राजाप्यमर्थवशादन्यकारमेतदिति खड्गमादाय दुष्ट दुष्ट हतोऽसीति व्याहरव्रभ्यधावत् ॥ ५७ ॥ तावस् गन्धवैरंप्यतीवोञ्ज्वला विद्युज्जनिता ॥ ५८ ॥ तत्प्रभया चोर्वशी राजानमयगताम्बरं दृष्ट्रापवृत्तसमया तत्क्षणादेवापकान्ता ॥ ५९ ॥ परित्यज्य तावप्युरणकौ गन्धर्वास्पुरलोकमुपगताः ॥ ६० ॥ राजापि च तौ मेषावादायातिहष्टमनाः स्वशयनपायातो नोर्वशी ददर्श ॥ ६१ ॥ तां चापश्यन् व्यपगताम्बर एवोन्यत्तरूपो बश्राम् ॥ ६२ ॥ कुरुक्षेत्रे चाम्भोजसरस्यन्याभि-श्वतस्भिरप्यरोभिस्तमवेतामुर्वशी ददर्श ॥ ६३ ॥ तत्रश्लोन्यत्तरूपो जाये हे तिष्ट मनित्त घोरे तिष्ट वचित्त कपटिके तिष्ठेत्येवमनेकप्रकारं सूक्त-मवोचत् ॥ ६४ ॥

आह चोर्वशी ॥ ६५ ॥ महाराजालमनेना-विवेकचेष्टितेन ॥ ६६ ॥ अन्तर्वल्यहमब्दान्ते भवतात्रागन्तव्यं कुमारस्ते भविष्यति एकां च निशामहं त्वया सह वत्यामीत्युक्तः प्रहृष्टस्कपुरं जगाम ॥ ६७ ॥

तासां चाप्सरसामुर्वज्ञी कथयामास ॥ ६८ ॥ अयं स पुरुषोत्कृष्टो येनाहमेतावन्तं कालमनुरागा-कृष्टमानसा सहोषितेति ॥ ६९ ॥ एवमुक्तास्ता-श्चाप्सरस ऊचुः ॥ ७० ॥ साधु साध्वस्य रूपमप्यनेन सहास्माकमपि सर्वकारूपास्या भवेदिति ॥ ७१ ॥

अब्दे च पूर्णे स राजा तत्राजगाम ॥ ७२ ॥

उसका शब्द सुना॥ ५२॥ तब वह बोली—"मुझ अनाथांके पुत्रको कीन लिये जाता है, अब मैं किसकी शरण जार्के ?"॥ ५३॥ किन्तु यह सुनकर भी इस भयरों कि सनी मुझे नंगा देख लेगी, राजा नहीं उटा॥ ५४॥ तदननार गन्धर्वगण दूसरा भी मेग लेकर बल दिये॥ ५५॥ उसे ले जाते समय उसका शब्द सुनकर भी उर्वशी 'हाय! मैं अनाथा और भर्तृहीना हूँ तथा एक कायरके अधीन हो गयी हूँ॥' इस प्रकार कहती हुई वह आर्तस्वरसे विद्याप करने लगी॥ ५६॥

तब राजा यह सोचकर कि इस समय अन्यकार है [अतः रानी मुझे नद्र न देख सकेगी], क्रोधपूर्वक 'अरे दुष्ट ! तू मारा गया' यह कहते हुए तलवार लेकर पीछे दीड़ा ॥ ५७ ॥ इसी समय गन्धर्वीने अति उच्चल विद्युत् प्रकट कर दी ॥ ५८ ॥ उसके प्रकाशमें राजाको वस्तर्हीन देखकर प्रतिज्ञा टूट जानेसे उर्वशी तुरन्त ही वहाँसे चल्हें गयी ॥ ५९ ॥ गन्धर्वमण भी उन मेपोंको वहीं छोड़कर स्वर्गलोकमें चले गये॥६०॥ किन्तु अब शजा उन मेर्षीको लिये हुए अति प्रसन्नचित्तसे अपने शयनागारमे आया सी वहाँ उसने उर्वजीको न देखा ॥ ६१ ॥ उसे न देखनेसे वह उस वस्नहीन-अवस्थामें ही पागलके समान घुमने लगा॥ ६२ ॥ घुमते-घुमते उसने एक दिन कुरुक्षेत्रके कमल-सगेक्समें अन्य चार अपरराओंकै सहित उर्वशीको देखा ॥ ६३ ॥ उसे देखकर वह उन्पत्तके समान 'है जाये ! उहर, अरी हृदयकी निष्ठुरे ! खड़ी हो जा, अरी कपट रखनेवाली ! वार्तासापके लिये तनिक दहर जा'—ऐसे अनेक वचन कहने लगा ॥ ६४ ॥ 🐩

उर्वद्दी बोली—"महाराज! इन अञ्चानियोंकी-सी चेष्टाओंसे कोई स्त्राभ नहीं ॥ ६५-६६ ॥ इस समय मै गर्भवती हूँ। एक वर्ष उपरान्त आप यहीं आ जावें, उस समय आपके एक पुत्र होगा और एक रात मैं भी आपके साथ रहूँगी।" उर्वद्मीके ऐसा कहनेपर राजा पुरूरवा प्रसन्न-चित्तसे अपने नगरको चला गया॥ ६७॥

तदनन्तर वर्वहरीने अन्य अक्ताओंसे कहा— ॥ ६८ ॥ "ये वही पुरुषश्चेष्ठ हैं जिनके साथ में इतने दिनीतक प्रेमाकृष्ट-चित्तसे भूमण्डलमें रही थी॥ ६९ ॥ इसपर अन्य अप्सराओंने कहा—॥ ७० ॥ "बाह! वाह! सचमुच इनका रूप बड़ा ही मनोहर है, इनके साथ तो सर्वदा हमारा भी सहवास हो"॥ ७१ ॥

वर्ष समाप्त होनेपर राजा पुरुरवा वहाँ आये ॥ ७२ ॥

कुमारं चायुषमस्मै चोर्वशी ददौ ॥ ७३ ॥ दत्ता चैकां निशां तेन राज्ञा सहोषित्वा पद्ध पुत्रोत्पत्तये गर्भमवाप ॥ ७४ ॥ उवाचैनं राजानमस्मत्पीत्या महाराजाय सर्व एव गन्धर्वा वरदासंवृत्ता व्रियतां च वर इति ॥ ७५ ॥

आह च राजा ॥ ७६ ॥ विजितसकलाराति-रविहतेन्द्रियसामध्यों बन्धुमानमितबलकोझोऽस्मि, नान्यदस्माकपुर्वशीसालोक्यात्प्राप्तव्यमस्ति तदहमनया सहोर्वश्या कालं नेतुमभिलवामीत्युक्ते गन्धर्वा राज्ञेऽग्रिस्थालीं दहुः ॥ ७७ ॥ ऊचुश्चैनमग्निमाष्ट्रायानुसारी भूत्वा त्रिधा कृत्वोर्वशीसलोकतामनोरधमुद्दिश्य सम्यग्यजेथाः ततोऽवश्यमभिलवितमवाप्यसीत्युक्तस्तामग्नि-स्थालीमादाय जगाम ॥ ७८ ॥

अन्तरव्यामचिन्तयत् ,अहो मेऽतीच मृहता किमहमकरवम् ॥ ७९ ॥ वहिस्थाली मयैषानीता नोर्वशीति ॥ ८० ॥ अधैनामटव्यामेवाशिस्थाली तत्याज स्वपुरं च जगाम ॥ ८१ ॥ व्यतीतेऽर्द्धरात्रे विनिद्रश्चाचिन्तयत् ॥ ८२ ॥ ममोर्वञी-सालोक्यप्राप्यर्थमग्रिस्थाली गन्धवैर्दिता सा च मयाटच्यां परित्यक्ता ॥ ८३ ॥ तदहं तत्र तदाहरणाय यास्यामीत्युत्थाय तत्राप्युपगतो नामिस्थालीपपच्यत् ॥ ८४ ॥ 🛚 🔻 चामीगर्भ चाधत्यमग्रिस्थालीस्थाने दृष्टाचित्तयत् ॥ ८५ ॥ मयात्राप्रिस्थाली निक्षिप्ता चाश्वत्थश्शमीगभाँऽभूत् ॥ ८६ ॥ तदेनमेबाह-मग्निरूपमादाय स्वपुरमभिगम्यारणी तदुत्पन्नाग्नेरुपास्ति करिष्यामीति ॥ ८७ ॥

एवमेव स्वपुरमिगम्यारणि चकार ॥ ८८ ॥ तत्प्रमाणं चाङ्गुलैः कुर्वन् गायत्रीमपठत् ॥ ८९ ॥ उस समय उर्वशीने उन्हें 'आयु' नामक एक बालक दिया ॥ ७३ ॥ तथा उनके साथ एक उत रहकर पाँच पुत्र उत्पन्न करनेके लिये गर्भ धारण किया ॥ ७४ ॥ और कहा—'हमारे पारस्परिक खेडके कारण सकल पन्धर्वगण महाराजको करदान देना चाहते हैं अतः आप अधीष्ट वर माँगिये ॥ ७५ ॥

एवा बोले—"पैने समस्त शतुओंको जीत िया है,
मेरी इन्द्रियोंको सामर्थ्य नष्ट नहीं हुई है, मै बन्युजन,
असंख्य सेना और सोशसे भी सम्पन्न हूँ, इस समय
उनेशीके सहवासके अतिरिक्त मुझे और कुछ भी प्राप्तव्य
नहीं है। अतः मैं इस उर्वशिके साथ ही काल-वापन करना
चाहता हूँ।" राजाके ऐसा कहनेपर गन्ध्योंने उन्हें
एक अग्निस्थाली (अग्नियुक्त पात्र) दो और कहा——
"इस अग्निके वैदिक विधिसे गाईपाल, आहवनीय और दक्षिणाग्निस्त्य तीन भाग करके इसमें उर्वशिके
सहकासकी कामनासे भलीभीति यजन करो तो अवदय
ही तुम अपना अभीष्ट प्राप्त कर स्त्रोगे।" गन्ध्योंके
ऐसा कहनेपर राजा इस अग्निस्थालीको लेकर चल
दिये॥ ७६—७८॥
[पार्गमें] वनके अन्दर उन्होंने सोचा— 'अतो! मैं

कैसा मुखं हैं ? मैंने यह क्या किया जो इस अग्निस्थालीको तो हे आया और उर्वशीको नहीं ख्या ।। ७९-८० ॥ ऐसा सोचकर उस अग्निस्थालोको बनमें ही छोड़कर वे अपने नगरमें चले आये ॥ ८१ ॥ आधीरत बोत जानेक बाद निद्रा टूटनेपर राजाने सीचा- ॥ ८२ ॥ 'उर्वहाँकी सित्रिधि प्राप्त करनेके लिये ही गन्धवीने मुझे वर अग्रिस्पाली दी भी और मैंने उसे वनमें ही छोड दिया ॥ ८३ ॥ अतः अव मुझे उसे लानेके लिये जाना वाहिये' ऐसा सोच उठकर वे वहाँ गये, किन्तु उन्होंने उस स्थालीको वहाँ न देखा ॥ ८४ ॥ अग्रिस्थालीके स्थानपर राजा पुरुरवाने एक शमीगर्भ पीपलके वृक्षको देखकर सोचा- ॥ ८५ ॥ 'भैने यहीं तो वह अग्रिस्थाली फेंकी थी। वह स्थाली ही शमीगर्भ पीपल हो गयी है ॥ ८६ ॥ अतः इस अफ्रिकप अश्वत्यको ही अपने नगरमें ले जाकर इसकी अर्राण बनाकर उससे उत्पन्न हुए अग्निकी ही उपासना करूँ ।। ८७ ॥ ऐसा सोचकर राजा उस अध्यको लेकर

ऐसा सोचकर राजा उस अधत्थको लेकर अपने नगरमें आये और उसकी अर्गण बनायी ॥ ८८ ॥ तदनन्तर उन्होंने उस काष्ट्रको एक-एक अंगुरु करके गायत्री-मन्त्रका पाठ किया ॥ ८९ ॥ पठतश्चाक्षरसंख्यान्येवाङ्गुलान्यरण्यभवत् ॥ ९० ॥ तत्रामि निर्मथ्यामित्रयमाम्रायानुसारी भूत्वा जुहाव ॥ ९१ ॥ उर्वशीसालोक्यं फलपभि-संहितवान् ॥ ९२ ॥ तेनैव चाम्निविधिना बहुविधान् यज्ञानिष्ट्रा गान्धर्वलोकानवाप्योर्वश्या सहावियोगमवाप ॥ ९३ ॥ एकोऽप्रिरादावभवत् एकेन त्वत्र मन्वन्तरे त्रेधा प्रवर्तिताः ॥ ९४ ॥ उसके पाठसे पायजीकी अक्षर-संख्याके बराबर एक-एक अंगुलकी अरणियाँ हो गयाँ॥ १०॥ उनके मन्धनसे तीनों प्रकारके अधियोंको उत्पन्न कर उनमें वैदिक विभिन्ने हवन किया॥ ११॥ तथा उर्बद्दीके सहवासक्त्य फलकी इच्छा की॥ १२॥ तदनलर उसी अधिसे नाना प्रकारके यज्ञोंका यजन करते तुए उन्होंने गन्धर्व-लोक प्राप्त किया और फिर उर्वशिसे उनका वियोग न हुआ॥ १३॥ पूर्वकाल्मे एक ही अधि था, उस एकहासे इस मन्बन्तरमें तीन प्रकारके अधियोंका प्रचार हुआ॥ १४॥

= [T] = i- i-

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽरो षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

जहुका गङ्गापान तथा जमदग्नि और विश्वामित्रकी उत्पत्ति

श्रीपराशर उवाच

तस्याप्यायुर्धीमानपावसुर्विश्वावसुःश्रुतायु-रशतायुरयुतायुरितिसंज्ञाः वट् पुत्रा अभवन् ॥ १ ॥ तथामावसोर्भीमनामा पुत्रोऽभवत् ॥ २ ॥ भीमस्य काञ्चनः काञ्चनात्सुहोत्रस्तस्यापि जहुः ॥ ३ ॥ योऽसौ यज्ञवाटपिसलं गङ्गाम्भसा-प्रावितमवलोक्य क्रोधसंरक्तलोचनो भगवन्तं यज्ञपुरुषमात्मनि परमेण समाधिना समारोप्याखिलामेव गङ्गामपिबन् ॥ ४ ॥ अथैनं देवर्षयः प्रसादवामासुः ॥ ५ ॥ दुहितृत्वे चास्य गङ्गामनयन् ॥ ६ ॥

बह्रोश्च सुमन्तुर्नाम पुत्रोऽभवत् ॥ ७ ॥ तस्याप्यजकस्ततो बलकाश्चस्तस्मात्कुशस्तस्यापि कुशाम्बकुशनाभाधूर्तरजसो वसुश्चेति चत्वारः पुत्रा बभूवुः ॥ ८ ॥ तेषां कुशाम्बः शक्रतुल्यो मे पुत्रो भवेदिति तपश्चकार ॥ ९ ॥ तं चोप्रतपसमवलोक्य मा भवत्वन्योऽस्मनुल्यवीर्य इत्यात्मनैवास्येन्द्रः पुत्रत्वपगच्छत् ॥ १० ॥ स गाधिर्नाम पुत्रः कौशिकोऽभवत् ॥ ११ ॥

गाथिश्च सत्यवर्ती कन्यामजनयत्॥ १२ ॥

श्रीपराश्वरजी बोले—राजा पुरुरवाके परम युद्धिमान् आयु, अमावसु, विश्वावसु, श्रुतायु, शतायु और अयुतायु नामक छः पुत्र हुए॥१॥ अमावसुके भीम, भीमके काकन, काकनके सुहोत्र और सुहोत्रके जहू, नामक पुत्र हुआ जिसने अपनी सम्पूर्ण वज्ञशालाको गङ्गाजलसे आग्रावित देख क्रोधसे रातनयन हो भगवान् यज्ञपुरुषको परम समाधिक द्वारा अपनेमें स्थापित कर सम्पूर्ण गङ्गाजीको पी लिया था॥२—४॥ तब देवर्षिकोने इन्हें प्रसन्न किया और गङ्गाजीको इनको पुत्रीरूपसे पाकर ले प्रये॥ ५-६॥

जहुक सुमन्तु नामक पुत्र हुआ ॥ ७ ॥ सुमन्तुके अजक, अजकके बलाकाश्च, बलाकाश्चके कुश और कुशके कुशम्ब, कुशनाभ, अधूर्तरजा और वसु नामक चार पुत्र हुए ॥ ८ ॥ उनमेंसे कुशाम्बने इस इच्छासे कि मेरे इन्द्रके समान पुत्र हो, तपस्या की ॥ ९ ॥ उसके उम्र टफ्को देखकर 'बलमें कोई अन्य मेरे समान न हो जाय', इस ध्यसे इन्द्र स्वर्थ ही इनका पुत्र हो गया ॥ १० ॥ वह गाधि नामक पुत्र कौशिक कहलाया ॥ ११ ॥

गाधिने सत्यवती नामकी कन्याको जन्म दिया ॥ १२ ॥

तां च भार्गव ऋचांको वल्ने ॥ १३ ॥ गाधिरप्यति-रोषणायातिवृद्धाय ब्राह्मणाय दातुमनिच्छन्नेकतरस्याम-कर्णानामिन्दुवर्चसामनिलरंहसामधानां सहस्रं कन्याशुल्कमयाचत ॥ १४ ॥ तेनाप्यृषिणा वरुणसकाशादुपलभ्याश्वतीर्थोत्पत्रं तादुश-मश्चसहस्रं दत्तम् ॥ १५ ॥

ततस्तामृचीकः कन्यामृपयेमे ॥ १६ ॥ अस्वीकश्च तस्याश्चरमपत्यार्थं चकार ॥ १७ ॥ तत्प्रसादितश्च तन्मात्रे क्षत्रवरपुत्रोत्पत्तये चरुमपरं साध्यामास ॥ १८ ॥ एव चरुभंवत्या अय-मपरश्चरस्त्वन्मात्रा सम्यगुपयोज्य इत्युक्त्वा वर्न जगाम ॥ १९ ॥

उपयोगकाले च तां माता सत्यवतीमाह ॥ २० ॥ पुत्रि सर्व एवात्मपुत्रमतिगुणमभिलषित नात्मजायाभ्रातृगुणेष्वतीवादृतो भवतीति ॥ २१ ॥ अतौऽर्हिस ममात्मीयं चरुं दातुं मदीयं चरुमात्मनोप-योक्तुम् ॥ २२ ॥ मत्पुत्रेण हि सकलभूमण्डल-परिपालनं कार्यं कियद्वा ब्राह्मणस्य बलवीर्य-सम्पदेतुक्ता सा स्वचरं मात्रे दत्तवती ॥ २३ ॥

अध बनादागत्य सत्यवतीमृषिरपश्यत् ॥ २४ ॥
आह चैनामतिपापे किमिद्यकार्य भवत्या
कृतमितरौद्रं ते वपुर्लक्ष्यते ॥ २५ ॥ नूनं त्वया
त्वन्मानृसात्कृतश्चरुरुप्यते ॥ २५ ॥ नूनं त्वया
त्वन्मानृसात्कृतश्चरुरुप्यते ॥ २५ ॥ नूनं त्वया
त्वन्मानृसात्कृतश्चरुरुप्यते ॥ २५ ॥ यक्तमेतत्
॥ २६ ॥ मया हि तत्र चरौ सकलैश्चर्यवीर्यशौर्यबलसम्पदारोपिता त्वदीयचरावण्यित्वल्ञान्तिज्ञानितिक्षादिब्राह्मणगुणसम्पत् ॥ २७ ॥ तश्च
विषरीतं कुर्वत्यास्तवातिरौद्रास्त्रधारणपालनिष्ठः
क्षित्रयाचारः पुत्रो भविष्यति तस्याश्चोपशम्भविद्याद्वाणाचार इत्याकण्यैव सा तस्य पादौ
जन्नाह ॥ २८ ॥ श्रणिपत्य चैनमाइ ॥ २९ ॥
भगवन्मयैतदज्ञानादनुष्ठितं प्रसादं मे कुरु मैवविधः
पुत्रो भवतु काममेवविद्यः पौत्रो भवत्वित्युक्ते
मुनिरायाह ॥ ३० ॥ एवमस्त्वित ॥ ३१ ॥

उसे भृगुनुत्र ऋचीकने वरण किया ॥ १३ ॥ गाधिने अति क्रोघी और अति वृद्ध ब्राह्मणको कन्या न देनेकी इच्छासे ऋचीकसे कन्याके मृल्यमें जो चन्द्रमाके समान कान्तिमान् और पवनके तुल्य वेगवान् हों, ऐसे एक सहस्र स्थामकर्ण घोड़े माँगे ॥ १४ ॥ किन्तु महर्षि ऋचीकने अश्वतीर्थसे उत्पन्न हुए बैसे एक सहस्र घोड़े उन्हें बरुणसे लेकर दे दिये ॥ १५ ॥

तब क्रचीकने उस कन्यासे विवाह किया॥ १६॥ [तदुपरान्त एक समय] उन्होंने सन्तानकी करमनासे सरववतीके क्षिणे वह (यज्ञीय लीर) तैयार किया॥ १७॥ और उसीके द्वारा प्रसन्न किये जानेपर एक क्षत्रियश्रेष्ठ पुत्रकी उत्पत्तिके क्षिये एक और नह उसकी माताके क्षिये भी बनाया॥ १८॥ और 'यह चह तुम्हारे क्षिये है तथा यह तुम्हारे माताके क्षिये—इनका तुम यथोचित उपयोग करना'—ऐसा कहकर वे बनको चहे गये॥ १९॥

उनका उपयोग करते समय सत्यवतीकी माताने उससे कहा— ॥ २० ॥ "बेटी ! सभी लोग अपने ही लिये सबसे अधिक गुणवान् पुत्र चाहते हैं, अपनी पानोंके भाईके गुणोमें किसीकी भी विशेष रुचि नहीं होती ॥ २१ ॥ अतः तू अपना चरु तो मुझे दे दे और नेस तू ले ले; क्योंकि मेरे पुत्रको तो सम्पूर्ण भूमण्डलका पालन करना होगा और बाह्यणकुमारको तो चल, वॉर्य तथा सम्पत्ति आदिसे लेना ही क्या है ।" ऐसा कहनेपर सत्यवतीने अपना चरु अपनी मानाको दे दिया ॥ २२-२३ ॥

वनसे लौटनेपर ऋषिने सत्यवतीको देखकर कहा-''अरी पापिनि ! तुने ऐसा क्या अकार्य किया है जिससे तेरा इसिर ऐसा भयानक प्रतीत होता है ॥ २४-२५ ॥ अवस्य ही तुने अपनी माताके लिये तैयार किये चरुका उपयोग किया है, सो डीक नहीं है ॥ २६ ॥ मैंने उसमें सम्पूर्ण ऐश्रर्य, पराक्रम, जुरता और बलको सम्पत्तिका आरोपण किया था तथा तेरेमें शान्ति, ज्ञान, तितिक्षा आदि सम्पूर्ण ब्राह्मगोचित गुणोका समावेश किया था ॥ २७ ॥ उनका विपरीत उपयोग करनेसे तेरे अति भयानक अस्त-हासाधारी पालन-कर्ममें तत्पर क्षत्रियके समान आचरणवाला पत्र होगा और उसके शान्तिप्रिय ब्राह्मणाचारयुक्त पुत्र होगा।" यह सुनते ही सत्यवतीने उनके चरण पकड़ लिये और प्रणाम करके कहा— ॥ २८-२९ ॥ "भगवन् ! अज्ञानसे ही मैंने ऐसा किया है, अतः प्रसन्न होड्ये और ऐसा कोजिये जिससे मेरा पृत्र ऐसा न हो, भरू ही पौत्र ऐसा हो जाय !" इसपर मुनिने कहा—'ऐसा ही हो।' ।। ३०-३१ ॥

अनन्तरं च सा जमदिव्यमजीजनत् ॥ ३२ ॥ तन्याता च विश्वामित्रं जनयामास ॥ ३३ ॥ सत्यवत्यपि कौशिकी नाम नद्यभवत् ॥ ३४ ॥ जमदिव्रिरिक्ष्वाकुवंशोद्धवस्य रेणोस्तनयां रेणुकामुपयेमे ॥ ३५ ॥ तस्यां चाशेषक्षत्रहन्तारं परशुरामसंत्रं भगवतस्सकल्लोकगुरोर्नारायण-स्यांशं जमदिव्यस्जीजनत् ॥ ३६ ॥ विश्वामित्र-पुत्रस्तु भागंव एव शुनश्शोपो देवैर्दतः ततश्च देवसतनामाभवत् ॥ ३७ ॥ ततश्चान्ये मधुच्छन्दो-धनक्षयकृतदेवाष्टककच्छपहारीतकाख्या विश्वामित्रपुत्रा बभूवुः ॥ ३८ ॥ तेषां च बहूनि कौशिकगोत्राणि ऋष्यन्तरेषु विवाह्या-स्वभवन् ॥ ३९ ॥ तदननार उसने जमदक्षिको जन्म दिया और उसकी माताने विश्वामित्रको उत्पन्न किया तथा सत्यवती कौदिाकी नामकी नदी हो गयो ॥ ३२—३४ ॥

जमद्गिने इश्लाकुक्लोन्द्रव रेणुंकी कन्या रेणुकासे विवाह किया ॥ ३५ ॥ उससे जमद्गिके सम्पूर्ण क्षत्रियोंका भारत करनेवाळे भगवान् परशुग्रमजी उत्पन्न हुए जो सकल लोक-गुरु भगवान् नाग्यणके अंश थे ॥ ३६ ॥ देवताओंने विश्वामित्रजीको भृगुवंशीय शुनःशेप पुत्रकपसे दिया था । उसके पीछे उनके देवरात गामक एक पुत्र हुआ और फिर मधुच्छन्द, धनक्रय, कृतदेव, अष्टक, कच्छप एवं हारीतक नामक और भी पुत्र हुए ॥ ३७-३८ ॥ उनसे अन्यान्य ऋषिवंशोंमें विवाहने योग्य बहुत-से कौशिक-गोत्रीय पुत्र-पौत्रादि हुए ॥ ३९ ॥

इति श्रीविच्णुपुराणे चतुर्थेऽहो सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

आठवाँ अध्याय

काञ्चवंशका वर्णन

श्रीपराशर उवाच

पुरूरवसो ज्येष्ठः पुत्रो यस्त्वायुर्नामा स राहो-दुहितरमुपयेमे ॥ १ ॥ तस्यां च पञ्च पुत्रानुत्यादया-मास ॥ २ ॥ नहुषक्षत्रवृद्धरम्भरजिसंज्ञास्तथै-वानेनाः पञ्चमः पुत्रोऽभूत् ॥ ३ ॥ क्षत्रवृद्धा-स्मुहोत्रः पुत्रोऽभवत् ॥ ४ ॥ काश्यकाशगृत्स-मदास्रयस्तस्य पुत्रा वभूवुः ॥ ५ ॥ गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वण्यंत्रवर्तयिताभृत् ॥ ६ ॥

काश्यस्य काशेयः काशिराजः तस्माद्राष्ट्रः, राष्ट्रस्य दीर्घतपाः पुत्रोऽभवत् ॥ ७ ॥ धन्यन्तरिस्तु दीर्घतपसः पुत्रोऽभवत् ॥ ८ ॥ स हि संसिद्धकार्य-करणस्तकलसम्भूतिष्वशेषज्ञानविद् भगवता नारायणेन चातीतसम्भूतौ तस्मै वरो दत्तः ॥ ९ ॥ काशिराजगोत्रेऽवतीर्यं त्यमष्ट्रधा सम्यगायुर्वेदं करिष्यसि यज्ञभागभुग्भविष्यसीति ॥ १० ॥ श्रीपराशरजी बोले—आयु नामक जो पुरूरवाका ज्येष्ठ पुत्र था उसने सहुकी कन्यासे विवाह किया ॥ १ ॥ उससे उसके पाँच पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः नहुष, शत्रबृद्ध, रम्प, रिज और अनेना थे ॥ २-३ ॥ शत्रबृद्धके सुहोत्र नामक पुत्र हुआ और सुहोत्रके कार्य, काश तथा मृत्समद नामक तीन पुत्र हुए। मृत्समदका पुत्र शौनक चातुर्वर्ण्यका प्रवर्तक हुआ ॥ ४—६ ॥

काइयका पुत्र काशियाज काशेय हुआ। उसके सह,
राष्ट्रके दीर्घतपा और दीर्घतपाके धन्वन्तरि नामक पुत्र
हुआ॥७-८॥ इस धन्वन्तरिके शरीर और इन्द्रियों
जरा आदि विकासि रहित थीं—तथा सभी जन्मीमें
यह सम्पूर्ण शास्त्रोंका जाननेवाला था। पूर्वजन्ममें
भगवान् नारावणने उसे यह वर दिया था कि 'काशिराजके वंशमें उत्पन्न होकर तुम सम्पूर्ण आयुर्वेदको आठ भागोंमें विभक्त करोगे और यह-भागके भोका होगे'॥९-१०॥

. Prijal In Italija

ं तस्य च धन्वन्तरेः पुत्रः केतुमान् केतुमतो भीमरथस्तस्यापि दिवोदासस्तस्यापि प्रतर्दनः ।। ११ ।। स च मद्रश्रेण्यवंशविनाशनादशेष-रात्रवोऽनेन जिता इति रात्रुजिदभवत्॥ १२ ॥ तेन च प्रीतिमतात्पपुत्रो वत्सवत्सेत्यभिद्वितो वत्सोऽभवत् ॥ १३ ॥ सत्यपरतया ऋतथ्वज-संज्ञामवाप ॥ १४ ॥ ततश्च कुवलबनामानमश्च लेभे ततः कुवलयाश्च इत्यस्यां पृथिक्यां प्रथितः ।। १५ ॥ तस्य च वत्सस्य पुत्रोऽलर्कनामाभवद् यस्यायमद्यापि श्लोको गीयते ॥ १६ ॥ षष्ट्रिवर्षसङ्ख्राणि षष्ट्रिवर्षशतानि अलर्कादपरो नान्यो युभुजे मेदिनी युवा ॥ १७ तस्याप्यलकस्य सन्नतिनामाभवदात्मजः ॥ १८ ॥ सत्रतेः सुनीधस्तस्यापि सुकेतुस्तस्माध धर्मकेतुर्जज्ञे ॥ १९ ॥ ततश्च सत्यकेतुस्तस्माद्वि-भूसत्तनयस्मृविभूस्ततश्च सुकुमारस्तस्यापि धृष्टकेतुस्ततञ्च वीतिहोत्रस्तस्माद्धार्गो भागस्य भार्गभूमिस्ततश्चातुर्वर्ण्यप्रवृत्तिरित्येते काञ्य-भूभृतः कथिताः॥ २०॥ रजेस्तु सत्त्तिः श्रुयताम् ॥ २१ ॥

धन्यन्तरिका पुत्र केतुमान्, केतुमान्का मीमरथ, भीगरधका दिवोदास तथा दिवोदासका पुत्र प्रतर्दन हुआ। ११॥ उसने मद्रश्रेण्ययंशका नाश करके समस्त शतुओंपर विजय प्राप्त की थी, इसिट्ये उसका नाम 'शतुजित' हुआ। १२॥ दिवोदासने अपने इस पुत्र (प्रतर्दन) से अत्यन्त प्रेमवश 'वत्स, वत्स' कहा था, इसिट्ये इसका नाम 'वत्स' हुआ॥ १३॥ अत्यन्त सत्यपरावण होनेके कारण इसका नाम 'ऋतध्वज' हुआ॥ १४॥ तदनन्तर इसने कुवल्य नामक अपूर्व अध्व प्राप्त किया। इसिट्ये यह इस पृथिवीतल्पर 'कुवल्याश्व' नामसे विख्यात हुआ॥ १५॥ इस वत्सके अलर्क नामक पुत्र हुआ जिसके विषयमें यह इलोक आजतक गाया जाता है॥ १६॥

'पूर्वकारुमें अस्तर्कके अतिरिक्त और किसीने भी सरहर सहस्र वर्षतक युवावस्थामें रहकर पृथिवीका भीग नहीं किया'॥ १७॥

इस अलर्कके भी सर्जात नामक पुत्र हुआ; सन्नतिके सुनीथ, सुनीधकं सुकेतु, सुकेतुके धर्मकेतु, धर्मकेतुके सत्यकेतु, सत्यकेतुके विभु, विभुके सुविभु, सुनिभुके सुकुमार, सुकुमारके धृष्टकेतु, धृष्टकेतुके वीतिहोब, वीतिहोबके भाग और भागंके मार्गभृमि नामक पुत्र हुआ; मार्गभृमिसे वातुर्वण्यंका प्रचार हुआ। इस प्रकार काश्यवंशके राजाओंका वर्णन हो चुका अब रिवकी सन्तानका विवरण सुनो॥ १८—२१॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवाँ अध्याय

महाराज रजि और उनके पुत्रोंका चरित्र

श्रीपराशर उनाच

रजेस्तु पञ्च पुत्रशतान्यतुरुबरूपराक्रमसारा-ण्यासन् ॥ १ ॥ देवासुरसंग्रामारम्भे च परस्पर-वधेप्सवो देवाश्चासुराश्च ब्रह्मणमुपेत्य पप्रच्छुः ॥ २ ॥ भगवन्नसमाकमत्र विरोधे कतरः पक्षो जेता भविष्यतीति ॥ ३ ॥ अथाह भगवान् ॥ ४ ॥ येषामर्थे रजिरात्तायुधो योत्स्यति तत्पक्षो जेतेति ॥ ५ ॥

श्रीपराशरजी बोले—रिजके अतुलित बल-पराक्रमशाली पाँच सी पुत्र थे ॥ १ ॥ एक बार देवासुर-संग्रामके आरम्भमें एक-दूसरेको भारनेको इच्छावाले देवता और दैस्योंने ब्रह्माजीके पास जाकर पूछा—"भगवन् ! हम दोनोंके पारस्परिक कलहमें कौन-सा पक्ष जोतेगा ?" ॥ २-३ ॥ तब भगवान् ब्रह्माजी बोले—"जिस पश्चकी ओरसे राजा राज शास्त्र धारणकर बुद्ध करेगा उसी पश्चकी विजय होगी" ॥ ४-५॥ अथ दैत्यैरुपेत्य रिजरात्मसाहाय्यदाना-याभ्यर्थितः प्राह ॥ ६ ॥ योत्स्येऽहं भवतामर्थे यद्यहममरजयाद्भवतामिन्द्रो भविष्या-मीत्याकण्यैतत्तैरिभिहितम् ॥ ७ ॥ न वयमन्यथा वदिष्यामोऽन्यथा करिष्यामोऽस्माकिमन्द्रः प्रह्लाद-स्तदर्थमेवायमुद्यम् इत्युक्त्वा गतेष्ठसुरेषु देवैरप्य-साववनिषतिरेवमेवोक्तस्तेनापि च तथैवोक्ते

रजिनापि देवसैन्यसहायेनानेकैर्महासै-स्तदशेषमहासुरबर्ल निष्दितम् ॥ ९ ॥ अध जितारियक्षश्च देवेन्द्रो रजिचरणयुगलमात्मनः शिरसा निषीड्याह ॥ १० ॥ भयत्राणादत्रदाना-द्धवानस्मत्पिताऽशेषलोकानामृत्तमोत्तमो भवान् यस्याहं पुत्रस्थिलोकेन्दः ॥ ११ ॥

देवैरिन्द्रस्त्वं भविष्यसीति समन्वीप्सितम् ॥ ८ ॥

स जापि राजा प्रहस्याह ॥ १२ ॥ एव-मस्त्वेवमस्त्वनतिक्रमणीया हि वैरिपक्षाद्य्यनेक-विश्वचादुवाक्यगर्भा प्रणतिरित्युक्त्वा स्वपुरं जगाम ॥ १३ ॥

शतक्रतुरपीन्द्रत्वं चकार ॥ १४ ॥ स्वयंति तु रजौ नारदर्षिचोदिता रजिपुत्राश्शतक्रतुमात्म-पितृपुत्रं समाचाराद्राज्यं यरचितवन्तः ॥ १५ ॥ अप्रदानेन च विजित्येन्द्रमतिबालिनः स्वयमिन्द्रत्वं चक्कः ॥ १६ ॥

ततश्च बहुतिथे काले हातीते बृहस्पतिमेकाने दृष्ट्रा अपहतत्रैलोक्ययज्ञभागः शतकतुरुवाच ॥ १७ ॥ बदरीफलमात्रमप्यहेंसि ममाप्यायनाय पुरोडाशखण्डं दातुमित्युक्तो बृहस्पतिरुवाच ॥ १८ ॥ यद्येवं त्वयाहं पूर्वमेव चोदितस्त्यां तन्पया त्वदर्थं किमकर्त्तव्यमित्यल्पैरेवाहोभिस्त्वां निजं पदं प्रापयिष्यामीत्यभिधाय तेवामनुदिन-

माभिचारिकं बुद्धिमोहाय शक्तस्य तेजोऽभिवद्धये

तब दैत्योने जाकर राजसे अपनी सहायताके लिये प्रार्थना की, इसपर राज बोले— ॥ ६॥। "यदि देवताओंको जीतनेपर मैं आपलोगीका इन्द्र हो सकूँ तो असफे पक्षमें लड़ सकता हूँ ॥ ७॥ यह सुनकर दैत्योने कक्ष— "रामलोग एक बात कहकर उसके विरुद्ध दूसरी तरहका आवरण नहीं करते। हमारे इन्द्र तो प्रह्लादजी हैं और उन्होंके लिये हमारा यह सम्पूर्ण उद्योग हैं" ऐसा कहकर जब दैत्यगण चले गये तो देवताओंने भी आकर राजासे उसी प्रकार प्रार्थना की और उनसे भी उसने यही बात कही। तब देवताओंने यह कहकर कि 'आप ही हमारे इन्द्र होगे' उसको बात स्वीकार कर ली ॥ ८॥

अतः रजिने देव-सेनाकी सहाबता करते हुए अनेक महान् अखोसे दैत्योंकी सम्पूर्ण सेना नष्ट कर दी ॥ ९ ॥ तदनन्तर शत्रु-पक्षको जीत चुकनेपर देवराज इन्द्रने रजिके दोनों चरणोंको अपने मस्तकपर रखकर कहा — ॥ १० ॥ 'भयसे रक्षा करने और अत्र-दान देनेके कारण आप हमारे पिता हैं, आप सम्पूर्ण लोकोंमें सबोत्तम हैं क्योंकि मैं त्रिलोकेन्द्र आपका पुत्र हूँ'॥ १९ ॥

इसपर राजाने हैंसकर कहा—'अच्छा, ऐसा ही सही। राजुगक्षकी भी जाना प्रकारकी चाटुवाक्ययुक्त अनुनय-विनयका अतिक्रमण करना उचित नहीं होता, [फिर राजधानीको बात हो क्या है] ।' ऐसा कहकर वे अपनी राजधानीको बाले गये॥ १२-१३॥ इस प्रकार रातकतु ही इन्द्र-पदयर स्थित हुआ। पीछे,

रिजके स्वर्गवासी होनेपर देवर्षि नारह्वांकी प्रेरणासे रिजके पुत्रोंने अपने पिताके पुत्रभावको प्राप्त हुए ज्ञतकतुसे व्यवहारके अनुसार अपने पिताका राज्य माँगा ॥ १४-१५ ॥ किन्तु जब उसने न दिया, तो उन महाबळवान् रिज-पुत्रोंने इन्द्रको जीतकर स्वयं ही इन्द्र-पहका भोग किया ॥ १६ ॥ फिर बहुत-सा समय बीत जानेषर एक दिन

बृहस्पतिजीको एकान्तमें बैठे देख त्रिलोकीके यक्तभागसे विश्वत हुए शतकतुने उनसे कहा— ॥ १७ ॥ क्या 'आप मेरी तृप्तिके लिये एक बेरके बराबर भी पुरोहाशसण्ड मुझे दे सकते हैं ?' उनके ऐसा कहनेपर बृहस्पतिजी बोले— ॥ १८ ॥ 'यदि ऐसा है, तो पहले ही तुमने मुझसे क्यो नहीं कहा ? तुम्हारे लिये भला मै क्या नहीं कर सकता ? अच्छा, अब बोड़े ही दिलोमें मैं तुग्हें अपने पदपर स्थित कर दूँगा।' ऐसा कह बृहस्पतिजी रिज-पुत्रोंकी बुद्धिको पोहित करनेके लिये अभिचार और

जुहाव ॥ १९ ॥ ते चापि तेन बुद्धिमोहेनाभि-भूयमाना ब्रह्मद्विषो धर्मत्यागिनो वेदबादपराङ्मुखा बभूवुः ॥ २० ॥ ततस्तानपेतधर्माचारानिन्द्रो जधान ॥ २१ ॥ पुरोहिताष्यायिततेजाश्च शको दिवमाक्रमत् ॥ २२ ॥

एतदिन्द्रस्य स्वपदच्यवनादारोहणं श्रुत्वा पुरुषः स्वपदभ्रंशं दौरात्व्यं च नाप्नोति ॥ २३ ॥

रम्भस्त्वनपत्योऽभवत् ॥ २४ ॥ क्षत्रवृद्धसुतः प्रतिक्षत्रोऽभवत् ॥ २५ ॥ तत्पुत्रः सञ्जयस्तस्यापि जयस्तस्यापि विजयस्तस्माद्य जज्ञे कृतः ॥ २६ ॥ तस्य च हर्यधनो हर्यधनसृतस्सहदेवस्तस्माददीनस्तस्य जयस्सेनस्ततश्च संस्कृतिस्तत्पुत्रः क्षत्रधर्मा इत्येते क्षत्रवृद्धस्य वंदयाः ॥ २७ ॥ ततो नहुषवंदां प्रवक्ष्यामि ॥ २८ ॥ इन्द्रकी तेजोवृद्धिक किये इतन करने लगे॥ १९॥ बुद्धिको मोहित करनेवाले उस अभिचार-कर्मसे अभिभूत हो जानेके कारण रॉज-पूत्र ब्राह्मण-विरोधी, धर्म-त्यागी और तेद-त्विमुख हो गये॥ २०॥ तब धर्माचारहीन हो जानेसे इन्द्रने उन्हें मार डाला॥ २१॥ और पुरोहितजीके द्वारा तेजोवृद्ध होकर स्वर्गपर अपना अधिकार जमा लिया॥ २२॥

इस प्रकार इन्द्रके अपने पदसे गिरकर उसपर पित आरूढ़ होनेके इस प्रसद्भको सुननेसे पुरुष अपने पदसे पतित नहीं होता और उसमें कभी दुष्टता नहीं आती ॥ २३ ॥

[आयुका दूतरा पुत्र] रम्भ सन्तानहीन हुआ ॥ २४ ॥ अत्रवृद्धका पुत्र प्रतिक्षत्र हुआ, प्रतिक्षत्रका सक्तय, सञ्चयका बय, जयका विजय, विजयका कृत, कृतका हर्यभन, हर्यधनका सहदेव, सहदेवका अदीन, अदीनका जयत्सेन, जयत्सेनका संस्कृति और संस्कृतिका पुत्र धृत्रधर्मी हुआ । ये सब अत्रवृद्धके वंशज हुए ॥ २५—२७॥ अन मैं नहुषवंशका वर्णन करूँगा ॥ २८॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थैऽशे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दसवाँ अध्याय

ययातिका चरित्र

श्रीपरादार उताच

यतिययातिसंयात्यायातिविद्यातिकृतिसंज्ञा नहुषस्य षद् पुत्रा महाबलयराक्रमा बभूखुः ॥ १ ॥ यतिस्तु राज्यं नैच्छत् ॥ २ ॥ययातिस्तु भूभृदभवत् ॥ ३ ॥ उद्यानसञ्च दुहितरं देवयानीं वार्षपर्वणीं च द्यार्मिष्ठामुपयेमे ॥ ४ ॥ अत्रानुवंदादलोको भवति ॥ ५ ॥ यदुं च तुर्वसुं चैव देवयानी व्याजायत ।

भवति ॥ ५ ॥
यदुं च तुर्वसुं चैव देवयानी व्यजायत ।
द्रुषुं चानुं च पूरु च शर्मिष्ठा वार्षपर्वणी ॥ ६
काव्यशापाद्याकालेनैय ययातिर्जरामवाप
॥ ७ ॥ प्रसन्नशुक्रवचनाह स्वजरां सङ्कामियतुं
ज्येष्ठं पुत्रं यदुमुवाच ॥ ८ ॥ वत्स
त्वन्यातामहशापादियमकालेनैव जरा ममोपस्थिता
तामहं तस्यैवानुत्रहाद्भवतस्मञ्चारयापि ॥ ९ ॥

श्रीपसशरजी बोले—नहुषके यति, स्याति, संयाति, आयाति, वियाति और कृति नामक छः महावल-विक्रमशाली पुत्र हुए॥१॥ यतिने राज्यकी इच्छा नहीं की, इसलिये ययाति ही राजा हुआ॥२-३॥ ययातिने शुक्राचार्यजीकी पुत्री देवयानी और वृषपर्याकी कन्या शर्मिष्ठासे विवाह किया था॥४॥ उनके वंशके सम्बन्धमें यह श्लोक प्रसिद्ध है—॥५॥

'देवधानीने यदु और तुर्वस्को जन्म दिया तथा वृषपर्याको पुत्री सर्मिष्टाने दृह्यु, अनु और पूरको उत्पन्न किया'॥६॥

ययातिको सुकाचार्यजीके शापसे वृद्धावस्थाने असमय ही पेर लिया था॥७॥ पीछे सुक्रजीके प्रसन होकर कहनेपर उन्होंने अपनी वृद्धावस्थाको प्रहण करनेके लिये बड़े पुत्र यदुसे कहा—॥८॥ 'वत्स! तुम्हारे नानाजीके शापसे मुझे असमयमें ही वृद्धावस्थाने घेर लिया है, अब उन्होंकी कृपासे मैं असे तुमको देना चाहता हूँ॥९॥ एकं वर्षसहस्त्रमतृप्तोऽस्मि विषयेषु त्वह्नयसा विषयानहं भोकुमिच्छामि ॥ १० ॥ नात्र भवता प्रत्याख्यानं कर्त्तव्यमित्युक्तस्स यदुनैंच्छत्तां जरामादातुम् ॥ ११ ॥ तं च पिता शशाम त्वस्रसृतिर्न राज्याहां भविष्यतीति ॥ १२ ॥

अनन्तरं च तुर्वसुं हुद्धुमनुं च पृथिवीपति-र्जराग्रहणार्थं स्वयौवनप्रदानाय चाभ्यर्थयामास ॥ १३ ॥ तैरप्येकैकेन प्रत्याख्यातस्ताञ्छशाप ॥ १४ ॥ अथ शर्मिष्ठातनयमशेषकनीयांसं पूर्ह तथैवाह ॥ १५ ॥ स चातिप्रवणमतिः सबहुमानं पितरं प्रणम्य महाप्रसादोऽयमस्माकमित्युदार-मभिधाय जरां जन्नाह ॥ १६ ॥ स्वकीयं च यौवनं स्वपित्रे ददौ ॥ १७ ॥

सोऽपि पौरवं यौवनमासाद्य धर्माविरोधेन यधाकामं यथाकालोपपन्नं यथोत्साहं विषयांश्चार ॥ १८॥ सम्बक् च प्रजापालनमकरोत् ॥ १९ ॥ विश्वाच्या देवयाच्या च सहोपभोगं भुक्त्वा कामानामन्तं प्राप्यामीत्यनुदिनं उन्पनस्को बपुव ॥ २०॥ अनुदिनं चोपभोगतः कामा-नितरम्यान्येने ॥ २१ ॥ ततश्चैवमगायत ॥ २२ ॥ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शास्यति । हविषा कृष्णवर्त्मेव भूम एवाभिवर्द्धते ॥ २३ यत्पश्चित्यां व्रीहियवं हिरण्यं पश्चतः स्त्रियः । एकस्यापि न पर्याप्तं तस्मात्तृष्णां परित्यजेत् ॥ २४ यदा न कुरुते भावं सर्वभूतेषु पापकम्। समदृष्टेस्तदा पुंसः सर्वास्सुखपया दिशः॥ २५ या दुस्यजा दुर्मितिभियां न जीयंति जीयंतः । तां तृष्णां सन्त्यजेत्राज्ञस्तुखेनैवाभिपूर्वते ॥ २६ जीर्यन्ति जीर्यतः केशा दत्ता जीर्यन्ति जीर्यतः । धनाञ्चा जीविताञ्चा च जीवीतोऽपि न जीवीत: ॥ २७ पूर्णं वर्षसहस्रं में विषयासक्तचेतसः। तश्राप्यनृदिनं तृष्णा मम नेषुपजायते ॥ २८

भें अभी विषय-भोगोंसे तृप्त नहीं हुआ हूं, इसिल्ये एक सहस्र वर्षतक में तुम्हारी युवाबस्थासे उन्हें भोगना चाहता हूं ॥ १० ॥ इस विषयमें तुम्हें किसी प्रकारकी आनाकानी नहीं करनी चाहिये ।' किंतु पिताके ऐसा कहनेपर भी यदुने वृद्धावस्थाको प्रहण करना न चहा ॥ ११ ॥ तब पिताने उसे शाप दिया कि तेरी सन्तान राज्य-पदके योग्य न होगी ॥ १२ ॥

फिर राजा ययातिने तुर्वसु, दुझु और अनुसे भी अपना थीवन देकर वृद्धावस्था प्रदण करनेके लिये कहा; तथा उनमेंसे प्रत्येकके अस्वीकार करनेपर उन्होंने उन समीको शाप दे दिया ॥ १३-१४ ॥ अन्तमें सबसे छोटे शर्मिष्ठाके पुत्र पूरुसे भी वहीं कत कही तो तसने अति नम्रता और आदरके साथ पिताको प्रणाम करके उदारतापूर्वक करा—'यह तो समारे कपर आपका महान् अनुभह है।' ऐसा कहकर पूरने अपने पिताको वृद्धावस्था प्रहण कर उन्हें अपना यौकन दे दिया ॥ १५—१७ ॥

राजा वयातिने पूरुका याँवन लेकर समयानुसार प्राप्त हुए यथेच्छ विषयोको अपने उत्साहके अनुसार धर्म-पूर्वक भोगा और अपनी प्रजाका भली प्रकार पालन किया ॥ १८-१९ ॥ फिर विश्वाची और देवयानीके साथ विविध भोगोंको भोगते हुए 'मैं कामनाओंका अन्त कर दूँगा'—ऐसे सोचते-सोचते वे प्रतिदिन [भोगोंके लिये] उत्कण्डित रहने लगे ॥ २० ॥ और निरन्तर भोगते रहनेसे उन कामनाओंको अल्पन्त प्रिय मानने लगे; तदुपरान्त उन्होंने इस प्रकार अपना उद्धार प्रकट किया ॥ २१-२२ ॥

'भोगोकी तृष्णा उनके भोगतेसे कभी शास नहीं होती, बिल्क धृताहुतिसे अग्निक समान वह बढ़ती ही जाती है ॥ २३ ॥ सम्पूर्ण पृथिवीमें जितने भी धान्य, यब, सुबर्ण, पशु और खियाँ हैं वे सब एक मनुष्यके लिये भी सन्तोधजनक नहीं है, इसलिये तृष्णाको सर्वधा त्याग देना जाहिये ॥ २४ ॥ जिस समय कोई पुरुष किसी भी प्राणीके लिये पाषमयी भावना नहीं करता उस समय उस समदर्शिक लिये सभी दिशाएँ सुखमयी हो जाती है ॥ २५ ॥ दुर्मतियोक लिये जो अत्यन्त दुस्यज है तथा वृद्धावस्थामें भी जो शिथिल नहीं होती, बुद्धिमान पुरुष उस तृष्णाको त्यागकर सुखसे परिपूर्ण हो जाता है ॥ २६ ॥ अवस्थाके जीर्ण होनेपर केश और दाँत तो जीर्ण हो जाते हैं किन्तु जीवन और धनकी आशाएँ उसके जीर्ण होनेपर भी नहीं जीर्ण होतीं ॥ २७ ॥ विषयोमें आसक रहते हुए मुझे एक सहस्र वर्ष बीत गये, फिर भी निस्य हो उनमें मेरी

i to distilli

तस्मादेतामहं त्यवस्या ब्रह्मण्याधाय मानसम् । निर्द्वन्द्वो निर्ममो भूत्वा चरिष्यामि मृगैस्सह ॥ २९ श्रीपरशर उज्ञय

भूगेस्सकाशादादाय जरां दत्त्वा च यौवनम् । राज्येऽभिषिच्य पूरं च प्रययौ तपसे वनम् ॥ ३० दिशि दक्षिणपूर्वस्यां तुर्वसुं च समादिशत् । प्रतीच्यां च तथा दुह्युं दक्षिणायां ततो यदुम् ॥ ३१ उदीच्यां च तथावानुं कृत्वा मण्डलिनो नृपान् । सर्वपृथ्वीपति पूरं सोऽभिष्चिय वनं ययौ ॥ ३२ कामना होता है ॥ २८ ॥ अतः अब मैं इसे छोड़कर और अपने चित्तको भगवान्में ही स्थिएकर निर्दृन्द और निर्मम होकर [बनमें] मृगोंके साथ विचक्रमा ॥ २९ ॥ 🛒

श्रीपराशरजी बोले—तदनत्तर राजा ययातिने पूरुसे अपनी वृद्धावस्था लेकर उसका मौबन दे दिया और उसे राज्य-पदमर अभिषिक कर बनको चले गये॥ ३०॥ उन्होंने दक्षिण-पूर्व दिशामें तुर्वसुको, पश्चिममें दुस्को, दक्षिणमें यदुको और तत्तरमें अनुको माण्डलिकपदमर नियुक्त किया; तथा पूरुको सम्पूर्ण भूमण्डलके राज्यपर अभिषक्तकर स्वयं कनको चले गये॥ ३१-३२॥

इति श्रीविष्पुपुराणे चतुर्थेऽशे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवाँ अध्याय

यदुवंशका वर्णन और सहस्राजुंनका चरित्र 💎

श्रीपराशर उवाच

अतः परं ययातेः प्रथमपुत्रस्य यदोर्वशमहं कथयामि ॥ १ ॥ यत्राशेषलोकनिवासो मनुष्य-सिद्धगन्धर्वयक्षराक्षसगृहाककिंपुरुषाप्सरउरग-विहगदैत्यदानवादित्यस्त्रत्वस्वश्चिमरुदेवर्षिभि-मृंमुक्षुभिर्धपर्थिकाममोक्षार्थिभिक्ष तत्तत्फल-लाभाय सदाभिष्ठुतोऽपरिच्छेद्यमाहात्व्यांशेन भगवाननादिनिथनो विष्णुरवततार ॥ २ ॥ अत्र इलोकः ॥ ३ ॥ यदोर्वशं नरः श्रुत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ।

यत्रावतीणं कृष्णाख्यं परं ब्रह्म निराकृति ॥ ४ सहस्रजिकोष्टुनलनहुषसंज्ञाश्चत्वारो यदुपुत्रा यभुवुः ॥ ५ ॥ सहस्रजित्पुत्रश्शतजित् ॥ ६ ॥ तस्य हैह्यहेह्यवेणुह्यास्त्रयः पुत्रा वभूवुः ॥ ७ ॥ हैह्यपुत्रो धर्मस्तस्यापि धर्मनेत्रस्ततः कुन्तिः कुन्तेः सहजित् ॥ ८ ॥ तत्तनयो महिष्मान् योऽसी माहिष्मती पुरी निवास-यामास ॥ ९ ॥ तस्माद्धद्रश्लेण्यस्ततो दुर्दमस्त-स्माद्धनको धनकस्य कृतवीर्यकृताित्र- श्रीपराशरजी बोले—अब मैं क्यांतिक प्रथम पुत्र यहुके वंशका वर्णन करता हूँ, जिसमें कि मनुष्य, सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, यक्षस, युद्धक, कियुरुष, अप्सरा, सपं, पक्षी, देला, दानव, आदित्य, रुद्ध, बसु, अधिनीकुमार, मरुद्दण, देवर्षि, मुमुश्रु तथा धर्म, अर्थ, काम और मोक्षके, अफिलाबी पुरुषोद्धारा सर्वदा खुदि किये जानेवाले, असिललोक-जिश्लाम आद्यन्तदीन भगवान् विष्णुने अपने अपरिमित महत्वशालो अञ्चसे अवतार लिया था। इस विषयमें यह इलोक प्रसिद्ध है॥ १—३॥

जिसमें श्रीकृष्ण नामक निराकार परब्रह्मने अवतार लिया था उस यदुवंशका श्रवण करनेसे मनुष्य सन्पूर्ण पापेंसे मुक्त ही जाता हैं ॥ ४ ॥

यदुके सहस्रजित्, क्रोष्टु, नस्त और नहुष नामक पार पुत्र हुए। सहस्रजित्के शतजित् और शतजित्के हैहय, हेहय तथा वेणुहय नामक तीन पुत्र हुए॥ ५—७॥ हैहयका पुत्र धर्म, धर्मका धर्मनेत्र, धर्मनेत्रका कृत्ति, कृत्तिका सर्हजित् तथा सहजित्का पुत्र महिल्यान हुआ, जिसने माहिष्यतीपुरोको बसाया॥ ८-९॥। महिष्यान्के भद्रश्रेण्य, भद्रश्रेण्यके दुर्दम, दुर्दमके धनक तथा धनकके

कृबधर्मकृतौजसश्चतारः पुत्रा बभूवुः ॥ १० ॥ कृतवीर्यादर्जुनस्सप्तद्वीपाधिपतिर्वाहसहस्रो जज्ञे ॥ ११ ॥ योऽसौ भगवदंशमत्रिकुलप्रसूतं दत्तात्रेयाख्यमाराध्य बाहुसहस्रमधर्मसेवा-निवारणं स्वधर्मसेवित्वं रणे पृथिवीजवं धर्मतश्चान्-पालनमरातिभ्योऽपराजयमस्विलजगत्मस्यात-पुरुषाद्य मृत्युमित्येतान्वरानभिलवितवाँल्लेभे च ॥ १२ ॥ तेनेयमशेषद्वीपवती पृथिवी सम्यक्-परिपालिता ॥ १३ ॥ दशयज्ञसहस्रा-ण्यसावयजत् ॥ १४ ॥ तस्य च इलोकोऽद्यापि गीयते ॥ १५ ॥ न नूनं कार्तवीर्यस्य गति यास्यन्ति पार्थिवाः । यज्ञैदिनैस्तपोभियां प्रश्रयेण श्रुतेन च ॥ १६ अनष्टद्रव्यता च तस्य राज्येऽभवत् ॥ १७ ॥ एवं च पञ्चाशीतिवर्षसहस्राण्यव्याहतारोग्य-राज्यमकरोत् ॥ १८ ॥ श्रीवरूपराक्रमो माहिष्यत्यां दिग्बिजयाभ्यागतो नर्मदाजलावगाहन-क्रीडातिपानमदाकुलेनायलेनैव तेनाशेषदेवदैत्य-मन्धर्वेशजयोद्धतमदावलेपोऽपि रावणः पशुरिव बद्ध्वा स्वनगरैकान्ते स्थापितः ॥ १९ ॥ यश्च पञ्चाशीतिवर्षसहस्रोपलक्षणकालावसाने भगवन्नारायणांदोन परश्रामेणोपसंहतः ॥ २० ॥ तस्य च पुत्रशतप्रधानाः पञ्च पुत्रा बभूयुः शुरशुरसेनवृषसेनमधुजयध्वजसंज्ञाः ॥ २१ ॥ जयध्वजात्तालजङ्गः पुत्रोऽभवत् ॥ २२ ॥ तालजङ्गस्य तालजङ्गाख्यं पुत्रशतमासीत् ॥ २३ ॥ एषां ज्येष्ट्रो वीतिहोत्रस्तथान्यो भरतः ॥ २४ ॥ भरताद्वृषः ॥ २५ ॥ वृषस्य पुत्रो मधुरभवत् ॥ २६ ॥ तस्यापि वृष्णिप्रमुखं पुत्रशतमासीत् ॥ २७ ॥ यतो वृष्णिसंज्ञामेत-

क्रेत्रमबाप ॥ २८ ॥ मधुसंज्ञाहेतुश्च मधुरभवत्

॥ २९ ॥ यादवाश्च बदुनामोपलक्षणादिति ॥ ३० ॥

कृतवीर्य, कृतामि, कृतधर्म और कृतीजा नामक चार पुत्र हुए ॥ १० ॥

क्तवीर्यके सहस्र भुजाओंवाले सप्तद्वीपाविपांत अर्जुनका जन्म हुआ॥ ११॥ सहस्रार्जुनने अत्रिकुलमें उत्पन्न भगवदंशरूप श्रीरतात्रेयजीकी उपासना कर 'सहस्र भुजाएँ, अधर्माचरणका निवारण, स्वधर्मका सेवन, युद्धके द्वारा सम्पूर्ण पृथिवीमण्डलका विवय, धर्मानुसार प्रजा-पालन, शतुओंसे अपरावय तथा विलोकप्रसिद्ध पुरुषसे पृत्यु'— ऐसे कई वर माँगे और प्राप्त किये थे॥ १२॥ अर्जुनने इस सम्पूर्ण सप्तद्वीपवती पृथिवीन्य पालन तथा दस इत्यार यजीका अनुप्रान किया था॥ १३-१४॥ उसके विषयमें यह इलोक आजतक कहा जाता है—॥ १५॥

'युज्ञ, दान, तप, विनय और विद्यामें कार्तवीर्यः— सहस्रार्जुनकी समेता कोई भी राजा नहीं कर सकता'॥ १६॥

उसके राज्यमें कोई मी पदार्थ नष्ट नहीं होता था॥ १७॥ इस प्रकार तसने बल, पराक्रम, आरोग्य और सम्पत्तिको सर्वथा सुरक्षित रखते हुए पचासी हजार वर्ष राज्य किया॥ १८॥ एक दिन अब वह अतिशय मद्य-पानसे व्याकुल हुआ नर्भदा नदीमें जल-क्रीडा कर रहा था, उसकी राजधानी माहिण्मतीपुरीयर दिग्विजयके लिये आये हुए सम्पूर्ण देव, दानव, मन्यर्व और राजाओंके विजय-मदसे उन्मत रावणने आक्रमण किया, उस समय उसने अनाबास हो रावणको पशुके समान बोधकर अपने नगरके एक निजंन स्थानमें रख दिया॥ १९॥ इस सहलाजुंनका पन्धसी हजार वर्ष व्यतीत होनेपर भगवान् नारायणके अंशावतार परशुरामजीने वस किया था॥ २०॥ इसके सी पुत्रीमैंसे शुर, शुरसेन, वृषसेन, मध्य और जन्यस्वज—ये पाँच प्रधान थे॥ २१॥

जयध्वज्ञका पुत्र तालजंघ हुआ और तालजंघके तालजंघ नामक सी पुत्र हुए इनमें सबसे वड़ा वीतिहोत्र तथा दूसरा भरत था॥ २२—-२४॥ भरतके वृष, वृषके मधु और मधुके वृष्णि आदि सी पुत्र हुए॥ २५—-२७॥ वृष्णिके कारण यह वंदा वृष्णि कहलाया॥ २८॥ मधुके कारण इसकी मधु-संज्ञ हुई॥ २९॥ और यदुके नामानुसार इस वंदाके लोग यादय कहलाये॥ ३०॥

The state of

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽदो एकादशोऽध्यायः॥ ११ ॥

बारहवाँ अध्याय

यदुपुत्र क्रोप्टुका वंश

श्रीपराङ्गर उद्याच

क्रोष्टोस्तु यदुपुत्रस्यात्मजो ध्वजिनीवान् ॥ १ ॥
ततश्च स्वातिस्ततो स्ट्राङ्क स्ट्राङ्कोश्चित्रस्थः
॥ २ ॥ तत्तनयदृश्चित्रिश्चतुर्दशमहारत्नेराश्चक्रवर्त्यभवत् ॥ ३ ॥ तस्य च शतसहस्रं
पत्नीनामभवत् ॥ ४ ॥ दशलक्षसंख्याश्च पुत्राः
॥ ५ ॥ तेषां च पृथुअवाः पृथुकर्मा पृथुकीर्तिः
पृथुवशाः पृथुजयः पृथुदानः षद् पुत्राः प्रधानाः
॥ ६ ॥ पृथुअवसश्च पुत्रः पृथुतमः ॥ ७ ॥
तस्मादुशना यो वाजिमेधानां शतमाजहार ॥ ८ ॥
तस्य च शितपुर्नाम पुत्रोऽभवत् ॥ १ ॥ तस्यापि
रुवमकवचस्रतः परावृत् ॥ १० ॥ परावृतो रुवमेषुपृथुज्यामध्विलतहरितसंज्ञास्तस्य पद्भात्मजा
बभूवः ॥ ११ ॥ तस्यायमद्यापि ज्यामधस्य
रुलोको गीयते ॥ १२ ॥

भार्यावश्यास्तु ये केविद्धविष्यस्यथं वा पृताः । तेषां तु ज्यामघः श्रेष्ठश्शैच्यापतिरभूञ्च्यः ॥ १३

अपुत्रा तस्य सा पत्नी शैट्या नाम तथाप्यसौ । अपत्यकामोऽपि भयान्नान्यां भार्गामविन्दत् ॥ १४

स त्वेकदा प्रभूतरधतुरगगजसम्मद्तिदारुणे महाहवे युद्ध्यमानः सकलमेवारिचक्रमजयत् ॥ १५ ॥

श्रीपराशरजी बोरुं — यदुपुत्र क्रोष्टुकं ध्वजिनीयान् नामक पुत्र हुआ ॥ १ ॥ उसके स्वाति, स्वातिकं ६शकुं, हशंकुके चित्रस्थ और चित्रस्थकं शिशिक्टु नामक पुत्र हुआ बो चीदहों महारलींका स्वामी तथा चक्रवर्ती समाद् था ॥ २-३ ॥ शश्चिक्टुके एक लास खियाँ और दस लास पुत्र थे ॥ ४-५ ॥ उनमें पृथुश्रवा, पृथुकर्मा, पृथुकीर्ति, पृथुयशा, पृथुजय और पृथुदान — ये छः पुत्र प्रधान थे ॥ ६ ॥ पृथुश्रवाका पुत्र पृथुतम और उसका पुत्र उशना हुआ जिसने सौ अश्चमेथ-यज्ञ किया था ॥ ७-८ ॥ उशनाके शितपु नामक पुत्र हुआ ॥ ९ ॥ शितपुके रुवमकवच, रुवमक्तवके परावृत् तथा पराकृत्कं रुवमेषु, पृथु, ज्वामय, विलित और हरित नामक पाँच पुत्र हुए॥ १०-११॥ इनमेंसे ज्यामवके विषयमे अब भी यह इलोक गाया जाता है॥ १२॥

संसारमें स्वीके बड़ीभूत जो-जो लोग होंगे और जो जो पहरे हो चुके हैं उनमें डोब्याका पति राजा ज्यामय हो सर्वेश्रेष्ठ हैं॥१३॥ उसकी स्वी दौष्या यद्यपि निःसन्तान भी तथापि सन्तानकी इच्छा रहते हुए भी उसने उसके भयसे दूसरी स्वीसे विवाह नहीं किया॥१४॥

एक दिन बहुत से रथ, घोड़े और हाथियोंके संघट्टसे अत्यन्त भयानक महायुद्धमें ठड़ते हुए उसने अपने समस्त

ंचक्रं रथो मणिः सङ्गश्चर्नं रलं च पञ्चनम् । केतुनिधिश्चः सरीचः प्राणहीनानिः चश्चते ॥ भार्याः पुरोहितश्चेषः सेनानी रधकृषः यः । पत्पश्चकलभाक्षेति प्राणिनः सप्तः कीर्तिताः ॥ बहुर्दशैति स्त्रानि सर्वेषो चत्रव्यर्तिनान् ।'

अर्थात् चक्र, रथ, मणि, खड्न, चर्म (ढाल), ध्वना और निधि (खजाता) ये सात प्राणहीन तथा खी, पुरोहित, सेनापति, रधी, पदाति, अद्याग्रेही और गव्यरोही —ये सत्त प्राणयुक्त इस प्रकट कुल चौदह रख सब चक्रवर्षियीके वहाँ रहते हैं ।

पर्मसंदितामं चौदह स्त्रींका उल्लेख इस प्रकार किया है—

तद्यारिचक्रमपास्तपुत्रकलत्रबन्धुबलकोशं स्वमधिष्ठानं परित्यज्य दिशः प्रति विद्वतम् ॥१६॥ तस्मिश्च विद्वतेऽतित्रासलोलायत-लोचनयुगलं त्राहि त्राहि मां ताताम्ब प्रात-रित्याकुलविलापविधुरं स राजकन्यारत्नमद्राक्षीत् ॥१७॥ तद्दर्शनाच तस्यापनुरागानुगतान्तरात्मा स नृपोऽचिन्तयत्॥१८॥ साध्यदं ममापत्य-रहितस्य वच्याभर्तुः साम्प्रतं विधिनापत्यकारणं कन्यारत्नमुपपादितम्॥१९॥ तदेतत्समुद्रहामीति ॥२०॥ अथवैनां स्वन्दनमारोप्य स्वमधिष्ठानं नयामि॥२१॥ तयैव देव्या शैव्यवाहमनुज्ञात-स्समुद्रहामीति॥२२॥

अर्थनां रथमारोप्य स्वनगरमगच्छत् ॥ २३ ॥ विजयिनं च राजानमशेषपौरभृत्यपरिजनामात्य-समेता शैव्या द्रष्टुमधिष्ठानद्वारमागता ॥ २४ ॥ सा चावलोक्य राज्ञः सव्यपार्श्ववर्त्तिनीं कन्यामीष-दुद्धृतामर्षस्पुरद्धरपल्लवा राजानमवोचत् ॥ २५ ॥ अतिचपलचित्तात्र स्यन्दने केय-मारोपितेति ॥ २६ ॥ असावप्यनालोचितोत्तर-वचनोऽतिभयात्तामाह स्रुषा ममेयपिति ॥ २७ ॥ अर्थनं शैक्योवाच ॥ २८ ॥ नाहं प्रसृता पृत्रेण नान्या पल्यभयत्तव ।

खुषासम्बन्धता ह्येषा कतमेन सुतेन ते ॥ २९ *श्रीपराश्त उत्राच*

इत्यात्पेर्ध्याकोपकलुषितववनमुषितविवेको भयादुरुक्तपरिहारार्थीमदमवनीपतिराह ॥ ३० ॥ बस्ते जनिष्यत आत्मजस्तस्येयमनागतस्यैव भार्या निरूपितेत्याकण्योंद्भृतमृदुहासा तथेत्याह ॥ ३१ ॥ प्रविवेश च राज्ञा सहाथिष्ठानम् ॥ ३२ ॥

अनन्तरं चातिशुद्धलब्रहोरांशकावयवोक्त-कृतपुत्रजन्मलाभगुणाद्वयसः परिणाममुपगतापि शत्रुओंको जीत लिया ॥ १५ ॥ उस समय वे समस्त शत्रुगण पुत्र, मित्र, स्त्री, सेना और कोशादिसे होन होकर अपने-अपने स्थानोंको छोड़कर दिशा-विदिशाओंमें माग गये ॥ १६ ॥ उनके भाग जानेपर उसने एक राजफन्याको देखा जो अत्यन्त भयसे कातर हुई विशाल आँखोंसे [देखती हुई] 'हे तात, हे मातः, हे भ्रातः । मेरी रक्षा करो, रक्षा करो' इस प्रकार व्याकुळतापूर्वक विलाप कर रही थी ॥ १७ ॥ उसको देखते ही उसमें अनुरत्त-चित्त हो जानेसे राजाने विचार किया ॥ १८ ॥ 'यह अच्छा ही हुआ; मैं पुत्रहीन और वन्थाका पति हूँ; ऐसा मालूम होता है कि सन्तानकी कारणरूपा इस कन्यारकको विश्वाताने ही इस समय यहाँ भेजा है ॥ १९ ॥ तो फिर मुझे इससे विवाह कर लेना चाहिये ॥ २० ॥ अथवा इसे अपने स्थपर बैठाकर अपने निवासस्थानको लिये चलता हूँ, बहाँ देवी शैव्याकी आजा लेकर ही इससे विवाह कर लूँगा' ॥ २१-२२ ॥

तदनत्तर ये उसे रथपर चढ़ाकर अपने नगरको है चले ॥ २३ ॥ वहाँ विजयो राजांक दर्शनके लिये सम्पूर्ण पुरवासी, सेवक, कुटुम्बीजन और मिलवर्गके सिंहत महारानी हीव्या नगरके हारपर आयी हुई थी ॥ २४ ॥ उसने राजांक वामभागमें बैठी हुई राजवन्याको देखकर क्रोपके कारण कुछ काँपते हुए होठोंसे कहा— ॥ २५ ॥ "है अति चपलवित्त ! तुमने रथमें यह कौन बैठा रखी है ?" ॥ २६ ॥ राजांको भी जब कोई उत्तर न सुझा तो अत्यन्त इरते-इरते कहा— "यह मेरी पुत्रवधू है ।" ॥ २० ॥ तब हौट्या बोली— ॥ २८ ॥

"मेरे तो कोई पुत्र हुआ नहीं है और आपके दूसरी कोई की भी नहीं है, फिर किस पुत्रके कारण आपका इससे पुत्रवधूका सम्बन्ध हुआ ?"॥ २९॥

श्रीपराशरजी बोलें—इस प्रकार, रौज्याके ईर्जा और ब्रोध-कलुपित वचनोंसे विवेकहीन होकर भयके कारण कही हुई असंबद्ध बातके सन्देहको दूर करनेके लिये राजाने कहा— ॥ ३० ॥ "तुम्हारे जो पुत्र होनेवाला है उस भावी शिशुको मैंने यह पहलेसे ही भावों निश्चित कर दी है।" यह सुनकर रानीने मभुर मुसुकानके साथ कहा—'अच्छा, ऐसा ही हो' और राजाके साथ नगरमें प्रवेश किया ॥ ३१-३२ ॥

तदनन्तर पुत्र-लाभके गुणोंसे युक्त उस अति विशुद्ध लग्न होरोशक अवयवके समय हुए पुत्रजन्मविषयक वार्तासापके प्रभावसे गर्भधारणके योग्य अवस्था न

शैव्या स्वल्पैरेवाहोभिर्गभैपवाप ॥ ३३ ॥ कालेन च कुमारमजीजनत् ॥ ३४ ॥ तस्य च विदर्भ इति पिता नाम चक्रे ॥ ३५ ॥ स च तां स्रुवामुपयेमे ॥ ३६ ॥ तस्यां चासौ क्रथकैशिकसंजी पुत्रा-वजनयत् ॥ ३७ ॥ पुनश्च तृतीयं रोमपादसंज्ञं पुत्रमजीजनद्यो नारदादवाप्तज्ञानवानभवत् ॥ ३८ ॥ रोमपादाद्वध्वर्षभ्रोर्धृतिर्धृतेः कैशिकः कैशिकस्यापि चेदिः पुत्रोऽभवद् यस्य सन्तते चैद्या भूपालाः ॥ ३९ ॥ क्रथस्य सुपापुत्रस्य कुन्तिरभवत्।। ४०॥ कुन्तेर्धृष्टिर्धृष्टेर्निधृतिर्निधृतेर्दशार्हस्ततश्च व्योमा तस्यापि जीमूतस्ततश्च विकृतिस्ततश्च भीमरथः, तस्मान्नवरथस्तस्यापि दशरथस्ततश्च शकुनिः, तत्तनयः करम्भिः करम्भेदेवरातोऽभवत् ॥ ४१ ॥ तस्पाद्देवक्षत्रस्तस्यापि मधूर्मधोः कुमारवंशः कुमारवंशादनुरनोः पुरुपित्रः पृथियोपतिरभवत् ॥ ४२ ॥ तत्रञ्जांशुस्तस्माच सत्वतः ॥ ४३ ॥ सत्वतादेते सात्वताः ॥ ४४ ॥ इत्येतां जयामघस्य सत्तति सम्बक्कुद्धासमन्वितः श्रुत्वा पुमान् मैत्रेय

रहनेपर भी थोड़े ही दिनोने शैक्यके गर्भ रह गया और यथासमय एक पुत्र इत्पन्न हुआ ॥ ३६-३४ ॥ पिताने उसका नाम विदर्भ रखा ॥ ३५ ॥ और तसीके साथ उस पुत्रवधूका पाणिग्रहण हुआ ॥ ३६ ॥ उससे विदर्भने क्रथ और कैशिक नामक दो पुत्र उत्पन्न किये ॥ ३७ ॥ फिर रोमपाद नामक एक तीसरे पुत्रको जन्म दिया जो नास्टजीके उपदेशसे ज्ञार-विज्ञान सम्पन्न हो गया था ॥ ३८ ॥ रोमपादके वभु, बभुके धृति, धृतिके कैशिक और कैशिकके चेदि नामक पुत्र हुआ जिसकी सन्ततिमें चैद्य राजाओंने जन्म लिया ॥ ३९ ॥

ज्यामबकी पुत्रवश्के पुत्र क्रथके कुन्ति नामक पुत्र हुआ ॥ ४० ॥ कुन्तिके पृष्टि, धृष्टिके निष्/ति, निष्/तिके दशाई, दशाईके व्योमा, व्योमाके जीमृत, जीमृतके विकृति, विकृतिके भीमश्थ, भीमश्थके नवश्य, नवश्यके दशस्थ, दशस्थके शकुनि, शकुनिके करम्पि, करम्भिके देवरात, देव-गतके देवश्यक, देवशकके मधु, मधुके कुमारवंश, कुमार-वंशके अनु, अनुके राजा पुरुमित्र, पुरुमित्रके अंशु और अंशुके सत्यत नामक पुत्र हुआ तथा सत्वतसे सात्वतवंशका प्राहुमांच हुआ ॥ ४१—४४ ॥ हे मैत्रेय ! इस प्रकार ज्यागघकी सन्तानका ब्रद्धापूर्वक भन्त्री प्रकार श्रवण करनेसे मनुष्य अपने समस्त पार्थिसे मुक्त हो जाता है ॥ ४५ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽरो द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

तेरहवाँ अध्याय

सत्वतकी सन्ततिका वर्णन और स्पमन्तकमणिकी कथा

श्रीपराश्चर उवाच

स्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४५ ॥

भजनभजमानदिव्यान्धकदेवावृधमद्दाभोज-वृष्णिसंज्ञास्सत्वतस्य पुत्रा वभूवः ॥ १ ॥ भजमानस्य निमिकृकणवृष्णयस्तथान्ये द्वैमात्राः शतजित्सहस्र-जिदयुतजित्संज्ञास्वयः ॥ २ ॥ देवावृधस्यापि बभ्रः पुत्रोऽभवत् ॥ ३ ॥तयोश्चायं श्लोको गीयते ॥ ४ ॥ यथैव शृणुमो दूरात्सम्पश्यामस्तथान्तिकात् । बभ्रः श्रेष्ठो मनुष्याणां देवैदेवावृधस्तमः ॥ ५ पुरुषाः षद् च षष्टिश्च षद् सहस्राणि चाष्ट च । तेऽमृतत्वमनुप्राप्ता बभ्रोर्देवावृधादपि ॥ ६ श्रीपराश्वाजी बोले—सत्वतके भजन, भजमान, दिन्य, अन्यक, देवावृध महाभोज और वृष्णि नामक पुत्र हुए॥ १॥ भजमानके निर्मि, कृष्ण और वृष्णि तथा इनके तोन सौतेले भाई शतजित्, सहस्रजित् और अयुत्रजित्—ये छः पुत्र हुए॥ २॥ देवावृधके वशु नामक पुत्र हुआ॥ ३॥ इन दोनों (पिता-पुत्रों) के विषयमें यह श्लोक प्रसिद्ध है—॥ ४॥

जैसा हमने दूरसे सुना था वैसा ही पास जाकर भी देखा; बाहाबमें बच्च मनुष्योमें श्रेष्ठ है और देवावृथ तो देवताओंके समान है ॥ ५ ॥ बभ्रु और देवावृथ [के उपदेश किये हुए पार्णका अवस्म्यन करने] से क्रमशः छः हजार चौहतर (६०७४) मनुष्योने अमरपद प्राप्त किया था'॥ ६॥ महाभोजस्त्वतिधर्मात्मा तस्यान्वये भोजा
मृत्तिकावरपुरिनवासिनो मार्तिकावस वभूवुः
 ॥ ७ ॥ वृष्णेः सुमित्रो युधाजिच पुत्रावभूताम्
 ॥ ८ ॥ ततश्चानिमत्रस्तधानिमत्रात्रिघः ॥ ९ ॥
 निघस्य प्रसेनसत्राजितौ ॥ १० ॥

तस्य च सत्राजितो भगवानादित्यः सखाभवत् ॥ ११ ॥ एकदा त्वम्भोनिधितीरसंश्रयः सूर्यं सत्राजित्तृष्टाव तन्पनस्कतया च भास्वानभिष्टूय-मानोऽत्रतस्तस्थौ ॥ १२ ॥ ततस्त्वस्पष्टमूर्निधरं चैनमालोक्य सत्राजित्सूर्यमाह ॥ १३ ॥ यथैव व्योग्नि वहिषिण्डोपमं त्वामहमपश्यं तथैवाद्याग्रतो गतमप्यत्र भगवता किञ्चित्र प्रसादीकृतं विशेष-मुपलक्षयामीत्येवमुक्ते भगवता सूर्येण निज-कण्ठादुन्मुच्य स्यमन्तकं नाम महामणिवर-मवतायँकान्ते न्यस्तम् ॥ १४ ॥

ततस्तमाताम्रोज्ज्वलं हस्ववपुषमोषदापिङ्गल-नयनमादित्यमद्राक्षीत् ॥ १५ ॥ कृतप्रणिपात-स्तवादिकं च सत्राजितमाह भगवानादित्यस्सहस्व-दीधितिर्वरमस्मत्तोऽभिमतं वृणीष्ट्रेति ॥ १६ ॥ स च तदेव मणिरस्त्रमयाचत ॥ १७ ॥ स चापि तस्मै तह्त्वा दीधितिपतिर्विचति स्वधिण्य-माहरोह ॥ १८ ॥

सत्राजिद्य्यमलमणिरलसनाथकण्डतया सूर्य इव तेजोभिरशेषदिगन्तराण्युद्धासयन् द्वारकां विवेश ॥ १९ ॥ द्वारकावासो जनस्तु तमायान्त-मवेश्य भगवन्तमादिपुरुषं पुरुषोन्तमपविन-भारावतरणायांशेन मानुषरूपधारिणं प्रणिपत्याह ॥ २० ॥ भगवन् भवन्तं द्रष्टुं नूतमयमादित्य आयातीत्युक्तो भगवानुवाच ॥ २१ ॥ भगवान्नायमादित्यः सत्राजिदयमादित्यदत्त-स्यमन्तकाख्यं महामणिरलं विभ्रदत्रोपयाति ॥ २२ ॥ तदेनं विश्रद्धाः पश्यतेत्युक्तास्ते तथैव ददुशुः ॥ २३ ॥

स च तं स्वमन्तकमणिमात्मनिवेशने चक्रे ॥ २४ ॥

महाभोज बड़ा धर्मात्मा था, उसकी सन्तानमें भोजवंशी तथा मृत्तिकावरपुर निवासी मार्तिकावर नूपतिगण हुए ॥ ७ ॥ वृष्णिके दो पुत्र सुमित्र और युधाजित् हुए, उनमेंसे सुमित्रके अनिपन्न, अनिमन्नके निन्न तथा निन्नसे प्रसेन और सम्राजित्का जन्म हुआ ॥ ८—१०॥

उस सत्राजित्के मित्र भगवान् आदित्य हुए॥ ११॥ एक दिन समुद्र-सटपर बैठे हुए सन्नाजित्ने सूर्यभगवान्की स्नुति की। उसके तन्यय होकर स्नुति करनेसे भगवान् भास्कर उसके सम्मुख प्रकट हुए॥ १२॥ उस समय उनको असाष्ट मूर्ति घारण किये हुए देखकर सत्राजित्ने सूर्यसे कहा—॥ १३॥ "आकाशमें आँप्रपिण्डके समान आपको जैसा मैंने देखा है वैसा हो सम्मुख आनेपर भी देख रहा हूँ। यहाँ आपको प्रसादस्वरूप कुछ विशेषता मुझे नहीं दोखती।" सत्राजित्के ऐसा कहनेपर भगवान् सूर्यने अपने गलेसे स्वमन्तक नामको उत्तम महामणि उतारकर अरुग रस दी॥ १४॥

तब सत्राजित्ने भगवान् सूर्यक्षे देखा— उनका शरीर किखित् तासवर्ण, अति उण्ज्वल और लघु था तथा उनके नेत्र कुछ पिगलवर्ण थे॥ १५॥ तदनन्तर सत्राजित्के प्रणाम तथा स्तृति आदि कर चुक्तेपर सहस्रांशु भगवान् आदित्यने उससे कहा— "तुम अपना अभीष्ट वर माँगो"॥ १६॥ सत्राजित्ने उस स्वमन्तकर्मणिको ही माँगा॥ १७॥ तब भगवान् सूर्य उसे वह माँग देकर अन्तरिक्षमें अपने स्थानको चले गये॥ १८॥

फिर सन्नजित्ने उस निर्मल मणिरत्नसे अपना कण्ठ सुशीमित होनेक कारण तेजसे सूर्यके समान समस्त दिशाओंको प्रकाशित करते हुए द्वारकामें प्रवेश किया ॥ १९ ॥ द्वारकावासी लोगोने उसे आते देख, पृथिवीका भार उतारनेके क्वियं अंशकपसे अवतीर्ण हुए मनुष्यकपश्चारी आदिपुरुष भगवान् पुरुषोत्तमसे प्रणाम करके कहा— ॥ २० ॥ "भगवन् ! आपके दर्जनीके क्वियं निश्चयं ही ये भगवान् सूर्यदेव आ रहे हैं" उनके ऐसा कहनेपर भगवान्ने उनसे कहा— ॥ २१ ॥ "ये भगवान् सूर्य नहीं हैं, सन्नजित् हैं। यह सूर्यभगवान्से प्राप्त हुई स्वभानक नामको भहामिषको धारणकर वहाँ आ रहा है ॥ २१ ॥ तुमलोग अब विश्वस्त होकर इसे देखो।" भगवान्के ऐसा बहनेपर द्वारकावासी उसे उसी प्रकार देखने लगे ॥ २३ ॥

सत्राजित्ने वह स्यमन्तकमणि अपने घरमें रख दी ॥ २४ ॥

प्रतिदिनं तत्मिणरत्नमष्टौ कनकभारान्स्रवित ॥ २५ ॥ तत्प्रभावाच सकलखैव राष्ट्रस्योय-सर्गानावृष्टिक्यालाभिचोरदुर्भिक्षादिभर्ध न भवति ॥ २६ ॥ अच्युतोऽपि तद्दिक्यं रत्नमुष्रसेनस्य भूपतेर्योग्यमेतदिति लिप्सां चक्रे ॥ २७ ॥ गोत्रभेदभयाच्छक्तोऽपि न जहार ॥ २८ ॥

सत्राजिद्ध्यच्युतो मामेतद्याचिष्यतीत्यवगय्य रक्षलोभाद्भात्रे प्रसेनाय तद्रव्रमदात् ॥ २९ ॥ तद्य शुचिना श्रियमाणमशेषमेव सुवर्णस्रवादिकं गुणजातमुत्पादयति अन्यथा धारयन्तमेव हन्ती-त्यजानत्रसाविष प्रसेनत्तेन कण्ठसक्तेन स्यमन्तके-नाश्चमारद्धाटच्यां मृगवामगच्छत् ॥ ३० ॥ तत्र च सिंहाद्वधमवाप ॥ ३१ ॥ साखं च तं निहत्य सिंहोऽध्यमलमणिरत्नमास्याग्नेणादाय गन्तु-मभ्युद्यतः, ऋक्षाधिपतिना जाम्बवता दृष्टो घातितश्च ॥ ३२ ॥ जाम्बवानप्यमलमणिरत्न-मादाय स्वविले प्रविवेश ॥ ३३ ॥ सुकुमारसंज्ञाय बालकाय च क्रीडनकमकरोत् ॥ ३४ ॥

अनागच्छति तस्मिन्धसेने कृष्णो मणिरतः मभिलवितवान्स च प्राप्तवाञ्चनमेतदस्य कर्मेत्वरित्रल एव यदुलोकः परस्परं कर्णाकर्ण्य-कथयत् ॥ ३५ ॥

विदितलोकापवादवृत्तान्तश्च भगवान् सर्व-यदुसँन्यपरिवारपरिवृतः प्रसेनाश्चपदवी-मनुससार ॥ ३६ ॥ ददर्श चाश्चसमवेतं प्रसेनं सिंहेन विनिहतम् ॥ ३७ ॥ अखिलजनमध्ये सिंहपददर्शनकृतपरिशुद्धिः सिंहपदमनुससार ॥ ३८ ॥ ऋक्षपतिनिहतं च सिंहपप्यल्पे भूमिभागे दृष्टा नतश्च तद्ववगौरवादृक्षस्यापि पदान्यनुवयौ ॥ ३९ ॥ गिरितटे च सकलमेव तद्यदुसँन्यमवस्थाप्य तत्पदानुसारी ऋक्षविलं प्रविवेश ॥ ४० ॥

अन्तःप्रविष्टश्च धात्र्याः सुकुमारक-मुल्लालयन्त्या वाणीं शुश्रावः॥ ४१ ॥ वह मणि प्रतिदिन आठ भार सोना देती थी ॥ २५ ॥ उसके प्रभावसे सम्पूर्ण राष्ट्रमें रोग, अनावृष्टि तथा सर्व, अग्नि, बोर या दुर्मिश्च आदिका भय नहीं रहता था॥ २६ ॥ भगवान् अन्युतको भी ऐसी इच्छा हुई कि यह दिव्य रल तो राजा उपसेनके योग्य है ॥ २७ ॥ किंतु जातृय विद्रोहके भयसे समर्थ होते हुए भी उन्होंने उसे छीना नहीं ॥ २८ ॥

सवाजित्को जब यह मालूम हुआ कि मगवान् मुझसं यह रत्न माँगनेवाले हैं तो उसने लोभवश उसे अपने भाई प्रसेनको दे दिया ॥ २९ ॥ किंतु इस वातको न जानते हुए कि पविवतापूर्वक धारण करनेसे तो यह गणि सुवर्ण-दान आदि अनेक गुण प्रकट करती है और अशुद्धायस्थामें धारण करनेसे घारक हो जाती है, प्रसेन उसे अपने गलेमें बांधे हुए घोड़ेपर चढ़कर मृगयाके लिये क्वको चला गया ॥ ३० ॥ वहाँ उसे एक सिंहने मार डाला ॥ ३१ ॥ जब वह सिंह घोड़ेके सिंहत उसे मारकर उसे निर्मेल गणिको अपने मुँहमें लेकर चलनेको तैयार हुआ तो उसी समय ऋशराज जाम्बयान्ने उसे देखकर मार डाला ॥ ३२ ॥ तदनत्तर उस निर्मेल पणिरकको लेकर जाम्बयान् अपनो गुफामे आया ॥ ३३ ॥ और उसे सुकुमार नामक अपने वालकके लिये खिलीना बना लिया ॥ ३४ ॥

प्रसंतके न लीटनेपर सब यादवोगें आपसमें यह कार्गाफूँसी होने लगी कि "कृष्ण इस मणिरत्नको लेना चाहते थे, अवस्य ही इन्हींने उसे ले लिया है—निश्चय यह इन्होंका काम है"॥ ३५॥

इस लोकापवादका पता लगनेपर सम्पूर्ण यादवसेनाके सिंहत भगवान्ते प्रलेनके घोड़के चरण चिह्नोंका अनुसरण किया और आगे जाकर देखा कि प्रसेनको घोड़ेसहित सिंहने मार डाला है ॥ ३६-३७॥ फिर सबे लोगोंके बीन सिंहके चरण-चिह्न देख लिये बानेसे अपनी सपाई हो जानेपर भी भगवान्ते उन चिह्नोंका अनुसरण किया और थोड़ी ही दूरीपर ऋसराजड़ारा मारे हुए सिंहको देखा; किन्तु उस स्वके महत्त्वके कारण उन्होंने जाम्बवान्के पद-चिह्नोंका भी अनुसरण किया ॥ ३८-३९॥ और सम्पूर्ण यादव-सेनाको प्रतंतके स्वस्य उनको गुफामें बुस गये॥ ४०॥

भीतर जानेपर भगवान्ने सुकुमारको बहस्पती हुई भात्रीको यह वाणी सुनी— ॥ ४१ ॥ सिंहः प्रसेनमवधीत्सिंहो जाम्बवता हतः। सुकुमारक मा रोदीस्तव होष स्यमन्तकः॥ ४२

इत्याकण्योपलब्धस्ययन्तकोऽन्तःप्रविष्टः कुमारक्रीडनकीकृतं च धात्र्या हस्ते तेजोधि-र्जाज्वल्यमानं स्यमन्तकं ददर्श॥४३॥ तं च स्यमन्तकाधिलषितचक्षुषमपूर्वपुरुषमागतं समवेक्ष्य धात्री त्राहि त्राहीति व्याजहार ॥४४॥

तदार्त्तरवश्रवणानन्तरं चामर्वपूर्णहृदयः स जाम्बवानाजगाम ॥ ४५ ॥ तयोश्च परस्पर-मुद्धतामर्वयोर्युद्धमेकविंदातिदिनान्यभवत् ॥ ४६ ॥ ते च यदुसैनिकास्तत्र सप्ताष्ट्रदिनानि तित्रफ्कान्ति-मुदीक्षमाणास्तस्युः ॥ ४७ ॥ अनिष्क्रमणे च मधुरिपुरसाववद्यमत्र बिलेऽत्यन्तं नाद्यमवाप्तो भविष्यत्यन्यथा तस्य जीवतः कथ्यमेतावन्ति दिनानि दात्रुजये व्याक्षेपो भविष्यतीति कृताध्य-वसाया द्वारकामागम्य इतः कृष्ण इति कथयामासुः ॥ ४८ ॥ तद्वान्धवाश्चतत्कालोचित-मख्लिस्मृत्तरक्रियाकलापं चक्कः ॥ ४९ ॥

ततश्चास्य युद्धधमानस्यातिश्रद्धादत्तविद्दाष्ट्रोप-पात्रयुक्तान्नतोयादिना श्रीकृष्णस्य बलप्राण-पृष्टिरभूत् ॥ ५० ॥ इतरस्यानुदिनमतिगुरुपुरुष-भेद्यमानस्य अतिनिष्टुरप्रहारपातपीडिताखिला-वस्वस्य निराहास्तवा बलहानिरभूत् ॥ ५१ ॥ निर्जितश्च भगवता जाम्बवान्त्रणिपत्य व्याजहार ॥ ५२ ॥ सुरासुरगन्धर्वयक्षराक्षसादिभिरप्य-खिलभंवान्न जेतुं दावयः किमुतावनिगोचरैरल्य-वीर्यैनरैर्नरावयवभूतश्च तिर्यग्योन्यनुसृतिभिः कि पुनरस्मद्विष्ठैरवद्यं भवताऽस्मत्स्वामिना रामेणेव नारावणस्य सकलजगत्यरावणस्यांद्रोन भगवता भवितव्यमित्युक्तस्तस्मै भगवानखिलावनि-भारावतरणार्थमवतरणमावचक्षे ॥ ५३ ॥ प्रीत्य-भिव्यञ्चितकस्तलस्यर्जनेन चैनमपगतयुद्धस्वेदं

चकार ॥ ५४ ॥

सिंहमे प्रसेनको मारा और सिंहको जाम्बवान्ने; हे सुकुमार ! तू रो मत यह स्वमन्तकमणि नेरी ही है ॥ ४२ ॥

यह सुननेसे स्वमन्तकका पता लगनेपर भगवान्ते भीतर जाकर देखा कि सुकुमास्के लिये खिलीना बनी हुई स्वमन्तकमणि धाडीके हाथपर अपने तेजसे देदीप्यमान हो रही है॥ ४३॥ स्वमन्तकमणिकी ओर अभिलापापूर्ण दृष्टिसे देखते हुए एक विलक्षण पुरुषको वहाँ आया देख धात्री 'त्राहि-क्राहि' करके चिल्लाने लगी॥ ४४॥

उसकी आर्त-वाणीको सुनकर जाम्यवान् क्रोधपूर्ण हदयसे वहाँ आया ॥ ४५ ॥ फिर परस्पर रोष यह जानेसे उन दोनोंका उक्कीस दिनतक थोर युद्ध हुआ ॥ ४६ ॥ पर्वतके पास भगवान्को प्रताक्षा करनेवाले यादव-सैनिक सात-आठ दिनतक उनके गुफासे बाहर आनेकी बाट देखते रहे ॥ ४७ ॥ किंतु जब इतने दिनोंतक वे उसमेंसे न निकले तो उन्होंने समझा कि 'अवस्य ही ऑमम्पुसूदन इस गुफामें मारे गये, नहीं तो जीवित रहनेपर सहुके जीतनेमें उन्हें इतने दिन क्यों लगते ?' ऐसा निश्चय कर वे द्वारकामें चले आये और वहाँ कह दिया कि श्रीकृष्ण मारे गये ॥ ४८ ॥ उनके बन्धुओंने यह सुनकर समयोचित सम्पूर्ण ऑध्वंदेहिक कर्म कर दिये ॥ ४९ ॥

इधर, अति श्रद्धापूर्वक दिये हुए विशिष्ट पात्रींसहित इनके अन्न और जलसे युद्ध करते सपय श्रीकृष्णचन्द्रके बल और प्राणकी पुष्टि हो गयो ॥ ५० ॥ तथा अति महान् पुरुषके द्वारा मार्दत होते हुए उनके अत्यन्त निष्ठर प्रहारीके आधारासे पीडित शरीरवाले जाम्बवान्का बल निराहार रहनेसे क्षीण हो गया ॥ ५१ ॥ अन्तमें भगवान्से पर्याजेत होकर आम्बवान्ते उन्हें प्रणाम करके कहा — ॥ ५२ ॥ "भगवन् ! आपको तो देवता, असूर, मन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि कोई भी नहीं जीत सकते, फिर पृथिबीत लगर रहनेवाले अल्पवीर्य मन्ष्य अधवा मनुष्योंके अवयवभृत हम-जैसे तिर्थक्-योनियत जीवीकी तो बात ही क्या है ? अवश्य ही आप हमारे प्रभ श्रीरामचन्द्रजीके समान सकल लोक-प्रतिपालक भगवान् नारायणके ही अंदासे प्रकट हुए है।'' जाम्बवानुके ऐसा कहनेपर भगवानुने पृथिवीका भार उतारनेके लिये अपने अवतार लेनेका सम्पूर्ण वृताना उससे कह दिया और उसे प्रीतिपूर्वक अपने हाथसे छुकर यद्धके श्रमसे रहित कर दिया ॥ ५३-५४ ॥

स च प्रणिपत्य पुनरप्येनं प्रसाद्य जाम्बवर्ती नाम कन्यां गृहागतायार्थ्यभूतां प्राह्यामास ॥ ५५ ॥ स्यमन्तकमणिरत्नमपि प्रणिपत्य तस्मै प्रददौ ॥ ५६ ॥ अच्युतोऽप्यतिप्रणतात्तस्मादवाह्यमपि तन्मणिरत्नमात्मसंशोधनाय जन्नाह ॥ ५७ ॥ सह जाम्बवत्यां स द्वारकामाजगाम ॥ ५८ ॥

भगवदागमनोद्भृतहषोंत्कर्षस्य द्वारकावासि-जनस्य कृष्णावलोकनात्तत्क्षणमेवातिपरिणत-वयसोऽपि नवयौवनिस्वाभवत् ॥ ५९ ॥ दिष्ट्या दिष्ट्येति सकलयादवाः स्त्रियश्च सभाजयामासुः ॥ ६० ॥ भगवानिप यथानुभूतमशेषं यादव-समाजे यथावदाचचक्षे ॥ ६१ ॥ स्यमन्तकं च सन्नाजिते दत्त्वा मिथ्याभिशस्तिपरिशुद्धिमवाप ॥ ६२ ॥ जाम्बवतीं चान्तःपुरे निवेशया-मास ॥ ६३ ॥

सत्राजिदपि मयास्याभूतमिलनमारोपितमिति जातसन्त्रासात्स्वसुतां सत्यभामां भगवते भार्यार्थं दहौ ॥ ६४ ॥ तां चाकूरकृतवर्मशतधन्त्रप्रमुखा यादवाः प्राग्वस्याप्यभूबुः ॥ ६५ ॥ ततस्त-त्रदानादवज्ञातमेवात्मानं मन्यमानाः सत्राजिति वैरानुबन्धं चक्कः ॥ ६६ ॥

अक्रूरकृतवर्गप्रमुखाश्च शतधन्वानमूचुः
॥ ६७ ॥ अयमतीयदुरात्मा सत्राजिद् योऽस्माभिभंवता च प्रार्थितोऽप्यात्मजामस्मान् भवन्तं
चाविगणय्य कृष्णाय दत्तवान् ॥ ६८ ॥
तदलमनेन जीवता घातियत्वैनं तन्महारत्रं
स्यमन्त्रकार्स्यं त्वया कि न गृह्यते वयमभ्यूपत्यामो यद्यन्युतस्तवोपरि वैरानुबन्धं
करिष्यतीत्येवमुक्तस्तयेत्यसावप्याह ॥ ६९ ॥

जतुगृहदम्धानां पाण्डुतनयानां विदित-परमाथोऽपि भगवान् दुर्योधनप्रयत्नशैधिल्य-करणार्थं कुल्यकरणाय वारणावतं गतः ॥ ७० ॥ तदनत्तर जाम्बबान्ने पुनः प्रणाम करके उन्हें प्रसन्न किया और घरपर आये हुए भगजान्के लिये अर्घ्यस्कप अपनी जाम्बबती नामकी कत्या दे दी तथा उन्हें प्रणाम करके मणिरब स्थमत्तक भी दे दिया॥ ५५-५६॥ भगवान् अच्युतने भी उस अति विजीतसे लेने योग्य न होनेपर भी अपने कल्द्भू-शोधनके लिये वह मणि-रब ले लिया और जाम्बवतीके सहित दास्कामें आये॥ ५७-५८॥

उस समय भगवान् कृष्णचन्द्रके आगमनसे जिनके हर्वका वेग अत्यन्त वद् गया है उन हास्कावासियोमेंसे बहुत ढली हुई अवस्थावासीमें भी उनके दर्शनके प्रभावसे तत्काल ही मानो नवयौबनका सङ्गार हो गया॥ ५९॥ तथा सम्पूर्ण वादवगण और उनकी क्षियाँ अहोभाग्य ! अहोभाग्य !! ऐसा कहकर उनका अभिवादन करने लगीं॥ ६०॥ भगवान्ने भी जो-जो बात बैसे-बैसे हुई थी वह जो-को-स्रों बादन-समाजमें सुना दी और संत्राजित्को स्थमन्तकमणि देवर मिथ्या कलकूसे कुटकारी भा लिया। फिर जाम्बवतोको अपने अन्तःपुरमें पहुँचा दिया॥ ६१—६३॥

संत्राजित्ने भी यह सोचकर कि मैंने ही कृष्णचन्द्रकों मिथ्या कल्कु लगाया था, डरते-डरते उन्हें प्रजीक्ष्यसे अपनी कन्या सत्यभामा विवाह दी ॥ ६४ ॥ उस कन्याको अकूर, कृत्यमां और शतधन्या आदि यादवीने पहले वरण किया था ॥ ६५ ॥ अतः श्रीकृष्णचन्द्रके साथ उसे विवाह देनेसे उन्होंने अपना अपमान समझकर संत्राजित्से वैर बाँध लिया ॥ ६६ ॥

तदनन्तर अकूर और कृतवर्मा आदिने शतधन्यासे कहा — ॥ ६७ ॥ "यह सर्जाजित वहा हाँ दुष्ट है, देखों, इसने हमारे और आपके माँगनेपर भी हमत्येगोंको कुछ भी न समझकर अपनी कन्या कृष्णचन्द्रको दे दो ॥ ६८ ॥ अतः अब इसके जीवनका प्रयोजन ही वदा है; इसको मारकर आप स्ममन्तक महामणि क्यों नहीं ले लेते हैं ? पीछे, यदि अच्युत आपरो किसी प्रकारका विरोध करेंगे तो हमलोग भी आपका साथ देंगे।" उनके ऐसा कहनेपर सत्थन्याने कहा — "बहुत अच्छा, ऐसा ही करेंगे" ॥ ६९ ॥

इसी समय पाण्डवीके लाक्षागृहमें जलनेपर, यक्षार्थ बातको जानते हुए भी भगवान् कृष्णचन्द्र दुर्गोधनके प्रयत्नको शिथिल करनेके उद्देश्यसे कुरतेचित कर्म करनेके लिये वारणावत नगरको गये॥ ७०॥

HOL.

यते च तस्मिन् सुप्तमेव सत्राजितं शतधन्या जधान मणिरतं चाददात् ॥ ७१ ॥ पितृवधामर्थ-पूर्णा च सत्यभामा शीघ्रं स्यन्दनमारूढा वारणावतं गत्वा भगवतेऽहं प्रतिपादितेत्यक्षान्तिमता शतधन्वनास्मरिपता व्यापादितस्तच स्यमन्तक-मणिरत्नमपहतं यस्यावभासनेनापहतिनिमरं त्रैलोक्यं भविष्यति ॥ ७२ ॥ तदियं त्वदीयाप-हासना तदालोच्य यदत्र युक्तं ततिक्रयतापिति कष्णमाह ॥ ७३ ॥

तया चैवमुक्तः परितृष्टान्तःकरणोऽपि कृष्णः सत्यभामाममर्थताम्रतयनः प्राहः॥ ७४ ॥ सत्ये सत्यं मर्भवैषापहासना नाहमेतां तस्य दुरात्मनसाहित्ये ॥ ७५ ॥ न ह्यनुल्लङ्ख्य वरपादपं तत्कृत-नीडाश्रियणो विहङ्गमा वस्यन्ते तदलपमुनासमत्पुरतः शोकप्रेरितवाक्यपरिकरेणेत्युक्त्वा द्वारका-पभ्येत्येकान्ते वलदेवं वासुदेवः प्राहः॥ ७६ ॥ मृगयागतं प्रसेनमटव्यां मृगपतिर्ज्ञधान ॥ ७७ ॥ सन्नाजिदप्यधुना शतधन्वना निधनं प्रापितः ॥ ७८ ॥ तदुभयविनाशान्त्रपणिरत्नमावाभ्यां सामान्यं भविष्यति ॥ ७९ ॥ तदुत्तिष्ठास्ह्यतां रथः शतधन्वनिधनायोद्यमं कुर्वित्यभिहितस्तथेति समन्वीप्सितवान् ॥ ८० ॥

कृतोद्यमौ च ताबुभावुपलभ्य शतधन्या कृतवर्माणमुपेत्य पार्ष्णिपूरणकर्मीनिपत्तमबोदयत् ॥ ८१ ॥ आह चैनं कृतवर्मा ॥ ८२ ॥ नाहं बलदेववासुदेवाभ्यां सह विरोधायालमित्युक्त-धाकूरमबोदयत् ॥ ८३ ॥ असावप्याह ॥ ८४ ॥ न हि कश्चिद्धगवता पादप्रहारपरिकम्पित-जगत्त्रयेण सुरिप्युवनितावधव्यकारिणा प्रबलिपुचक्राप्रतिहत्तचक्रेण चिक्रणा मदमुदित-नयनावलोकितासिलिनशातनेनातिगुरुवैरिवारणा-पक्वणाविकृतमहिमोरुसीरेण सीरिणा च सह सकलजगद्वन्द्यानाममस्वराणामपि योद्धं समर्थः किमुताहम् ॥ ८५ ॥ तदन्यश्वरारण- उनके चले जानेपर शतधन्याने सीते हुए सत्राजित्की मारकर यह माणिरका ले लिया ॥ ७१ ॥ पिताक वधसे क्रोधित हुई सत्यभामा तुरन्त ही स्थपर चड़कर वारणावत नगरमें पहुँची और भगवान् कृष्णसे बोली, "भगवन् ! पिताजीने मुझे आपके करकमलोंमें सौंप दिया—इस बातको सहन ने कर सकनेक कारण जातधन्वाने मेरे पिताजीको मार दिया है और इस स्थमन्तक नामक माणिरलको ले लिया है जिसके प्रकाशसे सम्पूर्ण जिलोकी भी अन्धकारशून्य हो जायगी ॥ ७२ ॥ इसमें आपहीकी हैसी है इसलिये सब बातोका विचार करके जैसा डीवत समझें, करें"॥ ७३ ॥

क्ष. कर ॥ ए२ ॥ सत्यभामाके ऐसा कहनेपर भगवान् श्रीकृष्णने मन-ही-मन प्रसन्न होनेयर भी उनसे क्रोधसे आँखें लाल करके कहा---।। ७४ ॥ "सत्ये ! अवस्य इसमे मेरी ही हैंसी है, उस दुरुत्पाके इस कुकर्मको में सहन नहीं कर सकता, क्योंकि यदि ऊँचे वृक्षका उल्लङ्कन न किया जा सके तो उसपर घोंसला बनाकर रहनेवाले पक्षियोंको नहीं मार दिया जाता [अधांत बड़े आदिमयोसे पार न पानेपर उनके आश्रितोंको नहीं दबाना चाहिये।] इसलिये अब तुम्हें हमारे सामने इन ज्ञोक-प्रेरित वाक्योंक कहनेकी और आवदयकता नहीं है। 🖟 तुम शोक छोड़ दो, मैं इसका भली प्रकार बदला चुका दूंगा।]!' सत्यभागासे इस प्रकार कह भगवान् जासुदेवने द्वारकामें आकर श्रीवलदेवजीसे एकान्तमें कहा-- ॥ ७५-७६ ॥ विनमें आबोटके लिये गये हुए प्रसेनको तो सिंहते मार दिया था ॥ ७७ ॥ अब शतधन्याने सन्नाजित्को भी मार दिया है ॥ ७८ ॥ इस प्रकार उन दोनोंके मारे आनेपर मॉगरल रयमन्तकपर हम दोनोका समीन अधिकार होगा ॥ ७९ ॥ इसलिये डॉटिये और स्थपर चहकर शतभन्याके भारतेका प्रयत्न सीजिये।' कृष्णचन्द्रके ऐसा कहनेपर बरुदेवजीने भी 'बहुत अच्छा' कह उसे खोकार किया ॥ ८० ॥

कृष्णं और वलदेवको [अपने वषके लिये] उद्यन जान दातधन्ताने कृतवर्मांके पास जाकर सहायताके लिये प्रार्थना की ॥ ८१ ॥ तब कृतवर्माने इससे कल्ल— ॥ ८२ ॥ 'मैं बलदेव और नासुदेनसे निरोध करनेमें समर्थ नहीं हूँ ।' उसके ऐसा कहनेपर जातधन्त्राने अकूरसे सहायता मांगी, तो अकूरने भी कहा— ॥ ८३-८४ ॥ 'जो अपने पाद-प्रहारसे जिलोकोको कम्पायमान कर देते हैं, देवरानु असुरगणको स्थिनिको मभिलष्यतामित्युक्तश्शतधनुराह ॥ ८६ ॥ यद्य-सम्त्यरित्राणासमर्थं भवानात्मानमधिगच्छति तद्यमस्मत्तस्तावन्मणिः संगृह्य रक्ष्यतामिति ॥ ८७ ॥ एवमुक्तः सोऽप्याह ॥ ८८ ॥ यद्यन्त्यायामप्यवस्थायां न कस्मैचिद्धवान् कथ्यय्यति तद्हमेतं ग्रहीच्यामीति ॥ ८९ ॥ तथेत्युक्ते चाकूरस्तन्मणिरतं जन्नाह ॥ ९० ॥

शतधनुरप्यतुलवेगां शतयोजनवाहिनीं
वडवामास्ह्यापकान्तः ॥ ९१ ॥ शैव्यसुप्रीवमेधपुष्पवलाहकाश्चनुष्ट्रययुक्तरथस्थितौ बलदेववासुदेवौ तमनुप्रयातौ ॥ ९२ ॥ सा च बडवा
शतयोजनप्रमाणमार्गमतीता पुनरपि वाह्यमाना
मिथिलावनोहेशे प्राणानुत्ससर्ज ॥ ९३ ॥
शतधनुरपि तां परित्यज्य पदातिरेबाइवत् ॥ ९४ ॥
कृष्णोऽपि बलभद्रमाह ॥ ९५ ॥ ताबदत्र स्यन्दने
भवता स्थेयमहमेनमधमान्तार पदातिरेव पदातिमनुगम्य याबद्धातयामि अत्र हि भूभागे
दृष्टदोषास्सभया अतो नैतेऽश्चा भवतेमं भूमिभागमुल्लङ्कनीयाः ॥ ९६ ॥ तथेत्युक्त्वा बलदेवो

कृष्णोऽपि द्विक्रोशंमात्रं भूमिभागमनुसृत्य दूरस्थितस्पैव चक्रं क्षिप्ता शतधनुषश्शिराश्चिछेद ॥ ९८ ॥ तच्छरीराष्ट्ररादिषु च बहुप्रकार-मन्त्रिक्कत्रपि स्यमन्तकमणि नावाप यदा तदोपगम्य बलभदमाह ॥ ९९ ॥ वृथैवास्माभिः शतधनु-

रथ एव तस्थौ ॥ ९७ ॥

बैधव्यदान देते हैं तथा अति प्रबल शत्रु-सेनासे भी जिनका चक्र अप्रतिहत रहता है उन चक्रधारी भगवान् वासुदेवसे

तथा जो अपने मदोन्मत नयनोंकी चितवनसे सबका दमन करनेवाले और भररङ्कर राष्ट्रसमृहरूप हाथियोंकी खोंचनेके

ियं असण्ड महिमाशाली प्रचण्ड इल धारण करनेवाले हैं उन श्रीहलघरसे युद्ध करनेमें तो निसिल-लोक-क्ट्सीय

देवगणमें भी कोई समर्थ नहीं है किर मेरी तो बात ही बया

द्वनणम् भा काइ समय नहा ह रक्त मरा ता बात हा क्या है ? ॥ ८५ ॥ इसिंछिये तुम दूसरेकी शरण लो' अकूनके

ऐसा कहनेपर शतधन्याने कहा — ॥ ८६ ॥ 'अच्छा, यदि मेरी रक्षा करनेमें आप अपनेको सर्वथा असमर्थ समझते हैं

तो मैं आपको यह मणि देता हूँ इसे लेकर इसीकी रक्षा कीजिये ॥ ८७ ॥ इसपर अक्टूरने कहा— ॥ ८८ ॥ 'मैं इसे तभी ले सकता हूँ जब कि अन्तकाल उपस्थित होनेपर भी तम किसीसे भी यह बात न कही ॥ ८९ ॥ शतधन्त्राने

कहा—'ऐसा ही होगा।' इसपर अक्रूरने वह मणिरत अपने पास रख लिया॥ ९०॥ तदनत्तर, शतधन्या सी योजनतक जानेवाली एक

तदनन्तर, शतधन्या सा याजनतक जानवास्त्र एक् अत्यन्त वेगवती घोड़ीपर चढ़कर भागा॥ ९१॥ और

इंग्व्य, सुबीव, मेघपुष्य तथा बलाहक नामक चार घोड़ींवाले रश्चपर चढ़कर बलदेव और चासुदेवने भी उसका पीछा किया॥ ९२॥ सौ योजन मार्ग पार कर जानेपर पनः आये ले जानेसे इस घोडीने मिथिला देशके

वनमें प्राण छोड़ दिये ॥ ९३ ॥ तब शतधन्या उसे छोड़का पैदल ही भागा ॥ ९४ ॥ उस समय श्रीकृष्णवन्द्रने बरुभद्रजीसे कहा— ॥ ९५ ॥ 'आप अभी रथमें ही रहिये में इस पैदल दौड़ते हुए दुराचारीको पैदल जाकर ही

मारे डालता हूँ। यहाँ [योड़ीके परने आदि] दोबोंको

देखनेसे घोड़े भयभीत हो रहे हैं, इसिलये आप इन्हें और आगे न बहाइयेगा ॥ ९६ ॥ तब बल्टदेवजी 'अच्छा' ऐसा

कहकर स्थमें ही बैठे रहे ॥ ९७ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रने केवल दो हो कोसतक पीछाकर अपना

चक्र फेंक दूर होनेपर भी शतधन्याका सिर कार डाला॥ ९८॥ किंतु उसके शरीर और वस आदिमें बहुत कुछ बूँद्रनेपर भी जब स्थमत्तकमणिको न पाया तो बलभद्रजीके पास जाकर उनसे कहा॥ ९९॥ "हमने

शतधन्याको व्यर्थ ही गारा, क्योंकि उसके पास संप्यूणी संसारकी सारभूत स्थमन्तकर्मण तो मिल्ने ही नहीं। यह सुनकर बरुदेवजीने [यह समझकर कि श्रीकृष्णचन्द्र उस मणिको छिपानेके छिये हो ऐसी बाते बना रहे हैं]

र्घातितो न प्राप्तमिखलजगत्सारभूतं तन्पहारत्रं स्यमन्तकाख्यमित्याकण्योद्धतकोषो बलदेवो वासुदेवमाह ॥ १०० ॥ धिक्तां यस्त्वमेवमर्थ-लिप्सुरेतच ते प्रातृत्वान्यया क्षान्तं तदयं पन्यास्त्वेच्छया गम्यतां न मे द्वारकया न त्वया न चाहोषबन्धुभिः कार्व्यमलमलमेभिर्ममाव्रतो-उलीकहापथैरित्याक्षिप्य तत्कथां कथिङ्कित्पसाद्य-मानोऽपि न तस्थौ ॥ १०१ ॥ स विदेहपुरीं प्रविवेदा ॥ १०२ ॥

जनकराजश्चार्ध्यपूर्वकमेनं गृहं प्रवेशयामास् ॥ १०३ ॥ स तत्रैव च तस्थौ ॥ १०४ ॥ वासुदेवोऽपि द्वारकामाजगाम ॥ १०५ ॥ यावच जनकराजगृहे बलभद्रोऽवतस्थे ताबद्धार्त्त-राष्ट्रो दुर्योधनस्तत्सकाशाद्भद्दाशिक्षामशिक्षयत् ॥ १०६ ॥ वर्षत्रयान्ते च बभूप्रसेनप्रभृतिभि-यदिवैनं तद्भतं कृष्णेनापहृतमिति कृतावगति-विदेहनगरीं गत्वा बलदेवस्सम्प्रत्याय्य द्वारकामानीतः ॥ १०७ ॥ अकृरोऽप्युत्तममणिसमुद्धतस्वर्णेन

भगवद्ध्यानपरोऽनवरतं यज्ञानियाज ॥ १०८ ॥ सवनगतौ हि क्षत्रियवैश्यौ निम्नन्त्रह्महा भवतीत्ये-वम्प्रकारं दीक्षाकवचं प्रविष्ट एव तस्थौ ॥ १०९ ॥ द्विषष्टिवर्षाण्येवं तन्पणिप्रभावात्त-त्रोपसर्गदुर्भिक्षमारिकामरणादिकं नाभूत् ॥ १९० ॥ अधाकूरपक्षीयैभीजैश्शत्रुघे सात्वतस्य प्रपौत्रे व्यापादिते भोजैस्सहाकूरो द्वारकामषहायापक्रान्तः ॥ १११ ॥ तदपक्रान्तिदिनादारभ्य तत्रोप-सर्गदुर्भिक्षव्यालानावृष्टिमारिकाद्युपद्रवा वभूवुः ॥ ११२ ॥

अश्व यादवबलभद्रोग्रसेनसमवेतो मन्त्र-ममन्त्रयद् भगवानुरगारिकेतनः ॥ ११३ ॥ किमिदमेकदैव प्रचुरोपद्रवागमनमेतदालोच्यता-मित्युक्तेऽस्थकनामा यदुवृद्धः प्राह ॥ ११४ ॥ अस्याक्क्ररस्य पिता श्रफल्को यत्र यत्राभूतत्र तत्र दुर्मिक्षमारिकानावृष्ट्यादिकं नाभूत् ॥ ११५ ॥ काशिराजस्य विषये त्वनावृष्ट्या च श्रफल्को क्रोधपूर्वक पगवान् वासुदेवसे कहा— ॥ १०० ॥ 'तुमको धिकार है, तुम बड़े ही अर्थरलेलुप हो; माई होनेके कारण ही मैं तुम्हें क्षमा किये देता हूँ । तुम्हारा मार्ग खुला हुआ है, तुम खुशीसे जा सकते हो । अब मुझे तो द्वारकासे, तुमसे अथवा और सब सगे-सम्बन्धियोंसे कोई काम नहीं है । बस, मेरे आगे इन घोषी शपधींका अब कोई प्रयोजन नहीं ।' इस प्रकार उनकी बातको काटकर बहुत कुछ मनानेपर भी वे वहाँ न रके और विदेहनगरको चरें गये ॥ १०१-१०२ ॥

विदेहनगरमें पहुँचनेपर राजा जनक उन्हें अर्घ्य देकर अपने घर छे आये और वे वहीं रहने लगे ॥ १०६-१०४ ॥ इधर, भगवान् वासुदेव द्वारकामें चले आये ॥ १०५ ॥ जितने दिनोंतक बलदेवजों राजा जनकके यहाँ रहे उतने दिनतक धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्योधन उनसे गदायुद्ध सीखता रहा ॥ १०६ ॥ अनन्तर, युषु और उम्रसेन आदि पादवोंके, जिन्हें यह ठोक मालूम था कि 'कृष्णने स्पगन्तकमणि नहीं ली है', विदेहनगरमें जाकर शपथपूर्वक विश्वास दिलानेषर बलदेवजी तीन वर्ष पश्चात् द्वारकामें चले आये ॥ १०७ ॥ अक्रुरजी भी भगवद्भवान-परायण रहते हुए उस मणि-

रत्यसे प्राप्त सुवर्णके द्वारा निरन्तर पञ्चानुष्ठान करने लगे।
॥ १०८ ॥ यज्ञ-दीक्षित स्विय और चैक्योंके मारनेसे
बहाइत्या होती है, इसिलये अक्रूरजी सदा यज्ञवीक्षारूप
कवच धारण ही किये रहते थे॥ १०९ ॥ उस मणिके
प्रभावसे वासठ वर्षतक द्वारकामें रोग, दुर्भिक्ष, महामारीया
मृत्यु आदि नहीं हुए॥ ११०॥ फिर अक्रूर-पक्षीय भोज-वेक्षियोद्वारा सालतके प्रभाव शत्रुषके मारे आनेपर भोजोंके
साथ अक्रूर भी द्वारकाको छोड़कर चले गये॥ १११॥
उनके जाते ही, उसी दिनसे द्वारकामें रोग, दुर्भिक, सर्प,
अनावृष्टि और मरी आदि उपद्रव होने लगे॥ ११२॥
तब गरुडध्वज भगवान कृष्ण बलभद्व और उपरोन

तब गरुडध्वज भगवान् कृष्ण बलभद्र और उपसेन आदि खुर्विशियोंके साथ मिलकर सलाह करने लगे॥ ११६॥ 'इसका क्या कारण है जो एक साथ ही इतने उपद्रवींका आगमन हुआ, इसपर विचार करना चाहिये।' उनके ऐसा कहनेपर अन्यक नामक एक वृद्ध यादकने कहा॥ ११४॥ 'अङ्गूरके पिता धप्रत्क जहाँ-जहाँ रहते थे वहाँ-वहाँ दुर्भिक्ष, महामाये और अनावृष्टि आदि उपद्रव कभी नहीं होते थे॥ ११५॥ एक बार काशिराजके देशमें अनावृष्टि हुई थीं। तब नीतः ततश्च तत्स्णाहेवो ववर्ष ॥ ११६ ॥ काशिराजपन्त्याश्च गर्भे कन्यारत्नं पूर्वपासीत्

॥ ११७ ॥ सा च कन्या पूर्णेऽपि प्रसृतिकाले नैव निश्चकाम ॥ ११८ ॥ एवं च तस्य गर्भस्य द्वादशवर्षांण्यनिष्कामतो ययुः ॥ ११९ ॥

काशिराजश्च तामात्मजां गर्भस्थामाह ॥ १२० ॥

पुत्रि कस्माञ्च जायसे निष्क्रम्यतामास्यं ते द्रष्ट्रमिच्छामि एतां च मातरं किमिति चिरं

क्केशबसीत्युक्ता गर्भस्थैव व्याजहार ॥ १२१ ॥ तात यहोकैको गां दिने दिने ब्राह्मणाय प्रयक्तिस

तदाहमन्यैस्त्रिभिर्वर्षैरस्मा दुर्भाताबद्वश्यं निष्क्रमिष्यामीत्येतद्वचनमाकण्यं राजा दिने दिने

ब्राह्मणाय गां प्रादात् ॥ १२२ ॥ सापि तावता कालेन जाता ॥ १२३ ॥

ततस्तस्याः पिता गान्दिनीति नाम चकार ॥ १२४ ॥ तो च गान्दिनीं कन्यां श्वफल्कायोप-कारिणे गृहमागतायार्घ्यभूतो प्रादात् ॥ १२५ ॥

तस्यामयमकूरः श्वफल्काजज्ञे ॥ १२६ ॥ तस्यैवङ्गणमिथुनादुत्पत्तिः ॥ १२७ ॥ तत्कथ-

मस्मिन्नपक्रान्तेञ दुर्भिक्षमारिकासुपद्रवा न भविष्यन्ति ॥ १२८ ॥ तद्यमत्रानीयतामरूपति-

गुणवत्यपराधान्वेषणेनेति यदुवृद्धस्यान्धकस्यै-तह्नचनमाकण्यं केशवीयसेनवलभद्रपुरोगमैर्यद्वभिः कृतापराधतितिश्चिपरभयं दत्त्वा श्वफल्कपुत्रः खपुर-

मानीतः ॥ १२९ ॥ तत्र चागतमात्र एव तस्य स्यमन्तकमणेः प्रभावादनावृष्टिमारिकादुर्भिक्ष-

व्यालाद्युपद्रवोपरामा वभूवुः ॥ १३० ॥ कृष्णश्चित्तयामास् ॥ १३१ ॥ स्वल्पमेतत्-

कारणं यदयं गान्दिन्यां शुफल्केनाक्करो जनितः ॥ १३२ ॥ समहाशायमनावृष्टिदुर्भिक्ष-

मारिकाञ्चपद्रवप्रतिषेधकारी प्रभावः ॥ १३३ ॥ तञ्जनमस्य सकाहो स महामणि: स्यमन्तकाख्य-

स्तिष्ठति ॥ १३४ ॥ तस्य ह्येवंविधाः प्रभावाः श्रूयनो ॥ १३५ ॥ अयमपि च यज्ञादनन्तर- धफल्कको वहाँ से जाते ही तत्काल वर्षा होने लगी ॥ ११६ ॥

उस समय काशिराजकी रानीके गर्भमें एक कन्यारल थी ॥ ११७ ॥ यह कन्या प्रसुतिकालके समाप्त होनेपर भी गर्भसे बाहर न आयी ॥ ११८ ॥ इस प्रकार उस गर्भको प्रसब हुए बिना बारह बर्ष ब्यतीत हो गये ॥ ११९ ॥ तब कारियांचने अपनी उस गर्मेस्थिता पुत्रीसे कहा-॥ १२० ॥ 'बेटी ! तु उत्पन्न क्यों नहीं होती ? याहर आ. मैं तेरा मुख देखना चाहता है।। १२१।। अपनी इस माताको तु इतने दिनोंसे क्यों कष्ट दे रही है ?' एजाके ऐसा कहनेपर उसने गर्भमें रहते हुए ही कहा--- 'पिताजी ! यदि

आप प्रतिदिन एक मौ ब्राह्मणको दान देंगे हो अगले तीन वर्ष बीतनेपर में अवस्य गर्भसे बाहर आ जाऊँगी । इस बातको सुनकर राजा प्रतिदिन ब्राह्मणको एक गौ देने लगे ॥ १२२ ॥ तब उतने समय (तीन वर्ष) बीतनेपर वह उत्पन्न हुई ॥ १२३ ॥

पिताने उसका नाम भान्दिनी रखा ॥ १२४ ॥ और उसे

अपने उपकारक शफल्कको, घर आनेपर अर्थिरूपसे दे दिया ॥ १२५ ॥ उसीसे धफल्कके द्वारा इन अकुरजंका जन्म हुआ है ॥ १२६ ॥ इनकी ऐसी युणवान् माता-पितासे उत्पत्ति है तो फिर उनके चले जानेसे यहाँ दुर्भिक्ष और महामारी आदि स्पद्रव क्यों न होंगे 🛭 ॥ १२७-१२८ ॥ अतः उनको यहाँ से आना चाहिये, अति गुणवान्के अपराधकी अधिक जाँच-परताल करना ठीक नहीं है। यादवसुद्ध अन्यकके ऐसे बचन सुनकर कृष्ण, उपसेन और बलंभद्र आदि यादव श्रफल्कपुत्र अक्रूरके अपराधको भूलाकर उन्हें अभयदान देकर अपने नगरमें हे आये ॥ १२९ ॥ उनके वहाँ आते ही स्थमन्तकंमणिके प्रभावसे अनावृष्टि, महामारी, दुर्मिक्ष और सर्पभय आदि सभी उपद्रम शान्त हो गये ॥ १३० ॥

तब श्रीकृष्णलन्हने विचार किया ॥ १३१ ॥ 'अक्रूरका जन्म गान्दिनीसे श्रकलकके द्वारा हुआ है यह तो बहुत सामान्य करण है।। १३२॥ किन्तु अनावृष्टि, दुर्मिश्च, महामारी आदि उपद्रवींको शान्त कर देनेवाला इसका प्रभाव तो अति महान् है ॥ १३३ ॥ अबङ्य ही इसके पास वह स्वमन्तक नामक महामणि है ॥ १३४ ॥ उसीका ऐसा प्रभाष सुना जाता है । ॥ १३५ ॥ इसे भी हम देखते है कि एक यज्ञके पीछे दुसरा और दूसरेके पीछे तीसरा इस प्रकार

मन्यत्कत्वत्तरं तस्यानन्तरमन्यद्यज्ञान्तरं चाजस्न-मविच्छित्रं यजतीति ॥ १३६ ॥ अल्पोपादानं चास्यासंश्रयमञ्जासौ मणिवरस्तिष्ठतीति कृताध्यवसायोऽन्यत्ययोजनमुद्दिश्य सकलयादव-समाजमात्मगृह एवाचीकरत् ॥ १३७ ॥

तत्र चोपविष्टेषुखिलेषु यदुषु पूर्व प्रयोजन-मुपन्यस्य पर्यवसिते च तस्पिन् प्रसङ्गान्तरपरिहास-कथामकूरेण कृत्वा जनार्दनस्तमक्रूरमाह ॥ १३८ ॥ दानपते जानीम एव वयं यथा शतधन्वना तदिद्मसिलजगत्सारभूतं स्ययन्तकं रहं भवतः समर्पितं तद्शेषराष्ट्रीपकारकं भवत्सकाशे तिष्ठति तिष्ठत् सर्व एव वयं तत्प्रभावफलभुजः कि त्वेष बलभद्रोऽस्मा-नाञ्चङ्कितवांस्तदस्मत्भीतये दर्शयस्वेत्यभिधाय जोषं स्थिते भगवति वासुदेवे सरत्रस्रो-ऽचिन्तवत् ॥ १३९ ॥ किमत्रानुष्टेवमन्यश्चा चेद ब्रवीम्यहं तत्केवलाम्बरतिरोधानमन्विध्यन्तो रत्नमेते द्रक्ष्यन्ति अतिविरोधो न क्षेम इति सञ्चिन्य तमस्विलजगत्कारणभूतं नारायणमाहाकूरः ॥ १४० ॥ भगवन्यमैतस्यपन्तकरत्नं शतधनुषा समर्पितमपगते च तस्मिन्नद्य श्वः परश्चो वा भगवान् याचयिष्यतीति कृतमतिरतिकुच्छेणैतावन्तं काल-मधारयम् ॥ १४१ ॥ तस्य च धारणक्रेहोनाह-महोषोपभोगेषुसङ्गिमानसो न वेदिः स्वसुख-कलामपि ॥ १४२ ॥ एतावन्यात्रमध्यशेष-राष्ट्रीपकारि धारियतुं न शक्नोति भवान्यन्यत इत्यात्मना न चोदितवान् ॥ १४३ ॥ तदिदं स्वमन्तकरतं गृह्यतामिच्छया यस्याभिषतं तस्य समर्प्यताम् ॥ १४४ ॥

ततः स्वोदरवस्त्रनिगोपितमतिलघुकनक-समुद्रकगतं प्रकटीकृतवान् ॥ १४५ ॥ ततश्च निष्काम्य स्यमन्तकमणिं तस्मिन्यदुकुलसमाजे मुमोच ॥ १४६ ॥ मुक्तमात्रे च तस्मिन्नति-कान्त्या तदस्वलमास्यानमुद्योतितम् ॥ १४७ ॥ निरत्तर अखण्ड यज्ञानुष्ठान करता रहता है ॥ १३६ ॥ और इसके पास यज्ञके साधन [धन आदि] भी बहुत कम है; इसिंक्ये इसमें सन्देह नहीं कि इसके पास स्वयन्तकर्माण अवश्य है।' ऐसा निश्चयकर किसी और प्रयोजनके उद्देश्यसे उन्होंने सम्पूर्ण यादवाँको अपने महरूमें एकत्रित किया॥ १४७॥

समस्त यद्वीशयोके वहाँ आकर बैठ जानेके बाद प्रथम प्रयोजन बताकर उसका उपसंहार होनेपर प्रसङ्गानारसे अक्ररके साथ परिहास करते हुए भगवान् कष्णने उनसे अहा-- ॥ १३८ ॥ "हे दानपते ! जिस प्रकार शतधन्त्राने तुन्हें सम्पूर्ण संसारकी सारभूत वह स्यमन्तक नामन्द्री महामणि सौंपी थी वह हमें सब मालूम है । वह सम्पूर्ण राष्ट्रका उपकार करतो हुई तुम्हारे पास है तो रहे, उसके प्रभावका फल तो हम सची घोगते हैं, किन्तु ये बरुभद्रजी हमारे उत्पर सन्देह करते थे, इसक्रिये हमारी प्रसन्नताके लिये आप एक बार उसे दिखला दीनिये।" भगवान वासदेवके ऐसा कहकर चुप हो जानेपर रता साथ ही लिये रहनेके कारण अक्तरजी सोचने लगे-॥ १३९ ॥ "अन्व मुझे तथा करना चाहिये, यदि और किसो प्रकार कहता है तो केवळ बस्त्रोंके ओटमें टटोलनेपर ये उसे देख ही लेंगे और इनसे अत्यन्त विरोध करनेमें हमारा कुदाल नहीं है।" ऐसा सोचकर दिखिल संसारके कारणस्वरूप श्रीनारायणसे अक्रूरजी बोसे----॥ १४० ॥ "भगवन् ! शतधन्वाने मुझे वह मणि सौंप दी थी। उसके मर जानेकर मेंने यह सोचते हुए बड़ी ही कठिनतासे इसे इतने दिन अपने पास रखा है कि भगवान आज, कळ या चरसों इसे माँगिंगे॥१४१॥ इसकी चौकसीके क्रेशसे सम्पूर्ण भोगोंमें अनासक्तवित होनेके कारण मुझे सुखका लेशमात्र भी नहीं मिला॥ १४२ ॥ भगवान ये विचार करते कि, यह सम्पूर्ण राष्ट्रके उपकारक इतने-से भारको भी नहीं उठा सकता, इसल्यि खयं मैंने आपसे कहा नहीं ॥ १४३ ॥ अब, स्त्रीजिये आपकी वह स्यमन्तकमणि यह रही, आपकी जिसे इच्छा ही उसे ही इसे दे दोजिये" ॥ १४४ ॥

तब अक्रूरजीने अपने कटि-वस्तमें छिपाई हुई एक छोटी-सो सोनेकी पिटारीमें स्थित वह स्थमन्तकर्माण प्रकट को और उस पिटारीसे निकालकर यादवसमाजमें रस दी ॥ १४५-१४६॥ उसके रखते ही वह सम्पूर्ण स्थान उसकी तीव कान्तिसे देदीप्यमान होने लगा॥ १४७॥

अधाहाकुर: स एष मणि: शतधन्वनास्माकं समर्पितः यस्यायं स एनं गृह्वातु इति ॥ १४८ ॥ तमालोक्य सर्वयादवानां साधुसाध्वित वाचोऽभ्रयत्त ॥ १४९ ॥ विस्मितमनसां तपालोक्यातीय बलभद्रो ममायमच्युतेनैव सामान्यसामन्वीप्सत इति कृतस्पृहोऽभृत् ॥ १५० ॥ ममैवायं पित्रधनमित्यतीव च सत्यभामापि स्पृहवाञ्चकार ॥ १५१ ॥ बल-सत्यावलोकनात्कृष्णोऽप्यात्मानं गोचकान्तराव-स्थितमिव मेने ॥ १५२ ॥ सकलबादवसमक्षं चाकूरमाह ॥ १५३ ॥ एतदि मणिरत्नमात्य-संशोधनाय एतेषां यदुनां मया दर्शितम् एतच मम बलभद्रस्य च सामान्यं पितुधनं चैतत्सत्यभाषाया नान्यस्थैतत् ॥ १५४ ॥ एतच सर्वकालं शुचिना ब्रह्मचर्यादिगुणवता भ्रियमाणमशेषराष्ट्र-स्योपकारकपश्चिना श्रियमाणमाधारमेव हन्ति **॥ १५५ ॥ अतोऽहमस्य षोडशस्त्रीसहस्र**-परित्रहादसमर्थो धारणे कथमेतत्सत्यभामा स्वीकरोति ॥ १५६ ॥ आर्यबलभद्रेणापि मदिरापानाद्यशेषोपभोगपरित्यागः ॥ १५७ ॥ तदलं यदलोकोऽयं बलभद्रः अहं च सत्या च त्वां दानपते प्रार्थवामः ॥ १५८ ॥ तद्भवानेव धारयितुं समर्थः ॥ १५९ ॥ त्वद्धतं चास्य राष्ट्रस्योपकारकं तद्भवानशेषराष्ट्रनिमित्त-मेतत्पूर्ववद्धारयत्वन्यञ वक्तव्यमित्युक्तो दानपतिस्तथेत्याह जप्राह च तन्पहारत्नम् ॥ १६० ॥ ततः प्रभृत्यक्रुरः प्रकटेनैय तेनाति-जाज्वल्यमानेनात्मकण्ठावसक्तेनादित्य इवांश्याली चवार ॥ १६१ ॥

इत्येतद्धगवतो मिथ्याभिश्वस्तिक्षालनं यः स्मर्रात न तस्य कदाचिद्दल्यापि मिथ्याभिशस्ति-र्भवति अय्याहतासिलेन्द्रियश्चाखिलयापमोक्ष-मवाप्रोति ॥ १६२ ॥ तब अक्रूरजीने कहा, "मुझे यह मणि द्वातधन्याने दी थी. यह जिसकी हो यह छे छे ॥ १४८ ॥

उसको देखनेपर सभी यादवींका विस्मयपूर्वक 'साध, साध् यह बचन सुना गुया॥ १४९॥ उसे देखकर बलभद्रजीने 'अञ्चलके ही समान इसपर मेरा भी अधिकार है' इस प्रकार अपनी अधिक स्पहा दिखलाई ॥ १५० ॥ तथा 'यह मेरी ही पैतुक सम्पत्ति है' इस तरह सत्य-भाषांने भी उसके लिये अपनी उत्कट अभिलापा प्रकट की ॥ १५१ ॥ बलभद्र और सत्यधामाको देखकर फुट्टा-चन्द्रने अपनेको बैट और पहियेके बीचमे पड़े हुए जीवके समान दोनों ओरसे संकटप्रस्त देखा ॥ १५२ ॥ और समस्त यादवीके सामने वे अक्टरजीसे बोले ॥ १५३ ॥ ''इस मणिरलको मैंने अपनी सफाई देनेके ख़िये ही इन यादवीको दिखबाया था। इस मणिपर मेरा और बरूभद्रजीका तो समान अधिकार है और सत्यभामाकी यह पैतक सम्पत्ति है; और किसीका इसपर कोई अधिकार नहीं है ॥ १५४ ॥ यह गणि सदा जुद्ध और बहाचर्य आहि, गुणयुक्त रहकर धारण करनेसे सप्पूर्ण राष्ट्रका हित करती है और अञ्चुद्धावस्थामें धारण करनेसे अपने आश्रयदाताको भी मार डालती है ॥ १५५ ॥ मेरे सौलह हजार स्त्रियाँ हैं, इसिलिये में इसके धारण करनेमें समर्थ नहीं हैं , इसीलिये सत्यभामा भी इसको कैसे धारण कर सकती है ? ॥ १५६ ॥ आर्य बलभद्रको भी इसके कारणसे मदिरापान आदि सम्पूर्ण भौगोंको त्यागना पडेगा ॥ १५७ ॥ इसल्यि हे दानपते ! ये यादवयण, बलभद्रजी, मैं और सत्यधामा सब मिलकर आपसे प्रार्थना करते हैं कि इसे धारण करनेमें आप ही समर्थ हैं॥ १६८-१६९॥ आपके धारण करनेसे यह सन्पूर्ण राष्ट्रका हित करेगी, इसलिये सम्पूर्ण राष्ट्रके मङ्गलके लिये आप ही इसे पूर्ववत घारण कॉलिये; इस विषयमे आप और कुछ भी न कहें ।'' भगवानुके ऐसा कहनेपर दानपति अकुरने 'जो अह्या' कह वह महारत ले लिया। तबसे अक्ररजी सबके सामने उस अति देवीप्यमान मणिको अपने परेमें धारणकर सुर्वके समान किरण-जारुसे युक्त होकर विचरने लगे॥ १६०-१६१॥।

भगवान्के मिथ्या-कलङ्क-दोधनरूप इस असङ्गका जो कोई स्मरण करेगा उसे कभी थोड़ा-स, भी मिथ्या कलङ्क न लगेगा, उसकी समस्त इन्द्रियों समर्थ रहेगी तथा वह समस्त पापोंसे मुक्त हो जावगा॥ १६२॥

चौदहवाँ अध्याय

अनमित्र और अन्धकके वंशका वर्णन

श्रीपराश्चर उवाच

अनिमत्रस्य पुत्रः शिनिर्नामाभवत् ॥ १ ॥ तस्यापि सत्यकः सत्यकात्सात्यकिर्युयुधानापर-नामा ॥ २ ॥ तस्यादपि सञ्जयः तत्पुत्रश्च कुणिः कुणेर्युगन्धरः ॥ ३ ॥ इत्येते शैनेयाः ॥ ४ ॥

अनिमत्रस्यान्वये पृश्चिस्तस्मात् श्वफल्कः तत्प्रभावः कथित एव ॥ ५ ॥ श्वफल्कस्यान्यः कनीयांश्चित्रको नाम भ्राता ॥ ६ ॥ श्वफल्का-दक्करो गान्दिन्यामभवत् ॥ ७ ॥ तथोपमदु-मृदामृदविश्वारिमेजयगिरिश्वत्रोपक्षत्रशतन्नारिमर्दन-धर्मदृग्दृष्टधर्मगन्धमोजवाहप्रतिवाहाख्याः पुत्राः ॥ ८ ॥ सुताराख्या कन्या च ॥ ९ ॥ देववानुपदेवश्चाक्तरपुत्रौ ॥ १० ॥ पृथ्वविपृथु-प्रमुखाश्चित्रकस्य पुत्रा वहवो वभूषुः ॥ ११ ॥

कुकुरभजमानश्चिकम्बलबर्हिषाख्या-स्तथान्यकस्य चत्वारः पुत्राः ॥ १२ ॥ कुकुराद्धृष्टः तस्मार कपोतरोमा ततश विलोमा तस्माद्पि तुम्बुरुसखोऽभवदनुसंज्ञश्च ॥ १३ ॥ अनोरानक-दुन्दुभिः, ततश्चाभिजिद् अभिजितः पुनर्वसुः ॥ १४ ॥ तस्याप्याहुक आहुकी च कन्या ॥ १५ ॥ आहुकस्य देवकोश्रसेनौ हो पुत्रौ ॥ १६ ॥ देववानुपदेवः सहदेवो देवरक्षितश देवकस्य चत्वारः पुत्राः ॥ १७ ॥ तेषां वृकदेवोपदेवा देवरक्षिता श्रीदेवा शान्तिदेवा सहदेवा देवकी च सप्त भगिन्यः ॥ १८ ॥ ताश्च सर्वा वसुदेव उपयेमे ॥ १९ ॥ उप्रसेनस्यापि कंस-न्यप्रोधसुनामानकाह्नशङ्कुसुभूमिराष्ट्रपालयुद्ध-तुष्टिसुतुष्टिमत्संज्ञाः पुत्रा बभूवुः ॥ २० ॥ कंसाकंसवतीसुतनुराष्ट्रपालिकाह्वाश्चीत्रसेनस्य

तनूजाः कन्याः ॥ २१ ॥

श्रीपराशरजी खोले—अनिमन्नके शिनि नामक पुत्र हुआ; शिनिके सलक और सलकसे सात्यिकक जन्म हुआ जिसका दूसरा नाम युगुधान था॥ १-२॥ तदनन्तर सात्यिकके सञ्जय, सञ्जयके कृषि और कृषिसे युगन्धरका जन्म हुआ। ये सब शैनेय नामसे विख्यात हुए॥ ३-४॥

अनिमन्नके बंदामें ही पृष्ठिका जन्म हुआ और पृष्ठिसे धफल्ककी उत्पत्ति हुई जिसका प्रभाव पहले वर्णन कर चुके हैं। धफल्कका चित्रक नामक एक छोटा भाई और था॥ ५-६॥ अफल्कके गान्दिनीसे अनूनका जन्म हुआ॥ ७॥ तथा [एक दूसरी खीसे] उपमहु, मृदामृद, विश्वारि, गेजय, गिरिधन्न, उपधान, शतम, अरिमर्दन, धर्मदृक्, दृष्टधर्म, गन्धमोज, बाह और प्रतिवाह नामक पुत्र तथा सुतारानामी कन्यका जन्म हुआ॥ ८-९॥ देखवान् और उपदेव ये दो अनूरके पुत्र थे॥ १०॥ तथा चित्रकके पृथु, विगृधु आदि अनेक पुत्र थे॥ १९॥ तथा

कुकुर, भड़मान, शुचिकम्बङ और बर्हिप ये बार अन्यकके पुत्र हुए॥१२॥ इन्पेंसे कुकुरसे धृष्ट, घृष्टसे कपोतरोपः, कपोतरोपःसे बिलोमा तथा बिलोमासे तुम्बुरके मित्र अनुका जन्म हुआ॥१३॥ अनुसे आनकदुन्दुभि, उससे अभिजित्, अभिजित्से पुनर्वसुं और पुनर्वसुसे आहुक नामक पुत्र और आहुकीनाम्री कन्याका जन्म हुआ ॥ १४-१५ ॥ आहुफके देवक और उन्नरोन नामक दो पुत्र हुए॥१६॥ डनमॅसे देवकके देवथान् उपदेव, सहरेव और देकरशित नामक चार पुत्र हुए ॥ १७ ॥ इन चारोकी चृकदेवा, उपदेख, देवरक्षिता, श्रीदेवा, शानिवेद्या, सहरेवा और देवकी ये सात भागिनियाँ थीं ॥ १८ ॥ ये सब् चसुरेवजीको विवाही गयी थीं ॥ ६९ ॥ उप्रसेनके भी कंस, न्यपोध, सुनाम, आनकाद्ग, शङ्कु, सुधूमि, राष्ट्रपाळ, युद्धतुष्टि और सुतुष्टिमान् नामक पुत्र तथा केसा, केसवती, सुतन् और राष्ट्रपास्त्रिका नामकी कन्चाएँ हुई ॥ २०-२१ ॥

भजमानाद्य विदृत्थः पुत्रोऽभवत् ॥ २२ ॥ विदृत्थाच्छुरः श्रूताच्छमी शिमनः प्रतिक्षत्रः तस्मात्वयंभोजस्ततश्च हृदिकः ॥ २३ ॥ तस्मपि कृतवर्मशत्मवृदेवाहदिवगभांद्याः पुत्रा बभूवुः ॥ २४ ॥ देवगभंस्यापि श्रूरः ॥ २५ ॥ श्रूतस्यापि मारिषा नाम पत्यभवत् ॥ २६ ॥ तस्मां चासौ दशपुत्रानजनयद्वसुदेवपूर्वान् ॥ २७ ॥ वसुदेवस्य जातमात्रसैव तद्गृहे भगवदंशावतारमव्याहत-दृष्ट्या पश्चिद्वदेवदेवयानकदुन्दुभयो वादिताः ॥ २८ ॥ तस्म च देवभागदेवश्रवोऽष्टक-ककुचक्रवत्सथारकस्ञ्चयश्यामशिकगण्डूष-संज्ञा नव भातरोऽभवन् ॥ ३० ॥ पृथा श्रुतदेवा श्रुतकीर्तिः श्रुतश्रवा राजाधिदेवी च वसुदेवादीनां पञ्च भगिन्योऽभवन् ॥ ३१ ॥

शूरस्य कुन्तिर्नाम सस्ताभवत् ॥ ३२ ॥ तस्मै चापुत्राय पृथामात्मजां विधिना शूरो दत्तवान् ॥ ३३ ॥ तां च पाण्डुस्वाह ॥ ३४ ॥ तस्यां च धर्मानिलेन्द्रैर्युधिष्ठिरभीमसेनार्जुनाख्यास्त्रयः पुत्रास्समृत्पादिताः ॥ ३५ ॥ पूर्वमेवानूढायास्त्र भगवता भास्त्रता कानीनः कर्णो नाम पुत्रोऽजन्यत ॥ ३६ ॥ तस्याश्च सपत्नी माद्री नामाभूत् ॥ ३७ ॥ तस्यां च नासत्यदस्ताभ्यां नकुलसहदेबौ पाण्डोः पुत्री जनितौ ॥ ३८ ॥

श्रुतदेवां तु वृद्धधर्मा नाम कारूश उपयेमे

॥ ३९ ॥ तस्यां च दत्तवक्रो नाम महासुरो जज्ञे

॥ ४० ॥ श्रुतकीर्तिमपि केकयराज उपयेमे

॥ ४९ ॥ तस्यां च सत्तर्दनादयः कैकेयाः पञ्च पुत्रा

बभूवुः ॥ ४२ ॥ राजाधिदेव्यामावन्त्यौ विन्दानुविन्दो जज्ञाते ॥ ४३ ॥ श्रुतश्रवसमपि चेदिराजो
दमघोषनामोपयेमे ॥ ४४ ॥ तस्यां च शिशुपालमुत्पादयामास ॥ ४५ ॥ स वा पूर्वमप्युदारविक्रमो
दैत्यानामादिपुरुषो हिरण्यकशिपुरभवत् ॥ ४६ ॥

पजमानका पुत्र विदूरध हुआ; विदूरधके शूर, शूरके हामी, हामीके प्रतिक्षत्र, प्रतिक्षत्रके स्वयंभीज, स्वयंभीजके हिस्क तथा हिस्कके कृतवर्मी, शतधन्वा, देवाई और देवगर्भ आदि पुत्र हुए। देवगर्भके पुत्र शूरसेन थे। २२—२५॥ शुरसेनकी मारिया मामकी पत्नी थी। उससे उन्होंने वसुदेवके जन्म लेते ही देवताओंने अपनी अव्याहत दृष्टिसे यह देखकर कि इनके घरमें भगवान् अंशावतार लेंगे, आनक और दुन्दुमि आदि बाजे बजाये थे॥ २८॥ इसीलिये इनका नाम आनकदुन्दुमि भी हुआ॥ २९॥ इनके देवभाग, देवश्रवा, अष्टक, कज़गळ, वस्मधारक, मृजय, स्थाम, शमिक और गण्डूब नामक नौ भाई थे॥ ३०॥ तथा इन वसुदेव आदि दस भाइचोंकी पृथा, श्रुतदेवा, श्रुतकीर्ति, श्रुतश्रवा और राजाधिदेवी ये पाँच बहिने थी॥ ३१॥

शूरतेनके कुन्ति नामक एक पित्र थे ॥ ३२ ॥ वे निःसन्तान थे अतः शूरसेनने दत्तक-विधिसे उन्हें अपनी पृथा नामकी कन्या दे दी थी ॥ ३३ ॥ उसका राजा पाण्डुके साथ विवाह हुआ ॥ ३४ ॥ उसके धर्म, वायु और इन्द्रके द्वारा क्रमशः युधिष्ठिर, भोमसेन और अर्जुन नामक तीन पुत्र हुए ॥ ३५ ॥ इनके पहले इसके अविवाहितावस्थामें ही भगवान् सूर्यके द्वारा कर्ण नामक एक कानीन पुत्र और हुआ था ॥ ३६ ॥ इसकी नादी नामकी एक सपत्नी थी ॥ ३७ ॥ उसके अधिनीकुनारोद्वारा नकुल और सहदेव नामक पाण्डुके दो पुत्र हुए ॥ ३८ ॥

शूरसेनकी दूसरी कन्या शुतदेवाका कारूश-नरेश वृद्धधमांसे विवाह हुआ था॥ ३९॥ उससे दत्तवक नामक महादैत्य उत्पन्न हुआ॥ ४०॥ शुतकीर्तिको केकयराजने विवाहा था॥ ४१॥ उससे केकय-नरेशके सत्तदंन आदि पाँच पुत्र हुए॥ ४२॥ राजाधिदेवीसे अवन्तिदेशीय विन्द और अनुविन्दका जन्म हुआ॥ ४६॥ शुतश्रवाका भी चेदिराज दमघोषने पाणियहण किया॥ ४४॥ उससे शिशुपालका जन्म हुआ॥ ४५॥ पूर्वजन्मने यह आंतश्य पराक्रमी हिरण्यकशिपु नामक दैलोंका मूल पुरुष हुआ था जिसे सकल लोकगुरु

7 177

यश्च भगवता सकल्लोकगुरुणा नरसिंहेन घातितः ॥ ४७ ॥ पुनरपि अक्षयदीर्यशौर्यसम्प-त्पराक्रमगुणस्समाक्रान्तसकलत्रैलोक्येशस्त्रभावो दशाननो नामाभूत् ॥ ४८ ॥ बहुकालोपभुक्त-भगवत्सकाशाबाप्तशरीरपातोद्धवपुण्यफलो भगवता राघवरूपिणा सोऽपि निधनमुप-पादितः ॥ ४९ ॥ युनश्चेदिराजस्यदमघोषस्यात्मज-**दिशञ्जूपालनामाभ्यत् ॥ ५० ॥** शिश्याल-त्वेऽपि भगवतो भूभारावतारणायावतीर्गांशस्य पुण्डरीकनयनास्वस्योपरि द्वेषानुबन्धमतित-राञ्चकार ॥ ५१ ॥ भगवता च स निधनमुपनी-तस्तत्रैव परमात्मभूते मनस एकाप्रतया सायुज्य-मवाप ॥ ५२ ॥ भगवान् यदि यथाभिलवितं ददाति तथा अप्रसन्नोऽपि निघन् स्थानं प्रयच्छति ॥ ५३ ॥

भगवान् नृसिंहने मारा था ॥ ४६-४७ ॥ तदनन्तर यह अक्षय, बीर्य, शौर्य, सम्पत्ति और पराक्रम आदि मणोसे सम्पन्न तथा समस्त विभवनके स्वामी इन्द्रके भी प्रभावको दयानेवाला दशानन हुआ ॥ ४८ ॥ स्वयं भगवान्के हाथसे ही मारे जानेके पुण्यक्षे प्राप्त हुए नाना भौगीको वह बहुत समयतक भोगते हुए अन्तमें रायवरूपधारी भगवानुके ही द्वारा मारा गया ॥ ४९ ॥ उसके पीछे यह चेदिराज दमयोषका पुत्र शिशुपाल हुआ ॥ ५० ॥ शिशुपाल होनेपर भी वह भू-भार-हरणके लिये अवतीर्ण हुए भगवदंश-खरूप भगवान् पुण्डरीकाक्षमें अत्यन्त द्वेषबृद्धि करने लगा ॥ ५१ ॥ अन्तर्भे भगवानके हाथसे ही मारे जानेपर उन परमात्मामें ही मन लगे रहनेके कारण सायज्य-मोक्ष प्राप्त किया ॥ ५२ ॥ भगवान् यदि प्रसन्न होते हैं तब जिस प्रकार यथेच्छ फल देते हैं, इसी प्रकार अपसन्न होकर महरनेपर भी वे अनुपम दिव्यक्षेकको आहि कराते हैं ॥ ५३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्वेऽहो चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवाँ अध्याय

शिशुपालके पूर्व-जन्मान्तरोंका तथा वसुदेवजीकी सन्ततिका वर्णन

श्रीमंत्रेय उवाच

हिरण्यकशिपुत्वे च रावणत्वे च विष्णुना । अवाप निहतो भोगानप्राप्यानमरैरपि ॥ न रूपं तत्र तेनैव निहतः स कथं पुनः । सम्प्राप्तः शिशुपारुत्वे सायुज्यं शाश्चते हरौ ॥ एतदिच्छाम्यहं श्रोतुं सर्वथर्मभृतां वर । कौत्हरूपरेणैतत्पृष्टो मे वक्तुमहंसि ॥ श्रीपरागर अवाच

दैत्येश्वरस्य वधायास्तिललोकोत्पत्ति-स्थितिविनाशकारिणा पूर्व तनुप्रहणं कुर्वता नृसिंहरूपमाविष्कृतम् ॥ ४ ॥ तत्र च हिरण्य-कशिपोर्विष्णुस्यमित्येतन्न मनस्यभूत् ॥ ५ ॥ निरतिशयपुण्यसमुद्धतमेतस्सत्त्वजातमिति ॥ ६ ॥

विष्यु १०-

श्रीमैत्रेयजी बोले—भगवन् ! पूर्वजन्मोमें हिरण्यकशिषु और रावण होनेपर इस शिशुपालने भगवान् विष्णुके द्वारा मारे जानेसे देव-दुर्लम भोगोंको तो प्राप्त किया, किन्तु यह उनमें लीन नहीं हुआ; किर इस जनमें ही उनके द्वारा मारे जानेपर इसने सनातन पुरुष श्रीहरिमें सायुज्य मोश कैसे प्राप्त किया ? ॥ १-२ ॥ है समस्त धर्मात्माओंमें श्रेष्ठ मुनिवर ! यह बात सुननेकी मुझे बड़ी ही इच्छा है। मैंने अत्यन्त कुत्हलवश होकर आपसे यह प्रश्न किया है, कृपवा इसका निरूपण कीविये॥ ३॥

श्रीपराशस्त्री बोले—प्रथम जनमें दैत्यराज हिरण्यकशिपुका वध करनेके लिये सम्पूर्ण लोकोको उत्पत्ति, स्थिति और नाश करनेवाले भगवान्ते शरीर प्रहण करते समय नृसिंहरूप प्रकट किया था॥ ४॥ इस समय हिरण्यकशिपुके चित्तमें यह भाव नहीं हुआ था कि ये विण्युभगवान् हैं॥ ५॥ केवल इतना ही विचार हुआ कि रज उद्रेकप्रेरितैकाश्रमतिस्तद्भावनायोगात्ततोऽवाप्त-वधहैतुर्की निरतिशयामेवाखिलत्रैलोक्याधिक्य-धारिणीं दशाननत्वे भोगसम्पद्मवाप ॥ ७ ॥ न तु स तस्मिन्ननादिनिधने परब्रह्मभूते भगवत्यनालिखिनि कृते मनसस्तल्लयमवाप ॥ ८ ॥

एवं दशाननत्वेऽष्यनङ्गपराधीनतया जानकी-समासक्तवेतसा भगवता दाशरियरूपधारिणा हतस्य तद्र्षदर्शनमेवासीत्, नायमच्युत इत्यासिक-विंपद्यतोऽन्तःकरणे मानुषबुद्धिरेव केवल-मस्याभृत् ॥ १ ॥

पुनरप्यच्युतविनिपातमात्रफलमित्तलभूमण्डल-**इलाध्यवेदिराजकुले जन्य अव्याहतैश्चर्य** शिश्पाललेऽप्यवाप ॥ १० ॥ तत्र त्वस्त्रिलाना-मेव स भगवञ्जाम्नां त्वङ्कारकारणमभवत् ॥ ११ ॥ ततश्च तत्कालकृतानां तेषामशेषाणा-मेवाच्युतनाम्नामनवस्तपनेकजन्मस् वर्द्धित-विद्वेषानुबन्धिचित्तो विनिन्दनसन्तर्जनादिषुद्वारण-मकरोत् ॥ १२ ॥ तच रूपमृत्फुल्लपदादलाम-लाक्षमत्युञ्चलपीतवस्रधार्यंमलकिरीटकेयुरहार-कटकादिशोभितपुदारचतुर्बाहुशङ्खचक्रगदाधर-मतिप्रसद्धवैरानुभावाद्दनभोजनस्नानासन-ज्ञयनादिषुशेषावस्थान्तरेषु नान्यत्रोपययावस्य चेतसः ॥ १३ ॥ ततस्तमेवाक्रोशेषुशारयंस्तमेव हृदयेन धारयन्नात्मवधाय यावद्धगवद्धस्तचक्रांश्-मालोजन्बलमक्षयतेजस्त्वरूपं ब्रह्मभूतमपगत-हेषादिदोषं भगवन्तमद्राक्षीत् ॥ १४ ॥ तावश्च भगवसक्रेणाञ्ज्याषादितस्तत्स्मरणदग्धा-खिलाधसञ्चयो भगवतान्तमुपनीतस्तस्मित्रेव लयमुपययौ ॥ १५ ॥ एतत्तवास्त्रिलं मचाभिहितम्

॥ १६ ॥ अयं हि भगवान् कीर्तितश्च संस्पृतश्च

द्वेपानुबन्धेनापि अखिलसुरासुरादिदर्लभं फलं

प्रयच्छति किमृत सम्यग्भक्तिमतामिति ॥ १७ ॥

यह कोई निर्ताशिय पुण्य-समूहसे उत्पन्न हुआ प्राणी है ॥ ६ ॥ रजोगुणके उत्कर्षसे प्रेरित हो उसकी मति [उस विपरीत भावनाके अनुसार] दृढ़ हो गयी । अतः उसके भीतर ईश्वरीय भावनाका योग व होनेसे भगवान्के द्वारा भारे जानेके कारण ही सबणका जन्म लेनेपर उसने सम्पूर्ण विलोकीमें सर्वाधिक भोग-सम्पत्ति प्राप्त की ॥ ७ ॥ उन अनादि-निधन, परब्रह्मस्वरूप, निराधार भगवान्में चित्त न लगानेके कारण वह उन्होंने लीन नहीं हुआ ॥ ८ ॥ इसी प्रकार संवण होनेपर भी कामवश जानकीजीमें

इसा प्रकार राषण हानपर भी कामवदा जानकाजीम चित्त लग जानेसे भगवान् दशरथनन्द्रन रामके द्वारा मारे जानेपर केवल उनके रूपका ही दर्शन हुआ था; 'ये अच्युत है' ऐसी आसक्ति नहीं हुई, बस्कि मरते समय इसके अन्तःकरणमें केवल मनुष्यबुद्धि ही रही ॥ ९ ॥ किर श्रीअच्युतके द्वारा मारे जानेके फलस्करण इसने

भूमण्डलमें प्रशंसित चेदिराजके कुलमें क्षिशुपालरूपसे जन्म लेकर भी अक्षय ऐश्वर्य प्राप्त किया ॥ १० ॥ उस जन्मचे वह भगवानुके प्रत्येक नामोंमे तुच्छताकी भावना करने लगा ॥ ११ ॥ उसका हदय अनेक जन्मके द्वेषानुबन्धसे युक्त था, अतः वह उनकी निन्ता और तिरस्कार आदि करते हुए भगवान्के सम्पूर्ण समयानुसार लीलाकृत नामोंका निरन्तर उच्चारण करता। था॥ १२॥ खिले हुए कमल्दलके समान जिसकी निर्मेल ऑसी हैं, जो उज्ज्वल पोताब्बर तथा निर्मल किरीट, केयुर्, हार और कटकादि धारण किये हुए हैं तथा जिसकी लम्बी-लम्बी चार भुजाएँ है और जो शुद्ध, चक्र, गदा और पदा धारण किये हुए हैं, भगवानुका वह दिव्य रूप अत्यन्त वैरानुबन्धके कारण भ्रमण, भोजन, स्नान, आसन और शयन आदि सम्पूर्ण अवस्थाओंपे कभी उसके चित्तसे दर न होता था॥ १३॥ फिर गाली देते समय उन्होंका नागोचारण करते हुए और हृदयमें भी उन्होंका ध्यान धरते हुए जिस समय वह अपने वधके लिये हाधमें धारण किये चक्रके उञ्चल किरणजालसे सुझोपित, अक्षय तेजस्वरूप द्वेषादि सम्पूर्ण दोषोसे गृहत ब्रह्मभूत भगवानुको देख रहा था॥ १४॥ उसी समय तुरुत भगवसकसे मारा गया; भगवत्त्मरणके कारण सम्पूर्ण पापराशिके दग्ध हो जानेसे भगवानुके द्वारा उसका अन्त हुआ और वह उन्होंमें स्त्रीन हो गया ॥ १५ ॥ इस फ़्कार इस संभूग रहस्यका मैंने तुमसे वर्णन किया ॥ १६ ॥ अहो । वे भगवान् तो द्वेषानुबन्धके कारण भी क्टेर्तन और स्मरण करनेसे सम्पूर्ण देवता और अस्रोंको

वसुदेवस्य त्वानकदुन्दुभेः पौरवीरोहिणी-पदिराभद्रदेवकीप्रमुखा बह्न्यः पत्न्योऽभवन् ॥ १८ ॥ बलभद्रशठसारणदुर्मदादीन्पुत्रा-त्रोहिण्यामानकदुन्दुभिकत्पादयामास ॥ १९ ॥ बलदेवोऽपि रेवत्यां विशठोल्पुकौ पुत्रावजनयत् ॥ २० ॥ सार्ष्टिमाष्टिशिशुसत्यधृतिप्रमुखाः सारणात्मजाः ॥ २१ ॥ भद्राश्वभद्रवाहु-दुर्दमभूताद्या रोहिण्याः कुलजाः ॥ २२ ॥ नन्दोपनन्दकृतकाद्या मदिरायास्तनयाः ॥ २३ ॥ भद्रायाश्चोपनिधिगदाद्याः ॥ २४ ॥ वैशाल्यो च कौशिकमेकमेवाजनयत् ॥ २५ ॥

आनकदुन्दुभेदेंबक्यामपि कीर्तिमत्सुषेणोदायु-भद्रसेनऋजुदासभद्रदेवाख्याः षद् पुत्रा जज्ञिरे ॥ २६ ॥ तांश्च सर्वानेव कंसो घातितवान् ॥ २७ ॥ अनन्तरं च सप्तमं गर्भमर्द्धरात्रे भगवद्महिता योगनिद्रा रोहिण्या जठरमाकृष्य नीतवती ॥ २८ ॥ कर्षणाशासावपि सङ्कर्षणाख्या-मगमत् ॥ २९ ॥ ततश्च सकलजगन्महा-तक्रमूलभूतो भूतभविष्यदादिसकलसुरासुरमुनि-जनमनसामप्यगोचरोऽब्जभवप्रमुखैरनलमुखैः प्रणम्यावनिभारहरणाय प्रसादितो भगवाननादि-मध्यनिधनो देवकीगर्भमवततार वासुदेवः ॥ ३० ॥ व्यस्ताद्विवर्द्धमानोरुमहिमा योगनिद्रा नन्दगोपपल्या यशोदाया गर्भ-मधिष्ठितवती ॥ ३१ ॥ सुप्रसन्नादित्यचन्द्रादिशह-मव्यालादिभयं स्वस्थमानसमस्विलमेवैतज्ञगद-पास्ताधर्ममभवर्तास्मञ्ज पुण्डरीकनयने जायमाने ॥ ३२ ॥ जातेन च तेनाखिलपेवैतत्सन्धार्गवर्त्ति जगद्कियत् ॥ ३३ ॥

भगवतोऽप्यत्र मत्यंत्रीकेऽवतीर्णस्य षोडश-सहस्राण्येकोत्तरशताधिकानि भार्याणामभवन् ॥ ३४ ॥ तासां च रुक्मिणीसत्यभामाजाम्बवती-चारुहासिनीप्रमुखा हाष्ट्री पत्यः प्रधाना वभूवुः ॥ ३५ ॥ तासु चाष्ट्रावयुतानि लक्षं च पुत्राणां

दुर्लभ परमफल देते हैं, फिर सम्यक् भक्तिसम्पन्न पुरुषोंकी तो बात ही क्या है ? ॥ १७ ॥

आनकदुन्दुभि वस्नुदेवजीके पौरवी, रोहिणी, मदिरा, भद्रा और देवकी आदि बहुत-सी स्नियाँ थीं ॥ १८ ॥ उनमें रोहिणीसे बसुदेवजीने बरुभद्र, शतु, सारण और दुर्मर आदि कई पुत्र उत्पन्न किये ॥ १९ ॥ तथा बरुभद्रजीके रेवतीसे विशव और उल्सुक नामक दो पुत्र हुए ॥ २० ॥ साष्टि, माष्टि, सत्य और धृति आदि सारणके पुत्र ये ॥ २१ ॥ इनके अतिरिक्त भद्रास, भद्रवाहु, दुर्दम और भूत आदि भी रोहिणोहीकी सन्तानमें थे॥ २२ ॥ नन्द, उपनन्द और कृतक आदि मदिराके तथा उपनिधि और मद आदि भद्राके पुत्र थे ॥ २३-२४ ॥ वैशालीके गर्भसे कीशिक नामक केवल एक ही पुत्र हुआ ॥ २५ ॥

आनकद्न्द्रभिके देवकीसे कीर्तिमान्, सुषेण, उदायु, भद्रसेन, ऋजुदास तथा भद्रदेव नामक छः पुत्र हुए ॥ २६ ॥ इन सम्बक्ती कंसने मार डाला था ॥ २७ ॥ पीछे भगवानुकी प्रेरणासे योगभायाने देवकीके सातवे गर्भको आधी रातके समय खींचकर रोहिणीकी कुक्षिमें स्थापित कर दिया ॥ २८ ॥ आकर्षण करनेसे इस गर्भका नाम संकर्षण हुआ ॥ २९ ॥ तदनन्तर सम्पूर्ण संसाररूप महावृक्षके मूलखरूप भूत, भविष्यत् और वर्तमान-कालीन सम्पूर्ण देव, असुर और मुनिजनकी बुद्धिके अगभ्य तथा ब्रह्मा और अग्नि आदि देवताओंद्वारा प्रणाम करके भूधारहरणके लिये प्रसन्न किये गये आदि, मध्य और अन्तहीन भगवान् वासुदेवने देवकीके गर्भसे अवतार लिया तथा उन्होंकी कृपासे बढ़ी हुई महिमावाली योगनिहा भो क्दगोपको पत्नी बशोदाके गर्भने स्थित हुई ॥ ३४-३१ ॥ उन कमलनयन भगवान्के प्रकट होनेपर यह सम्पूर्ण जगत् प्रसन्न हुए सूर्य, चन्द्र आदि बहीसे समाह सर्पादिके भयसे शुन्य, अधर्मादिसे रहित तथा स्वस्थितित हो गया॥ ३२॥ उन्होंने प्रकट होकर इस सम्पूर्ण संसारको सन्मार्गाबलम्बी कर दिया ॥ ३३ ॥

इस मर्त्यलेकमें अवतीर्ण हुए भगवान्की सोलह हजार एक सी एक रानियाँ थीं॥ ३४॥ उनमें रुक्मिणी, सत्यभामा, जाम्बवती और चारुहासिनी आदि आठ मुख्य थीं॥ ३५॥ अमदि भगवान् अस्तिलमूर्तिने उनसे एक

भगवानखिलमूर्तिरनादिमानजनयत् ॥ ३६ ॥ तेषां प्रद्यप्रचारुदेणासाम्बादयस्रयोदश प्रधानाः ॥ ३७ ॥ प्रद्युप्तोऽपि रुविमणस्तनयां स्वमवर्ती नामोपयेमे ॥ ३८ ॥ तस्यामनिरुद्धो जज्ञे ॥ ३९ ॥ अनिरुद्धेऽपि रुक्षिमण एव पौत्री सुभद्रां नामोपयेमे ॥ ४० ॥ तस्थामस्य वज्रो जज्ञे ॥ ४१ ॥ वज्रस्य प्रतिबाहस्तस्यापि सुचारुः ॥ ४२ ॥ एवमनेकशतसहस्रपुरुषसंख्यस्य यदकुलस्य पुत्रसंख्या वर्षशतैरपि वक्तं न ॥ ४३ ॥ यतो हि इलोकाविमावत्र चरितार्थौ ॥ ४४ ॥ तिस्रः कोट्यस्सहस्राणामष्टाशीतिशतानि च । कुमाराणां गृहाचार्याश्चापयोगेषु ये रताः ॥ ४५ संख्यानं यादवानां कः करिष्यति महात्पनाम् । यत्रायुतानामयुत्तलक्षेणास्ते । सदाहकः ॥ ४६ देवासुरे हता ये तु दैतेयास्सुमहाबलाः । उत्पन्नास्ते मनुष्येषु जनोपद्रवकारिणः ॥ ४७ तेषामुत्सादनार्थाय भुवि देवा यदोः कुले ।

देवासुरे हता ये तु दैतेयास्सुमहाबलाः । उत्पन्नास्ते मनुष्येषु जनोपद्रवकारिणः ॥ ४७ तेषामुत्सादनार्थाय भुवि देवा यदोः कुले । अवतीर्णाः कुलशतं यत्रैकाभ्यधिकं द्विज ॥ ४८ विष्णुस्तेषां प्रमाणे च प्रभुत्वे च व्यवस्थितः । निदेशस्थायिनस्तस्य ववृधुस्सर्वयादवाः ॥ ४९ इति प्रसूति वृष्णीनां यश्शृणोति नरः सदा । स सवैः पातकैर्मुको विष्णुत्येकं प्रपद्मते ॥ ५० लाख अस्सी हजार पुत्र उत्पन्न किये ॥ ३६ ॥ उनमेंसे प्रश्नुप्त, चारुदेव्या और साम्ब आदि तेरह पुत्र प्रधान थे ॥ ३० ॥ प्रश्नुप्तने भी रुक्मीकी पुत्री रुक्मवतीसे विवाह किया था ॥ ३८ ॥ उससे अनिरुद्धका जन्म हुआ ॥ ३९ ॥ अनिरुद्धने भी रक्मीकी पीत्री सुभद्रासे विवाह किया था ॥ ४० ॥ उससे वज्र उत्पन्न हुआ ॥ ४१ ॥ वज्रका पुत्र प्रतिबाहु तथा प्रतिबाहुका सुचारु था ॥ ४२ ॥ इस प्रकार सैकड़ों हजार पुरुषोकी संख्यावाले यहुकुलको सन्तानीकी गणना सौ वर्षमें भी नहीं को जा सकती ॥ ४३ ॥ क्योंकि इस विथयमें ये दो इल्लोक चरितार्थ हैं— ॥ ४४ ॥

जो गृहाचार्य यादवकुमारीको धनुर्विद्याकी शिक्षा देनेमें तत्पर रहते थे उनकी संख्या तीन करोड़ अद्वासी लाख थी, फिर उन महात्मा यादवीकी गणना तो कर ही कौन सकता है ? जहाँ हजारों और लाखोंकी संख्यामें सर्वदा यदुराज उग्रसेन रहते थे॥ ४५-४६॥

देवासुर-संप्राममें जो महावाली दैत्यगण मारे गये थे वे गनुष्यलेकमें उपद्रव करनेवाले राजालोग होकर उठाल हुए ॥ ४७ ॥ उनका नाइ। करनेके लिये देवताओंने यदुवंशमें जन्म लिया जिसमें कि एक सी एक कुल थे ॥ ४८ ॥ उनका नियन्तण और स्वामित्व भगवान् विष्णुने ही किया । वे समस्त यादवगण उनकी आइम्नुसार ही वृद्धिको प्राप्त हुए ॥ ४९ ॥ इस प्रकार जो पुरुष इस वृष्टिवंशको उत्पत्तिके विवरणको सुनता है वह संप्यूणं पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकको प्राप्त कर लेता है ॥ ५० ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थैऽशे पञ्चदद्योध्यायः ॥ १५॥

सोलहवाँ अध्याय

तुर्वसूके वंशका वर्णन

श्रीपरास उलाच

इत्येष समासतस्ते यदोर्वशः कथितः ॥ १ ॥ अथ तुर्वसोर्वशमबधारय ॥ २ ॥ तुर्वसोर्विह-रात्मजः वहेर्भार्गो भार्गाद्धानुस्ततश्च त्रयीसानुस्तस्माद्य करन्दमस्तस्यापि मरुतः ॥ ३ ॥ सोऽनपत्योऽभवत् ॥ ४ ॥ ततश्च पौरवं दुष्यन्तं पुत्रमकत्त्ययत् ॥ ५ ॥ एवं ययातिशापातद्वंशः पौरवमेव तंशं समाश्चितवान् ॥ ६ ॥ श्रीपराशरजी सोले—इस प्रकार मैंने तुमसे संश्लेपसे बहुके वंशका वर्णन किया ॥ १ ॥ अब तुर्वसुके वंशका वर्णन सुनो ॥ २ ॥ तुर्वसुका पुत्र विहे था, विहेक्त भागे, भागेका पानु, भानुका वर्णसानु, वर्णसानुका करन्दम और करन्दमका पुत्र मरुत्त था ॥ ३ ॥ मरुत्त निस्सन्तान था ॥ ४ ॥ इसल्थि उसने पुरुवंशीय दुष्यत्तको पुतरूपसे लीकार कर लिया ॥ ५ ॥ इस प्रकार ययातिक शापसे तुर्वसुके वंशने पुरुवंशका ही आश्रय लिया ॥ ६ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सत्रहवाँ अध्याय

दुशु-वंश

श्रीपराशर उयाच

द्वह्रोस्तुतनयो बभ्रः ॥ १ ॥ बभ्रोस्सेतुः ॥ २ ॥ सेतुपुत्र आरब्धनामा ॥ ३ ॥ आरब्धस्यात्मजो गान्धारो गान्धारस्य धर्मो धर्माद् घृतः घृताद् दुर्दमस्ततः प्रचेताः ॥ ४ ॥ प्रचेतसः पुत्रश्शतधर्मो बहुलानां म्लेन्डानामुदीच्यानामाधिपत्यमकरोत् ॥ ५ ॥ श्रीपराशरजी बोले—दुसुका पुत्र बशु था, बशुका सेतु, सेतुका आरब्ध, आरब्धका गान्धार, गान्धारका धर्म, धर्मका घृत, घृतका दुर्दम, दुर्दमका प्रचेता तथा प्रचेताका पुत्र शतधर्म था। इसने उत्तरवर्ती बहुत-से म्लेन्झेंका आधिपत्य किया॥ १—५॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे सप्तदशोध्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवाँ अध्याय

अनुवंश

श्रीपस्थार उवाच

ययातेश्चतुर्थपुत्रस्यानोस्सभानलचक्षुःपरमेषु-संज्ञास्तयः पुत्राः वभूवुः॥ १॥ सभानलपुत्रः कालानलः॥ २॥ कालानलात्स्झयः॥ ३॥ सृञ्जयात् पुरञ्जयः॥ ४॥पुरञ्जयाञ्जनमेजयः॥ ५॥ श्रीपराशरजी बोले—ययातिक चौथे पुत्र अनुके सभानल, चक्षु और परमेषु नामक तीन पुत्र थे। सभानलका पुत्र कालानल हुआ तथा कालानलके सुक्रय, सुक्रयके पुरक्रयके जनमेजय, जनमेजयके तस्मान्यहाशालः ॥ ६ ॥ तस्माख महामनाः ॥ ७ ॥ तस्मादुशीनरतितिक्षु द्वी पुत्रायुत्पन्नौ ॥ ८ ॥

उद्दीनरस्यापि द्वित्रिवृगनरकृमिवर्मास्याः पञ्च पुत्रा बभूवुः ॥ ९ ॥ पृषदर्भमुद्वीरकेकयमद्रका-श्चलारिद्वाबिपुत्राः ॥ १० ॥ तितिशोरपि रुद्यद्रथः पुत्रोऽभूत् ॥ ११ ॥ तस्यापि हेमो हेमस्यापि सुतपाः सुतपसश्च बलिः ॥ १२ ॥ यस्य क्षेत्रे दीर्घतमसाङ्गवङ्गकलिङ्गसुहापौण्ड्राख्यं वालेयं क्षत्रमजन्यत् ॥ १३ ॥ तत्रामसन्ततिसंज्ञाश्च पञ्चविषया बभूवुः ॥ १४ ॥ अङ्गादनपानस्ततो दिविरश्चस्तस्माद्धमरश्चः ॥ १५ ॥ तत्रश्चित्रस्थो रोमपादसंज्ञः ॥ १६ ॥ यस्य द्वारश्चे मित्रं जन्ने ॥ १७ ॥ यस्याजपुत्रो द्वारश्चद्वान्तां नाम कन्यामनपत्यस्य दुहितृत्वे युयोज ॥ १८ ॥

रोमपादाद्यतुरङ्गस्तस्मात्य्युलाक्षः ॥ १९ ॥
ततश्चम्पो यश्चम्पां निवेशवामास ॥ २० ॥ चम्पस्य
हर्यङ्गी नामात्मजोऽभृत् ॥ २१ ॥ हर्यङ्गाद्धद्रस्थो
भद्रस्थाद्बृहद्रथो बृहद्धाद्बृहत्कर्मा बृहत्कर्मणश्च
बृहद्धानुस्तस्माच बृहन्मना बृहन्मनसो जवद्रथः
॥ २२ ॥ जयद्रथो ब्रह्मक्षत्रान्तरालसम्भूत्यां पत्न्यां
विजयं नाम पुत्रमजीजनत् ॥ २३ ॥ विजयश्च धृति
पुत्रमवाप ॥ २४ ॥ तस्यापि धृतव्रतः पुत्रोऽभूत्
॥ २५ ॥ धृतव्रतात्सत्यकर्मा ॥ २६ ॥
सत्यकर्मणस्त्वतिरथः ॥ २७ ॥ यो गङ्गाङ्गतो
मञ्जूषागतं पृथापविद्धं कर्णं पुत्रमवाप ॥ २८ ॥
कर्णाद्वृषसेनः इत्येतदन्ता अङ्गवंश्याः ॥ २९ ॥
अतश्च पुरुवंशं श्रोतुमहीसि ॥ ३० ॥

महाशाल, महाशालके महामना और महामनके उद्योगर तथा तितिशु नामक दो पुत्र हुए॥ १—८॥

उशीनरके शिवि, नृग, मर, कृषि और वर्म नामक पाँच पुत्र हुए ॥ ९ ॥ उनमेंसे शिक्षिक एषदर्भ, सुवीर, केकय और महक — ये चार पुत्र थे ॥ १० ॥ तितिश्रुका पुत्र रुशद्रथ हुआ । उसके हेम, हेमके सुतपा तथा सुतपाके बिल नामक पुत्र हुआ ॥ ११-१२ ॥ इस बिलके केन्न (रानी) में दीर्घतमा नामक मुनिने अङ्ग, बङ्ग, कलिङ्ग, सुद्धा और पीण्ड् नामक पाँच वालेय शतिय उत्पन्न किये ॥ १३ ॥ इन बलिपुत्रोंकी सन्ततिके नामानुसार पाँच देशोंके भी ये ही नाम पड़े ॥ १४ ॥ इनमेंसे अङ्गसे अनपान, अनपानसे दिविरथ, दिविरथसे धर्मरथ और धर्मरथसे चित्रस्थका जन्म हुआ किसका दूसरा नाम रोमपाद था । इस रोमपादके मित्र दशस्थजों थे, अजके पुत्र दशस्थजीने सेमपादको सन्तानतीन देखका उन्हें पुत्रीक्रपसे अपनी शान्ता नामकी कन्ता पोद दे दी थी ॥ १५ — १८ ॥

रोमपादका पुत्र चतुरंग था। चतुरंगके पृथुलाक्ष तथा पृथुलाक्षके चग्प नामक पुत्र हुआ जिसने चम्पा नामकी पुरी बसायी थी॥ १९-२०॥ चम्पके हर्यङ्ग नामक पुत्र हुआ, हर्यङ्गसे भद्रस्य, भद्रस्यसे वृहद्र्य, वृहद्र्यसे वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहद्र्यमें वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्कर्मी वृहत्वन्मी वृहत्वना ॥ २१-२२॥ जयद्रथकी बाह्मण और क्षत्रियके संसर्गसे उत्पन्न हुई पत्नीके गर्भसे विजय नामक पुत्रका जन्म हुआ॥ २३॥ विजयके पृति नामक पुत्र जन्म हुआ॥ २३॥ विजयके पृति नामक पुत्र हुआ, धृतिके धृतवत, धृतवतके सत्यकर्मा और सत्यकर्मीक अतिरथका जन्म हुआ जिसने कि । सानके लिये] गङ्गाजीमें जानेश पिटारोमें रखकर पृथाद्वार बहाये हुए कर्णको पुत्रक्पसे गाया था। इस कर्णका पुत्र वृषसेन था। बस, अङ्गवंश इतना हो है॥ २४— २९॥ इसके आगे पुत्रवंशका वर्णन सुनो॥ ३०॥

इति श्रीविष्गुपुराणे चतुर्थेऽशे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

-4514

उन्नीसवाँ अध्याय

पुरुवंश

श्रीपराशर डवाच

पुरोर्जनमेजयस्तस्यापि प्रचिन्वान् प्रचिन्वतः प्रचीरः प्रचीरान्मनस्युर्मनस्योश्चाभयदस्तस्यापि सुद्युस्सुद्योर्बहुगतस्तस्यापि संयातिस्संयातेरहंयाति-स्ततो रौद्राश्चः ॥ १ ॥

स्रतेषुकक्षेषुस्थाण्डलेषुकृतेषुजलेषुधर्मेषु-धृतेषुस्थलेषुसञ्जतेषुवनेषुनामानो रौद्राश्वस्य दश पुत्रा बभृतुः ॥ २ ॥ ऋतेषोरित्तनारः पुत्रोऽभृत् ॥ ३ ॥ सुमतिमप्रतिरथं धृवं चाष्यन्तिनारः पुत्रानवाप ॥ ४ ॥ अप्रतिरथस्य कण्वः पुत्रोऽभृत् ॥ ५ ॥ तस्यापि मेघातिथिः ॥ ६ ॥ यतः काण्वायना द्विजा वभृतुः ॥ ७ ॥ अप्रतिरथ-स्थापरः पुत्रोऽभृदैलीनः ॥ ८ ॥ ऐलीनस्य दुष्यन्ता-द्याश्वतारः पुत्रा वभृतुः ॥ ९ ॥ दुष्यन्ताद्यक्रवर्ती भरतोऽभृत् ॥ १० ॥ वन्नामहेतुर्देवैङ्गलोको गीयते ॥ ११ ॥

माता भस्ता पितुः पुत्रो येन जातः स एव सः । भरस्य पुत्रं दुष्यन्त मावमंस्थारशकुन्तलाम् ॥ १२

रेतोधाः पुत्रो नयति नरदेव यमक्षयात्। त्वं चास्य धाता गर्भस्य सत्यमाह शकुन्तला ॥ १३

भरतस्य पत्नीत्रये नव पुत्रा बभूवुः ॥ १४ ॥ नैते ममानुरूपा इत्यभिहितास्तन्यातरः परित्याग-भयात्तत्पुत्राञ्चष्टुः ॥ १५ ॥ ततोऽस्य वितये पुत्रजन्पनि पुत्रार्थिनो मस्त्सोमयाजिनो दीर्घतमसः पाच्ययपास्ताद्बुहस्पतिवीर्यादुतथ्यपत्न्यां ममतायां समुत्यत्रो भरद्वाजाख्यः पुत्रो मरुद्धिर्दतः ॥ १६ ॥ श्रीपराशरजी बोले—पुरुष्त पुत्र जनमेजय था। जनभेजयका प्रचिन्धान, प्रचिन्धान्का प्रवीर, प्रवीरका मनस्यु, मनस्युका अभयट, अभयदका सुद्यु, सुद्युका बहुगत, बहुगतका संयाति, संयातिका अहंयाति तथा अहंयातिका पुत्र सेंद्राश्च था॥ १॥

रौद्राश्चके ऋतेषु, कक्षेषु, स्थण्डिलेषु, कृतेषु, जलेषु, धर्मेषु, शृतेषु, स्थलेषु, सब्रतेषु और वनेषु नामक दस पुत्र धे ॥ २ ॥ ऋतेषुका पुत्र अन्तिनार हुआ तथा अन्तिनारके सुमति, अप्रतिरथ और धुव नामक तीन पुत्रोने बन्म रिखा ॥ ३-४ ॥ इनमेसे अप्रतिरथका पुत्र कण्य और कण्यका मैधार्तिथ हुआ जिसकी सन्तान काण्यायन बाह्मण हुए ॥ ५---७ ॥ अप्रतिरथका दूसरा पुत्र ऐलीन था ॥ ८ ॥ इस ऐलीनके दुब्बन्त आदि चार पुत्र हुए ॥ २ ॥ दुब्बन्तके यहाँ चक्रवर्ती सम्राद् भरतका जन्म हुआ जिसके नामके विषयमें देवगणने इस इलोकका यान

"माता तो केवल चमड़ेकी घोंकनीके समान है, पुत्रपर अधिकार तो पिताका हो है, पुत्र जिसके द्वारा जन्म प्रहण करता है उसीका स्वरूप होता है। हे दुष्यन्त ! सू इस पुत्रका पालन-पोषण कर, शकुन्तलाका अपमान न कर। हे नस्टेव ! अपने ही बीयंसे उत्पन्न हुआ पुत्र अपने पिताको यमलोकसे [उद्धार कर स्वर्गलोकको] ले जाता है। 'इस' पुत्रके आधान करनेवाले तुम्हीं हो'— शकुन्तलाने यह बात ठीक ही कही हैं ॥ १२-१३॥

भरतके तीन खियाँ थीं जिनसे उनके नी पुत्र हुए ॥ १४ ॥ भरतके यह कहनेपर कि, 'ये मेरे अनुरूप नहीं हैं', उनकी माताओंने इस भयसे कि, राजा हमको त्याग न दें, उन पुत्रोंको मार झाला ॥ १५ ॥ इस प्रकार पुत्र-जन्मके विफल हरें जानेसे भरतने पुत्रकी कामनासे मरूसोम नामक यहा किया । उस यज्ञके अन्तमें मरूदणने उन्हें भरद्वाज नामक एक बालक पुत्ररूपरो दिया जो उतस्थपती ममताके तस्यापि नामनिर्वचनश्लोकः पठाते ॥ १७ ॥ मूढे भर द्वाजिममं भर द्वाजं बृहस्पते । यातौ यदुक्त्वा पितरौ भरद्वाजस्ततस्त्वयम् ॥ १८

भरद्वाजस्य वितश्रे पुत्रजन्यनि मरुद्धिर्दनस्ततो वितश्रसंज्ञांमवाप ॥ १९ ॥ वितश्रस्यापि मन्युः पुत्रोऽभवत् ॥ २० ॥ वृहत्क्षत्रमहावीर्यनरगर्गा अभवन्यन्युपुत्राः ॥ २१ ॥ नरस्य सङ्कृतिस्सङ्कृते-गुंरुप्रोतिरन्तिदेवौ ॥ २२ ॥ गर्गाच्छिनिः, ततश्र गार्ग्याद्दशैन्याः क्षत्रोपेना द्विजातयो वभूवुः ॥ २३ ॥ महावीर्याच दुरुक्षयो नाम पुत्रोऽभवत् ॥ २४ ॥ तस्य त्रय्यारुणिः पुष्करिण्यो कपिश्च पुत्रयमभूत् ॥ २५ ॥ तद्य पुत्रत्रितयमपि पश्चाद्विप्रतामुपजगाम ॥ २६ ॥ वृहत्क्षत्रस्य सुद्दोत्रः ॥ २७ ॥ सुद्दोत्राद्धस्ती य इदं हस्तिनापुर-मावासयामास ॥ २८ ॥

अजमीरुद्विजमीरुपुरुमीरुख्यो हस्तिनस्तनयाः ॥ २९ ॥ अजमीढात्कण्यः ॥ ३० ॥ कण्यान्-मेधातिथिः ॥ ३१ ॥ यतः काण्वायना द्विजाः ॥ ३२ ॥ अजमीढस्यान्यः पुत्रो बृहदिषुः ॥ ३३ ॥ वृहदिषोर्वृहद्धनुर्वृहद्धनुषश्च बृहत्कर्मा ततश्च जयद्रथस्तस्मादपि विश्वजित् ॥ ३४ ॥ ततश्च सेनजित् ॥ ३५ ॥ रुचिराश्वकाश्यदृद्धहनुवत्सहनु-संज्ञास्तेनजितः पुत्राः ॥ ३६ ॥ रुचिराश्चपुत्रः पृथुसेनः पृथुसेनात्पारः ॥ ३७ ॥ पारात्रीलः ॥ ३८ ॥ तस्यैकशतं पुत्राणाम् ॥ ३९ ॥ तेषां प्रधानः काम्पिल्याधिपतिस्समरः ॥ ४० ॥ समरस्थापि पारसुपारसदश्चास्त्रयः पुत्राः ॥ ४१ ॥ सुपारात्पृथुः पृथोस्ससुकृतिस्ततो विभ्राजः ॥ ४२ ॥ तस्माद्याणुहः ॥ ४३ ॥ यश्शुकदुहितरं कोर्ति नामोपयेमे ॥ ४४ ॥ अणुहाद्ब्रह्मदत्तः ॥ ४५ ॥ ततश्च विषुवसेनस्तस्मादुदवसेनः ॥ ४६ ॥ भल्लाभस्तस्य चात्मजः ॥ ४७ ॥

गर्भमे स्थित दीर्थतमा मुनिके पाद-प्रहारसे स्कल्पित हुए बृहस्पतिजीके वीर्यसे उत्पन्न हुआ वा ॥१६॥ उसके नामकरणके विषयमें भी यह श्लोक कहा जाता है— ॥१७॥

"पुत्रोत्पत्तिके अनन्तर बृहस्पतिने ममतासे कहा—'हे मुढ़े! यह पुत्र द्वाज (हम दोनोंसे उत्पन्न हुआ) है तू इसका भरण कर।' तब ममताने भी कहा—'हे खुहस्पते! यह पुत्र द्वाज (हम दोनोंसे उत्पन्न हुआ) है अतः तुम इसका भरण करो।' इस प्रकार परस्पर जिजाद करते हुए उसके माता-पिता चले गये, इसलिये उसका नाम 'भरद्वाज' पड़ा''॥ १८॥

पुत्र-जन्म वितथ (विफल) होनेपर मरुदूणने राजा भरतको भरताज दिया था, इसिल्ये उसका नाम 'जितथ' भी हुआ ॥ १९ ॥ दितथका पुत्र मन्यु हुआ और मन्युके बृहस्थत्र, महानीर्य, नर और गर्म आदि कई पुत्र हुए ॥ २०-२१ ॥ नरका पुत्र संकृति और संकृतिक पुरुत्तीत एवं रन्तिरेव नामक दो पुत्र हुए ॥ २२ ॥ गर्मसे शिनिका जन्म हुआ जिससे कि गार्म्य और रीन्य नामसे विख्यात धत्रोपेत ब्राह्मण उसके हुए ॥ २३ ॥ महावीर्यका पुत्र दुक्शय हुआ ॥ २४ ॥ उसके त्रण्यासीय, पुक्तिरेण्य और किमानक तीन पुत्र हुए ॥ २५ ॥ ये तीनो पुत्र पिष्ठ ब्राह्मण हो गये थे ॥ २६ ॥ बृहस्थवका पुत्र सुहोत्र, सुहोत्रका पुत्र हस्ती था जिसने यह हरितनापुर नामक नगर ब्रह्माया था ॥ २७-२८ ॥

हलोके तीन पुत्र अजपोढ, द्विजमीड और पुरुषीढ थे । अजमीडके कण्व और कण्वके येघातिथि गामक पुत्र हुआ जिससे कि काण्यायन ब्राह्मण उत्पन्न हुए॥ २९—३२॥। अजमीदका दूसरा पुत्र वृहदिषु था।। ३३॥ उसके बृहद्भनु, बृहद्भनुके बृहत्कर्मा,⊤बृहत्कर्माके जयद्रथ, जयद्रथके विश्वजित् तथा विश्वजित्के सेनजित्का जन्म हुआ । सेर्नाजत्के रुचिगश्च, काश्य, दृढहनु और वसाहनु नामक चार पुत्र हुए॥ ३४— ३६॥ रुचिराधके पृथुसेन, पृथ्सेनके पार और पारके नीलका जन्म हुआ। इस नीलके सौ पुत्र थे. जिनमें काम्पिल्यनरेश समर प्रधान था ॥ ३७-—४० ॥ समस्के पार, सुपार और सदश्व नामक तीन पुत्र थे ॥ ४१ ॥ सुपारके पृथु, पृथुके सुकृति, सुकृतिके विभाव और विभावके अणुह् नामक पुत्र हुआ, जिसने शुक्कन्या कीर्तिसे विवाह किया था ॥ ४२ — ४४ ॥ अणुहरे ब्रह्मदत्तका जन्म हुआः। ब्रह्मदत्तसे विष्र्वसीन, विञ्चनसेनसे उदक्सेन तथा उदक्सेनसे मल्लाभ नामक पुत्र इत्पन्न हुआ। । ४५ — ४७ ॥ १ - ११ हिन्दी के कार है क

द्विजमीदस्य तु यबीनरसंज्ञः पुत्रः ॥ ४८ ॥ तस्यापि धृतिमास्तस्माच सत्यधृतिस्ततश्च दृढनेमिस्तरमाच सुपार्श्वस्ततसुमतिस्ततश्च सन्नतिमान् ॥ ४९ ॥ सन्नतिमतः कृतः पुत्रोऽभूत् ॥ ५० ॥ यं हिर्ण्यनाभो योगमध्यापयामास ॥ ५१ ॥ यश्चतुर्विशति प्राच्यसामगानां संहिताश्चकार ॥ ५२ ॥ कृताचोत्रायुधः ॥ ५३ ॥ येन प्राचुर्वेण नीपक्षयः कृतः ॥ ५४ ॥ उत्रायुधात्क्षेम्यः क्षेम्यात्सुधीरस्तरमाद्विपुञ्जय-

स्तरमाच बहुरथ इत्येते पौरवाः ॥ ५५ ॥ अजमीदस्य निलनी नाम पत्नी तस्यो नीलसंज्ञः पुत्रोऽभवत् ॥ ५६ ॥ तस्मादपि - ज्ञान्तिः शान्तेस्पुशान्तिस्पुशान्तेः पुरञ्जयस्तस्याद्य ऋक्षः ॥ ५७ ॥ ततश्च हर्यश्वः ॥ ५८ ॥ तस्मान्युद्रल-सुञ्जयबृहदिषुयवीनरकाम्पिल्यसंज्ञाः पञ्चानामेव तेषां विययाणां रक्षणायालमेते मत्पुत्रा इति पित्राधिहिताः पाञ्चालाः ॥ ५९ ॥

मुद्रलाच पौद्रल्याः क्षत्रोपेता द्विजातयो बभूवुः ॥ ६० ॥ मुद्रलाद्बृहदश्चः ॥ ६१ ॥ बृहदश्चाहिबोदासोऽहल्या च मिथुनमभूत् ॥ ६२ ॥ शर्द्धतश्चाहल्यायां शतानन्दोऽभवत् ॥ ६३ ॥ शतानन्दात्सत्यधृतिर्धनुर्वेदान्तगो जज्ञे ॥ ६४ ॥ सत्यधृतेर्वराप्सरसमुर्वर्शी दृष्ट्वा रेतस्कन्न शरस्तम्बे पपात ॥ ६५ ॥ तद्य द्विधागतमपत्यद्वयं कुमारः कन्या चाभवत् ॥ ६६ ॥ तौ च मृगया-मुपयातश्शान्तनुदृष्ट्वा कृपया जबाह ॥ ६७ ॥ ततः कुमारः कृषः कन्या चाश्वत्थाम्रो जननी कृपी द्रोणाचार्यस्य पत्यभवत् ॥ ६८ ॥

दिवोदासस्य पुत्रो मित्रायुः ॥ ६९ ॥ मित्रायोश्च्यवनो नाम राजा ॥ ७० ॥ च्यवना-त्सुदासः सुदासात्सौदासः सौदासात्सइदेवस्तस्यापि सोमकः ॥ ७१ ॥ सोमकाजन्तुः पुत्रशतज्येष्ठो-**ऽभवत् ॥ ७२ ॥ तेषां यवीयान् पृषतः पृषताद्**-दुपदस्तस्माच धृष्टद्युम्नस्ततो धृष्टकेतुः ॥ ७३ ॥

हिजमोडका पुत्र यबीनर था ॥ ४८ ॥ उसका धृतिमान्, धृतिमान्का सत्यपृति, सत्यपृतिका दृढनेमि, दृढनेमिका सुपार्श्व, सुपार्श्वका सुमति, सुमतिका सन्नतिषान् तथा सत्रविमान्का पुत्र कृत हुआ जिसे हिरण्यनाभने योगविद्याको शिक्षा दी थी तथा जिसने प्राच्य सामग श्रुतियोको चौबीस संहिताएँ रची थीं॥४९—५२॥ कृतका पुत्र अमायुध था जिसने अनेको नीपवंशीय क्षत्रियोंका नारा किया॥ ५३-५४॥ उषायुधके क्षेन्य, क्षेन्यके सुधीर, सुधीरके रिपुज्ञय और रिपुज्ञयसे बहुरधने जन्म लिखा। ये सम्ब पुरुवंशीय राजागण हुए ॥ ५५ ॥ । । अहरू । । तन अन्य । ।

ा अजमीडको नलिनीनासी एक भार्या थी। उसके नील नामक एक पुत्र हुआ ॥ ५६ ॥ नीलके शान्ति, शान्तिके सुशान्ति, सुशान्तिके पुरक्षय, पुरक्षयके ऋक्ष और ऋक्षके हर्येश नामक पुत्र हुआ॥ ५७-५८॥ हर्यक्षके मुद्रल, सुञ्जय,बृहरिषु, यबीनर और काम्पिल्य नामक पाँच पुत्र हुए। पिताने कहा था कि मेरे ये पुत्र मेरे आश्रित पाँचों देशोंकी रक्षा करनेमें समर्थ हैं, इसलिये वे पाछाल कहळाये ॥ ५९ ॥

मुद्रलसे मोद्रल्य नामक क्षत्रोपेत ब्राह्मणींकी उत्पत्ति हुई॥ ६०॥ मुद्रलसे बृहदध और बृहदधसे दिवोदास नामक पुत्र एवं अहत्या नामको एक कन्याका जना हुआ॥ ६१-६२॥ अहल्यासे महर्षि गीतमके द्वारा भतानन्दका जन्म हुआ॥६३॥ शतानन्दसे धनुर्वेदका चरदर्शी सत्यधृति उत्पन्न हुआ॥ ६४॥ एक बार अप्सएऑमें श्रेष्ठ उर्दशीको देखनेसे सत्यधृतिका वीर्य स्व्वर्रित होकर शरस्तम्ब (सरकण्डे) पर पड़ा ॥ ६५॥ उससे दो भागोंमें बँट जानेके कारण पुत्र और पुत्रीरूप दो सन्तानें उत्पन्न हुई ॥ ६६ ॥ उन्हें मृगसके लिये गये हुए राजा शान्तनु कृपाबहा हे आये ॥ ६७ ॥ तदनसर पुत्रका नाम कृप हुआ और कत्या अश्वस्थाधाकी माता होणाचार्यकी पत्नी कृषी हुई ॥ ६८ ॥

दिवोदासका पुत्र मित्रायु हुआ ॥ ६९ ॥ पित्रायुका पुत्र व्यवन नामक राजा हुआ, व्यवनका सुदास, सुदासका सौदास, सौदासका सहदेव, सहदेवका सोमक और सोमकके सी पुत्र हुए जिनमें जन्तु सबसे बड़ा और पृषत सबसे छोटा था। गृषतका पुत्र हुपद, दुपदका धृष्टद्युप्र और भृष्टचुप्रको पुत्र भृष्टकेतु था॥७०—७३॥

अजमीदस्थान्य ऋक्षनामा पुत्रोऽभवत् ॥ ७४ ॥
तस्य संवरणः ॥ ७५ ॥ संवरणात्कुरुः ॥ ७६ ॥
य इदं धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं चकार ॥ ७७ ॥
सुधनुर्जहुपरीक्षित्रामुखाः कुरोः पुत्रा बभूवुः ।
॥ ७८ ॥ सुधनुषः पुत्रस्सुद्दोत्रस्तस्माच्च्यवनरच्यवनात् कृतकः ॥ ७९ ॥ तत्रश्चोपरिचरो वसुः ।। ८० ॥ ब्हद्दश्यप्त्यश्रकुशाम्बकुचेलमास्यप्रमुखा वसोः पुत्रास्तप्ताजायन्त ॥ ८१ ॥
बृहद्दश्यत्कुशामः कुशाम्राद्वृषभो वृषभात्
पुष्पवान् तस्मात्सत्यहितस्तस्मात्सुधन्वा तस्य च जतुः ।। ८२ ॥ बृहद्दश्याद्यान्यश्यकलद्वयजनमा जस्या संहितो जरासन्धनामा ॥ ८३ ॥ तस्मात्सहदेवस्महदेवात्सोमपस्ततश्च श्रुतिश्रवाः ॥ ८४ ॥ इत्येते ।
मया मागधा भूपालाः कथिताः ॥ ८५ ॥

अजमीदका ऋक्ष तामक एक पुत्र और था ॥ ७४ ॥ उसका पुत्र संवरण हुआ तथा संवरणका पुत कुरु श जिसने कि धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्रकी स्थापना की ॥ ७५--७७ ॥ कुरुके पुत्र सुधनु, बहु और परीक्षित् आदि हुए॥७८॥ सुधनुका पुत्र सुहोत्र था, सुहोत्रका च्यवन, च्यवनका कृतक और कृतकका पुत्र उपरिचर वसु हुआ॥ ७९-८० ॥ वसुके बृहद्रथ, प्रत्यक्ष, कुशाम्बु, कुचेल और मास्य आदि सात पुत्र थे ॥ ८१ ॥ इनमेंसे बृहदथके कुशाय, कुशायके वृषभ, वृषभके पुष्पवान, पुरस्वान्के सत्यहित, सत्यहितके सुधन्या और सुधन्याके जतुका जन्म हुआ ॥ ८२ ॥ बृहद्रथके दो खण्डीमें विभक्त एक पुत्र और हुआ था जो कि जराके द्वारा जोड़ दिये जानेपर जरासन्य कहलाया ॥ ८३ ॥ उससे सहदेवका जन्म हुआ तथा सहदेवसे सोमप और सोमपसे श्रुतिश्रवाकी उत्पत्ति हुई ॥ ८४ ॥ इस प्रकार मैंने तुमसे यह मागध भृपाळेंका वर्णन कर दिया है ॥ ८५ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे एकोनिवंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

बीसवाँ अध्याय 🤍

कुरुके वंशका वर्णन

श्रीपराशर उनाच

परिक्षितो जनमेजयश्रुतसेनोश्रसेन-भीमसेनाश्चत्वारः पुत्राः ॥ १ ॥ जह्नोस्तु सुरशो नामात्मजो बभूव ॥ २ ॥ तस्यापि विदूरशः ॥ ३ ॥ तस्मात्सार्वभीमस्सार्वभीमाज्ययसेन-स्तस्मादाराधितस्ततश्चायुतायुरयुतायोरक्रोधनः ॥ ४ ॥ तस्मादेवातिश्चः ॥ ५ ॥ ततश्च ऋक्षोऽन्योऽभवत् ॥ ६ ॥ ऋक्षाद्वीमसेनस्ततश्च दिलीपः ॥ ७ ॥ दिलीपात् प्रतीपः ॥ ८ ॥

तस्यापि देवापिशान्तनुबाह्मीकसंज्ञास्तयः पुत्रा बभूबुः ॥ ९ ॥ देवापिबाँल एवारण्यं विवेश ॥ १० ॥ शान्तनुस्तु महोपालोऽभूत् ॥ ११ ॥ अयं च तस्य श्लोकः पृथिव्यां गीयते ॥ १२ ॥ श्रीपराशरजी बोले—[कुरुपुत्र] परीक्षित्के जनमेजय, श्रुतसेन, उप्रसेन और भीमसेन नामक चार पुत्र हुए, दथ। जहुके सुरथ नामक एक पुत्र हुआ ॥ १-२ ॥ सुरथके विदूरधका जन्म हुआ। विदूरधके सार्वभीम, सार्वभीमके जयत्सेन, जयत्सेनके आराधित, आराधितके अमुतायु, अयुतायुके अक्रोधन, अक्रोधनके देवातिथि तथा देवातिथिके [अजमीवके पुत्र ऋससे भित्र] दूसरे ऋसका जन्म हुआ ॥ ३—६ ॥ ऋससे भीमसेन, भीमसेनसे दिलीम और दिलीमसे प्रतीपनामक पुत्र हुआ ॥ ७-८ ॥

प्रतीपके देवापि, शासनु और बाह्नीक नामक तीन पुत्र हुए॥ ९॥ इनमेसे देवापि बाल्याबस्थामें ही बनमें चला गया था अतः शासनु ही सभा हुआ॥ १०-११॥ उसके विषयमें पृथिबीतलपर यह इस्लेक कहा जाता है॥ १२॥ यं यं कराभ्यां स्पृशति जीर्ण यौवनमेति सः । शान्तिचाप्नोतियेनाम्यां कर्मणा तेनशान्तनुः ॥ १३ तस्य च शान्तनो राष्ट्रे द्वादशवर्षाणि देवो न ववर्ष ॥ १४ ॥ ततश्चाशेषराष्ट्रविनाशमवेश्यासौँ राजा ब्राह्मणानपुच्छत् कस्मादस्माकं राष्ट्रे देवो न वर्षति

ततश्च तमूचुर्व्राह्मणाः ॥ १६ ॥ अग्रजस्य ते हीयमवनिस्त्वया सम्भुज्यते अतः परिवेत्ता त्वमित्युक्तस्स राजा पुनस्तानपृच्छत् ॥ १७ ॥ किं मयात्र विधेयमिति ॥ १८ ॥

को ममापराध इति ॥ १५ ॥

ततस्ते पुनरप्यूचुः ॥ १९ ॥ याबहेवापिर्ने पतनादिभिदंषिरभिभूवते ताबदेतत्तस्यार्ह राज्यम् ॥ २० ॥ तदलमेतेन तु तस्मै दीयतामित्युक्ते तस्य मन्त्रिप्रवरेणाश्मसारिणा तत्रारण्ये तपस्तिनो वेदवादिवरोधवक्तारः प्रयुक्ताः ॥ २१ ॥ तैरस्याप्यतिऋजुमतेर्महीपितपुत्रस्य बुद्धिवेद-वादिवरोधमार्गानुसारिण्यक्रियत् ॥ २२ ॥ राजा च शान्तनुद्धिजवचनोत्पन्नपरिदेवनशोकस्तान् ब्राह्मणानप्रतः कृत्वाव्रजस्य प्रदानावारण्यं जगाम ॥ २३ ॥

तदाश्रममुपगताश्च तमवनतमवनीपतिपुत्रं देवापिमुपतस्थुः ॥ २४ ॥ ते ब्राह्मणा वेदवादानु-वन्धीन वचांसि राज्यमप्रजेन कर्त्तव्यमित्यर्थवन्ति तमूचुः ॥ २५ ॥ असाविप देवापिवेंद्वादिवरोध-युक्तदूषितमनेकप्रकारं तानाह ॥ २६ ॥ ततस्ते ब्राह्मणारशान्तनुमूचुः ॥ २७ ॥ आगच्छ हे राजन्नलमन्नातिनिर्वन्धेन प्रशान्त एवासावनावृष्टि-दोषः पतितोऽयमनादिकालमहितवेदववन-दूषणोद्यारणात् ॥ २८ ॥ पतिते चाप्रजे नैव ते परिवेतृत्वं भवतीत्युक्तश्शान्तनुरस्खपुरमागम्य राज्यमकरोत् ॥ २९ ॥ वेदवादिवरोधवचनोद्यारण-दूषिते च तस्मिन्देवापौ तिष्ठत्यपि ज्येष्ठश्चातर्यस्थिल-सस्यनिष्यत्तये ववर्ष भगवान्यर्जन्यः ॥ ३० ॥

"[राजा भान्तन्] जिसको-जिसको अपने हाथसे सार्श कर देते थे वे वृद्ध पुरुष भी युवावस्था प्राप्त कर लेते थे तथा उनके स्पर्शसे सम्पूर्ण जीव अत्युक्तम शान्तिलाभ करते थे, इसलिये वे शान्तनु कहलाते थे" ॥ १३॥

एक बार महाराज शान्तनुके राज्यमें बारह वर्षतक वर्षा न हुई॥ १४॥ तस समय सम्पूर्ण देशको नष्ट होता देखकर राजाने बाहाणॉसे पूछा, 'हमारे राज्यमें वर्षा क्यों नहीं हुई ? इसमें मेरा क्या अपराध है ?'॥ १५॥

तब ब्राह्मणोंने उससे कहा—'यह एज्य तुम्हारे बड़े भाईका है किंतु इसे तुम भोग रहे हो; इसलिये तुम परिचेता हो।' उनके ऐसा कहनेपर राजा शान्तनुने उनसे फिर पूछा, 'तो इस सम्बन्धमें मुझे अब क्या करना चाहिये ?'॥ १६— १८॥

इसपर वे बाहाण फिर बोले— 'जबतक बुन्हारा बड़ा भाई देवापि किसी प्रकार पतित न हो तबतक यह राज्य उसीके योग्य हैं ॥ १९-२० ॥ अतः तुम इसे उसोको दे डालो, तुम्हारा इससे कोई प्रयोजन नहीं ?' ब्राह्मणींक ऐसा कहनेपर शान्तनुके मन्ती अश्मसारीने बेटबाटके विरुद्ध बोल्नेबाले तपस्वियोंको बनमें नियुक्त किया ॥ २१ ॥ उन्होंने आंतेशय सरलमति राजकुमार देवापिकी बुद्धिको बेदबादके विरुद्ध मार्गमे प्रवृत्त कर दिया ॥ २२ ॥ उधर राजा शान्तनु ब्राह्मणोंके कथनानुसार दुःख और शोकयुक्त होकर ब्राह्मणोंको आगेकर अपने बड़े भाईको राज्य देनेके लिये बनमें गये ॥ २३ ॥

वनमें पहुँचनेपर वे बाह्मणगण परम विनीत राजकमार देवापिके आश्रमपर उपस्थित हुए: और उससे 'ज्येष्ट भाताको ही राज्य करना चाहिये'—इस अर्थके समर्थक अनेक वेदानुकुल वाक्य कहने लगे ॥ २४-२५ ॥ किन् उस समय देखापिने वेदबादके विरुद्ध नामा प्रकारकी युक्तियोंसे द्वित बाते की ॥ २६ ॥ तब उन ब्राह्मणीने शान्तनुसे कहा— ॥ २७ ॥ "हे राजन् ! चलो, अब यहाँ अधिक आग्रह करनेकी आवश्यकता नहीं। अब अनार्वाष्ट्रका दोष शास्त्र हो गया। अनादिकालसे पञ्जित वेदवास्थोमें दोष बतलानेके कारण देवापि पतित हो गया है ॥ २८ ॥ ज्येष्ट भ्रान्नाके पतित हो जानेसे अब तुम परिवेता नहीं रहे ।'' उनके ऐसा कहनेपर शान्तन अपनी गुजधानीकी चर्ल आये और राज्यशासन करने लगे ॥ २९ ॥ बेदबादके विरुद्ध वचन बोलनेके कारण देवापिके पतित हो जानेसे, बड़े भाईके रहते हुए भी सम्पूर्ण भान्योंकी उत्पक्तिके छिये पर्जन्यदेव (मेघ) बरसने छगे ॥ ३० ॥

बाह्रीकात्सोयदत्तः पुत्रोऽभूत् ॥ ३१ ॥
सोमदत्तस्यापि भूरिभूरिश्रवः शल्यसंज्ञास्त्रयः पुत्रा
बभूवः ॥ ३२ ॥ शान्तनोरध्यमरनद्यां जाह्नव्यामुदारकीर्तिरशेषशास्त्रार्थविद्धीष्यः पुत्रोऽभूत्
॥ ३३ ॥ सत्यवत्यां च चित्राङ्गदविचित्रवीयौं द्वो
पुत्रावुत्पादयामास शान्तनुः ॥ ३४ ॥ चित्राङ्गदस्तु
बाल एव चित्राङ्गदेनैव गन्धवेणाहवे निहतः
॥ ३५ ॥ विचित्रवीयोऽपि काशिराजतनये
अम्बिकाम्बालिके उपयेमे ॥ ३६ ॥ तदुपभोगाति
स्वेदाद्य यक्ष्मणा गृहीतः स पञ्चत्वमगमत्
॥ ३७ ॥ सत्यवतीनियोगाञ्च मत्पुत्रः कृष्णद्वैपायनो मातुर्वचनमनतिक्रमणीयमिति कृत्वा
विचित्रवीयंक्षेत्रे धृतराष्ट्रपाण्डू तत्प्रहितभुजिष्यायां विदुरं चोत्पादयामास ॥ ३८ ॥

धृतराष्ट्रोऽपि गान्धायी दुर्योधनदुश्शासनप्रधानं पुत्रशतपुत्पादयामास ॥ ३९ ॥ पाण्डोरप्यरण्ये मृगयायामृषिशापोपहृतप्रजाजननसामर्थ्यस्य धर्म-वायुशक्रैर्युधिष्ठिरभीमसेनार्जुनाः कुन्त्यां नकुलसहदेवी चाश्चिष्यां माद्र्यां पञ्चपुत्रा-स्समुत्पादिताः ॥ ४० ॥ तेषां च द्रौपद्यां पञ्चैव पुत्रा बभूवुः ॥ ४९ ॥ युधिष्ठिरात्प्रतिविष्यः भीमसेनाच्छुतसेनः श्रुतकीर्त्तिरर्जुनाच्छुतानीको नकुरलाच्छुतकर्मा सहदेवात् ॥ ४२ ॥

अन्ये च पाण्डवानामात्मजास्तद्यथा ॥ ४३ ॥ यौधेयी युधिष्ठिराहेवकं पुत्रमवाप ॥ ४४ ॥ हिडिम्बा घटोत्कचं भीमसेनात्पृत्रं लेभे ॥ ४५ ॥ काशी च भीमसेनादेव सर्वगं सुतमवाप ॥ ४६ ॥ सहदेवाच किजया सुहोत्रं पुत्रमवाप ॥ ४७ ॥ रेणुमत्यां च नकुलोऽपि निरमित्रमजीजनत् ॥ ४८ ॥ अर्जुनस्वाण्युलूप्यां नागकन्यायामिरावान्नाम पुत्रोऽभवत् ॥ ४९ ॥ मणिपुरपतिपुत्र्यां पुत्रिका-धर्मेण वभ्रवाहनं नाम पुत्रमर्जुनोऽजनयत् ॥ ५० ॥ सुभद्रायां चार्थकत्वेऽपि योऽसावतिबलपराक्रम-स्समस्तारातिरथजेता सोऽभिमन्युरजायत् ॥ ५१ ॥ बाङ्कोकके सोमदत्त नामक पुत्र हुआ तथा सोमदत्तके मूरि, भूरिश्रवा और शस्य नामक तीन पुत्र हुए ॥ ३१-३२ ॥ शान्तनुके गङ्गाजीसे अतिशय कीर्तिमान् तथा सम्पूर्ण शास्त्रोंका जाननेवाला भीष्म नामक पुत्र हुआ ॥ ३३ ॥ शान्तनुने सत्यवतीसे चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र और भी उत्पन्न किये ॥ ३४ ॥ उनमेंसे चित्राङ्गदको तो बाल्यावस्थामें ही चित्राङ्गद नामक गन्धर्वने युद्धमें मार डाल्य ॥ ३५ ॥ विचित्रवीर्यने काशिसाजकी पुत्री अम्बिका और अम्बालिकासे विचाह

[अकालहोमें] मर गया ॥ ३७ ॥ तदनन्तर मेरे पुत्र कृष्णद्वैपायनने सत्यव्यतीके नियुक्त करनेसे माताका वचन टालना उचित न जान विचित्रवीर्यकी पविष्येंसे धृतराष्ट्र और पाण्डु नत्मक दो पुत्र उत्यत्र किये और उनकी भेजी हुई दासीसे विदुर नामक एक पुत्र उत्पत्र किया ॥ ३८ ॥ धृतराष्ट्रने भी गान्तारीसे दुर्योधन और दु:इससन आदि

किया ॥ ३६ ॥ उनमें अत्यन्त भोगासक्त रहनेके कारण अतिदाय खित्र रहनेसे यह यक्ष्माके यशीभृत होकर

सौ पुत्रोंको जन्म दिया ॥ ३९ ॥ पाण्डु वनमें आखेट करते समय ऋषिके शापसे सन्तानोत्पादनमें असमर्थ हो गये थे अतः उनको स्त्री कुन्तीसे धर्म, वायु और इन्द्रने क्रमशः पुषिष्ठिर, भीम और अर्जुन नामक तीन पुत्र तथा माद्रीसे दोनों अधिनीकुमारोंने नकुल और सहदेव नामक दो पुत्र उत्पन्न नित्र्ये । इस प्रकार उनके पाँच पुत्र हुए ॥ ४० ॥ उनमेंसे पुषिष्ठिरसे प्रतिविन्ध्य, भीमसेनसे श्रुतसेन, अर्जुनसे श्रुतकीर्ति, नकुलसे श्रुतानीक तथा सहदेवसे श्रुतकर्मीका जन्म हुआ था ॥ ४२ ॥ इनके अतिरिक्त पाण्डलोंके और भी कई पुत्र

इनक आतारक पाण्डवाक आर भा कह पुत्र हुए ॥ ४६ ॥ जैसे—-युधिष्ठिरसे यौधेयोके देवक नागक पुत्र हुआ, मीमसेनसे हिडिम्बाके घटोत्कव और काशीसे सर्वम नामक पुत्र हुआ, सहदेवसे किजयाके सुहोजका जन्म हुआ, नकुलने रेणुमतीसे निर्धमत्रको उत्पन्न किया ॥ ४४—-४८ ॥ अर्जुनके नामकन्या उल्प्रुमेसे इसकान् नामक पुत्र हुआ ॥ ४९ ॥ मीणपुर नरेशकी पुत्रीसे अर्जुनने पुत्रिका-घर्मानुसार बभुवाहन नामक एक पुत्र उत्पन्न किया ॥ ५० ॥ तथा उसके सुभदासे अभिमन्युका जन्म हुआ जो कि वाल्यावस्थामें ही बड़ा बल-पराक्रम-सम्पन्न तथा अपने सम्पूर्ण शहुओंको जीटनेवाला था॥ ५१ ॥ अभिमन्योस्तरायां परिक्षीणेषु कुरुष्वस्थाम-प्रयुक्तब्रह्माखेण गर्भ एव भस्मीकृतो भगवत-स्पकलसुरासुरवन्दितचरणयुगलस्यात्मेच्छ्या कारणमानुबरूपधारिणोऽनुभावात्पुनर्जीवित-मवाप्य परिक्षिज्ञज्ञे ॥ ५२ ॥ योऽयं साम्प्रतमेत-जूमण्डलमलण्डितायतिधर्मेणपालयतीति ॥ ५३ ॥ तदनत्तर, कुरुकुलके श्रीण हो जानेपर जो अग्नत्यामाके प्रहार किये हुए ब्रह्मासद्वारा गर्भमें ही भर्सीभूत हो चुका था किन्तु किर, जिन्होंने अपनी इच्छासे ही माया-भानव-देह भारण किया है उन सकल सुपसुरवन्दितचरणारविन्द श्रीकृष्णचन्द्रके प्रभावसे पुनः जीवित हो गया; उस परीक्षित्ने अभिमन्युके द्वाप उत्तराके गर्भसे जन्म लिया जो कि इस समय इस प्रकार धर्मपूर्वक सम्पूर्ण भूमण्डलका शासन कर रहा है कि जिससे मविष्यमें भी उसकी सम्पत्ति क्षीण न हो ॥ ५२-५३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे विशोऽध्यायः॥ २०॥

इक्कीसवाँ अध्याय

भविष्यमें होनेवाले राजाओंका वर्णन

औपराशर उदाव

अतः परं भविष्यानहं भूपालान्कीर्तयिष्यापि ।। १ ।। योऽयं साम्प्रतमवनीपतिः परीक्षित्तस्यापि जनमेजयश्रुतसेनोत्रसेनभीमसेनाश्चत्वारः पुत्रा भविष्यन्ति ।। २ ।। जनमेजयस्यापि हातानीको भविष्यति ।। ३ ॥ योऽसौ याज्ञवल्क्याहेदमधीत्य कृपादस्ताण्यवाप्य विषमविषयविरक्तवित्त-वृत्तिश्च शौनकोपदेशादात्मज्ञानप्रवीणः परं निर्वाणमवाप्यति ॥ ४ ॥ शतानीकादश्चमेधदत्तो भविता ॥ ५ ॥ तस्मादप्यधिसीमकृष्णः ॥ ६ ॥ अधिसीमकृष्णात्रिचकुः ॥ ७ ॥ यो गङ्गयापहते हस्तिनापुरे कौशास्त्र्यां निवत्त्यति ॥ ८ ॥

तस्याप्युष्णः पुत्रो भविता ॥ ९ ॥
उष्णाद्विचित्ररथः ॥ १० ॥ ततः शुचिरथः
॥ १९ ॥ तस्याद्वृष्णिमांस्ततस्युषेणस्तस्यापि
सुनीयस्तुनीयान्त्रपचक्षुस्तस्यादपि सुखावलस्तस्य
च पारिप्रवस्ततश्च सुनयस्तस्यापि मेधावी
॥ १२ ॥ मेधाविनो रिपुञ्जयस्ततो मृदुस्तस्याच्च
तिग्मस्तस्माद्बृहद्रथो बृहद्रथाद्वसुदानः ॥ १३ ॥
ततोऽपरश्चातानीकः ॥ १४ ॥ तस्माचोद्यन

श्रीपराशरजी खोले—अब मैं भविष्यमें होनेवाले राजाओंका वर्णन करता हूँ ॥ १ ॥ इस समय जो परीक्षित् नामक महाराज हैं इनके जनमेजय, श्रुतसेन, उपसेन और भीमसेन नामक चार पुत्र होंगे ॥ २ ॥ जनमेजयका पुत्र शतानीक होगा जो याज्ञबल्वयसे वेदाध्ययनकर, कृपसे शस्त्रविद्या प्राप्तकर विषम विषयोंसे विरक्तिचत्त हो महर्षि शौनकके उपदेशसे आत्मज्ञानमें निपुण होकर परमनिर्वाण-पद प्राप्त करेगा ॥ ३-४ ॥

शतानीकका पुत्र अश्वमेधदत्त होगा ॥ ५ ॥ उसके अधिसीमकृष्ण तथा अधिसीमकृष्णके निचक्क नामक पुत्र होगा जो कि गङ्गाजीद्वारा हस्तिनापुरके बहा से जानेपर कौशाम्बीपुरीमें निजस करेगा ॥ ६—८ ॥

निचद्रका पुत्र उष्ण होगा, उष्णका विचित्रस्य, विचित्रस्यका शुचित्रय, शुचित्रस्यका वृष्णिमान, वृष्णिमान्का सुषेण, सुषेणका सुनीध, सुनीधका नृप, नृपका चक्षु, चक्षुका सुखावल, सुखावलका पास्त्रिय, पारिप्रक्रका सुनय, सुनयका मेधावी, मेधावीका रिपुक्रय, रिपुक्षयका मृद्र, मृद्रका तिग्म, तिग्मका वृहद्रथ, बृहद्रथका चसुदान, चसुदानका दूसरा शतामीक, शतानीकका उदयनादहीनरस्ततश्च दण्डपाणिस्ततो निरमित्रः ॥ १५॥ तस्ताच क्षेमकः॥ १६॥ अत्रायं इलोकः॥ १७॥

ब्रह्मश्रुत्रस्य यो योनिर्वेशो राजर्षिसत्कृतः ।

क्षेमकं प्राप्य राजानं संस्थानं प्राप्स्यते कली ॥ १८

८६थन, उदयनका अहीनर, अहीनरका दण्डपाणि, ४ण्डपाणिका निर्रामत्र तथा निर्रामत्रका पुत्र क्षेमक होगा । इस विषयमें यह रुखेक प्रसिद्ध है— ॥ ९—१७ ॥

'जो यंश बाह्यण और क्षत्रियोंकी उत्पत्तिका कारणरूप तथा नाना राजवियोंसे सभाजित है वह कल्यिगमें राजा क्षेपके उत्पत्र होनेपर समाग्न हो जायगा' ॥ १८ ॥

-*-

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे एकविशोऽभ्यायः ॥ २१ ॥

बाईसवाँ अध्याय

भविष्यमें होनेवाले इक्ष्याकुवंशीय राजाओंका वर्णन

श्रीपरादार उवाच

अतश्चेश्वाकवो भविष्याः पार्थिवाः कथ्यने ॥ १॥ बृहद्वरुस्य पुत्रो बृहत्सणः॥ २॥ वत्सव्यूहस्ततश्च प्रति-तस्मादुरुक्षयस्तस्माद्य व्योमस्तस्माद्पि दिवाकरः ॥ ३ ॥ तस्मात्सहदेवः सहदेवाद्बृहदश्वस्तत्सूनुर्भानुस्थस्तस्य च प्रतीताश्व-सुप्रतीकस्ततश्च मरुदेवस्ततः स्तस्यापि सुनक्षत्रस्तस्मात्किन्नरः ॥ ४ ॥ किन्नरादन्तरिक्ष-स्तस्मात्सुपर्णस्ततश्चापित्रजित् ॥ ५ ॥ ततश्च बृहद्राजस्तस्यापि धर्मी धर्मिणः कृतञ्जयः ॥ ६ ॥ कृतञ्जयाद्रणञ्जयः ॥ ७ ॥ रणञ्जयात्मञ्जय-स्तस्माच्छावयरशाक्याच्छुद्धोदनस्तरमाद्राहुल-स्ततः प्रसेनजित्।। ८॥ ततश्च क्षुद्रकस्ततश्च कुण्डकस्तस्पादपि सुरश्नः ॥ ९ ॥ तत्पुत्रश्च

बृहद्दलान्वयाः ॥ ११ ॥ अत्रानुवंशरुलोकः ॥ १२ ॥

इक्ष्वाकूणामयं वंशस्तुमित्रान्तो भविष्यति । यतस्ते प्राप्य राजानं संस्थां प्राप्यति वैकलौ ॥ १३ श्रीपराशरजी बोले—अब मैं भविष्यमें होनेवाले इक्ष्याकुलंकीय राजाओंका वर्णन करता हूँ॥१॥ बृहद्वलका पुत्र बृहत्काण होगा, उसका उरुक्षय, उरुक्षयका

वत्सव्यृह, बत्सब्यूहका प्रतिव्योम, प्रतिव्योमका दिवाकर, दिवाकरका सहदेव, सहदेवका बृहदश, बृहदश्वना भानुस्थ, भानुस्थका प्रतीताश्व, प्रतीताश्वका सुप्रतीक,

सुप्रतीकका मरुदेव, मरुदेवका सुनक्षत्र, सुनक्षत्रका किन्नर, किन्नरका अन्तरिक्ष, अन्तरिक्षका सुपर्ण, सुपर्णका अमित्रजित्, अमित्रजित्का बृहदाज, बृहदाजका धर्मी, धर्मीका कृतञ्जय, कृतञ्जयका रणञ्जय, रणञ्जयका सञ्जय,

सञ्जयका शाक्य, शाक्यका शुद्धोदन, शुद्धोदनका शहुल, सहुलका प्रसेनजित्, प्रसेनजित्का शुद्रक, शुद्रकका कुण्डक, कुण्डकका सुरथ और सुरथका सुमित्र नामक पुत्र

होगा। ये सब इक्ष्माकुके वंदामें बृहद्भरकी सन्तान होंगे॥२—११॥

इस वंशके सम्बन्धमें यह स्लोक प्रसिद्ध है—॥१२॥

'यह इक्ष्याकुषंश राजा सुमित्रतक रहेगा, क्योंकि कलियुगमें राजा सुमित्रके होनेपर फिर यह समाप्त हो जायगा'॥ १३॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे द्वाविशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

तेईसवाँ अध्याय

यगधवंशका वर्णन

श्रीपरास उचाच

मागधानी बार्हद्रधानां भाविनामनुक्रमं कथबिष्यामि ॥ १ ॥ अत्र हि तंशे महावल-पराक्रमा जरासन्धप्रधाना बभुवुः ॥ २ ॥

जरासन्धस्य पुत्रः सहदेवः ॥ ३ ॥ सहदेवा-त्सोमापिस्तस्य श्रुतश्रवास्तस्याप्ययुतायुस्ततश्च निरमित्रस्तत्तनयस्तुनेत्रस्तस्माद्पि ॥ ४ ॥ ततश्च सेनजित्ततश्च श्रुतस्रयस्ततो विष्रस्तस्य च पुत्रइश्चिनामा भविष्यति ॥ ५ ॥ तस्यापि क्षेम्यस्ततश्च सुव्रतस्सुव्रताद्धर्मस्तत-दृहसेनः ॥ ७ ॥ स्सुश्रवाः ॥ ६ ॥ ततो तस्मात्सुबलः ॥ ८ ॥ सुबलात्सुनीतो भविता ॥ ९ ॥ ततस्सत्यजित् ॥ १० ॥ तस्माद्विश्वजित् ॥ ११ ॥ - तस्यापि - रिपुञ्जयः ॥ १२ ॥ वर्षसहस्रमेकं इत्येते बाईद्रधा भूपतयो भविष्यन्ति ॥ १३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—अब मैं मगधदेशीय बृहद्रधकी भावी सत्तानका अनुक्रमसे वर्णन करूँगा ॥ १॥ इस वंशमें महाबलवान् और पराक्रमी जरासन्ध आदि राजागण प्रधान थे॥ २॥

जरासन्थका पुत्र सहदेव है ॥ ३ ॥ सहदेवके सोमापि नामक पुत्र होना, सोमापिके श्रुतश्रवा, श्रुतश्रवाके अपुतायु, अयुतायुके निरमित्र, निरमित्रके सुनेत्र, सुनेत्रके बृहत्कर्मी, बृहत्कर्मीके सेनिजत, सेनिजत्के श्रुतश्रय, श्रुतश्रयके वित्र तथा वित्रके शृचि नामक एक पुत्र होगा ॥४-५ ॥ शुचिके क्षेम्य, क्षेम्यके सुवत, सुव्रतके धर्म, धर्मके सुश्रया, सुश्रयाके दृढसेन, दृढसेनके सुबल, सुवलके सुनीत, सुनीतके सत्यजित, सत्यजित्के विश्वजित् और विश्वजित्के रिपुष्ठयका जन्म होगा ॥ ६— १२ ॥ इस प्रवारसे बृहद्रधवंशीय राजागण एक सहस्र वर्षपर्यन्त मगधमे शासन करेंगे ॥ १३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे त्रसोविशोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चौबीसवाँ अध्याय

कलियुगी राजाओं और कलिधमींका वर्णन तथा राजवंदा-वर्णनका उपसंहार

श्रीपराञ्चर उदान्व

योऽयं रिपुञ्जयो नाम बाहंद्रश्रोऽन्यस्तस्यामात्यो सुनिको नाम भविष्यति ॥ १ ॥ स चैनं स्वामिनं हत्वा स्वपुत्रं प्रद्योतनामानमभिषेक्ष्यति ॥ २ ॥ तस्यापि बस्त्रकनामा पुत्रो भविता ॥ ३ ॥ ततश्च विद्यास्वयूपः ॥ ४ ॥ तत्पुत्रो जनकः ॥ ५ ॥ तस्य च नन्दिवर्द्धनः ॥ ६ ॥ ततो नन्दी ॥ ७ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—ब्हद्रथवंशका रिपुजय नामक जो अन्तिम राजा होगा उसका सुनिक नामक एक मन्त्री होगा। वह अपने स्वामी रिपुज्ञयको मारकर अपने पुत्र प्रद्योतका राज्याधिकेक करेगा। उसका पुत्र बलाक होगा, बलाकका विशासस्यूम, विशासस्यूमका जनक, जनकका नन्दिक्द्रीन तथा नन्दिक्द्रीनका पुत्र नन्दो होगा। ये पाँच प्रह्योतक्षशीय मुपतिगण एक सी अहतीस वर्ष इत्येतेऽ**ष्ट**त्रिशदुत्तरमञ्दशतं पञ्च प्रद्योताः पृथियौ _| पृथिवौका पालन करेगे ॥ १—८ ॥ भोक्ष्यन्ति ॥ ८ ॥

ततश्च शिशुनाभः ॥ ९ ॥ तत्पुत्रः काकवर्णी भविता ॥ १० ॥ तस्य च पुत्रः क्षेमधर्मा ॥ ११ ॥ तस्यापि क्षतीजाः ॥ १२ ॥ तत्पुत्रो विधिसारः ॥ १३ ॥ ततश्चाजातशत्रुः ॥ १४ ॥ तस्पादर्भकः ॥ १५ ॥ तस्माचोदयनः ॥ १६ ॥ तस्मादपि नन्दिवर्द्धनः ॥ १७ ॥ ततो महानन्दी ॥ १८ ॥ इत्येते शैशनाभा भूपालास्त्रीणि वर्षशतानि द्विषष्ट्रचिकानि भविष्यन्ति ॥ १९ ॥

महानन्दिनस्ततदशुद्धागभौद्धवोऽतिलुब्धोऽति-बलो महापद्मनामा नन्दः परशुराम इवापरो-ऽखिलक्षत्रान्तकारी भविष्यति ॥ २० ॥ ततः प्रभृति जुद्रा भूपाला भविष्यन्ति ॥ २१ ॥ स चैकच्छत्रामनुल्लङ्कितशासनो महापराः पृथिवी भोक्ष्यते ॥ २२ ॥ तस्याप्यष्टी सुनास्सुमाल्याद्या भवितारः ॥ २३ ॥ तस्य महापदास्यानु पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ २४ ॥ महापदापुत्राश्चैकं वर्षशतमवनीपतयो भविष्यन्ति ॥ २५ ॥ ततश्च नव चैतान्नन्दान् कौटिल्यो ब्राह्मणस्समुद्धरिष्यति ॥ २६ ॥ तेषामभावे मौर्याः पृथिवी भोक्ष्यन्ति ॥ २७ ॥ कोटिल्य एव चन्द्रगुप्तमुत्पन्नं राज्येऽभिषेक्ष्यति ॥ २८ ॥

तस्यापि पुत्रो बिन्दुसारो भविष्यति ॥ २९ ॥ तस्याप्यशोकवर्द्धनस्ततस्मुयशास्ततश्च दशरथ-स्ततश्च संयुतस्ततश्शालिशूकस्तस्मात्सोमशर्मा तस्यापि सोमदार्मणदद्यतधन्वा ॥ ३० ॥ तस्यापि बृहद्रधनामा भविता ॥ ३१ ॥ एवमेते मौर्य्या दश भूपतयो भविष्यन्ति अब्दशतं सप्तत्रिशदुत्तरम् ॥ ३२ ॥ तेषामन्ते पृथिवीं दश शृङ्गा भोक्ष्यन्ति ॥ ३३ ॥ पुण्यमित्रस्सेनापतिस्स्वामिनं हत्वा राज्यं करिष्यति तस्यात्मजोऽग्निमित्रः ॥ ३४ ॥ तस्मात्युज्येष्टस्ततो वसुमित्रस्तस्मादप्युदङ्कस्ततः पुलिन्दकस्ततो घोषवसुस्तस्माद्यि वद्रमित्रस्ततो

नन्दीका पुत्र शिशुनाभ होगा, शिशुनाभका काकवर्ण, काकवर्णका क्षेत्रधर्मा, क्षेत्रधर्माका शतीजा, क्षतीजाका विधिसार, विधिसारका अजातशत्रु, अजातशत्रुका अर्भक, अर्भकका उदयन, उदयनका नन्दिवर्द्धन और नन्दिवर्द्धनका पुत्र महानन्दी होगा। ये शिशुनाभवंशीय नृपतिमम् तीन सौ बासट वर्ष पृथिवीका शासन करेंगे ॥ ९—-१९॥

🕆 महानन्द्रीके स्ट्राके गर्भसे ३त्मन्न महापदा नामक नन्द दूसरे परशुरामके समान सम्पूर्ण क्षत्रियोंका नाश करनेवाला होगा । तत्त्रसे शुद्रजातीय राजा राज्य करेंगे । राजा महापदा सम्पूर्ण पृथिवीका एकच्छत्र और अनुल्लाङ्कृत राज्य-शासन करेगा । इसके सुमाठी आदि आउ पुत्र होंगे जो महापदाके पीछे पृथियोका राज्य भोगेंगे ॥ २० — २४ ॥ महापदा और उसके पुत्र सौ वर्षतक पृथिवीका शासन करेंगे। तदनन्तर इन नवीं नन्दोंको कौदित्यनामक एक बाह्मण नष्ट करेगा, उनका अन्त होनेपर मीये नृपतिगण पृथिवीको भोगेंगे। कौटिल्य ही (मुरा नामकी दासीसे नन्दद्वारः] उत्पन्न हुए चन्द्रगुप्तको राज्याभिषिक करेगा।॥२५—२८॥

चन्द्रगुप्तका पुत्र बिन्दुसार, बिन्दुसारका अशोकवर्द्धन, अशोकवर्द्धनका सुयशा, सुयशाका दशस्य, दशस्यका संयुत, संयुतका शालिश्क, शालिशुकका सोमशर्मा, सोमदार्माका रातथन्वा तथा रातथन्वाका पुत्र बृहद्रथ होगा। इस प्रकार एक सौ तिहत्तर वर्षतक ये दस मीर्यकंदरी राजा राज्य करेंगे॥२९—३२॥ इनके अनन्तर पृथिकीमें दस सुद्भवंशीय राजागण होंगे ॥ ३३ ॥ उनमें पहला पुष्यमित्र नामक सेनापति अपने स्वामीको मारकर स्वयं राज्य करेगा, उसका पुत्र अधिमित्र होगा ॥ ३४ ॥ अप्रिमित्रका पुत्र सुज्येष्ठ, सुज्येष्ठका वसुमित्र, वसुमित्रका उदेक, उदेककाः पुलिन्दक, पुलिन्दकका कोपयसु, बोपयसुका वज्रभित्रः वज्रमित्रका

भागवतः ॥ ३५ ॥ तस्मादेवभूतिः ॥ ३६ ॥ इत्येते शुङ्गा द्वादशोत्तरं वर्षशतं पृथिवीं भोक्ष्यन्ति ॥ ३७ ॥

ततः कण्यानेषा भूयांस्यति ॥ ३८ ॥ देवभूतिं तु शुङ्गराजानं व्यसनिनं तस्यैवामात्यः काण्यो वसुदेवनामा तं निहत्य स्वयमवर्नी भोक्ष्यति ॥ ३९ ॥ तस्य पुत्रो भूमित्रस्तस्यापि नारायणः ॥ ४० ॥ नारायणात्पजसमुक्षमां ॥ ४९ ॥ एते काण्यायनाश्चत्वारः पञ्च-चत्वारिंशहुर्याणि भूपतयो भविष्यन्ति ॥ ४२ ॥

सुशर्माणं तु काण्वं तद्भृत्यो बलिपुच्छकनामा हत्वान्त्रजातीयो वसुधां भोक्ष्यति ॥ ४३ ॥ ततश्च कृष्णनामा तद्भाता पृथिवीपतिर्भविष्यति ॥ ४४ ॥ तस्यापि पुत्रः शान्तकर्णिस्तस्यापि पूर्णोत्सङ्गस्तत्पुत्रश्शातकर्णिस्तस्यादरन्थोदर-

पूणात्सङ्गस्तत्पुत्रश्शातकाणस्तस्माद्यरुष्टादरस्तस्माद्य पिलकस्ततो मेघस्वातिस्ततः
पटुमान् ॥ ४५ ॥ तत्रश्चारिष्टकर्मा ततो
हालाहलः ॥ ४६ ॥ हालाहलात्पललकस्ततः
पुलिन्दसेनस्ततः सुन्दरस्ततश्शातकणिंस्ततदिशवस्वातिस्तवश्च गोमितपुत्रस्तत्पुत्रोऽलिमान्
॥ ४७ ॥ तस्यापि शान्तकणिंस्ततः शिवश्चितस्ततश्च शिवस्कन्धस्तस्माद्दि यज्ञश्चीस्ततो
द्वियज्ञस्तस्माद्यन्त्रश्चीः ॥ ४८ ॥ तस्मात्पुलोमाचिः
॥ ४९ ॥ एवमेते त्रिशद्यस्वार्यब्दशतानि षद्पञ्चाशद्धिकानि पृथिवीं भोक्ष्यन्ति आन्ध्रभृत्याः
॥ ५० ॥ सप्ताभीरप्रभृतयो दश्च गर्दभिलाश्च
भूमुजो भविष्यन्ति ॥ ५१ ॥ तत्रष्टाङ्गाः
भूपतयो भवितारः ॥ ५२ ॥ तत्रश्चाष्ट्रौ
यवनाश्चतुर्दश तुरुष्कारा मुण्डाश्च त्रयोदश एकादश्च
मौना एते वै पृथिवीपतयः पृथिवीं दशवर्षशतानि

ततश्च एकादशः भूषतयोऽब्दशतानि त्रीणि पृथिवी भोक्ष्यन्ति ॥ ५४ ॥ तेषूत्सन्नेषु कैङ्किला यवना भूषतयो भविष्यन्त्यमृद्धीभिषिक्ताः ॥ ५५ ॥

नवत्यधिकानि भोक्ष्यन्ति ॥ ५३ ॥

भागवत और भागवतका पुत्र देवपूत होगा ॥ ३५-३६ ॥ ये शुंगनरेश एक सौ बारह वर्ष पृथिवीका भोग करेंगे ॥ ३७ ॥

इसके अनन्तर यह पृथिवी कण्य मूपालीके अधिकारमें चली जायगी॥ ३८॥ झूंगवंशीय अति व्यसनशील राजा देवभूतिको कण्ववंशीय वसुदेव नामक उसका मन्त्री मारकर खयं राज्य भोगेगा॥ ३९॥ उसका पुत्र भूमित्र, भूमित्रका नारायण तथा नारायणका पुत्र सुशर्मी होगा॥ ४०-४९॥ ये चार काण्य भूपतिगण पैतालीस वर्ष पृथिवीके अधिपति रहेंगे॥ ४२॥

कण्ववंशीय सुशर्माको उसका बलिपुच्छक नामवाला आन्धजातीय सेवक मारकर स्वयं पृथिवीका भोग करेगा ॥ ४३ ॥ उसके पीछे उसका भाई कृष्ण पृथिवीका स्वामी होगा॥४४॥ उसका पुत्र शान्तकॉर्ण होगा। शानाकर्णिका पुत्र पूर्णोत्संग, पूर्णोत्संगका शातकर्णि, शातकर्णिका लम्बोदर, लम्बोदरका पिलक, पिलकका मेघस्वाति, मेघस्वातिका पटुमान्, पटुमान्का अरिष्टकर्मा, अरिष्टकर्माका हालाहळ, हालाहळका पळळक, पललकका पुलिन्दसेन, पुलिन्दसेनका सुन्दर, सुन्दरका द्यातकाणि, (दूसरा) ज्ञातकर्णिका ज्ञिवस्वाति, शिवस्वातिका गोमतिपुत्र, गोमतिपुत्रका अस्मिन्, अस्मिमान्का शान्तकर्णि [दूसरा], शान्तकर्णिका शिवश्रित, शिवश्रितका शिवस्कर्थ, शिवस्कर्थका यज्ञश्री, यज्ञश्रीका द्वियज्ञ, द्वियज्ञका चन्द्रश्री तथा चन्द्रश्रीका पुत्र पुलोपाचि होगा॥४५—४९॥ इस प्रकार ये तीस आन्ध्रभृत्य राजागण चार सी छप्पन वर्ष पृथिवीको भोगेंगे ॥ ५० ॥ इनके पीछे सात आभीर और दस गर्दभिल राजा होंगे ॥ ५१ ॥ फिर सोलह शक राजा होंगे ॥ ५२ ॥ उनके पीछे आट यवन, चौदह तुर्क, तेरह मुण्ड (गुरुण्ड) और ग्यारह भीनजातीय राजालोग एक हजार नक्ने वर्ष पृथिवीका शासन करेंगे ॥ ५३ ॥

इनमेंसे भी स्थारह मीन राजा पृथिवीको तीन सौ वर्षतक भोगेंगे॥ ५४॥ इनके उच्छित्र होनेपर कैंकिल नामक यवनजातीय अभिषेकरहित राजा होंगे॥ ५५॥ तेषामपत्यं विन्ध्यशक्तिस्ततः पुरञ्जयस्तस्मा-द्रामचन्द्रस्तस्माद्धर्मवर्मा ततो वङ्गस्ततोऽभूत्रन्दन-स्ततस्तुनन्दी तद्भाता नन्दियशाश्शुकः प्रवीर एते वर्षशतं षड्वर्षाणि भूपतयो भविष्यन्ति ॥ ५६ ॥ ततस्तत्पुत्रास्त्रयोदशैते बाह्मिकाश्च त्रयः ॥ ५७ ॥ ततः पुष्पमित्राः पदुमित्रास्त्रयोदशैकलाश्च सप्तान्धाः ॥ ५८ ॥ ततश्च कोशलायां तु नव चैव भूपतयो भविष्यन्ति ॥ ५९ ॥ नैषधास्तु त एव ॥ ६० ॥

मगधायां तु विश्वस्फटिकसंज्ञोऽन्यान्वर्णान्करियति ॥ ६१ ॥ कैवर्तबदुपुलिन्दब्राह्मणात्राज्ये स्थापियव्यति ॥ ६२ ॥
उत्साद्याखिलक्षत्रजाति नव नागाः पद्मावत्यां नाम
पुर्यामनुगङ्गाप्रवागं गयायाञ्च मागधा गुप्नाश्च
भोक्ष्यन्ति ॥ ६३ ॥ कोशलान्धपुण्ड्ताम्रलिप्तसमुद्रतटपुरीं च देवरिक्षतो रिक्षता ॥ ६४ ॥
कलिङ्गमाहिषमहेन्द्रभौमान् गुहा भोक्ष्यन्ति ॥ ६५ ॥
कलिङ्गमाहिषमहेन्द्रभौमान् गुहा भोक्ष्यन्ति ॥ ६५ ॥
कलिङ्गमाहिषमहेन्द्रभौमान् गुहा भोक्ष्यन्ति ॥ ६५ ॥
वैषयनिमिषककालकोशकाञ्चनपदान्मणिधान्यकवंशा भोक्ष्यन्ति ॥ ६६ ॥
वैराज्यमुषिकजनपदान्कनकाह्नयो भोक्ष्यति ॥ ६७ ॥ सौराष्ट्रावन्तिशुद्राभीरात्रमंदामरुभूविषयोश्च ब्रात्यद्विजाभीरशुद्राद्या भोक्ष्यन्ति ॥ ६८ ॥
काश्मीरविषयाश्च ब्रात्यद्विकोर्वीचन्द्रभागाकाश्मीरविषयाश्च ब्रात्यर्वेक्षशुद्राद्यो मोक्ष्यन्ति ॥ ६९ ॥

एते च तुल्यकालासस्ते पृथित्र्या भूभुजो भविष्यन्ति ॥ ७० ॥ अल्पप्रसादा वृहत्कोपा-स्तर्वकालमनृताधर्मरुवयः स्त्रीबालगोवधकत्तारः परस्वादानरुवयोऽल्पसारास्त्रमिस्त्रप्राया उदिता-स्तिमत्रप्राया अल्पायुषो महेन्छा हाल्पधर्मा लुक्याञ्च भविष्यन्ति ॥ ७१ ॥ तेञ्च विमिश्रा जनपदास्तन्छीलानुवर्त्तिनो राजाश्रयशुष्पिणो म्लेन्डाश्चार्याश्च विपर्ययेण वर्त्तमानाः प्रजाः क्षपयिष्यन्ति ॥ ७२ ॥

उनका यंशाधर विश्वयशक्ति होगा। विश्वयशक्तिका पुत्र पुरक्षय होगा। पुरक्षयका रामचन्द्र, रामचन्द्रका धर्मवर्मा, धर्मवर्माका वंग, वंगका नन्दन तथा नन्दनका पुत्र शुनन्दी होगा। सुनन्दीके नन्दियशा, शुक्र और प्रवीर ये तीन भाई होंगे। ये सब एक सी छः वर्ष राज्य करेंगे॥ ५६॥ इसके पीछे तेरह इनके वंशके और तीन बाह्यिक राजा होंगे॥ ५७॥ उनके बाद तेरह पुष्पमित्र और पटुमित्र आदि तथा सात आन्त्र गाण्डलिक भूपतिगण होंगे॥ ५८॥ तथा ती राजा क्रमशः कोसलदेशमें राज्य करेंगे॥ ५९॥ निषधदेशके स्वामी भी ये ही होंगे॥ ६०॥

मगधदेशमें विश्वस्फटिक नामक राजा अन्य वर्णीको प्रवृत्त करेगा ॥ ६१ ॥ यह कैयर्त, वट, पुलिन्द और बाह्मणोंको राज्यमें नियुक्त करेगा॥ ६२ ॥ सम्पूर्ण क्षत्रिय-जातिको उन्छित्र कर पद्मावतीपुरीमे जगगण तथा गंगाके निकटवर्ती प्रयाग और गयामें मागथ और गुप्त राजालीम राज्य भीम करेंगे॥ ६३॥ कोसल, आन्ध, पण्ड, ताम्रक्षित्र और समुद्रतटवर्तिनी पुरीकी देवरिका नामक एक राजा रक्षा करेगा ॥ ६४ ॥ कल्किङ्ग, माहिष, महेन्द्र और भीम आदि देशोंको गृह नरेश भीगेंगे ॥ ६५ ॥ नैषध, नैमिषक और कालकोशक आदि जनपदोंको धणि-धान्यक-वंदीय राजा भोगेंगे ॥ ६६ ॥ त्रैराज्य और मुक्कि देशोंपर कनक नामक राजाका राज्य क्षेगा ॥ ६७ ॥ सौराष्ट्र, अवन्ति, शुद्र, आभीर तथा नर्मदा-तटवर्ती परुभृमिपर वात्य द्विज, आभीर और शुद्र आदिका आशिपत्य होगा ॥ ६८ ॥ समुद्रतट, दाविकोर्वी, चन्द्रभागा और काइमीर आदि देशोंका बात्य, म्लेच्छ और शुद्र आदि राजागण भोग करेंगे ॥ ६९ ॥

ये सम्पूर्ण राजालीग पृथियोमें एक ही सपदमें होंगे ।। ७० ॥ ये थोड़ी प्रस्नवतावाले, अत्यन्त कोषी, सर्वरा अधर्म और मिश्या भाषणमें र्राच रखनेताले, स्वी-बालक और मौओंको हत्या करनेवाले, पर-धन-हरणमें रांच रखनेवाले, अल्परांक तमः प्रधान उत्थानके साथ ही पतनशील, अल्पायु, पहती कामनावाले, अल्पपुण्य और अत्यन्त लोगी होंगे ॥ ७१ ॥ ये सप्पूर्ण देशोको परस्पर मिला देंगे तथा उन राजाओंक आश्रयसे ही बलवान् और उन्हेंकि स्वभावका अनुकरण करनेवाले म्हेंच्छ तथा आर्यिवपरीत आचरण करते हुए सारी प्रजाको नष्ट भ्रष्ट कर देंगे ॥ ७२ ॥

र्जगतस्सङ्कयो भविष्यति ॥ ७३ ॥ ततश्चार्य एवाभिजनहेतु: ॥ ७४ ॥ बलमेवारोषधमहेतु: ॥ ७५ ॥ अभिरुचिरेव दाम्यत्यसम्बन्धहेतुः ॥ ७६ ॥ स्त्रीत्वमेवोपभोगहेतुः ॥ ७७ ॥ अनुतमेव व्यवहारजयहेतुः ॥ ७८ ॥ उन्नताम्बुर्तव पृथिबीहेतुः ॥ ७९ ॥ ब्रह्मसूत्रमेव विश्रत्वहेतुः ॥ ८० ॥ स्त्रधातुतैव इलाध्यताहेतुः ॥ ८१ ॥ लिङ्गधारणमेवाश्रमहेतुः ॥ ८२ ॥ अन्याय एव वृत्तिहेतुः ॥ ८३ ॥ दौर्बल्यमेवावृत्तिहेतुः ॥ ८४ ॥ अभयप्रगल्भोद्यारणमेव पाण्डित्यहेतः ॥ ८५ ॥ अनाड्यतैय साध्त्वहेतुः ॥ ८६ ॥ स्त्रानमेव प्रसाधनहेतुः ॥ ८७ ॥ दानमेव धर्महेतुः ॥ ८८ ॥ स्वीकरणमेव विवाहहेतुः ॥ ८९ ॥ सद्वेषधार्येव पात्रम् ॥ १० ॥ दरायतनोदकमेव तीर्थहेतः ॥ ९१ ॥ कयटवेषधारणमेव महत्त्वहेतः ॥ ९२ ॥ इत्येवमनेकदोषोत्तरे तु भूमण्डले सर्ववर्णेष्ट्रेव यो यो बलवान्स स भूपति-भीविष्यति ॥ १३ ॥ एवं चातिलुव्यकराजासहाश्शैलानामन्तर-द्रोणीः प्रजासंश्रयिष्यन्ति ॥ ९४ ॥ मधुशाकपूलफलपत्रपुष्पाद्याहाराश्च भविष्यन्ति

ततशानुदिनमल्पाल्पहासव्यवच्छेदा-हुर्पार्थयो-

त्राणाः प्रजाससभयिष्यांना ॥ ९४ ॥
मधुसाकपूलफलपत्रपुष्पाद्याहाराश्च भविष्यन्ति
॥ ९५ ॥ तस्वल्कलपर्णचीरप्रावरणाश्चातिबहुप्रजाश्चीतवातातपवर्षसहाश्च भविष्यन्ति
॥ ९६ ॥ न च कश्चित्त्रयोविशतिवर्षाणि
जीविष्यति अनवरतं चात्र कल्युगे श्चयमायात्यिखल एवैष जनः ॥ ९७ ॥ श्रौते स्मातें च धर्मे
विध्नवमत्यन्तमुपगते श्लीणप्राये च कलावशेषजगत्त्रश्चश्चराचरगुरोरादिमध्यान्तरहितस्य ब्रहासयस्यात्मरूपिणो भगवतो वासुदेवस्यांशश्चाम्यस्यात्मरूपिणो भगवतो वासुदेवस्यांशश्चाम्यस्यात्मरूपिणो भगवतो वासुदेवस्यांशश्चाम्यस्यात्मरूपिणान्त्राह्मणस्य विष्णुवश्चसो
गृहेऽष्टुगुणिर्द्धसमन्वितः कल्किरूपी जगत्यत्रावतीर्यसकलम्लेच्छदस्यदुष्टाचरणचेतसामशेषाणामपरिच्छित्रशक्तिमाहात्स्यः क्षयं करिष्यति

तब दिन-दिन धर्म और अर्थका थोड़ा-धोड़ा हास तथा क्षय होनेके कारण संसारका क्षय हो जायगा ॥ ७३ ॥ उस समय अर्थ ही कुळीनताका हेतु होगा; बल ही सम्पूर्ण धर्मका हेत् होगा; पारसरिक रुचि ही दाणत्य-सम्बन्धकी हेत होगी, स्रोत्व ही उपभोगका हेत् होगा | अर्थात स्रीकी जाति-कल आदिका विचार न होगा]; मिथ्या भाषण ही व्यवहारमें सफलता प्राप्त करनेका हेतु होगा; जलकी स्ळभता और सुगमता ही पृथिवीकी स्वीकृतिका हेतु होगा [अर्थात् पुण्यक्षेत्रादिका कोई विचार न होगा । जहाँकी जलवायु उत्तम होगी वही भूमि उत्तम मानी जायगी]; चज़ोपचीत ही बाहाणत्वका हेतु होगा; रक्षादि घारण करन। ही प्रशंसाका हेत् होगा: बाह्य चिद्ध ही आश्रमीके हेत् होंगे: अन्याय ही आजीविकाका हेतु होगा; दुर्गलता ही वेकारीका हेतु होगा; निर्भयतापूर्वक भृष्टताके साथ बोलगा ही पाण्डित्यका हेत् होगा, निर्धनता ही साध्त्यका हेत् होगी; स्नाम हो साधनका हेतु होगा; दान हो धर्मका हेत् होगा: स्वीकार कर लेना ही विवाहका हेत् होगा [अर्थात् संस्कार आदिकी अपेक्षा न कर पारस्परिक खेहबन्धनसे ही दाम्पला-सम्बन्ध स्थापित हो जायगा]; भरते प्रकार बन-उनकर रहनेवाला ही सुपात्र समझा जायगाः; दुरदेशका जल ही तीशींदकलका हेतु होगा तथा छदावेश धारण हो गौरवका कारण होगा॥ ७४—९२॥ इस प्रकार पश्चितीमण्डलमें विविध दोषोंके फैल जानेसे सभी वर्णोपें जो-जो बलवान् होगा वही-वही राजा बन बैटेगा॥ ६३॥

इस प्रकार अतिलोलुप राजाओंक कर-भारको सहम न कर सकनेक कारण प्रजा पर्वत-कन्दराओंका आश्रय लेगी तथा मधु, हाक, मूल, फल, पत्र और पुप्प आदि खाकर दिन काटेगी॥ १४-९५॥ यूक्षाँक पत्र और वलकल ही उनके पहनने तथा ओढ़नेके कपड़े होंगे। अधिक सन्ताने होंगी। सब लोग शीत, यायु, पाम और वर्षा आदिक कष्ट सहेंगे॥ ९६॥ कोई भी तेईस वर्षतक जीवित न रह सकेगा। इस प्रकार किल्युगमें यह सम्पूर्ण जनसमुदाय निरत्तर क्षीण होता रहेगा॥ ९७॥ इस प्रकार श्रीत और स्मार्तभर्मका अल्पन्त हास हो जाने तथा कलिशुगके प्रायः बीत जानेपर शम्बल (सम्प्रल) यामनिवासी ब्राह्मणश्रेष्ठ विष्णुयशाके घर सम्पूर्ण संसारके रचयिता, चराचर गुरु, आदिमध्यान्तशून्य, ब्रह्ममय, आत्मखरूम मगवान् बासुदेव अपने अंशसे अप्टेश्वर्ययुक्त कल्किरूपसे संसारमें अवतार लेकर असीम शक्ति और माहाक्यसे खधमेंबु चाखिलमेव संस्थापविष्यति ॥ ९८ ॥ अनन्तरं चारोषकलेखसाने निशावसाने विबुद्धा-नामित्र तेषामेव जनपदानाममलस्फटिकविञ्चा मतयो भविष्यन्ति ॥ ९९ ॥ तेषां बीजभूतानामशेषमनुष्याणां परिणतानामपि तत्कालकृतापत्यप्रसृतिर्भविष्यति ॥ १०० ॥ तानि च तदपत्पानि कृतयुगानुसारीण्येष भविष्यन्ति ॥ १०१ ॥

अत्रोच्यते

यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिच्यो बृहस्पतिः । एकराशौँ समेष्यन्ति तदा भवति वै कृतम् ॥ १०२ अतीता वर्त्तमानाश्च तथैवानागताश्च ये । एते वंशेषु भूपालाः कथिता मुनिसत्तम ॥ १०३ यावत्परीक्षितो जन्म यावत्रन्दाभिषेचनम् । एतद्वर्षसहस्रं तु ज्ञेयं पञ्चाशदुत्तरम् ॥ १०४ सप्तर्षीणां तु यौ पूर्वी दुश्येते ह्यदितौ दिवि । तयोस्तु मध्ये नक्षत्रं दृश्यते यत्समं निशि ॥ १०५ तेन सप्तर्षयो युक्तास्तिष्ट्रन्यब्दशतं नृणाम् । ते तु पारीक्षिते काले मघास्वासन्दिजोत्तम ॥ १०६ तदा प्रवृत्तश्च कलिद्वीदशाब्दशतात्मकः ॥ १०७ यदैव भगवान्विष्णोरंशो यातो दिवं द्विज । वसुदेवकुलोद्धतस्तदैवात्रागतः कलिः ॥ १०८ यावत्स पादपद्माभ्यां पस्पर्शेमां वस्नधराम् । तावत्पृथ्वीपरिषुङ्गे समर्थो नाभवत्कलिः ॥ १०९ गते सनातनस्यांशे विष्णोस्तत्र भुवो दिवम् । तत्याज सानुजो राज्यं धर्मपुत्रो सुधिष्ठिरः ॥ ११० विपरीतानि दृष्टा च निमित्तानि हि पाण्डवः । याते कृष्णे चकाराथ सोऽभिषेकं परीक्षितः ॥ १११ प्रयास्यन्ति यदा चैते पूर्वाषाढां महर्षयः । तदा नन्दात्प्रभृत्येष गतिवृद्धिं गमिष्यति ॥ ११२

सम्पन्न हो सकल म्लेच्छ, दस्यू, दुशाचारी तथा दुश चित्तीका क्षय करेंगे और समस्त प्रवाको अपने-अपने धर्ममें नियुक्त करेंगे॥ ९८॥ इसके पश्चात् समस्त कलियुगके समाप्त हो जानेपर रात्रिक अन्तमें जागे हुओंके समान तत्कालीन लोगोंकी युद्धि खच्छ, सहिटकमणिके समान निर्मल हो जानगी ॥ ९९ ॥ उन बीजभूत समस्त मनुष्योते उनकी अधिक अवस्था होनेपर भी उस समय सन्तान उत्पन्न हो सकेगी॥ १००॥ उनकी वे सन्तानें सत्ययुगके ही धर्मीका अनुसरण करनेवाली होगी ॥ १०१ ॥

इस विषयमें ऐसा कहा जाता है कि — जिस समय चन्द्रमा, सूर्य और बृहस्पति पुष्पनक्षत्रमें स्थित होकर एक रादित्पर एक साथ आर्थेंगे उसी समय सत्ययुगका आरम्भ हो जायमा 🕈 ॥ १०२ ॥

हे मुनिश्रेष्ठ ! तुमसे मैंने यह समस्त वंशोंके भृत, भविष्यत् और वर्तमान सम्पूर्ण राजाओंका वर्णन कर दिया ॥ १०३ ॥

परीक्षित्के जन्मसे नन्दके अभिषेकतक एक हजार पचास वर्षका समय जानमा चाहिये॥ १०४॥ सप्तर्षियोमेंसे जो [पुरुक्त्य और ऋतु] दो नक्षत्र आकाशमें पहले दिखायी देते हैं, उनके बोचमे ग्रक्ति समय जो [दक्षिणोगर रेशापर] समदेशमें स्थित [अश्विमी आदि] नक्षात्र हैं, उनमेंसे प्रलेक नक्षत्रपर सप्तर्षिगण एक-एक सी वर्ष रहते हैं । हे द्विबोत्तम ! परीक्षित्के समयमे वे सप्तर्षिगण मघानश्चपर थे । उसी समय बारह सौ वर्ष प्रमाणवाला कल्पियुन आरम्भ हुआ शा ॥ १०५— १०७ ॥ हे द्विज ! जिस्र समय भगवान् विष्ण्के अंज्ञावतार भगवान् वास्ट्रेव निजधामको प्रधारे थे उसी समय पृथिबीपर कल्पियुगका अग्रममन हुआ था ॥ १०८ ॥

जबतक भगवान् अपने चरणकमलीसे इस पृथिवीका स्पर्श करते रहे तबनक पृथिवीसे संसगे करनेकी किल्युगकी हिम्मत न पड़ी ॥ १०९ ॥

सनातन पुरुष भणवान् विष्णुके अंशावतार श्लोकणाचन्द्रके स्वर्गलोक प्रधारनेपर भाइयोक सहित धर्मपुत्र महाराज युधिष्ठिरने अपने राज्यको छोड़ दिया ॥ ११० ॥ कृष्णचन्द्रके अन्तर्धान हो जानेपर विपरीत <u>छक्षणीको देखकर पाण्डवीन परीक्षितको राज्यपदपर</u> अभिषिक्त कर दियाः॥ १११ ॥ जिस समय ये सप्तर्षिगण पूर्वीवादानक्षत्रपर जायंगे उसी समय राजा नन्दके समयसे

[🔭] यद्यपि प्रति बारहवे वर्ष जब बृहस्पति कर्बज्ञाङ्गिपर जाते हैं तो अमाबास्पातिधिको पुष्यनक्षप्रपर इन तीनी प्रहीका योग होता है, तथापि 'स्टोब्यन्ति' पदसे एक साथ आयेषर एक्ययुगका आरम्भ कहा है; इसलिये उक्त समयपर अतिक्याप्तिदीय नहीं है 🕕

यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मित्रेव तदाहनि । प्रतिपञ्च कल्पियुगं तस्य संख्यां निबोध मे ॥ ११३ त्रीणि लक्षाणि वर्षाणां द्विज मानुष्यसंख्यया । पष्टिश्चैव सहस्राणि भविष्यत्येष वै कलि: ॥ ११४ ञ्चतानि तानि दिव्यानां सप्त पञ्च च संख्यया । निइञ्जेषेण यते तस्मिन् भविष्यति पुनः कृतम् ॥ ११५ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याश्शृहाश्च द्विजसत्तम । युगे युगे महात्मानः समतीतास्महस्रशः ॥ ११६ बहुत्वान्नामधेयानां परिसंख्या कुले कुले । पौनरुक्त्याद्धि साम्याच न मया परिकोर्त्तिता ॥ ११७ देवापिः पौरवो राजा पुरुश्चेक्ष्वाकुवंशजः। महायोगबलोपेतौ कलापन्नामसंश्रितौ ॥ ११८ कृते युगे त्विहागम्य क्षत्रप्रवर्तकौ हि तौ । भविष्यतो मनोर्वंशबीजभूतौ व्यवस्थितौ ॥ ११९ एतेन कमयोगेन मनुपूत्रैर्वसुन्धरा। कृतत्रेताद्वापराणि युगानि त्रीणि भूज्यते ॥ १२० कलौ ते बीजभूता वै केचित्तिष्ठन्ति वै मुने । यथैव देवापिपुरू साम्प्रतं समधिष्ठितौ ॥ १२१ एष तुद्देशनो वंशस्तवोक्तो भूभूजां मया। निखिलो गदितुं शक्यो नैत्र वर्षशर्तरपि ॥ १२२ एते चान्ये च भूपाला यैरत्र क्षितिमण्डले । कृतं ममत्वं मोहान्धैर्नित्वं हेयकलेवरे ॥ १२३ कथं ममेयमचला मतुत्रस्य कथं मही। महूंशस्पेति चिन्तार्ता जम्मुरन्तमिमे नृपाः ॥ १२४ तेभ्यः पूर्वतराश्चान्ये तेभ्यस्तेभ्यस्तशा परे । भविष्याश्चैव यास्यन्ति तेषामन्ये च येऽप्यनु ॥ १२५ बिलोक्यात्पजयोद्योगे यात्राव्यप्राप्तराधिपान् । पुष्पप्रहासैदशरदि हसन्तीव वसुन्धरा ॥ १२६

मैन्नेय पृथिवीगीताञ्चलोकांश्चात्र निबोध मे ।

यानाह धर्मध्वजिने जनकायासितो मुनिः ॥ १२७

किल्युगका प्रभाव बहेगा॥ ११२॥ जिस दिन भगवान् कृष्णचन्द्र परमधामको गये थे उसी दिन किल्युग उपस्थित हो गया था। अब तुम किल्युगको वर्ष-संख्या सुनो — ॥ ११३॥

है द्विज ! मानवी वर्षगणनाके अनुसार करिसुग तीन तम्ब साठ हजार वर्ष रहेगा ॥ ११४ ॥ इसके पश्चात् वारह सौ दिव्य वर्षपर्यन्त कृतयुग रहेगा ॥ ११५ ॥ है द्विजक्षेष्ठ ! प्रत्येक युगमें हजारों ब्राह्मण, शत्रिय, वैश्य और शृद महास्मागण हो गये हैं ॥ ११६ ॥ उनके बहुत अधिक संख्यामें होनेसे तथा समानता होनेके कारण कुलोमें पुनरुक्ति हो जानेके भयसे मैंने उन सबके नाम नहीं बतताये हैं ॥ ११७ ॥

पुरुवंशीय राजा देवापि तथा ११वाकुकुलोत्पन्न राजा पुरु—रे दोनों अत्यन्त योगबलसम्पन्न है और कलापप्राममें रहते हैं॥११८॥ सत्ययुगका आरम्भ होनेपर ये पुनः मर्त्यलोकों आकर धान्निय-कुलके प्रवर्तक होंगे। वे आगामी मनुबंशके बीजरूप हैं॥११९॥ सत्ययुग, तेशा और द्वापर इन तीनों युगोमें इसी क्रमसे मनुपुत्र पृथिवीका भीग करते है॥१२०॥ फिर कलियुगमें उन्होंनेशे कोई-कोई आगामी मनुसन्तानके बीजरूपसे स्थित रहते हैं जिस प्रकार कि अवकल देवापि और पुरु हैं॥१२१॥

असर पुरु ह ॥ १२१ ॥
इस प्रकार मैने तुमसे सम्पूर्ण राजवंशोंका यह संक्षित्र वर्णन कर दिशा है, इनका पूर्णतया वर्णन तो सी वर्षमें भी नहीं किया जा सकता ॥ १२२ ॥ इस हेय शरीरके मोहसे अन्ये हुए ये तथा और भी ऐसे अनेक भूपतिगण हो गये हैं जिन्होंने इस पृथिवीमण्डलको अपना-अपना माना है ॥ १२६ ॥ 'यह पृथिवी किस प्रकार अवलभावसे मेरी, मेरे पुत्रकी अथवा मेरे वंशकी होगी?' इसी चिन्तामें व्याकुल हुए इन सभी राजाओंका अन्त हो गया ॥ १२४ ॥ इसी चिन्तामें हुवे रहकर इन सम्पूर्ण राजाओंके पूर्व-पूर्वतरवर्ती राजालीम चले गये और इसीमें मन्न रहकर आग्रमी भूपतिगण भी मृत्यु-मुंखमें चले जायँगे॥ १२५ ॥ इस प्रकार अपनेकी जीतनेके लिये राजाओंको अथक उद्योग करते देखकर मसुन्यर शरतकालीन पुत्रमेंके रूपमें मानो हैंस रही है ॥ १२६ ॥

हे मैंब्रेय ! अब तुम पृथिवीके कहे हुए कुछ इलोकोंको सुनो। पूर्वकालमें इन्हें ऑसत मुनिने धर्मध्यजी राजा जनकको सुनाया था॥ १२७॥

प्रविञ्यवाच कथमेष नरेन्द्राणां मोहो बुद्धिमतामपि। येन फेनसधर्माणोऽप्यतिविश्वस्तवेतसः ॥ १२८ पूर्वपात्मजयं कृत्वा जेतुमिच्छन्ति मन्तिणः । ततो भृत्यांश्च पौरांश्च जिगीक्ते तथा रिपून् ॥ १२९ क्रमेणानेन जेव्यामो वयं पृथ्वीं ससागराम् । इत्यासक्तिधियो मृत्युं न पञ्चन्त्यविदुरगम् ॥ १३० समुद्रावरणं याति भूमण्डलमथो वशम्। कियदात्मजयस्थैतन्युक्तिरात्पजये फलम् ॥ १३१ उत्सुज्य पूर्वजा साता यां नादाय गतः पिता । तां मामतीवमूढत्वाजेतुमिच्छन्ति पार्थिवाः ॥ १३२ मत्कृते पितृपुत्राणां भ्रातृणां चापि वित्रहः । जायतेऽत्यन्तमोहेन ममत्वादृतचेतसाम् ॥ १३३ पृथ्वी ममेर्य सकला ममैबा मदन्वयस्यापि च शाश्वतीयप्। यो यो मृतो हात्र बभूव राजा कुबुद्धिरासीदिति तस्य तस्य ॥ १३४ ममत्वादुतचित्तमेकं दुष्टा विहास मा मृत्युवर्श व्रजन्तम् । तस्यानु यस्तस्य कथं ममत्वं हद्यास्पदं मत्प्रभवं करोति ॥ १३५ ममेषाञ्च परित्यजैनां बदन्ति ये दूतमुखैसवशत्रुन्। नराधिपास्तेषु ममातिहासः पुनश्च मूढेषु दयाभ्युपैति ॥ १३६

श्रीपगदार उवाच इत्येते धरणीगीतादश्लोका मैत्रेय यैदश्रुताः । ममस्वं विलयं याति तपत्यकें यथा हिमम् ॥ १३७ इत्येष कथितः सम्यङ्गनोर्वशो मया तव । यत्र स्थितप्रवृत्तस्य विष्णोरंशांशका नृपाः ॥ १३८ शृणोति य इमं भक्त्या मनोर्वशपनुक्रमात् । तस्य पापमशेषं वै प्रणश्यत्यमलात्मनः ॥ १३९

पृथिवी कहती है—अहो ! युद्धिमान् होते हुए भी इन राजाओंको यह कैसा मोह हो रहा है जिसके कारण य बुलबुलेके समान क्षणस्थायी होते हुए भी अपनी स्थिरतामें इतना विश्वास रखते हैं॥ १२८॥ ये छोग प्रथम अपनेको जीतते हैं और पित्र अपने मन्तियोंको तथा इसके अनन्तर ये क्रमशः अपने भृत्य, पुरवासी एवं शत्रुओंको जीतना चाहते हैं ॥ १२९ ॥ 'इसी क्रमसे हम समुद्रपर्यंत्त इस सम्पूर्ण पृथियोको जीत छेंगे' ऐसी बुद्धिसे मोहित हुए ये लोग अपनी निकटवर्तिनी मृत्युको नहीं देखते ॥ १३० ॥ यदि समुद्रसे धिरा हुआ यह सम्पूर्ण भूमण्डल अपने बहामे हो ही जाय तो भी मनोजयकी अपेक्षा इसका गुल्य ही क्या है ? क्योंकि मोक्ष तो मनोजयसे ही प्राप्त होता है ॥ १३१ ॥ जिसे छोड़कर इनके पूर्वज चले गये तथा जिसे अपने साथ लेकर इनके पिता भी नहीं गये उसी मुझको अत्यन्त मुर्खताके कारण ये राजालोग जीतना चाहते हैं ॥ १३२ ॥ जिनका चित ममहामय है उन पिता-पुत्र और भाइयोंभे अत्यन्त मोहके कारण मेरे ही छिये परस्पर करूह होता है।। १३३॥ जो-जो राजालोग यहाँ हो चुके हैं उन सभीको ऐसी कुबुद्धि रही है कि यह सम्पूर्ण पृथियो मेरी हो है और मेरे पीछे यह सदा मेरी सन्तानकी ही रहेपी ॥ १३४ ॥ इस प्रकार मेरेमें ममता करनेवाले एक राजाको, मुझे छोड़कर मृत्युके मुखमें जाते हुए देखकर भी। न जाने कैसे उसका उत्तराधिकारी अपने इदयमें मेरे लिये। ममताको स्थान देता है ? ॥ १३५ ॥ जो राजाकोग दुताँकु हारा अपने रानुओंसे इस प्रकार कहत्वते हैं कि 'यह पृथिनी मेरी है तुमलोग इसे तुरन्त छोड़कर चले जाओं। उन्पर मुझे बडी हैसी आती है और फिर उन मुढीपर मुझे दया भी आ काती है ॥ १३६ ॥

श्रीपराशरजी बोरहे — हे मैंबेय ! पृथियोंके कहे हुए, इन इस्त्रोकों जो पुरुष सुनेगा उसकी ममता इसी प्रकार छीन हो जायगो जैसे सूर्यके तपते समय बर्फ दिशस्त्र जाता है ॥ १३७ ॥ इस प्रकार भैंने तुमसे भस्त्री प्रकार मनुके वंशका वर्णन कर दिया जिस वंशके राजागण स्थितिकारक भगवान् विष्णुके अंश-के-अंश थे॥ १३८ ॥ जो पुरुष इस मनुवंशका क्रमशः श्रवण करता है उस शुद्धात्माके सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं॥ १३९ ॥

धनधान्यद्भिमतुलां प्राप्नोत्यव्याहतेन्द्रयः । श्रुत्वैवमस्विलं वंशं प्रशस्तं शशिसूर्ययोः ॥ १४० इक्ष्वाकुजह्नमान्धातृसगराविक्षितात्रधून् । ययातिनहृषाद्यांश्च ज्ञात्वा निष्ठामुपागतान् ॥ १४१ महाबलान्महावीर्याननन्तधनसञ्चयान् कृतान्कालेन बलिना कथाशेषात्रसधिपान् ॥ १४२ श्चत्वा न पुत्रदारादी गृहक्षेत्रादिके तथा। द्रव्यादी वा कृतप्रज्ञो ममत्वं कुरुते नरः ॥ १४३ तम् तपो यैः पुरुषप्रवीर-रुद्वाहुभिर्वर्षगणाननेकान्<u></u> इष्ट्रा सुयज्ञैर्बलिनोऽतिबीर्याः कृता मु कालेन कथावशेषाः ॥ १४४ पृथुस्समस्तान्विचचार लोका-नव्याहतो यो विजितारिचक्रः । सं कालवाताभिहतः प्रणष्टः क्षिप्तं यथा शाल्मलितूलमत्रो ॥ १४५ यः कार्तवीयों बुभुजे समस्ता-न्द्वीपान्समाक्रम्य हतारिचकः। कथाप्रसङ्गेष्ट्रभिधीयमान-स्स एव सङ्कल्पविकल्पहेतुः ॥ १४६ द्शाननाविश्वितराघवाणा-मेश्चर्यमुद्धासितदिङ<u>्</u>चर्यानाम् भस्मापि शिष्टं न कथं क्षणेन धिगत्तकस्य ॥ १४७ भूभङ्कपातेन कथाशरीरत्वमवाप मान्धातृनामा भुवि चक्रवर्ती । श्रुत्वापि तत्को हि करोति साधु-मेंमत्वमात्मन्यपि मन्दचेताः ॥ १४८ भगीरथाद्यासम्परः ककुत्स्थो दशाननो राधवलक्ष्मणौ च । बभृवुरेते युधिष्ठिसद्याश सत्यं न मिथ्या क्र नु ते न विद्यः ॥ १४९

जो मनुष्य जितेन्द्रिय होकार सूर्य और चन्द्रपाके इन प्रशंसनीय वंशोंका सम्पूर्ण वर्णन सुनता है; वह अतुलित धन-धान्य और सम्पत्ति प्राप्त करता है॥ १४०॥ महाबलवान्, महावीर्थशाली, अनन्त धन सञ्चय करनेवाले तथा परम निष्ठावान् इक्ष्वाकुः, जहुः, मान्यातः, सगर, अविक्षित, रघुवंशीय राजापण तथा नहुष और ययाति आदिके परित्रोको सुनकर, जिन्हें कि कालने आज कथानात्र ही रोप रखा है, प्रज्ञावान् मनुष्य पुत्र, खी, गृह, क्षेत्र और घन आदिमें ममता न करेगा ॥ १४१ — १४३ ॥ जिन पुरुषक्षेष्ठीने कर्ध्वबाहु होकर अनेक वर्षपर्यन्त कठिन तपस्या को थी तथा विविध प्रकारके यज्ञीका अनुष्ठान किया था, आज उन आति बलवान् और वीर्यशाली राजाओकी कालने केवल कथामात्र ही छोड़ दी है ॥ १४४ ॥ जो पृथु अपने शबुसमृहको जीतकर खच्छन्द-गतिले समस्त लोकोमें विचरता था आज वही काल-वायुकी प्रेरणासे अग्रिमें फेके हुए सेमस्की रूईके डेरके समान नष्ट-अष्ट हो गया है ॥ १४५ ॥ जो कार्तवार्य अपने शत्रु-मण्डलका संहारकर समस्त द्वीपीकी वशीभूतकर उन्हें भोगता था वही आज कथा-प्रसंगसे वर्णन करते समय उल्ह्या संकल्प-विकल्पका हेतु होता है ि अर्थात् उसका वर्णन करते समय यह सन्देह होता है कि वास्तवमें वह हुआ था या नहीं।] ॥१४६ ॥ समसा दिशाओंको देदीप्यमान करनेवाले रावण, आविश्वित और रामचन्द्र आदिके [शणभङ्गर] ऐधर्यको धिकार है। अन्यथा कालके क्षणिक कटाक्षपातके कारण आज उसका भस्पमात्र भी क्यों नहीं कच सका ? ॥ १४७ ॥ जो माञ्चाता सम्पूर्ण भूमण्डलका चक्रवर्धी सञ्चार था आज उसका केवल कथामें ही पता चलता है। ऐसा कीन मन्द्बुद्धि होगा जो यह सुनकर अपने इसीरमें भी ममता करेगा ? [फिर पृथियों आदिमें ममता करनेकी तो बात ही क्या है ?] ॥ १४८ ॥ भगोरध, सगर, ककुतस्थ, राबण, रामचन्द्र, लक्ष्मण और युधिष्ठिर आदि पहले हो। गये हैं यह बात सर्वधा लत्य है, किसी प्रकार भी मिथ्या नहीं है; किन्तु अब वे वाही है इसका हमें पता

नहीं ॥ १४९ ॥ '

ये साम्प्रतं ये च नृपा भविष्याः

्रप्रोक्ता मया विप्रवरोगवीर्याः ।

एते तथान्ये च तथाभिधेयाः

्सर्वे भविष्यन्ति यथैव पूर्वे ॥ १५०

एतद्विदित्वा न नरेण कार्य

ममत्वपात्मन्यपि पण्डितेन ।

man to firm the specific of the second specific

तिष्ठन्तु तावत्तनयात्पजाद्याः

क्षेत्रादयो ये च शरीरिणोऽन्ये ॥ १५१

हे विप्रवर ! वर्तमान और भविष्यत्कालीन जिन-दिन महत्वीर्यशाली राजाओंका मैंने वर्णन किया है ये तथा अन्य लोग भी भूवीक राजाओंकी भाति कथामात्र शेष रहेंगे॥ १५०॥

ऐसा जानकर पुत्र, पुत्री और क्षेत्र आदि तथा अन्य प्राणी तो अलग रहें, बुद्धिमान् मनुष्यको अपने शरीरमें भी ममता नहीं करनी चाहिये॥ १५१॥

4 1. TH ... TH ... T

। विद्यान स्थापन विद्यापन । हो

्राप्ति । १९ । व्यापारीय

F-75 7 70 10

ीश्वर्यम् । स्था सम्बद्ध

भेका । समा विकास

ा मिना है

क स्टब्स्या व्यापा । विश्व विश्व

-१ - विन स्वास्त्रहरीतस्थातमः १८३०

THE RESERVE OF THE PERSON OF T

T: अर्च हैं हैं है - विकास

F. BE TREE

प्राह्मक पी क्षाप

-pool (การ แล้ว การในการ

THE PARTY OF THE P

-1 0 (3 - (1) (1 P) P

FRESE W

इति श्रीबिष्णुपुराणे चतुर्थेऽशे चतुर्विशोऽध्यायः॥ २४ ॥ 🦈

इति श्रीपराशरमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके श्रीमति विष्णुमहापुराणे चतुर्थोऽशः समाप्तः। श्रीमञ्जासम्माय नमः

श्रीविष्णुपुराण

पञ्चम अंश

पहला अध्याय

वसुदेव-देवकीका विवाह, भारपीडिता पृथिवीका देवताओंके सहित श्रीरसमुद्रपर जाना और भगवान्का प्रकट होकर उसे धैर्य वैधाना, कृष्णावतारका उपक्रम

श्रीमैत्रेय उदाच

नृपाणां कथितस्तवां भवता वंशविस्तरः । वंशानुचरितं चैव यथावदनुवर्णितम् ॥ १ अंशावतारो ब्रह्मषें योऽयं यदुकुलोद्भवः । विष्णोस्तं विस्तरेणाहं श्रोदुमिन्छामि तत्त्वतः ॥ २ चकार यानि कर्माणि भगवान्युरुषोत्तमः । अंशांशेनावतीयोंच्यां तत्र तानि मुने वद् ॥ ३

श्रीपरासर उया च मैत्रेय श्रूयतामेतद्यस्पृष्टोऽहमिह त्वया । विष्णोरंशांशसम्भूतिचरितं जगतो हितम् ॥ ४ देवकस्य सुतां पूर्वं वसुदेवो महामुने । उपयेमे महाभागां देवकीं देवतोपमाम् ॥ ५ कंसस्तयोवंररथं चोदयामास सारिधः । वसुदेवस्य देवक्याः संयोगे भोजनन्दनः ॥ ६ अधान्तरिक्षे वागुर्वैः कंसमाभाष्य सादरम् । मेघगम्भीरिनिर्घोषं समाभाष्येदमद्रवीत् ॥ ७ वामेतां वहसे मृद्ध सह भन्नां रथे स्थिताम् । अस्यास्तवाष्टमो गर्भः प्राणानपहरिष्यति ॥ ८

श्रीपगशर उवान इत्याकण्यं समुत्पाट्य खड्नं कंसो महाबलः । देवकीं हन्तुमारब्धो समुदेवोऽब्रवीदिदम् ॥ ९ श्रीमैंत्रेयजी बोले—भगवन् ! आपने राजाओंके सम्पूर्ण वंशोंका विस्तार तथा उनके बरित्रोंका क्रमशः यथावत् वर्णन किया ॥ १ ॥ अव, हे बहावें ! यदुकुलमें जो भगवान् विष्णुका अंशावतार हुआ था, उसे मैं तत्वतः और विस्तारपूर्वक सुनना चाहता हूँ ॥ २ ॥ हे मुने ! भगवान् पुरुषोत्तमने अपने अंशांद्रासे पृथिवीपर अवतीर्ण होकर जो-जो कर्ग किये थे उन सबका आप मुझसे वर्णन कीजिये ॥ ३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे पैत्रेय! तुमने मुझसे जो पूछा है वह संसारमें परम मङ्गलकारी भगवान विष्णुके अशावतारका चरित्र सुनी ॥ ४ ॥ हे महामुने । पूर्वकालमें देवककी महाभान्यशादिनी पुत्री देवीसकपा देवकिक साथ वसुदेवजीने विवाह किया ॥ ५ ॥ वसुदेव और देवकिक वैवादिक सम्बन्ध होनेक अनक्तर [विदा होते समय] भोजनन्दन कस सार्राय बनकर उन दोनोका माङ्गांकक रथ हाँकिने लगा ॥ ६ ॥ उसी समय मेघके समान गम्भीर घोष करती हुई आकाश्रधाणी कंसको ऊँचे खासे सम्बोधन करके वो बोले— ॥ ७ ॥ "और मूद ! पतिक साथ रथपर बैठी हुई जिस देवकीको तू लिये जा रहा है इसका आठवाँ गर्भ तेरे प्राण हर लेगा" ॥ ८ ॥

श्रीपराशरजी बोले---यह सुनते ही महाबली केस [म्यानसे] खड्ग निकालकर देवकोको मारनेके लिये उद्यत हुआ। तब वसुदेवजी यों कहने लगे----॥ ९॥ न हत्त्तव्या महाभाग देवकी भवतानघ। समर्पेयिष्ये सकलानार्भानस्योदरोद्भवान् ॥ १० श्रीपराश्चार स्वाच तथेत्याह ततः कंसो वसुदेवं द्विजोत्तम । न घातयामास च तां देवकीं सत्यगौरवात् ॥ ११ एतस्मिन्नेव काले तु भूरिभासवपीडिता। जगाम धरणी मेरी समाजं त्रिदिवौकसाम् ॥ १२

कथवामास तत्सर्वं खेदात्करूणभाषिणी ॥ १३ धूमिरुवान

सब्रह्मकान्सुरान्सर्वाञ्चणिपत्याथ मेदिनी ।

अग्निस्सुवर्णस्य गुरुर्गवां सूर्यः परो गुरुः । ममाप्यखिललोकानां गुरुनीरायणो गुरुः ॥ १४ प्रजापतिपतिर्द्वह्या पूर्वेषामपि पूर्वजः। कलाकाष्ट्रानिमेषात्मा कालश्चाव्यक्तमूर्तिमान् ॥ १५ तदंशभूतस्सर्वेषां समूहो वस्सुरोत्तमाः ॥ १६

आदित्या मस्तस्साध्या रुद्रा वस्वश्चिवह्नयः । पितरो ये च लोकानां स्रष्टारोऽत्रिपुरोगमा: ॥ १७

एते तस्याप्रमेयस्य विष्णो रूपं महात्मनः ॥ १८

यक्षराक्षसदैतेयपिशाचोरगदानवाः

गन्धर्वाप्सरसञ्जेव रूपं विच्णोर्महात्मनः ॥ १९ प्रहर्श्<u>तारकाचित्रगगनाप्रिजलानिलाः</u>

अहं च विषयाश्चेव सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥ २०

तथाप्यनेकरूपस्य तस्य रूपाण्यहर्निशम्।

बाध्यबाधकतां यान्ति कल्लोला इव सागरे ॥ २१

तत्साम्रातममी दैत्याः कालनेमिपुरोगमाः । मर्त्यलोकं समाक्रम्य बाधन्तेऽहर्निशं प्रजाः ॥ २२

कालनेमिर्हतो योऽसौ विष्णुना प्रभविष्णुना ।

उप्रसेनसुतः कंससम्भूतस्त महासुरः॥ २३ अरिष्टो धेनुकः केशी प्रलम्बो नरकस्तथा ।

सुन्दोऽसुरस्तथात्युयो बाणश्चापि बलेस्पुतः ॥ २४

तथान्ये च महावीर्या नृपाणां भवनेषु ये । समुत्पन्ना दुरात्मानस्तान्न संख्यातुमुत्सहे ॥ २५

''हे महाभाग ! हे अनव ! आप देवकीका वध न करें; मैं इसके गर्भसे उत्पन्न हुए सभी बालक आपको सीप दुग्त" ॥ १० ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे द्विजोत्तम ! तब सत्यके गौरवसे कंसने बसुदेवजोसे 'बहुत अच्छा' कह देवकीका वध नहीं किया।। ११ ॥ इसी समय अत्यत्त भारते पीडित होकर पृथियी [गीका रूप घारणकर] सुपेर-पर्वतपर देवताओंके दलमें गयी॥१२॥ वहाँ उसने ब्रह्माजीके सहित समस्त देवताओंको प्रणामकर सेरपूर्वक करुणस्वरसे बोलती हुई अपना सार वृत्तान्त कहा (। १३ ॥

पृथियी खोली—जिस प्रकार अप्नि सुवर्णका तथा सूर्य गो (किरण) संपूदका परमगुरु है उसी प्रकार सम्पूर्ण रोकीके गुरु श्रीनारायण मेरे गुरु हैं॥ १४ ॥ वै प्रजापतिबोक्ते पति और पूर्वजीके पूर्वज बहाानी है तथा थे ही कला-काष्ट्रा-निमेष-स्वरूप अव्यक्त मूर्तिमान् कालं हैं। हे देवश्रेष्ट्रगण ! आप सब लोगॉका सपृह भी उन्हींका अञ्चास्त्ररूप है ॥ १५-१६ ॥ आदित्य, मस्द्रण, साध्यगण, हद्र, बसु, अग्नि, पितृगण और अति आदि प्रजापतिगण—ये सब अप्रमेय महात्मा विष्णुके ही रूपे है ॥ १७-१८ ॥ यक्ष, राक्षस, देख, पिदाचि, सर्प, दानय, गन्धर्व और अप्सरा आदि भी महात्मा विष्णुके हो रूप हैं ॥ १९ ॥ अह, नक्षत्र तथा तारागणोंसे चित्रित आकादा, अप्रि, जल, वायु, मैं और इन्द्रियेकि सम्पूर्ण विषय — यह सारा जगत् विष्णुमय ही है ॥ २० ॥ तथापि उन अनेक् रूपधारी विष्णुके ये रूप समुदकी तरङ्गीक समान रात-दिन एक-दूसरेके बाध्य-बाधक होते रहते हैं ॥ २१ ॥

इस समय कालनेमि आदि दैत्यगण मर्त्यलोकपर अधिकार जमाकर अहर्निश जनताको क्रेशित कर रहे हैं॥ २२॥ जिस कारुनेमिको सामर्थ्यवान् भगवान् विष्णुने मारा था, इस समय वही उमरोनके पुत्र महान् असुर कंसके रूपमें करपत्र हुआ है ॥ २३ ॥ अरिष्ट, धेनुक, केशी, प्रलम्ब, नरक, सुन्द, बलिका पुत्र अति भवंकर बाणासुर तथा और भी जो महावलवान् दुरात्मा राक्षस राजाओंके घरमें उत्पन्न हो गये हैं उनकी मैं गणना नहीं कर सकती। २४-२५॥

अक्षौहिण्योऽत्र बहुला दिव्यमूर्तिधरास्तुराः । महाबलानां दृप्तानां दैत्येन्द्राणां ममोपरि ॥ २६

तद्ध्रिभारपीडार्ता न शक्नोम्यमरेश्वराः । विभर्तुमात्मानमहमिति विज्ञापयामि वः ॥ २७

क्रियतां तन्महाभागा मम भारावतारणम् ।

कथता तन्महाभागा मम् भारावतारणम् । यथा रसातलं नाहं गच्छेयमतिविद्वला ॥ २८

इत्याकर्ण्य धरावाक्यमशेषैस्त्रिदशेश्वरैः । भुवो भारावतासर्थं ब्रह्मा प्राह प्रचोदितः ॥ २९

ज्ञकोकाच यथाह वसुधा सर्व सत्यमेव दिवौकसः।

अहं भवो भवनाश्च सर्वे नारायणात्मकाः ॥ ३०

विभूतयञ्च यास्तस्य तासामेव परस्परम् ।

आधिक्यं न्यूनता बाध्यबाधकत्वेन वर्तते ॥ ३१ तदागच्छतः गच्छाम श्लीराब्धेस्तटमुत्तमम् । तत्राराध्य हरि तस्मै सर्वं विज्ञापयाम वै ॥ ३२

सर्वर्थेव जगत्यर्थे स सर्वात्मा जगन्मयः।

सत्त्वांशेनावतीर्योद्यां धर्मस्य कुरुते स्थितिम् ॥ ३३ श्रीपरश्य उचाच

इत्युक्त्वा प्रययौ तत्र सह देवैः पितामहः । समाहितमनाश्चैवं तुष्टाव गरुडध्वजम् ॥ ३४

बद्धोवाच

द्वे विद्ये त्वमनामाय परा चैवापरा तथा । त एव भवतो रूपे मूर्तामूर्तात्मिके प्रभो ॥ ३५

त एव भवतो रूपे मूर्तामूर्तात्मिक प्रभो ॥ ३५ द्वे ब्रह्मणी त्वणीयोऽतिस्थृलात्मन्सर्व सर्ववित् ।

शब्दब्रह्म परं जैव ब्रह्म ब्रह्ममयस्य यत्॥ ३६

ऋग्वेदस्त्वं यजुर्वेदस्सामवेदस्त्वथर्वणः ।

शिक्षा कल्पो निक्तं च छन्दो ज्यौतिषमेत च ॥ ३७

इतिहासपुराणे च तथा व्याकरणं प्रभो ।

मीमांसा न्यायशास्त्रं च धर्मशास्त्राण्यधोक्षज ॥ ३८

आत्मात्मदेहगुणवद्विचाराचारि यद्भचः ।

तदप्याद्यपते नान्यदध्यात्मात्मस्वरूपवत् ॥ ३९

है दिव्यमूर्तिभारी देवगण ! इस समय मेरे ऊपर महाबलवान् और गर्बलि दैव्यग्रजोंकी अनेक अशौहर्ण सेनाएँ हैं ॥ २६ ॥ है अम्रेश्वरो ! मैं आपलोगोंको यह वतलाये देती हूँ कि अब मैं उनके अत्यन्त भारसे भीदित होकर अपनेको धारण करनेमें सर्वथा असमर्थ हूँ ॥ २७ ॥ अतः है महाभागगण ! आपलोग मेरे भार उतारनेका अब कोई ऐसा उपाय कीजिये जिससे मैं अत्यन्त ज्याकुल होकर रसातलको न चली जाऊँ ॥ २८ ॥

पृथिवीके इन माक्योंको सुनकर उसके भार उतारनेके विषयमें समस्त देवताओंकी प्रेरणासे भगवान् ब्रह्माजीने कहना आरम्भ किया ॥ २९ ॥

ब्रह्माजी बोले — हे देवगण ! पृथियंगे वो कुछ कहा है वह सर्वथा सत्य हो है, वास्तवमें मैं, ठांकर और आप सब लोग नारायणस्वरूप ही है ॥ ३० ॥ उनकी जो-जो विभूतियों हैं, उनकी परस्पर न्यूनता और अधिकता हो बाध्य तथा बाधकरूपसे रहा करती है ॥ ३१ ॥ इसलिये अध्यों, अब इमलोग श्रीरसागरके पवित्र तटपर चलें, वहाँ श्रीहरिकी आराधना कर यह सम्पूर्ण वृतान्त उनरो नियेदन कर दें ॥ ३२ ॥ वे विश्वरूप सर्वात्मा सर्वथा संसारके हितके लिये हो अपने शुद्ध सन्त्यांशने अवतीर्ण

होकर पृथिवीमें धर्मकी स्थापना करते हैं ॥ ३३ ॥ श्रीपराशरजी बोले—ऐसा कहकर देवताओंके सहित पितामह ब्रह्माजी वहाँ गये और एकाप्रचित्तसे श्रीगरुडध्वज भगवान्की इस प्रकार स्तृति करने लगे ॥ ३४ ॥

ब्रह्माजी बोले—हे वेदवाणीके अमोचर प्रभो ! परा और अपरा—ये दोनों विद्याएँ आप ही हैं । हे नाथ ! वे दोनों आपरीके मूर्त और अमूर्त रूप हैं ॥ ३५ ॥ हे अत्यन्त सूक्ष्म ! हे विराट्खरूप ! हे सर्व ! हे सर्वज्ञ ! शब्दाव्य और परब्रह्म—ये दोनों आप ब्रह्ममयके ही रूप हैं ॥ ३६ ॥ आप ही ऋषेद, सजुर्वेद, सामयेद और अथर्कवेद हैं तथा आप ही शिक्षा, करूप, निरुक्त, छन्द और ज्योतिष्-शास्त्र हैं ॥ ३० ॥ हे प्रभो ! हे अधोक्षज ! इतिहास, पुराण, व्याकरण, नोमांसा, न्याय और धर्मशास्त्र—ये सब भी आप ही हैं ॥ ३८ ॥ हे आद्यपते ! जीवात्मा, परमारमा, स्थूल-सुक्ष्म-देह

तथा उनका कारण अध्यक्त —इन सबके विचारसे युक्त जो अन्तरात्मा और परमात्माके स्वरूपका बोधक [तत्त्वमसि] जाकम है, वह भी आपसे भिन्न नहीं है ॥ ३९॥

त्वमव्यक्तमनिर्देश्यमचिन्त्यानामवर्णवत् अपाणिपादरूपं च शुद्धं नित्यं परात्परम् ॥ ४० शृणोध्यकर्णः परिपश्यसि त्व-मचक्षरेको वहरूपरूप: । अपादहस्तो जवनो प्रहीता त्वं वेत्सि सर्वं न च सर्ववेद्यः ॥ ४१ अणोरणीयांसमसत्त्वरूपं त्वां पश्यतोऽज्ञाननिवृत्तिरश्र्या । धीरस्य धीरस्य विभर्त्ति नान्य-द्वरेण्यरूपात्परतः परात्मन् ॥ ४२ त्वं विश्वनाभिर्भुवनस्य गोप्ता सर्वाणि भूतानि तवान्तराणि। यद्धतभव्यं यदणोरणीय: पुमास्त्वमेकः प्रकृतेः परस्तात् ॥ ४३ भगवान्स्ताको एकश्रुद्धा वर्जीविधृति जगतो ददासि । विश्वतश्चक्षरनन्तम्त त्रेथा पर्द त्वं निद्धासि घातः ॥ ४४ यथात्रिरेको बहुधा समिध्यते विकारभेदैरविकाररूपः भवान्सर्वगतैकरूपी तथा <u>रूपाण्यदोषाण्यनुपुष्यतीस</u> एकं त्वमन्नयं परमं पदं य-त्पश्यन्ति त्वां सुरयो ज्ञानदृश्यम् । त्वत्तो नान्यत्किञ्चिद्दस्ति स्वरूपं यद्वा भूतं यज्ञ भव्यं परात्मन् ॥ ४६ व्यक्ताव्यक्तस्वरूपस्त्वं समष्टिखष्टिरूपवान् । सर्वज्ञसर्ववित्सर्वज्ञक्तिज्ञानबलर्द्धिमान् अन्यूनश्चाप्यवृद्धिश्च स्वाधीनो नादिमान्वशी क्रमतन्द्राभयक्रोधकामादिभिरसंयुतः निस्वद्यः परः प्राप्तेर्निरिधष्ठोऽक्षरः क्रमः । सर्वेश्वरः पराघारो धाम्नां धामात्मकोऽक्षयः ॥ ४९

आप अन्यक्त, अनिर्वाच्य, अचित्त्य, नामवर्णसे रहित, हाथ-परेव तथा रूपसे हीन, शुद्ध, सनातन और परसे भी पर हैं॥ ४०॥ आप कर्णहीन होकर भी सुनते हैं, नेत्रहोन होकर भी देखते हैं, एक होकर भी अनेक रूपोंमें प्रकट होते हैं, हस्तपादादिसे रहित होकर भी बडे वेगज्ञाली और प्रहुण करनेवाले हैं तथा सबके अवेदा होन्य भी सबको जाननेवाले हैं ॥ ४१ ॥ हे परत्मन् ! जिस धोर पुरुषको बुद्धि आपके श्रेष्ठतम रूपसे पृथक् और कुछ भी नहीं देखती, आपके अणुसे भी अणु और दृश्य-स्वरूपको देखनेवाले उस प्रुपको आर्त्यात्तक अज्ञाननिवृत्ति हो जाती है॥४२॥ आप विश्वके केन्द्र और त्रिभुवनके रक्षक हैं; सम्पूर्ण भूत आपहीमें स्थित हैं तथा जो इंदर भूत, भविष्यत् और अण्से भी अणु है बह सब आप प्रकृतिसे परे एकपात्र परमपुरुष ही हैं॥४३॥ आप ही चार प्रकारका अग्नि होकर संसारको तेज और विभृति दान करते हैं। है अनन्तमृते ! आपके नेत्र सब और हैं। हे धातः ! आप हो [त्रिविक्रमावतारमें] तीनों स्त्रेकमें अपने तीन पग रखते है।। ४४।। हे ईश ! जिस प्रकार एक ही अधिकारी अग्नि विकत होकर नाना प्रकारसे प्रस्वलित होता है उसी प्रकार सर्वगतरूप एक आप ही अनन्त रूप धारण कर सेते हैं॥४५॥ एकमात्र जो श्रेष्ट परमपद है; यह आप ही हैं, जानी पुरुष ज्ञानदृष्टिसे देखे जाने योग्य आपको ही देखा करते हैं। हे परात्मन् ! भूत और भविष्यत् जो वृत्र्य स्वरूप है वह आपसे अतिरिक्त और बुत्क भी नहीं है।। इद्।। आप व्यक्त और अव्यक्तस्वरूप हैं, समष्टि और व्यक्तिरूप हैं तथा आप ही सर्वज्ञ, सर्वसाक्षी, सर्वज्ञक्तियान् एवं सम्पूर्ण ज्ञान, बल और ऐश्वर्यसे युक्त है।। ४७॥ आप हास और वृद्धिस रहित, स्वाधीन, अनादि और वितेन्द्रिय है तथा आपके अन्दर श्रम, तन्द्रा, भय, क्रोध और काम आदि नहीं हैं।। ४८ ।। आप अनिन्दा, अप्राप्य, निरुधार और अन्याहत गति हैं, आप सबके स्वामी, अन्य ब्रह्मादिके आश्रय तथा सुर्याद तेजोंके तेज एवं अधिनाशी है ॥ ४९ ॥

सकलावरणातीत निरालम्बनभावन । महाविभूतिसंस्थान नमस्ते पुरुषोत्तम ॥ ५० नाकारणात्कारणाद्वा कारणाकारणात्र च । शरीरप्रहणं वापि धर्मत्राणाय केवलम् ॥ ५१ औपराशर उवाच इत्येवं संस्तवं श्रुत्वा पनसा भगवानजः । ब्रह्माणमाह प्रीतेन विश्वरूपं प्रकाशयन् ॥ ५२ श्रीभगवानकाव भो भो ब्रह्मंस्त्वया मत्तस्सह देवैर्यदिष्यते । तदुच्यतामशेषं च सिद्धमेवावधार्यताम् ॥ ५३ श्रीपराशार तसाच ततो ब्रह्मा हरेर्दिव्यं विश्वरूपमवेक्ष्य तत्। तुष्टाव भूयो देवेषु साध्वसावनतात्मसु ॥ ५४ बह्योचाच नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः सहस्रवाहो बहुबक्त्रपाद । नमो नमस्ते जगतः प्रवृत्ति-विनाशसंस्थानकराप्रमेव 11 44 सूक्ष्मातिसूक्ष्मातिबृहत्प्रमाण गरीयसामप्यतिगौरवात्मन् प्रधानबुद्धीन्द्रियवत्प्रधान-मूलात्परात्मन्धगवस्रसीद ॥ ५६ एषा मही देव महीप्रसूतै-र्महासुरैः पीडितशैलखन्धा । परायणां त्वां जगतामुपैति भारावतारार्थमपारसार 11 4/9 एते वयं वृत्ररिपुस्तथायं नासत्यदस्त्रौ वरुणस्तर्थेव । इमे च रुद्रा वसवस्पसूर्या-स्समीरणात्रिप्रमुखास्तथान्ये ॥ ५८ सुरास्समस्तास्तुरनाथ कार्य-मेभिर्मया यह तदीश सर्वम्।

आज्ञापयाज्ञां परिपालयन्त-

स्तबैव तिष्ठाम सदास्तदोषाः ॥ ५१

आप समस्त आवरणश्च्य, असहायोके पालक और सम्पूर्ण महाविधृतियोके आधार है, है पुरुषोत्तम ! आपको नमस्कार है ॥ ५० ॥ आप किसी कारण, अकारण अथवा कारणाकारणसे शरीर-प्रहण नहीं करते, व्यक्ति केवल धर्म-रक्षाके लिये ही करते हैं ॥ ५१ ॥ श्रीपरादारजी बोले-इस प्रकार सुति सुनकर भगवान् अज अपना विश्वरूप प्रकट करते हुए ब्रह्माजीसे प्रसन्नचित्तसे कहने रूपे ॥ ५२ ॥ श्रीभगवान् बोले--- हे बहान् ! देवताओंके सहित तुमको मुझसे जिस बस्तुकी इच्छा हो वह सब कहो और उसे सिद्ध हुआ ही समझो ॥ ५३ ॥ श्रीपराशरजी बोले-तय श्रीहरिके उस दिव्य विश्वरूपको देखकर समस्त देवताओंक भयसे विनीत हो जानेपर ब्रह्माजी पुनः स्तुति करने रूगे ॥ ५४ ॥ ब्रह्माजी बोले—हे सहस्रवाहो । हे अनन्तमृख एवं चरणवाले ! आपको हजारी बार तमस्कार हो । हे जगत्की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करनेवाले ! हे अप्रमेय आपको कारम्बार नमस्कार हो॥ ५५॥ हे मगजन् ! आप सृक्ष्यसे भी सृक्ष्य, गुरुसे भी गुरु और अति बृहत् प्रमाण है, तथा प्रधान (प्रकृति) महत्तस्व और अहंकारादिमें प्रधानभूत मूल पुरुषसे भी परे हैं; हे भगवन्! आप तमपर प्रसन्न होइये॥ ५६॥ हे देव ! इस पृथिवीके पर्वतरूपी मूलबन्ध इसपर उत्पन्न हुए महान् असुरेकि उत्पातसे शिथिल हो गये हैं। अतः हे अपरिनित्तवीर्यं ! यह संसारका भार उतारनेके लिये आपकी शरणमें आयी है॥ ५७ ॥ है सुरनाथ ! हम और यह इन्द्र, अश्विनीकुमार तथा वरुण, ये रुद्रगण, वसुगण, सूर्य, वायु और अपि आदि अन्य समझ देवगण् यहाँ उपस्थित है, इन्हें अधवा मुझे जो कुछ करना उचित हो उन सब वातीके लिये आहा कोजिये | हे ईश] आपहीकी आज्ञाका पालन करते हुए ६५ सम्पूर्ण दोषोसे मुक्त हो सकेंगे ॥ ५८-५९ ॥

श्रीपराशर उदाच

एवं संस्तूयमानातु भगवान्यरमेश्वरः । उज्जहारात्पनः केशौ सितकृष्णौ महामुने ॥ ६० उवाच च सुरानेती मत्केशी वसुधातले। अवतीर्य भुवो भारक्षेत्राहानि करिव्यतः ॥ ६१ सुराश्च सकलास्वादीरवतीर्व महीतले। कुर्वन्तु युद्धमुन्यत्तेः पूर्वोत्पन्नैर्महासूरैः ॥ ६२ ततः क्षयमशेषास्ते दैतेया धरणीतले । प्रयास्यन्ति न सन्देह्ये मददुक्यातविचूर्णिताः ॥ ६३ वसुदेवस्य या पत्नी देवकी देवतोपमा। तत्रायमष्ट्रमो गर्भो मत्केशो भविता सुराः ॥ ६४ अवतीर्यं च तत्रायं कंसं घातयिता भूवि । कालनेमिं समुद्धृतमित्युक्त्वान्तर्दथे हरिः ॥ ६५ अदृश्याय ततस्तस्मै प्रणिपत्य महामुने । पेरुपृष्ठं सुरा जग्पुरवतेरुश भूतले ॥ ६६ कंसाय चाष्ट्रमो गभों देवक्या धरणीधरः । भविष्यतीत्याचचक्षे भगवान्नारदो पुनिः ॥ ६७ कंसोऽपि तदुपश्चत्व नास्दात्कृपितस्ततः ।

देवकीं वसुदेवं च गृहे गुप्तावधारयत्॥ ६८ वसुदेवेन कंसाय तेनैवोक्तं यथा पुरा। तथैव वसुदेवोऽपि पुत्रमर्पितवान्द्रिज ॥ ६९

हिरण्यकशिपोः पुत्राष्यदुगर्भा इति विश्रताः । विष्णुप्रयुक्ता ताम्रिद्रा क्रमा दुर्भानयोजयत् ॥ ७० योगनिद्रा महामाया वैष्णवी मोहितं यया ।

अविद्यया जगत्सर्वं तामाह भगवान्हरिः ॥ ७१ श्रीभगवानुवाच

निहे गच्छ ममादेशात्यातालतलसंश्रयान् ।

एकैकत्वेन षड्गभन्दिवकीजठरं नय ॥ ७२

हतेषु तेषु कंसेन शेषाख्योंऽशस्सतो मम।

अंञांशेनोदरे तस्यास्सप्तमः सम्भविष्यति ॥ ७३

श्रीपराशरजी बोले—हे महामुने । इस प्रकार सुति किये जानेपर भगवान् परमेश्वरने अपने क्याम और श्वेत दो

केश उलाई ॥ ६० ॥ और देवनाओंसे बोलें — मेरे ये

दोनों केश पृथिवीपर अवतार लेकर पृथिवीके भाररूप ऋष्टको दूर करेंगे॥ ६१॥ सब देवगण अपने-अपने

अंशोंसे पृथिवीपर अवतार लेकर अपनेसे पूर्व उतान हुए

उन्मत दैत्योंके साथ युद्ध करें ॥ ६२ ॥ तब निःसन्देह पृथिजीतरूपर सम्पूर्ण दैस्यनण मेरे दृष्टिपातसे दरिन्त होकर

क्षीण हो जायेंगे ॥ ६३ ॥ यसुद्रेयजीकी जो देवीके समान देवको नामकी भार्या है उसके आठवें गर्भसे मेरा यह (स्याम) केस अवतार लेगा ॥ ६४ ॥ और इस प्रकार

यहाँ अवतार लेकर यह कालनेमिके अवतार कंसका बध करेगा ।' ऐसा कहकर औहरि अन्तर्धान हो गये ॥ ६५ ॥ हे

महामुने ! भगवानुके अदुश्य हो जानेपर उन्हें प्रणाम करके देवगण सुमेरपर्वतपर चले नचे और फिर पुथिवीपर

अवतीर्ण हुए ॥ ६६ ॥

इसी समय भगवान् नारदजीने कंससे आकर बहा कि देवकीके आठवें गर्भमें भगवान् धरणांधर जन्म लेंगे ॥ ६७ ॥ नारदजीसे यह समाचार पाकर कंसने कृपित होकर बसुदेव और देवकीको कारागृहमें बन्द कर दियाँ ॥ ६८ ॥ हे द्विज ! यसुदेवजी भी, जैसा कि उन्होंने पहले

कह दिया था, अपने प्रत्येक पृत्रको कंसको सौंपते रहे ॥ ६९ ॥ ऐसा सुना जाता है कि पहले छः गर्भ हिरण्यकशिष्के पुत्र थे। भगवान् विष्णुकी प्रेरणासे योगनिदा करें क्रमशः गर्भने स्थित करती रही 🔭 ॥ ७० ॥

जिस अविद्या-रूपिणीसे सम्पूर्ण जगत मोहित हो रहा है,

वह योगनिदा भगवान् विष्णुकी महामाया है उससे भगवाम् श्रोहरिने कहा.— ॥ ७१ ॥

श्रीभगवान् बोले-हे निदे ! जा, मेरी आज्ञासे त पातालमें स्थित छः गभीको एक-एक करके देवकीकी कुक्षिमें स्थापित कर दे ॥ ७२ ॥ कंसद्वारा उन सबके मारे जानेपर शेष नामक मेरा आंटा अपने आंडांडासे देखकीके

^{*} ये बालक पूर्वजन्ममें हिरण्यकशिपुके भाई कालनेकिक पुत्र थे; इसीसे इन्हें उसका पुत्र कहा गया है। इन राक्षसकुमारोने हिरण्यकदि।पुका अनादर कर भगवान्की भक्ति की थी; अतः उसने कुपित होकर इन्हें द्वाप दिया कि तुमलोग अपने पिठाके हाथसे ही मारे जाओंगे । यह प्रसंग हरियंक्रमें आया है ।

गोकुले वसुदेवस्य भार्यान्या रोहिणी स्थिता । तस्यास्स सम्भूतिसमं देवि नेयस्त्ववीदरम् ॥ ७४ सप्तमो भोजराजस्य भयाद्रोधोपरोधतः । देवक्याः पतितो गर्भ इति लोको वदिष्यति ॥ ७५ गर्भसङ्क्षणात्सोऽय लोके सङ्क्षणीति वै। संज्ञामवाप्यते वीरदश्चेताद्विद्वाखरोपमः ॥ ७६ ततोऽहं सम्भविष्यामि देवकीजठरे शुभे। गर्भे त्वया यशोदाया गन्तव्ययविलम्बितम् ॥ ७७ प्रावृदकाले च नभूसि कृष्णाष्ट्रस्यामहं निशि । उत्पत्स्यामि नवम्यां तु प्रसूतिं त्वमवाप्त्यसि ॥ ७८ यशोदाशयने मां तु देवक्यास्त्वामनिन्दिते । मच्छक्तिप्रेरितमतिर्वसुदेवो नविष्यति ॥ ७९ कंसश्च त्वामुपादाय देवि शैलशिलातले। प्रक्षेप्यत्यत्तरिक्षे च संस्थानं त्वमवाप्यसि ॥ ८० ततस्त्वां शतदुक्छकः प्रणम्य मम गौरवात् । प्रणिपातानतशिस भगिनीत्वे यहीष्यति ॥ ८१ त्वं च शुभानिशुभादीन्हत्वा दैत्यान्सहस्रशः । स्थानैरनेकै: पृथिवीमशेषां मण्डविष्यसि ॥ ८२ त्वं भृतिः सन्नतिः क्षान्तिः कान्तिद्यौः पृथिकौ पृतिः । लजा पुष्टिरुषा या तु काचिदन्या त्वमेव सा ॥ ८३ ये त्वामार्येति दुर्गेति वेदगर्भाम्बिकेति च। भद्रेति भद्रकालीति क्षेपदा भाग्यदेति स ॥ ८४ प्रातश्चैवापराक्के च स्तोष्यन्यानप्रमर्त्तयः । तेषां हि प्रार्थितं सर्वं महासादाद्धविष्यति ॥ ८५ सुरामांसोपहारैश्च भक्ष्यभोज्यैश्च पूजिता । नृणामशेषकामांस्त्वं प्राप्तश्चा सम्प्रदास्वसि ॥ ८६ ते सर्वे सर्वदा भद्रे मत्रासादादसंशयम्। असन्दिग्धा भविष्यन्ति गच्छ देवि यथोदितम् ॥ ८७

वसूदेवंजीकी जो रोहिणी नागकी दूसरी भार्यी रहती है उसके उदरमें उस सातवे गर्भको छ जाकर तू इस प्रकार स्थापित कर देना जिससे वह उसीके जठरसे उत्पन्न हुएके समान जान पड़ें॥ ७४॥ उसके विषयमें संसार यही कहेगा कि कारागारमें बन्द होनेके कारण भोजराज किसके भयसे देवकीका सातवाँ गर्भ गिर गया॥ ७५॥ वह श्रेत दौलशिखरके समान वीर पुरुष गर्भसे आकर्षण किये जानेके कारण संसारमें 'संकर्षण' नामसे प्रसिद्ध होगा॥ ७६॥

तदनसर, हे शुभे ! देवजीके आठवे गर्भमें मैं स्थित होर्केगा । उस समय तृ भी तुरंत ही यशोदाके गर्भमें चली जाना ॥ ७० ॥ वर्षाक्रतुमें भाइपद कृष्ण अष्टमीको राजिके समय मैं जन्म लूँगा और तू नवमोको उत्पन्न होगी ॥ ७८ ॥ हे अनिन्दिते ! उस समय मेरी शित्समें अपनी मति फिर जानेके कारण बसुदेवजी मुझे तो यशोदाके और तुझे देवजीके शयनगृहमें ले जायंगे ॥ ७९ ॥ तब हे देवि ! कंस तुझे एकड़कर पर्यत-शिलापर पटक देगा; उसके पटकते ही तू आकाशमें स्थित हो जायंगी ॥ ८० ॥

उस समय मेरे गौरवसे सहस्रनयन इन्द्र सिर झुकाकर प्रणाम करनेके अगन्तर तुझे भीगनोरूपसे खीकार करेगा ॥ ८१ ॥ तृ भी सुम्भ, निशुम्भ आदि सहस्रो दैलोंको मारकर अपने अनेक स्थानोंसे समस्त पृथिवीको सुशोभित करेगी ॥ ८२ ॥ तू ही भूति, सन्नीत, श्लान्ति और कर्मित है; तू ही आकाश, पृथिवी, भृति, रुजा, पृष्टि और उमा है; इनके आतिरिक्त संसारमें और भी जो कोई शक्ति है वह सब तू ही है ॥ ८३ ॥

जो लोग प्रातःकाल और सार्यकालमें अत्यन्त नग्रतापूर्वक तुझे आर्या, हुगां, वेदगभां, अम्बिका, भद्रा, भद्रकाली, क्षेमदा और भाग्यदा आदि कहकर तेरी स्तृति करेरो, उनकी समस्त कामनाएँ मेरी कृपासे पूर्ण हो जायेगी ॥ ८४-८५॥ मदिरा और मांसकी भेंट चढ़ानेसे तथा भक्ष्य और भोज्य पदार्थोहारा पूजा करनेसे प्रसन्न होकर तू मनुष्योंकी सम्पूर्ण कामनाओंको पूर्ण कर देगी॥ ८६॥ तेर द्वारा दी हुई वे समस्त कामनाएँ मेरी कृपासे निस्सन्देह पूर्ण होंगी। हे देवि ! अब तू मेरे व्रतलाये हुए स्थानको जा॥ ८७॥

इति श्रीविणापुराणे पञ्चमेंऽशे प्रथपोऽध्यायः ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय

भगवान्का गर्ध-प्रवेश तथा देवगणद्वारा देवकीकी स्तुति

औपगुरूम् उवाच यथोक्तं सा जगद्धात्री देवदेवेन वै तथा। षड्गर्भगर्भविन्यासं चक्रे चान्यस्य कर्षणम् ॥ सप्तमे रोहिणीं गर्भे प्राप्ते गर्भ ततो हरि: । ल्प्रेकत्रयोपकाराय देवक्याः प्रविवेशः ह ॥ योगनिद्रा यशोदायास्तस्मिन्नेव तथा दिने । सम्भूता जठरे तह्नद्वश्वोक्तं परमेष्टिना ॥ ततो प्रहगणस्मम्यक्प्रचचार दिवि द्विज। विष्णोरंशे भुवं याते ऋतवश्चावभुश्शुभाः ॥ न सेहे देवकीं द्रष्टुं कश्चिदप्यतितेजसा। जाञ्वल्यमानां तां दृष्ट्वा मनांसि क्षोभमाययुः ॥ अदृष्टाः पुरुषैस्त्रीभिर्देवकी देवतागणाः। बिभ्राणां वपुषा विष्णुं तुष्टुवुस्तामहर्निशम् ॥ देवता ऊचुः प्रकृतिस्त्वं परा सृक्ष्मा ब्रह्मगर्भाभवः पुरा । ततो वाणी जगद्धानुर्वेदगभीसि शोभने ॥ सुन्यस्वरूपगर्भासि सृष्टिभूता सनातने। बीजभूता तु सर्वस्य बज्ञभूताभवस्रयी॥ फलगर्भा त्वयेवेज्या वह्निगर्भा तथारणि: । अदितिर्देवगर्भा त्वं दैत्यगर्भा तथा दिति: ॥ ज्योत्त्रा वासरगर्भा त्वं ज्ञानगर्भासि सन्नतिः । नयगर्भा परा नीतिलेजा त्वं प्रश्रवोद्वहा ॥ १० कामगर्भां तथेच्छा त्वं तृष्टिः सन्तोषगर्भिणी । मेधा च बोधगर्भासि धैर्यगर्भोद्वहा धृति: ।। ११ महर्श्वतारकागर्भा द्यौरस्याखिलहेतुकी। एता विभूतयो देवि तथान्याश्च सहस्रज्ञः।

तथासंख्या जगद्धात्रि साम्प्रतं जठरे तव ॥ १२

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय ! देवेदेव श्रीविष्णुभगवान्ने जैसा कहा या उसके अनुसार जगदात्री योगमायाने छ: गर्भीको देवकीके उदरमें स्थित किया और सातवेको उसमेंसे निकाल लिया ॥ १ ॥ इस प्रकार साववे गभंके रोहिणीके उदस्में पहुँच जानेपर श्रीहरिने तीनी लोकोंका उद्धार करनेकी इच्छासे देवकीके गर्भमें प्रवेश किया ॥ २ ॥ भगवान् परमेश्वरके आज्ञानुसार योगमाया भी उसी दिन बशोदाके गर्भमें स्थित हुई ॥ ३ ॥ हे द्विज ! बिष्णु-अंशके पृथिवीमें प्रधारनेपर आकाशमें प्रहगण ठीक-ठीक पतिसे चलने लगे और ऋतुगण भी मङ्गलमय होकर जोभा पाने रूपे ॥ ४ ॥ उस समय अत्यन्त तेजसे देदीप्यमाना देवकीजीको कोई भी देख न सकता था। उन्हें देखकर [दर्शकोंके] जिस शकित हो जाते थे ॥ ५ ॥ तब देवतागण अन्य पुरुष तथा क्रियोंको दिलागी न देते हुए, अपने दारीरमें [गर्भरूपसे] भगवान् विष्णुको धारण करनेवाली देवकीबीकी अहर्निश स्तुति करने लगे ॥ ६ ॥

देखता बोस्ठे—हे शोभने ! तू पहले ब्रह्म-प्रतिबिम्बधारिणी मूल्प्रकृति हुई थी और फिर जगहिधाताकी बेदगभी बाणी हुई ॥ ७ ॥ हे सनातने ! तू ही एज्य पदार्थोंको उत्पन्न करनेवाली और तू ही सृष्टिरूपा है; तू ही सबकी बीज-स्वरूपा यज्ञमवी बेदन्नयी हुई है ॥ ८ ॥ तू ही फलमयी यज्ञक्रिया और अग्रिमयी अरणि है तथा तू ही देवमाता अदिति और दैत्यप्रसृद्धित है ॥ ९ ॥ तू ही दिनकरी प्रभा और ज्ञानमर्भा गुरुशुब्बा है तथा तू ही व्यायमयी परमनीति और विनयसम्पन्ना ल्ल्वा है ॥ १० ॥ तू ही काममयी इच्छा, सन्तोषमयी तृष्टि, बोधगर्भा प्रज्ञा और धेर्यधारिणी धृति है ॥ ११ ॥ यह, नक्षत्र और तारागणको धारण करनेवाला तथा [वृष्टि आदिके हास इस अधिल विश्वका] कारणस्वरूप आकाश तू ही है । हे जगहाति ! हे देवि ! ये सब तथा और भी सहस्त्रों और असंख्य विभृतियाँ इस समय तेरे उदरमें स्थित है ॥ १२ ॥ समुद्राद्रिनदीहीपवनपत्तनभूषणा प्रामखर्वटखेटाढ्या समस्ता पृथिवी शुभे ॥ १३

समस्तवद्वयोऽभ्यांसि सकलाश्च समीरणाः । प्रहर्श्वतारकाचित्रं विमानशतसंकुलम् ॥ १४

अवकाशमशेषस्य यहदाति नभःस्थलम् । भूलोंकश्च भुवलोंकस्वलोंकोऽथ महर्ननः ॥ १५

तपश्च ब्रह्मलोकश्च ब्रह्माण्डमस्वलं शुभे । तदन्तरे स्थिता देवा दैत्यगन्धर्वचारणाः ॥ १६

महोरगास्तथा यक्षा सक्षसाः प्रेतगृह्यकाः । पनुष्याः पशवशान्ये ये च जीवा यशस्विति ॥ १७ तैरन्तःस्थैरनन्तोऽसौ सर्वगः सर्वभावनः॥ १८

रूपकर्मस्वरूपाणि न परिच्छेदगोचरे । यस्याखिलप्रमाणानि स विष्णुर्गर्भगस्तव ॥ १९

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा विद्या सुधा त्वं ज्योतिरम्बरे । त्वं सर्वलोकरक्षार्थमवतीर्णा महीतले ॥ २० प्रसीद देवि सर्वस्य जगतङ्शे शुभे कुरु।

प्रीत्या तं धारयेशानं धृतं येनास्त्रिलं जगत् ॥ २

तीसरा अध्याय

भगवान्का आविर्भाव तथा योगमायाद्वारा कंसकी वञ्चना

औपग्रजार उधाच

एवं संस्तुयमाना सा देवैदेवमधारयत्।

गर्भेण पुण्डरीकाक्षं जगतस्त्राणकारणम् ॥ १

ततोऽखिलजगत्पराबोधायाच्युतभानुना देवकीपूर्वसन्ध्यायामाविर्धृतं महात्यना ॥ २

तज्जन्मदिनमत्यर्थमाह्याद्यम्लदिङ्करवम् वभूव सर्वलोकस्य कौमुदी शशिनो यशा ॥ ३

सन्तस्सन्तोषमधिकं प्रशमं चण्डमास्ताः। प्रसादं निम्नगा याता जायमाने जनार्दने ॥ ४

विष्युः ११—

हे शुपे । समुद्र, पर्वत, नदी, द्वीप, बन और नगरीसे सुशोधित तथा प्राप्त, खबंट और खेटादिसे सम्पन्न समस्त

पृथिको, सम्पूर्ण आप्नि और जल तथा समस्त वायु, प्रह, नक्षत्र एवं तारागणोसे चित्रित तथा सैकड़ों विभानोंसे पूर्ण सबको अवकारा देनेवाला आकारा, भूलोक, भूवलीक,

खर्लीक तथा मह, जन, तप और बह्यलोकपर्यन्त सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड तथा उसके अन्तर्वती देव, असूर, गन्धर्व, चारण, नाग, यक्ष, राक्षस, प्रेत, गुहाक, मनुष्य, पञ्च

और जो अन्यान्य जीव हैं, हे यदास्त्रिन ! वे सभी अपने अन्तर्गत होनेके कारण जो श्रीशनन्त सर्वगामी और

सर्वभावन हैं तथा जिनके रूप, कर्म, खमाय तथा [बारुख महत्त्व आदि] समस्त परिमाण परिच्छेद (विचार) के विषय नहीं हो सकते वे ही श्रीविष्ण्-

भगवान् तेरे गर्भमें स्थित हैं ॥ १३—-१९ ॥ तु ही स्वाहा, स्वधा, विद्या, सुधा और आकड़शस्थिता ज्योति है। सम्पूर्ण लोकोंकी रक्षाके लिये ही तूने पृथिवीमें आवतार ल्प्या है।। २० ।। हे देखि ! तु प्रसन्न हो । हे शुभे ! तु सम्पूर्ण जनहका कल्याण कर्। जिसने इस सम्पूर्ण

जगत्को धारण किया है उस प्रभुको तु प्रीतिपूर्वक अपने गर्भमें धारण कर ॥ २१ ॥ + इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेऽशे द्वितीबोऽध्यायः ॥ २ ॥

> श्रीपराज्ञारजी बोले—हे मैत्रेय ! देवताओंसे इस प्रकार स्तुति की जाती हुई देवकीजीने संसारकी रक्षाके

> कारण भगवान् पुण्डरीकाक्षको गर्भमें धारण किया ॥ १ ॥ तदनन्तर सम्पूर्ण संसाररूप कमलको विकसित करनेके लिये देवकीरूप पूर्व सन्धामें महात्मा अन्यतरूप सूर्यदेवका आविर्भाव हुआ ॥ २ ॥ चन्द्रमाकी चाँदनीके समान भगवान्कः जन्म-दिन सम्पूर्ण जगत्को आह्नादित

> करनेवाला हुआ और उस दिन सभी दिशाएँ अत्यन्त निर्मल हो गंधीं ॥ ३ ॥ श्रीजनार्दनके जन्म छेनेपर सन्तजनीको परम सन्तोष

हुआ, प्रचण्ड वायु शान्त हो गया तथा नदियाँ अल्यना स्वच्छ हो गर्या ॥ ४ ॥

tq.

सिन्धवो निजञ्जदेन वाद्यं चकुर्मनोहरम्। जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ससुजुः पुष्पवर्षाणि देवा भुव्यत्तरिक्षगाः । जज्बलुश्चात्रयश्शान्ता जायमाने जनार्दने ॥ पन्दं जगर्जुर्जलदाः पुष्पवृष्टिमुचो द्विज। अर्द्धरात्रेऽखिलाधारे जायमाने जनार्दने ॥ फुल्लेन्दीवरपत्राभं चतुर्बाह्मुदीक्ष्य तम्। श्रीवत्सवक्षसं जातं तुष्टावानकदुन्दुभिः॥ अभिष्ट्य च तं वाग्भिः प्रसन्नाभिर्महामतिः । विज्ञापयामास तदा कंसाद्धीतो हिजोत्तम ॥ जातोऽसि देवदेवेश शङ्खवकगदाथरम्। दिव्यरूपमिदं देव प्रसादेनोपसंहर ॥ १० अद्यैव देव कंसोऽयं कुरुते यम घातनम् । अवतीर्ण इति ज्ञात्वा त्वमस्मिन्यम मन्दिरे ॥ ११ देवक्यवाच योऽनन्तरूपोऽखिलविश्वरूपो गर्भेऽपि लोकान्त्रपुषा बिमर्ति । देवदेवो H

यो माययाविष्कृतबालरूपः ॥ १२ उपसंहर सर्वात्मन्नुपपेतचतुर्भुजम् । जानात् मावतारं ते कंसोऽयं दितिजन्मजः ॥ १३

श्रीभगवानुवाच

स्तुतोऽहं यत्त्वया पूर्व पुत्रार्थिन्या तदद्य ते । सफलं देवि सञ्जातं जातोऽहं यत्तवोदरात् ॥ १४ श्रीपरादार उत्तरा

इत्युक्त्वा भगवांस्तूष्णीं बभूव मुनिसत्तम । वसुदेवोऽपि तं रात्राबादाय प्रययौ बहिः ॥ १५

मोहिताश्चाभवंस्तत्र रक्षिणो योगनिद्रया।

व्रजत्यानकदुन्दुभौ ॥ १६ मधुराद्वारपालाश्च

🄏 डुमिलनामक राक्षसने राजा उपसेनका रूप धारण कर उनकी पत्नीसे संसर्ग किया था। उसीसे कंसका अभ हुआ।

समद्रगण अपने घोषसे मनोहर वाजे बजाने लगे. गन्धर्वराज गान करने छगे और अप्सराई नाचने लगीं ॥ ५॥ श्रीजनादीनके प्रकट होनेपर आकाशगामी देवगण पृथिवीपर पुष्प बरसाने लगे तथा शान्त हुए यहायि

फिर प्रज्वालित हो गये ॥ ६ ॥ हे द्विज ! अर्द्धरात्रिके समय सर्वाधार भगवान् जनार्दनके आविभृत होनेपर पुञ्चवर्षा करते हुए मेधगण मन्द-मन्द गर्जना करने लगे ॥ ७ ॥

उन्हें खिले हुए कमलदलकी-सी आभावाले, चतुर्भुन और वक्षःस्थलमें श्रीवत्स चिद्रसहित उत्पन्न हुए देख आनकदन्दभि धसदेवजी स्तृति करने लगे॥८॥ हे

द्विजोत्तम ! महामति वस्देवजीने प्रसादयुक्त वचनीसे भगवानुकी सुति कर कंससे भयभीत रहनेके कारण इस प्रकार निवेदन किया ॥ ९ ॥ वसदेवजी बोले--हे देवदेवेश्वर!

आप [साक्षात् परभेश्वर] प्रकट हुए हैं, तथापि है देव ! मुझपर कृपा करके अब अपने इस शृङ्ख-चक्र-गदाभारी दिव्य रूपका उपसंहार कीजिये॥१०॥ हे देव ! यह पता लगते ही कि आप मेरे इस गृहमें अवतीर्ण हुए हैं, केस इसी समय मेरा सर्वनाश कर देखा॥ ११ ॥

देवकीजी बोर्ली-जो अनन्तरूप और अखिल-विश्वस्वरूप हैं, जो गर्भमें स्थित होकर भी अपने शरीरसे सम्पूर्ण लोकॉको धारण करते हैं तथा जिन्होंने अपनी मायासे ही बात्ररूप धारण किया है वे देवदेव हमपर प्रसन हों ॥ १२ ॥ हे सर्वासान् ! आप अपने इस चतुर्भुज रूपका उपसंद्वार कीजिये। भगवन् ! यह राक्षसके अंज्ञासे इत्पन्न" कंस आपके इस अवहारका वृतास न जनने पावे ॥ १३ ॥

श्रीभगवान् बोले-हे देवि ! पूर्व-जन्मने तने जी पुत्रकी कामनासे मुझसे [पुत्ररूपसे उत्पन्न होनेके लिये] प्रार्थना की थी। आज मैंने तेरे गर्भसे जन्म लिया है---इससे तेरी वह कामना पूर्ण हो गयी॥ १४॥ श्रीपराशरजी कोर्ले—हे प्निश्रेष्ठ ! ऐसा कहकर

भगवान मौन हो गये तथा वसुदेवजो भी उन्हें उस राजिमे ही केकर बाहर निकरंगे ॥ १५ ॥ वसदेवजीके बाहर जाते समय क्रारागृहरक्षक और मधुराके द्वारपाल योगनिहाके

यह कथा हरिवंशमें आयी है।

वर्षतां जलदानां च तोयमत्युल्वणं निशि । संवृत्यानुययौ शेषः फणैरानकदुन्दुभिम् ॥ १७ यमुनां चातिगभीरां नानावर्त्तशताकुलाम् । वसुदेवो वहन्तिष्णुं जानुमात्रवहां यद्यौ ॥ १८ कंसस्य करदानाय तत्रैवाभ्यागतांस्तदे। नन्दादीन् गोपवृद्धांश्च यमुनाया ददर्श सः ॥ १९ तस्यन्काले यशोदापि मोहिता योगनिदया । तामेव कन्यां मैत्रेय प्रस्ता मोहते जने ॥ २० वसुदेवोऽपि विन्यस्य बालपादाय दारिकाम् । यशोदाशयनात्त्र्णमाजगामामितद्यतिः ददुशे च प्रबुद्धा सा यशोदा जातमात्मजम् । नीरहोत्परुद्दरुदयामं ततोऽत्यर्थं मुदं ययौ ॥ २२ आदाय वसुदेवोऽपि दारिकां निजमन्दिरे । देवकीशयने न्यस्य यथापूर्वमतिष्ठत ॥ २३ ततो बालध्वनि श्रुत्वा रक्षिणस्सहसोत्थिताः । कंसायावेदयामासुर्देवकी**प्रस**र्व द्विज ॥ २४ कंसस्तूर्णमुपेत्यैनां ततो जन्नाह बालिकाम् । मुञ्ज मुञ्जेति देवक्या सन्नकण्ठ्या निवारितः ॥ २५ चिक्षेप च ज्ञिलापृष्ठे सा क्षिप्ता वियति स्थिता । अवाप रूपं सुमहत्सायुधाष्ट्रमहाभुजम् ॥ २६ प्रजहास तथैवोचैः कंसं च रुपिताव्रवीत् । किं मया क्षिप्तया केस जातो यस्त्वां वधिष्यति ॥ २७ सर्वस्वभूतो देवानामासीन्युत्यः पुरा स ते । तदेतत्सम्प्रधार्याञ्च क्रियतां हितमात्मनः ॥ २८ इत्युक्त्वा प्रचर्यो देती दिव्यसमान्धभूषणा ।

पञ्चतो भोजराजस्य स्तुता सिद्धैर्विहायसा ॥ २९

प्रभावसे अचेत हो गये॥ १६॥ उस राजिके समय वर्षां करते हुए मेघोंकी जलगरिको अपने फणोंसे रोककर श्रीशेषजी आनकदुन्दुमिके पीछे-पीछे चले॥ १७॥ भगवान् विष्णुको ले जाते हुए वसुदेवजी नाना प्रकारके सैकड़ों भेवरोसे मरी हुई अत्यन्त गम्भीर यमुगाजीको मुटनीतक रखकर ही पार कर गये॥ १८॥ उन्होंने वहीं यमुगाजीके तटपर ही कसको कर देनेके लिये आये हुए यन्द आदि वृद्ध गोयोको भी देखा॥ १९॥ हे मैत्रेष ! इसी समय योगनिहाके प्रभावसे सब मनुष्योंक मोहित हो जानेपर मोहित हुई यशोदाने भी उसी कन्याको जन्म दिया॥ २०॥

तब अतिशय कान्तिमान् वसुदेवजी भी उस बालकको सुलाकर और कन्याको लेकर तुरन्त यशोदाके शयन-गृहसे चले आये ॥ २१ ॥ जब यशोदाने जागनेपर देखा कि उसके एक नीतकमलदलके समान श्यामवर्ण पुत्र उत्पन्न हुआ है तो उसे अत्यन्त प्रसन्नता हुई ॥ २२ ॥ इथर, वसुदेवजीने कन्याको ले जाकर अपने महलमें देखकीके शयन-गृहमें सुल्म दिया और मूर्ववत् स्थित हो गये ॥ २३ ॥

है द्विज ! तदमन्तर बालकके रोनेका शब्द सुनकर कासगृह-रश्वक सहसा उठ खड़े हुए और देक्कीके अन्तान उत्पन्न होनेका वृत्तान्त कंसको सुना दिया ॥ २४ :। यह सुनते ही कंसने तुरन्त जाकर देक्कीके रुधे हुए कण्डसे 'छोड़, छोड़' — ऐसा कहकर रोक्ट्रोपर भी उस बालिकाको पकड़ लिया और उसे एक शिलापर पटक दिया । उसके पटकते ही वह आकाशमें रिश्वत हो गयी और उसने शखसूक एक महान् अष्टभुजरूप धारण कर लिया ॥ २५-२६ ॥

तब उसने ऊंचे स्वरसे अष्ट्रहास किया और कंससे रोषपूर्वक कहा—'अरे कंस! मुझे पटकनेसे तेरा क्या प्रयोजन सिद्ध हुआ ? जो तेरा वध करेगा उसने तो [पहले ही] जन्म ले लिया है; देवताओं के सर्वस्व वे हरि ही तुन्हारे [कालनेमिस्स्प] पूर्वजन्ममें भी काल थे। अतः ऐसा जानकर हू शोध ही अपने हितका उपाय करें ॥ २७-६८ ॥ ऐसा कह, यह दिव्य माला और चन्द्रनादिसे विभूषिता तथा सिद्धगणद्वारा स्तृति की जाती हुई देवी भोजराज कंसके देखते-देखते आकाशमार्गसे चली गयाँ ॥ २९ ॥

इति श्रीविष्णुप्राणे पञ्चमेंऽञ् तृतीयोऽभ्यायः ॥ ३ ॥

116

चौथा अध्याय

वसुदेव-देवकीका कारागारसे मोक्ष

श्रीपरासर उनाच

कंसस्तदोद्विप्रमनाः प्राह सर्वान्पहासुरान् । प्रलम्बकेशिप्रमुखानाहयासुरपुङ्गवान् ।

कंस उवाच

हे प्रलम्ब महाबाहो केशिन् धेनुक पूतने।

अरिष्टाद्यासाधैवान्ये श्रूयतां वचनं मम ॥

मां हन्तुममरैर्यत्नः कृतः किल दुरात्यभिः । मद्वीर्यतापितान्वीरो न त्वेतानाणवाम्यहम् ॥

किमिन्द्रेणाल्पवीर्वेण कि हरेणैकचारिणा । हरिणा वापि कि साध्ये छिद्रेष्ट्रसुराघातिना ॥

किमादित्यैः किं वसुभिरल्पवीयैः किमग्रिभिः ।

किं बान्धैरमरैः सर्वैर्मद्वाहुबलनिर्जितैः ॥

कि न दृष्टोऽपरपतिर्पवा संयुगमेत्य सः । पृष्ठेनैव वहन्बाणानपागच्छत्र वक्षसा ॥

मद्राष्ट्रे वारिता वृष्टियंदा शकेण किं तदा ।

महाणिभन्नैर्जलदैर्नापो मुक्ता यथेप्सिताः ॥

किमुर्व्यामवनीपाला मद्वाहुबलभीरवः । न सर्वे सन्नति याता जरासन्धमृते गृहम् ॥

अमरेषु ममावज्ञा जायते दैत्यपुङ्कवाः । हास्यं मे जायते वीरास्तेषु यव्रपरेष्ट्रपि ॥

तथापि खलु दुष्टानां तेषामप्यधिकं मया । अपकाराय देखेन्द्रा यतनीयं दुरात्मनाम् ॥ १०

अपकाराय देखेन्द्रा यतनीय दुरात्मनाम् ॥ १०

तद्ये यशस्त्रिनः केचित्पृथिव्यां ये च याजकाः । कार्यो देखापकाराय तेषां सर्वात्मना वधः ॥ ११ श्रीपराशरजी **बोले**—तब कंसने खिन्न-चितरो प्रलम्ब और केशी आदि समस्त गुस्य-गुस्य असुरोको बुलस्कर कहा॥१॥

कंस बोला—हे प्रलम्ब ! हे महाबाहो केशिन् ! हे भेनुक ! हे पूतने ! तथा हे ऑरष्ट आदि अन्य असुरगण ! मेरा वचन सुनो— ॥ र ॥ यह बात प्रसिद्ध हो रही है कि दुरुखा देवताओंने मेरे मारनेके हिन्ये कोई यन किया है; किन्तु मैं चौर पुरुष अपने बीर्यसे सताये हुए इन लोगोंको कुछ भी नहीं गिनता हूँ ॥ ३ ॥ अल्पबीर्य इन्द्र, अकेले घूमनेवाले महादेव अथवा छिद्र (असावधानीका समय) हुँक्कर दैत्योंका वध करनेवाले विष्णुसे उनका क्या कार्य सिद्ध हो सकता है ? ॥ ४ ॥ मेरे बाहुबलसे दलित आदिखों, अल्पबीर्य बसुगणों, अग्नियों अथवा अन्य समस्त

आपलोगोंने क्या देखा नहीं था कि मेरे साथ युद्धभूमिमें आकर देवराज इन्द्र, वक्षःस्थलमें नहीं, अपनी पीठपर बाणोंकी बौद्धार सहता हुआ भाग गया था॥ ६॥ जिस समय इन्द्रने मेरे राज्यमें वर्षाका होना बन्द कर दिया था उस समय क्या मेथोंने मेरे वाणोंसे विश्वकर ही यथेष्ट जल नहीं बरसाया ?॥७॥ हमारे गुरु (श्वद्वार) जरासन्थको छोड्डकर क्या पृथिवीके और सभी नृपितगण मेरे बाहुबलसे भयभीत होकर मेरे सामने सिर नहीं शुकाते ?॥८॥

देवताओंसे भी मेरा क्या अनिष्ट हो सकता है ? ॥ ५ ॥

हे दैत्यश्रेष्ट्रगण ! देवताओंके प्रति मेरे जिसमें अवजा होती है और हे बीरगण ! उन्हें अपने (मेरे) बधका पल करते देखकर तो मुझे हैंसी आती है॥ १॥ तथापि हे दैत्येन्द्रो ! उन दुष्ट और दुरात्पाओंके अपकारके लिये मुझे और भी अधिक प्रयत्न करना चाहिये॥ १०॥ अतः पृथिवीमें जो कोई यशासी और यज्ञकर्ता हो उनका देवताओंके अपकारके लिये सर्वधा वध कर देना चाहिये॥ ११॥ उत्पन्नश्चापि मे मृत्युर्धूतपूर्वस्स वै किल । इत्येतद्दारिका प्राह देवकीगर्धसम्भवा ॥ १२ तस्माद्वालेषु च परो यत्नः कार्यो महीतले । यत्नोद्रिक्तं बलं वाले स हत्तव्यः प्रयत्नतः ॥ १३ इत्याज्ञाप्यासुरान्कंसः प्रविश्याशु गृहं ततः । मुमोच वसुदेवं च देवकीं च निरोधतः ॥ १४ कंस उवान

युवयोद्यतिता गर्भा वृश्वैवैते मयाधुना । कोऽप्यन्य एव नाशाय बालो मम समुद्रतः ॥ १५ तद्रुं परितापेन नूनं तद्धाविनो हि ते । अर्भका सुवयोदोंषासायुषो यहियोजिताः ॥ १६ श्रीपाशर उनाव

इत्याश्वास्य विमुक्त्वा च कंसस्तौ परिशङ्कितः । अन्तर्गृहं ह्विजश्रेष्ट प्रविवेश ततः स्वकम् ॥ १७ देवकीके गर्भसे उत्पन्न हुई वालिकाने यह भी कहा है कि, वह मेरा भूतपूर्व (प्रथम जन्मका) काल निश्चय हो उत्पन्न हो चुका है ॥ १२ ॥ अतः आजकल पृथिवीपर उत्पन्न हुए वालकोंके विभवमें विशेष सावधानी रखने चाहिये और जिस बालकमें विशेष बलका उद्रेक हो उसे यलपूर्वक भार डालना चाहिये ॥ १३ ॥ असुरोंको इस प्रकार आज्ञा दे कंसने कारागृहमें जाकर दुस्त ही यसूरेय और देवकीको बन्धनसे मुक्त कर दिया ॥ १४ ॥

कंस बोला— पैने अवतक आप दोनोंके बालकोंकी तो व्था ही हत्या की, मेरा नाश करनेके लिये तो कोई और ही बालक उत्पन्न हो गया है ॥ १५॥ परन्तु आपलोग इसका कुछ दुःख न मानें क्योंकि उन बालकोंकी होनड़ार ऐसी ही थी। आपलोगोंके प्रारक्य-दोषसे ही उन बालकोंको अपने जीवनसे हाथ थोना पडा है ॥ १६॥

श्रीपराशरजी कोले—हे द्विजश्रेष्ठ ! उन्हें इस प्रकार डाँद्रस बँधा और बन्धनसे मुक्तकर कंसने शङ्कित चित्तसे अपने अन्तःपुरमें प्रवेश किया ॥ १७ ॥

पाँचवाँ अध्याय

पुतना-वध

औपराशर उवान

विमुक्तो वसुदेवोऽपि नन्दस्य शकटं गतः ।
प्रहष्टं दृष्टवात्रन्दं पुत्रो जातो ममेति वै ॥ १
वसुदेवोऽपि तं प्राह दिष्ट्या दिष्ट्योति सादरम् ।
वार्द्धकेऽपि समुत्पत्रस्तनयोऽयं तवाधुना ॥ २
दनो हि वार्षिकस्सवों भवद्भिनृपतेः करः ।
यदर्थमागतास्तस्मान्नात्र स्थेयं महाधनैः ॥ ३
यदर्थमागताः कार्यं तन्निष्पत्रं किमास्यते ।
भवद्भिगम्यतां नन्द तच्छीन्नं निजगोकुलम् ॥ ४
ममापि वालकस्तत्र रोहिणीप्रभवो हि यः ।
स रक्षणीयो भवता यथायं तनयो निजः ॥ ५
इत्युक्ताः प्रयसुगीपा नन्दगोपपुरोगमाः ।
शकटारोपितैभाष्डैः करं दत्त्वा महाबलाः ॥ ६

श्रीपराशरजी बोले—कन्दोगृहसे लूटते ही वसुदेवजी नन्दजीके छकड़ेके पास गये तो उन्हें इस समाचारसे अत्यन्त प्रसन्न देखा कि 'मेरे पुत्रका जन्म हुआ है' ॥ १ ॥ तब वसुदेवजीने भी उनसे आदरपूर्वक कहा—अब वृद्धावरथाने भी आपने पुत्रका मुख देख लिया यह बहे ही सौभाग्यकी बात है ॥ २ ॥ आपलोग जिसलिये यहाँ आगे थे वह राजाका साम्रा वार्षिक कर दे ही चुके हैं । यहाँ धनवान् पुरुषोको और अधिक न उहरना चाहिये ॥ ३ ॥ आपलोग जिसलिये यहाँ आये थे वह वार्य पुरा हो चुका, अब और अधिक किसलिये उहरे हुए हैं ? [यहाँ देसक उहरना चीक नहीं हैं] अतः है कन्दजी । आपलोग श्रीधः ही अपने गोकुलको जाइये ॥ ४ ॥ यहाँपर रोहिणीसे उत्पन्न हुआ जो मेरा पुत्र है उसकी भी आप उसी तरह रक्षा कीजियेगा जैसे अपने इस बालककी ॥ ५ ॥

वसुदेवजीके ऐसा कहनेपर बन्द आदि महाबरहबान्

वसतां गोकुले तेषां पृतना बालघातिनी। सुप्तं कृष्णमुपादाय रात्रौ तस्मै स्तनं ददौ ॥ 19 यसै यसै स्तर्न रात्री पूतना सम्प्रयच्छति । तस्य तस्य क्षणेनाङ्गं बालकस्योपहन्यते ॥ ሪ कृष्णस्तु तत्स्तर्नं गाढं कराभ्यामतिपीडितम् । गृहीत्वा प्राणसहितं पपौ क्रोधसमन्वितः ॥ सातिमुक्तमहारावा विच्छित्रस्रायुबन्धना । पपात पूतना भूमौ म्रियमाणातिभीषणा ॥ १० तत्रादश्रुतिसन्त्रस्ताः प्रबुद्धास्ते व्रजौकसः । ददृशुः पूतनोत्सङ्गे कृष्णं तां च निपातिताम् ॥ ११ आदाय कृष्णं सन्त्रस्ता यशोदापि द्विजोत्तम । गोपुच्छभ्रामणेनाथ बालदोषमपाकरोत् ॥ १२ गोकरीषपुपादाय नन्दगोपोऽपि मस्तके । कृष्णस्य प्रददौ रक्षां कुर्वश्चैतदुदीरयन् ॥ १३ नन्दगोप उवाच रक्षतु त्वामशेषाणां भूतानां प्रभवो हरि: । नाभिसमुद्भुतपङ्क्रुजादभवज्ञगत् ॥ १४ यस्य देष्ट्राप्रविधृता धारयत्यवनिर्जंगत्। वराहरूपधृग्देवस्स त्वां रक्षतु केशवः ॥ १५ नखाङ्करविनिर्भिन्नवैरिवक्षस्थलो विभुः।

नखाङ्कुरिविनिर्धित्रवैरिवक्षस्थलो विभुः । नृसिहरूपी सर्वत्र रक्षतु त्वां जनार्दनः ॥ १६ वामनो रक्षतु सदा भवनां यः क्षणादभूत् । त्रिविक्रमः क्रमाक्रान्तत्रैलोक्यः स्फुरदायुधः ॥ १७ शिरस्ते पातु गोविन्दः कण्ठं रक्षतु केशवः । गुह्यं च जठरं विष्णुजंङ्घे पादो जनार्दनः ॥ १८ मुखं बाह् प्रवाह् च मनः सर्वेन्द्रियाणि च । रक्षत्वच्याहतैश्चर्यस्तव नारायणोऽच्ययः ॥ १९ शार्ङ्गचक्रगदापाणेश्शङ्कनादहताः क्षयम् । गच्छन्तु प्रेतकृष्णाण्डराक्षसा ये तवाहिताः ॥ २० पृतनाने राजिक समय सोये हुए कृष्णको गोदमें हेकर उसके मुलमें अपना स्तन दे दिया ॥ ७ ॥ राजिक समय पूतना जिस-जिस बारूकके मुलमें अपना स्तन दे देती थी उसीका शरीर तत्काल नष्ट हो जाता था ॥ ८ ॥ कृष्णचन्द्रने क्रोधपूर्वक उसके स्तनको अपने हाथोंसे खूब दवाकर पकड़ लिया और उसे उसके प्राणोंके सहित पीने लगे ॥ ९ ॥ तब स्नायु-बन्धनोंके क्रिथिल हो जानेसे पूतना धोर कृष्ट करती हुई मस्ते समय महाभयद्भर रूप धारणकर पृथिवीपर गिर पड़ी ॥ १० ॥ उसके घोर नादको सुनकर भयभीत हुए बन्धनासीगण जाग उठे और देखा कि कृष्ण पूतनाकी गोदमें हैं और वह मारी गयो है ॥ ११ ॥ हे दिजोत्तम ! तब भयभीता यशोदाने कृष्णको गोदमें

गोपगण छकड़ोंमें रखकर लाये हुए भाष्डोंसे कर चुकाकर

चले गये ॥ ६ ॥ उनके गोकुलमें रहते समय बालघातिनी

है द्विजात्तम ! तब भयभीता यशोदाने कृष्णको गोदम रेकर उन्हें नौकी पूँछसे झाइकर बारुकका ग्रह-दोष निवारण किया॥ १२॥ नन्दगीपने भी आगेके वाका कहकर विधिपूर्वक रक्षा करते हुए कृष्णके मस्तकपर गोबरका चूर्ण रुगाया॥ १३॥

नन्द्र**गोच बोले**—जिनकी नाभिसे प्रकट हुए कयलसे सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है वे सम्पूर्ण भूतीके आदिस्थान श्रोहरि तेरी रक्षा करें ॥ १४ ॥ जिनकी दाढ़ोंके अश्रभागपर स्थापित होकर भूमि सम्पूर्ण जगतको धारण करती है वे वरह-रूप-धारी श्रीकेशव तेरी रक्षा करे ॥ १५ ॥ जिन विभूने अपने नकाबोसे शहुके वक्षःस्थलको विदीर्ण कर दिया था वे नुसिंहरूपी जनार्दन हेरी सर्वत्र रक्षा करें ॥ १६ ॥ जिन्होंने क्षणमात्रमें सङ्गरू त्रिविक्रमरूप धारण करके अपने तीन पगोसे त्रिलोकीको जाप लिया था वे वामनभगवान् तेरी सर्वदा रक्षा करे ॥ १७ ॥ गोबिन्द तेरे सिरकी, केशब कण्डकी, विष्णु गुहास्थान और जठरकी तथा जनार्दन जंघा और चरणोकी रक्षा करें ॥ १८ ॥ तेरे मुख, लाह, प्रबाह, ' मन और सम्पूर्ण इन्द्रियोंकी अखण्ड-ऐश्वर्यसे सम्पत्र अविनाशी श्रीनारायण रक्षा करें ॥ १९ ॥ तेरे अनिष्ट करनेवाले जो व्रेत, कुष्पाण्ड और राक्षस हो ते जाक्ने धनुष, चक्र और गदा धारण करनेवाले विष्णुभगवानुको राह्म-ध्वनिसे नष्ट

त्वां यातु दिक्षु वैकुण्ठो विदिक्षु मधुसूदनः । इषीकेशोऽम्बरे भूमौ रक्षतु त्वां महीधरः ॥ २१

श्रीपग्रदार उचाच

एवं कृतस्वस्तयमा नन्दगोपेन वालकः । शायितश्शकटस्याधी बालपर्यङ्किकातले ॥ २२ ते च गोपा पहददुष्ट्वा पूतनायाः कलेवरम् । मृतायाः परमं त्रासं विस्मयं च तदा ययुः ॥ २३ हो जायै ॥ २० ॥ भगवान् वैकुण्ठ दिशाओं में, मधुसूदन विदिशाओं (कोणों) में, इयोकेश आकाशमें तथा पृथिवीको धारण करनेवाले श्रीशिषजी पृथिवीपर तेरी रक्षा करें ॥ २१ ॥ श्रीपराशास्त्री बोले—इस प्रकार स्वसित्याचन कर नन्दगोपने बालक कृष्णको छकड़ेके नीचे एक क्रिटोलेपर सुल्य दिया ॥ २२ ॥ भरी हुई पूतनाके महान् कलेवरको देखकर उन सभी गोपोंको अत्यन्त भय और विस्मय हुआ ॥ २३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमें इशे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

छठा अध्याय

शकटभञ्जन, यमलार्जुन-उद्धार, व्रजवासियोंका गोकुलसे वृन्दावनमें जाना और वर्षा-वर्णन

श्रीपराञ्चर उवाच

कदाचित्छकटस्याधइशयानो मधुसूदनः। चिक्षेप चरणावृथ्यै स्तन्यार्थी प्रस्तोद हु॥ १ तस्य पादप्रहारेण शकटं परिवर्तितम्। विध्वस्तकुम्भभाण्डं तद्विपरीतं पपात वै॥ २ ततो हाहाकृतं सर्वो गोपगोपीजनो हिज। आजगामाश्च ददृशे बालमुत्तानशायिनम्॥ ३ गोपाः केनेति केनेदं शकटं परिवर्तितम्। तत्रैव बालकाः प्रोचुर्बालेनानेन पातितम्॥ ४ रुदता दृष्टमस्माभिः पाद्विक्षेपपातितम्॥ ४ रुदता दृष्टमस्माभिः पाद्विक्षेपपातितम्॥ ५ ततः पुनरतीवासनोपा विस्मयचेतसः। नन्दगोपोऽपि जयाह बालम्स्यन्तविस्मितः॥ ६

यशोदा शकटारूढभग्नभाण्डकपालिकाः ।

गर्गश्च गोकुले तत्र वसुदेवप्रचोदितः।

ज्येष्ठं च राममित्याह कृष्णं चैव तथावरम्।

शकटं चार्चयामास दक्षिपुष्पफलाक्षतैः ॥ ७

प्रच्छन्न एव गोपानां संस्कारानकरोत्तयोः ॥ ८

गर्गो मनिमतां श्रेष्ठो नाम कुर्वन्यहामतिः॥ ९

हुए मधुसूदनने दूधके लिये रोते-रोते ऊपरको लात मारी
॥ १॥ उनकी लात लगते ही बह छकड़ा सोट गया,
उसमें रखे हुए कुम्भ और भाण्ड आदि फूट गये और वह
उलटा जा पड़ा॥ २॥ हे द्विज ! उस समय हाहाकार मच
गया, समस्त गोप-गोपीगण वहाँ आ चहुँचे और उस
बालकको उतान सोये हुए देखा॥ ३॥ तब गोपगण पूछने
लगे कि 'इस छकड़ेको किसने उलट दिया, किसने उलट
दिया ?' तो बहाँगर सोलते हुए बालकोंने कहा—"इस
कृष्णने ही गिराया है॥ ४॥ हमने अपनी आँखोंसे देखा है
कि रोते-रोते इसकी लात लगनेसे ही यह छकड़ा गिरकर

श्रीपराशरजी बोले—एक दिन छकड़ेके नीचे सोये

उल्हेट गया है। यह और किसीका काम गर्ती हैं" ॥ ५ ॥ यह सुनकर गोपगणके चित्तमें अत्यन्त विस्मय हुआ तथा नन्दगोपने अत्यन्त चित्तत होकर बालकको उठा लिया ॥ ६ ॥ फिर यशोदाने भी छकड़ेमें रखे हुए फुटे भाण्डोंके टुकड़ीकी और उस छकड़ेको दही, पुण्प, अक्षत और फल आदिसे पूजा की ॥ ७ ॥

इसी समय वसूदेवजीके कहनेसे गर्गांचार्यने गोपीसे छिपे-छिपे गोंकुलमें आकर उन दोनों बालकीके [हिजोचित] संस्कार किये ॥ ८॥ उन दोनोंके नामकरण-संस्कार करते हुए महामति गर्गजॉने बहेका नाम राम और छोटेका कृष्णः बतलाया॥ ९॥

355 खल्पेनेव तु कालेन रिट्टिणों तौ तदा क्रजे । घृष्टजानुकरौ वित्र बभूवतुरुभावपि ॥ १० करीवभस्मदिग्धाङ्गौ भ्रममाणावितस्ततः । न निवारयितुं शेके यशोदा तौ न रोहिणी ॥ ११ गोवाटमध्ये क्रीडन्तौ वत्सवाटं गतौ पुनः । तदहर्जातगोवत्सपुच्छाकर्षणतत्परौ ॥ १२ यदा यशोदा तौ बालावेकस्थानचरावुभौ। शशाक नो वार्यितुं क्रीडन्तावतिचञ्चलौ ॥ १३ दाम्ना मध्ये ततो बद्ध्वा बबन्ध तमुलूखले । कृष्णमञ्जिष्टकर्माणमाह चेदमपर्विता ॥ १४ यदि शक्कोषि गच्छ त्वमतिचञ्चलचेष्टित । इत्युक्त्वाथ निजं कर्म सा चकार कुटुम्बिनी ॥ १५ व्यवायामध तस्यां स कर्षमाण उलुसलम् । यमलार्जुनमध्येन जगाम कमलेक्षण: ॥ १६ कर्पता वृक्षयोर्मध्ये तिर्पणतम्लुखलम् । भग्नावृत्तुङ्गशाखायौ तेन तौ यमलार्जुनौ ॥ १७ ततः कटकटाशब्दसमाकर्णनतत्परः । आजगाम ब्रजजनो ददर्श च महादूमौ ॥ १८ नवोद्ताल्पदन्तांश्सितहासं च बालकम्। तयोर्मध्यगतं दाम्ना बद्धं गाढं तथोदरे ॥ १९ ततश्च दामोदरतां स ययौ दामबन्धनात् ॥ २० गोपबुद्धास्ततः सर्वे नन्दगोपपुरोगमाः। मन्त्रयामासुरुद्विमा महोत्पातातिभीरवः ॥ २१ स्थानेनेह न नः कार्यं व्रजामोऽन्यन्यहावनम् । उत्पाता बहवो हात्र दृश्यन्ते नाशहेतवः ॥ २२ पूतनाया विनाशश्च शकटस्य विपर्ययः । विना वातादिदोषेण दूमयोः पतर्न तथा ॥ २३ वृन्दावनमितः स्थानात्तस्मादुव्हाम मा चिरम् । यावळीपमहोत्पातदोषो नाभिभवेद्वजम् ॥ २४

इति कृत्वा मति सर्वे गमने ते व्रजौकसः ।

ऊचुस्र्य स्वं कुलं शीघं गम्यतां मा विलम्बथ ॥ २५

हे विष ! वे दोनों बालक थोड़े ही दिनोंगे गौओंक गोष्टमें रेगते-रेगते हाथ और घुटनेकि बरू चलनेवाले हो गये ॥ १० ॥ गोवर और राख-भरे शरीरसे इधा-उधा घुमते हुए उन बालकोको यशोदा और रोहिणी रोक नहीं सकती थीं॥ ११॥ कभी वे गौओंके घोषमे खेलते और कभी बछडोंके मध्यमें चले जाते तथा कभी उसी दिन जन्मे हुए बाउड़ोंकी पुँछ पकड़कर खींचने लगते॥ १२॥ एक दिन जब बजोदा, सदा एक ही स्थानपर साथ-साथ खेलनेवाले उन दोनी अत्यन्त चञ्चल बालकोंको न रोक सकी तो उसने अनायास ही सब कर्न करनेवाछे कृष्णको रस्सीसे कटिभागमें कसकर ऊखलमे बाँघ दिया

और रोषपूर्वक इस प्रकार कहने लगी— ॥ १३-१४ ॥ "और चञ्चल ! अब दुझमें सामर्थ्य हो तो चला जा।"

ऐसा कहकर कुटुम्बनी यशोदा अपने घरके धन्धेमें लग

गयी ॥ १५॥ उसके गृहकार्यमें व्यय हो जानेपर कमलनयन कृष्ण खींचते खींचते यमलार्जुनके बीचमें <u>क्सलको</u> गये ॥ १६ ॥ और उन दोनों वृक्षोंके बीचमें तिरखी पड़ी हुई ऊक्क्को जीवते हुए उन्होंने ऊँची शाखाओंवाले यमलार्जन-वश्वको उसाइ डाला॥ १७॥ तब उनके उसक्रें का कर-कर शब्द सुनकर वहाँ व्रजनासीलोग दौड़ आये और उन दोनों महावृक्षोंको तथा उनके बांचमें कमरमें रस्तीसे कसकर वैधे हुए बालकको नन्हें-नन्हें अस्य दाँतोको श्रेत किरणोसे शुभ्र हास करते देखा। तभीसे रस्सीसे वैभनेके कारण उनका नाम दामोदर पड़ा ॥ १८ — २० ॥ तब नन्दगोप आदि समस्त बुद्धा गोपेनि महान्

उत्पातीके कारण अत्यन्तः भयभीत होकर आपसमें यह सलाह की- ॥ २१ ॥ 'अब इस स्थानपर रहनेका हमारा कोई प्रयोजन नहीं है, हमें किसी और महाबनको चलना चाहिये । क्योंकि यहाँ नाइकि कारणखरूप, पृतना-वध, छकडेका लोट जाना राधा आधि आदि किसी दोषके बिना ही वृक्षोंका गिर पड़ना इत्यादि बहुत-से उत्पात दिसायी देने रूपे हैं ॥ २२-२३ ॥ अतः जबतक कोई भूमिसम्बन्धी महान् उत्पात बजको नष्ट न करे तबतक शीक्ष ही हमलोग इस स्थानसे कुन्दाकनको चल दें ॥ २४ ॥

इस प्रकार वे समस्त अजवासी चलनेका विचारकर अपने-अपने कुटुम्बके लोगोंसे कहते लगे-- 'शीध

ततः क्षणेन प्रययुः शकटैगींबनैस्तथा । यूथशो वस्सपालाश्च कालयन्तो व्रजौकसः ॥ २६ द्रव्यावयवनिर्द्धृतं क्षणमात्रेण तत्तथा । काकभाससमाकीणं व्रजस्थानमभूद्द्विज ॥ २७

वृन्दावनं भगवता कृष्णेनाहिष्टकर्मणा । शुभेन मनसा ध्यातं गवां सिद्धिमधीपसता ॥ २८ ततस्तत्रातिरुक्षेऽपि धर्मकाले द्विजीत्तम ।

प्रावृद्काल इवोद्धृतं नवशणं समन्ततः ॥ २९ स समावासितः सर्वो व्रजो वृन्दावने ततः ।

शकटीवाटपर्यन्तश्चन्द्राद्धांकारसंस्थितिः ॥ ३० वत्सपालौ च संवृत्ती राभदामोदरौ ततः ।

एकस्थानस्थितौ गोष्ठे चेरतुर्बाललीलया ॥ ३१ बर्हियत्रकृतापीडौ वन्यपुष्पावतंसकौ ।

गोपवेणुकृतातोद्धपत्रवाद्यकृतस्वनौ ॥ ३२ काकपक्षधरौ बालौ कुमाराविव पावकी ।

काकपक्षधरा बाला कुमासाबव पावका । हसन्तौ च रमन्तौ च चेरतुः स्म महावनम् ॥ ३३

क्विड्रहत्तावन्योन्यं क्रीडमान्। तथा परै:।

गोपपुत्रैस्समं वत्सांश्चारयन्तौ विचेरतुः ॥ ३४ कालेन गच्छता तौ तु सप्तवर्षी महाद्रजे ।

सर्वस्य जगतः पालौ वस्तपालौ वभूवतुः ॥ ३५ प्रावृद्कालस्ततोऽतीवमेघौघस्थगिताम्बरः ।

बभूव वारिधाराभिरैक्यं कुर्वेन्दिशामिव ॥ ३६ प्ररूढनवशम्पाढ्या शक्रगोपाचितामही ।

प्ररूढनवशय्याढ्या शक्रगायाचितामहा । तथा मारकतीवासीत्पद्मरागविभूषिता ॥ ३७

ऊहुरुन्पार्गवाहीनि निम्नगान्भांसि सर्वतः । मनांसि दुर्विनीतानां प्राप्य लक्ष्मीं नवामिव ॥ ३८

न रेजेऽन्तरितञ्जन्त्रो निर्मलो मलिनैर्घनैः ।

सद्वादिवादो मूर्खाणां प्रगल्भाभिरिवोक्तिभिः ॥ ३९

दा मूलाणा प्रगल्यामाखाकामः ॥ ३५

ही चलो, देरी मत करों ॥ २५॥ तब वे बजवासी वत्सपाल दल बाँधकर एक क्षणमें ही छकड़ों और गौओंके साथ उन्हें हाँकते हुए चल दिये॥ २६॥ है

गाजाक साथ उन्हें हाकत हुए घर दिया। २६ ॥ ६ द्विज ! यस्तुऑके अवशिष्टांशोंसे युक्त वह ब्रजभूमि क्षणभरमें ही काक तथा भास आदि पक्षियोंसे व्याप्त हो

गयी॥ २७॥ तन लीलाविहारी भगवान् कृष्णने गौओकी

अभिवृद्धिको इच्छासे अपने शुद्धचितसे वृन्टावन (नित्य-वृन्दावनधाप) का चिन्तन किया॥२८॥ इससे, है द्विजोतम ! अत्यन्त रूक्ष ग्रीयकालमें भी वहाँ वर्षांभृतुके

समान सब ओर नवीन दूब इत्पन्न हो गयी॥ २९॥ तब चारो ओर अर्द्धचन्द्राकारस छक्डोंको बाह छगाकर वे

समस्त झजवासी वृन्दावनमें रहने छगे ॥ ३० ॥ तदनन्तर राम और कृष्ण भी बछड़ोंके रक्षक हो गणे और एक स्थानपर रहकर गोष्ठमें बाळळीळा करते हुए विचरने छगे॥ ३१ ॥ वे काकपक्षधारी दोनों बाळक

सिरपर मयुर-पिच्छका मुकुट धारणकर तथा वन्यपृष्यीके

कर्णभूषण पहन खालोचित वंशी आदिसे सब प्रकारके बाजंकी ध्वनि करते तथा पतिके बाजेसे ही नाना प्रकारकी ध्वनि निकालते, स्कन्दके अंश्रामृत शास-विशास कुमारोक समान ईसते और खेलते हुए उस महावनमें विचरने लगे॥ ३२-३३॥ कभी एक-दूसरेको अपने पीटपर ले जाते तथा कभी अन्य खालबालोंके साथ

खेलते हुए वे बंछड़ोंको चराते साथ-साथ घुमते

रहते ॥ ३४ ॥ इस प्रकार उस महाद्राजमें रहते रहते कुछ समय बीतनेपर वे निश्चिललोकपालक वसस्पाल सात

वर्षके हो गये ॥ ३५ ॥ तब मेभसमृहसे आकाशको आच्छादित करता हुआ तथा अतिशय वारिधाराओंसे दिशाओंको एकरूप करता

हुआ वर्षाकाल आया ॥ ३६ ॥ उस समय नवीन दूर्वाके बढ़ जाने और धीरबहूटियोंसे व्याप्त हो जानेके कारण पृथिबी पद्मसमिवभूषिता मरफतमयी-सी जान पड़ने लगी ॥ ३७ ॥ जिस प्रकार नया धन पाकर दुष्ट पुरुषोंका चित्त उस्कृक्कल हो जाता है उसी प्रकार नदियोंका जल सब

ओर अपना निर्दिष्ट मार्ग छोड़कर बहुने लगा ॥ ३८ ॥ जैसे भूर्ख मनुष्योंको घृष्टतापूर्ण उक्तियोंसे अच्छे बक्ताकी वाणी भी मलिन पड़ जाती है वैसे ही मलिन पेघोंसे

[🌞] एक प्रकारके लाल कीड़े, जो वर्षा-कालमें उत्पन्न होते हैं, उन्हें शक्रगोंप और वोस्बह्दी कहते हैं।

निर्गुणेनापि चापेन शकस्य गगने पदम्। अवाप्यताविवेकस्य नुपस्येव परिप्रहे ॥ ४० मेघपृष्टे बलाकानां रराज विमला ततिः। दुर्वृत्ते वृत्तचेष्टेव कुलीनस्यातिशोभना ॥ ४१ न वबन्धाम्बरे स्थैयं विद्युदत्यत्तचञ्चला । मैत्रीय प्रवरे पुंसि दुर्जनेन प्रयोजिता॥४२ बभुव्रस्पद्यास्तुणशष्यचयावृताः । अर्थान्तरमनुप्राप्ताः प्रजडानामियोक्तयः ॥ ४३ उन्मत्तिशिखसारङ्के तस्मिन्काले महावने । कृष्णरामौ मुदा युक्तौ गोपालैश्चेरतुस्सह ॥ ४४ क्रचिद्रोभिस्समं रम्यं गेयतानरतावुभौ। चेरतुः कचिदत्यर्थं शीतवृक्षतलाश्चितौ ॥ ४५ क्रचित्कदम्बस्नक्चित्रौ मयूरस्रग्वराजितौ । विलिस्रौ कविदासातां विविधैर्गिरिधातुभिः ॥ ४६ पर्णशब्यासु संसुप्तौ कविन्निद्रान्तरेषिणौ । क्रचिद्रजीत जीमूते हाहाकारस्वाकुलौ ॥ ४७ गायतामन्यगोपानां प्रशंसापरमौ क्रचित्। मयूरकेकानुगती गोपबेणुप्रवादकौ ॥ ४८ नानाविधैभविरुत्तमप्रीतिसंयुतौ । क्रीडन्तौ ती वने तस्मिंश्चेरतुस्तुष्ट्रमानसौ ॥ ४९ विकाले च समं गोभिगोंपवृन्दसभन्वितौ । विहत्याश्व यथायोगं व्रजमेत्य महाबलौ ॥ ५० गोपैस्समानैस्सहितौ क्रीडन्तावमराविव । एवं तावूषतुस्तत्र रामकृष्णौ महाद्युती ॥ ५१

आच्छादित रहनेके कारण निर्मां चन्द्रमा भी शोभाहीन ही गया॥ ३९॥ जिस प्रकार विवेकहीन राजाके संगमें गुणहीन मनुष्य भी प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेता है उसी प्रकार आकाश-पण्डलमें गुणरहित इन्द्र-चनुष स्थित हो गया॥ ४०॥ दुराचारी पुरुषमें कुलीन पुरुषकी निष्कपद शुभ चेष्टाके समान मेघमण्डलमें चगुलोंकी निर्माल पॉक सुशोमित होने लगी॥ ४१॥ श्रेष्ट पुरुषके साथ दुर्जनकी मित्रताके समान अत्यन्त चञ्चल विद्युत् आकाशमें स्थिर न रह सकी॥ ४२॥ महामूर्स चनुलोंकी अन्यार्थिका उक्तियोंके समान मार्ग क्वा और दूबसमृहसे आच्छादित होकर अस्पष्ट हो गये॥ ४३॥

उस समय उचात मयूर और चातकगणसे सुशोधित महायनमें कृष्ण और राम प्रसन्तापूर्वक गोपकुमारोंके साथ विचरने लगे ॥ ४४ ॥ वे दोनों कभी गीओंके साथ मनोहर गान और तान छेड़ते तथा कभी अत्यन्त शीतल वृक्षतलका आश्रय लेते हुए विचरते रहते थे ॥ ४५ ॥ वे कभी तो कदम्ब-पुणोंके हारसे विचित्र वेय बना लेते, कभी मयूर-पिच्छकी मालासे सुशोधित होते और कभी नाना प्रकारकी पर्वतीय धातुओंसे अपने शरीरको लिए कर लेते ॥ ४६ ॥ कभी कुछ झपको लेनेको इच्छासे पत्तोंको शब्यापर लेट जाते और कभी मेसके गर्वनिपर 'हा हा' करके कोलाहल मचाने लगते ॥ ४७ ॥ कभी दूसरे गोपकि गानेपर आप दोनो उसकी प्रशंसा करते और कभी खलोंकी-सी बाँसुरी बजाते हुए प्रयुक्ती बोलीका अनुकरण करने लगते ॥ ४८ ॥

इस प्रकार वे दोनो अत्यन्त प्रीतिक साथ नाना प्रकारके भावोंसे परस्पर खेलते हुए प्रसन्नचित्तसे उस वनमें विचरने लगे ॥ ४९ ॥ सायङ्कालके समय वे मतावली बालक बनमें यथायोग्य विहार करनेके अनन्तरं में और म्यालवालेकि साथ वजमें लौट आते थे ॥ ५० ॥ इस तरह अपने समययस्क मोपगणके साथ देवताओंके समान व्रीडा करते हुए वे महातेजस्मी राम और कृष्ण वहाँ रहने लगे ॥ ५१ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽदो पष्टोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

कालिय-द्मन

P

3

6

श्रीपराशर उवाच

एकदा तु विना रामं कृष्णो वृन्दावनं ययौ । विचचार वृतो गोपैर्वन्यपुष्पस्तगुरूवरुः ॥

स जगामाथ कालिन्दीं लोलकल्लोलशालिनीप् ।

तीरसंलग्नफेनौथैर्हसन्तीमिव सर्वतः ॥

तस्याञ्चातिमहाभीमं विषाग्निश्चितवारिकम् । हृदं काल्यिनागस्य ददर्शातिविभीषणम् ॥

विषाप्रिना प्रसरता दग्धतीरमहीस्हम् । वाताहताम्बुविक्षेपस्पर्शदग्धविहङ्गमम् ॥

तमतीव महारौद्रं मृत्युवक्त्रमिवापरम्।

विलोक्य चिन्तयामास भगवान्मधुमूदनः ॥

अस्मिन्वसति दुष्टात्मा काल्यि।ऽसौ विषायुधः ।

यो मया निर्जितस्यक्ता दुष्टो नष्टः पयोनिधिम् ॥ तेनेयं दुषिता सर्वा यमुना सागरङ्गमा ।

न नरैगोंधनैशापि तृषातैंरूपभुज्यते ॥ वटमा सम्मानस्य कर्नन्यो सियहो समा ।

तदस्य नागराजस्य कर्तच्यो नियहो मया । निस्तासास्तु सुखं येन चरेयुर्वजवासिनः ॥

एतदर्थं तु लोकेऽस्मिन्नवतारः कृतो मया । यदेषामुत्पथस्थानां कार्या शान्तिर्दुरात्मनाम् ॥

तदेतं नातिदूरस्यं कदम्बमुरुशास्त्रिनम् । अधिरुह्य पतिष्यामि ह्रदेऽस्मित्रनिलाशिनः ॥ १०

श्रीपराहार उचाच

इस्यं विचित्त्य बद्ध्वा च गार्ड परिकरं तत: ।

निपपात हुदे तत्र नागराजस्य वेगतः॥ ११

तेनातिपतता तत्र क्षोभितस्स महाहुदः । अत्यर्थं दूरजातांस्तु समसिञ्चन्महीरुहान् ॥ १२ श्रीपराशस्त्री बोले—एक दिन समको बिना साथ

लिये कृष्ण अकेले ही वृन्दावनको गये और वहाँ बन्ध पुर्वोकी मालाओंसे सुशीमित हो गोपगणसे घिरे हुए विचरने लगे॥ १॥ घूमते-घूमते वे चन्नल तरङ्गोसे

शोभित यमुनाके तटपर जा पहुँचे जो किनारोंपर फेनके इक्तद्वे हो जानेसे मानो सब ओरसे हँस रही थी॥ २॥

यमुनाजीमें उन्होंने विद्याप्रिसे सत्तप्त जलवाला काल्यिनागका महाभवेकर कुण्ड देखा॥३॥ उसकी विद्याप्तिके प्रसारसे किनारेके बृक्ष जल गये थे और

वायुके थपेड़ोसे उछलते तुए जलकणोका स्पर्श होनेसे। पश्चिमण दम्ब हो जाते थे॥४॥

मृत्युके अपर मुसके समान उस महाभयंकर कुण्डको देखकर भगवान् मधुसूदनने विचार किया— ॥ ५॥ 'इसमें दुष्टात्मा काल्टियनाग रहता है जिसका

विष ही शस्त्र है और जो दुष्ट मुझ [अर्थान् मेरी विभूति गरुड] से पराजित हो समुद्रको छोड़कर भाग आया है॥ ६॥ इसने इस समुद्रगामिनी सम्पूर्ण

यभुनाको दूषित कर दिया है, अब इसका जल प्यासे मनुष्यों और गौओंके भी काममें नहीं आता है॥७॥

अतः मुझे इस नागराजका दमन करना चाहिये, जिससे

ब्रजवासी लोग निर्भय होकर सुखपूर्वक रह सके ॥ ८ ॥ 'इन कुमार्गगामी दुग्रमाओंको शान्त करना चाहिये,

इसिलचे ही तो मैंने इस लोकमें अवतार लिया है॥९॥ अतः अब मैं इस ऊँची-ऊँची झाखाओंबाले पासहीके कदम्बवृक्षपर चड़कर बायुभक्षी नागराजके कुण्डमें कुदता हैं ॥१०॥

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय! ऐसा विचारकर भगवान् अपनी कमर कसकर वेगपूर्वक नागराजके कुण्डमें कूद पड़े॥११॥ उनके कूदनेसे उस महाहदने अत्यन्त बोभित होकर दूरस्थित वृक्षोंको भी भिगो दिया॥१२॥ तेऽहिदुष्टवियन्वालातप्ताम्बुपवनोक्षिताः ।
जज्वलुः पादपासस्यो ज्वालाव्याप्तदिगन्तराः ॥ १३
आस्फोटवामास तदा कृष्णो नागहदे भुजप् ।
तच्छव्दश्रवणाद्याशु नागराजोऽभ्युपागमत् ॥ १४
आताम्रनयनः कोपाद्वियज्वालाकुलैर्मुसैः ।
वृतो महाविषैश्चान्यैरुरगैरनिलाशनैः ॥ १५
नागपल्यश्च शतशो हारिहासेपशोभिताः ।
प्रकप्पिततनुक्षेपचलत्कुण्डलकान्तयः ॥ १६
ततः प्रवेष्टितस्पर्यस्म कृष्णो भोगवन्धनैः ।
ददंशुस्तेऽपि तं कृष्णे विषज्वालाकुलैर्मुसैः ॥ १७
तं तत्र पतितं दृष्ट्वा सर्पभोगैर्निपीडितम् ।
गोपा व्रजमुपागम्य चुकुशुः शोकलालसाः ॥ १८

एव मोहं गतः कृष्णो मग्नो वै कालियहुदे ।
भक्ष्यते नागराजेन तमागच्छत पश्यत ॥ १९
तच्छुत्वा तत्र ते गोपा वज्रपातोपमं वचः ।
गोप्यश्च त्वरिता जग्मुर्यशोदाप्रमुखा हृदम् ॥ २०
हा हा क्रासाविति जनो गोपीनामितिवहुलः ।
यशोदया समं भ्रान्तो हुतप्रस्वितितं वयौ ॥ २१
नन्दगोपश्च गोपाश्च रामश्चाद्धतिकमः ।
त्वरितं वमुनां जग्मः कृष्णदर्शनलालसाः ॥ २२
ददृशुश्चापि ते तत्र सर्पराजवशङ्कतम् ।
निष्पयत्नीकृतं कृष्णं सर्पभोगविवेष्टितम् ॥ २३
नन्दगोपोऽपि निश्चेष्ठो न्यस्य पुत्रमुखे दृशम् ।

गोष्य उन्हुः सर्वा यशोदया सार्द्ध विशामोऽत्र महाहुदम् । सर्पराजस्य नो गन्तुमस्माभिर्युज्यते ब्रजम् ॥ २६ दिवसः को विना सूर्य विना चन्द्रेण का निशा । विना युषेण का गावो विना कृष्णेन को ब्रजः ॥ २७

यशोदा च महाभागा बभूव मुनिसत्तम ॥ २४

प्रोचुश्च केहावं प्रीत्या भयकातर्यगद्भदम् ॥ २५

गोप्यस्त्वन्या स्टन्सश्च दद्शः शोककातराः ।

उस सर्पके विषम विषकी ज्वालारी तपे हुए जलसे भीगनेके कारण वे वृक्ष तुरुत ही जल उठे और उनकी ज्वालाओंसे सम्पूर्ण दिशाएँ व्याह हो गर्वी ॥ १३ ॥

तब कृष्णचन्द्रने तस नागकुण्डमे अपनी भुजाओंको टोंका; उनका शब्द सुनते ही वह नागराज तुरंत उनके सम्मुख आ गया ॥ १४ ॥ उसके नेत्र क्रोधसे कुछ ताप्तवर्ण हो रहे थे, मुखोंसे अग्निकी लगटें निकल रही थीं और वह महाविषेले अन्य वायुमक्षी सपोंसे विश्व हुआ था ॥ १५ ॥ उसके साथमें मनोहर हारोंसे पृषिता और शरीर-कण्पनसे हिलते हुए कुण्डलोंकी कान्तिसे सुशोभिता सैकड़ों नागपित्रयाँ थीं ॥ १६ ॥ तब सपोंने कुण्डलाकार होकर कृष्णचन्द्रको अपने शरीरसे बाँध लिया और अपने विषाग्नि-सन्तप्त मुखोंसे काटने लगे ॥ १७ ॥

तदनत्तर गोपगण कृष्णचन्द्रको नागकुण्डमें गिरा हुआ और सर्वेकि फणोंसे पीडित होता देख अवमें चले आये और शोकसे व्याकुल होका रोने लगे॥ १८॥

गोपगण बोले—आओ, आओ, देखो ! यह कृष्ण कालीदहमें डूबकर मूर्चित हो गया है, देखो इसे नागराज खाये जाता है। १९॥ वजपातके समान उनके इन अमङ्गल खाक्योंको सुनकर गोपगण और यशोदा आदि गोपियाँ तुरंत हो कालोदहपर दौड़ आयाँ॥ २०॥ 'हाय ! त्यप ! वे कृष्ण कहाँ गये ?' इस प्रकार अत्यन्त व्याकुलतापूर्वक येती हुई गोपियाँ यशोदाके साथ शीधतासे गिरती-पड़ती चलों॥ २१॥ नन्दजी तथा अन्यान्य गोपगण और अद्भुत-विक्रमशाली चलगमजी भी कृष्णदर्शनकी लालसासे शीधतापूर्वक यमुना-तटपर आये॥ २२॥

वहाँ आकर उन्होंने देखा कि कृष्णचन्द्र सपैराजके चंगुलमें फैसे हुए हैं और उसने उन्हें अपने दारीरसे लंपेटकर निरुपाय कर दिया है ॥ २३ ॥ हे मुनिसत्तम ! महाभागा यशोदा और उन्होंगेप भी पुत्रके मुखपर टकटको लगाकर चेष्टाशून्य हो गये ॥ २४ ॥ अन्य गोपियोंने भी जब कृष्णचन्द्रको इस दशामें देखा तो ये शोकाकुल होकर रोने लगों और भय तथा व्याकुलताके कारण गद्ददयाणीसे उनसे भीतिपूर्वक कहने लगीं ॥ २५ ॥

गोपियाँ बोर्ली — अब हम सब भी यहोदाके साथ इस सर्पराजके महाकुष्डमें ही डूबी जाती हैं, अब हमें अजमें जाना उचित नहीं है ॥ २६ ॥ सूर्यके बिना दिन कैसा ? चन्द्रमाके किना रात्रि कैसी ? सॉइके बिना गोएँ क्या ? ऐसे ही कृष्णके बिना ब्रजमें भी क्या रखा है ? ॥ २७ ॥

विनाकृता न यास्यायः कृष्णेनानेन गोकुलम् । अरम्यं नातिसेव्यं च वास्तिनं यथा सरः ॥ २८ यत्र नेन्दीवरदलश्यामकान्तिरयं हरि:। तेनापि मातुर्वासेन रतिरस्तीति विस्मयः ॥ २९ उत्फुल्लपङ्कादलस्पष्टकान्तिविलोचनम् । अपरयन्यो हरि दीनाः कथं गोष्ठे भविष्यथ ॥ ३० अत्यन्तमधुरात्जपहृतादोषमनोरथम् न विमा पुण्डरीकाक्षं यास्यामो नन्दगोकुलम् ॥ ३१ भोगेनावेष्टितस्यापि सर्पराजस्य पर्यत । स्मितशोभि मुखं गोप्यः कृष्णस्यास्मद्विलोकने ॥ ३२ श्रीपराद्वार उवाच इति गोपीवचः श्रुत्वा रौहिणेयो महाबलः । गोपांश्च त्रासविधुरान्विलोक्य स्तिमितेक्षणान् ॥ ३३ नन्दं च दीनमत्यर्थं न्यस्तदृष्ट्वं सुतानने । युर्खाकुलां यशोदां च कृष्णमाहात्मसंज्ञया ॥ ३४ किमिदं देवदेवेश भावोऽयं मानुषस्त्वया। व्यज्यतेऽत्यन्तमात्मानं किमनन्तं न वेत्सि यत् ॥ ३५ त्यमेव जगतो नाभिरराणामिव संश्रयः। कर्त्तापहर्त्ता पाता च त्रैलौक्यं त्वं त्रयीपयः ॥ ३६ सेन्द्रै स्दाप्रिवसभिरादित्यैर्यस्दश्चिभिः ।

सेन्द्रै स्द्रामिवसुभिरादित्यैर्मस्दश्चिभिः । विन्यसे त्वमचिन्त्यात्मन् समस्तैश्चैव योगिभिः ॥ ३७ जगत्यश्चै जगन्नाध भारावतरणेच्छ्या । अवतीर्णोऽसि मर्स्येषु तवांशश्चाहमम्रजः ॥ ३८ मनुष्यलीलां भगवन् भजता भवता सुराः । विडम्बयन्तस्त्वल्लीलां सर्वे एव सहासते ॥ ३९ अवतार्य भवान्यूर्वं गोकुले तु सुराङ्गनाः । क्रीडार्थमात्मनः पश्चादवतीर्णोऽसि शाश्चत ॥ ४० अत्रावतीर्णयोः कृष्ण गोपा एव हि बान्धवाः । गोप्यश्च सीदतः कस्मादेता-बन्धुनुपेक्षसे ॥ ४९ दिशतो मानुषो भावो दिश्ति बालनापलम् । तदयं दम्यतां कृष्ण दृष्टात्मा दशनायुषः ॥ ४२ कृष्णके बिना साथ लिये अब हम गोकुल नहीं जायँगी; क्योंकि इनके बिना वह जरूई।म सरोबरके समान अत्यन्त अभव्य और असेव्य है।। २८॥ जहीं नीलकम्मलदलकी सी आभायाले ये स्थामसुन्दर हरि नहीं है उस मातु-मन्दिरसे भी प्रीति होना अस्यन्त आश्चर्य ही है।। २९॥ अरी! खिले हुए कम्मलदलके सदृश कान्तियुक्त नेत्रोंवाले श्रीहरिको देखे बिना अस्यन्त दीन हुई तुम किस प्रकार वाजमें रह सकोगी?॥ ३०॥ जिन्होंने अपने अस्यन्त मनोहर बोलीसे हमारे सम्पूर्ण मनोरधींको अपने वद्यीभूत कर लिया है उन कम्मलनबन कृष्णचन्द्रके बिना हम नन्द्रजीक गोकुलको नहीं जायँगी॥ ३१॥ अरी गोपियो! देखो, सर्पराजके फणसे आवृत होकर भी श्रीकृष्णका मुख हमें देखकर मधुर मुसकानसे सुशोभित हो रहा है॥ ३२॥ अरीपराइस्त्री बोले—गोपियोके ऐसे वचन सनकर

तथा त्रासिबहुल चिकतनेत्र गोपोको, पुत्रके मुखपर दृष्टि लगाये अत्यन्त दीन नन्दजीको और मुर्च्छाकुल बशोदाको देखकर महाबली ग्रेहिणीनन्दन बलगमबीने अपने सङ्केतमें कृष्णजीसे कहा--- ॥ ३३-३४ ॥ "हे देवदेवेधर ! क्या आप अपनेको अनन्त नहीं जानते ? फिर किसलिये यह अत्यन्त मानव-भाव स्थक्त कर रहे हैं ॥ ३५ ॥ पहियोंकी नाभि जिस प्रकार अरोका आश्रय होती है उसी प्रकार आप ही जगतके आश्रम, कर्ता, हर्ता और रक्षक हैं तथा आप ही बैलोक्यस्वरूप और वेदबरीमय हैं॥३६॥ हे अचिन्त्यात्मन् ! इन्द्र, रुद्र, अग्नि, वसू, आदित्य, मरुद्रण और अधिनीकुमार तथा समस्त योगिजन आपहीका चिन्तन करते हैं ॥ ३७ ॥ हे जगन्नाथ ! संसारके द्वितके लिये पश्चिक्तका भार उतारनेकी इच्छासे ही आपने नर्त्यलोकमें अवतार लिया है: आएका अग्रज मैं भी आपहीका अंश हैं ॥ ३८ ॥ हे भगवन् ! आपके मन्ष्य-लीला करनेपर ये गोपवेषधारी समस्त देवगण भी आपकी लीरमओका अनुकरण करते हुए आपहीके साथ रहते हैं ॥ ३९ ॥ हे आश्वत ! पहले अपने विहासर्थ देवाङ्कनाओंको गोपीरूपसे योकुलमें अवतीर्णकर पीछे आपने अवतार लिया है ॥ ४० ॥ हे कृष्ण ! यहाँ अवतीर्ण होनेपर हम दोनोंके तो ये गोप और गोपियाँ ही बान्धव हैं; फिर अपने इन द:खी बान्धवीकी आप क्यों उपेक्षा करते हैं। ॥ ४१ ॥ हे कृष्ण ! यह मनुष्यभाव और बालचापल्य तो आप बहुत दिखा चुके, अब तो जीव ही इस दुशत्पाका जिसके शब दाँत ही हैं, दमन कीजिये"॥ ४२॥

श्रीपराश्य उवाच

इति संस्मारितः कृष्णः स्मितभिन्नोष्टसम्पृटः । आस्फोट्य मोचयामास खदेहं भोगिबन्धनात् ॥ ४३ आनम्य चापि हस्ताभ्यामुभाभ्यां मध्यमं शिरः । आस्ह्याभुप्रशिरसः प्रणनत्त्रोत्तविक्रमः ॥ ४४ प्राणाः फणेऽभवंश्चास्य कष्णस्याङ्गित्रनिकडनैः । यत्रोत्रति च कुरुते ननामास्य तत्रिशरः ॥ ४५ मूर्क्अमुपाययौ भ्रान्या नागः कृष्णस्य रेचकैः । दण्डपातनिपातेन ववाम रुधिरं बहु ॥ ४६ तं विभुग्नशिरोत्रीयमास्येभ्यस्त्रुतशोणितम् । विलोक्यं करुणं जग्मस्तत्पत्यो मधसदनम् ॥ ४७ नागपत्त्य ऋदः ज्ञातोऽसि देवदेवेश सर्वज्ञस्त्वमनुत्तमः । परं ज्योतिरचिन्सं यत्तदंशः परमेश्वरः॥४८ न समर्थाः सुरास्तोतं यमनन्यभवं विभूम् । स्वरूपवर्णनं तस्य कथं योषित्करिष्यति ॥ ४९ यस्याखिलमहीव्योमजलात्रिपवनात्पकम् । ब्रह्माण्डमल्पकाल्पांशः स्तोष्यामस्तं कथं वयम् ॥ ५० यतन्तो न विदर्नित्यं यत्स्वरूपं हि योगिनः । परमार्थमणीरल्पं स्थूलात्स्थुलं नताः स्मतम् ॥ ५१

न यस्य जन्मने धाता यस्य चान्ताय नान्तकः । स्थितिकर्त्ता न चान्योऽस्ति यस्य तस्मै नमस्सदा ॥ ५२

कोपः खल्पोऽपि ते नास्ति स्थितिपालनमेव ते । कारणं कालियस्यास्य दमने श्रूयतां वच: ॥ ५३ खियोऽनुकम्प्यासाधुनां मृहा दीनाश्च जन्तदः ।

यतस्ततोऽस्य दीनस्य क्षम्यतां क्षमतां वर ॥ ५४ समस्तजगदाधारो भवानल्पवलः फणी।

त्वत्पादपीडितो जह्यान्पुहूर्तार्द्धेन जीवितम् ॥ ५५ क पन्नगोऽल्पवीयोऽयं क भवान्भुवनाश्रयः । प्रीतिद्वेषी समोत्कृष्टगोचरी भवतोऽस्यय ॥ ५६

श्रीपराञरजी बोले-इस प्रकार स्मरण कराये जानेपर, मधुर मुसकानसे अपने ओष्टसम्पटको खोलते हुए श्रीकृष्णचन्द्रने उछलकर अपने शरीरको सर्पके बन्धनसे छड़ा लिया॥४३॥ और फिर अपने दोनों हाथोंसे उसका बीचका फण क्रुकाकर उस नतसस्तक सर्पक उत्पर चढ़कर बड़े बेगसे नाचने लगे ॥ ४४ ॥

कृष्णचन्द्रके चरणोकी धमकसे उसके प्राण मुखमें आ गये, वह अपने किस मस्तकको उठाता उसीपर कृदकर भगवान् उसे झुका देते ॥ ४५ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रजीकी भान्ति (भ्रम्), रेचक तथा दण्डपात गमकी [गृत्यसम्बन्धिनी] गतियोंके ताडनसे वह महासर्प मुर्च्छित हो गया और उसने बतृत-सा संधिर वमन किया ॥ ४६ ॥ इस प्रकार उसके सिर और प्रीवाओको क्ले हुए तथा मुलेसि रुधिर बहता देख उसकी पत्रियाँ करुणासे भरकर श्रीकृष्णचन्द्रके पास अस्मी ॥ ४७ ॥

नागपत्नियाँ बोर्ली—हे देवदेवेश्वर ! हमने आपको पहचान लिया; आप सर्वज्ञ और सर्वश्रेष्ठ हैं, जो अचिन्य और परम ज्योति है आप इसीके अंदा परमेश्वर है ॥ ४८ ॥ जिन स्वयाणु और व्यापक प्रध्की स्तृति करनेमें देवगण भी समर्थ नहीं है उन्हीं आपके स्वरूपका हम स्त्रियों किस प्रकार वर्णन कर सकतो हैं ? ॥ ४९ ॥ पृथियो, आकारा, जरू, अग्नि और वायुध्वरूप यह सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड जिनका छोटे-से-छोटा अंश है, उसकी स्तृति हम किस प्रकार कर सकेंगी॥५०॥ योगिजन जिनके नित्यस्वरूपको यत करनेपर भी नहीं जान पाते तथा जो परमार्थरूप अल्से भी अणु और स्थलसे भी स्थल है उसे हम नमस्वार करती हैं ॥ ५१ ॥ जिस्के जन्ममें विधाता और अत्तमें काल हेत् नहीं है तथा जिनका स्थितिकर्ता भी कोई अन्य नहीं है उन्हें सर्वदा नमस्कार करती है॥ ५२॥ इस कालियनागके देमनमें आएको थोडा-सा भी क्रोध नहीं है, केवल लोकरक्षा ही इसका हेत् है; अतः हमारा निवेदन सनिये ॥ ५३ ॥ हे क्षमाज्ञीलोंमें श्रेष्ठ ! साथ प्रत्योको सियों तथा मृह और दीन जन्तुओंपर सदा ही कृपा करनी चाहिये; अतः आप इस दीनका अपराध क्षमा कीजिये॥ ५४॥ प्रभो आए सम्पूर्ण संसारके अधिष्ठान हैं और यह सर्प तो । आपकी अपेक्षा । अत्यन्त बलहीन है । आपके चरणोसे पीडित होकर तो यह आधे मुहर्तमें ही अपने प्राण छोड़ देगा ।। ५५ ॥

हे अञ्चय ! प्रीति सपानसे और द्वेष उत्कहरो देखे जाते हैं: फिर कहां तो यह अल्पवीयं सर्प और कहाँ ततः कुरु जगत्स्वामिन्प्रसादमवसीदतः । प्राणोस्यजति नागोऽयं भर्तृभिक्षा प्रदीयताम् ॥ ५७ भुवनेश जगन्नाथ महापुरुष पूर्वज । प्राणोस्यजति नागोऽयं भर्तृभिक्षां प्रयच्छ नः ॥ ५८ वेदान्तवेद्य देवेश दुष्टदैत्यनिबर्हण । प्राणोस्यजति नागोऽयं भर्तृभिक्षा प्रदीयताम् ॥ ५९ श्रीगरशर उवाच

इत्युक्ते ताभिराश्वस्य क्लान्तदेहोऽपि पन्नगः । प्रसीद देवदेवेति प्राह वाक्यं शनैः शनैः ॥ ६०

कालिय उना ब

तवाष्ट्रगुणमैश्चर्यं नाश्च स्वाभाविकं परम् । निरस्तातिशयं यस्य तस्य स्तोष्यामि किन्वहम् ॥ ६१

त्वं परस्त्वं परस्याद्यः परं त्वतः परात्मक ।

परस्मात्परमो यस्त्वं तस्य स्तोष्यामि किन्वहम् ॥ ६२

यस्मादृब्रह्मा च रुद्रश्च चन्द्रेन्द्रमरुद्रश्चिनः । वसवश्च सहादित्यैसास्य स्तोष्यामि किन्वहम् ॥ ६३

एकावयवसूक्ष्मांशो यस्पैतदिसलं जगत्।

कल्पनावयवस्यांशसास्य स्तोष्यामि कि=वहम् ॥ ६४ सदसद्वपिणो यस्य व्रह्माद्यास्त्रिदशेश्वराः ।

परमार्थं न जानन्ति तस्य स्तोष्यामि किन्वहम् ॥ ६५

ब्रह्माद्यैरचिंतो यस्तु गन्धपुष्पानुलेपनै:।

नन्दनादिसमुद्धतैस्सोऽच्यति वा कथं मया ॥ ६६

यस्यावताररूपाणि देवराजस्सदार्चीत । न वेत्ति परमं रूपं सोऽर्च्यते वा कथं मया ॥ ६७

विषयेभ्यसमावृत्य सर्वाक्षाणि च योगिनः ।

यमर्चयन्ति ध्यानेन सोऽर्च्यते वा कथं मया ॥ ६८

हृदि सङ्करूप्य यद्रूपं ध्यानेनार्चन्ति योगिनः । धानप्रधानिया नामः मोदर्जने ना कर्षं प्रया ॥ ६४

भावपुष्पादिना नाथः सोऽर्च्यते वा कधं मया ॥ ६९

सोऽहं ते देवदेवेश नार्चनादौ स्तुतौ न च । सामर्थ्यवान् कृपामात्रमनोवृत्तिः प्रसीद मे ॥ ७० अखिलभुवनाश्रय आप ? [इसके साथ आपका हेष कैसा ?] ॥ ५६ ॥ अतः हे जगत्स्वामिन् ! इस दीनपर तथा स्वीजिदे । हे प्राचे ! अब यह नाम अपने पाण स्वेडने

दया कीजिये । हे प्रभी ! अय यह नाग अपने प्राण छोड़ने ही चाहता है; कृपया हमें पतिकी भिक्षा दीजिये ॥ ५७ ॥ हे भुवनेश्वर ! हे जगन्नाथ ! हे महापुरुष ! हे पूर्वज ! यह

नाग अब अपने प्राप्त छोड़ना ही चाहता है; कृपया आप हमें पतिकी भिक्षा टीजिये ॥ ५८ ॥ हे बेदान्तवेदा-देवेश्वर | हे दुष्ट-दैत्य-दलन !| अब यह नाग आपने

दीजिये ॥ ५९ ॥

श्रीपराशरजी खोले—नागपित्रगैकि ऐसा कहनेपर थका-माँदा होनेपर भी नागराज कुछ ढाँढस बाँधकर धीरे-धीरे कहने लगा "हे देवदेव ! प्रसन्न होइये" ॥ ६० ॥

प्राण छोड़ना ही चाहता है; आप हमें पतिकी भिक्षा

कास्त्रियनाग बोला—हे नाथ ! आपका स्वाभाविक अष्टगुण विशिष्ट परम ऐश्वर्य निरतिशय है [अधाँत् आपसे बढ़कर किसोका भी ऐश्वर्य महीं है], अतः मैं किस प्रकार आपकी स्तुति कर सकूँगां ? ॥ ६१ ॥ आप पर हैं, आप पर (मुलप्रकृति) के भी आदिकारण हैं, हे परासक ! परकी

प्रकृति भी आपहीसे हुई है,अतः आप परसे भी पर हैं फिर मैं किस प्रकार आपकी स्तृति कर सकूँगा ? ॥ ६२ ॥ जिनसे ब्रह्मा, स्ट्रं, चन्द्र, इन्द्र, मरुद्रण, अधिनीकुमार,

वसुगण और आदित्य आदि सभी उत्पन्न हुए हैं उन आपको मैं किस प्रकार स्तुति कर सर्कूगा ? ॥ ६३ ॥ यह

सकुँगा ? ॥ ६४ ॥ विन सदस्त (कार्य-कार्ण) खरूपके

सम्पूर्ण जगत् जिनके काल्पनिक अवययका एक सूक्ष्म अवयवांशमात्र है, उन आपको मैं फिस प्रकार स्तुति कर

वास्तविक रूपको ब्रह्मा आदिदेवेश्वरमण भी नहीं जानते उन आपको मैं किस प्रकार स्तुति कर सर्कुंगा ? ॥ ६५॥

जिनकी पूजा ब्रह्मा आदि देवगण नन्दनवनके पुष्प. गन्ध और अनुरूपन आदिसे करते हैं उन आपकी मैं किस प्रकार

आर अनुरूपन आदिस करत हु उन आपका माकस प्रकार पूजा कर सकता हूँ ॥ ६६ ॥ देवराज इन्द्र जिनके अवताररूपोंकी सर्वदा पूजा करते हैं तथापि यथार्थ रूपको

नहीं जान पाते, उन आफ्ती में किस प्रकार पूजा कर सकता

हूँ ? ॥ ६७ ॥ योगिगण अपनी समस्त इन्द्रियोंको उनके विषयोसे खोंचकर जिनका ध्यानद्वार चुजन करते हैं उन

विषयासे खेरिकर जिनका ध्यानद्वारा पूजन करत है उन आपको मैं किस प्रकार पूजा कर सकता हूँ ॥ ६८ ॥ जिन

प्रभुके खरूपकी चितमें भावना करके योगिजन पावमय पूप्प आदिसे श्यानद्वारा उपासना करते हैं उन आपको मैं

किस प्रकार पूजा कर सकता हूँ ? ॥ ६९ ॥ हे देवेश्वर ! आपकी पूजा अथवा स्तृति करनेमें मैं। सर्पजातिरियं क्रूरा यस्यां जातोऽस्यि केशव ।
तत्त्वभावोऽयमञ्चास्ति नापराथो ममाच्युत ॥ ७१
सृज्यते भवता सर्वं तथा संह्रियते जगत् ।
जातिरूपस्यभावाश्च सृज्यन्ते सृजता त्वया ॥ ७२
यथादं भवता सृष्टो जात्या रूपेण चेश्वर ।
स्वभावेन च संयुक्तस्तथेदं चेष्टितं मया ॥ ७३
यद्यन्यथा प्रवर्तेषं देवदेव ततो मिथ ।
न्याय्यो दण्डनिपातो वै तवैव वचनं यथा ॥ ७४
तथाय्यज्ञे जगत्त्वामिन्दण्डं पातितवानमिथ ।
स इलाध्योऽयं परो दण्डस्त्वन्तो मे नान्यतो वरः ॥ ७५
हतवीयों हतविषो दमितोऽद्दं त्ययाच्युत ।
जीवितं दीयतामेकमाज्ञापय करोमि किम् ॥ ७६

नात्र स्थेयं त्वया सर्प कदाचिद्यमुनाजले । सपुत्रपरिवारस्त्वं समुद्रसलिलं व्रज ॥ ७७ मत्पदानि च ते सर्प दृष्टा मूर्त्वुनि सागरे । गरुडः पन्नगरिपुस्त्वयि न प्रहरिष्यति ॥ ७८

श्रीपरासर उद्यान इत्युक्त्वा सर्पराजं तं मुमोच भगवान्हरिः । प्रणम्य सोऽपि कृष्णाय जगाम पयसां निधिम् ॥ ७९ पश्यतां सर्वभूतानां सभृत्यसुतबान्धवः । समस्तभार्यासहितः परित्यज्य स्वकं हृदम् ॥ ८० गते सर्पे परिष्ठुज्य मृतं पुनरिवागतम् । गोपा मूर्द्धनि हार्देन सिषिचुर्नेत्रजैर्जलैः ॥ ८९ कृष्णमङ्गिष्टकर्माणमन्ये विस्मितचेतसः । तुष्टुवुर्मुदिता गोपा दृष्टा शिवजलां नदीम् ॥ ८२ गीयमानः स गोपीभिश्चरितैस्माधुचेष्टितैः । संस्तुयमानो गोपैश्च कृष्णो वजमुपागमत् ॥ ८३ सर्वथा असमर्थ हूँ, मेरी चित्तवृत्ति तो केवल आपकी कृपाकी ओर ही दरगी हुई है, अतः आप मुझपर प्रसक्त होइये॥ ७०॥ हे केशव ! मेरा जिसमें जन्म हुआ है वह सर्पजाति अत्यन्त हुन होती है, यह मेरा ज्वतीय स्प्रभाव है। है अच्युत ! इसमें मेरा कोई अपराध नहीं है॥ ७१॥ इस सम्पूर्ण जगत्की रचना और संहार आप हो करते हैं। संसारकी रचनाके साथ उसके जाति, रूप और स्प्रभावोंकी भी आप ही बनाते हैं॥ ७२॥

हे ईबर ! आपने मुझे जाति, रूप और स्वभावसे युक्त करके जैसा बनाया है उसींके अनुसार मैंने यह चेष्टा भी को है ॥ ७३ ॥ है देवदेव ! यदि मेरा आचरण विपरीत हो तब तो अवस्य आपके कथनानुसार मुझे रुष्ड देना उचित है ॥ ७४ ॥ तथापि हे जगत्स्वापिन् ! आपने मुझ अज्ञको जो दुष्ड दिया है वह आपसे मिला हुआ दुष्ड मेरे लिये कहीं अच्छा है, किन्तु दूसरेका वर भी अच्छा नहीं ॥ ७५ ॥ है अच्छात ! आपने मेरे पुरुषार्थ और विषको नष्ट करके मेरा मली प्रकार मानमर्दन कर दिया है । अब केयल मुझे प्राणदान दीजिये और आज्ञा कीलिये कि मै क्या कर्ल ? ॥ ७६ ॥

श्रीभगमान् बोले—हे सर्व ! अब तुझे इस यमुनाजलमें नहीं रहना चाहिये। तू शीध ही अपने पुत्र और परिवारके सहित समुद्रके जलमें चला जा॥ ७७॥ तेरे मस्तकपर मेरे चरण चिहाँको देखकर समुद्रमें रहते हुए भी सपीका शत्रु गरुड तुझपर प्रहार नहीं करेगा॥ ७८॥

श्रीपराशरजी बोले— सर्पतन कालियसे ऐसा कर भगवान् हरिने उसे छोड़ दिया और यह उन्हें प्रणाम करके समस्त प्राणियोंके देखते-देखते अपने सेवक. पुत्र, बन्धु और खियोंके सहित अपने उस कुष्यको छोड़कर समुद्रको बेला गया॥ ७१-८०॥ सर्पके चले जानेपर गोपगण, लीटे हुए मृत पुरुषके समान कृष्णचन्द्रको आलिङ्गनकर प्रीतिपूर्वक उनके मस्तकको नेप्रजलसे भिगोने लगे॥ ८१॥ कुछ अन्य गोपगण यमुनाको स्वच्छ जलवाली देख प्रसंत्र होकर लीलाविहारी कृष्णचन्द्रकी विस्मितिकत्तमे स्तृति करने लगे॥ ८२॥ तदनकर अपने उत्तम चरित्रोंके कारण गोपियोंसे गीयमान और गोपोसे प्रशंसित होते हुए कृष्णचन्द्र ब्रजमें चले आये॥ ८३॥

आठवाँ अध्याय

धंनुकासुर-वध

9

श्रीपराशर उद्याच

गाः पालयन्ती च पुनः सहितौ बलकेशवौ । भ्रममाणौ वने तस्मित्रम्यं तालवनं गतौ ॥

तत्तु तालवनं दिव्यं धेनुको नाम दानवः।

मृगमांसकृताहारः सदाध्यास्ते खराकृतिः ॥

तत्त् तालवनं पक्रफलसम्पत्समन्वितम्।

दृष्ट्वा स्पृहान्त्रिता गोपाः फलादानेऽब्रुबन्बचः ॥

गोपा ऋबुः

हे राम हे कृष्ण सदा धेनुकेनैय रक्ष्यते । भुप्रदेशो यतस्तस्मात्पकानीमानि सन्ति वै ॥

फलानि पश्य तालानां गन्धामोदितदींशि वै ।

वयमेतान्यभीष्सामः पात्यन्तां यदि रोचते ॥

श्रीपराञ्चार *उद्याच* .

इति गोपकुमाराणां श्रुत्वा सङ्कर्षणो वचः । एतत्कर्त्तव्यमित्युक्त्वा पातयामास तानि वै ।

कृष्णश्च पातवामास भूवि तानि फलानि वै ॥

फलानां पततां अब्दमाक्रूप्यं सुदुरासदः ।

आजगाम स दुष्टात्मा कोपाहैतेयगर्दभः ॥ पद्भ्यामुभाभ्यां सतदा पश्चिमाभ्यां बलं बली ।

जधानोरिस ताभ्यां च स च तेनाभ्यगृह्यत् ॥

गृहीत्वा भ्रामयामास सोऽम्बरे गतजीवितम् ।

तस्मित्रेव स चिश्लेष वेगेन तृणराजनि ॥ ततः फलान्यनेकानि तालाग्रान्निपतन्तरः ।

पृथिव्यां पातयामास महावातो घनानिव ॥ १०

पृथ्यव्या पातयामास महावाता घनाानव ॥ १० अन्यानथः सजातीयानागतान्दैत्यगर्दभान् ।

कृष्णश्चिक्षेप तालावे बलभद्रश्च लीलया ॥ ११ क्षणेनालङ्कृता पृथ्वी पक्षेस्तालफलैस्तदा ।

दारानारुङ्कता पृथ्या पङ्गातारुकरुकताः। दैत्यगर्दभदेहेश्च मैत्रेय शुशुभेऽधिकम्॥१२

दत्यगदभदहञ्च मत्रय शुशुभऽधकम् ॥ १२ ततो गावो निरावाधास्तस्मिस्तालवने द्विज ।

नवशयं सुर्व चेठर्वत्र भुक्तमभूत्पुरा ॥ १३

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽशे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

श्रीपराशरजी बोले—एक दिन बलराम और कृष्ण साथ-साथ मौ चराते अति स्मर्गाय तालवनमें आये ॥ १ ॥ उस दिव्य तालवनमें धेनुक नामक एक मधेके आकारवाला दैत्य मृगमांसका आहार करता हुआ सदा रहा करता था॥ २ ॥ उस तालवनको पके फलोंको सम्पत्तिसे सम्पन्न देखकर उन्हें तोड़नेकी इच्छासे गोपगण

षोले ॥ ३ ॥

गोपोने कहा — भैया सम और कृष्ण ! इस
भूमिप्रदेशकी रक्षा सदा घेनुकासुर करता है, इसीलिये यहाँ
ऐसे पके-पके फल लगे हुए हैं ॥ ४ ॥ अपनी मधसे
सम्पूर्ण दिशाओंको आमोदित करनेवाले ये ताल-फल तो
देखो; हमें इन्हें सानेकी इच्छा है; यदि आपको अच्छा लगे
तो [थोड़े-से] झाड टीजिये ॥ ५ ॥

श्रीपराशरजी बोले-गोपकुमारीके ये बचन

सुनकर बलगमजीने 'ऐसा ही करना चाहिये' यह कहकर फल फिरा दिये और पीछे कुछ फल कुणाचन्द्रने भी पृथिवीपर गिराये॥ ६॥ गिरते हुए फलोंका शब्द सुनकर वह दर्दर्थ और दरात्मा गर्दभासूर कोघपूर्वक दीइ आया और उस महाबलवान् असुरने अपने पिछले दो पैरोसे बलरामजीकी छातोमें लात मारी। बलरामजीने उसके इन पैरोको पकड़ लिया और आकाशमें घुमाने लगे। जब वह निजींव हो गया तो उसे अत्यन्त वेगसे उस ताल-वृक्षपर हो दे मारा॥ ७— ९॥ उस गधेने किले-किले उस तालवृक्षमें बहत-से फल इस प्रकार गिरा दिये जैसे प्रचण्ड बायु बादलोंको गिरा दे ॥ १० ॥ उसके सवातीय अन्य गर्दभासरीके आनेपर भी कृष्ण और रामने उन्हें अनायास ही ताल-वृक्षीपर पटक दिया ॥ ११ ॥ हे मैत्रिय ! इस प्रकार एक क्षणमें ही पके हुए तालफलों और गर्दमासुरोके देहोंसे विभूषिता होकर पृथियी अत्यन्त सुशोभित होने लगी ।। १२ ॥ हे द्विज ! नवसे उस तालवनमें गाँएँ निविध होकर सुलपूर्वक नवीन तुण चरने लगीं जो उन्हें पहले कभी चरनेको <u>नसीय</u> नहीं हुआ था॥ १३ ॥

ेनवाँ अध्याय

प्रलम्ब-वय

Ş

श्रीपराशर उवाच तस्मित्रासभदैतेये सानुगे विनिपातिते । सौम्यं तद्वोपगोपीनां रम्यं तालवनं वशौ ॥ ततस्ती जातहर्षों तु वसदेवसृतावृभौ। थेनुकदैतेयं भाण्डीरबदमागतौ ।। P क्ष्वेलमानौ प्रगायन्तौ विचिन्वन्तौ च पादपान् । चारयन्तौ च गा दूरे व्याहरन्तौ च नामभि: ॥ 3 नियोंगपाशस्क्र्यौ तौ वनमालाविभूषितौ । श्रृश्भाते महात्मानौ बालशङ्काविवर्षभौ ॥ सुवर्णाञ्जनचूर्णाभ्यां तौ तदा रूषिताम्बरी । महेन्द्रायुधसंयुक्तौ श्वेतकृष्णाविवाम्बुदौ ॥ चेरतुलॉकसिद्धाभिः क्रीडाभिरितरेतरम् । समस्तलोकनाथानां नाथभूतौ भूवं गतौ ॥ 3 मनुष्यधर्माधिरतौ मानयन्तौ मनुष्यताम् । तजातिगुणयुक्ताभिः क्रीडाभिश्चेरतुर्वनम् ॥ ततस्त्वान्दोलिकाभिश्च नियुद्धैश्च महावलौ । व्यायामं चक्रतुस्तत्र क्षेपणीयैस्तथारमधिः ॥ तिल्लप्सुरसुरस्तत्र ह्यभयो रममाणयोः। आजगाम प्रलम्बाख्यो गोपवेचतिरोहितः ॥ सोऽवगाहत निरुशङ्करतेषा भध्यममानुषः । मानुषं वपुरास्थाय प्ररूप्यो दानवीत्तमः ॥ १० तयोश्छिद्रान्तरप्रेप्सुरविषद्वामयन्यत कृष्णं ततो रौहिणेयं हन्तुं चके मनोरयम् ॥ ११

हरिणाक्रीडनं नाम बालक्रीडनकं ततः।

प्रकुर्वन्तो हि ते सर्वे ह्यै ह्यै सुगपदुखितौ ॥ १२

श्रीपरादारजी बोले-अपने अनुबर्धेसहित उस गर्दभासुरके मारे जानेपर वह सुरम्य तालवन गोप और गोपियोंके लिये सुखदायक हो गया॥१॥ तदनन्तर धेनुकासुरको मारकर चे होनों वसुदेवपुत्र प्रसब-धनसे भाण्डीर नामक वटवृक्षके तले आये !! २ !! कन्धेपर गौ वाँधनेको रस्सी ढाले और वनमालारो विभूषित हुए वे दोनों महात्मा बात्सक सिंहनाद करते, गाते, वृक्षींगर चड़ते, दुरतक गौएँ चसते तथा उनका नाम छे-छेकर पुकारते हुए नये सींगोबाले बळड्रोंके समान सुशोभित हो रहे थे॥ ३-४ ॥ उन दोनेकि कस्त्र [क्रमशः] सुनहरी और इयाम रंगसे रॅंगे हुए थे अतः वे इन्द्रधनुषयुक्त श्रेत और इयाम मेघके समान जान पढ़ते थे॥ ५॥ वे समस्त लोकपालोंके प्रभु पृथिवीपर अवतीर्ण द्वोषार नाना प्रकारकी खैकिक खीलाओंसे परस्पर खेल रहे थे ॥ ६ ॥ मनुष्य-धर्ममें तत्पर रहकर मनुष्यताका सम्मान करते हुए वे भनुष्यजातिक गुणौकी क्रीडाएँ करते हुए वनमें विचर रहे थे॥ ७॥ वे दोनों महाबली बालक कभी झुलागे झुलकर, कभी परस्पर मल्लयुद्धकर और कभी पत्थर फेंककर नाना प्रकारसे व्यायाम कर रहे ये॥८॥ इसी समय उन दोनों खेलते हुए बालकोंको उठा ले जानेकी इच्छासे प्रलम्ब भागक दैत्य गोपवेषमें अपनेको छिपाकर वहाँ आया ॥ १ ॥ दानकश्रेष्ठ प्रलम्ब मनुष्य न होनेपर भी मनुष्यरूप धारणंकर निश्श्रङ्कभावसे उन बालकोंके बीच घस गया ॥ १० ॥ उन दोनोंको असावधानताका अवसर देखनेवाले उस देल्पने कृष्णको तो सर्वधा अजेय समझा; अतः उसने बलग्रमजीको मारनेका निक्षय किया ॥ ११ ॥ तरनत्तर वे समस्त खाळबाळ हरिणाकोडन* नामक खेल खेलते हुए आएसमें एक साथ दो-दो

^{*} एक निश्चित रूक्ष्यके पास दो-दो बारुक एक-एक साथ हिर्नको भाँति उङ्गलते हुए जाते हैं। जो दोनोंधे पहले पहुँच जाता है वह विजयां होता है, हारा हुआ आरक्ष जीते हुएको अपनी घोटपर चढ़ाकर वृख्य स्थानतक ले आंता है। यही हरिणक्रीटम है।

श्रीदाम्ना सह गोविन्दः प्रलम्बेन तथा बलः । गोपालैरपरैञ्चान्ये गोपालाः पुष्नुवुस्ततः॥ १३ श्रीदामानं ततः कृष्णः प्रलम्बं रोहिणीसुतः । जितवान्कृष्णपक्षीयैगोपैरन्ये पराजिताः ॥ १४ ते वाहयन्तस्त्वन्योन्यं भाण्डीरं वटमेत्य वै । पुनर्निववृतुस्सर्वे ये ये तत्र पराजिताः ॥ १५ सङ्खर्णं तु स्कन्धेन शीध्रमृतिक्षप्य दानवः । नभस्त्र्यलं जगामाञ् सचन्द्र इव वारिदः ॥ १६ असहब्रौहिणेयस्य स भारं दानवोत्तमः। ववृधे स महाकायः प्रावृषीव बलाहकः ॥ १७ सङ्कर्षणस्तु तं दृष्टा दन्धशैलोपमाकृतिम् । स्रग्दामलम्बाभरणं मुकुटाटोपमस्तकम् ॥ १८ रौद्रं शकटचकाक्षं पादन्यासचलस्थितिम् । अभीतमनसा तेन रक्षसा रोहिणीसुतः। हिंचमाणस्तनः कृष्णमिदं वचनमब्रवीत् ॥ १९ कृष्ण कृष्ण हिये होष पर्वतोद्यमूर्तिना । केनापि पञ्च दैत्येन गोपालच्छयरूपिणा ॥ २० यदत्र साम्प्रतं कार्यं मया मधुनिपृद्तः।

तत्कथ्यतां प्रयात्येष दुरात्पातित्वरान्वितः ॥ २१ श्रीपराशस्यव

तमाह रामं गोविन्दः स्पितभिन्नोष्टसम्पुटः । महात्मा रौहिणेयस्य बलवीर्यप्रमाणवित् ॥ २२

श्रीकृष्ण उदान

किमयं मानुषो भावो व्यक्तमेवावलम्ब्यते । सर्वात्मन् सर्वगुद्धानां गुद्धगुद्धात्मना त्वद्या ॥ २३ स्मराशेषजगद्वीजकारणं कारणाश्रजम् । आत्मानमेकं तद्वस जगत्येकार्णवे च यत् ॥ २४ किं न वेत्सि यथाहं च त्वं चैकं कारणं भुवः । भारावतारणार्थाय मर्त्यलोकमुपागतौ ॥ २५ नभिश्शरस्तेऽम्बुबहाश्च केशाः

पादौ क्षितिर्वक्त्रमनन्त वहिः।

बालक उठे ॥ १२ ॥ तब श्रीदामाके साथ कृष्णचन्द्र, घलन्वके साथ बलगम और इसी श्रकार अन्यान्य गोपोंके साथ और-और ग्वालबाल [होड़ बदकर] उछलते हुए चलने लगे ॥ १३ ॥ अत्तमें, कृष्णचन्द्रने श्रीदामाको, बलगमजीने घलम्बको तथा अन्यान्य कृष्णपश्चीय गोपोंने अपने प्रतिपक्षियोंको हरा दिया ॥ १४ ॥

उस खेलमें जो-जो वालक हारे थे वे सब जीतनेवालीको अपने अपने चन्धीपर चढ़ाकर भाष्डीरबटतक से जाकर वहाँसे फिर लौट आये॥ १५॥ किन्तु अलम्बासुर अपने कन्धेपर बलरामजीको बढ़ाकर चन्द्रमाके सहित मेखके समान अस्थत्त बेगसे आकारामण्डलको चल दिया ॥ १६ ॥ यह दानवश्रेष्ठ रोहिणीनन्दन श्रीबलभद्रजीके भारको सहन न यह सक्तेके कारण वर्षाकारीन मेचके समान बढ़कर अत्यन्त स्थूल शरीरवाला हो गया ॥ १७ ॥ तब माला और आभुषण धारण किये, सिरपर पुकट पहने, गाडीके पहिसेकि समान भयानक नेत्रीबाले, अपने पादप्रहारसे पृथिवीको कम्पायमान करते हुए तथा दग्धपर्वतके समान आकारवाले उस दैत्यको देखकर उस निर्भय एक्सके द्वारा ले जाये जाते तुए बलभद्रजीने कृष्णचन्द्रसे कहा— ॥ १८-१९ ॥ "मैया कृष्ण ! देखी, छत्तपूर्वक गोपवेष धारण करनेवाला कोई पर्वतके समान महाकाय दैत्व मुझे हरे लिये जाता है।। २०॥ है मधुमुदन ! अब मुझे क्या करना चाहिये, यह बतलाओ । देखो, यह दुरात्मा बड़ी शीघतासे दौड़ा जा रहा है" ॥ २२ ॥

श्रीपराशरजी बोले—तब रोहिणीनन्दनके यलवीर्यको जाननेवाले महातम श्रीकृष्णचन्द्रने मधुर-मुसकानसे अपने ओहसम्मुटको खोलते हुए उन बलसमर्वासे कहा ॥ २२ ॥

श्रीकृष्णचन्द्र बोले—हे सर्वातमन् ! आप सम्पूर्ण गुहा पदार्थोमें अत्यन्त गुहास्यरूप होकर भी यह साष्ट्र मानव-भाव बयों अवलम्बन कर रहे हैं ? ॥ २३ ॥ आप अपने उस स्वरूपका स्वरण कीजिये जो समस्त् संसारका कारण तथा कारणका भी पूर्ववर्ती है और प्रलयकालमें भी स्थित रहनेवाला है ॥ २४ ॥ क्या आपको मालूम नहीं है कि आप और मैं दोनों ही इस संसारके एकमांत्र कारण हैं और पृथिवीका भार उतारनेके लिये ही मर्त्यलोकमें आये हैं ॥ २५ ॥ हे अनन्त ! आकाश आपका सिर है, मेथ केश सोमो मनस्ते श्वसितं समीरणो

दिशश्चतस्त्रोऽव्यय बाह्यस्ते ॥ २६
सहस्रवक्त्रो भगवन्पहात्पा
सहस्रहस्ताङ्ग्रिशर्रारभेदः ।
सहस्रपद्मोद्भवयोनिराद्यस्सहस्रशस्त्रां मुनयो गृणन्ति ॥ २७
दिव्यं हि रूपं तव वेति नान्यो
देवैरशेषैरवताररूपम् ।
तदच्यते वेत्सि न कि यदन्ते
स्वय्येव विश्वं रूयमभ्युपैति ॥ २८
त्वया धृतेयं धरणी बिभर्ति

चराचरं विश्वमनन्तमूर्ते । कृतादिभेदैरज कालरूपो निमेषपूर्वो जगदेतदस्मि ॥ २९

अत्तं यक्षा बाडववहिनाम्बु हिमस्वरूपं परिगृह्य कास्तम्^१ । हिमाचले भानुमतोऽशुसङ्गा-

जलत्वमध्येति पुनस्तदेव ॥ ३०

एवं स्वया संहरणेऽत्तमेत-जगत्समस्तं त्वदधीनकं पुनः ।

तवैव सर्गाय समुद्यतस्य जगत्त्वमभ्येत्यनुकल्पमीश ॥ ।

भवानहं च विश्वात्मन्नेकमेव च कारणम् । जगतोऽस्य जगत्यश्रें भेदेनावां व्यवस्थितौ ॥ ३२ तत्स्मर्यताममेयात्मंस्त्वयात्मा जहि दानवम् । मानुष्यमेवाबलम्ब्य बन्धुनो क्रियतां हितम् ॥ ३३

श्रीपग्रास उथाच

इति संस्मारितो वित्र कृष्णेन सुमहात्मना । विहस्य पीड्यामास प्रलम्बं बलवान्वलः ॥ ३४

मुष्टिना सोऽहनन्मूर्धि कोपसंरक्तलोचनः।

तेन जास्य प्रहारेण बहियति विलोचने ॥ ३५

हैं, पृथिवी चरण हैं, अग्नि मुख है, चन्द्रमा मन हैं, बायुं श्वास-प्रशास है और चारों दिइनएँ बाहु हैं॥ २६ म हे भगवन् ! आप महाकाय हैं, आपके सहस्र मुख है तथा सहस्रों हाथ, पाँव आदि शरीरके भेद हैं। आप सहस्रों ब्रह्माओंके आदिकारण हैं, मुनिजन आपका सहस्रों प्रकार वर्णन करते हैं। २७॥ आपके दिस्य रूपको

[आपके अतिरिक्त] और कोई नहीं जानता, अतः समस्त देवगण आपके अवताररूपकी ही उपासना करते हैं। क्या आपको विदित नहीं है कि अन्तमें यह सम्पूर्ण विश्व आपहीमें लीन हो जाता है॥ २८॥ हे अनन्तमृतें !

विश्व आपहीम लोन हो जाता है ॥ २८ ॥ हे अनन्तमूर्त ! आपहीसे भारण की हुई यह पृथिवी सम्पूर्ण चराचर विश्वको धारण करती है । हे अज ! निमेषादि

कालस्वरूप आप ही कृतयुग आदि भेदोंसे इस जगत्का मास करते हैं॥ २९॥ जिस फ्रकार बड़वानलसे पीया हुआ बल वायुद्धारा हिमालयतक पहुँचाये जानेपर

हिमका रूप धारण कर लेता है और फिर सूर्य-किरणोंका संयोग होनेसे जलरूप हो जाता है उसी प्रकार है ईश ! यह समस्त जगत् [स्ट्रादिरूपसे] आपटीके द्वारा

विनष्ट होकर आप [परमेक्षर] के ही अधीन रहता है और फिर प्रत्येक कल्पमें आफ्के [हिरण्यगर्भरूपसे]

सृष्टि-रचनामे प्रवृत्त होनेपर यह [विराद्रूष्टपसे] स्थूल जगद्रूप हो जाता है ॥ ३०-३१ ॥ हे विश्वासम् । आप और मैं दोनों ही इस जगतके एकमात्र कारण है।

संसारके हितके लिये ही हमने भिन्न-भिन्न रूप धारण किये हैं॥ ३२ ॥ अतः हे अभेयातान् ! आप अपने स्वरूपको स्मरण कीजिये और मनुष्यभावका ही अवलम्बनकर इस दैस्यको मारकर वन्युजनोंका हित-

साधन कीजिये ॥ ३३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे निष्ठ! महात्मा कृष्णचन्द्रद्वारा इस प्रकार स्मरण कराये जानेपर महाबलबान् बलरामजी इसते हुए प्रलन्मानुरको पीडित करने लगे॥ ३४॥ उन्होंने क्रोधसे नेत्र लाल करके उसके मस्तकपर एक पूँसा मारा, जिसकी चोटसे उस दैत्यके दोनों नेत्र बाहर निकल आये॥ ३५॥ स निष्कासितमस्तिष्को मुखाच्छोणितमुद्रमन् । निपपात महीपृष्ठे दैत्यवयों ममार च ॥ ३६ प्रलम्बं निहर्त दुष्टा बलेनाजुतकर्मणाः। प्रहृष्टास्तुष्टुर्गोपास्साधुसाध्विति चात्रुवन् ॥ ३७ संस्तुयमानो गोपैस्तु रामो दैत्ये निपातिते । प्रलम्बे सह कृष्णेन पुनर्गोकुलमाययाँ ॥ ३८

तदननार वह दैत्यश्रेष्ठ मगज (मस्तिष्क) फट जानेपर मुखसे रक्त वमन करता हुआ पृथिबीपर गिर पड़ा और मर गया ॥ ३६ ॥ अन्द्रतकर्मा बलसमजीद्वारा प्ररूप्यासुरको भरा हुआ देखकर गोपगण प्रसन्न होकर 'साधु, साधु' कहते हुए उनकी प्रशंसा करने रूपे ॥ ३७ ॥ प्ररूप्नासुरके भारे जानेपर बलरामजी गोपोद्वारा प्रशंसित होते हुए कृष्णचन्द्रके साथ गोकुरुमें छीट आये ॥ ३८ ॥

334

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽशे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

दसवाँ अध्याय

शरहर्णन तथा गोवर्धनकी पूजा

औपराश्चर उवाच

तयोर्बिहरतोरेवं रामकेशवयोर्ज्ञ । प्रावृड् व्यतीता विकसत्सरोजा चाभवच्छरत् ॥ अवापुस्तापमत्पर्थं शफर्यः पल्वलोदके । पुत्रक्षेत्रादिसक्तेन ममत्वेन यथा गृही ॥ मयूरा मौनमातस्थुः परित्यक्तमदा वने। असारतां परिज्ञाय संसारस्येव योगिनः॥ उत्सुज्य जलसर्वस्वं विमलास्सितमूर्त्तयः । तत्यजुश्चाम्बरं मेघा गृहं विज्ञानिनो यथा ॥ शरत्सूर्याशतप्रानि ययुरशोपं सरांसि न्च । बह्वालम्बममत्वेन हृदयानीव देहिनाम् ॥ कुपुदैश्शस्द्रक्षांसि योग्यतालक्षणं ययुः । अवबोधैर्मनांसीव संगत्वममलात्मनाम् ॥ तारकाविमले ब्योप्नि रराजाखण्डमण्डलः । चन्द्रश्ररमदेहात्मा योगी साधुकुले यथा ॥ शनकैश्शनकैस्तीरं तत्यजुश्च जलाशयाः । ममत्वं क्षेत्रपुत्रादिरूढमुद्यैयंद्या बुधाः ॥ पूर्वं त्यक्तैस्सरोऽम्योभिर्हसा योगं पनर्यय: । क्रेरीः कुयोगिनोऽशेषैरन्तरायहता इतः॥

कृष्णके व्रजमे विद्यार करते-करते वर्षाकाल बीत गया और प्रफुल्लित कमलोंसे युक्त शरद्-ऋतु आ गयी ॥ १ ॥ जैसे गृहस्थ पुरुष पुत्र और क्षेत्र आदिमें लगी हुई ममुतासे सन्ताप पाते हैं उसी प्रकार महालियाँ गङ्ढोंके जलमें अत्यन्त ताप पाने रहनों ॥ २ ॥ संसारको असारताको जलकर जिस प्रकार योगिजन शान्त हो आहे हैं उसी प्रकार मयूरगण मदहीन होकर मीन हो गये॥ ३॥ बिज्ञानिगण [सब प्रकारको पमता छोडकर] जैसे चरका त्याग कर देते हैं वैसे ही निर्मल क्षेत मेघोने अपना जलरूप सर्वस्य छोड्कर आकारामण्डलका परित्याग कर दिया॥४॥ विविध पदार्थोंमें ममता करनेसे जैसे देहधारियोंके हृदय सारहीन हो जाते है वैसे ही शरत्कालीन सूर्यके तापसे सरोवर सुख गर्थे ॥ ५ ॥ निर्मरविचन पुरुषेकि सन जिस प्रकार शानुद्वारा समता प्राप्त कर लेते हैं उसी प्रकार शस्त्वालीन जल्होंको [खच्छतके कारण] कुमुदाँसे योग्य सम्बन्ध प्राप्त हो। गया ॥ ६ ॥ जिस प्रकार साधु-कुलमें चरप-देह-धारी योगी सुद्रोभित होता है उसी प्रकार तस्का-मण्डल-मण्डित निर्मेल आकाशमें पूर्णचन्द्र विराजमान हुआ ॥ ७ ॥

श्रीपराशरजी चोले—इस प्रकार उन राम और

जिस प्रकार क्षेत्र और पुत्र आदिमें बड़ी हुई मंमताको विवेकोजन शर्नः-शर्नः स्थाग देते हैं बैसे ही जलाशबीका जल चौर-धीर अपने तटको छोड़ने लगा ॥ ८ ॥ जिस प्रकार अन्तरायों * (विद्रों) से विचरिता हुए क्रुवीगियोंका

^{*} अन्तराय जी है

[ं]व्याधिस्यानसंशियअभादास्त्रस्याविरतिभ्रान्तिदर्शनारुव्यभूमिकत्यानवस्थितत्वानि विराधिक्षेपासोऽन्तरायाः । (यो॰ द॰ १ । ३०)

निभृतोऽभवदत्वर्थं समुद्रः स्तिमितोदकः। क्रमावाप्तपहायोगो निश्चलात्मा यथा यतिः ॥ १० सर्वज्ञातिप्रसन्नानि सलिलानि तथाभवन् । ज्ञाते सर्वगते विष्णौ मनांसीय सुमेधसाम् ॥ ११ बभुव निर्मलं व्योम शरदा ध्वस्ततोयदम् । योगानिदग्धक्रेशौयं योगिनामिव मानसम् ॥ १२ सुर्वाञ्चलनितं तापं निन्ये तारापतिः शमम् । अहंमानोद्धवं दुःएं विवेकः सुमहानिव ॥ १३ नभसोऽब्दं भुवः पह्नं काल्ष्यं चान्भसरशस्त् । इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यः प्रत्याहार इवाहरत् ॥ १४ प्राणायाम इवाम्भोभिस्सरसां कृतपूरकैः । अभ्यस्यतेऽनुदिवसं रेचकाकुभ्यकादिभिः ॥ १५ विमलाम्बरनक्षत्रे काले चाभ्यागते व्रजे। ददर्शेन्द्रमहारम्भायोद्यतांस्तान्त्रजौकसः कृष्णस्तानुत्सुकान्द्राष्ट्रा गोपानुत्सवलालसान् । कौतूहलादिदं वाक्यं प्राह वृद्धान्महामतिः ॥ १७ कोऽयं शक्रमखो नाम येन वो हुर्ष आगतः । प्राह तं नन्दगोपश्च पृच्छन्तमतिसादरम् ॥ १८ नन्दगोप उवाच मेघानां पयसां चेशो देवराजश्शतकृतुः। तेन सञ्जोदिता मेघा वर्षन्त्यम्बुमयं रसम् ॥ १९ तद्यष्टिजनितं सस्यं वयपन्ये च देहिनः ।

वर्त्तयामोपयुङ्गानास्तर्पयामश्च देवताः ॥ २० क्षीरवत्य इमा गावो वत्सवत्वश्च निर्वृताः । तेन संवर्द्धितसस्यस्तुष्टाः पृष्टा भवन्ति व ॥ २१

हेरों * से पुनः संयोग हो जाता है उसी प्रकार पहले छोड़े हुए सरीवरके जलसे हंसका पुनः संयोग हो गया॥ ९॥ क्रमशः महाबोग (सम्प्रश्नातसमाधि) प्राप्त कर लेनेपर जैसे यति निश्चलात्मा हो जाता है बैसे ही जलके स्थिर हो जानेसे समुद्र निश्चल हो एया॥ १०॥ जिस प्रकार सर्वेगत भगवान विष्णुको जान लेनेपर मेधावी पुरुषोंके चित्त शान हो जाते हैं वैसे ही समस्त जलाशयोंका जल खच्छ हो गया ॥ ११ ॥

योगाश्रिद्वारा क्रेशसमृहके नष्ट हो जानेपर जैसे थोगियोंके चित्त स्वच्छ हो जाते हैं उसी प्रकार शांतके कारण नेप्रोंके लीन हो जानेसे आकाश निर्मल हो गया ॥ १२ ॥ जिस प्रकार अहंकार-जनित महान् दुःखको विवेक शान्त कर देता है उसी प्रकार सुवीकरणोंसे उत्पन्न हुए तायको चन्द्रमाने शान्त कर दिया ॥ १३ ॥ प्रत्याहार जैसे इन्द्रियोंको उनके विषयोंसे खींच लेता है वैसे ही शरत्कालने आकाशसे पेयोको, पृथिवीस धुलिको और जलसे मरुको दूर कर दिया॥ १४ ॥ [पानीसे भर लानेके कारण 🕽 मानो तालाबोंके जल पुरक कर चुकनेपर अब [स्थिर रहने और सुखनेसे] रात-दिन कुम्भक एवं रेचक क्रियाद्वारा प्राणायामका अभ्यास कर रहे हैं ॥ १५ ॥. इस प्रकार वजमण्डलमें निर्मल आकाश और नक्षत्रमय

इसत्कालके आनेपर श्रीकृष्णचन्द्रने समस्त वजवासियोंको इन्द्रका उत्सव मनानेकें लिये तैयारी करते देखा ॥ १६ ॥ महामति कृष्णने उन गोपींको उत्सवको उपक्रसे अत्यन्त उत्साहपूर्ण देखकर कुतृहरूबदा अपने बड़े-बृहोंसे पुछा— ॥ १७ ॥ "आपलोग जिसके लिये फुले नहीं सभाते वर इन्द्र-यह क्या है ?"इस प्रकार अत्यन्त आदरपूर्वक पूछनेपर उनसे नन्दगोपने कहा— ॥ १८ ॥

नन्दगोप बोले—मेरा और जलका स्वामी देवगन इन्द्र है। उसकी प्रेरणासे ही मेघगण जलरूप रसकी वर्षो करते हैं ॥ १९ ॥ हम और अन्य समस्त देहधारी उस वर्णस उत्पन्न हुए अञ्चलों ही बतीते हैं तथा उसीको उपयोगमें लाते हुए देवताओंको भी तुप्त करते हैं॥ २०॥ उस (वर्षा) से बढ़े हुए अज़से ही तम होकर ये गाँए तप्ट और

^{*} अर्थात् व्याधि, स्थान (साधनमे अपवृति), संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरांत (वैदाग्यहोनता), भान्तिदर्शन, अलन्यभूमिकल (लक्ष्यकी उपलब्धि व दोना) और अनवस्थितत्व (लक्ष्यमे स्थिर न होना) ये नी अन्तराय है। 🐪 हेरा पाँच हैं; जैसे--

अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिखेशाः क्रेन्सः । (बो॰ द॰ २ । ३)

अर्थात् अविद्या, अस्मिता (अहंकार) राग, हेष और अभिक्षिका (गरणजस) ये पाँच क्रेक्स है।

नासस्या नातृणा भूमिनं बुभुक्षादितो जनः । दृश्यते यत्र दृश्यन्ते वृष्टिमन्तो बलाहकाः ॥ २२ भौममेतत्ययो दुग्धं गोभिः सूर्यस्य वास्तिः । पर्जन्यस्तर्यलोकस्योद्धवायः भूवि वर्षति ॥ २३ तस्मात्प्रावृषि राजानस्तर्ये शक्रं मुद्दा युताः । मखैंस्सुरेशमर्चन्ति वयभन्ये च मानवाः ॥ २४ श्रीपरशस्यान्यः नन्दगोपस्य वचनं श्रुत्वेत्थं शक्रपूजने । रोषाय त्रिद्शेन्द्रस्य प्राहं दामोदरस्तदा ॥ २५ न वयं कृषिकर्तारो वाणिन्याजीविनो न च । गावोऽस्महेवतं तात वयं वनचरा यतः ॥ २६

आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिस्तथा परा । विद्या चतुष्ट्यं चैतद्वार्तामात्रं शृणुष्ट्व मे ॥ २७ कृषिवीणज्या तद्वच तृतीयं पशुपालनम् । विद्या ह्येका महाभाग वार्ता वृत्तित्रयाश्रया ॥ २८

अस्माकं गौः परा वृत्तिर्वार्त्ताभिदैरियं त्रिभिः ॥ २९ विद्यया यो यया युक्तस्तस्य सा दैवतं महत् । सैव पूज्यार्चेनीया च सैव तस्योपकारिका ॥ ३० यो यस्य फुळमश्चन्वै पूजयत्यपरं नरः ।

कर्षकाणां कृषिर्वृत्तिः पण्यं विपणिजीविनाम् ।

इह च प्रेत्य चैवासौ न तदाप्रोति शोभनम् ॥ ३१ कृष्यान्ता प्रथिता सीमा सीमान्तं च पुनर्वनम् ।

वनान्ता गिरयस्तवें ते चास्माकं परा गतिः ॥ ३२

न द्वारबन्धावरणा न गृहक्षेत्रिणस्तथा। सुरिवनस्त्वितिले लोके यथा वै चक्रचारिणः॥ ३३

श्रूयन्ते गिरयश्चैव वनेऽस्मिन्कामरूषिणः ।

श्रूवना । गरवञ्चव वनअस्यन्कामरूपणः । तत्तद्रूपं समास्थाय रमन्ते स्वेषु सानुषु ॥ ३४ पुष्ट होकर वत्सवती एवं दूध देनेवाली होती हैं ॥ २१ ॥ जिस भूमियर वरसनेवाले मेघ दिखायी देते हैं उसपर कभी अत्र और तृणका अभाव नहीं होता और न कभी वहाँके स्त्रेग भूखे रहते ही देखे जाते हैं ॥ २२ ॥ यह पर्जन्यदेव (इन्द्र) पृथियोके जलको सूर्यिकरणोद्धारा खाँचकर सम्पूर्ण प्राणियोंकी वृद्धिके लिये उसे मेघोंद्वारा पृथियोपर बरसा देते हैं । इसलिये वर्षाऋतुमें समस्त राजालोग, हम और अन्य मनुष्यगण देवराज इन्द्रको यज्ञोद्वारा प्रसन्नतापूर्वक पुजा किया करते हैं ॥ २३-२४ ॥

श्रीपरादारजी बोले—इन्द्रकी पूजाके विषयमें नन्दर्जाके ऐसे बचन सुनकर श्रीदामोदर देवराजको कृपित करनेके लिये हो इस प्रकार कहने लगे— ॥ २५॥ "है तात ! हम न तो कुयक हैं और न व्यापारी, हमारे देवता तो गौरें ही हैं: क्योंकि हमलोग यनचर है।। २६।। आन्वीक्षिकी (तर्कशास्त्र), त्रयो (कर्मकाण्ड),दण्डनीति और वार्ता—ये चार विद्याएँ हैं, इनमेंसे केवल वार्ताका विवरण सुनो ॥ २७ ॥ हे महाभाग ! वार्ता नामकी विद्या कृषि, वाणिज्य और पशुपारून इन तीन वृत्तियोंकी आश्रयभूता है ॥ २८ ॥ चार्ताके इन तीनों भेदोंमेंसे कृषि किसानीकी, बाणिक्य ब्यापारियोंकी और गोपालन हमलोगोंकी उत्तम वृत्ति है॥२९॥ जो व्यक्ति जिस विद्यासे युक्त है उसकी वही इष्टदेवता है, वही पूजा-अचिक योग्य है और वही परम उपकारिणी है॥ ३० ॥ जो पुरुष एक व्यक्तिसे फल-स्त्रभ करके अन्यकी पूजा करता है उसका इहलोक अथवा परलोकमें कहीं भी राभ नहीं होता ॥ ३१ ॥ खेतोंके अन्तर्ने सीमा है तथा सीमाके अन्तमें का हैं और बनोंके अन्तमें समस्त पर्वत हैं; वे पर्वत ही हमारी परमणति है ॥ ३२ ॥ हमलोग

न तो किंवाडें तथा भितिके अन्दर रहनेवाले हैं और न

निश्चित गृह अथवा खेतबाले किसान हो हैं, बल्कि [वन-पर्वतादिमें स्वच्छन्द विचरनेवाले] हमलोग

यक्रवारी^क मुनियोंकी भाँति समस्त जनसम्दायमें सखी हैं

[अतः गृहस्य किसानीकी भाँति हमें इन्द्रकी पूजा करनेका

"सुना जाता है कि इस बनके पूर्वतगण कामरूपी

कोई काम नहीं] " ॥ ३३ ॥

^{*} चक्रचारी मुनि ने हैं जो इकट आदिसे सर्वत्र प्रमण किया करते हैं और जिनकर कोई खास निवास नहीं होता। जहाँ इतम हो जाती है वहीं रह जाते हैं। अतः उन्हें 'सार्थगृह' भी कहते हैं।

यदा चैतैः प्रबाध्यन्ते तेषां ये काननौकसः ।
तदा सिंहादिरूपैस्तान्यातयन्ति महीधराः ॥ ३५
गिरियज्ञस्त्वयं तस्मा द्रोयज्ञश्च प्रवत्यंताम् ।
किमस्माकं महेन्द्रेण गावरुशैलाश्च देवताः ॥ ३६
मन्त्रज्ञपरा विप्रास्तीरयज्ञाश्च कर्षकाः ।
गिरिगोयज्ञशीलाश्च वयमद्रिवनाश्चयाः ॥ ३७
तस्मा द्रोवर्धनरुशैलो भवद्धिर्विविधाईणैः ।
अर्च्यतां पूज्यतां मेध्यान्यशुन्हत्वा विधानतः ॥ ३८
सर्वधोषस्य सन्दोहो गृह्यतां मा विचार्यताम् ।
भोज्यन्तां तेन वै विप्रास्तथा ये चाभिवाळ्काः ॥ ३९
तत्रार्चिते कृते होमे भोजितेषु द्विजातिषु ।
शरत्युष्पकृतापीद्याः परिगच्छन्तु गोगणाः ॥ ४०
एतन्यम मतं गोपास्तम्प्रीत्या क्रियते यदि ।
ततः कृता भवेदग्रीतिर्गवामद्रेस्तथा मम ॥ ४१

श्रीपराशर उनाच इति नस्य वचः श्रुत्वा नन्दाद्यास्ते व्रजीकसः ।

शोधनं ते मतं वस्य यदेतद्भवतोदितम्।

प्रीत्युत्फुल्लमुखा गोपास्साधुसाध्वित्यशात्रुवन् ॥ ४२

तत्करिष्यामहे सर्वं गिरियज्ञः प्रवर्त्यताम् ॥ ४३ तथा च कृतवन्तस्ते गिरियज्ञं व्रजौकसः । द्धिपायसमांसाद्यैदंदुश्शैलबलिं ततः ॥ ४४ द्विजश्च भोजयामासुश्चतशोऽथ सहस्रशः ॥ ४५ गावश्शैलं ततश्चकुर्राचितास्ताः प्रदक्षिणम् । वृषभाश्चातिनदंन्तस्सतोया जलदा इव ॥ ४६ गिरिमूर्द्धनि कृष्णोऽपि शैलोऽहमिति मूर्तिमान् । बुभुजेऽन्नं बहुतरं गोपवर्याहतं द्विज ॥ ४७ स्वेनैव कृष्णो रूपेण गोपैस्सह गिरेश्शिरः ।

अधिरुह्यार्चयामास द्वितीयामात्मनस्तनुम् ॥ ४८

अलर्द्धानं गते तस्मिन्गोपा लब्ध्वा ततो वरान् ।

कृत्वा गिरिमसं गोष्ठं निजमभ्याययुः पुनः ॥ ४९

(इच्छानुसार रूप धारण करनेवाले) है। वे मनोवाव्छित रूप धारण करके अपने-अपने शिखरोपर बिहार किया करते हैं॥ ३४॥ जब कभी वनवासीगण इन गिरिदेवोंको किसी

तरहकी बाधा पहुँचाते हैं तो वे सिंहादि रूप धारणकर उन्हें मार डालते हैं ॥ ३५ ॥ अतः आजसे [इस इन्द्रयङ्गके स्थानमे] गिरियत अथवा गोयङका प्रचार होना चाहिये । हमें इन्द्रसे

क्या प्रयोजन है ? हमारे देवता तो गौएँ और पर्वत ही है ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणलेंग मन्त्र-यज्ञ तथा कृषकगण सीरवज्ञ (हलका पूजन) करते हैं, अतः पर्वत और वनींमें रहनेवाले हमलोगोंको गिरियज्ञ और गोथज करते चाहिये ॥ ३० ॥

'अतएव आपलेग विधिपूर्वक मेध्य पशुओंकी बॉल टेकर विविध सामग्रियोंसे गोवर्धनपर्वतकी पूजा करें ॥ ३८ ॥ आज सम्पूर्ण अजका दूध एकत्रित कर लो और उससे ब्राह्मणें तथा अन्यान्य यावकोंको भोजन कराओ; इस विषयमें और अधिक सोच-विवार मत करो ॥ ३९ ॥ गोवर्धनकी पूजा, होम और ब्राह्मण-भोजन समाप्त होनेपर शरद-ऋतुके पुष्पोंसे सन्दे हुए मस्तकवाली गीएँ गिरिराजकी प्रदक्षिणा करें ॥ ४० ॥ है गोपगण ! आपलोग यदि प्रीतिपूर्वक मेरी इस सम्मतिक अनुसार कार्य करेंग तो इससे गीओंको, गिरिराज और महस्को

श्रीपराशरजी खोले — कृष्णवन्द्रके इन वाक्येंको सुनकर नन्द आदि वजवासी गोपेनि प्रसन्नतासे खिले हुए मुक्तने 'साधु, साधु' कहा ॥ ४२ ॥ और बोले — हे बत्स ! तुमने अपना जो विचार प्रकट किया है वह बड़ा हो सुन्दर है; हम सब ऐसा हो करेंगे; आज गिरियज्ञ किया जाय ॥ ४३ ॥

अल्पन्त प्रसन्नता होगो" ॥ ४१ ॥

तदनन्तर उन बजवासियोंने गिरियक्क अनुष्ठान किया तथा दही, खेर और मास आदिसे पर्वतराजको बहिल ही ॥ ४४ ॥ फैकड़ो, हजारों ब्राह्मणोको मोजन कराया तथा पृष्पार्चित गौओं और सजल जलधरके समान गर्जनेवाले साँड़ोंने गोवधनको परिक्रमा की ॥ ४५-४६ ॥ है द्विज ! उस समय कृष्णचन्द्रने पर्वतरो दिखरपर अन्यरूपसे प्रकट होकर यह दिखलाते हुए कि मै मृतिमान् गिरिराज हूँ, उन गोपश्रेष्टीके चढ़ाये हुए विविध व्यक्तनोंको ब्रहण किया ॥ ४७ ॥ कृष्णचन्द्रने अपने निजरूपसे गोपीके साथ पर्वतराजके शिखरपर चढ़कर अपने ही दूसरे स्वरूपका पूजन किया ॥ ४८ ॥ तदनन्तर उनके अन्तर्धीन होनेपर योपगण अपने अभीष्ट वर पाकर गिरियक् समाप्त करके फिर अपने अपने गोष्टोंमें चले आये ॥ ४९ ॥

ग्यारहवाँ अध्याय

इन्द्रका कोप और श्रीकृष्णका गोवर्धन-धारण

औपराशस्त्र तकाव

मस्रे प्रतिहते राक्रो मैत्रेयातिरुषान्वितः । संवर्तकं नाम गणं तोयदानामधाव्रवीत् ॥

भो भो मेघा निशम्यैतहुद्धनं गदतो मम।

आज्ञानन्तरमेवाशु क्रियतामविचारितम् ॥ नन्दगोपस्तुद्रबुद्धिगरिपरन्यस्तहायवान् ।

नन्दगापस्तुदुबुद्धगापरन्यस्सहायवान् । कृष्णाश्रयबलाध्मातो मस्त्रभङ्गमचोकरत्॥

आजीवो याः परस्तेषां गावस्तस्य च कारणम् । ता गावो वृष्टिवातेन पीड्यन्ता वचनान्मम् ॥

अहमप्यद्रिशृङ्गाभं तुङ्गमारुह्य वारणम् । साहाय्यं वः करिष्यामि वाष्यम्बूत्सर्गयोजितम् ॥

श्रीपरादार उवाच

इत्याज्ञप्रास्ततस्तेन मुमुचुस्ते बलाहकाः । बातवर्षे महाभीममभावाय गवां द्विज ॥

ततः क्षणेन पृथिबी ककुभोऽम्बरमेव च ।

एकं धारामहासारपूरणेनाभवन्युने ॥

विद्युल्लताकशाघातत्रस्तैरिव धनैर्धनम् । नादापुरितदिकृचकैर्धारासारमपात्यतः ।

अन्धकारीकृते लोके वर्षीद्धरनिशं धनैः ।

अधश्चीर्ध्वं च तिर्यक् च जगदाप्यमिवाभवत् ॥ गावस्तु तेन पतता वर्षवातेन वेगिना ।

गावस्तु तेन पतता वर्षवातेन वीगना । धृताः प्राणाञ्जहससन्त्रत्रिकसक्थिशिरोधसः ॥ १०

क्रोडेन वत्सानाक्रम्य तस्थुरन्या महामुने । गावो विवत्साश कृता वारिपूरेण चापरा: ॥ ११

वत्साश्च दीनवदना वातकम्पितकन्यराः।

त्राहि त्राहीत्यल्पशब्दाः कृष्णमूचुरिवातुराः ॥ १२

श्रीपरादारजी बोल्ठे—हे मैत्रेय ! अपने यहके रुक जानेसे इन्द्रने अत्यन्त रोषपूर्वक संवर्तक नामक

मेघोंके दलसे इस प्रकार कहा— ॥ १ ॥ "अरे मेखो ! मेरा यह बचन सुनो और मैं जो कुछ कहूँ उसे मेरी अजा सनते ही किया कछ सोचे-विचारे तरल परा

आज्ञा सुनते ही, बिना कुछ सोचे-विचारे तुरल पूरा करो॥ २॥ देखो अन्य गोपोके सहित दुर्बुद्धि तन्देगोपने कृष्णको सहायताके बलसे अन्या होकर मेरा यज्ञ भंग

कर दिया है ॥ ३ ॥ अतः जो उनकी परम जीविका और उनके गोपत्वका कारण है उन गौऑको तुम मेरी आज्ञासे वर्षा और वासुके द्वारा पीडित कर दो ॥ ४ ॥

में भी पर्वत-शिक्सके समान अत्यन्त ऊँचे अपने ऐसवत हाथीपर चढ़कर वायु और जल छोड़नेके समय

तुम्हार्य सहायता करूँगा"॥ ५॥ औपराशस्त्री बोले—हे द्वित्र ! इन्द्रकी ऐसी

आज्ञा होनेपर गौओंको नष्ट करनेके लिये मेघोने अति प्रचण्ड वायु और वर्षा छोड़ दी॥ ६॥ हे मुने ! उस समय एक क्षणमें ही मेघोकी छोड़ी हुई महान्

जलधाराओंसे पृथिवी, दिशाएँ और आकाश एकरूप

ही गये॥७॥ मेघगग मानो, विद्युल्लतारूप दण्डाघातसे भयभीत होकर महान् शब्दसे दिवाओंको

व्याश करते हुए पूर्यलाधार पानी वरसाने रूपे ॥ ८ ॥ इस प्रकार पेथोंके अहर्निया वरसनेसे संसारके अन्धकारपूर्ण हो जानेपर ऊपर-नीचे और सब ओरसे

समस्त डोक जलमय-सा हो गया॥ ९॥

वर्षा और वायुके बेगपूर्वक चलते रहनेसे गौओंके कटि, जंघा और मीवा आदि सुन्न हो गये और काँपते-काँपते अगने माण छोड़ने लगीं [अर्थात् मूर्च्छित हो गर्यों] ॥ १०॥ हे महामूने! कोई गौँएँ तो अपने बछडोंको अपने नीचे छियाये खडी एहीं और कोई

विष्णुक अपन नाय छिनाय खड़ा रहा आर काह जलके बेगसे बत्सहीना हो गयीं॥११॥ वायुसे वापिते हुए दीनबदन बछड़े मानो व्याकुरू होकर मन्द-स्वरसे कृष्णबन्द्रसे रक्षा करो, रक्षा करों ऐसा

कहने रूगे॥ १२॥

ततस्त होकुलं सर्वं गोगोपीगोपसङ्कलम्। अतीवार्त हरिर्दृष्ट्वा मैत्रेयाचिन्तयत्तदा ॥ १३ एतत्कृतं महेन्द्रेण मखभङ्गविरोधिना। तदेतदिक्लं गोष्टं त्रातव्यमधुना मया ॥ १४ इममद्रिमहं धैर्यादृत्याठ्योरुशिलायनम् । धारियव्यामि गोष्टस्य पृथुक्छत्रमिवोपरि ॥ १५ श्रीपराधार उवाच इति कृत्वा मति कृष्णो गोवर्धनमहीधरम् । उत्पाट्यैककरेणैव धारवामास लीलया ॥ १६ गोपांश्चाह हसञ्छीरिस्समृत्याटितभूधरः । विशध्वमत्र त्वरिताः कृतं वर्षनिवारणम् ॥ १७ सुनिवातेषु देशेषु यथा जोषमिहास्यताम्। प्रविज्यतां न भेतव्यं गिरिपातास् निर्भवै: ॥ १८ इत्युक्तास्तेन ते गोपा विविशुर्गोधनैस्पह। ज्ञकटारोपितैर्भाण्डैर्गोप्यश्चासारपीडिताः ॥ १९ कृष्णोऽपि तं दधारैव शैलमत्यन्तनिश्चलम् । व्रजैकवासिभिर्ह्यविस्मिताक्षेर्निरीक्षितः ॥ २० गोपगोपीजनैईष्टै: प्रीतिविस्तारितेक्षणै: । संस्तुयमानचरितः कृष्णश्शैलमधारयत् ॥ २१ सप्तरात्रं महामेघा वयर्षुर्नन्दगोकुले । इन्द्रेण चोदिता विप्र गोपानां नाशकारिणा ॥ २२ ततो धृते महाशैले परित्राते च गोकुले। मिथ्याप्रतिज्ञो बलिमद्वारबामास तान्धनान् ॥ २३ व्यभ्रे नभसि देवेन्द्रे वितथात्मवचस्यथा।

निकान्य गोकुलं हुष्टं स्वस्थानं पुनरागमत् ॥ २४

स्वस्थाने विस्पितमुखैर्दष्टस्तैस्तु व्रजीकसैः ॥ २५

मुमोच कृष्णोऽपि तदा गोवर्धनमहाचलम् ।

हे मैत्रेय ! उस समय गें, गोपी और गोपणणके सित्त सम्पूर्ण गोकुलको अत्यन्त व्याकुल देखकर श्रीहरिने विचारा ॥ १३ ॥ यज्ञ-भंगके कारण विरोध मानकर मह सब करतृत इन्द्र ही कर रहा है; अतः अब मुझे सम्पूर्ण वजकी रक्षा करनी चाहिये ॥ १४ ॥ अब मैं धैर्यपूर्वक बड़ी-बड़ी शिलाओंसे यनीभृत इस पर्वतको उखाइकर इसे एक बड़े इज्रके समान वजके कपर धारण करूंगा ॥ १५ ॥

श्रीपराशरजी बोले—श्रीकृष्णचन्द्रने ऐसा विचारकर गोवर्धनपर्वतको उखाड़ लिया और उसे लीलासे ही अपने एक हाथपर उठा लिया॥ १६॥ पर्यतको उखाड़ लेनेपर शूरनन्द्रन श्रीश्यामसुन्दरने गोपींसे हॅसकर कहा— 'आओ, शीघ्र ही इस पर्वतके नीचे आ जाओ, मैंने वर्षासे बचनेका प्रकथ कर दिया है॥ १७॥ पहाँ वायुहीन स्थानीमें आकर सुखपूर्वक बैठ जाओ; निर्भय होकर प्रवेश करो, पर्वतके गिरने आदिका भय मत करों ॥ १८॥

श्रीकृष्णचन्द्रके ऐसा कहनेपर जलकी घाराओंसे पीडित पोप और मोपी अपने वर्तन-भाँडोंको छकड़ोंमें रखकर गौओंके साथ पर्वतके नीचे चले गये॥ १९॥ ब्रज-वासियोंद्वारा हर्ष और विस्मयपूर्वक टकटकी लगाकर देखे जाते हुए श्रीकृष्णचन्द्र भी गिरिसक्को अस्पन्त निश्चलतापूर्वक धारण किये रहे॥ २०॥ जो प्रीतिपूर्वक आँखें फाड़कर देख रहे थे उन हर्षित-चित्त गोप और गोपियोंसे अपने चरितोंका स्तवन होते हुए श्रीकृष्णचन्द्र पर्वतको धारण किये रहे॥ २१॥

है विश ! गोपोंके नाशकर्ता इन्द्रको श्रेरणासे उन्दर्जीके गोकुलमें सात एत्रितक महाभयेकर मेघ बरसते रहे ॥ २२ ॥ किंतु जब श्रीकृष्णचन्द्रने पर्वत धारणकर गोकुलको रक्षा को तो अपनी प्रतिज्ञा व्यर्थ हो जानेसे इन्द्रने गेपोंको रोक दिया ॥ २३ ॥ आकाशके मेघहीन हो जानेसे इन्द्रकी प्रतिज्ञा भंग हो जानेपर समस्त गोकुलवासी बहाँसे निकलकर प्रसन्नतापूर्वक फिर अपने-अपने स्थानोपर आ गये॥ २४ ॥ और कृष्णचन्द्रने भी उन ब्रज्जवासियोंके विस्मयपूर्वक देखते-देखते गिरितक गोवर्धनको अपने स्थानपर स्व दिया॥ २५ ॥

बारहवाँ अध्याय

शक-कृष्ण-संवाद, कृष्ण-स्तुति

4

श्रीपस्त्रार तवाच

धृते गौवर्धने शैले परित्राते च गोकुले।

रोचवामास कृष्णस्य दर्शनं पाकशासनः ॥

सोऽधिरुहा महानागमैरावतममित्रजित्। गोवर्धनगिरौ कृष्णं ददर्श त्रिदशेश्वरः॥ २

चारयन्तं महावीयै गास्तु गोपवपुर्घरम्।

कृत्स्त्रस्य जगतो गोपं वृतं गोपकुमारकैः ॥ गरुडं च ददशोंचैरन्तद्धांनगतं द्विज ।

कृतच्छायं हरेर्मृद्धि पक्षाभ्यां पक्षिपुङ्गवम् ॥ ४

अवस्त्वा स नागेन्द्रादेकान्ते मधुसूदनम् । शक्रस्सस्मितमाहेदं प्रीतिविस्तारितेक्षणः ॥ ५

इन्द्र उवाच

कृष्ण कृष्ण शृणुष्टेदं यदर्शमहमागतः।

त्वत्समीपं महाबाहो नैतिश्चन्त्यं त्वयान्यथा ॥

भारावतारणार्थाय पृथिव्याः पृथिवीतले ।

अवतीणोंऽखिलाधार त्वमेव परमेश्वर ॥

मखभङ्गविरोधेन मया गोकुलनाशकाः। समादिष्टा महामेघासौक्षेदं कदनं कृतम्॥

त्रातास्ताश्च त्वया गावस्तमृत्याट्य महीधरम् ।

तेनाई तोषितो बीरकर्मणात्यद्भुतेन ते॥ ९

साधितं कृष्ण देवानामहं मन्ये प्रयोजनम् ।

त्वयायमद्भित्रवरः करेणैकेन यद्धृतः॥ १०

गोभिश्चः चोदितः कृष्ण त्वत्सकाशमिहागतः । त्वया त्राताभिरत्यर्थं युक्तत्सत्कारकारणात् ॥ ११

त्वया त्राताभिरत्यथं युक्मत्सत्कारकारणात् ॥ १

स त्वां कृष्णाभिषेक्ष्यामि गवां वाक्यप्रचोदितः । उपेन्द्रत्वे गवामिन्द्रो गोविन्दस्त्वं भविष्यसि ॥ १२ श्रीपरादारजी बोले—इस प्रकार गोवर्धनपर्वतका धारण और गोकुरूकी रक्षा हो जानेपर देवराज इन्द्रको

श्रीकृष्णयन्त्रका दर्शन करनेको इच्छा सुई॥१॥ अतः दार्श्वात् देवसूज गुजराज ग्रेस्यतूषर चढ्कर

गोवर्धनपर्वतपर आये और वहाँ सम्पूर्ण जगत्के रक्षक गोपवेषधारी महावरूवान् श्रीकृष्णचन्द्रको

गालबालोके साथ गीएँ चराते देखा॥२-३॥

हे द्विज ! उन्होंने यह भी देखा कि पक्षिश्रेष्ठ गरुड अदुस्यभावसे उनके ऊपर रहकर अपने पहुतेंसे उनकी

स्त्रया कर रहे हैं॥४॥ तब वे ऐरावतसे उतर पड़े

और एकान्तमें श्रीमधुसुदनकी ओर प्रीतिपूर्वक दृष्टि

फैलाते हुए मुसकाकर बोले॥ ५॥

इन्द्रने कहा—हे श्रीकृष्णचन्द्र ! मैं जिस लिये आपके पास आया हूँ, वह सुनिये—हे महावाहो ! आप इसे अन्यथा न समझें ॥ ६ ॥ हे अखिल्झधार परमेश्वर ! आपने पृथिवीका भार उतारनेके लिये ही पृथिवीपर अवतार लिया है ॥ ७ ॥ यज्ञभंगसे विरोध मानकर ही मैंने गोकुलको नष्ट करनेके लिये महामेपीको आज्ञा दी थीं, उन्होंने यह संहार मचाया था ॥ ८ ॥ किन्तु आपने पर्वतको उखाङ्कर गौओंको बचा लिया । हे बीर ! आपके इस अन्द्रत कर्मसे मैं

अति प्रसन्न हूँ॥ ९॥

हे कृष्ण ! आपने जो अपने एक हाथपर गोवर्धन
धारण किया है इससे मैं देवताओंका प्रयोजन
[आपके द्वारा] सिद्ध हुआ ही समझता हूँ॥ १०॥
[गोवंशकी रक्षाद्वारा] आपसे रिक्षत [कामधेनु
आदि] गौओंसे प्रेरित होकर ही मैं आपका विशेष
सत्कार करनेके लिथे यहाँ आपके पास आया
हूँ॥ ११॥ हे कृष्ण ! अब मैं गौओंके वाक्यानुसार ही
आपका अपन्द्र-पद्पर अभिषेक करूँगा तथा आप
गौओंके इन्द्र (स्वामी) हैं इसलिये आपका नाम

'गोविन्द' भी होगा॥ १२॥

श्रीपराशस उत्रान

अश्रोपवाह्यादादाय यण्टामैरावताद्रजात् । अभिषेकं तया चक्रे पवित्रजल्प्पूर्णया ॥ १३ क्रियमाणेऽभिषेके तु गावः कृष्णस्य तत्क्षणात् । प्रस्रवोद्धृतदुग्धाद्रौ सद्यश्चकुर्वसुन्धराम् ॥ १४ अभिषिच्य गवां वाक्यादुपेन्द्रं वै जनार्दनम् । प्रीत्या सप्रश्रयं वाक्यं पुनराह् श्रचीपतिः ॥ १५ गक्षामेतत्कृतं वाक्यं तथान्यदपि मे शृणु । यद्भवीमि महाभाग भारावतरणेच्छया ॥ १६ ममांशः पुरुष्ययाद्य पृथिव्यां पृथिवीधर । अवतीणोऽर्जुनो नाम संरक्ष्यो भवता सदा ॥ १७ भारावतरणे साह्यं स ते वीरः करिष्यति । संरक्षणीयो भवता यथातमा पशुसूदन ॥ १८

जानामि भारते वंशे जातं पार्थं तवांशतः ।
तमहं पालविष्यापि यावतस्थास्यापि भूतले ॥ १९
यावन्महोतले शक्त स्थास्याप्यहमरिन्दमः ।
न तावदर्जुनं कश्चिद्देवेन्द्र युधि जेष्यति ॥ २०
कंसो नाम महाबाहुर्दैत्योऽरिष्टस्तथासुरः ।
केशी कुवलयापाडो नरकाद्यास्तथा परे ॥ २१
हतेषु तेषु देवेन्द्र भविष्यति महाहवः ।
तत्र विद्धि सहस्वाक्ष भारावतरणं कृतम् ॥ २२
स त्वं गच्छ न सन्तापं पुत्रार्थे कर्तुमहंसि ।
नार्जुनस्य रिपुः कश्चिन्ममात्रे प्रभविष्यति ॥ २३
अर्जुनार्थे त्वहं सर्वान्युधिष्ठिरपुरोगमान् ।
निवृत्ते भारते युद्धे कुन्त्यै दास्याम्यविश्वतान् ॥ २४
औपराजर उच्च

इत्युक्तः सम्परिष्ठज्य देवराजो जनार्दनम् । आरुद्धौरावतं नागं पुनरेव दिवं ययौ ॥ २५ कृष्णो हि सहितो गोभिगोंपालैश्च पुनर्वजम् । आजगामाश्च गोपीनां दृष्टिपूतेन वर्त्यना ॥ २६ श्रीपराशरजी बोले—तदनत्तर इन्द्रने अपने थाहन गजराज ऐरावतका घण्टा लिया और उसमें पवित्र जल भरकर उससे कृष्णचन्द्रका अभिषेक किया॥१३॥ श्रीकृष्णचन्द्रका अभिषेक होते समय गौओंने तुरत्त ही अपने स्तनोंसे टपकते हुए दुष्यसे पृथिवीको मिगो दिया॥१४॥

इस प्रकार गीओंके कथनानुसार श्रीजनार्दनको उपन्द-पदपर अभिषिक्त कर राजीपति इन्ह्रने पुनः ग्रीति और विनयपूर्वक कहा— ॥ १५ ॥ "हे महामाग ! यह तो मैंने गौओंका बचन पूरा किया, अब पृथिवीके भार उतारनेको इच्छासे मैं आपसे जो कुछ और निवेदन करता हूँ यह भी सुनिये ॥ १६ ॥ हे पृथिवीधर ! हे पुरुषसिंह ! अर्जुन नामक मेरे अंहाने पृथिवीपर अवतार लिया है; आप कृपा करके उसकी सर्वदा रक्षा करें ॥ १७ ॥ हे मधुसूदन ! यह वीर पृथिवीका भार उतारनेमें आपका साथ देगा, अतः आय उसकी अपने शरीरके समान ही रक्षा करें" ॥ १८ ॥

श्रीभगवान् खोले— भरतबंद्रामें पृथाके पुत्र अर्जुनने तुम्हरे अंद्रासे अवतार लिया है— यह मैं जानता हूँ। मैं जवतक पृथिवीपर रहुँगा, उसकी रक्षा करूँगा॥ १९॥ हे राष्ट्रसूटन देखेन्द्र! जबतक महीतलपर रहुँगा तबतक अर्जुनको युद्धमें कोई भी न जीत सकेगा॥ २०॥ हे देवेन्द्र! विद्राल भुजाओंवाला कंस नामक दैल्य, अरिष्टासुर, केशी, कुबलमापीड और नरकासुर आदि अन्यान्य दैल्योंका नाश होनेपर यहाँ महाभारत-युद्ध होगा। हे सहसाक्ष! उसी समय पृथिवीका भार उतरा हुआ समझना॥ २१-२२॥ अब तुम प्रसन्नतापूर्वक जाओ, अपने पुत्र अर्जुनके लिये तुम किसी प्रकारकी विन्ता मत करो; मेरे रहते हुए अर्जुनका कोई भी शत्रु सफल न हो सकेगा॥ २३॥ अर्जुनके लिये ही मैं महाभारतके अन्तमें युधिष्ठर आदि समस्त पाण्डवीको अक्षत-शरीरसे कुन्तोको दुँगा॥ २४॥

शीपराशस्त्री बोले—कृष्णचन्द्रके ऐसा कहनेपर देवराज इन्द्र उनका आलिङ्गन कर ऐरावत हाथीपर आरूढ़ हो स्वर्गको चले गये॥ २५॥ तदनत्तर कृष्णचन्द्र भी भोषियोंके दृष्टिपातसे पवित्र हुए मार्गद्वारा गोषकुमारों और गौओंके साथ ब्रजको लीट आये॥ २६॥

तेरहवाँ अध्याय

गोपोंद्वारा भगवान्का प्रभाववर्णन तथा भगवान्का गोपियोंके साथ रासकीडा करना

श्रीपराधार उचाच गते शके तु गोपालाः कृष्णमङ्गिष्टकारिणम् । ऊचुः प्रीत्या धृतं दृष्टा तेन गोवर्धनाचलम् ॥ वयमस्मान्महाभाग भगवन्महतो भयात्। गावश्च भवता त्राता गिरिधारणकर्मणाः॥ 3 बालक्रीडेयमतुला गोपालत्वं जुगुप्सितम्। दिव्यं च भवतः कर्म किमेतत्तात कध्यताम् ॥ 3 कालियो दमितस्तीये धेनुको बिनिपातितः । धतो गोवर्धनश्चायं शक्तितानि मनांसि नः ॥ X सत्यं सत्यं हरे: पादौ शपामोऽमितविक्रम । वधावद्वीर्यमालोक्य न त्यां मन्यामहे नरम् ॥ प्रीति: सस्त्रीकमारस्य व्रजस्य त्वयि केशव । कर्म चेदमशक्यं यत्समसौक्षिदशैरपि॥ बालतं चातिवीर्यतं जन्म चाम्पास्वशोधनम् । विन्यमानममेयात्मञ्जूषां कृष्ण प्रयच्छति ॥ देवो वा दानवो वा त्वं यक्षो गन्धर्व एव वा । किमस्माकं विचारेण बान्धवोऽसि नमोऽस्तु ते ॥

श्रीपराशर उवाच

क्षणं भूत्वा त्वसौ तूर्णों किञ्चित्रणयकोपवान् । इत्येवमुक्तसौगोंपैः कृष्णोऽष्याह महामतिः ॥

श्रीभगवानुवाच

मत्सम्बन्धेन वो गोपा यदि लजा न जायते । इलाच्यो वाहं ततः किं वो विचारेण प्रयोजनम् ॥ १० यदि वोऽस्ति मयि प्रीतिः इलाच्योऽहं भवतां यदि । तदात्मबन्धुसदुशी बुद्धिर्वः क्रियतां मयि ॥ ११

श्रीपराशस्त्री बोले—इन्द्रके चले जानेपर ह्मेळाविहारी श्रीकृष्णचन्द्रको विना प्रवस्स हो गोवर्घन-पर्वत धारण करते देख गोपगण उनसे प्रीतिपूर्वक बोले--- ॥ १ ॥ हे भगवन् ! हे महाभाग ! आपने गिरिराजको धारण कर हमारी और गौओंकी इस महान् भयसे रक्षा की है॥ २॥ है तात ! कहाँ आफ्की यह अनुपम बाललीला, कहाँ निन्दित गोपजाति और ऋहाँ ये दिव्य कर्म ? यह सब क्या है, कृपया हमें बतलाइये ॥ ३ ॥ आपने यम्ताजलमें कालियनागका दमन किया, धेनुकासुरको मारा और फिर यह गोबर्धनपर्वत धारण किया: आपके इन अन्द्रत कमीसे हमारे चितमें बड़ी शंका हो रही है ॥ ४ ॥ है अमितविक्रम ! हम भगवान् हरिके चरणोंकी राषध करके आपसे सच-सच कहते हैं कि आपके ऐसे बल-वीर्यकों देखकर हम आपको मनुष्य नहीं मान सकते ॥ ५ ॥ हे केशव ! स्त्री और वारकोके सहित सभी वजवासियोंकी आपपर अत्यन्त प्रीति है। आपका यह कर्म तो देवताओंके लिये भी दुष्कर है ॥ ६ ॥ हे कृष्ण ! आपको यह बाल्यावस्था, विचित्र बल-वीर्य और हम-जैसे नीच पुरुषोमें जन्म लेना — हे अभेयात्मन् ! ये सब बाते किचार करनेपर हमें शंकामें डाल देती है ॥ ७ ॥ आप देवता हों, दानव हों. यक्ष हों अथवा गन्धर्व हों: इन बातीका विचार करनेसे हमें क्या प्रयोजन है ? हमारे तो आप बन्धु ही है, अतः आयको नमस्कार है ॥ ८ ॥ 🛒 🚃 😁

श्रीपसञ्चरजी बोले—गोपगणके ऐसा कहनेपर महामति कृष्णचन्द्र कुछ देस्तक चुप रहे और फिर कुछ प्रणयजन्य कोपपूर्वक इस प्रकार कहने लगे—॥ ९॥

श्रीधगवान्ने कहा—हे गोपगण ! यदि आपलोगोंको मेरे सन्बन्धसे किसी प्रकारकी ल्ब्बा न हो, तो मैं आपलोगोंसे प्रशंसनीय हूँ इस बातका विचार करनेकी भी क्या आवहयकता है ? ॥ १० ॥ यदि मुझमें आपको प्रीति है और यदि मैं आपकी प्रशंसाका पात्र हूँ तो नाहं देवो न गन्धवों न यक्षो न च दानवः । अहं वो बान्धवो जातो नैतसिन्यमितोऽन्यथा ॥ १२

श्रीपराशर उद्याच

इति श्रुत्वा हरेर्वाक्यं बद्धमौनास्ततो वनम् । ययुर्गोपा महाभाग तस्मिन्प्रणवकोपिनि ॥ १३

कृष्णस्तु विमलं व्योग शरचन्द्रस्य चन्द्रिकाम् । तदा कुमुदिनीं फुल्लामामोदितदिगन्तराम् ॥ १४

वनराजि तथा कूजद्भृङ्गमालामनोहराम् । विलोक्य सह गोपीभिर्मनशके रति प्रति ॥ १५

विना रामेण मधुरमतीव वनिताप्रियम्। जगौ कलपदं शौरिस्तारमन्द्रकृतक्रमम्॥१६

रम्यं गीतक्ष्मनि श्रुत्वा सन्त्यज्यावसश्चांस्तदा । आजग्मुस्त्वरिता गोप्यो यत्रास्ते मधुसूदनः ॥ १७

शनैश्शनैर्जांगौ गोपी काचित्तस्य लयानुगम् । दत्तावधाना काचिद्य तमेव मनसास्मरत् ॥ १८

दत्तावयाना कार्षिक तमय मनसास्मरत् ॥ १८ काचित्कृष्णेति कृष्णेति प्रोच्य लजाम्पाययौ ।

ययौ च काचित्रेमान्या तत्पार्श्वमविलम्बितम् ॥ १९

काचि**शाव**सश्चरयान्ते स्थित्वा दृष्ट्वा बहिर्गुरुम् । तन्मयत्वेन गोविन्दं दध्यौ मीलितलोचना ॥ २०

तश्चित्तविमलाह्नादक्षीणपुण्यचया तथा।

तदप्राप्तिमहादुःखिक्लीनाशेषपातका ॥ २१

चिन्तयन्ती जगस्पूर्ति परब्रह्मस्वरूपिणम् । निरुद्धासतया मुक्तिं गतान्या गोपकन्यका ॥ २२

गोपीपरिवृतो रात्रि शरसन्त्रमनोरमाम् । मानवाभास गोकिन्दो रासारस्थरसोत्सुकः ॥ २३

गोप्यश्च वृन्द्शः कृष्णचेष्टास्वायत्तमूर्तयः। अन्यदेशं गते कृष्णे चेरुर्वृन्दावनान्तरम्॥ २४

कृष्णे निबद्धहृदया इदमूलुः परस्परम् ॥ २५

आपस्त्रोग मुझमें वान्धव-बुद्धि ही करें ॥ ११ ॥ मैं न देव हूँ , न गन्धर्व हूँ , न यक्ष हूँ और न दानव हूँ । मैं तो आपके बान्धवरूपसे ही उत्पन्न हुआ हूँ आपस्त्रोगोंको इस विषयमें और कुछ विचार न करना चाहिये ॥ १२ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—हे महाभाग ! श्रीहरिके प्रणयकोपयुक्त होकर कहे हुए इन वाक्योंको सुनकर वे समस्त गोपगण चुपचाप वनको चले गये॥ १३॥

तब श्रीकृष्णचन्द्रने निर्मल आकाश, शरगन्द्रकी चांन्द्रका और दिशाओंको सुरभित करनेवाली विकसित कुमुदिनी तथा वन-सण्डीको मुखर मधुकरोसे मनोहर देखकर गोपियोंके साथ रमण करनेकी इच्छा की ॥१४-१५॥ उस समय बलरामजीके बिना ही श्रीमुरलीमनोहर फियोंको प्रिय लगनेवाला अत्यन्त मधुर, अस्फुट एवं मृदुल पद ऊँचे और धीमे स्वरसे गाने लगे॥१६॥ उनको उस सुरम्य गीतध्यनिको सुनकर गोपियाँ अपने-अपने घरोंको छोड़कर तत्काल जहाँ

श्रीमधुसुदन थे वहाँ चली आयों ॥ १७ ॥

वहाँ आकर कोई गोपी तो उनके खर-में-खर मिलांकर धीर-धीर गाने लगी और कोई मन-हो-मन उन्होंका स्मरण करने लगी ॥ १८ ॥ कोई 'हे कृष्ण, हे कृष्ण ऐसा कहती हुई लजावश संकृषित हो गयी और कोई प्रेमोन्महिनो होकर तुरना उनके पास जा कड़ी हुई ॥ १९ ॥ कोई गोपी बाहर गुरुवनोंको देखकर अपने घरमें ही रहकर और मूँदकर तन्मयमांक्से श्रीगोजिन्दका ध्यान करने लगी ॥ २० ॥ तथा कोई गोपकुमारी जगत्के कारण परब्रह्मसरूप श्रीकृष्णचन्द्रका चिन्तन करते-करते [मूर्व्हांसस्थ्य श्रीकृष्णचन्द्रका चिन्तन करते-करते [मूर्व्हांसस्थ्य श्रीकृष्णचन्द्रका चिन्तन करते-करते [मूर्व्हांसस्थ्य श्रीकृष्णचन्द्रका चिन्तन करते-करते [मूर्व्हांसस्थामें] आणापानके रुक जानेसे मुक्त हो गयी, क्योंकि भगवद्वज्ञानके विमल आह्वादसे उसकी समस्त पुण्यर्राहा क्षीण हो गयी और भगवान्की अप्राप्तिके महान् दुःखसे उसके समस्त पाप लीन हो गये थे ॥ २१-२२ ॥

करके] सम्मानित किया ॥ २३ ॥

उस समय भगवान् कृष्णके अन्यत्र चले जानेपर
कृष्णचेष्टाके अधीन हुई गोपियाँ पूथ बनाकर वृन्दावनके
अन्दर विचले लगों ॥ २४ ॥ कृष्णमें निवडचित हुई वे
वजाङ्गनाएँ परस्पर इस प्रकार वार्तालाप करने लगों—
[उसमेंसे एक गोपी कहती थी—] "मैं ही कृष्ण हूँ; देखों, कैसी सुन्दर चालसे चलता हूँ; तनिक मेरी

गोपियोंसे चिरे हुए रासारम्भरूप रसके लिये उत्कण्डित

श्रीपोविन्दने उस शरबन्द्रसुशोभिता ग्रांक्को (ग्रस

कृष्णोऽहमेष लिलतं ब्रजाम्यालोक्यतां गतिः । अन्या ब्रवीति कृष्णस्य मम गीतिर्निशम्यताम् ॥ २६ दुष्टकालिय तिष्ठात्र कृष्णोऽहमिति चापरा । बाहुमास्फोट्य कृष्णस्य लीलया सर्वमाददे ॥ २७ अन्या ब्रवीति भो गोपा निरुराङ्कैः स्थीयतामिति । अलं वृष्टिभयेनात्र धृतो गोवर्धनो मया ॥ २८ धेनुकोऽयं मया क्षिप्तो विचरन्तु यथेन्छया । गावो ब्रयीति चैवान्या कृष्णलीलानुसारिणी ॥ २९ एवं नानाप्रकारास् कृष्णजेष्टास् तास्तदा । गोप्यो व्ययाः समं चेरू रम्यं वृन्दावनान्तरम् ॥ ३० विलोक्यैका भुवं प्राह गोपी गोपवसङ्घना । पुलकाञ्चितसर्वाङ्गी विकासिनयनोत्पला ॥ ३१ ध्वजवन्राङ्कराञ्जाङ्करेखावन्यालि पश्यत । पदान्येतानि कृष्णस्य लीलाललितगामिनः ॥ ३२ कापि तेन समायाता कृतपुण्या मदालसा । पदानि तस्याश्चेतानि घनान्यल्पतन्ति च ॥ ३३ पुष्पापचयमत्रोचैशकः दामोदरो ध्रुवम् । येनात्राकान्तमात्राणि पदान्यत्र महात्मनः ॥ ३४ अन्रोपविश्य वै तेन काचित्पुप्पैरलङ्कता । अन्यजन्मनि सर्वात्मा विष्णुरभ्यचितस्तया ॥ ३५ पुष्पचन्धनसम्मानकृतमानामपास्य नन्दगोपसुतो यातो मार्गेणानेन पञ्चत ॥ ३६ अनुवातैनमञ्जान्याः नितम्बभरमन्थरा । या गन्तव्ये द्रुतं याति निम्नपादाग्रसंस्थितिः ॥ ३७ हस्तन्यस्ताग्रहस्तेयं तेन याति तथा सर्खी । अनायत्तपदन्यासा लक्ष्यते पदपद्धतिः॥३८

हस्तर्सस्पर्शमात्रेण धृतेंनैवा विमानिता।

नैराञ्चान्यन्दगामिन्या निवृत्तं लक्ष्यते पदम् ॥ ३९

गति तो देखो ।'' दूसरी कहती—-''कृष्ण तो मैं हूँ , अहा ! मेस गाना तो सुनो'' ॥ २५-२६ ॥ कोई अन्य गोपी भुजाएँ ठोंककर बोल उउती—"अरे दुष्ट बालिय ! मैं कृष्ण हूँ , तनिक तहर तो जा" ऐसा कहकर वह कृष्णके सारे चरित्रीका लीलापूर्वक अनुकरण करने लगती॥ २७॥ कोई और गोपी कहने रूपतो—"और पोपपण ! मैंने गोवर्धन धारण कर लिया है, तुम वर्षासे पत डरो, निक्लंक होकर इसके नीचे आकर बैठ जाओ"॥ २८॥ कोई दूसरी गोपी कृष्णलीलाओंका अनुकरण करती हुई बोलने लवती—"मैंने धेनुकासुरको मार दिया है, अब यहाँ गीएँ स्वच्छद् होकर विचरें" ॥ २९ ॥ इस प्रकार समस्त गोपियाँ श्रीकृष्णचन्द्रकी नाना प्रकारकी चेष्टाओंमे ज्यप्र होकर साथ-साथ अति सुरम्य वृन्दावनके अन्दर विचरने समी॥ ३०॥ बिले हुए कमल-जैसे नेत्रीयाली एक सुन्दरी गोपाङ्गना सर्वाङ्गमें पुरुक्तित हो पृथियोकी ओर देखकर कहने लगी-॥ ३१ ॥ अरी आली ! ये लीलालॉलतगामी कृष्णचन्द्रके ध्वजा, वजा, अंकुश और कमल आदिकी रेखाओंसे स्शोभित पदचिह्न तो देखो ॥ ३२ ॥ और देखो, उनके स्मथ कोई पुण्यवती मदमाती युवती भी आ गयी है, उसके ये घने छोटे-छोटे और पतले चरणिवह दिखायी दे रहे हैं ॥ ३३ ॥ यहाँ निक्षय ही दामोदरने ऊँचे होकर पूजावयन किये हैं; इसी कारण यहाँ उन महास्नाके चरणोंके केवल अयभाग ही अङ्कित हुए हैं ॥ ३४ ॥ यहाँ बैठकर उन्होंने निश्चय ही किसी बङ्भागिनीका पुष्पोंसे शृङ्गार किया है; अवस्य हो उसने अपने पूर्वजन्ममें सर्वात्मा श्रीविष्णुभगवानुकी हपासना की होगी ॥ ३५ ॥ और यह देखो, पुष्पवन्धनके सम्मानसे गर्विता होकर उसके मान करनेपर श्रीनन्दनन्दन उसे छोड़कर इस मार्गसे चले गये है ॥ ३६ ॥ अर्ध सलियो ! देखी, यहाँ कोई नितम्बभारके कारण मन्दगासिनी गोपी कृष्णचन्द्रके पीछे-पीछे गरी है। वह अपने गन्तका स्थानको तीवगतिसे गर्या है. इसीसे उसके चरणचिहांके अग्रभाग कुछ नीचे दिसायी देते हैं॥ ३७॥ यहाँ वह ससी उनके हाथमें अपना पाणिपस्छव देकर चली है इसीसे उसके चरणचिक्र पराधीन-से दिखलागी देते हैं ॥ ३८ ॥ देखो, यहाँसे उस मन्द्रगामिनोके निराश होकर लौटनेके चरणियह दोख रहे हैं, मालूम होता है उस चुर्तने [उसकी अन्य आन्तरिक अभिलायाओंको पूर्ण किये बिना ही | केवल कर-स्पर्श

नृनमुक्ता त्वरामीति पुनरेष्यामि तेऽन्तिकम् । तेन कृष्णेन येनैषा त्वरिता पदपद्धतिः ॥ ४० प्रविष्ठो गहनं कृष्णः पदमत्र न रूक्ष्यते । निवर्तध्वं शशाङ्कस्य नैतहीधितिगोचरे ॥ ४१ निवृत्तास्तास्तदा गोष्यो निराशाः कृष्णदर्शने । यमुनातीरमासाद्य जगुस्तद्यरितं तथा ॥ ४२ ततो ददृशुरायान्तं विकासिमुखपङ्कुजम् ।

गोष्यक्षैलोक्यगोप्नारं कृष्णमङ्गिष्टवेष्टितम् ॥ ४३ काचिदालोक्य गोविन्दमायान्तमतिहर्षिता । कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति प्राह् नान्यदुदीरयत् ॥ ४४ काचिद्भूभङ्गरं कृत्वा ललाटफलकं हरिम् ।

विलोक्य नेत्रभृङ्गाभ्यां पपौ तन्मुखपङ्कजम् ॥ ४५ काचिदालोक्य गोविन्दं निमीलितविलोचना । तस्यैव रूपं ध्यायन्ती योगारूढेव सा बभौ ॥ ४६

ततः काञ्चितित्रयालापैः काञ्चिद्भूभङ्गवीक्षितैः । निन्येऽनुनयमन्यां च करस्पर्शेन माधवः ॥ ४७

ताभिः प्रसन्नविताभिगोपीभिस्सह सादरम् । ररास रासगोष्टीभिक्दारचरितो हरिः ॥ ४८

रासमण्डलबन्धोऽपि कृष्णपार्श्वमनुञ्ज्ञता । गोपीजनेन नैवाभूदेकस्थानस्थिरात्पना ॥ ४९

हस्तेन गृह्य चैकैकां गोपीनां रासमण्डलम् । चकार तत्करस्पर्शनिमीलितदृशं हरिः ॥ ५० ततः प्रववृते रासश्चलद्वलयनिस्वनः ।

अनुयातशरत्काव्यगेयगीतिरनुक्रमात् ॥ ५१ कृष्णश्शरबन्द्रमसं कौमुदीं कुमुदाकरम्।

जगौ गोपीजनस्त्रेकं कृष्णनाय पुनः पुनः ॥ ५२ परिवृत्तिश्रमेणैका चलदलकाणितीय ।

परिवृत्तिश्रमेणैका चलद्दलयलापिनीप् । ददौ बाहुलतां स्कन्धे गोपी मधुनिघातिनः ॥ ५३ करके उसका अपमान किया है ॥ ३९ ॥ यहाँ कृष्णने अवस्य उस गोपीसे कहा है '[तू यहीं बैठ] मैं शीघ ही जाता हूँ [इस वनमें रहनेवाले सक्षसको मारकर] पुनः तेरे पास ख़ैट आऊँगा। इसीलिये यहाँ उनके चरणोंके

चिद्ध शीघ्र गतिके-से दीख रहे हैं ॥४०॥ यहाँसे कृष्णचन्द्र गहन वनमें चले गये हैं, इसीसे उनके चरण-चिद्ध दिसलायी नहीं देते; अब सब लीट चलो; इस

स्थानपर चन्द्रमाकी किरणे नहीं पहुँच सकती ॥ ४१ ॥

तदनन्तर वे गोपियाँ कृष्ण-दश्नेसे निराश होकर स्त्रैट आयों और यमुनातटपर आकर उनके चरितोंको गाने लगों ॥ ४२ ॥ तब गोपियोंने प्रसन्नमुखार्यक्ट् त्रिमुजनरक्षक लोलाविहारी श्रीकृष्णचन्द्रको बहाँ आते देखा ॥ ४३ ॥ उस समय कोई गोगी तो श्रीगोविन्द्रको आते देखकर अति हर्षित हो केवल 'कृष्ण ! कृष्ण !! कृष्ण !!!' इतना ही कहती रह गया और कुछ न बोले सकी ॥ ४४ ॥ कोई [प्रणयकोपवश] अपनी भूमंगीसे ललाट सिकोड़कर श्रीहरिको देखते हुए अपने नेत्ररूप भगरोद्वारा उसके मुखकमलका मकरन्द्र पान करने लगी ॥ ४५ ॥ कोई गोपी गोविन्द्रको देख नेत्र मुँदकर

उन्होंके रूपका ध्यान करती हुई योगारु इ-सी भासित होने

लगी ॥ ४६ ॥

तव श्रीमाधव किसीसे प्रिय भाषण करके, किसीकी ओर भूभंगीसे देखकर और किसोका हाथ पकड़कर उन्हें मनाने लगे॥ ४०॥ फिर उदारचरित श्रीहरिने उन प्रसप्तिचित गोपियोंके साथ रासमण्डल बनाकर आदरपूर्वक रमण किया॥ ४८॥ किन्तु उस समय कोई भी गोपी कृष्णचन्द्रकी सर्विधिको न छोड़ना चाहती थी: इसिल्ये एक ही स्थानपर स्थिर रहनेके कारण रासोबित मण्डल न बन सका॥ ४९॥ तब उन गोपियोंनेसे एक-एक्का हाथ पकड़कर श्रीहरिने रासमण्डलकी रचना की। उस समय उनके करस्पर्शंसे प्रस्थेक गोपीकी आँखें आनन्द्रसे मुँद जाती थीं॥ ५०॥

तदनन्तर रासक्रीडा आरम्भ हुई। उसमें गोपियोके चञ्चल कंकणोंकी झनकार होने लगी और फिर क्रमशः शरद्वर्णन-सम्बन्धी गीत होने लगे॥ ५१॥ उस समय कृष्णचन्द्र चन्द्रमा, चन्द्रिका और कुमुद्रवन-सम्बन्धी गान करने लगे; किन्तु गोपियोंने तो बारम्बार केवल कृष्णवामका ही पान किया॥ ५२॥ फिर एक गोपीने नृत्य करते-करते थककर चञ्चल कंकणव्यी झनकारसे युक्त

काचित्रविलसद्वाहः परिरश्य चुचुम्ब तम् । गोपी गीतस्तुतिव्याजान्निपुणा मधुसूदनम् ॥ ५४ गोपीकपोलसंदलेषमभिगम्य पुलको द्रमसस्याय स्वेदाम्बुधनतां गती ॥ ५५ रासगेयं जगौ कृष्णो यावत्तारतरध्वनिः । साधु कृष्णेति कृष्णेति तावत्तां द्विगुणं जगुः ॥ ५६ गतेऽनुगमनं चक्कवंलने सम्मुखं ययुः। प्रतिलोगानुलोगाभ्यां भेजुर्गोपाङ्गना हरिष् ॥ ५७

स तथा सह गोपीभी रतस मधुसूदनः।

यथाब्दकोटिप्रतिमः क्षणस्तेन विनाभवत् ॥ ५८ ता वार्वमाणाः पतिभिः पितृभिर्भातृभिस्तेथा । कृष्णं गोपाङ्गना रात्रो रमयन्ति रतिप्रियाः ॥ ५९

सोऽपि कैशोरकवयो मानयन्पधुसूदनः। रेमे ताभिरमेयात्मा क्षपासु क्षपिताहित: ॥ ६० तन्द्रर्तेषु तथा तासु सर्वभृतेषु चेश्वरः ।

आत्मस्वरूपरूपोऽसौ व्यापी वायुरिव स्थितः ॥ ६१ यथा समस्तभूतेषु नभोऽप्रिः पृथिवी जलम् ।

वायुश्चात्मा तथैवासौ व्याप्य सर्वमवस्थित: ॥ ६२

चौदहवाँ अध्याय

वृषभासुर-वध

श्रीपगृहार उताच

प्रदोषाप्रे कदाचित् रासासक्ते जनाईने।

गोष्ट्रमरिष्टस्समुपागमत् ॥

सतोयतोयद्च्छायस्तीक्ष्णशृङ्गोऽर्कलोचनः ।

स्तुराप्रपानैरत्वर्थ दारयन्धरणीतलम् ॥

लेलिहानस्सनिष्येषं जिह्नयोष्ट्रौ पुनः पुनः । संस्थाविद्धलाङ्गलः कठिनस्कन्धवन्धनः॥

अपनी बाहुलता श्रीमधुसूदनके गलेमें डाल दी॥ ५३॥ किसी निपुण गोपोने भगवानुके गानकी प्रशंसा करनेके

बहाने भूजा फैरलकर श्रीमधुसूदनको आस्त्रिह्नन करके चूम

लिया ॥ ५४ ॥ श्रीहरिकी भुजाएँ गोपियोंके कपोलोंका चुम्बन पाकर उन (कपोलों) में पुलकावलिख्य धान्यकी उत्पत्तिके लिये खेदरूप जलके मेघ बन गर्वी ॥ ५५ ॥

कृष्णवन्द्र जितने उसस्वरसे रासोचित गान गाते थे

उससे दुने शब्दसे गोपियाँ "घन्य कृष्ण ! धन्य कृष्ण !!"

की ही ध्वनि लगा रही थीं ॥ ५६ ॥ भगवानुके आगे जानेपर मोपियाँ उनके पीछे जाती और लौटनेपर सामने चलतीं, इस प्रकार वे उनलोम और प्रतिलोम-गतिसे

श्रीहरिका साथ देती थीं॥ ५७॥ श्रीमधुसुदन भी गोपियोंके साथ इस प्रकार शसक्रीड़ा कर रहे थे कि उनके

बिना एक क्षण भी गोपियोंको करोड़ों वर्षोंके समान बीतता था ॥ ५८ ॥ वे रास-रसिक गोपाङ्गवाएँ पति, माता-पिता और भाता आदिके रोकनेपर भी रात्रिमें श्रीइयामसुन्दरके

साथ विहार करती थीं ॥ ५९ ॥ शबुहन्त अमेयात्मा श्रीमधुसुदन भी अपनी किशोरावस्थाका मान करते हुए राजिके समय उनके साथ रमण करते थे॥ ६०॥ वे सर्यव्यापी ईंखर श्रीकृष्णचन्द्र गोपियोमें, उनके पतियोमें

तथा समस्त प्राणियोमें आत्मस्वरूपसे वायुके समान व्याह थे ॥ ६१ ॥ जिस प्रकार आकाश, अमि, पृथिवी, जल, वानु और आला समस्त प्राणियोंमें व्याप्त हैं उसी प्रकार वे

भी सब पदार्थीमें व्यापक है ॥ ६२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽशे त्रबोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—एक दिन सार्थकालके समय

जय श्रीकृष्णचन्द्र एसक्रीडामें आसक्त थे, अरिष्ट नामक एक मदोन्पत असुर [वृषधरूप धारणकर] सबको भयभीत करता क्रजमे आवा॥ १॥ इस अरिष्टासुरकी

कान्ति सजल जलधरके समान कृष्णवर्ण थी, सींग अत्यन्त तीक्ष्ण थे, नेत्र सुर्यके समान तेजस्वी थे और अपने खुरोंकी बोटसे वह मानो पृथियीको फाड़े डालता

था ॥ २ ॥ वह दाँत पीसता हुआ पुनः-पुनः अपनी जिह्नासे ओठोंको चाट रहा था, उसने क्रोधवश अपनी पुँछ उठा

वि॰ प॰ १२ —

त्रासयन्समहो

उद्यककुदाभोगप्रमाणो दुरतिक्रमः । विण्मूत्रलिप्तपृष्ठाङ्गो गवामुद्वेगकारकः ॥ प्रलम्बकण्ठोऽतिमुखस्तरुखाताङ्किताननः । पातयन्स गर्वा गर्भान्दैत्यो वृषधरूपधृक् ॥ सूद्वंस्तापसानुत्रो वनानटति यसदा ॥ ततस्तमतिघोराक्षमवेक्ष्यातिभयातुराः गोपा गोपस्त्रियश्चैय कृष्ण कृष्णेति चुक्कुशुः ॥ सिंहनादं ततश्चके तलशब्दं च केशवः। तच्छब्दश्रवणाद्यासौ दामोदरमुपाययौ ॥ अग्रन्यस्तविषाणाग्रः कृष्णकुक्षिकृतेक्षणः । अभ्यधावत दुष्टात्मा कृष्णं वृषभदानवः॥ १ आयान्तं दैत्यवृषभं दृष्ट्वा कृष्णो महावलः । न चचाल तदा स्थानादवज्ञास्मितलीलया ॥ १० आसन्ने चैव जयाह याहवन्मधुसूदनः। जघान जानुना कुक्षौ विवाणग्रहणाचलम् ॥ ११ तस्य दर्पबलं भङ्कता गृहीतस्य विषाणयोः । अपीडयदरिष्टस्य कण्ठं क्रित्रमिवाम्बरम् ॥ १२

उत्पाट्य शृङ्गमेकं तु तेनैवाताडयत्ततः। ममार स महादैत्यो मुखाच्छोणितमुद्रमन्॥ १३ तुष्टुवुर्निहते तस्मिन्दैत्ये गोषा जनार्दनम्। जम्भे हते सहस्राक्षं पुरा देवगणा यथा॥ १४ रखी थी तथा उसके स्कन्धवन्मन कडोर थे ॥ ३ ॥ उसके ककुद (कुठान) और शरीरका प्रमाण अत्यन्त कँचा एवं दुर्छङ्घ्य था, पृष्टभाग गोवर और मूत्रसे लिखड़ा हुआ था तथा वह समस्त गीओंको भयभीत कर रहा था ॥ ४ ॥ उसकी प्रीवा अत्यन्त लम्बी और मुख वृक्षके खोललेके समान अति गम्भीर था। वह वृष्टभुरूपधारी दैल्प गौओंके गभींको गिराता हुआ और तपस्तियोंको मारता हुआ सदा वनमें विच्य करता था॥ ५-६॥

तव उस अति भयानक नेत्रोंवाले दैखको देखकर गोप और गोपाङ्गनाएँ भयभीत होकर 'कृष्ण, कृष्ण' पुकारने लगों ॥ ७ ॥ उनका शब्द सुनकर श्रीकेशको घोर सिंहनाद किया और ताली बजायी । उसे सुनते ही वह श्रीदामोहरको जोर फिरा ॥ ८ ॥ दुसला ज्यमासुर आगेको सींग करके तथा कृष्णचन्द्रकी कृश्रिमें दृष्टि लगाकर उनको ओर दौड़ा ॥ ९ ॥ किन्तु महावली कृष्ण वृषभासुरको अपनी ओर आता देख अवहेलनासे लीलापूर्वक मुसकराते हुए उस स्थानसे विचलित न हुए ॥ १० ॥ निकट आनेपर श्रीमधुस्ट्रनने उसे इस प्रकार पकड़ लिया जैसे याह किसी शुद्र जीवको पकड़ लेता है; तथा सींग पकड़नेसे अचल हुए उस दैखकी कोलमें मुटनेसे प्रहार किया ॥ ११ ॥

इस प्रकार सींग पकड़े हुए उस देशका दर्प भंगकर भगवान्ने अरिष्टासुरको प्रोवाको गोळ वसके समान मरोड़ दिया ॥ १२ ॥ तदनन्तर उसका एक सींग उखाड़कर उसीसे उसपर आधात किया जिससे वह महादैत्य मुखसे रक्त बगन करता हुआ मर गया ॥ १३ ॥ जन्मके मरनेपर जैसे देवताओंने इन्द्रको स्तुति को थो उसी प्रकार अरिष्टासुरके मरनेपर गोपगण श्रीजनार्दनको प्रशंसा करने रूगे ॥ १४ ॥

C NATE ARA

البهوة بملعد بونيد بالأحراء وبمأماناه

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेऽदो चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवाँ अध्याय

कंसका श्रीकृष्णको बुलानेके लिये अक्रूरको भेजना

Ε,

श्रीपसदार उवाच

ककुराति हतेऽरिष्टे धेनुके विनिपातिते।
प्रलम्बे निधनं नीते धृते गोवर्धनाचले।।
दिमते कालिये नागे भन्ने तुङ्गद्वपद्वये।
हतायां पूतनायां च शकटे परिवर्तिते॥
कंसाय नारदः प्राह यथावृत्तमनुक्रमात्।
यशोदादेवकीगर्भपरिवृत्त्याद्यशेषतः ॥
श्रुत्वा तत्सकलं कंसो नारदादेवदर्शनात्।
वसुदेवं प्रति तदा कोपं चक्रे सुदुर्मितः॥
सोऽतिकोपादुपालभ्य सर्वयादवसंसदि।
जगर्ह यादवांश्चैव कार्य चैतदिचन्तयन्॥

यावत्र बलमारूढौ समकृष्णौ सुबालकौ । तावदेव मया वध्यावसाध्यौ रूढयौवनौ ॥ वाणुरोऽत्र महावीयौँ महिकश्च महाबलः ।

एताभ्यां मल्लयुद्धेन मार्रायच्यामि दुर्मती ॥ धनुमंहमहायोगव्याजेनानीय तौ व्रजात् ।

तथा तथा यतिष्यामि यास्येते सङ्कृषं यथा ॥ श्रफत्कतनयं श्रुरमक्करं यदुपुडुवम् ।

तयोरानयनार्थीय प्रेषिय्यामि गोकुलम् ॥ ९ वृन्दावनचरं घोरमादेक्ष्यामि च केशिनम् । तत्रैवासावतिबलस्तावुभौ घातयिष्यति ॥ १०

गजः कुवलयापीझे मत्सकाशमिहागतौ । यातयिष्यति वा गोपौ वसुदेवसुतावुभौ ॥ ११

श्रीपसदार इकाच

इत्यालोच्य स दुष्टात्मा कंसो रामजनार्दनी । हन्तुं कृतमतिर्वीरावकूरं वाक्यमद्रवीत्॥ १२ श्रीपसदारजी बोलं—कृषभरूपधारी अस्ट्रिसुर, धेनुक और प्रलम्ब आदिका वध, गोवर्धनपर्वतका बारण करना, काल्यिकागका दमन, दो विशाल वृक्षीका उखाड़ना, पूतनावध तथा शकटका उलट दैना आदि अनेक लील्प्रऍ हो जानेपर एक दिन नारदजीने कंसको, यहोदा और देवकीके गर्भ-परिवर्तनसे लेकर जैसा-जैसा हुआ था, वह सब वृक्षान्त क्रमशः सुना दिया॥१—३॥

देकदर्शन नारदजासे ये सब बातें सुनकर दुर्वुद्धि कंसने वस्देवजीके प्रति अत्यन क्रीय प्रकट किया ॥ ४ ॥ उसने अत्यन्त कोपसे बसुदेवजीको सम्पूर्ण यादनोंको सभाने डाँटा तथा समस्त यादबोंको भी निन्दा की और यह कार्य विचारने रूपा—'ये अत्यत्त बारुक राम और कृष्ण जबतक पूर्ण बरू प्राप्त नहीं करते हैं तभीतक मुझे इन्हें मार देना चाहिये, क्योंकि युवावस्था प्राप्त होनेपर तो ये अजेय हो जायेंगे ॥ ५-६ ॥ मेरे यहाँ महावीर्यशाली चाणर और महावली मष्टिक-जैसे मल्ल है। मैं इनके साथ मल्लयुद्ध कराकर उन दोनों दुर्बुद्धियोको मरवा डाल्टुंगा॥ ७॥ उन्हें महान् धनुर्यज्ञके मिससे वजसे बुलाकर ऐसे-ऐसे उपाथ करूंगा जिससे वे नष्ट हो जायं॥ ८॥ उन्हें लानेके लिये मैं धफल्कके पुत्र यादवश्रेष्ठ शुरवीर अक्रुस्की मौकुल भेजूँगा॥ ९॥ साथ ही वृन्दावनमें विचरनेवाले घोर असूर केशीको भी आज्ञा दैगा, जिससे वह महाबली दैत्य उन्हें वहीं नष्ट कर देगा ॥ १० ॥ अथवा [यदि किसी प्रकार बचनर] वे दोनों बसदेब-पुत्र गोप मेरे पास आ भी गये तो उन्हें सेरा कुवलवापीड हाथी सार डालेगा' ॥ ११ ॥

श्रीपराशरजी बोले—ऐसा सोवकर उस दुष्टात्मा कंसने वीरवर राम और कृष्णको मारनेका निश्चय कर अक्रूरजीसे कहा ॥ १२ ॥ केस उत्प्रच

भो भो दानपते वाक्यं क्रियतां प्रीतये मम । इतः स्यन्दनमारुह्य गम्यतां नन्दगोकुलम् ॥ १३ वसदेवसूतौ तत्र विष्णोरंशसम्बन्धौ। नावाय किल सम्भूती मम दुष्टी प्रवर्द्धतः ॥ १४ धनुर्मह्रो ममाप्यत्र चतुर्दश्यां भविष्यति । आनेयो भवता गत्वा मल्लयुद्धाय तत्र तौ ॥ १५ चाणुरमृष्टिकौ मल्लौ नियुद्धकुशलौ मम । ताभ्यां सहानयोर्युद्धं सर्वलोकोऽत्र पश्यत् ॥ १६ गजः कुवलयापीडो महामात्रप्रचोदितः। स वा हनिष्यते पापौ वसुदेवात्मजौ शिशू ॥ १७ ती हत्वा वसुदेवं च नन्दगोपं च दुर्मतिम् । हनिष्ये पितरं चैनमुप्रसेनं सुदुर्मतिम् ॥ १८ ततस्ममस्तगोपानां गोधनान्यखिलान्यहम् । वित्तं चापहरिष्यामि दुष्टानां महुधैषिणाम् ॥ १९ त्वामुने यादवाश्चैते द्विषो दानपते मय। एतेषां च वधायाहं यतिष्येऽनुक्रमात्ततः ॥ २० तदा निष्कण्टकं सर्वं राज्यमेतदयादवम् । प्रसाधिष्ये त्वया तस्मान्यत्प्रीत्यै वीर गम्यताम् ॥ २१ यथा च माहिषं सर्पिर्देधि चाप्युपहार्य वै। गोपासस्मानयन्त्वाशु तथा वाच्यास्त्वया च ते ॥ २२

श्रीपण्यस्वयाव इत्याज्ञामस्तदाकूरो महाभागवतो द्विज । प्रीतिमानभवत्कृष्णं श्रो द्रक्ष्यामीति सत्वरः ॥ २३ तथेत्युक्त्या च राजानं रथमारुह्य शोभनम् । निश्चकाम ततः पुर्या मथुराया मथुप्रियः ॥ २४ कंस बोत्ता — हे दानपते ! भेरी प्रसन्नताके लिये आप मेरी एक बात स्वीकार कर छीजिये। यहाँसे स्थपर चढकर आप नन्दके मोकुरूको जाइये॥ १३॥ वहाँ वसदेवके विष्णुअंशसे उत्पन्न दो पुत्र है। मेरे नाशके लिये उत्पन्न हुए वे दूष्ट वालक वहाँ पोषित हो रहे है ॥ १४ ॥ मेरे यहाँ चतुर्दर्शाको धनुषयञ्च होनेवाला है: अतः आप वहाँ जाकर उन्हें मल्ल्युद्धके लिये ले आइये॥ १५॥ मेरे चाणुर और मृष्टिक नामक मल्ल युग्म-युद्धमें अति कुशल है, [उस धनुर्वज्ञके दिन] उन दोनोंके साथ मेरे इन पहल्लानोंका इन्ह्रयुद्ध यहाँ सब लोग देखें ॥ १६ ॥ अथवा महाबतसे प्रेरित हुआ कवलवापीड नामक गजराज उन दोनों दृष्ट वसुदेव-पुत्र बालकोंको नष्ट कर देना॥ १७॥ इस प्रकार उन्हें मारकर मैं दुर्मति वसुदेव, नन्दगोप और इस अपने मन्दर्मत पिता उप्रसेनको भी मार डालुँगा॥ १८॥ तदनन्तर, भेरे वधकी इच्छावाले इन समस्त दृष्ट गोपीके सम्पूर्ण गोधन तथा धनको मैं छीन लुगा॥ १९॥ है दानपते ! आपके अतिरिक्त ये सभी यादवगण मुझसे द्वेष करते हैं, अतः मैं क्रमशः इन संधीको नष्ट करनेका प्रयत्न कहँगा ॥ २० ॥ फिर मैं आपके साथ मिलकर इस यादवहीन राज्यको निर्विच्नतापूर्वक भोगुँगा, अतः है। वीर ! मेरी प्रसन्नताके तिलये आप शीघ ही जाहये ॥ २१ ॥ आप गोकुलमें पहुँचकर गोपगणोंसे इस प्रकार कहें जिससे वे माहिष्य (भैंसके) धृत और दिध आदि उपहारोंके सहित शीव ही यहाँ आ जाये ॥ २२ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—हे द्वित ! कंससे ऐसी आजा पा महाभागवत अकूरजी 'कल मैं शिष्ठ ही श्रीकृष्णचन्द्रको देखूँगा'—यह सोचकर अति प्रसन्न हुए॥ २३॥ भाधव-प्रिय अकूरजी राजा कंससे 'जो आजा' कह एक अति सुन्दर रथपर बढ़े और मथुरापुरीसे बाहर निकल आये॥ २४॥

0 97

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमंऽसे पञ्चदशोऽभ्यायः ॥ १५ ॥

सोलहवाँ अध्याय

केशि-वध

श्रीपराशर उवाच

केशी चापि बलोदमः कंसदुतप्रचोदितः। कृष्णस्य निधनाकाङ्की यृन्दावनमुपागमत् ॥ खुरक्षतभूपृष्ठस्सटाक्षेपधुताम्बुदः । द्रतविकान्तचन्द्रार्कमार्गो गोपानुपाद्रवत् ॥ तस्य हेषितशब्देन गोपाला दैत्यवाजिनः । गोष्यश्च भयसंविष्ठा गोविन्दं शरणं ययुः ॥ त्राहि त्राहीति गोविन्दः श्रुत्वा तेषां ततो वचः । सतोयजलद्भ्यानगम्भीरमिद्मुक्तवान् अलं त्रासेन गोपालाः केशिनः कि भयातुरैः । भवद्भिगोंपजातीयैवींरवीर्यं विलोज्यते ॥ किमनेनाल्पसारेण हेषिताटोपकारिणा । दैतेयबलवाहोन वल्गता दृष्टवाजिना ॥ एहोहि दृष्ट् कृष्णोऽहं पृष्णस्त्वव पिनाकधुक् । पातियध्यामि दशनान्वदनादिक्लांस्तव ॥ इत्युक्तवास्फोट्य गोविन्दः केशिनस्सम्पूखं ययौ । विवृतास्यश्च सोऽप्येनं दैतेयाश्च उपाद्रवत् ॥ बाह्माभोगिनं कृत्वा मुखे तस्य जनार्दनः । प्रवेज्ञवामास तदा केज्ञिनो दुष्टवाजिनः ॥ ९ केशिनो वदने तेन विशता कृष्णवाहुना। शातिता दशनाः पेतुः सिताभ्रावयवा इव ॥ १० कृष्णस्य ववृधे बाहुः केशिदेहगतो द्विज । विजाञाय यथा व्याधिरासम्भूतेरुपेक्षितः ॥ ११

विपारितोष्ठो बहुलं सफेनं रुधिरं वयन्।

जवान धरणीं पादैश्शकृत्पृत्रं समुत्सुजन् ।

सोऽक्षिणी विवृते चक्रे विशिष्टे मुक्तवसने ॥ १२

स्वेदार्द्रगात्रक्शान्तश्च निर्यत्नस्रोऽभवत्तदा ॥ १३

श्रीपराशस्त्री बोले-हे मैत्रेय! इधर केसके दुतद्वारा भेजा हुआ महावस्त्री केशी भी कृष्णचन्ह्रके वधको इच्छासे [योडेका रूप भारणकर] वृन्दावनमें आया ॥ १ ॥ वह अपने खरोसे पृथिवीतलंको खोदता, प्रीवादे बालांसे बादलोंको छिन्न-भिन्न करता तथा वेगसे चन्द्रमा और सूर्यके मार्गको भी पार करता गोपोंकी ओर दौड़ा ॥ २ ॥ उस अधरूप दैत्यके हिनहिनानेके शब्दसे भयभौत होकर समस्त गोप और गोपियाँ श्रीगोबिन्दकी क्षरणमें आये ।। ३ ॥ तब उनके ब्राहि-ब्राहि शब्दको सुनकर भगवान् कृष्णचन्द्र सजल मेघकी गर्जनाके समान गम्भीर वाणीसे बोले---॥४॥ "हे गोपालगण! आपलोग केज़ी (केज़ाचारी अश्व) से न डरें, आप तो गीप-जातिके हैं, फिर इस प्रकार भयभीत होकर आप अपने वीरोचित पुरुषार्थका स्रोप क्यों करते हैं ? ॥ ५ ॥ यह अल्पवीर्य, हिनहिनानेसे आतुरू फैलानेवाला और नाचनेवाला दृष्ट अश्व जिसपर सक्षसगण बलपूर्वक चहा करते हैं, आपलोगोंका क्या विगाड़ सकता है ?" ॥ ६ ॥

[इस प्रकार गोपोंको धैर्य वैधाकर वे केशीसे कहने लगे —] "अर दुष्ट ! इधर आ, पिनाकधारी वीरभद्रने जिस प्रकार पूषाके दाँत उखाड़े थे उसी प्रकार में कृष्ण तेरे मुखसे सारे दाँत गिरा दूँगा" ॥ ७ ॥ ऐसा कहकर श्रीगोविन्द उछलकर केशीके सामने आये और वह अश्ररूपधारी दैल्प भी मूँह खोलकर उनकी और दीड़ा ॥ ८ ॥ तब जनार्टनने अपनी बाँह फैलाकर उस अश्ररूपधारी दुष्ट दैल्पके मुखमें डाल दी ॥ १ ॥ केशीके मुखमें मुखी हुई भगवान कृष्णकी बाहुसे टकराकर उसके समस्त दाँत शुप्त मेधरूपखंकि समान मुटकर बाहर गिर पड़े ॥ १० ॥

हे द्विज ! उत्पत्तिके समयसे ही उपक्षा को गया व्यापि जिस प्रकार नाश करनेके लिये बढ़ने लगती है उसी प्रकार केशीके देहमें प्रविष्ट हुई कृष्णचन्द्रकी भुजा बढ़ने लगी ॥ ११ ॥ अन्तमें औठोंके फट जानेसे वह फेनसहित स्रीधर वमन करने लगा और उसकी औसे स्नायुबन्धनके हीले हो जानेसे फूट गर्यो ॥ १२ ॥ तब वह मल-मृत्र छोड़ता हुआ पृथिकीपर पैर पटकने लगा, उसका शरीर

व्यादितास्यमहारन्धस्सोऽसरः कृष्णबाहुना । निपातितो द्विधा भूमौ वैद्युतेन यथा दूप: ॥ १४ द्विपादे पृष्ठपुन्छार्द्धे श्रवणैकाक्षिनासिके । केशिनस्ते द्विधाभूते शकले द्वे विरेजतुः ॥ १५ हत्वा तु केशिनं कृष्णो गोपालैर्मुदितैर्वृतः । अनायस्ततनुस्त्वस्थो हसंस्तत्रैव तस्थिवान् ॥ १६ ततो गोष्यश्च गोपाश्च हते केशिनि विस्पिताः । तुष्ट्युः पुण्डरीकाक्षमनुरागमनोरमम् ॥ १७ अथाहान्तर्हितो वित्र नारदो जलदे स्थित: । केशिनं निहतं दुष्टा हर्षनिर्धरमानसः॥ १८ साधु साधु जगन्नाथ लीलवैव वदच्युत । निहतोऽयं त्वया केशी हेशदिखदिवौकसाम् ॥ १९ युद्धोत्स्कोऽहमत्वर्थं नरवाजिमहाहवम् । अभूतपूर्वमन्यत्र द्रष्टुं स्वर्गीदिहागतः ॥ २० कर्माण्यत्रावतारे ते कृतानि मधुसूदन। यानि तैर्विस्मितं चेतस्तोषमेतेन मे गतम् ॥ २१ तुरङ्गस्यास्य शक्रोऽपि कृष्ण देवाश्च विश्यति । धृतकेसरजालस्य हेषतोऽभ्रावलोकिनः ॥ २२ यस्मात्त्वयैष दुष्टात्मा हतः केशी जनार्दन । तस्मात्केशवनाम्। त्वं लोके ख्यातो भविष्यसि ॥ २३ स्वस्त्यस्तु ते गमिष्वामि कंसयुद्धेऽधुना पुनः । परश्चोऽई समेष्यामि त्वया केशिनिवृदन ॥ २४ वयसेनसुते कंसे सानुगे विनिपातिते। भारावतारकर्ता त्वं पृथिव्याः पृथिवीधर् ॥ २५ तत्रानेकप्रकाराणि युद्धानि पृथिवीक्षिताम् । द्रष्ट्रव्यानि मयायुष्यत्प्रणीतानि जनार्दन ॥ २६ सोऽहं वास्यापि गोविन्द देवकार्यं महत्कृतम्। खयैत्र विदितं सर्वं स्वस्ति तेऽस्तु व्रजाम्यहम् ॥ २७ नारदे तु गते कृष्णस्सह गोपैस्सभाजितः । विवेश गोकुलं गोपीनेत्रपानैकभाजनम् ॥ २८

पसीनेसे भरकर रुण्डा पड़ गया और वह निश्चेष्ट हो गया ॥ १३ ॥ इस प्रकार श्रीकृष्णचन्द्रकी भुजाने जिसके मुखका विज्ञाल रन्ध फैलाला गया है वह महान् असुर मरकर यज्ञपातसे गिरे हुए वृक्षके समान दो खण्ड होकर पृथियीपर गिर पड़ा ॥ १४ ॥ केशीके शरीरके वे दोनों खण्ड दो पाँव, आशी पीठ, आधी मूँछ तथा एक-एक कान-आँख और नासिकारन्थके सहित सुशोधित हुए ॥ १५ ॥

इस प्रकार केशीको मारकर प्रसन्तीचत 'बाल्जालीसे घिर हुए श्रीकृष्णचन्द्र बिना श्रमके खस्यचितसे हैसठे हुए वहीं सड़े रहे ॥ १६ ॥ केशीके मारे जानेसे विस्मित हुए गोप और गोपियोंने अनुसम्बद्धा अत्यन्त मगोहर लगनेवाले कमलनयन श्रीदयामसुन्दरकी स्तृति को ॥ १७ ॥

हे विप्र ! उसे मरा देख मेचपटरूमें छिपे हुए श्रीनारदजी हर्षितचित्तसे कहने लगे—॥ १८॥ "हे जगन्नाथ । हे अच्युत ।! आप घन्य हैं, धन्य हैं। अहा ! आपने देवताओंको दःख देनेवाले इस केड्रीको लीलासे ही भार डाला ॥ १९ ॥ मैं मनुष्य और अश्वके इस पहले और कहीं न होनेवाले युद्धको देशनेक लिये ही अत्यना उत्कण्टित होकर स्वर्गसे यहाँ आया था॥ २०॥ हे मधुसुदन ! आपने अपने इस अवतारमें जो-जो कर्म किये हैं उनसे मेरा क्लि अल्फ्त विस्मित और सन्तृष्ट हो रहा है॥२१॥ हे कृष्ण ! जिस समय यह अध अपनी सटाओको हिलाता और हींसता हुआ आकाशकी और देखता था तो इससे सम्पूर्ण देवगण और इन्द्र भी ढर जाते थे ॥ २२ ॥ हे जनार्दन ! आपने इस दुष्टातमा केशोको मारा है; इस्तिये आप लोकमें 'केशव' नामसे विख्यात होंगे ॥ २३ ॥ हे केशिनिषुदन ! आपका कल्याण हो, अब मैं जाता है। परसों कंसके साथ आपका युद्ध होनेके समय मैं फिर आऊँगा ॥ २४ ॥ हे पृथियोधर ! अनुगामियों-सहित उग्रसेनके पुत्र कंसके मारे जानेपर आप पृथिवीका भार उतार देंगे ॥ २५ ॥ हे जनार्दन ! उस समय में अनेक राजाओंके साथ आप आयुष्मान् पुरुषके किये हुए अनेक प्रकारके युद्ध देखूँगा ॥ २६ ॥ हे गोविन्द ! अब मैं जाना चाहता हूँ । आपने देवताओंका बहुत बड़ा फार्य किया है । आप सभी कुछ जानते हैं [मैं आधिक क्या कहें ?] आपका मङ्गल हो, मैं जाता हैं''॥ २७ ॥

गदनन्तर नारदजीके चले आनेपर गोपगणसे सम्मानित गोपियोके नेत्रोंके एकमात्र दृश्य श्रीकृष्णचन्द्रने खालबालेकि साथ गोकुलमें प्रवेश किया ॥ २८ ॥

सत्रहवाँ अध्याय

अक्रूरजीकी गोकुलयाता

श्रीपरास उद्याच

अक्ररोऽपि विनिष्कम्य स्वन्दनेनाशुगामिना । कृष्णसंदर्शनाकाङ्की प्रययी नन्दगोकुलम् ॥ १ चिन्तयामास चाक्करो नास्ति धन्यतरो मया । योऽहर्मशावतीर्णस्य मुखं द्रश्यामि चक्रिणः ॥ अद्य में सफलं जन्म सूत्रभाताभवन्निशा। यद्त्रिद्राभपत्राक्षं विष्णोर्द्रक्ष्याप्यहं मुखम् ॥ पापं हरति यत्पुंसां स्मृतं सङ्कल्पनामयम् । तत्युण्डरीकनयनं विष्णोर्द्रक्ष्याम्यहं मुखम् ॥ विनिर्जग्पूर्वतो वेदा वेदाङ्गान्यखिलानि च । द्रक्ष्यामि तत्परं धाम धाम्रां भगवतो मुखम् ॥ यज्ञेषु यज्ञपुरुवः पुरुषैः पुरुषोत्तमः। इज्यते योऽखिलाधारस्ते द्रक्ष्यामि जगत्पतिम् ॥ इष्ट्रा यमिन्द्रो यज्ञानां सतेनामरराजताम् । अवाप तमननादिमहं द्रश्यामि केशवम् ॥ न ब्रह्मा नेन्द्ररुद्राश्चियस्वादित्यमरुद्रणाः । यस्य स्वरूपं जानन्ति प्रत्यक्षं याति मे हरि: ॥ सर्वात्मा सर्ववित्सर्वसार्वभूतेषुवस्थितः । यो ह्याचिन्त्योऽव्ययो व्यापी स वक्ष्यति मया सह ॥ मत्स्यकुर्मवराहाश्वसिंहरूपादिभिः स्थितिम् । वकार जगतो योऽजः सोऽह्य मां प्रलपिष्यति ॥ १० साम्प्रतं च जगत्स्वामी कार्यमात्महृदि स्थितम् । कर्तुं मनुष्यतां प्राप्तस्त्वेच्छादेहधूगव्ययः ॥ ११ योऽनन्तः पृथिवीं धत्ते शेखरस्थितिसंस्थिताम् । सोऽवतीर्णो जगत्यर्थे मामकूरेति वक्ष्यति ॥ १२

श्रीपराञ्चरजी बोले—अङ्गरजी भी तुरंत ही मथ्रापुरोसे निकलकर श्रीकृष्ण-दर्शनकी लालसासे एक शीव्रगामी स्थद्वारा मन्दजीके मोकुछको चले॥१॥ अक्रुरजी सोचने लगे 'आज मुझ-जैसा बढ़भागी और कोई नहीं है, क्योंकि अपने अंशसे अवतीर्ण कक्रधारी श्रीविष्णुभगवानुका भूस मैं अपने नेत्रीसे देखेगा ॥ २ ॥ आज भेरा जन्म सफल हो गया; आजकी ग्राप्ति [अवदय] सुन्दर प्रभातवाली थी, जिससे कि मैं आज खिले हुए कमलके समान नेत्रवाले शीविष्णभगवानके मुलका इर्शन करूँगा ॥ ३ ॥ प्रभुका जो संकल्पमय मुखारविन्द स्मरणमञ्जसे पुरुषोके पापोको दूर कर देता है आज मैं विष्णुभगवानुके उसी कमलनयन मुखको देखूँगा ॥४॥ जिससे समूर्ण बेद और वेदांगीको उत्पत्ति हुई है, आज में सम्पूर्ण तेजस्वियोके परम आश्रय उसी भगवत्-मुखार-विन्दका दर्जन करूँना ॥ ५ ॥ समस्त प्रुवीके द्वारा यहींमें जिन असिल विश्वके आधारमृत पुरुषोत्तमका यज्ञपुरुष-रूपसे कजन (पूजन) किया जाता है आज मैं उन्ही जगत्पतिका दर्शन करूँगा ॥ ६ ॥ जिनका सौ बज्ञोंसे यजन करके इन्द्रने देवराज-पदवी प्राप्त की है, आज मैं उन्हीं अनादि और अनन्त केशबका दर्शन करूँगा ॥ ७ ॥ जिनके स्वरूपको ब्रह्मा, इन्द्र, रुद्र, आंध्रतीकृमार, वसुगण, आदित्य और परदण आदि कोई भी नहीं जानते आज वे ही हरि मेरे नेजेंके विषय होंगे॥८॥ जो सर्जात्मा, सर्वज्ञ, सर्वस्वरूप और सब भूतोंमें अवस्थित है तथा जो अचित्र्य, अञ्यय और सर्वत्यायक है, अहो ! आज खयं वे ही मेरे साथ वातें करेगे ॥ ९ ॥ जिन अजन्माने मस्य, कुर्मे, वराह, हबप्रीव और मुसित अहि रूप घारणकर जगनुकी रक्षा की है, आज वे ही मुझसे वार्तालाय करेंगे 🗇 १० ॥ 😁 'इस समय उन अन्ययाता। जगताभुने अपने मनमें

सोचा हुआ कार्य करनेके लिये अपनी ही इच्छासे मनुष्य-टेह धारण किया है॥ ११॥ जो अनन्त (शेषजी) अपने

मस्तकार रखी हुई पश्चिवीको धारण करते हैं, संसारके

द्वितके रूपे अवतीर्ण हुए वे ही आज मुहासे 'अकूर'

कहकर बोलेंगे॥ १२॥:

31.2 पितृपुत्रसुहृद्भातृमातृबन्धुमयोमिमाम् । यन्पायां नालमुत्तर्तुं जगत्तरमै नमो नमः ॥ १३ तरत्यविद्यां विततां हृदि यस्मिन्निवेशिते। योगमायाममेयाय तस्मै विद्यात्मने नमः ॥ १४ यज्वभिर्यज्ञपुरुषो वासुदेवश्च सात्वतै: । वेदान्तवेदिभिर्विष्णुः प्रोच्यते यो नतोऽस्मि तम् ॥ १५ यथा यत्र जगद्धाम्नि धातर्येतत्प्रतिष्ठितम् । सदसत्तेन सत्येन पय्यसौ यातु सौम्यताम् ॥ १६ स्रुते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते। पुरुषस्तमजं नित्यं ब्रजामि शरणं हरिम् ॥ १७ श्रीपराद्या उदाच इत्यं सञ्चित्तयन्त्रिष्णुं भक्तिनप्रात्ममानसः । अकृरो गोकुलं प्राप्तः किञ्चित्सूर्ये विराजति ॥ १८ स ददर्श तदा कृष्णमादावादोहने गवाम्। वत्समध्यगते फुल्लनीलोत्पलदलक्कविम् ॥ १९ प्रफुल्ल्यपराक्षं श्रीवत्साङ्कितवक्षसम्। प्रलम्बन्नातुमायामतुङ्गोरःस्वलमुत्रसम् ॥ २० सविलासस्मिताधारं बिश्राणं मुखपङ्कजम्। तुङ्गरक्तन्तर्वं पद्भ्यां धरण्यां सुप्रतिष्ठितम् ॥ २१ बिभाणं वाससी पीते वन्यपुष्पविभूषितम् । सेन्दुनीलाचलाभं तं सिताम्भोजावतंसकम् ॥ २२ हंसकुन्देन्दुधवलं नीलाम्बरधरं तस्यानु बलभद्रं च ददर्श यदुनन्दनम्॥ २३ प्रांशुमुत्तङ्गबाह्नसं विकासिमुखपङ्कजम् । मेघमालापरिवृतं कैलासाद्रिमिवापरम् ॥ २४ तौ दुष्ट्रा विकसद्दक्वसरोजः स महामतिः । पुलकाञ्चितसर्वाङ्गस्तदाक्करोऽभवन्मुने ॥ २५ तदेतत्परमं धाम तदेतत्परमं पदम्। भगवद्वासुदेवांशो द्विधा योऽयं व्यवस्थितः ॥ २६ साफल्यमक्ष्णोर्युगमेतदत्र

जगद्धातरि यातमुद्धैः ।

'जिनको इस पिता, पुत्र, सुहुद्, धाता, पाता और बन्धुरूपिणी मायाको पार करनेमें संसार सर्वथा असमर्थ है उन मायापतिको बारम्बार नमस्कार है॥ १३॥ जिनमें हदयको लगा देनेसे पुरुष इस योगमायारूप विस्तृत अविद्याको पार कर जाता है, उन विद्याखरूप श्रोहरिकी नमस्कार है ॥ १४ ॥ जिन्हें याजिकलोग 'यज्ञपुरुष', सालत (यादव अथवा भगनद्रकः) गण 'वासुदेव' और वेदात्तवेता 'विष्णु' कहते हैं उन्हें वारम्बार नमस्कार है।। १५।। जिस (सत्य) से यह सदसद्रूप जगत् उस जगदाधार विधातामें ही स्थित है इस सलक्क्से ही वे प्रभु मुझपर प्रसन्न हों ॥ १६ ॥ जिनके स्मरणमानसे पुरुष सर्वथा कल्याणपात्र हो जाता है, मैं सर्वदा उन अजन्मा हरिको शरणमें प्राप्त होता हूँ' ॥ १७ ॥ श्रीपरादारजी बोले—हे मैत्रेय ! मकिविनमचित

अक्रूरजी इस प्रकार श्रीविष्णुभगवानुका चित्तन करते कुछ-कुछ सूर्व रहते ही गोकुलमें पहुँच गये ॥ १८ ॥ वहाँ पहुँचनेपर पहले उन्होंने खिले हुए गीलकमलका-सी कान्तिवाले श्रीकृष्णचन्द्रको गौओंके दोहनस्थानमें बङ्डोंके बीच विश्वनमान देखा ॥ १९ ॥ जिनके नेत्र खिले हुए कमरूके समान थे, वश्वःस्वरूमें श्रीवत्स-चिद्वः सुरोभित था, भुजाएँ रुम्बी-रुम्बी थीं, वशःस्थल विशास और ऊँचा था तथा नासिका उन्नत थी ॥ २० ॥ जो सविलास हासयुक्त मनोहर मुखारविन्द्रसे सुद्रोभित थे तथा उन्नत और रक्तनखबूक चरणोसे पृथिवीपर दिराजमान थे ॥ २१ ॥ जो दो पीताम्बर धारण किये थे, वन्यपुर्णीसे विभूषित ये तथा जिनका श्वेत कमलके आभूषणींसे युक्त स्थाम शरीर सचन्द्र नीटमचलके समान सुशोभित था ॥ २२ ॥ 🐪 🕒

हे द्विज । श्रोवजचन्द्रके पीछे उन्होंने हस, कुन्द और चन्द्रमाके समान गौरवर्ण नीलान्बरधारी यदुनन्द्रन श्रीयरूभद्रजीको देखा ॥ २३ ॥ विद्याल भुजदण्ड, उन्नत स्कन्ध और विकसित-मुखारिकद श्रीवसमद्भनी मेघमालासे थिरे हुए दूसरे कैलारापर्वतके समान जान पड़ते थे ॥ २४ ॥

हे मुने ! उन दोनों बालकोंको देलकर महामति अक्रूरजीका मुखकमल प्रफुल्लित हो गया तथा उनके सर्वोक्र्में पुरुकावली छा गयी।। २५॥ [और दे मन-ही-मन कहने लगे--] इन दो रूपोंमें जो यह भगनान् वासुदेवका अंश स्थित है वही परमधाम है और बही परमपद है ॥ २६ ॥ इन जगद्विधाताके दर्शन पाकर आज मेरे नेत्रयुगल तो सफल हो गये; फिल् क्या अब

अप्यङ्गमेतद्भगवत्प्रसादाh - 71 त्तदङ्गसङ्घे फलवन्त्रम स्वात् ॥ २७ अप्येष पृष्ठे मम[े] हस्तपदा करिष्यति श्रीमदनन्तमूर्तिः । यस्याङ्गिलस्पर्शहताखिलाधै-रवाप्यते सिद्धिरपास्तदोषा ॥ २८ येनामिविद्युद्रविरिष्ममाला-करालमत्युग्रमपेतचक्रम् चक्रं व्रता दैत्यपतेर्हतानि दैत्याङ्गनानां नयनाञ्चनानि ॥ २९ यत्राम्तु विन्यस्य बलिपंनोज्ञा-नवाप भोगान्वसुधातलस्यः । त्रिदशाधिपत्वं पूर्णमपेतशत्रम् ॥ ३० पन्दन्तरं अप्येष मां कंसपरिश्रहेण दोवास्पदीभूतमदोषदृष्टम् । कर्तावमानोपहतं धिगस्त् तजन्म यत्साध्वहिष्कृतस्य ॥ ३१ ज्ञानात्पकस्थामरुसत्त्वराशे-रपेतदोषस्य सदा स्फुटस्य। किं वा जगत्वत्र समस्तपुंसा-मज्ञातमस्यास्ति हृदि स्थितस्य ॥ ३२

तस्मादहं भक्तिविनम्रचेता त्रजामि सर्वेश्वरमीश्वराणाम् । अंशावतारं पुरुषोत्तमस्य

भगवलुत्पासे इनका अंगसंग पाकर मेरा शरीर भी कृतकृत्य हो सकेगा ?॥ २७॥ जिनकी अंगुलीके स्पर्भमात्रसे सम्पूर्ण पापोसे मुक्त हुए पुरुष निर्दोषसिद्धि (कैबल्यमोक्ष) प्राप्त कर छेते हैं क्या वे अनन्तपृति श्रीमान् हरि मेरी पीठपर अपना करकमल रखेंगे ? ॥ २८ ॥

किन्होंने अग्रि, विद्युत् और सूर्यकी बिरणमालाके समान अपने उद्य चक्रका प्रहारकर दैखपतिकी सेनाको नष्ट करते हुए असुर-सुन्दरियोंकी आँखोंके अजन थी डाले थे॥ २९॥ जिनको एक जलविन्द्र प्रदान करनेसे राजा बलिने पृथिवीतरूमें अति मनोज्ञ भीग और एक मन्बन्तरतक देवत्व-स्त्रभपूर्वक शत्रुविहीन इन्द्रपद प्राप्त किया था ॥ ३० ॥

वे हो विष्णुभगवान् मुझ निर्दोषको मी कंसके संसर्गसे दोवी ठहराकर क्या मेरी अवज्ञा कर देंगे ? मेरे ऐसे साधुजन-बहिन्कृत पुरुषके जन्मको धिकार है ॥ ३१ ॥ अथवा संसारमें ऐसी कौन वस्तु है जो उन ज्ञानस्यरूप, शुद्धसत्त्वसशि, दोषहीन, नित्य-प्रकाश और समस्त भूतोके हदयस्थित प्रभुको विदित न हो ? ॥ ३२ ॥

अतः मैं उन ईश्वरोंके ईश्वर, आदि, मध्य और अन्तरहित पुरुषोत्तम धगवान् विष्णुके अंशावतार श्रीकृष्णचन्द्रके पास भक्ति-विनन्नवित्तसे जाता हूँ। [मुझे पूर्ण आज्ञा है, वे मेरी कभी अवज्ञा न ह्यनादिमध्यान्तमजस्य विष्णोः ॥ ३३ | करेंगे] ॥ ३३ ॥

. . . 17g all . . .

इति श्रीविष्णुपुराणे पद्धमेंऽद्रो सप्तददोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अठारहवाँ अध्याय

भगवान्का मथुराको प्रस्थान, गोपियोंकी विरह-कथा और अक्रूरजीका मोह

श्रीपराञ्चर उत्राच सिन्द्रप्राचनाच्य

चिन्तयन्निति गोविन्दमुपगम्य स यादवः । अक्रूरोऽस्मीति चरणौ ननाम शिरसा हरे: ॥ सोऽप्येनं ध्वजवन्नाब्जकृतचिह्नेन पाणिना । संस्पृक्ष्याकृष्य च प्रीत्या सुगाढं परिषरवजे ॥ ₹ कृतसंवन्दनौ तेन यथावद्गलकेशवौ । ततः प्रविष्टौ संहर्ष्टौ तमादायात्ममन्दिरम् ॥ सह ताभ्यो तदाकुरः कृतसंबन्दनादिकः। भुक्तभोज्यो यथान्यायमाचचक्षे ततस्तयोः ॥ X यथा निर्भीर्सितस्तेन कंसेनानकदुन्दुभिः। यथा च देवकी देवी दानवेन दुरात्मना ॥ उप्रसेने यथा कंसस्स दुरात्मा च वर्तते । यं चैवार्थं समुद्दिश्य कंसेन तु विसर्जितः ॥ E, तस्सर्वं विस्तराच्छत्वा भगवान्देवकीसृतः । उद्याचारिकलमप्येतन्ज्ञातं दानपते मया ॥ करिच्चे तन्पहाभाग यदत्रौपयिकं मतम्। विचिन्त्यं नान्यर्थतत्ते विद्धि कंसं हतं मया ॥ अहं रामश्च मथुरां श्वी यास्यावसाह त्वया । गोपवृद्धाश्च यास्यन्ति ह्यादायोपायनं बहु ॥ निशेयं नीयतां बीर न चिन्तां कर्त्तमहींस । त्रिरात्राध्यन्तरे कंसं निहनिष्यामि सानुगम् ॥ १०

श्रीपरादार उदाच

समादिश्य ततो गोपानकूरोऽपि च केशवः । सृष्ठाप वलभद्रश्च नन्दगोपगृहे ततः ॥ ११ ततः प्रभाते विमले कृष्णरामौ महाद्युती । अक्रूरेण समं गन्तुमुद्यतौ मथुरां पुरीम् ॥ १२ दृष्टा गोपीजनस्सालः श्लथद्वलयबाहुकः । निःशश्चासातिदुःखानः प्राह चेदं परस्परम् ॥ १३ मथुरां प्राप्य गोविन्दः कथं गोकुलमेष्यति । नगरस्त्रीकलालापमधु श्रोत्रेण पास्यति ॥ १४ श्रीपराद्यारजी बोले—हे मैंग्रेय! यदुवंशी अक्रूरजीने इस प्रकार चित्तन करते श्रीगोविन्दके पास पहुँचकर उनके चरणोमें सिर झुकाते हुए 'मैं अक्रूर हूँ' ऐसा करकर प्रणाम किया ॥ १ ॥ भगवान्ने भी अपने ध्वजा-वज-पद्याद्भित करकमलोंसे उन्हें स्पर्शंकर और प्रीतिपूर्वक अपने और प्रीविद्यं गाइ आलिक्नून किया ॥ २ ॥ तदनकर अक्रूरजीके यथायोग्य प्रणामादि कर चुकनेपर श्रीबलरापजी और कृष्णचन्द्र आते आनन्दित हो उन्हें साथ लेकर अपने घर आये ॥ ३ ॥ फिर उनके द्वारा सत्कृत होकर यथायोग्य भोजनादि कर चुकनेपर अक्रूरने उनसे वह सम्पूर्ण वृत्तान्त कहना आरम्भ किया जैसे कि दुसला सानव कसने आनकदन्द्रिण वसुदेव और देवी देवलीको छोटा था तथा जिस प्रकार वह दुसला अपने पिता उपसेनसे दुर्लगहार कर रहा है और जिस लिये उसने उन्हें (अक्रूरजीको) वृन्दावन भेजा है ॥ ४——६ ॥

भगवान् देवकीनन्दर्गने यह सम्पूर्ण वृतान्त विस्तार-पूर्वक सुनकर कहा—"हे दानपते! ये सब बातें मुझे मालूम हो गयों॥ ७॥ हे महाभाग! इस विषयमें मुझे जो उपयुक्त जान पड़ेगा बही करूँगा। अब तुम कंसको मेरेद्वारा मरा हुआ हो समझो, इसमें किसी और तरहका विचार न करो॥ ८॥ भैया बल्एम और में दोनों हो कल तुम्हारे साथ मधुरा चलेंगे, हमारे साथ हो दूसरे बड़े-बूढ़े गोप भी बहुत-सा तपहार केकर जायेंगे॥ ९॥ हे चीर! आप यह स्वि सुन्तपूर्वक विताइये, किसी प्रकारकी चिन्ता न कीजिये। तीन राजिक भीतर में कंसको उनके अनुचरोसहित अयस्य मार डालूँगा"॥ १०॥

श्रीपराशरजी बोले—तदनत्तर अकूरजी, श्रीकृष्णचन्द्र और बलरामजी सम्पूर्ण गोपोंको कंसकी आज्ञा सुना नन्दगोपके घर सो गये ॥ ११ ॥ दूसरे दिन निर्मल प्रभातकाल होते ही महातेजस्वी राम और कृष्णको अकूरके साथ मथुरा चलकेकी तैयारी करते देख जिनकी भूगाओंके कंकण डॉले हो गये हैं वे गोपियाँ नेजेंगे आँसू भरकर तथा दुःखार्त होकर दीर्घ निरुधास छोड़ती हुई परस्पर कहने लगीं— ॥ १२-१३ ॥ "अब मधुरापुरी जाकर श्रीकृष्णचन्द्र फिर गोजुलमें क्यों आने लगे ? क्योंकि वहाँ तो ये अपने कानोसे नगरनारियोंके मधुर आलापरूप मधुका ही पान करेंगे॥ १४ ॥

विलासवाक्यपानेषु नागरीणां कृतास्पदम् । चित्तमस्य कथं भूयो प्राप्यगोपीषु यास्यति ॥ १५ सारं समस्तगोष्टस्य विधिना हरता हरिस्। प्रहतं गोपयोषित्सु निर्धृणेन दुरात्मना ॥ १६ भावगर्भस्मितं वाक्यं विलासललिता गतिः । नागरीणामतीवैतत्कटाक्षेक्षितमेव च ॥ १७ याम्यो इरिरयं तासां विलासनिगडैर्युतः । भवतीनां पुनः पार्श्वं कया युक्त्या समेष्यति ॥ १८ एवँष रथमारुहा मधुरां याति केशवः। क्रूरेणाक्र्रकेणात्र निर्घृणेन प्रतास्तिः॥ १९ कि न वेत्ति नृशंसोऽयमनुरागपरं जनम्। वेनैवमक्ष्णोराह्वादं नयत्यन्यत्र नो हरिम् ॥ २० एष रामेण सहितः प्रवात्यत्यन्तनिर्धृणः। रथमारुह्य गोविन्दस्त्वर्यतामस्य वारणे ॥ २१ गुरूणामप्रतो वक्तं कि व्रवीषि न नः क्षमम् । गुरवः किं करिष्यन्ति दग्धानां विरहायिना ॥ २२ नन्दगोपमुखा गोपा गन्तुमेते समुद्यताः। नोद्यमं कुस्ते कश्चिद्वोवन्दविनिवर्तने ॥ २३ सुप्रभाताद्य रजनी मथुरावासियोषिताम्। पास्यन्त्यच्युतवक्त्राब्जं यासां नेत्रालिपङ्क्यः ॥ २४ धन्यास्ते पश्चि ये कृष्णमितो यान्यनिवारिताः । उद्वहिष्यन्ति पश्यन्तस्वदेहं पुलकाञ्चितम् ॥ २५ मधुरानगरीचौरनयनानां महोत्सवः । गोविन्दावयवैर्दृष्टैरतीवाद्य भविष्यति ॥ २६ को नु स्वप्नस्तभाग्याभिदृष्टस्ताभिरधोक्षजम् । विस्तारिकान्तिनयना या द्रक्ष्यन्यनिवारिताः ॥ २७ अहो गोपीजनस्यास्य दर्शयित्वा महानिधिम् । उकुत्तान्यद्य नेत्राणि विधिनाकरूणात्मना ॥ २८ अनुरागेण शैथिल्यमस्मास् व्रजिते हरौ । दौधिल्यमुपयान्याञ् करेषु वलवान्यपि ॥ २९

नगरकी [विदग्प] विनिताओंके विलासयुक्त वचनोंके रसपानमें आसक्त होकर फिर इनका चित्त गैंवारी गोपियोंकी ओर क्यों जाने लगा ? ॥ १५ ॥ आज निर्दर्या द्यत्मा विधाताने समस्त वजके सारभृत (सर्वस्वस्वरूप)। श्रीहरिको हरकर हम गोपनारियोंपर घोर आधात किया है ॥ १६ ॥ नगरकी नास्यिमि भावपूर्ण मुसकानमयी बोली, विलासलेखित गति और कटाक्षपूर्ण चितवनकी स्वभावसे ही अधिकता होती है। उनके विलास-यन्थनीसे वैश्वकर यह प्राप्य हरि फिर किस युक्तिसे तुम्हारे [हमारे] पास आवेगा ? ॥ १७-१८ ॥ देखो, देखो, इस एवं निर्दयी अक्रस्के बहकानेमें आकर ये कृष्णचन्द्र रधपर चढे हुए मध्यरा जा रहे हैं ॥ १९ ॥ यह नशंस अक्रर क्या अनुसागीजनोंके हदयका भाव तनिक भी नहीं जानता ? जो यह इस प्रकार हमारे नयनानन्दवर्धन नन्दनन्दनको अन्यत्र लिये जाता है ॥ २०॥ देखो, यह अत्यन्त निद्धर गोविन्द रामके साथ रथपर चढ़कर जा रहे हैं: अरी ! इन्हें रोकनेमें शीघता करों''॥ २१ ॥ [इसपर गुरुजनोंके सामने ऐसा करनेमें असमर्थवा

प्रकट करनेवाली किसी गोपीको लक्ष्य करके उसने फिर कहा—] "अरी | तु क्या कह रही है कि अपने मुरुजनोंके सामने हम ऐसा नहीं कर सकतीं ?'' भरूर अब चिरहामिसे भस्मीभृत हुई हमलोगोंका गुरुजन क्या करेंगे ? ॥ २२ ॥ देखो, यह नन्दगोप आदि गोषगण भी उन्होंके साथ जानेकी तैयारी कर रहे हैं। इनमेंसे भी कोई गोकिन्दको छौटानेका प्रयत्न नहीं करता ॥ २३ ॥ आजकी रात्रि मथुरावासिनी स्वियोक्षे लिये सुन्दर प्रभातवाली हुई है, क्योंकि आज उनके नगन-भूग श्रीअच्युतके मुखार्गवन्दका मकरुद पान करेंगे॥ २४॥ जो लोग इचरसे बिना रोक-टोक श्रोकरणचन्द्रका अनुगमन कर रहे हैं वे धन्य हैं. क्योंकि वे उनका दर्शन करते हुए अपने ऐमाञ्चयुक्त दारीसका बहुन करेंगे॥ २५॥ 'आल श्रीभोविन्दके अंग-प्रत्यंनीको देखकर मधुरावासियोके नेप्रोको अत्यन्त महोत्सव होगा॥ २६॥ आज न जाने उन भाग्य-शालिनियोंने ऐसा काँन शुभ खब्न देखा है जो वे कान्तिपय विशाल नयनीवाली (मध्रपुरीकी स्त्रियाँ) स्वच्छन्दता-पूर्वक श्रीअधोक्षजको निहरिंगी ? ॥ २०॥ निष्टर विधाताने गीपियोंको महानिधि दिखलाकर आज उनके नेत्र निकाल लिये ॥ २८॥ देखो ! हमारे प्रति श्रीहरिके अनुसगमें शिविकता आ जानेसे हमारे हाथोंके कंकण भी तुरंत ही डीले पड़ गये हैं॥ २९॥

अक्नरः क्रूरहृदयदशीधं प्रेस्यते ह्यान्। एवमार्तासु योषित्सु कृपा कस्य न जायते॥ ३० एष कृष्णरश्रस्योचैश्चकरेणुर्निरीक्ष्यताम्। दूरीभूतो हरिबेंन सोऽपि रेणुर्न लक्ष्यते॥ ३९ श्रीपरागर उवाच

श्रायकार उवाच इत्येवमितहाईन गोपीजनिरीक्षितः । तत्याज ब्रजभूभागं सह रामेण केशवः ॥ ३२ गच्छन्तो जवनाश्चेन रथेन यमुनातदम् । प्राप्ता मध्याद्वसमये रामाक्रूरजनार्दनाः ॥ ३३ अथाह कृष्णमक्रूरो भवद्श्यो तावदास्वताम् । यावत्करोमि कालिन्द्या आद्विकार्हणमम्भसि ॥ ३४ श्रीपराशर उवाच

श्रीपश्चार उवाच
तथेत्युक्तस्ततस्त्रातस्त्वाचान्तस्य महामितः ।
दथ्यौ ब्रह्म परं वित्र प्रविष्टो यपुनाजले ॥ ३५
फणासहस्त्रमालाढ्यं बलभद्दं ददर्श सः ।
कुन्दमालाङ्गमुन्निद्रपद्मपत्रायतेक्षणम् ॥ ३६
वृतं वासुिकरम्भाद्यमिहिद्धः पवनाशिभिः ।
संस्तूयमानमुद्गन्धिवनमालाविभूवितम् ॥ ३७
दक्षानमितते यस्त्रे चारुक्षपावतंसकम् ।
चारुकुण्डलिने भान्तमन्तर्जलतले स्थितम् ॥ ३८
तस्योत्सङ्गे घनश्याममाताम्रायतलोचनम् ।
चतुर्वाहुमुदाराङ्गे चक्राद्यायुष्टभूषणम् ॥ ३९

शक्तचापतिङ्गालाविचित्रमिव तोयदम् ॥ ४० श्रीवत्सवक्षसं चारु स्कृरन्यकरकुण्डलम् । ददर्श कृष्णमिक्षष्टं पुण्डरीकावतंसकम् ॥ ४१

पीते वसानं वसने चित्रमाल्योपशोभितम् ।

सनन्दनाधैर्मुनिभिस्सिद्धयोगैरकल्पपैः । सञ्चिन्त्यमानं तत्रस्थैर्नासाप्रन्यस्तलोचनैः ॥ ४२ भला हम-जैसी दुःखिनी अवलाओंषर किसे दया न आवेगी ? गरन्तु देखी, यह कूर-इदय अक्रूर तो बढ़ी शोधतासे घोड़ोंकी हाँक रहा है ! ॥ ३० ॥ देखी, यह कृष्णवन्द्रके रशकी धूलि दिखलायी देशही है; किन्तु हा !

अब तो श्रीहरि इतनी दूर चले गये कि वह घूलि भी नहीं दोसती' ॥ ३१ ॥ श्रीपराद्यरजी बोले—इस प्रकार गोपियोके अति अनुरागसहित देखते-देखते श्रीकृष्णचन्द्रने बलरामजीके

सहित ब्रजभूभिको त्याग दिया ॥ ३२ ॥ तब वे राग, कृष्ण और अकूर शीक्रगामी घोड़ीबाले रथसे चलते-चलते मध्याह्रके समय वसुनातटपर आ गये ॥ ३३ ॥ वहाँ पहुँचनेपर अनुन्ते श्रीकृष्णचन्द्रसे कहा—"जबतक मैं

यमुनाजलमें मध्याहकालीन उपासनासे निक्त होऊँ तबतक आप दोनों यहीं विकरों''॥ ३४ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे वित्र ! तब भगवान्के 'बहुड अच्छा' कहनेयर महामांत अकूरजी यमुनाजलमें युसकर सान और आज्ञमन आदिके अनन्तर परब्रहाका ध्यान करने लगे ॥ ३५ ॥ उस समय उन्होंने देखा कि बलभइजें सहस्वप्रणाविक्षमें सुशोधित हैं, उनका शरीर कुन्द्रमालाओंके समान [श्रुप्रवर्ण] है तथा नेत्र प्रफुल्ल कमलदलके रामान विशाल हैं ॥ ३६ ॥ वे वासुकि और रम्भ आदि महासपेंसि घरकर उनसे प्रशंसित हो रहे है तथा अल्पन्त सुगम्तित वनमालाओंसे विभूषित है ॥ ३७ ॥ वे दो इयस्म बस्न भारण किये, सुन्दर कर्णभूषण पहने तथा मनोहर कुम्हली (गैंडुसी) भारे जलके भीतर विस्वज्ञमान हैं ॥ ३८ ॥ . .

उनकी गोदमे उन्होंने आनन्द्रमय कमलभूषण श्रीकृष्णचन्द्रको देखा, जो मेक्के समान श्यामवर्ण, कुछ लाल-लाल विशास नयनीवाले, चतुर्भुज, मनोहर अंगोपांगीवाले तथा शास-चक्रादि आयुर्धीसे सुशोगित हैं; जो पोताम्बर पहने हुए हैं और विचिन्न बनमालासे विभूषित हैं, तथा [उनके कारण] इन्द्रधनुष और विद्युत्पाल-मण्डित सजल भेषके समान जान पड़ते हैं तथा जिनके वक्षःस्थलमें श्रीवस्तिबह और कानोंमें देदीप्यमान मक्यकृत कुण्डल विरावमान है ॥ ३९ — ४१ ॥ [अबूरजीने यह भी देखा कि सनकादि मुनिजन और निष्पाप सिद्ध तथा योगिजन उस जलमें ही स्थित होकर नासिकाथ-इष्टिसे उन (श्रीकृष्णचन्द्र) का ही चिन्तन कर रहे है ॥ ४२ ॥

बलकृष्णौ तथाकुरः प्रत्यभिज्ञाय विस्मितः । अविन्तयद्रश्राच्छीघ्रं कथमत्रागताविति ॥ ४३ विवक्षोः स्तम्भयामास वार्च तस्य जनार्दनः । ततो निष्क्रम्य सलिलाइधमभ्यागतः पुनः ॥ ४४ ददर्श तत्र चैवोभौ रक्षस्योपरि निष्टितौ। रामकृष्णौ यथापूर्वं मनुष्यवपुषान्वितौ ॥ ४५ निमग्रश्च पुनस्तोये ददर्श च तथैव तौ। संस्तूयमानौ गन्धवैंमुर्निसिद्धमहोरगैः ॥ ४६ ततो विज्ञातसद्भावस्य तु दानपतिस्तदा। सर्वविज्ञानमयमच्युतमीश्वरम् ॥ ४७ तुष्ट्राव अंजूर उवाच सन्मात्ररूपिणेऽचिन्त्यमहिम्रे परमात्मने । व्यापिने नैकरूपैकस्वरूपाय नमो नमः ॥ ४८ सर्वरूपाय तेऽचिन्य हविर्भृताय ते नमः। नमो विज्ञानपाराय पराय प्रकृतेः प्रभो ॥ ४९ भूतात्मा चेन्द्रियात्मा च प्रधानात्मा तथा भवान् ।

आत्मा च परमात्मा च त्वमेक: पञ्चधा स्थित: ॥ ५० प्रसीद सर्व सर्वात्मन् क्षराक्षरमयेश्वर । ब्रह्मविष्णुदिवाख्याभिः कल्पनाभिरुदीरितः ॥ ५१ अनाख्येयस्वरूपात्मञ्जनाख्येयप्रयोजन अनाख्येयाभिधानं त्वां नतोऽस्मि परमेश्वर ॥ ५२ न यत्र नाथ विद्यन्ते नामजात्यादिकल्पनाः । तद्भरा परमं नित्यमविकारि भवानजः॥ ५३ न कल्पनामृतेऽर्धस्य सर्वस्याधिगमो यतः । ततः कृष्णाच्युतानन्तविष्णुसंज्ञाधिरीङ्गते ॥ ५४ सर्वार्थास्त्वमज विकल्पनाभिरेतै-र्देवाद्यैर्भवति हि चेरनन्त विश्वम् । स्वमिति विकारहीनमेत-त्सर्वस्मित्र हि भवतोऽस्ति किञ्चिद्य्यत् ॥ ५५ त्वं ब्रह्मा पशुपतिरर्यमा विधाता

धाता त्वं त्रिदशपतिसामीरणोऽग्निः।

धनपतिरन्तकस्त्वमेको

भिन्नार्थैर्जगद्भिपासि शक्तिभेदै: ॥ ५६

तोयेशो

इस प्रकार वहाँ राम और कृष्णको पहचानकर अकुरजी बड़े ही विश्मित हुए और सोचने लगे कि ये बहाँ इतनी शीधतासे स्थये कैसे आ गये ? ॥ ४३ ॥ जब उन्होंने कुछ कहना चाहा तो भगवानुने उनकी बाणी रोक दी। तब वे जलसे निकलकर रक्षके पास आये और देखा कि वहाँ भी राम और कृष्ण दोनों ही मनुष्य-शरीरसे पूर्ववत् रक्षपर बैठे हुए है ॥ ४४-४५ ॥ तदनन्तर, उन्होंने जरूमें मुसकर उन्हें फिर गन्धर्व, सिद्ध, मुनि और नागादिकोंसे स्तृति किये जाते देखा ॥ ४६ ॥ तब तो दानपति अक्टरजी वास्तविक रहस्य जानकर उन सर्वविज्ञानमय अच्युत भगवानुकी स्तुति करने लगे ॥ ४८७ ॥ अक्तरजी बोले—जो सन्मात्रस्वरूप, अचिन्य-महिम, सर्वेट्यापक तथा [कार्यरूपसे] अनेक और [कारणरूपसे] एक रूप है उन परवासाको नगस्कार है. नमस्कार है ॥ ४८ ॥ है अचिन्तनीय प्रभी | आप सर्वरूप एवं हविःस्वरूप परमेश्वरको नमस्कार है। आप बुद्धिरो अतीत और प्रकृतिसे परे हैं, आपको बारम्बार नमस्कार है ॥ ४९ ॥ आप भृतस्त्ररूप, इन्द्रियस्वरूप प्रधानस्वरूप हैं तथा आप हो जीवातम और परमातम हैं इस प्रकार आप अकेले ही पाँच प्रकारसे स्थित है ॥ ५० ॥ हे सर्व ! हे सर्वात्मन् ! हे क्षराक्षरमय ईश्वर ! आप प्रसन्न होइये। एक आप ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि कल्पनाओंसे वर्णन किये जाते हैं॥ ५१ ॥ हे परमेश्वर ! आपके स्वरूप, प्रयोजन और नाम आदि सभी अनिर्वचनीय है । मैं आपको नमस्कार करता है ॥ ५२ ॥ हे नाथ ! जहाँ नाम और जाति आदि कल्पनाओंका सर्वेथा अभाव है आप बही नित्य अविकारी और अजन्मा परब्रह्म हैं॥ ५३ ॥ क्योंकि करूपमुके किना किसी भी पदार्थका ज्ञान नहीं होता इसीलिये आएका कृष्ण, अच्युत, अनन्त और विष्णु आदि नामोंसे सावन किया जाता है [जास्तवमें तो आपका किसी भी नामसे निर्देश नहीं किया जा सकता 🕽 ॥ ५४ ॥ हे अब ! जिन देवता आदि कल्पनामय पदार्थीसे अनन्त विश्वकी उत्पत्ति

हुई है वे समस्त पदार्थ आप ही है तथा आप ही

विकारहीन आत्मवस्तु है, अतः आप विश्वरूप है। हे

प्रभो ! इन सम्पूर्ण पदार्थीमें आपसे भिन्न और कुछ भी

नहीं है ॥ ५५ ॥ आप ही ब्रह्मा, महादेव, अर्थमा,

विधाता, धाता, इन्द्र, धायु, अग्नि, वरुण, कुवेर और यम

हैं। इस प्रकार एक आप ही भिन्न-भिन्न बार्यवाले अपनी

विश्वं भवान्सजित सूर्वगभित्तरूपो विश्वेश ते गुणमयोऽयमतः प्रयञ्चः । रूपं परं सदिति वाचकमक्षरं य-न्ज्ञानात्मने सदसते प्रणतोऽस्मि तस्मै ॥ ५७

ॐ नमो वासुदेवाय नमसंकर्षणाय च । प्रह्मपुराय

नमसुभ्यमनिरुद्धाय ते नमः॥ ५८

शक्तियोंके भेदरी इस सम्पूर्ण जगतुकी रक्षा कर रहे हैं ॥ ५६ ॥ हे विश्वेश ! सुर्यकी किरणरूप होकर आप ही [वृष्टिद्वारा] विस्नकी रचना करते हैं, अतः यह गुणमय प्रपञ्ज आपका ही रूप है। 'सत्' पद ['ॐ तत्, सत्' इस रूपसे] जिसका वाचक है वह 'ॐ' अक्षर आपका परम स्वरूप है, आपके उस ज्ञानात्मा सदसत्स्वरूपको नमस्कार है ॥ ५७ ॥ हे प्रभी ! वास्त्रेव, संकर्षण, प्रदास और अनिस्द्धस्वरूप आयको बारम्बार नमस्कार है ॥ ५८ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽहोऽष्टादहोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवाँ अध्याय

भगवान्का मधुरा-प्रवेश, रजक-वध तथा मालीपर कृपा

श्रीपराश्चर उबाच

एवमन्तर्जले विष्णुमभिष्ट्य स यादवः। सर्वेदां धूपपुष्पैर्मनोमयैः ॥ अर्चयामास परित्यक्तान्यविषयो मनस्तत्र निवेश्य सः। ब्रह्मभूते चिरं स्थित्वा विरराम समाधित: ॥ कृतकृत्यमिवात्मानं मन्यमानो महामतिः । आजगाम रथं भूयो निर्गम्य यमुनाम्भसः ॥ ददर्श रामकृष्णो च यथापूर्वमवस्थितौ । विस्मिताक्षस्तदाकुरस्तं च कृष्णोऽभ्यभाषत ॥

श्रीकृष्ण उदाच

नृनं ते दृष्टमाश्चर्यमकुर यमुनाजले। विस्मयोत्फुल्लनयनो भवान्संलक्ष्यते यतः ॥

अकृत उवाच

अन्तर्जले यदाश्चर्यं दृष्टं तत्र पयाच्युत । तदत्रापि हि पश्यामि मूर्तिमत्पुरतः स्थितम् ॥ जगदेतन्पहाश्चर्यरूपं यस्य तेनाश्चर्यपरेणाई भवता कृष्ण सङ्गतः ॥ तत्किमेतेन मधुरां यास्वामो मधुसुदन । बिभेमि कंसाद्धिग्जन्म परिष्दशेपजीविनाम् ॥

इत्युक्त्वा चोदयामास स हवान् वातरंहस: ।

सम्प्राप्तश्चापि सावाह्रे सोऽक्करो मथुरां पुरीम् ॥

? 3

श्रीपराशरजी बोले—यहुक्लोत्सव अक्रूरजीने श्रीविष्णुभगवानुका जलके भीतर इस प्रकार स्तवनकर उन सर्वेश्वरका मनःकल्पित धूप, दीय और पुष्पादिसे पूजन किया ॥ १ ॥ उन्होंने अपने मनको अन्य विषयोसे हटाकर उन्होंमें रूगा दिया और चिरकालतक उन ब्रह्मगृतमें ही समाहित भावसे स्थित रहकर फिर समाधिसे विरत हो गये ॥ २ ॥ तदनन्तर महामति अक्रुरजी अपनेको कृतकृत्य-सा मानते हुए यमुनाजलसे निकलकर फिर स्थके पास चले आये॥ ३॥ वहाँ आकर उन्होंने आश्चर्ययुक्त नेत्रींसे राम और कृष्णको पूर्ववत् रथमें बैठे देखा । उस समय श्रीकृष्णचन्द्रने अक्रुरजीसे कहा ॥ ४ ॥

श्रीकृष्णजी बोले—अक्टूजी ! आपने अयदय ही यमुना-जलमें कोई आश्चर्यजनक बात देखी है, क्योंकि आपके नेत्र अत्रक्षर्यचिकत दीख पड़ते है ॥ ५ ॥

अक्रुरजी बोर्ले—हे अध्युत ! मैंने यमुनावरुमें जो आश्चर्य देखा है उसे मैं इस समय भी अपने सामने मूर्तिमान् देख रहा हूँ ॥ ६ ॥ हे कृष्ण ! यह महान् आश्चर्यमय जगत् जिस महात्माका स्वरूप है उन्हीं परम आश्चर्यसक्तप आपके साथ मेरा समागम हुआ है ॥ ७ ॥ हे मधुसुदन ! अब उस आक्षर्यके विषयमें और अधिक कहनेसे लाभ ही लगा है ? चलो. हमें श्रीघ्र ही पथुर पहुँचना है; मुझे कंससे बहुत भय लगता है। दूसरेके दिये हुए अजसे जीनेवाले पुरुषेके जीवनको भिकार है ! ॥ ८॥

ऐसा कहकर अक्रूरजीने वायुके समान वेगवाले घोड़ोंको हाँका और सायङ्कालके समय मध्यप्रेपोमें पहुँच

विलोक्य मथुरां कृष्णं रामं चाह स यादवः । पद्भ्यां यातं महावीरौ रक्षेनैको विशाप्यहम् ॥ १० गन्तव्यं वसुदेवस्य नो भवद्भ्यां तथा गृहम् । युवयोहिं कृते वृद्धस्त कंसेन निरस्यते ॥ ११ श्रीपराशर उवाव

इत्युक्त्वा प्रविवेद्याथ सोऽक्करो मथुरां पुरीम् । प्रविष्टी रामकृष्णी च राजमार्गमुपागर्ता ॥ १२ स्त्रीभिनरैश्च सानन्दं लोचनैरभिवीक्षितौ । जग्मतुर्लीलया वीरौ मत्तौ बालगजाविव ॥ १३ भ्रममाणी ततो दृष्टा रजकं रङ्गकारकम् । अयाचेतां सुरूपाणि वासांसि रुचिराणि तौ ॥ १४ कंसस्य रजकः सोऽथ प्रसादारुढविस्मयः । बहुन्याक्षेपवाक्यानि प्राहोसै रामकेशवी ॥ १५ ततस्तलप्रहारेण कृष्णस्तस्य दुरात्मनः। पातवामास रोवेण रजकस्य शिरो भृति ॥ १६ हत्वादाय च बस्ताणि पीतनीलाम्बरौ ततः । कृष्णरामी मुदा युक्ती मालाकारगृहं गती ॥ १७ विकासिनेत्रयुगलो मालाकारोऽतिविस्मितः । एती कस्य सुतौ यातौ मैत्रेयाचिन्तयत्तदा ॥ १८ पीतनीलाम्बरधरौ तौ दृष्टातिमनोहरौ। स तर्कयामास तदा भुवं देवावुपागतौ ॥ १९ विकासिमुखपद्माभ्यां ताभ्यां पुष्पाणि याचितः । भुवं विष्टुश्य हस्ताभ्यां पस्पर्श शिरसा महीम् ॥ २० प्रसादपरमौ नाथौ मम गेहपुपागती । थन्योऽहमर्चयिष्यामीत्याहतौ माल्यजीवनः ॥ २१ ततः प्रहृष्टवद्नस्तयोः पुष्पाणि कामतः। चारूण्येतान्यश्रैतानि प्रददौ स प्रलोभयन् ॥ २२ पुनः पुनः प्रणम्बोधौ मालाकारो नरोत्तमौ ।

ददौ पुष्पाणि चारूणि गन्धवन्यमलानि च ॥ २३

श्रीस्त्वां मत्संश्रया भद्रन कदाचिस्यजिप्यति ॥ २४

मालाकासय कृष्णोऽपि प्रसन्नः प्रददौ वरान् ।

गबे ॥ १ ॥ मथुरापुरीको देखकर अकूरने राम और कृष्णसे कहा—''हे बीरबरो ! अब मैं अकेला ही रथसे जाऊँगा, आप दोनों पैदल चले आवे ॥ १० ॥ मथुरामें पहुँचकर आप बसुदेवजीके घर न जार्च क्योंकि आपके कारण ही उन वृद्ध बसुदेवजीका कस सर्वदा निरादर करण रहता है'' ॥ ११ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले—ऐसा कह—अकूरजी मधुरापुरीपें चले गये। उनके पीठे राम और कृष्ण भी नगरमें प्रवेशकर राजमार्गपर आये॥ १२॥ वहाँक नर-नारियोंसे आनन्दपूर्वक देखे जाते हुए वे दोनों वीर मतयाले तरुण हाधियोंक समान लीलापूर्वक जा रहे थे॥ १३॥

नार्गमें उन्होंने एक वस्त रैंगनेवाले रजकरते घूमते देख उससे रङ्ग-विस्ट्रें सुन्दर वस्त माँगे ॥ १४ ॥ वह रजक कंसका था और राजके मुँहलगा होनेसे यहा समण्डी हो गया था, अतः राम और कृष्णके वस्त माँगनेपर उसने विस्मित होकर उनसे वह जोरींके साथ अनेक दुर्वावय करे ॥ १५ ॥ तब श्रीकृष्णवन्द्रने कुद्ध होकर अपने करतलके प्रहारसे उस दुष्ट रजकका सिर पृथिवापर गिरा दिया ॥ १६ ॥ इस प्रकार उसे गारकर राम और कृष्णने उसके वस्त छीन लिये तथा क्रमशः नील और पीत वस्त धारणकर वे प्रसम्भवित्तसे मालीके घर गये ॥ १७ ॥

हे मैत्रेय ! उन्हें देखते ही उस मास्त्रीके नेत्र आनन्दसे खिल गये और वह आश्चर्यचिकत होकर सोचने लगा कि 'चे किसके पुत्र हैं और कहाँसे आये हैं ?' II १८ II पीरेंट और नीले वस धारण किये उन अति मनोहर बारुकोंको देखकर उसने समझा मानो दो देवगण ही पृथिबीतस्यपः पथारे हैं ॥ १९ ॥ जब उन विकासतमुखकमल बालकॉने उससे पथा माँगे तो उसने अपने दोनों हाथ परिवापर टेककर सिरसे भूमिको स्पर्श किया॥ २०॥ फिर उस मालीने कहा —''हे नाथ ! आपछोग बड़े ही कुमालु हैं जो मेरे घर पधारे । मैं धन्य है , क्योंकि आज मैं आपका पूजन कर सकुँगा" ॥ २१ ॥ तदनन्तर उसने 'देखिये, ये बहुत सुन्दर हैं, ये बहुत सुन्दर हैं — इस प्रकार प्रसन्नमुखसे लुभा-लुभाकर उन्हें इच्छानुसार पुष्प दिये ॥ २२ ॥ असने उन दोनों पुरुषश्रेष्टोंको पुनः-पुन. प्रणामकर अति निर्मल और सुगन्धित मजोहर पुष्प दिये ॥ २३ ॥

तब कृष्णचन्द्रने भी प्रसन्न होकर उस मालीको यह वर दिया कि "हे भद्र । मेरे आख़ित रहनेवाली लक्ष्मी तुझे

बलहानिर्न ते सौम्य धनहानिरथापि वा । यावदिनानि तावश न नशिष्यति सन्ततिः ॥ २५ भुक्ता च विपुलान्भोगांस्वमन्ते मह्यसद्दतः । ममानस्परणं प्राप्य दिव्यं लोकमवाप्यसि ॥ २६ धर्मे मनश्च ते भद्र सर्वकालं भविष्यति । युष्पत्सन्ततिजातानां दीर्घमायुर्भविष्यति ॥ २७ नोपसर्गादिकं दोषं युष्पतान्ततिसम्भवः । अवाप्यति महाभाग यावत्सुयों भविष्यति ॥ २८ श्रीपरागर उदाच

इत्युक्त्वा तद्गुहात्कृष्णो बल्द्रेवसहायवान् । निर्जगाम मुनिश्रेष्ठ मालाकारेण पूजितः ॥ २९ कभी न छोड़ेगी ॥ २४ ॥ हे सौम्य ! तेरे बरू और धनका हास कमी न होगा और जबतक दिन (सूर्य) की सत्ता रहेगी तबतक तेरी सन्तानका उच्छेद न होगा ॥ २५ ॥ सू भी यावजीवन नाना प्रकारके भोग भोगता हुआ अन्तमें मेरी कृपासे मेरा स्मरण करनेके कारण दिव्य लोकको प्राप्त होगा ॥ २६ ॥ हे भद्र ! तेस मन सर्वटा धर्मपरायण रहेवा तथा तेरे वंशमें जन्म लेनेवालोकी आयु दीर्घ होगी ॥ २७ ॥ हे महाभाग ! जबतक सूर्य रहेगा तयदक तेरे वेशमें उतान हुआ कोई भी व्यक्ति उपसर्ग (आकर्रिसक रोग) आदि दोषोको प्राप्त न होगा" ॥ २८ ॥

श्रीपराशस्त्री बोले--हे मृनिश्रेष्ट ! ऐसा कहकर श्रीकृष्णचन्द्र बलभइजीके सहित मालाकारसे पुजित हो उसके घरसे चल दिये ॥ २९ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽद्ये एकोनविद्योऽध्यायः ॥ १९ ॥

बीसवाँ अध्याय

कुब्जापर कृपा, धनुर्भङ्ग, कुवलयापीड और चाणूरादि मल्लॉका नाहा तथा केस-वध

राजमार्गे ततः कृष्णस्सानुलेपनभाजनाम् । ददर्श कुब्जामायान्तीं नवयौवनगोचराम् ॥ तामाह लिलतं कृष्णः कस्येदमनुलेपनम् । भवत्या नीयते सत्यं वदेन्दीवरलोचने ॥ 5 सकामेनेव सा प्रोक्ता सानुरागा हरिं प्रति । प्राह सा ललितं कुन्जा तहर्शनबलाकृता ॥ कान्त कस्मान्न जानासि कंसेन विनियोजिताय । नैकवक्रेति विख्यातामनुरुपनकर्मणि ॥ नान्यपिष्टं हि केसस्य प्रीतये ह्यनुलेपनम् । भवाम्यहमतीवास्य प्रसाद्धनभाजनम् ॥ श्रीकृष्ण उवाच

रुचिरं

आवयोगित्रसदुर्श दीयतापनुरुपनम् ॥

रुचिरानने ।

सृग-धमेतद्राजाई

श्रीपराशरजी बोले-तदनत्तर श्रोकृष्णचन्द्रने राजमार्गमें एक नक्ष्यीवना कुञ्जा स्त्रीको अनुरुपनका पात्र लिये आती देखा॥१॥ तय श्रीकृष्णने उससे विलासपूर्वक कहा—"अपि कमललोचने ! सच-सच बता यह अनुलेपन किसके लिये हे जा रही है ?" ॥ २ ॥ धगवान् कृष्णके कामुकः पुरुषकी भौति इस प्रकार पूछनेपर अनुएशियी कुळाने उनके दर्शनसे इत्यत् आकृष्टचित हो अति लिलत गावसे इस प्रकार कहा-॥ ३ ॥ "हे कान्त ! क्या आप मुझे नहीं जानते ? मैं अनेकवका-नामसे विख्यात हैं, राजा कैसने मुझे अनुलेपन-कार्यमें नियुक्त किया है ॥ ४ ॥ राजा कंसको मेरे अतिरिक्त और किसीका पीसा हुआ उबटन पसन्द नहीं है, अतः मैं उनकी अत्यन्त कृपापात्री हूँ '॥ ५.॥

श्रीकृष्णजी बोले—हे सुमुखि। यह सुन्तर सुगन्धमय अनुलेपन तो राजाके ही योग्य है, हमारे शरीरके योग्य भी कोई अनुरुषन हो तो हो ॥ ६ ॥

श्रीपरादम् उवाच श्रुत्वैतदाह सा कुब्जा गृह्यतामिति सादरम् । अनुलेपनं च प्रदर्वं गात्रयोग्यमधोभयोः॥ भक्तिच्छेदानुलिप्ताङ्गी ततस्तौ पुरुषर्पभौ। सेन्द्रवापौ व्यराजेतां सितकृष्णाविवाम्बुदौ ॥ ततस्तां चिबुके शौरिकल्लापनविधानवित् । उत्पाट्य तोलयामास द्यङ्गलेनाप्रपाणिना ॥ चकर्ष पद्भ्यो च तदा ऋजुत्वं केशकोऽनयत् । ततस्सा ऋजुतां प्राप्ता योषितामभवद्वरा ॥ १० विलासलितं प्राह प्रेमगर्भभरालसम् । वस्त्रे प्रगृह्य गोविन्दं मम गेहं व्रजेति वै ॥ ११ एवमुक्तस्तया शोरी रामस्वालोक्य चाननम् । प्रहस्य कुब्बां तामाह नैकवक्रामनिन्दिताम् ॥ १२ आयास्ये भवतीगेहमिति तां प्रहसन्हरिः । विससर्ज जहासोचै रामस्यालोक्य चाननम् ॥ १३ भक्तिभेदानुलिप्ताङ्गौ नीलपीताम्बरौ तु तौ । धनुइशालां ततो यातौ चित्रमाल्योपशोभितौ ॥ १४ आयागं तद्धनुरत्नं ताभ्यां पृष्टेस्तु रक्षिभिः । आख्याते सहसा कृष्णो गृहीत्वापूरवद्धनुः ॥ १५ ततः पूरवता तेन भज्यमानं बलाद्धनः। चकार सुमहच्छव्दं मथुरा येन पूरिता॥ १६ अनुसूक्तौ ततस्तौ तु भन्ने धनुषि रक्षिभिः । रक्षिसैन्यं निहत्योभौ निष्कान्तौ कार्मुकालयात् ॥ १७ अक्रूरायमवृत्तान्तमुपलभ्य महद्भुः । भन्नं श्रुत्वा च कंसोऽपि प्राह चाणूरमृष्टिकौ ॥ १८

गोपालदारकौ प्राप्ती भवदभ्यां तु ममाप्रतः । मल्लयुद्धेन हन्तव्यी मम प्राणहरी हि तौ ॥ १९

नियुद्धे तद्विनाशेन भवद्भ्यां तोषितो ह्यहम् । दास्याम्यभिमतान्कामाञ्चान्यश्चेतौ महाबलौ ॥ २०

श्रीपराञ्चरजी बोले—यह सुनकर कुळ्याने कहा— 'लीजिये', और फिर उन दोनोंको आदरपूर्वक उनके इसिरबोग्य चन्दनादि दिथे॥७॥ उस समय वे दोनी पुरुषश्रेष्ठ [कपोल आदि अंगोमें] पत्ररचनाविधिसे यथावत् अनुस्थिम होकर इन्द्रधनुषयुक्त क्याम और श्वेत मेशके समान सुशोधित हुए ॥ ८ ॥ तत्पश्चात् उल्लापन (सीधे करनेकी) विधिके जाननेवाले भगवान कृष्ण-चन्द्रने उसकी डोडीमें अपनी आगेकी दो अंगुरूयाँ लगा उसे उचकाकर हिलाया तथा उसके पैर अपने पैरोरो दबा लिये। इस प्रकार श्रीकेशवने उसे ऋजुकाय (सीधे शरीरवाली) कर दी। तब सीधी हो जानेपर वह सम्पूर्ण स्त्रियोमें सुन्दरी हो गयी ॥ ५-१० ॥ 🧦

तब वह श्रीगोविन्दका पल्ला पकड़कर अन्तर्गर्भित प्रेम-भारसे अलसायी हुई विलासललित वाणीमें बोली—'आप मेरे घर चलिये'॥ ११॥ उसके ऐसा कहनेपर श्रीकृष्णचन्द्रने उस कुञ्जासे, जो पहले अनेकों अंगोसे टेढी थी, परंतु अब सुन्दरी हो गयी थी, बलगमजीके मुखकी ओर देखकर हैंसते हुए कहा---॥ १२ ॥ 'हाँ, तुम्हारे घर भी आऊँगा'—ऐसा कहकर श्रीहरिने उसे मुसन्ताने हुए विदा किया और बलभद्रजीके मुखकी ओर देखते हुए जोर-जोरसे हँसने छने ॥ १३ ॥

तदनन्तर पत्र-एचमादि विधिसे अनुरूप तथा चित्र-विचित्र मालाओंसे सुरोभित राम और कृष्ण क्रमशः नीस्त्राम्बर और पीताम्बर धारण किये हुए बज्जशास्त्रतक आये ॥ १४ ॥ वहाँ पहुँचकर उन्होंने यक्तरक्षकोंसे उस यज्ञके उदेश्यस्वरूप धनुषके विषयमें पूछा और उनके बतलानेपर श्रीकृष्णचन्द्रने उसे सहसा उठाकर प्रत्यक्षा (डोरी) चढ़ा दी॥१५॥ उसपर यलपूर्वक प्रत्यक्षा चढ़ाते समय वह धनुष टूट गया, उस समय उसने ऐसा घोर प्राच्द किया कि उससे सन्पूर्ण मधुराधुरी गुँज उठी ॥ १६ ॥ तब धनुष २८ जानेपर उसके रक्षकोने उनपर आक्रमण किया, उस रक्षक सेनाका संहारकर वे दोनों बालक धन्द्रशास्त्रसे बाहर आये ॥ १७ ॥

तदनन्तर अकुरके आनेका समाचार पाकर तथा उस महान् धनुषको भग्न हुआ सुनकर कसने चाणुर और पृष्टिकसे कहा ॥ १८ ॥

कंस बोला — यहाँ दोनों गोपालवालक आ गये हैं। वे मेरा प्राण-हरण करनेवाले हैं, अतः तुम दोनों मल्लयुद्धसे उन्हें मेरे सामने मार डालो। यदि तुमलोग मल्ल्युद्धमें उन दोगोंका विनाश करके मुझे सन्तष्ट कर

न्यायतोऽन्यायतो वापि भवद्भ्यां तौ ममाहितौ । हत्त्व्यौ तह्याद्राज्यं सामान्यं वां भविष्यति ॥ २१ इत्यादिश्य स तौ मल्लौ ततश्चाहृय हस्तिपम् । प्रोवाचोश्वेस्त्वया मल्लसमाजद्वारि कुझरः ॥ २२ स्थाप्यः कुछलयापीडस्तेन ती गोपदारकौ । घातनीयौ नियुद्धाय रङ्गद्वारमुपागतौ ॥ २३ तमप्याज्ञाप्य दुष्ट्वा च सर्वाचञ्चानुपाकृतान् । आसत्रमरणः कंसः सूर्योदयमुदेक्षत ॥ २४ ततः समस्तमञ्जेषु नागरसा तदा जनः। राजमञ्जेषु चारूढास्सह भृत्यैर्नराधिपाः ॥ २५ मरुरुप्राश्चिकवर्गश्च सङ्गप्रध्यसमीपगः । कृतः केसेन कंसोऽपि तुङ्गमञ्जे व्यवस्थितः ॥ २६ अन्तःपुराणां मञ्चाश्च तथान्ये परिकल्पिताः । अन्ये च वारमुख्यानामन्ये नागरबोषिताम् ॥ २७ नन्दगोपादयो गोपा मञ्जेषुन्येषुवस्थिताः। अक्रुरवसुदेवौ च मञ्जप्रान्ते व्यवस्थितौ ॥ २८ नागरीयोषितां मध्ये देवकीपुत्रगर्द्धिनी । अन्तकालेऽपि पुत्रस्य द्रक्ष्यामीति मुखं स्थिता ॥ २९ वाद्यमानेषु तूर्येषु चाणुरे चापि वल्गति । हाहाकारपरे लोके ह्यास्फोटयति पुष्टिके ॥ ३० ईषद्धसन्तौ तौ वीरौ बलभद्रजनार्द्नौ। गोपवेषधरी बाली रङ्गद्वारमुपागती ॥ ३१ ततः कुवलयापीडो महामात्रप्रचोदितः। अध्यक्षावत वेगेन हन्तुं गोपकुमारकौ ॥ ३२ हाहाकारो महाञ्चजे रङ्गमध्ये द्विजोत्तम । बलदेवोऽनुजं दुष्ट्वा वचनं चेदमब्रवीत् ॥ ३३ हत्तच्यो हि पहाभाग नागोऽयं शत्रुचोदित: ॥ ३४ इत्युक्तस्सोऽप्रजेनाथ बलदेवेन वै द्विज। सिंहनादं ततशके माधवः परवीरहा ॥ ३५ करेण करमाकृष्य तस्य केशिनिष्दनः।

भ्रामयामासं तं शीरिरैरावतसमं बले ॥ ३६

दोगे तो मैं तुम्त्रये समस्त इच्छाएँ पूर्ण कर दूँगा; मेरे इस कथनको तुम मिथ्या न समझना। तुम न्यायसे अथवा अन्यायसे मेरे इस महाबलवान् अपकारियोंको अवस्य मार खाले। उनके गारे जानेपर यह सारा राज्य | हमारा और | तुम दोनोंका सामान्य होगा॥ १९—२१॥

मल्लीको इस प्रकार आजा दे कंसने अपने महावंतको बुलाया और उसे आजा दो कि तू कुललयापोड हाथीको मल्लीकी रंगभूमिके द्वारपर खड़ा रख और जब वे गोपकुमार युद्धके लिये यहाँ आवे तो उन्हें इससे नष्ट करा दे॥ २२-२३॥ इस प्रकार उसे आज्ञा देकर और समस्त सिहासनीको यथावत् रखे देखकर, जिसकी मृत्यू पास आ गयी है वह केस सूर्योदयको प्रतीक्षा करने लगा॥ २४॥

प्रातःकाल होनेपर समस्त मञ्जीपर नागरिक लोग और राजपञ्जोपर अपने अनुचरोंके सहित राजालोग बैठे ।। २५ ।। तदनन्तर रंगभूमिके मध्य भागके समोप कंसने युद्धपरीक्षकोंको बैठाना और फिर स्वयं आप भी एक ऊँचे सिंगसनपर बैठा ।। २६ ।। वहाँ अन्तः पुरकी खियोंके लिये पृथक् मचान बनाये गये थे तथा मुख्य-मुख्य बारंगनाओं और नगरकी महिल्मओंक लिये भी अलग-अलग मञ्ज थे ।। २० ।। कुछ अन्य मठोंपर नन्दगोप आदि गोपगण बिठाये गये थे और उन मठोंक पास ही अनूर और वस्तेवनों बैठे थे।। २८ ॥ नगरको नारियोंके बीचमें 'चलो, अन्तकालभे ही पुत्रका मुख तो देख लूँगों ऐसा बिजारकर पुत्रके लिये मङ्गलकामना करती हुई देवकीजी बैठी थी।। २९ ॥

तदनसर जिस समय तूर्य आदिके यजने तथा चाणूरके अलान्त उछरूने और मृष्टिकके ताल ठोंकनेगर दर्शकरणण हाहाकार कर रहे थे, गोपवेषधारी वीर वालक बलभद्र और कृष्ण कुछ हैसते हुए रंगभृमिके द्वारपर आये।। ३०-३१।। वहाँ आते ही महावतकी प्रेरणासे कुळल्यापीड नामक हाथी उन दोनों गोपकुमारोंको मारनेके लिये बड़े बेगसे दौड़ा॥ ३२॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! उस समय रंगभूमिमें महान् हाहाकार मच गया तथा बलदेवजीने अपने अनुज कृष्णकी और देसकर कहा—"हे महाभाग ! इस हाथीको शतुने ही प्रेरित किया है; अतः इसे मार डालना वाहिये" ॥ ३३-३४॥

हे द्विज ! ज्येष्ठ प्राता बल्समजीके ऐसा कहनेपर इह्युसुदन श्रीङ्यायसुन्दरने बड़े जोतसे सिंहनांद किया ॥ ३५ ॥ फिर केशिनिगृटन भगवान् श्रीकृण्यने

ईशोऽपि सर्वजगतां बाललीलानुसारतः। क्रीडित्वा सुचिरं कृष्णः करिद्त्तपदान्तरे ॥ ३७ उत्पाट्य वामदन्तं तु दक्षिणेनैय पाणिना । ताडयामास यन्तारं तस्यासीच्छतथा शिरः ॥ ३८ दक्षिणं दत्तमुत्पाट्य बलभट्टोऽपि तत्क्षणात् । सरोषस्तेन पार्श्वस्थान् गजपालानपोधयत् ॥ ३९ ततस्तुत्पुत्य वेगेन रौहिणेयो महाबलः। जघान वामपादेन मस्तके हस्तिनं रुवा ॥ ४० स पपात इतस्तेन बलभद्रेण लीलया। सहस्वाक्षेण वज्रेण ताडित: पर्वतो यथा ॥ ४१ हत्वा कुवलयापीडं हस्त्यारोहप्रचोदितम्। मदासुगनुलिप्ताङ्गौ हस्तिदन्तवरायुधौ ॥ ४२ मृगमध्ये यथा सिंहौ गर्वलीलावलोकिनौ । सुमहारङ्गं बलभद्रजनार्दनौ ॥ ४३ प्रविष्टी हाहाकारो महाञ्जले महारङ्गे त्वनन्तरम्। कुळ्गोऽयं बलभद्रोऽयमिति लोकस्य विस्मयः ॥ ४४ सोऽयं येन हता घोरा पूतना बालघातिनी । क्षिप्तं तु शकटं येन भग्नी तु यमलार्जुनी ॥ ४५ सोऽयं यः कालियं नागं ममर्दास्त्व बालकः । थुतो गोवर्द्धनो येन सप्तरात्रं महागिरिः ॥ ४६ अरिष्ट्रो धेनुकः केशी लीलयैव महात्मना । निहता येन दुर्वृता दुश्यतामेष सौऽच्युत: ॥ ४७ अयं चास्य महाबाह्यंलभद्रोऽप्रतोऽप्रजः । प्रवाति लीलया योषिन्मनोनयननन्दनः ॥ ४८ अयं स कश्यते प्राज्ञैः पुराणार्थविद्यारदैः । गोपालो यादवं वंशं मग्रमभ्युद्धरिष्यति ॥ ४९ अयं हि सर्वलोकस्य विष्णोरखिलजन्मनः । अवतीर्णो महीर्मशो नूनं भारहरो भुवः ॥ ५० इत्येवं वर्णिते पौरे रामे कृष्णे च तत्क्षणात् । उरस्तताप देवक्याः स्त्रेहस्तुतपयोधरम् ॥ ५१ महोत्सविपवासाद्य पुत्राननविलोकनात्। युवेव वसुदेवोऽभूदिहायाभ्यागतां जराम् ॥ ५२

बलमें ऐरावतके समान उस महावली हाथीकी सूँड अपने हाथसे पकड़कर उसे भुगाया॥ इह ॥ भगवान् कृष्ण पद्मिप सम्पूर्ण जमत्के स्वामी है तथापि उन्होंने बहुत देखक उस हाथीके दाँत और चरणीके बीचमें खेलते-सेलते अपने दाएँ हाधसे उसका बाबाँ दाँत उसाड़कर उससे महावतपर प्रहार किया। इससे उसके सिरके सैकड़ों टुकड़े हो गये ॥ ३७-३८॥ उसी समय बलभद्रजीने भी क्रोधपूर्वक उसका दायाँ दाँत उसाड़कर उससे आस-पास खड़े हुए भहावतोंको मार डाल्प ॥ ३९॥ तदनत्तर महाबली रोहिणीनन्दमने रोपपूर्वक अति वेगसे उछलकर उस हाथीके मस्तकपर अपनी बार्यी लगत गारी॥ ४०॥ इस प्रकार वह हाथी, बलभद्रजीद्वारा लीलापूर्वक मारा जावर इन्द्र-कन्नसे आहत पर्वतके समान गिर पड़ा॥ ४१॥

तब महाबतसे प्रेरित कुबलयापीडको मास्कर उसके पद और रक्तसे लख-पथ राम और कृष्ण उसके दाँतोंको लिये हुए गर्वयुक्त लोलामयी चितवनसे निहारते उस महान् रंगभूमिमें इस प्रकार आये जैसे मृग-समृहके बीचमें सिंह चला जाता है ॥ ४२-४३ ॥ उस समय महान् रंगभूमिमें बड़ा कोलाइल होने लगा और सब लोगोंमें 'ये कृष्ण हैं, ये बलभद्र हैं' ऐसा विस्मय लागया ॥ ४४ ॥

िवं कहने लगे—] "जिसने बालघातिनी घोर राक्षसी पुतनाको मारा था, शकटको उल्ल्ट दिया था और यमलार्जनको उसाड डाला था वह यही है। जिस बालकने कालियनागके उत्पर चढ़कर उसका मान-मर्दन किया था और सात रात्रितक महापर्यंत गोवर्धनको अपने हाथपर बारण किया था वह यही है ॥ ४५-४६ ॥ जिस महात्माने अरिष्टासुर, घेनुकासुर और केशी आदि दुष्टोंको लीलासे ही मार हाला था: देखो, यह अच्युत यही हैं । ४७ ॥ ये इनके आगे इनके बडे भाई महाबाहबल-भद्रजी हैं जो बड़े खीलापूर्वक चल रहे हैं । ये सियोंके मन और नयनोंको बद्धा ही आनन्द देनेवाले हैं ? ॥ ४८ ॥ प्राणार्थवेता विद्वान लोग कहते हैं कि ये पोपालजी इसे हुए यद्वेञ्च्या उद्धार करेंगे ॥ ४९ ॥ ये सर्वलोकमय और सर्वकारण भगवान् विध्युके ही अंश हैं, इन्होंने पृथियोका भार उतारनेके लिये ही भूमिपर अवतार लिया है" ॥ ५० ॥ राम और कुणके विषयमें प्रवासियोंके इस प्रकार

राम और कृष्णके विषयमें पुरवासियोंके इस प्रकार कहते समय देवकोंके स्तानेंसे स्नेहके कारण दूध बहने लगा और उसके हृदयमें बड़ा अनुताप हुआ ॥ ५१ ॥ भुत्रोंका मुख देखनेसे आयना उल्लास-सा प्राप्त होनेके विस्तारिताक्षियुगलो राजान्तःपुरयोषिताम् । नागरस्त्रीसमूहश्च द्रष्टुं न विरराम तम्॥ ५३ सस्यः परयतं कृष्णस्य मुख्यस्यरुणेक्षणम् । गजयुद्धकृतायासस्वेदाम्बुकणिकाचितम् ॥ ५४ विकासिशस्दम्भोजमवश्यायजलोक्षितम् । परिभूय स्थितं जन्म सफले क्रियतां दृशः ॥ ५५ श्रीवत्साङ्कं महद्भाम बालस्यैतद्विलोक्यताम् । विपक्षक्षपणं वक्षो भुजयुग्मं च भामिनि ॥ ५६ कि न पश्यसि दुम्धेन्दुमृणालध्वलाकृतिम् । बलभद्रमिमं नीलपरिधानमुपागतम् ॥ ५७ वल्गता मुष्टिकेनैव चाणूरेण तथा सस्ति । क्रीडतो बलभद्रस्य हरेर्हास्यं विलोक्यताम् ॥ ५८ सस्यः परयत चाणूरं नियुद्धार्थमयं हरिः । समुपैति न सत्त्यत्र कि वृद्धा मुक्तकारिणः ॥ ५९ क्र योवनोन्धुखीभूतसुकुमारतनुर्हरिः । क वज्रकठिनाभोगशरीरोऽयं महासुरः ॥ ६० इमी सुललितेरङ्गेर्वतिते नवयोवनी। दैतेयमल्लाश्चाणूरप्रमुखास्त्वतिदासणाः ॥ ६१ नियुद्धप्राक्षिकानां तु महानेष व्यतिक्रमः। यद्वालक्तिनोर्युद्धं मध्यस्थैस्समुपेक्ष्यते ॥ ६२ श्रीपराञर उवाच इत्यं पुरस्त्रीलोकस्य वदतशालय-भुवम्। वयस्य बद्धकक्ष्योऽन्तर्जनस्य भगवान्हरिः ॥ ६३ बलभद्रोऽपि चास्फोट्य ववल्ग ललितं तथा । पदे पदे तथा भूमियंत्र शीर्णा तदझ्तम् ॥ ६४ चाणूरेण ततः कृष्णो युयुधेऽमितविक्रमः । नियुद्धकुरालो दैत्यो बलभद्रेण मुष्टिकः ॥ ६५

सन्निपातावधूतैस्तु चाणूरेण समं हरिः।

प्रक्षेपणैर्मृष्टिभिश्च कीलबज्रनिपातनैः ॥ ६६

कारण वसुदेवजी भी मानो आयी हुई जराको छोड़कर फिरसे नवयुवक-से हो गये॥ ५२॥

राजाके अन्तःपुरकी स्त्रियाँ तथा कगर निवासिनी

महिलाएँ भी उन्हें एकटक देखते-देखते उपराम न हुई ।। ५३ ॥ [वे परस्पर कहने लगीं—] "अरी सिखयो ! अरुणनयनसे युक्त श्रीकृष्णचन्द्रका अति सुन्दर मुख तो देखों, जो कुवलयापोडके साथ युद्ध करनेके परिश्रमसे खेद जिन्दुपूर्ण होकर हिम-कण-सिश्चित शरकालीन प्रयुक्त कमलको लिखत कर रहा है। अरी ! इसका दर्शन करके अपने नेत्रीका होना सफल कर लो" ॥ ५४-५५॥

[एक स्त्री बोली —] "है भाषिनि ! इस बालकका यह लक्ष्मी आदिका आश्रयभूत श्रीयत्सोकयुक्त वक्षःस्थल तथा शत्रुओंको पराजित करनेवाली इसकी दोनी भुजाएँ तो देखो !" ॥ ५६ ॥

[दूसरी॰—]''अरी ! क्या तुम्न नीलाम्बर धारण किये इन दुग्ध, चन्द्र अथवा कमलनालके समान शुभवर्ण बलदेवजीको आते हुए नहीं देखती हो ?''॥ ५७॥

[तीसरी॰—]''अरी सिखयो ! [अखाड़ेमें] चकर देकर घूमनेवाले चाणूर और मुष्टिकके साथ क्रीडा करते हुए वलभद्र तथा कृष्णका हैंसना देख स्त्री ।'' ॥ ५८ ॥ [चौद्यी॰—]''हाथ ! सिखयो ! देखो तो चाणुरसे

लड़नेके लिये ये हरि आगे बढ़ रहे हैं; क्या इन्हें खुड़ानेवालें कोई भी बड़े-बूढ़े यहाँ नहीं हैं ?''॥ ५९॥ 'कहाँ तो यौकनमें प्रवेश करनेवाले मुकुमार-इसिर इयाम और कहाँ वक्षके समान कठोर इसिरवाला यह महान् असुर!' ॥ ६०॥ ये दोनों नवयुषक तो बड़े ही सुकुमार इसिरवाले हैं, [किंतु इनके प्रतिपक्षी] ये चाणूर आदि दैत्य मल्ल अत्यन्त दारुण हैं॥ ६९॥ मल्लयुद्धके परीक्षक गणींका यह बहुत बड़ा अन्याय है जो वे मध्यस्य होकर भी इन बालक और बलवान् मल्लोंके युद्धको उपेक्षा कर रहे हैं॥ ६२॥

श्रीपराशस्त्री बोले — नगरकी सियोंक इस प्रकार वार्तालाप करते समय भगवान् कृष्णचन्द्र अपनी कपर कसकर उन समल दर्शकोंक बीचमें पृथिवीको कम्पायमान करते हुए रङ्गपूमिमें कृद पड़े ॥ ६३ ॥ श्रीबलभद्रजा भी अपने भुजदण्डोको ठोकते हुए अति मनोहर भावसे उछलने लगे । उस समय उनके पद-पद्धर पृथिवी नहीं फटी, वड़ी बड़ा आक्षर्य है ॥ ६४ ॥

तदननर अभित-विक्रम कृष्णचन्द्र चाणूरके साथ और इन्द्रयुद्धकुशल राक्षस मृष्टिक वलभद्रके साथ युद्ध करने लगे ॥ ६५ ॥ कृष्णचन्द्र चाणूरके साथ परस्पर मिङ्कर,

पादोद्धृतैः प्रमृष्टैश्च तयोर्युद्धमभून्यहत् ॥ ६७ अशस्त्रपतिघोरं तत्त्वोर्युद्धं सुदारुणम् । बलप्राणविनिष्पाद्यं समाजोत्सवसन्नियौ ॥ ६८ यावद्यावरा चाणुरो युवुधे हरिणा सह। प्राणहानिमवापाभ्यां तावत्तावल्लवाल्लवम् ॥ ६९ कृष्णोऽपि युग्रुधे तेन लीलयैव जगन्मयः । खेदाद्यालयता कोपान्निजशेखरकेसरम् ॥ ७० बलक्षयं विवृद्धिं च दृष्टा चाणुरकृष्णयोः । वारवामास तूर्याणि कंसः कोपपरायणः ॥ ७१ मृदङ्गादिषु तूर्वेषु प्रतिषिद्धेषु तत्क्षणात्। खे सङ्गतान्यवाद्यन्त देवतूर्याण्यनेकशः ॥ ७२ जय गोविन्द चाणूरं जहि केशव दानवम् । अन्तर्द्धानगता देवास्तपुच्रतिहर्षिताः ॥ ७३ चाणूरेण चिरं कालं क्रीडित्वा मधुसुदनः । उत्थाप्य भामयामास तहुधाय कृतोद्यमः ॥ ७४ भ्रामियत्वा शतगुणं दैत्यमल्लमित्रजित् । भूमावास्फोटवामास गगने गजजीवितम् ॥ ७५ भूमावास्फोटितस्तेन चाणुरः शतधाभवत् । रक्तस्त्रावमहापङ्कां चकार च तदा भुवम् ॥ ७६ बलदेवोऽपि तत्कालं मुष्टिकेन महाबलः । युपुधे दैत्यमल्लेन चाणूरेण यथा हरि: ॥ ७७ सोऽप्येनं मुष्टिना मूर्झि वक्षस्याहत्य जानुना । पातयित्वा धरापृष्ठे निष्यिपेष गतायुषम् ॥ ७८ कृष्णस्तोशलकं भूयो मल्लराजं महाबलम् । वामपुष्टिप्रहारेण पातवामास भूतले ।। ७९ चाणूरे निहते मल्ले मुष्टिके विनिपातिते । नीते क्षयं तोशलके सर्वे मल्लाः प्रदुद्रवुः ॥ ८० ववलगतुस्ततो रङ्गे कृष्णसङ्ख्यावुभी। समानवयसो गोपान्बलादाकुष्य हर्षितौ ॥ ८१

नीचे गिराकर, उछालकर, धूँसे और वसके समान कोहनी भारकर, पैरोसे ठोकर भारकर तथा एक-दूसरेके अंगोंको रगढ़कर लड़ने लगे। उस समय उनमें महान् युद्ध होने लगा॥ ६६-६७॥

इस प्रकार उस समाजोत्सवके समीप केवल बल और प्राणशक्तिसे ही सम्पन्न होनेवाला उनका अति भयंकर और दारुण शस्त्रहीन युद्ध हुआ ॥ ६८ ॥ चाणुर जैसे-जैसे भगवान्से भिड़ता गया वैसे-ही-वैसे उसकी प्राणशक्ति षोड़ी-थोड़ी करके अत्यन्त श्रीण होती गयी॥ ६९॥ जगन्मय भगनान् कृष्ण भी, श्रम और कोपके कारण अपने पुष्पमय शिरोभूषणोमें लगे हुए केशरको हिलानेवाले उस चाणस्से लीलापर्वक लड्डने लगे॥ ७०॥ उस समय चाणुरके बलका क्षय और कृष्णचन्द्रके बलका उदय देख कंसने खोझकर तुर्य आदि वाजे बन्द करा दिये ॥ ७१ ॥ रंगभूमिमें मुदंग और तुर्व आदिके बन्द हो जानेपर आकाशमें अनेक दिव्य तुर्य एक साथ बजने लगे। ॥ ७२ ॥ और देवगण अत्यन्त हर्षित होकर अस्त्रक्षत-भावसे कहने लगे—''हे गोविन्द ! आपकी बय हो । हे फेड़ाव ! आप जीध ही इस चाणुर दानवको मार डालिये।" ॥ ७३ ॥

भगवान् मधुसूदन बहुत देरतक चाणूरके साथ खेल फरते रहे, फिर उसका वध करनेके लिये उद्यत होकर उसे उठाकर घुमाया ॥ ७४ ॥ शत्रुविजयी श्रीकृष्णचन्द्रने उस दैत्य मल्लको सैकड़ों बार पुमाकर आकाशमें हो निजींच हो जानेपर पृथिवीपर पटक दिया ॥ ७५ ॥ मगवान्के द्वारा पृथिवीपर गिराये जाते ही चाणूरके शरीरके सैकड़ों टुकड़े हो गये और उस समय उसने रक्तसावसे पृथिवीको अत्यन्त कीचड़मयं कर दिया ॥ ७६ ॥ इथर, जिस प्रकार भगवान् कृष्ण चाणूरसे लड़ रहे थे उसी प्रकार महाबली बलभद्रजी भी उस समय दैख मल्ल मुश्लिकसे भिड़े हुए थे ॥ ७७ ॥ बलरामजीने उसके मस्तकपर चूँसोसे तथा वक्षःस्थलमें जानुसे प्रकार किया और उस गतायु दैस्को पृथिवीपर पटककर रौद डाला ॥ ७८ ॥

तदान्तर श्रीकृष्णचन्द्रने महायसी मल्लराज तोशस्त्रको वार्षे हाथसे धूँमा मारकर पृथिवीपर गिरा दिया ॥ ७९ ॥ मल्लश्रेष्ठ चाणूर और मुष्टिकके मारे जानेपर तथा मल्लराज तोशस्त्रके नष्ट होनेपर समस्त मल्लगण भाग गये ॥ ८० ॥ तब कृष्ण और संकर्षण अपने समययस्क गोपोंको बल्ल्यूर्वक खींचकर [आलिंगन करते हुए] हर्षसे रंगभूमिमें उल्लने स्यो ॥ ८१ ॥

कंसोऽपि कोपरक्ताक्षः प्राहोसैर्व्यायतात्ररान् । गोपावेतौ समाजीघान्निष्काम्येतां बलादितः ॥ ८२ नन्दोऽपि गृह्यतां पापो निर्गलैशयसँरिह । अवृद्धार्हेण दण्डेन वसुदेवोऽपि वध्यताम् ॥ ८३ वल्गन्ति गोपाः कृष्णेन ये चेमे सहिताः पुरः । गावो निगृह्यतामेषां यश्चास्ति वसु किञ्चन ॥ ८४ एवमाज्ञापयन्तं तु प्रहस्य मधुसुदनः। उत्प्रत्यारुह्म ते मर्झ कंसे जग्राह वेगतः ॥ ८५ केशेष्टाकृष्य विगलिकरीटमबनीतले । स कंसं पातयामास तस्योपरि पपात च ॥ ८६ अक्षेषजगदाधारगुरुणा पततोपरि । कृष्णेन त्याजितः प्राणानुग्रसेनात्मजो नृपः ॥ ८७ मृतस्य केशेषु तदा गृहीत्वा मधुसुद्रनः। चकर्ष देहं कंसस्य रङ्गमध्ये महाबल: ॥ ८८ गौरवेणातिपहता परिधा तेन कुष्यता। कृता कंसस्य देहेन वेगेनेव महाम्यसः ॥ ८९ कंसे गृहीते कृष्णेन तद्भाताऽभ्यागतो रुषा । सुमाली बलभद्रेण लीलयैव निपातितः ॥ १० ततो हाहाकृतं सर्वमासीत्तद्रङ्गमण्डलम्। अवज्ञया हतं दृष्टा कृष्णेन प्रथुरेश्वरम् ॥ ९१ कृष्णोऽपि वसुदेवस्य पादौ जप्राह सत्वरः । देवक्याश्च महाबाहुर्बलदेवसहायवान् ॥ ९२ उत्थाप्य वसुदेवस्तं देवकी च जनार्दनम्। स्मृतजन्मोक्तवचनौ तावेव प्रणतौ स्थितौ ॥ ९३ श्रीवसुदेव उनाच प्रसीद सीदतां दत्तो देवानां यो वरः प्रभो । तथावयोः प्रसादेन कृतोद्धारसा केशव ॥ ९४ आराधितो यद्भगवानवतीर्णो गृहे मम । दुर्वृत्तनिधनार्थाय तेन नः पावितं कुलम् ॥ १५ लमन्तः सर्वभूतानां सर्वभूतमयः स्थितः । प्रवर्तेते समस्तात्मंस्वत्तो भूतभविष्यती ॥ ९६

तदमन्तर कंसने क्रोधसे नेत्र लाल करके वहाँ एकतित हुए पुरुवींसे कहा—"और! इस समाजसे इन ग्वारुबालोको बलपूर्वक निकाल दो॥८२॥ पापी गन्दको लोहेको शुङ्कलामें बाँधकर प्रकड़ त्ये तथा वृद्ध पुरुषोंके अयोग्य दण्ड देकर वसुदेवको भी मार डाल्मे॥ ८३ ॥ भेरे सामने कृष्णके साथ ये जितने गोपबालक उठल रहे हैं इन सबको भी मार डालो तथा इनकी गौएँ और जो कुछ अन्य धन हो वह सब छीन लो'' ॥ ८४ ॥ जिस समय कंस इस प्रकार आजा दे रहा था उसी समय श्रीमधुसुदन हैंसते-हैंसते उछलकर मज़पर चढ़ गये और शीघ्रतासे उसे पकड़ किया॥८५॥ भगवान् कृष्णने उसके केशोंको खींचकर उसे पृथिवीपर पटक दिया तथा उसके ऊपर आप भी कृद पड़े, इस समय उसका मुक्ट सिरसे खिसककार अलग जा पड़ा ॥ ८६ ॥ सम्पूर्ण जगत्के आधार भगवान् कृष्णके ऊपर गिरते ही उप्रसेनात्मज राजा कंसने अपने प्राण छोड़ दिये ॥ ८७ ॥ तब महाबली कृष्णचन्द्रने मृतक कंसके केश पकड़कर उसके देहको रंगभूमिमें घसीटा ॥ ८८ ॥ कंसका देह बहुत भारी था, इसलिये उसे यसोटनेसे जलके महान् वेगसे हुई दरास्के समान पृथिवीपेर परिचा बन गयी ॥ ८९ ॥ श्रोकणचन्द्रद्वारा कंसके पकड़ लिये जानेपर उसके

श्रीकृष्णचन्द्रद्वारं कसके पकड़ लिये जानेपर उसके भाई सुमालीने स्रोधपूर्वक आक्रमण किया। उसे बलरामजीने लीलासे ही मार डाला॥ ९०॥ इस प्रकार मथुरापति कंसको कृष्णचन्द्रद्वारा अवज्ञापूर्वक मरा हुआ देखकर रंगभूमिमें उपस्थित सम्पूर्ण जनता हाहाकार करने लगी॥ ९१॥ उसी समय महाबाहु कृष्णचन्द्र बलदेवजी-सिंहत बसुदेव और देक्कीके चरण पकड़ लिये॥ ९२॥ तब बसुदेव और देक्कीके चरण पकड़ लिये॥ ९२॥ तब बसुदेव और देक्कीके चरण पकड़ लिये। ९२॥ भगवद्वाक्योंका स्मरण हो आवा और उन्होंने श्रीजनार्दनको पृथिबीपरसे उठा लिया तथा उनके सामने प्रणतभावसे खड़े हो गये॥ ९३॥

श्रीयसुदेवजी बोले—हे प्रभो ! अब आप हमपर प्रसन होइये । हे केशव ! आपने आर्त देवगणोंको जो वर दिया था वह हम दोनोंपर अनुप्रह करके पूर्ण कर दिया ॥ ९४ ॥ भगवन् ! आपने जो मेरी आराधनासे दुष्टजनोंके नाशके लिये मेरे घरमें जन्म लिया, उससे हमारे कुलको पवित्र कर दिया है ॥ ९५ ॥ आप सर्वभूतस्य है और समसा भूतोंके भीतर स्थित हैं । हे समस्तत्मन् ! भूत और भविष्यत् आपहोसे प्रवृत्त होते हैं ॥ ९६ ॥

यज्ञैस्त्वमिज्यसेऽचिन्त्य सर्वदेवमयाच्युत । त्वमेव बज़ो यष्ट्रा च यज्वनां परमेश्वर ॥ 69 समुद्भवसामस्तस्य जगतस्त्वं जनार्दन् ॥ 28 सापह्रवं मम मनो यदेतत्त्वयि जायते। देवक्याश्रात्मजप्रीत्याः तदत्यन्तविडम्बना ॥ त्वं कर्ता सर्वभूतानामनादिनिधनो भवान् । त्वां मनुष्यस्य कस्यैया जिह्वा पुत्रेति वक्ष्यति ॥ १०० जगदेतज्ञगन्नाथ सम्भृतमस्त्रिलं यतः। कया युक्त्या विना मायां सोऽस्मत्तः सम्भविष्यति ॥ १०१ यस्मिन्प्रतिष्ठितं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् । स कोष्ठोत्सङ्गरायनो मानुषो जायते कथम् ॥ १०२ स त्वं प्रसीद परमेश्वर पाहि विश्व-मंशावतारकरणैर्न ममासि पुत्रः। आन्नह्मपादपमिदं जगदेतदीज त्वत्तो विमोहयसि कि पुरुषोत्तमास्मान् ॥ १०३ मायाविमोहितदुशा तनयो ममेति कंसाद्धयं कृतमपास्तभयातितीव्रम् । नीतोऽसि गोकुलमरातिभयाकुलेन वृद्धिं यतोऽसि मम नास्ति ममत्वमीश ॥ १०४ कर्माणि रुद्रमरुदश्चिशतकत्नां साध्यानि यस्य न भवन्ति निरीक्षितानि । त्वं विष्णुरीश जगतामुपकारहेतोः

हे अचिन्य ! हे सर्वदेवपय ! हे अच्युत ! समस्त यहोंसे आपहीका यजन किया जाता है तथा है परमेश्वर ! अप ही यह करनेवालोंके यहा और यहालरूप हैं ॥ ९७ ॥ हे जनार्दन ! आप तो सम्पूर्ण जगत्के उत्पत्ति-स्थान हैं, आपके प्रति पुत्रवात्सल्यके कारण जो मेश और देवकोका चित्त भ्रात्तियुक्त हो रहा है यह बड़ी ही हैसीको बात है ॥ ९८-९९ ॥ आप आदि और अन्तसे रहित हैं तथा समस्त प्राणियोंके उत्पत्तिकर्ता हैं, ऐसा करैन मनुष्य है जिसकी जिहा आपको 'पुत्र' कहकर सम्बोधन करेगी ? ॥ १०० ॥

हे जगदाथ ! जिन आपसे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है वही आप बिना भाषाशक्तिके और किस प्रकार हमसे उत्पन्न हो सकते हैं ॥ १०१ ॥ जिसमें सम्पूर्ण स्थावर-जंगम जगत् स्थित है वह प्रभु कुक्षि (कोख) और गोंदमें शबन करनेवाला पनुष्य कैसे हो सकता है ? ॥ १०२ ॥

इति श्रीविच्युपुराणे पञ्चमेंऽशे विशोऽध्यायः ॥ २० ॥

इक्कीसवाँ अध्याय

उपसेनका राज्याभिषेक तथा भगवानुका विद्याध्ययन

श्रीपरादार उनाच

तौ समुत्पन्नविज्ञानौ भगवत्कर्मदर्शनात् । देवकीवसुदेवा तु दृष्ट्वा मायां पुनर्हरिः। पोहाय यदुवक्रस्य विततान स वैष्णवीम् ॥ उवाच चाम्ब हे तात विरादुत्कण्ठितेन मे । भवन्ती कंसभीतेन दृष्टी सङ्क्ष्यंणेन च ॥ कुर्वतां याति यः कालो मातापित्रोरपूजनम् । तत्स्वण्डमायुषो व्यर्थमसाधूनां हि जायते ॥ गुरुदेवहिजातीनां मातापित्रोश्च पूजनम्। कुर्वतां सफलः कालो देहिनां तात जायते ॥ तत्क्षन्तव्यमिदं सर्वमतिक्रमकृतं पितः। कंसवीर्यप्रतापाध्यामावयोः परवश्ययोः ॥ श्रीपराशाः उतान

इत्युक्त्वाथ प्रणम्योभौ यदुवृद्धाननुकमात् । यथावद्भिपूज्याथ चक्रतुः पौरमाननम् ॥ कंसपल्यस्ततः कंसं परिवार्य हतं भृवि । विलेपुर्मातरश्चास्य दुःखशोकपरिप्रतः ॥ बहुप्रकारमत्वर्थं पश्चातापातुरो हरिः । तास्समाश्वासयामास स्वयमस्त्राविलेक्षणः ॥ उद्रसेनं ततो बन्धान्मुमोच मधुसुद्रनः ।

अध्यसिञ्चलदैवैनं निजराज्ये हतात्मजम् ॥ राज्येऽभिषिक्तः कृष्णेन यद्सिंहस्सृतस्य सः । चकार प्रेतकार्याणि ये चान्ये तत्र घातिताः ॥ १०

कृतौर्द्धवदैहिकं चैनं सिंहासनगतं हरिः।

उवाचाज्ञापय विभो यत्कार्यमविशङ्कितः ॥ ११ ययातिशापाद्वशोऽयमराज्याहींऽपि

मिं भृत्ये स्थिते देवानाज्ञापयत् कि नृपैः ॥ १२ श्रीपराभर उवाच

इत्युक्ता सोऽस्मरहायुमाजगाम च तत्क्षणात्। उवाच चैने भगवान्केशवः कार्यमानुषः ॥ १३

श्रीपराशरजी बोले-अपने अति अद्भुत कर्मौको देखनेसे वस्रदेव और देवकीको विज्ञान उत्पन्न हुआ देखकर भगवानुने यदुवंशियोको मोहित करनेके लिये अपनी वैष्णवी मायाका विस्तार किया ॥ १ ॥ और बोले—''हे

मातः ! हे पिताजी ! बलरामजी और मैं बहुत दिनोंसे कंसके भयसे छिपे हुए आपके दर्शनोंके लिये उत्कप्टित थे, सो आज आपका दर्शन हुआ है॥ २॥ जो समय माता-पिताकी सेवा किये विना वीतता है वह असाध्

पुरुषोंको ही आयुका भाग व्यर्थ जाता है ॥ ३ ॥ हे तात ! गृष्ठ, देव, ब्राह्मण और माता-पिताका पूजन करते रहनेसे देहधारियोंका जीवन सफल हो जाता है ॥ ४ ॥ अतः है

तात ! कंसके बीयं और प्रतापसे भीत हम प्रस्वशोंसे जो बुक्क अपराध हुआ हो वह क्षमा करें"॥ ५॥

श्रीपराशस्त्री बोले—सम और कृष्णने इस प्रकार कह माता-पिताको प्रणाम किया और फिर क्रमशः समस्त यदबद्धोंका यथायोग्य अभिवादनकर प्रवासियोंका सम्पान किया ॥ ६ ॥ उस समय कंसकी पतियाँ और माताएँ पृथिवीपर पड़े हुए मृतक कंसको घेरकर दुःख-शोकसे पूर्ण हो विलाप करने लगों ॥ ७ ॥ तब कृष्णचन्द्रने भी अत्यन्त पक्षातापसे विहरू हो स्वयं आंखोंमें आँस् भरकर उन्हें अनेकों प्रकारसे उडिस वैधाया ॥ ८ ॥

हदनन्तर श्रीमधसदनने उपसेनको सन्धनसे मुक्त किया और पृत्रके भारे जानेपर उन्हें अपने राज्यपद्पर अभिविक्त किया ॥ ९ ॥ श्रीकृष्णचन्द्रद्वरा राज्याभिषिक्त होकर यदुश्रेष्ठ उग्रसेनने अपने पुत्र तथा और भी जो लोग वहाँ मारे गये थे उन सबके औरवेदैहिक कर्म किये ॥ १०॥ औरवेदैहिक कर्मोसे निवत होनेपर सिंहासनारूड उपसेनसे श्रीहरि बोरुं—"हे विभी ! हमारे योग्य जी सेवा ही उसके लिये हमें निइइांक होकर आज्ञा दीजिये ॥ ११ ॥ ययातिका शाप होनेसे यद्यपि हमारा वंश राज्यका अधिकारी नहीं है तथापि इस समय मुझ दासके रहते हुए राजाओंको तो क्या, आप देवताओंको भी आश्वा दे सकते हैं"॥ ६२ ॥

श्रीपराभारजी बोले-उग्रसेनसे इस प्रकार कह [धर्मसंस्थापनादि] कार्यसिद्धिके लिये मनुष्यरूप भारण करनेवाले भगवान् कृष्णने वायुका स्मरण किया और वह उसी समय वहाँ उपरिधत हो गया । तब भगवान्ने उससे गच्छेदं ब्रृहि वायो त्वमलं गर्वेण दासव । दीयतामुत्रसेनाय सुधर्मा भवता सभा ॥ १४ कृष्णो ब्रबीति राजाईमेतद्रलमनुत्तमम् । सुधर्माख्यसभा युक्तमस्या यदुभिरासितुम् ॥ १५

श्रीपराञ्चर उकाच इत्युक्तः पवनो गत्वा सर्वमाह शबीपतिम् । ददौ सोऽपि सुधर्माख्यां सभा वायोः पुरन्दरः ॥ १६ वायुना चाहतां दिव्यां सभां ते यदुपङ्गवाः । बुभुजुस्सर्वरत्नाढ्यां गोविन्दभुजसंश्रयाः ॥ १७ विदिताखिलविज्ञानौ सर्वज्ञानमयाविष । शिष्याचार्यक्रमं वीरौ ख्यापयन्तौ यदत्तमौ ॥ १८ ततस्रान्दीपनि काञ्चमवन्तिपुरवासिनम् । विद्यार्थं जम्मतुर्वालौ कृतोपनयनक्रमौ ॥ १९ वेदाभ्यासकृतप्रीती सङ्कर्पणजनार्दनौ । तस्य शिष्यत्वमध्येत्य गुरुवृत्तिपरौ हि तौ । दर्शयाञ्चकतुर्वीरावाचारमस्त्रिले जने ॥ २० सरहस्यं धनुर्वेदं ससङ्ग्रहमधीयताम् । अहोरात्रचतुष्यष्ट्रजा तदद्धतमभूदद्विज ॥ २१ सान्दीपनिरसम्भाव्यं तथोः कर्मातिमानुषम् । विचिन्त्य तौ तदा मेने प्राप्तौ चन्द्रदिवाकरौ ॥ २२ साङ्गांश चतुरो वेदान्सर्वशास्त्राणि चैव हि । अस्त्रग्राममशेषं च प्रोक्तमात्रमवाप्य तौ ॥ २३ <u>ऊचतुर्त्रियतां या ते दातव्या गुरुदक्षिणा ॥ २४</u> सोऽप्यतीन्द्रियमालोक्य तयोः कर्म महामतिः । अयाचत मृतं पुत्रं प्रधासे लवणाणीवे ॥ २५ गृहीतास्त्रौ ततस्तौ त सार्घ्यहस्तो महोदधिः । उवाच न मया पुत्रो हतस्मान्दीपनेरिति ॥ २६ दैत्यः पञ्चजनो नाम शङ्करूपसा बालकम् । जग्राह योऽस्ति सलिले पमैवासुरसूदन ॥ २७

श्रीपाशर ज्याव इत्युक्तोऽन्तर्जलं गत्वा हत्वा पञ्चजनं च तम् । कृष्णो जप्राह तस्यास्थित्रभवं शङ्क्षमुत्तमम् ॥ २८ कहा— ॥ १३ ॥ "हे बायो ! तुम जाओ और इन्द्रसे कहो कि हे बासब ! व्यर्थ गर्व छोड़कर तुम उप्रसेनको अपनी सुधर्मा नामको सभा दो ॥ १४ ॥ कृष्णचन्द्रको आज्ञा है कि यह सुधर्मा-सभा नामके सर्वोत्तम रत्न राजाके ही योग्य है इसमें याद्वोका विराजमान होना उपसुक्त है" ॥ १५ ॥

श्रीपराद्यस्ती बोले— भगवान्की ऐसी आहा होनेपर वायुने यह सारा समाचार इन्द्रसे जाकर कह दिया और इन्द्रने भी तुरन्त ही अपनी सुधर्मा नामकी सभा वायुको दे दो॥ १६॥ वायुद्धारा लायी हुई उस सर्वस्त-सम्पन्न दिव्य सभाका सम्पूर्ण भाग वे यदुश्रेष्ठ श्रीकृष्णचन्द्रकी भुवाओंके आश्रित रहकर करने रूपे॥ १७॥

तदनन्तर समस्त विज्ञानीको जानते हुए और सर्वज्ञान-सम्पन्न होते हुए भी वीरवर कृष्ण और बलराम गुरु-हिल्य-सम्बन्धको प्रकाशित करनेके लिये उपनयन-संस्कारके अनन्तर विद्योपार्वनके लिये काशीमें उत्पन्न हुए अवन्तिपुरवासी सान्दीपनि मुनिके यहाँ गये ॥ १८-१९ ॥ बीर संकर्णण और जनाईन सान्होपनिकः शिष्यतः स्वोकारकर वेदाभ्यासपरायण हो यथायोग्य गुरुश्रृषादिमें प्रथस रह सम्पूर्ण लोकोंको यथोचित शिष्टाचार प्रदर्शित करने लगे ॥ २० ॥ हे द्विज ! यह बड़े आक्षर्यकी बात हुई कि उन्होंने केवल चौंसठ दिनमें रहस्य (अस-मन्तोपनिषत्) और संग्रह (अस्तप्रयोग) के सहित सम्पूर्ण धनुर्वेद सीख लिया । २१ ॥ सान्दीपनिने जब उनके इस असम्भव और अहिमानुष-कर्मको देखा तो यही समझा कि साआत सूर्य और चन्द्रमा ही मेरे घर आ गये। है ॥ २२ ॥ उन दोनोंने अंगॉसहित चारों बेद, सम्पूर्ण शास्त्र और सब प्रकारकी अरुविचा एक बार सुनते ही प्राप्त कर ली और फिर गुरुजोसे कहा—ेकहिये, आपको क्या गुरु-दक्षिणा दे ?" ॥ २३-२४ ॥ महामति सान्दोपनिने उनके अतीन्द्रय-कर्म देखकर प्रभास-क्षेत्रके खारे समुद्रमें डूबकर मरे हुए अपने पुत्रको माँगा ॥ २५ ॥ तदनसर जब वे शस्त्र महणकर समुद्रके पास पहुँचे तो समुद्र अर्घ्य लेकर उनके सम्मुख उपस्थित हुआ और कहा—''मैंने सान्दीपनिका पुत्र हरण नहीं किया ॥ २६ ॥ हे दैत्यदवन ! मेरे जलमें ही पञ्चजन नामक एक दैत्य संख्कपसे रहता है; उसीने उस बालक्को फ्कड़ लिया था" ॥ २७ ॥

श्रीपराशरजी बोले—सपुद्रके इस प्रकार कहनेपर कृष्णचन्द्रने जलके भीतर जाकर पश्चनका वध किया और उसकी अस्थियोंसे उत्पन्न हुए शंखको ले

यस्य नादेन दैत्यानां बलहानिरजायत । देवानां ववधे तेजो यात्यधर्मश्च सङ्ख्यम् ॥ २९ तं पाञ्चजन्यमापूर्यं गत्वा यमपुरं हरि:। बलदेवश्च बलवाञ्चित्वा वैवस्वतं यमम् ॥ ३० तं बालं यातनासंस्थं यथापूर्वशरीरिणम् । पित्रे प्रदत्तवान्कृष्णो बस्तश्च बस्तिनां वरः ॥ ३१ मधुरां च पुनः प्राप्तावुश्रसेनेन पालिताम्। प्रहष्ट्रपुरुषस्त्रीकायुभौ रामजनार्दनौ ॥ ३२

लिया ॥ २८ ॥ जिसके इन्द्रसे देखोंका वल नष्ट हो जाता है, देवताओंका तेज बढता है और अधर्मका क्षय होता है ॥ २९ ॥ तदमन्तर उस पाञ्चजन्य शंखको बजाते हए श्रीकृष्णचन्द्र और बलवान् बलराम यमपुरको गये और सुर्यपुत्र यमको जीतकर यमयातना भीगते हुए उस बालकको पूर्ववत् शरीरयुक्तकर उसके पिताको दे दिया ॥ ३०-३१ ॥

इसके पश्चात् वे राम और कृष्ण राजा उनसेनद्वारा परिवालित मधुरापुरीमें, जहाँके स्त्री-पुरुष [उनके आयमनसे} आनन्दित हो रहे थे, पधारे ॥ ३२ ॥

इति श्रीविष्णपराणे पञ्चमेंऽशे एकविशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

बाईसवाँ अध्याय

जरासन्धकी पराजय

श्रीपराहार उताच

जरासन्धसूते कंस उपयेमे महाबल: । अस्ति प्राप्ति च मैत्रेय तयोभीनृहणं हरिम् ॥ महाबलपरीवारो मगधाधिपतिर्बली । हन्तुमध्याययौ कोपाजससन्धसस्यादवम् ॥ उपेत्य पश्चरां सोऽश्च रुरोध पगधेश्वरः। अक्षौहिणीभिस्सैन्यस्य त्रयोविञ्दिभिर्वृतः ॥ निष्क्रम्याल्पपरीवारावुभौ रामजनार्दनौ । युगुधाते समं तस्य बलिनौ बलिसैनिकैः ॥ ततो रामश्च कृष्णश्च मति चक्रतुरञ्जसा । आयुधानां पुराणानामादाने मुनिसत्तम ॥ अनन्तरं हरेश्शाई तृणौ चाक्षयसायकौ । आकाशादागतौ विप्र तथा कौमोदकी गदा ॥ हुलं च बलभद्रस्य गगनादागतं महत्। मनसोऽभिमतं वित्र सुनन्दं मुसलं तथा ॥ ततो युद्धे पराजित्य ससैन्यं मगधाधिपम् । पुरी विविशतुर्वीरायुभौ रामजनार्दनौ ॥ जिते तस्मिन्सदर्वते जरासन्धे महामुने। जीवमाने गते कृष्णस्तेनामन्यत नाजितम् ॥

श्रीपराशरजी बोले-हे मैत्रेय ! महावली कंसने जरासन्थकी पुत्री अस्ति और प्राप्तिसे विवाह किया था. अतः वह अत्यन्त बलिष्ठ मगधराज क्रोधपूर्वक एक बहुत बड़ी सेना लेकर अपनी पृत्रियोंके स्वामी कंसको मारनेवाले श्रीहरिको यादवोके सहित पारनेकी इच्छासे पशुरापर चढ़ आया॥ १-२॥ ममधेश्वर जरसन्धने वेईस अक्षौहिणी सेनाके सहित आकर मथुराको चारी ओरसे घेर किया ॥ ३ ॥

तब महाबङो राम और जनार्दन थोडी-सी सेनाके साथ नगरसे निकलकर जगसन्धके प्रवल सैनिकोंसे युद्ध करने रूपे ॥ ४ ॥ हे मुनिश्लेष्ठ ! उस समय राम और कुणाने अपने पुरातन शासीको यहण करनेका विचार किया ॥ ५ ॥ हे विष्र ! हरिके स्मरण करते ही उनका शार्ड्स धन्य, अक्षय बाणयुक्त दो तरकता और कौमोदकी भामकी गढा आकाशसे आकर उपस्थित हो गये ॥ ६ ॥ हे द्रिज ! यलभद्रजीके पास भी उनका मनोवाञ्छित महान हरू और सुनन्द नामक भूसरू आकाञ्चसे आ गये ॥ ७ ॥ तदनन्तर दोनों बीर सम और कृष्ण सेनाके सहित

मगधराजको मुद्धमैं हराकर मधुरापुरीमैं चले आये॥ ८॥

हे महापुने ! दुराचारी जरासन्धको जीत लेनेपर भी उसके

जीवित चले आनेके कारण कृष्णचन्द्रने अपनेको

अपराजित नहीं समझा ॥ ९ ॥

पुनरप्याजगामाथ जरासन्थो बलान्वितः । जितश्च रामकृष्णाभ्यामपक्रान्तो द्विजोत्तम ॥ १० दश चाष्ट्री च सङ्ग्रामानेवमत्यन्तदुर्मदः। यदुभिर्मागयो राजा चक्रे कृष्णपुरोगमै: ॥ ११ सर्वेष्ट्रेतेषु युद्धेषु यादवैस्त पराजितः। अपकान्तो जरासन्धस्वल्पसैन्वैर्बलाधिकः ॥ १२ न तद्वलं यादवानां विजितं यदनेकशः। तत्त् सन्निधिमाहात्व्यं विष्णोरंशस्य चक्रिणः ॥ १३ मनुष्यधर्मशीलस्य लीला सा जगतीपतेः। अस्त्राण्यनेकरूपाणि यदरातिषु मुञ्जति ॥ १४ मनसैव जगत्सृष्टिं संहारं च करोति यः। तस्यारिपक्षक्षपणे कियानुद्यमविस्तरः ॥ १५ तथापि यो मनुष्याणां धर्मस्तमनुवर्तते । कुर्वन्बलवता सन्धि हीनैर्वुद्धं करोत्यसौ ॥ १६ साम चोपप्रदानं च तथा भेदं च दर्शयन् । करोति दण्डपातं च क्रचिदेव पलायनम् ॥ १७ पनुष्यदेहिनां चेष्टामित्येवमनुवर्तते । लीला जगत्पतेस्तस्यच्छन्दतः परिवर्तते ॥ १८ |

हे द्विजोत्तप । जरासन्ध फिर बतनी ही सेना लेकर आया, किन्तु राम और कृष्णसे पर्राजित होकर माग गया ॥ १० ॥ इस प्रकार अल्पन्त दुर्धर्व मगधग्रज जरासन्त्रने राम और कृष्ण आदि यादवीसे अद्वारह बार युद्ध किया ॥ ११ ॥ इन सभी युद्धोंमें अधिक सैन्यशाली अससन्ध चोड़ो-सी सेनावाले यदुवंशियोसे हारकर भाग गया ॥ १२ ॥ यादवीकी थोड़ी-सी सेना भी जो [उसकी अनेक बड़ी सेनाओंसे] पराजित न हुई, यह सब भगवान्। विष्णुके अशावतार श्रीकृष्णचन्द्रकी समिधिका हो माहात्म्य था ॥ १३ ॥ उन मानवश्वर्मशील जगत्पतिको यह लीला ही है जो कि ये अपने शत्रओंपर नाना प्रकारके अख-प्रख छोड़ रहे हैं ॥ १४ ॥ जो केवल संकल्पमाप्रसे ही संसारकी उत्पत्ति और संदार कर देते हैं उन्हें आपने शत्रुपक्षका नाश करनेके लिये भला उद्योग फैलानेकी कितनी आवश्यकता है ? ॥ १५ ॥ तथापि वे बस्त्वानीसे सन्धि और बलहीनोंसे युद्ध करके मानव-धर्मीका अनुवर्तन कर रहे थे ॥ १६ ॥ वे कहीं साम, कहीं दान और कहीं भेदनीतिका व्यवहार करते थे तथा कहीं दण्ड देते और क्कोंसे स्वयं भाग भी जाते थे ॥ १७ ॥ इस प्रकार मानवदेहधारियोंकी चेष्टाओंका अनुवर्तन करते हुए श्रीजगरपतिकी अपनी इच्छानसार कीलाएँ होती रहती

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेऽद्रो द्वाविद्योऽध्यायः ॥ २२ ॥

तेईसवाँ अध्याय

द्वारका-दुर्गकी रचना, कालयबनका भस्म होना तथा मुखुकुन्दकृत भगवस्तुति

श्रीपराशर उवाच

गाग्वं गोष्ठ्यां द्विजं स्थालष्ण्यः झ्युक्तवान्द्विज । यदूनां सित्रियौ सर्वे जहसुर्याद्वास्तदा ॥ १ ततः कोपपरीतात्मा दक्षिणापश्रमेत्य सः । सुतमिच्छंस्तपस्तेपे यदुचक्रभयावहम् ॥ २ आराधयन्पहादेवं लोहवूर्णमभक्षयत् । ददौ वरं च तुष्टोऽस्मै वर्षे तु हादशे हरः ॥ ३ सन्तोषयामास च तं यवनेशो ह्यनात्मजः । तद्योषित्सङ्गमाद्यास्य पुत्रोऽभूदलिसन्निभः ॥ ४ श्रीपराशरजी बोले—हे द्विज! एक वार महर्णि गार्ग्यसे उनके सालेने यादवॉकी गोष्टीमें नपुसक कह दिया। उस समय समस्त यदुवंशी हँस पड़े॥ १॥ तव गार्ग्यने अत्यन्त कुपित हो दक्षिण-समुद्रके तटपर जा यादवसेनाको भयभीत करनेवाले पुत्रकी प्राप्तिके लिये तपस्या की॥ १॥ उन्होंने श्रीमहादेवजीकी उपासना करते हुए केवल लोहबूर्ण भक्षण किया तब भगवान् शंकरने बारहवें वर्षमें प्रसन्न होकर उन्हें अभीष्ट वर दिया॥ ३॥

एक पुत्रहोन यवनराजने महर्षि गार्ग्यकी अत्यन्त सेवाकर उन्हें सन्तुष्ट किया, उसकी खोके संगसे ही इनके एक भौरके समान कृष्णवर्ण वाटक हुआ।। ४॥

तं कालयवनं नाम राज्ये स्वे यवनेश्वरः । अभिषिच्य वनं यातो वज्राश्रकठिनोरसम् ॥ स तु वीर्यमदोन्मतः पृथिव्यां बलिनो नृपान् । अपृच्छन्नारदालस्मै कथवामास यादवान् ॥ प्लेक्जकोटिसहस्राणां सहस्रैस्सोऽभिसंवृत: । गजाश्वरथसम्पत्रैशकार परमोद्यमम् ॥ प्रययौ सोऽव्यविकन्नं छिन्नयानो दिने दिने । यादवान्प्रति सामर्षो मैत्रेय मधुरा पुरीम् ॥ कृष्णोऽपि चिन्तयामास क्षपितं यादवं बलम् । यवनेन रणे गम्यं मागधस्य भविष्यति ॥ मागधस्य बले क्षीणं स कालयवनो वली । हन्तैतदेवमायातं यदूनां व्यसनं द्विधा ॥ १० तस्माद्द्र्गं करिष्यामि यदुनामरिदुर्जयम् । स्त्रियोऽपि यत्र युद्धेयुः किं पुनर्वृष्णिपुङ्गवाः ॥ ११ मयि मत्ते प्रमत्ते वा सप्ते प्रवसितेऽपि वा । यादवाभिभवं दुष्टा मा कुर्वन्त्वरयोऽधिकाः ॥ १२ इति सञ्चित्त्य गोविन्दो योजनानां महोदधिम् । ययाचे द्वादश पुरी द्वारकां तत्र निर्ममे ॥ १३ पहोद्यानां महावत्रां तटाकशतशोभिताम्। प्रासादगृहसम्बाधामिन्द्रस्येवामरावतीम् ॥ १४ मधुरावासिनं लोकं तत्रानीय जनार्दनः। आसन्ने कालयवने मधुरां च खयं ययौ ॥ १५ बहिरावासिते सैन्ये मधुराया निरायुधः। निर्जगाम च गोविन्दो ददर्श यवनश्च तम् ॥ १६ स ज्ञात्वा वासुदेवं तं बाह्यहरणं नृपः। अनुयातो महायोगिचेतोभिः प्राप्यते न यः ॥ १७ तेनानुवातः कृष्णोऽपि प्रविवेश महागुहाम् । यत्र होते महाबीयों मुचुकुन्दो नरेश्वरः ॥ १८

वह यवनराज उस कारूयवन नामक बालकको; जिसका बक्षःस्थल वज्रके समान कठोर था, अपने राज्यपदपर अभिषिक्त कर स्वयं बनको चला गया ॥ ५ ॥ तदनन्तर वीर्यभदोन्यत कालयवनने नारदाजीशे पृष्ठा कि

तदनक्तर वायमदान्यस कालयवनन नारद्वास पूछा क पृथिवीपर बल्वाव् राजा कीन कीनसे हैं ? इसपर नारद्वाने उसे यादवोंको ही सबसे ऑधक बलशालो बतलाया ॥ ६ ॥ यह सुनकर कालयवनने हजारों हाथी, घोड़े और रथोंके सहित सहलों करोड़ म्लेब्ड-संनाको साथ ले बड़ी भारो तैयारी की ॥ ७ ॥ और यादवोंके प्रति कुद्ध लेकर यह प्रतिदित्त [हाथी, चोड़े आदिके थक जानेपर] उन वाहरोंका लाग करता हुआ [अन्य बाहरोंकर बड़कर] अविच्छित्र-गतिसे मधुरापुरीपर चढ़ आया ॥ ८ ॥

[एक और जरासन्यका आक्रमण और दूसरी और कालयवनकी चढ़ाई देखकर] श्रीकृष्णकदने सोचा— ''चचनोके साथ युद्ध करनेसे शीण हुई वादव-सेना अवश्य हो मगधनरेनारे पर्राजित हो जायगी ॥ ९ ॥ और यदि प्रथम मगधनरेनारे छड़ते हैं तो उससे शीण हुई यद्धवसेनाकी बलवान कालयवन नष्ट कर देशा। शाय! इस प्रकार यद्धवेपर [एक ही साथ] यह दो तरहकी आपित आ पहुँची है ॥ १० ॥ अतः मैं चादवेकि लिये एक ऐसा दुर्जय दुर्ग तैवार कराता हूँ जिसमें बैठकर वृष्णिश्रेष्ठ यादवेकि तो बात ही क्या है, स्थियां भी युद्ध कर सकें ॥ ११ ॥ उस दुर्गमें रहनेपर चिद मैं नत, प्रमत (असावधान), सोया अथवा कहीं बाहर भी गया होऊं तब भी, अधिक-से-अधिक दुष्ट राष्ट्रगण भी यादवोंकी पराभृत न कर सकें'' ॥ १२ ॥

ऐसा विवास्कर श्रीगोविन्दने समुद्रसे बारह योजन भूमि माँगी और उसमें द्वारकापुरी निर्माण की ॥ १३ ॥ जो इन्द्रकी अपरावतीपुरीके समान महान् उद्यान, गहरी खाई, सैकड़ी सरोवर तथा अनेको पहलींसे सुन्नोधित श्री॥ १४ ॥ काल्यवनके समीप आ जानेपर श्रीजनार्दन सन्पूर्ण मधुरा-निवासिनोधके द्वारकामें ले आये और फिर स्वयं मधुरा लीट गये॥ १५ ॥ जब कालश्रवनकी सेगाने मधुराको घेर लिया तो श्रोकृष्णचन्द्र बिना दाख लिये मधुरासे बाहर निकल आये। तब यवनश्रव कालश्रवनने उन्हें देखा॥ १६ ॥ महायोगीश्वरींका चित्र भी जिन्हें प्राप्त नहीं कर पाता उन्हीं वासुदेवको केवल बाहुकप शक्तींसे ही युक्त [अर्थात् खाली हाथ] देखकर यह उनके पीछे दौड़ा॥ १७ ॥

कल्यवनसे पीला किये जाते हुए श्रीकृष्णचन्द्र उस महा गुहामें घुस गये जिसमें महावीर्यशाली राजा मुचुकुन्द

सोऽपि प्रविष्टो यवनो दृष्टा शय्यागतं नृपम् । पादेन ताडयामास मत्वा कृष्णं सुदुर्मतिः ॥ १९ उत्थाय मुसुकुन्दोऽपि दहर्श यवनं नृपः ॥ २० दृष्ट्रमात्रश्च तेनासौ जञ्चाल यवनोऽभिना । तत्क्रोधजेन मैत्रेय भस्मीभृतश्च तत्क्षणात् ॥ २१ स हि देवासुरे युद्धे गतो हत्वा महासुरान्। निद्रार्त्तस्तुमहाकालं निद्रां बब्ने वरं सुरान् ॥ २२ प्रोक्तश्च देवैस्तंसुप्तं यस्त्वामुखापयिष्यति । देहजेनात्रिना सद्यसः तु भस्मीभविष्यति ॥ २३ एवं दग्ध्या स ते पापे दृष्टा च मधुसूदनम् । कस्त्विमत्याह सोऽप्याह जातोऽहं शशिनः कुले । वसुदेवस्य तनयो यदोर्वशसमुद्धवः ॥ २४ मुचुकुन्दोऽपि तत्रासी वृद्धगार्यवचोऽस्मरत् ॥ २५ संस्पत्य प्रणिपत्यैनं सर्वं सर्वेश्वरं हरिष्। प्राह् ज्ञातो भवान्विष्णोर्रज्ञस्त्वं परमेश्वर ॥ २६ पुरा गार्ग्वेण कथितमष्टाविशतिमे युगे। द्वापरान्ते हरेर्जन्य यदुवंशे भविष्यति ॥ २७ स त्वं प्राप्तो न सन्देहो पर्त्यानामुपकारकृत् । तथापि सुमहत्तेजो नालं सोदुपई तव ॥ २८ तथा हि सजलाम्भोदनादधीरतरं तव। वाक्यं नमति चैवोर्वी युष्पत्पादप्रपीडिता ॥ २९ देवासुरमहायुद्धे दैत्यसैन्यमहाभटाः । न सेहर्पंप तेजस्ते त्वत्तेजो न सहाम्यहम् ॥ ३० संसारपतितस्यैको जन्तोस्त्वं शरणं परम्। प्रसीद त्वं प्रपन्नार्तिहर नाराच मेऽशुभम् ॥ ३१ त्वं पयोनिधयङ्शैलसरितस्त्वं वनानि च। मेदिनी गगनं वायुरापोऽप्रिरस्वं तक्षा मनः ॥ ३२ बुद्धिरव्याकृतप्राणाः प्राणेशस्त्वं तथा पुमान् । पुंस: परतरं यद्य व्याप्यजन्मविकारवत् ॥ ३३ शब्दादिहीनमजरममेयं क्षयवर्जितम् ।

अवृद्धिनाशं तद्वह्य त्वमाद्यन्तविवर्जितम् ॥ ३४

सो रहा था ॥ १८ ॥ उस दुर्मीत यवनने भी उस गुफार्म जाकर सोये हुए राजाको कृष्ण समझकर त्यत मारी ॥ १९ ॥ उसके त्यत मारनेसे उठकर राजा मुचुकुन्दने उस यवनरजको देखः । हे मैत्रेय ! उनके देखते ही वह यवन उसकी क्रोधायिसे जलकर भस्मीभृत हो गया ॥ २०-२१ ॥

पूर्वकालमें राजा मुचुकुन्द देवताओंकी ओरसे देवासुर-संप्रापमें गये थे; असुराँको मार चुकनेपर अत्यन्त निद्राल् होनेके कारण उन्होंने देवताओंसे बहुत समयतक सोनेका वर माँगा था ॥ २२ ॥ उस समय देवताओंने कटा था कि तुम्हारे अयन करनेपर तुम्हें जो कोई जगावेगा वह तुम्त ही अपने शरीरसे उत्पन्न हुई अग्रिसे जलकर भस्म हो जायगा ॥ २३ ॥

इस प्रकार पापी कालयवनको दग्ध कर चुकनेपर राजा मुजुकुन्दने श्रीमधुसुदनको देखकर पृद्धा 'आप कौन हैं ?' तय भगवानुने कहा—"मैं चन्द्रबंशके अन्तर्गत बदुक्रुलंगे वसुदेवजीके पुत्ररूपसे उत्पन्न हुआ हूँ'॥ २४॥ तब मुकुकुन्दको युद्ध गार्म्य मुनिके वचेनीका स्परण हुआ। उनका समरण होते ही उन्होंने सर्वरूप सर्वेश्वर श्रीहरिको प्रणाम करके कहा—''हे परमेश्वर! मैंने आपको जान लिया है; आप साक्षात् भगवान् विष्णुके अंश हैं॥ २५-२६ ॥ पूर्वकारूमें मार्ग्य मुनिने कहा था कि अड्राईसने युगमें हापरके अन्तर्गे यदुक्लमें श्रीहरिका जन्म होगा ॥ २० ॥ निस्सन्देह आप भगवान् विष्णुके अंश हैं। और पनुष्योंके उपकारके लिये ही अवतीर्ण हुए हैं तथापि में आपके महान् तेजको सहन करनेपें समर्थ नहीं हूँ ॥ २८ ॥ हे भगवन् ! आपका शब्द सजल नेघको घोर गर्जनाके समान अति गम्भीर है तथा आपके चरणोसे पीडिता होकर पृथिवी हर्का हुई है ॥ २९ ॥ हे देव ! देवासूर-महासम्बन्ध र्दल-सेनाके बढ़े-बढ़े योद्धागण भी मेरा तेज नहीं सह सके थे और मैं आपका तेज सहर नहीं कर सकता ॥ ३० li संसारमे पतित जीवोंके एकमात्र आप ही परम आश्रम हैं। हे शरणागतींका दुःख दूर करनेवाले ! आप प्रसन्न होइसे और मेरे अमद्भलीको नष्ट कीजिये ॥ ३१ ॥ 🖙 🥬 👚

आप ही समुद्र है, आप ही पर्वत है, आप ही नदियाँ हैं और आप ही वन है तथा आप ही पृथिवी, आकाश, वायु, जल, अधि और मन हैं॥ ३२॥ आप ही बुद्धि, अब्बाकृत, प्राण और प्राणोका अधिष्ठाता पुरुष हैं; तथा पुरुषसे भी परे जो व्यापक और जन्म तथा विकारसे शून्य तत्त्व है वह भी आप ही हैं॥ ३३॥ जो शब्दादिसे रहित, अजर, अमेय, अक्षय और माश तथा वृद्धिसे रहित है वह

त्वत्तोऽमरास्सपितरो यक्षगन्धर्विकन्नराः । सिद्धाश्चाप्सरसस्त्वत्तो मनुष्याः पञ्चवः खगाः ॥ ३५ सरीसुपा मुगास्सर्वे त्वत्तसार्वे महीरुहाः। यश भूतं भविष्यं च किञ्चिदत्र चराचरम् ॥ ३६ मूर्तामूर्तं तथा चापि स्थूलं सूक्ष्मतरं तथा । तत्सर्वं त्वं जगत्कर्ता नास्ति किञ्चित्त्वया विना ॥ ३७ मया संसारचक्रेऽस्मिन्ध्रमता भगवन् सदा । तापत्रयाभिभृतेन न प्राप्ता निवृत्तिः ऋचित् ॥ ३८ दुःखान्येव सुखानीति मृगतृष्णा जलाञ्चया । मया नाथ गृहीतानि तानि तापाय मेऽभवन् ॥ ३९ राज्यपुर्वी बलं कोशो मित्रपक्षस्तथात्मजाः । भार्या मृत्यजनो ये च शब्दाद्या विषया: प्रभो ।। ४० सुखबुद्ध्या मया सर्वं गृहीतमिदमव्ययम् । पशिणामे तदेवेश तापात्मकमभूनमम् ॥ ४१ देवलोकगति प्राप्तो नाथ देवगणोऽपि हि । मत्तस्साहाय्यकामोऽभूच्छाश्वती कुत्र निर्वृतिः ॥ ४२ त्वामनाराध्य जगतां सर्वेषां प्रभवास्पदम् । शाश्वती प्राप्यते केन परमेश्वर निवृतिः ॥ ४३ त्वन्यायामूढमनसो जन्ममृत्युजरादिकान् । अवाप्य तापान्पश्यन्ति प्रेतराजमनन्तरम् ॥ ४४ ततो निजक्रियासृति नरकेष्ट्रतिदारुणम् । प्राप्नवन्ति नरा दुःखमस्बरूपविदस्तव ॥ ४५ अहमत्यन्तविषयी मोहितस्तव ममत्वगर्वगर्तान्तर्भ्रमामि परमेश्वर ॥ ४६ सोऽहं त्वां शरणपपारमप्रमेयं सम्प्राप्तः परमपदं यतो न किञ्चित् । संसारभ्रमयरितापतप्रचेता निर्दाणे परिणतधाप्ति साधिलाषः ॥ ४७

आचन्तहोन बह्य भी आप ही हैं ॥ ३४ ॥ आपहीसे देवता, पितृगण, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर, सिद्ध और अपस्थागण उत्पन्न हुए हैं। आपहीसे सनुष्य, पशु, पश्ची, सर्थसृप और मृग आदि हुए हैं तथा आपहोसे सम्पूर्ण वृक्ष और जो कुछ भी भूत-भविष्यत् चराचर जगत् है यह सब हुआ है ॥ ३५-३६ ॥ हे प्रभो ! मूर्त-अपूर्व, स्यूल-सूक्ष्म तथा और भी जो कुछ है वह सब आप जगत्कर्ता ही हैं, आपसे भिन्न और कुछ भी नहीं है ॥ ३७ ॥

हे भगवन् ! तापत्रयसे अभिभृत होकर सर्वदा इस संसार-चक्रमें भ्रमण करते हुए मुझे कभी शान्ति प्राप्त नहीं हुई ॥ ३८ ॥ हे नाथ ! जलको आशासे मृगतृष्णाके समान मैंने क्षु-खोको हो सुस्न समझकर प्रहण किया था; परन्तु वे मेरे सन्तापके ही कारण हुए ॥ ३९ ॥ हे प्रभी ! राज्य, पृथियी, सेना, कोइा, मित्रपंथ, पुत्रक्या, स्त्री तथा सेवक आदि और शब्दादि विषय इन सबको मैंने अविनाजी तथा सुख-युद्धिसे हो अपनाया था; किन्तु हे ईश । परिणाममें वे ही दुःसरूप सिद्ध हुए॥४०-४१॥ हे नाथ! जब देवलोक प्राप्त करके भी देवताओंको मेरी सहायताकी इच्छा हुई तो उस (खर्गलोक) में भी नित्य-शान्ति कहाँ। है ? ॥ ४२ ॥ हे परमेश्वर ! सम्पूर्ण जगतुकी उरपत्तिके आदि-स्थान आपको आराधना किये बिना कौन शास्त्रत शान्ति प्राप्त कर सकता है ? ॥ ४३ ॥ है प्रभौ ! आपकी मायासे मूळ हुए पुरुष जन्म, मृत्यु और जरा आदि सन्तापीको भोगते हुए अलमें यमराजका दर्शन करते हैं ॥ ४४ ॥ आपके स्वरूपको न जाननेवाले पुरुष नरकोमें पडकर अपने कपौंके फलस्वरूप नाना प्रकारके दारण क्षेत्रा पाते हैं ॥ ४५ ॥ हे परमेश्वर ! मैं अत्यन्त विषयी हैं और आपकी मायाचे मोहित होकर ममत्वाभिमानके गड्रेमें भटकता रहा हूँ ॥ ४६ ॥ वहीं मैं आज अपार और अप्रमेय परमपदरूप आप परभेश्वरकी दारणमें आया है जिससे भिन्न दुसरा कुळ भी नहीं है, और संसारश्रमणके खेदसे खिन-चित्त होकर मैं निरितशय तेकेमय निर्वाणस्वरूप आपका हो अभिलावी हैं"॥४७॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽदो त्रयोविद्गोऽध्यायः ॥ २३ ॥

चौबीसवाँ अध्याय

मुचुकुन्दका तपस्याके लिये प्रस्थान और बलरामजीकी व्रजयात्रा

श्रीपराशर तकाच

इत्यं स्तुतस्तदा तेन मुचुकुन्देन थीमता। प्राहेशः सर्वभूतानामनादिनिधनो हरिः ॥ श्रीभगवानुवाच

यथाभिवाञ्चितान्दियानान्त्र लोकान्नराधिप । अव्याहतपरैश्वयाँ मत्प्रसादोपबंहित: ॥ भुक्त्वा दिव्यान्महाभोगान्भविष्यसि महाकुले । जातिस्मरो मत्प्रसादात्ततो मोक्षमवाप्यसि ॥

श्रीपगुरास इवाच

इत्युक्तः प्रणिपत्येशं जगतामच्युतं नृपः। गुहामुखाद्विनिकान्तस्य ददर्शाल्पकात्ररान् ॥ ततः कलियुगं मत्वा प्राप्तं तप्तं नृपस्तपः । नरनारावणस्थानं प्रययौ गन्धमादनम् ॥ कृष्णोऽपि घातयित्वारिमुपायेन हि तद्वलम् । जबाह मधुरामेत्य हस्यश्चस्यन्दनोञ्ज्वलम् ॥ आनीय चोत्रसेनाय द्वारवत्यां न्यवेदयत्। पराभिभवनिश्शद्धं बभूव च यदो: कुलम् ॥ 9 बलदेबोऽपि मैत्रेय प्रशान्ताखिलवित्रहः । ज्ञातिदर्शनसोत्कण्ठः प्रथयौ नन्दगोकुलम् ॥ ८ ततो गोपांश्च गोपीश्च यथा पूर्वपमित्रजित्। तथैवाभ्यवदत्येणा बहुमानपुरस्सरम् ॥ सं कैश्चित्सम्परिष्टकः कांश्चिद्य परिषस्वजे । हास्यं चक्रे समं कैश्चिद्रोपैगोंपीजनैस्तथा ॥ १० प्रियाण्यनेकान्यवदन् गोपास्तत्र हलायुधम् । गोष्यश्च प्रेमकृपिताः प्रोचुसोर्ध्यमथापराः ॥ ११ गोप्यः पप्रच्छरपरा नागरीजनवल्लभः। कचिदास्ते सूखं कृष्णश्चलप्रेमलवात्पकः ॥ १२ अस्मश्रेष्ट्रामपहसञ्ज कश्चित्पुरयोषिताम् । सीभाग्यमानमधिकं करोति क्षणसाँहदः ॥ १३

श्रीपराशस्त्री बोले—परंग बुद्धिमान् सवा मुचुकुन्दके इस प्रकार स्तृति करनेपर सर्व भूतोंके ईश्वर अमादिनिधन भगवान् हरि बोले ॥ १ ॥

श्रीभगवान्ने कहा — हे नरेश्वर ! तुन अभिमत दिव्य लोकोंको जाओ; मेरी कपासे तुन्हें अञ्चाहत परम ऐश्वर्य प्राप्त होगा ॥ २ ॥ वहाँ अस्यन्त दिव्य भोगोंको भोगकर तुम अन्तमें एक महान् कुलमें जन्म लोगे, उस समय तुन्हें अपने पूर्वजन्मका स्मरण रहेगा और किर मेरी कृपासे तुम मोक्षपद प्राप्त करोगे ॥ ३ ॥

श्रीपराशरजी बोले—भगवानुके इस कक्ष्मेपर राजा मुचुकुन्दने जगदीक्षर श्रीअञ्चलको प्रणाम किया और गुफासे निकलकर देखा कि लोग बहुत छोटे-कोटे हो गये हैं ॥ ४ ॥ उस समय कॉलयुगको वर्तमान समझकर राजा तपस्था करनेके लिये श्रीनर-नारायणके स्थान गन्धमादनपर्वतपर चले गये॥ ५॥ इस प्रकार कुल्पचन्द्रने उपायपर्वक शत्रको नष्टकर फिर मधरामे आ उसकी हाथी, घोडे और स्थादिसे सुशोधित सेनाको अंघने बशोभन किया और उसे द्वारकामें त्यकर राजा उग्रसेनको अर्पण कर दिया। तबसे यदबंश शत्रऑके दमनसे निःशंक हो गया ॥ ६-७॥

हे मैत्रेय ! इस सम्पूर्ण विक्रहके शान्त हो जानेपर बलदेवजी अपने बान्धबोके दर्शनको उत्कण्टासे उन्दर्शके गोकुलको गये॥ ८॥ वहाँ पहुँचकर शत्रुजित् बलभद्रजीने गोप और गोपियोंकः पहलेहीकी भाँति अति आदर और प्रेषके साथ अभिवादन किया ॥ ९ ॥ किसीने उनका आलिङ्कन किया और किसीको उन्होंने गले लगाया तथा किन्हों भोष और भोषियोंके साथ उन्होंने हास-परिहास किया ॥ १० ॥ गोपोंने बल्खमजीसे अनेकों प्रिय वचन कहे तथा पोपियोगेंसे कोई प्रणयकुपित होकर बोर्ली और किन्हींने उपालम्भयुक्त बार्ट की ॥ ११ ॥

किन्हीं अन्य गोपियोंने पूछा— चन्नल एवं अल्प प्रेम करना ही जिनका स्वभाव है, ये नगर-नारियोंके प्राणाधार कृष्ण तो आनन्दमें हैं न ? ॥ १२ ॥ वे क्षणिक खेहबाले नन्दनन्दन इमारी चेष्टाओंका उपहास करते हुए स्था नगरको पहिलाओंके सौभाग्यका मान नहीं बदाया

कंचित्मरति नः कृष्णो गीतानुगमनं कलम् । अप्यसी मातरे द्रष्टुं सकृद्प्यागमिष्यति ॥ १४ अथवा कि तदालापैः क्रियन्तामपराः कथाः । यस्यास्माभिर्विना तेन विनास्सकं भविष्यति ॥ १५ पिता माता तथा भ्राता भर्ता बन्धुजनश्च किम् । सन्यक्तस्तकतेऽस्माभिरकृतज्ञध्वजो हि सः ॥ १६ तश्चापि कछिदालापमिहागमनसंश्रयम् । करोति कृष्णो वक्तव्यं भवता राम नानृतम् ॥ १७ दामोदरोऽसौ गोविन्दः पुरस्त्रीसक्तमानसः । अपेतप्रीतिरस्पास् दुर्दर्शः प्रतिभाति नः ॥ १८ श्रीपरादार उचान

आमन्त्रितश्च कृष्णेति पुनर्दामोदरेति च। जहसुस्सस्वरं गोप्यो हरिणा हृतचेतसः ॥ १९ सन्देशैस्साममध्रौः प्रेमगर्भैरगर्वितै: । रामेणाश्चासिता गोप्यः कृष्णस्यातिमनोहरैः ॥ २० गोपैश्च पूर्वेवद्रायः परिहासमनोहराः । कथाश्चकार रेमे च सह तैर्ज़जभूमिषु ॥ २१

करते ? ॥ १३ ॥ क्या कृष्णचन्द्र कभी हमारे गीतानुपायी मनोहर स्वरका स्मरण करते हैं ? क्या वे एक बार अपनी माताको भी देखनके लिये यहाँ आवेंगे ? ॥ १४ ॥ अथवा अब उनकी बात करनेसे हमें क्या प्रयोजन है, कोई और बात करो । जब उनकी हमारे बिना निभ गयी तो हम भी उनके बिना निष्मा ही लेंगी ॥ १५ ॥ क्या माता, क्या पिता, क्या बन्ध, क्या पति और क्या कुटुम्बके स्त्रेग ? हमने उनके ियं सधीको छोड दिया, किन्तु वे तो अकृतज्ञोंकी ध्वजा ही निकले ॥ १६ ॥ तथापि बलगमजी ! सप-सध बतलाइये क्या कृष्ण कभी यहाँ आनेके विषयमें भी कोई बातबीत करते हैं ? ॥ १७ ॥ हमें ऐसा प्रतीत होता है कि दामोदर कष्णका चित्त नागरी-नारियोंमें फैंस गया है: हममें अब उनकी प्रीति नहीं है, अतः अब हमें तो उनका दर्शन दुर्लभ ही जान पढ़ता है ॥ १८ ॥

श्रीपराद्यारजी बोले—तदनन्तर श्रीहरिने जिनका चित हर लिया है वे गोपियाँ बरुरागजीको कृष्ण और दामोदर कहकर सम्बोधन करने लगीं और फिर इस स्वरसे हँसने रूगों ॥ १९ ॥ तब बरुभद्रजीने कृष्णबन्द्रका अति मनोहर और शान्तियय, प्रेयमर्थित और गर्वहीन सन्देश सुनाकर गोपियोंको सान्त्वना दी॥ २०॥ तथा गोपोंके साथ द्वास्य करते हुए उन्होंने पहलेकी माति बहत-सी मनोहर बारों की और उनके साथ वजभिममें नाना प्रकारकी लीलाएँ करते रहे ॥ २१ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पश्चमेंऽदी चतुर्विशोऽध्यायः ॥ २४ ॥

पचीसवाँ अध्याय

बलभइजीका वज-विहार तथा यमुनाकर्षण

श्रीपराञ्चर उञ्जाच

वने विचरतस्तस्य सह गोपैर्महात्मनः। मानुषच्छदारूपस्य शेषस्य धरणीधृतः ॥ निष्पादितोरुकार्यस्य कार्येणोर्वीप्रचारिणः । उपभोगार्थमत्यर्थं वरुणः प्राह वारुणीम् ॥ अभीष्टा सर्वदा यस्य पदिरे त्वं पहाँजसः । अनन्तस्योपभोगाय तस्य गच्छ मुद्रे शुभ्रे ॥ इत्युक्ता वारुणी तेन सन्निधानमधाकरोत् । वृन्दावनसमृत्यन्नकदम्बतरुकोटरे 11

श्रीपराशरजी बोले-अपने कार्योरे पृथिनीको विचलित करनेवाले, बड़े विकट कार्व करनेवाले, धरणीधर दोषजीके अवतार माया-मानवरूप महात्मा बल्डामजीको गोपंकि साथ वनमें विचरते देख उनके उपभोगके लिये बरुणने बारुणी (महिरा) से कहा-- ॥ १-२ ॥ "हे मदिरे ! जिन महाबळवाळी अनन्त देवको तुम सर्वदा प्रिय हो; है शुभे ! तुम उनके उपभोग और प्रसन्नताके किये जाओ"॥ ३॥ वरणकी ऐसी आज्ञा होनेपर वारुणी वृन्दावनमें उत्पन्न हुए कदम्ब-वक्षके कोटरमें रहने लगी॥४॥

विचरन् बलदेवोऽपि मदिरागन्धमुत्तमम्। मंदिरातर्षमवापाथ वराननः ॥ आच्चाय ततः कदम्बात्सहसा मद्यथारां स लाङ्गली । पतन्तीं वीक्ष्य मैत्रेय प्रययौ परमां मुदम् ॥ पपौ च गोपगोपीभिस्तमुपेतो मुदान्वितः । प्रगीयमानी ललितं गीतवाद्यविशारदै: ॥ स मत्तोऽत्यन्तवर्माध्यः कणिकामौतिकोञ्चलः । आगच्छ यपुने स्नानुमिच्छामीत्याह विद्वल: ॥ तस्य बाचं नदी सा तु पत्तोक्तामवमत्य वै । नाजगाम ततः क्रुद्धो हलं जग्राह लाङ्गली ॥ गृहीत्वा तां हलान्तेन चकर्य पदविह्नलः। पापे नासासि नायासि गय्यतामिच्छयान्यतः ॥ १० साकृष्टा सहसा तेन मार्गं सन्त्यज्य निव्रगा । यत्रास्ते बलभद्रोऽसौ प्रावयामास तद्वनम् ॥ ११ शरीरिणी तदाध्येत्य त्रासविद्वललोचना । प्रसीदेत्यज्ञबीद्रामं मुख्य मां मुसलाबुध ॥ १२ ततस्तस्याः सुक्चनमाकण्यं स हलायुधः । सोऽब्रवीदक्जानासि मम शौर्यबले नदि। सोऽहं त्वां हलपातेन नविष्यामि सहस्रधा ॥ १३. श्रीपरादार उद्यान इत्युक्तयातिसन्तासात्तया नद्या प्रसादितः । भूभागे प्राविते तस्मिन्युमोच यपुनां वलः ॥ १४ ततस्स्रातस्य वै कान्तिरजायत महात्मनः ॥ १५ अवतंसोत्पलं चारु गृहीत्वैकं च कुण्डलम् । वरुणप्रहितां चास्मै मालामम्लानपङ्कुजाम् ।

समुद्रामे तथा वस्त्रे नीले लक्ष्मीरबच्छत ॥ १६ कृतावतंसस्य तदा चारुकुण्डलभूवितः। नीलाम्बरधरस्त्राची शुशुभे कान्तिसंयुतः ॥ १७ इस्थं विभूषितो रेमे तत्र रामस्तथा व्रजे। मासद्वयेन यातश्च स पुनद्वरिकां पुरीम् ॥ १८ रेवर्ती नाम तनयां रैवतस्य महीपते:।

तब मनोहर मुखबाले बलदेवजीको वनमें विचरते हर मादेशको अति उत्तम गन्ध सुँघतेसे उसे पीनेकी इच्छा हुई।। ५ ॥ हे मैंबेव : उसी समय कदम्बसे मद्यकी धारा गिरती देख इलधारी बलसमजी बड़े प्रसन्न हुए ॥ ६ ॥ तथा गाने-बजानेमें कुशल गोप और गोपियोंके मधुर खरसे गाते. हुए उन्होंने उनके साथ प्रसन्नतापूर्वक मद्यपान किया ॥ ७ ॥ तदनकर अत्यन्त घामके कारण स्वेद-बिन्दुरूप मोवियोसे स्त्रोभित भदोत्मत बलरामजीने विद्वल होकर कहः—"यमुने । आ, मैं स्नान करना चाहता हैं" ॥,८॥ उनके बाक्यको उन्मतका प्रकाप समझकर यमुनाने उसपर कुछ भी ध्यान न दिया और वह वहाँ न आयो। इसपर इलधरने जोधित होकर अपना हक उठाया॥ ९॥ और भदसे विहास होकर यमुनाको हरूको नोकसे पकडकर खोंचरी हुए कहा—"अरों पापिनि ! तु नहीं आती थी ! अच्छा, अर [यदि इक्ति हो तो] इच्छानुसार अन्यत्र जा तो सही ॥ १० ॥ इस अकार बलरामजीके खींचनेपर समुनाने अकरगात् अपना मार्ग छोड् दिया और जिस वनमे वलरामनी खड़े थे उसे अञ्चावित कर दिया ॥ ११ ॥

तब वह शरीर धारणकर, बहुसभ्जीके पास आयी और भयवज्ञ डबहबाती आँखोंसे कहने लगी--"हे मुसल्प्रयुष ! आप प्रसन्न होइये और मुझे छोड़ दीजिये" 🛭 १२ ॥ उसके उन मध्र बचनीको सुनकर इट्यपुध बलभद्रजीने कहा—"असी नदि ! क्या त धेरे बल-वॉर्यकी अवज्ञा करती है ? देख, इस हलसे मैं अभी तेरे एजारी टकडे कर डालैगा ॥ १३ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—बलरामजीद्वारा इस प्रकार कही जानेसे भयभीत हुई यमुनाके उस भू-भागमें बहुने लग्नेपर

उन्होंने प्रसन्न होकर उसे छोड़ दिया॥ १४ ॥ उस समय

स्थान करनेपर भहातमा बलगामजीकी अरखेल शोभा हुई।

तब लक्ष्मीजीने [सदारीर प्रकट होकर] उन्हें एक सुन्दर

कर्णफुल, एक कुण्डल, एक वरूपको भेकी हुई कभी न कुम्हलानेवाले कपल-पृथ्वीकी माला और दो समुद्रके

समान कालिवाले भीलवर्ण वस्त दिये॥ १६-१६॥ उन

कर्णफूल, सुन्दर कुण्डल, नीलाम्बर और फुप्प-मालाको

धारणकर श्रीबलरामजी अतिहाय कान्तियुक्त हो सुशोधित

होने रूपो ॥ १७ ॥ इस प्रकार विभूषित होस्त श्रीबलभद्रजीने वजमें अनेकों स्थीरत्रहें की और फिर दो मास

पश्चात् इसकःपुरीको चले आये ॥ १८ ॥ वहाँ आकर बस्मेवजीने राजा रेवतकी पुत्री रेवतीसे विवाह किया; उससे उपयेमे बलस्त्रस्यां जज्ञाते निश्चठोल्युकौ ॥ १९ उनके निशट और उल्मुक समक दो पुत्र हुए॥ १९॥ इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेऽही पञ्चविद्योऽध्यायः ॥ २५ ॥

छब्बीसवाँ अध्याय

रुविमणी-हरण

श्रीपराश्चर उवाच

भीष्मकः कुण्डिने राजा विदर्भविषयेऽभवत् । रुक्मी तस्याभवत्युत्रो रुक्मिणी च वरानना ॥ 7 रुक्मिणीं चकमे कृष्णस्सा च तं चारुहासिनी । न ददौ याचते चैनां स्वमी हेषेण चक्रिणे ॥ ? ददी च शिशुपालाय जरासन्धप्रचोदितः। भीष्यको रुक्मिणा सार्द्धं रुक्मिणीमुरुक्किमः ॥ 3 विवाहार्थं ततः सर्वे जरासन्धमुखा नृपाः । भीष्मकस्य पुरं जन्मुदिशशूपालप्रियैषिणः ॥ कृष्णोऽपि बलभद्राद्यैर्वदुभिः परिवास्तिः। प्रययौ कुण्डिनं द्रष्टं विवाहं चैद्यभूभृतः ॥ 4 श्लोभामिनि विवाहे तु तां कन्यां हतवान्हरि: । विपक्षभारमासञ्च रामादिष्यथ बन्धुषु ॥ ततश्च पौण्डुकदश्चीमान्दन्तवको विदूरथः। शिश्पालजरासन्धशाल्याद्याश्च महीभृतः ॥ कुपितास्ते हरि हन्तुं चक्रुरुद्योगमुत्तपम्। निर्जिताश्च समागम्य रामाद्यैर्वदपुडुतैः ॥ कुण्डिनं न प्रवेक्ष्यामि हाहत्वा युधि केशवम् । कृत्वा प्रतिज्ञां स्वमी च हत्तुं कृष्णमनुद्गृतः ॥ हत्वा बलं सनागार्धं पत्तिस्यन्दनसङ्कलम् । निर्जितः पातितश्चोर्व्या लीलयैव स चक्रिणा ॥ १० निर्जित्व हिंबमणं सम्यगुपयेमे च हिंबमणीम्। राक्षसेन विवाहेन सम्बाप्तां मधुसूदनः ॥ ११ तस्यां जज्ञे च प्रदास्रो पदनांशस्यवीर्यवान् । जहार शम्बरो यं वै यो जधान व शम्बरम् ॥ १२

श्रीपराद्दारजी बोले—विदर्भदेशासर्गत कृष्डिनपुर गामक नगरमें भीष्मक नामक एक राजा थे। उनके रुक्मी गामक पुत्र और रुक्मिणी नामकी एक सुमुखी कत्या थी॥ १॥ श्रोकृष्णचन्त्रकी अभिलाषा की, किंतु भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके प्रार्थना करनेपर भी उनसे द्वेष करनेके कारण रुक्मीने उन्हें रुक्मिणी न दी॥ २॥ महापराक्रमी भीष्मकने जरासन्यकी प्रेरणासे रुक्मीसे सद्दमत होकर शिक्षुणालको रुक्मिणी देनेका निश्चय किया॥ ३॥ तब शिक्ष्माचन्द्र भी चेदिराजका विवाहोत्सव देखनेके लिये कुष्डिनपुर आये॥ ५॥

तदक्तर विवाहका एक दिन रहनेपर अपने विपक्षियोका भार यलभड़ आदि यन्थुओको सौपकर श्रीहरिने उस कन्याका हरण कर लिया ॥ ६ ॥ तब श्रीमान् वीण्ड्रक, दत्तवक्र, विदूर्ध, शिश्चाण, जरासम्य और शाल्व आदि राजाओंने क्रोधित होकर श्रीहरिको पारनेका महान् उद्योग किया, किन्तु वे सब चल्यान आदि यदुश्रेष्ठोंसे मुठभेड़ होनेपर पराजित हो गये ॥ ७-८ ॥ तब स्वयीने यह प्रतिज्ञाकर कि 'मैं युद्धमें कृष्णको मारे बिना कुण्डिनपुरमें प्रवेश न करूँगा' कृष्णको मारनेके लिये उनका पीछा किया ॥ ९ ॥ किन्तु श्रीकृष्णने कील्यसे हैं हाथी, बोड़े, रथ और पदातियोंसे युक्त उसकी सेनाको नष्ट वरके तसे जीत लिया और पृथिवीमें गिरा दिया ॥ ९ ॥

इस प्रकार रुक्मीको युद्धमें परासकर ऑमधुसूरनने राक्षस-विवाहसे मिली हुई रुक्मिणीका सम्यक् (वेदोक्त) रीतिसे पाणियहण किया ॥ ११ ॥ उससे उनके कामदेवके अंदाले उत्पन्न हुए बीर्यवान् प्रसुप्रजीका जन्म हुआ, जिन्हें राम्बरासुर हर के गया था और फिर जिन्होंने [काल-क्रमसे] राम्बरासुरका वध किया था ॥ १२ ॥

सत्ताईसवाँ अध्याय

प्रद्युप्त-हरण तथा शम्बर-वध

8

7

श्रीगंत्रेय उवाच

शाखरेण हतो जीरः प्रद्यप्रः स कथं मुने ।

शाबरः स महावीर्यः प्रदान्नेन कथं हतः ॥

यस्तेनापहृतः पूर्वं स कथं विज्ञधान तम्। एतद्विस्तरतः श्रोतुमिच्छामि सकलं गुरो ॥

श्रीपराश्तर उवाच

षष्टेऽद्धि जातमात्रं तु प्रद्युप्तं सूतिकागृहात् ।

यमैष हन्तेति मुने हतवान्कालशम्बरः॥

हत्वा चिक्षेप चैवैनं प्राहोत्रे लवणार्णवे ।

कल्लोलजनितावर्ते सुधोरे मकरालये॥

पातितं तत्र चैवैको मत्स्यो जग्राह बालकम् । न ममार च तस्यापि जठराग्निप्रदीपितः॥

मत्स्यबन्धेश्च मत्स्योऽसौ मत्स्यैरन्यैस्सह द्विज । घातितोऽसुरवर्याय शम्बराय निवेदितः ॥

तस्य मायावती नामपत्नी सर्वगृहेश्वरी।

कारयायास सुदानामाधिपत्यमनिन्दिता ॥

दारिते मत्स्यजठरे सा ददर्शातिशोधनम्। कुमारं मन्धश्वतरोर्दग्धस्य प्रथमाङ्करम् ॥

कोऽयं कथमयं मत्स्यज्ञहरे प्रविवेशितः।

इत्येवं कौतुकाविष्टां तन्वीं प्राहाध नारदः ॥

अयं समस्तजगतः स्थितिसंहारकारिणः।

इाम्बरेण हुतो खिष्णोस्तनयः सुतिकागृहात् ॥ १० क्षिप्रसामुद्रे मत्त्येन निगीर्णस्ते गृहं गतः।

नरस्त्रमिदं सुञ्ज विस्तव्या परिपालय ॥ ११

श्रीपरासर उवाच

नारदेनैवमुक्ता सा पालयामास तं शिशुम् । बाल्यादेवातिरागेण रूपातिशयमोहिता ॥ १२

स यदा यौवनाभोगभूषितोऽभूनमहामते ।

साधिलावा तदा सावि बभूव गजगामिनी ॥ १३

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे मुने! वीरवर प्रद्यसको शम्बरासुरने कैसे हरण किया था ? और फिर उस

महाबली शम्बरको प्रदासने कैसे मारा ? ॥ १ ॥ जिसको पहले उसने हरण किया था उसीने पीछे उसे किस प्रकार मार डाला ? हे गुरो । मैं यह सन्पूर्ण प्रसंग विस्तारपूर्वक

पुनना चाहता है ॥ २ ॥

श्रीपराशरजी बोले—हे मुने! कालके समान विकराल शम्बरासुरने प्रद्यासको, जन्म लेनेके छठे ही दिन

'यह मेरा मारनेवाला है' ऐसा जानकर स्विकागृहसे हर लिया ॥ ३ ॥ उसको हरण करके शम्बरासुरने लक्णसमुद्रमें डाल दिया, जो तरंगपालाजनित आवर्तीसे

पूर्ण और बड़े भयानक मकरोंका घर है ॥ ४ ॥ वहाँ फेंके हुए उस बालकको एक मरत्यने निपल लिया, किन्तु यह उसकी जुडगुजिसे जलकर भी न मरा॥ ५ ॥

कालान्तरमें कुछ मछेरोंने उसे अन्य मछल्यिकि साथ अपने जालमें फँसाया और असरश्रेष्ठ शम्बरको निवेदन किया ॥ ६ ॥ उसकी नाममात्रकी पत्नी मायावती सम्पूर्ण

अन्तःपुरको स्वामिनी थी और वह सुरुक्षणा सम्पूर्ण सूदी (रसोइयों) का आधिपत्य करती थी॥७॥ उस

मछलीका पेट चीरते ही उसमें एक अति सुन्दर बालक

आश्चर्यचकित हुई उस सुन्दरीसे देवार्ष नारदने आकर

दिखायी दिया जो दन्ध हुए कामवृक्षका प्रथम अंकुर था॥८॥ 'तब यह कौन है और किस प्रकार इस मछलीके पेटमें डाला गया' इस प्रकार अत्यत्त

कहा— ॥ ९ ॥ "हे सुन्दर भृकुटिवाली ! यह सम्पूर्ण जगतुके स्थिति और संहारकर्ता भगवान् विष्णुका पुत्र हैं; इसे शम्बरासुरने सृतिकागृहसे चुराकर समुद्रमें फेंक दिया था। वहाँ इसे यह मत्स्य निगल गया और अब इसीके द्वारा

पालन कर" ॥ १०-११ ॥

श्रीपराशास्त्री बोले---नारद्जीके ऐसा कहनेपर मायावतीने उस बालककी अतिशय सुन्दरतासे मोहित हो बाल्यावस्थाले ही उसका अति अनुसगपूर्वक पालन

यह तेरे घर आ गया है। तु इस नररत्नका विश्वस्त होकर

किया ॥ १२ ॥ हे महामते ! जिस समय वह नवयौवनके समागमसे सुशोधित हुआ तब वह यजनामिनी उसके प्रति कामनायुक्त अनुसम प्रकट करने लगी॥ १३॥

मायावती ददौ तस्मै मायास्सर्वा महामुने । प्रद्युप्रायानुरागान्या तत्र्यस्तहृद्येक्षणा ॥ १४ प्रसञ्जन्तीं तृतां प्राह स कार्ष्णिः कमलेक्षणाम् । मातृत्वमपहायाद्य किमेचं वर्तसेऽन्यथा ॥ १५ सा तस्मै कथयामास न पुत्रस्त्वं ममेति वै । तनयं त्वामयं विष्णोईतवान्कालशम्बरः ॥ १६

क्षिप्तः समुद्रे मत्त्यस्य सम्प्राप्तो जठरान्यया । सा हि रोदिति ते माता कान्ताद्याप्यतिवत्सला ॥ १७

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तरशम्बरं युद्धे प्रद्युप्तः स समाह्रयत्। कोधाकुलीकृतमना युयुधे च महाबलः ॥ १८ हत्वा सैन्यमशेषं तु तस्य दैत्यस्य यादवः ।

सप्त माया व्यक्तिकम्य मायां प्रयुक्तेऽष्टमीम् ॥ १९ तया जघान तं दैत्यं मायया कालशम्बरम् ।

उत्पत्त्य च तया सार्द्धमाजगाम पितुः पुरम् ॥ २० अन्तःपुरे निपतितं मायावत्या समन्वितम् ।

तं दृष्ट्वा कृष्णसङ्कल्या बभूवुः कृष्णयोषितः ॥ २१

रुविमणी साभवत्रेम्णा सास्तदृष्टिरनिन्दिता। धन्यायाः खल्वयं पुत्रो वर्तते नवयौवने ॥ २२ अस्मिन्वयसि पुत्रो मे प्रद्युष्ट्रो यदि जीवति ।

सभाग्या जननी बत्स सा त्वया का विभूषिता ॥ २३ अथवा यादुशः स्रेहो मम यादुग्वपुस्तव ।

हरेरपत्यं सुव्यक्तं भवान्वत्स भविव्यति ॥ २४

औपराश्य उदान

एतस्मित्रन्तरे प्राप्तस्सह कृष्णेन नारदः। अन्तःपुरचरां देवीं रुक्मिणीं प्राह हर्षयन् ॥ २५

एव ते तनयः सुभू हत्वा शम्बरमागतः। हतो येनाभवद्वालो भवत्यासमृतिकागृहात् ॥ २६

इयं मायावती भार्या तनयस्यास्य ते सती । शम्बरस्य न भार्येयं श्रूयतामत्र कारणम् ॥ २७

मन्मथे तु गते नाहां तदुद्धवपरायणा ।

शम्बरं मोहयामास मायारूपेण रूपिणी ॥ २८

हे महामुने ! जो अपना हृदय और नेत्र प्रसूत्रमे अर्पित कर चुकी थी उस मायावतीने अनुरागसे अन्धी होकर उसे सब प्रकारकी माया सिला दी ॥ १४ ॥ इस प्रकार अपने

कपर आसक्त हुई उस कमललोचनासे कृष्णनन्दन प्रयुद्धने कहा—"आज तुम मातु-भावको छोडकर यह अन्य प्रकारका भाव क्यों प्रकट करती हो ?"॥ १५॥ तब

मायावतीने कहा — "तुम मेरे पुत्र नहीं हो, तुम भयवान् विष्णुके तनय हो । तुम्हें कालङ्गाम्बरने हरकर समुद्रमें फेंक दिया था: तुम मुझे एक मत्त्यके उदरमें मिले हो। है कारत ! आपकी पुत्रवत्सला जननी आज भी रोती

होगी" ॥ १६-१७ ॥

भीपराशरजी बोले—मादावतीके इस प्रकार कहनेपर महाबलवान् प्रशुप्तजीने क्रोधसे बिहल हो शम्बरासुरको युद्धके लिये ललकारा और उससे युद्ध करने रूपे ॥ १८ ॥ यादवश्रेष्ठ प्रद्युप्रजीने उस दैत्यकी सम्पूर्ण सेना मार डाली और उसकी सात भाषाओंको जीतकर ख्यमे आठवीं मायाका प्रयोग किया ॥ १९ ॥ उस मायासे उन्होंने दैत्यराज कालहाम्बरको मार डाला और मायावतीके साथ [विमानद्वारा] उड़कर आकाशमारीसे

अपने पिताके नगरमें आ गये ॥ २० ॥

रानियोंने उन्हें देखकर कृष्ण ही समझा॥ २१॥ किन्तु अनिन्दिता रुक्मिणीके नेत्रोंमें प्रेमबदा आंसु भर आये और वे कहने लगी—''अवस्य ही यह नवयौवनको प्राप्त हुआ किसी बङ्भागिनीका पुत्र है ॥ २२ ॥ यदि मेरा पुत्र प्रद्युष्ट जॉक्ति होगा तो उसकी भी यही आयु होगी। हे कस । तू ठीक-ठीक बता तुने किस भाग्यवती जननीको विभूषित

किया है ? ॥ २३ ॥ अथना, बेटा ! जैसा मुझे तेरे प्रति स्नेह

हो रहा है और जैसा तेस खख्य है उससे मुझे ऐसा भी प्रतीत.

मायावतीके सहित अन्तः प्रमें उत्तरनेपर श्रीकृष्णचन्द्रकी

होता है कि व श्रीहरिका ही पन्न है''॥ २४ ॥ आपराशरजी बोले—इसी समय श्रीकृष्णचन्द्रके साथ वहाँ नारदजी आ गये । उन्होंने अन्तःपुरनिवासिनी देवी हिक्मणीको आर्नन्दित करते हुए कहा— ॥ २५ ॥

''है सुभू ! यह तेरा ही पुत्र है । यह शम्बरासुरको मारकर आ रहा है, जिसने कि इसे बाल्यावस्थामें सृतिकागृहसे हर लिया था ॥ २६ ॥ यह सती मायावती भी तेरे पुत्रकी ही स्त्री है; यह शम्बरायुरकी पत्नी नहीं है। इसका कारण सुन ॥ २७ ॥ पूर्वकारुमें कामदेवके भस्म हो जानेपर

उसके पुनर्जन्मको प्रतीक्षा करती हुई इसने अपने मायायय रूपसे शम्बरासुरको मोहित किया था॥ २८॥ विहाराद्युपभोगेषु रूपं मायामयं शुभम्। दर्शयामास दैत्यस्य तस्येयं यदिरेक्षणा ॥ २९

कामोऽवतीर्णः पुत्रस्ते तस्येयं दिवता रतिः । विशङ्का नात्र कर्तव्या खुषेयं तव शोभने ॥ ३०

ततो हर्षसमाविष्टी रुक्मिणीकेशवौ तदा ।

नगरी च समस्ता सा साधुसाध्वित्यभाषत ॥ ३१

चिरं नष्टेन पुत्रेण सङ्गतां प्रेक्ष्य रुविमणीम् । अवाप विसावं सर्वो द्वारवत्यां तदा जनः ॥ ३२

यह मत्तवित्तीचना उस दैत्यको विहासदि उपभोगेकि

समय अपने अति सुन्दर मायामय रूप दिखलाती रहती थी।। २९ ॥ कामदेवने ही तेरे पुत्ररूपसे जन्म लिया है और यह सुन्दरी उसकी प्रिया रति ही है। हे शोभने !

यह तेरी पुत्रवधू है, इसमें तू किसी प्रकारकी विपरीत शंका न कर" ॥ ३० ॥

यह सुनकर रुविमणी और कृष्णको अतिহाय आनन्द हुआ तथा समस्त द्वारकापुरी भी 'साधु-साधु' वज्रने लगी ॥ ३१ ॥ उस समय चिरकालसे सोये हुए पुत्रके साथ रुक्सिणीका समागम हुआ देख द्वारकापुरीके सभी नागरिकोंको बहा आश्चर्य हुआ ॥ ३२ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽशे सप्तविशोऽध्यायः ॥ २७ ॥

अट्टाईसवाँ अध्याय

रुक्मोका वध

7

₹.

4

श्रीपरादार उकाच

चारुदेष्णं सुदेष्णं च चारुदेहं च वीर्यवान् ।

सुषेणं चारुगुप्तं च भद्रचारुं तथा परम्।। चारुविन्दं सुचारुं च चारुं च बलिनां बरम् ।

रुक्मिण्यजनयस्पूत्रान्कन्यां चारुपतीं तथा ॥

अन्याश्च भार्याः कृष्णस्य बभूवः सप्त शोभनाः ।

कालिन्दी मित्रविन्दा च सत्या नाप्रजिती तथा ॥

देवी जाम्बवती चापि रोहिणी कामरूपिणी । मद्रराजसूता चान्या सुशीला शीलमण्डना ॥

सात्राजिती सत्यभाषा लक्ष्मणा चारुहासिनी ।

षोडशासन् सहस्राणि स्त्रीणामन्यानि चक्रिणः ॥

प्रद्युप्रोऽपि महावीयों रुविमणस्तनयां शुधाम् । स्वयंवरे तां जप्राह सा च तं तनयं हरे: ॥

तस्यामस्याभवत्पुत्रो महाबलपराक्रमः ।

अनिरुद्धो रणेऽरुद्धवीर्योदधिररिन्दमः ॥

तस्यापि रुक्मिणः पौत्री वरयामास केशवः । दौहित्राय ददौ स्वमी तां स्पर्द्धत्रपि चक्रिणा ॥

श्रीपराजरजी बोले—हे मैत्रेय ! [प्रदाप्तके अतिरिक्त] चारुदेष्ण, सुदेष्ण, बीर्यवान्,

चारुदेह, सुषेण, चारुपुप्त, भद्रचार, चारुविन्द, सुचार और बलवानोंमें श्रेष्ठ चार नामक पुत्र तथा चारमती नामको एक कन्या हुई॥ १-२॥ रुक्मिणीके अतिरिक्त

श्रीकृष्णचन्द्रके कालिन्दी, मित्रविन्दा, नम्रजितको पूर्वी संत्या, जाम्बवानुको पुत्री कामरूपिणी रोहिणी, अति-द्मीत्र्वती मदराजसुता सुशीला भद्रा, सन्नाजित्की पुत्री

सत्यभामा और चारहासिनी लक्ष्यणा—ये अति सन्दरी 'सात सियाँ और थीं इनके सिवा उनके सोलह हजार क्षियाँ और भी थीं ॥ ३—५॥

महावीर प्रद्युसने रुक्मीकी सुन्दरी कन्याको और उस कन्याने भी भगवान्के पुत्र प्रद्युप्तजीको स्वयंवरमें प्रहण किया ॥ ६ ॥ उससे प्रसुप्रजीके अनिरुद्ध नामक एक महाबलपराक्रमसम्पन पुत्र हुआ जो युद्धपे रुद्ध

(प्रतिहत) न होनेवाला, बलका समुद्र तथा राष्ट्रओंका दमन करनेवाला था ॥ ७ ॥ कृष्णचन्द्रने उस (अनिरुद्ध)। के लिये भी रूक्मोको पौत्रोका वरण किया और रुक्मीने

कृष्णचन्द्रसे ईर्घ्या रखते हुए भी अपने दौहित्रको अपनी

पौत्री देना खीकार कर लिया ॥ ८ ॥

तस्या विवाहे रामाद्या यादवा हरिणा सह । रुक्मिणो नगरं जग्मुनीम्ना भोजकटं द्विज ॥ विवाहे तत्र निर्वृते प्राद्यप्रेस्तु महात्मनः । कलिङ्गराजप्रयुखा रुक्मिणं वाक्यमञ्जूबन् ॥ १० अनक्षज्ञो हली द्यूते तथास्य व्यसनं महत्। न जवायो बलं कस्पादद्यतेनैनं महाबलम् ॥ ११ श्रीपराश्चर उवाच तथेति तानाह नृपान्स्वमी बलमदान्वितः । सभायां सह रामेण चक्रे द्युतं च वै तदा ॥ १२ सहस्रमेकं निष्काणां रुक्पिणा विजितो वलः । द्वितीयेऽपि पणे चान्यत्सहस्रं रुविमणा जितः ॥ १३ ततो दशसहस्राणि निष्काणां पणपाददे। बलभद्रोऽजयत्तानि रुवमी सुतविदां वर: ॥ १४ ततो जहास स्वनवत्कलिङ्गाधिपतिर्द्धिज। दन्तान्विदर्शयन्यूहो रुक्मी चाह मदोद्धतः ॥ १५ अविद्योऽयं मया द्युते बलभद्रः पराजितः । मुभैवाक्षावलेपान्धो योऽवमेनेऽक्षकोविदान् ॥ १६ दुष्टा कलिङ्गराजन्तं प्रकाशदशनाननम् । रुविमणं चापि दुर्वाक्यं कोपं चक्रे हलायुधः ॥ १७ ततः कोपपरीतात्मा निष्ककोटि समाददे। ग्लहं जग्राह रूक्मी च तदर्थेंऽक्षानपातयत् ॥ १८ अजयद्वलदेवस्तं प्राह्मेशैविजितं मयेति रुबमी प्राहोधैरलीकोक्तेरलं बल ॥ १९ त्वयोक्तोऽयं ग्लहस्सत्यं न मयैषोऽनुमोदितः । श्रीपराश्चर उदाच अथान्तरिक्षे वागुचैः प्राह गम्भीरनादिनी ।

एवं त्वया चेहिजितं विजितं न मया कश्चम् ॥ २० श्रीपग्रसारज्ञाव अश्वान्तरिक्षे वागुचैः प्राह गम्भीरनादिनी । बलदेवस्य तं कोपं वर्द्धयन्ती महात्मनः ॥ २१ जितं बलेन धर्मेण रुक्मिणा भाषितं मृषा । अनुक्त्वापि क्वः किञ्चित्कृतं भवति कर्मणा ॥ २२ ततो बलः समुत्थाय कोपसंरक्तलोचनः । जधानाष्ट्रापदेनैय रुक्मिणं स महाबलः ॥ २३ हे द्विज! उसके विवाहमें सम्मिलित होनेके लिये कृष्णचन्द्रके साथ बलभद्र आदि अन्य चादवराण भी रुक्मीकी राजधानी भोजकट नामक नगरको गये॥ १॥ जब प्रसुप्त-पुत्र महात्मा अनिरुद्धका विवाह-संस्कार हो चुका तो कलिंगराज आदि राज्यओंने रुक्मोसे कहा—॥ १०॥ "ये बलभद्र चूतक्रीडा [अच्छो तरह] जानते तो है नहीं तथापि इन्हें उसका व्यसन बहुत है; तो फिर हम इन् महाबली रामको जुएसे ही क्यों न जीत लें ?"॥ ११॥ श्रीपराद्यरजी बोस्ने---तब बलके मदसे उन्पत्त रुक्मोने उन राजाओंसे कहा—'बहुत अच्छा' और सभामें बलगमजीके साथ सूतक्रीडा आरम्भ कर दी॥ १२॥ रुक्मीने पहले ही दाँवमें बलगमजीसे एक सहस्र निष्क जीते तथा दूसरे दाँवमें एक सहस्र निष्क और

दी ॥ १२ ॥ स्वर्माने पहले ही दाँवमें बलगमजीसे एक सहस्र निष्क जीते तथा दूसरे दाँवमें एक सहस्र निष्क और जीत लिये ॥ १३ ॥ तब बलभद्रजीने दस हजार निष्कका एक दाँव और लगाया । उसे भी पक्क जुआरी स्वमीने ही जीत लिया ॥ १४ ॥ हे द्विज ! इसपर मूढ कलिंगराज दाँत दिखाता हुआ जोरसे हँसने लगा और मदोन्मन रुक्मीने कहा— ॥ १५ ॥ "खूत्क्रीडासे अनिमंज्ञ इन बलभद्रजीको मैंने हत दिया हैं, ये यथा ही अक्षके घमण्डले अन्ये होकर अक्षकुशल पुरुषोंका अपमान करते थे" ॥ १६ ॥ इस प्रकार कलिंगराजको दाँत दिखाते और रुक्मीको दवाँक्य कहते देख हलायथ यलभद्रजी अत्यन्त क्रोधित

हुए ॥ १७ ॥ तत्र उन्होंने अत्यन्त कुपित होकर करोड़ निष्कका दाँव लगाया और रुक्मीने भी उसे प्रहणकर उसके निमित्त पाँसे फेंके ॥ १८ ॥ उसे बलदेवजीने ही जीता और वे जोरसे बोल उठे, 'मैंने जीता।' इसपर रुक्मी भी चिल्लाकर बोला—'बलराम ! असत्य बोलनेसे कुछ लाभ नहीं हो सकता, यह दाँव भी मैंने ही जीता है ॥ १९ ॥ आपने इस दाँवके विषयमें जिक्र अवस्य किया था, किंतु मैंने उसका अनुमोदन तो नहीं किया। इस प्रकार यदि आपने इसे जीता है तो मैंने भी क्यों नहीं जीता ?'' ॥ २० ॥ श्रीपराश्वरजी बोले — उसी समय महात्म बलदेव-

जीके क्रोधको बढ़ाती हुई आकाशवाणीने गम्भीर खरमें कहा— ॥ २१ ॥ "इस दाँबको धर्मानुसार तो बलगमजी ही जीते हैं; रुक्मी झूठ बोलता है क्योंकि [अनुमोदनसूचक] वचन न कहनेपर भी [पाँसे फेंकने आदि] कार्यसे वह अनुमोदित हो माना जायगा" ॥ २२ ॥

तब क्रोधसे अरुणनयन हुए महाबली बलभद्रजीने उठकर रुक्मीको जुआ खेलनेके पाँसीसे ही मार

कलिङ्गराजं चादाय विस्फुरन्तं बलाङ्कलः। बभञ्ज दत्तान्कपितो यैः प्रकाशं जहास सः ॥ २४ आकृष्य च महास्तव्यं जातरूपमयं बल: । जघान तान्ये तत्पक्षे भूभृतः कुपितो भृशम् ॥ २५ ततो हाहाकृतं सर्वं पलायनपरं द्विज । तद्राजमण्डलं भीतं बभूव कुपिते बले ॥ २६ बलेन निहतं दुष्टा रुविमणं मधुसुदनः।

नोवाच किञ्चिनौत्रेय रुक्मिणीबलयोर्भयात् ॥ २७ ततोऽनिरुद्धमादाय कृतदारं द्विजोत्तम ।

ह्यरकामाजगामाथ यदुवर्क च केशवः ॥ २८

डाला ॥ २३ ॥ फिर फड़कते हुए कॉलंगराजको बलपूर्वक पकडकर बरुरामजीने उसके दाँत, जिन्हें दिखलाता हुआ बह हैंसा था, तोड़ दिये ॥ २४ ॥ इनके स्टिबा उसके पक्षके

और भी जो कोई राजालोग थे उन्हें बलरामजीने अत्यन्त कुपित होकर एक सुवर्णमय स्तम्भ उखाड़कर उससे मार डाला ॥ २५ ॥ हे द्विज ! उस समय बलरामजीके कृपित

होनेसे हाहाकार मच गया और सम्पूर्ण राजालोग भयधीत होकर भागने लगे ॥ २६ ॥

हे मैंबेच ! उस समय रुवमीको मारा गया देख श्रीमधुसूदनने एक ओर रुविमणीके और दूसरी ओर बलरामजीके भयसे कुछ भी नहीं कहा ॥ २७ ॥ तदनन्तर,

हे द्विजश्रेष्ठ ! यादवीके सहित श्रीकृष्णचन्द्र सपलीक अनिरुद्धको लेकर द्वारकापुरीमें चले आये ॥ २८ ॥

इति श्रीविष्णुपराणे पञ्चमेंऽदोऽष्टाविद्योऽध्यायः ॥ २८ ॥

उन्तीसवाँ अध्याय

नरकासुरका वध

3

श्रीपराचार उचाच

द्वारवत्यां स्थिते कृष्णे शक्रस्त्रिभुवनेश्वरः । मैत्रेय मत्तैरावतपृष्ठगः॥ आजगामाथ

प्रविच्य द्वारकां सोऽध समेत्य हरिणा ततः ।

कथयामास दैत्यस्य नरकस्य विचेष्टितम् ॥

त्वया नाथेन देवानां मनुष्यत्वेऽपि तिष्ठता ।

प्रशमं सर्वदुःसानि नीतानि मधुसुद्दन ॥

तपस्विव्यसनार्थाय सोऽरिष्टो धेनुकस्तथा ।

प्रवृत्तो यस्तथा केशी ते सर्वे निहतास्त्वया ॥

कंसः कुवलयापीडः पूतना बालघातिनी । नाई। नीतास्त्वया सर्वे येऽन्ये जगदुपद्रवाः ॥

युष्पद्वीर्दण्डसम्पृतिपरित्राते

यज्वयज्ञांशसम्प्राप्त्या तृप्तिं यान्ति दिवौकसः ॥ सोऽहं साम्प्रतमायातो यन्निमित्तं जनार्दन ।

तच्छ्रत्वा तत्प्रतीकारप्रयत्नं कर्तुमहींस ॥

श्रीपराद्यारजी बोले—हे मैत्रेय ! एक बार जब श्रीभगवान् द्वारकार्ने ही ये त्रिभुवनपति इन्द्र अपने मत

गजराज ऐरावतपर चढ़कर उनके पास आये॥१॥ द्वारकामें आकर वे भगवानुसे मिले और उनसे

नरकासुरके अत्याचारोंका वर्णन किया॥२॥ [वे बोले—] "हे मधुसुदन ! इस समय मनुष्यरूपमें

स्थित होकर भी आप सम्पूर्ण देववाओंके स्वामीने

हमारे समस्त दुःखोंको शान्त कर दिया है॥३॥ जो अरिष्ट, धेनुक और केशी आदि असुर सर्वदा तपस्वियोंको द्वेशित करते रहते थे उन सबको आपने

मार डाला ॥ ४ ॥ कंस, कुवल्यापीड और बालपातिनी पुतना तथा और भी जो-जो संसारके उपद्रवरूप थे उन सबको आपने नष्ट कर दिया ॥ ५ ॥ आपके बाहदण्डकी

सत्तासे जिलोकीके सुरक्षित हो जानेके कारण याजकीके

दिये हुए यज्ञभागोंको प्राप्तकर देवनण तुस हो रहे

हैं॥६॥ हे जनार्दन ! इस समय जिस निमित्तसे मैं आपके पास उपस्थित हुआ है उसे सुनकर आप उसके

प्रतीकारका प्रयत करें ॥ ७ ॥

हे शङ्गदमन ! यह पृष्पित्रीका पुत्र नस्कासुर प्रारूचोतिषपुरका स्वामो है: इस समय यह सम्पूर्ण जीवोंका

भौमोऽयं नरको नाम प्राग्ज्योतिषपुरेश्वरः । करोति सर्वभूतानामुषघातमस्निदम् ॥ देवसिद्धासरादीनां नृपाणां च जनादंत । हत्वा तु सोऽसुरः कन्या रुरुधे निजमन्दिरे ॥ छत्रं यस्पलिलसावि तजहार प्रचेतसः। मन्दरस्य तथा शृङ्गं इतवान्प्रणिपर्वतम् ॥ १० अमृतस्राविणी दिव्ये मन्मातुः कृष्ण कुण्डले । जहार सोऽसुरोऽदित्या वाञ्छत्यैरावतं गजम् ॥ ११ दर्नीतमेत द्वोविन्द मया तस्य निवेदितम्। यदत्र प्रति कर्तव्यं तत्त्वयं परिमृश्यताम् ॥ १२ श्रीपराशर उबाच इति श्रुत्वा स्मितं कृत्वा भगवान्देवकीसृतः । गृहीत्वा वासवं हस्ते समुत्तस्थौ वरासनात् ॥ १३ सञ्जित्यागतमारुह्य गरुडं गगनेचरम्। सत्यभामां समारोष्य ययौ प्रारूबोतिषं पुरम् ॥ १४ आरुह्यैरावतं नागं शक्रोऽपि त्रिदिवं ययौ । ततो जगाम कृष्णश्च पश्यतां द्वारकौकसाम् ॥ १५ प्राग्ज्योतिषपुरस्यापि समन्ताच्छतयोजनम्। आचिता मौरवै: पाशै: क्षुरान्तैर्भूद्विजोत्तम ॥ १६ तांशिक्रेद हरिः पाञ्चान्क्षिप्या चक्रं सुदर्शनम् । ततो मुरस्समुत्तस्थौ तं जघान च केशवः ॥ १७ पुरस्य तनयान्सप्त सहस्रांस्तांस्ततो हरिः। चक्रधाराग्निनिर्दग्धांश्रकार शलभानिव ॥ १८ हत्वा मुरं हयप्रीवं तथा पञ्चजनं द्विज । प्राग्ज्योतिषपुरं धीमांस्त्वरावान्समुपाद्रवत् ॥ १९ नरकेणास्य तत्राभून्यहासैन्येन संयुगम्। कुळास्य यत्र गोविन्दो जम्ने दैत्यान्सहस्रशः ॥ २० शस्त्रास्त्रवर्षं मञ्जन्तं तं भौमं नरकं बली। क्षिएवा चक्रं द्विधा चक्रे चक्री दैतेयचक्रहा ॥ २१ हते तु नरके भूमिर्गृहीत्वादितिकुण्डले । उपतस्थे जगन्नाथं वाक्यं चेदमथाब्रवीत् ॥ २२

बात कर रहा है ॥ ८ ॥ हे जनार्दन ! उसने देवता, सिद्ध, असूर और राजा आदिकोंकी कन्याओंको बलात् लाकर अपने अन्तःपुरमें बन्द कर रखा है॥ ९॥ इस दैत्यने वरुणका जल बरसानेवाला छत्र और मन्दराचलका मणिपर्वत नामक शिखर भी हर किया है ॥ १० ॥ हे कृष्ण । उसने मेरी माता अदितिके अमृतस्त्राची दोनी दिका कुण्डल के लिये हैं और अब इस ऐरावत हाचीको भी क्षेत्रा चाहता है।। ११॥ हे गोबिन्द ! मैंने आपको उसकी ये सब अनोतियाँ सुना दी हैं; इनका जो प्रतीकार होना चाहिये, वह आप स्वयं विचार लें"॥ १२॥ श्रीपराशास्त्री बोले—इन्द्रके वे बचन सुनकर श्रीदेवजीनन्दन मुसदाये और इन्द्रका हाथ फ्कड़कर अपने श्रेष्ठ आसनसे उठे ॥ १३ ॥ फिर स्मरण करते ही उपस्थित हुए आकाशगामी मरुडपर सत्यभामाको चढ़ाकर स्वयं चढ़े और प्राप्न्योतिषपुरको चले ॥ १४ ॥ तदनचर इन्द्र भी ऐरावतपर चढ़कर देवलोकको गये तथा भगवान् कृष्णचन्द्र सब दारव्यवासियोंके देखते-देखते [नरकासुरको मारने] चले गये ॥ १५॥ हे द्विजोत्तम ! प्राम्ज्योतिषपुरके चारी ओर पृथियी सौ योजनतक मुर दैत्यके बनाये हुए छुरेकी भाराके समान अति तीश्य पाशोंसे घिरी हुई थी ॥ १६ ॥ भगवान्ते उन पाज्ञोंको सुदर्शनचक्र फेंककर काट डाला; फिर मुर दैत्य भी सामना करनेके लिये उठा हब श्रीकेशवने उसे भी मार डाला ॥ १७ ॥ तदनन्तर श्रीहरिने मुस्के साथ हजार पुत्रोंको भी अपने चक्रको शाररूप अधिमें पर्तगके समान भस्म कर दिया ॥ १८ ॥ है द्विज ! इस प्रकार मतिमान् भगवान्ने मुर, हयबीव एवं पञ्चजन आदि दैत्योंको मारकर बड़ी शीवतासे प्रारम्बोतिषपुरमें प्रवेश किया ॥ १९ ॥ यहाँ पहुँचकर पगवान्का अधिक सेनावाले नरकासूरसे युद्ध हुआ जिसमें श्रीगोविन्दने उसके सहस्रों दैत्योंको मार डाला ॥ २० ॥ दैखदळका दछन करनेवाले महाबलबान् भगवान् चक्रपाधिने शस्त्रासको वर्षा करते हुए भूमिपुर नरकासुरके सुदर्शनचक्र फेंककर दो दुकड़े कर दिये ॥ २१ ॥ नरकासुरके गरते ही पृथिवी अदितिके कुण्डल लेकर उपस्थित हुई और श्रोजगत्रायसे कहने लगो॥ २२॥।

प्रथ्यवाच

यदाहमुद्धता नाथ त्वया सुकरमूर्तिना। त्वत्स्पर्शसम्भवः पुत्रस्तदायं मय्यजायत् ॥ २३

सोऽयं त्वयैव दत्तो मे त्वयैव विनिपातितः ।

गृहाण कुण्डले चेमे पालयास्य च सन्ततिम् ॥ २४

भारावतरणार्थाय पमैव भगवानिमम्।

अंशेन लोकमायातः प्रसादसुमुखः प्रभो ॥ २५

त्वं कर्ता च विकर्ता च संहर्ता प्रभवोऽप्ययः ।

जगतां त्वं जगद्भूपः स्तूयतेऽच्युत किं तव ॥ २६

ट्याप्रिट्यांच्यं क्रिया कर्ता कार्यं च भगवान्यश्रा । सर्वभूतात्पभूतस्य स्तूयते तय किं तथा ॥ २७

परमात्मा च भूतात्मा त्वमात्मा चाव्ययो भवान् ।

यथा तथा स्तुतिर्नाथ किमर्थं ते प्रवर्तते ॥ २८

प्रसीद सर्वभृतात्पन्नरकेण तु यत्कृतम्। तत्क्षम्यतामदोषाय त्वत्सुतस्त्वन्निपातितः ॥ २९

श्रीपराञार उद्याच

तथेति चोक्त्वा धरणीं भगवा-भृतभावनः ।

रत्नानि नरकावासाज्जश्राह मुनिसत्तम ॥ ३० कन्यापरे स कन्यानां षोडशातुलविक्रमः ।

शताधिकानि दद्दशे सहस्राणि महामुने ॥ ३१

चतुर्देष्टान्गजोञ्चाय्यान् षद्सहस्राञ्च दृष्टवान् । काम्बोजानां तथाधानां नियुतान्येकविंशतिष् ॥ ३२

ताः कन्यास्तास्तथा नागांस्तानधान् द्वारकां पुरीम् । प्रापयामास गोविन्दस्सद्यो नरककिङ्करै: ॥ ३३

ददशे बारुणं छत्रं तथैय मणिपर्वतम्।

हरिर्गरुडे पतगेश्वरे ॥ इ४ आरोपयामास आरुह्य च खयं कृष्णस्तत्यभागासहायवान् ।

अदित्याः कुण्डले दातुं जगाम त्रिदशालयम् ॥ ३५

पृथिकी बोली-हे नाथ! जिस समय वगहरूप धारणकर आपने पेरा उद्धार किया था उसी समय आपके

स्पर्शसे मेरे यह पुत्र उत्पन्न हुआ था ॥ २३ ॥ इस प्रकार आपहीने मुझे यह पुत्र दिया था और अब आपहीने इसको

नष्ट किया है; आप ये कृष्डल लीजिये और अब इसकी सन्तानको रक्षा कौजिये ॥ २४ ॥ हे प्रभो ! मेरे ऊपर प्रसन

होकर हो आप मेरा भार ततारनेके किये अपने अंशसे इस लोकमें अवतीर्ण हुए हैं ॥ २५ ॥ हे अच्युत ! इस जगत्के आप ही कर्ता, आप हो जिकर्ता (पोषक) और आप ही

हर्ता (संहारक) हैं; आप ही इसकी उत्पत्ति और रूपके

स्थान है तथा आप ही जगत्रूप हैं। फिर हम आपकी स्तुति किस प्रकार करें ? ॥ २६ ॥ है भगवन् ! जब कि

व्याप्ति, व्याप्य, क्रिया, कर्ता और कार्यरूप आप ही है तब सबके आत्मरूक्प आपकी किस प्रकार सृति को जा सकती है ? ॥ २७ ॥ हे नाथ ! जब आप ही परमात्मा,

आप ही भूतात्वा और आप ही अञ्यय जीवात्वा हैं तब किस वस्तुको लेकर आपको स्तृति हो सकती है ? ॥ २८ ॥ हे सर्वभूतात्मन् ! आप प्रसन होइये और

इस नरकासुरके सम्पूर्ण अपराध क्षमा कॉजिये। निश्चय ही आपने अपने पुत्रको निर्दोध करनेके छिये ही खर्य

मारा है ॥ २९ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले—हे मुनिश्रेष्ट ! तदनन्तर भगवान् भृतभावनने पृथिवीसे कहा---''तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो" और फिर नरकासुरके महरूसे नाना प्रकारके रल

लिये ॥ ३० ॥ हे महामुने ! अतुलविक्रम श्रीभगवान्ने नरकासरके कन्यान्तः परमें जांकर सोलह हजार एक सी कन्याएँ देखीं ॥ ३१ ॥ तथा चार दाँतवाले छः हजार

गजश्रेष्ट और इक्कोस काल काम्बोजदेशीय अध देखे ॥ ३२ ॥ उन बल्याओं, हाथियों और घोड़ोंको श्रीकरणचन्द्रने नरकास्एके सेक्कोंद्वारा तुरन्त ही द्वारकापुरी पहुँचवा दिया ॥ ३३ ॥

तद्वन्तर भगवानुने वरुणका छत्र और मणिपवैत देखा, इन्हें उड़ाकर उन्होंने पक्षिएज गरुडपर एवं लिया II ३४ II और सत्यभामाके सहित त्वयं भी उसीपर चढ़कर

अदितिके कुण्डल देनेके लिये खर्गलोकको गये ॥ ३५ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पश्चमेंऽशे एकोनत्रिशोऽध्यायः ॥ २९ ॥

तीसवाँ अध्याय

पारिजात-हरण

गरुडो वारुणं छत्रं तथैव मणिपर्वतम् । सभार्यं च हवीकेशं लीलबैव वहन्ययौ ॥ ततञ्ज्ञङ्गपुपाध्मासीतवर्गद्वारगतो उपतस्थुस्तथा देवास्सार्ध्यहस्ता जनार्दनम् ॥ स देवैरचिंतः कृष्णो देवमातुर्निवेशनम्। सिताभ्रशिखराकारं प्रविश्य दद्दशेऽदितिम् ॥ स तां प्रणम्य शकेण सह ते कुण्डलोत्तमे । ददौ नरकनाइां च इाइांसास्यै जनार्दनः ॥ ततः प्रीता जगन्याता धातारं जगतां हरिम् । तुष्टाबादितिरव्यप्रा कृत्वा तत्प्रवणं मनः ॥ 4 अदितिरुवाच नमस्ते पुण्डरीकाक्ष भक्तानामभयङ्कर । सनातनात्मन् सर्वात्मन् भृतात्मन् भृतभावन ॥ प्रणेतर्पनसो बुद्धेरिन्द्रियाणां गुणात्मक । त्रिगुणातीत निर्द्वेन्द्व शुद्धसत्त्व हृदि स्थित ॥ सितदीर्घादिनिइशेषकल्पनापरिवर्जित

जन्मादिभिरसंस्पृष्ट

श्रीपराशर उद्याच

स्वप्नादिपरिवर्जित् ॥ सन्व्या रात्रिरहो भूमिर्गगनं वायुरम्बु च। हुतारानो मनो बुद्धिर्भूतादिस्त्वं तथाच्युत ॥ सर्गस्थितिविनाशानां कर्ता कर्तृपतिर्भवान् । ब्रह्मविष्णुशिवाख्याभिरात्ममूर्तिभिरीश्वर

देवा दैत्यास्तथा यक्षा राक्षसास्सिद्धपत्रगाः । कृष्माण्डाश्च पिज्ञाचाश्च गन्धर्वा मनुजास्तथा ॥ ११ पशवश्च मृगाश्चेव पतङ्गाश्च सरीसृपाः । वृक्षगुल्यलता बह्व्यः समस्तास्तृणजातयः ॥ १२ स्बूला मध्यास्तथा सुक्ष्मास्सुक्ष्मात्सुक्ष्मतराञ्च ये । देहभेदा भवान् सर्वे ये केचित्पुर्गलाश्रयाः ॥ १३ <u> भाया</u> तवेयमज्ञातपरमार्थातिमोहिनी । अनात्मन्यात्मविज्ञानं यथा मुढो निरुद्ध्यते ॥ १४

औपराञरजी बोले—पक्षित्रज गरुड उस वारणकृत, मणिपर्वत और सत्यभामाके सहित श्रीकृष्ण-चन्द्रको लीलासे-ही लेकर चलने लगे ॥ १ ॥ खर्गके द्वार पर पहुँचते ही श्रीहरिने अपना शंख बजाया । उसका शब्द

सुनते ही देवगण अर्घ्य लेकर भगवान्के सामने उपस्थित हुए॥२॥ देवताओंसे पुजित होकर श्रीकृष्णचन्द्रजीने देवमाता अदितिके क्षेत मेघशिखरके समान गृहमें जाकर उनका दर्शन किया ॥ ३ ॥ तब श्रीजनार्दनने इन्द्रके साथ

देवमाताको प्रणामकर उसके अत्युत्तम कुण्डल दिये और उसे नरक-बधका वृतान्त सुनाया॥४॥ तदनन्तर जगन्माता अदितिने प्रसन्नतापूर्वक तन्भय होकर जगन्दाता श्रीहरिको अञ्चय भावसे स्तुति की ॥ ५ ॥ अदिति बोली—हे कमलनयन । हे भक्तींको अभय वंदनेवाले ! हे सनातनस्वरूप ! हे सर्वात्मन् ! है भृतस्वरूप ! हे भृतभावन ! आपको नमस्कार है ॥ ६ ॥ हे

मन, युद्धि और इन्द्रियोंके रचयिता ! हे गुणखरूप ! हे त्रिपुणातीत ! हे निर्द्रन्द्र ! हे शुद्धसत्त्व ! हे अन्तर्यामिन् !

आपको नमस्कार है॥ ७॥ हे नाथ ! आप क्षेत्र, दीर्घ आदि सम्पूर्ण कल्पनाओंसे रहित हैं, जन्मादि विकारीसे पृथक् हैं तथा स्तप्रादि अवस्थात्रयसे परे हैं; आपको ननस्कार है ॥ ८ ॥ हे अच्युत ! सन्ध्या, रात्रि, दिन, भूमि, आकाश, वायु, जल, अग्नि, मन, बुद्धि और अहंकार— ये सब आप ही हैं ॥ ९ ॥ हे ईश्वर ! आप ब्रह्मा, विष्णु और दिवनामक अपनी मृर्विबंसि जगतुकी उत्पत्ति, स्थिति और नाशके कर्ता है तथा आप कर्ताओंके भी स्वामी हैं॥ १०॥ देवता, दैत्य,

यक्ष, राक्षस, सिद्ध, पत्रम (नाम), कृष्माण्ड, पिशाच,

गन्धर्व, मनुष्य, पशु, मृग, पतङ्क, सरीसुप (साँप), अनेकों वृक्ष, गुल्म और लताएँ, समस्त तृणजातियाँ

तथा स्थूल मध्यम सूक्ष्म और सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म जितने देह-भेद पुर्गल (परमाण्) के आश्रित हैं वे सब आप ही हैं ॥ ११—१३ ॥ हे प्रधो ! आपकी माना ही प्रधार्थतत्त्वके न जाननेवाले पुरुषोंको मोहित करनेवाली है जिससे मृद पुरुष अनात्मामें आत्मबृद्धि करके बन्धनमें पड़ जाते अखे स्वमिति भावोऽत्र यत्युंसामुपजायते । अहं ममेति भावो यत्प्रायेणैवाभिजायते ।

संसारमातुर्पायायास्तवैतन्नाथ चेष्टितम् ॥ १५

यै: स्वधर्मपरैर्नाथ नरैराराधितो भवान् । ते तरन्यस्विलामेतां मायामात्मविमुक्तये ॥ १६

ब्रह्माद्यास्सकला देवा मनुष्याः पश्चवस्तथा ।

विष्णुमायामहावर्तमोहान्धतमसावृताः

आराध्य त्वामभीप्सन्ते कामानात्मभवक्षयम् ।

बदेते पुरुषा माया सैवेयं भगवंस्तव ॥ १८

मया त्वं पुत्रकामिन्या वैरिपक्षजवाय च । आराधितो न मोक्षाय मायाविलसितं हि तत् ॥ १९

कौपीनाच्छादनप्राया वाञ्छा कल्पहुमादपि । जायते यदपुण्यानां सोऽपराधः स्वदोषजः ॥ २०

तत्प्रसीदास्विलजगन्मायामोहकराव्यय अज्ञानं ज्ञानसद्धावभूतं भूतेश नाशय ॥ २१

नमस्ते चक्रहस्ताय शार्ङ्गहस्ताय ते नमः । गदाहस्ताय ते विष्णो शृङ्खहस्ताय ते नमः ॥ २२

एतत्पञ्चामि ते रूपं स्थूलचिद्धोपलक्षितम् । न जानामि परं यत्ते प्रसीद परमेश्वर ॥ २३ श्रीपराइस उचाच

अदित्यैवं स्तुतो विष्णुः प्रहस्याह सुरारणिप्^र । माता देवि त्वमस्माकं प्रसीद वरदा भव ॥ २४

अदितिरुवाच एवपस्तु तथेच्छा ते त्वमशेषैस्पुरासुरै: । अजेयः पुरुषव्याघ्र मर्त्यलोके भविष्यसि ॥ २५ श्रीपराशर उवाच

ततः कृष्णस्य पत्नी च शक्रपत्न्यासहादितिम् । सत्यभामा प्रणम्याह प्रसीदेति पुनः पुनः ॥ २६ अदितिरूवाच मत्रसादाञ्च ते सुभू जरा वैरूप्यमेव वा ।

भविष्यत्यनवद्याङ्कि सुस्थिरं नवयौवनम् ॥ २७ |

हैं ॥ १४ ॥ हे मध्य ! पुरुषको जो अनातामें आत्मवृद्धि और 'पैं-मेरा' आदि भाव प्रायः उत्पन्न होते हैं वह सब आपकी जगजननी मायाका ही विस्त्रस है ॥ १५ ॥ है नाथ ! जो स्वधर्मपरायण पुरुष आपकी आराधना करते हैं

वे अपने मोक्षके लिये इस सम्पूर्ण मानाको पार कर जाते हैं ॥ १६ ॥ बहुत आदि सम्पूर्ण देवगण तथा मनुष्य और पदा आदि सभी विध्युमायारूप महान् आवर्तमे पड्कर

मोहरूप अन्यकारसे आवृत हैं ॥ १७ ॥ हे भगवन् ! [जन्म और मरणके चक्रमें पड़े हुए] ये पुरुष जीवके भव-बन्धनको नष्ट करनेवाले आपकी आराधना करके भी जो नाना प्रकारकी कामनाएँ ही माँगते हैं यह आपकी माया ही है।। १८॥ मैंने भी पुत्रोंकी जयकामनासे राजुपक्षको

पराजित करनेके लिये ही आपकी आराधना की है, मीक्षके लिये नहीं। यह भी आपकी मायाका ही विलास है ॥ १९ ॥ पुण्यहीन पुरुषीको जो कल्पवृक्षसे भी कौपीन और आच्छादन-बखमात्रकी ही कामना होती है यह उनका कर्म-दोष-जन्य अपराध ही है ॥ २० ॥

हे अखिलजगन्माया-मोहकारी अञ्चय प्रभी ! आप प्रसन्न होइये और हे भूतेश्वर ! 'मैं ज्ञानवान् हूँ' मेरे इस अज्ञानको नष्ट कीजिये ॥ २१ ॥ हे चक्रपाणे ! आपको रमस्कार है, हे झार्ड्सधर! आपको नमस्कार है; हे गदाधर ! आपको नमस्कार है; हे श्रोखपाणे ! हे विष्णो ! आपको बारम्बार नमस्कार है ॥ २२ ॥ मैं स्थूल चिह्नोंसे

प्रतीत होनेवाले आपके इस रूपको ही देखती है; आपके

वास्तविक परस्वरूपको मैं नहीं जानती; हे परपेश्वर ! आप

प्रसन होइये ॥ २३ ॥ **श्रीपराशरजी बोले**—अदितिद्वारा इस प्रकार स्तुति किये जानेपर भगवान् विष्णु देवमातासे हँसकर बोले—"हे देवि ! तुम तो हमारी माता हो; तुम प्रसन्न

होकर हमे वरदायिनी होओ'' ॥ २४ ॥ अदिति बोली—हे पुरुषसिंह! तुम्हारी इच्छा पूर्ण हो। तुम मर्त्यलोकभे सम्पूर्ण सुरासुरोसे अजेय

होगे ॥ २५ ॥ श्रीपराशरजी बोले-तदनत्तर शक्रपती शचीके सहित कृष्णप्रिया सत्यभामाने अदितिको पुनः-पुनः प्रणाम

करके कहा—"माता ! आप प्रसन्न खेड्ये" ॥ २६॥ अदिति बोली—हे सुन्दर भृक्टिवाली! मेरी

१ - दीपयिवीम

श्रीपराशर उवाच

अदित्या तु कृतानुज्ञो देवराजो जर्नादनम्। वधावत्यूजवामास बहुमानपुरस्तरम् ॥ २८

शची च सत्यभामायै पारिजातस्य पुष्पकम् ।

न ददौ मानुषीं मत्वा स्वयं पुष्पैरलङ्कृता ॥ २९

ततो ददर्श कृष्णोऽपि सत्यभामासहायवान् ।

देखोद्यानानि इद्यानि नन्दनादीनि सत्तम ॥ ३० ददर्श च सुगन्धाढ्यं मञ्जरीपुज्जधारिणम्।

नित्याह्वादकरं ताम्रबालपल्लवशोभितम् ॥ ३१ मध्यमानेऽपृते जातं जातरूपोपमत्यचम् ।

पारिजातं जगन्नाथः केशवः केशिसूदनः ॥ ३२ तुतोष परमप्रीत्या तरुराजमनुत्तमम्। तं दृष्टा प्राह गोविन्दं सत्यभामा द्विजोत्तम । कस्मात्र द्वारकामेष नीयते कृष्ण पादपः ॥ ३३

यदि चेत्त्वद्वचः सत्यं त्वमत्यर्थं प्रियेति मे । मद्रेहनिष्कुटार्थाय तद्यं नीयतां तरुः ॥ ३४ न मे जाम्बवती तादगभीष्टा न च रुक्मिणी । सत्ये यथा त्वमित्युक्तं त्वया कृष्णासकृत्रियम् ॥ ३५

सत्यं तद्यदि गोविन्द नोपचारकृतं मम । तदस्तु पारिजातोऽवं मम गेहविभूषणम् ॥ ३६ बिभ्रती पारिजातस्य केशपक्षेण मञ्जरीम् । सपत्नीनामहं मध्ये शोभेयमिति कामये ॥ ३७

श्रीपराशर उयाच इत्युक्तसः प्रहस्यैनां पारिजातं गरुत्पति । आरोपयामास हरिस्तमूचुर्वनरक्षिण: ॥ ३८ भो शची देवराजस्य महिषी तत्परिग्रहम् ।

पारिजातं न गोविन्द हर्तुमहंसि पादपम् ॥ ३९ उत्पन्नो देवराजाय दत्तस्तोऽपि ददौ पुनः । महिच्ये सुमहाभाग देख्ये शच्ये कुतुहलात् ॥ ४० श्चीविभूषणार्थाय देखेरमृतमन्थने ।

उत्पादितोऽयं न क्षेमी गृहीत्वैनं गमिष्यसि ॥ ४१

कुमासे तुझे कभी कुद्धावस्था या विरूपता व्याप्त न होगी । हे अनिन्दिताङ्गि ! तेरा नवयौवन सदा स्थिर रहेगा ॥ २७ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले--तदनत्तर अदितिको आज्ञासे

देवराजने अत्यन्त आदर-सत्कारके साथ श्रीकृष्णचन्द्रका पूजन किया ॥ २८ ॥ किन्तु कल्पवृक्षके पुष्पोसे अलङ्कता इन्द्राणीने सत्यभामाको मानुषी समझकर वे पुषा न दिये ॥ २९ ॥ हे साधुश्रेष्ठ ! तदननार सत्यभामाके सहित

श्रीकृष्णचन्द्रने भी देवताओंके नन्दन आदि मनोहर उद्यानोको देखा ॥ ३० ॥ यहाँपर केशिनिष्दन जगनाथ श्रीकृष्णने सुगन्धपूर्ण मञ्जरी-पुज्ञधारी, नित्बाह्वादकारी और ताम्रवर्ण बाल पत्तीसे सुशोभित, अमृत-मन्धनके समय प्रकट हुआ तथा सुनहरी छालवाला पारिजात-वृक्ष

देखा ॥ ३१-३२ ॥ हे द्विजोत्तम ! उस अत्यत्तम बुधराजको देखकर परम प्रीतिवरा सलभामा अति प्रसन्न हुई और श्रीगोविन्दसे बोली—"हे कृष्ण ! इस वृक्षको द्वारकापुरी क्यों नहीं ले चरुते ? ॥ ३३ ॥ यदि आपका यह बचन कि 'तुम ही मेरी अल्पन्त त्रिया हो' सत्य है तो मेरे गृहोद्यानमें लगानेके लिये इस वृक्षकों ले चलिये ॥ ३४ ॥ हे कृष्ण ! आपने कई बार मुझसे यह प्रिय वाक्य कहा है कि 'हे सत्ये । भुझे त् जितनी प्यारी है उतनी न जाम्बवती है और न रुक्मिणी हो' ॥ ३६ ॥ हे गोविन्द ! यदि आपका यह कथन सत्य है—केवल मुझे बहलाना ही नहीं है—तो यह पारिजात-

अन्य सप्रवियोंमें सुशोधित होऊँ''॥ ३७ ॥ श्रीपराद्वारजी बोले-सत्यधामके इस प्रकार कहनेपर श्रीहरिने हँसते हुए उस पारिजात-वृक्षको गरुडपर रख लिया; तब कदनवनके रक्षकोंने कहा— ॥ ३८॥ "हे गोविन्त् ! देवराज इन्द्रकी पत्नी जो महारानी राची है यह पारिजात-बुक्ष उनकी सम्पत्ति है, आप इसका हरण

वृक्ष भेरे गृहका भूषण हो ॥ ३६ ॥ मेरी ऐसी इच्छा है कि में अपने केश-करणपोंगे पारिजात-पुष्य गुँधकर अपनी

न कीजिये ॥ ३९ ॥ शीर-समुद्रसे उत्पन्न होनेके अनन्तर यह देवराजको दिया गया था: फिर हे महाभाग ! देवराजने कुतुहलबश इसे अपनी महिषी शबीदेवीको दे दिया है

॥ ४० ॥ समुद्र-मञ्चनके समय शबीको विभूषित करनेके लिये ही देवताओंने इसे उत्पन्न किया था: इसे लेकर आप कुशलपूर्वक नहीं जा सकेंगे॥४१॥

देवराजो मुखप्रेक्षी यस्यास्तस्याः परिवहम् । मौड्यात्प्रार्थयसे क्षेमी गृहीत्वैनं हि को व्रजेत् ॥ ४२ अवश्यमस्य देवेन्द्रो निष्कृति कृष्ण यास्यति । वज्रोद्यतकरं शक्रमनुयास्यन्ति चामराः ॥ ४३ सकलैदेवैर्विप्रहेण तवाच्युत । विपाककट्ट यत्कर्म तन्न शंसन्ति पण्डिताः ॥ ४४ श्रीपरास्त्र उवाच इत्युक्ते तैरुवाचैतान् सत्यभामातिकोपिनी । का शबी पारिजातस्य को वा शकस्भुराधिपः ॥ ४५ सामान्यसर्वलोकस्य यद्येषोऽमृतमन्थने । समुत्पन्नस्तरुः कस्मादेको गृह्वाति वासवः ॥ ४६ यथा सुरा यथैवेन्द्रयंथा श्रीर्वनरक्षिण:। सामान्यसर्वलोकस्य पारिजातस्तथा हुमः ॥ ४७ भर्तृबाहुमहागर्वाहुणद्ध्येनमधो राजी । तत्कथ्यतामले क्षान्त्या सत्या हारयति द्रमम् ॥ ४८ कथ्यतां च द्रतं गत्वा पौलोम्या वचनं मम । सत्यभामा वदत्येतदिति गर्वोद्धताक्षरम् ॥ ४९ यदि त्वं दयिता भर्तुर्यदि वश्यः पतिस्तव । मद्धर्तुर्हरतो वृक्षं तत्कारय निवारणम् ॥ ५० जानामि ते पति शक्तं जानामि त्रिदशेश्वरम् । पारिजातं तथाय्येनं मानुषी हारयामि ते ॥ ५१ श्रीपराशस उताच इत्युक्ता रक्षिणो गला शच्याः प्रोचुर्यशोदितम् । श्रुत्वा चोत्साहयामास शबी शक्रं सुराधिपम् ॥ ५२ ततस्समस्तदेवानां सैन्यैः परिवृतो हरिप्। प्रययौ पारिजातार्थमिन्द्रो योद्धं द्विजोत्तम ॥ ५३ परिधनिश्चिंशगदाशुलवरायुधाः । बभूवुस्बिदशासाजाः शक्रे वज्रकरे स्थिते ॥ ५४ ततो निरीक्ष्य गोविन्दो नागराजोपरि स्थितम् । शक्रं देवपरीवारं युद्धाय समुपस्थितम् ॥ ५५

वकार राङ्क्षनिर्धोषं दिशङ्शब्देन पुरयन्।

मुमोच सरसङ्घातान्सहस्रायुतशरिशतान् ॥ ५६

अक्ट्य ही उनका अनुगमन करेंगे॥४३॥ अतः हे अच्युत ! समस्त देवताओंके साथ रार बदानेसे आपका कोई लाभ नहीं; क्योंकि जिस कर्मका परिणाए कट होता है, पण्डितजन उसे अच्छा नहीं कहते " ॥ ४४ ॥ श्रीपराद्वारजी बोले---उद्यान-रक्षकीके इस प्रकार कहनेपर सलाभामाने अल्बन्त क्राद्ध होकर कहा—''दाबी अथवा देवराज इन्द्र ही इस पारिजातके कीन होते हैं 🤈 ॥ ४५ ॥ यदि यह अमृत-मन्धनके समय उत्पन्न हुआ है, ती सबकी समान सम्पत्ति है। अकेला इन्द्र ही इसे कैसे ले सकता है ? ॥ ४६ ॥ और वनरक्षको । जिस प्रकार [समुद्रसे उत्पन्न हुए] मदिरा, चन्द्रमा और लक्ष्मीका सब लोग समानतासे भोग करते हैं उसी प्रकार पारिजातं-वृक्ष भी सभीकी सम्पत्ति है ॥ ४७ ॥ यदि पतिके बाहबलसे गर्बिता होकर शबीने ही इसपर अपना अधिकार जमा रखः है तो उससे कहना कि सत्यभामा उस वृक्षको हरण कराकर लिये जाती है, तुन्हें क्षमा करनेकी आवश्यकता नहीं है ॥ ४८ ॥ अरे माल्यि ! तुम तुरन्त जाकर मेरे ये शब्द शबीसे कही कि सत्यभामा अत्यन्त गर्वपूर्वक कड़े अक्षरोंमें यह कहती है कि यदि तुम अपने पतिको अत्यन्त प्यारी हो और वे तुम्हारे वशीभृत हैं तो मेरे पतिको पारिजात हरण करनेसे सेके ॥ ४९-५० ॥ बै तुंग्हारे पति शकको जानती है और यह भी जानती है कि से देवताओंके स्त्रामी हैं तथापि मैं मानवी ही तुन्तरे इस पारिजात-वृक्षको लिये जाती हुँ" ॥ ५१ ॥ श्रीपराशरजी बोले—सत्यभामके इस प्रकार कहनेपर वनरक्षकोंने राचीके पास जाकर उससे सम्पर्ण वतान्त ज्यों-का-त्यों कह दिया। यह सब सुनकर शबीने अपने पति देवराज इन्द्रको उत्साहित किया ॥ ५२ ॥ है द्विजोत्तम ! तब देवराज इन्द्र पारिजात-वृक्षको छुड्डानेके लिये सम्पूर्ण देवसेनाके सहित श्रीहरिसे लड़नेके लिये चले ॥ ५३ ॥ जिस समय इन्द्रने अपने हाधमें क्व द्विया उसी समय सम्पूर्ण देवगण परिष, निस्तिक्ष, गदा और शुरू आदि अख-शस्त्रोसे सुसज्जित हो गये ॥ ५४ ॥ तदनन्तर देवसेनासे विरे हुए ऐसवतारूढ इन्द्रको युद्धके लिये उद्यत

देख श्रीगोबिन्दर्ने सम्पूर्ण दिशाओंको शब्दायमान करते

देवराज भी जिसका भुँह देखते रहते हैं उस शबीकी

सम्पत्ति इस पारिजातकी इच्छा आप मृहताहीसे करते हैं; इसे लेकर भला कौन सकुराल जा सकता है ? ॥ ४२ ॥

हे कृष्ण ! देवराज इन्द्र इस बृक्षका बदला चुकानेके लिये

अवस्य ही बज़ लेकर उद्यत होंगे और फिर देवगण भी

पृश्चिय्यां पातयामास भगवान् देवकीसृतः ॥ ६० शिबिकां च धनेशस्य चक्रेण तिलशो विभुः । चकार शौरिरकं च दृष्टिदृष्ट्रहतौजसम्।। ६१ नीतोऽब्रिइझीततां बाणैर्द्राविता वसवो दिशः । चक्कविच्छित्रशुलाया रुद्धा भुवि निपातिताः ॥ ६२ साध्या विश्वेऽय मस्त्रो गन्धर्वाञ्चेव सायकैः। शार्ङ्गिणा प्रेरितैरस्ता व्योग्नि शाल्मलितूलवत् ॥ ६३ गरुत्पानपि तुण्डेन पक्षाभ्यां च नखाङ्करै: । भक्षयंसाडबन् देवान् दारयंश्च चचार वै ॥ ६४ तत्त्रशरसहस्रोण देवेन्द्रमधुसूदनौ । परस्परं ववर्षाते धाराभिरिव तोबदौ ॥ ६५ ऐरावतेन गरुडो युयुधे तत्र सङ्कुले। देवैस्समस्तर्युयुधे शक्रेण च जनार्देन: ॥ ६६ भिन्नेषुशेषबाणेषु शस्त्रेषुस्त्रेषु च त्वरन्। जग्राह वासवो वर्त्र कृष्णश्चकं सुदर्शनम् ॥ ६७ ततो हाहाकृतं सर्व त्रैलोक्यं द्विजसत्तमः। वज्रचक्रकरौ दृष्ट्या देवराजजनार्दनौ ॥ ६८ क्षिप्तं वज्रमथेन्द्रेण जग्राह भगवान्हरिः। न मुमोच तदा चक्रं शक्रं तिष्ठेति चात्रवीत् ॥ ६९ प्रणष्टवत्रं देवेन्द्रं गरुडक्षतवाहनम् । सत्यभाषाङ्गवीद्वीरं पलायनपरायणम् ॥ ७० त्रैलोक्येश न ते युक्तं शचीभर्तुः पलायनम् । पारिजातस्रगाभोगा त्वामुपस्थास्यते ञ्ची ॥ ७१

ततो दिशो नभक्षैव दुष्टा शरशतैश्चितप्।

एकैकमस्त्रं शस्त्रं च देवैर्मुक्तं सहस्रशः।

पाशं सलिलराजस्य समाकुष्योरगाञ्चनः।

यमेन प्रहितं दण्डं गदाविक्षेपखण्डितम् ।

मुमुचुस्त्रिदशासर्वे हास्त्रशस्त्राण्यनेकशः ॥ ५७

चिच्छेद लीलयैवेशो जगता मधुसूदनः ॥ ५८

चकार खण्डशश्चन्या बालपन्नगदेहवत् ॥ ५१

हुए शङ्ख्यान की और हजारों-लाखों तीखे बाण छोड़े ॥ ५५-५६ ॥ इस प्रकार सम्पूर्ण दिशाओं और आन्त्रशको सँकड़ों वाणोंसे पूर्ण देख देवताओंने अनेकी अस-इास छोड़े ॥ ५७ ॥ त्रिलोकीके स्वामी श्रीमधूसुदनने देवताओंके छोड़े हए प्रत्येक अख-राखके लीलासे ही हजारों ट्रकड़े कर दिये ॥ ५८ ॥ सर्पाहारी गरुडने जल्प्रधिपति वरुणके पाशक) खींचकर अपनी चौंचसे सर्पके बरोके समान उसके कितने ही टुकड़े कर डाले ॥ ५९ ॥ श्रीदेवकी-नन्दनने यमके फेंके हुए दण्डको अपनी गदासे खण्ड-खण्ड कर पृथिवीपर गिरा दिया॥६०॥ कुबेरके विमानको भगवान्ने सुदर्शनचक्रद्वार तिल-तिल कर डाला और सूर्यको अपनी तेजोमय दृष्टिसे देखकर ही निस्तेज कर दिया॥ ६१॥ भगवान्ने तदनन्तर याण बरसाकर अप्रिको शीतल कर दिया और वसुओंको दिशा-विदिशाओंमें भगा दिया तथा अपने चकसे त्रिशुलोकी नोंक काटकर रुद्रगणको पृथिवीपर गिरा दिया ॥ ६२ ॥ भगवानके चलाये हुए वाणीसे साध्यगण, विश्वेदेवगण, महदूरा और गन्धवंगण सेमलको रूईके समान आकाशमें ही लीन हो गये॥ ६३॥ श्रीभगवानुके साथ गरङजी भी अपनी चोंच, पहु और पड़ोंसे

देवताओंको खाते, मारते और फाडते फिर रहे थे ॥ ६४ ॥ फिर जिस प्रकार दो मेघ जलकी धाराएँ बरसाते हीं उसी प्रकार देवराज इन्द्र और श्रीमधुसुदन एक दुसरेपर बाण बरसाने छमे ॥ ६५ ॥ उस युद्धमे मरुङजी ऐसवतके साथ और श्रीकृष्णचन्द्र इन्द्र तथा सम्पूर्ण देवताओंके साथ लंड रहे थे।। ६६॥ सम्पर्ण वाणोंके चक जाने और अस्र शस्त्रोके कट जानेपर इन्द्रने शीवतासे क्या और कृष्णने सुदर्शनचक्र हाथमें लिया ॥ ६७ ॥ हे द्विजश्रेष्ट ! उस समय सम्पूर्ण जिलोकीमें इन्द्र और कृष्णचन्द्रको क्रमशः क्रज और चक्र लिये हुए देखकर हाहाकार मच गया ॥ ६८ ॥ श्रीहरिने इन्द्रके छोडे हुए बज्जको अपने हाथोंसे पकड़ लिया और खबं चक्र न छोड़कर इन्द्रसे

इस प्रकार क्या छिन जाने और अपने बाहन ऐरावतके गरुडहारा क्षत-विश्वत हो जानेके कारण भागते हुए चीर इन्द्रसे सत्यभामाने कहा— ॥ ७० ॥ ''हे बैलोक्येश्वर ! हुन

कहा—"अरे, उहर !" ॥ ६९ ॥

शयीके पति हो, तुन्हें इस प्रकार युद्धमें पीठ दिखलाना उचित नहीं है। तुम भागो मत, पारिजात-पुष्पोंकी मालासे विभिषता होकर राची शीघ्र ही तुम्हारे पास आवेगी ॥ ७३ ॥

कीदृशं देवराज्यं ते पारिजातस्रगुञ्ज्वलाम् । अपद्यतो यथापूर्वं प्रणयाभ्यागतां श्रचीम् ॥ ७२ अर्ल राक्र प्रयासेन न ब्रीडां गन्तुमहींस । नीयतां पारिजातोऽयं देवाससन्तु गतव्यथाः ॥ ७३ पतिगर्वाबलेपेन बहमानपुरस्तरम् । न ददर्श गृहं यातामुपचारेण मां शची ॥ ७४ स्त्रीत्वादगुरुचित्ताहं स्वभर्त्द्रलाघनापरा । ततः कृतवती शक्त भवता सह विग्रहम् ॥ ७५ तदलं पारिजातेन परस्वेन हतेन मे। रूपेण गर्विता सा तु भर्त्रा का स्त्री न गर्विता ॥ ७६ श्रीपराजर उवाच इत्युक्तो वै निबवृते देवराजस्तवा द्विज । प्राह चैनामलं चण्डि सस्युः खेदोक्तिविस्तरैः ॥ ७७

न चापि सर्गसंहारस्थितिकर्ताखिलस्य यः । जितस्य तेन में ब्रीडा जायते विश्वरूपिणा ॥ ७८ यस्माजगत्सकलमेतदनादिमध्या-

तेनोद्धवप्रलयपालनकारेणन ब्रीडा कथं भवति देवि निराकृतस्य ॥ ७१ सकलभुवनसृतिमृतिंरल्याल्पसुक्ष्मा विदितसकलवेदैर्जायते बस्य नान्यै: ।

द्यस्मिन्यतश्च न भविष्यति सर्वभूतात्।

तमजमकृतमीशं शाश्चतं स्वेच्छयैनं जगदुपकृतिमत्यं को विजेतुं समर्थः ॥ ८०

अब प्रेमवदा अपने पास आयी हुई शक्तीको पहलेकी भाँति पारिजात-पृथ्मको मालासे अलङ्कत न देखकर तुम्हें देवराजत्वका क्या सुख होगा ? ॥ ७२ ॥ हे शक्र ! अब तुम्हे अधिक प्रयास करनेकी आवश्यकता नहीं है, तुम

सङ्कोच मत करो; इस पारिजात-वृक्षको ले जाओ। इसे पाकर देवगण सन्तापरहित हों ॥ ७३ ॥ अपने पतिके बाहुबलसे अत्यन्त गर्विता दाचीने अपने घर जानेपर भी मुझे कुछ अधिक सम्मानकी दृष्टिसे नहीं देखा था ॥ ७४ ॥ स्त्री होनेसे मेरा चित भी अधिक गम्भीर नहीं है. इसलिये मैंने भी अपने पतिका गौरब प्रकट करनेके लिये ही तुमसे

यह लड़ाई ठानी थी॥ ७५॥ मुझे दूसरेको सम्पत्ति इस पारिजातको ले जानेकी क्या आवश्यकता है ? राची अपने रूप और पतिके द्यरण गर्विता है तो ऐसी कौन-सी

स्त्री है जो इस प्रकार गर्वीकी न हो ?" ॥ ७६ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—हे हिन ! सत्यभामके इस प्रकार कहनेपर देवराज लौट आये और बोले—''हे क्रोंशिते ! मैं तुन्हारा सुहृद् हूँ, अतः मेरे लिये ऐसी वैमनस्य बदानेवासी उक्तियोंकै विस्तार करनेका कोई प्रयोजन नहीं है ? ॥ ७७ ॥ जो सम्पुर्ण जगतुकी उत्पत्ति, स्थिति और संहार करनेवाले हैं उन विश्वरूप प्रभुक्ते पराजित होनेमें भी मुझे कोई सङ्कोच नहीं है॥ ७८॥ जिस आदि और मध्यरहित प्रभुसे यह सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ है, जिसमें यह स्थित है और फिर जिसमें लीन होकर अन्तमें यह न रहेगा; हे देखि ! जगत्की उत्पत्ति, प्रख्य और पालनके कारण उस परमात्मासे ही परास्त होनेमें मुझे कैसे लज्जा हो सकती है ? ॥ ७९ ॥ जिसको अत्यन्त अल्प और सुक्ष्म

मृर्तिको, जो सम्पूर्ण जगत्को उत्पन्न करनेवाली है, सम्पूर्ण

वेदोंको जाननेवाले अन्य पुरुष भी नहीं जान पाते तथा

जिसने जगत्के उपकारके लिये अपनी इच्छासे ही

मनुष्यरूप धारण किया है उस अजन्या, अकर्ता और नित्य

ईंश्वरको जीवनेमें कौन समर्थ है ?"॥८०॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पछ्छमेंऽदो त्रिद्योऽध्यायः ॥ ३० ॥

इकतीसवाँ अध्याय

भगवान्का द्वारकापुरीमें लौटना और सोलह हजार एक सौ कन्याओंसे विवाह करना

श्रीपराचार उवाच संस्तृतो भगवानित्धं देवसूजेन केशवः ।

प्रहस्य भावगम्भीरमुवाचेन्द्रं द्विजोत्तम ॥

श्रीकृष्ण उचाच

देवराजो भवानिन्द्रो वयं मर्त्या जगत्पते।

क्षन्तव्यं भवतैवेदमपराधं कृतं मम ॥

पारिजाततरुशायं नीयतामुचितास्पदम् ।

गृहीतोऽयं मयां शक्त सत्यावचनकारणात् ॥

वज्रं चेदं गृहाण त्वं यदत्र प्रहितं त्वया। तर्वेवैतसहरूणं शक वैरिविदारणम् ॥

विमोहबसि मामीश मत्येंऽहमिति कि वदन् ।

जानीमस्त्वां भगवतो न तु सुक्ष्मविदो वयम् ॥

योऽसि सोऽसि जगत्त्राणप्रवृत्तो नाथ संस्थितः ।

जगतञ्ज्ञाल्यनिष्कर्षे करोष्यसुरसुद्रन ॥

नीयतां पारिजातोऽयं कृष्ण द्वारवर्ती पुरीम् । मर्त्यलोके त्वया त्यक्ते नायं संस्थास्यते भृवि ॥

देव देव जगन्नाथ कृष्ण विष्णो महाभुज । शङ्कचकगदापाणे अमस्वैतद्व्यतिक्रमम्॥

औपरादार उतान

तथेत्युक्त्वा च देवेन्द्रमाजगाम भुवं हरिः । प्रसक्तैः सिद्धगन्धर्वैः स्तुयमानः सुरर्विभिः ॥

ततस्राङ्कभूपाध्याय द्वारकोपरि संस्थितः । हर्बमुत्पादयामास द्वारकावासिनां द्विज ॥ १०

अवतीर्याधः गरुडात्सत्यभामासहायवान् ।

निष्कुटे स्थापयामास पारिजातं महातरुम् ॥ ११

यमभ्येत्य जनस्सवों जाति स्मरति पौर्विकीम् ।

बास्यते यस्य पुष्पोत्यगन्धेनोर्वी त्रियोजनम् ॥ १२

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे द्विजोत्तम ! इन्द्रने जब इस प्रकार स्तृति की तो भगवान् कृष्णचन्द्र गम्भीर भावसे

हैंसते हुए इस प्रकार बोले— ॥ १ ॥ **श्रीकृष्णजी बोले**—हे जगत्मते ! आप देवराज इन्द्र

हैं और हम मरणधर्मा मनुष्य हैं। हमने आपका जो अपराध किया है उसे आप क्षमा करें ॥ २ ॥ मैंने जो यह

पारिजात-वक्ष लिया था उसे इसके थोग्य स्थान (नन्दनवन) को ले जाइये। हे शक्त ! मैंने तो इसे

सत्यभामके कहनेसे ही ले लिया था ॥ ३ ॥ और आपने जी वज़ फेंका था उसे भी ले लीजिये, क्योंकि हे शक ! यह राष्ट्रओंको नष्ट करनेवाला शस्त्र आवहोका है ॥ ४ ॥

इन्द्र बोले — हे ईश ! 'मैं मनुष्य है' ऐसा कहकर मुझे क्यों मोत्रित करते हैं ? हे भगवन् ! मैं तो आपके इस

सगुण स्वरूपको ही जानता हैं, हम आपके सुक्ष्म स्वरूपको जाननेवाले नहीं है ॥ ५ ॥ हे नाथ ! आप जो है वहीं हैं. [हम तो इतना ही जानने हैं कि] हे दैत्यदरून !

आप लोकरकार्थे तत्पर हैं और इस संसारके काँटीकरे निकाल रहे हैं॥ ६ ॥ हे कृष्ण ! इस पारिजात-वृक्षको आप हारकापुरी ले जाइये, जिस समय आप मर्त्यलोक छोड़ देंगे, उस समय वह भुलोंकमें नहीं रहेगा ॥ ७ ॥ हे

देवदेव ! हे जगनाथ ! हे कृष्ण ! हे विष्णो ! हे महाबाहो ! हे शहुच्क्रगदापाणे ! मेरी इस भृष्टताको क्षमा कोजिये ॥ ८ ॥

श्रीपराशरजी बोले-तदनन्तर श्रीहरि देवराजसे 'तुम्हारी जैसी इच्छा है वैसा ही सही' ऐसा कहकर सिद्ध, गन्धर्व और देवर्षिगणसे स्तृत हो भूलेंकमें चले

आये ॥ ९ ॥ है द्विज ! द्वारकांपूरीके ऊपर पहुँचकर श्रोकृष्णचन्द्रने [अपने आनेकी सुचना रेते हुए] शङ्ख वजाकर द्वारकायासियोंको आनन्दित किया॥ १०॥

तदनन्तर सत्यभागांके सहित भस्डसे उतरकर उस पारिजात-महाबुक्षको [सत्यभागाके] गुहोद्यानमें लगा

दिया ॥ ११ ॥ जिसके पत्त आकर सब मनुष्योंको अपने पूर्वजन्मका स्मरण हो आता है और जिसके पुष्पोंसे निकलो हुई गन्धसे तीन योजनतक पृथियो सुगन्धित रहती ततस्ते यादवास्सर्वे देहबन्धानमानुषान् । दृद्शुः पादपे तस्मिन् कुर्वन्तो मुखदर्शनम् ॥ १३ किङ्करैस्समुपानीतं हस्यश्वादि ततो धनम् । विभज्य प्रदर्वे कृष्णो बान्धवानां महामितः ॥ १४ कन्याश्च कृष्णो जप्राह नरकस्य परिव्रहान् ॥ १५ ततः काले शुभे प्राप्ते उपयेमे जनार्दनः । ताः कन्या नरकेणासन्सर्वतो यास्समाहताः ॥ १६ एकस्मिन्नेव गोविन्दः काले तासां महामुने । जप्राह विधिवत्पाणीन्पृथयोहेषु धर्मतः ॥ १७ षोडशस्त्रीसहस्राणि शतमेकं ततोऽधिकम् । तावन्ति चक्रे रूपाणि भगवान् मधुसूदनः ॥ १८

ममैब पाणियहणं मैत्रेय कृतवानिति ॥ १९ निशासु च जगत्त्रष्टा तासा गेहेषु केशवः । उवास वित्र सर्वासां विश्वरूपधरो हरिः ॥ २०

एकैकमेव ताः कन्या मेनिरे मधुसुद्नः ।

है।। १२ ॥ यादबोंने उस वृक्षके पास जाकर अपना मुख देखा तो उन्हें अपना इतीर अमानुष दिखलायी दिखा।। १३ ॥

दिया ॥ १३ ॥

तदनत्तर महामति श्रीकृष्णजन्द्रने नरकासुरके सेवकोद्वारा रूपये हुए हाथी-धोड़े आदि धनको अपने बन्धु-बान्धवोमें बाँट दिया और नरकासुरकी बरण की हुई कन्याओंको स्वयं रुं रिया और नरकासुरकी बरण की हुई कन्याओंको स्वयं रुं रिया ॥ १४-१५ ॥ सुभ समय प्राप्त होनेपर श्रीजनार्दनने उन समस्त कन्याओंके साथ, जिन्हें नरकासुर बरुत्त हर राया था, विवाह किया ॥ १६ ॥ हे महामूने ! श्रीगोविन्दने एक ही समय पृथक्-पृथक् भवनीमें उन सबके साथ विधिवत् धर्मपूर्वक पाणियहण किया ॥ १० ॥ वे सोरूह हजार एक सौ खियाँ थीं; उन सबके साथ पाणियहण करते समय श्रीमधुसूदनने इतने ही खप बना रिये ॥ १८ ॥ हे मैत्रेय ! परंतु उस समय प्रत्येक कन्या 'भगवान्ते मेरा ही पाणियहण किया है' इस प्रकार उन्हें एक ही समझ रही थी ॥ १९ ॥ हे विध्व ! जगारवा विश्वरूपमारी श्रीहरि राजिके समय उन सधीके धरोंने

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेऽशे एकत्रिशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥

रहते थे ॥ २० ॥

बत्तीसवाँ अध्याय

डपा-चरित्र

श्रीपरादार उवाच

प्रद्युज्ञाद्या हरेः पुत्रा रुक्मिण्यां कथितास्तव । भानुभौमेरिकाद्यांश्च सत्यभामा व्यजायत ॥ दीप्तिमत्ताप्रपक्षाद्या रोहिण्यां तनया हरेः । बभूवुर्जाम्बवत्यां च साम्बाद्या बलशास्तिनः ॥ तनवा भद्रविन्दाद्या नाप्रजित्यां महाबलाः ।

सङ्ग्रामजित्सधानास्तु शैव्यायां च हरेस्सुताः ॥ वृकाद्याश्च सुता माद्र्यां गात्रवत्ममुखान्सुतान् । अवाप लक्ष्मणा पुत्रान्कालिन्द्याश्च श्रुतादयः ॥

अन्यासां चैव भार्याणां समुत्यन्नानि चक्रिणः । अष्टायुतानि पुत्राणां सहस्राणि शतं तथा ॥ भगवान्के प्रद्युप्त आदि पुत्रीका वर्णन हम पहेले ही कर चुके हैं; सत्यभामाने भानु और मौमेरिक आदिको जन्म दिया ॥ १ ॥ श्रीहरिके रोहिणोके गर्भसे दीप्तिमान् और ताम्रपक्ष आदि तथा जाम्बवतीसे बलशाली साम्ब आदि पुत्र हए ॥ २ ॥ नाम्रजिती (सत्या) से महाबली भद्रविन्द

श्रीपराशरजी बोले—रुक्मिणीके गर्पसे उत्पन्न हुए

अहर ॥ र ॥ नाजाजता (सत्ता) से महाबला महाजन्द आदि और शैब्या (मिन्नबिन्दा) से संग्रामजित् आदि उत्पन्न हुए ॥ ३ ॥ माद्रीसे वृक्त आदि, लक्ष्मणासे गानवान् आदि तथा कालिन्दीसे श्रुत आदि पुत्रोंका जन्म हुआ ॥ ४ ॥ इसी प्रकार भगवान्त्री अन्य स्त्रियोंके

भी आठ अबुत आठ हजार आठ सी (अट्टासी हजार आठ सी) पुत्र हुए॥ ५॥ प्रद्युप्तः प्रथमस्तेषां सर्वेषां रुक्मिणीसृतः। प्रद्युप्रादनिरुद्धोऽभृदुज्ञस्तस्मादजायत अनिरुद्धो रणेऽरुद्धो बले: पौत्री महाबल: । उषां बाणस्य तनयामुपयेमे द्विजोत्तम ॥ युद्धमभूद्धोरं हरिशङ्करयोर्महत्। छित्रं सहस्रं बाह्नां यत्र बाणस्य चक्रिणा ॥ श्रोमेत्रेय उवाच कथं युद्धमभूदब्रह्मञ्जूषार्थे हरकृष्णयोः। कथं क्षयं च बाणस्य बाहुनां कृतवान्हरिः ॥ एतत्सर्वं महाभाग ममाख्यातुं त्वपर्हसि । महत्कौतुहलं जातं कथां श्रोतुमिमां हरे: ॥ १० श्रीपराशर उवाच उषा बाणसुता वित्र पार्वर्ती सह शम्भुना । क्रीडन्तीमुपलक्ष्योचैः स्पृहां चक्रे तदाश्रयाम् ॥ ११

ततस्सकलचित्तज्ञा गौरी तामाह भामिनीम् । अलमत्यर्थतायेन भर्त्रा त्वमपि रंखसे ॥ १२

इत्युक्ता सा तया चक्रे कदेति मतिमात्मनः । को वा भर्ता ममेत्याह पुनस्तामाह पार्वती ॥ १३ पार्वल्याच

वैशास्त्रशुक्रदादश्यां स्तप्ने योऽभिभवं तव। करिष्यति स ते भर्ता राजपुत्रि भविष्यति ॥ १४ श्रीपराञर उवाच

तस्यां तिशावुषास्वप्ने यशा देख्या समीरितम् । तथैवाभिभवं चके कश्चित्रागं च तत्र सा ॥ १५

ततः प्रबुद्धा पुरुषमपश्यन्ती समुत्सुका। क गतोऽसीति निर्लंजा मैत्रेयोक्तवती सखीम् ॥ १६

तस्याः सख्यभवत्सा च प्राह कोऽयं त्वयोच्यते ॥ १७ यदा लजाकुला नास्यै कथयामास सा सखी । तदा विश्वासमानीय सर्वमेवाभ्यवादयत् ॥ १८

बाणस्य मन्द्री कुम्भाण्डइचित्रलेखा च तत्सुता ।

इन सब पुत्रोंमें रुक्मिणीनन्दन प्रद्युप्त सबसे बड़े थे; प्रद्युप्तसे अनिरुद्धका जन्म हुआ और अनिरुद्धसे वज उत्पन्न हुआ ॥ ६ ॥ हे द्विजोत्तम ! महाबली अनिरुद्ध युद्धमें किसीसे रोके नहीं जा सकते थे। उन्होंने बलिकी

पौत्री एवं बाणासुरकी पुत्री उधासे विवाह किया था ॥ ७ ॥ उस विवाहमें श्रीहरि और भगवान शंकरका घोर युद्ध हुआ था और श्रीकृष्णबन्द्रने बाणासुरक्षी सहस्र भुजाएँ काट डाली थीं ॥ ८ ॥

श्रीमैश्रेयजी बोले—हे ब्रह्मन्! स्थाके लिये श्रीपहादेव और कृष्णका युद्ध क्यों हुआ और श्रीहरिने बाणासुरका भुजाएँ क्यों काट डार्ली ? ॥ ९ ॥ हे महाभाग ! आप मुझसे यह सम्पूर्ण क्तान्त कहिये; मुझे श्रीहरिकी यह कथा सननेका बड़ा कुत्हरू हो रहा है ॥ १०॥ श्रीपराद्यारजी बोले-हे विप्र ! एक बार बाणासुरकी

पुत्री उपाने श्रीशंकर्क साथ पार्वतीजीको क्रीडा करती देख रुवयं भी अपने पतिके साथ रमण करनेकी इच्छा की ॥ ११ ॥ तब सर्वान्तर्यामिनी श्रीपार्वतीजीने उस सुकुमारीसे कहा—"तु अधिक सन्तप्त मत हो, यथासमय तू भी अपने पतिके साथ रमण करेगी"॥१२॥ पार्वतीजीके ऐसा कहनेपर उपाने मन-ही-मन यह सोचकर कि 'न जाने ऐसा कब होगा ? और मेरा पति भी कीन होग।?' [इस सम्बन्धमें] पार्वतीजीसे पूछा, तब

पार्वतीजी बोस्ठी—हे राजपुत्रि ! वैशाख शुक्रा ह्यदशीकी रात्रिको जो पुरुष स्वप्नमें तुझसे हठात् सम्भोग क्तेगा वही तेस पति होगा ॥ १४ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—तदनन्तर उसी तिथिको

पार्वतीजीने उससे फिर कहा— ॥ १३ ॥

उपाको स्वप्नावस्थामें किसी पुरुषने उससे, जैसा श्रीपार्वतीदेवीने कहा था, उसी प्रकार सम्मोग किया और उसका भी उसमे अनुराग हो गया ॥ १५ ॥ हे मैत्रेय ! तब उसके बाद स्वप्नसे जगनेपर जब उसने उस पुरुषको न देखा तो वह उसे देखनेके किये अत्यन्त उत्सक होकर अपनी संबंधिकी और लक्ष्य करके निर्क्रजतापूर्वक कहने

लमी—"हे नाध ! आप कहाँ चले गये ?" ॥ १६ ॥

बाणासुरकी मन्त्री कुम्भाण्ड था; उसकी चित्रलेखा नामकी पुत्री थीं, बह उषाको सन्ती थी. [उपाका यह प्रलाप सुनकर] उसने पूछा—"यह तुम किसके विषयमें कह रही हो ?" ॥ १७ ॥ किन्तु जब लब्जावरा उपाने उसे

कुछ भी न बतलाया तब चित्रलेखाने [सब बात गुप्त रखनेका] विश्वास दिलाकर उषारो सब वृताना कहला विदितार्था तु तामाह पुनश्चोषा यथोदितम् । देव्या तथैव तत्प्राप्ती यो ह्युपायः कुरुष्ट्व तम् ॥ १९

चित्रलेखोवाच

दुर्विज्ञेयमिदं वक्तुं प्राप्तुं वापि न शक्यते । तथापि किञ्चित्कर्तव्यमुपकारं प्रिये तव ॥ २०

सप्ताष्ट्रदिनपर्यन्तं ताबत्कालः प्रतीक्ष्यताम् । इत्युक्त्वाभ्यन्तरं गत्वा उपायं तमधाकरोत् ॥ २१

श्रीपराशर उनाच

ततः पटे सुरान्दैत्यानान्धर्वाञ्च प्रधानतः ।

मनुष्यांश्च विलिल्यास्यै चित्रलेखा व्यदर्शयत् ॥ २२

अपास्य सा तु गन्धवीस्तथोरगसुरासुरान्। मनुष्येषु ददौ दृष्टिं तेषुष्यन्यकवृष्णिषु ॥ २३

कृष्णरामौ विलोक्यासीत्सुभूर्लजाजडेव सा ।

प्रद्युप्रदर्शने ब्रीडादृष्टिं निन्येऽन्यतो द्विज ॥ २४ दृष्टमात्रे ततः कान्ते प्रद्युप्नतनये हिज।

दुष्टात्यर्थविलासिन्या लजा कापि निराकृता ॥ २५

सोऽयं सोऽयपितीत्युक्ते तया सा योगगापिनी । चित्रलेखात्रवीदेनामुषां बाणसूतां तदा ॥ २६

वित्रलेखांबान

अयं कृष्णस्य पौत्रस्ते भर्ता देव्या प्रसादितः । अनिरुद्ध इति ख्यातः प्रख्यातः प्रियदर्शनः ॥ २७

प्राप्नोषि वदि भर्तारमिमं प्राप्नं त्वयाखिलम् ।

दुष्पवेशा पुरी पूर्व द्वारका कृष्णपालिता ॥ २८ तथापि यत्नाद्धर्तारमानयिष्यामि ते सर्वि ।

रहस्यमेतद्वक्तव्यं न कस्यचिदपि त्वया ॥ २९

अचिरादागमिष्यामि सहस्व विरहं मम।

ययौ द्वारवर्ती चोषां समाश्वास्य ततः सखीम् ॥ ३०

इति श्रीविष्णुपराणे पञ्जमेंऽदो द्वाजिद्योऽध्यायः ॥ ३२ ॥

लिया ॥ १८ ॥ चित्रलेखाके सब बात जान लेनेपर उपाने जो कुछ श्रीपार्वतीजीने कहा था वह भी उसे सुना दिया और कहा कि अब जिस प्रकार उसका पुनः समागम हो

वही उपाय करो ॥ ९ ॥ चित्रलेखाने कहा — हे प्रिये ! तुमने जिस पुरुषको देखा है उसे तो जानना भी बहुत कठिन है फिर उसे बहुलाना या

पाना कैसे हो सकता है ? तथापि मैं तुम्हारा कुछ-न-कुछ उपकार तो करूँगी ही ॥ २० ॥ तुम सात या आठ दिनतक मेरी प्रतीक्षा करना—ऐसा कहकर वह अपने घरके भीतर

गयी और उस पुरुषको ढुँढनेका उपाय करने लगी ॥ २१ ॥ श्रीपराशरजी बोले—तदनन्तर (आठ-सात दिन

पश्चात् लौटकर] चित्रलेखाने चित्रपटपर मुख्य-मुख्य देवता, दैत्य, गन्धर्व और यनुष्योंके चित्र लिखकर उपाको दिखलाये ॥ २२ ॥ तब उषाने गन्धर्व, नाग, देवता और दैत्य

आदिको छोड़कर केवल मनुष्योपर और उनमें भी विशेषतः अन्धक और वृष्णिवंदी यादवोपर ही दृष्टि दी ॥ २३ ॥ हे

द्विज! राम और कृष्णके चित्र देखकर वह सुन्दर भुक्टिवाली लजासे जडवत् हो गयो तथा प्रद्युसको देखकर उसने लज्जावश अपनी दृष्टि हटा ली॥ २४॥ तत्पशात्

प्रद्युप्रतनय प्रियतम अनिरुद्धजीको देखते ही उस अत्यत्त चिलासिनीको लज्जा माने कहीं चली गयी ॥ २५ ॥ (वह बोल उठी] — 'वह यही है, वह यही है।' उसके इस प्रकार कहनेपर योगगामिनी चित्रलेखाने उस बाणासुरकी कन्यासे

कहा--- ॥ २६ ॥

चित्रलेखा खोली--देवीने प्रसन होकर यह कृष्णका पौत्र ही तेश पति निश्चित किया है; इसका नाम अनिरुद्ध है और यह अपनी सुन्दरताके लिये प्रसिद्ध है ॥ २७ ॥ यदि तुझको यह पति मिल गया तब तो तुने मानो सभी कुछ पा लिया; किन्तु कृष्णचन्द्रद्वारा सुरक्षित द्वारकापुरीये पहले प्रवेश ही करना कठित है ॥ २८ ॥ तथापि हे सर्ख ! किसी उपायसे मैं तेरे पतिको लाऊँगी ही, तू इस गुप्त रहस्वको

किसीसे भी न कहना ॥ २९ ॥ मैं जीव ही आऊँगी, इतनी देर तु मेरे वियोगको सहन कर । अपनी सन्ती उपाको इस प्रकार

ढाढस वैधाकर चित्रलेखा द्वारकापुरीक्द्रे गयी ॥ ३० ॥

तैंतीसवाँ अध्याय

श्रीकृष्ण और बाणासुरका युद्ध

Y

L.

Ē

श्रीपराशर उवाच

बाणोऽपि प्रणिपत्यात्रे मैत्रेयाह त्रिलोचनम् । देव बाहुसहस्रेण निर्विण्णोऽसम्याहवं विना ॥

कचित्रमेषां बाहूनां साफल्यजनको रणः ।

भविष्यति विना युद्धं भाराय मम कि भुजैः ॥

श्रीराङ्क्षर उवाच

मयूरध्वजभङ्गस्ते यदा बाण भविष्यति ।

पिशिताशिजनानन्दं प्राप्यसे त्वं तदा रणम् ॥ श्रीमगशर उदाच

श्रापराशाः उदाच

ततः प्रणम्य वरदं शस्भुयभ्यागतो गृहम्।

सभन्नं ध्वजमालोक्य हुन्ने हर्षं पुनर्ययौ ॥ एतस्मिन्नेव काले तु योगविद्याबलेन तम् ।

एतासम्बद्धमथानिन्ये चित्रलेखा वराप्सराः ॥

कन्यान्तःपुरमध्येत्य रममाणं सहोषया।

विज्ञाय रक्षिणो गत्वा सशंसुर्देत्यभूपतेः ॥

व्यादिष्टं किङ्कराणां तु सैन्यं तेन महात्पना । जघान परिघं घोरमादाय परवीरहा ॥

जधान पारम धारमादाय परवारहा

हतेषु तेषु बाणोऽपि रथस्थस्तद्वधोद्यतः । युध्यमानो यथाशक्ति यदुवीरेण निर्जितः ॥

मायया यु**युधे तेन स तदा मन्त्रिकोदितः** ।

ततस्तं पत्रगास्त्रेण बबन्ध यदुनन्दनम्॥

द्वारवत्यां क्र यातोऽसावनिरुद्धेति जल्पताम् ।

यदूनामाचचक्षे तं बद्धं बाणेन नारदः ॥ १०

तं शोणितपुरं नीतं श्रुत्वा विद्याविदम्धया । योषिता प्रत्ययं जग्मुर्यादवा नामरैरिति ॥ ११

योषिता प्रत्ययं जग्मुयदिवा नामरीरीत ॥ १

ततो गरुडमारुह्य स्मृतमात्रागतं हरिः । अरुप्रद्मप्रसहितो बाणस्य प्रययौ पुरम् ॥ १२

•

श्रीपराशरजी बोले—हे मैत्रेय ! एक बार बाणासुरने भी भगवान् त्रिलोचनको प्रणाम करके कहा था

कि हे देय ! यिना मुद्धके इन हजार भुजाओंसे मुझे बड़ा ही खेद हो रहा है ॥ १ ॥ क्या कभी मेरी इन भुजाओंको

खंद हा रहा है॥ १॥ क्या कभा मरा इन भुजाआका सफल करनेवाला युद्ध होगा ? भला बिना युद्धके इन भाररूप भुजाओंसे मुझे लाभ ही क्या है ? ॥ २॥

श्रीशङ्करजी बोले—हे बाणासुर ! जिस समय तेरी मयूर-चिड्डवाली भ्वजा टूट जायगी उसी समय तेरे सामने मांसभोजी यक्ष-पिशाचादिको आनन्द देनेवाला युद्ध

श्रीपराशरजी बोले—तदनत्तर, वरदायक श्रीरांकरको प्रणामकर वाणासुर अपने घर आया और फिर कालान्तरमें उस ध्वजाको टूटी देखकर अति आनन्दित हुआ ॥ ४ ॥ इसी समय अध्यराश्रेष्ठ चित्रलेखा अपने

कन्यान्तःपुरमे आकर उपाके साथ रमण करता जान अन्तःपुररक्षकोने सम्पूर्ण कृतान्त दैत्यराज बाणासुरसे कह दिया ।: ६ ॥ तब महावीर बाणासुरने अपने सेवकोंको उससे युद्ध करनेकी आज्ञा दी; किंतु शत्रु-दमन अनिरुद्धने

अपने सम्मुख आनेपर उस सम्पूर्ण सेनाको एक लोहमय

योगबलसे अनिरुद्धको वहाँ ले आयी ॥ ५ ॥ अनिरुद्धको

दण्डसे मार डाला ॥ ७ ॥

उपस्थिति होगा ॥ ३ ॥

अपने सेवकोंके मारे जानेपर बाणासुर अनिरुद्धको मार डालनेको इच्छासे रथपर चढ़कर उनके साथ युद्ध करने लगा; किंतु अपनी शक्तिभर युद्ध करनेपर भी वह यदुवीर अनिरुद्धजीसे परास्त हो गया ॥ ८ ॥ तब वह मिलयोंको प्रेरणासे मायापूर्वक युद्ध करने लगा और यदुनन्दन अनिरुद्धको नागपाशसे बाँध सिम्या ॥ ९ ॥

इयर द्वारकापुरीमें जिस समय समस्त यादवोंमें यह चर्चा हो रही थी कि 'अनिरुद्ध कहाँ गये ?' उसी समय देवार्ष नारदने उनके बाणासुरद्वारा बाँधे जानेकी सूचना दी॥ १०॥ नारदजीके मुखसे योगविद्यामें निपुण युवती चित्रलेखाद्वारा उन्हें शीणितपुर ले जाये गये सुनकर यादवोंको विश्वास हो गया कि देवताओंने उन्हें नहीं चुरावा*॥ ११॥ तब स्मरणमात्रसे उपस्थित हुए गरुडपर

अबतक यादवगण यही भीच रहे थे कि पारिजात-हरणसे चिड़कर देवता ही अनिरुद्धको चुरा ले गये हैं।

पुरप्रवेशे प्रमर्थेर्युद्धमासीन्पहात्मनः । ययौ बाणपुराभ्याशं नीत्वा तान्सङ्खयं हरिः ॥ १३ ततस्त्रिपादस्त्रिशिस ज्वसे माहेश्वरो महान्। बाणरक्षार्थमभ्येत्य युवुधे शार्क्वधन्त्रना ॥ १४ तद्धस्मस्पर्शसम्भृततापः कृष्णाङ्गसङ्गमात् । अवाप बलदेबोऽपि श्रममामीलितेक्षणः ॥ १५ ततस्स युद्धधमानस्तु सह देवेन शार्ड्डिणा । वैष्णवेन ज्वरेणाञ्च कृष्णदेहात्रिराकृत: ॥ १६ नारायणभूजाघातपरिपीडनविद्वलभ् तं वीक्ष्य क्षम्यतामस्येत्याह देवः पितामहः ॥ १७ ततश्च क्षान्तपेवेति प्रोच्य तं वैष्णवं ज्वरम् । आत्मन्येव लयं निन्ये भगवान्मधुसुदनः ॥ १८ मम त्वया समं बुद्धं ये स्मरिष्यन्ति मानवाः । विज्वसस्ते भविष्यन्तीत्युक्तवा चैनं ययौ ज्वरः ॥ १९ ततोऽग्नीन्भगवान्पञ्च जित्वा नीत्वा तथा क्षयम् । दानवानां बलं कृष्णश्चर्षायामास लीलया ॥ २० ततस्समस्तसैन्येन दैतेयानां बलेस्पृतः । युर्घे सङ्करश्चैव कार्त्तिकेयश्च शौरिणा ॥ २१ हरिशङ्करयोर्युद्धमतीवासीत्सुदारुणम् चुक्षुभुस्सकला लोकाः शस्त्रास्त्रोशुप्रतापिताः ॥ २२ प्ररूपोऽयमशेषस्य जगतो नुनमागतः। मेनिरे त्रिदशास्तत्र वर्तमाने महारणे॥ २३ जुम्भकास्त्रेण गोविन्दो जुम्भयामास शङ्करम् । ततः प्रणेश्देतियाः प्रमथाश्च समन्ततः॥ २४ जुम्भाभिभृतस्तु हुरो रथोपस्थ उपाविञ्ञत् । न शशाक ततो योद्धुं कृष्णेनाक्रिष्टकर्मणा ॥ २५ गरुडक्षतवाहश्च प्रसुप्रास्त्रेण पीडितः।

कृष्णहङ्कारनिर्धृतशक्तिश्चापययौ गुहः ॥ २६

चढ़कर श्रीहरि वलराम और प्रद्युसके सहित 'बाणासुरकी राजधानीमें आये ॥ १२ ॥ नगरमें घुसते ही उन तीनोंका भगवान् इंकरके पार्षद् प्रमधगणोंसे युद्ध हुआ: उन्हें नष्ट करके श्रीहरि बाणासुरको राजधानीक समीप चले गये॥ १३॥ तदनन्तर बाणासुरकी रक्षाके लिये तीन सिर और तीन पैरवाला माहेश्वर नामक महान् ज्वर आगे बढ्कर श्रीभगवान्से लड़ने लगा॥ १४॥ [उस ज्वरका ऐसा प्रभाव था कि] उसके फेंके हुए भस्मके स्पर्शसे सन्तप्त हुए श्रीकृष्णचन्द्रके शरीरका आलिङ्गन करनेपर बलदेवजीने भी शिथिल होकर नेत्र मुँद लिये ॥ १५ ॥ इस प्रकार भगवान् शार्क्रधरके साथ [उनके शरीरमें व्याप्त होकर] युद्ध करते हुए उस माहेश्वर ज्वरको वैष्णव ज्वरने तुरंत उनके दारीरसे निकारः दिया ॥ १६ ॥ उस समय श्रीनारायणकी भुजाओंके आघातसे उस माहेश्वर ज्वरको पीड़ित और विद्वल हुआ देखकर पिदामह बहाजीने भगवान्से कहा—'इसे क्षमा कीजिये ॥ १७ ॥ तब भगवान् मधुसुदनने 'अच्छा, मैंने क्षमा की' ऐसा कहकर उस वैष्णव ज्वरको अपनेमें स्त्रीन कर लिया॥ १८॥ ज्वर बोला-जो मनुष्य आपके साथ मेरे इस युद्धका स्मरण करेंगे वे ज्वरहीन हो जायेंगे ऐसा कहकर वह चला गया ॥ १९॥

तदनन्तर भगवान् कृष्णचन्द्रने पञ्चाप्रियोंको जीतकर नह किया और फिर स्त्रीलासे ही दानवसेनाको नह करने लगे ॥ २० ॥ तब सम्पूर्ण दैत्यसेनाके सहित बलि-पुत्र बाणासुर, भगवान् इङ्क्षर और स्वामिकार्सिकेयजी भगवान् कृष्णके साथ युद्ध करने लगे ॥ २१ ॥ श्रीहरि और श्रीमहादेवजीका परस्पर बड़ा घोर युद्ध हुआ, इस युद्धमें प्रयुक्त शत्वाखोंके किरणजालसे सन्तरा होकर सम्पूर्ण लोक शुव्य हो गये ॥ २२ ॥ इस घोर युद्धके ठपस्थित होनेपर देवताओंने समझा कि निक्षय हो यह सम्पूर्ण जगत्का प्रलयकाल आ गया है ॥ २३ ॥ श्रीगोकिन्दने वृष्णकाल छोड़ा जिससे महादेवजी निद्रित-से होकर जमुहाई लेने लगे; उनकी ऐसी दशा देखकर दैत्य और प्रमथगण चारों और भागने लगे ॥ २४ ॥ भगवान् शङ्कर निद्राभिषुत होकर रथके पिछले भागमें बैठ गये और फिर

अनुवास ही अन्द्रत कर्म करनेवाले श्रीकृष्णचन्द्रसे युद्ध

न कर सके ॥ २५ ॥ तदनन्तर गरुडद्वारा बाहनके नष्ट

हो जानेसे, प्रद्युष्टर्जीके शस्त्रीसे पीढ़ित होनेसे तथा

800 जुम्मिते शङ्करे नष्टे दैत्यसैन्ये गृहे जिते। नीते प्रमथसैन्ये च सङ्ख्यं शार्डुधन्वना ॥ २७ नन्दिना सङ्गृहीताश्चमधिरुढो महारथम्। बाणस्तत्राययौ योद्धं कृष्णकार्ष्णिबलैसाह ॥ २८ बलभद्रो पहावीयों बाणसैन्यमनेकथा। विव्याध बाणै: प्रभुइय धर्मतश्च पलायत ॥ २९ आकृष्य लाङ्गलाप्रेण मुसलेनाशु ताडितम् । बलं बलेन ददुशे बाणो वाणैश्च चक्रिणा ॥ ३० ततः कृष्णेन बाणस्य युद्धमासीत्सुदारुणम् । समस्यतोरियुन्दीप्तान्कायत्राणविभेदिनः ॥ ३१ कृष्णशिच्छेद् बाणैस्तान्बाणेनं प्रहिताञ्छितान् । विव्याध केशवं बाणो बाणं विव्याध चक्रधुकु ॥ ३२ मुमुचाते तथास्त्राणि बाणकृष्णौ जिगीवया । परस्परं क्षतिकरौ लाघवादनिशं द्विज ॥ ३३ भिद्यमानेष्ट्रशेषेषु शरेषुस्त्रे च सीदति। प्राचुर्येण ततो बार्ण हुन्तुं चक्रे हरिर्मनः ॥ ३४ ततोऽर्कशतसङ्घाततेजसा सदृशद्यति । जबाह दैत्यचक्रारिहीरिश्चकं सुदर्शनम् ॥ ३५

मुख्यतो बाणनाज्ञाय ततश्चकं मधुद्विषः । नन्ना दैतेयविद्याभूत्कोटरी पुरतो हरे: ॥ ३६ तामप्रतो हरिर्दृष्टा मीलिनाक्षस्सुदर्शनम् ।

मुमोच बाणमुद्दिश्यच्छेतुं बाह्वनं रिपो: ॥ ३७ क्रमेण तत्तु बाहुनां बाणस्थाच्युतचोदितम् । छेदं चक्रेऽसुरापास्तशस्त्रोधक्षपणादृतम् ॥ ३८

छिन्ने बाहुबने तन् करस्थं मधुसुदनः। मुमुक्षुर्बाणनाञाय विज्ञातस्त्रिपुरद्विषा ॥ ३९

समुपेत्याह गोविन्दं सामपूर्वमुमापतिः । विलोक्य बाणं दोर्दण्डकेदासक्साववर्षिणम् ॥ ४० कृष्णचन्द्रके हुंकारसे शक्तिहीन हो जानेसे स्वामिकार्त्तिकय

[31: 33

भी भागने लगे ॥ २६॥

इस प्रकार श्रीकृष्णबन्द्रद्वारा महादेकजीके निद्राभिभृत, दैत्य-सेनाके नष्ट, स्वामिकार्त्तिकयके पराजित और शिक्रमणोंके क्षीण हो जानेपर कृष्ण, प्रधुप्र और

बरुभद्रजीके साथ युद्ध करनेके लिये वहाँ याणासुर साक्षात् नन्दीश्वरद्वारा हाँके जाते हुए महान् रथपर चढ़कर

अस-शस छोडने छगे ॥ ३३॥

आया ॥ २७-२८ ॥ उसके आते ही महावीर्यशाली बळभ्द्रजीने अनेकों बाण बरसाकर बाणासरकी सेनाको

छिन्न-भिन्न कर डाला; तब वह बीरधर्मसे भ्रष्ट होकर भागने लगी ॥ २९ ॥ बाणासूरने देखा कि उसकी सेनाको बलभदर्जी बड़ी फुर्तीसे हलसे खींच-खींचकर मुसलसे

मार रहे हैं और श्रीकृष्णचन्द्र उसे वाणीसे बीधें डालते हैं ॥ ३० ॥ तब वाणासुरका श्रीकृष्णचन्द्रके साथ मोर युद्ध छिड़ गया । वे दोनों परस्पर कवचभेदी वाण छोड़ने लगे ।

परंतु भगवान् कृष्णने बाणासुरके छोड़े हुए तीसे वाणोंको अपने वाणोंसे काट डाला; और फिर बाणासुर कृष्णको तथा कृष्ण बाणास्रको बीधने लगे॥ ३१-३२॥ हे द्विज ! उस समय परस्पर चोट करनेवाले बाणासुर और कृष्ण दोनों ही विजयकी इच्छासे निरत्तर शोधतापूर्वक

अन्तमें, समस्त वाणोंके छित्र और सम्पूर्ण अस्त-शस्त्रेकि निष्फल हो जानेपर श्रीहरिने बाणासुरको मार डालनेका विचार किया ॥ ३४ ॥ तत्र देखमण्डलके शत्र भगवान् कृष्णने सैकड़ों सूर्वोंके समान प्रकाशमान अपने सुदर्शनचक्रको हाथमें छे लिया॥ ३५॥

जिस समय भगवान् मधुसुदन बाणासुरको मारनेके लिये चक्र छोड़ना ही चाहते थे उसी समय दैखोंकी विद्या (मलमयी कुलदेवी) कोटरी भगवान्के सामने नप्रावस्थामे उपस्थित हुई॥ ३६॥ उसे देखते ही

भगवान्ने नेत्र मुँद लिये और बाणासुरको लक्ष्य करके उस शहकी भूजाओंके वनको काटनेके लिये सुदर्शनचक्र छोड़ा ॥ ३७ ॥ भगवान् अच्युतके द्वारा प्रेरित उस चक्रने दैलोके छोडे हुए अससमृहको काटकर क्रमदाः वाणासस्की भुजाओंको काट डाला [केवल दो भुजाएँ होड़ दीं] ॥ ३८ ॥ तब त्रिपुरशत् भगवान् शहुर

जान गये कि श्रीमधुसुदन याणासुरके बाह्वनको काटकर अपने हाथमें आये हुए चक्रको उसका वध करनेके लिये फिर छोड़ना चाहते हैं॥३९॥ अतः बाणासुरको

अपने सम्बद गुजदण्डोंसे लोहकी धारा बहाते देख

श्रीशङ्कर उवाच

कृष्ण कृष्ण जगन्नाथ जाने त्वां पुरुषोत्तमम् । परेज्ञं परमात्मानमनादिनिधनं हरिम् ॥ ४१

देवतिर्यङ्गनुष्येषु शरीरव्रहणात्मका ।

लीलेयं सर्वभूतस्य तव चेष्ट्रोपलक्षणा ॥ ४२

तत्प्रसीदाभयं दत्तं बाणस्यास्य मया प्रभो ।

तत्त्वया नानृतं कार्यं यन्प्रया व्याहृतं वचः ॥ ४३

अस्पत्संश्रयदुप्तोऽयं नापराधी तवाव्यय।

मया दत्तवरो दैत्यस्ततस्त्वा क्षमयाम्यहम् ॥ ४४

औपराशर उदान

इत्युक्तः प्राप्त गोविन्दः शुलपाणिमुमापतिम् । प्रसन्नवदनो भूत्वा गतामषींऽसुरं प्रति ॥ ४५

श्रीभगवानुवाच

युष्पद्दत्तवरो वाणो जीवतामेष शङ्कर। त्वद्वाक्यगौरवादेतन्यया चक्रं निवर्तितम् ॥ ४६

त्वया यदभयं दत्तं तद्दत्तमिखलं मया।

मत्तोऽविभिन्नमात्मानं द्रष्टुमहसि शङ्कर ॥ ४७

योऽहं स त्वं जगद्येदं सदेवासुरमानुषम्। मत्तो नान्यदशेषं यत्तत्त्वं ज्ञातुमिहाहींस ॥ ४८

अविद्यामोहितात्पानः पुरुषा भिन्नदर्शिनः ।

वदन्ति भेदं पश्यन्ति चावयोरन्तरं हर ॥ ४९

प्रसन्नोऽहं गमिष्यामि त्वं गच्छ वृषभध्वज ॥ ५०

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्त्वा प्रययो कृष्णः प्राद्युम्रियंत्र तिष्ठति । तद्भयफणिनो नेशूर्गरुडानिस्स्र्योथिताः ॥ ५१

ततोऽनिरुद्धमारोप्य सपत्नीकं गरुत्पति ।

आजग्मुर्द्धारकां रामकार्ष्णिदामोदराः पुरीम् ॥ ५२

पुत्रपात्रैः परिवृतस्तत्र रेमे जनार्दनः।

देवीभिस्सतते विष्र भूभारतरणेच्छया ॥ ५३

श्रीउपापतिने गोविन्दके पास आकर सामपूर्वक

कहा--- ॥ ४० ॥ श्रीशहरजी बोले—हे कृष्ण ! हे कृष्ण !! हे जगत्राथ !! मैं यह जानता हूँ कि आप पुरुषोत्तम परमेश्वर,

परमात्मा और आदि-अन्तसे रहित श्रीहरि हैं॥४१॥ आप सर्वभूतमय है। आप जो देव, तिर्यक् और मनुष्यादि योनियोंमें शरीर धारण करते हैं यह आपकी खाधीन

चेष्टाकी उपलक्षिका छीला ही है ॥ ४२ ॥ है प्रभो ! आप प्रसन्न होड्ये । मैंने इस बाणासुरको अभयदान दिया है । हे

नाय । मैंने जो वचन दिया है उसे आप मिध्या न करें ॥ ४३ ॥ है अच्यय ! यह आपका अपराधी नहीं है;

यह तो मेरा आश्रय पानेसे ही इतना गर्वीला हो गया है । इस दैत्यको मैंने ही वर दिया था इसलिये मैं ही आपसे इसके लिये क्षमा कराता है ॥ ४४ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—त्रिशुलपाणि भगवान् उमापतिके इस प्रकार कहनेपर श्रीगोलिन्दने बाणास्/के प्रति क्रीक्षमांव त्याग दिया और प्रसन्नवदन होकर उनसे कहा— ॥ ४५॥

श्रीभगवान् बोले—हे राहुर ! यदि आपने इसे वर दिया है तो यह बाणासूर जीवित रहे । आपके वचनका मान रखनेके रिज्ये में इस चक्रको रोके लेता है ॥ ४६ ॥ आपने

जो अभय दिया है वह सब मैंने भी दे दिया। है शहर ! आप अपनेको गुझसे सर्वथा अभिन्न देखे ॥ ४७ ॥ आप यह भली प्रकार समझ ले कि जो मैं हूँ सो आप हैं तथा यह सम्पूर्ण जगत्, देव, असुर और मनुष्य आदि कोई भी भुइस्से

भिन्न नहीं है ॥ ४८ ॥ हे हर ! जिन लोगोंका चित्त अविद्यासे मोहित है वे भिन्नदर्शी पुरुष ही हम दोनोंमें भेद देखते और बतत्वते हैं । हे वृषधध्वज ! मैं प्रसन्न हूँ, आप प्रधारिये, मै

भी अब जाऊँगा ॥ ४९-५० ॥

श्रीपराद्यारची बोले—इस प्रकार कहकर भगवान कृष्ण जहाँ प्रसुप्रकुमार अनिरुद्ध थे वहाँ गये। उनके पहेचते ही अनिरुद्धके बन्धनरूप समस्त नागगण गरुडके वेगसे उत्पन्न हुए बायुके प्रहारसे नष्ट हो गये॥ ५१॥ तदनन्तर सपलीक अनिरुद्धको गरुडपर चढ़ाकर बरुराम,

प्रद्युप्र और कृष्णकन्द्र द्वारकापुरीमें स्त्रैट आये ॥ ५२ ॥ हे विञ्र ! वहाँ भू-भार-हरणको इच्छासे रहते हुए श्रीजनार्दन अपने पुत्र-पीत्रादिसे धिरे रहकर अपनी सनियोंके साथ रमण करने लगे ॥ ५३ ॥

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चमेंऽज्ञे त्रयिखंजोऽध्यायः ॥ ३३ ॥

चौंतीसवाँ अध्याय

पौण्डक-वध तथा काशीदहन

₹

8

4

Ę

ረ

धीमेंत्रेय उवाच चक्रे कर्म महच्छौरिबिभाणो मानुषी तनुम् । जिगाय शक्रं शर्वं च सर्वान्देवांश्च लीलया ॥ यशान्यदकरोत्कर्म दिव्यचेष्टाविधातकृत्। तत्कथ्यतां महाभाग परं कौतुहलं हि मे ॥

श्रीपराशर उत्तान

गदतो मम विप्रवें श्रुयतामिदमादरात्।

नरावतारे कृष्णेन दग्धा वाराणसी यथा ॥ पौण्डुको वासुदेवस्तु वासुदेवोऽभवद्भवि ।

अवतीर्णस्त्वमित्युक्तो जनैरज्ञानमोहितैः ॥ स मेने वासुदेवोऽइमवतीर्णो महीतले। नष्टस्पृतिस्ततस्सर्वं विष्णुचिद्वमचीकरत्॥

दृतं च प्रेषयामास कृष्णाय सुमहात्मने । त्यक्ता चक्रादिकं चिह्नं मदीयं नाम चात्मनः ॥

वासुदेवात्मकं पृढ त्यक्त्वा सर्वमशेषतः । आत्मनो जीवितार्थाय ततो मे प्रणति क्रज ॥

इत्युक्तस्सम्प्रहरयैनं दूतं प्राह जनार्दनः । निजिचह्नमहं चक्रं समुत्स्त्रक्ष्ये त्वयीति वै ॥

बाच्यश्च पौण्डुको गत्वा त्वया दूत बचो मम । ज्ञातस्त्वद्वाक्यसद्भावो यत्कार्यं तद्विधीयताम् ॥ गृहीतचिद्ववेषोऽहमागमिष्यामि ते पुरम्।

आज्ञापुर्वं च यदिद्यागच्छेति त्वयोदितम् । सम्पाद्यिच्ये श्वस्तुभ्यं समागम्याविलम्बितम् ॥ ११ शरणं ते समध्येत्य कर्तास्मि नृपते तथा ।

उत्स्वक्ष्यामि च तचकं निजिच्ह्रमसंशयम् ॥ १०

यथा त्वतो भयं भूयो न मे किञ्चिद्धविष्यति ॥ १२ श्रीपराक्षर उदाच इत्युक्तेऽपगते दुते संस्मृत्याभ्यागतं हरिः।

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे पुरो । श्रीविष्णुभगवान्ते मनव्य-शरीर धारणकर जो लीलासे ही इन्द्र, शङ्कर और

सम्पूर्ण देवगणको जोतकर महान् कर्म किये थे (वह भै सून चुका] ॥ १ ॥ इनके सिवा देवताओंकी चेष्टाओंका विधात करनेवाले उन्होंने और भी जो कमें किये थे, हे

पहाशाय ! वे सब मुझे सुनाइये; मुझे उनके सुननेका यहा कुत्हल हो रहा है ॥ २ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—हे बहार्षे !

मनुष्यावतार लेकर जिस प्रकार काशीपुरी जलाबी थीं वह मैं सुनाता हूँ, तुम ध्यान देकर सुनो ॥ ३ ॥ पौण्ड्कवंदरीय बासुदेव नामक एक राजाको अज्ञानमोहित पुरुष 'आप वासुदेवरूपसे पृथिवीपर अवतीर्ण हुए हैं' ऐसा कहकर स्तृति किया करते थे ॥ ४ ॥ अन्तमें वह भी बही मानने

इस प्रकार आत्म-विस्मृत हो जानेसे उसने विष्णुभगवान्के समस्त चिद्र धारण कर लिये॥५॥ और महात्मा कृष्णचन्द्रके पास यह सन्देश लेकर दृत भेजा कि "है मृद्ध ! अपने वासुदेव नामको छोड़कर मेरे वक्क आदि

सम्पूर्ण चिह्नोंको छोड़ दे और यदि तुझे जोवनकी इच्छा है तो मेरी दारणमें आ" ॥ ६-७ ॥ दुतने जब इसी प्रकार कहा तो श्रीजनादी उससे हँसकर बोले—"ठीक है, मैं अपने चिह्न चक्रको हैरे प्रति छोडूँगा। हे दूत ! मेरी ओरसे तू पौण्ड्रकसे जाकर

लगा कि 'मैं वासुदेवरूपसे पृथिवीमें अवतीर्ण हुआ हूँ !'

निस्सन्देह अपने चिह्न चक्रको तेरे ऊपर छोडूँगा ॥ १० ॥ 'और तूने जो आज्ञा करते हुए 'आ' ऐसा वज्रा है सो मैं उसे भी अवस्य पालन करूँगा और कल शोध ही तेरे पास पहुँचूँगा ॥ ११ ॥ हे राजन् ! तेरी इसणमे आकर मैं वही उपाय करूँगा जिससे फिर तुझरो मुझे कोई भय

लिया है, तुझे जो करना हो सो कर ॥ ८-९ ॥ मैं अपने

चिह्न और वेष घारणकर तेरे नगरमें आऊँगा ! और

न रहे ॥ १२ ॥ श्रीपराद्यस्जी बोले—श्रीकृष्णचन्द्रके ऐसा कडनेपर जब दृत चला गया तो भगवान् स्मरण करते ही उपस्थित हुए

गरुडपर चढकर तरंत उसकी राजधानीको चले॥ १३॥ गरुवान्तमधारुद्धा त्यरिवस्तत्परं ययाँ ॥ १३

यह फहना कि मैंने तेरे वाक्यका वास्तविक भाव समझ

ततस्त केशबोद्योगं श्रुत्वा काशिपतिस्तदा । सर्वसैन्यपरीवारः पार्ष्णित्राह उपाययौ ॥ १४ ततो बलेन महता काशिराजबलेन च। पौण्डको वासदेवोऽसौ केशवाभिमुखो ययौ ॥ १५ तं ददर्श हरिर्दराददारस्यन्दने स्थितम्। चक्रहस्तं गदाशाङ्गीबाहुं पाणिगताम्युजम् ॥ १६ स्रग्धरं पीतवसनं सूपर्णरचितध्वजम्। वक्षःस्थले कृतं वास्य श्रीवत्सं ददुशे हरिः ॥ १७ किरीटकुण्डलधरं नानारत्नोपशोधितम्। तं दुष्टा भावगम्भीरं जहास मरुडध्यजः ॥ १८ युव्धे च बलेनास्य हस्त्यश्चबलिना द्विज । निर्सिशासिगदाशुलशक्तिकार्मुकशालिना ॥ १९ क्षणेन शार्कृतिर्मुक्तैश्शरैररिविदारणैः । गदाचक्रनिपातेश्च सुदयामास तद्वलम् ॥ २० काशिराजवलं चैवं क्षयं नीत्वा जनार्दनः । श्रीभगवानुबाच पौण्डुकोक्तं त्वया यतु दूतवक्त्रेण मां प्रति । चक्रमेतत्समृत्सृष्टं गदेवं ते विसर्जिता। श्रीपराशर उवाच इत्यद्यार्य विमुक्तेन चक्रेणासौ विदारितः । ततो हाहाकृते लोके काशिपुर्यधियो बली ।

उवाच पौण्डुकं मूहमात्मचिह्नोपलक्षितम् ॥ २१ समुत्स्जेति चिह्नानि तत्ते सम्पादयाम्यहम् ॥ २२ गर्कत्मानेष चोत्सृष्टस्समारोहतु ते ध्वजम् ॥ २३ पातितो गदया भन्नो ध्वजश्चास्य गरुत्पता ॥ २४ युद्धे वासुदेवेन मित्रस्वापचितौ स्थितः ॥ २५ ततश्शार्ङ्घनुर्युक्तैशिक्षत्त्वा तस्य शिरश्शरैः । काशिपुर्या स विक्षेप कुर्वल्लोकस्य विस्मयम् ॥ २६ हत्वा तं पौण्डकं शौरिः काशिराजं च सानुगम् । पुनर्द्वारवर्ती प्राप्तो रेमे स्वर्गगतो यथा॥ २७ तच्छिरः पतितं तत्र दृष्टा काशिपतेः पुरे । जनः किमेतदित्याहच्छित्रं केनेति विस्मितः ॥ २८

भगवान्के आक्रमणका समावार सुनकर काशीनरेश भी उसका पृष्टपोषक (सहायक) होकर अपनी सम्पूर्ण सेना ले उपस्थित हुआ ॥ १४ ॥ तदनन्तर अपनी महान् सेनाके सहित काशीनोशाकी सेना लेकर पीण्ड्रक वासुदेव श्रोकृष्णचन्द्रके सम्मुख आया ॥ १५ ॥ धगबान्ने दूरसे ही उसे हाथमें चक्र, गदा, शार्ट्स-धनुष और पदा लिये एक उत्तम रथपर बैंडे देखा ॥ १६ ॥ श्रीहरिने देखा कि उसके कण्डमें वैजयन्तीमाला है, शरीरमें पीताम्बर है, गरुडरचित ध्यजा है और वक्षःस्थलमें श्रीवत्सचिद्व हैं ॥ १७ ॥ उसे नाना प्रकारके स्लॉसे सुसन्नित किरीट और कुण्डल धारण किये देखकर श्रीगरुडध्वज भगवान् गम्भीर भावसे हँसने रूपे ॥ १८ ॥ और हे द्विन ! उसकी हाथी-घोड़ोसे बलिष्ट तथा निश्चिश खब्र, गदा, शुल, शक्ति और धनुष आदिसे संस्थित सेनासे यद्ध करने छगे ॥ १९ ॥ श्रीभगवान्ते एक क्षणमें ही अपने ज्ञार्ज़-धनुषसे छोड़े हुए राजुओंको विदीर्ण करनेवाले तीक्ष्ण वाणों तथा गदा और चक्रसे उसकी सन्पूर्ण सेनाको नष्ट कर डाला ॥ २० ॥ इसी प्रकार

चिह्नोसे युक्त मृद्धमति यौण्डुकसे कहा ॥ २१ ॥ श्रीभगवान् बोले—हे पौण्ड्क ! मेरे प्रति तुरे जो दतके मुखसे यह कहरू।या था कि मेरे चिह्नोंको छोड़ दे सी मैं तेर्र सम्पुख उस आज्ञाको सम्पन्न करता है ॥ २२ ॥ देखा. यह मैंने चक्र छोड़ दिया, यह तेरे ऊपर गदा भी छोड़ दी और यह गरुट भी छोड़े देता है, यह तेरी ध्वजापर आरूढ हो ॥ २३ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले—ऐसा करकर छोड़े हुए चक्रने

काड़िएजकी सेनाको भी मष्ट करके श्रीजनार्दनने अपने

पौण्डकको विदीर्ण कर डाला, गदाने नीचे गिरा दिया और गरुडने उसकी ध्वजा तोड डाली ॥ २४ ॥ तदनन्तर सम्पूर्ण सेनामें हाहाकार मच जानेपर अपने मित्रका बदला चुकानेके लिये खड़ा हुआ काशीनरेश श्रीवासुदेवसे लड़ने लगा ॥ २५ ॥ तब भगवान्ने शार्क्न-धनुषसे छोड़े हुए एक वागसे उसका सिर काटकर सम्पूर्ण लोगोंको विस्मित करते हुए काशीपुरीमें फेंक दिया॥ २६॥ इस प्रकार पौण्डक और काशीनरेशको अनुचरोसहित मास्कर भगवान् फिर हुएकाको स्त्रैट आये और वहाँ स्वर्ग-सदुश युखका अनुभव करते हुए रमण करने लगे ॥ २७ ॥ इधर काशीपुरीमें काशिएजका सिर गिरा देखा सम्पूर्ण नगरनिवासी विस्मयपूर्वक कहने लगे—'यह

क्या हुआ ? इसे किसने काट डाला ?'॥ २८॥

ज्ञात्वा तं वासुदेवेन हतं तस्य सुतस्ततः। पुरोहितेन सहितस्तोषयामास शङ्करम्॥ २९ अविमुक्ते महाक्षेत्रे तोषितस्तेन शङ्करः। वरं वृणीष्ट्रेति तदा तं प्रोवाच नृपात्पजम् ॥ ३० स बब्ने भगवन्कृत्या पितृहन्तुर्वधाय मे । समुत्तिष्ठतु कृष्णस्य त्वत्रसादान्यहेश्वर ॥ ३१ श्रीपसभर उजाच एवं भविष्यतीत्युक्ते दक्षिणाशेरनन्तरम्। महाकृत्या समुत्तस्थौ तस्यैवाग्नेर्विनाशिनी ॥ ३२ ततो ज्वालाकरालास्या ज्वलकेशकपालिका । कृष्ण कृष्णेति कृपिता कृत्या द्वारवर्ती ययौ ॥ ३३ तामवेश्य जनस्रासाद्विचलल्लोचनो मुने। ययौ शरण्यं जगतां शरणं मधुसुद्रनम् ॥ ३४ काशिराजसतेनेयमाराध्य वृषभध्यजम्। उत्पादिता महाकृत्येत्यवगम्याथ चक्किणा ॥ ३५ जहि कत्यामिमामुद्रां वहिज्वालाजटालकाम्। चक्रमुत्सृष्टमक्षेषु क्रीडासक्तेन लीलया ॥ ३६ तद्विमालाजटिलञ्चालो द्वारातिभीषणाम् कृत्यामनुजगामाश् विष्णुचक्रं सुदर्शनम् ॥ ३७ चक्रप्रतापनिर्देग्धा कृत्या माहेश्वरी तदा। ननाञ्च वेगिनी वेगात्तदप्यनुजगाम ताम् ॥ ३८ कृत्या वाराणसीमेव प्रविवेश त्वरान्विता । विष्णुचकप्रतिहतप्रभावा मुनिसत्तम ॥ ३९ ततः काशीबलं भूरि प्रमथानां तथा बलम् । समस्तरास्त्रास्त्रयुतं चकस्याभिमुखं ययौ ॥ ४० शस्त्रास्त्रमोक्षचतुरं दग्ध्या तङ्कलमोजसा। कृत्यागर्भामशेषां तां तदा वाराणर्सी पुरीम् ॥ ४१

सभूभृद्भृत्यपौरां तु साश्चमातङ्गमानवाम्।

अशेषगोष्ठकोशां तां दुर्निरीक्ष्यां सुरैरपि ॥ ४२

जब उसके पुत्रको मालूम हुआ कि उसे श्रीवासुदेवने भारा है तो उसने अपने पुरोहितके साथ मिलकर भगवान् शंकरको सन्तुष्ट किया ॥ २९ ॥ अविमुक्त महाक्षेत्रमे उस राजकुमारसे सन्तुष्ट होकर श्रीशंकरने कहा—''वर माँग' ॥ ३० ॥ वह बोला—''हे भगवन् ! हे पहेश्वर !! आपकी कृपासे मेरे पिताका वध करनेवाले कृष्णका नाश करनेके लिये (अग्निसे) कृत्या उत्पन्न हो'' ॥ ३१ ॥ श्रीपराशरजी बोले—भगवान् शहूरने कहा, 'ऐसा

ही होगा। उनके ऐसा कहनेपर दक्षिणाप्तिकः चयन करनेके अनन्तर उससे उस अग्निका ही बिनाश करनेवाली कृत्या उत्पन्न हुई॥ ३२॥ उसका कराल मुख ज्वाल्यमालाओंसे पूर्ण भा तथा उसके केश अग्निशिखाके समान दीप्तिमान् और तामवर्ण थे। वह क्रोभपूर्वक 'कृष्ण! कृष्ण!!' कहती द्वारकापुरीमें आयी॥ ३३॥ हे मुने! उसे देखकर लोगोने भय-विचलित नेत्रोंसे

जगद्दित भगवान् मधुसूदनकी शरण ली॥ ३४॥ जब भगवान् चक्रपाणिने जाना कि श्रीशंकरको उपासनाकर काशिराजके पुत्रने ही यह महाकृत्या उत्पन्न की है तो अश्वक्रीडामें लगे हुए उन्होंने लीलासे ही यह कहकर कि 'इस अग्रिज्वालामयी जटाओंबाली भयंकर कृत्याको पार डाल' अपना चक्र लोड़ा॥ ३५-३६॥ तब भगवान् विष्णुके सुदर्शन चक्रने उस अग्रि-

मालाभण्डित जटाओंबाली और अग्निज्वालाओंके कारण

भयानक मुख्याली कृत्याका पीछा किया ॥ ३७ ॥ उस

चक्रके तेजसे दग्ध होकर छिन-भिन्न होती हुई वह माहेश्वरी कृत्या अति वेगसे दौड़ने लगी तथा यह चक्र भी उतने ही बेगसे उनका पीछा करने लगा॥ ३८॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! अन्तमे विष्णुचक्रसे हतप्रभाव हुई कृत्याने शीवतासे काशोमें ही प्रवेश किया॥ ३९॥ ३स समय काशी-नरेशकी सम्पूर्ण सेना और प्रथम-गण अस्त-शस्त्रोसे सुस्राज्जत होकर उस चक्रके सम्मुख आये॥ ४०॥

तव यह चक्र अपने तेबसे शस्त्रास्त-प्रयोगमे कुशल उस सम्पूर्ण सेनाको दम्भकर कृत्याके सहित सम्पूर्ण वाराणसीको जलाने लगा ॥ ४१ ॥ जो राजा, प्रजा और सेवकांसे पूर्ण थी; घोड़े, हाथी और मनुष्पांसे भरी थी; सम्पूर्ण गोष्ठ और कोशोंसे युक्त थी और देवताओंके

^{*} इस वाक्यका अर्थ यह भी होता है कि 'भेरे वधके लिये मेरे पिताके मारोवाले कृष्णके पास कृत्या उत्पन्न हो।' इसलिये बंदि इस बरका विपरीत परिणाम हुआ तो उसमें शंका नहीं करनी चाहिये।

ज्वालापरिष्कृताशेषगृहप्राकारचत्वराम् । ददाह तद्धरेशकं सकलामेव तां पुरीम् ॥ ४३

अक्षीणामर्**यमत्युत्रसाध्यसाधनसस्पृहम्**

तश्कं प्रस्फुरद्दीप्ति विष्णोरभ्याययौ करम् ॥ ४४

इति श्रीविष्णुपुराणे पञ्चभेऽदो चतुर्सिकोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

लिये भी दुर्दर्शनीय थी उसी काशीपुरीको भगवान विष्णुके इस चक्रने इसके गृह, कोट और चबुतरोंमें अफ्रिकी ज्वालाएँ

प्रकटकर जला डाल्प ॥ ४२-४३ ॥ अन्तमें, विसका क्रोध अभी शान्त नहीं हुआ तथा जो अत्यन्त उम्र कर्म करनेको

उत्सुक था और जिसको दीप्ति नारों और फैल रही श्री वह चक्र

फिर लैंटकर भगवान् विष्णुके हाधमें आ गया ॥ ४४ ॥

पैतीसवाँ अध्याय

साम्बका विवाह

धीमेंत्रेय उवाच

भय एवाहमिच्छामि बलभद्रस्य धीमतः।

श्रोतं पराक्रमं ब्रह्मन् तन्ममाख्यातुमहीसि ॥ यमुनाकर्षणादीनि श्रुतानि भगवन्यया ।

तत्कथ्यतां महाभाग यदन्यत्कृतवान्बलः ॥

श्रीपराशर उवाच

मैत्रेय श्रुयतां कर्म यद्रामेणाभवत्कृतम्। धरणीधृता ॥

अनन्तेनाप्रमेयेन शेषेण सुयोधनस्य तनयां स्वयंवरकृतक्षणाम्।

बलादादत्तवान्धीरस्साम्बो जाम्बवतीसतः ॥

ततः क्रद्धा महावीर्याः कर्णद्योधनादयः ।

भीष्मद्रोणादयश्चेनं बबन्धुर्युधि निर्जितम् ॥ तच्छत्वा यादवास्तर्वे क्रोधं दुर्योधनादिषु ।

पैत्रेय चक्रः कृष्णश्च तात्रिहन्तुं महोद्यमम् ॥ ताविवार्यं बलः प्राह मदलोलकलाक्षरम् ।

मोक्ष्यन्ति ते पद्धचनाद्यास्याम्येको हि कौरवान् ॥ श्रीपराञ्च हवाच

बलदेवस्ततो गत्वा नगरं नागसाह्वयम्।

बाह्योपवनमध्येऽभूत्र विवेश च तत्पुरम् ॥ बलमागतमाज्ञाय भूषा दुर्योधनादयः ।

गामर्घ्यमुदकं चैव रामाय प्रत्यवेदयन्॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे बहान ! अब मैं फिर

मतिमान् बलभद्रजीके पराक्रमको वार्ता सुनना चाइता हूँ . आप वर्णन कीजिये।। १।। हे भगवन् ! मैंने उनके

यमुनाकर्यणादि पराक्रम तो सुन लिये; अब हे महाभाग ! उन्होंने जो और-और विक्रम दिखलाये है उनका वर्णन कोजिये ॥ २ ॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे मैत्रेय ! अनल, अप्रमेय, धरणीधर शेषाबतार श्रीबलरामजीने जो कर्म किये थे, वह

सनो — ॥ ३ ॥ एक बार जाम्बवती-सन्दन वीरवर साम्बने खर्ववरके

अवसरपर दुर्वोधनको पुत्रीको बलात् हरण किया ॥ ४ ॥

तब महाबीर कर्ण, दुर्योधन, भीष्म और द्रोण आदिने कुद्र,

होकर उसे युद्धमें इसकर बाँध लिया ॥ ५ ॥ यह समाचार पाकर कृष्णचन्द्र आदि समस्त यादबोने दुर्वोधनादिषर

ब्रुद्ध होकर उन्हें मारनेके किये बड़ी तैयारी की ॥ ६ ॥ उनको रोककर श्रीबलरामजीने मदिराके उन्पादसे

श्रीपराशरजी बोले-- तदनन्तर. हस्तिनापुरके समीप पहुँचकर उसके बाहर एक उद्यानमें

श्रीबलदेवजी ठहर गये; उन्होंने नगरमें प्रवेश नहीं किया॥८॥

बलरामजीको आये जान दुर्योधन आदि राजाओंने उन्हें गी, अर्घ्य और पादादि निवेदन किये॥ ९॥

लड़खड़ाते हुए शब्दोंमें कहा—"कौरवगण मेरे कहनेसे साम्बको छोड़ देंगे अतः मैं अकेला ही उनके पास जाता 常" 11 9 11

गृहीत्वा विधिवत्सर्वं ततस्तानाह कौरवान् । आज्ञाययत्युप्रसेनस्साम्बमाशु विमुञ्जत ॥ १० ततस्तद्भवनं श्रत्वा भीष्मद्रोणादयो नृपाः। कर्णदुर्योधनाज्ञाश्च चुक्षुभुर्ह्विजसत्तम ॥ ११ **ज्युश्च कुपितास्मर्वे बाह्निकाद्याश्च कौरवाः ।** अराज्याई यदोर्वंशमवेक्ष्य मुसलायुधम् ॥ १२ भो भो किमेतद्भवता बलभद्रेरितं वच:। अक्तां कुरुकुलोत्थानां यादवः कः प्रदास्यति ॥ १३ उत्रसेनोऽपि यद्याज्ञां कौरवाणां प्रदास्यति । तदलं पाण्डुरैङ्छत्रैर्नृपयोग्यैर्विडम्बर्नैः ॥ १४ त दुन्छ बल मा वा त्वं साम्बयन्यायचेष्टितम् । विमोक्ष्यामी न भवतश्रोत्रसेनस्य ज्ञासनात् ॥ १५ प्रणतियां कृतास्माकं पान्यानां कुकुरान्धकैः । ननाम सा कृता केयमाज्ञा स्वामिनि भृत्यतः ॥ १६ गर्वमारोपिता यूयं समानासनभोजनैः। को दोषो भवतां नीतियंत्रीत्या नावलोकिता ॥ १७ अस्माभिरघों भवतो योऽयं बल निवेदितः । प्रेम्णेतत्रैतदस्माकं कुलाद्युष्पत्कुलोचितम् ॥ १८ औपराज्य उवाच इत्युक्तवा कुरवः साम्बं मुञ्जामो न हरेस्पृतम् । कृतैकनिश्चयास्तूणै विविश्पर्गजसाह्वयम् ॥ १९

मतः कोपेन चाघूर्णस्ततोऽधिक्षेपजन्मना । उत्थाय पाण्यां वसुधां जवान स हलायुधः ॥ २० ततो विदारिता पृथ्वी पार्क्णिघातान्महात्वनः । आस्फोटबामास तदा दिशश्चब्देन पूरवन् ॥ २१ उवाच चातिताम्राक्षो भुकुटीकुटिलाननः ॥ २२ अहो मदावलेपोऽयमसाराणां दुरात्मनाम् । कौरवाणां महीपत्वपस्पाकं किल कालजम् । उप्रसेनस्य ये नाज्ञां पन्यन्तेऽद्यापि लङ्गनम् ॥ २३ उन्नसेनः समध्यास्ते सुधर्मा न शचीपतिः । धिङ्गानुबदातोच्छिष्टे तुष्टिरेयां नृपासने ॥ २४ उन सबको विधिवत् प्रहण कर बलमद्रजीने कौरवोंसे कहा—''राजा उपसेनको आज्ञा है आपलोग साम्बको तुरत्त छोड़ दें''॥ १०॥ है द्विजसतम ! बलगमर्जीके इन यचनोंको सुनकर

है द्विजसतम ! बल्यामर्जीके इन यचनोंको सुनकर भीष्ण, होण, कर्ण और दुर्योधन आदि राजाओंको बड़ा क्षोभ हुआ ॥ ११ ॥ और यदुवंदाको राज्यपदके अयोग्य समझ ब्राह्मिक आदि सभी कौरतगण कुर्पत होकर मूसल्धारी बलभद्रजीसे कहने लगे— ॥ १२ ॥ "है बलभद्र ! तुम यह क्या कह रहे हो; ऐसा कौन यदुवंद्यी है जो कुरुकुलोरात्र किसी वीरको आज्ञा दे ? ॥ १३ ॥ यदि उमसेन भी कौरवोंको आज्ञा दे सकता है तो राजाओंके

योग्य कीरबोंके इस श्रेत छत्रका क्या प्रयोजन

है ? ॥ १४ ॥ अतः हे बरुएम ! तम जाओ अथवा रहो,

हमलोग तुम्हारी या उद्यक्षेत्रकी आज्ञासे अन्यायकामी साम्बको नहीं छोड़ सकते ॥ १५ ॥ पूर्वकालमें कुकुर और अञ्चक्कंद्रीय यादवगण हम माननीयोंको प्रणाम किया करते थे सो अब वे ऐसा नहीं करने तो न सही किन्त स्वामीको यह सेवककी औरसे आज्ञा देना कैसा? ॥ १६ ॥ तमलोगोके साथ समान आसन और भोजनका व्यवहार करके तुन्हें हमहीने गर्वीला बना दिया है; इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है क्योंकि हमने ही प्रीतिवश नीतिका विचार नहीं किया ॥ १७ ॥ है बलराम ! इमने जो तुम्हें यह अर्घ्य आदि निवेदन किया है यह प्रेमवदा ही किया है, वास्तवमें हमारे कुलकी तरफरी तुन्हारे कुलको अर्ध्यादि देनाः डचित नहीं है" ॥ १८ ॥ श्रीवराञ्चरजी बोले-ऐसा कहकर कौरवगण यह निश्चय करके कि "हम कुष्णके पुत्र साम्बको नहीं छोडेंगे" तुरन्त हस्तिनापुरमें चले गये ॥ १९ ॥ तदनन्तर हस्त्रपुध श्रीबल्समजीने उनके तिरस्कारसे उत्पन्न हुए क्रोधसे मत्त होकर घुरते हुए पृथिबीमें रहत भारी॥ २०॥ महात्मा

बोले— ॥ २१-२२ ॥ "अहो ! इन सारहीन दुग्रत्मा कौरबोंको यह कैसा राजमदका अभिमान है । कौरवोंका महोपालत्व हो स्वतःसिद्ध है और हमारा सामयिक—ऐसा समझकर ही आज ये महाराज उपसेनकी आज्ञा नहीं मानते; बल्कि उसका उल्लिब्धन कर रहे हैं ॥ २३ ॥ आज राजा उपसेन सुधर्मा-सभामें स्वयं विराजमान होते हैं, उसमें शबीपति इन्द्र भी नहीं बैठने पाते। परन्तु इन

बलरामजीके पाद-प्रहारसे पृथियो फट गयी और वे अपने

शब्दसे सम्पूर्ण दिशाओंको गुँजाकर कम्पायमान करने लगे तथा लाल-लाल नेत्र और टेडी भुक्टि करके

पारिजाततरोः पुष्पमञ्जरीर्वनिताजनः । बिभर्ति यस्य भृत्यानां सोऽप्येषां न महीपतिः ॥ २५ समस्तभूभृतां नाथ उपसेनस्त तिष्ठत्। अद्य निष्कौरवापुर्वी कृत्वा यास्यापि तत्पृरीम् ॥ २६ कर्णं दुर्योधनं द्रोणमद्य भीषां सवाद्विकम् । दुश्शासनादीन्धूरि च भूरिश्रवसमेव च ॥ २७ सोमदत्ते ऋलं चैव भीमार्जुनयुधिष्ठिरान्। यमौ च कौरवांश्चान्हत्वा साश्वरथद्विपान् ॥ २८ वीरमादाय ते साम्बं सपत्नीकं ततः पुरीम् । द्वारकामुत्रसेनादीनात्वा द्रक्ष्यापि बान्धवान् ॥ २९ अथ वा कौरवावासं समस्तैः कुरुभिसाह । भागीरथ्यां क्षिपाम्याश् नगरं नागसाहृयम् ॥ ३०

श्रीपरादार उक्सच

इत्युक्त्वा पदरक्ताक्षः कर्षणाधोमुखं हलम् । प्राकारवप्रदुर्गस्य चकर्ष मुसलायुधः ॥ ३१ आयुर्णितं तत्सहसा ततो वै हास्तिनं परम् । दुष्ट्वा संक्षुव्यह्दयाश्चश्चभुः सर्वकौरवाः ॥ ३२ राम राम महाबाहो क्षम्यतां क्षम्यतां त्वया । उपसंद्वियतां कोपः प्रसीद् मुसलायुध् ॥ ३३ एष साम्बस्सपत्नीकस्तव निर्यातिनो वल । अविज्ञातप्रभावाणां क्षायतामपराधिनाम् ॥ ३४

श्रीपराञर उचाच ततो निर्यातयामासुस्साम्बं पत्नीसमन्वितम् ।

निष्क्रम्य स्वपुरात्तूर्णं कौरवा मुनिपुङ्गव ॥ ३५ भीष्पद्रोणकृपादीनां प्रणय्य बदतां प्रियम् । क्षान्तमेव मयेत्याह बलो बलवतां वर: ॥ ३६ अद्याप्याधूर्णिताकारं लक्ष्यते तत्पुरं द्विज । एष प्रभावो रामस्य बलशौर्योपलक्षणः॥ ३७ ततस्तु कौरवास्साम्बं सम्पूज्य हलिना सह । प्रेषयामासुरुद्वाहधनभार्यासमन्वितम् 11 34

कौरवोंको धिकार है जिन्हें सैकडों मनुष्योंके उच्छिष्ट राजसिंहासनमें इतनी तुष्टि है ॥ २४ ॥ जिनके सेवकोंकी क्षियाँ भी पारिजात-वृक्षकी पूष्प-मञ्जरी धारण करती हैं वह भी इन कीरवोके महाराज नहीं है ? [यह कैसा आश्चर्य हैं ?] ॥ २५ ॥ वे उपसेन ही सम्पूर्ण राजाओंके महाराज बनकर रहें। आज मैं अकेला ही पृथिवीको कौरवहीन करके उनको द्वारकापुरीको जाऊँगा ॥ २६ ॥ आज कर्ण, दुर्थोधन, द्रोण, भीष्म, बाह्रिक, दुश्शासनादि, भूरि, भूरिश्रवा, सोमदत्त, शल, भीम, अर्जुन, युधिष्ठिर, नकुल और सहदेव तथा अन्यान्य समस्त कौरवोको उनके हाधी-धोड़े और रथके सहित मारकर तथा नववधूके साथ वीरवर साम्बको लेकर ही मैं द्वारकापरीमें जाकर उपसेन आदि अपने बन्धु-बान्धवीको देखुँगा॥२७—२९॥ अथवा समस्त कौरबोंके सहित उनके निवासस्थान इस हस्तिनापुर

नगरको ही अभी गङ्गाजीमें फेंके देता हैं"॥ ३०॥ श्रीपराशरजी बोले-ऐसा कहकर मदसे अरुणनयन मुसलायुध श्रीबलभद्रजीने हलकी नौंकको हस्तिनापुरके साई और दुर्गसे युक्त प्राकारके मूलमें लगाकर र्खीचा ।। ३१ ।। उस समय सम्पूर्ण हस्तिनापुर सहसा डगमगाता देख समस्त काँखगण शुट्धवित होकर भयभीत हो गये॥ ३२॥ [और कहने छमे—] "हे राम ! हे राम ! हे महाचाहो ! शमा करो, क्षमा करो : हे मुसल्प्रवृध ! अपना कौप शान्त करके प्रसन्न होइये ॥ ३३ ॥ हे बलराम ! टम आपको पत्नीके सहित इस साम्बको सौंपते हैं। हम आपका प्रभाव नहीं जानते थे, इसीसे आपका अपराध किया; कृपया क्षमा कीजिये" ॥ ३४ ॥ श्रीपराक्षरजी बोले--हे मुनिश्रेष्ठ ! तदनन्तर कौरबोने

तरत्त ही अपने नगरसे बाहर आकर पत्नीसहित साम्बको श्रीबलरामजीके अर्पण कर दिया ॥ ३५ ॥ तब प्रणामपूर्वक प्रिय वाक्य बोलते हुए भीषा, द्रोण, कुप आदिसे बीखर बलरामजीने कहा—"अच्छा मैंने क्षमा किया" ॥ ३६ ॥ है द्विज ! इस समय भी हस्तिनापुर [गङ्गाकी ओर] कुछ झका हुआ-सा दिखायो देता है, यह श्रीबलरामजीके बल और शुरवीरताका परिचय देनेवाला उनका प्रभाव ही हैं ॥ ३७ ॥ तदनचर कौरबेनि बलरामजीके सहित साम्बका पूजन किया तथा बहत-से दहेज और वधके सहित उन्हें द्वारकापुरी भेज दिया ॥ ३८ ॥

इति श्रीविष्णपुराणे पञ्चमेंऽशे पञ्चत्रिशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ ----

छत्तीसवाँ अध्याय

हिविद-वध

श्रीपराश्चर उवाच

मैत्रेयैतद्वलं तस्य बलस्य बलशालिनः । कृतं यदन्यत्तेनाभूतदपि श्रूयतां त्वया ॥ ₹ नरकस्यासरेन्द्रस्य देवपश्चविरोधिनः । सखाभवन्पहावीयों द्विविदो वानरर्षभः॥ 2 वैरान्बन्धं बलवान्स चकार सुरान्प्रति। नरकं इतवान्कृष्णो देवराजेन चोदितः ॥ 3 करिष्ये सर्वदेवानां तस्मादेतत्रातिक्रियाम् । यज्ञविध्वंसनं कुर्वन् मर्त्यलोकक्षयं तथा ॥ ततो विध्वंसयामास यज्ञानज्ञानमोहितः। बिभेद साधुमर्यादां क्षयं चक्रे च देहिनाम् ॥ ददाह सवनान्देशान्पुरप्रामान्तराणि च। क्रचिष्ठ पर्वताक्षेपैर्यामादीन्समचूर्णयत् ॥ शैलानुत्पाट्य तोयेषु मुमोचाम्बुनिधौ तथा । पुनश्चार्णवमध्यस्थः क्षोभयामास सागरम् ॥ तेन विक्षोभितशाब्धिरुद्वेलो द्विज जायते । प्रावयंस्तीरजान्यामान्पुरादीनतिवेगवान् कामरूपी महारूपं कृत्वा सस्यान्यशेषतः । ल्ठ-भ्रमणसम्पर्देस्सञ्चर्णवति वानरः ॥ निस्खाध्यायखषट्कारं मैत्रेवासीत्सुदःखितम् ॥ १०

तेन विप्रकृतं सर्वं जगदेतदुरात्मना।
निस्स्वाध्यायवषद्कारं मैत्रेवासीत्सुदुःखितम्॥ १०
एकदा रैवतोद्याने पपौ पानं हलायुधः।
रेवती च महाभागा तथैवान्या वरिक्रयः॥ ११
उद्गीयमानो विलसल्ललनामौलिमध्यगः।
रेमे यदुकुलश्रेष्ठः कुबेर इव मन्दरे॥ १२
ततस्स वानरोऽभ्येत्य गृहीत्वा सीरिणो हलम्।
मुसलं च चकारास्य सम्मुखं च विडम्बनम् ॥ १३
तथैव योषितां तासां जहासाभिमुखं कपिः।
पानपुर्णांश्च करकाञ्चिक्षेपाहत्य वै तदा॥ १४

वानग्रहेष्ट महावीर्यशाली देव-विरोधी दैत्यराज नरकासरका मित्र था॥ २॥ भगवान् कृष्णने देवराज इन्द्रकी प्रेरणासे नरकासुरका बध किया था, इसल्प्ये वीर वानर द्विविदने देवताओं से वैर ठाना ॥ ३ ॥ [उसने निक्षय किया कि] ''मैं मर्त्यलोकका क्षय कर दुँगा और इस प्रकार यज्ञ-वागादिका उच्छेद करके सम्पूर्ण देवताओंसे इसका बदला चुका छुँगा"॥४॥ तबसे अज्ञानमोहित होकर यज्ञोंको विध्वंस करने लगा और साधमर्यादाको मिटाने तथा देहधारी जीवींको नष्ट करने रुगा ॥ ५ ॥ वह वन, देश, पुर और भिन्न-भिन्न प्रामोको जल्म देता तथा कभी पर्वत गिराकर प्रामादिकोंको चूर्ण कर डालना ॥ ६ ॥ कभी पहाड़ोंकी चट्टान उसाडकर समुद्रके जलमें छोड़ देता और फिर कभी समुद्रमें घुसकर उसे क्षुभित कर देता॥७॥ हे हिज ! उससे क्षुभित हुआ समुद्र ऊँची-ऊँची तरहोंसे उठकर अति वेगसे युक्त हो अपने तीरवर्ती प्राम और पुर आदिको डुबी देता था ॥ ८ ॥ बह कामरूपी बानर महान् रूप धारणकर छोटने लगता था और अपने ऌण्डनके संघर्षसे सम्पूर्ण धान्यों (खेतों) को कुचल डालता था ॥ ९ ॥ है द्विज ! उस दुरात्माने इस सम्पूर्ण जगतुको स्वाच्याय और वषट्कारसे शुन्य कर दिया था, जिससे यह अत्यन्त दुःसमय हो गया ॥ १० ॥ एक दिन श्रीबलगद्रजी रैवतोद्यानमें [क्रीडासक होकर] मद्यपान कर रहे थे। साथ ही महाभागा रेवती तथा अन्य सन्दर रमणियाँ भी थीं॥ ११॥ उस समय यदुश्रेष्ठ श्रीबलयामजी मन्दराचल पर्वतपर कुनेरके समान [रैवतकपर स्वयं] रमण कर रहे थे ॥ १२ ॥ इसी समय

वहाँ द्विविद वानर आया और श्रोहलभरके हल और

मुसल लेकर उनके सामने ही उनकी नकल करने

रूगा ॥ १३ ॥ वह दशस्या वान्य उन स्वियोकी ओर देख-

देखकर हँसने लगा और उसने मदिरासे भरे हुए घड़े

फोडकर फेंक दिये ॥ १४ ॥

श्रीपराज्ञरकी बोले—हे मैत्रेय! बलशाली

बलरामजीका ऐसा ही पराक्रम था। अब, उन्होंने जो और

एक कर्म किया था वह भी सुनो ॥ १ ॥ द्विविद नामक एक

ततः कोपपरीतात्मा भर्त्सयामास तं हर्ली । तथापि तमवज्ञाय चक्रे किलकिलध्यनिम् ॥ १५ ततः स्मयित्वा स बलो जग्राह मुसलं रुषा । सोऽपि शैलशिलां भीमां जग्राह प्रवगोत्तमः ॥ १६ चिक्षेप स च तां क्षिप्तां पुसलेन सहस्रधा । विभेद यादवश्रेष्ठस्मा पपात महीतले ॥ १७ अथ तन्त्रसरुं चासी समुल्लङ्ख्य प्रवङ्गमः । वेगेनागत्य रोवेण करेणोरस्यताङ्यत् ॥ १८ ततो बलेन कोपेन मुष्टिना मुर्झि ताडितः । पपात रुधिरोद्वारी द्विविदः क्षीणजीवितः ॥ १९ पतता तच्छरीरेण गिरेश्क्षमशीर्यत । मैत्रेय शतघा विविवज्रेणेव विदारितम्॥ २० पुष्पवृष्टिं ततो देवा रामस्योपरि चिक्षिपुः । प्रशर्शसुस्ततोऽभ्येत्य साध्येतते महत्कृतम् ॥ २१ अनेन दष्टकपिना दैत्यपक्षोपकारिणा। जगन्निराकृतं वीर दिष्ट्या स क्षयमागतः ॥ २२ इत्यक्त्वा दिवमाजग्मुर्देवा हृष्टास्सगुह्यकाः ॥ २३

श्रीपराश्चर उचाच एवंविधान्यनेकानि बलदेवस्य धीमतः।

कर्माण्यपरिमेयानि शेषस्य धरणीभृतः ॥ २४

तब ब्रीहरूधरने क्रुद्ध होकर उसे धमकाया तथापि वह उनकी अवज्ञा करके किलकारी मारने लगा॥१५॥ तदनन्तर श्रीबलरामजीने मुसकाकर क्रोधसे अपना मुसल उठा लिया तथा उस वानरने भी एक भारी चट्टान ले ही।। १६॥ और उसे बलरामजोंके ऊपर फैंकी किन्तु यदवीर बलभद्रजीने मुसलसे उसके हजारों टुकड़े कर दिये; जिससे वह पश्चिवीपर गिर पड़ी ॥ १७ ॥ तब उस नानरने बलगमजीके मूसलका बार बचाकर रोषपूर्वक अत्यन्त बेगसे उनकी छातीमें चूँसा मारा॥ १८॥ तत्पश्चात् बलभद्रजीने भी कुद्ध होकर द्विविदके सिरमे धूँसा मारा जिससे यह संधर कमन करता हुआ निजीव होकर पृथियीपर गिर पहा ॥ १९ ॥ है मैत्रेय ! उसके गिरते समय उसके शरीरका आभात पाकर इन्द्र-वदसे विदीर्ण होनेके समान उस पर्वतके दिखरके सैकडों इकडे हो गये ॥ २० ॥

उस समय देवतालोग बलरामजीके ऊपर फुल करसाने लगे और वहाँ आकर "आपने यह बड़ा अच्छा किया" ऐसा कहकर उनकी प्रशंसा करने लगे॥ २१॥ "हे बीर ! दैत्य-पक्षके उपकारक इस दृष्ट वानरने संसारको बड़ा कष्ट दे रखा था; यह बड़े हो सीभाग्यका विषय है कि आज यह आपके हाथों मारा गया।'' ऐसा कहकर गुह्यकोंके सहित देवगण अत्यन हर्षपूर्वक खर्गलोकको चले आये॥ २२-२३॥

श्रीपराशरजी बोले-शेषावतार धरणीधर धीमान् बलभद्रजीके ऐसे हो अनेकों कर्म है, जिनका कोई परिमाण (तुलमा) नहीं बताया जा सकता ॥ २४ ॥

इति श्रीविष्णुप्राणे पञ्चमेऽदी षट्त्रिद्योऽध्यायः ॥ ३६ ॥

सैंतीसवाँ अध्याय

ऋषियोका शाप, यदुवेशविनाश तथा भगवान्का खधाम सिधारना

R

श्रीपरासर उताच एवं दैत्यवधं कृष्णो बलदेवसहायवान्।

बक्रे दृष्टक्षितीशानां तथैव जगतः कृते ॥ क्षितेश्च भारं भगवान्फ्राल्गुनेन समन्वितः । अवतारवामास विभुस्तमस्ताक्षौहिणीवधात् ॥

कृत्वा भारावतरणं भूवो हत्वाखिलाञ्चपान् । ज्ञापव्याजेन विप्राणाम्**पसंहतवान्कलम्** ॥ श्रीपराञारजी बोले—हे मैत्रेय ! इसी प्रकार बलभद्रजीके उपकारके स्टिय

श्रीकृष्णचन्द्रने दैत्यों और दुष्ट ग्रजाओंका किया॥१॥ तथा अन्तमें अर्जुनके साथ मिलकर

भगवान् कृष्णने अठारह अश्वीहिणी सेनाको मारकर पृथिवीका भार उतारा॥२॥ इस प्रकार सम्पूर्ण

राजाओंको मारकर पृथिवीका भारावतरण किया और फिर

ब्राह्मणोंके शापके मिषसे अपने कुळका भी उपसंहार कर

8

4

उत्सुज्य द्वारकां कृष्णस्यक्त्वा मानुष्यमात्मनः । सांशो विष्णुमयं स्थानं प्रविवेश मुने निजम् ॥ श्रीमैत्रेच उदाच स विप्रशापव्याजेन संजहे स्वकुलं कथम् । कथं च मानुषं देहपुत्ससर्ज जनाईनः॥

विश्वामित्रस्तथा कण्वो नारदश्च महामुनिः।

पिण्डारके महातीर्थे दृष्टा यदुकुमारकैः ॥ ततस्ते यौवनोन्पत्ता भाविकार्यप्रचोदिताः ।

साम्बं जाम्बवतीपुत्रं भूषयित्वा स्त्रियं यथा ॥ प्रश्रितास्तान्युनीनूचुः प्रणिपातपुरस्सरम् ।

इयं स्त्री पुत्रकामा वै ब्रूत कि जनविष्यति ॥

श्रीपराश्चर उनाच

दिव्यज्ञानोपपञ्चास्ते विप्रलब्धाः कुमारकैः ।

मुनयः कुपिताः प्रोचुर्मुसलं जनविष्यति ॥

सर्ववादवसंहारकारणं भुवनोत्तरम् । येनासिलकुलोत्सादो यादवानां भविष्यति ॥ १०

इत्युक्तास्ते कुमारास्तु आचचक्षूर्यश्रातश्रम् । उथसेनाय मुसलं जज्ञे साम्बस्य बोदरात् ॥ ११

तदुवसेनो मुसलमयशुर्णमकारयत्। जज्ञे तदेरकाचूर्णं प्रक्षिप्तं तैमंहोदधौ ॥ १२

मुसलस्याथ लोहस्य चूर्णितस्य तु यादवैः । खण्डं चूर्णितशेषं तु ततो यत्तोमराकृति ॥ १३

तदप्यम्बनिधौ क्षिप्तं मत्त्यो जबाह जालिभिः । घातितस्योदरातस्य लुच्यो जन्नाह तज्जराः ॥ १४

बिज्ञातपरमार्थोऽपि भगवान्मधुसूद्रनः ।

नैच्छत्तदन्यथा कर्तुं विधिना यत्समीहितम् ॥ १५

देवैश्च प्रहितो वायुः प्रणिपत्याह केशवम् ।

रहस्येवमहं दुतः प्रहितो भगवन्सुरै: ॥ १६ वस्वश्चिमस्दादित्यस्द्रसाध्यादिभिस्सह विज्ञापयति शक्रस्वां तदिदं श्रूयतां विभो ॥ १७ दिया ॥ ३ ॥ हे मुने ! अन्तमें द्वारकापुरीको छोड़कर तथा अपने मानव-हारीरको त्यागकर श्रीकृष्णचन्द्रने अपने अंहा (बलराम-प्रद्युप्तादि) के सहित अपने विष्णुमय धाममें

अवेदा किया ॥ ४ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे मुने ! श्रीजनार्दनने विप्रशापके मिषसे किस प्रकार अपने कुलका नाश किया और अपने मानव-देहको किस प्रकार छोडा ? ॥ ५ ॥ श्रीपराशरजी बोले-एक बार कुछ यदकुमारीने महातीर्थ पिण्डारक-क्षेत्रमें विश्वामित्र, कण्व और नारद

आदि महामुनियोको देखा ॥ ६ ॥ तब यौवनसे उत्पत्त हुए उन बालकॉने होनहारकी प्रेरणासे जाम्बवतीके पुत्र साम्बका सी-वेष बनाकर उन मुनीधरोंको प्रणाम करनेके

अनन्तर अति नम्रतासे पृछा—"इस स्त्रीको पुत्रकी इच्छा है, हे मुनिजन ! कहिये यह क्या जनेगी ?'' ॥ ७-८ ॥ श्रीपराकारची बोले—यदुकुमारोंके इस प्रकार धोखा देनेपर उन दिव्य ज्ञानसम्पन्न मुनिबर्नोने कृपित होकर

कहा--"यह एक लोकोतर मुसल जनेगी वो समस्त यादवोंके नाराका कारण होगा और जिससे यादवोंका सम्पूर्ण कुल संसारमें निर्मुल हो जायगा ॥ ९-१० ॥ मुनिगणके इस प्रकार कहनेपर उन कुमारोंने सम्पूर्ण

वृतान्त ज्यों-का-त्यों राजा उपसेनसे कह दिया तथा साम्बके पेटसे एक मूसल उत्पन्न हुआ ॥ ११ ॥ उप्रसेनने उस लोहमय मुसलका चूर्ण करा डाला और उसे उन बालकोने [ले जाकर] समुद्रमें फेंक दिया, उससे वहाँ बहुत-से सरकण्डे उत्पन्न हो गये ॥ १२ ॥ यादवॉद्वारा चूर्ण

किये गये इस मुसलके लोहेका जो भालेकी नोकके समान

एक खण्ड चूर्ण करनेसे बचा उसे भी समुद्रहीमें फिकवा दिया। उसे एक मछली निगल गर्का। उस मछलीको मछेरीने पकड़ लिया तथा चीरनेपर उसके पेटसे निकले हुए उस मुसलखण्डको जरा नामक व्याधने ले लिया॥ १३-१४॥ भगवान् मधुसुदन इन समस्त बातोंको यथावत् जानते थे तथापि उन्होंने विधाताकी

इच्छाको अन्यथा करना न चाहा ॥ १५ ॥ इसी समय देवताओंने वायुको भेजा । उसने एकान्तमें श्रीकृष्णचन्द्रको प्रणाम करके कहा—"भगवन् । मुहो

देवताओंने दूत बनाकर भेजा है।। १६॥ "हे विभो ! वसुगण, अधिनीकुमार, रुद्र, आदित्य, मरुद्रण और साध्यादिके सहित इन्ह्रने आपको जो सन्देश मेजा है वह

हो साथ पृथिवोका भार उतारनेके क्रिये अवतीर्ण हुए

आपको सौ वर्षसे अधिक बीत चुके हैं ॥ १८ ॥ अब आप

दुराचारी दैत्योंको मार चुके और पृथियीका भार भी उतार

भारावतरणार्थीय वर्षाणामधिकं शतम् । भगवानवतीर्णोऽत्र त्रिदशैस्सह चोदितः ॥ १८

34° 5'5]

दर्वता निहता दैत्या भूवो भारोऽवतारितः। त्वया सनाधास्त्रिदशा भवन्तु त्रिदिवे सदा ॥ १९

तदतीतं जगन्नाथ वर्षाणामधिकं शतम्।

इदानीं गम्यतां स्वर्गों भवता यदि रोचते ॥ २० देवैर्विज्ञाप्यते देव तथात्रैव रतिस्तव। तत्स्थीयतां यथाकालमाएयेयमनुजीविभिः ॥ २१ श्रीभगवानुवाच

यस्बमात्यास्त्रिलं दूत वेद्म्येतदहमप्युत। प्रारब्ध एव हि मया यादवानो परिक्षय: ॥ २२ भुवो नाद्यापि भारोऽयं यादवैरनिवर्हितैः ।

अवतार्य करोप्येतत्सप्तरात्रेण सत्वरः ॥ २३ यथा गृहीतामम्भोधेर्दस्वाहं द्वारकाभुवम् । यादवानुपसंहत्य यास्यापि त्रिदशालयम् ॥ २४ मनुष्यदेहमृत्सुन्य सङ्कर्षणसहायवान् । प्राप्त एवास्मि मन्तब्यो देवेन्द्रेण तथामरैः ॥ २५ जरासन्धादयो येऽन्ये निहता भारहेतवः ।

क्षितेस्तेभ्यः कुमारोऽपि यदूनां नापन्नीयते ॥ २६ तदेतं सुमहाभारमवतार्यं क्षितेरहम् । वास्याप्यपरलोकस्य पालनाय ब्रवीहि तान् ॥ २७ श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तो बासुदेवेन देवदूत: प्रणम्य तम् । मैत्रेय दिव्यया गत्या देवराजान्तिकं ययौ ॥ २८ भगवानष्यथोत्पातान्द्व्यभौमान्तरिक्षजान् । ददर्श द्वारकापुर्यं विनाशाय दिवानिशम् ॥ २९

तान्द्रह्वा यादवानाह पश्यध्यमतिदारुणान् । महोत्पाताञ्छमायैषां प्रभासं याम मा चिरम् ॥ ३० श्रीपराश्चर उदाच एवमुक्ते तु कृष्णेन यादवप्रवरस्ततः।

बि॰ पु॰ १४ —

महाभागवतः प्राह प्रणिपत्योद्धवो हरिम् ॥ ३१

चुके, अतः (हमारी प्रार्थना है कि) अब देवगण सर्वदा स्वर्गमें ही आपसे सनाथ हो [अर्थात् आप स्वर्ग प्रधास्कर देवताओंको सनाथ करें] ॥ १९ ॥ हे जगन्नाथ ! आपको भूमण्डलमें प्रभारे हुए सौ वर्षसे अधिक हो गये, अब यदि आपको पसन्द आवे तो स्वर्गलोक पधारिये।। २०॥ हे देव ! देवगणका यह भी कथन है कि यदि आपको यहीं रहना अच्छा रूपे तो रहें, रोचकोंका तो यही धर्ष है कि [स्वामीको] यथासमय कर्तव्यका निवेदन

कर दे" ॥ २१ ॥

श्रीभगवान् बोले — हे दूत ! तुम जो कुछ कहते हो वह मैं सब जानता हूँ, इसिल्धे अब पैने यादवीके नाशका आरम्भ कर ही दिया है ॥ २२ ॥ इन यादवीका संहार हुए बिना अभीतक पृथिवीका भार हल्का नहीं हुआ है, अतः अब सात रात्रिके भीतर [इसकः संहार करके] पृथिवीका भार उतारका में शीध ही [जैसा तुम कहते हो] वहीं करूँगा ॥ २३ ॥ जिस प्रकार यह द्वारकाकी भृमि मैंने समृद्रसे गाँगी थी इसे उसी प्रकार उसे स्त्रेटाकर

तथा यादयांका उपसंहारकर में स्वर्गलोकमें आऊँगा

॥ २४ ॥ अब देवराज इन्द्र और देवताओंको यह समझना चाहिये कि संकर्षणके सहित मैं मनुष्य-दारीरको छोड़कर स्वर्ग पहुँच ही चुका है ॥ २५ ॥ पृथिवीके भारभूत जो जरासन्य आदि अन्य राजागण मारे गये हैं, ये यदुक्सार भी उनसे कम नहीं हैं ॥ २६ ॥ अतः तुम देवताओंसे जाकर कहो कि मैं पृथिवीके इस महाभारको उतारकर हो देव-लोकका पाछन करनेके लिये स्वर्गमें आऊँगा ॥ २७ ॥ श्रीपराहारजी बोले—हे मैत्रेय ! भगवान् वासुदेवके इस प्रकार कहनेपर देवदृत वायु उन्हें प्रणाम करके अपनी दिन्य गतिसे देवराजके पास चले आये॥ २८॥ भगवान्ने देखा कि द्वारकापुरीमें रात-दिन नादाके सुचक

दिव्य, भौष और अन्तरिक्ष-सम्बन्धी महान् उत्पात हो रहे हैं ॥ ३९ ॥ उन उत्पातोंको देखकर भगवानुने यादवोंसे कहा— ''देसो, ये कैसे घोर उपद्रव हो रहे हैं, चल्बे, शीध ही इनकी ज़ात्तिके लिये प्रभासक्षेत्रको चलें" ॥ ३० ॥ श्रीपराशरजी बोले—कृष्णचन्द्रके ऐसा कहनेपर महाभागवत यादवश्रेष्ठ उद्धवने श्रीहरिको प्रणाम करके भगवन्यनाया कार्यं तदाज्ञापय साम्प्रतम् । मन्ये कुलमिदं सर्वं भगवान्संहरिष्यति ॥ ३२

नाशायास्य निर्मित्तानि कुलस्याच्यत लक्षये ॥ ३३ श्रीमगवानुवाच

गच्छ त्वं दिव्यया गत्या मत्स्रसादसमुखया । यद्भवश्चिमं पुण्यं गन्धमादनपर्वते ।

नरनारायणस्थाने तत्पवित्रं महीतले ॥ ३४

मन्यना महासादेन तत्र सिद्धिमवाप्यसि ।

अहं स्वर्गं गमिष्यामि ह्युपसंहत्य वै कुलम् ॥ ३५

द्वारकां च भया त्यक्तां समुद्र: प्रावियव्यति । महेश्म चैकं मुक्ता तु भयान्मत्तो जलाशये ।

तत्र सन्निहितशाहं भक्तानां हितकाम्यया ॥ ३६ श्रीपराधार उवाच

इत्युक्तः प्रणिपत्यैनं जगामाञ् तपोवनम् ।

नरनारायणस्थानं केशवेनानुमोदितः ॥ ३७ ततस्ते यादवास्सर्वे स्थानारुह्य शीघगान् ।

प्रभासं प्रययुस्सार्द्धं कृष्णरानादिभिर्द्धिज ॥ ३८ प्रभासं समनुप्राप्ताः कुकुरान्धकवृष्णयः ।

चक्रस्तत्र महापानं वासुदेवेन चोदिताः॥३९

पिवतां तत्र चैतेषां सङ्घर्षेण परस्परम्। अतिवादेश्यनो जज्ञे कलहाग्निः क्षयावहः ॥ ४०

श्रीमैंडेय उतान

खं खं वै भुखतां तेषां कलहः किन्निमित्तकः । सहर्षो वा द्विजश्रेष्ठ तन्ममाख्यातुमहींस ॥ ४१

श्रीपराशा उवाच पृष्टं मदीयमञ्ज ते न पृष्टमिति जल्पनाम्।

मृष्टामृष्टकथा जज्ञे सङ्घर्षकलहा ततः॥४२

ततश्चान्यमध्येत्य क्रोधसंरक्तलोचनाः ।

जञ्च: परस्परं ते तु शस्त्रैदेवबलात्कृताः ॥ ४३

क्षीणशस्त्राश्च जगृहः प्रत्यासन्नामधैरकाम् ॥ ४४

कहा— ॥ ३१ ॥ "भगवन् ! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अब आप इस कुलका नाश करेंगे, क्योंकि है

अच्यत ! इस समय सब और इसके नाहाके सुचक कारण दिखायी दे रहे हैं; अतः मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं क्या करूँ ?"॥ ३२-३३॥

श्रीधगवान बोले-हे उदय । अब तुम मेरी कृपासे प्राप्त हुई दिव्य गतिसे नर-नारायणके निवासस्थान गन्धमादनपर्वतपर जो पवित्र बदरिकाश्रम क्षेत्र है वहाँ जाओ । पृथिवीतरूपर वही सबसे पावन स्थान है ॥ ३४ ॥

वहाँधर मझमें चित्त लगाकर तुम मेरी कुपासे सिद्धि आह करोगे। अब मैं भी इस कुलका संहार करके स्वर्गलोकको चला जाऊँगा ॥ ३५ ॥ मेरे छोड़ देनेपर सम्पूर्ण हास्काको समुद्र जलमें हुवी देगा; मुझसे भय माननेके कारण केवल

हितकामनासे सर्वदा निवास करता हैं ॥ ३६ ॥ श्रीपरादारजी बोले-पगवानुके ऐसा कहनेपर उद्भवजी उन्हें प्रणामकर तुरन्त ही उनके बतलाये हुए

मेरे भवनको छोड देगा: अपने इस भवनमें मैं भक्तीकी

तपोवन श्रीमरनारायणके स्थानको चले गये ॥ ३७ ॥ हे द्विज । तदनन्तर कुम्ण और बलराम आदिके सहित सम्पूर्ण यादव शीव्रगामी रथोंपर चड्कर प्रभासक्षेत्रमें आये ॥ ३८ ॥ वहाँ पहुँचकर कुकर, अञ्चक और वृष्णि आदि

वंशिक समस्त यादवॉने कृष्णचन्द्रकी घेरणासे महापान और भोजन^र किया॥ ३९॥ पान करते समय उनमें परस्पर कुछ विवाद हो जानेसे वहाँ कुवाक्यरूप ईंधनसे यक्त प्रस्वकारिणी करुदाप्ति धधक उठी ॥ ४० ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले—हे द्वित ! अपना-अपना भोजन

करते हुए उन बादवोमें किस कारणसे कलह (बाग्युड) अथवा संयर्व (हाथापाई) हुआ, सो आप कहिये ॥ ४१ ॥ श्रीपराशरजी बोले—'मेरा भोजन शढ़ है. तेरा अच्छा नहीं है।' इस प्रकार भोजनके अच्छे-

ब्रेको चर्चा करते-करते उनमें परस्पर विवाद और हाथापाई हो गयी ॥ ४२ ॥ तब ये दैवी प्रेरणासे निनश होकर आपसमें क्रोधसे रक्तनेत्र हुए एक-दूसरेपर शुक्रप्रहार करने लगे और जब शुख्र समाप्त हो गये तो पासहीमें उमे हुए सरकण्डे के किये॥४३-४४॥

१. मैद्रेयजीके अग्रिम प्रश्न और पराहारजीके उत्तरसे वहाँ यदुर्वदिखोंका अव-भीजन करना भी सिद्ध होता है।

एरका तु गृहीता वै बच्चभूतेव लक्ष्यते। तया परस्परं जञ्चसंप्रहारे सुदारूणे॥ ४५ प्रद्युष्रसाम्बप्रमुखाः कृतवर्माथ सात्यकिः । अनिरुद्धादयश्चान्ये पृष्ठुर्विपृथुरेव च ॥ ४६ चारुवर्मा चारुकश्च तथाकुरादयो द्विज। एरकारूपिभिर्वज्ञेस्ते निजञ्चः परस्परम् ॥ ४७ निवारवामास हरियद्वांस्ते च केशवम्। सहायं मेनिरेऽरीणां प्राप्तं जघ्नुः परस्परम् ॥ ४८ कृष्णोऽपि कुपितस्तेषामेरकामुष्टिमाददे । वधाय सोऽपि मुसलं मुष्टिलींहमभूतदा ॥ ४९ जधान तेन निइशेषान्याद्वानाततायिनः। जञ्चस्ते सहसाध्येत्य तश्चान्येऽपि परस्परम् ॥ ५० ततश्चार्णवमध्येन जैत्रोऽसौ चक्रिणो स्थः। पश्यतो दारुकस्याध प्रायादश्चैर्धतो द्विज ॥ ५१ चक्रं गदा तथा शाङ्गं तूणी शङ्कोऽसिरेव च । प्रदक्षिणं हरिं कृत्वा जग्मुरादित्यवर्त्मना ॥ ५२ क्षणेन भाभवत्कश्चिद्यादवानामघातितः । ऋते कृष्णं महात्मानं दारुकं च महामुने ॥ ५३ चङ्क्रप्यमाणौ तौ रामं वृक्षमूले कृतासनम् । ददृशाते मुखासास्य निष्क्रामन्तं महोरगम् ॥ ५४ निष्क्रम्य स मुखात्तस्य महाभोगो भुजङ्गमः । प्रययावर्णवं सिद्धैः पूज्यमानस्तथोरगैः ॥ ५५ ततोऽर्घ्यमादाय तदा जलधिसाम्मुखं ययौ । प्रविवेश ततस्तोयं पूजितः पत्रगोत्तमैः ॥ ५६ दुष्टा बलस्य निर्याणे दारुकं प्राह केशवः । इदं सर्वं समाचक्ष्व वसुदेवोष्रसेनयोः ॥ ५७

निर्याणं बलभद्रस्य यादवानां तथा क्षयम् ।

वाच्यश्च द्वारकावासी जनस्सर्वस्तथाहुकः।

तस्माद्भवद्भिसत्वेंस्तु प्रतीक्ष्यो हार्जुनागमः ।

न स्थेयं द्वारकामध्ये निष्कान्ते तत्र पाण्डवे ॥ ६०

योगे स्थित्वाहमध्येतत्परित्यक्ष्ये कलेवरम् ॥ ५८ यथेमां नगरीं सर्वी समुद्रः प्राविषयिति ॥ ५९

उनके हाथमें रूगे हुए वे सरकण्डे कन्नके समान प्रतीत होते थे, उन बज़तुल्य सरकण्डोंसे ही वे इस दारुण युद्धमें एक दूसरेपर प्रहार करने लगे ॥ ४५ ॥ हे द्विज ! प्रशुप्त और सान्त्र आदि कृष्णपुत्रगण, कतवर्मा, सालकि और अनिरुद्ध आदि तथा पृथु, विपृथु, चारुवर्मा, चारुक और अक्रूर आदि यादवराण एक-दुसरेपर एरकारूपी क्ज़ोंसे प्रहार करने लगे ॥ ४६-४७ ॥ जब श्रीष्ठरिने उन्हें आपसमें लड़नेसे रोका तो उन्होंने उन्हें अपने प्रतिपक्षीका सहायक होकर आये हुए समझा और [उनकी बातकी अबहेलनाकर] एक-दूसरेको मारने लगे ॥ ४८ ॥ कृष्णचन्द्रने भो कृषित होकर उनका बध करनेके लिये एक मुट्ठी सरकण्डे उठा लिये। ये मुट्ठीभर सरकण्डे छोहेके मूसल [समान] हो गये॥ ४९॥ उन मूसलरूप सरकण्डोंसे कृत्याचन्द्र सम्पूर्ण आततायी यादवोको मारने लगे तथा अन्य समस्त भादव भी वहाँ आ-आकर एक-दूसरेको मारने लगे॥ ५०॥ हे द्विज ! तदनन्तर भगवान् कृष्णचन्द्रका जैत्र नामक रथ घोड़ोसे आकृष्ट हो दारुकके देखते-देखते समुद्रके मध्यपथसे चला गया ॥ ५१ ॥ इसके पश्चात् भगवान्के शंख, चक्र, गदा, शार्कुधनुष, तरकश और खड्न आदि आयुध श्रीहरिकी प्रदक्षिणाकर सूर्यमार्गसे चले गये ॥ ५२ ॥ हे महापुने ! एक क्षणमें ही महात्मा कृष्णचन्द्र और उनके सारधी दारुकको छोड़कर और कोई यदुवंशी जीवित न बचा॥ ५३॥ उन दोनोंने वहाँ भूमते हुए देखा कि श्रीबलरामजी एक वक्षके तले बैठे हैं और उनके मुखसे एक बहुत बड़ा सर्प निकल रहा है ॥ ५४ ॥ वह विशाल फणचारी सर्प उनके मुखसे निकलकर सिद्ध और नागींसे पूजित हुआ समुद्रकी ओर गया ॥ ५५ ॥ उसी समय समुद्र अर्घ्य लेकर उस (महासर्प) के सम्मुख उपस्थित हुआ

और वह नामश्रेष्ठोंसे पुजित हो समुद्रमें घुस गया ॥ ५६ ॥ इस प्रकार श्रीबलरामजीका प्रयाण देखकर श्रीकृष्ण-चन्द्रने दारुकसे कहा—"तुम यह सब जृताना उपसेन और असुदेवजीसे जाकर कहो" ॥ ५७ ॥ बळभद्रजीका निर्याण, यादबोका क्षय और मैं भी योगस्थ होकर रारीर छोड़ैगा—[यह सब समाचार उन्हें] जाकर सुनाओ ॥ ५८ ॥ सम्पूर्ण द्वारकावासी और आहुक (उपसेन) से कहना कि अब इस सम्पूर्ण नगरीको समुद्र दुवो देगा॥ ५९॥ इसिल्ये आप सब केवल अर्जुनके

आगमनको प्रतीक्षा और करें तथा अर्जुनके यहाँसे लौटते

तेनैव सह गन्तव्यं यत्र याति स कौरवः ॥ ६१ गत्वा च ब्रुहि कौन्तेयमर्जुनं वचनान्मम । पालनीयस्त्वया शक्त्या जनोऽयं मत्परिष्रहः ॥ ६२ त्वमर्जुनेन सहितो द्वारवत्यां तथा जनम्। गृहीत्वा याहि बज्रश्च यदुराजो भविष्यति ॥ ६३ श्रीपराश्य उवाच इत्युक्तो दारुकः कृष्णे प्रणिपत्य पुनः पुनः । प्रदक्षिणं च बहुदाः कृत्वा प्रायाद्यथोदितम् ॥ ६४ स च गत्वा तदाचष्ट द्वारकायां तथार्जुनम् । आनिनाय महाबुद्धिर्वत्रं चक्रे तथा नृपम् ॥ ६५ भगवानपि गोविन्दो वासुदेवात्मकं परम्। ब्रह्मात्मनि समारोप्य सर्वभृतेषुधरस्यत् । निष्प्रपञ्चे महाभाग संयोज्यात्मानमात्मनि । तुर्वावस्थं सलीलं च शेते स्म पुरुषोत्तमः ॥ ६६ सम्मानयन्द्रिजवचो दुर्वासा यदुवाच ह। योगयुक्तोऽभवत्यादं कृत्वा जानुनि सत्तमं ॥ ६७ आययो च जरानाम तदा तत्र स लुब्धकः । मुसलावशेषलोहंकसायकन्यस्ततोमरः ॥ ६८ सं तत्पादे मृगाकारमधेक्ष्यारादवस्थितः । तले विद्याध तेनैव तोमरेण द्विजोत्तम ॥ ६९ ततश्च ददृशे तत्र चतुर्बाहुधरं नरम्।

प्रणिपत्याह चैवैनं प्रसीदेति पुनः पुनः॥ ७० अजानता कृतमिदं मया हरिणशङ्ख्या। क्षम्यतां मम पापेन दग्धं मां त्रातुमहींस ॥ ७१ श्रीपराशर उद्माच ततस्तं भगवानाह् न तेऽस्त् भयमण्वपि । गच्छ त्वं पत्प्रसादेन लुट्य स्वर्ग सुरास्पदम् ॥ ७२

विमानमागतं सद्यस्तद्वाक्यसम्बन्तरम्।

आरुह्य प्रययौ स्वर्ग लुब्धकस्तस्रसादतः ॥ ७३

जायं वहीं सब लोग चले जायं ॥ ६०-६१ ॥ कुत्तीपुत्र अर्जनसे तम मेरी ओरसे कहना कि "अपनी सामर्थ्यानुसार तुम मेरे परिवारके लोगोंको रक्षा करना''॥ ६२ ॥ और तुम द्वारकावासी सभी लोगोंको लेकर अर्जुनके साथ चले जाना । [हमारे पीछे] बन्न यदुवंशका राजा होगा ॥ ६३ ॥ श्रीपरादारजी बोले—भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके इस प्रकार कहनेपर दारुकने उन्हें बारम्बार प्रणाम किया और उनको अनेक परिक्रमाएँ कर उनके कथनानुसार चला गया ॥ ६४ ॥ उस महाबुद्धिने द्वारकामें पहुँचकर सम्पूर्ण वृताना सुना दिया और अर्जुनको वहाँ लावन कवको राज्याभिविक्त किया ॥ ६५ ॥ इधर भगवान् कृष्णचन्द्रने समस्त भूतोमें व्याप्त बास्ट्रेवस्वरूप परबहाको अपने आत्मामे आरोपित कर उनका ध्यान किया तथा हे महाभाग ! वे पुरुषोत्तम

लीलासे ही अपने चितको निष्पपञ्च परमात्मामें लीनकर

तुरीयपदमें स्थित हुए ॥ ६६ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! दुर्वासाजीने [श्रीकृष्णचन्द्रके लिये] जैसा कहा था उस द्विज-

वाक्यका * मान रखनेके लिये वे अपनी जानुऔपर चरण

ही फिर कोई भी व्यक्ति द्वारकामें न रहे; जहाँ वे कुरुनन्दन

रखकर योगयुक्त होकर बैठे ॥ ६७ ॥ इसी समय, जिसने मुसलके बचे हुए तोमर (बाणमें लगे हुए लोहेके टुकड़े) के आकारवाले लोहसाण्डको अपने बाणकी नोंकपर लगा लिया था; वह जरा नामक व्याध वहाँ आया ॥ ६८ ॥ हे द्विजोत्तम ! उस चरणको मृगाकार देख उस व्याधने उसे दुरहीसे खड़े-खड़े उसी तोपरसे बीध डाला ॥ ६९ ॥ किंतु वहाँ पहुँचनेपर उसने एक चतुर्भुजधारी मनुष्य देखा । यह देखते ही वह चरणींमे गिरकर बारम्बार उनसे कहने लगा—"प्रसन्न होइये, प्रसन्न होइये ॥ ७० ।: मैंने बिना

जाने ही मुक्की आहाङ्कासे यह अपराध किया है, कृपया

क्षमा कॉजिये । मैं अपने पापसे दग्ध हो रहा हूँ, आप मेरी

श्रीपराञ्चरजी बोले—तब भगवानने उससे

रक्षा कीजिये" ॥ ७१ ॥

पाकर उन्होंने कहा कि आप मेरा जुँठ। जल अपने सारे शरीरमें लगाइये । धगवानुने बैसा ही किया, परंतु 'बाहाणका कुँठ पैरसे नहीं छूना चाहिये' ऐसा सोचकर पैरमें नहीं रूमाया । इसपर दुर्वासाने २०५ दिया कि आपके पैरमें कभी छेद हो जायगा ।

कहा—"लुब्धक ! तू तनिक भी न डर; मेरी कृपासे तू अभी देवताओंके स्थान स्वर्गलोकको चला जा॥ ७२॥ इन भगवद्राक्योंके समाप्त होते ही वहाँ एक विमान आया, उसपर चढ़कर वह व्याध भगवानुकी कृपासे उसी समय 🌣 महाभारतमें यह प्रसंग आदा है कि — एक बार महर्षि दुर्वासा श्रोकृष्णचन्द्रजोके यहाँ आये और भगवान्से सत्कार गते तस्मिन्स भगवान्संयोज्यात्मानमात्मनि । ब्रह्मभूतेऽव्ययेऽचिन्ये वासुदेवमयेऽमले ॥ ७४

अजन्मन्यमरे विष्णावप्रमेयेऽखिलात्मनि ।

तत्याञ मानुषं देहमतीत्य त्रिविधां गतिम् ॥ ७५ | दिया ॥ ७४-७५ ॥

कष्णचन्द्रने अपने आत्माको अव्यय, अचिन्य, वास्ट्रेक्स्वरूप, अमल, अजन्मा, अपर, अप्रमेय, अखिलात्मा और ब्रह्मस्वरूप विष्णुभगवान्में छीन कर त्रिगुणात्मक गतिको पार करके इस मनुष्य-शरीरको छोड़

स्वर्गको चला गया ॥ ७३ ॥ उसके चले जानेपर भगवान

इति श्रीविष्णुप्राणे पञ्चमेऽदो सप्तत्रिक्षोऽध्यायः ॥ ३७ ॥

अड्तीसवाँ अध्याय

यादवोंका अन्त्येष्टि-संस्कार परीक्षित्का राज्याभिषेक तथा पाण्डबोंका स्वर्गारोहण

₹

ď

औपराशर उवाच

अर्जुनोऽपि तदान्विष्य रामकृष्णकलेवरे ।

संस्कारं लम्भयामास तथान्येयामनुक्रमात् ॥

अष्टौ पहिष्यः कथिता रुक्पिणीप्रमुखास्त् याः ।

उपगृहा हरेदेंहं विविश्वस्ता हताशनम्॥

रेवती वापि रामस्य देहमाहिलच्य सत्तमा।

विवेश ज्वलितं वृद्धं तत्सङ्गहादशीतलम् ॥

उपसेनस्तु तच्छ्रत्वा तथैवानकदुन्दुभिः।

देवकी रोहिणी चैत्र विविशुर्जातवेदसम् ॥ ततोऽर्जुनः प्रेतकार्यं कृत्वा तेषां यथाविधि ।

निश्चकाम जर्ने सर्वै गृहीत्वा वज्रमेव च ॥

द्वारवत्या विनिष्कान्ताः कृष्णपत्यः सहस्रराः । वज्रं जनं च कौन्तेयः पालयञ्जनकैर्ययौ ॥

सभा सधर्मा कृष्णेन मर्त्यलोके समुन्झिते ।

स्वर्ग जगाम मैत्रेय पारिजातश्च पादपः ॥

यस्पिन्दिने हरिर्यातो दिवं सन्यज्य मेदिनीम् । तस्मित्रेवावतीर्णोऽयं कालकायो बर्ला कलिः ॥

प्रावयामास तां शून्यां द्वारकां च महोदधिः ।

वासुदेवगृहं त्वेकं न प्रावयति सागरः॥

नातिकान्तुमलं ब्रह्मंसदद्यापि महोद्धिः। नित्यं सम्निहितस्तत्र भगवान्केशवो यतः ॥ १०

श्रीपराशस्त्री बोले — अर्जुनने राम और कृष्ण तथा

अन्यान्य मुख्य-मुख्य यादवीके मृत देहीकी खोज कराकर

क्रमशः उन सबके और्ष्वदैहिक संस्कार किये॥१॥ भगवान् कृत्पाकी जो रुक्मिणी आदि आठ पटरानी

बतलायी गयी है उन सबने उनके शरीरका आलिङ्गन कर अग्निमें प्रवेश किया॥२॥ सती रेवतीजी भी बहरामजीके देहका आलिंगन कर, उनके अंग-संगके

आह्वादसे जीतल प्रतीत होती हुई प्रज्वलित अग्रिमें प्रवेश कर गर्वी ॥ ३ ॥ इस सम्पूर्ण अनिष्टका समाचार सुनते ही उपसेन, वसुदेव, देवकी और ऐहिणीने भी अग्निमें प्रवेश

किया II X II

तदनन्तर अर्जुन उन सबका विधिपूर्वक प्रेत-कर्म कर बन्न तथा अन्यान्य कुटुम्बियोंको साथ लेकर हारकासे lη, बाहर आये ॥ ५ ॥ द्वारकाते निकली हुई कृष्णचन्द्रकी सहस्रों पत्रियों तथा बज और अन्यान्य बान्धवींकी

[सावधानतापूर्वक] रक्षा करते हुए अर्जुन धीरे-धीरे चले ॥ ६ ॥ हे मैत्रेय ! कृष्णचन्द्रके मर्त्यलोकका त्याग करते ही सुधर्मा सभा और पारिजात-वृक्ष भी स्वर्गलोकको चले गये॥ ७॥ जिस दिन भगवान पृथिवीको छोड्कर

स्वर्ग सिधारे थे उसी दिनसे यह मिलनदेह महाबली कल्पियम पृथिवीपर आ गया ॥ ८ ॥ इस प्रकार जनशृत्य द्वारकाको समुद्रने इबी दिया, केवल एक कृष्णचन्द्रके

भवनको वह नहीं डबाता है॥९॥ हे बहान्! उसे डुबानेमें समुद्र आज भी समर्थ नहीं है क्योंकि उसमें भगवान् कृष्णचन्द्र सर्वदा निषास करते हैं॥ १०॥

वह भगवदेश्वर्थसम्पन्न स्थान अति पवित्र और समस्त पापीको नष्ट करनेवात्त्र है; उसके दर्शनमात्रसे मनुष्य

हे भुनिश्रेष्ट ! अर्जुनने उन समस्त द्वारकावासियोंको

सम्पूर्ण पापीसे इन्ट जाता है ॥ ११ ॥

विष्णुश्रियान्वितं स्थानं दृष्टा पापाद्विपुच्यते ॥ ११ पार्थः पञ्चनदे देशे ब्रह्धान्वयनान्विते । चकार वासं सर्वस्य जनस्य मुनिसत्तमः॥ १२ ततो लोभस्समभवत्पार्थेनैकेन धन्विना। दुष्ट्रा स्त्रियो नीयमाना दस्यूनो निहतेश्वराः ॥ १३ ततस्ते पापकर्माणो लोभोपहृतचेतसः। आभीरा मन्त्रवामासुस्समेत्यात्यन्तदुर्मदाः ॥ १४ अयमेकोऽर्जुनो धन्वी स्त्रीजनं निहतेश्वरम्। नयत्यस्मानतिक्रम्य थिगेतद्भवतां बलम् ॥ १५ हत्वा गर्वसमारूढो भीष्मद्रोणजयद्रथान्। कर्णादींश्च न जानाति बलं प्रापनिवासिनाम् ॥ १६ यष्टिहस्तानवेक्ष्यास्मान्धनुष्पाणिस्स दुर्मतिः । सर्वानेवावजानाति किं वो बाहुभिरुव्रतैः ॥ १७ ततो पष्टिप्रहरणा दस्यवो लोष्टधारिणः। सहस्रक्षोऽभ्यक्षावन्त तं जनं निहतेश्वरम् ॥ १८ ततो निर्भर्त्य कौन्तेयः प्राहाभीरान्हसन्निव । निवर्तध्वमधर्मज्ञा यदि न स्थ मुमूर्षवः ॥ १९ अवज्ञाय वचस्तस्य जगृहस्ते तदा धनम्। स्त्रीधनं चैव मैत्रेय विश्ववसेनपरित्रहम् ॥ २० ततोऽर्जुनो धनुर्दिव्यं गाण्डीवमजरं युधि । आरोपयितुमारेभे न शशाक च वीर्यवान् ॥ २१ चकार सज्यं कृच्छ्राच तद्याभूच्छिथिलं पुनः । न सस्मार ततोऽस्त्राणि चिन्तयग्रपि पाण्डवः ॥ २२ शरान्युमोच चैतेषु पार्थो वैरिष्टुमर्षितः । त्वग्भेदं ते परं चक्करस्ता गाण्डीवधन्विना ॥ २३ बह्रिना येऽक्षवा दत्ताश्त्रारास्तेऽपि क्षवं वयुः । युद्ध्यतसाह गोपालैरर्जुनस्य भवक्षये ॥ २४

अज्ञित्तयद्य कौन्तेयः कृष्णस्यैव हि तद्दलम् ।

मिष्रतः पाण्डपुत्रस्य ततस्ताः प्रयदोत्तमाः ।

यन्यया शरसङ्घातैस्सकला भूभृतो इताः ॥ २५

आभीरैरपकृष्यन्त कामं चान्याः प्रदृष्ट्यः ॥ २६

तदतीय महापूण्यं सर्वपातकनाशनम्।

अत्यन्त धन-धान्य-सम्पन्न पञ्चनद (पञ्जाब) देशमें बसाया॥ १२॥ उस समय अनाषा स्नियोको अकेले बनुर्धारी अर्जुनको छे जाते देख लुटेरोंको लोभ उत्पन्न हुआ ॥ १३ ॥ तब उन अत्यन्त दुर्मद, पापकर्मा और लुबाहदय आभीर दरयुओंने परस्पर मिलकर सम्मति की-- ॥ १४ ॥ 'देखो, यह धनुर्धारी अर्जुन अकेला ही हमारा अतिक्रमण करके इन अनाथा सियोंको लिये जाता है; हमारे ऐसे बल-पुरुषार्थको धिकार है ! ॥ १५ ॥ यह भीव्य, द्रोण, जयद्रथ और कर्ण आदि [नगर-निवासियों] को मारकर ही इतना अभिभानी हो गया है, अभी हम ब्रामीणोकि बलको यह नहीं जानता ॥ १६ ॥ हमारे हाथोंमें लाठी देखकर यह दुर्मीत धनुष लेकर हम सबकी अवज्ञा करता है फिर हमारी इन ऊँची-ऊँची भुजाओंसे क्या त्यभ है ?'॥ १७॥ ऐसी सम्पतिका ने सहस्रों लुटेरे लाठी और देले लेकर उन अनाथ द्वारकावासियोपर टूट पहे ॥ १८ ॥ **तव** अर्जुनने उन सुटेरोंको झिड़ककर हैंसते हुए कहा—''अरे पापियो ! यदि तुम्हें मरनेकी इच्छा न हो तो अभी छौट जाओं'' ॥ १९ ॥ किन्तु हे मैत्रेय ! स्ट्रेरोने उनके कथनपर कुछ भी ध्यान न दिया और भगवान कृष्णके संम्पूर्ण धन और सीधनको अपने अधीन कर लिया॥ २०॥ तब वीरवर अर्जुनने युद्धमें अक्षीण अपने गाण्डीय धनुषको चढ़ाना चाहा; किन्तु वे ऐसा न कर सके ॥ २१ ॥ उन्होंने जैसे-तैसे अति कठिनतासे उसपर प्रत्यक्का (डोरी) चहा भी ही तो फिर वे शिथिल हो गये और बहुत कुछ सोचनेपर भी उन्हें अपने अस्रोंका स्मरण न हुआ ॥ २२ ॥ तब वे कुद्ध होकर अपने शत्रुओंपर वाण बरसाने लगे; किन्तु गाण्डीवधारी अर्जुनके छोड़े हुए उन वाणीने केवल उनकी त्वचाको हो बाँधा ॥ २३ ॥ अर्जुनका उन्द्रव श्रीण हो जानेके कारण अग्निसे दिये हुए उनके अक्षय वाण भी उन अहीरोंके साथ लड़नेमें नष्ट हो गये ॥ २४ ॥ तब अर्जुनने सोचा कि मैंने जो अपने शरसमृहसे अनेकों राजाओंको जीता था वह सब कृष्णचन्द्रका ही प्रभाव था॥ २५॥ अर्जनके देखते-देखते थे अहीर

उन स्नीरलोको खींच-खींचकर हे जाने लगे तथा कोई-

कोई अपनी इच्छानुसार इधर-उधर भाग गर्यो ॥ २६ ॥

ततदशरेषु क्षीणेषु धनुष्कोट्या धनञ्जयः । जघान दस्यूंस्ते चास्य प्रहाराञ्जहसूर्मुने ॥ २७ प्रेक्षतस्तस्य पार्थस्य वृष्ययन्यकवरस्त्रियः । जग्पुरादाय ते म्लेच्छाः समस्ता पुनिसत्तम ॥ २८ ततस्सुदुःखितो जिच्छुः कष्टं कष्टमिति ब्रुवन् । अहो भगवतानेन विज्ञतोऽस्मि रुरोद ह ॥ २९ तद्भनुस्तानि शस्त्राणि स रथस्ते च वाजिनः । सर्वमेकपदे नष्टं दानमश्रोत्रिये यथा॥ ३० अहोऽतिबलवदैवं विना तेन महात्मना। यदसामर्थ्ययुक्तेऽपि नीचवर्गे जयप्रदम् ॥ ३१ तौ बाह् स च मे मुष्टिः स्थानं तत्सोऽस्मि चार्जुनः । पुण्येनैव विना तेन गतं सर्वमसारताम् ॥ ३२ ममार्जुनत्वं भीमस्य भीमत्वं तत्कृते ध्रुवम् । विना तेन यदाभीरैजिंतोऽहं रियनां वरः ॥ ३३ श्रीपराश्चर उत्ताच इत्थं वदन्ययौ जिष्णुरिन्द्रप्रस्थं पुरोत्तमम् । चकार तत्र राजानं वज्रं यादवनन्दनम्।। ३४

30 36]

स ददर्श ततो व्यासं फाल्गुनः काननाश्रयम् । तमुपेत्य महाभागं विनयेनाभ्यवादयत् ॥ ३५ तं वन्द्रमानं चरणाववस्रोक्य मुनिश्चिरम् । उवाच वाक्यं विच्छायः कथमद्य त्वमीदृशः ॥ ३६ अवीरजोऽनुगमनं ब्रह्महत्या कृताथ वा । दृहाशाभङ्गदुःसीव भ्रष्टुखायोऽसि साम्प्रतम् ॥ ३७ सान्तानिकादयो वा ते याचपाना निराकृताः । अगम्बस्तीरतिर्वा त्वं येनासि विगतप्रभः ॥ ३८ भुद्धेऽप्रदाय विप्रेथ्यो पिष्टुपेकोऽध वा भवान्।

किं वा कृपणवित्तानि हतानि भवतार्जुन ॥ ३९

दुष्टचक्षुर्हतो वाऽसि निइश्रीकः कथमन्यथा ॥ ४०

केन त्वं वासि विच्छायो न्यूनैर्वा युधि निर्जितः ॥ ४१

कचित्र शूर्पवातस्य गोचरत्वं गतोऽर्जुन।

स्पृष्टो नखाम्भसा बाथ घटवार्युक्षितोऽपि वा ।

म्लेच्छगण वृष्टि और अन्धकवंशको उन समस्त क्रियोंको लेकर चले गये ॥ २८ ॥ तब सर्वटा कथशील अर्जुन अत्यन्त दुःखी होकर 'हा ! कैसा कष्ट है ? कैसा कष्ट है ?' ऐस कहकर रोने छगे[और बोले—] "अहो ! मुझे उन भगवान्ने हो उग लिया ॥ २९ ॥ देखी, वही धनुष है, वे ही दास्य हैं, बही रथ है और वे ही अध हैं, किन्तु अश्रोत्रियको दिये हुए दानके समान आज सभी एक साथ नष्ट हो गये ॥ ३० । अहो ! दैव बढ़ा प्रवत्त है, जिसने आज इन महात्मा कृष्णके न रहनेपर असमर्थ और नीच अहीरोंको जय दे दी ॥ ३१ । देखों । मेरी वे ही भुजाएँ हैं, वहीं मेरी मुष्टि (मुट्टी) है, वहीं (कुरुक्षेत्र) स्थान है और मैं भी वही अर्जुन हैं तथापि पुण्यदर्शन कुष्णके विना आज सब सारहीन हो गये ॥ ३२ । अवस्य हो मेरा अर्जुनल और भीमका भीमल भगवान कृष्णकी कृपासे ही था। देखों, उनके बिना आज महार्राथयोंमे श्रेष्ट मुझको तुच्छ आभीरोने जीत लिया'' ॥ ३३ ॥ श्रीपरादारजी खोले-अर्जुन इस प्रकार कहते हुए अपनी राजधानी इन्द्रप्रस्थमें आये और वहाँ यादवनन्दन वज्रका राज्याभिषेक किया॥ ३४॥ तदनन्तर वे विकिनवासी व्यासमुनिसे मिले और उन महाभाग मुनिवरके निकट जाकर उन्हें विनयपूर्वक प्रणाम किया ॥ ३५ ॥ अर्जुनको बहुत देरतक अपने चरणीकी वन्दना करते देख मुनिवरने कहा—"आज तुम ऐसे कान्तिहीन क्यों हो रहे हो ? ॥ ३६ ॥ क्या तुमने भेड़ीकी धुटिका अनुगमन किया है अधवा बहाहत्या की है या तुम्हारी कोई सुदृढ़ आशा भंग हो गयी है ? किसके दु:खरी तुम इस समय इतने श्रीहीन हो रहे हो ॥ ३७ ॥ तुमने किसी सन्तानके इच्छुकका विवाहके लिये याचना करनेपर निरादर तो नहीं किया अथवा किसी अगम्य स्वीसे रमण तो नहीं किया, जिससे तुम ऐसे तेजोहीन हो रहे हो ॥ ३८ ॥ हे अर्जुन ! तुम ब्राह्मणीको बिना दिये मिष्टात्र अकेले तो नहीं खा छेते हो, अथवा तुमने किसी कृपणका धन तो नही हर लिया है ॥ ३९ ॥ है अर्जुन ! तुमने सूपकी वायुका तो

सेवन नहीं किया ? क्या तुम्हारी आँखें दुखती हैं अथवा

तुन्हें किसीने मारा है ? तुम इस प्रकार श्रीहीन कैसे

हो रहे हो ? ॥ ४० ॥ तुमने नख-जलका स्पर्श तो

नहीं किया ? तुम्हारे ऊपर गड़ेसे छलके हुए जलको छीटे

बाणोंके समाप्त हो जानेपर घनजय अर्जुनने धनुषकी नोंकसे ही प्रहार करना आरम्भ किया, किन्तु हे मुने ! वे

हे मुनिश्रेष्ठ ! इस प्रकार अर्जुनके देखते-देखते वे

दस्युगण उन प्रहारोंकी और भी हँसी ठड़ाने रूपे ॥ २७ ॥

औपशस्य स्वाच

ततः पार्थो विनिःश्वस्य श्रूयतां भगवन्निति । उक्त्वा यथावदाचष्टे व्यासायात्मपराभवम् ॥ ४२

अर्जुन उषाच

यद्वलं यद्य मत्तेजो यद्वीर्य यः पराक्रमः।

या श्रीरछाया च नः सोऽस्मान्परित्यन्य हरिर्गतः ॥ ४३

ईश्वरेणापि महता स्मितपूर्वाभिभाषिणा।

हीना वयं मुने तेन जातास्तृणमया इव ॥ ४४

अस्त्राणां सायकानां च गाण्डीवस्य तथा मम ।

सारता याभवन्यूर्निस्स गतः पुरुषोत्तमः॥४५

यस्यावलोकनादस्माञ्ज्ञीर्जयः सम्पद्वन्नतिः ।

न तत्याज स गोविन्दस्यक्त्वास्मान्धगवानातः ॥ ४६ भीष्मद्रोणाङ्गराजाद्यास्तथा द्योधनादयः ।

यत्रभावेण निर्देग्धास्स कृष्णस्यक्तवान्भुवम् ॥ ४७

निर्योजना गतश्रीका नष्टच्छावेव मेदिनी। विभाति तात नैकोऽहं विरहे तस्य चक्रिण: ॥ ४८

यस्य प्रभावाद्धीष्माद्यैर्मय्यप्रौ श्रुलभावितम् ।

विना तेनाद्य कृष्णेन गोपालैरस्मि निर्जितः ॥ ४९

गाण्डीवस्त्रिषु लोकेषु ख्याति यदनुभावतः । गतस्तेन विनाभीरलगुडैस्स तिरस्कृतः ॥ ५०

स्त्रीसहस्राण्यनेकानि मञ्जाशानि महामुने । यततो मम नीतानि दस्युभिर्लगुडायुधै: ॥ ५१

आनीयमानमाभीरै: कृष्ण कृष्णावरोधनम् ।

हर्त यष्टिप्रहरणै: परिभूय बलं मम ॥ ५२ निश्शीकता न मे चित्रं यजीवामि तद्दुतम् ।

नीचावमानपङ्काङ्की निलजोऽस्मि पितामह ॥ ५३ श्रीव्यास उद्याच

अलं ते ब्रीड्या पार्ध न त्वं शोचितुमहींस ।

अवेहि सर्वभूतेषु कालस्य गतिरीदृशी॥५४ कालो भवाय भूतानामभवाय च पाण्डव ।

कालमूलियदं ज्ञात्वा भव स्थैर्यपरोऽर्जुन ॥ ५५

पराजित तो नहीं किया ? फिर तुम इस तरह हतप्रभ कैसे

तो नहीं पड़ गर्यी अथवा तुम्हें किसी हीनवल पुरुषने युद्धमें

हो रहे हो ?" ॥ ४१ ॥ **श्रीपराशरजी बोले**—तब अर्जुनने दीर्घ निःशास

छोड़ते हुए बङ्गा—"भगवन् ! सुनिये" ऐसा कहकर उन्होंने अपने पराजयका समार्ण बतान्त व्यासजीको

ज्यों-का-स्थों सुना दिया ॥ ४२ ॥

अर्जन बोले-जो हरि मेरे एकमात्र बल, तेज, वीर्य, पराक्रम, श्री और कान्ति थे वे हमें छोड़कर चले

गये ॥ ४३ ॥ जो सब प्रकार सुपर्ध होकर भी हमसे मित्रवत हैंस-हैंसकर बानें किया करते थे, हे मुने ! उन हरिके

चिना हम आज हणस्य पुतलेके समान निःसन्त हो गये हैं ॥ ४४ ॥ जो मेरे दिव्यास्त्रों, दिव्यवाणीं और माण्डीव धनुषके मूर्तिमान् सार थे वे पुरुषोत्तम धगवान् हमें छोड़कर

चले गये हैं ॥ ४५ ॥ जिनको कृपाइष्टिसे श्री, जय, सम्पत्ति और उन्नतिने कभी हमारा साथ नहीं छोड़ा वे ही भगवान गोधिन्द हमें छोड़कर चले गये हैं॥४६॥ जिनकी

प्रभावादिमें भीव्य, होण, कर्ण और दुर्वोधन आदि अनेको शुरवीर दग्ध हो गये थे उन कृष्णचन्द्रने इस भूमण्डलको

छोड़ दिया है ॥ ४७ ॥ हे तात ! उन चक्रपाणि कृष्णचन्द्रके विरहमें एक मैं ही क्या, सम्पूर्ण पृथियी ही श्रीवन, श्री और काक्तिसे क्षेत्र प्रतीत होती है ॥ ४८ ॥ जिनके प्रभावसे

अञ्चरूप मुझमें भीष्म आदि महारश्वीपण प्रतंगवत भस्म हो गये थे, आज उन्हों कृष्णके बिना मुझे गोपोने हस दिया ! ॥ ४९ ॥ जिनके प्रभावसे यह गाण्डीव धनुष तीनों लोकोंमें विख्यात हुआ या उन्होंके विना आज यह अहोरोंकी लाठियोंसे तिरस्कृत हो गया ! ॥ ५० ॥ हे

महामुने ! भगवान्की जो सहस्रो स्नियाँ मेरी देख-रेखमें आ रही थीं उन्हें, मेरे सब प्रकार यहां करते रहनेपर भी दस्यगण अपनी लाठियोंके बलसे ले गये॥ ५१॥ हे कुळा-हैपायन ! लाठियाँ ही जिनके हथियार हैं उन आभोरीने आज मेरे बलको कृण्डितकर मेरिद्वारा साथ लाये हुए सम्पूर्ण

कृष्ण-परिवासको हर किया ॥ ५२ ॥ ऐसी अवस्थामें नेरा श्रीहीन होना कोई आश्रर्यकी बात नहीं है; हे पितामह ! आश्चर्य तो यह है कि नीच पुरुषोद्वारा अपमान-पंकमें सनकर भी मैं निर्लंख अभी जीवित हो हूँ ॥ ५३ ॥

श्रीव्यासजी बोले—हे पार्ध ! तुन्हारी कजा व्यर्थ है. तुम्हे शोक करना उचित नहीं है। तुम सम्पूर्ण भूतोंगे कारूकी ऐसी ही यति जानो॥ ५४॥ हे पाण्डव !

भ्राणियोंकी उन्नति और अवनतिका कारण काल ही है,

नद्यः समुद्रा गिरयस्तकला च वसुन्धरा । देवा मनुष्याः पशवस्तरवश्च सरीसृषाः ॥ ५६

सृष्टाः कालेन कालेन पुनर्यास्यन्ति संक्षयम् । कालात्मकपिदं सर्व ज्ञात्वा शममवाप्रुहि ॥ ५७

कालखरूपी भगवान्कृष्णः कमललोचनः ।

यञ्चात्व कृष्णमाहात्व्यं तत्तथैव धनञ्जयः ॥ ५८ भारावतारकार्यार्थमवतीर्णसः मेदिनीम् ।

भाराक्रान्ता धरा याता देवानां समिति पुरा ॥ ५९

तदर्थमवतीणोंऽसौ कारुरूपी जनार्दनः। तद्य निष्पादितं कार्यमशेषा भूभुजो हताः॥ ६०

वृष्ण्यन्यककुलं सर्वं तथा पार्थोपसंहतम् । न किञ्चिदन्यत्कर्तव्यं तस्य भूमितले प्रभोः ॥ ६१

अतो गतस्स भगवान्कृतकृत्यो वथेळ्या । सृष्ट्रिं सर्गे करोत्येष देवदेवः स्थितौ स्थितिम् ।

अन्तेऽन्ताय समर्थोऽयं साम्प्रतं वै यथा गतः ॥ ६२

तस्मात्पार्थं न सन्तापस्त्वया कार्यः पराभवे । भवन्ति भावाः कालेषु पुरुषाणां यतः स्तुतिः ॥ ६३

सवान्त मावाः कालवु पुरुषाणा वतः स्तुतः ॥ ६३ त्वयैकेन हता भीष्मद्रोणकर्णादयो रणे ।

तेषामर्जुन कालोत्थः कि न्यूनाभिभवो न सः ॥ ६४

विष्णोस्तस्य प्रभावेण यथा तेषां पराभवः । कृतस्तथैव भवतो दस्यभ्यस्त पराभवः ॥ ६५

कृतस्तथेव भवतो दस्युभ्यस्स पराभवः ॥ ६० स देवेशश्शरीराणि समाविश्य जगत्स्थितम् ।

करोति सर्वभूतानां नाशमन्ते जगत्पतिः ॥ ६६

भगोदये ते कौत्तेय सहायोऽभूजनार्दनः ।

तथान्ते तद्विपक्षास्ते केशवेन विलोकिताः ॥ ६७

कदश्रद्दध्यात्सगाङ्गेयान्हन्यास्त्वं कौरवानिति । आभीरिभ्यश्च भवतः कः श्रद्दध्यात्पराभवम् ॥ ६८ अतः हे अर्जुन । इन जय-पराजयोंको कालके अधीन समझकर तुम स्थिरता धारण करो ॥ ५५ ॥ नदियाँ, समुद्र, गिरिगण, सम्पूर्ण पृथिवी, देव, मनुष्य, पशु, वृक्ष और सरोस्प आदि सम्पूर्ण पदार्थ कालके ही रचे हुए हैं और फिर कालहोंसे वे श्लीण हो जाते हैं, अतः इस सारे प्रपञ्चको कालात्मक जानकर शान्त होओ ॥ ५६-५७ ॥

हे धनक्षथ ! तुमने कृष्णचन्द्रका जैसा माहात्स्य बतलाया है वह सब सत्य ही है; क्योंकि कम्एनयन भगवान् कृष्ण साक्षात् कालस्वरूप ही है ॥ ५८ ॥ उन्होंने पृथिवीका भार उतारनेके लिये ही मर्त्यरक्षेकमें अवतार लिया था। एक समय पूर्वकालमें पृथिवी भाराक्राता होकर देवताओंको सभामें गयी थी ॥ ५९ ॥ काळसक्षी श्रीजनार्दनने उसीके लिये अवतार लिया था। अय सम्पूर्ण दृष्ट राजा मारे जा नुके, अतः वह कार्य सम्पन्न हो गया ॥ ६० ॥ हे पार्थ ! वृष्णि और अन्धक आदि सम्पूर्ण यदकुलका भी उपसंहार हो गया; इसलिये उन प्रभुके लिये अब पृथिवीतरूपर और कुछ भी कर्तव्य नहीं रहा ॥ ६१ ॥ अतः अपना कार्य समाप्त हो चुकनेपर भगवान स्वेच्छानसार चले गये, ये देवदेव प्रभु सर्गके आरम्भमें सृष्टि-रचना करते है, स्थितिके समय पालन करते हैं और अन्तमें ये ही उपका नाज करनेषे समर्थ हैं — जैसे इस समय वे ि सक्षस आदिका संहार करके] चले गर्च है ॥ ६२ ॥

अतः हे पार्थ ! तुझे अपनी पराजयसे दुःखी न होना चाहिये, क्योंकि अध्युदय-काल उपस्थित होनेपर ही पुरुषोसे ऐसे कर्म बनते हैं जिनसे उनकी स्तृति होती हैं ॥ ६३ ॥ है अर्जुन ! जिस समय तुझ अकेरुने ही युद्धमें भीष्म, द्रोण और कर्ण आदिको मार डाला था वह क्या उन वीरोंका कालक्रमसे प्राप्त होनबल पुरुषसे पराभव नहीं था ? ॥ ६४ ॥ जिस प्रकार भगवान् विष्णुके प्रभावसे तुमने उन सबोंको नीचा दिखलाया था उसी प्रकार तुझे दस्युओंसे दबना पड़ा है ॥ ६५ ॥ वे जगरपति देवेश्वर ही इसरोंमें प्रविष्ट होवर जगत्वी स्थिति करते हैं और वे ही अन्तमें समसा जीवोंका नाहा करते हैं ॥ ६६ ॥

हे कौन्तेय ! जिस समय तेरा भाग्योदय हुआ था उस समय श्रीजनार्दन तेरे सहायक थे और जब उस (सौभाग्य) का अन्त हो गया तो तेरे विपक्षियोपर श्रीकेशवकी कृपादृष्टि हुई है। ६७॥ त् गङ्गानन्दन भोष्मिपतामहके सहित सम्पूर्ण कौरबोंको मार डालेगा— इस बातको कौन मान सकता था और फिर यह भी किसे

विश्वास होगा कि तु आधीरोंसे हार जायगा ॥ ६८ ॥

पार्थैतत्सर्वभृतस्य हरेलीलाविचेष्टितम् । त्वया यत्कौरवा ध्वस्ता यदाभीरैर्भवाञ्चितः ॥ ६९ गृहीता दस्पृभियांश्च भवाञ्छोचति तास्त्रियः । एतस्याहं यथावृत्तं कथयामि तवार्जुन ॥ ७० अष्टाबकः पुरा वित्रो जलवासरतोऽभवत् । बहुन्वर्षगणान्पार्थ गुणन्त्रहा सनातनम् ॥ ७१ जितेष्ठसुरसङ्घेषु मेरुपृष्ठे महोत्सवः। बभूव तत्र गच्छन्यो ददृशुस्तं सुरस्त्रियः ॥ ७२ रम्भातिलोत्तमाद्यास्तु शनशोऽथ सहस्रशः ।

तुष्ट्रवुस्ते महात्मानं प्रशशंसुश्च पाण्डव ॥ ७३ आकण्डमग्रं सलिले जटाभारवहं मुनिम् ।

विनयावनताश्चैनं प्रणेमुः स्तोत्रतत्पराः ॥ ७४ यथा यथा प्रसन्नोऽसौ तुष्टुबुस्तं तथा तथा । सर्वास्ताः कौरवश्रेष्ठ तं वरिष्ठं द्विजन्मनाम् ॥ ७५

प्रसन्नोऽहं महाभागा भवतीनां यदिष्यते । मत्तस्तद्वियतां सर्वे प्रदास्याम्यतिदुर्लभम् ॥ ७६ रम्पातिलोत्तमाद्यास्तं वैदिक्योऽप्सरसोऽव्रवन् । प्रसन्ने त्वय्यपर्याप्तं किमस्माकमिति द्विज ॥ ७७ इतरास्त्वब्रवन्वित्र प्रसन्नो भगवान्यदि । तदिन्छामः पति प्राप्ते विप्रेन्द्र पुरुषोत्तमम् ॥ ७८

श्रीत्यास उवाच

एवं भविष्यतीत्युक्त्वा ह्युत्ततार जलान्युनिः । तपुत्तीणं च ददुर्शार्विरूपं वक्रमष्ट्रधा ॥ ७९ तं दष्टा गृहमानानां सासां हासः स्फुटोऽभवत् ।

ताइश्रशाप पुनिः कोपमवाप्य कुरुनन्दन ॥ ८०

यस्माद्विकृतरूपं मां मत्वा हासावमानना । भवतीभिः कृता तस्मादेतं शापं ददामि वः ॥ ८१

यहासादेन भर्तारं लब्बा तु पुरुषोत्तमम्।

मच्छापोपहतास्सर्वा दस्युहस्तं गमिष्यश्र ॥ ८२ श्रीञ्यास उवाच

इसदीरितपाकण्यं मुनिस्ताभिः प्रसादितः ।

पुनस्पुरेन्द्रलोकं वै प्राप्त भूयो गमिष्यथ ॥ ८३

हे पार्थ ! यह सब सर्वात्मा भगवान्की लीलाका ही। कौतुक है कि तुझ अकेलेने कौरबोंको नष्ट कर दिया और किर स्वयं अहीरोंसे पराजित हो गया ॥ ६९ ॥

हे अर्जुन ! तू जो उन दखुओंद्वारा हरण की गयी क्रियंकि लिये शोक करता है सो मैं तुझे उसका यथावत् रहत्य बतलाता है ॥ ७० ॥ एक बार पूर्वकालमें विप्रवर अष्टावक्रजी सनातन ब्रह्मकी स्तुति करते हुए अनेकी क्वंतक जरूमें रहे ॥ ७१ ॥ उसी समय दैत्योपर विजय प्राप्त करनेसे देवताओंने सुमेरु पर्वतपर एक महान् उत्सव किया। उसमें सम्मिलित होनेके लिये जाती हुई रम्भा और तिल्हेतमा आदि सैकड़ी-इजारी देवाङ्गनाओंने मार्गमें उन मनिवरको देखकर उनकी अल्पन्त स्तृति और प्रशंसा की ॥ ७२-७३ ॥ वे देवाकुनाएँ इन बटाधारी मुनियरको कण्डपर्यन्त जलमें हुने देखकर विनयपूर्वक स्तृति करती हुई प्रणाम करने लगी ॥ ७४ ॥ हे कौरवश्रेष्ठ ! जिस प्रकार वे द्विजञ्जेष्ठ अष्टावक्रजी प्रसन्न हो उसी प्रकार वे अप्सराएँ उनकी स्तुति करने क्लीं ॥ ७५ ॥

अष्टावकजी बोले—हे महाभागाओं ! मैं तुमसे प्रसन्न हैं , तुन्हारी जो इच्छा हो मुझसे वही वर माँग लो; मैं अति दर्रूप होनेपर भी तुम्हारी इच्छा पूर्ण करूँगा ॥ ७६ ॥ तब रम्पा और तिलोत्तमा आदि वैदिकी (वेदप्रसिद्ध) अपसराओंने उनसे कहा—"हे द्विज ! आपके प्रसंत्र हो जानेपर हमे क्या नहीं मिल गया॥ ७७ ॥ तथा अन्य अप्सराओंने कहा—"यदि भगवान् हमपर प्रसन्न हैं तो है विप्रेन्द्र ! हम साक्षात् पुरुषोत्तमभगवानुको पतिरूपसे प्राप्त करना चाहती हैं"॥ ७८ ॥

ओव्यासजी बोले—तब 'ऐसा ही होगा'—यह कहकर मृनिवर अष्टावक जलसे वाहर आये। उनके बाहर आते समय अपसग्रऑने आठ स्थानोमें टेवे उनके कुरूप देहको देखा ॥ ७९ ॥ उसे देखका जिन अपसरओंकी हैंसी छिपानेपर भी प्रकट हो गयो, हे कुरुनन्दन ! उन्हें मुनिबरने कुद्ध होकर यह ज्ञाप दिया—॥८०॥ "मुझे कुरूप देखकर तुमने हँसते हुए मेरा अपनान किया है, इर्डाल्ये में तुन्हें यह ज्ञाप देता है कि मेरी कृपासे श्रीपुरुषोत्तमको पतिरूपसे पाकर भी तुम मेरे शापके बशीभूत होकर ल्डेरॉके हाथोंमें पड़ोगी" II ८१-८२ II

श्रीव्यासजी बोले-मनिका यह वाक्य सुनकर तन अप्सराओंने उन्हें फिर प्रसन्न किया, तब मुनिवरने उनसे कहा--''उसके पश्चात् तुम फिर स्वर्गलोकमें चली

एवं तस्य मुनेश्शापादष्टावकस्य चक्रिणम् । भतिरं प्राप्त ता याता दस्युहस्तं सुराङ्गनाः ॥ ८४ तत्त्वया नात्र कर्त्तव्यवशोकोऽल्पोऽपि हि पाण्डव । तेनैवास्त्रिलनाश्चेन सर्वं तदुपसंहतम् ॥ ८५ भवतां चोपसंहार आसन्नस्तेन पाण्डव । बलं तेजस्तथा वीर्यं माहारूवं चोपसंइतम् ॥ ८६ जातस्य नियतो मृत्युः यतनं च तथोत्रतेः । विप्रयोगावसानस्तु संयोगः सञ्चये क्षयः ॥ ८७ विज्ञाय न युधारुशोकं न हर्षपुपयान्ति ये । तेषामेवेतरे चेष्टां शिक्षन्तस्मन्ति तादुशाः ॥ ८८ तस्मात्त्वया नरश्रेष्ठ ज्ञात्वैतद्भ्रातृभिस्सह। परित्यज्याखिलं तन्त्रं गन्तव्यं तपसे वनम् ॥ ८९ तङ्ख्य धर्मराजाय निवेद्येतद्वचो मम । परश्चो प्रातृभिस्सार्द्धं यथा यासि तथा कुरु ॥ ९० इत्युक्तोऽभ्येत्व पार्थाभ्यां यमाभ्यां च सहार्जनः । दुष्टं चैवानुभूतं च सर्वमाख्यातवांस्तथा ॥ ९१ व्यासवाक्यं च ते सर्वे श्रुत्वार्जुनमुखेरितम् । राज्ये परीक्षितं कृत्वा ययुः पाण्डुसुता वनम् ॥ ९२ इत्येतत्तव मैत्रेय विस्तरेण मचोदितम्।

जातस्य यद्यदोर्वशे वासुदेवस्य चेष्टितम् ॥ ९३

सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ १४

बश्चैतहरितं तस्य कृष्णस्य शृणुयात्सदा ।

्राह्याँग इंडियाँग जाओगी" ॥ ८३ ॥ इस प्रकार मुनिवर अष्टावक्रके शापसे ही वे देवाङ्गनाएँ श्रीकृष्णचन्द्रको पति पाकर भी फिर दस्युओंके हाथमें पड़ी हैं ॥ ८४ ॥ हे पाण्डल ! तुझे इस विषयमें तनिक भी शोक न करना

हे पाण्डल ! तुझे इस विषयमें तनिक भी शोक न करना चाहिये क्योंकि उन ऑखलेश्वरने ही सम्पूर्ण यदुक्लका टपसंहार किया है ॥ ८५ ॥ तथा तुमलोगोंका अन्त भी अब निकट ही हैं; इसलिये उन सर्वेद्वरने तुम्हारे बल, तेज, नीर्य और माहात्म्यका सङ्क्षोच कर दिया है ॥ ८६ ॥ 'जो उत्पन्न हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है, उन्नतका पतन अवस्यम्भावी हैं, संयोगका अन्त वियोग ही है तथा सञ्चय (एकप करने) के अनन्तर क्षय (व्यय) होना सर्वधा निश्चित ही है'—ऐसा जानकर जो बुद्धिमान् पुरुष रूपभ या हानिमें हुई अथवा ज्ञोक नहीं करते उन्हींकी चेष्टाका अवरूप्यन कर अन्य मनुष्य भी अपना वैसा आचरण बनाते हैं ॥ ८७-८८ ॥ इसल्यि हे नरश्रेष्ठ ! तुम ऐसा जानकर अपने भाइयोंसहित सम्पूर्ण राज्यको छोडकर तपस्याके लिये वनको जाओ ॥ ८९ ॥ अब तुम जाओ तथा धर्मराज युर्घिष्ठिरसे मेरी ये सारी बातें कहें। और जिस तरह परसों भाइयोंसहित बनको चले जा सको वैसा यह करो ॥ ९० ॥

मुनिवर व्यासजीके ऐसा कहनेपर अर्जुनने [इन्द्रप्रस्थमें] आकर पृथा-पुत्र (युधिष्ठिर और भीमसेन) तथा यमजों (क्कुल और सहदेव) से उन्होंने जो कुछ जैसा-जैसा देखा और सुना था सब ज्यों-का-त्यों सुना दिया॥ ९१॥ उन सब पाण्डु-पुत्रोंने अर्जुनके मुखसे व्यासजीका सन्देश सुनकर राज्यपदपर परीक्षित्को अभिषक्त किया और स्वयं वनको चले गये॥ ९२॥

काभावक किया आर स्वय वनका चल गय ॥ ९२ ॥ है मैत्रेय ! भगवान् वासुदेवने यदुवंदामें जन्म लेकर जो-जो लोलाएँ की थीं वह सब मैंने विस्तारपूर्वक तुन्हें सुना दीं ॥ ९३ ॥ जो पुरुष भगवान् कृष्णके इस चरित्रको सर्वदा सुनता है वह सम्पूर्ण पापाँसे मुक्त होकर अन्तमें विष्णुलोकको जाता है ॥ ९४ ॥

इति श्रीविष्णुपराणे पञ्चमेंऽशे अष्टात्रिशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

इति श्रीपराशरमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके श्रीमति विष्णुमहापुराणे पञ्चमोऽशः समाप्तः ।



श्रीमञ्जारायणाय नमः

श्रीविष्णुपुराण

षष्ठ अंश

पहला अध्याय

कलिधर्मनिरूपण

श्रीमैत्रेय उवाच व्याख्याता भवता सर्गवंशमन्वन्तरस्थिति: । वंशानुचरितं चैव विस्तरेण महामुने ॥ श्रोतुमिच्छाम्यहं त्वत्तो यथावदुपसंहतिम्। महाप्रलयसंज्ञां च कल्पान्ते च महामूने ॥ श्रीपराशर उत्राच मैत्रेय श्रुयतां मत्तो यथावदुपसंहति:। कल्पान्ते प्राकृते चैव प्रलये जायते यथा ॥ अहोरात्रं पितृणो तु मासोऽब्दस्त्रिदिवौकसाम् । चतुर्युगसहस्रे त् ब्रह्मणो वै द्विजोत्तम ॥ 8 कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् । दिव्यवर्षसहस्रेस्त् 👚 तद्द्वादशभिरुच्यते ॥ 14 चतुर्युगाण्यशेषाणि सदृशानि स्वरूपतः । आहं कृतयुगं मुक्त्वा मैन्नेयान्त्यं तथा कलिम् ॥ आहे कृतयुगे सर्गो ब्रह्मणा क्रियते यथा । क्रियते जोपसंहारस्तथान्ते च कलौ युगे ॥ श्रीमैनेय उवाच कलेस्स्वरूप भगवन्विस्तराहक्तुमहीस । 6

कलस्वरूप मगवान्वस्तराहुतुमहास । धर्मश्चतुष्पाद्धगवान्यस्मिन्वप्रव्यम्ब्हति ॥ श्रीपराशर उवाच कलेस्वरूपं मैत्रेय यद्भवाञ्ज्रोतुमिच्छति । तन्निबोध समासेन वर्तते यन्महामुने ॥ वर्णाश्रमाचारवती प्रवृत्तिनं कलौ नृणाम् ।

न सामऋग्यजुर्धमीविनिष्पादनहैतुकी ॥ १० विवाहा न कलौ धर्म्या न दिष्यगुरुसंस्थितिः । न दाम्पत्यक्रमो नैव विद्वदेवात्मकः क्रमः ॥ ११ श्रीमैत्रेयजी बोले — हे पहामुने ! आपने सृष्टिरचना, वंदा-परम्परा और मन्वन्तरोंकी स्थितिका तथा वंदोंके चरित्रोंका विस्तारसे वर्णन किया ॥ १ ॥ अब मै आपसे कल्पान्तमें होनेवाले महाप्रलय नामक संसारके उपसंहारका यथायत् वर्णन सुनना चाहता हैं ॥ २ ॥

श्रीपराद्वारजी बोलें—हे मैत्रेय । कल्यनके समय प्राकृत प्रस्थमें जिस प्रकार जीवोंका उपसंहार होता है, यह सुनी ॥ ३ ॥ हे हिजोत्तम ! मनुष्योंका एक मास पितृगणका, एक वर्ष देवगणका और दो सहस्र चतुर्युंग ब्रह्मका एक दिन-रात होता है ॥ ४ ॥ सल्ययुग, त्रेता, हापर और काल—ये चार चुग है, इन सबका काल मिलाकर बारह हजार दिव्य वर्ष कहा जाता है ॥ ५ ॥ हे मैत्रेव ! [प्रत्येक मन्वन्तरके] आदि कृतयुग और अन्तिम कलियुगको छोड़कर शेष सब चतुर्युंग स्वरूपसे एक समान है ॥ ६ ॥ जिस प्रकार आहा (प्रथम) सल्ययुगमें ब्रह्मजी जगत्की रचना करते हैं उसी प्रकार अन्तिम कलियुगमें वे उसका उपसंहार करते हैं ॥ ७ ॥

श्रीमैत्रेयजी बोले—हे भगवन् ! कलिके खरूपका विस्तारसे वर्णन कीजिये, जिसमें चार चरणीवाले भगवान् धर्मका प्रायः लोप हो जाता है ॥ ८॥

श्रीपराशरजी बोले—है गैत्रेम ! आप जो किंल्युगका स्वरूप सुनना चाहते हैं सो उस समय जो कुछ होता है वह संश्रेपसे सुनिये ॥ १ ॥ किंल्युगमें मनुष्योंकी प्रवृत्ति वर्णाश्रम-धर्मानुकूछ नहीं रहती और न वह ऋक्-साम-बजुरूप त्रवी-धर्मका सम्पादन करनेवाली ही होती है ॥ १० ॥ उस समय धर्मिववाह, गुरु-शिव्य-सम्बन्धकी स्थिति, दाम्पत्यक्रम और अग्निमें देवयज्ञ-क्रियाका क्रम (अनुष्ठान) भी नहीं रहता ॥ ११ ॥

यत्र कुत्र कुले जातो बली सर्वेश्वरः कलौ । सर्वेश्य एव वर्णेभ्यो योग्यः कन्यावरोधने ॥ १२

येन केन च योगेन द्विजातिर्दीक्षितः कलौ । यैव सैव च मैत्रेय प्रायश्चित्तं कलौ क्रिया ॥ १३

सर्वमेव कलौ शास्त्रं यस्य यहूचनं हिज ।

देवता च कलौ सर्वा सर्वस्सर्वस्य चाश्रमः ॥ १४ उपवासस्तथायासो विज्ञोत्सर्गस्तपः कलौ ।

उपवासस्तथायासो वित्तोत्सर्गस्तपः करुौ । धर्मो यथाभिरुचितैरनुष्ठानैरनुष्ठितः ॥ १५

वित्तेन भविता पुंसां स्वल्पेनाढ्यमदः कर्ला । स्त्रीणां रूपमदश्चैवं केशैरेव भविष्यति ॥ १६

सुवर्णमणिरबादी वस्त्रे चौपक्षयं गते। सन्त्रे स्थिते अविकासि स्टा केरीस्टार स्टा

कलौ स्त्रियो भविष्यन्ति तदा केशैरलङ्कृताः ॥ १७ परित्यक्ष्यन्ति भर्तारं वित्तहीनं तथा स्त्रियः ।

भर्त्ता भविष्यति कलौ वित्तवानेय योषिताम् ॥ १८ यो वै ददाति बहुलं स्वं स स्वामी सदा नृणाम् ।

स्वामित्वहेतुस्सम्बन्धो न चाभिजनता तथा ॥ १९ गृहान्ता द्रव्यसङ्घाता द्रव्यान्ता च तथा मतिः ।

अर्थाश्चात्मोपभोग्यान्ता भविष्यन्ति कलौ युगे ॥ २० खियः कलौ भविष्यन्ति स्वैरिण्यो लल्जिस्पृहाः । अन्यायावास्त्रवित्तेषु पुरुषाः स्पृहयालवः ॥ २१

अध्यर्थितापि सुहदा स्वार्थहानि न मानवाः । प्रणार्थार्थाः रोगने प्रीक्रिकानि कस्के क्रिकाः

पणार्थार्थार्द्धमात्रेऽपि करिष्यन्ति कलौ द्विज ॥ २२

समानपौरुषं चेतो भावि विप्रेषु वै कलौ । भीरमहासम्बद्धाः शासि सोह = गौरहर ॥ :

क्षीरप्रदानसम्बन्धि भावि गोषु च गौरवम् ॥ २३ अनावृष्टिभयप्रायाः प्रजाः श्चद्धयकातराः ।

भविष्यन्ति तदा सर्वे गगनासक्तदृष्टयः॥ २४

कन्दपूरुफलाहारास्तापसा इव मानवाः । आत्मानं घातयिष्यन्ति ह्यनावृष्ट्यादिद्वःस्तिताः ॥ २५ कल्पियुगमें जो बलवान् होगा वही सबका स्वामी होगा चाहै किसी भी कुलमें क्यों न उत्पन्न हुआ हो, वह सभी

वर्णोंसे कन्या ग्रहण करनेमें समर्थ होगा॥ १२॥ उस समय द्विजातिगण जिस-किसी उपायसे [अर्थात् निषिद्ध

ह्रव्य आदिसे] भी 'दीक्षित' हो जायँगे और जैसी-तैसी क्रियाएँ ही प्रायश्चित मान ली जायँगी॥ १३॥ हे द्विज ! कॉल्स्युगर्मे जिसके मुखसे जो कुछ निकल जायगा

वही शास्त्र समझा जायगा; उस समय सभी (भूत-प्रेत-मज्ञान आदि) देवता होंगे और सभीके सब आश्रम होंगे॥ १४॥ उपजास, तीर्थाटनादि कायक्रेज, धन-दान तथा तप आदि अपनी सचिके अनुसार अनुष्ठान किये हुए

ही धर्म समझे जायेंगे॥ १५॥ अस्तियामें अन्य भन्नमे नी सं

किंग्युगमें अल्प धनसे ही लोगोंको धनाड्यताका गर्ब हो जायगा और केशोरो ही खियोंको सुन्दरताका अभिमान होगा॥ १६॥ उस समय सुवर्ण, मणि, रत्न और वस्नोंके क्षीण हो जानेसे स्नियाँ केश-कलापोंसे हो अपनेको

होगा ॥ १८ ॥ जो मनुष्य [चाहे वह कितनाहू निन्छ हो] अधिक धन देगा वहीं खोगोका स्वामी होगा; यह धन-दानका सम्बन्ध हो स्वामित्वका कारण होगा, कुलीनता नहीं ॥ १९ ॥

विभृषित करेंगी ॥ १७ ॥ जो पति धनहीन होगा इसे सियाँ

छोड़ देंगी। कल्यिगमें धनवान् पुरुष ही स्त्रियोका पति

किंदमें सारा द्रव्य-संग्रह घर बनानेमें ही समाप्त हो जायगा [दान-पुण्यादिमें नहीं], बुद्धि धन-सञ्जयमें ही लगी रहेगी [आत्मज्ञानमें नहीं], सारी सम्पत्ति अपने उपभोगमें ही नष्ट हो जायगी [उससे अतिधिसत्कारादि न होगा] ॥ २० ॥

किलकालमें स्तियाँ सुन्दर पुरुषकी कामनासे स्वेच्छाचारिणी होगी तथा पुरुष अन्यायोपार्जित धनके इच्छुक होंगे॥२१॥हे द्विज!कलियुगमें अपने सुहदेकि प्रार्थना करनेपर भी लोग एक-एक दमड़ीके लिये भी स्वार्थहानि नहीं करेंगे॥२२॥कलिमें ब्राह्मणोंके साथ

र्ाद्र आदि समानताका दाया करेंगे और दूध देनेके कारण ही गौओंका सम्मान होगा ॥ २३ ॥ उस समय सम्पूर्ण प्रजा क्षुषाकी व्यथासे व्याकुल हो प्रायः अनावृष्टिके भयरो सदा आकाराको और दृष्टि

लगाये रहेगी ॥ २४ ॥ मनुष्य [अन्नका अभाव होनेसे] तपस्त्रियोंके समान केवल कन्द, मूल और फल आदिके सहारे ही रहेंगे तथा अनावृष्टिके कारण दुःखी होकर दुर्भिक्षमेव सततं तथा क्रेशमनीश्वराः । प्राप्यन्ति व्याहतसुखप्रमोदा मानवाः कलौ ॥ २६

अस्त्रानभोजिनो नाग्निदेवतातिथिपजनम् । करिष्यन्ति कलौ प्राप्ते न च पिण्डोदकक्रियाम् ॥ २७

लोलुपा ह्रस्वदेहाश्च बहुन्नादनतत्पराः । बहुप्रजाल्पभाग्याश्च भविष्यन्ति करते स्त्रियः ॥ २८

उभाभ्यामपि पाणिभ्यां शिर:क्रण्ड्यनं स्त्रिय: ।

कुर्वन्त्यो गुरुभर्तृणामाज्ञां भेत्स्यन्त्यनादराः ॥ २९

स्वपोषणपराः श्रद्धा देहसंस्कारवर्जिताः।

परुषानृतभाषिण्यो भविष्यन्ति कलौ स्त्रियः ॥ ३०

दःशीला दृष्टशीलेषु कुर्वन्यसाततं स्पृहाय् । असद्वृत्ता भविष्यन्ति पुरुवेषु कुलाङ्गनाः ॥ ३१

वेदादानं करिष्यन्ति वटवशाकृतव्रताः।

गृहस्थाश्च न होष्यन्ति न दास्यन्युचितान्यपि ॥ ३२ वानप्रस्था भविष्यन्ति ग्राम्याहारपरिग्रहाः ।

भिक्षवशापि मित्रादिसेहसम्बन्धयन्त्रणाः ॥ ३३ अरक्षितारो हत्तरिङ्गुल्कव्याजेन पार्थिवाः । हारिणो जनवित्तानां सम्प्राप्ते तु करूौ थुगे ॥ ३४

यो योऽश्वरथनागाड्यसा स राजा भविष्यति। यश्च यश्चाबलस्तर्वस्त स भृत्यः कलौ युगे ॥ ३५

वैश्याः कुषिवाणिज्यादि सन्त्यज्य निजकर्म यत् ।

शुद्रवृत्त्या प्रवर्त्स्यन्ति कारुकर्मोपजीविनः ॥ ३६

भैक्षव्रतपराः शुद्धाः प्रव्रज्यालिङ्गिनोऽथमाः ।

पाषण्डसंश्रयां वृत्तिमाश्रयिष्यन्ति सत्कृताः ॥ ३७ दुर्भिक्षकरपीडाभिरतीवोपद्रता

गोधूमाञ्चयवाञ्चाढ्यान्देशान्यास्यन्ति दुःखिताः ॥ ३८ वेदमार्गे प्रलीने च पाषण्डाढ्ये ततो जने।

अधर्मवृद्ध्या लोकानामल्पमायुर्भविष्यति ॥ ३९ अशास्त्रविहितं घोरं तथ्यमानेषु वै तपः । नरेषु नृपद्येषेण बाल्ये मृत्युर्भविष्यति ॥ ४० आतम्बात करेंगे ॥ २५ ॥ केलियुगमें असमर्थ लोग सुख और आनन्दके नष्ट हो जानेसे प्रायः सर्वदा दुर्भिक्ष तथा

क्केश ही भोगेंगे॥ २६॥ कल्किके आनेपर लोग बिना स्नान किये ही भोजन बहेंगे, अग्नि, देवता और अतिथिका पूजन

न करेंगे और न पिण्डोदक क्रिया ही करेंगे ॥ २७ ॥ उस समयकी क्षियाँ विषयलोल्प, छोटे शरीरवाली, अति मोजन करनेवाली, अधिक सन्तान पैदा करनेवाली और मन्द्रभाष्या होंगी॥२८॥ वे दोनों हाथींसे सिर खुजलाती हुई अपने गुरूजनों और पतियोंके आदेशका

अनादरपूर्वक खण्डन करेंगी॥ २९॥ कलियुगकी खियाँ अपना ही पेट पालनेमें तत्पर, श्रुद्र चित्तवाली, शारीरिक शीचसे हीन तथा कट और मिळ्या भाषण करनेवाली

होंगी ॥ ३० ॥ उस समयकी कुलाङ्गनाएँ निरन्तर दक्षरित्र पुरुषोकी इच्छा रखनेवाली एवं दुराचारिणी होंगी तथा पुरुषोके साथ असद्व्यवहार करेंगी ॥ ३१ ॥ ब्रह्मचारिगण वैदिक व्रत आदिसे हीन एतकर हो

वेदाध्ययन करेंगे तथा गृहस्थगण न तो हवन करेंगे और न सत्पात्रको उचित दान ही देंगे ॥ ३२ ॥ वानप्रस्थ [वनके कन्द-मुलादिको छोडकर] ग्राम्य भोजनको स्वीकार करेंगे और संन्यासी अपने मित्रादिके छोह-बन्धनमें ही बैधे रहेंगे ॥ ३३ ॥

कलियुगके आनेपर राजालोग प्रजाकी रक्षा नहीं करेगे. बल्कि कर लेनेके बहाने प्रजाका ही धन छीनेंगे॥ ३४॥ उस समय जिस-जिसके पास बहुत-से हाथी, घोड़े और रथ होंगे वह-वह ही राजा होगा तथा जो-जो शक्तिहीन होगा बह-बह ही सेवक होगा॥३५॥ बैश्यगण कृषि-वाणिज्यादि अपने कमौंको छोडकर शिल्पकारी आदिसे जीवन-निर्वाह करते हुए शुद्रवृत्तियोंमें ही लग जायंगे ॥ ३६ ॥ आश्रमादिके चिह्नसे रहित अधम शुद्रगण

और दु:खित होकर ऐसे देशोमें चले जायेंगे जहाँ गेहें और जौकी अधिकता होगी ॥ ३८ ॥ उस समय बेदभार्गका लोप, मनुष्योमें पाषण्डकी प्रचरता और अधर्मको वृद्धि हो जानेसे प्रजाकी आय

संन्यास लेकर भिक्षावृतिमें तत्पर रहेंगे और लोगोंसे

सम्मानित होकर पाषण्ड-वितका आश्रय लेंगे ॥ ३७ ॥ प्रजाजन दुर्भिक्ष और करकी पीड़ासे अत्यन्त उपद्रवयुक्त

अल्प हो जायगी॥३९॥ लोगोंके शास्त्रविरुद्ध घोर तपस्या करनेसे तथा राजाके दोषसे प्रजाओंकी बाल्यावस्थामें पृद्धु होने लगेगी ॥ ४० ॥

भविता योषितां सूतिः पञ्चषदसञ्ज्ञार्षिकी । नवाष्ट्रदशवर्षाणां मनुष्याणां तथा कली ॥ ४१ पिलतोद्धवश्च भविता तथा द्वाद्शवार्षिकः । नातिजीवति वै कश्चित्करमै वर्षाणि विंशति: ॥ ४२ अल्पप्रज्ञा वृथातिङ्गा दुष्टान्तःकरणाः कलौ। यतस्ततो विनङ्क्ष्यन्ति कालेनाल्पेन मानवाः ॥ ४३ यदा यदा हि मैत्रेय हानिर्धर्मस्य लक्ष्यते। तदा तदा कलेर्बृद्धिरनुमेबा विचक्षणै: ॥ ४४ यदा यदा हि पाषण्डवृद्धिमैत्रेय लक्ष्यते। तदा तदा कलेवृद्धिरनुमेया महात्मभिः॥ ४५ यदा यदा सतां हानिर्वेदमार्गानुसारिणाम् । तदा तदा कलेर्बिद्धिरनुमेया विचक्षणै: ॥ ४६ प्रारम्भाश्चावसीट्नि यदा धर्मभृतां नृणाम् । तदानुमेयं प्राधान्यं कलेमैत्रेय पण्डितैः ॥ ४७ यदा यदा न यज्ञानामीश्वरः पुरुषोत्तमः। इज्यते पुरुषैर्यज्ञैस्तदा ज्ञेयं कलेखेलम् ॥ ४८ न प्रीतिर्वेदवादेषु पाषण्डेषु यदा रतिः। कलेर्वेद्धिस्तदा प्राज्ञैरनुमेया विचक्षणै: ॥ ४९ कली जगत्पति विष्णुं सर्वस्रष्टारमीश्वरम्। नार्चियप्यन्ति पैत्रेय पाषण्डोपहता जनाः ॥ ५० कि देवै: कि हिजैबेंदै: कि शौचेनाम्बुजन्पना । इत्येवं वित्र वश्यन्ति पाषण्डोपहता जनाः ॥ ५१ खल्पाम्बुवृष्टिः पर्जन्यः सस्यं खल्पफलं तथा। फले तथाल्पसारं च वित्र त्राप्ते कलौ युगे ॥ ५२ शाणीप्रायाणि वस्त्राणि शमीप्राया महीस्हाः । शुद्रप्रायास्तथा वर्णा भविष्यन्ति कली युगे ॥ ५३ अणुप्रायाणि धान्यानि अजाप्रायं तथा पयः । भविष्यति कलौ प्राप्ते ह्यौशीरं चानुलेपनम् ॥ ५४ श्वश्रुश्वश्रुरभूयिष्ठा गुरवश्च नृणां कलौ। **इयालाद्या हारिभार्याश्च सहदो मुनिसत्तम** ॥ ५५ कस्य पाता पिता कस्य यथा कर्मानुगः पुमान् । इति चोदाहरिष्यन्ति श्वशूरानुगता नराः ॥ ५६

कलिमें पाँच-छ: अथवा सात वर्षकी खी और आठ-त्री या दस वर्षके पुरुषोंके ही सन्तान हो जायगी ॥ ४१ ॥ बारह वर्षकी अवस्थामें ही लोगोंके वाल पकते लगेंगे और कोई भी व्यक्ति बीस वर्षसे अधिक जीवित न रहेगा ॥ ४२ ॥ कलियुगमें लोग मन्द-बुद्धि, व्यर्थ चिह्न धारण करनेवाले और दुष्ट चित्तवाले होंगे, इसलिये वे अल्पकालमें ही नष्ट हो जायेंगे ॥ ४३ ॥ हे मैत्रेय ! जब-जब धर्मको अधिक हानि दिखलायी

अल्पकालम हा नष्ट हा जायगा। ४३॥

हे मैत्रेय! जब-जब धर्मको अधिक हानि दिखलायी

दे तभी-तभी बुद्धिमान् मनुष्यको किल्युगकी बृद्धिका
अनुमान करना चाहिये॥ ४४॥ हे मैत्रेय! जब-जब
पापण्ड बढ़ा हुआ दीखे तभी-तभी महात्माओंको
किल्युगकी बृद्धि समझनी चाहिये॥ ४५॥ जब-जब वैदिक मार्गका अनुसरण करनेवाले सत्पुरुषोंका
अभाव हो तभी-तभी बुद्धिमान् मनुष्य किल्को वृद्धि हुई
जाने॥ ४६॥ हे मैत्रेय! जब धर्मात्मा पुरुषोंके आरम्ध्
किथे हुए कार्योमे असफल्द्रता हो तब पण्डितजन
किल्युगको प्रभानता समझें॥ ४५॥ जब-जब यज्ञोके
अधीक्षर पगवान् पुरुषोत्तमका लोग यज्ञोद्धारा यजन न करें
तब-तब किल्का प्रभाव हो समझना चाहिये॥ ४८॥ जब
वैद-जादमे प्रीतिका अभाव हो समझना चाहिये॥ ४८॥ जब
वैद-जादमे प्रीतिका अभाव हो अगर पाषण्डके तशीभूत हो
विदेसे सबके स्वयिता और पाषण्डके तशीभूत हो

जानेसे सबके स्चियता और प्रभु जगरपति भगवान् विष्णुका पूजन नहीं करेंगे॥ ५०॥ है विप्र! उस समय लोग पाषण्डके वशीभूत होकर कहेंगे—'इन देव, द्विज, वेद और जलमें होनेवाले शौचादिमें क्या रखा है?'॥ ५१॥ है विप्र! कलिके आनेपर वृष्टि अल्प जलवाली होगी, खेती थोड़ी उपजवाली होगी और फलादि अल्प सारयुक्त होंगे॥ ५२॥ कलियुगमें प्रायः सन्के बने हुए सबके वस्त्र होंगे, अधिकतर शनीके वृक्ष होंगे और वारों वर्ण बहुधा शूद्रवत् हो जामेंगे॥ ५३॥ कलिके आनेपर धान्य अत्यन्त अणु होंगे, प्रायः बक्तियोंका हो दूध मिलेगा और उशीर (खस) ही एकमात्र अनुलेगन होगा॥ ५४॥ है मुनिश्रेष्ठ! कलियुगमें सास और ससुर हो लोगोंके

हे मुनिश्रेष्ठ ! किंग्युगमें सास और ससुर हो लोगोंके गुरुवन होंगे और हदयहारिणी भार्या तथा साले ही सुद्द् होंगे॥ ५५॥ स्त्रेग अपने ससुरके अनुगामी होकर कहेंगे कि 'कौन किसका पिता है और कौन किसकी माता; सब पुरुष अपने कर्मानुसार जन्मते-मरते रहते हैं ॥ ५६॥ वाङ्गनःकायजैदोषिरभिभृताः पुनः पुनः।

नराः पापान्यनुदिनं करिष्यन्यल्पमेशसः ॥ ५७

निस्सत्त्वानामशौचानां निह्नीकाणां तथा नृणाम् ।

यद्यद्दः खाय तत्सर्वं कलिकाले भविष्यति ॥ ५८

निस्खाध्यायवषद्कारे स्वधास्वाहाविसर्जिते । तदा प्रविरलो धर्मः क्रचिल्लोके निवस्यति ॥ ५९

तत्राल्पेनैव यहोन पुण्यस्कन्धमनुत्तमम्।

करोति यं कृतयुगे क्रियते तपसा हि सः ॥ ६०

इति श्रीविष्णुपुराणे यष्टें उन्ने प्रथमोऽभ्याय ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय

श्रीव्यासजीद्वारा कल्जियुग, शृद्ध और खियोंका महत्त्व-वर्णन

4

श्रीपरादार उवाच

व्यासश्चाह महाबुद्धियंदत्रैव हि वस्तुनि ।

तच्छूयतां महाभाग गदतो मम तच्चतः॥

कस्मिन्कालेऽल्पको धर्मो ददाति सुमहत्फलम् ।

मुनीनां पुण्यवादोऽभूत्कैश्चासौ क्रियते सुखम् ॥

सन्देहनिर्णयार्थाय वेदव्यासं महामुनिम्। वयुस्ते संशर्व प्रष्टुं मैत्रेय मुनिपुङ्गवाः ॥

ददुशुस्ते मुनिं तत्र जाह्नवीसलिले द्विज। वेदव्यासं महाभागमर्द्धस्त्रातं सृतं मम्।।

स्नानावसानं ते तस्य प्रतीक्षन्तो महर्षयः । तस्थुस्तीरे महानद्यास्तरुषण्डमुपाश्चिताः ॥

मग्नोऽथ जाह्नवीतोयादुखायाह सुतो मम । जूद्रसाधुः कलिस्साधुरित्येवं शुण्वतां वचः ॥

तेषां मुनीनां भूयश्च ममज स नदीजले । साधु साध्वित चोत्थाय शुद्र धन्योऽसि चात्रवीत् ॥

निमञ्जश्च समुत्याय पुनः प्राह महामुनिः । योषितः साधु धन्यास्तास्ताभ्यो धन्यतरोऽस्ति कः ॥

उस समय अल्पर्बाद्ध पुरुष बारम्बार वाणी, मन और

शरीरादिके दोषोंके वशीभूत होकर प्रतिदिन पुनः-पुनः पापकर्म करेंगे ॥ ५७ ॥ शक्ति, शीच और लजाहीन

पुरुषोंको जो-जो दुःख हो सकते है क्वलियुगर्पे वे सभी दुःस

उपस्थित होंगे ॥ ५८ ॥ उस समय संसारके स्वाध्याय और वषट्कारसे हीन तथा स्वधा और स्वाहासे वर्जित हो जानेसे

कहों-कहीं कुछ-कुछ धर्भ रहेगा ॥ ५९ ॥ किंतु कलियुगमे

पनुष्य थोड़ा-सा प्रयत्न करनेसे ही जो अल्पन्त उत्तम

पुण्यसदि। प्राप्त करता है जही सत्ययुगमें महान् तपस्यासे

पाप्त किया जा सकता है ॥ ६०॥

श्रीपराञ्चरजी बोले—हे महाभाग ! इसी विषयमें महामति व्यासदेवने जो कुछ कहा है वह मैं यथावत् वर्णन करता हूँ, सुनो ॥ १ ॥ एक बार मुनियोंभे [परस्पर]

पुण्यके विषयमें यह वार्तालाप हुआ कि 'किस सभवमें थोड़ा-सा पुण्य भी महान् फल देता है और कौन उसका सुखपूर्वक अनुष्ठान कर सकते है ?'॥ २॥ हे पैवेय ! वे

समस्त भुनिश्रेष्ठ इस सन्देहका निर्णय करनेके लिये

महामुनि व्यासजीके पास यह प्रश्न पूछने गये ॥ ३ ॥ है द्विज ! वहाँ पहुँचनेपर उन मुनिजनोने मेरे पुत्र महाभाग व्यासजांको महुमजीने अध्या स्नान किये देखा ॥ ४ ॥ वै महर्षिगण व्यासजीके स्नान कर चुकनेकी प्रतीक्षामें उस महानदीके तटपर वृक्षोंके तले बैठे रहे ॥ ५ ॥

उस समय पङ्गाजीमें इबकी छगाये मेरे पुत्र व्यासने जलसे उठकर उन मुनिजनोंके सुनते हुए 'कलियुग ही श्रेष्ट है. जुद्र ही श्रेष्ठ है' यह क्चन कहा । ऐसा कहकर उन्होंने फिर जलमें गोता लगाया और फिर उठकर कहा-

''शृद्र ! तुम ही श्रेष्ठ हो, तुम ही धन्य हो''॥ ६-७ ॥ यह कहकर वे महामुनि फिर जलमें मण हो गये और फिर खड़े होकर बोलें---"कियाँ ही साधु है, वे ही धन्य हैं, उनसे अधिक धन्य और कीन है ?" ॥ ८ ॥

ततः स्नात्वा यथान्यायमायान्तं च कृतक्रियम् । उपतस्थुर्महाभागे मुनयस्ते सुतं मम ॥ कृतसंवन्दनांश्चाह कृतासनपरिप्रहान् ।

कृतसवन्दनाञ्चाह कृतासनपारमहान् । किमर्थमागता यूयमिति सत्यवतीसुतः ॥ १०

तमूजुः संशयं प्रष्टुं भवन्तं वयमागताः। अलं तेनास्तु तावन्नः कथ्यतामपरं त्वया॥ ११

अल तनास्तु ताबन्नः कथ्यतामपर त्वया ॥ कलिस्साध्विति यद्योक्तं शृद्धः साध्विति योषितः ।

यदाह भगवान् साधु धन्याश्चेति पुनः पुनः ॥ १२ तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामो न चेद् गुह्यं महामुने । तत्कश्यतां ततो हत्स्थं पुच्छामस्त्वां प्रयोजनम् ॥ १३

श्रीपराशर उवाच

इत्युक्तो मुनिभिर्व्यासः प्रहस्येदमथात्रवीत् । श्रूयतां भो मुनिश्रेष्टा यदुक्तं साधु साध्विति ॥ १४

श्रीव्यास उवाच यत्कृते दशभिवंधैंस्त्रेतायां हायनेन नत्।

द्वापरे तद्य मासेन हाहोरात्रेण तत्कली ॥ १५ तपसे वदानवीस जगादेश करूं दिलाः ।

तपसो ब्रह्मचर्यस्य जपादेश्च फलं द्विजाः । प्राप्नोति पुरुषस्तेन कलिस्साध्विति भाषितम् ॥ १६

ध्यायन्कृते यजन्यज्ञैस्त्रेतायां द्वापरेऽर्चयन् । यदाप्रोति तदाप्रोति कलौ संकीर्त्य केशवम् ॥ १७

धर्मोत्कर्षमतीवात्र प्राप्नोति पुरुषः कलौ । अल्पायासेन धर्मज्ञास्तेन तुष्टोऽसम्यहं कलेः ॥ १८

व्रतचर्यापरैर्वाह्या वेदाः पूर्वं द्विजातिभिः । ततस्त्वधर्मसम्ब्राप्तैर्वष्टव्यं विधिवद्धनैः ॥ १९

ततस्त्वधर्मसम्प्राप्तैर्यष्टव्यं विधिवद्धैतः । वृक्षा कथा वृक्षा भोज्यं वृक्षेज्या च हिजन्मनाम् ।

पतनाय ततो भाव्यं तैस्तु संयमिभिस्सदा ॥ २० असम्यक्करणे दोषस्तेषां सर्वेषु वस्तुषु ।

भोज्यपेयादिकं चैषां नेच्छाप्राप्तिकरं हिजाः ॥ २१ पारतन्त्र्यं समस्तेषु तेषां कार्येषु वै यतः । जयन्ति ते निजाँल्लोकान्हेशेन महता हिजाः ॥ २२ तदनत्तर जब मेरे महाभाग पुत्र व्यासजी स्नान करनेके अनन्तर नियमानुबार नित्यकर्णसे निवृत होकर आये तो वे

मुनिजन उनके पास पहुँचे ॥ ९ ॥ वहाँ आकर जब वे यथायोग्य अभिवादनादिके अनन्तर आसनोपर बैट गये ती सत्यवतीनन्दन व्यासजीने उनसे पृछा—''आपलोग कैसे

आये हैं ?''॥ १०॥ तब मुनियोंने उनसे कहा—''हमलोग आपसे एक सन्देह पूछनेके लिये आये थे, किंतु इस समय उसे तो जाने दीजिये, एक और बात हमें बतलाइये॥ ११॥ भगवन्!

दाजय, एक आर बात हम बतलाइय ॥ ११ ॥ गणवन् : आपने जो स्वान करते समय कई बार कहा था कि 'कल्पियुग ही श्रेष्ठ हैं, श्रूद ही श्रेष्ठ हैं, सिर्फा ही साथु और अन्य हैं, सो क्या बात है ? हम यह सम्पूर्ण विश्वय सुनना चाहते हैं। हे महामुने ! यदि गोपनीय व हो तो

कहिये। इसके पीछे हम आपसे अपना आत्तरिक सन्देह पूछेंगे''॥ १२-१३॥ श्रीपराशरजी बोले—मुनियोके इस प्रकार पूछनेपर

व्यासनीने हँसते हुए कहा—"हे मुनिश्रेष्ठो । मैंने नो इन्हें बारम्बार साधु-साधुकहा था, उसका कारण सुनो"॥ १४॥ श्रीव्यासनी बोले—हे द्विनगण! जो फल

सलयुगमें दस वर्ष तपस्या, ब्रह्मचर्य और जप आदि करनेसे मिलता है उसे मनुष्य त्रेतामें एक वर्ष, द्वापरमें एक मास और कलियुगमें केवल एक दिन-रातमें प्राप्त कर लेता है, इस करण हो मैंने कलियुगको श्रेष्ठ कहा है॥ १५-१६॥ जो फल सल्ययुगमें ध्यान, त्रेतामें यह और द्वापरमें देवार्चन करनेसे प्राप्त होता है वही कलियुगमें श्रीकष्णचन्द्रका नाम-कीर्तन करनेसे मिल

जाता है ॥ १७ ॥ हे धर्मज्ञगण ! करियुगर्मे घोड़े-से

परिश्रमसे ही पुरुषको महान धर्मको प्राप्ति हो जाती है.

इसीलिये मैं कलियुगसे अति सन्तुष्ट हूँ ॥ १८ ॥ [अब शूद्र क्यों श्रेष्ठ हैं, यह बतलाते हैं] द्विजातियोंको पहले ब्रह्मचर्वव्रतका पालन करते हुए वेदाध्ययन करना पड़ता है और फिर स्वधर्मानरणसे उपार्जित धनके द्वारा

विधिपूर्वक यज्ञ करने पड़ते हैं ॥ १९ ॥ इसमें भी व्यर्थ वार्तालाप, व्यर्थ भोजन और व्यर्थ यज्ञ उनके पतनके कारण होते हैं; इसलिये उन्हें सदा संयमी रहना आवश्यक

है।। २०॥ सभी कार्योमें अनुचित (विधिके विपरीत) करनेसे उन्हें दोष लगता है; यहाँतक कि भोजन और पानदि भी वे अपने इच्छानुसार नहीं भीग सकते॥ २१॥

पानादि भी वे अपने इच्छानुसार नहीं भीग सकते ॥ २१ ॥ क्योंकि उन्हें सम्पूर्ण कार्योमें परतन्त्रता रहती हैं। है द्विजगण ! इस प्रकार वे अत्यन्त क्रेशसे पुण्य- हिजञ्जञ्जूष्ययैवैष पाकयज्ञाधिकारबान् ।

भक्ष्याभक्ष्येषु नास्वास्ति पेयापेयेषु वै वतः ।

निजाञ्चयति वै स्त्रेकाञ्च्छ्द्रो धन्यतरस्ततः ॥ २३

नियपो मुनिशार्दूलासेनासौ साध्वितीरितः ॥ २४

स्वधर्मस्याविरोधेन नरैलंट्यं धनं सदा। प्रतिपादनीयं पात्रेषु यष्टव्यं च यश्चाविधि ॥ २५ तस्वार्जने महाक्षेत्राः पालने च द्विजोत्तमाः । तथासद्विनियोगेन विज्ञातं गहनं नृणाम् ॥ २६ एवमन्यैसाथा क्षेत्रीः पुरुषा द्विजसत्तमाः। निजाञ्जयन्ति वै लोकान्प्राजापत्यादिकान्क्रमात् ॥ २७ योषिचुःश्रूषणाद्धर्तुः कर्मणा मनसा गिरा । तद्भिता शुभ्यमाप्रोति तत्सालोक्यं यतो द्विजाः ॥ २८ नातिङ्केरोन महता तानेव पुरुषो यथा। तृतीयं व्याहतं तेन मया साध्विति बोषित: ॥ २९ एतद्वः कथितं वित्रा यन्निमित्तमिहागताः । तत्पृच्छत यथाकामं सर्वं वक्ष्यामि व: स्फुटम् ॥ ३० ऋषयस्ते ततः प्रोचुर्यत्रष्ट्रच्यं महामुने । अस्मिन्नेव च तत् प्रश्ने यश्रावत्कथितं त्वया ॥ ३१ श्रीपराञ्चर उद्याच ततः प्रहस्य तानाह कृष्णद्वैपायनो मुनिः। विसमयोत्फुल्लनयनांस्तापसांस्तानुपागतान् ॥ ३२ मयैष भवतां प्रश्नो ज्ञातो दिव्येन चक्षषा । ततो हि व: प्रसङ्गेन साधु साध्वित भावितम् ॥ ३३ खल्पेन हि प्रयत्नेन धर्मीस्सद्भग्नति वै कलौ । नरैरात्मगुणाम्भोभिः क्षालिताखिलकिल्बिषैः॥३४ शुद्रैश्च द्विजशुश्रूषातत्यरैर्द्विजसत्तमाः । तथा स्त्रीभिरनायासात्पतिशुश्रूचयैव हि ॥ ३५ ततस्त्रितयमध्येतन्मम धन्यतरं मतम्।

धर्मसम्पादने क्रेज़ो हिजातीनां कृतादिष् ॥ ३६

अपृष्टेनापि धर्मज्ञाः कियन्यत्क्रियतां द्विजाः ॥ ३७

भवद्भिर्यद्धिप्रते तदेतत्कथिते

चाहिये ॥ २५ ॥ हे द्विजोत्तमगण ! इस द्रव्यके उपार्जन तथा रक्षणमें महान् द्वेश होता है और उसको अनुचित कार्यमे रुगानेसे भी मनुष्योंको जो कष्ट भोगना पडता है वह मारूम हो है ॥ २६ ॥ इस प्रकार हे द्विजसत्तमो ! पुरुषगण इन तथा ऐसे ही अन्य कष्टसाध्य उपायोंसे क्रमशः प्राजापत्य आदि श्य लोकोंको प्राप्त करते हैं ॥ २७ ॥ किंतु कियाँ तो तन-मन-बचनसे पतिकी सेवा बहरोसे ही उनकी हितकारिणी होकर पतिके समान शुभ लोकोंको अनायास ही आप्त कर लेती हैं जो कि पुरुषोंको अत्यन्त परिश्रमसे मिलते हैं। इसीलिये मैंने तीसरी बार यह कहा था कि 'खियाँ साध् हैं'॥ २८-२९॥ "है विद्रगण ! मैंने आपकोगीसे यह [अपने साधुवादका रहस्य] कह दिया, अब आप जिसलिये पश्चारे हैं वह इच्छानुसार पृछिये । मैं आपसे सब याते स्पष्ट करके कह दूँगां'॥३०॥ तब ऋषियोंने कहः—"हे महामुने ! हमें जो कुछ पूछना था उसका यथावत् उत्तर आपने इसी प्रश्नमें दे दिया है। [इसल्जिय अब हमें और कुछ पूछना नहीं है] ॥ ३१ ॥ श्रीपराद्यारजी बोले-तब मुन्विर कृष्णद्वैपायनने विस्मयसे खिले हुए नेत्रीबाले उन समागत तपस्थियोंसे हॅसकर कहा ॥ ३२ ॥ मैं दिव्य दृष्टिसे आपके इस प्रश्नको जान गया था इसीलिये मैंने आपलोगोंके प्रसंगसे ही 'साधु-साधु' कहा था॥ ३३ ॥ जिन पुरुषेनि गुणरूप जलसे अपने समस्त दोष भी ढाले हैं उनके थोड़े-से प्रियलसे ही करिंग्यगमें धर्म सिद्ध हो जाता है।। ३४॥ हे द्विजश्रेष्टो ! शुद्रोंको द्विजसेवापरायण होनेसे और क्रियोंको पतिको सेवामात्र करनेसे ही अनायास धर्मकी सिद्धि हो जाती है ॥ ३५ ॥ इसीलिये मेरे विचारसे ये तीनों घन्यतर है, क्योंकि सत्ययुगादि अन्य तीन युगोमें भी द्विजातियोंको ही धर्म सम्पादन करनेमें महान् क्षेत्रा उठाना पड़ता है ॥ ३६ ॥ हे धर्मज्ञ ब्राह्मणो ! इस प्रकार आपलोगीका जो अभिप्राय था वह मैंने आपके बिना पूछे

[मन्तहीन] पाक-यज्ञका ही अधिकार है यह जुड़ द्विजीवर्र सेवा करनेसे ही सद्दति प्राप्त कर लेता है, इसलिये यह अन्य जातियोंकी अपेक्षा धन्यतर है॥ २३॥ हे मुनिशार्द्तो । शहको भश्याभक्ष्य अधवा पेयापेयका कोई नियम नहीं है, इसिलये पैंने उसे साधु कहा है ॥ २४ ॥ [अब क्षियोंको किसलिये श्रेष्ठ कहा, यह बतलाते हैं—] पुरुषोंको अपने धर्मानुकुछ प्राप्त किये हुए धनसे ही सर्वदा सुपात्रको दान और विभिपूर्वक यज्ञ करना

लोकोंको प्राप्त करते हैं॥२२॥ किंतु जिसे केळल

श्रीपराशरजी बोले—तदनत्तर उन्होंने व्यासजीका

पुजनकर उनकी बारम्बार प्रशंसा की और उनके कथनानुसार

निश्चयकर जहाँसे आये थे वहाँ चले गये ॥ ३८ ॥ हे महाभए।

मैत्रेयजी ! आपसे भी मैंने यह रहस्य कह दिया । इस अत्यत्त द्रष्ट कलियुगमे यही एक महान् गुण है कि इस युगमें केवल

कृष्णचन्द्रका नाम-संकीर्तन करनेसे ही मनुष्य परमपद प्राप्त

कर होता है।। ३९ ॥ अब आपने मुझसे जो संसारके

उपसंहार—प्राकृत प्रलय और अवान्तर प्रलयके विषयमें

ही कह दिया, अब और क्या करूँ ?" ॥ ३७ ॥

[34° \$

श्रीपराश्चर उनाच

ततस्सम्पूज्य ते व्यासं प्रशशंसुः पुनः पुनः । यथाऽऽगतं द्विजा जग्मुर्व्यासोक्तिकृतनिश्चयाः ॥ ३८

भवतोऽपि महाभाग रहस्यं कथितं मया। अत्यन्तदष्टस्य कलेरयमेको महानाणः।

कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं क्रजेत् ॥ ३९

यद्याहं भवता पृष्टो जगतामुपसंहतिम्। प्राकृतामन्तरालां च तामप्येष वदामि ते ॥ ४०

तीसरा अध्याय

इति श्रीविष्णुपुराणे षष्ठेंऽशे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

भौविष्णुपुराण

8

?

8

No.

Ę

श्रीपराशर उवाच

सर्वेषामेव भूतानां त्रिविधः प्रतिसञ्चरः।

नैपित्तिकः प्राकृतिकस्तश्रैवात्यन्तिको लयः ॥

ब्राह्मो नैमित्तिकस्तेयां कल्पान्ते प्रतिसञ्चरः ।

आत्यन्तिकस्तु मोक्षाख्यः प्राकृतो द्विपरार्द्धकः ॥ थीमैनेय उदान

परार्द्धसंख्यां भगवन्ममाचक्ष्व यया तु सः । हिगुणीकृतया ज्ञेयः प्राकृतः प्रतिसञ्चरः ॥

श्रीपग्रश्स उवाच स्थानातस्थानं दशगुणमेकस्पाद्रण्यते द्विज ।

ततोऽष्टादञ्जमे भागे परार्द्धमभिधीयते ॥ परार्द्धद्विगुणं यत्तु प्राकृतस्य लयो द्विज । तदाव्यक्तेऽखिलं व्यक्तं स्वहेती लयमेति वै ॥

निपेषो मानुषो योऽसौ मात्रा मात्राप्रमाणतः । तैः पञ्चदशभिः काष्ट्रा त्रिशत्काष्ट्रा कला सुता ॥

नाडिका तु प्रमाणेन सा कला दश पञ्च च । उन्पानेनाम्भसस्सा त पलान्यर्द्धत्रयोदश ॥

निमेषादि काल-मान तथा नैमित्तिक प्रलयका वर्णन श्रीपराशस्त्री बोले-सम्पूर्ण प्राणियोंका प्रलय

पुछा था वह भी सुनाता है ॥ ४० ॥

नैमित्तिक, प्राकृतिक और आत्यन्तिक तीन प्रकारका होता है ॥ १ ॥ उनमेंसे जो कल्पान्तमें ब्राह्म प्रलय होता है वह

नैमित्तिक, जो मोक्ष नामक प्रलय है वह आत्यन्तिक और जो दो पराईकि अन्तमें होता है वह प्राकृत प्रख्य कहलाता है।।२॥ श्रीमैत्रेयजी बोले—भगवन् । आप मुझे पगर्दकी

परिमरण जाना जा सके ॥ ३ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले—हे दिव । एकसे लेकर क्रमशः दशगुण गिनते-गिनते जो अठारहवीं बार* गिनी जाती है बहु संख्या परार्द्ध कहलाती है ॥ ४ ॥ है द्विज !

इस परार्द्धकी दुनी संख्यायाला प्राकृत प्ररूप है, उस समय

यह सम्पूर्ण जगत् अपने कारण अव्यक्तमें लीन हो जाता

संख्या बतत्यहरो, जिसको दुना करनेसे प्राकृत प्ररूपका

है॥ ५॥ मनुष्यका निमेष ही एक मात्रावाले अक्षरके उद्यारण-कालके समान परिमाणवाला होतेसे मात्रा कहलाता है; उन पन्द्रह निमेघोंको एक काछा होती है और तीस काष्ट्राकी एक कला कही जाती है ॥ ६ ॥ पन्द्रह कला एक नाडिकाका प्रमाण है। यह नाडिका साढ़े बारह परु त्रविके बने हुए जलके पात्रसे जानी जा सकतो है ॥ ७ ॥

[🏄] वायुपुराणमे इन अठारह संख्याओंके इस प्रकार नाम है—एक, एस, दात, सहस्र, अयुत, नियुत, प्रयुत, अर्थुट, न्यर्बुद, वृन्द, सर्व, निखर्व, दोख, पदा, समुद्र, मध्य, अन्त, परार्ड,।

मागधेन तु मानेन जलप्रस्थस्तु स स्मृतः। हेममार्थः कृतच्छिद्रश्चतुर्भिश्चतुरङ्गुरुः ॥ नाडिकाभ्यामध्य द्वाभ्यां मुहूतों द्विजसत्तम । अहोरात्रं मुहुर्तास्तु त्रिंशन्मासो दिनैस्तथा ॥ मासैद्वदिशभिर्वर्षमहोरात्रं त् त्रिभिर्वर्षशतैर्वर्षे षष्ट्या चैवास्रहिवाम् ॥ १० तैस्त् द्वादशसाहस्स्रैश्चतुर्यगमुदाहतम् । चतुर्युगसहस्रं तु कथ्यते ब्रह्मणो दिनम् ॥ ११ स कल्पस्तत्र मनवश्चतुर्दश महामुने। तदन्ते चैव मैत्रेय ब्राह्मो नैमित्तिको लयः ॥ १२ तस्य स्वरूपमत्युषं मैत्रेय गदतो यसः। शृणुष्ट प्राकृतं भूयस्तव वक्ष्याम्यहं लयम् ॥ १३ चतुर्युगसहस्रान्ते क्षीणप्राये महीतले। अनावृष्टिरतीबोप्रा जायते शतवार्षिकी ॥ १४ ततो यान्यरूपसाराणि तानि सत्त्वान्यशेषतः । क्षयं यान्ति मुनिश्रेष्ट पार्थिवान्यनुपीडनात् ॥ १५ ततः स भगवान्विष्णु स्ट्रस्तप्धरोऽव्ययः । क्षयाय यतते कर्तुमात्मस्थास्सकलाः प्रजाः ॥ १६ ततस्स भगवान्विष्णुभाँनोस्सप्तस् रहिमषु । स्थितः पिबत्यशेषाणि जलानि मुनिसत्तम ॥ १७ पीत्वाम्भांसि समस्तानि प्राणिभूपिगतान्यपि। शोवं नयति मैत्रेय समस्तं पृथिवीतलम् ॥ १८ समुद्रान्सरितः शैलनदीप्रस्रवणानि च। पातालेषु च यत्तीयं तत्सर्वं नयति क्षयम् ॥ १९ ततस्तस्यानुभावेन तोयाहारोपबंहिताः । त एव ररमयस्सप्त जायने सप्त भास्कराः ॥ २० अधश्लोध्वं च ते दीप्तास्ततस्सप्त दिवाकराः । दहन्यशेषं त्रैलोक्यं सपातालतलं द्विज ॥ २१

द्रह्ममानं तु तैदीप्रैक्षैलोक्यं द्विज भास्करै: ।

ततो निर्देग्धवृक्षाम्ब त्रैलोक्यमिखलं द्विज ।

साद्रिनद्यर्णवाभोगं निस्त्रेहमभिजायते ॥ २२

भवत्येषा च वसुधा कुर्मपृष्ट्रोपमाकृतिः ॥ २३

देवलोकमे यहाँ एक दिन-एत होता है । ऐसे तीन सौ साठ वर्षीका देवताओंका एक वर्ष होता है ॥ १० ॥ ऐसे बारह हजार दिव्य वर्षीका एक चतुर्युग होता है और एक हजार चतुर्वुगका ब्रह्मका एक दिन होता है ॥ ११ ॥ हे महामुने ! यही एक कल्प है । इसमें चौदर मनु बीत जाते हैं । हे मैत्रेय ! इसके अन्तर्धे ब्रह्मका नैमित्तिक प्ररूप होता है ॥ १२ ॥ हे मैत्रेय ! सुनो, मैं उस नैमित्कि प्रलयका अत्यन्त भयानक रूप वर्णन करता हूँ । इसके पींछे मैं सुमसे प्राकृत प्ररूपका भी वर्णन करूँगा ॥ १३ ॥ एक सहस चतुर्युग बीतनेपर जब पृथिती श्रीणप्राय हो जाती है तो सी वर्षतक अति घोर अनावृष्टि होती है ॥ १४ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! उस समय जो पार्थिव जीव अल्प शक्तिवाले होते हैं वे सब अनावृष्टिसे पीड़ित होकर सर्वथा नष्ट हो जाते हैं॥ १५॥ तदनलर्, रुद्ररूपधारी अञ्ययात्मा भगवान् विष्णु संसारका क्षय करनेके लिये सम्पूर्ण प्रजाको अपनेमें लीन कर लेनेका प्रयत्न करते हैं ॥ १६ ॥ हे मुनिसत्तम ! उस समय भगवान् विष्णु सूर्यकी सातों किरणोंमें स्थित होकर सम्पूर्ण जलकी सोक देते हैं ॥ १७ ॥ हे मैत्रेय ! इस प्रकार प्राणियों तथा पृथिवीके अन्तर्गत सम्पूर्ण जलको सोखकर वे समस्त भूमण्डलको शुष्क कर देते हैं ॥ १८ ॥ समुद्र तथा नदियोंमें, पर्वतीय सरिताओं और स्रोतोंमें तथा विभिन्न पातालीमें जितना जल है वे उस सबको सुखा डालते हैं ॥ १९ ॥ तब भगवान्के प्रभावसे प्रभावित होकर तथा जलपानसे पृष्ट होकर वे सातों सूर्यर्रीदगर्यों सात सूर्य हो जाती हैं ॥ २० ॥ हे द्विज ! उस समय ऊपर-नीचे सब ओर देदीप्यमान होकर वे सातों सूर्य पाताळपर्यन्त सम्पूर्ण त्रिलोकीको भस्म कर डालते है ॥ २१ ॥ हे दिज ! उन प्रदीश भास्करोंसे दग्ध हुई त्रिलोकी पर्वत, नदी और समुद्रादिके सहित सर्वधा नीरस हो जाती है॥ २२ ॥ उस समय सम्पूर्ण त्रिलोकीके वृक्ष और जल-आदिके दग्ध हो जानेसे यह पृथिवी कल्रुएकी पीठके समान कठोर हो जाती है ॥ २३ ॥

मगधदेशीय मापसे यह पात्र जलप्रस्थ कहलाता है; उसमें चार अङ्गल लम्बी चार मासेकी सुवर्ण-रालकासे छिद्र

किया रहता है [उसके छिद्रको ऊपर करके जलमें डुबो

देनेसे जितनी देरमें वह पात्र भर जाय उतने ही समयको

एक नाडिका समझना चाहिये] ॥ ८ ॥ हे द्विजसत्तम !

ऐसी दो नाडिकाओंका एक मुहर्त होता है, तीस मुहर्तका

एक दिन-यत होता है तथा इतने (तीस) ही दिन-यतका एक मास होता है॥ ९॥ बारह मासका एक वर्ष होता है, शेषाहिश्वाससम्भृतः पातालानि दहत्वधः ॥ २४ पातालानि समस्तानि स दग्ध्वा ज्वलनो महान । भूमिमभ्येत्य सकलं बभस्ति वसुधातलम् ॥ २५ भुक्लोंकं ततस्सर्वं खलोंकं च सुदारुणः ।

ततः कालाग्निरुद्रोऽसौ भृत्वा सर्वहरो हरिः ।

ज्वालामालामहावर्तस्त्रीव परिवर्तते ॥ २६ अम्बरीषमिवाभाति त्रैलोक्यमिखलं तदा ।

ज्वालावर्तपरीवार**मुपक्षीणचरा**चरम्

ततस्तापपरीतास्त् लोकद्वयनिवासिनः । कृताधिकारा गच्छन्ति महलोंकं महामुने ॥ २८ तस्माद्पि महातापतप्ता लोकान्ततः परम् ।

गच्छन्ति जनलोकं ते दशावृत्त्वा परैषिण: ॥ २९ ततो दग्ध्वा जगत्सर्व रुद्ररूपी जनार्दनः । मुखनि:श्वासजान्मेघान्करोति भुनिसत्तम ॥ ३० ततो गजकुलप्रस्थास्तडित्वन्तोऽतिनादिनः ।

उत्तिष्ठन्ति तथा व्योघि योरास्तंवर्तका घनाः ॥ ३१ केचित्रीलोत्पलञ्चामाः केचित्कुमुद्दसन्निभाः । धूप्रवर्णा घनाः केचित्केचित्पीताः पयोधराः ॥ ३२ केचिद्रासभवर्णाभा लाक्षारसनिभास्तथा।

केचिद्रैड्र्यंसङ्काशा इन्द्रनीलनिभाः क्रवित् ॥ ३३ शङ्ककुन्दनिभाश्चान्ये जात्यञ्जननिभाः परे । इन्द्रगोपनिभाः केचित्ततदिशस्त्रिनिभास्तथा ॥ ३४ मनश्चिलाभाः केचिद्वै हरितालनिभाः परे । चायपत्रनिभाः केचिदुत्तिष्ठन्ते महाघनाः॥ ३५

केचित्परवराकाराः केचित्पर्वतसन्निभाः । कुटागारनिभाश्चान्ये केचितस्थलनिभा घनाः ॥ ३६ महारावा महाकायाः पूरयन्ति नभःस्थलम् । वर्षन्तस्ते महासारांस्तपञ्जिमतिभैरवम् ।

शमयन्यखिलं वित्र त्रैलोक्यान्तरधिष्ठितम् ॥ ३७ नष्टे चाग्नौ च सततं वर्षमाणा ह्यहर्निशम् ।

प्रावयन्ति जगत्सर्वमध्योभिर्मुनिसत्तम् ॥ ३८

कालाग्रिरुद्ररूपसे शेषनागके मुखरो प्रकट होकर नीचेसे पातालोको जलाना आस्भ करते हैं ॥ २४ ॥ वह महान अप्नि समस्त पातालोंको जलाकर पृथिवीपर पहुँचता है

रङ्गवाले, कोई वैड्रव-मणिके समान और कोई इन्द्रनील-

समान रक्तवर्ण और कोई मयुरके समान विचित्र वर्णवाले होते हैं ॥ ३४ ॥ कोई गैरूके समान, कोई हरितालके समान और कोई महामेघ, नील-कण्डके पह्नके समान रहुवाले होते हैं॥ ३५॥ कोई नगरके समान, कोई पर्वतके समान और कोई कुटागार (गृहविशेष) के समान

बृहदाकार होते हैं तथा कोई पृथिवीतलके सपान विस्तृत होते हैं॥ ३६॥ वे धनधोर अन्द करनेवाले महाकाय मेघगण आकाशको आच्छादित कर रहेते हैं और मुसलाधार जल बरसाकर त्रिलोकव्यापी भयदूर अग्निको शान्त कर देते हैं ॥ ३७ ॥ हे मुनिश्रेष्ट ! अमिके नष्ट हो

और सम्पूर्ण भूतलको भस्म कर द्वालता है ॥ २५ ॥ तब यह दारण अप्रि भुवलीक तथा स्वर्गलोकको जल्प दालता है और यह ज्याला-समृहका महान् आवर्त वहीं चक्क लगाने लगता है ॥ १६ ॥ इस प्रकार अग्निके आवतीसे घरकर सम्पूर्ण चराचरके नष्ट हो जानेपर समस्त त्रिलोकी एक तप्त कराहके समान प्रतीत होने लगती है।। २७॥ हे महामुने ! तदनन्तर अवस्थाके परिवर्तनसे परलोककी चाहवाले भुवलींक और स्वर्गलोकमें रहनेवाले

तब, सबको नष्ट करनेके लिये उद्यत हुए ओहरि

[मन्वादि] अधिकारिगण अग्रिज्वालासे सन्तप्त होकर महलॉकको चले जाते हैं किन्तु वहाँ भी उस उम कालानलके महातापसे सत्ताप्त होनेके कारण ये उससे बचनेके लिये जनलेकमें चले जाते हैं॥ २८-२९॥

हे मुनिश्रेष्ठ । तदनन्तर रुद्ररूपी भगवान् विष्णु सम्पूर्ण संसारको दन्ध करके अपने मुख-निःश्वाससे मेघोंको उत्पन्न करते हैं॥३०॥ तब विद्युत्से युक्त भयङ्कर गर्जना करनेवाले गजसमूहके समान बृहदाकार संवर्तक नामक घोर मेघ आकाशमें उठते हैं ॥ ३१ ॥ उनमेंसे कोई मेघ

नील कमलके समान श्यामवर्ण, कोई कुमुद-कुसुमके समान क्षेत, कोई धृष्रवर्ण और कोई पीतवर्ण होते हैं॥ ३२॥ कोई यधेके-से वर्णवाले, कोई लाखके-से

मणिके समान होते हैं॥ ३३॥ कोई शङ्क और कुन्दके समान क्षेत-वर्ण, कोई जाती (चमेली) के समान उज्ज्वल और कोई कजलके समान स्थापवर्ण, कोई इन्द्रगोपके

जानेपर भी अहर्निदा निरन्तर बरसते हुए वे मेध सम्पूर्ण

धाराभिरतिमात्राभिः प्रावधित्वाखिलं भवम् । भुवलींकं तथैबोध्वं प्रावयन्ति हि ते द्विज ॥ ३९

अन्धकारीकृते लोके नष्टे स्थावरजङ्गमे ।

वर्षीन्त ते महामेघा वर्षाणामधिकं शतम् ॥ ४० एवं भवति कल्पान्ते समस्तं मुनिसत्तम ।

वासुदेवस्य माहात्म्यान्नित्यस्य परमात्मनः ॥ ४१

इति श्रीविष्णुपुराणे पष्टेऽद्ये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चौथा अध्याय

प्राकृत प्ररूचका वर्णन

3

4

Ę

श्रीपराञ्चर उवान

सप्तर्षिस्थानमाक्रम्य स्थितेऽस्थसि महासुने ।

एकार्णवं भवत्येतत्रैलोक्यमिखलं ततः ॥

मुखनिःश्वासजो विष्णोर्वायुस्ताञ्चलदांस्ततः । नाशयन्वाति भैत्रेय वर्षाणामपरं शतम् ॥

सर्वभूतमयोऽचिन्त्यो भगवान्भूतभावनः ।

अनादिसदिर्विश्वस्य पीत्वा वायुमञ्जेषतः ॥

एकार्णवे ततस्तस्मिञ्छेषशय्यागतः प्रभुः । ब्रह्मरूपधरश्रीते भगवानादिकद्धरि: ॥

जनलोकगतैस्सिद्धैस्सनकाद्यैरभिष्टतः

ब्रह्मलोकगतैश्चैव चिन्त्यमानो मुमुक्षुभि:॥ आत्ममायामर्थी दिव्यां योगनिद्रां समास्थितः ।

एष नैमित्तिको नाम मैत्रेय प्रतिसञ्जरः । निमित्तं तत्र यच्छेते ब्रह्मरूपधरो हरि: ॥

आत्पानं वासुदेवाख्यं चिन्तयन्पयुसुदनः॥

यदा जागर्ति सर्वात्मा स तदा बेष्टते जगत् । निर्मालत्येतदिखलं माबाशय्यां गतेच्यते ॥

पदायोनेर्दिन चतुर्यगसहस्रवत् । यत्त् एकार्णवीकृते लोके तावती रात्रिरिव्यते ॥ श्रीपराशरजी बोले—हे महामुने! जब जल

सप्तर्षियोंके स्थानको भी पार कर जाता है तो यह सम्पूर्ण त्रिलोको एक महासमुद्रके समान हो जाती है ॥ १ ॥ हे

शयन करते हैं ॥ ३—६ ॥ हे मैत्रेय ! इस प्रक्रयके होनेमें

समय सर्वात्मा भगवान् विष्णु जागते रहते हैं उस सभग सम्पूर्ण संसारको चेष्टाएँ होती रहती हैं और जिस समय वे

अच्यत मायारूपो ज्ञय्यापर सो जाते हैं उस समय संसार भी लीन हो जाता है ॥ ८ ॥ जिस प्रकार ब्रह्माजीका दिन

एक हजार चतुर्यंगका होता है उसी प्रकार संसारके एकार्णवरूप हो जानेपर उनकी रात्रि भी उतनी ही बडी होती

मैत्रेय ! तदनन्तर, भगवान् विष्णुके मुख-नि:श्राससे प्रकट हुआ वायु उन मेणोंको नष्ट करके पुनः सौ वर्षतक चलता

जगत्को जलमे डुबो देते हैं ॥ ३८ ॥ हे द्विज ! अपनी अति स्थल धाराओंसे भूलींकको जलमें इबोकर वे भुवलींक तथा

उसके भी ऊपरके लोकोंको भी जलमन कर देते हैं ॥ ३९ ॥

इस प्रकार सम्पूर्ण संसारके अन्यकारमय हो जानेपर तथा

सन्पूर्ण स्थावर-जङ्गम जीवीके नष्ट हो जानेपर भी वे महायेच सी वर्षसे अधिक कालतक बरसते रहते हैं ॥ ४० ॥ हे

मुनिश्रेष्ट ! सनातन परमात्मा वासुदेवके माहात्यसे

कल्यान्तर्भे इसी प्रकार यह समस्य विश्वव होता है ॥ ४१ ॥

रहता है।। २।। फिर जनलोकनिवासी सनकादि सिद्धगणसे स्तृत और ब्रह्मलोकको प्राप्त हुए गुमुक्षुओंसे

ध्यान किये जाते हुए सर्वभूतमय, अचित्त्य, अनादि, जगत्के आदिकारण, आदिकर्ता, भृतभावन, मध्सुदन

भगवान् हरि विश्वके सम्पूर्ण बायुक्ते पीकर अपनी दिव्य-

मायारूपिणी बोगनिहाका आश्रय ले अपने वासुदेवात्मक स्वरूपका चिन्तन करते हुए उस महासमृद्रमें शेषशब्यापर

ब्रह्मारूपथारी भगवान् हरिका शयन करना ही निमित्त है; इसलिये यह नैमितिक प्रलय कहलाता है।। ७।। जिस

X3.R

ततः प्रबुद्धो राज्यन्ते पुनस्पृष्टिं करोत्यजः । ब्रह्मस्वरूपधृम्बिष्णुर्यथा ते कथितं पुरा ॥ १० इत्येष कल्पसंहारोऽवान्तरप्रलयो द्विज। नैमित्तिकस्ते कथितः प्राकृतं शृण्वतः परम् ॥ ११ अनावृष्ट्रबादिसम्पर्कात्कृते संक्षारुने मुने । समस्तेषुव लोकेषु पातालेषुखिलेषु च ॥ १२ पहुदादेविकारस्य विशेषान्तस्य संक्षये। कृष्णेच्छाकारिते तस्मिन्प्रवृत्ते प्रतिसञ्चरे ॥ १३ आपो ब्रसन्ति वै पूर्व भूमेर्गन्धात्मकं गुणम् । आत्तगन्धा ततो भूमि: प्रलयत्वाय कल्पते ॥ १४ प्रणष्टे गन्धतन्मात्रे भवत्युर्वी जलात्मिका । आपस्तदा प्रवृद्धास्तु वेगवत्यो महास्वनाः ॥ १५ सर्वमापुरवन्तीदं तिष्ठन्ति विचरन्ति च। सिळलेनोर्मिमालेन लोका व्याप्ताः समन्ततः ॥ १६ अपामपि गुणो यस्तु ज्योतिषा पीयते तु सः । नश्यन्यापस्ततस्ताश्च रसतन्पत्रसंक्षयात् ॥ १७ ततश्चापो इतरसा ज्योतिषं प्राप्नवन्ति वै । अग्न्यवस्थे तु सलिले तेजसा सर्वतो वृते ॥ १८ स वाग्रिः सर्वतो व्याप्य चादत्ते तज्जलं तथा । सर्वमापूर्वतेऽर्विभिस्तदा जगदिदं रानै: ॥ १९ अर्चिभिस्संवृते तस्मिस्तर्यगूर्ध्वमधस्तदा । ज्योतिषोऽपि परं रूपं वायुरत्ति प्रभाकरम् ॥ २० प्रलीने च ततस्तस्मिन्वायुभृतेऽखिलात्पनि । प्रणष्टे रूपतन्मात्रे हतरूपो विभावसु: ॥ २१ प्रशाम्यति तदा ज्योतिर्जायदोध्यते महान् ।

ततस्तु मूलमासाद्य वायुस्सम्भवपात्पनः।

वायोरपि गुणं स्पर्शमाकाशो प्रसते ततः ।

अरूपरसमस्पर्शमगन्धं न च मूर्तिमन्।

सर्वमापुरयद्यैव

निरालोके तथा लोके वाय्ववस्थे च तेजसि ॥ २२ ऊर्ध्वं चाथश्च तिर्यक्क दोधवीति दिशो दश ॥ २३ प्रशाम्यति ततो वायुः खं तु तिष्ठत्यनावृतम् ॥ २४

शब्द करता हुआ जल बहकर इस सम्पूर्ण जगत्को ज्यात कर लेता है। यह जल कभी स्थिर होता और कभी बहने लगता है। इस प्रकार तरहुमालाओसे पूर्ण इस जलसे सम्पूर्ण लोक सब ओरसे व्याप हो जाते हैं ॥ १५-१६ ॥ तदनन्तर जरूके गुण रसको देज अपनेमें लीन कर रहेता है । इस प्रकार रस-तन्मात्राका क्षय हो जनिसे जल भी नष्ट हो जाता है ॥ १७ ॥ तब रसहीन हो जानेसे जल अग्रिरूप हो जाता है तथा अग्निके सच ओर ब्याप्त हो जानेसे जलके अधिमें स्थित हो जानेपर वह अधि सब ओर फैलकर सम्पूर्ण जलको सोख लेता है और धीर-धीरे यह सम्पूर्ण जगत् ज्वालमसे पूर्ण हो जाता है ॥ १८-१९ ॥ जिस समय सम्पूर्ण लोक ऊपर-भीचे तथा सब ओर अग्नि-शिखाओंसे व्याप्त हो जाता है उस समय अग्निके प्रकाशक स्वरूपको वायु आपनेमें लीन कर लेता है ॥ २० ॥ सबके प्राणस्वरूप उस वायुमें जब अग्निका प्रकाशक रूप छीन हो जाता है तो रूप-तन्मात्राके नष्ट हो जानेसे आग्न रूपहीन हो जाता है ॥ २१ ॥ उस समय संसारके प्रकाशहीन और तेजके वायमें लीन हो जानेसे अग्नि शान्त हो जाता है और अति प्रचण्ड वाबु चलने रूगता है ॥ २२ ॥ तब अपने उद्धव-स्थान आकाशका आश्रय कर वह प्रचण्ड वायु उत्पर-नीचे तथा सब ओर दसों दिशाओंमें बड़े वेगसे चलने लगता है ॥ २३ ॥ तदमन्तर वायुके गुण रपर्शको आकाश लीन कर लेता है; तब वायु शान्त हो जाता है और आकाश आवरणहीन हो जाता है ॥ २४ ॥ उस समय रूप, रस, स्पर्दा, गन्ध तथा आकारसे रहित अत्यन्त महान् एक सुमहत्तत्प्रकाशते ॥ २५ आकाश ही सबको व्याप्त करके प्रकाशित होता है ॥ २५ ॥

है ॥ ९ ॥ उस रात्रिका अन्त होनेपर अजन्मा भगवान् विष्णु जायते हैं और ब्रह्मारूप धारणकर, जैसा तुमसे पहले कहा था उसी क्रमसे फिर सृष्टि रत्तते हैं ॥ १० ॥ हे द्विज ! इस प्रकार तुमसे कल्पान्तमें होनेवाले नैमित्तिक एवं अवान्तर-प्रलयका वर्णन किया। अब दूसरे प्राकृत प्रख्यका वर्णन सुनो ॥ ११ ॥ हे मुने । अनावृष्टि आदिके संवोगसे सम्पूर्ण लोक और निश्विल पातालोंके नष्ट हो जानेपर तथा भगवदिच्छासे उस प्ररूपकालके उपस्थित होनेपर जब महत्तत्त्वसे लेकर [पृथिवी आदि पञ्च] विशेषवर्यन्त सम्पूर्ण विकार क्षीण हो अते हैं तो प्रथम जल पृथियोके गुण गक्तको अपनेमें लीन कर लेता है। इस प्रकार यन्ध छिन लिये जानेसे पृथिवीका प्रलय हो जाता है ॥ १२ — १४ ॥ गन्ध-तन्मात्राके नष्ट हो जानेपर पृथिजी जलमय हो जाती है, उस समय बड़े बेगसे घोर

उस समय चारों ओरसे गोल, छिद्रस्वरूप, शब्दलक्षण

आकारा ही सेप रहता है; और वह सब्दमात्र आकार। सबको आच्छादित किये रहता है॥२६॥ तदनत्तर,

आकाराके गुण राज्यको भूतादि प्रस लेता है। इस भूतादिये

परिमण्डलं च सुविरमाकाशं शब्दलक्षणम् । शब्दमात्रं तदाकाशं सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ २६ ततश्शब्दगुणे तस्य भूतादिर्वसते पुनः। भूतेन्द्रियेषु युगपद्भृतादी संस्थितेषु वै। अभिमानात्मको ह्येष भूतादिस्तामसस्स्मृतः ॥ २७ भूतादि यसते चापि महान्वै बुद्धिलक्षणः ॥ २८ उर्वी महांश्च जगतः प्रान्तेऽन्तर्बाह्यतस्तथा ॥ २९ एवं सप्त महाबुद्धे क्रमात्मकृतयसमृताः । प्रत्याहारे तु तास्सर्वाः प्रविद्यन्ति परस्परम् ॥ ३० येनेदमावृतं सर्वमण्डमप्सु प्रलीयते । सप्तद्वीपसमुद्रान्तं सप्तलोकं सपर्वतम् ॥ ३१ उदकावरणं यत्तु ज्योतिषा पीयते तु तत्। ज्योतिर्वायौ लयं याति यात्याकारो समीरण: ॥ ३२ आकाशं चैव भुतादिर्यसते तं तथा महान् । महान्तमेभिस्सहितं प्रकृतिर्प्रसते हिज ॥ ३३ गुणसाम्यमनुद्रिक्तमन्यूनं च महासुने । प्रोच्यते प्रकृतिर्हेतुः प्रधानं कारणं परम् ॥ ३४ इत्येषा प्रकृतिससर्वा व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी। व्यक्तस्वरूपमञ्जक्ते तस्यान्मेत्रेय लीवते ॥ ३५ एकश्रुद्धोऽक्षरो नित्यस्पर्वच्यापी तथा पुपान् । सोऽप्यंशस्सर्वभूतस्य मैत्रेय परमात्मनः ॥ ३६ न सन्ति यत्र सर्वेशे नामजात्यादिकल्पनाः । सत्तामात्रात्पके ज्ञेये ज्ञानात्पन्यात्मनः परे ॥ ३७ तद्बह्य परमं धाम परमात्मा स चेश्वर: ।

स विष्णुस्सर्वमेवेदं यतो नावर्तते यति: ॥ ३८

पुरुषश्चाण्युभावेतौ लीयेते परमात्मनि ॥ ३१

विष्णुनामा स वेदेष वेदान्तेष च गीवते ॥ ४०

प्रकृतियां मयाऽऽख्याता व्यक्ताव्यक्तस्वरूपिणी ।

परमात्मा च सर्वेषापाधारः परमेश्वरः ।

ही एक साथ पञ्चभृत और इन्द्रियोंका भी लय हो जानेपर केवल अहंकारात्मक रह जानेसे यह तामस (तम:प्रधान). बहरूताता है फिर इस भूतादिकों भी [सत्त्वप्रधान होनेसे] बुद्धिरूप महत्तत्त्व प्रस लेता है ॥ २७-२८ ॥ जिस प्रकार पृथ्वी और महत्तत्त्व ब्रह्माण्डके अन्तर्जनतुकी आदि-अन्त सीयाएँ हैं उसी प्रकार उसके बाह्य जगत्का भी हैं ॥ २९ ॥ हे महाबुद्धे ! इसी तरह जो सात आवरण बताये गये हैं वे सब भी प्रख्यकालमें [पूर्ववत् पृथिवी आदि क्रमसे] परस्पर (अपने-अपने कारणोंमें) रहीन हो जाते हैं॥ ३०॥ जिससे यह समसा लोक व्याप्त है वह सम्पूर्ण भूमण्डल सातों द्वीप, सातों समुद्र, सातों लोक और सकल पर्वतश्रेणियोंके सहित जलमें लीन हो जाता है ॥ ३१ ॥ फिर जो जलका आवरण है उसे आँग्रे पी जाता है तथा अग्नि बायुमें और बायु आकाशमें लीन हो जाता है ॥ ३२ ॥ है द्विज ! आकाशको भूतादि (तामस अहंकार), भूतादिको महतत्व और इन सबके सहित महत्तत्वको मूल प्रकृति अपनेमें लीन कर लेती है ॥ ३३ ॥ हे महासूने ! न्युनाधिकसे रहित जो सन्त्रादि तीनो गुणोंकी साम्यावस्था है उसीको प्रकृति कहते है; इस्रोका नाम प्रधान भी है। यह प्रधान ही सम्पूर्ण जगत्का परम कारण है ॥ ३४ ॥ यह प्रकृति व्यक्त और अञ्चक्तरूपसं सर्वनयां है । हे मैत्रेय ! इसीलिये अञ्चलमें व्यक्तरूप लीन हो जाता है ॥ ३५ ॥ इससं पृथक् जो एक शुद्ध, अक्षर, नित्य और सर्वेञ्यापक पुरुष है वह भी सर्वभूत परमात्माका अंश ही है ॥ ३६ ॥ जिस सत्तामात्रस्वरूप आत्मा (देहादि संघात)। से पृथक रहनेवाले ज्ञानातम एवं ज्ञातव्य सर्वेश्वरमें नाम और जाति आदिको कल्पना नहीं है वही सबका परम आश्रय परवद्धा परमात्मा है और वही ईश्वर है। वह विष्णु ही इस अखिल विश्वरूपसे अवस्थित है उसको प्राप्त हो। जानेपर योगिजन फिर इस संसारमें नहीं लीटते ॥ ३७-३८ ॥ जिस व्यक्त और अव्यक्तसरूपिणी प्रकृतिका मैंने वर्णन किया है यह तथा पुरुष— ये दोतों भी उस परमात्मामें ही लीन हो जाते हैं ॥ ३९ ॥ वह परमात्मा

सबका आधार और एकमात्र अधीक्षर है; उसीका बेद

और वेदान्तिमे विष्णुनामसे वर्णन किया है ॥ ४० ॥ वैदिक कर्म दो प्रकारका है---प्रवृत्तिरूप (कर्मयोग) और

निवृत्तिरूप (सांख्ययोग) । इन दोनों प्रकारके कर्मोंसे तस

सर्वभृत पुरुषोत्तमका ही यजन किया जाता है ॥ ४१ ॥ ऋक्,

यज्ञः और सामबेदोक्त प्रवृत्ति-भागेंसे लोग उन यज्ञपति पुरुषोत्तम यज्ञ-पुरुषका ही पूजन करते हैं ॥४२ ॥ तथा

निवृत्ति-मार्गमें स्थित योगिजन भी उन्हीं ज्ञानात्मा ज्ञानस्वरूप

मुक्ति-फल-दायक भगवान् विष्णुका ही ज्ञानयोगद्वारा यजन

करते हैं ॥ ४३ ॥ हस्ब, दीर्घ और प्रुत—इन त्रिविध स्वरीसे

जो कुछ कहा जाता है तथा जो वाणीका विषय नहीं है वह सब भी अव्ययात्मा विष्णु हो है ॥ ४४ ॥ वह विश्वरूप घारी

विश्वरूप परमात्मा श्रीहरि ही व्यक्त, अव्यक्त एवं अविनाशी

पुरुष हैं॥४५॥ हे मैत्रेय! उन सर्वव्यापक और

अविकृतरूप परभात्मामें ही व्यक्ताव्यक्तरूपिणो प्रकृति और

विष्णुभगवानुका केवल एक दिन है ॥ ४७ ॥ हे महामुने !

व्यक्त जगत्के अव्यक्त-प्रकृतिमें और प्रकृतिके पुरुषमें

लीन हो जानेपर इतने ही कालकी विष्णुभगवानुकी रात्रि

होती है ॥ ४८ ॥ हे द्विज ! वास्तवमें तो उन नित्य परमात्माका न कोई दिन है और न राजि, तथापि केवल

उपचार (अध्यारोप) से ऐसा कहा जाता है॥४९॥ हे

मैत्रेय ! इस प्रकार मैंने तुमसे यह प्राकृत प्ररूपका

वर्णन किया, अब तुम आत्यक्तिक प्रलयका वर्णन और

हे मैंत्रेय ! मैंने तुमसे जो द्विपरार्द्धकाल कहा है यह उन

पुरुष लीन हो जाते हैं ॥ ४६ ॥

प्रवृत्तं च निवृत्तं च द्विविधं कर्म वैदिकम् ।

ताभ्यामुभाभ्यां पुरुषैसार्वमूर्तिस्त इञ्यते ॥ ४१

ऋग्यज्ञस्तामभिमार्गैः प्रवृत्तैरिज्यते ह्यसौ ।

यज्ञेश्वरो यज्ञपुमान्युरुवैः पुरुषोत्तमः ॥ ४२ ज्ञानात्मा ज्ञानयोगेन ज्ञानमूर्त्तिः स चेज्यते ।

निवृत्ते योगिभिर्मार्गे विष्णुर्मृक्तिफलप्रदः ॥ ४३

ह्रस्वदीर्घप्रतैर्यत् किञ्चिद्वस्त्वभिधीयते ।

यस वाचामविषयं तत्सर्वं विष्णुरव्ययः ॥ ४४

व्यक्तस्स एव चाव्यक्तस्य एव पुरुषोऽव्ययः ।

परमात्मा च विश्वातमा विश्वरूपधरो हरिः ॥ ४५

व्यक्ताव्यक्तात्मिका तस्मिन्धकृतिस्सम्प्रलीयते । पुरुषश्चापि मैत्रेय व्यापिन्यव्याहतात्मनि ॥ ४६

द्विपरार्द्धात्मकः कालः कथितो यो मया तव । तदहस्तस्य मैत्रेय विष्णोरीशस्य कथ्यते ॥ ४७

व्यक्ते च प्रकृतौ लीने प्रकृत्यां पुरुषे तथा । तत्र स्थिते निञा चास्य तत्प्रमाणा महामुने ॥ ४८ नैवाहस्तस्य न निशा नित्यस्य परमात्पनः ।

उपचारस्त्रधाष्येष तस्येशस्य द्विजोच्यते ॥ ४९ इत्येष तव मैत्रेय कथितः प्राकृतो लयः ।

आत्यन्तिकमथो ब्रह्मन्निबोध प्रतिसञ्चरम् ॥ ५०

पाँचवाँ अध्याय

इति श्रीविष्णुपुराणे षष्ठेऽशे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

आध्यात्मिकादि त्रिविध तापोका वर्णन, भगवान् तथा वासुदेव शब्दोंकी व्याख्या और भगवान्के पारमार्थिक खरूपका वर्णन

आध्यात्मिकादि मैत्रेय ज्ञात्वा तापत्रयं बुधः ।

उत्पन्नज्ञानवैराग्यः प्राप्नोत्यात्यन्तिकं लयम् ॥

आध्यात्मकोऽपि द्विविधरशारीरो मानसस्तथा । शारीरो बहुभिभेदेभिंद्यते श्रूयतां च सः ॥

प्रक्रय प्राप्त करते हैं॥१॥ आध्यारिकक

श्रीपराद्याखी बोले—हे मैत्रेय ! आध्यात्मक, आधिदैविक और आधिभौतिक तीनों तापोंको जानकर शान और वैराग्य उत्पन्न होनेपर पण्डितजन आत्यन्तिक

शारोरिक और मानसिक दो प्रकारके होते हैं; उनमें ञ्चारीरिक तापके भी कितने ही भेद हैं, वह सुनो ॥ २ ॥ q

V)

शिसेरोग, प्रतिश्याय (पीनस), ज्वर, शूल, भगन्दर,

गुल्म, अर्थ (बवासीर), शोध (सृजन), श्वास (दमा), छर्दि तथा नेत्ररोग, अतिसार और कुष्ट आदि शारीरिक

कष्ट-भेदसे दैहिक तापके कितने ही भेद हैं । अब मानसिक

तापोंको सुनो ॥ ३-४ ॥ हे द्विजश्रेष्ट ! काम, क्रोध, भय,

द्वेष, लोभ, मोह, विषाद, शोक, असूबा (गुणोंमे

दोषारोपण), अपमान, ईर्घ्या और मास्तर्य आदि भेदोंसं मानसिक तापके अनेक भेद हैं। ऐसे ही नाना प्रकारके

भेदोंसे युक्त तापको आध्यात्मिक कहते हैं॥ ५-६॥

शिरोरोगप्रतिश्यायज्वरशुरूभगन्दरैः गुल्पार्शःश्रयथुशासच्चद्यदिभिरनेकथा तथाक्षिरोगातीसारकुष्ठाङ्गामयसंज्ञितैः भिद्यते देहजस्तापो मानसं श्रोतुमहँसि ॥ कामकोधभयद्वेषलोभमोहविषादजः शोकासुयावमानेष्यांमात्सर्यादिमयस्तथा मानसोऽपि द्विजश्रेष्ठ तापो भवति नैकधा । इत्येवमादिभिभेदैस्तायो ह्याध्यात्मिकः स्पृतः ॥ मृगपक्षिमनुष्याद्यैः पिशाचौरगराक्षसैः । सरीस्पाद्येश्च नृणां जायते चाधिभौतिकः ॥ **शीतवातोष्णवर्षाम्बुवैद्युतादिसमुद्भवः** तापो द्विजवर श्रेष्ठैः कथ्यते चाधिदैविकः ॥ गर्भजन्मजराज्ञानमृत्युनारकज दुःखं सहस्रको भेदैभिंद्यते मुनिसत्तम ॥ सुकुमारतनुर्गभें जन्तुर्बहुपलावृते । उल्बसंबेष्टितो भुग्नपृष्ठश्रीवास्थिसंहतिः ॥ १० अत्यम्लकद्तीक्षणोष्णलवणैर्मातुभोजनैः । अत्यन्ततापैरत्यर्थं वर्द्धमानातिवेदनः ॥ ११ प्रसारणाकुञ्चनादौ नाङ्गानां प्रभुरात्मनः। शकुन्मूत्रमहापङ्कशायी सर्वत्र पीडितः ॥ १२ निरुक्कवासः सर्वतन्यस्मरञ्जन्यशतान्यथ । आस्ते गर्भेऽतिदुःखेन निजकर्पनिबन्धनः ॥ १३ जायमानः पुरीषासृङ्कुत्रशुक्राविलाननः । प्राजापत्येन वातेन पीड्यमानास्थिबन्धनः ॥ १४ अधोमुखो वै क्रियते प्रबलैस्सूतिमास्तैः। क्षेत्रात्रिष्कान्तिमाप्रोति जठरात्रातुरततुरः ॥ १५ मूर्ळामबाप्य महतीं संस्पृष्टो बाह्यवायुना । विज्ञानश्रेशमाप्रोति जातश्च पुनिसत्तम ॥ १६ कण्टकैरिव तुन्नाङ्गः क्रकचैरिव दारितः ।

पूर्तिव्रणान्निपतितो धरण्यां क्रिमिको यथा ॥ १७

स्नानपानादिकाहारमप्याप्रोति परेच्छया ॥ १८

कण्डुयनेऽपि चाञ्चकः परिवर्तेऽप्यनीश्वरः ।

मनुष्योंको जो दुःख मृग, पश्ची, मनुष्य, पिराच, सर्प, राक्षस और सरीसृप (बिच्छू) आदिसे प्राप्त होता है उसे आधिभौतिक कहते हैं॥७॥ तथा हे द्विजवर ! शीत, उष्ण, वायु, वर्षा, जल और विद्युत् आदिसे प्राप्त हुए दुःखको श्रेष्ठ पुरुष आधिदैविक कहते है ॥ ८ ॥ है मुनिश्रेष्ट ! इनके अतिरिक्त गर्ध, जन्म, जरा, अज्ञान, मृत्यु और नरकसे उत्पन्न हुए दु:खके भी सहस्रो प्रकारके भेद हैं ॥ ९ ॥ अत्यन्त मरूपूर्ण गर्भाशयमें उल्ब (गर्भकी झिल्ली) से सिपटा हुआ यह सुकुमारशरीर जीव, जिसकी पीठ और योजाकी अस्थियों कुण्डलकार मुड़ी रहती हैं, माताके खाये हुए अत्यन्त तापप्रद खड़े, कड़ते, चरपरे, गर्म और सारे पदाधौंसे जिसकी वेदना बह्त बढ़ जाती हैं, जो मल-मृत्ररूप महापङ्कमें पड़ा-पड़ा सम्पूर्ण अङ्गोमें अल्पन्त पीड़ित होनेपर भी अपने अङ्गोकी फैरुने या सिकोइनेमें समर्थ नहीं होता और चेतनायुक्त होनेपर भी श्वास नहीं ले सकता, अपने सैकड़ों पूर्वजन्योंका रमरण कर कर्मोंसे बैधा हुआ अत्यन्त दुःखपूर्वक गर्भमें पड़ा रहता है ॥ १० — १३ ॥ उत्पन्न होनेके समय उसका मुख मल, मूत्र, रक्त और वीर्य आदिमे लिपटा रहता है और उसके सम्पूर्ण अस्थिबन्धन प्रजापत्व (गर्भको सङ्कृचित करनेवात्त्री) वासुसे अत्यन्त पीड़ित होते हैं ॥ १४ ॥ प्रवल प्रसृति-वायु उसका मुख नीचेको कर देती है और वह आतुर होकर बड़े क्रेशके साथ माताके गर्भाशयसे बाहर निकल पाता है ॥ १५ ॥ हे मुनिसत्तम ! उत्पन्न होयेके आनन्तर बाह्य वायुका रपर्श होनेसे अत्यन्त मूर्च्छित होकर यह जीव बेसुध हो जाता है ॥ १६ ॥ उस समय वह जीव दुर्गन्वयुक्त फोड़ेमेंसे गिरे हुए किसी कण्टक-विद्ध अथना आरेसे चीरे हुए बीड़ेके समान पृथियोपर गिरता है॥ १७॥ इसे स्वयं खुबलाने अथवा करवट लेनेकी भी शक्ति नहीं रहती। वह सान

अशुचित्रस्तरे सुप्तः कीटदंशादिभिस्तथा । भक्ष्यमाणोऽपि नैवेषां समर्थो विनिदारणे ॥ १९ जन्मदःखान्यनेकानि जन्मनोऽनन्तराणि च । बारूभावे यदाप्रोति ह्याधिर्भौतादिकानि च ॥ २० अज्ञानतमसाऽऽच्छन्नो मृढान्तःकरणो नरः । न जानाति कृतः कोऽहं क्वाहं गन्ता किमात्मनः ॥ २१ केन बन्धेन बद्धोऽहं कारणं किमकारणम् । कि कार्य किमकार्य वा कि वाच्यें कि च नोच्यते ॥ २२ को धर्मः कश्च वाधर्मः कस्मिन्वतेऽत्र वा कथम् । किं कर्तव्यमकर्तव्यं किं वा किं गुणदोषवत् ॥ २३ एवं पञ्चसमैर्मृढैरज्ञानप्रभवं महत्। अवाप्यते नरैर्दुःखं शिश्रोदरपरायणैः ॥ २४ अज्ञानं तामसो भावः कार्यास्मप्रवृत्तयः। अज्ञानिनां प्रवर्तन्ते कर्मलोपास्ततो द्विज ॥ २५ नरकं कर्मणां लोपात्फलमाहर्मनीषिणः । तस्मादज्ञानिनां दुःखमिह वामुत्र चोत्तमम् ॥ २६ जराजर्जरदेहश्च शिक्षिलावयवः पुमान्। विगलक्कीर्णदशमो वलिखायुशिरावृतः ॥ २७ दरप्रणष्ट्रनयनो व्योपान्तर्गततारकः । नासाविवरनिर्यातलोयपुक्तश्चलद्वपुः 39 11 प्रकटीभूतसर्वास्थिनंतपृष्टास्थिसंहतिः उत्सन्नजठरामित्वादल्पाहारोऽल्पचेष्टितः 11 29 कुच्छ्रमुङ्कमणोत्थानशयनासनचेष्टितः

मन्दीभवच्छोत्रनेत्रस्ववल्लालाविलाननः

अनायत्तैस्समस्तैश्च करणैर्यरणोन्पुखः ।

तत्क्षणेऽप्यनुभूतानामस्मर्ताखिलवस्तुनाम् ॥ ३१

11 30

है ॥ १८ ॥ अपवित्र (मल-मुत्रादिमें सने हए) बिस्तरपर पड़ा रहता है, उस समय कोड़े और डॉस आदि उसे काटते है तथापि वह उन्हें दूर करनेमें भी समर्थ नहीं होता ॥ १९ ॥ इस प्रकार जन्मके समय और उसके अनन्तर कल्यावस्थामें जीव आधिगौतिकादि अनेकों दुःख भोगता है ॥ २० ॥ अज्ञानरूप अन्धकारसे आनुत होकर मुङ्गहदय पुरुष यह नहीं जानता कि 'मैं कहाँसे आया हूँ ? कीन हूँ ? कहाँ जाऊँगा ? तथा भेरा स्वरूप क्या है ? ॥ २१ ॥ मैं किस बन्धनसे बैधा हूँ ? इस बन्धनका क्या कारण है ? अथवा यह अकारण ही प्राप्त हुआ है ? मुझे क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये ? तथा क्या कहना चाहिये और क्या न कहना चाहिये ? ॥ २२ ॥ धर्म क्या हैं ? अधर्म क्या है ? किस अवस्थामें मुझे किस प्रकार रहना चाहिये ? क्या कर्तच्य है और क्या अकर्तव्य है ? अथवा क्या गुणमय और क्या दोषमय है ?' ॥ २३ ॥ इस प्रकार पश्के समान विवेकशुन्य शिश्रोदरपरायण पुरुष अज्ञानजनित महान् दःख भोगते हैं ॥ २४ ॥ हे द्विज ! अज्ञान तामसिक भाव (विकार) है, अतः अज्ञानी पुरुषोंकी (तागसिक) कमेंकि आरम्भमें प्रवृत्ति होती हैं; इससे बैदिक क्सेंकिर लोप हो जाता है ॥ २५॥ भनीषिजनीने कर्म-स्रोपका फरू नरक बतलाया है:-इसलिये अज्ञानी पुरुषोंको इहलोक और परलोक दोनों जगह अत्यन्तं ही दुःख योगना पहता है ॥ २६ ॥ शरीरके जरा-जर्जरित हो जानेपर प्रथके अङ्ग-प्रत्यङ्ग शिथिल हो जाते हैं, उसके दाँत पुराने होकर उखड़ जाते हैं और शरीर झरियों तथा नस-नाड़ियोंसे आवृत हो जाता है ॥ २७ ॥ उसकी दृष्टि दूरस्थ विषयके ग्रहण करनेमें असमर्थ हो जाती है, नेत्रोंके सारे गोलकोंमें पूस जाते हैं, नासिकाके एओमेंसे बहुत-से रोम बाहर निकल आते हैं और शरीर काँपने लगता है॥ २८॥ उसकी समस्त हर्डियाँ दिखलायी देने लगती हैं, मेरुदण्ड झुक जाता है तथा जटरामिके मन्द पड़ जानेसे उसके आहार और पुरुषार्थ कम हो जाते हैं॥ २९॥ उस समय उसकी चलना-फिरना, उडना-बैडना और सोना आदि सभी चेष्टाएँ बढी कठिनतासे होती हैं, उसके श्रोत्र और नेत्रोंकी शक्ति मन्द पड जाती है तथा लार बहते रहनेसे उसका मुख मलिन हो जाता है ॥ ३० ॥ अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों स्वाधीन न रहनेके कारण वह सब प्रकार मरणासन्न हो जाता है तथा [स्मरणइक्तिके श्रीण हो जानेसे] वह तसी समय

तथा दुष्यपानादि आहार भी दूसरेहीकी इच्छासे प्राप्त करता

सकृदुष्टारिते वाक्ये समुद्भूतमहाश्रमः। श्वासकाशसमुद्धतमहायासप्रजागरः 11 37 अन्येनोत्थाप्यतेऽन्येन तथा संवेश्यते जरी। भृत्यातमपुत्रदाराणामवमानास्पदीकृतः ॥ ३३ प्रक्षीणाखिलशौचश्च विद्वाराहारसस्पृहः । हास्यः परिजनस्यापि निर्विण्णाञ्चेषबान्धवः ॥ ३४ अनुभूतमिवान्यस्पिञ्जन्यन्यात्मविचेष्टितम् । संस्मरन्यौवने दीर्घं निःश्वसत्यभितापितः ॥ ३५ एवमादीनि दुःखानि जरायामनुभूय वै। मरणे यानि दुःखानि प्राप्नोति शृणु तान्यपि ॥ ३६ रुलथद्त्रीवाङ्ब्रिहस्तोऽथ व्याप्तो वेपशुना भुराप् । मुहुग्लीनिपरवज्ञो मुहुर्ज्ञानलवान्तितः ॥ ३७ हिरण्यधान्यतनयभार्याभृत्यगृहादिषु एते कथं भविष्यन्तीत्यतीव ममताकुलः ॥ ३८ मर्मिधिद्धर्महारोगैः क्रकवैरिव दारुणैः। शरैरिवान्तकस्योग्रैहिछद्यमानासुबन्धनः परिवर्तिततासक्षो हस्तपादं मुहुः क्षिपन्। संशुष्यमाणताल्बोष्ठपुटो घुरघुरायते ॥ ४०

379 4]

परिश्रम होता है तथा श्वास और खाँसी आदिके महान् कष्टके कारण वह [दिन-रात] जागता रहता है ॥ ३२ ॥ बृद्ध पुरुष औरोंकी सहायतासे ही उठता तथा औरोंके बिठानेसे ही बैंठ सकता है, अतः वह अपने सेवक और स्वी-पुत्रादिके क्रिये सदा अनादरका पात्र बना रहता है ॥ ३३ ॥ उसका समस्त शौचाचार नष्ट हो जाता है तथा भोग और भोजनकी लालसा बढ़ जाती है; उसके परिजन भी उसकी हँसी उड़ाते हैं और बन्भुजन उससे उदासीन हो जाते हैं ॥ ३४ ॥ अपनी युवावस्थाकी चेष्टाओंको अन्य

जनमें अनुभव की हुई-सी स्मरण करके वह अल्पन्त सन्तापवदा दीर्घ निःश्वास छोड़ता रहता है ॥ ३५॥ इस प्रकार वृद्धावस्थामें ऐसे ही अनेकों दुःख अनुभव कर उसे मरणवहरूमें जो कड़ भोगने पड़ते हैं से भी सुनो ॥ ३६ ॥ कण्ड और हाथ-पैर शिथिल पढ़ आते तथा इरिरमें अत्यन्त कम्प छा जाता है। बार-बार उसे ग्रानि होतीं और कभी कुछ चेतना भी आ जाती है ॥ ३७ ॥ उस समय वह अपने हिरण्य (सोना), बन-बान्य, पुत्र-स्त्री, भृत्य और गृह आदिके प्रति 'इन सबका क्या होगा ?' इस प्रकार अत्यन्त भगतासे व्याकुरु हो जाता है ॥ ३८ ॥ उस समय मर्मभेदी क्रकच (आरे) तथा यमराजके विकराल बाणके समान महाभयक्कर रोगोंसे उसके प्राण-बन्धन कटने लगते हैं ॥ ३९ ॥ उसकी आँखोंके तारे चढ़ जाते हैं, वह अत्यन्त पीड़ासे बारम्बार हाथ-पैर पटकता है तथा उसके तालु और औठ सूखने लगते हैं॥४०॥ फिर क्रमदाः दोप-समृहसे उसका कण्ठ रूक जाता है अतः वह 'घरघर' शब्द करने लगता है; तथा ऊर्ध्वश्वाससे पीडित और महान् तापसे व्याप्त होकर शुधा-तृष्णासे व्याकुल हो उड़ता है ॥ ४१ ॥ ऐसी अवस्थामें भी यमदृतीसे पीड़ित होता हुआ वह बड़े हेज्ञसे दारीर छोड़ता है और अस्यन्त कष्टरी कर्मफल भोगनेके लिये यातना-देह प्राप्त करता है ॥ ४२ ॥ मरणकालमे मनुष्योको ये और ऐसे ही अन्य भयानक कष्ट भोगने पड़ते हैं; अब, मरणोपरान्त उन्हें नरकमें जो यातनाएँ भोगनी पड़ती है वह सुनो — ॥ ४३ ॥ प्रथम यम-किद्धर अपने पाशोंमें बाँधते हैं; फिर उनके दण्ड-प्रहार सहने पड़ते हैं, तदनन्तर यमराजका दर्शन होता है और वहाँतक पहुँचनेमें बढ़ा दुर्गम मार्ग

अनुभव किये हुए समस्त पदार्थीको भी भूल जाता है ॥ ३१ ॥ उसे एक वाक्य उत्तारण करनेमें भी महान्

निरुद्धकण्ठो दोषौधैरुदानश्वासपीडितः । तापेन महता व्याप्तस्तुषा चार्तस्तथा शुधा ॥ ४९ क्रेशादुत्क्रान्तिमाप्नोति यमकिङ्करपीडितः । ततश्च यातनादेहं क्रेशेन प्रतिपद्यते ॥ ४२ एतान्यन्यानि चोद्राणि दुःखानि मरणे नृणाम् । शृणुषु नरके यानि प्राप्यन्ते पुरुपैर्मृतैः ॥ ४३ याम्यकिङ्करपाशादिग्रहणं दण्डताडनम् । यमस्य दर्शनं चोप्रमुप्रमार्गविलोकनम् ॥ ४४ देखना पड़ता है ॥ ४४ ॥- करम्भवालकावद्वियन्तशसादिभीषणे प्रत्येकं नरके याश्च यातना द्विज दुःसहाः ॥ ४५ क्रकचैः पाट्यपानानां मूषायां चापि दह्यताम् ^१ । कुठारै: कृत्यमानानां भूमौ चापि निखन्यताम् ॥ ४६ ञ्जलेष्ट्रारोध्यमाणानां व्याघवक्त्रे प्रवेश्यताम् । गुद्रैसस्यक्ष्यमाणानां द्वीपिभिश्चोपभुज्यताम् ॥ ४७ क्षाध्यतां तैलमध्ये च क्रिटातां क्षारकर्दमे । उद्यान्निपात्यमानानां क्षिण्यतां क्षेपयन्त्रकैः ॥ ४८ नरके यानि दुःखानि पापहेतुद्धवानि वै। प्राप्यन्ते नारकैर्विप्र तेषां संख्या न विद्यते ॥ ४९ न केवलं द्विजश्रेष्ट नरके दःखपद्धतिः। स्वर्गेऽपि पातभीतस्य क्षयिष्णोर्नास्ति निर्वृतिः ॥ ५० पुनश्च गर्भे भवति जायते च पुनः पुनः। गर्भे विलीयते भूयो जावमानोऽस्तमेति वै ॥ ५१ जातमात्रश्च म्रियते बालभावेऽथ यौवने । मध्यमं वा वयः प्राप्य वार्द्धके वाथवा मृतिः ॥ ५२ याकजीवति तावच दुःखैर्नानाविधैः प्रतः । तन्तुकारणपश्चीर्धसस्ते कार्पासबीजवत् ॥ ५३ द्रव्यनाशे तश्चोत्पत्तौ पालने च सदा नृष्णाम् । भवन्यनेकदुःखानि तथैवेष्टविपत्तिषु ॥ ५४ यद्यत्रीतिकरं पुंसां वस्तु मैत्रेय जायते। बीजत्वसुपगच्छति ॥ ५५ तदेव दुःखवृक्षस्य कलत्रपुत्रमित्रार्थगृहक्षेत्रधनादिकैः क्रियते न तथा भूरि सुखं पुंसां यथाऽसुखम् ॥ ५६ इति संसारदुःसार्कतापतापितचेतसाम् । विमुक्तिपादपच्छायामृते कुत्र सुखं नृणाम् ॥ ५७ तदस्य त्रिविधस्यापि दःखजातस्य वै मम । गर्भजन्यजराहोषु स्थानेषु प्रभविष्यतः॥५८ निरस्तातिशयाद्वादसुखभावैकलक्षणा

हे द्विज । फिर तप्त बालुका, अग्नि-यन्त और इस्बादिसे महाभयंकर नस्कोमें जो यातनाएँ भोगनी पड़ती है वे अत्यन्त असहा होती है ॥ ४५ ॥ आरेसे चीरे जाने. मूसमें तपाये जाने, कुल्हाड़ीसे काटे जाने, भूमिमें गाड़े जाने, जूलीपर चढ़ाये जाने, सिहके मुखमें डाले जाने, गिद्धोंके नोचने, हाथियोंसे दलित होने, तेलमें पकाये जाने, सारे दलदलमें फॅसने, ऊपर ले जाकर नीचे गिराये जाने

और क्षेपण-यन्त्रहास दूर फेंके जानेसे नरकविवासियोंको अपने पाप-कमेंकि कारण जो-जो कष्ट उठाने पडते हैं तनकी गणना नहीं हो सकती ॥ ४६ —४९ ॥ हे द्विजन्नेह ! केवरु नरकमें ही दुःश्व हीं, सो बात नहीं है, स्वर्गमे भी पतनका भय रूगे रहनेसे कभी शान्ति नहीं मिलती ॥ ५० ॥ [नरक अधवा स्वर्ग-भोगके अनन्तर] बार-बार वह गर्भमें आता है और जन्म प्रहण करता है तथा फिर कभी गर्भमें ही नष्ट हो जाता है और कभी जन्म लेते ही मर जाता है ॥ ५१ ॥ जो उत्पन्न हुआ है वह जन्मते हाँ, बाल्यावस्थायें, युवावस्थायें, मध्यमवयमें अथवा जराबस्त होनेपर अवस्य मर जाता है ॥ ५२ ॥ जबतक जीता है तबतक नाना प्रकारके कष्टोंसे बिरा रहता है, जिस तरह कि कपासका बीज तन्तुओंके कारण सूत्रोंसे थिए रहता है ॥ ५३ ॥ द्रव्यके उपार्जन, रक्षण और नाशमें तथा इष्ट-मित्रोंके विपत्तिप्रस्त होनेपर भी मनुष्योंको अनेकों दःसा उठाने पहले हैं ॥ ५४ ॥ हे मैत्रेय ! मनुष्योंको जो-जो वस्तुएँ प्रिय हैं, वे सभी दुःखरूपी बुक्कम बीज हो जाती हैं॥ ५५॥ स्त्री, पुत्र, मित्र, अर्थ, गृह, क्षेत्र और घन आदिसे पुरुषोको जैसा दःख होता है वैसा सुख नहीं होता ॥ ५६ ॥ इस प्रकार सांसारिक दुःखरूप सूर्यके तापसे जिनका अन्तःकरण तप्त हो रहा है उन पुरुषोंको मोक्षरूपी वृक्षकी [यनी] छत्याको छोडकर और कहाँ सुक मिल सकता है ? ॥ ५७ ॥ अतः मेरे मतमें गर्भ, जन्म और उस आदि स्थानोंमें प्रकट होनेवाले आध्यात्मकादि त्रिविध दुःख-समृहकी एकमात्र सनातन ओषधि चगवतप्राप्ति ही है जिसका निरतिदाय आनन्दरूप सुककी प्राप्ति कराना ही प्रधान रुक्षण है ॥ ५८-५९ ॥ इसल्जिये पण्डितजनीको भगवदमाप्तिका प्रयत्न करना चाहिये । हे महामुने ! कर्म और ज्ञान— ये दौ ही उसकी प्राप्तिके कारण करे गये हैं ॥ ६० ॥

भेषजं भगवत्प्राप्तिरेकान्तात्पन्तिकी मता ॥ ५९ तस्मात्तत्राप्तये यहाः कर्तव्यः पण्डितेनीः । तत्प्राप्तिहेतुर्ज्ञानं च कर्म बोक्तं महामुने ॥ ६० १-दहातागित्यादिषु परस्पैपदमार्थम् ।

आगमोत्थं विवेकाच द्विया ज्ञानं तदुच्यते । शब्दब्रह्मागममयं परं ब्रह्म विवेकजम् ॥ ६१ अन्धं तम इवाज्ञानं दीपवचेन्द्रियोद्भवम्। यथा सूर्यस्तथा ज्ञानं यद्विप्रषे विवेकजम् ॥ ६२ मनुरप्याह वेदार्थ समृत्वा यन्युनिसत्तम। तदेतच्युयतामत्र सम्बन्धे गदतो मम ॥ ६३ हे ब्रह्मणी वेदितव्ये शब्दब्रह्म परं च यत्। शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ६४ हे वै विहो वेदितच्ये इति चाशर्वणी श्रुतिः । त्वक्षरप्राप्तिऋग्वेदादिमयापरा ॥ ६५ यत्तद्व्यक्तमजरमचिन्त्यमजमव्ययम् अनिर्देश्यमरूपं च पाणिपादाद्यसंयुतम् ॥ ६६ विभु सर्वगतं नित्यं भूतयोनिरकारणम् । तद्ब्रह्म तत्परं धाम तद्भ्येयं मोक्षकाङ्क्रिभिः । तदेव भगवद्वाच्यं स्वरूपं परमात्मनः। एवं निगदितार्थस्य तत्तत्त्वं तस्य तत्त्वतः।

व्याप्यव्याप्ते यतः सर्वे यद्वै पञ्चन्ति सूरवः ॥ ६७ श्रुतिवाक्योदितं सूक्ष्मं तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ ६८ वाचको भगवच्छब्दस्तस्याद्यस्याक्षयात्मनः ॥ ६९ ज्ञायते येन तन्ज्ञाने परमन्यत्त्रयीमयम् ॥ ७० अञ्चल्दगोचरस्यापि तस्य वै ब्रह्मणो हिज । पूजायां भगवच्छब्दः क्रियते द्वापचारतः ॥ ७१ शुद्धे महाविभूत्याख्ये परे ब्रह्मणि शब्दाते । मैत्रेय भगवच्छदस्सर्वकारणकारणे ॥ ७२ सम्भतेति तथा भर्ता भकारोऽर्श्रह्मयान्वितः । नेता गमधिता स्रष्टा गकारार्थस्तथा मुने ॥ ७३ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसरिश्रयः । ज्ञानवैराग्ययोश्चेव षण्णां भग इतीरणा ॥ ७४ वसन्ति तत्र भूतानि भृतात्मन्यखिलात्मनि ।

ज्ञान दो प्रकारका है—शास्त्रजन्य तथा विवेकज। शब्दब्रह्मका ज्ञान शास्त्रजन्य है और परब्रह्मका बोध विवेकज ॥ ६१ ॥ हे विप्रपें ! अज्ञान घोर अन्धकारके समान है। उसको नष्ट करनेके क्रिये शास्त्रजन्य" ज्ञान दीपकवत् और विवेकज ज्ञान सुर्यके समान है ॥ ६२ ॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! इस विषयमें बेदार्थका रगरणकर मनुजीने जो

कुछ कहा है वह बतलाता हूँ, श्रवण करो ॥ ६३ ॥ ब्रह्म दो प्रकारका है—शब्दब्रह्म और परब्रह्म। शब्दबद्ध (शास्त्रजन्य ज्ञान) में निपुण हो जानेपर जिज्ञास् [विवेकज ज्ञानके द्वारा] परव्रहाको प्राप्त कर रहेता हैं ॥ ६४ ॥ अथर्ववेदको श्रुति है कि विद्या दो प्रकारकी

है—पर और अपरा । परासे अक्षर ब्रह्मकी प्राप्ति होती है और अपरा ऋगादि बेदजबीरूपा है ॥ ६५ ॥ जो अन्यक्त, अजर, अचिन्य, अज, अख्यय, अनिर्देश्य, अरूप, पाणि-पादादिशुन्य, व्यापक, सर्वगत, नित्य, भृतोंका आदिकारण, खयं कारणहीन तथा जिससे सम्पूर्ण व्याप्य और व्यापक प्रकट हुआ है और जिसे पण्डितजन [ज्ञाननेत्रोंसे] देखते हैं वह परमधाम हो बहा है,

मुम्क्अोको उसीका ध्यान करना चाहिये और वही

भगवान् विष्णुका वेदवचनीसे प्रतिपादित अति सुध्म

परमपद है ॥ ६६—६८ ॥ परमात्माका वह स्वरूप ही

'भगवत्' शब्दका वाच्य है और भगवत् शब्द ही उस आद्य एवं अक्षय स्वरूपका वाचक है ॥ ६९ ॥ जिसका ऐसा स्वरूप बतलाया गया है उस परमाताके तत्त्वका जिसके द्वारा वास्तविक ज्ञान होता है वही परमञ्जान (परा विद्या) है । त्रयीमय ज्ञान (कर्मकाण्ड) इससे पृथक् (अपरा विद्या) हैं॥ ७० ॥ हे द्विज ! वह ब्रह्म यद्यपि शब्दका विषय नहीं है तथापि आदरप्रदर्शनके लिये उसका

'भगवत्' शब्दसे उपचारतः कथन किया जाता है ॥ ७१ ॥

हे मैत्रेय ! समस्त कारणोंके कारण, महाविश्वतिसंज्ञक

परब्रहाके लिये ही 'भगवत्' शब्दका प्रयोग हुआ है ॥ ७२ ॥ इस ('भगवत्' शब्द) में भकारके दो अर्थ हैं—पोपण करनेवाला और सबका आधार तथा गकारके अर्थ कर्म-फल प्राप्त करनेवाला, लय करनेवाला और रचयिता हैं॥७३॥ सम्पूर्ण ऐश्वर्य, धर्म, यहा, श्री, ज्ञान और वैराग्य—इन छःका नाम 'भग' है।। ७४ ॥

उस अशिलभुक्षालामे समस्त भूतवण निवास करते हैं और वह स्वयं भी समस्त भूतोंमे विराजमान है, इसलिये स च भूतेषुशेषेषु वकारार्थस्ततोऽव्ययः ॥ ७५ वह अव्यय (परमात्मा) ही वकारका अर्थ है ॥ ७५॥

^{*} अक्ण-इन्द्रियद्वारा शास्त्रका प्रहण होता है; इसल्प्ये शास्त्रजन्य ज्ञान ही 'इन्द्रियोद्धव' शब्दसे बद्धा गया है ।

एवमेष महाञ्छन्दो मैत्रेय भगवानिति। परमब्रह्मभूतस्य वासुदेवस्य पुज्यपदार्थोक्तिपरिभाषासमन्वितः । शब्दोऽयं नोपचारेण त्वन्यत्र ह्युपचारतः ॥ ७७ उत्पत्तिं प्रलयं चैव भूतानामागति गतिम् । वेति विद्यामविद्यां च स वाच्यो भगवानिति ॥ ७८ ज्ञानशक्तिबर्लेश्वर्यवीयंतेजांस्यशेषतः भगवक्कदवाच्यानि विना हेवैर्गुणादिभिः ॥ ७९ सर्वाणि तत्र भूतानि वसन्ति परमात्पनि । भूतेषु च स सर्वात्मा वासुदेवस्ततः स्पृतः ॥ ८० खाण्डिक्यजनकायाह पृष्टः केशिध्वजः पूरा । नामव्याख्यामनन्तस्य वासुदेवस्य तत्त्वतः ॥ ८१ भृतेषु वसते सोऽन्तर्वसन्यत्र च तानि यत् । धाता विधाता जगतां वासुदेवस्ततः प्रभुः ॥ ८२ स सर्वभूतप्रकृति विकारा-न्।णादिदोषांश्च मुने व्यतीतः। अतीतसर्वावरणोऽस्त्रिलात्मा तेनास्तृतं यद्भवनान्तराले ॥ ८३ समस्तकल्याणगुणात्मकोऽसौ स्वशक्तिलेशावृतभूतवर्गः इच्छागृहीताभिमतोस्ट्रेह-सांसाधिताञ्चलगद्भितो तेजोबलैश्वर्यमहावबोध-सुर्वीर्यशक्त्यादिगुणैकराशिः पर: पराणां सकला न यत्र क्रशादयसान्त परावरेशे ॥ ८५ ईश्वरो व्यष्टिसमष्टिरूपो स व्यक्तस्वरूपोऽप्रकटस्वरूपः सर्वेश्वरस्तर्यदृक् सर्वविद्य समस्तराक्तिः परमेश्वराख्यः ॥ ८६

सेन

वाष्यवगम्यते

तदस्तदोषं

तन्द्रानमज्ञानमतोऽन्यदुक्तम्

शुद्धं परं निर्मलमेकरूपम् ।

11 6/3

इति श्रीविध्युप्राणे षष्टेंऽशे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

वा

संजायते

संदुश्यते

परब्रह्मस्वरूप श्रीवास्ट्रेक्का ही वाचक है, किसी औरका नहीं ॥ ७६ ॥ पूज्य पदार्थीको सृचित करनेके लक्षणसे यक्त इस 'भगवान' शब्दका परमात्मामें मुख्य प्रयोग है तथा औरिके लिये गौण॥७७॥ क्योंकि जो समस्त प्राणियोंके उत्पत्ति और भाश, आना और जाना तथा विद्या और अविद्याको जानता है वही भगवान कहलनेयोग्य है ॥ ७८ ॥ त्याग करनेयोग्य [त्रिविध] गुण [और उनके हेरा] आदिको छोडकर ज्ञान, राक्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य और तेल आदि सदगुण ही 'भगवत्' शब्दके वाच्य है।। ५९ ॥ उन परमात्मामें ही समस्त भृत बसते हैं और वे स्वयं भी सबके आत्मारूपसे सकल भूतोंमें विराजमान है, इसलिये उन्हें वास्**देव भी कहते हैं ॥ ८० ॥ पूर्वकालमें खा**ण्डिक्य जनकके पूछनेपर केशिष्वजने उनसे भगवान अनन्तके 'वासदेव' नापको यथार्थ ज्याख्या इस प्रकार की थी ॥ ८१ ॥ 'प्रभु समस्त भृतोंमें व्याप्त हैं और सम्पूर्ण भृत भी उन्होंमें रहते हैं तथा वे ही संसारके रचयिता और रक्षक हैं; इसलिये वे 'वासुदेव' कहलाते हैं' ॥ ८२ ॥ हे मूने ! वे सर्वातमा समस्त आवरणोंसे परे हैं। वे समस्त भूतोंकी प्रकृति, प्रकृतिके विकार तथा गुण और उनके कार्य आदि दोषोसे विलक्षण हैं ! पृथियी और आकाशके बीचमें जो कुछ रिथत है उन्होंने वह सब व्याप्त किया है ॥ ८३ ॥ वे सम्पूर्ण कल्याण-गुणोंके स्वरूप हैं, उन्होंने अपनी मावाशक्तिके लेशमात्रसे ही सम्पूर्ण प्राणियोंको व्याप्त किया है और वे अपनी इच्छासे स्वमनोऽनुकुल महान् शरीर धारणकर समस्त संसारका कल्याण-साधन करते है।। ८४।। वे तेज, बल, ऐश्वर्य, महाविज्ञान, वीर्य और शक्ति आदि गुणोंको एकमात्र सशि हैं, प्रकृति आदिसे भी परे हैं और उन परावरंश्वरमें अविद्यादि सम्पूर्ण केशोंका अत्यन्ताभाव है ॥ ८५ ॥ वे ईश्वर ही समष्टि और व्यष्टिरूप हैं, वे ही व्यक्त और अव्यक्तस्वरूप हैं, वे ही सबके खामी, सबके साक्षी और सब कुछ जाननेवाले हैं तथा उन्हीं सर्वशक्तिमान्की परमेश्वरसंज्ञा है॥ ८६॥ जिसके द्वारा वे निर्दोष, विश्वाद, निर्मेल और एकरूप परमात्मा देखे या जाने जाते हैं उसीका नाम जान (परा विद्या) है और जो इसके विपरीत है वही अज्ञान (अपरा विद्या) है ॥ ८७ ॥

हे मैत्रेय ! इस प्रकार यह महान् 'भगवान्' शब्द

छठा अध्याय

केशिध्वज और खाण्डिक्यकी कथा

ş

7

ξ,

श्रीपराद्यार उद्याच

स्वाध्यायसंयमाभ्यां स दश्यते पुरुषोत्तमः ।

तत्प्राप्तिकारणं ब्रह्म तदेतदिति पठ्यते ॥

स्वाध्यायाद्योगमासीत योगात्स्वाध्यायमावसेत्।

स्वाध्याययोगसम्पत्त्वा परमात्मा प्रकाशते ॥

तदीक्षणाय स्वाध्यायश्चक्षयोगस्तथा परम् ।

न मांसचक्ष्या द्रष्टुं ब्रह्मभूतस्य शक्यते ॥

श्रीमैत्रेय उवाच भगवंस्तमहं योगं ज्ञातुमिच्छामि तं वद ।

ज्ञाते यत्राखिलाधारं पश्येयं परमेश्वरम् ॥

औपराशार उद्याच

यथा केशिध्वजः प्राह खाण्डिक्याय महात्मने ।

जनकाय पुरा योगं तमहं कथयामि ते॥

श्रीमैत्रेय उद्याच खाण्डिक्यः कोऽभवद्वह्यन्को वा केशिध्वजः कृती।

कथं तयोश्च संवादो योगसम्बन्धवानभृत् ॥

औपराज्ञर उवाच

धर्मध्वजो वै जनकस्तस्य पुत्रोऽमितध्वजः ।

कृतथ्वजश्च नाम्नासीत्सदाध्यात्मरतिर्नृपः ॥ कृतध्वजस्य पुत्रोऽभूत् ख्यातः केशिध्वजो नृपः ।

पुत्रोऽमितध्वजस्थापि खाण्डिक्यजनकोऽभवत् ॥

कर्ममार्गेण खाण्डिक्यः पृथिव्यामभवत्कृती ।

केशिध्वजोऽप्यतीवासीदात्मविद्याविद्यारदः ॥

ताबुभावपि चैवास्तां विजिगीषु परस्परम् । केशिध्वजेन स्वाण्डिक्यस्वराज्यादवरोपितः ॥ १०

परोधसा मन्त्रिभिश्च समवेतोऽल्पसाधनः ।

राज्यात्रिराकृतस्सोऽध दुर्गारण्यचरोऽभवत् ॥ ११

इयाज सोऽपि सुबह्न्यज्ञाञ्ज्ञानव्यपाश्रयः ।

ब्रह्मविद्यामधिष्ठाय तर्त्तु मृत्युमविद्यया ॥ १२ वि॰ पु॰ १५-

श्रीपराशरजी बोले-वे पुरुषोत्तम स्वाध्याय और संयमद्वारा देखे जाते हैं. ब्रह्मकी प्राप्तिका कारण होनेसे ये

भी ब्रह्म ही कहरूबते हैं ॥ १ ॥ स्वाध्यायसे योगका और योगसे स्वाध्यायका आश्रय करे । इस प्रकार स्वाध्याय और

योगरूप सम्पत्तिसे परमात्मा प्रकाशित (ज्ञानके विषय) होते हैं ॥ २ ॥ बहास्वरूप परमात्माको मांसमय चक्षऑसे

नहीं देखा जा सकता, उन्हें देखनेके लिये खाध्याय और योग ही दो नेत्र हैं ॥ ३ ॥

श्री**मैत्रेयजी बोले** — भगवन् ! जिसे जान लेनेपर मैं

अखिलाश्चार परमेश्वरको देख सकुँगा उस योगको मैं जानना चाहता हुँ; उसका वर्णन कीजिये ॥ ४ ॥

श्रीपराशरजी बोले - पूर्वकालमें जिस प्रकार इस योगका केशिध्वजने महात्मा आण्डिक्य जनकरी वर्णन

किया था मैं तुम्हें वही बतलाता है ॥ ५ ॥ श्रीमैत्रेयजी खोले-- ब्रह्मन् ! यह स्ताण्डिका और

विद्वान केशिध्वज कौन थे ? और उनका योगसम्बन्धी

संवाद किस कारणसे हुआ बा ? ॥ ६ ॥ श्रीपराञ्चरजी बोले-पूर्वकालमें धर्मध्वज जनक

नासक एक राजा थे। उनके अभितष्यज और कृतध्यज नामक दो पुत्र हुए । इनमें कृतध्यज सर्वदा अध्यात्मशास्त्रमें रत रहता था॥७॥ कतम्बजका पुत्र केशिध्वज नामसे

विख्यात हुआ और अमितध्वजका पुत्र खाण्डिक्य जनक हुआ ॥ ८ ॥ पृथिवीमण्डलमें साण्डिक्य कर्म-मार्गमें अल्पना निपुण था और केशिध्वज अध्यात्मविद्याका विशेषज्ञ था ॥ ९ ॥ वे टोनों परस्पर एक-दूसरेको पराजित

केशिध्वजने खाण्डिक्यको शन्यच्युत कर दिया ॥ १० ॥ राज्यश्रष्ट होनेपर खाण्डिका पुरोहित और मन्त्रियोके सहित थोड़ी-सी सामग्री लेकर दुर्गम बनोमें चला गया ॥ ११ ॥ केशिष्यज ज्ञाननिष्ठ था तो भी अविद्या (कर्म) द्वारा

करनेकी चेष्टामें लगे रहते थे। अन्तमें, कालक्रमसे

मृत्युको पार करनेके लिये ज्ञानदृष्टि रखते हुए उसने अनेको यज्ञीका अनुष्ठान किया ॥ १२ ॥

सूजा

एकदा वर्तमानस्य यागे योगविदां वर । धर्मधेनुं जधानोग्रहहाार्द्लो विजने वने ॥ १३ ततो राजा हतां श्रुत्वा धेनुं व्याघ्रेण चर्त्विज: ।

प्रायश्चित्तं स पप्रच्छ किमन्नेति विधीयताम् ॥ १४

तेऽप्युचर्न वयं विदाः कशेरुः पुच्छ्यतामिति । कहोरुरपि तेनोक्तस्तथैव प्राह भार्गवम् ॥ १५ शुनकं पृच्छ राजेन्द्र नाहं वेदिः स वेत्स्यति ।

स गत्वा तमपुच्छच्च सोऽप्याह शृणु यन्मुने ॥ १६ न कहोरुर्ने चैवाहं न चान्यः साम्प्रतं भूवि । वेत्त्येक एव त्वच्छत्रः खाण्डिक्यो यो जितस्वया ॥ १७

स चाह तं व्रजाप्येष प्रष्टमात्मरिपुं मुने । प्राप्त एव महायज्ञो यदि मां स हनिष्यति ॥ १८ प्राथश्चित्तमदोषेण स चेत्पृष्टो वदिष्यति । ततश्चाविकलो यागो मुनिश्रेष्ठ भविष्यति ॥ १९

श्रीपराञर उवाच इत्युक्त्वा रथमारुह्य कृष्णाजिनधरो नृपः। वनं जगाम यत्रास्ते स खाण्डिक्यो महामतिः ॥ २० तमापतन्तमालोक्य साध्डिक्यो रिपुमात्मनः।

प्रोवाच क्रोधताम्राक्षस्समारोपितकार्मुकः ॥ २१ स्वाण्डिक्य उचाच कृष्णाजिनं त्वं कवचमाबध्यास्मान्हनिष्यप्ति ।

कृष्णाजिनधरे वेत्सि न मिय प्रहरिष्यति ॥ २२ मुगाणां वद पृष्ठेषु मूढ कृष्णाजिनं न किम्। येषां मया त्वया चोत्राः प्रहिताश्हितसायकाः ॥ २३

स त्वामहं हनिष्यामि न मे जीवन्विमोक्ष्यसे । आतताय्यसि दुर्बुद्धे मम राज्यहरो रिपुः ॥ २४ केशिध्वन उवाच

खाण्डिक्य संशयं प्रष्टुं भवन्तमहमागतः। न त्वां हन्तुं विचार्येतत्कोपं बाणं विमुञ्ज वा ॥ २५

ततसः मन्त्रिभस्सार्द्धमेकान्ते सपुरोहितः । मन्त्रयामास खाण्डिक्यस्सवैरेव महामतिः ॥ २६

श्रीपराञ्च उवाच

जा सकता। हे दुर्बुद्धे ! तू मेरा राज्य छी-भेवाला राष्ट्र है, इसलिये आततायी है ॥ २४ ॥

बाण छोड दीजिये ॥ २५ ॥

ऋ़िक्जोंसे पुछा कि 'इसमें क्या प्रायक्षित करना चाहिये ?'॥ १४ ॥ ऋत्विजोंने कहा—'हम [इस विषयमें] नहीं जानते; आप कशेरुसे पुछिये (' जब राजाने कदोरुसे यह बात पृछी तो उन्होंने भी उसी प्रकार कहा कि हे राजेन्द्र ! मैं इस विषयमें नहीं जानता । आप भृगुपूत्र शुनकसे पुछिये, वे अवश्य जानते होंगे।' हे मुने ! जब राजाने शुनकसे जाकर पूछा तो उन्होंने भी जो कुछ कहा, बह सुनिये--- ॥ १५-१६॥

हे योगिश्रेष्ठ ! एक दिन जब राजा केशिध्वज यज्ञानुष्ठानमें स्थित थे उनकी धर्मधेनु (हविके लिये दुध

देनेवाली गौ) को निर्जन वनमें एक भयंकर सिंहने मार

डाला॥ १३॥ व्याबद्वारा गीको मारी गयी सुन राजाने

''इस समय भूमण्डलमें इस बातको न करोरु जानता है, 4 मैं जानता हूँ और न कोई और ही जानता है, केवल जिसे तुमने परास्त किया है यह तुम्हारा शत्रु खाण्डिक्य ही इस बातको जानता है" ॥ १७ ॥ यह सुनकर केशिध्वजने कहा—'है मुनिश्रेष्ठ ! मैं अपने राजु खाण्डिक्यसे ही यह बात पूछने जाता हैं । यदि उसने मुझे मार दिया तो भी मुझे

महायज्ञका फल तो मिल ही जायगा और यदि मेरे पुछनेपर उसने मुझे सारा प्राथक्षित यथावत् बतला दिया तो मेरा यज् निर्विद्य पूर्ण हो जायगा' ॥ १८-१९ ॥

श्रीपराचरजी बोले-ऐसा कडकर

केशिध्यज कृष्ण मृगचर्म धारणकर रथपर आरूत हो बन्ने, जहाँ महामति खाष्ट्रिक्य रहते थे, आये ॥ २० ॥ साप्टिक्यने अपने शतुको आते देशका धनुष चढ़ा हिया और क्रोधसे नेत्र लाल करके कहा— ॥ २१॥ खाण्डिक्य बोले-अरे ! क्या तू कृष्णाजिनरूप

कवन्त्र वॉथकर हमलोगोंको मारेगा ? क्या तु यह समझता

है कि कृष्ण-पृगचर्ष धारण किये हुए मुझपर यह प्रहार नहीं करेगा ? ॥ २२ ॥ हे मुद्द ! मृगोंकी पीठपर क्या कृष्ण-मृगचर्म नहीं होता, जिनपर कि मैंने और तूने दोनोहीने तीक्ष्ण वाणोंकी वर्षा की है ॥ २३ ॥ अतः अब मैं तुझे अवस्य मारूँगा, तू मेरे हाथसे जीवित बचकर नहीं

केशिध्यज्ञ खोले-हे खाप्डिक्प ! मैं आपसे एक सन्देह पूछनेके लिये आया हूँ, आपको मारनेके लिये नहीं आया, इस बातको सोचकर आप मुझपर क्रोध अथवा

श्रीपराशरजी बोले—यह स्नकर महामति

तमुचुर्मन्त्रिणो वध्यो रिपुरेष वर्श गतः। हतेऽस्मिन्यृथिवी सर्वा तव वर्या भविष्यति ॥ २७ साण्डिक्यश्चाह तान्सर्वानेवमेतन्न संशयः। हतेऽस्मिन्पृथिवी सर्वा मप वश्या भविष्यति ॥ २८ परलोकजयसास्य पृथिवी सकला मम। न हन्मि चेल्लोकजयो मम तस्य वसुन्धरा ॥ २९ नाहं मन्ये लोकजयादधिका स्याद्वसुन्धरा । परलोकजयोऽनन्तस्वल्पकालो महीजयः ॥ ३० तस्मान्नैनं हनिष्यामि यत्प्रच्छति वदामि तत् ॥ ३१ श्रीपराधार उवाच ततस्तमध्यपेत्याह खाण्डिक्यजनको रिपुम् । प्रष्टुक्यं यत्त्वया सर्वं तत्पुच्छस्व बदाम्यहम् ॥ ३२ ततस्पर्वं यथावृत्तं धर्मधेनुवधं द्विज । कथयित्वा स पप्रच्छ प्रायश्चित्तं हि तद्रतम् ॥ ३३ स चाचष्ट्र यशान्यायं द्विज केशिध्वजाय तत् । प्रायश्चित्तमशेषेण यद्वै तत्र विधीयते ॥ ३४ विदितार्थस्म तेनैव ह्यनुज्ञातो महात्मना । यागभूमिमुपागम्य चक्रे सर्वाः क्रियाः क्रमात् ॥ ३५ क्रमेण विधिवद्यागं नीत्वा सोऽवभृश्राप्ततः । कृतकृत्यस्ततो भूत्वा चिन्तवामास पार्थिव: ॥ ३६ पुजिताश्च हिजास्सर्वे सदस्या मानिता पया । तथैवार्थिजनोऽप्यर्थैयोजितोऽभिमतैर्मया ॥ ३७ यथाईमस्य लोकस्य मया सर्वं विचेष्टितम् ।

कृतकृत्यस्ततो भूत्वा चिन्तवामास पार्थिवः ॥ ३६ पूजिताश्च हिजास्सवें सदस्या मानिता मया । तथैवार्थिजनोऽप्यथैंयोंजितोऽभिमतैर्मया ॥ ३७ यथाईमस्य लोकस्य मया सर्व विचेष्टितम् । अनिष्पन्नक्रियं चेतस्तथापि मम किं यथा ॥ ३८ इत्थं सिञ्चन्तयन्नेव सस्मार स महीपतिः । स्वाण्डिक्याय न दत्तेति मया वै गुरुदक्षिणा ॥ ३९ स जगाम तदा भूयो रथमारुद्ध पार्थिवः । मैत्रेय दुर्गगहनं स्वाण्डिक्यो यत्र संस्थितः ॥ ४० साण्डिक्योऽपि पुनर्वृष्टा तमायान्तं धृतायुष्टम् । तस्थौ हन्तुं कृतमतिस्तमाह स पुनर्नृपः ॥ ४९ भो नाहं तेऽपराधाय प्राप्तः स्वाण्डिक्य मा कुथः ।

गुरोर्निष्कयदानाय मामवेहि त्वमागतम् ॥ ४२

स्नाण्डिक्यने अपने सम्पूर्ण पुरोहित और मिलयोंसे एकान्तमें सहग्रह की ॥ २६ ॥ मिलयोंने कहा कि 'इस समय रातु आपके बरामें है, इसे मार डालजा चाहिये। इसको मार देनेपर वह सम्पूर्ण पृथिबी आपके अधीन हो जायगी' ॥ २७ ॥ स्नाण्डिक्यने कहा—''यह निस्तन्देह ठीक है, इसके मारे जानेपर अवश्य सम्पूर्ण पृथिबी मेरे अधीन हो जायगी; किन्तु इसे पारलौकिक जय प्राप्त होगी और इसे सारी पृथिबी। परन्तु यदि इसे नहीं मारूगा तो मुझे पारलौकिक जय प्राप्त होगी और इसे सारी पृथिबी। ॥ २८-२९ ॥ मैं पारलौकिक जयसे पृथिबीको अधिक महीं मानता; क्योंकि परलोक-जय अनन्तकालके लिये होती है और पृथिबी तो थोड़े हो दिन रहती है। इसिल्ये में इसे मारूँगा नहीं, यह जो कुछ पूछेगा, बतला दूँगा''॥ ३०-३१ ॥

श्रीपसदारजी बोले—तब खाण्डिक्य जनकते अपने राष्ट्र केशिष्यजके पास आकर कहा—'तुग्हें जो कुछ पूछना हो पूछ ली, मैं उसका उत्तर दूँगा'॥ ३२॥ हे द्विज! तब केशिष्यजने जिस प्रकार धर्मधेनु मारी

गयो थी वह सब वृतान्त खाण्डिक्यसे कहा और उसके लिये प्रायक्षित पूछा ॥ ३३ ॥ खाण्डिक्यने भी वह सम्पूर्ण प्रायक्षित, जिसका कि उसके लिये विधान था, केशिश्यजको विधिपूर्वक बतला दिया ॥ ३३ ॥ तदनन्तर पूछे हुए अर्थको जान लेनेपर महात्मा खाण्डिकाको आशा लेकर वे यज्ञभूमिमें आये और क्रमशः सम्पूर्ण कर्म समाप्त किया ॥ ३५ ॥ फिर कालक्रमसे यज्ञ समाप्त होनेपर अथभूथ

(यश्चात्त) स्नानके अनसर कृतकृत्य होकर राजा केशिष्वजने सोचा॥ ३६॥ "मैंने सम्पूर्ण ऋत्विज् ब्राह्मणोंका पूजन किया, समस्त सदस्योंका मान किया, याचकोंको उनकी इच्छित वस्तुएँ दीं, लोकाचारके अनुसार जो कुछ कर्तव्य था बह सभी मैंने किया, तथापि न जाने, क्यों मेरे चित्तमें किसी क्रियाका अभाव सदक रहा है ?"॥ ३७-३८॥ इस अकार सोचते-सोचते राजाको स्मरण हुआ कि मैंने अभीतक खाण्डिक्यको गुरु-दक्षिणा नहीं दी॥ ३९॥ हे मैत्रेय! तब चे रथपर चढ़कर किर उसी दुर्गम वनमें गये, जहाँ खाण्डिक्य रहते थे॥ ४०॥ साण्डिक्य भी उन्हें फिर शस्त्र धारण किये आते देख मारनेके लिये उद्यत हुए। तब राजा केशिध्वजने कहा— ॥ ४१॥ "खाण्डिक्य! तुम क्रोध न करो, मैं तुम्हारा कोई

अनिष्ट करनेके लिये नहीं आया, बल्कि तुम्हें गुरु-दक्षिणा

निष्पादितो मया यागः सम्यक्तवदुपदेशतः । सोऽहं ते दातुमिच्छामि वृणीषु गुरुदक्षिणाम् ॥ ४३ औपरागर उवाच

भूयस्स मन्तिभिस्साद्धं मन्त्रयामास पार्थिवः । गुरुनिष्क्रयकामोऽयं कि मया प्रार्थितामिति ॥ ४४ तम्बुर्मन्तिणो राज्यमशेषं प्रार्थ्यतामयम् । शङ्गीभः प्रार्थितं राज्यमनायासितसैनिकैः ॥ ४५ प्रहस्य तानाहं नृपस्स खाण्डिक्यो महामितः । स्वस्पकालं महीपाल्यं मादृशैः प्रार्थितं कथम् ॥ ४६ एवमेतद्भवन्तोऽत्र हार्थसाधनमन्त्रिणः । परमार्थः कथं कोऽत्र यूयं नात्र विचक्षणाः ॥ ४७

इत्युक्त्वा समुपेत्यैनं स तु केशिष्वजं नृपः । उवाच किमवश्यं त्वं ददासि गुरुदक्षिणाम् ॥ ४८ बादमित्येव तेनोक्तः खाण्डिक्यस्तमथाव्रवीत् । भवानध्यात्मविज्ञानपरमार्थेक्चिक्षणः ॥ ४९ यदि चेहीयते महां भवता गुरुनिष्क्रयः । तत्क्षेशप्रशमायालं यत्कर्म तदुदीस्य ॥ ५०

देनेके लिये आया हूँ — ऐसा समझो ॥ ४२ ॥ मैंने तुन्हारे उपदेशानुसार अपना यज्ञ भली प्रकार समाप्त कर दिया है, अब मैं तुन्हें गुरु-दक्षिणा देना चाहता हूँ, तुन्हें जो इच्छा हो माँग लो" ॥ ४३ ॥

श्रीपराञ्चारजी बोले—तब खाण्डिक्यने फिर अपने मिलयोंसे परामर्श किया कि "यह मुझे गुरु-दक्षिणा देना चाहता है, मैं इससे क्या मींगूँ ?" ॥ ४४ ॥ मिलयोंने कहा—"आप इससे सम्पूर्ण राज्य माँग लोजिये, बुद्धिमान् लोग शत्रुओंसे अपने सैनिकोंको कष्ट दिये बिना राज्य ही माँगा करते हैं"॥ ४५ ॥ तब महामति राजा खाण्डिक्यने उनसे हँसते हुए कहा—"मेरे-जैसे लोग कुछ हो दिन रहनेवाला राज्यपद कैसे माँग सकते हैं ? ॥ ४६ ॥ यह ठीक है आपलोग स्वार्थ-साधनके लिये ही परामर्श देनेवाले हैं; किन्तु 'परमार्थ क्या और कैसा है ?' इस विषयमें आपको विशेष ज्ञान नहीं हैं"॥ ४७ ॥

श्रीपराशरजी बोले—यह कहकर राजा खाण्डिक्य केशिध्वजके पास आये और उनसे कहा, 'क्या तुम मुझे अवश्य गुरु-दक्षिणा दोगे ?'॥ ४८॥ जब केशिध्वजने कहा कि 'मैं अवश्य दूँगा' तो खाण्डिक्य बोले—"आप आध्यात्मज्ञानरूप परमार्थ-विद्यामें बड़े कुशल हैं॥ ४९॥ सो यदि आप मुझे गुरु-दक्षिणा देना ही चाहते हैं तो जो कर्म समस्त क्रेशोंकी ज्ञान्ति करनेमें समर्च हो वह बतलाइये"॥ ५०॥

इति श्रीविष्णुपुराणे बष्टेऽदो बष्टोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवाँ अध्याय

ब्रह्मयोगका निर्णय

P

केशिध्यज उवाच

न प्रार्थितं त्वया कस्मादस्मद्राज्यमकण्टकम् । राज्यलाभाद्विना नान्यत्क्षत्रियाणामतिप्रियम् ॥ साण्डिका उचान

केशिध्वज निबोध त्वं मया न प्रार्थितं यतः । राज्यमेतदशेषं ते यत्र गृश्चन्त्यपण्डिताः ॥

क्षत्रियाणामयं धर्मो यद्मजापरिपालनम् । वधश्च धर्मयुद्धेन स्वराज्यपरिपन्थिनाम् ॥ केशिध्वज बोले—क्षत्रियोंको तो राज्य-प्राप्तिसे अधिक प्रिय और कुछ भी नहीं होता, फिर तुमने मेरा निष्कण्टक राज्य क्यों नहीं माँगा ? ॥ १॥

खाण्डिक्य बोले—हे केशिध्यज ! मैंने जिस कारणसे तुम्हारा राज्य नहीं माँगा वह सुनो । इन राज्यादिकी आकाङ्का तो मूखोंको हुआ करती है ॥ २ ॥

क्षत्रियोंका धर्म तो यही है कि प्रजाका पालन करें और अपने राज्यके विरोधियोंका धर्म-युद्धसे वध करें ॥ ३ ॥

तत्राशक्तस्य मे दोषो नैवास्त्यपहुते त्वया । बन्धार्येव भवत्येषा हाविद्याप्यक्रमोग्झिता ॥ जन्मोपभोगलिप्सार्थमियं राज्यस्पृहा मम । अन्येवां दोवजा सैव धर्म वै नानुरुध्यते ॥ न याच्या क्षत्रबन्धनां धर्मायैतत्सतां मतम् । अतो न याचितं राज्यमविद्यान्तर्गतं तव ॥ राज्ये गृथन्त्यविद्वांसो ममत्वाहतचेतसः। अहंमानमहापानमद्यत्ता 8 श्रीपरादार उचा च प्रहृष्ट्रस्साध्वति प्राह ततः केशिध्वजो नृपः । खाण्डिक्यजनकं प्रीत्या श्रूवतां वचनं मम ॥ अहं ह्यविद्यया मृत्युं तर्तुकामः करोमि वै । राज्यं बागांश्च विविधान्धोरीः पुण्यक्षयं तथा ॥ तदिदं ते मनो दिष्ट्या विवेकैश्वर्यतां गतम्। तच्छ्यतामविद्यायास्त्वरूपं कुलनन्दन ॥ १० अनात्पन्यात्पबुद्धियां चास्वे स्वपिति या पतिः । संसारतरुसम्भृतिबीजमेतद्द्विधा स्थितम् ॥ ११ पञ्चभूतात्मके देहे देही मोहतमोवृतः। अहं मपैतदित्युद्यैः कुरुते कुमतिर्मतिम् ॥ १२ आकाशवाय्वप्रिजलपृथिवीभ्यः पृथक् स्थिते । आत्मन्यात्ममयं भावं कः करोति कलेवरे ॥ १३ कलेवरोपभोग्यं हि गृहक्षेत्रादिकं च कः । अदेहे ह्यात्मनि प्राज्ञो ममेदमिति मन्यते ॥ १४ इत्थं च पुत्रपौत्रेषु तहेहोत्पादितेषु कः । करोति पण्डितस्खाम्यमनात्पनि कलेखरे ॥ १५ सर्व देहोपभोगाय कुस्ते कर्म मानवः। देहश्चान्यो यदा पुंसस्तदा बन्धाय तत्परम् ॥ १६ मुण्मयं हि यथा गेहं लिप्यते वै मृदश्यसा । पार्थिबोऽयं तथा देहो मुदम्बालेपनस्थितः ॥ १७

शक्तिहीन होनेके कारण यदि तमने मेरा राज्य हरण कर लिया है, तो [असमर्थताक्षश प्रजापालन न करनेपर भी] मुझे कोई दोष न होगा। [किन्तु राज्याधिकार होनेपर यथावत् प्रजापालन न करनेसे दोषका भागी होना पड़ता है] क्योंकि यद्यपि यह (स्वकर्म) अविद्या हो है तथापि नियमविरुद्ध त्याग करनेपर यह बन्धनका कारण होती है ॥ ४ ॥ यह राज्यकी चाह मुझे तो जन्मानारके [कमीद्वारा प्राप्त] 'सुखभीगके किये होती है: और वही मन्ती आदि अन्य जुनोंको राग एवं लोभ आदि दोषोसे उत्पन्न होती है केवल धर्मानरोधसे नहीं ॥ ५ ॥ 'उत्तम क्षत्रियोंका [राज्यादिकी] याचना करना धर्म नहीं हैं' यह महात्वाओंका भत है । इसीलिये मैंने अविद्या (पालनादि कर्म) के अन्तर्गत तुम्हारा राज्य नहीं माँगा॥६॥ जी लोग अहंकाररूपी मदिराका पान करके उत्पत्त हो रहे हैं तथा जिनका चित्त ममताप्रस्त हो रहा है वे मृदजन ही राज्यको आभिलाषा करते हैं; मेरे-जैसे लोग राज्यकी इच्छा नहीं करते ॥ ७ ॥

श्रीपरादारजी बोले —तम राजा केशिध्वजने प्रसन होकर खाण्डिक्य जनकको साधुवाद दिया और प्रीतिपूर्वक कहा, मेरा वचन सूनो— ॥ ८ ॥ मैं अविद्याद्वारा मृत्युको पार करनेकी इच्छासे ही राज्य तथा विविध यज्ञोंका अनुष्ठान करता हैं और नाना भोगोंद्वारा अपने पुण्योंका क्षय कर रहा हैं ॥ ९ ॥ हे कुलनन्दन ! बड़े सौभाग्यकी बात है कि तुम्हारा मन विवेकसम्पन्न हुआ है अतः तुम अविद्याका स्वरूप सुनो ॥ १० ॥ संसार-वृक्षकी बीजभूता यह अविद्या दो प्रकारकी है—अनात्मामें आत्मवृद्धि और जो अपना नहीं है उसे अपना मानना ॥ ११ ॥ यह कमित जीव मोहरूपी अन्धकारसे आवृत होकर इस पश्चभृतात्मक देहमें 'मैं' और 'मेरापन' का भाव करता है ॥ १२ ॥ जब कि आत्मा आकारा, वायु, अग्नि, जल और पृथिको आदिसे सर्वधा पृथक् है तो कौन बुद्धिमान् व्यक्ति शरीरमें आत्मबृद्धि करेगा ? ॥ १३ ॥ और आत्माके देहसे परे होनेपर भी देहके उपभोग्य गृह-क्षेत्रादिको कौन प्राज्ञ पुरुष 'अपना' मान सकता है ॥ १४ ॥ इस प्रकार इस शरीरके अनात्मा होनेसे इससे उत्पन्न हुए पुत्र-पौत्रादिमें भी कौन विद्वान् अपनापन करेगा ॥ १५ ॥ मनुष्य सारे कर्म देहके ही उपभोगके रिज्ये करता है; किन्तु जब कि यह देह अपनेसे पृथक् है, तो वे कर्म केवल बन्धन (देहोत्पत्ति) के ही कारण होते हैं ॥ १६ ॥ जिस प्रकार मिट्टीके घरको जरू और मिट्टीसे लीपते-पोतते हैं उसी प्रकार यह पार्थिय पञ्चभूतात्मकै भोंगैः पञ्चभूतात्मकं वपुः ।
आप्यायते यदि ततः पुंसो भोगोऽत्र किं कृतः ॥ १८
अनेकजन्मसाहर्ली संसारपदर्वी व्रजन् ।
मोहश्रमं प्रयातोऽसौ वासनारेणुकुण्ठितः ॥ १९
प्रक्षाल्यते यदा सोऽस्य रेणुज्ञांनोच्णवारिणा ।
तदा संसारपान्थस्य याति मोहश्रमञ्ज्ञमम् ॥ २०
मोहश्रमे शमं याते स्वस्थान्तःकरणः पुमान् ।
अनन्यातिशयाबाधं परं निवार्णमृच्छति ॥ २१
निवार्णमय एवायमात्मा ज्ञानमयोऽमलः ।
दुःसाज्ञानमया धर्माः प्रकृतेस्ते तु नात्मनः ॥ २२
जलस्य नाग्निसंसर्गः स्थालीसंगात्तथापि हि ।
शब्दोङ्रेकादिकान्धर्मास्तत्करोति यथा नृप ॥ २३

तदेतत्कथितं बीजमविद्याया मया तव । क्रेशानां च क्षबकरं योगादन्यन्न विद्यते ॥ २५ साण्डिक्य उत्तन तं तु ब्रुह्मि महाभाग योगं योगविदुत्तम ।

भजते प्राकृतान्धर्मानन्यस्तेभ्यो हि सोऽव्ययः ॥ २४

तथात्मा प्रकृतेस्सङ्घादहम्मानादिद्विषतः ।

विज्ञातयोगशास्त्रार्थस्त्वमस्यां निमिसन्ततौ ॥ २६ केशिष्टव उवाच योगस्यरूपं स्वाण्डिक्य श्रूयतां गदतो मम । यत्र स्थितो न च्यवते प्राप्य ब्रह्मरूयं मुनिः ॥ २७

यन एव पनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः । बन्धाय विषयासङ्गि मुक्त्यै निर्विषयं मनः ॥ २८

विषयेभ्यस्समाहत्य विज्ञानात्मा मनो मुनिः । चिन्तयेन्पुक्तये तेन ब्रह्मभूतं परेश्वरम् ॥ २९

आत्मभावं नयत्वेनं तङ्क्का ध्यायिनं मुनिम् । विकार्यमात्मनश्शक्ता लोहमाकर्षको यथा ॥ ३०

आत्यप्रयत्नसापेक्षा विशिष्टा या मनोगतिः । तस्या ब्रह्मणि संयोगो योग इत्यभिधीयते ॥ ३१ शरीर भी मृतिका (मृष्मय अल) और जलकी सहायतासे ही स्थिर रहता है ॥ १७ ॥ यदि यह पद्मभूतात्मक शरीर पाछभौतिक पदार्थींसे पुष्ट होता है तो इसमें पुरुषने क्या

भोग किया ॥ १८ ॥ यह जीव अनेक सहस्र जन्मेंदक सांसारिक भोगोंमें पड़े रहनेसे उन्होंको वासनारूपी धृलिये आच्छादित हो जानेक कारण केवल मोहरूपी श्रमको ही प्राप्त होता है ॥ १९ ॥ जिस समय ज्ञानरूपी गर्म जलसे उसकी वह पाल थो दी जाती है तब इस संसार-पथके

उसकी वह पूलि घो दी जाती है तब इस संसार-पथके पथिकका मोहरूपी श्रम शान्त हो जाता है॥२०॥ मोह-श्रमके शान्त हो जानेपर पुरुष स्वस्थ-चित्त हो जाता है और निरतिशय एवं निर्वाध परम निर्वाण पद प्राप्त कर लेता है॥ २१॥ यह ज्ञानमय निर्मल आत्मा निर्वाण-स्वरूप ही

है, दु:ख आदि जो अज्ञानमय धर्म है वे प्रकृतिक हैं, आत्माक नहीं ॥ २२ ॥ है राजन् ! जिस प्रकार स्थाली (बटलोई) के जलका अग्निसे संयोग नहीं होता तथापि स्थालीके संसर्गसे ही उसमें खोलनेके राष्ट्र आदि धर्म प्रकट हो जाते हैं, उसी प्रकार प्रकृतिके संसर्गसे ही आत्मा अहंकारादिसे दूषित होकर प्राकृत धर्मीको स्वीकार करता है; बास्तवमें तो वह अव्ययात्मा उनसे सर्वधा पृथक् है ॥ २३-२४ ॥ इस प्रकार मैने तुम्हें यह अग्नियाका बीज बतलाया; इस अन्यासे प्राप्त हए

नहीं है ॥ २५ ॥
स्वाण्डिक्य बोले—हे योगवेताओं में श्रेष्ठ महाभाग केशिष्वज ! तुम निमवंशमें योगशासके मर्मज्ञ हो, अतः उस योगका वर्णन करो ॥ २६ ॥
केशिध्यज बोले —हे लाण्डिक्य ! जिसमें स्थित

क्रेशोंको नष्ट करनेवाला योगसे आतिरिक्त और कोई उपाय

होकर बहामे लीन हुए मुनिजन फिर एक्सपसे च्युत नहीं होते, मैं उस योगका वर्णन करता हूँ; श्रवण करो ॥ २७ ॥ मनुष्यके बन्धन और मोक्सका कारण केवल मन ही है; विषयका संग करनेसे वह बन्धनकारी और विषयशून्य होनेसे मोक्सकारक होता है ॥ २८ ॥ अतः विवेकज्ञान-

सम्पन्न मुनि अपने चित्तको विषयोसे हटाकर मोक्षप्राप्तिके रियं ब्रह्मस्करप परमात्माका चिन्तन करे ॥ २९ ॥ जिस प्रकार अयस्कान्तमणि अपनी शक्तिसे लोटेको खींचकर अपनेमें संयुक्त कर लेता है उसी प्रकार ब्रह्मचिन्तन करनेवाले मुनिको परमात्मा स्वभावसे ही स्वरूपमें लीन कर देता है ॥ ३० ॥ आत्मज्ञानके प्रयत्नभूत यम, नियम आदिकी अपेक्षा रसनेवाली जो मनकी विशिष्ट पति है,

उसका ब्रह्मके साथ संयोग होना ही 'योग' कहलाता

एवमत्यनवैशिष्ट्ययुक्तधर्मीपलक्षणः यस्य योगसः वै योगी मुमुक्षुरभिधीयते ॥ ३२

योगयुक् प्रथमं योगी युञ्जानो ह्यभिधीयते ।

विनिष्पन्नसमाधिस्तु परं ब्रह्मोपलब्धिमान् ॥ ३३

यद्यन्तरायदोषेण दुष्यते चास्य मानसम्।

जन्मान्तरैरभ्यसतो मुक्तिः पूर्वस्य जायने ॥ ३४

विनिष्पन्नसमाधिस्तु मुक्ति तत्रैव जन्मनि ।

प्राप्नीति योगी योगानिदग्धकमंचयोऽचिरात् ॥ ३५

व्रह्मचर्यमहिंसां च सत्यास्तेयापरित्रहान् ।

सेवेत योगी निष्कामो योग्यतां खमनो नयन् ॥ ३६

स्वाध्यायशौचसन्तोषतपांसि नियतात्मवान् । कुर्वीत ब्रह्मणि तथा परस्पिन्प्रवर्ण पनः ॥ ३७

एते यमास्सनियमाः पञ्च पञ्च च कीर्तिताः । विशिष्टफलदाः काम्या निकामाणां विमुक्तिद्याः ॥ ३८

एकं भद्रासनादीनां समास्थाय गुणैर्युतः ।

यमाख्यैर्नियमाख्यैश्च युद्धीत नियतो यतिः ॥ ३९ प्राणास्यमनिलं वश्यमभ्यासात्कुरुते तु यत् । प्राणायामसः विज्ञेयसःबीजोऽबीज एव च ॥ ४०

परस्परेणाभिभवं प्राणापानौ यथानिर्ह्य । नृतीयसंयमात्तयोः ॥ ४१ कुरुतस्मद्विधानेन

तस्य चालम्बनवतः स्थलस्यं द्विजोत्तमः। आलम्बनपनन्तस्य योगिनोऽभ्यसतः स्मृतम् ॥ ४२

ञब्दादिष्टुनुरक्तानि निगृह्याक्षाणि योगवित्। कुर्याधितानुकारीणि प्रत्याहारपरायणः ॥ ४३

वर्यता परमा तेन जायतेऽतिचलात्मनाम् । इन्द्रियाणामवश्यैलौर्न योगी योगसाधकः ॥ ४४

है ॥ ३१ ॥ जिसका योग इस प्रकारके विशिष्ट धर्मसे युक्त होता है वह मुमुखु योगी कहा जाता है ॥ ३२ ॥ जब मुमुखु

पहले-पहले योगाभ्यास आरम्भ करता है तो उसे 'थोगयक्त योगी' कहते हैं और जब उसे परबद्धकी प्राप्ति हो। जाती है तो वह 'विनिष्पत्रसमाधि' कहलाता है ॥ ३३ ॥

यदि किसी विष्नवंश उस योगयुक्त योगीका चित्त दृषित हो। जाता है तो जन्मान्तरमें भी उसी अभ्यासको करते रहनेसे वह मुक्त हो जाता है ॥ ३४ ॥ विनिध्यत्रसमाधि योगी तो योगांत्रिसे कर्मसमुहके भस्म हो जानेके कारण उसी जन्ममें

धोडे ही समयमें मोक्ष प्राप्त कर लेता है ॥ ३५ ॥ योगीको चाहिये कि अपने चित्तको ब्रह्मचित्तनके योग्य बनाता हुआ। ब्रह्मचर्य, अहिसा, सत्य, अस्तेय और अगरियहका निष्यामभावसे सेवन करे॥ ३६॥ तथा संयत चित्तसे त्वाथ्याय, शीच, ससोप और तपका आचरण करे

तथा मनको निरन्तर परब्रह्ममे लगाता रहे ॥ ३७ ॥ ये पाँच-पाँच यम और निगम बतलाये गये हैं। इनका सकाम आचरण करनेसे पृथक्-पृथक् फल मिलते है और निष्कामभावसे सेवन करनेसे मोश प्राप्त होता है ॥ ३८ ॥

यतिको चाहिये कि भद्रासनादि आरानोंनेंसे किसी

एकका अवलम्बन कर यय-नियमादि गुणीसे युक्त हो योगाध्यास करे ॥ ३९ ॥ अध्यासके द्वारा जो प्राणवायुको वक्षमें किया खाता है उसे 'प्राणायाम' समझना चाहिये । वह सबीज (ध्यान तथा मन्त्रपाठ आदि आतम्बनयक)। और निर्वीज (निरास्तम्ब) भेदसे दो प्रकारका है ॥ ४० ॥

सदरके उपदेशसे जब योगी प्राण और अपानवायद्वारा

एक-दूसरेका निरोध करता है तो [क्रमक्तः रेचक और

पुरक नामक] दो प्राणायाम होते हैं और इन दोनोका एक ही समय संयम करनेसे [कुम्मक नामक] तीसरा प्राणायाम होता है॥ ४१॥ हे द्विजोत्तम ! जब योगी सबीज प्राणायासका अध्यास आरम्भ करता है तो उसका आलम्बन भगवान् अनत्तका हिएएएगर्भ आदि स्थूलरूप होता है ॥ ४२ ॥ तदनत्तर यह प्रत्याहारका अध्यास करते

हए शक्दादि विषयोमे अनुरता हुई अपनी इन्द्रियोंको रोककर अपने चित्तकी अनुगामिनी बनाता है ॥ ४३ ॥ ऐसा करनेसे अत्यन्त चझरु इन्द्रियाँ उसके वशीभूत हो जाती हैं। इन्द्रियोंको बदामें किये बिना कोई योगी योग-साधन नहीं कर सकता ॥ ४४ ॥ इस प्रकार प्राणायामसे

वायु और प्रत्याहारसे इन्द्रियोंको बद्दीभृत करके चित्तको उसके शुभ आश्रयमें स्थित करे ॥ ४५ ॥

प्राणायामेन पक्षने प्रत्याहारेण चेन्द्रिये।

वशीकृते ततः कुर्वात्स्थितं चेतरशुभाश्रये ॥ ४५

साण्डिका असाच

कथ्यतां मे महाभाग चेतसो यरश्भाश्रयः ।

यदाधारमशेषं तद्धत्ति दोषमस्त्रेद्धवम् ॥ ४६

केशिध्यज उवाच

आश्रवश्चेतसो ब्रह्म द्विधा तद्य स्वभावतः ।

भूप मूर्तमपूर्त च परं चापरमेव च ॥ ४७

त्रिविधा भावना भूप विश्वमेतत्रिबोधताम् ।

ब्रह्माख्या कर्पसंज्ञा च तथा चैवोभयात्मिका ॥ ४८

कर्मभावात्मिका होका ब्रह्मभावात्मिका परा ।

उपयात्मका तथैवान्या त्रिविधा भावभावना ॥ ४९

सनन्दनादयो ये तु ब्रह्मभावनया युताः। कर्मभावनया चान्ये देवाद्याः स्थावराश्चराः ॥ ५०

हिरण्यगर्भादिषु च ब्रह्मकर्मात्मिका द्विथा ।

बोधाधिकारयुक्तेषु विद्यते भावभावना ॥ ५१ अक्षीणेषु समस्तेषु विशेषज्ञानकर्मसु।

विश्वमेतत्परं चान्यद्भेदभिन्नदृशां नृणाम् ॥ ५२ प्रत्यस्तमितभेदं यस्तत्तामात्रमगोचरम्।

वचसामात्मसंवेद्यं तञ्ज्ञानं ब्रह्मसंज्ञितम् ॥ ५३

तच विच्गोः परं रूपमरूपार्व्यमनुत्तमम्। विश्वस्वरूपवैरूप्यलक्षणं परमात्मनः ॥ ५४

न तद्योगयुजा शक्यं नृप चिन्तयितुं यतः । ततः स्थूलं हरे रूपं चिन्तयेद्विश्वगोचरम् ॥ ५५

हिरण्यगर्भो भगवान्वासदेवः प्रजापतिः ।

मस्तो वसवो स्द्रा भास्करास्तारका प्रहा: ॥ ५६ गन्धर्वयक्षदैत्याद्यास्प्रकला देवयोनयः । मनुष्याः पञ्चवञ्ज्ञैलास्समुद्रास्मरितो द्रुमाः ॥ ५७

भूष भूतान्यशेषाणि भूतानां ये च हेतवः । प्रधानादिविशेषान्तं चेतनाचेतनात्मकम् ॥ ५८

एकपादं द्विपादं च बहुपादमपादकम्। मूर्त्तमेतद्धरे रूपं भावनात्रितयात्मकम् ॥ ५९

एतत्सर्विमिदं विश्वं जगदेतस्रराचरम् ।

परब्रह्मस्वरूपस्य विष्णोदशक्तिसमन्वितम् ॥ ६०

स्वाण्डिक्य बोले —हे महाभाग ! यह बतलाइये कि जिसका आश्रय करनेसे चिनके सम्पूर्ण दोष नए हो जाते हैं

बह जितका शुभाश्रय क्या है ? ॥ ४६ ॥ **केशिध्यज बोले** —हे राजन् ! चिनका आश्रय ब्रह्म

है जो कि पूर्व और अपूर्व अथवा अपर और पर-रूपसे क्तभावसे ही दो प्रकारका है ॥ ४७ ॥ हे भूप ! इस जगत्में

ब्रह्म, कर्म और उपयात्मक नामसे तीन प्रकारको मायनाएँ है ॥ ४८ ॥ इनमें पहली कर्मभावना, दूसरी बहाभावना और तोसरी इभयारिमकाभावना कहलाती है। इस प्रकार

ये त्रिविध भावनाएँ हैं॥ ४९॥ सनन्दनादि मुनिजन ब्रह्मभावनासे युक्त हैं और देवताओं से लेकर रथावर-

जंगमपर्वन्त समस्त प्राणी कर्मभावनस्थुक्त है ॥ ५० ॥ तथा

[स्वरूपविषयक] बोध और [स्वर्गीदेविषयक] अधिकारसे युक्त हिरण्यगर्भादिमें बहाकर्ममयी इभवात्मकाभावना है ॥ ५१ ॥ हे राजन् ! जयतक विदोष ज्ञानके हेत् कर्म श्रीण नहीं

होते तमीतक अहंकारादि भेदके कारण भिन्न दृष्टि

रखनेवाले मनुष्योंको ब्रह्म और जगत्की भिन्नता प्रतीत

होती है ॥ ५२ ॥ जिसमें सम्पूर्ण भेद शान्त हो जाते हैं. जो सत्तामात्र और वाणीका अविषय है तथा स्तर्य हो अनुभन्न करनेयोग्य है, वही ब्रह्मज्ञान कहरूला है ॥ ५३ ॥ वही परमात्मा विष्णुका अरूप नामक परम रूप है, जो उनके

विश्वरूपसे विरुक्षण है ॥ ५४ ॥ है राजन ! योगाभ्यासी जन पहले-पहल उस रूपका चित्तन नहीं कर सकते, इसिक्टिये उन्हें श्रीहरिके विश्वमय

स्थुल रूपका ही विसन करना चाहिये॥ ५५॥ टिरण्यमर्भ, भगवान वासदेव, प्रजापति, मरुत, वस्. रुद्र, सुयं, तारे, ब्रहराण, यन्धर्व, यक्ष और दैल्य आदि समस्त

देखयोजियां तथा मनुष्य, थन्न, पर्वत, समृद्र, नदी, वृक्ष,

सम्पूर्ण भूत एवं प्रधानसे लेकर विशेष (पश्चतन्मात्रा) पर्यन्त इनके कारण तथा चेतन, अचेतन, एक, दो अथवा अनेक चरणीबाले प्राणी और बिना चरणीबाले जीव—ये

सब भगवान् इस्कि भावनात्रचात्मक मूर्तरूप हैं ॥ ५६ — ५९ ॥ यह सम्पूर्ण कराकर जगत्, परवहस्थिरूप भगवान् विष्णुका, उनको शक्तिसे सम्पन्न 'विश्व' नामक

रूप है।। ६०॥

विष्णुइक्तिः परा प्रोक्ता क्षेत्रज्ञाख्या तथाऽपरा । अविद्या कर्मर्सज्ञान्या तृतीया शक्तिरिष्यते ॥ ६१ यया क्षेत्रज्ञशक्तिस्सा वेष्टिता नृप सर्वगा । संसारतापानखिलानवाप्रोत्यतिसन्ततान् ॥ ६२ तया तिरोहितत्वाद्य शक्तिः क्षेत्रज्ञसंज्ञिता । सर्वभृतेषु भूपाल तारतम्येन लक्ष्यते ॥ ६३ अप्राणवत्स् स्वल्पा सा स्थावरेषु ततोऽधिका । सरीसुपेषु तेभ्योऽपि ह्यतिशक्त्या पतत्त्रिषु ॥ ६४ पत्रत्त्रिभ्यो मृगास्तेभ्यसन्छक्त्या पश्चोऽधिकाः । पशुभ्यो मनुजाश्चातिशक्त्या पुंसः प्रभाविताः ॥ ६५ तेश्योऽपि नागगन्धर्वयक्षाद्या देवता नुप ॥ ६६ शकस्समस्तदेवेभ्यस्ततश्चाति प्रजापतिः । हिरण्यमभोंऽपि ततः पुंसः शक्त्युपलक्षितः ॥ ६७ एतान्यशेषरूपाणि तस्य रूपाणि पार्थित । यतस्तळक्तियोगेन युक्तानि नभसा यथा॥ ६८ द्वितीयं विष्णुसंज्ञस्य योगिध्येयं महामते । अपूर्त ब्रह्मणो रूपं यत्सदित्युच्यते बुधैः ॥ ६९ समस्ताः शक्तयश्चैता नृप यत्र प्रतिष्ठिताः । तद्विश्चरूपबैरूप्यं रूपमन्यद्धरेर्महत् ॥ ७० समस्तराक्तिरूपाणि तत्करोति जनेश्वर । देवतिर्यङ्गमुष्यादिचेष्टावन्ति स्वलीलया ॥ ७१ जगतामुपकाराय न सा कर्मनिमित्तजा। चेष्टा तस्याप्रमेयस्य व्यापिन्यव्याहतात्मिका ॥ ७२ तद्भूपं विश्वरूपस्य तस्य योगयुजा नृप। चिन्त्यमात्पविज्ञुद्ध्यर्थं सर्विकित्विषनाशनम् ॥ ७३ यथात्रिरुद्धतशिखः कक्षं दहति सानिलः । तथा चित्तस्थितो विष्णुर्योगिनां सर्वकिल्बिषम् ॥ ७४ तस्मात्समस्त्रशक्तीनामाधारे तत्र चेतसः ।

कुर्वीत संस्थिति सा तु विज्ञेया शुद्धधारणा ॥ ७५

त्रिभावभावनातीतो मुक्तये योगिनो नृप ॥ ७६

शुभाश्रयः स चित्तस्य सर्वगस्याचलात्मनः ।

विश्यक्षति परा है, क्षेत्रज्ञ नामक शक्ति अपरा है और कर्म नामको तीसरी शक्ति अविद्या कहरूरती है ॥ ६१ ॥ है राजन् ! इस अविद्या-दाक्तिसे आवृत होकर वह सर्वगामिनी क्षेत्रज्ञ-शक्ति सब प्रकारके अति विस्तृत सीसारिक कष्ट भोगा करती है।। ६२ ॥ हे भूपाल ! अधिद्या-ज्ञाक्तिसे तिरोहित रहनेके कारण ही क्षेत्रज्ञशक्ति समार्ण प्राणियोंमें तारतध्यसे दिखलायी देती है ॥ ६३ ॥ वह सबसे कम जह पदार्थीमें हैं, उनसे अधिक बृक्ष-पर्वतादि स्थावरोमं, स्थावरोसे अधिक सरीसुपादिमं और उनसे अधिक पश्चिमीमें है ॥ ६४ ॥ पश्चिमीसे मुगोमें और मुगोंसे पश्ओंमें वह शक्ति अधिक है तथा पश्ओंकी अपेक्षा मनुष्य भगवानुकी उस (क्षेत्रज्ञ) शक्तिसे अधिक प्रभावित है ॥ ६५ ॥ मनुष्योंसे नाग, गन्धर्य और यक्ष आदि समस्त देवगणीमें, देवताओंसे इन्हमें, इन्हसे प्रजापतिमें और प्रजापतिसे हिरण्यगर्भमें उस शतिल्हा विशेष प्रकाश है ॥ ६६-६७ ॥ हे राजन् ! ये सम्पूर्ण रूप उस परमेश्वरके ही इसीर है, क्योंकि ये सब आकाशके समान उनकी शक्तिसे व्याप्त हैं ॥ ६८ ॥ हे महामते ! विष्णु नामक ब्रह्मका दूसरा अपूर्त (आकारहीन) रूप है, जिसका योगिजन ध्यान करते हैं और जिसे बुधजन 'सत्' कहकर पुकारते हैं ॥ ६९ ॥ है नप ! जिसमें कि ये सम्पूर्ण शक्तियाँ प्रतिष्ठित हैं वही भगवानुका विश्वरूपसे बिल्ड्सण द्वितीय रूप है ॥ ७० ॥ है नरेश ! भगवानुका बही रूप अपनी खोलासे देव, तिर्यक् और मनुष्यादिकी चेष्टाओंसे युक्त सर्वशक्तिमय रूप धारण करता है ॥ ७१ ॥ इन रूपोंमें अप्रमेय भगवानुकी जो व्यापक एवं अव्याहत चेष्टा होती है वह संसारके उपकारके लिये ही होती है, कर्मजन्य नहीं होती ॥ ७२ ॥ हे राजन् ! योगाध्यासीको आता-शुद्धिके लिये भगवान् विश्वरूपके उस सर्वपापनाशक रूपका ही चिन्तन करना चाहिये ॥ ७६ ॥ जिस प्रकार वायसहित अपि ऊँची न्वालाओंसे यक्त होका शुष्क तपसपृहको जला डारूता है उसी प्रकार चित्तमें स्थित हुए भगवान् विष्णु योगियोंके समस्त पाप नष्ट कर देते हैं॥ ७४ ॥ इसलिये सम्पूर्ण इक्तियोंके आधार भगवान विष्णुमें वितको स्थिर करे, यही सुद्ध धारणा है ॥ ७५ ॥

हे राजन् ! तीनों भावनाओंसे अतीत भगवान् विष्णु ही

योगिजनोंकी मुक्तिके लिये उनके [स्वतः] चञ्चल तथा

[किसी अनुडे विषयमें] स्थिर रहनेवाले चित्तके शुम

अन्ये तु पुरुषव्याघ्न चेतसो ये व्यपाश्रयाः । अञ्चद्धास्ते समस्तास्तु देवाद्याः कर्मयोनयः ॥ ७७ मुर्त भगवतो रूपं सर्वापाश्रयनिःस्पृहम् ।

एषा वै धारणा प्रोक्ता यद्यितं तत्र धार्यते ॥ ७८ यद्य मूर्त्तं हरे रूपं यादृक्तिन्त्वं नराधिय ।

तच्छ्रयतामनाधारा धारणा नोपपद्यते ॥ ७९

प्रसन्नवदनं चारुपद्मपन्नोषपेक्षणम् । सुकपोलं सुविस्तीर्णललाटफलकोञ्ज्वलम् ॥ ८०

समकर्णान्तविन्यस्तवारुकुण्डलभूषणम् कम्बुप्रीवं सुविस्तीर्णश्रीवत्साङ्कितवश्चसम् ॥ ८१ विलित्रिभङ्गिना मन्ननाभिना ह्यदरेण च।

प्रलम्बाष्ट्रभुजं विष्णुमथवापि चतुर्भुजम् ॥ ८२ समस्थितोरुजङ्गं च सुस्थिताङ्घिवराम्बुजम् । चिन्तयेद्वहाभूतं ते पीतनिर्मलवाससम् ॥ ८३

किरीटहारकेयुरकटकादिविभूषितम् ॥ ८४ शार्ङ्गशङ्खगदाखङ्गचक्राक्षवलयान्वितम् ।

वरदाभयहस्तं च मुद्रिकारत्रभूषितम् ॥ ८५ चिन्तवेत्तन्ययो योगी समाधायात्यमानसम् । तावद्यावददुढीभूता तत्रैय नृप धारणा॥ ८६

व्रजतस्तिष्ठतोऽन्यद्धा स्वेच्छ्या कर्म कुर्वतः । नापयाति यदा चित्तात्सिद्धां मन्येत तो तदा ॥ ८७ ततः शङ्ख्यदाचक्रशाङ्गीदिरहितं बुधः।

चिन्तयेद्धगवद्भूपं प्रशान्तं साक्षसूत्रकम् ॥ ८८ सा यदा धारणा तद्वदवस्थानवती ततः। किरीटकेवूरमुखैर्भूषणै रहितं स्मरेत्॥८९

तदेकावयवं देवं चेतसा हि पुनर्बुधः । कुर्यात्ततोऽवयविनि प्रणिधानपरो भवेत् ॥ ९०

आश्रय है ॥ ७६ ॥ हे पुरुषसिंह ! इसके अतिरिक्त मनके आध्यभृत जो अन्य देवता आदि कर्मयोनियाँ हैं, वे सब अञ्चद्ध हैं ॥ ७३ ॥ भगवानुका यह मूर्तरूप चित्तको अन्य

आरम्बनीसे निःस्पृहं कर देता है। इस प्रकार चित्तका भगवानमें रिधर करना ही धारणा कहलाती है ॥ ७८ ॥

हे नरेन्द्र ! धारणा बिना किसी आधारके नहीं हो सकती: इसल्ये भगवानुके जिस मूर्तरूपका जिस प्रकार ध्यान करना चाहिये, वह सुनो॥ ७९॥ जो प्रसन्नवदन

और कमलदलके समान सुन्दर नेत्रीयाले हैं, सुन्दर कपोल और विज्ञाल भारासे अत्यन्त सुज्ञोभित है तथा अपने सुन्दर कानोंमें मनोहर कुण्डल पहने हुए हैं, जिनकी ग्रीवा शहुके समान और विशाल वक्षःस्थल श्रीवताचिह्नसे सुद्दोभित हैं, जो तरङ्गकार विवली तथा नीची नाधिवाले

उदरसे सुजोभित है, जिनके लम्बी-लम्बी आउ अथवा चार गुजाएँ हैं तथा जिनके जड़ा एवं ऊरु समानभावसे स्थित है और मनोहर चरणारविन्द सूधरतासे विराजमान है उन निर्मेल पीतान्बरधारी श्रह्मस्त्ररूप भगवान् निष्णुका चिन्तन बन्ने ॥ ८०---८३ ॥ हे राजन् ! किरोट, हार,

केयुर और कटक आदि आभूषणोंसे विभूषित, शार्ह्मधनुष,

शङ्क, गदा, खड्क, चक्र तथा अक्षमालासे युक्त बरद और अभययुक्त हाथोंवाले* [तथा अंगुलियोंमें धारण की हुई) रत्नमयी मुद्रिकासे शोभायमान भगवान्के दिव्य रूपका योगीको अपना चित्त एकाय करके तत्मयभावसे तबतक चिन्तन करना चाहिये अबतक यह धारणा दुई न

हो जाय ॥ ८४---८६ ॥ जब चलते-फिरते, उठते-बैठते

अथवा स्वेच्छानुकुल कोई और कर्म करते हुए भी ध्येय

मृतिं अपने चित्तसे दूर न हो तो इसे सिद्ध हुई माननी चाहिये ॥ ८७ ॥ इसके दढ़ होनेपर बृद्धिमान व्यक्ति शङ्क, चक्र, गदा और शार्क् आदिसे रहित भगवान्के स्फटिकाक्षमात्त्र और यञ्जोपबीतधारी शान्त स्वरूपका चिन्तन करे॥ ८८ ॥ जब

यह धारणा भी पूर्ववत स्थिर हो जाय तो भगवानके किरीट. केयुरादि आभुषणीसे रहित रूपका स्मरण करे॥ ८९ ॥ तदनन्तर विज्ञ पुरुष अपने चित्तमें एक (प्रधान) अवयव-विशिष्ट भगवानुका हृदयसे विन्तृत करे और फिर सम्पूर्ण

अवयवींको छोडकर केवल अवयवीका ध्यान करे ॥ ९० ॥

[🏄] चतुर्पूज-मूर्तिके ध्यानमें चारों हाथोंमें क्रमकः बाह्व, सक्र, गहा और पराक्षी भावना करे तथा अष्ट्रमुजकपका ध्यान करते समय छः हाथोंने तो बार्क् आदि छः आयुधीकी भाकता करे तथा शेष दोने पद्म और बाज अथवा बरद और अधय-मुहाका निक्तन करे ।

तद्वपप्रत्यया चैका सन्ततिश्चान्यनिःस्पृहा । तद्ध्यानं प्रथमैरङ्गैः षड्भिर्निष्पाद्यते नृप ॥ तस्यैव कल्पनाहीनं स्वरूपप्रहणं हि यत् । मनसा ध्याननिष्पाद्यं समाधिः सोऽभिधीयते ॥

विज्ञानं प्रापकं प्राप्ये परे ब्रह्मणि पार्थिव ।

प्रापणीयस्तथैवात्मा प्रक्षीणाशेषभावनः ॥ क्षेत्रज्ञः करणी ज्ञानं करणं तस्य तेन तत् । निष्पाद्य मुक्तिकार्यं वै कृतकृत्यो निवर्तते ॥

तद्भावभावमापन्नस्ततोऽसौ परमात्मना । भवत्यभेदी भेदश्च तस्याज्ञानकृतो भवेत् ॥

विभेदजनकेऽज्ञाने नाशमात्यन्तिकं गते।

आत्मनो ब्रह्मणो भेदमसन्तं कः करिष्यति ॥ इत्युक्तस्ते मया योगः साण्डिक्य परिपृच्छतः ।

संक्षेपविस्तराध्यां तु किमन्यक्तियतां तव ॥ साण्डिक्य उवाच

कथिते योगसद्भावे सर्वमेव कृतं मम। तबोपदेशेनाशेषो नष्टश्चित्तमलो यतः ॥

ममेति यन्पया चोक्तमसदेतन्न चान्यश्रा। नरेन्द्र गदितुं शक्यमपि विज्ञेयवेदिभिः॥

अहं ममेत्यविद्येयं व्यवहारस्तथानयोः। परमार्थस्त्वसंलापो गोचरे वचसां न यः ॥ १०० तद्रक श्रेयसे सर्वं ममैतद्भवता कृतम्।

यद्विमुक्तिप्रदो योगः प्रोक्तः केशिध्वजाव्ययः ॥ १०१ श्रीपराद्यार उनाच

यश्राहं पूजया तेन खाण्डिक्येन स पूजित: ।

आजगाम पुरं ब्रह्मंस्ततः केञ्चिक्वजो नृषः ॥ १०२

खाण्डिक्योऽपि सतं कृत्वा राजानं योगसिद्धये । वनं जगाम गोविन्दे विनिवेशितमानसः ॥ १०३

तत्रैकान्तमतिर्भृत्वा यमादिगुणसंयुतः ।

विष्णवाख्ये निर्मले ब्रह्मण्यवाप नुपतिर्लयम् ॥ १०४

99

83

€9

24

25

219

38

99

हे राजन ! जिसमें परमेश्वरके रूपकी ही प्रतीति होतो है, ऐसी जो विषयान्तरको स्प्रहासे रहित एक अनवरत धारा है उसे ही भ्यान कहते हैं; यह अपनेसे पूर्व थम-नियमादि छः अङ्ग्रोसे निषात्र होता है ॥ ९१ ॥ उस ध्येय पदार्थका ही जो मनके द्वारा ध्यानसे सिद्ध होनेयोग्य कल्पनाहीन

(ध्याता, ध्येच और ध्यानके भेदसे रहित) स्वरूप महण किया जाता है उसे ही समाधि कहते हैं ॥ ९२ ॥ हे राजन् ! िसमाधिसे होनेवाला भगवस्साक्षात्काररूप] विज्ञान ही प्राप्तव्य परब्रहातक पहुँचानेवाला है तथा सम्पूर्ण भावनाओसे रहित एकमात्र आत्म ही प्राप्णीय (वहाँतक पहुँचनेवाला) है।। ९३॥ मुक्ति-लाभमें क्षेत्रज्ञ कर्ता है

और ज्ञान करण है: [ज्ञानरूपी करणके द्वारा क्षेत्रज्ञके] मुक्तिरूपी कार्यको सिद्ध करके वह विज्ञान कृतकृत्य होकर निवृत हो जाता है ॥ ९४ ॥ उस समय वह भगवद्भावसे भरकर परमात्मासे अभिन्न हो जाता है। इसका भेद-ज्ञान तो अज्ञानजन्य हो है॥ ९५॥ भेर उत्पन्न करनेवाछे अज्ञानके सर्वथा नष्ट हो जानेपर ब्रह्म और आत्मामें असत्

(अविद्यमान) भेद कौन कर सकता है ? ॥ १६ ॥ है

खाण्डिक्य । इस प्रकार तुम्हारे पूछनेके अनुसार मैंने संक्षेप और विस्तारसे योगका वर्णन किया; अब मैं तुम्हारा और क्या कार्य करूँ ? ॥ ९७ ॥ खाण्डिक्य बोले-आपने इस महायोगका वर्णन

करके मेरा सभी कार्य कर दिया, क्वेंकि आपके उपदेशसे मेरे जितका सम्पूर्ण युरु नष्ट हो गया है ॥ ९८ ॥ हे राजन् ! मैंने जो 'मेरा' कहा यह भी असत्य ही है, अन्यथा ब्रेय वस्तको जाननेवाले तो यह भी नहीं कह सकते॥ ९९॥ 'मै' और 'मेरा' ऐसी बृद्धि और इनका व्यवहार भी अविद्या ही है, परमार्थ तो कहने-सननेकी बात नहीं है क्योंकि वह

वाणीका अविषय है ॥ १०० ॥ हे केदिश्यव ! आपने इस मुक्तिप्रद योगका वर्णन करके मेरे कल्याणके लिये सब

कुछ कर दिया, अब आप सुखपूर्वक पधारिये ॥ १०१ ॥ श्रीपराशस्त्री बोले—हे बहान्। तदनत्तर साण्डिक्यसे यथोचित पुजित हो राजा केशिध्यज अपने नगरमें चले आये ॥ १०२ ॥ तथा खाण्डिक्य भी अपने पुत्रको राज्य दे* श्रीगोविन्दमें चित्र लगाकर योग सिद्ध करनेके लिये [निर्जन] चनको चले गये ॥ १०३ ॥ वहाँ

यमादि गुणोसे युक्त होकर एकाप्रचित्तसे ध्यान करते हुए

राजा खाण्डिक्य विष्णु नामक निर्मल ब्रह्ममें लीन हो

* यद्यपि खाण्डिक्य उस समय राजा नहीं था; तथापि कामें जो उसके दुर्ग, मन्त्री और भूत्य आदि थे उन्हींका स्वामी

अपने पुत्रको बनाया ।

केशिध्वजो विमुक्त्यर्थं स्वकर्मक्षपणोन्मुखः । बुभुजे विषया-कर्म चक्रे चानभिसंहितम् ॥ १०५

सकल्याणोपभोगैश्च श्लीणपापोऽमलस्तथा ।

अवाप सिद्धिमत्यन्तां तापक्षयफलां द्विज ॥ १०६ ।

गये॥ १०४॥ किन्तु केशिध्यज, विदेहपुक्तिके लिये अपने कमींको क्षय करते हुए समस्त विषय भोगते रहे। उन्होंने फलको

इच्छा न करके अनेकों शुभ-कर्म किये ॥ १०५ ॥ है दिज ! इस प्रकार अनेकों कल्याणघट भोगोंको भोगते हुए उन्होंने पाप और मल (प्रारब्ध-कर्म) का क्षय हो जानेपर तापत्रक्को दूर करनेवाली आत्यन्तिक सिद्धि प्राप्त कर त्ये ॥ १०६ ॥

इति श्रीविष्णपुराणे यष्टेऽशे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

आठवाँ अध्याय

शिष्यपरम्परा, माहात्म्य और उपसंहार

9

₹.

3

t_E

Ę

श्रीपराश्चर उद्याच

इत्येष कथितः सम्यक् तृतीयः प्रतिसञ्चरः ।

आत्यन्तिको विमुक्तिर्या लयो ब्रह्मणि शाश्वते ॥

सर्गेश्च प्रतिसर्गेश्च वंशमन्वन्तराणि च ।

वंशानुचरितं चैव भवतो गदितं मया ॥ पुराणं वैष्णवं चैतत्सर्वेकिल्बिषनाञ्चम् ।

विशिष्टं सर्वशास्त्रेभ्यः पुरुषार्थोपपादकम् ॥

तुभ्यं यथावन्यैत्रेय प्रोक्तं शुश्रूषवेऽव्ययम् । यद्न्यद्पि वक्तव्यं तत्पृच्छाद्य बदामि ते ॥ श्रीपेंत्रेय उवाच

भगवन्कथितं सर्वं यत्पृष्टोऽसि मया मुने । श्रुतं चैतन्मया भक्त्या नान्यत्प्रष्टव्यमस्ति मे ॥

विच्छिन्नाः सर्वसन्देहा वैमल्यं मनसः कृतम् । त्वत्प्रसादान्यया ज्ञाता उत्पत्तिस्थितिसंक्षयाः ॥ ज्ञातश्चतुर्विधो राशिः शक्तिश्च त्रिविधा गरो ।

विज्ञाता सा च कार्त्स्चेन त्रिविधा भावभावना ॥

त्वस्रसादान्यया ज्ञातं ज्ञेयमन्यैरलं हिजः। यदेतदरिवलं विष्णोर्जगन्न व्यतिरिच्यते ॥ श्रीपराक्षरजी खोरहे—हे मैत्रेय ! इस प्रकार मैते

तुमसे तीसरे आत्यन्तिक प्रलयका वर्णन किया, जो सनातन बहुतमें रूबरूप मोक्ष ही है।। १।। मैंने तुमसे संसारकी उत्पत्ति, प्रलय, वंश, मन्वन्तर तथा वंशीके

चरित्रोंका वर्णन किया ॥ २ ॥ हे मैत्रेय ! मैंने तुन्हें सुननेके लिये उत्सुक देखकर यह सम्पूर्ण शास्त्रोमें श्रेष्ठ सर्वपापविनाशक और पुरुषार्धका प्रतिपादक वैष्णवपुराण

सुना दिया। अब तुग्हें जो और कुछ पूछना हो पूछो। मैं उसका तुमसे वर्णन करूँगा ॥ ३-४ ॥ श्रीमैत्रेयजी बोले— भगवन् ! मैंने आपसे जो कुछ

पूछा था वह सभी आप कह चुके और मैंने भी उसे श्रद्धाभक्तिपूर्वक सुना, अब मुझे और कुछ भो पूछना नहीं है।। ५।। हे मुने ! आपकी कृपासे मेरे समस्त सन्देह

निवृत्त हो गये और मेरा चित्त निर्मल हो गया तथा मुझे संसारको उत्पत्ति, स्थिति और प्ररूपका ज्ञान हो गया ॥ ६ ॥ हे नुरो ! मैं चार प्रकारकी संक्षि^र और तीन प्रकारकी शक्तियाँ ^२ जान गया तथा मुझे त्रिविध भाव-

19 आपकी कुपासे मैं, जो जानना चाहिये वह भली प्रकार जान गया कि वह सम्पूर्ण जगत् श्रीविष्णुभगवान्से भिन्न नहीं है, इसलिये अब मुझे अन्य बातोंके जाननेसे कोई

भावनाओंका^र भी सम्यक् बोध हो गया ॥ ७ ॥ हे द्विज !

१-देखिये---प्रथम अंश अध्याय २२ रुलेक २३---३३। षष्ट अंश अध्याय ७ वलोक ६१ — ६३। ₹- m षष्ठ अंश अध्याय ७ रालोक ४८—५१। B= 3+

सप्रविभिस्तथा धिक्यवैधिकवाधिपतिभिस्तथा । ब्राह्मणाद्यैर्मनुष्येश तथैव पशुभिर्मृगैः ॥ २४ सरीसपैविंहडैश्च पलाशाद्यैमेहीरुहै: । वनाक्रिसागरसरित्पातालैः सधरादिभिः॥ २५ शब्दादिभिश्च सहितं ब्रह्माण्डमिक्तं हिज । मेरोरिवाणुर्वस्थैतद्यन्ययं च द्विजोत्तम ॥ २६ स सर्वः सर्ववित्सर्वस्वरूपो रूपवर्जितः । भगवान्कीर्तितो विष्णुरत्र पापप्रणाज्ञनः ॥ २७ यदश्चमेधावभुधे स्नातः प्राप्नोति वै फलम् । मानवस्तद्वाप्नोति श्रुत्वैतन्युनिसत्तम् ॥ २८ प्रयागे पुष्करे चैव कुरुक्षेत्रे तथार्णवे। कृतोपवासः प्राप्नोति तदस्य श्रवणान्नरः ॥ २९ यद्भिहोत्रे सहते वर्षेणाञ्जोति मानवः। महापुण्यफलं विष्र तदस्य श्रवणात्सकृत् ॥ ३० यञ्ज्येष्ठशङ्कद्वादञ्यां स्नात्वा वै यमुनाजले। मधुरायां हरि दुष्टा प्राप्नोति पुरुषः फलम् ॥ ३१ तदाप्रोत्यखिलं सम्यगध्यायं यः शृणोति वै । पुराणस्यास्य विप्रषे केशवार्पितमानसः ॥ ३२ यमुनासलिलस्नातः पुरुषो मुनिसत्तमः। ज्येष्टामुले सिते पक्षे द्वादश्यां समुपोषितः ॥ ३३ समभ्यर्चाच्युतं सम्यङ् मधुरायां समाहितः । अश्वमेधस्य यज्ञस्य प्राप्नोत्यविकलं फलम् ॥ ३४ आलोक्यद्धिमशान्येषामुत्रीतानां स्ववंशजैः । एतत्किलोचुरन्येषां पितरः सपितामहाः ॥ ३५ कचिदस्मकुले जातः कालिन्दीसलिलाप्रतः। अर्वविष्यति गोविन्दं मधुरायामुपोषितः ॥ ३६ ज्येष्टामूले सिते पक्षे येनैवं वयमप्युत। परामृद्धिमवाप्यामस्तारिताः स्वकुलोद्धवैः ॥ ३७ ज्येष्टामूले सिते पक्षे समध्यर्च्य जनार्दनम् । धन्यानां कुलजः पिण्डान्यमुनायां प्रदास्पति ॥ ३८

तस्मिन्काले समभ्यर्च्य तत्र कृष्णं समाहितः ।

दत्त्वा पिण्डं पितृभ्यश्च यमुनासलिलाप्नृतः ॥ ३९

सप्तर्षि, लोक, लोकपालगण, ब्राह्मणादि मनुष्य, पशु, मृग, सरीसृप, विहङ्ग, पलाश आदि वृक्ष, वन, अग्नि, समुद्र, नदी, पाताल तथा पृथिवी आदि और शब्दादि विषयोंके सहित यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जिनके आगे सुमेरके सामने एक रेणुके समान है तथा जो इसके उपादान-कारण है उन सर्व सर्वञ्च सर्वस्थरूप रूपरहित और पापनाशक भगवान् विष्णुका इसमे कीर्तन किया गया है।। २२—२७॥ हे मुनिसत्तम ! अश्वमेध-यज्ञमें अवभूध (यज्ञान्त)

स्नान करनेसे जो फल मिलता है वही फल मनुष्य इसको सुनकर प्राप्त कर लेता है।। २८॥ प्रयाम, पुष्कर, कुरुक्षेत्र तथा समुद्रतटपर एहकर उपवास करनेसे जो फल मिलता है वही इस पुराणको सुननेसे प्राप्त हो जाता है।। २९॥ एक वर्षतक नियमानुसार अप्रिहोत्र करनेसे मनुष्यको जो महान् पुण्यफल मिलता है वही इसे एक बार सुननेसे हो जाता है।। ३०॥ ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशीके दिन मथुरापुरीमें यमुना-स्नान करके कृष्णचन्द्रका दर्शन करनेसे जो फल मिलता है है विप्रयें! वही भगवान् कृष्णमें चित्त लगाकर इस पुराणके एक अध्यायको सावधानतापूर्वक सुननेसे मिल जाता है।। ३१-३२॥

हे मुनिश्रेष्ट ! ज्येष्टमासके शुक्रपशकी द्वादशीको

मधुरापुरीमें उपवास करते हुए यमुनास्त्रान करके

समाहितचित्तसे श्रीअच्युतका भलीप्रकार पूजन करनेसे

मनुष्यको अक्षमेध-यञ्जका सम्पूर्ण फल मिलता है ॥ ३३-३४॥ कहते हैं अपने वंशजोंद्वारा [यमुना- तटपर पिण्डदान करनेसे] उन्नति लाभ किये हुए अन्य पितरोंकी समृद्धि देखकर दूसरे लोगोंक पितृ-पितामहीने [अपने वंशजोंको लक्ष्य करके] इस प्रकार कहा था — ॥ ३५॥ क्या हमारे कुलमें उत्पन्न हुआ कोई पुरुष ज्येष्ठ-मासके शुष्ट्र पक्षमें [द्वादर्शी तिथिको] मथुरामें उपवास करते हुए यमुनाजलमें स्नान करके श्रीगोकिन्दका पूजन करेगा, जिससे हम भी अपने वंशजोंद्वारा उद्धार पाकर ऐसा परम ऐश्वर्य प्राप्त कर सकेंगे ? जो बड़े भाग्यवान होते हैं उन्होंके वंशधर ज्येष्ठमासीय शुक्रपक्षमें

भगवानुका अर्चन करके यमुनामें पितृगणको पिण्टदान

करते हैं ॥ ३६—३८ ॥ उस समय यमुनाजलमे स्नान

करके सावधानतापूर्वक भलीप्रकार भगवान्का पूजन

यदाप्रोति नरः पुण्यं तारयन्त्वपितामहान् । श्रुत्वाध्यायं तदाप्रोति पुराणस्यास्य भक्तितः ॥ ४० एतत्संसारभीरूणां परित्राणमनुत्तमम् । श्राव्याणां परमं श्राव्यं पवित्राणामनुत्तमम् ॥ ४१ दुःस्वप्रनाशनं नृणां सर्वदुष्टनिबर्हणम्। मङ्गलं मङ्गलानां च पुत्रसम्पत्रदायकम् ॥ ४२ इदमार्ष पुरा प्राह ऋभवे कमलोद्धवः । ऋभुः प्रियव्रतायाह स च भागुरयेऽव्रवीत् ॥ ४३ भागुरिः सम्भीमत्राय दधीचाय स बोक्तवान् । सारस्वताय तेनोक्तं भृगुस्सारस्वतेन च ॥ ४४ भृगुणा पुरुकुत्साय नर्मदायै स बोक्तवान् । नर्मदा धृतराष्ट्राय नागायापूरणाय[ः] च ॥ ४५ तार्थ्या च नागराजाय प्रोक्तं वासुकये द्विज । वासुकिः प्राह बत्साय वत्सश्चाश्चतराय वै ॥ ४६ कम्बलाय च तेनोक्तमेलापुत्राय तेन वै ॥ ४७ पातालं समनुष्राप्तस्ततो वेदशिरा मुनि:। प्राप्तवानेतदिखलं स च प्रमतये ददौ ॥ ४८ दुर्त प्रमतिना चैतजातुकर्णांच थीयते । जातुकर्णेन चैवोक्तमन्येषां पुण्यकर्मणाम् ॥ ४९ पुलस्यवरदानेन ममाप्येतत्स्मृति गतम्। मयापि तुभ्यं मैत्रेय यथावत्कथितं त्विदम् ॥ ५० त्वमप्येतच्छिनीकाय कलेरन्ते वदिष्यसि ॥ ५१ इत्येतत्परमं गुह्यं कलिकल्मषनाञ्चनम्। यः शृणोति नरो भक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ५२ समस्ततीर्थस्नानानि समस्तामरसंस्तुतिः । कृता तेन भवेदेतद्यः शृणोति दिने दिने ॥ ५३

श्रुर्त्वतस्य दशाध्यायानवाप्नोति न संशयः ॥ ५४

मिक्तिपूर्वक इस पुराणका एक अध्याय सुननेसे प्राप्त हो जाता है । ॥ ३९-४० ॥ यह पुराण संसारसे भयभीत हुए पुरुषोंका अति उत्तम रक्षक, अत्यन्त श्रवणयोग्य तथा पवित्रोंमें परम उत्तम है ॥ ४१ ॥ यह मनुष्योंके दुःस्वप्रोंको नष्ट करनेवाला, सम्पूर्ण दोषोको दूर करनेवाला, माङ्गलिक वस्तुओंमें परम माङ्गिलिक और सन्तान तथा सम्पत्तिका देनेबाला है ॥ ४२ ॥ इस आर्धपुराणको सबसे पहले भगवान् ब्रह्माजीने ऋभुको सुनाया था। ऋभुने प्रियवतको सुनाया और प्रियत्रतने भागुरिसे कहा ॥ ४३ ॥ फिर इसे भागुरिने स्ताभित्रको, स्ताभित्रको दधीचिको, दधीचिने

करनेसे और पितृगणको पिण्ड देनेसे अपने पितामहोंको

तारता हुआ पुरुष जिस पुण्यका भागी होता है वही पुण्य

सारस्वतको और सारस्वतने भृगुको सुनाया॥४४॥ तथा भुगुने पुरुकुरससे, पुरुकुरसने नर्मदासे और नर्मदाने युतराष्ट्र एवं पूरणनागसे कहा ॥ ४५ ॥ हे द्विज ! इन दोनोंने यह पुराण नागराज वास्तिकको सुनाया । वास्तिको वसको, बस्सने अश्वतस्को, अश्वतरने कम्बलको और कष्वलने एलापुत्रको सुनाया ॥ ४६-४७ ॥ इसी समय मुनिवर वेदशिस पाताललोकमें पहुँचे, उन्होंने यह समस्त पुराण प्राप्त किया और फिर प्रमतिको सुनाया ॥ ४८ ॥

सुनावा ॥ ४९ ॥ [पूर्व-जन्ममें सारस्वतके मुखसे सुना हुआ यह पुराण] पुरुस्त्यजीके वरदानसे मुझे भी रमरण रह गया । सो मैंने ज्वॉ-का-स्ते तुन्हें सुना दिया । अब तुम भी क्रियुगके अन्तमें इसे शिनीकको सुनाओगे ॥ ५०-५१ ॥

प्रमतिने उसे परम बुद्धिमान् जातुकर्णको दिया तथा

जातुकर्णने अन्यान्य पुण्यज्ञील महात्याओंको

जो पुरुष इस अति गुह्य और काल-कल्मष-माशक पुराणको भक्तिपूर्वक सुनता है वह सब पापोसे मुक्त हो जाता है ॥ ५२ ॥ जो मनुष्य इसका प्रतिदिन श्रवण करता है उसने तो मानो सभी तीथोंमें स्नान कर लिखा और सभी देवताओंकी स्तुति कर सी॥ ५३॥ इसके

दस अध्यायोंका अवण करनेसे निःसन्देह कपिला गौके दानका अति दुर्लभ पुण्य-फल प्राप्त होता है ॥ ५४ ॥

यस्त्वेतत्सकलं शृणोति पुरुषः

कृत्वा

कपिलादानजनितं पुण्यमत्यन्तदुर्लभम् ।

मनस्यच्यत

सर्व सर्वमधं समस्तजगता-माधारमात्माश्रयम् ज्ञानज्ञेयमनादियन्तरहितं सर्वामगणां हितं स प्राप्नोति न संशयोऽस्यविकलं यहाजिमेधे फलम् ॥ ५५ भगवांश्वराचरगुरू-यत्राती र्मध्ये तथान्ते सः ब्रह्मज्ञानमयोऽच्युतोऽख्तिलजग-न्मध्यान्तसर्गप्रभुः पवित्रममलं पुरुष: श्रुपयन्पठन्याचय-न्प्राप्नोत्यस्ति न तत्फलं त्रिभवने-श्वेकान्तसिर्द्धिहरिः 11 48 यस्मित्र्यस्तमतिर्ने याति नरकं स्वगॉऽपि यशिन्तने यत्र निवेशितात्ममनसो ब्राह्मोऽपि लोकोऽल्पकः । मुक्तिं चेतसि यः स्थितोऽमलधियां पंसा दहात्यच्ययः कि चित्रं यद्घं प्रयाति विलयं तत्राच्यते कीर्तिते ॥ ५७ यज्ञैर्यज्ञविदो यजन्ति सतत यजेश्वरं कर्मिणो ब्रह्मपर्य वै परावरमयं ध्यायन्ति ज्ञानिनः । ם यं सञ्चित्त्य न जायते न ब्रियते

बद्धत

हरे:

भुक्क

पितुरूपधृग्विधहतं

भगवाननादिनिधनः

सद्भवत्यति

वा

च

स्वाहास्वधासंज्ञिते

हीयते

विभु-

तत:

नो

कि

4:

हर्व्य

च

नैवासन

कव्यं

देंबत्वे

तथा समस्त देवताओंके हितकारक श्रीविष्णुभगवानुका चित्रमें ध्वान कर इस सम्पूर्ण पुराणको सुनता है होता है ॥ ५५ ॥ इसके प्राप्तव्य फल हैं।। ५६॥ श्रूयताम् ॥ ५८

उसे निःसन्देह अश्वमेध-यज्ञका समग्र फल प्राप्त जिसके आदि, मध्य और अन्तमें अखिल जगत्की सष्टि. स्थिति तथा संहारमें समर्थ ब्रह्मज्ञानमय चराचरगुरु भगवान् अच्युतका ही कीर्तन हुआ है उस परम श्रेष्ट और अमल पुराणको सुनने, पढ़ने और धारण करनेसे जो फाउ प्राप्त होता है यह सम्पूर्ण त्रिलोकीमें और कहीं प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि एकान्त मृक्तिरूप सिद्धिको देनेवाले भगवान् विष्णु ही जिनमें चित्र लगानेवाला कभी तरकमें नहीं जा सकता. जिनके स्परणमें स्वर्ग भी विञ्चरूप है, जिनमें चित लग जानेपर ब्रह्मलोक भी अति तुच्छ प्रतीत होता है तथा जो अव्यय प्रभु निर्मलचित पुरुषेकि हृदयमें स्थित होकर उन्हें मोक्ष देते हैं उन्हों अच्युतका कीर्तन करनेसे यदि पाप विलीन हो जाते हैं तो इसमें आश्चर्य हो क्या है ? ॥ ५७ ॥ यज्ञवेत्ता कर्मनिष्ठ स्होग यज्ञोंद्वारा जिनका यशेधररूपसे यजन करते हैं, ज्ञानीजन जिनका परावरमय ब्रह्मस्वरूपसे ध्यान करते हैं. जिनका स्मरण करनेसे पुरुष न जन्मता है, न मरता है, न बढ़ता है और न क्षोण ही होता है तथा जो न सत् (कारण) हैं और न असत (कार्य) ही है उन श्रीहरिके अतिरिक्त और क्या सुना आय ? ॥ ५८ ॥ जो अनादिनिधन भगवान् विभू पितृरूप धारणकर स्त्रधार्सज्ञक कव्यको और देवता होकर अधिमें विधिमुर्वक हवन किये हुए स्वाहा नामक हव्यको प्रहण करते हैं तथा जिन समस्त इक्तियोंके आश्रयमृत भगवानुके विषयमें बड़े-वड़े

जो पुरुष सम्पूर्ण जगतुकै आधार, आत्माके अवसम्ब,

सर्वस्वरूप, सर्वमय ज्ञान और ज्ञेयरूप आदि-अन्तरहित

यस्मिन्त्रहाणि सर्वशक्तिनिलये मानानि नो मानिनां निष्ठायै प्रभवसि हसि यातो हरिः ॥ ५९ स नानोऽस्ति यस्य न च यस्य समुद्धवोऽस्ति वृद्धिर्ने यस्य परिणामविवर्जितस्य । नापक्षयं च समुपंत्यविकारि वस्तु यस्तं नतोऽस्मि परुषोत्तममीशमीङ्यम् ॥ ६० तस्यैव योऽनु गुणभुग्बह्धैक शुद्धोऽप्यशुद्ध इव भाति हि मूर्तिभेदैः । ज्ञानान्वितः सकलसत्त्वविभृतिकर्ता तस्मै नमोऽस्तु पुरुषाय सदाव्ययाय ॥ ६१ ज्ञानप्रवृत्तिनियमैक्यमयाय भोगप्रदानपटवे त्रिगुणात्मकाय । अव्याकृताय भवभावनकारणाय बन्दे स्वरूपभवनाय सदाजराय ॥ ६२ व्योमानिलाप्रिजलभूरचनामयाय **ज्ञब्दादिभोग्यविषयोपनयक्षमाय** समस्तकरणैरूपकारकाय पुस: व्यक्ताय सूक्ष्मबृहदात्मवते नतोऽस्मि ॥ ६३ विविधमजस्य इति । प्रकृतिपरात्ममयं सनातनस्य ।

भगवानशेषपुंसा

310 6]

प्रदिशतु

प्रमाणकुशल पुरुषोंके प्रमाण भी इयसा करनेमें समर्थ नहीं होते वे श्रीहरि श्रवण-पथमें जाते ही समस्त पापींको नष्ट कर देते हैं॥ ५९॥

जिन परिणामहीन प्रभुका आदि, अन्त, वृद्धि और

क्षय कुछ भी नहीं होता, जो नित्य निर्विकार पदार्थ हैं।

उन स्तवनीय प्रभु पुरुषोत्तमको मैं नमस्कार करता हुँ ॥ ६० ॥ जो उन्होंके समान गुणोंको भोगनेवाला है, एक होकर भी अनेक रूप है तथा शुद्ध होकर भी विभिन्न रूपोंके कारण अञ्चढ-(विकारवान्-) सा प्रतीत होता है और जो शनस्वरूप एवं समस्त भूत तथा विभृतियोंका कर्ता है इस निस्य अञ्चय पुरुषको नमस्कार है।। ६१।। जो ज्ञान (सन्त), प्रवृत्ति (रज) और नियमन (तम) को एकतारूप है, पुरुषको भीग प्रदान करनेमें कुशल हैं, त्रिगुणात्मक तथा अव्याकृत है, संसारको उत्पत्तिका कारण है, उस खतःसिद्ध तथा जराञ्चय प्रभुको सर्वदा नमस्कार करता है॥ ६२ ॥ जो आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवीरूप है, शब्दादि धोग्यं विषयोंकी प्राप्ति करानेमें समर्थ है और पुरुषका उसकी समस्त इन्द्रियोद्वारा उपकार करता है उस सुक्ष्म और विग्रदृरूप व्यक्त परमात्मको नमस्कार करता है ॥ ६३ ॥

इस प्रकार जिन नित्य सनातन परमात्माके प्रकृति-पुरुषमय ऐसे अनेक रूप हैं वे भगवान् हरि समस्त पुरुषोंको जन्म और जरा आदिसे रहित (मुक्तिरूप) **हरिरपजन्यजरादिको स सिद्धिम् ।। ६४** सिद्धि प्रदान करें ॥ ६४ ॥

इति श्रीविष्णुपराणे पष्टेंऽशे अष्टमोऽष्यायः ॥ ८ ॥

इति श्रीपराशरमुनिविरचिते श्रीविष्णुपरत्वनिर्णायके श्रीमति

विष्णुमहापुराणे षष्ठोंऽदाः समाप्तः ।

इति श्रीविष्णुमहापुराणं सम्पूर्णम्

॥ श्रीविकवर्षक्यस्तु ॥

समाप्त

श्रीवि	ष्णुपुरा	णान	तगत	श्लाव	तानामकारादिक <u>्र</u> म	गानु	कम:	
					†			
इलोकाः		अंजाः	आध्या०	इस्क्रेब	इस्तेकाः		ओश्चाः	अध्या
	340				अङ्गातसुनीधापत्यम्		P.	₹₹
अक्तोत्स्वतन्यन्याम्		2	X	۷	अचिरादागमिष्यामि	FFI	day	३२
अकारुगर्जितादी च	222	3	9.9	世代	आंचनायस कौत्तेयः	-84	4	34
अकिञ्चनमसम्बन्धम्		3	2.5	53	अच्छेनागन्यलेपेन		3	53
अकृष्टपच्या पृथियी		8	23	40	अच्युतोर्जय तहिन्यं रतम्		A.	43
अकृत्वा पादयोः शीचम्		2	72	3/3	अच्युवोऽभ्यतिष्रणतातस्मात्	44.0	8	63

200

à o

₹4,

28

ÇĢ

4/3

27

28

\$0

33

电影

12.3

34

65

语句

3

24

93

६१

40

では

84

48

83

ţ

90

R

28

२६

30%

₹३

60

24

ŧe.

49

33

38

tq

×

X

6

×

¥.

ч

₹

¥

ŧ

Ę

Ę

3

₹

ş

f,

إيا

¥

Y

X

8

¥

ŧ

ş

3

ş

ş

3

ξ

36

29

75

77

99

99

1/2

ţ

8

6.5

83

4

in.

33

19

33

99

1

Ŗ,

ξ

4

26

22

ξ

99

X

819

28

8

99

23

Ç

86

ij

60

200

ŧ

30

38

45

30

3

৸ঀ

88

被

la,

36

89

50

23

65

484

R.R.

43

18

28

38

20

4

33

24

4

38

13

68

¥

3

*

×

 ${\bf b}_{\underline{b}}$

Ĭ,

Ę

V

ŧ

la,

ŧ

₹

3

₹₹,

23

23

to

26

₹0

33

₹

4

4

38

ζ

Ę

23

88

3

24

28

१५

₹

6

ŧ

119

33

30

88

28

見る

物

5

E,

14

3

अकृता प्रयणे यम

अक्रूरकृतवर्धप्रमुखाक

अक्रुरोऽपि विनिष्कम्य

अकूरः क्रहदयः

अक्षरं तत्परं ब्रह्म

अक्षप्रमागमुभयोः

असीणेषु समस्तेषु

अक्षीणामधेगत्युप्र॰

अक्षेत्रिण्योऽत्र बहुलाः

असिकानगरसम्बद्धाः

अगस्तिग्रिजंडवानलश्च

अगत्वापारमक्षय्यम्

अमये कञ्चणहास

अमिपुतः कुमारस्

अमिहोते हुयते या

अग्निस्युवर्णस्य गुरुः

अप्रेः शीतेन तोयस्य

अपन्यसमादिरूपेण

अग्रन्यसंविधाणायः

अङ्गयेषा त्रयी विष्णोः

अङ्गारकोऽपि शुक्रस्य

अङ्गानि वेदाशस्वारः

अङ्गुष्टादक्षिणाद्धः

अङ्गिरसञ्च सकाशात्

अङ्गलस्याष्ट्रभागोऽपि

अङ्गादनपानसत्तः

अग्रजस्य ते हीयमवनिस्त्वया

अप्रियन्त्रययेक्ष्रतुम्

अग्निबाहुः श्रुविः शुक्रः

अख्रिलजनमध्ये सिहपददर्शनः

अक्रूरागगवृतान्तग्

अक्षव्यं नान्यदाधारम्

अञ्जूरोऽप्युतममणिसंमुद्धृत**ः**

अजबहुलदेवस्तम्

अवमोदातकः

अजनोदसान्यः पुत्रः

अनन्यन्यम्ये विष्यी

अजायत च विप्रोऽसौ

अजीजनसुष्करिष्याम्

अज्ञानं तामस्रो भावः

अज्ञानितमसान्द्रनः

अज्ञातसुरुनामानम्

अणुष्राण्युवपत्री स

अगुप्रायहींग धान्यानि

अत जर्ज प्रवश्यामि

अनश्चेश्वाकनो पविच्याः

अतश्च मान्धात्ः

अतस पुरत्रांशम्

अतिचपलिकता

आतिदुष्टसंद्वरिणः

अतितिशायनं क्रूरम्

अतिविद्यसम्बद्धाः

अतिथियंस्य भग्नाराः

अतिथ्य चागते तय अतिथि तत्र सम्बापम्

अतिवेगितवा कालम्

अतिभीमा समागन्य

अतिविमृतेः

अणोरणीयांसमसत्स्वरूपम्

अगुहरद्वहादतः

अण्डानां तु सहस्राणाम्

अजादशस्थः अञानता कृतमिदम्

अजभीदस्य नहिनी नाम

अज़मोदस्यान्य ऋक्षनामा

अजमीदद्विजमोदपुर-मीदाः

... 8 8 29

अथ जिल्हीपश्रक्ष ।

L v		M. V.	
इरलेकाः ५ १५	अङ्गः अध्याप ्रदस्तेष	ा इस्लेक्ड ्र	असाः अध्याः इस्तोः
a region when is to an in the	Rate 420 364	अच कर्मिस्यवनयम्	20 4d
- Part I American in Lindon	33. 38. 8	अथरीनां स्थन्दनम्	x. 35 56
A London De La Contra	🔞 11/2, 15 (👙)	अथ याद्ववरणस्त्रोतसोनः	··· 小嘴 小腹角 "没有我
अति तानागतानीकः	··· \$ * 3\$: 5 ? 54	अथ दुर्वसोर्वशमनभारय	the Anglish is it
अर्त्वय जागरस्वत्रे .	··· 31: 199 - 186	अथवा कि तदालपैः	A . S. 3d
अते गतस्य भगवान्	··· ৭ এইবা গুৰু	अथवः बाहुन्नः सेतः	··· H = 564 58
अहो सन्दर्धर नाभ्याम्	 ব প্রত্তেজ্যসূত্র 	अथवा कीरवावासाम्	··· 4 \$4. \$5
अते प्रस्पत्य धोअहास्त्री+	2 % === !	अथ तमुसस् चार्क	·· ५ अह. १८
अवेऽर्वेहि ममानीयम्	४ াছ _{ি প্} ৰ	अध हर्व्हापनोऽमे च	··· 3 747 \$ 17 7 78
अतः द्रशेषकसूर्वकृतच्याः	··· April 8 serietts	अवर्वदेदं समुनिः	··· \$ 13 13 1
अतः परं वक्केः	- X 1880-524	अय मुक्के गृहे तस्य	** \$ \$C . XE
अतः सम्बाधने सर्गः	··· २. 3 5 %- ¥	अय दर्जाप न	··· A A ··· \$0
अरः परं महिन्यतस्म्	X= 27 3.8.2	अय पृष्टा पुनएन्डाचीत्	··· XFTE X3
अनं गपा बाटववड्निसम्	·· ५=हार्थः देव ।	अथ वसदागरः	··· * · · · · · · · · · · · · · · · · ·
<i>दर्भनामद्वार</i> म् .	··· A	अय भगवान् पितामहः	w X: See \$1
अस्यास्टबस्युतीक्षणीच्याः	··· \$	अवस्थाभ ततीरम्	** 7 18 18
अल्परिकात सोठमध	and the second second	अधान्यमञ्जूरणकमादाय	m Y MEN - ON
अस्यन्त <i>ि</i> ।मिताङ्गानाम्	·· {*: *** *** ** ** ***	अपाह याजवल्यमञ्	m & 194 6
अत्यानीक्षणत्पिकाणाय	& &	अशह भगवान्	¥ 104. 5¥
अत्र हि राही युवनाश्वस्य	w Str. & week	अधार कृष्णमञ्जूरः	··· 4 151 45. 138
अत्र स्टेंबः	8 0.2 86 .020 3 .	अवागत्य देवराजाः अवीत् -	Am. 5: 80
अत्र जनमसद्द्रसामाम्	ण २ ००≩णक्ष	अधान्तर्जन्यवस्थितः –	8 m 3 1 69
भाग हिं संदो	· ४०,२३ : ः २	अधकूरपक्षीयेभीत्रैः	४ ेर्ड स्ट्र
अत्र च दरशेषः	m ¥viskiriniğa	अधारकूरः स एषः	14 A 21 55 525
अत्र देनासाचा देखाः	m \$5,000,00.28	अधानारिक्षे वापुर्वः	··· Costate is
अनानुसंदारलीको भवति	on Resultation of	अप्रान्तरिक्षे वापुर्यः	er ५ १२८ - २१
h-	४ <i>२१ ः वश्य</i>	अधारान्त्रहिंतो विष	··· 4 \$4 \$6
अञ्चामुनिस्स्योकः	pyra 22 - in 22 -	अधारुमानचि सर्वातानम्	m X - X - 50
अञ्चलतीर्वायोः कृष्य		अधैतामतीक्षमायतः	Y 3 - 31
अधन्ते च स्ताः	- 8 - 8 - 4E	अर्धनान्तरिको जीवगृतकान्	· A \$ 3.23
अमिन भारतं श्रेष्टम्		अर्थनामदन्द्रमेवाधिस्वर्राम्	··· 8/4/8/44 62
A 1 1	3N 2 8 - 8	अर्थमं देवर्षयः	8
A 16 1 A	2 5 5 1 1 7765	अर्थनां स्थमसंख्य	¥ :: ₹₹ ? ₹₹
. 3 3	γ − ξ . ·::ξ	अवैदं र्डव्येताच	43 52 45 - 36
अफेपविद्य वै तेन	ल का १३ का ३५	अर्थनं भगवानाह	X ,479X 71 74.
अद्यं तस्त्र भगवतः .	४ ::- २	अमोपनासादादाय	4 55 . 53
	··· १ १२ विक	अदिबंद सुत्ते विष्णुः	-ा अन्याद ३० ा २४
अद देखेर्गुल्य	४ _{८%} ५९ हाई ६	अदिल्या तु कृतानुष्ठः	SF 05" # 40
LOVE STATE OF THE PARTY OF THE	··· १७	अदीर्बहरूभस्यूलम्	१ ेश्वर वृद
5. A.	ल <i>१</i> १० ≒१६० अस्व	अदु स्पाय ततस्तस्ये	iù ? &&
The state of the s	2 20	કાર્ણ: વુલ્પેરસ્ત્રીપિ:	white a constant
and the Committee of th	80 86	अहा में सफले जन्म	40 3
and the same of the same of the	2 200	अध्यापमपूर्णिकान्यसम्	પ્રાકેષ્ટ્રાફ્ય
अक्ष किरणीयमध्य	an week to be a second	असेय से स्थापिकालकाराक	் கூறு குறித்து சென்ற நிரைப்படுத்

··· ४ ९ १० अनैय ते व्यत्मेकतञावत्वाः

17 TOTAL 24 ACC

40444	of strain of some Section	्दरश्यका	अस्तिः अध्यक् इस्तेन
अर्धनं देव ऋडेऽयम्	m & man to the second	अनुत्य शिसी चेव	\$ 1. ~ \$ 2.0 0. Eq.
अभावितपुरदृद्द्	6 33 8 43 60	अनुदिननुरुवसेहरू	8 0 5 5 7 45 5
अधनेवर्गी न तेहास्ताम्	m. 2 32 - 32 - 286	अमुदिनं चोरपोगतः	8 5° 5\$
अपशोध्यं च हे शीहाः	··· / \$ 124	अनुषानिस्त्रान्य	4 - 73 - 30
अधिनीपकृष्णत् ।	··· 8 54 18	अनुसर्गन वैदिस्टब्स्	- ५ विष्ट्रिक विष्
अभौमुखे वें केवने	··· Bir 'S' week	अनुमुच्चे ततस्तो तु	··· 6. 50 . 50
अपः विश्वेत्रपद्द्यने	··· \$ PRESE - ESPE	अनुभूतमितान्यस्थिन्	··· Since Contact
उत्पष्टरत्यसः च	A \$4 \$10	अन्तनेत्र व्यवसारक्रवहेतुः	- B. 198 11 168
अनन्यचेतसम्बस्य 🐃	··· \$ 2. \$ 2. 10	अनेन दुष्टकरिना	પ ેલ્લ ે સ્વ
अननारं च तुर्यसुम्		अनेकनगराहर्काम्	10 g 10 15 in 19
अनम्बर्ध्य ऋषीनीयान्	· 3/2 16 2/6 64.	असोगनकदुन्दुपिः	R 68 68
अवसर च सः	· × 10 3 34	अस्तर्वले यदाश्चम्	q 49 e
अनरण्यासः पृषदश्चः	\Anna 1. 18, 68.	अन्तर्दर्भ गते तस्मिन्	··· (C) Store ye
अनसङ्गे इसी चूरो	4 "\$3 " r 68"	असर्वरूपडमद्यानी	
अनन्तरं हरेड्डाक्र्यम्	ल्ला ्राम्यक् रिक्स है,	अन्तदृद्ध्यामाचनायत्	··· A part was the
अनुसरं चादोतः	- A. SR. 68	अन्तःपुराणा मञ्जन	··· = अं, अवृद्धे स्थानवृद्धे
अनन्तरं च सहम्बद्	> X****{4*******	সন্মান্তন্তন্ত্র ধান্ যা:	જાં ફિલ્લા લક્ષ્ય
	\$ \$ \$\$ 10 5 5 6 5	अन्तः पुर निपतितम्	on (दिल्लाहरू)
अनमित्रस्थान्त्रये 🕆	A MASSING	अन्बकारीकृते खेके	The state of the same
<i>মূন নাং</i> খাবিস্যুক্ত	··· & 7 88 7 33	अञ्चववर्षकृते हर्गेह	াছ শাস্ত বুলাই ও স্কৃত্
अनन्तरं च तैरुनम्	··· 5° S T S FET GR.	अस्यं तम इत्याज्ञानम्	६ ५ 8२
अगन्तरं च तेगापि	Year Y're 481	अभवस्यकान्युदानेश	2 1880
अनसूचा तथेबात्रेः 🕟	··· 2 20	अप्रामश्च समृद्धृत्य	& ११% हैं
अनावृद्धिभयप्रायाः 🖰	··· Banta kirkur an	अभेन था यवाशकता	··· व १४ : २१४
अनावृष्टराविसम्पर्कात्	் பட தின்ற ஆற்கள ் த	अनं बलाय में भूते :	- अक्टा इंस्टाउक १ ४
अन्यवीस्समसीम् 🧸	ஏ ுவுடின்னது	अन्यजन्यकृतीः पुण्येः	- Wa arabayaa
अनात्मनात्ममुद्धिया	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	अन्यभा सकता स्रोकाः	- 8 66- 13
असादि भीगवास्त्रास्य	কুম্পোপ্তা - গ্রি আমুলা ত্র	अन्यामै कन्यस्त्रमिदम्	··· 8 ·· 8 ·· 18
अनार्याधतगोबिन्देः ।	··· १० लहर मान ४३	अन्यानध्यन्यपायण्डः	··· 3 (2) 28
अनाकरशमसंस्परीम्	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	अन्यासां चैंव भार्यामान्	m o central constant
अनामकेदम ुन्स ्	कर्मा करते होता पर्देश । अस्त्रिक्	अन्यश्च भार्याः कृष्णस्य	က ရဲ ာရိတ္ကာလွန ဲ
अकदिनध्यात्तनगम्	· * * * *** *** ****	अन्याश्च रातद्वास्तत्र	5 8 EE
अनाहो नस्मार्थक	5 a 68 48 458	अन्याय एवं यातहेतुः	·· ४ २४ ८३
अनागच्छति तस्मिन्त्रसेनः	· 7 1200 134	अन्यानथ सङ्खीयान्	4 5 28
अनाळातेव साधुत्यहेतुः	¥ 3.2€ ±0 €€	अन्य क्वांति भी गोपः	q 3 3 3 3 3 3 3 3 4 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5
अनस्येपस्यरूपालन ्	··· 42 16 48	अन्यः सहस्रदासाय	- 3 84
अन्सिक्के प्रीय स्थितन	· 3/2 \$4.7% \$5	अन्यूनानीतिनिक्तस्त्र	m 2 1-18 (1-18)
अनिकेन्द्रः हान्द्रस्यः	- m \$45.124 F. 123	সম্পূরভাগেন্ <i>হি</i> ল	m 4 Library 86
अनिन्धं भक्ष्येदिस्यम्	- अध्याद्द्रभागेत्रेष्ट्	अनोती धैव अनुसाम्	18 - 13 - 18
अगिलस्य दिला भार्यो	2 24 218	अन्ये च ए व्हवासमात्म्याः	m 8% 96 88
अनिकानने च मधुरेकुरती	··· X START -XC	असेने सापते स्वेन	E 4- 33
अगिरुद्धी (मे.उ.सः	·· दश्य ३३% ६ ३५ ६	अन्ये तु पुरुषञ्चात्र	E G G G G G G G
अनुसं देडि प्रकार्	** *** *** ***	अन्देवो हुईंगे रखरम्	र १२ ≅ ४७
असुरिक्दो इसि केनेदुक्	en talkenikary nake	अन्देश्वं यो न प्राप्ति	
9. 4.	4 - 4	The second second	1

(863)

असाः अध्याः क्ले

े**इस्प्रेक्शः** सः िसः

न **इंग्लेक्ट**ि - ि

अंकाः अध्या॰ वर्ज्ञे॰

क्षिक प्र[ा]ेर्ष

· ंइस्प्रेक् शः ^{स्ट}	এই য়া: এখ্যা<ী হস্ত	्र क्रिकेट विकास करते हैं। इस्क्रीक्ट	अस्ताः अस्याः वस्तः
अनेऽपि सस्के। नृषः पृतिकाम्	૪ ° ⋾₹ °°°'₫ζ	अभिविषय सुर्व औरम्	\$ 1. 1. 6 1. 1. 1. 26
अन्योन्द्रभू बुस्ते सर्वे	40 26 miles.	अधिससस्या स्तेनः	m \$ 24 \$
अगर्थ कृतिकानां तु	१ १५ ११६	अभीष्टा सर्वदा यस	4 - 74 - 4
अस्यज्ञ्यस्य सन्यासम्	8 8	अमृतक्तस् चैतेषु	\$ 56 75
अयसरियी न तेखे वै	··· quality of the	अभूडिदेखेऽस्य पितेति वैदेहः	··· * · · · · · · · · · · · · · · · · ·
अपसम्बं न गण्डेच ।	··· के हरें लेसे	आधार्षताचि सुद्धवा	··· \$ 55 45
अपदन्ति तमो यश 🦠	ह - 4 - 77	अप्रस्कः श्रम्भान्यापः	5 6 40
अयध्यसाचपुः सोऽपि	··· र १३/ ४१	अनरेषु मनावज्ञा	q 48 1 q
अवश्चयिना झाम्याम्	\$ £ \$4	अन्बद्धदिन्द्रस्तोमेन	··· 8 6 \$\$
अस्पराहे ज्यातीते तु	··· doù (a Sigan) de	अन्यवास्या गदा पुष्ये	~ 88 g ···
अपामपि नुणो यहा	······································	अन्त्रवारक यदा नेष	- \$ A
अस्पापे तथ पानैश्च	- 2 2 2 m	अभिताभा भूतस्या	3 6 56
अस्पास्य सा तु गन्धर्वान्	4 \$2	अमूष्टं जायते मृष्टम्	२ १५ २८
अपि थन्यः कुले जागात्	३ ेश्वर ३२	अन्तरसदिणी दिस्ये	4 38 88
अपि ते परमा तृतिः	9 80 . 40	अन्बरीपमिवाभाति	₩ € 3 79
अपि स्थासि राजेन्द्र	3 YC GH	अन्य यस्त्रमिदं प्रास्त	6 68 50
ऑप न्सस कुले जायात्	··· 3 298 100 44	अन्तरीयसः मान्यातृतस्यस्य	··· A the billion of
अपि मस्ते भन्निष्यन्ति	- 3 1 85 1 18C	अन्बरीवस्थापि	४ 🗦 😉 .
अपिक्रया तमोः करमग्	3 11480 1186	अच्य अध्यपत्र वयम्	··· A 3
अरपुत्रा तस्य सा पत्नी	··· A \$4. 58.	अध्यमस्योतस्यादी	"II. 6 5 5 5 5 4C
अपुत्रा प्रागियं विष्णुम्	··· 6. 6. 6. 6.	अवनेष भूने प्रशः	··· 4 6 6
उत्पुण्यपुर्ग्योपरमे	72 C 800	अवगुन्योऽस्मकृत्यारुवानोश्वयः	A 2 - CR
अपुजस्य च पृथुकः	K (4. 40)	अवस्मान् कार्यः	" LANGE LOW & NO 60
अपूर्वमित्रहोत्रं च	··· 3 22 87	अयमर्ताव दुरात्मा संत्राजित्	··· 8 65 85
अपृथन्यमं वरणास्ते ।	6 L. 68	अवस्थि च यहादवत्तरम्	y 28 69£
अप्यत्र वसी मवत्यः सुखम्	2 2 5 503	अधनेके उन्होंने धन्यी	4 36 36 PA
अध्येष मां कंसपरिप्रहेण	··· 4 20 32	अयुजो भोजयेत् व्यमम्	3 63 60
अध्येव पृष्टे मम इस्तवंचम्	५ १७ २८	अर्थ कृष्णन्य पीत्रक्ते	५ ३३ २७
अञ्चेतेऽस्मत्युद्धाः करुभाषिणः	. A . A . S. S. S. S. S.	अयं हि वंसी अंतबल्यरक्रमः	`\$ £
अध्यानेन च विजिह्येन्द्रम्	A. 6. 18	अर्थ स पुरुषेत्कृष्टः	A
अप्रतिसमस्य कण्यः	" A Che	अर्थ हि भगवान्	·· × 24 60
अप्रतिरमस्यापरः 🦯	8 38 m S	अमं च दास्य इस्लेफ	··· 8: 50 . \$5
अंत्राणवत्तु स्वस्या रह	··· \$ IN BUTTERS	अने चास्य महाबाहुः	··· of Sc. 85
अभियेण तु तान्द्रम्चा	Suranting	अप स कथाते प्रारी	of 50 26.
अप्सु तरिमञ्जूष्ठेराते 🦠	4 P. PO P.	अयं हि सर्वत्मेकस्य	··· 4 50 40
अच्ये च पूर्ण	The Roll of the Party of the Pa	अर्थं समस्तजगतः	4 69 60
अभवन्दनुपुत्रांश		अरबोऽङ्ख्यममृतम्	5 58 83
अभवे सर्वाभूतेभ्यः 🕛	\$ 4 26	अर्थितायो हत्तीयः	\$ 450 J. 650 38
अभवप्रगलमीनारणमेव	8 38 84	अस्तके नुपश्रेष	१००१३ व्याह्म
अभिवित्य गाना मानवात्	س در ۱۳۶۹ استار و در	अरिष्टी धेनुकः केली	··· o 6 58
अभिद्रुप च तं वारिभः	··· A . Referrence	अरिष्टी धेनुकः केशी	··· 1 50 80
अभिक्षिति दाष्पत्यः	x 7x 6€	असम्बद्धी बसुपीमः	१ १५ १०५
mother marine and return to the	- 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1	Committee of the Commit	a triffia a 100 (a 5 6)

अस्तीदे नहां भएन्

अक्रपरसम्बद्धारीम् 🐇

m K. Sc. Ac.

अधियनोस्तरायां परिक्षीणेषु

अभिविक्ती यहा शब्ये

(858)

	(8	60)	
इलोकी क	अन्ताः अरुपान् - इस्तेन	ा इलेका क १५८	अज्ञाः अध्यक् सर्वे
अर्जन्येय जि तस्याधाः	ere gan transplace	अविशिक्तोऽस्पतिपरः	med ap 🕷 is op 🎖 is strikk.
आचीर्गसंख्ते तस्पन्	&	अविधोऽयं स्या पूरे	··· With the state of the state
अर्जनसन्तरुष्यम्	·· 8 80 85	अधिदामहिक् यमनः	··· 42 4355558
अर्जुनार्थे त्यहं सर्वान्	··· 4 12 more	गामिगुक्ते महाक्षेत्रे	··· ५ हेक्क हैं हैं है सह पहेंच्
अर्जुनोऽपि तदान्त्रिय	man to a decomposit	अश्रीरजोऽनुगमनम् ः	··· ৸ ৄ ইংলা ইও
अर्थो विन्दृरियं जानी	~ 1 6 26	अध्यक्त कारण यस्त्	··· \$7 = 7:5 = 48
अर्थनारोतस्यपुः	· tous 9: 4423	अव्यक्तेनावृती असन्	··· I Halfabelde
अर्थमा मुख्युक्षेत्र	m 2 Kolespie	अञ्च्यनीयरस्ति .	Kylis Hamadt
अश्रीक्रसेलासु व्याधतः	··· i tyrka brak	अइन्द्रनिष्येरे तत्	भूमा नेवामा ६८
अर्ह्यन पर्मधेतं स	Commence Street	अधारतियाहती प्रेशन्	···· 美国商業的實際
अर्हतेतं गद्याधर्मम्	· 3 (35 n p 33	अञ्चभमतिस्सात्रपतिस्ताः	···
असम्बद्धाः सम्बद्धाः ।	m \$ my 8 m 28	अञ्जूषि प्रस्तरे सुधः	६ क्षेप्रकार्व १९
अलमसम्बेनसस्यूप्रहेग	··· अक्षुत्व के अवस् (असेक्पर्करलेख्	··· \$ 350.88 30.886
अस्त्रतच्यायाज्ञीतिः	२ १२ २४	अक्षेषभूभृतः पूर्वन्	·· १३ का १८ करने
अरुप्तुं गृजनं सैत	8, 88	<u> এইজিক্সবাধাকে</u>	··· K = 800 = 60
अस्त ते बोडपर पूर्य	··· 4.5 \$4 - 48	अधीयात-पर्या पूजा	··· 5- 22 - 60
अर्रु इस्त प्रवासेन 🕝	d: 30 m / 63 .	अद्गकस्य मुल्को नाम	*** - 1800 - 28 1012 / 18
अलं प्रासेन गोपालाः	··· ષ १૯ ા ાત	अधिनी वसवकेष	The Republic of the State of th
अलं निशाधीरीयीः	··· torrito ito ito	अष्टमोऽनुम्द्रः सर्गः	··· Best A sub &
अरु मिन्दोज्हांमम् वृत्रोदि	X 478 38	अष्टाकोतिस्तरसाणि .	\$ in 16 198
अस्प्रसादा पुरुकोषाः	2 78 × 108	अप्रद्वितस्त्रकारीयः	- Pro 2. Proc. 9
अस्पप्रजी वृध्वस्तिहाः	明明 横四、横上 编辑 3	अञ्चल काञ्चनः श्रीमतन्	- ? mile = 100
अस्पोधादानं चारपातं शरमम्	·· 8 (- \$3 \$40	अद्यन्तिः पान्द्ररिर्द्धतः	9 37 m 355
अवतीर्याय गुरुद्वात्	42	अष्टाचि स्थित्वस्यो थेः	Projective 6 m
अवस्यास्य देवेन्द्रः	··· 4. 30 , 383 ,	अञ्चित्राह्योपेनम्	
अवरुद्ध स नागेन्द्रक	ու կայֆիլայայկ	अएक्ट: पुराविष:	
अवतार्य भग्नस्यूर्वम्	β (, β (α) β β γ β (α)	अही दावसहरकोग .	······································
अवरीयं च तत्रायम्	··· Wind to the	अपूर्व महिल्यः क्रिक्ताः	- ichte verte in priet
अवशोध च मण्डात्त्र	3 -30 3 8	अस्त्वरतिगृतीता हु	on Spr & House &C
अवदाय वज्रसाख	~ 4 \$6 , #30 ;	असहनी तुसा भक्	 প্ৰেৰীজ্ঞানী প্ৰকৃত্যৰী
अताप्रालमहादूषः	·· 3 5 9 6 19 14	असमधीऽनदानसः ।	··· \$ *** \$\$ \$ 12.30
अवगहिरपः पूर्वम्	··· \$ - 45 · 54	असदबीहिणेयस	m a residente
अवयो व सम्बद्धाः	W. 1999.	असन्वकरणे दोषः	\$ 4 3 A 20 Ho \$\$
अवरोधा वराकेय	··· \$ *** \$ *** *** ***	असारतंसारविवतनेषु	··· Angelia per 90
अवश्रापो महापाणिः	- 25 (6) 47 × 25	अस्तवर्धि हिरण्यपात्रे	R Killian AV
द्यविन्द्रियः यभाप्त	& MG. 175 K8?	अस्तरापि प्रतिस्होद्धाद्धारमञ्ज	X X 44
अवन्य २ ११३ वस्य	·· 4 - 2 - 24	असःवय्यनः स्टेबियतेन्तरवयनः	x 13 50
अवकाशमदीयागाम्	1 3A 25	अस्मावण्याह ्	¥ 19.83 =10.1.64
अवादका चगुश्रान्ये	··· t storing 6	असम्बद्धि देखाँपिवेंटबादः	Water County Sk
अन्यातकानतन्त्रस्य	9,5 5 4 - 1,5 4,	अस्ति। अथन यहि	T 18 - 18 - 134
अवापुरतापमस्पर्यम्	ய ஆறு ர்≎ வந்தி வ	अस्त्रभूषणसंस्थानः	* 18 19 19 8 8 19 19 19 19 19 19 19 19 19 19 19 19 19
ऑक्कराय जुदाय	··· Suint Lage	शिक्षणां साधितां च	५ ाविद्यालिक
अविकासितं सुदाम्	··· Applications	अस्तानभोदिश्वा नामिः	in 18 6. 215 miles
अविकारं स ग्रहभुक्ता	** 1034 (p. 1945)	अक्टलशी पूर्व भूक्त	··· : \$490\$\$\$490\$\$\$

(860)

··· ५ : २४% ः १३ । आस्टानैहाव्यपारवानैः

, अ**्रक्लिम**्याः अस्

आक्याहि ने समयमिति । । । १४ जन्म १ व । १४ र

अंजाः अध्याः ' इत्येः

··· 电流 (高高) (高高)

अंशाः अध्याः रलोः

ें **एकिका** कर

अस्त्रतंश्रयहारे श्रयम्

अस्मकोशमयहस्त

अस्तवशासवद्यसन्	# 1 -3xx 22/4	अस्थानशायुपारयानः	algittinghingh
अस्माभिको भवतः	10 4 1 3 All 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	आगण्य है राजन्	300 5 50 5 45C
अस्मि-क्सति दुष्टात्मा	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·	अग्रामनश्रवणसम्बन्तरम्	· Start Control of the second
અસ્મિ-વયસિ પુત્રો વે	··· ५० भ्यक्षाल्यक्षिक	आसताय बसिष्ठाय :	… "祝您" "发鱼"字诗篇
अरपाकूरस्य पिता धफलकः	199 5 58 8 ···	अराज्यत हुते देशः	··· १ ें इंस्ट्र
अस्वे स्विगति गावीका	4 - Bans to	आगमोर्ल्स विवेक्टर	- ६ १८) ५ ५ ४१ ६१
अडङ्चृतक अत्रम्यानाः	8 patern page	आगारक्षेत्र सित्रापः	··· २ १८७० व्हितंत्र अ २३
अहन्यद्वन्यनुष्टानम्	·· १ ६००% २८	आगापियुगे सूर्यवेशः	A 250.
अहन्यहन्यशाचार्यः ः	\$ \$\$17 = \$\$	अजोधशार्भवार्ध	fa-Soferisae
अष्टमेवाधायो नित्यः	··· 80 = 89 = 30CE	অৱধন্তৰ বঁথ	}\$# 4
आर्मनस्काचितिन धात्रा	··· ··· ··· ··························	्राज्यूषितं तत्त्वहस्य -	··· ५ हमाई५माला ३ २
अष्टमप्यदिश्वनुसम्	·· 4 11 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4	अज़ीयो याः परस्त्रेपाम्	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
अहमत्यन्तिषयपौ	५ रुड ४६	आशापूर्व च बाँदरम्	··· 40 5 31 50 52.
आहेरसहदेशदोपेषु 🕝	or 7 3300 (2)	अताङस्यनः कोपात्	··· Parabolish see
अही क्षाप्त परं तेजः	··· 4 * 28 * 480	आतामा हि अवस्यापः	··· રાતાં કઢાળ તર્ય
अहोऽस्य तपमो केपैम्	··· 61 (2.64 2.2.164.	अत्मच्छ्यां ररुच्छयाम्	3 histerink 166
अक्षेराञ्चल पायम्	··· १ २० ा३५:	असानोऽधिगतज्ञानः	·
अहारप्रार्द्धपत्रास्तु	·· 5	असामायाययी दिल्याम्	··· ६ ५०% ४ ४%;
अहारात्र स्थानस्थानः	\$ 300 City \$4.00	अस्य पार्व नयस्थनम्	··· হ জিডেলেনাইক
अहोगी च कुर्गान्गुङ्के	3 28 48	आत्मप्रवलसापेका	. हरायुक्त के काम्ब्रु ३१
अहो चन्योऽयनीदृशम्	8 ye-y-168.	आधानमस्य नगरः	१ क्ष्मिक के किया
अही में मोहस्य	··· Y outstandig	अस्मातन्देडगुण्यत्	५ ०% १९% १७३ ३९
अहो गोपीजनस्यास्य	ም እና ዓ በ የሪ ተማ ጀየሪ ፣	आत्मा सुद्धाऽशरः सन्तः	··· ₹ @@\$\$\? \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \
अहो प्रतिष्ठ सम्बद्धियम् ।	ल ५ : वेट लाजंदर	अन्ता ध्येयः सन्त भूप	··· २०वर्षा (४८०० वर्ष १६८
अहोरात्र पितृणां तु	& 4	आदते वस्पनिये तु	··· \$==144 : 1448
अहर्भवति वसापि	··· 2 100 Cogn 180.	आदाय कृष्णं सम्बद्धाः	··· ५ अध्या अध्या
अहं हरि सर्वमिदं जतादीः	··· ধা গ্ৰহণ চাক্ত	आदान्य वस्तुदेवीअपि	442/2014 445 12 43
अहर तमें य तथान्ये च	7 m 18 m 64	आदाहनायाँयुभादिः	··· ३ .१३० प्राव्ह
अहं चरित्रापि तदासमेऽथे	X 45 \$60	अदित्या मस्तरमाध्याः	··· John Spirit 60
अहं रामध मधुरुम्	4, 182-13-185	आदित्यविष्ठसृती राहुः	·· २ हे कि १२ ४ प्रम २२
अहं हानिदाया मृत्युम्		आदित्यवसुरुद्राधाः	••• कुल्लाई श्रेष्ठ हर ३१
अहं गोल्पिक्येयम्	& 10 . goe;	अस्यमाजगर्वाताम् ः	··· १००१३३००४०
	आर अनुस्तारा अनुस्तार	अब्रह्म बृत्तयुगे सर्गः	··· Energenische
आबार-छम् अं सक्तिले.	··· 4 1 35 - WE	आयो यहपुमानीख्यः	··· १ जार्ज्यकाल दश
आकाशवायुतेर्वासि	ை ஜ ா∳ಕ ,≂ുಟ್ರ,	आयो वेदशहुष्यदः	3点が多めになるが、
आवारागद्वासिक्सम्	··· २ ः २ इन्हर्भेद्		··· Antipological Compa
आकाशसम्बद्धः	··· २ १२ हे रू		* * FERRALE Z*
সাহারত্বক্রেক্ত সিক্তরত	क ६ विकास है है।	अवबारभूतं विश्वस्य	··· Kxidasteder
आकारां चैवः भूतादिः	** 6 PENSON	आधारः शिशुभारस्यः	+ Friterie
आकृष्य राङ्गस्यवेण	ய - ப ோர்த்தான் தல		ल्य २ हर्शक्ष कर २३
आकृष्य च महास्तम्भम्	- 4	अवध्यातिस्थादि मैंत्रेय	- projectivites
आक्रान्तः पर्वतः कस्मात्	一 (第1746)東東京の大学(第1		m Riving Charles
आएपातं च डनैस्तेपान्	-m - 4 44 34		··· PERSON
in the same of	F 37 11	3, 3	

	(%	ξξ)	
ंश्वाका १५८ वर्ष	अंसः अध्यक्षः इस्त्रे॰	बलोकाः	এরা: এখন হন্ত
आतम्य चापि हस्ताप्याम्	··· ACCOUNT WAYNES	आश्रित्य तमसो गृहिम्	क्षेत्र इस्मान्ड
आनकदुन्दुनिरंत्तकतानीप	ाः क्षेत्रसाक्ष्याको ≈ २६	आसमं पैप जगाह	··· 4 78 28
आनर्तकमा परमधार्गिकः	४ लिइनेस्टिइ	आसम्बे हि कहिन	Y THE SULL FINE
अतर्वस्थापि रवतनागः जुनः	THE STREET STREET	असो दिनीत तिरुरुग्	··· Sames & works
अभिन्ये च पुनः संज्ञाम्	्र विश्वतिक्षाति है ···	अवस्कोटपामास तदा	" de la Comercia
अनीस्त्रीकपासानी:	in \$ 75 \$ 600 \$\$	अबह येने कृतवर्धा	X 1128 1. 68
आनीय सहिता देखेः	in property to the	अब्द धैन्त्रपतिपापे	* Killen 6: 1 - 54
आनीय चोष्रसेनाय 🖰 💎	५ अ व्ह ेट १४५ ७ १	आह च भगवान्	·····································
अलीयमञ्जापीरः 🐃	५ वटका व्यव	आह चार्चकी	8 act 2 mest 20
आन्वोदिसको प्रपी वार्ता	· * * H.578 * * T. * * * * * * * * * * * * * * * *	अह न गुज	··· A protocontes.
आर्लिक्षको प्रयो साली	4 7 7 7 6	अपदारः फलमूखानि	. 10 (18 11 11 ZE
आपस्तरिमरे चास्य 🦟	6 m69 Xd.	आहुक्तरा देवकोयसेनौ	18 milk mingh
आवस्य पुत्री वैतन्द्रः	व्यानिहरू रशह	आहुनद्वकरियः सुधाः	··· Sealth grant
अध्यक्षीननः सूर्यम्	- 3mile 1.85		े हत केश्माद्वायक
आपो भूतम सोमञ्ज	2 24. 420.	इस्वाकुतनयो यः	- A Tarkenton
आयो नाग इति घोतसः	64 K. 1. 1. E. 1	इक्ष्यामुख मृग्छिय	··· \$. 6. kill 95.
आयो बसन्ति व पूर्वम्	··· Be Come Room 18	इक्स्यापुनुस्त्रचार्या वसिष्ठः	Y 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
आप्यः प्रसुरा गन्यश्च	- 3 June 1 50	इक्ष्वापुरमञ्जूमा भा त्ः	X 1 48 1 585
आभूतसंहतं रूकनः(is 2 2 5 - 60	इस्यानूम्बागरे वैशः	··· * 5.555 5.55
आर्थान्स्त्रह कृष्णीति		इच्छा श्रीभगवान्त्रायः	6 LZ So.
आमृत्युतो नव मनोरधान्त्रम्	** A BAND IE \$56.	इन्यते नत्र भगवान्	St. 36 - 16
आयतिनियांतसेय	4 thanks accepted	इतरस्यनुदिनम्	A
आयर्थे च जरा नाम्	··· LANGONNES	श्रामसम्बद्धान्यय	··· 4 86 11 11 36
अन्यनं राहनूस्त्रम् ः	EC 20 3 184	इति विक्रीगामजस्य यस्य स्टब्स्	··· \$ \$ \$\$
आग्रासी भवत्वेगीहम्	··· (6, 50 1155.	इति संसमस्य सार्कः	म् वावादिकः दिन
आयान्तं दैत्यकुषभम्	·· 4 188 88	इति कृत्वा मति कृत्यः	4 65 66
आयुर्वेदी धनुर्वेदः	··· \$454 \$24 .34.	इति योगकुभाराणाम्	4 P. B. B. B.
अस्त्यक्षेष् निर्माशः	\$ confer on 6	इति गोपीय व ेश्रुत्व	^{१००} द्धाः 😘 🚈 💱
आस्व्यस्यात्मकः 🥫	- 8 33 4 R	इति संस्मारितः कृष्णः	" dugate + 1. 2. 2.
आसियतास फेलिन्यत्	··· Surings and S	इति संस्मारिनो विद्य	भ्योगसम्बद्धाः स्टब्स्योग ३४
आयध्यः कवितो देवः	in the first the	इति श्रुखा हरेजीक्यम्	4 57 53 1005 53
आराध्य वरदे विष्णुम्	··· 5 2 58 2 58	इति सक्षिपय गोविन्दः	··· 4 - 45 - 46
अराधनाव स्त्रेकानाम्	3 60 65	इति श्रुत्व स्थिते कृत्व	4 96 13
अस्यधिती यद्भाग्यान्	# 46. All	इति तस्य प्रचः शुला 🧈	4 7e 87
आग्रधयनमहादेवाम्	··· de la de la companya del companya del companya de la companya	इति नामविश्वयिकः	··· A THE STATE SE
आराध्य खाममीप्सची	··· 电子传统 图像名	इति गृह्ना महि सर्वे	" Human Sal
आर्थाः तस्त्रया विष्णुः	fringedang 25.	इतिहासस्पराणे च	m Contraction April 1985
अवस्त्रीयकं नामम्	4 28 × 24	इति प्रसूर्ति कृष्णीन म्	- 8 gibble all de
आस्त्रा में संबंध करणः	··· ५ का ३ ﴿ वेशावद	इति अध्योगयनम्	8 . 25 2 S.
आर्थनरूभद्रेगापि :	··· X 64 bria	इति पत्था स्बद्धेस्यु	··· \$. \$\$. \$\$0
आपेशक कुरशक्षेत्र ः	- 5 101 \$ 1. 160 1	इति निवभ्द्रशासनाय देकः	3 Que Set
आलेकपर्दिमधान्यसम्	··· English Stage St.	इति यमवन्त्रं भिक्षाय पासी	· Butter
अञ्चलको च सर्वेष्ट्रम्	35 F 35	इति शस्त्रान्तम्हरूगताः	3 € 28
अश्रपशेतमी इस 🐇	হ লাগড় লিগছত	इति पूर्व असिष्ठेन	··· Margins, justo.

अशाः अध्या~ः रहते भ

··· ६ ः हं ः १४६.

ें **रस्त्रेका**ः अभ

इत्युक्ता प्रयुक्षे विप्रः

इत्दुदीस्तियाक्रण्यं 🦈

इति सकलविभूत्यवासिहेतुः

्राष्ट्रांबाः अर

इत्युक्तः सकले मात्रे

अंशाः अध्याः १२% -

9 36 98

५ वर १३

··· 6 48 48

अस सक्ताअर्थूलनमाम्बद्धः	6 . 4 . 451	इस्तुकः सकल्यात	Berne tide Like
इति विज्ञायमाने अप	… ૄ શકે વર્ષ	इत्युक्तास्ते ततः सर्पाः	ार्हा हो होता है। अपने का अपने किया विकास
इति शुला स दैत्येन्द्रः	··· 6 = 64 ·· 50	इस्तुबस्या सोऽभवन्त्रीनी	5 62 84
इति सवाइ भरतः	··· 63 60	इत्युक्तस्तेन ते कुन्छः	5 1 48 33
इति भरतनरेन्द्रस्करवृतभ्	··· २ अवस्थाः अस्य	इत्युरामकोन ते सर्थे	··· \$ 55 85 28
इहीरितलेन स राजवर्यः	२ःः १६≒ः ३४४	इत्युक्त्या से सती गत्वा	Jack 48 124 28
इतीरितोऽसी कमलोद्धयेन	Aud 564 5168	इत्युक्तवान्तर्राधे तेथः	··· १८०१८ विकास
इतः स्वर्गेश मोश्रश्च	··· 4 14 \$ *** 4	इत्युक्तवान्तर्दधे विष्णुः	··· 60 40 0 66
इत्यमुग्मार्गय तेनु	··· 3 245 33	इत्युक्ते मौसिन भूवः	··· A LEAST STATE X
इस्यं च पुत्रपीक्षेतु 🐇	··· & ··· peq	इल्युक्तव शेन सा पत्नी	er stagether to bet
इस्य सञ्जितस्यकेत	" 6 5 44 6 Lang 36	इत्युक्तः सहस्रास्द्राः	- 4 78 87
इत्यं क्दन्ययी जिष्णुः	५ ^{२८} इ८ चर ्व ४	इस्पुकः राज्यरं तस्य	27 78 784
इत्यं विश्ववितो रेगे	··· ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡ ፡፡	इत्युत्तने स्रीपशस्त्रनि	··· Branch gires
इस्ये पुरस्त्रीलोकला	··· 4 9c 63	इत्युचार्य नसे दद्यात्	वत्यार द्वारा प्रश्रीता व १५६
इ र्थ पुना प्रधान च	\$ 1. 35 1 1 WK	रस्तुपार्य सहस्रहाः	··· de la constante la constant
इत्ये चिरणते तस्मिः	··· २ १३ च २८	इत्युक्ती भगवासोम्यः	··· \$ 500 to 500 88
इस्यं विविच्छा बद्ध्या च	on the same of the	इत्युत्ताः प्रमिषत्यैनम्	··· । इंक्ट्रेस्ट्रिक इन्य प्रद
इत्यं सङ्कित्तर्यान्यण्युम्	५ १७ भारत	इत्युवार्यस्तिवाम्	" *p 10 \$ 140 \$8
इस्य स्तुतसादा रोन	··· 4 Property 12	इत्पृक्ता प्रययी सप्र	व्यापाद्याम् व्यक्त
इत्यनेकान्तवादं च	 3 লে १८% ল १३ 	इरपुक्तवा प्रचयी देवी	··· Pute 15 11 1166
इत्यन्ते वचससोपाम्	का १ कि कि	इत्युक्ताः प्रययुगीयाः	दू हर्नाम्युरेन व्यक्ति
इत्याद्धाःसादस्येन	an the state of	इत्युक्ते तामिताशस्य	क्षा अध्यक्ष विदेव
इत्याद्रमास्तवस्तेन	110 6 2 60 2 35	इत्युक्ता सर्परजे तम्	<i>दार्च ले</i> डानुम ्दि
इस्याकण्यं जनस्तस्य	\$ \\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\	इस्पुक्तमस्तेन वे गोपः	··· Edgade benade
हलाह भगवानीतिः	— ব্যাহিপ্রাপ্ত বি	इस्तः सम्परिष्ठन्य	ब्लाकाहर वृद्ध होते । अञ्चल
इस्थान: एर्य सामस्तदेवै:	द <u>्</u> री शुद्धाः	इस्पुलन्यारफोट्य गोविन्दः	··· 6 34 5 6 5 5 5
इत्याका <u>न्यसम</u> ्बाभिधाम	A 3 4 5 1 1655	इत्युक्त्या चीदयागास 💎	५ अव्यासिक
इत्यात्मेर् <u>णाकोपकल</u> ुषितः	X 84 36	इत्युक्ता भगवास्तूष्णीन्	··· (c) Elphinichel
इत्याकण्यांपरस्त्रधस्य	··· ** ** ** ** ** ** ** ** ** ** ** **	इत्युक्ता प्रविवेद्धथ	64 65
इत्याकण्यं समुत्युट्य	··· 4	इत्युक्तां तद्गुहात्कृष्णः	१६७० ११२ । ११
इत्याकण्यं द्वरायक्यम्	m A . S . 56	इत्युक्तसंबेऽप्रजेनाय	··· ५ विक्षेत्र ३६
इत्यादाण्यासुरान्कंतः	··· Production	इत्युक्त्याय प्रयन्तोभी	A 38 34 E
इत्याश्वस्य विमुक्ता च	··· મુખ્યાસાય મુક્ક	इत्युक्ता सोऽसंग्रहायुम्	५ च २१ वर्ष
इस्मारनेष्य स दुहाल्या	··· dans fitting to	इस्पुतः पथमी गला	··· Achter See
इस्याज्ञात्रक्षद्राकृतः ।	h . 4/2 34	इस्युत्तेश्चर्यार्थः गत्या	५ २१ २८
इत्यादिश्य संती म ल्ली	m gyrngårringt	इलुकः अण्यत्येशम्	m la Jagara
इत्युक्तोऽसी तदा दैत्यैः	திருந்து என்று	इत्युक्तप्र सारुणी तेन	mental state of the state of th
इत्युक्तः स तया प्राइ	··· १ः १५०० वर्ष	इत्युक्तम्यातिसन्त्रासात्	-प्रविद्धाः सम्बद्धाः विद्याः विद्याः । प्रवेष
इस्तुंबत्वा मन्तपूर्वसीः 💎 🦠	* ··· 8 89 28	इस्युक्तरशम्बरं बुद्धेः	4 50 ES
इत्यक्ता देवदेवन ।	6 con 6 - 25 SS.	इत्युक्तस्य प्रहस्यैनाम्	··· 4 30 32
इंस्कुक्त्वा देवदेवेन	··· \$ 10.85 - 1 - 36	इत्युक्ते तैरवाचेतान्	ஆங்குத்தாராக ் து
इस्युक्ता प्रयय साथ	··· 6 65 58	इत्युक्ता रशिको गत्वा	4 1 32 4 45.
		Annual & Annual	a for eggin, a subset

इत्युक्तो वै नियवृते

इत्युक्त सा तथा चक्रे

2 40 - 47

Addition M.	and deline and martin. A defeat	S. Marchallers v.	And died to a state of the co.
্বেনুকঃ সাম্ভ শানিকঃ	··· (45 - 45 - 758)	इलेते वार्धद्रधाः	प्पारती के लुक्त रेश स्ट ११३
इस्तुक्त्व प्रयद्ये कृष्णः	4: 38 48	इत्यरेऽष्टिकादुत्तरम्	4. 8 33 38 minus
इत्युक्तन्स्याहरीनम्	3547 138 349 6	इस्तेते शैक्षनाभाः	285 og 385 - 385 - 3
इस्कुके अपने दुवे	··· And Bellemiss	इस्पेते शृङ्ग द्राराशीनगर्	··· 8 98 5 80
इस्तुचार्य विभुक्तेत	·· ५ वर १४	इसेठं परणीविताः	UK 1 44 -650
इत्युषस्य कुरवः साम्यम्	··· references	इत्येष कश्चितः सम्मक्	··· 网络 ·· 黄芩 ·· 青黄C
इल्डुक्लाग्द्ररतथक्षः	m 45 \$40 \$2	इत्येव संसाध शुला	: 412 \$ 1 148
इत्युक्त्वा दिवमानगम्ः	··· ४६२३३६ च्छा १६	इत्येवमतिहार्देन	··· 4 1 1 4 4 4 1 1 3 4
इत्तुताने कुन्दरस्तु	4 30 55	इत्येव व्यक्ति पी	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
इत्युको बासुदेवेन	400 100 mgs	इच्चेतत्त्व मैत्रेय	··· 4 135 - 44
इत्युकः प्रशिषस्यैतम्	ய முருக்கு அக ்	इस्पेतत्पामं गुहान्	8 42
इस्पृत्तो दाङ्कः कृष्णम्	··· a glor miles	इल्प्यपनकदोष्टिते	··· 8 ₹8 ₹3
इत्युदीरितमाणाण्ये	··· 4. 44. 43.	इस्येष कश्चितः सम्बक्	₹
इस्कोऽभ्येत्य पार्थाभ्याम्	··· 4 36 2 82	इत्रेष काल्यसंदारः	G. X - 88
इत्युक्ते मुनिशम्यासः	··· \$ ····· \$ ····· \$8	इत्येष तन मैत्रेय	in Responding No.
इल्क्ष्या रक्षकरस	मा दे हैं। इंटर	इस्तेषा प्रकृतिसस्य	E 8 - 34
इत्युक्ता समुप्रेत्येनम्	··· JERTHOUSE THE	इदमार्थ पुरा प्राड	## 12 " 36 " # 1 m
इस्तुतन्ते मदा योगः	69.1" Carried	इट च स्यु मैक्स	- NA - But to A
दरमेते करियताः सर्गाः	" t. Fra. 33;	इदं चाणि अपेदन्यु	··· के ११ कि
इत्येप अञ्चल सार्गः	·· 185 *** \$1 5-47 **	इट्टं स भूगतानन्त्रम्	4 to 09 6
इस्पेनः ओक्रपीनां तु	· ************************************	इन्द्रत्वगक्रयेदैशः	* 60 . 4
इत्येषः दशकन्यानाम्	१: : १० : : २१	इन्डप्रणितिस्का तु	14 To 4 15 W 1 1 2 2 3
इत्येवमुत्यन्ते विश	St. 188	इन्द्राय धर्मतन्त्रण	··· \$ 788 288
इत्येजमुक्त्वा ता देशीम्	··· \$20. 28 anni 28	इन्द्रिय थेषु भूतेषु	44 . 44
इत्येष तेंद्रकः प्रथमः	··· 1 ?? ··· 44	इन्हें विश्ववद्युः सीतः	m 21.60 . 146
इत्येते मुनिवयौत्ताः	······································	इसमदिगई थैयात्	··· 14- 12 24
इत्येव तथ मेनेय	··· (\$000) \$ 0000 \$1	इमी जुलकितेरहैं।	1 1 1 1 1 201
इत्येव सन्दियोऽयम्	मा हा ^{त्र} दे अस् रेर ≒ाड्डेस	र्म खेदाहरत्त्वत्र	10 pts - 150 pt 724
इत्येकास्तनवस्तस्य	··· \$20,00 \$10,00 \$86	[इस रतवं यः पटति	- 2000 Company
इत्येताः प्रतिकासाभ्यः	** प्रदेशका स्ट्रेस्	इयस्य पञ्चन् सुधारुन्	18 24 1.58
इलेवमर्क्स्प्रिकेन	··· \$15.0650078	इंक्षन सोडिंद सुबहुन्	UE 18 16 29
इत्यते क्रियता रणन्	··· (Simple direct)	इमं न वर्तने सम्भा	m 2 24 - 28
इत्यतेऽतिश्रयः पोत्तमः	" highwith water.	इस च मारिया पूर्वम्	·· 2 24 80
इत्येवदिस्तृभिगौतम्	\$5 (\$8 - 38)	इयं मारमवता भारते	14 70 70
इत्येतन्था-कातुः	** \$5 0.00 miles \$30	इत्यवृताय प्रदरी	ল ই ১৯ছল ল ইত
इत्येत गाँचलाः	·· ***********************************	इक्ष यदिन्द्री यहानाम्	··· f Lat (1905-1919
इत्येखमाद्यतिबङ्गरक्रमः	- Karankanatas	इष्टि च मित्रावरणकेः	··· × mikinga
इस्पेसं ज्याग्यस्य सन्तरिम्	··· Romes Section Ref	इह चारोग्यविपुरुष्	·· ३ ११ -७६
इत्यतन्त्र प्रयक्त	··· ¥: 83: 147	75 21 5	Proposition to
इत्येत अनेयाः	··· **********************************	इंप्रदासकी ती बीरी	· ५ वर्गकाहरू
इत्येष सम्बरातस्ते	··· Youth	इंट्रोजिप सर्वजगताम्	سه و عو مع
इत्येते स्वा म्हर्गधाः	× 1882 C4	ईंश्वरेणापि महता	43 34 A88
इस्तेतं चेक्युकावः	Y \$\$ 88	£	3 ° 494.5 are
इत्येते बहुत्त्वः प्रोरहाः	30 14 Wes 1978 26	उक्तम्सर्वेवं स्ट्रमनिः	8 .2405. 88

··· ३० ०० ४ व्याप्तिः विकासामेन स्टाम्निः

2 - 24 m 22

इत्येते बहुन्तः प्रोराजः

(४६९) १ - इल्लेस

उदप्रक्षुटाभीगः -

उद्ग्रहमुक्तो दिवा मुत्रन्

अञ्चः अध्याः

ŧ'n.

24

ş

700

Yo

अंज्ञ: अध्याः

A THE SE

े **इस्सेक्स**ः व जान

उत्कोऽपि बहुशः किछित्

रुप्रोनश्चापि कसन्पत्रोधः

उन्स्नय पूर्वना पाताः

उत्सृत्य जलसर्वसम्

कस्य द्वारको कृष्णः

स्टब्स्याची प्रमु

डांग्सेनसुते करो	૬ રહ વર્ષ	उदयास्त्रनमाध्यां च	j-A.		5	6	2.5
दमसेने यक्षा कसः	4 36 mg	उद्गास्तः ने चैव	-	3.0	₹	6	13
डमसेन ततो अन्यान्	··· 48 98 5 5 5 5	उद्क्षपासू डकार ियः		asi.	F 2	35	23
उपसेनोर्जय यद्याशम्	प्रे व्हार्य विश्वास	उदावसोनी-दवर्दनः	-		× 1	177	74
उपरीतः समध्यासी	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·	उदितो बर्द्धमानाभिः			2	2.5	8.0
उपसेनह्यु संद्युत्व	4 (27 F 7 8	उद्येख्या च तथेवानुम्			8	20	38.
ठप्रमुक्तरेष श्रेमनत्	17 - 8 1 See 16	उद्येक्टने किल्सह			4	31.	12
रस्यवानामिति ता मने स्	Kresse 66	हिन्दो देणुना हेव े		124	1	Sec.	3%
द्रशायनक्षति पृतानि	*** & spilling dange	उद्देश परम् अग्मः			179	S. Sec.	\$00
उद्देर्मनोर्थालेऽ यम्	9 28 80	उन्नताम्पूर्वय पृथिवहितुः		2.1	A L	58	90
उस्तरः अनुनिर्देश	··· 6 mest ferreist	उपनवत्यपनिकः			2	3	×
<u>डचरं पर्गस्थस्य</u>	··· \$ 5 ···	उपस्थितिकारकार्		4-4	4,23	4	88
उत्तरं यसामुद्रस्य	2 STATES	উন্মুজনৰ জন্মুধান	-		8	24	8
उत्तमोतसम्प्रान्यम् <u> </u>	The state of the s	डेपेबेमे पुत्रक्षोमाम्			\$ 10	2	88
डतमः समय भ्राता	- 4	उपर्याक्रदलाशक्केरान्		125	2	16.00	80
उनमजानसम्पर्दे 📑	1 10 70	अपनिवतः दियदासः		172	A Lagran	24	170
उनातपदपुरम्	The state of the s	उपर्वेद यान एका		***	3	35	\$3
उतानपद्गास्यायः	··· क्षेत्र देव देव :	उपतिष्ठी से सम्बाम्		114	3	11	808
उतानपादपनयम् 🤚	··· १ ११ 35	उपयोगनाके च तम्	-			6	70
अविद्वात सेन मुकानिकाहत्य्	6 mm 8 mm 50	उपसहर सर्वात्वन्			er.	133.5	13
अन्यवसारा जबाईकुक्षः	8 8 56	उपन्यसंस्थायासः		128	5	. 5	24
उन्हाय समुदेनस्थम्	··· 4 30 63	ङ्ग्रङ्कः समास्त्राह	-	410	1	15	35
उत्पाय पुजुकुन्दोऽपि	4 C. 53 C. 155	उपेक मधुरा सोऽध		111-	Ğ,	33	3
उत्पक्षिस्थितिना शानाम्	- 6 TO TO COM 86	उपगम्पि तनानस्कृत्			×	E	31.
ਰਕਾਜ਼ਿ ਮੁਲਪ ਕੈਕ	··· Email Calpings	उपने पुरुषासंगर्भन			á. ,	ę	613
डलनिरियतिगादानाम् -	2 4 36	उभगोन्त्यविभागम		100	٠	22	38
उत्पविश्व निर्देशम	··· १ 84 64	इंग्रेथी: कष्टबोर्मध्ये		***	3	6	5.5
उत्पन्ननुद्धि ^{क्ष} े	45 E 3 m	टमाध्यासपि प्राणिध्याम्		***	ξ	*	38
उत्पन्नशापि में मृत्युः	14 8 82	दमे सन्ध्ये रिव भूप		***	3	8	9
उत्पन्नः प्रोच्यते विद्वन्	ner & Alberta B. College R.	उर्वशीदशीकदुःसूव-			*	Eq.	65
इसको देवराजाय	m Zangas . Ac.	उर्वर्श च तरुपभोगात्			*	8	88
उरवहन श्रुत्मेकं तु ^र	··· 9 88 83	उर्व स्टब्स्ट्रेक्ट्			*	\$	45
उत्प्रस्य कामदसं तु	··· 4 20 36	उर्वे पहां है जगतः		Fin	Ę	×	56
BOTH THE WALL	··· va de de la compania	उदाय च स कोपेन		***	R	१९	५१ १९
ं उत्स्पार्थ सत्ताती सु तमः	。	রবার হিন্দিকা বল			₹ *	\$5	لبالو
उत्समन नवन्त्रं तुषितृन्	2 4 30	उपाचन राजानम्			8	4	154
उस्तका <u>शि</u> ष्टश्चनारिम्	***********************************	ওলাৰ ব মু ড়ৌ⊴				ŧ	5.5
उस्व विशे बाह	·· 2 2 2 48	उनाच चान्द है तात		211	14	71	4
	and the state of the state of	1			"I a box	the first of the last	111111111111111111111111111111111111111

उक्कच चारितामाक्षः

उश्चमस्य दुवितसम्

তথ্যবিদ্যাম হিম্মিন্ত

उपा गत्रिः समास्थाता

139

X

20

30

इत्सेक्यः		अञ्च	अध्याः	इंस्क्री॰	रलकाः		अज्ञः	अधाः	३र्झ∘
उषा बाणसुता वित्र	199	Eq.	35	7.9	एकविशमधर्वाणम्		2	4	48
उण्णादिचित्रस्थः	121	8	35	80	एक्द्रीसन् यत्र निधनम्	119	*	43	196
	あ ゅ				एकदा तु त्वरायुक्तः	***	8	24	5.8
क्रबतुर्जियतां याते	***	Cq.	₹\$	5.8	एकदा तु स चर्णात्मा	***	2	20	19
ऊचुडीनम प्रिमाम्रायानुसारी	4	8	Ę	30	एकदा तु मया पृष्टम्		4	19	85
कचुश्च कुपितास्सर्ने	141	eq.	34	\$3	एकदा तु समं स्नाती	414	ą	86	40
करूगम्भोरबुद्धवाद्याः	-91	3	7	W4	एकदा तु दुहित्कोहः .	612	8	3	707
বলং পুরুষ্ণবাদ্রা	EID.	8	7	38	एकदा तु किक्रित्	111	8	X	49
कर्जायां तु बसिष्ठस्य		8	ŧ0	23	एकदा त्वम्मोनिधितीरसंश्रयः		*	13	83
ऊर्जः साम्पसाधा प्राप्	hel	3	٩	2.2	एकदा तु विना समम्	F17	4	19	2
कथ्वे तिर्वगयक्षेय		2	24	3.8	एकदा रेंबतोत्राने		4	35	22
ऊ ध्वीतस्मृषिभ्यातु		5	4	3.5	एकदा वर्तमानस्य		8	£,	55
ऊर्मिषद्कातिमं बह्म		8	29	30	एक चक्रो महाबादुः		R	71	4
<u> अहरुमार्गवाहीनि</u>	***	4	E	36	एक-प्रमाणनेवैवः	2.00 L	3	6	2.3
•	750				एकस्यरूपमेदश्च		P	2.5	33
ऋक्षपतिनिहर्त च		×	23	34	एक आसीदानुर्वेदः		5	¥	2.2
ज्ञक्षाद्धी मसेनः		*	90	19	एकराञ्चस्थितियमि	787	3	9	35
ऋक्षेऽभूद्धार्गवस्तस्मात्		3	3	25	एकवस्त्रभगेऽधाई॰		3	9.9	90
ऋष्यजुस्समसंज्ञेयम्	***	3	210	L _q	एकछतुर्द्धा भगवान्युताशः		44	8	. 88
ऋयजुस्मामभिर्मार्गैः	***	ξ.	*	*5	एकस्मित्रेव गोविन्दः		4	36	10
ऋष्यजुःस्तमनिष्मत्यम्	a21.	3	18	₹₹	एकरशुद्धोऽक्षरो नित्यः	***	Ę	¥	36
ऋग्वेदपाठकं पैलम्	***	3	Y	4	एककात्र महाभाग	145	3	×	198
भूग्वेदस्य यजुर्वेदः		la,	8	40	एकपादं द्विपादं च		=	13	49
ऋचीक स तस्याससम्		8	19	50	एकानेकस्वरूपाय		8	₹	ą
ऋचो यजूंबि सामानि		2	24	63	एकार्णवे तु प्रैरमेक्ये	444	8	3	58
ऋवः सुवत्ति पृषक्ति		2	28	20	एकान्तिनः सदा बह्य		8	•	78
ऋतावुषगमञ्ज्ञास्तः	111	₹	88	65%	एकायचेताः सततम्	144.4	*	\$5	30
ऋतुपर्णपुत्रस्तर्वकामः	1.7	8	8	3年	एकादशक्ष भविता	199	₹	8	25
ऋतेऽमर्शगरेनेरोः		3	6	38	एकादरो हु चिहि।सः		3	4	68
ऋतेषु कक्षेषु स्थण्डिलेषुः		X	29	3	एका लिक्ने गुदे तिसाः	4-4-	3	7.5	39
ऋतेषोर्यन्तनारः	1	×	23	3	एका वंशकरमेकम्	197	8	*	ğ
प्रतिकवस्यश्रेय॰	3.12	3	84	₹	एकावयवसूक्ष्माराः	171	t _e	14	28
ऋभुर्नामाभवत्पुत्रः	111	₹	14	3	एकार्णवे ततस्तस्मिन्	69.1	6,	8	6
ऋभुरस्मि तवाचार्यः	1111	Ę	14	38	एकांशेन स्थितो किण्युः	1911	*	35	56
ऋभुवेषेसहस्रे तु		₹	3.5	2	एकेनांदोन ब्रह्मधौ	44.4	3	25	5.8.
ऋषयस्ते ततः प्रोचुः		5	7	38	एकैकमेब ताः कन्याः	64.4	4	38	28
ऋषभाद्धातो नही		₹	8	25	एकैकमसं शसं च	**1	la.	30	46
ऋषिकुरत्याकुम्बराधीः	113	3	3	5%	एकैकं सप्तथा चके	11.1	9	2.5	160
ऋषिणा यसादा गर्भः		8	24	86	एकोऽत्रिरादावभवत्		8	Ę	3.8
ऋषिभ्यस्तु सहस्राणाम्	114	₹.	13	80	एकोट्षिमयो धर्मः	111	9	53	२६
ऋषियों उद्य महामेरो		3	4	8	एकोहिष्टविद्यानेन	***	4	- \$3	5/9
ऋषींपो नामधेयानि	11.	9	Co.	84	एकोऽर्घ्यंतत्र दातव्यः		4	23	58
	ए॰	-			एको सेदशतुर्धा तु		3	3	20
एकमस्य व्यतीतं तु		4	3	२७	एको ज्यापी समः सुद्धः	F11	₹	\$2	25

्रहरोका ः १७५	अंदर अध्यक वस्त्रेर	2. 4. 4. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12	अस्तिः अस्यकः इन्तरः
एक तबैदानुसामन्	··· \$ '\$6': ['\$b ₁ :	एतनियोजये ज्यादे	\$ MARK 8
एकं वर्षसहस्त्रम्	m Ko sour fo	एताजगामनप्यशेषः	8 63 683
हर्क स्वमय्य एस्स पर यत्	(4) (4) (4) (2) (2) (2) (2) (2) (2)	एतान्यन्यनिः चोदारः	m 6 grander Ad.
एक भद्रासमार्दनाम्	4" 5 6 34	एतान्यन्यनि चोप्राण	··· RESTANTING
एकः समस्तं यदिहासि	··· २ १६ व्याप्त २३	एतान्यक्षेत्ररूपाणि 🦈	an Employee + 6
एतते कश्चितं असम्	6 = 6 = 685.	एतं चान्ये यथे देखाः	·· \$1 48 × 44
स्दराज्यसनम्	··· \$ - \$ \$ 777.7 6 \$	एते भिल्दुक्षां दैत्यः	\$ 40 64
एतन्ये क्रियतां सम्पन्	··· 6 65 X5	मृते दनोः सुताः स्वातः	m Sula Shanish &
ध्तःज्ञवायः भगवाः ।	१ ११% % GE	पते वै दाग्याः सेहा	6 56 69
एतद्वासमार्थ्य थे	80 - 80 - 69	एते युगसहसान्ते ः	6 1 4d 1 430
एहरसर्थ महाभाग	··· ' ' ₹" - ₹₹ ' ₹₹	एवे कार्यपदासादाः	र् इर्
१९७किसम्ब देखेन्द्रः	2 20 25	एते सर्वे अनुसस्य	··· \$
एत्सान्यन सम्बद्धम्	··· 4 . : 64 . 2. 35	एतं द्रोगाः समुद्रेश्	··· A SERVE AND A
एसदिलानदा सर्वम्	\$ \$60 AR.	एते शैल्यसम्बद्धाः	··· 5.5.5.8444 64
प्तब्हुत्वा तु कोपेन	\$ 5 - \$ \$ 7.50 WO	एते करन्ये च नरकाः	··· 5 30 50 50
एसप्यक्टाहेन	m \$ 44 m @ \$ 4	एते सन यया स्त्रेकाः	२ ∯≫ 'G ∵ *:: 24
यार्षद्वयेकांकशानम्	··· Straffere ps	एहे ब्रह्मित वै चेत्रे	··· 5 46 4 8
एखिल्पन्यस्थार्थतः	9 1/4 E	एरे मचा प्रक्रमां है	··· 5 53 58
एततु श्रोतुपिन्छापि	m 37 3 712;	एते दूर्नाञ्चनास्तरप	·•• १३ १३ १७
एक्स्मास विधा पेरम्	1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 - 1 -	एतेण यस वो धर्मः	··· ा वेशक्ष श ्हा । प्रदेश
एतते कवितं सर्वम्	··· 8- ·· 4 · · · 35 :	एते नद्रास्त्रकाण्याताः	मा के हैं देवने
एतनुने समास्यातम्	३ ७ ३९	एते पार्वण्डिनः पापाः	\$. \$C . 508
एसच श्रुतक प्रमन्य	A . See . 50	एते वैपारिका भूगृतः	··· 8.5.635, \$2 341,64
एतदिन्द्रस्य स्वपदः	X: 4, 53	एते सत्रप्रसूताः	" ALEGISTERS
एकदि महीगरवापारभः	A. 55 50R	एवं च पर्यंत	- A = 2 18 - 3 - 80 - 80
प्रवाह सर्वकातम्	··· 8: 21 144	एते जाराध्यापरिस्यागात्	Remoder of St
एसदि व्यवस्थहं श्रोतुम्	A 1764 1 4 4 5 5	एते इस्वाकु पूर्यत्यः	··· A . A . 552
प्रातकारिकट नवाभितिकम्	8 . 80 3 62	एसे काण्याकाश्च	··· : A. A. 1845 A.S. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1.
युर्वादेदिला र सरण कार्यम्		एते च तुरुपगरशासार्वे	A
एतस्मिन्नेन नवले तु	# a. \$ \$5	एतेन क्रमयोगेन	m & 52 550
सन्दर्भ व लोकेशीतम्	- G. 1 - 12 . 1 . 1 . 1 . 1	एते चान्ये च भूपारकः	x 3x 333
एक्सम पर्व गोपाः	m 42 20 5 82	एते तस्याप्रमेणस्य	मा ५ विकासिक
एक्त्वृतं महेन्द्रेण	··· 6. \$\$ ~~ \$8 .	रते वयं वर्षास्पृक्तभायम्	the of garden of the
१५ इरिमलन्तरे आ तः	- 120 Sec. 54	एतं वपासतीययमाः	E 65
प्लटन्ड्यामि ते रूपम्	६ ३६ २३	एती हि गुजयान्त्रज्ञी ः	२ ्रेंट्रं कर ४
एइस्सर्व महाभाग	ய மு. நேர ^{் ப} ்ரக	एरक तुः मुझेता में 🦿	··· 4 30 84
एत्रस्किय काले तु	d. \$\$	एस्वपुत्रस्त्रथा नागः	5 45
एउद्गः वर्षेत्रतं विष्णः	··· 5 - 7 \$0	एकमस्यन्त्र विशिष्ट्रभः	8 3 35
एत्तसर्वनिद् विश्वम्	me = E . Branches	एकम-तर्वले जिल्लुम्	··· d' : \$6 56
ग्राते वक्तवासम्बद्	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	एवपुक्तस्वया शीर्धः	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
एत हसेसारमोकणाम्	E Tr A.	एक्याझाप्यन्तं तु	4 80 54
प्ताक्ष सङ् यहेन	··· 5 4 mm 20	एवमस् स्वेष्टा वे	viga 320 g. se
एतः युगाशाः कथिताः पुरागे	··· 3 . 62	एक्सुके तु कृष्णेन	··· 4 30 55 38
एति स्याभगनन्	\$ 1550 C. 0 (80)	एकम-परतथ हे से	··· English de service

	110	(Ad.)	
ি ত্ৰক্ষীৰ্ শাল্ভ লোকে	अंदाः अध्याः - इस्के	ि प्रतिका शका (१०४	उत्पादः अध्यानः प्रकीत
एसमादौनि दुःस्यनि	··· ६८६५३६६४४३६	एतं पूर्व जनजाधान्	··· 6:25 35 2 2 64
एयमेप महा ल्छन्दः	··· Grande	एवं ऋत्वा घणकास्म्	१ ाश्वाःकल ५३
एक्मेत्रद्वन्तोध्य	··· \$ \$ X0	एवं प्रभावस्स पृथुः	11-12-14 MANA \$ 12-20 163
एजमञ्चलनिःश्रीक	m \$15.67 \$ 12.57 \$ 3	एत प्रचेठको निष्णुन्	··· 62 68 2 88.
एशमुख्या सुरान्स्यान्	4 (* T. C. 114)	एन दुवसमाराष्ट्र-	··· হ্লাহ্ডাল বাং
प्रमेक्त्रपृक्षा शत्	to total is	एवमतभाराप्ताः /	\$ \$8
ब्दमेश्यर्पवतेन	··· १ ं११७७० ५४	एवं पुरुद्धप्रध्येत	3
स्यमुक्ता ततसीत	·· ** *4 5 18:	एवं वृह्यस्त्रदा विश्व	18 mar 86. 10. 2
प्रमुक्ता हु है सर्थे	\$50 \$400m\\$\$\$	एवं सकें। मुदेश	··· \$ STATE TO BE
प्रमाणस्तितः	स्त १ स ्युक्त ार ५३	पुत्रं क्षांते स भगवान्	··· S gibbaccode
प्रमञ्जाकतासूर्यम्	\$	एवं सन्धिन्तवीनाण्युम्	१ नग २ ३०३०३०३०
एसमेव विभरगोऽयम्	··· t = 22/1/420	एवं भूतानि सृष्टानि	no display the state of the sta
प्लानेव जगत्स्रष्टाः	6 35 20	एवं प्रभाषो देखोऽसी	··· Acit Selected
एवमेतनस्यारचतम्	m Sicaliticality	एवं विषय्य राज्यानि	··· 6244422446
द्वारावर्तम्। न्यते :	··· 2 < 76 16 77 64	एवं प्रस्रायमस्य	10 8-12 99 Barrier
स्वमेद्रस्यदं विष्योः	··· 2 . 6 . 800	एवं द्वीपाः समुद्रेश	··· , 5, , 8 . 50
स्यमुक्ताभवन्ति	र हिंदि देवे निकार्यं	एवं बड़ात बंदाश	··· 5005600366
एक्सेकिंगर विद्धि	२ १६ = ३६	एवं रव स्वस्थिकी असिः	5 å, \$ \$ - cac \$ \$.
एखमुक्ता समी विद्यान्	··· 3 100 88 100 88	्तं सा गैमार्था इतिः	··· 5 2561 159
एकभेते विश्वस्थातिकद्	Kitt SKELEIO	एवं देवान् सित्ते पक्षे	\$:: \\$ \\$ \\$ \\$ \\$ \\$ \\$
एकपेते मौय्यां दश	··· ४०० १४००ल इंद	एवं काशसामानाम्	२०%(१३%) (१६
<u> एवपनेकदाक्तर</u> स्	··· Kun ffilm R\$	एवं अवयस्थिते उस्ते	··· Security istale
एचमुक्तः सोऽप्याहः	22 mm (83 mm 86 ···	एवं न गरमाश्रीप्रस्तिः	··· \$ 500.882 88
स्यमेदकग त्सर्वम्	··· à ·· Principo ;	एवं जिनाशिषिद्रेश्यैः	44
एकमृत्ये दर्दी तस्मै	m 3 মুক্ত া ইট	एवं श्वदं बुधः कुर्यात्	··· Serish a let
एगोन न ककते	··· *\$*** \$6**** 43	एवं कुणत कुण्यायम्	··· १ = १८ : २०
एक्नेकेट भूपतिः	X 775 E -4 100	एवं व प्रमासीहर्यः	- 8 5 5 5 5cg
एक्युवाच च समाजायायाः	પ્ર ાહ દ∈ કપ્	एवं य त्रयोरतीयोजन	
एवमुकास्ताधानस्यसः	பட (%) நகிறந்தோக் இ டும்	्वं देवासुकान्यसंशोगः	
एक्रपंत्र स्वपुरम्	४ आहेरकार्ट	एवं तहात सा तहा	··· Vyralnikasintilik
प्रमारित्वनि ः	m You was \$2.	एवं च पञ्चाद्यातिकवं-	* *** \$\$15 \$1588
एसम्स्रकेवम्	HE Y JANGERPEST.	एवं व तस्य गर्भस्य ः	R = 830 546
एवं हातेन तेनाइम् 🦠	मा (७ १ ०,७० १ ० । २१	एवं तरहाननत्वेऽण्यनङ्ग-	··· 8 · September 4
एवं हु जाएणो सर्पम्	ee হ ১৯৮% টু ১৯৮৮ ইছি	एशं श्लातिशापात्	··· X # EE-CIPFE
एवं अवस्थितिक्षिः	- * * * * * * * * * * * * * * * * * * *	एवं नातिस्वाकराजसदः	R. 48 48
एवं प्रकारी रहीऽली	··· ₹ 5 = 5 = 5 ₹ ₹	एवं संस्कृषकनस्	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·
एवं संज़ूबनागतु	ল হ'ব সংগ্ৰহ	एनं संस्कृतसम्बद्धाः	no derentationes
एवं संस्कृतमानस्		एवं वृद्धस्त्रास्त्रपनः	- 4 *** 4 * 1 * 1 * 1 * 1 * 1 * 1 * 1 * 1
एवं संस्कृतपानस्य	··· १ **** \$ \$ *** \$ \$ \$	एवं लागा संदर्ग उत्तमेवत्	· प्राम्योद्धाः ३१
एवं संस्तृषमानस्तु	m trip enantes	एवं चाना प्रकारम् 🌛	- grantpartito
एवं सर्ववर्धिसु	er t stabilitate	एवं दम्ब्या स ते पापम्	५-०० ३३ ००५० ३४
एवं क्षेत्र संस्तुता सम्बक्	64 3 4 4 1 18 8 K	एवं भविष्यती खुके	4 1/58 n 39.
एवं रही कर देवी	१ :	एवंविधाःयोक्धनि ।	·美国 医维克曼氏 1月季春
एवं नदा जगस्त्रामी		एवं देशवधी मुख्यः 🤉	and the state of t
Action of teaching III.	A Carlo Constitute	Landing Same	

(1995)

			es de Comi
त्रा लेखः ।	अंशाः अध्यान इस्तेन	ं अस्त्रीवृत्र ^{ेश ।}	अंक्षाः अन्याः "स्वी॰
एवं भविष्यपीत्युद्धाः	५ ३८ ७९	ओत्तानपादे भन्ने ते	4 55 25
एवं तस्य मुनेः शापन्	" 4" 36" " 18	औरप्रगर्व्यक्ष तथा	··· 🐧 👯 🤻 २
एवं भवति कत्पत्तो	" 6 3 " " A RE	, e !	310 P. S.
एकं सप्त महस्युद्धे 🐬	g go	अञ्चलस्यानाध्यीस्तु	5 60 63
एवं पद्धामेम्ँडैः 🧪	- 11 (1) 11 (1	अंदालकरों ब्रह्में	··· A 44 4 44 4
एकं निगदितार्थस	⊶ ૬ પ, પ્રા	अंदोन तस्या जन्नेऽसी	\$
एर पानग्डसञ्चानात्	3 . 8C 6E	2 2 2	The same the same
एक चरुभं अत्या	8	क्कुदाति हते प्रस्टि	40 80 8
एव अह्या सहास्मानिः	<i>જેલાં વેલ કે</i> દેવ	ककुरुधस्त्रप्यनेकः	்கோத்திருக்கு நகுத்த
एक में संदायों अद्यन्	m. 7 1-74 - 67	वसुस्तु पत्नथः वहः	5 50
एक मन्द्रकार सर्गः	8 10 28 28 200	अभित्यप्रदित् नः कुर्भवः	··· 5 58 68
एर स्वायम्भुवः सर्गः	₹ ₹ ¥3	कविकासं बाह्नाम्	4 10 3 8 1 1 1 1 4 4 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
एव तूर्वहातो वेदाः	6 A 10 5A 6 455	कचित्रु दूर्पवातस्य	··· • \$6 80
एय मोहं गतः कृष्णः		कविद्समञ्जूले जातः	8 Januar F. 1. 36
एव समेग सहितः	म ेद् १८ ⊨ २१	बळक्तुकुळकर्णिकडीदभेदैः	3-176 6 4 96
एक कुरणा धारवीचीः	222 2 Car - 68 36	क्रफर्करिव हुताङ्गः	··· Established the
एप ते सनमः सुञ्ज	6 70 76	कष्टुर्नाभ सुनिः पूर्वम्	··· \$ 26 799
एव द्वीयः समुद्रेण	··· • • • • • • • • • • • • • • • • • •	कण्यूयने और चासकः	53 E 2 6
एर साध्यस्तपत्रीतः	५ - ३५ - १३४	कम्बोरएत्यमेयं स्व	Spinster
एय नीमेन्द्रिको न्यम	g 8 6 -	कण्यानेधातिधः	K \$6 \$6
एम महो देव महीप्रमुतेः	فيعاد و الم	कशवामि यथापूर्वम्	m Andrews
एस बसुपती तस्य	4 . 8\$ 44	क्रममेभिरस्स्तृत्तम्	8 . 68
एकं सृतिअस्विध्यक्ष्	8 2 80	क्ष्मच वस्स कस्थान्यपारमकः	¥ \$ 32
एवा ज्येष्ठी बोलिहोत्रः	y 88	कथमेव गरेन्द्राणाम्	X 3X 355
एपैय स्थागारुद्धाः) ५ १८ १९	कवाशरीरत्वमवाप गर्दे	5 4 68 685
एहोहि दुष्ट्र कृष्णोऽतम्	५ १६ ७	क्रिवतस्त्रामसः सर्गः	" 6 11 2 2 2 12 6
red.	10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 1	क्रियत में त्यना सर्वग्	2 20 2
देन्द्रभिन्द्रः नरं स्थानम्	··· 27 28 80	वर्षधतो भक्ता वंदः	2 25
देखवतेन गरुडः	ų 10 86° 15° 15 88.	क्रियतो भवता कद्भन्	are Property
<u> ऐस्टेन्स्य दृश्यत्तत्</u>	A 66 -17 6	व्यक्ति। भूतरं लक्षर्	··· - = = 10° := 10° . •
ऐश्चर्यमद <u>्</u> षद्वारमन्	2 . 4 . 22	कथिता गुरुगः सन्बन्	\$ 150 miles
षेश्वर्यस्य समग्रस्य	··· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ··	वर्धकं चात्रुवधम्यन्	··· 6. 59 5
, (লা ত জলাত বা ক	कथिते केंगसम्बद्ध	e 6 8
ओनध्यः कलमृहिन्यः	m & The Page	क्रथं परिवर्षपालेषु	or (19 25 30
ॐकारबहासंयुक्तम्	111 \$7 1 2 T T T T T T T T T T T T T T T T T T	क्षयं प्रमेक्ष्मचस्य	A 58 558
उठकारी भगवान विष्णुः	4 6 48	केले गुद्धमेनूद्रलहान्	h \$4. 4
% नगो सायुदेस य	30 . 25 m	कथ्यतां च दुतं गत्वा	क १ ३० ४९
ॐनगो जासुदेवाय	\$ \$9 . 65	कथ्यती में गहरभाग	\$ " & X \
ॐ नमो किणाबे तस्मै	8. 56 08	কবলানি ব্রিকীয়ানি	5
ॐनमः परमाश्रीर्थः	··· 6 50 6	बदम्बरतेषु जनमूश्च	··· 5 ··· 5 ·· 3 86
ॐपरादारे मुनेबरम्	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	कदानिच्छकटस्याभः	سه در خشورْ ^{این ب} و
-F.	·· 😘 😁 🖂 🖂	क्रमकर्माप रहस्कोश्य बुद्धना	··· 3 6 27
अतिमात्रयसारे देवः	3 4 3 36	कदम्लफल लस ं	in E The state
औरएनपदितपसा 🗀	" 1. " \$ 4. W. S.	कत्वानुप्रविकाहेषु	··· 2 gra \$ 2 come of

	(- (x	az) .	
्र ्टलोकाः । <u>०</u> ६	अंदाः अध्यक ्स्सेन	, व्या र्ट्यका ः, १९६	अंशः अध्यक्षि १५००
बन्यान्तःपुरमभ्येत्य	4: 255 Apple 6	कल्पकाष्ट्रामुहूर्तादि॰	···· 机氯基胺环络氯甲基甲基苯
कन्यास कृष्णी नपार	- 400 BROWNER	कलाकाहानिकपदिः	L& C.L. 3/3 Parti 1944
क्रन्यापुरे सं कन्य नाम् 🔝	··· 4 99 38	वर्गलवरहुवम्रहेन प्रस्य गाला	··· தோரைவின் அத்த
कन्बाह्रयं च धर्मञ	an graph against the said	क्रिकरनवमध्युग्रम्	६ अक्षा ८० व्यक्त हर
्क्यटवेषधारण्येव	RESISSING 85	करित्रसाध्यित यत्र्योतसम्	६ अव्यक्ष्यक्राव्यस्
क्षपंटर्वि भगवतः	3- a 885 a du.\$	करिष्ड्रमहिष्मरेन्द्रः	···· 表語語表 pati 對於.
कपिस्वदान्जन्तिष्	& 6 48	कांलकृतानं चारायः	··· Ambeloni SR
कमदनन नासुदेन निष्णो	\$ 2006 big32.	कालेस्स्थरूपं भगवन्	···· 美 购款的原金
क्ष्म्बलम् च तेनेकम्	6-6-6, 200	क्लेक्लक्ष्यं मैत्रियः	··· Property limit of Q
करम्भवातुम्बवहिः -	··· ቘ፝፞፞፞ኯዀቘኯኇቜቔ	क्रहेक्छेपभोग्यं हि	··· \$ 355 18 17 1 28
क् सहर्र्याध्यक्ष्यस् न	११ ११	कर्ल्यं ते क्षेत्रभूताः	··· * 11/28/11/622
करूपश पृष्ठश	4 De 6 4 2 3 3 8 4	क्रुंसे जगरपति विष्णुम्	on Kain in Kalapi Ke
करिष्ये सर्वदेवानाम्	···· 4 per \$ 6 or produkt	कल्याम् कल्यकिमाराध्य	··· Y SER PROPERTY
करिष्ये तन्त्रहामागः	··· U. Rampo d	कस्पादाबात्मगस् _र स्वय्	Frank County he
क्रिक्टत्वेष यत्नमं	Legiston 13, 520, 520, 548	कल्पानी यस्य वयत्रेष्यः	··· २ ्यां क्रिक्ट हरे
करोपभस्मदिग्यक्षीः	··· 4 - 5 - 6 - 78	काव्यं यः चितृहरूपधृण्विधिहुताम्	6 BELLEVIEW 48
अद्रेण करमाकृष्ट	६ ्र ट्रेडिट	कञ्चपस्य तु. पार्यायाः	6 Mist # 1668
करोति कर्णिनो यश्च	Rossia	क्षद्रश्रद्ध्यात्सगर ङ्गेयान्	··· ५ स्ट्रेट एकेस्ट
क्वीति नेष्ट्राइश्वसनस्तरूपे	Vo \$77 26	कस्य माना फिला करूप	२ ७%/ ०१/२ ००/५ ६
क्रोति हे देवासुताः.	···· 文 中华 · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	क्षत्रिकारोऽस्यको धर्मः	··· दिवस (दिवीक्षीक्ष) है।
क्रतेस्वेलंशियां सारिय	··· turmen hate	काकपश्चयौ वास्त्री	··· क्षितिकार्षे क्षेत्र विक
कर्तस्य अस्थिते भागी	2. march 196	काचिकांयलमञ्जूः	५३ ११५० ५४
कर्लाइबुजसेनः	m property and the	न्माचित्रकृष्योति कृष्योति	··· **********************************
करणे दुवीं धून होणान्	᠃੶ৄ৸ৢ৸ৢ৻৻৻ৼ৸	कानियादसध्यानी	··· 4 militaria de
कर्दा कियाणी स च इज्यते क्रतुः	58 c :: Ø: 1227 Fr.	काचिदालोव्य गोविन्दम्	4 BEGINS SEE
कर्दमश्रोत्रियं श	·· १. १०% प्रदेश	काचिद् भूभद्गरं कृत्वा	··· 34, FERENCE OF YEA
कर्द्धम्यातम्बां कन्याम्	ण विकासके । अपेत	काविदालोभ्य गोविन्दम् 🧳	'q १⋛ ४ १
क्रमींभभविताः पूर्वः	\$	क्रारिक्यवान् यो निभाने	18 CO 68 1-4 138
कर्मणा आयते सर्वम्	··· 2000 \$600 000	का त्वन्या त्यापृते	**
क्रपंगारीण सर्पण्डकाः	••• \$55.7 \$ 4.000 \$ 7	क्छवेया <u>स</u> ु बरिनः	\$1685.8\$1 0023.60
कर्पण्ड मनस्य वाचा	\$ 1.88 mg &	कानिस्य जिल्लामध्येषाम्	··· S HILL EVER
क्रमीयलाविक्स होका	Example of the Section of	कान्त कस्माय वानासि	h willow winds
क्वियदया गुप्पार्वते ।	43	कर्डप देन समायाता ाँड	
कर्न सञ्चारमक श्रेयः	3 38 38	कामको यभयद्वेषः	an ARTHURSTON
कर्मां प स्वमस्यधिराहकत्ताम्	- 4 - Romingon	कामरूनी सहारूपम्	arr 4500 2800 300 8
कर्मा स्थलावृत्तरे ते	··· 4 . \$\$ \$\$	कामगभी तथेच्या लग्	कर्मात् प्रशासिक संस्कृति ११
कर्माञ्चसङ्कृत्यिनतत्करंशनि	ण देशक तेत्रकेत कृत्य १५	कामोऽजतीर्पः पुत्रस्ते	··· 6446 \$400 64430
कर्पणामासाव े प	m 4 44 54	कामः ऋष्यसम्बद्धः दर्पः	··· \$0.00 \$86 (0) \$0
कर्षता युक्षयोर्मध्ये	૫ ૬ ફ્લ	काम्बोटकप्रदानं हे 🦠 👵	··· देक हेर श ो हेक ३८
कर्षञ्चरमा कृषिर्वृतिः	15 in 450,000 m	कारणं कारणस्यापि	··· \$250.080.088
कलप्रपृत्रमित्रार्थः	\$ March 44	कारूमा मालवार्थव	··· \$10 0 3 2 2 2 2 2 2 2 2
कल्यमुहूत् दिसयश् कालः	TO SOUND THE	कारिक्सा पुष्करस्य है ।	
कुल्बकरष्टा[नमपदि॰	··· Boundary CC	कार्यकर्षस्य यत्कार्यम्	··· \$100.085 1086
कल्यहणार्थगाञ्चल	··· Siddy	कार स्वरूपं विष्णीश्च	••• १ हराष्ट्रावकाम्

	. ≥ € 2	34)	
ा ंदरकेशः ः ः	अंद्राः अध्याः इत्येः	ा ्रलेकः । वि	असः अभागि रखेः
कारस्तृतिकारगारः	१०० १२ - २५५	क्तिमध्ये मध्यतः परिः	··· 200 28 000 70
व्यक्तनेसिर्द्धतो कोजसी	··· Gir in belandige	किमस्तद्ध य पृष्ठम्	Supplied
कालकाराणी भगवान्	on 47 36 11 46	किमादिलीः कि नसुभिः	Activity Reserved
कार ावस्त्रत्स्त्रमः	কুলনা র প্রস্থানীর ব্	श्विमन्त्रेपास्थवीर्यम	" Care de la constante de la c
कालियो विनेतस्त्रेले	··· 43	किमिर्द देवदेवेश	कृष्या व्यवस्था
न्ह्रारे त्यानियं प्राप्तम्	\$ 24 23	किमिद्येक्ट्रेब -	1. 1. 1. 5 4 4 4 4 5 A
कारेन गल्हता श्री तु	or (4) 165 8 (5) 5 (5)	किमेतदिति सिद्धानाम्	The said of the said said the
कालेन च कुमारम्	४ : ११ : इंट	व्हिन् व्यामय ग्रेपालाः	the property states
करूम गब्हरा विकार	15 55 CK.	विशेरकुष्णलवान्	·· / 38 46
क लेजनी इंटिमहर्ति	't 'to 75	किरोर सरीव्यू:	Be 44 w. P. 2002, N.R.
कारोम न विमा ब्रह्मा	१ (०३२ - ०३६)	कि करोमंति। तानस्यान्	- 3 48 2 34
. छारोन गण्डला सो ध्ध	···	कि चापं सहनोधन	34 6045 32048
काले धनिहा खँद सम तस्मिन्	\$ 48 miles	कि चाप बहुन केन	·· 一心事。《如何人》。正述,身來
भग्नेतः नण्डला रज्य	10300 \$3 00 ES	कि लेक मनतासु सन	··· 8 \$ 500
कालेन गच्छता तस्य	A	कि देवे: कि दिक्षेपदे	··· & websited
कालेन गणाता सौदासः	X) 3. (* . 3.6°,	कि देवैः किमनत्तेन	3 45 55 52
कालो भवाग भूतमाम्	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·	कि न परवसि दुर्शन	m 4 ASSAMA
कारः झोड्नसम्बन्धे	5 55 55	कि न दृष्टोडमस्पतिः	··· 6 LEANING SE
साराः क्रीहरूसम्बद्धाः यः	··· ***********	किन वेति राष्ट्रं व	or the contract of the contrac
कारुवा पाचा कालेनिय	The tollows	किन विदि पृशंसी अपम्	··· 4 46 40
नकथारप्रसाध ये नेनित्	··· \$. 22 24	कि पुनर्थेस्य संस्थता	··· 3 18 10064
वत्रदिशसम्	4 C 1 28 1 20 24	हेर्क समाप्र क्षियेच्हीमरि	" Received Same
काञ्चराजसुकोयम् -	· 4 38 - 34	र्कि वद्धि सुक्रयस	··· 6 gardes achieves
काञ्चितालक्ष साम्बन्धस्याम्	A. 63 . 550	कि ना सर्वजगासारः	- 66 . 64 . Al
कारिएकस्य जिसमे	399 ES V	क प्रकेमीयुर्ग व्याप्तैः	··· \$ \$3 5%
काञ्चित्रकारीचे व्यक्तियं	A	कि अक्षेत्रसरमञ्जनम्	··· demisajanites
क्षतिकारमाथः -	··· \$: 53 \$50	कि हेतु निर्वद होता	33 88 E
कारी च मीमसंन्तत्	··· A 380 2: XX	कींदुशं देवगुरूपं ते ं	or 4 12 36 . T 67
नश्रभपद्मीहता सुगर्स्तः	· Alem & Calent	की लीते विभएकी तीनान्	··· Aniga Carrents
अ १२४पतनवायास्तु	** ALC XLE E	<i>कुकुरभाजगानद्</i> चि०	··· 8 \$X 355
कारण्यः संहिताकर्ताः	3 The State 68	<u> </u>	Amaka da 63
बन्दरस्य क्यहोगः	on a Y and the comes.	कुण्डिनं न प्रशेक्ष्यामि	··· 4 - 28 1. 28 48
कारयंक्स्प्रगृत्य ः	" BALS & BANK	कुनोपृष्टिपृष्टिनिपृतिः	४० ११२० ४१
कार्य गरी दक्षिणकः	a \$1000 - 2006	कुरितको औँ ४ पुन्	५ िइद्देशीय
कक्षः पारदेशास्याताः	··· \$1200 \$1200	कुमारं क्युवयामे 🤃	··· Abratable
काशा निमेश दक्ष पश्च चैय	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	असुरक्षेत्रकश्चि	শতবাহনীয়ার প্রত্যার
किङ्कुराः पाकदण्डाक्ष	3.5 1 6 1 5 m	अुमुदेशकादामांसि ं	() ((中) (中) (中) ((中) (中) ((中) (中) ((中) (中)
किन्दूरेस्सम् पानीतम्	··· d . 96 68	युक्तभ्यं भय यावकानि	·· 3-7486-1144
किञ्चित्यस्य न हरेत्	· \$ 450000	नुस्कोषे वास्मानसस्यन्याभिक्ष	m Agriconta
किञ्चग्रद्दशरिक्षम्तस् <u>य</u> क्	A \$5 perce?	कुरुः पुरः शवाषुमः	6 @45 @ gr
किविमित्तमस्य प्राप्तः	· 技术教育的体验:	कुरोस्त्रनयसुत्रम् 🐇 🐃	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·
विमनेवस्य क्रोव	६ १६००%	कुर्यतस्ते प्रसानं अम्	·· 17/20/ 120
किमर्य गरनुषी महत्वे	··· 4. 4. 4. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12. 12	कुर्यता श्रति यः कारः	··· 6 56
किम्ब्रा <u>नु</u> हेच्यमन्यश्रा	··· A \$5 580	कुलद्रभेऽभि बोन्छिने	··· (\$100,680,000,53)

(XSE)

	(> (x	€ €)	
··· प्रतिका सः १९५३	अञ्चल अध्यतः अस्तिः	्रा . इत्यक्त ः । १९५	अस्ताः अस्त्रा भारते ।
कुत्सर ्यक्षप्र भिष्यः	en gir reducinti	बृह्ण बाराणसँभेव	··· प्रे ्डिक्ट व्हेर
कुलालचक्रमर्थन्तः:	··· Jagers Williams \$4	<i>कृत्वकृत्व</i> विधान ञ	त्व क्षित्रके हुँ के विश्वकृति
कुरशस्त्रक्रमध्यस्यः	## FREE CARS	.बृद्धाः भारावतरणम्	··· (६ ११३७ ० ११३
कुअल-कालाभातु	60 C - 160	कृत्वक्रिदेशि स्वश्रीरशंस्यम्	\$ PROPER NAMES
कुल इतिसं वयः सत्यम्	··· Sandie	वृत्तेषर्द्रीणञ्चा तहास	4 - 30 - 36
कुशस्थाओं तो न पुरीमुपेत्य	8 . \$ 2 . 11 (K)	कृष्णस्तानुतसुकरन्द्श्चा	··· 61 40 1 40
मुझारवली या तब भूप रम्यः	·····································	कृष्ण कृष्ण हिये होगः	··· Programme
बुदाली क्रमधीष्मः	··· 540-800(85)	कृष्णीहरूपामस	R 55 - 555
कुरुस्यदिषिः	8: \$ \$04	कृष्यस्तु तिमलं ल्डेम	··· 古古有的新教育的政策及
कुटसाधी तथा सम्बद्	··· 2 - 3.8 ··· 3.05.	कृष्णद्वैपायनं व्यवसम्	3 X 4
क्र्पेव्द्युक्तोयन	··· \$ \$6 \$6.	कृत्या कृत्या शुरुषेदग्	··· The ISS Comme
कृष्णाच्छः सितिधे सर्वः	··· १ १३ ० १३	कृष्णस्तु सत्सानं भाडम्	on the transfer of
क्ष्यवाह्यक्रमणस्यामः	··· ६ ८ व्यक्तिको ३०	कृष्णमङ्गिक्यमणिम्	कुरेनीय हो या इस्तरी श्र िक हो हो देश
कृतान्त्रसार दुवे अपूत्	\$ m \$ 38	कृत्यक्षिक्ष्य स्वर्गकान्	··· ६ःः -३३ ⊨ ३२
कृतसंबन्दनंखाद	··· ६वित का केर १०)	कुण्यसी वित्येक्यासीस्	··· 42 \$625 £8
कृतकुरुवीम्यालगानम्	··· 4 * - \$\$ \$\$ 55 5.3	कृष्णसोक्षरकं सूधः	४ ६ ो३८ १० ६०
कृतसम्बन्धनी तेन	··· Kulle (Qual ral)	कृष्णस्य वर्षाचे वास्	··· 14 14 14 14 14 14 14 14 14 14 14 14 14
कृतस्याद्रणस्यः	X . 55 - 121	कृम्माङकर्षन्द्रमसम्	w 40 18 3 47
कृतप्रणिपतास्त्रवादिषम् -	··· Y 23 - 548	कृत्या कृष्या समझाव	··· 4 33 1 456
कृतवीर्यादर्जुनः	··· (35 5, 22) - 22	क्ष्मगादिनं से भन्यसम्	··· 108 108 25 55
कृतपदः दिशीवस् र	३ ११ १११	कुल्लो निषददृष्ट्याः	क्क १४ क्षी है १३ ०%(क २ %
कुत्रकाकुत्रायोगीयो -		कृत्यमेऽपि सरुभव्यमाह	R. 1 83 64
क्टमारम तामपर्भी	·· २ ्के.ंर३	कम्बोऽपि दिख्यसमात्रम्	& at \$3 .423 &v
कृतकृत्वोत्तरम् भगवन्	··· \$. \\\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \\ \	कृष्णोऽपि ते द्रधारिय	C. A. M. 45
कृतकृत्यमिकात्यनम्	\$ \$4. 3	कुम्बे है सहितो गेर्डमः	4-1-44 E. 58.
कृ <u>तानुस्थितिकात्स्यः</u>	··· 8: 20 5 - 168	वृत्रमोऽहमेव लाउतम्	Vinc. 35 m 47 98
कुछवर्तासतस्मात्	6 00 6 4 4 6 6 6 6	कृष्णोऽपि दुसुधे तन	Carry Source Con
कृतस्यतसस्य द्वा	५ २५ ्र	कृष्णोऽपि असुदेवस्य	··· • • • • • • • • • • • • • • • • • •
कृताचे।ऽद्वारान्देहः	" To a	कृष्णीक्षयं जिल्ह्यामास	- Curanti and a
बसारोपानुपः 🧠	··· 3: 44 43	कुल्गोप्रीये कार्ताकार्यस्	· प्रश्निक्षा अस्ति । इस्ति ।
कृते युगे लिहागम्य	A SA 184	সূসনী সমি মণ্ডেশহার্থ্য	··· ASTRANT
कृते कृति स्मृतेर्कित	··· ३००/-२ १८४७	कृष्णोऽपि कृषितस्तेशाम्	5 1 30 1 1 26
कृते फपेऽनुतापी वै	- 5 - 5 E - 540	कृष्णीः अधीति राजारम्	५३ ३ ह े इस्
कृते जपे हुने यहाँ	\$ \$8 . 45	कृष्यासा अविता सीमा	··· dien Comment
क्टो युग पर अनन्		केविसनुर्दुर्ग यावन्	" . S" \$5 " 62
न्योतामी च तानुभावपरूपर	** K : \$9 28	नेरिकाद्वीतर्ग्या विद्यालम्	···: ትርቆንላ . ተሪ [©] ች - የዛ
कृतोपनयनं सैनमीर्वः	M. Kinglerik w	केविप्रीत्येत्यलश्यान्यः	· 多图心理》 · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
कृती सन्तिष्ठकेञ्चम्	Υ L ⊥() β ξ }	केबिद्धसभ्यंणीभाः	··· Karley & mar 1949.
कृतर्वर्वरिक चेनम्	2007 1622 6604 46	देशियुव्यक्तमः	··· 495594-0344
कृतंत्रेता द्वापरस	·· 10/3 15	यन वर्षन बद्धे ज्ञम्	मा द्वाराध्य वस्त
कृतं तेता द्वा यरं च	··· 4 (44)	केनलासुप्तरमृह	Salvasanas se
वृत्रसम्बद्धम् अस्तेषु	··· 🛊 🖟 😭 🔆 🔆 🖓	वेखलाइन्धुमझ	·····································
कृत्यो च दैत्यगुरुवः	un १ दहः 🤻	केदहरियद्दर्श्यकामे ध्य	·· \$ 415 2 2 449
कृत्यक दश्यक्षकं सक्त्	- See 36: 1 36 2	केदिरभन्ने निपुन्तार्गम्	··· 6

· (x/99) ·

	. ()	(99)	
THE PROPERTY OF THE PARTY OF TH	अदङः अध्याः रहाः	ः व्यवस्थाः	अंशाः अच्याः इलंक
উহিচ্ছত্ৰ নিৰ্মাধ ব্ৰণ্	E 5 t	किवासनिवृति यस्य	39 5 5 5
केदिओं बदने तेन	- r . SE . So	क्रीडेन सन्सानाकम्य	4 28 82
केली चापि चल्लेस्सः	- Particle Same Strange	इतेष्टोस्तु बहुपुत्रस्य	A maple proper \$
केयोडाकृष्य विगलत्	··· 4 80	त्वीकाद्वीपो मस् भा ग	1 300 B 101 BE
कैलर् नबहुपुलिन्द॰	··· 8 . 48	क्रीसदीपे द्यतिमतः	্র্টাল্টাল প্র
को सर्नः कश दासर्वः	तान दि व्यवस्थित स्तान देवे	क्षीत्रश्च वापनश्चेष	த ^{ிப்பதுகள்} கு
को नद्राः कि समाचारः	··· Angeriage &	कीखडीयः समुद्रेण	9 8 No
को नु स्वास्त्रभाषाभिः	··· 4 2 4 2 2 2 20	क्रीको पैरावित्यन्तद्वत्	··· 3 4 8 4 5 58
ब्रोपं बब्छत् राजानः	१ १५ द	कोया तु जनवान्त्रस	१ . २४ - २४
कोष. स्वल्पोऽचि मे नास्ति	· 4 4 4	ऋरैर्यमायामयं घोरम्	\$ 10 75
कोऽयं कथमयं मत्त्वः	··· 4 70 9	क्षेत्राद्द्वन्त्रनितमाओति	
कोऽसं विष्णुः सुदुर्बुद्धे	··· \$ = 3 \$ 600 5 48	क च स्वं पञ्चवर्षीयः	8 183 60
को प्रय इक्रमस्त्री नाम	m 4 . 80 86	क्षिद्रहत्त्वायन्योन्यम्	¢ £ 3%
कोदारलकापुण्ड्तस्य	& 58 ES	कविद्रोडींभस्समं रम्यम्	س ود پريونو و پريونو کارو
रहेटिल्य एव चन्द्रगुप्तम्	& \$8 \$5.	क्रिक्टिक्ट्रायरूक्टिजी	··· Quality Extra RE
क्षेपीनाच्छादनप्रायाः -	٠٠٠ لو عواليا الم	क नावस्थ्रमसम्	\$ TE TE
कौरवाणां महोपत्त्वम्	५ °३६° े रु	क निकारों भवान्त्रिप	२ १५ १८
कंसपत्न्यस्ततः केसम्	··· ५८°३१८ हार्नेहि ह	क निवस्साधायेत्युकम्	
कंसस्य रजकः सोऽय	६ । व्यक्तिया अवस्य है	क पत्रगोऽल्क्वीवीऽयम्	Section spinite was in the
कंसरतदेद्विक्षमञ्जः ।	··· G THE R	क योजना जुसी पूराः	1 G 20 80
वंत्सस्तूर्णमुकेत्यैनःम्	a emily and the second	क दारीरमदोदान्याम्	१ १७ ६२
र्कसस्य करदानाय	m a sin bereite	काण्यता तैलमध्ये च	ता । जुला वीद्राप्त १८
केसस त्यामुनादायः	··· 4 2 20	क्षयोन नाभवस्कांश्चेत्	હે ગુહા હેરૂ
कसस्तवीर्यसम्	" Paris Angliky &	क्षणोन दार्खनिमृत्तिः	ધ્યારુક રેજ
येत्सकं <i>स्वतीसृ</i> दन्-	3 32 56	शरोनालक्नुता पृथ्वी	4 6 83
कस्थ्य चाट्टमी एई:	··· 4 3 5 50	श्रण भूत्वा त्वराी तूष्णोम्	i 63
केसाव नारदः प्राह	क्षा स्थापन के प्रतिकृतिहरू । क्षा स ्	श्रमकृद्धाःसुरोतः	A 12/15/16. S
कंसे पृहीते कृष्णेन	35 1 7 7 7 8 5 8 6 8 6 8 6 8 6 8 6 8 6 8 6 8 6 8 6	The state of the s	& we 400 400 1. (46
कंसो: अप कोपरकक्षः	" America September 35	श्रुतियहणासये धर्मः	··· £
नस्योजीय तद्यपञ्चल	··· ५ वेश विकास्ट ्	क्षसभागो विष्णुः	१ ° २२ ह्र
केसी नाम महाबाहुः	U	शाप्रे कर्न दिवस्थोत्तम्	··· 3 46
र्कसः कुवलकामीडः	कर विद्या सङ्क्ष्या स्वेत्य	क्षानेदेन चथा द्वीपः	en (≛i gentêşt jeke∳
कः केन इन्यते जन्तुः	\$2 . \$5 1 - 34	क्षितित <i>ारम</i> समाणयोऽ निरुक्ते	··· 32 6 60
क्रकचेः पट्यमनलाम्	··· E Contract & RE	क्षिकेस भार भगवान्	Con Table of the
ब्रह्मपंगस्त्रधोर्णायुः <u>ः</u>	*** \$\$9\$R	A commence of the commence of	५ २७ - ११
क्रतोश सक्ततिर्भादि	१ १० ११	20-1	tr 30 Es
अध्यस्य स्तुचापुत्रस्य	R. 35 89	ंसप्तः समुद्रे यस्टस्य	4 TO 10 80
ऋमेण विधिवसागम्	<u>Errine</u> = 3E	र्ताणरास्त्रश्च वगृहुः	i. 30 se
क्रमेण ससु साङ्गाल्यू	··· 6 \$\$ 35	शीणासु सर्वमायाहु	Salas 68 1. 40
क्रमेण येन पीत्रोऽस्री	·· 4. 64	Sec. III. a Large, 21, 4-26.	··· १ २० ३४
क्रमेजानेन जेथ्यामः	··· A SR 530	The Later After Americal	- 40° C. A.
क्रियमाणेऽभिषेके तु	ri \$5. 6x.	र्श्वरभेकदश्यानां यत्	इ १६ ११
विन्यतां सम्महाभागाः २००२	··· Marine & Application	श्रीरक्त्य इसा गावः	··· 4 76 78
क्रियते कि वृक्षा करस	Same Branches	श्रीतिक्षिक्षः सर्वती श्रापन्	5

अंकाः अध्योः " इत्येः

अंकाः सध्याः - इत्होः

र देर्दरेकाः... रा

गर्य दला निवर्तने

र् ं इंट्रेन्स ः.् च	अंगाः दाध्याः - इस्तेः	ু ইংগ্ৰহন:	अंकाः अध्येष्ट प्रत्येष
क्षीराण्यौ श्रीः समुत्यन्त	39 . 37 9	त्या च क्रिंह कोन्तेयम्	··· [14] (11) \$6077 11 149
सोरोचे रूप पुकली	· 6 - 6 - 608	गदतो सँ विप्रचे	··· 4 (1)38×429
शीरात्मध्ये मण्यम्	2 9 .60	गनाव्यं वस्टेवस्य .	un & ARTORE
शीरेरलं सं कृतम्	··· \$ - \$'5: \$5	गन्धमादन वर्षे तु	·· 3 ·· 8 ·· 43
शुक्रवतक समोविकशकुः	** * * * * * * * * * * * * * * * * * *	गुरुषमादनकेरलस्त्री	m 8 2 80 1188
<i>धृर</i> क्षामान-धकारेऽध	m \$4 188	ग-भवंदभरक्षांसि	- 34 05 150 AS
शृक्षणोपशमं वडव	2 20 60	गन्फर्रियसः सिद्धाः	··· १ क्षाहर्षः सम्बद्ध
्रातुको देहसार्यक्रिये	·· २ १५ २१	गश्चर्यपार्वत्याकः	··· Burness and An
भुवस्य तस्य भुकेन्छ्यं	m 54 \$0. 1 66	गम्साय महामाग	···
श्रेत्रज्ञः करणो ज्ञानम्	-11 \$15 Var 5 48	गम्बभुपेत्य यः शहस्य	12 14 3 a la 68 15 1 1 12 3.
थ्डेनितः स तया सम्बद्धम्	१ः १६- १३	गरुस्थानसङ्	··· 4333.38
स् <u>वेत्रमध्ये प्रमायन्त</u> ी	··· 48 \$	गरुरो कड़र्प छडन्	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·
i ji ji	101 0 3 100 100 100	गरुडं च दर्दाई है:	··· 4.448.448
सर्वाद्वादीर्घवाडुः	··· 8 48 1153	गक्तम नाम सुम्हेन	on divide uses
सम्दामासमतीकात	··· \$5. ~\$6~ · 3	नर्गत जेकुले स्व	··· 445554 5786
रसा मु यक्षरहाति	१ २१ १५		··· 8:22.45. 33
प्राचिक क्याजनकायात्	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	गर्भजनम् अध्यक्षः	··· Carling to the Carlo
ज्ञाण्डिकयः कोऽभक्द्ब्रह्मस्	··· \$:\$ - 1 \$	गर्भराङ्कर्यणास्तोऽध	··· jagan naga na tera
काष्ट्रिका संदर्थ प्रष्टुण्	& & Sr	गर्भस युवनासस्य	🗶 🖫 😘 😏 🝇
स्विष्टक्षक क सकत्	~ \$ E	गर्भप्रस्मृतदेखेष	··· 5 \$5 \$0.
सान्टिब्बेअपि पुनर्दृष्ट	··· Remark in 188	गर्भवासदि पावतु	··· Sim Staryer (88
एएएडवर्षेऽपि सुदं कृत्वा	\$ y \$	गर् भारमयधार्थाय	··· 文《宗教》、2010年"
र्यातिः सहयय सम्पूर्ताः	ere the think of the	गर्भेषु मुसलेको प्रथ	··· 1 40 . 26
छक्ती भृति च सम्भृतिम्	··· 6 . 3 ··· 40	गर्वमर्खनता पुराप्	··· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ··
7	The second of the	गवाने असूर्य वाष्ट्रम्	ः प्रशा १२ ००१ १६
चनुष्यः सस्तिक्षीयैः	4 6 6 608	गतन्द्रीगरिवपु स्थेनेजु	··· ६०० ३८० । ५०
यमुह राष्ट्रेति सैनीम	ा २ ८: १२१	गार्थ गोष्ठयो द्वितं स्थालः	··· A de la 63 mention
गर्म रहाई यम्बर	- \$ 8x - \$6		K 0 \$5
गण्क स्वे दिल्यना गत्या	bi 34 34	गाधिरणतिरोषणाथ	8 Q. W. 68
गब्दल्ती ज्ञानस्थित _ः	··· 4····86. \$5	ेश धताभन्यगोपानाम्	··· Pundulut (XX
यन्छ पापे वधानवकः	··· Sailfor Ko	भागती अनुसारमुख्यः	ल १ ०० ३ ६ वट ४६
गम्भेदं हृहि वासे त्वम्	# -38 SX	गायसि वैतिसम्बद्ध कटा नु	· 3. 38. 36.
गच्छेनं विद्यामहासाधम्	- Y, 8 28	गार्थीस देखाः किल गीतवर्षात	··· \$ = 3 = 50
गजो योऽयनधो खतान्	en 5.: \$4 \$4	गासत्रे च त्राच हेव	m - 535 - 524 - 523
गमः कुनस्त्र्यामीतः	4 - 614 :	भावस्तु तेन पतता 🕝	··· de sérendo
मञ्जः कुळल्डवापीठः	··· 4 \$15 = \$16	गन्यस्तानः समुसूकः	··· 5 . 35 46
गुणे क्रोधकर बिदि	··· १५-२१: २३	गाबदशैलं उत्तक्षक्रः	··· Almir California AC
मते सर्वे परिश्वन्य	··· 4 · 6 · 85	गिरितरे च सकलमेव	R. 483 80.
गते य तस्तिन् सुप्रयेव	x -53 -94	गिरिकास्क्यं तस्मह्	··· Audison 128
मृत्ये समाजनसम्बद्धाः	X - 5x 350	विस्ति कृष्णे की	4 20 3/6
यते इके ते गोपात्वः	५ः १३ १	गोतादसाने च भगधन्	··· Y . Att Fire too
गढे झुणसनं चक्तुः	५ १३ , <i>५७</i>	पीतं सनलुक्ष्मारेप	··· 3- 14- 58 56
गते वसिमन्स भगवान्	- 7 1 30 . All	र्मियमानः स गोपोमिः	· 6
			time to the second seco

··· \$1 554 11 30

गुलसम्बन्धद्रहरू

	1 , 4 .6	1941	
ুল্লার হর্তীকাঃ সমুগ্র	श्रीसाः अध्याः - इस्त्रेः	্ব হুক্তাবারঃ ্বং	अंदाः अस्त्राः चर्त्रेः
गुणप्रयुक्त भृतासम्	······································	नोनिश्च सोदितः कृष्ण	··· • • • • • • • • • • • • • • • • • •
पुणवयमय होतद् 🦼	8 " 4. A.C.	नोमेद्रहैष चन्द्रश्च	· 13 18
गुणसान्ये ततस्तस्मिन्	. स् १ ज्यास्य	गोषाटमध्ये झीडन्ती	· 电自动线性 (1975年)
गुणसञ्चन	শা গুলুছাল ব গিলেই	गौतमादिभिरन्यैरत्त्रम्	8 9 98
पुणा न चास्य शायके	****************	गौरवेणातिगहता -	··· \\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\
मुलाक्षान <u>श</u> ्चाम्बरः	6 .50 80	गौरवः पुरुषे मेघः	··· jog og storet og skilligg
<u>मुरुदेवद्विजातीमाम्</u>	··· ५ ० देश् _{र प्रक्रिके}	गौरी लक्ष्मीर्महाभागः	\$.7 hard, 136
गुरुवामधि सर्वेदाम्		गाँरी कुमुदती चैव	8 X KK
मुरुगाममतो बतुम्	·	गोरी वाप्युद्रहेल्क्यान्	··· 3 ··· 36 ·· 30.
ृत्समदत्य शीनकः	150 m & 0 8	गाः पालयस्त्री च पुतः	··· 4 () 4
गृहत्थस्य सङ्ख्यास्म्	- ** \$ 1.28 % \$\cdot\text{\$\cdo\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text{\$\cdot\text	ऋश्वीतस्करमधी	** भ्रत्यात् क्षेत्रकः १२०
नृहस्य पुरसञ्जाप	··· \$ ~ 48 mm 24	प्रहर्द्धाराज्ञीयस्थानि	5 " \$ 4 " 44
गृहाणि च यथान्यायम्	··· 激,不是原始的情况。	अहर्थतारकाधित्र ः	··· भागकार्यकात्रे
ृक्षिता द्रव्यसङ्घाताः	··· & 1 1/2 2 1/2 1/2 1/2 1/2 1/2 1/2 1/2 1/2	भ्रान्यारण्यः स्टूता होतः	··· १ ह-६ <u>-</u> २६
गृहीत्वानस्यजेन	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	पान्यो हरिस्यं कासाम्	··· 44-46-46
. गृहीतासिन्द्रवैरधीन्	F \$ 6.8 314	प्राण्यि रहे च पशक्य	3.6 FOR 184
गृहीतनीतिक स्था तम्	\$ 100 g = 30	f -	54 min! of it
गृहीतनीतिशास्त्रस्ते .	** ** * ** **	बृद्धमात्रं च म्माह्मरः	··· ¥ \$ ¥€.
गृहीतो विष्टिमा विष्	4 po k = po 4 i	# 35 %	₹ 11.5°
मुझेतमक्ष्रेद्धः .	S Manager & Company of the second	चकर्ष पद्भयं च तदः	··· 40 - 30.
युद्धेतिन्यो गुरवे	3 to 12	चकार सञ्च कृष्कुत	··· 44 - 34
मृहोत्वा आमुख्यमासः	m by mydray of	चन्त्रर पञ्चरित्रधीयम्	··· 4 - 30 + 455
गृहोत्त्रस्ती ततस्ती तु	**	चक्य यानि क्रम्बिय	ના પ ાકાણકાણિકાલુ ા ણે.
गृष्टीत्वा वां हस्मचेनः	May 60 13 180	चकरतमुद्दिनं चासी	··· २ . १३ - ११२
मृहीति वहवेद्यो अस्म्	hipita 400 (* 184-)	चक्र-प्रतापनिर्देश्था ु	··· • • • • • • • • • • • • • • • • • •
गृक्षाचा विश्वयतसर्वम्	4 34 50	चक्रमेतसमुस्य <u>म</u> ्	१९८५ व्याप्त देश करा है है ।
गृङ्गीता दस्युमियांक्ष ः	··· &\$6. Wo	नक्रवर्तिसक्त्रेप	··· ६ न्यूनि व्युप्तिः
गृङ्कति विषयाप्रित्यम्	4 64 64 34 1	चके नामान्यश्रेतानि	··· the terms of the second
गोपुरोबमुफदाब	m 4 4 4 4 4 4	चक्रे कर्म महत्त्व्यौरिः	<i>க</i> ுகத்தத. ுட்த
ग्रेसुक्टे एसुदेवसा	in the Filt was	चक्रं गदा वथा सार्द्रम्	··· 4 30 47
प्राप्त भेदभयान्छत्त्रे अपि	K . 88-1 38 ;	चलुश मशिमगिरीन्	··· • ት ለ ነ _ማ ትላ _ማ ት አ ው
गोदावरी भीषरण	property in the state of the st	चङ्ग्रस्थमाणी ती तमम्	in the give to the
गोगबुद्धास्ततः सर्वे .	prints 8	चचाराशमपुर्यनी	m Emily + An
गोपगोपी न्तुर्दर्द ्	··· ५° -११~ - २१	चतुर्युगाणां संस्थातः	··· १
गोपालदास्वयै प्राप्ती	··· 4 1/2 80 - 188	चतुर्दशनुषो होषः	gle mighten gef.
ग्रेसी आह हलञ्झेतः	Hat 65jat 160	चतुर्विभागः संस् ष्टी	··· रेहः÷२२्ः - ३३
गीयाः केनेति केनेटम्	··· भूतिकिताल	बतुयशीतिसाहस्तः	च २ ६६० २ ०६५० ८ .
मोधीपरिवृतो समिम्	··· 4: \$\$?\$	चतुर्वशसहस्राणि	Sillerigi melijk
णेपीकपोलसङ्ख्यम् 	··· 4 88 - 64	वर्तुगुणोद्धरे सोधर्तम्	5-5. 4 42
भीनेश पूर्वयदामः	4 (\$\$. \$\$ }	चतुर्युगानी सेदानाम्	18 - 18 - 18 - 18 - 18 - 18 - 18 - 18 -
<u>चेत्रसम्बद्धतीः</u>	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	ऋतुर्दशभिरतीस्तु	··· # 5 5 5 5 5 5 5
गोप्यश्च कृत्युतः कृष्ण-	1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1.	चनुष्येऽप्यस्य विष्णुः	··· \$ \$ \$
पोप्परस्यन्या स्टब्स्थ	and the state of t	चतुर्धा समिनेदाय	··· \$ \$ 80
मोजः पप्रन्तुस्पतः ,	m 410 38 10 85	चतुष्ट्रयेन भेटेन	·· 👌

5 4 5X

\$ 22 ° 44

२०वेकाः

विक्यभिति गोविन्दग्

विन्तवेत-मयो योगी

^{रिका}श्रहेकाः । १३०

चनुर्थान अमे विरयो

बतुरंको भूतमसे य एकः

जिल्लाम् विकास

विकट्टरस् कर एव

जित्तयामस्य चाकूरः

जिल्लयसी जगतपूर्विम्

अंदाः अध्याः एतोः

4 16 2

E 6 66

४ व्यक्तिसम्बद्ध

₹ ₹5 €%

Crain Contract

THE STATE OF

बतुदक्त भूतगरा य एकः	400	\$ 33 44	विन्तवतम्भया वागा	777	8 9 64
चतुर्वञ्चष्टमी थैव		378 79 5	विदं नष्टेन पुत्रेण	1.11	c 20 39
चतुव्ययं चैत्यतहम्	14.0	व ११ १३	चीर्ण रूपो यतु जल्मश्रयेण	101	8 5 553
चतुष्मधारमस्कृषीत्	18.	\$ 65 65	येखुलेकसिरहाभिः	1-1	५ किंद्र वास्त्र
चतुर्वे प्रहें न कर्त्रणप्	1981	\$ 53 68.	चैत्रकासुरमासङ		3 2 25
चतुओं यत्र वर्णानाम्	119	98 38 €	चैत्यवायरतीर्वेषु	-11	३ ११ १२२
चतुर्दश्चनाओसाग्यान्	114	५ २९ ३२	चीरो विलोहे पर्वात		5 6 68
चतुर्युगान्यशेषाणि	p k q	E . E	व्यवनासुदासः सुदासात्	114	R 16 05
<u> दतुर्वगसहस्त्राचे</u>	****	\$ 3 68	4 2	Se.	
चतुर्थस्यविद्यसः	***	3 6 6x	स्त्रं यस्तिक्क्रमधि		4 56 50
चतुः प्रकारता तस्य	•••	₹ - 2 # - 3 #	सागासंक्षा ददी सागम्		\$ COST
चतुःपञ्चान्दसम्भूतः	F17	8 64 38	खनासंशासुको योऽसी		₹ ₹3
चलारिस्ट्रशै च	613	A 5 6x	क्रिन्दित वीरुधी यस्तु	-1-	5 55 50
चरवार्र इस्साइस्तांन		२ ६ ६	छिन्ने बहुधने वनु		4 53 36
क्तकरि प्रीणि है चैकम्	+-+	र के रर	A A	장 *	, याचा स्थापन्ता
चरवारि भारते वर्षे	161	P\$ \$ 5	सगरादी तथा मध्ये	700	4 45 28
चयलं चपले तस्मिन्	871	\$ \$3. \$0.	जगतः प्रस्योत्पत्याः	***	3 2 58
चनस्य हर्वहः	***	X 50 55	जगरेतरना गारम्	***	3 32 88
चर्मकासङ्गरी कृषीत्		\$ 4 .50	जगत्वर्थ जगन्त्रथः	144	4 9 36
चलतस्यस्थमस्यत्तम्		१ इसे छिर	जगदेतमध्यस्य-		4 89
चलितं ते पुनर्शक्ष	Lod	\$ 6 69	<i>जग्देतवाग</i> नाथ	411	4 50 508
बाक्षुस्त्रान्तरे पूर्वम्	45.0	£ 84 \$38	जनतानुवकात्रयः 🕆		€
चासुरे चान्तरे देयः	440	3 8 88	जगाम वसुधा शोपन्		र १६ ३
चासुपाछ पवित्राध	100	इ २ ४३	जनाम सो अभिनेकार्थम्	F17	\$ 88 88
जाश्याचारिमरप्रसामनः	114	8 2 24	जामुर्मुदं तहो देवाः	112	April 6 4 1 1 1 6 6 1
चापुरोऽत्र महासीर्यः	0.8	9 84 8	जग्रन भरणीं पार्ट	•••	५ १६ १३
वास्तुव्यक्तियो मल्लो	1.63	99 99 9	जपन तेन विश्रहेवात्		L 33 40
चार्युक ततः कृष्णः	1909	4 70 84	जन्मस गगर्वा हो है		6 6 66A
चाणूरेण चिरं कारूम्		५ २० ७४	जठमें देवकूट ह		5 5 X6
थाजूरे निहते मरुके		4 20 60	जडानामस्यिकतनाम्	1	8 66 20
चान्द्रसा तसा गुक्कप्रस		8. 5. 90	बहुगृहदस्थानां राज्यानवन्त्रम्	***	A 52 00
च्चनार्यस्य तस्यासी		३ १८ ५८	जनावैविधिभेद्यः		१ ३ २५
चारमसं पहाचीयम्	4.1	4 44	, जनस्केन गरीसिस्ट्रीः	100	र ४ १०
चारदेव्यं सुदेव्यं च	201	५ २८ १	जनलोकागतिसन्दैः	171	E HOLL BOOK SERVE
पार्शनर्द सुदारं च		५ २८ २	जनश्रद्धेयानस्तत्	415	05 33 G
चार्वमां चारका	***	q 35 83	उनकपृद्दे न महस्यरम्	444	४ ४ ९२
विक्रेप च जिलापुरे	171	५ ३ २६	जनगण्डनकर्मश्रम्	4-4	A 6 55
विदेष स च तां दिशाम्	***	५ ३६ १७	जनमञ् र क्ष	1.15	8 83 602
विनं च कितं च नृगां विश्वद्वम्		३ १४ २०	जन्मे बगस्याणि		A . 36. 18. 3
4 Pd of					ment or professional desirabilities and Statistics.

जनमञ्जासमृतिः

अभन्या महस्यःसम्

जनहःसारमञ्जान

जन्म बास्य ततः सर्यः

18

4

30

4 . 73

. lq

9 09

27

(%८१)

(~(% <u><</u> %)				
्रिक् लोकाः १८५	अंशाः अध्याः (इलो॰		अस्तिः अस्याः "उस्मे।	
जन्त्रंपभोगारिशसार्थः	ու է «Կիլի մանվ	आप्यकानव्यमसम्बद्धः	a. A. jan 648 1944	
जमद्रिविस्थानुः बेखं स्टब्स	RODDAL DEC	जायमानासु पूर्वे च	··· \$	
सम्बुद्धियं महापाग	2 MARINET TO	ज्ञासमानः पुरीयात्म्	\$400 BURK	
অন্ত্রীই বিদাশাগ্র	2 1 1 2 2 2 m	जिलेपसुरस् <u>त्रोषु</u>	d . 55 . 125	
जम्मूडीये स्थरो वस्तु	4-5-14-1-1-1664	जिले तस्मिन्सुदुर्वते	··· देशः ३३ क्षा द	
जन्मुद्रीयः समस्यानाम्	··· 4 : : 4: : : : : : : : : : : : : : : : :	वितं पहेन अनेता 🔭	6 50 55	
जम्बूद्रशस्त्रयो द्वीपौ	··· 5 - 2 - 2 - 2 - 2 - 2 - 2 - 2	जिल्म विभुवने सर्वम्	[** F F F F F F F F F	
अन्भृद्वीयं समाकृत्यः	\$20 pt \$40 \$ \$70 \$2 \$	शिक्षा व्यवस्थिति ।	··· 5 - 44 - 150.	
जन्मूद्रीपस्य विस्तारः	···· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·	अर्थिन प्रीर्थतः केलाः	· Andres de sin sa	
अन्तृद्वेपम्य सा जन्मः	m \$ 43/2 2/2 200	जुरुन् रजेल् <i>में तत्र</i> ः	\$ 1500 (\$150) . \$ \$	
अन्युष् धामाणस्	3\$77 K X 778	<i>बुहुवाद्यशानशाः</i>	··· श्रीकामकृष् श्रीकृष	
सर गोविन्द् चार्यम्	4	कृभकाक्षेत्र चेतिन्दः	५ ३३ १४	
दमद्रथः बह्यभूत्रानगरः	X \$8 53	क्ष्मानिभूतस्य हरः	··· ५ ः ३३ः २५	
ज्ञयध्यन्त्रतात्त्र्जङ्गः	8 milk kan mas	जुष्पिते शहुरे पष्टे	··· प्रतिहेड्ड ेस्ट	
जयासिरुद्धानम्य -	- 1 Tak maist	जीमिनि साम्बेदस्य	in Kran Harly of	
जयेश्वराणी प्रतिश केश्वय	4 zz; 8uz 1/86	इक्तस तुर्विधो स्रोतः	e freezensie	
कार् कष्टजदीना (१ काश्वास्त्रक्ष	ज्ञानमतन्त्रया स्वतः		
ज्यासन्यस्य पुत्रः सहदेवः	··· And Station	ज्ञतमेतमञ्ज युक्तभिः	म्यः ४ श्री देश स्टईप्	
ज्यास् यसुते क्षेत्रः ।	<u>মূদ্র ই</u> য়ালের স্থান	इततो प्रस्त देवादेवेश	or drawater year	
ज्यसम्बद्धो देऽचे	क ५ हर्न्ड ्र	हात्या प्रमाणं प्रध्याध	·· \$. \$4	
लहससंदेहश 🦠	6 3 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4	अत्या त असुदेवेन ः	⁽¹⁾ , 4 , § Y:8, § Y:4,	
जलधिर्देख गोविन्दः	··· \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$	इतस्यह-प्रमृत्यन्तः	in Kani (gal), terral	
जलदश्च कुमार्धः	··· Strike	शनसम्बद्धमाण्डम्	6 ab 3. 20	
जरून्य नहीत्रसंसर्गः	··· १८५४%) व्यक्ति । व्यक्ति	ज्ञानवयस्य ये तस्य 🦿	an bar An angh	
वसेनग पूरिस्यः	··· \$ 151,28 15 16245	ज्ञानमेत पर बख	देवारिक दिवस्त पुरु	
जहि कृत्यनिमामुद्राम्	r	अनुसहर्ये भगगानातो हमे	\$167.55 : 1134	
बद्धोश सुमनुर्वाम	8 10 to 10 to 10 to 10	अनुशक्तिक्ष्टेश्वर्यः	in g inglich 194	
तड़ोरतु सुरधी जाम	X \$800 00\$	ज्ञानप्रवृतिविधमैक्यम्याय पुराः	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	
जनसँखे व्यवि ख्याते	m 12 6 2 68 1 266	ज्ञानात्मा ज्ञानकोणनः	\$ 15 L. C. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1.	
जातस्य जातकर्गादिः	··· Brankank	ज्ञानाराकस्यामस्य सत्त्वयक्षः	··· ५: व्यक्तिक व्यक्ति	
सारक निकती मृत्युः	4 36 68	शानस्त्यक्तिकः प्रोक्तः	m \$@	
जातमञ्ज प्रियते ः	m for the factor	जन विशुद्ध किम्छं विश्लेख्य	··· :: : : : : : : : : : : : : : : : :	
क्रिक्सिस्याद्वद्वितः	5 . 53 . 38,	ज्ञेया इस्टर्पयः पूर्वन्	\$1-4 E. 30	
जातिसमेरण कथितः	स्वरावरा डे के ' मुक्कि कर्ड डे .	ज्यहाम्हे सिते पक्ष	\$1 -36x-28	
जातुकाणीऽभवनमराः	m \$ militaritate	ज्येष्ठा मूले सितं पक्षे	· # C. S. S. S.	
जातेऽपि तस्मित्रम्बतेजोनिः	- A: \$ 5 \$ 5 .	ज्यष्ट न राममित्याह	-০	
जारेन च तेनासिङ्ग्	A w 160 325	ज्यातिर समनीयम्यम् -	1 . 12 . 12	
अरोअंत देवदेवश		ज्योतिभातः कृष्यद्वीन	··· \$ 12 x 134	
कतो नार्यय के पासकीत	A A	ज्योतिम्बन्द <i>रूपसोप</i> न्	··· देशके देशके	
शतानि भारते सेदो	r	ञ्जोतिषाम पृतुः करणः	3 . 4 . 6	
ज्ञानां श्रहे यथा सहान्	14 1 52 11 55	ञ्योतीथि विष्णु पुत्रनानि विष्णुः	२ १२ वट	
चानाणि ते अति दाराष्ट्रम्	A 34 - AS	ज्योत्सक्षणमे तु बिधनः	··· Special Control of the	
बानोग मैतका वर्ष विकीन	··· 小便那只知道几个小爷是,	ज्योतसा राज्यस्मी सन्ध्य	8 4 80	
जम्बलती हात्तःपुरे	X 14 184 1 184	ज्योतस्या सङ्गीः प्रविधोऽसी	··· 网络沙沙鱼等	

Logical and the	ा । अंद्राः अध्यार ः इस्टोर	०५) ् हिर भूसोका ः जन्म	अस्ताः अभ्या•ः रहेर
র্নাড় কেরে জ প্রাথ	- 1		** ************************************
ज्येत्वा वासरपर्यं त्यम्	354° -54°	अन्त पृथियोग <i>रः</i>	
न्यतिक्षां गातीस्वर _े	25 25 27 27	ततस्तै शत बतुष्यः	
स्थलकाराकरणपुरा 	··· १(तर्राष्ट्र वर्षे	तत् उत्स्यस्यामासः	an 21 maring 62
ञ्चारत्रपरिष्कृतारिष• 	r 38	तत्रभ्र देखेर्मुनिमः	··· १ मा१६ मा १०
ञ्चारचरामसुरा सहिः	4 40 80	टक्से तरिपतुः श्रुखा	5-0 to 30 43
35 57 -	de the stocked	तिवस्तानाहः भगवान्	\$ \$\$ \$0
तम् निष्योः परं रूपम्	··· Simple of the	ततस्तम् दुर्वस्टम्	- Alan Kalanda
तस्य द्विस्तरगतम्	··· Resident EE	तताला सारवसो विष्रः	620 inde 1515 44
तस्य पुत्रविवयम्बरि	A. 56 58	ततसीदशवस्त्रे देखेः	··· 6 - 60 - 52
तत रूपनुस्तरपद	X 1 = \$0 (1) 4\$	रहाक्ष मृत्युमभ्येति ः	··· (\$ = \$ 6 = 1 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0
तस श्रुविन शियराणम्	in Russign bago.	करान्त्रं चिक्रियुः सर्वे	\$\$6\$5
तच विषयिते सुर्खस्यः \cdots	··· ४४ विकास अवस्था २८	तहस्ते स्रकार देखाः	··· X CONTRACTOR
तच तथेयातुश्चित्रन्	··· Ridinghamas	तहां स्वारं चेंदरी ह	
तस्य करण्यामपरिनेषः	m A or of stille.	तत्त्र ध भारते वर्षम्	5 may 5 mar 36
त्रच इलक्षं व्यक्तिः।	en feridan eggs.	व्रतस्तमः समाकृत्यः	2 3000 M 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10
त्तर जिमार्गपरिवृतेः।	an Riber alege aleed	वत्रस्य स्टब्स्	一月17日期前時間 医甲烷酸
तसास्य प्रातृशतम् 🐇 😁	n	तत्रश्चित्रसाचि	··· Strategowiches
तचारियक्रमणस्तः ।	12 152 150	रावधान्यपुनिद्वाच	··· १८६ है। इ.स.ट्रेस्ट्रिक्ट
त्वित्रविमलाद्वारः	५ १३ १३ १५ ५१	तमा त्यालक्तम्	१००११व्यव्यक्ष
লেভটকদৰকহিন্তু :	R 43 66.	सतस्तीचीरसङ्ख्य -	२ ०१३ इ.५१
राष्ट्रस्याम मित्रकरणयोः	A	ततस्य ऋष उद्भृत्य	· # 8 8 15 2 43
अ ब्दिरः पतितं तम्	4.8 - 3/4:45 (4/6	ततझ नाम कुर्जीत	4-10 60 10 To C
तन्त्रेन मणिके पृथ्वी	3 x66 2 344	ततस्यवर्षभनेण	\$ 2166.2 5\$
तब्हुका तमने गेपः	" 6 Car 10 Sales 50.	त्रतसः भागवन् विश्वित्	** A MARCE SESS
तन्तुस्या यादवासार्वे	··· d sideta, a track.	ततशस्ये विकृष्टिः	>>
तः जनादिनमत्त्रर्थम्	र्वतः १,८६५, १५ क्री ५०० स्तु	ज्ञतास प्रतिस्थलकोः	\$4 ann 5 an 35
उत्तरा निष्ठमम्प	* X DES SAR	ततस्तु भाश्यता	··· Residential
ववज्ञासे मगवानकथान्य्	attraction of the second	त्रत्यः गन्यामा	··· Reinsteinsteinst
ततक्षितस्ये वे पृथ	3 (S 23	तक्ष पितृग्रन्थपदरण्डत्	次
तातस्सा चितरं चन्द्री	30 m 35 m 35 m 300	तवक्षासम्बद्धसर्वारतः	ধ ালুকা দ ্ভাগুৰ
तकस् अन्यते समा	··· 3. (28) 11/18/18/19	रतस्त्रानयाम्	Section Action Action
ततस्या दिव्यका दृष्टवा	तका सम्बद्ध वर्ष ्ट ्रीयसम हर ्	ततकोगराष्युधा द्यत्	
तत्रस् वैश्वदेगारमम्	··· Bus felin de	জানানাথ সামজ	All A. M. 145
<u>तत्त्रस्थलर्पभाषी थेः</u>	- 331 * 22 TE - 22	वतस्या कस्त्रणी सहुशस्त्रम् वतक्षातिकोपसमन्दिकः	- 2 m 2 m 22
उद्यक्ष प्राप्त भगवान्	m を対象を使りませた。	and the second of the second o	— স্থান্ধ স্থান্ধ ক্রিয়ার স্থানির স্থান্ধ স্থান্ধ স্থানির স্থানি
वतस्यु तरस्य श्रह्म	··· १ जा देशक ११८	चलसन्य द्वादशस्यः उत्तथ समस्तरासर्वन	· Aught with
તત્રફુએય મળતાન્ અન્ય સામ્યું સ્થ		वत्रध भनवान्	··· ¥ · · · દ · · · · · · · · · · · · ·
कासो जग्हुदैरयः । कारतमृषयः पूर्वभ्	१ १ १०८ १ १३ १५	ततकोर्गरीपुरूखसोः -	- ARREST STATE
ववस्ते मुनवः सर्वे ।	2. 1.83 per 50	ततशोगातस्यो आये	··· Air e-week
ततश्च मुन्यो रेणुम्	100 1 1 4 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	ततस्तांभृचीकः कन्यस्	(844.) @ (FE) \$E
रहरूसम्भवा जाकः		इतसान्दे ः	- সংগ্রহণ কর করিছ
ततसानू व्युविमान्	· mak gibberiaget.	दत्रश कुम्बद्धयसम्बन्ध्	HERE KINGER STAR
त्तासु नृष्टीर्गिण्यम्	कीय के एक विश्ववेद आवस ्वेद	दत्तक्ष मत्यकेतुस्तस्मात्	··· Krankoningo
was 3 5 monday of	And the second state of th	1 was no officered	es at the many of the

Ç,	ረ	ş)	
-	_	1		

		(18)	(3)		
िक् रोका ंग प्रति		अंद्राः अध्याः प्रत्ये	ি ত্তাকার্ড বিজ		এইছা: এছবা ং ইতী ং
रातश बहुतिथे कारे	- 0	४० के देशकी हैं।	राजस्थारसहस्रोग 💎	14	
तहस्तानप्रतप्नमिन्दरः	-11	A	शतहराष्ट्रमुगस्माव ः	LI	31
तहश्च स्थातिः 🥕 🦸		A ballation of the	अससे यादकारसर्वे 🤫	•	4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
ततंश्रीशुस्तस्माच ः		४:चेंद्र र ेशनाव ४३ ः [वटसम्बद्धं बत्त्याः 😙		
ततशानीमञ्जूषा ः		A mark Bu spile das ;	तत्रदिक्यक्र्यस्थितिहरः		. ५ १३ ००५ १४ ०
वतस्यस्यष्टमूर्तियसम्		\$ \$\$ \$9	कास्य युद्धमनानस्		A series on the series
त्रस्तामस्यमोण्यसम्		87578\$ 15 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18	न्त्राड शान्तमेनेति 🦯	- 14	American Strategic Strateg
ततकास गुड्यमानस		8 - 64 - 40 J	द्रवसामस्तरीन्येन	-1	· ५ म् ३३ केट २१ क
त्तरतरुद्धनादवज्ञातम्		४ १३ वर्ष	स्तस्तु के अन्त्रेडोगम्	1.0	
तत्रकासामानवनु दुनि॰		A 6R 56	ततश्राक्षेत्रपुर्यकः		and the second second
ततस क्लबरङ्ग्तानाम्		A misdamics	ततस्त्रहर्चनं श्रुरवा		- ५ ३५००११
ततस्तमेवकोदेषु 🤏	(-)	. ४. १५००%१४७	ततस्तु कीस्वात्साग्बग्		. ५ % वृष् १३८
तदश्च सङ्ख्यान्यस्तरू		. Autoble contagns	ततसः वानचेऽभ्येख	· i	· ५ स्व द ्रभाष्ट्रभा
त्त्रश्चापीरवं दुष्यन्तम्	11 29	. ४ १६ ०३३०५५	इतस्य योजनस्मताः		· States & Property Res
तवश्चित्रस्थः	ai	A MACHERISE	तामा पादवासम्ब		·· 内侧侧翼翼 (1855)
ततश्चम्ये यश्चम्यम्	. 44	* A 40 42	तत्वभान्योन्यम्भ्येत्यः	-	५७ व्यक्ता १४३ म
ततश हर्यधः 🐪 🕟	11	8 84 1 PC	ततञ्जूर्णकः स्थेन		- C 30 - 48.
तक्षशोपरिचरी यसुः		. R 1986 2 50	ततस्य दङ्शे तत्र		(व्याता ३७) नार् ७० :
रतश्रक्षकपराष्ट्रीयनावाम्		¥ 900 \$ 6 600 5 \$ 6 60 c	ठक्करी भाजानाह		642 30 34 345
रातक समूज्यांकाणाः		A 2014 648 4	ततरहे पापकर्माणः		५०% ३८ : १०१४
शतस्ति साहाणाः 🧳		8 6 Ko 20 189	इतक्क्षेपु श्रीणेषु		··· / *** \$5 4 4 5 6 1
रातकः मृशकानः	- 1	· A 1.45% and 4	ततस्युद्धःसितो जिल्लुः		· 网络海湾公司河南南部
ततस्य सूद्रकस्तासङ	4	· Att 35 42 (42)	ततिकावनमध्येतत् ।		६ इन्ल्युर्ड्स्ट्रोवेड्ड्स
न्त्रश्च सेन्जिस्तर्थः 🦿		 A subsignment the 	ततसाम्यून्य ते व्यासम्		··· ६ तम्बुस्यकारेथाः
रतश विद्यारस्यूषः 🕆	ti r	- A 10.58 15110 20	ततसः प्रमधान्यिल्युः	•	க ுந்து விர ் க
ततस्य शिक्षुनाभः		A 360 100 44	उदस्यसानुभावेन 🕛		··· ६ हर्ना के किन्द्रिय
तत्त्रभाजात्वश्रीः	. 1	- 12 58 38 5X	स्टन्स प्परीता त्		m E margitan
ततश सब चैतालन्दान्	41	• ४ वर्षा निह	त्साक्षापी इतस्साः		8
तत्वहः कृष्णनामा 🤍		·· Rainskin ind RR	ततस्यु मूलमासाध		··· ব্লেল্ডার্ক : ২ ক
त्त्राक्षारिष्ट्रकर्माः 🦠		· 8 32 48 32 86	तत्त्वश्रव्ययुगे तस्य		§ **** ** **************************
सम्बोद्धस सकाः		. Rimbride 650	क्षास पन्तिभसार्दम्		··· B STATES
सहस्राप्ती ययनाः 🦿		- X + 4.5.5.7.7.5.1.1.9.1	द्रवस्तमभ्यूपेस्याह		··· द प्रश्लेशक अन्य देवेल
दत्रश्च एकादश भूगतयः	-		दतस्त्वं यथावृतम्		··· ६ कुल ६ ०% छन्।
हत्त्वस्युगाव्ययोदन <i>ः</i>			ततस्ती जातस्त्रीं सु	11	··· ଧ୍ରିଗ୍ରୁ (%) ୨୦୧୯ କିନ୍
सतक को शरणयां तु		- Ranka	ततस्वान्दोसिकाभिश्व		ব্ ল্লেক্ র ক্রনাত এ ল
Section To day and the second		· Raldeninge	ततसम्बद्धतिरूक्षेऽचि		··· National States
ततसार्थ प्वामिजनहेतुः		" Rest SRIES HORE	स्तासदोकुट सर्वम्		··· ধ্ংহত ংগ
तत्त्रश्च स्त्रनित्रः 📑		ு ஜெல் கூடின் '⇔ ் தி உ	अत्रशास्त्र ः		··· ४ क्रम्बेश्वरकी ५ १४
दत्तमाक्षित्रभृतिः	. 12	·· Accessors see	दश्रध कुरु। श्री नाग		A dans faile great
तत्रष्ठ नरः 🥠 🔞		·· A MARLINGER	समझ रथीतरः	r	४ .ज्ञासक् देशवर्तः हेर्
নমস্ত ভুসন্দিন্দ্র: 💚		··· Austrickus Agr	রম্ভ কুমার্ম:		Alical spillage
ततश्चलम्बुसाराम् 🗇		" Addark ingel	ततस सुमनास्तस्यापि	11	४ पुरुक्के स्टूल २० ०
ततरशङ्खमुपाभ्यस्मित्		·· A In Markey Service			an Ville Ving (C)
रातस्यमस्तदेवानाम्	4	्राष्ट्राव्यक्ताः	नतश धृष्टकेतुः		… 人名英曼克兰斯

(808)

		. (.	66)		the second secon
इस्रोका		अंदाः अध्या•ः वस्त्रे॰ ्	। श्र दरवेका १०००		अंशः अध्याः एरहेः
तत्त्रीवमणायतः ः		४ १० २२	रता निरीक्ष्य गोबिन्दः		
तत्रश्च सेन्द्रित्	112	8 86 36	तत्त्री ददर्श कृष्णोऽपि	- 11	4-1-30-1-150
तत्रश्च विश्वस्थेन		R : 66 RE	वतोऽनिधद्धम्बद्धम्	- "	4
हतक्ष ऋथोऽन्योऽभयह	er t	४ वर्ग ६	ततो हाहाकृतं सर्वम्		م بخت ب
ततस्ते पुनस्यूचुः 🥣	100	R - 40 - 466	ततो बरू: समुखाय -		५ व्हर्या स्व
सतस्त्रसम्बद्		\$ 1. 23 % \$a	तता जहास स्वन्यत् 🤊	- "	J
सनस्यां चलदृष्यकः		Q - 12 - CY	ततो प्रभिष्यायकलस्य ः	14	7 11 11 11 11 11
ततश्च दामोदरताम्		५ ५ ६०% १५०	ततो दशसहस्राणि		· 4 45.
रातस्त्रमञ्ज्ञियोखक्षम्		C mark & Bar Later	ततो हर्भसपानिस		المقاريين وطريح أسا
क्षतस्यमस्त्रगोपानाम् ।		e . 80 . 66.	वती दृढसेनः		
बतशस्त्रहारण		4 84 36	स्रोते प्रप्तर श्रमका नीकः ।	**	
तसस्तां चित्रुके सौनिः	. 113	प्रात्स्य रीवर है	ब्रतो भूतानि	•	A left frame to
ततस्तुत्रुसुम्म नेरोन	175		वतो वृष्यस्य माहुर्योऽसी		· Lukanin ba sa se
ततसः द्विपनि काङ्यम्	L1 1	4 55 36	वहोऽनवस्तेन '	4-	
ततस्तस्यः सुवचनम्	100	प् वेशक्षाः विक्	तते सन्धानुनामा		- A 3 - 1844
दतस्मातस्य वै कन्तिः	.7 261	1 11 11	ततोऽवाप तया सार्छम्		4 20
ततश्च पौण्ड्रकदश्रीमान्		1 11	ततो मैत्रेष तत्मार्गः		4 600 47
रहस्तस्याः पिता गान्दिनी)	A 65 65R	ततो देवासुर युद्धम्	, ,,	• \$, 00 \$ C, 1500, \$ W.
उद्योऽर्जुनी पनुर्दिक्यम्	141	५ इंट २१	क्तो दिगानसे मुख्यः		141000
रतो राजा इता शु <i>र्</i> व -	1	J. J. J.	उत्रोऽत्रं मृष्टमत्यर्थम्	4	A company of a company
नहो यजनुष्टप्रस्यः "	1	६ मार्क राजिस्	वजी गोदोहमार्थ वै		- इ ११०० ५८
ततो दग्धा जगसर्थम्	6.07	\$ 15 (\$10) 13 \$6.	तुर्वोऽन्यदश्रमाद्यम्		4.4.0
ततो निर्देश्यकृता <u>म्य</u>	119	६ वर्षक्रायः स्व	दक्षेऽस्थानि ददी उस ी		al management of the al
तहो यान्यस्यसार्गाण ः		1 4 4 1 1 1 1	ततो यथाभिरुषिता 🐃	4.	A trader and
ततो निर्भर्त्स क्येसेटः		P. 24 \$Szzz 28€	ततो नवाक त्यस्ति 🐇	•	· 6 1/16/2/2/4/2004
ततो वायुर्वि कु र्वाणः			ततो गुरुगुढे वालः		. 6 afaltating
ततो यश्चित्रहरणाः 🧳		1 100	ततो विस्त्रेक्य से स्वस्थम्		4 84 A 44
ततो लो गस्तमभवत्		. પ્ . ફટ ^{ાર} ે રફ	तती भगवता तस्य ः		\$2566 FE166
सतोऽर्जुनः मेतकार्यम्		1 17 1 1	त्रती देला दानकाश ः	-	\$ \$6
ततोऽध्यंनादाय तदा 🌣	171		ततो राजिः अयं याति	17 -	. द्र <u>ाश</u> ्चित्रा
उत्तो बरोन कोपेव 🦿	191	1 15 11	ततो राज्यकृति आप्य		१ :२००० हिन्दे
तुरो विध्यस्यामास			81 mm		१ २२ विस्पर
ततो निर्यंतवामासुः	111		ततो विवस्त्रानास्थाते		. अवस्थानकात्राहरू विकास
ततो विद्धरेता पृथ्वी			तवो व्यासी मरहाजः		-
ततो प्रयासाकग्रह्मस्या	- 11		तबोऽभ म्ह्युती व्यासः	. 1	ा इंड्र <i>ेक्ट</i> कर केर दे
ततो हाहायुक्ते स्त्रेक 🦈		4 4 4	तवोऽनन्तरमञ्जर		· वेस्ताद्रंग विदेश
ततो बलेन महता 🥒	1.		ततोऽतं रक्षमां सत्रम्		ृहरक ेश राक्ष
सतोऽनिरुद्धमारोप्य 🦈					·· 6 Walterstan
ततोऽर्वकातसङ्घातः ।			ततोऽबन्सिनेवसं सर्गः		· १ व्यवस्थित
इ.से.ऽग्री-गगवाम्यक ्	1 55		ततो देवासुर्वेकृत् 🗵		१ ५ ०% ३०
दको गृहार्चन कुर्यात्			कति दुर्गाणि च बवा॰		. १ व्हण्यास्ट
तके भरुद्धमारुद्धा	11		वाके ब्रह्मात्मसम्भूतम्		ন
तकी सारागृति सर्वम्			सत्ते धन्तकारिदेवः	-	··· Alser & alice Age
टती दिशो नमशैष		. ए ^{स्ति} देशस्य स्तिह	देखे देखा मुद्दा युक्ताः		·· 6 ming 6 2 2 6 5 5
			V		

21. 171	१ १५ ५८ ४ ९ २८	त्तदः शांकेन प्रथापुः वतः मञ्जनसादान्यः		प्राच्या । इड्स प्राच्या । इड्स
121				4 E . 3C

	8: 44 18	ततः पुनरतीयासन्	***	લ ક્ષ
***	8 58 - 100	ततः क्षयभक्षेषास्ते	700	4 - 18 ant €5.
ыз		ततः इत्विरणः	100	A 48 36
ы	R . 45. 48	ततः परमस्य स्वीभीगम्		A . J. A L. E.C.
,	8 - 8 - B		148	R 64 . 1. 25
1	6 ⇒€ 168		- 44	४ १४ । ५८
***	r. 8 - 340		***	A 1658" : \$9:
***	6 . P Y	स्ताः प्रभृति सूत्रा मूपास्त्रः	-11	R 4x . 54
108	् ३०.३	ततः कुमारः कृषः		A 16 88
	1. with 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1.	ततः प्रभुस्यकूरः प्रकटेनेय	1.61	R 52 525
114	of the second			8 - 63 - 680
		क्षाः प्रस्कृतदुन्द्वनसिताम्		8. 4 35
			611	R 5 36.
		ततः कोमपरीतात्म	***	५ % ३६ ः १५
1.2		ततः प्रयुद्धोः सञ्चली		£ 2 30
476		ततः प्रसम्य वस्त्रभ्	***	di 33 R
	The second secon		24,0	. ५ ३३ - ३१
4			4-1	भ ३४ ४०
		ततः सुद्धा महावीर्षाः		of the topology and the
	4	रहाः पुनरप्युरपञ्		. A . " & . Co
212		रहाः विश्विदवनतदि।यः		R 24 46 1 - 34
F**1		रतः सङ्क्रजनसम्बर्भ		3. 26 . 68
			***	3 - 34 - 40
***	in 58 3€			3 . 56 26
10.	4 30 48			\$ 4 \$6 - 5 6
40	भ् ः , ३०	ततः क्रुद्धो गुरुः आह		3 · · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
	4 30 . 16	ततः प्रशुद्धो भगताम्	***	३ - २ - ५३
	4. 76 11 186	ततः पितृत्यमापक्षे		축 1 5 축축 (SQL 축O)
	4. 91 3 61. 9 9 1 ξ	तातः पुनः सःथै देवः	614	\$ \$ 30.
614	4 - 78 - 4	ततः खद्दं समादाय	217	\$. \$\$ Qu
	4 - 22 - 4	क्तः सा सहसा त्रासात्		5 33 . 50
	h 20 . 32	নন: সন্ধান্যবাক্ত	771	35 8
	4 20 24	ततः सन्दर्भवत्र		\$ -\$3 - \$8
175	৸ . ২০ : १६		175	3 66 806
1.18	~		112	5 .0 . \$50
400	4: 186 : 187		.,-	\$:50mm
.11	4 83	ततः सूर्यस्य तेर्द्रस्य		3 48
6.01	4	ततः स संस्वी माबाम्		5 66 60
*1	400 80000	ततः सूदा भगवस्ता	111	\$ \$6,
161	८ ा ११. ० ल्ल क :	ततः सदिगर्ववीछः	-11	8 80 ES
	4 823 0 20 4 0 ;	दतः सर्वासु माधासु	ire e	१
				स्व स स्व स स्व स स्व स स्व स स्व स स स स स

(888)

প্রবাচ **প্রথম** হর্টা

-- 2 - 30 - - CA

अहाः आधाः क्लोः १ १३ कर् १ १३ प्रतिस्था तस्यानात्र कर्नेज्यः

दतः स नृपतिस्तोपम्

क्षाः स नृपातस्यायम्	£ £3 242	श्रस्था नाम क्रमञ्जः	and the state of
ातः प्रचम्य वसुधाः	5 58 2. MP	तस्त्रचा नक्ष कर्तव्यम्	- 6 56 SE
लतः प्रसन्नो भगवान्	6 6R RA	तरित्रा तु वसिष्ठवचनात्	क्षेत्र हे देशके १५ १६
ततः प्रहस्य सुदर्धाः 🕝	m & water and bet	तत्पुत्रश सुमित्रः	··· 8 55 (60.
ततः सोमस्य वचनात्	- 6 60 mg	तस्पुत्रश्च पश्तुपर्णः	··· 8 & 1 - 90
ततः प्रभृति के भाता	6 600	तत्पुत्रः सञ्जयस्तरमणि	A d'a ∴d€.
ततः प्रभृति मैत्रेय	4 60 miles	तस्यतं जनमः	··· R SRESELER
न्तरः स कश्रापापा	4 44 30	तक्षुत्रः काकवर्णे भविता	R 32 60
स्त्रतः प्रशासकाराः सूर्यः ः	6 6 653	तरपुषी विभिन्तरः	X 258 2 64
ततः पपुः खुरगणाः	6 4 460	ततपुत्री जनमेशकः	K. as \$ sell 60
द्धतः सम्बन्धाः स बन्धः —	··· 4 \$6 25 84	तदरमाण्डेन म द्वीगः	··· Secritarian
ततः कालादिन्द्रोदसी	···	क्रमसदित्य तप्त्रवे	A 330 0 25 65
ततः पाधौ विनिःशस्य	··· 46 3 38 35	त ्रसादविवर्द्धमानः	··· 3 86 54
ततः स्त्रात्वा यथान्यायम्	··· Alejana Arekaja je jeka k	त त्रसीदाखिलभगत्	··· 4-12 4 6 12 20 FC
क्तः प्रदेश सम्बद	द '₹' '३₹	तस्यनार्थः सतैः	१ %% % \$% , १७
रतः स भगवान् विष्युः	€ 24.0 \$ 2.4.5 %€ 1	तद्मसीदाभयं दत्तम्	··· d ···· \$\$ ···· , 7\$.
रतः सङ्घीयमार्थेषु	\$	तहबाग्यकाम् स्वस्ट	··· Yaz (2) 10 15 44
रतः प्रीवः स मगन्नान्	6 5. 6 5 3. 65.	तद्यमाणं चानुष्ठेः कुर्वन्	8 billing day 98
तक समुस्तिपयं भर्त सब्देष्ट्या	m. 具	तदाभया चोजसी	ಕ್ಷೇತ್ರಪ್ರಕೃತ್ವಗಳಲ್ಲಿಗಳ
रावः क्षिति समो कृत्वा	··· 6 4.8. A0	तत्रभाषादत्युत्रुत्यः	··· Y j rack grant big
तवः पुनः रुक्तर्वादी	श्रीहरू होता । अनु होता	तय विष्णुश इस्टिश	··· १ ŋ १५ ছ१३०
ततः कार्यसम्बद्धं योजस्यै	··· 6 £ 18	तम प्रमृत्यासर्यस	
ततः सा सङ्ग्रा भिद्धिः	··· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ··	तत्र शानिसंधिन	\$ 15.5 \$ \$ 2.00 4\$
ततः प्रभृति निःश्रीकरम्	··· \$ \$78,500 38	तन्न सर्विमदं प्रोडन्	···
ततः शीताशुरणवत्	··· १ काड १ काड़ १६	कृत चागतपात्र एन तस्य	··· ¥ 73 ~ 130
ततः लक्षमान्तास	61 . d. = 66.	तत्र चोगसिष्टेष्टिशिलेयु	··· ४वार देवे इत्यादेवेट
ततः स्पृत्कान्तिमतो	8 . 600	રાત્ર આતિવાલિધિયસુંહ	au - X-21/20全 36/20 30
तस्य समस्मित्रप्रदान्तेऽत	··· 8 63 658	दम चान्तर्वछे सम्बदः	m & ∴ 5 ag
राज्यसम्बद्धाया य	8. 36554 K	तद वार्श्वपशिस्त्रकस्य ।	m 8 2 4 66 40
सहक्रथ्यतं महाभागः	··· 5 68 ··· 14	तब करिययदिवाध्यस्य	R. Applie \$ 12.00 30
तरकर्म अध्य बन्धायः	··· \$ \$3 %\$	तत्र च सिंहाद्वधमयाप	··· ¥ ?3 ** 38
तस्थिमेतेन मञ्जूपम्	س لم تروي و تري	तन त्वस्थित्सनायेष	A wast ge \$6
तल्कमेण विवृद्धं सत्	(၅၈% မှာ (၁၈၈ ရည်	तत्र च हिरण्यकाशिपुः	··· Ranktham d
तत्सन्त्रव्यक्तिं सर्वम्	— ৸ ৲,ইই [†] েই,ছ _ি	तंत्र च कुमारः	8 x 4 2 38
तत्स्रोताच सुरिन्द्रेण	6 . 30	तत्र पुण्या जनपदाः	2 800 88
ततमधङ्शिकिन्दुः	K. 2/45 13	নঃ দুত্রত্বাধীকি	f = = = = = = = = = = = = = = = = =
तत्त्रमयो भूषाक्षः	m & - \$ 1000 48	तत्र चोस्पृष्टेझंडक	र १३ ः ३६
तत्त्रनयस्युदासः 📝	··· A 300 8 1 1 86	का से विशास सिद्धाः	२ क्षेत्रर्श्वितास्य ११
तहस्य हृद्यं प्राप्य	··· 8 5 62 5 34	शत राजदास्त्रहेत	** A 442 6 445 7 4
ततस्ववेदिनो भूत्वा	≸ ≒ 65 _{cite to} 48 }	तआव्यतस्वरूपोऽसी	\$ 300 750 WE
रतत्त्राह्म सुरादा य	8 -62 -68	उपार्थासम्बद्धाः	\$ \$ \$ W.
तत्त्रयो महिष्याम्	A. 63	तप्रापि पर्यताः सप्त	২ কিউটি ত জিল ২ ২
शसु शास्त्रवनं पक्षः	Like kulling billing sing i	तप्रापि देवगरूर्वः	··· 5 4 8 44 86.
)			

तथान्ये च महाचोर्याः

··· A STATESTICAL

		(800)	
Catalan St. St. St.	अंद्राः अध्याप ार्क्ष)॰ <u>वर्ष</u> इस्मेरकः -	अवाः अध्याः इलो॰
त्वापि विरुष्युर्भगवान्	2 8 - W	६ तथापि पासु दुष्टानाम्	A Life X 60
तत्रासते पहात्यमः	5		in Control of
त्वपि श्वाचारिभाः	\$ \$\$. 10	६ 🖪 व्याच्य कृतसम्बद्धीः	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·
तज्ञाच्यसामध्यं युतः ः	··· 2 68 4 44		··· ५ दर े १ १
समापि दुष्टा तं भाह	m 3 ≥ 69 . M		··· 4 193 196
राज्यमुद्धिन विखन	··· ४ २ १३	 तयापि कविदास्त्रपम् 	··· 4 38 80
राज्ञांत्र निर्मण	" X - 18 "	१ तथापि यसस्त्रांसम्	4 35 36
राजार्थ इस्त्रीयः	10 8 2 5 1.E.	४	6 444 A 451 8
राज्ञस्त्रिव कृते होमे 🧸	" de 80 %	e तथाला मक्तेसाङ्गल्	··· 6000 P. Jen 48
त्रानेक प्रक्राणि /	m 4, ₹₹ °\$	६ तथे है तह मुरुवस्त्रम्	m 8 3 88
क्रार्थिनेत यनेन	··· E 7 E	 तथेडुके अत्परहेभिः 	··· Application of
तत्राहाकस्य में क्षेत्रः	E - G		x . 63 . 60
तरेश तब यत्पूर्णम्	··· \$ 14 80		4 Tirita, 19 44
त्येशवस्थिता देवम्	6 6R 5		A 83 60
तर्बक प्रनिवर्गुला	8 - 84 - 4	1 1	··· 4 60 - 54
न्त्रीय चेद्राहपद हु पूर्व	3 . 58 . 4		4 · 82 · 34
বনীক্ষাল্যপতি পূঁলো	ह ७° १०		4 75 gs
तत्सवै श्रीतुमिच्छाणः	६ ेल २ ०१		··· 4. 34 10 80
क्सर्थ विस्तर्पन्त्वा	4 = 42 ===		4775 \$8 113 18
तत्सङ्गातस्य राष्ट्रे ६५	··· \$ \$\$ 6		१ १९ २२
त्रस्यसर्वे तदा सद्धाः	on t ≎≎k &		-। विशास्त्रकारी वृद्ध
तत्सान्त्रतममी देवयाः	m 4 (2.18)(22)		··· \$ 10 \$24 188
उसाह्यन्येव तत्रापि	\$ K E	0.34	4 36 48
त्रतसर्पतामनेपातमन्	6 - 8 3	३ तथैय प्रदर्शस्थानम्	தொருக்கொரு
तथाभिक्यायतसस्य		६ : तथैबारुकनन्दर्गप	10 5 05
तथापि तुभ्यं वैदेश	4 45 6		m 6 2 4 58
तथापि दुःखं न भवाम्	· 6 2 66 . 5	_ 1	X XX S
हका चाई करिस्साम	4 4 5	the state of the s	8: \$a
रूपा तरीने यारंग है।	·· 10 . 80 . 4		3 Tricker 40
तथा हिरण्यरोगाणम्		४ तदनैनेच वेद्यस्यम्	100 3 1 18 July 2
द्रधा पृथलहः पापः		४ वदन्तरे च महता	** 3 " 82 " " " C
तका क्यांसनेक्ष्र		९ तदस्य गंद्रसम्बद्धः	THE REPORT OF THE PARTY OF THE
तथा केतुस्थस्याचाः		३ सदस्मानेः प्रसदिश	\$2.55 30
तथा वैर्जनुगिर्भूप	··· \$ \$\$* ··· 6		m & s. 6.000 .9
तथा त्वमपि धर्मक्ष	··· + * * * * * * * * * * * * * * * * *		m & r de de
त्रस्य चोपपुरानानि	a (%) 4		" K. A. 54
त्रभविषयायद्वीरिशः		७ । तदननारं प्रतिपालकाण्	··· Karaka Karaya K
तथा देवलकशैव	1	८ अहस्यव्याम	827.24.2.28
इथा नतानस्थादम्		६ स्पर्कतात्र तदाहरणाय	** * ** *** ***
तथान्यरिविष्यंसः		३ तररूमनेन जीवता	2 . 53 . 66
दश्यांप केम व्य शह्य	··· \$ 2.5 itq		4 15-16 17-15
त्रयापालसोधीयनाभा	8		··· 8 7 73 63
तथाभनेकरूपस्य	··· (C) Silver (C) Silver (C)		8 4 13 1112
	a deres a come		- macromorphics

··· ५ निर्देश विदेशसमि

(XCC)

अदाः अध्याः । इत्होः

প্ৰভা**নত প্ৰতিশ্ৰ**ম

अंभः अध्याः २००१

2000 (新花學科) 。 200	अधिः अस्याः वस्तः	S CONTROL	ed the colonial and also
<u>स्ट्यमञ्जनीयतामस्य</u>	· * * * * * * * * * * * * * * * * * * *	तदेनदुपदिष्टे ते	5 42 C
स्ट्रलं यहालोकोऽयं बलगहः	··· 😿 १३१५८ '	तदेसमेवाहमसिः	¥ \$50 €0 \$62 0
क्दलनेकेन तु तसी	X. 40 1.98	तदेतस्यमुद्धद्यमीति -	··· Randstan ado
सदलं परितापेन	· 人名伊斯特 (教育)	तदेन विश्वव्या	··· ४ : १०१३ सङ्ग्रह
तदस्य मागगावस्य	10 4 Washed	रहेरी नाविदुस्खम्	m 4 sprifficance
त्स्रकं सम्बद्धियंत्रैः	11. 16 in \$0 - 1. 88	तदेतत्वरम् भाम	६ न्द्रध्येक् वृद्
स्दर्भ पारिजातेन	m 4 mir ga and be a	उदेतं मुमहाभारम्	··· ६ वर्षः स्थ
त्दक्षिणसम्बद्धिः	4 \$4 - 30	तदेतल्यांचरं यांजप्	६ ७ ः २६
तद्यान्तुनिधी शिक्षम्	an & will a weeks	हदेकावयव देवन्	414 & 15 % CFD
तदकी जगमाध		उद्देव पगतवाच्यम्	" 1 4 1 4 1 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4 4
तदर्शव मसपुण्यम्	५ ३८ ११	हर्देव विवृज्यस्योऽयम्	··· 3 - 6 5 **C
तदर्यमवनीयं अते :	4 36 - 50	इदेशगृतसः वैषाग्	··· /2: 10 / 10 / 15 / 15 /
तदा हि दस्तो सर्वम्	P. 14 13 1743	उद्रच्छत । भैः वस्या	are \$ 27 50 5 2 300.
तदाधारं जगनेदम्	7 PAR 45 W	तहक वरु मा वा लम्	477.34 117.24
राद्धाराज्यं तं च	X SC	उद्ग्रह प्रमंत्रमात्र	··· 4 1036 250 190
राह्यकर्ण्य भगवते -	Y 6	उद्गच्छ श्रेषसे सर्जभ्	··· 67 30 0 2 695
तदा दुल्यमहोग्रहम्	198 5 m	वद्शनाह रास्याम्	··· R = 65 500 565
सदा अनुस्ता करिएः	१४ . १४६ - ११०७	কর্মনানি হাজানি	·····································
स्दावरूमी एका महम्	m Y. (clinky) a 44 [तद्भारा परमं निस्यम्	···· ・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・
स्दास्वारभेवतत्	on the sign of the second of	तद्भद्ध पर्यं योगी	· 6 4 55 68
सदार्तस्यक्षवणानं सस् म्	··· Yellings 1284	उद्गृह्य तत्परं धाम	··· Park Andright
तद्मश्रममुपाताङ 🗸 👵	সাংগ্ৰহণ াই স্থ	सुद्धक्ष कर्त्या भाग	m ्र ्ष्ट्रान् र्व्यक्तिल्लाहर
ट्यग्न्छन् गन्धमः	4 000018 (01.48	रहुतः परम् भाम	m - 夏からならのなる。
टदा जिक्सपटक सर्थम्	··· ५.८% १५ ः २१	तद्भवनेव यारचितुम्	··· Ruddager fes
टदाप्रोत्यस्तिलं सम्बद्	मा ६ लक्दा सम्बद्	तद्भगस्यक्षराभूत	··· A tel Bath of A
टिंद्दं ते मनो दिष्टयः	ह७ % १०	तदर्गुयु तथा सन्	··· 4 10 23 4 10 10 48
रहिन्द्रं स्थानकाकरमम्	··· X · 65 · 6A	तद्भवभागमामञ्	6
रदियं स्वयंद्रियायहरामा	··· (X = 13 = 15 2 193	तन्तुरिभारपीडार्गा	··· 4 \$ 197 70
तदेशस्य सामाय	··· f. the first out,	तराधा सकदम्बन्धान्	··· And Sales and
स्दूषक्षेत्रो मुसर्ज्यः	च ५ ३३ १२	तहे व्यक्ति, केवित्	··· 6 22 6.68
रदु क्यरिनारात् :	8 - 48 W.	रखून विश्वसम्बद्ध	··· 6 4. 0 4. 03
तद्विक्रासम्बद्धाः स्थः	A 55 Co	तद्वप्रात्यया नेस्य	39 TO 15
तुरुपोगितसेशव	X 50 50	ব্যুত্রের্যকর্ত্তম্বা	··· 李宗明教于八字 古句
तहे इरक्माचाहम्	on tolkskillerage	रङ्गाधकाशः ।	· * * 20.63 10 20.84
तदेभारतमञ्जर्षम्	- १ के १९ का ३५	तद्वृष्टिकस्ति सस्पन्	५ दर्शक हमार देव
तदेतलाम्यतं सर्वन्	· १ १६- 1-18	तस्या भद्रशिक्तकाः	५ ३६० व
तदेतई मयाध्यातम् -	; ६ ७ (१७ : ग्रह ७०	तत्र्यमसन्द्रितसंख्यः	8 1. 60 mm &R.
तदेशमितदुःखानाम्	·· ६ १७ েওও	तबारश्रुतसम्बद्धाः	··· # 12/2 #2.2. 188
सदेव गोष्टमध्ये तु	{	तक्रियोध यथा सर्गे	ಕಿಟ್ಟ ಚೌಗಾಣಕಕ್ಕೆ
तदेव सर्वेचेतत्	6 C -4 5 Pm 62	तसूनमस्य सम्बद्धोः	8 63 63x
सदेतदक्षरं मिल्यम्	··· ६ ्वरेशक देक	तत्रमम् प्रीयते पुत्राः	··· 6nd. 62 : 1164
तदेवाप्यत्यं कर्म		तन्मस्य प्रणनाय स्थम्	· 5 48, 200, 68
रादेवन्द्रगत। ज्ञाल्यः :	··· . 3 28 32	तन्मारा च विश्वापियम्	on ४ (आ ७) वर्ष देहे
सदेश श्रीतये भूता 🦠	··· \$ (1) 47 \$ (1) 186	दुनमात्राणीः द्वितीयश्च	··· SAME MENTING

··· १ ं२ ं ४५ विशेष्ठार्थ इस्रोकः

ार्ट **इस्लेक्स**्यांड ४० ५५०

तन्त्रभागामा स्वाप्त

त्योः सेन पृथामाव

क्ष्योद्दिक्द्रासरत्रेष्टुः

अंद्राः अध्याः १९५-

8 7 78 7 87

A CONTRACTOR OF

Quality (1974) (1974)	un å sakervæd,	वसक्रीत ५०%कः	And the second district to the
तमसस्तरफले ऋतम्	··· १ ११३: १४५	तसीश परस्यरम्	A dillow like
रावस बहालोकस	4 Prop 1998	त्रयोकसागपदस्य	\$ \$\$.15 .5
रुवधरस्यु पृथिवीम्	8 2 60	त्तयोक्ष रागाँत भीषणम्	m & X X X & ga
तपस्तपस्यी मञ्जूना प्रश्नी च	\$ 500 000 000	तरस्यविकां विकडाम्	··· 1 50 54
नपसायन्ति सुनयः	··· 6 5 50.	तस्वरकलपर्वणीरः	R 48 48
तपसा कर्षितोऽत्यथंन्	২০ লাখ্যেল্ড :	र्वास्त्रपुरसुरस्य	··· A without and
सपस्यी सुतानाशीय	The Parties of the	तवाहगुणमेश्वर्थम् .	·· 4 534 9588
सपस्य पद्यानसोऽध	\$ 45.48 DERECT	रुवीपदेशतानस्य	··· 3 28 11 20
त्वस्थिक्यसमार्थीय	an <u>Latino 38</u> 429,008	तस्मदुशोनरतितिक्षू	S 8
तपर्ने महाचर्यस्य 🐬	38 (1 - 5 pm + 1) 88 -	तस्याच महामानः	··· 8 86 10
तपासि मम उष्टानि	·· १ १५ े इंट	त्रमञ्जादाशालः 🕦	*** X 168. ** E
ततं तन्हे के पुरुषप्रचीः	8 58 . 188	तस्पद्धि सञ्जयः	A 168 5. 9
हमण्डहाय दृष्टा च	··· r 50. 52	वरगादुशमा 🗀	8 \$5 C.
तम्बयसम्बद्धाः भन्ना	१ ६०० वर्ष	तरमाद्भव्रक्षेण्यः	¥ 22 7730
समतीय महारेड्रक्	··· Later to the state	तस्मादेतामहं त्यक्ता	x 50 26
रामार वसिरहोऽहिभन्देश	e 6 \$	तस्मादिद्राण्यनतभः	Y SAY YOU
गमाञ्जेस्य सर्वयादवानाः	At 13 state	तस्वन सद्भद्धः	X . X X
तसक्तेक्सतोत बलभट्टः	R : \$3 . \$60	वस्कदसमञ्जलह	Y Y, 'S
तमार सम् नीविन्दः		तस्यद्वाचेतः -	m 8 3 6 5 5
तम्बज्तन्तमारोक्यः	# C. 18 34.56	तस्मारद्वपांच्यमिः	··· 3 520 560
तमुपायमधेवात्सन् 📝	··· \$ 200 \$ @ USU \$\$1	तस्मादेत ऋगे वाहत्	··· ३ ६८ व्यक्ति ५१
उन्हरमानं वेगेन	··· २ "(१३ 1 7 १६	तस्पादबंधिको कुर्यात्	\$ \$€ \$8
तमृषुसामस्य देवाः	3 10 35	तस्मादभ्यविकातम्	··· 5 1860 54
रन्युमेन्तियो राज्यम्	Ç \$6	तस्मातरश्रमभत्रीतम्	3 \$6 65
तन्यः संशये प्रष्टुन्	६ ^१ ्२ ः १११	त्रसादुत्तरतंश्रयाः	3 % (\$ 8 \$
तम्बुर्यन्तरणे वध्यः	F 12(11 E) 12 1/11 50	तस्मात् रास्मं वदस्यानः	(E. S. E. S.
तगेडिकी च करूपाने	m 2 40 5 0 17 83	सस्मात्स्वशक्त्या ग्रजेन्द्र	3 35 66 506
तमो भोहो महकोहः	··· 6 saile galante	तत्माद्वृदिते सूर्ये	\$ 30 \$\$ \$60 \$60
तदा कथिष्ठितः सोर्पप	2 21 14	तस्मद्धियपूज्यवभ्	3 578 00 00
तया तिरोहितत्त्वह	···£	शस्त्रात्सदाचारकाव	A 18 18 37 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18
तया जमान ते दैस्हम्	··· 4 . 54 . 54	तसमान्त्रेयांस्य हेन्यांन	P\$##################################
तया सह स चार्त्रानयनिः	··· Andrew Agency R.C.	तस्मान्यार्थं न सन्तापः	··· ५१व्यू ३८ वृत्ताः १ ३
तया विस्त्रेकित देवा	··· \$ 9:10 \$65	तस्यान्तरव नरश्रेष्ट 🔻	4 1238 V 84
तया च स्मतस्तरः	··· 6 . 6d 53	ट्साद्दी महारक्ष्य	şir Ç İstiğ a nı in Şç
अपन्ति च सर्वमेठत्	8 2 5 508	टलानेनं इतिश्वति	··· : Etale : E 34
तमा सैक्युकः	x 52. 0x .	तरभादांग सानितः	x : 86 22 AA
तथैवं स्मारिते तस्मिन्	\$ \$K 75 68	तस्य सुद्धारमञ्जूष	··· 3x2 38 3548
त्रवेदमुकः सम्प्रतः-	रुगा द्रम् । इस्	तरमात्सहदेधन्तहदेशात्	111 A June 6 6 100 . N.R.
त्यवमुक्तो देवेशः	\$ 24 - EG	तस्माङ्खर्थभौमः	M. W.X. Park Co. X
त्यैव देव्या शैव्ययाहम्	··· A. 45	तरमार्डार्थेण कारोन	··· 5 4-5111381
त्येतिइस्तेरेवम् <u> </u>	Ber South Cost	तस्मादेवश्चमद्भवदि	m. Attitition 25
with the manager	AS SPECIFICATE	sementioningen.	······································

तस्मादप्यधिसोमकृष्यः

... 35 10 1133

--- ५ १९ ११ वस्ताद्वरिकानांसकाः

	3 (840)	
A CONTRACTOR	भंशाः अच्याः १एमे	्र वि वस्त्रेका का १८५	अहाः अध्याः इस्मै
तामाचोद्यन् अद्यनास्	m & SECONS	तस्मात्रश्राहितःश्रीय ,	··· 7 783 4500
तस्मानुस्थानसाम्बर	··· ४ वृद्धकंदक्ष्म	तस्त्रसद्ध स्तेत्रियः	6 \$\$ and offer
तस्यतसदेवः	a. & 135 de A.	तस्मानु पुरुष्करेको	\$ 1 CO 100 EC
वस्पदर्भकः	··· ४००० र४ ः प्रिप्त	वस्मते दुःखबहुकः	1 BREERY
त्तसार्थे द्यनः	··· YESTE SATERY	रहिमांबेव महावाहे	··· P \$ CON \$ SOUTH
तसमञ्ज्यूष राजेन्द्र	··· \$100.220 44	दक्षिण् जाते तु भूतानि	\$ 1.53 Jungs
तसमञ्जय मन्दिन हैनः	··· A 2.5% 5 4.50%	धौंसन्धर्मके निस्पन्	१३ १६ १३०१३
दस्यस्य व्यवस्थाः	- X -5X - 34-	व्यक्तिकार अने विश्वनिकार स्थान	3 30 35
तस्मादेलभूतिः ः	A SR 984	व्यक्तिसन्तरन्ति धनुस्यः	··· 3 (19: 18: 10: 30)
हरमासुरोभाचिः 😗	··· \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \	तिहरजन्तरे बह्बुचश	···· 发力的是数数的模型
श्रम्याचा श्रुपः	¥ == \$ == \$ \$ \$ \$ \$ \$	त्रसिम्बन्नेश्रीश्रीस सर्वरूपि॰	*
दरणाच सन्तिष्ठः 🕝	X \$1131-\$451.	वस्पर विद्वते	··· ४ ४११ हार्यक.
तस्मादप्यविश्वत् 🦠 🕝	54 Y 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18	तिसन्बर्ध्य यशोदापि	மை டி நகுத் , நடிவட்
तस्याचा दरभः है।	x \$1500,840	तरिग्रासभदितेथे	··· Yessikansank
तस्याचन्द्रः 👭 🔻 -	m A 16477888	विसंसर्थसंस्	··· Sam Semiae
बसंबंध नियुत्त्यः	·····································	तस्मिनकाले समध्यर्थ	\$ jobs : 58
तस्मासः प्रसेनजित्	X 4455447 840 2	तस्मै चाषुकाव	··
संस्थाद्यकाः ५	8	तस्मै स्थमेतं तनयां मरेन्द्र	or 11877, \$ 470
तस्य माणुदः	X 444 X3	तस्य वै व्यवसङ्ख्य	
तसार्वातिकः	··· 8 3000004	दस्य इत्रचमवाद्यीतः	··· \$ 7784 : 378
उस्माव क्षेत्रकः 🕓	··· 名 《李本海》《李本	तस्य पुत्रास्तु चल्यारः	··· \$ 28840001888
तस्मातुष्वरुः ।	* E. 1. 53 M. 4/1 Mar	तस्य त्रभावमञ्जलम्	··· 3 mittelienen.
रास्पादियांचित्	& 1 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5	तस दुने महाभागः	\$ 16 75.50
तसम्बद्धारेनु स्थापः	··· 44.2883.014	शरा तदाशनायोगान्	and the state of the state of the
न्तरमारुक्षम् । सन्तानः ।	400 to 780	वस्य तमोतासी देवः	\$. 30 mg \$A.
तस्महोवर्धनश्रीतःः -	··· 4 20 × \$6	तस्य पुत्रा माभूतुस्ते	··· S and Stage of the
तसम्बद्धं भतिन्वनप्रकेशः	··· 4 20 80 - 335	तस्य दुधो महत्त्वीर्यः	··· 3 3 38
तसाददुर्ग करियामि	५ .वे३ ऱ ११	तस्य वीपे प्रभावशः	বৈত্যক্ষা জাইক
तस्यन्द्रविद्यसर्वेशुः	a spanial	दाय संस्पर्रातिर्थू (१०	···· 中心的人。例如其中
तस्त्राचरेत ये योगो 🍦	\$200.88 J. 3.83 v.	तस्य विस्मित्मगे दूरः	··· स् अस्टेशिक्सर
तस्त्राम विद्वसन्तेऽस्ति विशेष्टव्	- सन् । के अवस्थित का देवे व	तस्य दिल्यो निदायोऽमृत्	***
चल्कारासम्बद्धाः स्वर्	र्वाजनंदरास्थ	तस्य मञ्चल होतन्	··· Paristers
तसातानगराजनाम्	··· \$277.510 \$60, 05 ,5		14,470 Y 3.165 70°
द्रमातद्यात्रयं यंत्रः ।	m & graphan	् रुख रेखती नाम	··· Variations
तस्मान्याध्याहिक त्यास्मत्	£ Ç : 14. £\$.	तस्य पुत्रक्तप्रमानाः	X 155.5 21 2 85
तमान्नेत्रस्यकुनं नधर्यम्	·· ইন বঠগর্মাধ্রণ	तस्य च दनकासम्बद्धाः	R 5 . 1. 18\$
तस्मविद्यपुरस्यां वैः	10 5 all 1 1 2 2		A Sampled
तस्माद्दुःस्थलकं नारित	1 called 17. 186		R (Set give Mr.)
तस्मादहर्निशं विष्णुम्	··· ng Krist & transferija	तस्य युवैविधिष्ठतम्	··· A M & Balle.
तस्याच सूक्ष्माद्वीवानपणानाम्	··· 3 384 304	तस्य प्रदृद्धसः	X 44 X 14564
तस्यक्तेत पुरुषेषु	··· 4		- X 1 1 4 50 7 80 "
तस्मादपरित्यवैन्यं स्वम्	··· 4 100 22 50 144	तस्य चन्द्रस्य च बृहस्पतः	- X = \$ 100 \$ 13
वस्पाद्धार्थं विधेन्त्रत्य	··· \$10,20 1704	तस्य च च बन्दरः नुवः	- K N.C. (1) \$\$1.
तसास्रमनिवृद्धार्थम् 🕟	इंडाइइंड्राइइ	दश्य च बत्सरः	··· Tomorrows

ক্র**ইটারন** জনস্করী ত

तस्याध्यस्यकंस्य 🤫

तस्यापि वृष्णिप्रमुखम्

अंदाः अयाः इले॰

ক্র ্ত্রেক্তঃ এটা প্রতি	स्तर्भः अध्या _ः इन्हरू	(1) (2) (4) (4)	क्नमंत्रः कारसंध्ः अस्तरः
तस्य च हर्यध्यः	8. 8 con 84	हस्यापि स्वग्यन्यच॰	1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1
तस्य डेंडयटेटयः	¥ \$\$:: 19	तस्यायमधापि	··· \$ \ \$7 \ \$4
तस्य च इस्त्रेयः	1 8 1 8 1 8 1 8 1 8 1 8 1 8 1 8 1 8 1	तस्यामयमञ्जूतः	··· ४ १३ १२६
तस्य च पुत्रकातप्रधाताः	x 44 54	तस्यापि सस्यकः	A MARCOS
तस्य च इतिसहस्रम्		तस्यार्जुने महाहेशः	77 5 7 (17 50 78
तस्य च दिलपुर्नाम	··· ¥ **	तस्य विवादे रामाजाः	4-1638 2.88
तस्य च विदर्भ हति 🥫	8 17 34	तस्याप्याहुक आहुकी	A . 18 . 44
तुस्य च संगक्षितः 🦠	४ १३ १ ५	तस्यापि कृतवर्गन	8 . 68 . 58
तस्य स्रेकीयचाः प्रभागः	** ** \$3 ~ \$84 P	तस्याश्च संपत्ने महर्र	& &x ∴30
तस्य च छारणहेदीनाहम्	A " 63 63 " 6845 3	तस्यागरिरुद्धे बहे 🍦	K 39
तस्य च देवभगः	४ १४ ∴ ३० ₋	नस्थामस्य बज्रो अहे ः	x 44 x6.
तस्य ऋखार्खणः	··· ४ : १९ ३५	त्तरक्रि हेगों हेगस्परिः	··· K KAN SE
तस्य संकरणः	X 16 104	नस्मापि युतत्रवः 🧳	& sto 225
तस्य च शासनो स्पष्ट	જ _િ ફેલા સ્ટ્રેક્સ જે	तस्यापि मेथासिधः ः	·· \$ 1.38 1.06
तस्य च नन्दिवर्धनः ः	··· ঔঠিকুই বি	तस्यापि नाम्बनिवंचनश्लेकः	8 84 140
तस्य च पुत्रः क्षेमधर्मा	4x \$\$	तस्यापि धृतिम्सिस्समाण	A. 86 26
तस्य महापद्मस्यान् 🕆	R 48 38	तस्यक्षि देवाभिदान्तनुः	*::::\\$\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\
तस्य पुत्रो भूमितः	3. 58 30	तस्यायुष्णः पुत्रः	··· 2 56 34
क्षक च इस्तिः	8 3 3 3 44.	तस्यापि बस्तकनामा	& 3R 3.
तस्य चारमक इत्येव	- 8 8 66 as	तस्यापि अतीयाः 👉	··· 8 5 58 66
तस्य पादप्रहारेण 🤝	··· 4 80008	तस्याप्याष्ट्री सुवाः	··· ४ _८ २ ४ ः े १३
तसा दर्पपरं भइतका	··· ધૃજાજે જ	तस्थापि पुत्रो विन्दुसार	R SR 33.86
तस्य हेवितज्ञस्थेन	· 4 . 84 \$	तस्याध्यशोकवर्दनः	2 JAR 1 30
तस्य कार्च नदी सा तुः	५ रूप १	दस्यापि बृहद्रधनायः	··· 及《古古史》
तस्य मायावतीः ः	t _i 70 19	तस्यापि पुत्रः शानाकर्णिः	··· A CLAR CARN
तसः स रुग्यत्युगम्	·· 5 3 1/425	वस्यापि दशन्तकर्णिस्ततः	8 48 AR
तस्य चालन्यनयतः	£ 0	तस्याध्यध्यधनं यज्ञः	75 C S S & Fe
सस्य किष्यास्तु थे ५४	··· 3 & 35	तस्याच्येका जन्या	8 4 x10
त्तस्याभिष्यस्यतः सर्गः	ALC OF BUILDING	तस्यामध्यस्य विशालः	४ j. j. q . diga ४९
तस्याभिमानमृदिदं च	··· 8	तसार्वि सञ्जयोञ्कूत्	X 1/2/1/48
तस्य वैद्यानारत्रेष्ट्	ेर पर ३६	तस्यान्यस्थितः ।	A 31 14, 27.18
सस्बासमन्दर्भाष्ट्री 🐇 \cdots	··· 3 3 38	तस्यपि चान्द्रो युवनाथः	X::::::::::::::::::::::::::::::::::
तस्यात्मपरदेशेषु	··· 5 64 24	तस्यापि कुष्यरञ्चासः	(A) \$100 (100 (100 (100 (100 (100 (100 (100
तस्यायुक्तस्यायः 🤣	··· You stands	तस्यामि विदुर्भः 🔗 💮	··· :: \$? ? • : : : 3
तस्यासः सपरन्या गर्भः	··· \$ 3 50	तस्यापि क्षेम्पस्ततः	मा ४० ३३ ० ००६
तस्याप्य भगवान् ः	X X	तसापि रिपुत्रायः	··· R 44 145
तस्यात्मवः प्रमुखुराः	··· ४४१११	तस्याद्यातिमहाभीमम्	··· jaggajās palijas
तस्यापि राजस्यसस्याः कृतिः	** "Y" # 47	तस्थामस्याभवस्पृतः	b 26 0
तस्यकाको नीवमानः	8 E 64	तस्यापि रुविषणः पौत्रीम्	by 10 26 1717 C
तस्ताप्याहित्रमाणः	8 & A.	तस्यां च शिशुपालः	··· 8 : 58 : 84
तस्याध्यायुर्धीमानम्	४ ः के व्याप्ति	तस्यां च मच्यरात्री 🕖 🕝	m Richard for the
तस्याप्यज्ञनस्ततः 🐬	x 0	इस्प्रांभुमतो दिलीपः	k k
*	and the second of	Same and the second and the	X 3 36 -

35 3 8 ...

··· 8 88 80 ···

तस्यं चारोषभात्रहत्तरम्

तस्य च पञ्चपुत्रस्

8 - 1 W - 36

A HANDERS

(४९२)				
ं क्रिकेसी अन्य का है।	अंद्राः अध्यक्ष ः इत्ये	, इन्होकः ः	अंग्रहः अध्याः दले॰	
तस्यां चासी अध्यक्तिकारसंजी	K 65 30	तारकविगारी व्योभि	· 2 / 19 / 19 / 19 / 19 / 19 / 19 / 19 /	
तस्यां चल्सी दशसुमान्	R & 150 100	लरामयं भगवतः		
तस्य च धर्मानिक है	x 1X - 120	तालक्ष्म् स्य तालक्ष्म्यस्	R 64 53	
तस्य च नाससम्	8 M - 380	तायस भगवनक्रणाञ्	3 3 6 4 5 5 6 6	
तस्यां च दश्तवको सम	·· 8 11 68 1 1 100 1	तायह गुन्धवीस्थानीकोञ्चला	··· Aldered Sec. 3.75.	
उस्था न सन्तदेनादय ं	··· 8. 42. 85.	तायस यहाणे प्रतिके	y = 6 . 66	
तस्यो जहे च प्रद्युप्तः 🤊	··· 42	तावासम्बरहोगजम्	6 1. 3. 1. 5.	
तस्यो तिथाकुंगा स्वरे	ų 32 ³ 84	तायदार्तिलामा नाञ्ज	6 : 6 6 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2 2	
तस्यदं चा यत्	··· Autoridungstidke	तावध्यक्तमा च निस्त	··· See Ser Belle	
तस्यैव दक्षिणं हस्तम्	··· \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$	ताबद्ध स्टन्दने भवता	24 55 1 6E	
तस्येतद्वसं बारह	·· 68 65	ता वार्यगाणक गतिभिक्ष	m d stande	
तस्यैय योऽनु गुज्यभुक्	··· Grade San C. E. San	तानुभाषाप जैवासाम्	ह हिंदिह	
तस्येव करणनाहीनम्	e	ताश्च सर्वा चसुदेवः ः	A \$200 56	
तस्यैकदातं पुत्राणस्म्	··· 8 86 36	तासामपत्यान्यभवन्	\$ 6. \$ € \$ £ £	
तस्यैता दानवाक्षेष्ट्राम्	··· 40 40 68- 15- 166	तासा चापसस्यापुर्वशी	A Endignish	
तस्यैदनुर्णानिश्चनात् 🕆	8 82 850	तासा च रुक्सिकोसत्त्रभाग	x \$0	
तस्यात्सङ्गे धनश्यामः	··· 4 . 4C . 39	तामु चाष्टावयुक्तिः	果 治毒病性等毒病	
तस्योगरि जल्बैपसः	6 JR 26 RE.	तास् श्रीणास्यशेषाञ्	" 8 7 8 15 80.	
तस्येदालसुः	··· \$ 3000 \$ 500 \$	तासु देवास्तभादैत्याः	६ ६५ ७८	
तस्योवी जातकगादि॰	m 从 家乡沙山美食。	त्त्रस्थिनं कुक्याञ्चालाः	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	
तात यशेकैकी गाम्	& 13 155	तां च मार्गवः 🕛 🖰	A . A . 43	
तस्त्रितस्यीयः	K. Sold Sold	ता च गन्दिनी कन्याम्	··· 8.4 \$\$ 4.560	
कतिय बहिः पवनेरितोऽपि	··· 6: 50 AR	तां च पाण्डस्याह	& - 62 acc 28.	
तानि च सदमस्यानि 🦈	Art 48 . 1505.	तो चान्नुःस्कृतवर्यः	··· A BR\$\$: 013.47	
तस्त्रेवाहं न पञ्चामि	··· 14 4 661 136	र्ता चानः प्रसम्म	% (€), 42	
तान्द्राय यादवानार	ান্টে ব্রহার স্টাইক	तां वामृतकाविणीम्	··· Activities & Late &	
तानदृष्ट्या जलनियकात्ताः	\$ 1. \$6 m 12	र्ता चापस्यन्	··· A Michalphologia	
तान्द्रप्तः नामदो विञ	··· १ १९१५ ते द्व	वे तुष्टुर्युर्मुदा युक्ताः	10- \$ completed	
ताकिवार्ययस्य प्राह	and the state of the second	ते पिता दानुवरमीऽभूत्	··· # # 165 an 168	
ताम्बपि वरिः पुषं ः	X X	तो प्रत्यप्रवर्तीमेयम् ः	ल- १ः १२ - २२	
तायसर्वेणस्थिङ्गम्	··· \$ \$60 Zo	ता स्वती रैयतभूषकन्यसम्	X	
ताभिः प्रसन्नचित्तरभिः	· March (30) . 25.	र्ताक्षाय नहान् विद्यय	5 508	
ताप्यं चापस्यशंग्वेनीः	R tragely pt	तां इ सर्वानेव कंसः	४ १६ जानस्य	
क्षान्यो तहनगरम्गं कृतम्	& 1.8. 1.84	शांधिण्डेट हरिः पादान्	<i>५ ∴५६ ः १</i> ७	
साध्यो च नागराज्ञाय	- 6 20 x8	ताः कन्यास्तांस्तथा नागान्	an Grand States of the	
तामधतो डरिईड्ड	··· # 193 30	ताः पिवन्ति मुद्रा युक्तः	v. 5 - 28.0 . 60	
तामवेश्यः जनस्रासात्	m 8. 38 38	तितिक्षीयि स्ट्रह्मः	··· 3. 14. 25. 44	
तामच्याम् स रसमञ	··· \$: \$\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\	तिर्यक्तसोतास्तु यः शेलः	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·	
ताभरतस्थान्तरे देवाः	1. \$2 6 2	तिर्यद्वनुष्यदेवादिः	\$ -1 - \$ \$ (1, 12) \$ 5	
तामसस्यानारे चैव 🗀	··· ३. व्हार्यस्य मध्यम्	तित्वनश्चेदबैर्युतस्	3 Va. \$ 3, vary 55	
सामाह छाहिनी जुल्याह	मा ध ां दक्षण स्थि	तिलैक्न <u>डाष्ट्र</u> न्द्रशीपः	·· 3 hand Repair 140	
तामादायात्मनो पूर्धि	\$ King H.E.	तिष्ठत मृत्येसद्वरः	··· 3 266.27.68	
तामात्मनः स शिरासः	··· FALLERACE DES	तिसः कोट्यत्सहस्राम्बन्	A Set a basel	
तामिक्रमकतमिक्रम्	१ (जाइक्स के अपने)	तीरनुत्तद्रसं प्राप्य 😕	Saciendage gie geisee	

	r 1	(\$\$\$)		
चेत्र ्वरहेक्द्र ाव, प्रतृति	अंदाः अध्यक् ः इस्तेन	्ं इत्येक्डः ।		र्श्वशाः अभ्या॰ इस्तेः
जुकोय परमाबीहवा	by p. \$40 / c. \$8	রীরা ত্ রিদা বহুত্		য় নার্তিলা ই ছ
तुम्बं यथाबनीत्रेय	··· \$	रेनेक्म शे षद्वीमवती		\$\$ -1.33 X
तुम्बन्धास्य सकोऽपि	4 28 79	तेनेयं दूपिता सर्वा		4.000000 0000
तुल्यवेषास्तु मनुभाः	··· \$ ··· \$ · · &\$	देनेयं नहप्पकर्वेण	148	8 mg 470 686
तुषाः क्याक्ष सन्तो ये	m 3 30 36.	तेनेजेक परेडेंट्रम्	411	3 9 4
तुष्टरणलस्त्रवीयस्	··· १ 4 . 88	तेनव च भगवता	***	8 8 98
तुष्टल श पुनर्घीयान् ।	··· የ ከትን በነሪ	तेर्देव चाप्रिक्षियता	461	¥ 990 6 1 1 83
तुष्ट्युनिद्धते सहिमन्	- 4 * \$8 mg 28	वेदैव मुखनिःश्रासः	461	2 march 15 83
वणिक्दोः प्रसादेग	x . 8 . 68	देनैव सह गलक्ष्यप्	4 e t	γ. ί .– α ., γ. . – ε γ.
त्रीयसीर्य बहुधाम्	·· 3:012: 24	केप्यस्थेषां वर्धयोषुः	F11	3 1222 2 . 44
तृतीये चीकाना व्यासः	··· 3 3 12	ते प्रयूष्ट्रीय वर्ष विद्या	His	S 15-6 1 24
वृत्रीयेऽप्यन्तरे अस्तुन्	३ १ १३	ते ब्राह्मणा वेदवेदान्-	111	४.च.५० ,ः व्यक्
तृत्व वापते पुंसः	3 . 36 33	राष्ट्रोद्धि नागगर्भाः	inr	\$**, 9
क्रेक्नेयु क्रिकरेण्	· \$ = \$40 = = \$20	वेष्यः स्वषः स्वे		79
तृष्या लक्ष्मीजंगम्बाधः	** t ** \$3	वेष्यः पृत्रंतग्रह	**	A 58 656
वेच क्युलैनिकस्त	४ १३. ४७	ते वहपत्तस्य ग्रेन्स	-61	4
तेच गोप महरदुश	90 4000 ACC 0 23	वेषामपोह सत्त्म्		20024 230
ते खापे तेन	X 4 40	तेषाभिन्द्रश्च भविता	117	· 最後の本名の10月4日
केंद्रसा नागरकानम्	8 . 9 . 98	तेपाणिन्हों महावीर्यः	448	\$2000 \$000 1.55.
तेज्ञती धास्त्रमाग्रेथे	··· 3 · 5/6 · 43	तेषामुसद्वाधीय	448	8 39 86
तेज्ञां मक्षं देवाः	··· \$ 1.0\$2135	तेपामभन्ने सर्वेषाम्	115	3 13 35
तेजोक्की सर्वेपहावजीयः	8 4 64	तेपामभावे मौर्याः	200	A 100 4 2 1 1 1 4 4
ते तस्य मुख्यित्रधारा	\$ 18 11 68	तेषामन्ते पृतिस्थित्	9.79	A 5A 83
ते तथैय ततश्रहः	\$ \$8 X	तेपामपुरुषं विकासिकः		*
ते तु सद्भवनं शुल्या	१ १५ . ९५	तेषामुद्रीर्भवेगानाम्	•	2 23 32
तेन <u>अ</u> रेण तरक्ष्यम	2 <u>23</u> 50	तेकं वु सन्तरस्वन्ये	10.0	₹ ₹ ₹€
देन सहस्रियो युक्ताः	A SA ∴40€.	देशं भ्रय्ये महाभाग -	411	
देन सह वस्त्रामाः -	8 . E.S 50	देशं स्वस्तु सर्वेव	411	र १५ १६व
देन च प्रीतिनदासमूत्रः	ଳ ବାର୍ଟ୍ରହ	देश वंशप्रसुर्देश वेश वंशपर्दिश		5 B 1 X
वेन स्वरूप दशा हेदः		तेषां गणका देवानस्य		5 has \$ care 26.5
तेन प्रोपालकोपाणि -	\$ \$ \$ \$4	तेषां स्वागतदानादि		\$. 5 . 58
क्षेत्र यहालाखात्रीकत्	5 6 50			
का परमाणकारम् केन वृद्धि पर्ध नीतः		तेषं कुराम्यः शास्त्रस्यः		'8 Uπ - 1€
काशुम्ब १४ वातः तेन समिति स्थातिः		तेयो च बर्यून क्येंद्रिकगोशांच		X: 140 36
तन सामारत असकतः ः तेन सामारतहस्त्रं तत्ः	Z i i com in l'antit	तेखं च पृथुप्रवाः	- 21	A . \$4
का साथालका वर् केन संक्रोधाश्रितेनाम्युना	6 -467 - 50	तेजं कुम्बदेयोग्देया	381	85.488
तन् अक्षयात्रात्रात्राम्युना तेन विश्लोपित ःस ्थिः	m stranger de	तेषां च प्रद्युप्तचारुदेष्णः	ér.	A : 440 . 30
	मा ५ ३६ ≋्रद	तेषां प्रधानः कान्यित्वधिपतिः	,	A. 1464 . 1. 180
तेन वित्र कृत्यं सर्वम्	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	तेषां यसीयान् पृथतः	-14	A \$6 103
तेनास्या गर्भस्सप्रवर्षाण	··· የም 5/2 / 15 የይ,			A 50 X8
रोनान्तरस्थारमञ्	6 . 86. 6#	तेषां च बीजभूखनाम्	-14	A 52 500
नेनारयतस्मितं सर्वय	in Brands and	तेषां गुनीनां भूकश	114	£ 24 54 10.
तेतत्त्यातः कृष्णे अप	··· 4 33 ~ \$5	तेयां प्रचानभूतास्तु	ine	र ारर ् स्र
वेन्द्रवेन प्रजलतात	43 53		144	多 ·阿拉塞·拉索 衛河
वेकविपतवा वन	···· [1] 可以特殊等等	तेमुद्यस्वदेशेखः -	***	 Interpretation degraph

्रहो लन ः ः		अंदरः अध्याः देनीः	ी ्रिक्टोकर ि एक		अञ्चः अध्यकः इसने
तेपुत्ससेषु केव्हिसाः		8 58 FE	तं पाद्धअन्यमापूर्व	ala S	५ "२१" ३०
तेष्ठरं मित्रभाषेत		१ १८ ४३	तं पिता मृष्य्युषाञ्चाय	101	र ः १० 🕒 ३०
ते समेल्य उपधोनिष्		१ (१२ ८) धरे ।	तं प्रकाः पृथिकोनाथम्	100	१ १३ हह
ते सर्वे सर्वेदा भद्रे		ey y Co	तं चालं यादन संख्यम्	15.0	५ ११ वर्
ते सबें समबर्तन्त्र 🧢		4 Elia ()	तं त्रञ्जभूतमस्यानम्	irr	\$ 55 28
ते सप्प्रयोगास्त्रीपस्य	614	ቅ ^የ ′ ፈላጥ የ\$ ′	तं भ ुतस्य स मिष्कातः	124	२ १५ १६
ते सुक्रमीतिबहुत्यः 🌣		व असदी अस्ति।	तं समुद्राश्च नद्यक्ष	444	6 63 83
ते हि दुष्ट्विकन्यालाः	F**	4 . 43	तं बन्द जानं भरणी		५ वट वह
तैजस्मनीन्द्रयाज्याहर्दशः	i en	S 3500 5 32 80	तं विशुप्रशिषेगीवम्	.14	4 6 84
तरप्येनेक्षेत्र प्रत्यासमातः	- 111	A 60 6R	ते बृधा जगृहर्गभंग्		\$ \$4 88
तैरप्यन्ये परे तैश्व	611	\$ 57 8% 9 8G	तं शोपितपुरं गीतम्		d. 153 . 56
तैरचः रथैरनचो प्ली	•••	d . 5 . 55	त रह प्राह महाभाग	1 199	6 6 ch 6.R
तैरस्यान्यतिकः जुम्तोः	# b 1	X 3 50 - 55	त्यक्ता सापि रानुस्तेन		6 34 4 3 38
तैरियं पृथियी सर्वा		१ ३२ । १५	त्रयस्थिकसम्बद्धां 🗸	100	\$ 65 . 0
तैलक्डा पदा चक्रम्		२ १२ १७	प्रयो यहाँ दण्डनिति॰		\$
तैरुस्सीमासस्योगी		इ ११ ११९	त्रयी समस्त्रवर्णाताम्	-,-	3. 50
तेख सम्भवेबीयविभृतेः	261	A State and C	वयीधर्मसम्बर्गम् -		\$ \$K \$X
तेश्च विमिश्ना समपदाः		\$ 5% 95	अयोदशाईमहा दु	182	S 6 36
तेक्षपि सामवेदोऽसी		\$. \(\)\E \(\)\c,\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\	त्रयोदर्श रुखिनीमा	* ***	३ व व्
तेश्रोक पुरुकुसाम्य	14 107	6 34 52.0 36	अस्यास्म ीस स्यवतः "		A 5 44
तैस्तु डाददासाहर्मः 🔻		E 10 - 3 - 2 - 2 - 2 - 2 - 2	त्रन्यात्सः एकदशे		2 3 3 3 3 3 511
तैः वड्डिंदरयनं वर्षम्	11	१ 3 १०	श्रस्ट्र <u>स्युकलक्ष</u> ानः ः		A. 3.1193 200 140
तोवानाःस्था मही ऋत्वा	1.7	6 3.3 000	बाह्यस्यक्षं स्वया गादः		4 85 4
वी च मृतवामुख्यातः	aas	8 3 56 €0	त्राहि अधीति गोविन्दः		५ १६ ४
ती य दृष्ट्रा शिकसद्दकर॰	144	٠ ١٠٠٠ ١٠٠٠	प्रिकृतः शिक्षिशकैक 🕆		र केईन किन्छ
ती बाह् स च में मुष्टिः		५ ३८ ३२	जिगुण राज्यसभौतिः		१ ज्याचे जो स्थ
ती सन्दुरपत्रविद्यानः 🤊	•••	d : 45 6	क्रिमाधिमति उद्यारे	**	S. Butter
तौ हत्या वसुदेवं य		OF 1 S.C 10- 8.C.	जिणाचिकेहास्त्रिय यु ः		5 24 T 2
ते कारकरत्वने नाम 🦈		4 23 6	विभिः क्रमेरिमोल्लोकान्	ar:	2
तं च पिता शहान 🤌	100	K. 49 \$5	त्रिरपः जीगना यीम		\$ \$5
तं च स्थमनकःभिरुपितः		x 43 88	त्रिकिया भावना भूप	** 1	£ 1 10 10 10 10
तं च भगवान् 🧪		1.84. E. A.R.	र्जिक को ज्यामहरूकारः	***	£ 175 - 1256.
तं चौप्रतपसगयलोक्य		2 8 2 0 1 800	विश्वसूर्विधन्तः		४ व ३ स्प
तं छत्र पतितं दृद्धः 🤏	187	५ ल्ल वर हर	विश्कृते जन्मिश्चेव	***	5 5 88.
तं तद्भानसंस्वरम्	***	२ ™१३ ः ४८	क्षीण आद्धे पविश्वण		३ १५ ५२
तं सङ्घं महास्पानम्		२ १३ 🗵 ५२	त्रीणि रहशाणि वर्याचाम्		R 38 86A
र्त शुद्धुयुरतोत्त्रपरीत्रचेतसः		Sec. 18 - 130	त्रिप्रेतेत्रथ भुतेत्यु		Some Some
ते तु द्यूहि यहाभाग 🤚		€ 18 5€	त्रिशाको इतस्तु सम्पृत्रीः	rı	£ + ≥ 3 . ±0.
र्व एकर्रा इस्टिईसम् 🛸		५ वट १६	विकासुर्ही कथितम्	1	\$ C 66.
तं दृष्ट साधकं सर्गम्		8 9 6 6	इताषुगसमः कालः 🎨	LI J	S 8. 62
तं दृष्ट्रा से सदा देजाः	-2-	83 9 8	प्रेराञ्चानुविकासस्यवास्	110	R - 48 - 60
तं दृष्टा कुपितं पुत्रम्		१ ११ १२	बैलोकोश मते युक्तम्	• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	ध्रिक ∉इके <i>व</i> ि छर
तं दुद्धः गृहमानानाम्		4 36 6n	डेलोक्स्यनाक्षेत्र योज्यम्	•••	X 11 3/13 426
तं दृष्टेन महाभागप्	187	३ द्रान्य ६६	वैलोक्यं च क्षियानुष्टम्		१ विकास ११६

	- (18			·
क्षित्र इस्तेकालः । जन्म	अस्तिः अस्ति। " रस्ते।	ा अञ्चलकाः । ११		अदाः अध्याः इस्ते।
वैरुप्रेक्ययङ्गामाना छ	· 3 . 60 · (40)	त्वामाराष्ट्र परे बहा	***	\$ 8 .50
प्रेलेक्य विद्यारोह	··· * 604645	त्वामानीः अरणं विष्णो	414	\$6 405
वेलोकस्टिनिक स्थाने	··· Santing	त्कपृते यादवाकी	***	4 \$4 30
बेटोक्याश्रमती माग्य	··· १ १२ १०१	त्यं कर्त्व च विकर्ता व		4 24 28
बैलोक्यमेत ल्किकतम्	··· दः अत्यक्षादः कृष्	स्वं कर्यः सर्वभूवानाम्		4 100 300
प्रेलेम्बगे वल् जकम्	\$ 3 to be \$6	त्यं कर्ता सर्वभूदानाम्	177	\$ \$ \$d
बैस्नेक्यमस्टितं अस्त्व	··· 42. 37 248,	संक्रिनेतिकरः किनु	***	5 63 605
त्रे व्यर्गकोस्यकं स्सर्वान्	··· \$ //3/\$**** 98	तं च शुम्मनिशुम्भादीन्	***	4 8 . 25
त्वक् पशुर्वसिका जिहा	\$ (\$5	त्वं चारगरोनिजा साभ्यी	761	१ हर्नुः , ७१
त्यतोऽनवस्त्रपन्तरः	··· 4 () \$ \$ " () \$ 4	त्वं परस्थं परस्थाः	***	५ मा ७ मा दर
त्वती हि केशस्य दनम्	m the forms	त्संपक्षेतिधयदर्शस्य	***	५ त २३ १ १२
त्वतः प्रदूषोऽध सामानि	9 77 Es	त्वं प्रसादं प्रसन्तात्वन्		\$ 6 10
रक्तरसादादिदमशेषभ्	149 1 9 1 Y	लं बह्मा पसुपडिएयमा विद्याता	***	4 8% 48
खल्यमदानुनिक्षेष	44 4 16 16 18 18 18 18 18	ह्यं भूतिः सप्रतिः शानिः	861	५ ेश्व ८३
स्वद्रशबद्धान्यम् शतम्	8 - 35 C 34 14 C	लं महता सर्वरकेकताम्	ning.	· 数"有大" 大种类
खद्ध्वं चास गृहस्य	·· 8 83 860	त्वे दक्षरसं वपर्कारः	*	6. 46. 45
(ल्ड्रक्रिययणे होतत्	\$11. \$5 personal	त्वं राजा क्षिक्ता चेयम्		₹ ं ₹ ₹ ९ ₹
स्बद्भप ारिणश्चन्त ः	·· • • • • • • • • • • • • • • • • • •	खं गुजा सर्वलिकस्य	1 1=	4 45 604
सन्नो कृतिमदो प्राप्ता	4	त्ये एक्व दिनथेह		\$ 18E 8X
त्रस्वतं लदापरः	2.00% 6.20	त्वं विश्वनानिर्भुवनसा गोम		५ ० १ - ४३
स्वन्त्रायामृद्यमनसः	600.63 1 8X	तः येदारलं सादक्षानि	181	\$ 11.811. \$
त्वमञ्जीन स्टीकाः	an the graduate #\$	स्व रिविद्धारलं स्वधा स्वाह्य	101	18 18 18 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8 8
लम्पेनिकर्नाकाय	The State of the s	लं लाहा लं स्तथा विद्या	100	6 . 5 . 50
स्वयञ्चलमतिदैश्यम्	# 2"25.2. A.	लां पातु दिशु वैकुण्डः		4 774 278
त्यमतः सर्वभूतानाम्	4] 190-10 .48]	त्वं योगवधिक्यपि		4 .86 . 103
स्वयासीर्धाहरूः पृथिम्	१ ବିହେଲଭ ିଅ ଷ	त्यं हत्या यसुचे वाणः	446	2 (28 / 108
लमुर्वे सलिल वहिः	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·	14 1531 1327 12 1	20	American from the first
लामेव जगतो मानिः	4 se 36	दक्षकोपाच तत्काव		t
लवा बिल्मेकिता सहाः	manite in dan 1869.	दक्षिणामेषु दर्भेषु		\$ 124 mak
ल्याहमुद्दभृता पूर्वम्	· 5 2048 RECESS	বঞ্চিত্ত্পী বিহিন্ন সংস্থ	***	\$ 40%% · \$4
	र ंप । युव्	दक्षिणे स्वयने चैव	144	S . S . 80
त्स्य देवि परित्यक्तम्	··· 6	दक्षणोतसभूकार्दे		३ : १४००,=२४
त्वया क्ट्रभवं दत्तम्		दक्षिणं दत्तमुख्य	-14	4 140 38
स्रक गाँधेन देवानाम्		दक्षिणे भोतरं चैय	Is.	2 466 108
स्वया भृतेयं धरणी विभर्ति	••• स्टब्स्ट्रिक्ट व्यक्ति । • व्यवस्थित व्यक्ति	दक्षी म्यीचियत्रिश		के ज्याचना वर्ष
त्वयि भवित्रमतो द्वेपात्	4 50 28	दत्ते प्रस्तितः चेतत्		8x 4 3
स्वयंदेन हरा भीतः स्वयंद्रम् विश्वयः वेश्वे	a strong to the second	दसाः पितृभ्या क्यारः		अ २ ०० में देश देशक
लयोवा शिस्कि चेति	CAN TRAIN CO. L. C. This I	दत्तो हि व्यक्तिसर्थः		५ व्यक्त १३
लयोकोऽये ग्लहस्तस्यन्	A DANGE TO BE	दला कम्योदकम्		à (0.44×) à8
लब्बेंद्ध भगनान् निष्णुः कर्मकं कर्मकं के वे		इला च निर्धाकायम्	F2.7	३ ११ ६६
ज्यार्थनां रक्षांतां है है : ज्याना	\$ 1.00 M	दस्ता चैकां निया तेन		8
ल्वाग्रध्य जमद्शिक्ष	··· 5 has say see (6.)	ट्या च दक्षिणं तेभ्यः	-15	3 - 14 - WW
लष्टा लपुश्च विराजः	್ ಕ್ರೀಯಾಕ್ಟ್ರೋಚಿಕ್ಕ್ ಬ್ರಾಂಡ್ ಕ್ರೀಯಾಕ್ಟ್ರಿ			4 2 30 1 - 185
त्वर्द्धय तेशसातेन	··· 3 225 5 2 2 2 4 5 4	दर्श च नुगश्चकान्		A 56
त्वागनाराध्य जनसम्	··· क्षांत्रहरू अध्य	ददर्श रामध्यको म		4. 64

्रदर्शनदः *त*ेल

अन्नः अध्यक् ऋतेः

-१८ **१रलेका**ः १८७

अंशाः अध्या**ः ए**लो॰

(2) (1) 有效性的 企业 (1) (2)	ानिक: क्यंक्तील जिल्लाल	. २०११मा । अस्य	diffic of edia. Aca.
ददर्श तब चैबोपी	··· 4 . 86 . 34	दास्ति मस्यग्रहेर	··· 노마 왕의 (141) 오
ददर्श चाधराम्भे तम्	'X' १३ " ३७	दारम्पत्रिर्यथा तरुग्	· - \$3000 1000 35
द्वाह सवनान्द्रशान्	··· ৸ুঃইছ : °ছ	दिग्दक्तिं। दत्तभूमिम्	·····································
ददी गक्षभिरूपितान्	1 - 12 - 40:	दितिर्विनष्टपुत्रा यै	m jang gan i go
द्दी स दश पर्माय	\$ \$4 203	दितेः पुत्रो महाबादः	··· \$1.7.46 × 14.4.45
त्दी च दिश्चुपालाय	4- 88 " 1 8	दिम्बासस्समयं धर्मः	3 86 48
दद्शे सफणं छ्यम्	m 16 154, 158	दिस्याः पुत्रद्वयं जञ्जे	··· \$ 000,50 105,00
इद्धे च प्रमुद्धा सा	હ ⊱∌≋ા ર ર	दिनानि कति चेप्परतः	\$100 \$31. (\$\$
यदासुस्ते मुनि गाप्त	6 -5 x	विजान्तस-ध्यां सूर्येण	··· *************
न्द्रम् श्रापि ते तत्र	b 23	दिशहेद[यहस्यतम्	6 46 64 Q CAR 126
द्याननसिंदे वसे	F . 58 - 38	दिने दिने कलालेकी	१तकश्रा व क्रि
द्रांध्यकोदकशापि	5: 12: 18:	दिस्टिपस्य भगीरथः	··· X : X : 34
दशा गर्नेः समदर्भः	11 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	दिस्त्रीपात् प्रचीपः	··· * 1-40 3000 C
दश्यवदेसावदेः	··· ३ १३ ुं ३	दिवसस्य गुनियं भी	··· \$.5. 45
दन्ता गवानां कुलिशाम्बीसुयः	5 50 20	दिवस्पतिर्भक्षवीर्थः	** '\$ "COR" "DO \$4
दगस्य पुत्रो राजवर्दाः	y	दिखसः को विना सूर्यम्	m # 1 10 10 10 50
इसिने धारिन्वे शर्म	વધુ રહ ે ફ	दिकतियो नु विगुर्ते -	14 - 45 - 40Z
दुक्तप्राचमस्त्रकेशिः	\$ \$6 · - \$6	दिया स्थापे च स्कन्दन्ते	\$
दवा समस्तभूतेषु	- \$ -12' 3E	दिवासृत्यञ्जग आग्रा	\$ 21 8 1 ME
दर्शनमञ्ज्यक्रयम्	- x x 45	दिवार्करहरूमो प्रव	··· Survey of an open
श् डितिः मानुषो मानः	ધ્ુ⊳ષ્ક પ્રવ	दिवीन वशुसालम्	44 \$ 100 C miles
दक्ष वाही च सङ्ग्रामम्	4. 49. 48	दिखोदाधार जुते मिनायुः	m & who well
रक्षरसंख्याह	8 : \$5 A	दिव्यक्तसम्बर्धरा	\$15000.\$100\$\$64
दशयश्सहसाणि	··· A 66 . 48	दिज्यज्ञानापपत्रास्ते	or A 1780 and 1886
द्वामो ऋसमावर्षिः	\$ \$	दिवये वर्षसहस्रे तु	· 3 - 30 - 20
दशस्त्रमुख्ये वे	\$ Z E4	दर्शकस्त्रकस	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
दशसःहस्रमेकेरम्	w 2 4 7	दिस्य हि रूपं तत वेति नानाः	- A Date of Mart World
दशक्रमेसइस्त्रीय	\$ -18 1 184	दिशि दक्षिणपूर्वस्थाम्	Philipping
दलवर्गसङ्खाणि	\$ SX: 184	दियः अजितिश्रतिः गङ्गाम्	'\$ \$ 4 Lig . ER
दशक्षसु प्रचेतीत्यः	to the same	दिष्टपुत्रस्तु नाधाः :	A "
दशानश्राविद्धितराष्ट्रवागम्	X 5X XX3	दिष्टमा दिख्यति	A secret 3 6 60.
दशोसराणि पहेंच	> : ४ . ५१:	क्षेत्रकेश परित्यकुम्	\$100-5\$ \$100. \$E
रक्षेत्रांच प्रका	३. ७ १३	दीप्तिगान् चासली समः	\$ 200 \$ 25 A \$10
द्रम्मानं तु तैदीष्ठैः -	6 1 3 1 1 5 5	दीतिमत्त्रप्रशासाः	ा ीप ६ श्री ्र
दहुम्मानस्वयसम्बद्धः	1 .26 799	दोर्भसबेय देवेशम्	(-: 13 - : 10 -
दातव्योऽनुदिनं विच्छः	६ दईः १६	दोपायुरम्जिहराः	··· franks XA
दानको जानीम एव अयम्	··· R. : 53 - 526 :	दुराहमा यध्यतायेषः	\$ \$ 6 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0
वानमंत्र धर्महेतुः	8 36 .67	दुराज्या किञ्चतामरगाठ्	··· 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1. 1.
जनानि द्वादिष्णतः	35 5 8	दुर्नेतमेवद्रीवन्द	··· ृष्रोहा १५ ००व १२
दानं दरा राजेदेखन्	3/# 16 1-155	दुर्बुद्धे विनिवतस्य	··· 6 8 8 50 2 10 50.
दानं म दशास्त्रहोशी	2 125.4 · \$8 ·	दुर्भिक्षमेय स्सत्तम्	··· & injuliation to state.
रामोद्धेऽसी गोविन्दः	4. 48. 48.	श्रुप्तेशकरपीडाणिः -	इक्ष्मिक्षिक्ष
रामा भध्ये ततो सन्त्या		दुर्वसोर्वहिशस्त्रः .	A 68100.421\$.
Carried Britan Philips Co.	6 - 6-6-1-1-1-1-2006	minn vertels.	90 - 0 September 1979

... १ के ९०० १२४ पूर्णसाः सङ्करस्वीसः

दाशः पुत्रस्तयागारः 🗀

		(Re	(6)	100.00
ं विक् रलेका ंट कर्ला		अंदाः अध्याः इस्रे	न्द्र यक्त्रेस् यः च ४०५४	अंशाः आणाः - इत्से॰
दुर्विजेशमिदं वसुम् 🐘	100	५ ३१ २०	देवज्ञाधितृभूतानि	3 3488 mg X13
दुर्नृता निहता दैत्याः	1.0	Ham Birthon 88	देवापित्भृतक्षन	··· 3 : 86 ··· ¥3
दुष्टकालिय विद्यान		Compression of the compression o	देवर्षिम् नकरसम्यक्	··· = .27 \$\$
दुष्टानी कासनाद्याला	193	\$ - 185 may 28 - 6	देवगोवातम्बन्धिसस्यन्	& \$2
दुष्टेञ्च वरसत्भमः		¥ 555€(575)} ? &-	देवताभ्यर्चन होसः	·· 3 - 4 - 31
दुष्यन्त सङ्ख्या	114	Kop 88 30	देवद्विजापुरुषो च	39 and 5
दुरस्वप्रोपदामं नृजाम्	114	83 - 84	देखद्वजपितृद्वेष्टा	··· 7 ··· 4,
दुहितृत्वे चाह्य गङ्गम्		Y S E	देवताराथनं कृत्वः	··· and any of the same of the
दुःस्यन्येय सुस्मानीति	3-8	4 23 35	दिव वीपतुगन्धवं ।	··· 2 33 4
ुकोटराः स्था होते		र 5 ह ७ ह 6 हिस	देधमानुषपश्चादि॰	··· १ २२ ८२
दुःसं यदेवैकक्षरीरजन्म		A 44 5 45 555	देश प्रपन्नातिहर	\$ 50 58
दुःर्श्वस्य दुष्ट्यासिषु	11-11	to the time at	देवदेव जगसाथ	\$ \$5 38
दुः अध्यानकाने नृणाम्		E BOOK STORY	केतियंहमनुष्यादी	The state of the s
दृतं च प्रेयवामास	141	ધ કેશ કે.	टेबर्षिपार्थियानां च	··· \$
द्रातसीस्तु सम्पर्कः	17.0	\$ 55	देवले देवदेहेऽगम्	6 2 2 2 2 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
दुष्प्रनष्टनकः	1-11	हैं ५ २८	देवाक्षस्यापि	A 53 \$
दूर्णयतनोटकमेव तीर्थहेतुः	151	R 58 88	देवासुरे हता हे तु	R 60 20
दूरे स्थितं महाभागम्	10.0	F	देवापिनांस एवारण्यम्	8 . 50 40
द्वाधादर्थः	148	A 4 A5	देवापिः पीरवो छत्र।	A SR SSS
दुदाशकराजकपिरमञ्जाश		A galacter or say 1	देवासुस्महायुद्धे	५ ॅ २३ ३०
दृष्ट्रमात्रे ततः काने	400	4 35 50	देवा देखासाधा यक्षाः	v 30 68
दृष्टमात्रक्ष देनासी		4 33 54	देवादिनिःश्वसहतम्	··· 3 84 84
पुष्टभात्रे च तस्मित्रपहाय	41.0	૪ દ્વ રૂદ	देवासुरमभूद्भुद्धम्	··· 3 60 6
पृष्टत्यं हि पद्मिर	4 - 4	\$ 1	देवा मनुष्याः यदावी वदासि	\$ 88 48
दृष्टले भगनम्		X 2 2 282	देवासुबस्तथा यक्षाः	··· \$ 24 36
द्भाग सञ्ज्याद्यः	***	\$ 50 0	देवादीन तथा सृष्टिः	
दुहा निदार्थ सं अर्थुः	468.	\$ 6€ 8	देवा गश्चासुरः सिद्धाः	(
द्धा ममत्वादृतचितमेकम्	41.0	४ २४ १३५	રેવા મમુખ્યાઃ પ રાચઃ	··· 8 84 84
दृष्ट्रा गेर्गाजनसम्बद्धः	11.6	५ १८ १३	देवान मह संहिध्यम्	૨ ^{જિ.} જે ^{જે કે} ફેર્રે
इष्ट्रा क लिङ्गराजन्तम्		4 72 90	देवान मेक्सेक वा	3. 24 24
दृष्टी बलस्य निर्माणम्	APL	્રે જ્રેલું એક	देवानः दारबानः च	8 84 24
देवदर्शस्य हिष्यास्तु		A tale of the factor of	देवासुरसंग्रामन्	or Representation of the second
देवतियंस्मगुष्येषु	46.6	4 33 34	देवाः स्वर्गं परित्यन्य	2 3 20 10 10 C
देखदेख जगजांध		of small south	देविकायासारे वीर [े]	2
देवराजी भवर्षनम्हः		च् ा वृश िकारिश	देवी जाम्बदर्ती चाचि	
देवराजा मुख्येकी	HFL.	ય ફેલ કર જ	देवीविज्ञायते देव अवस्थान	६ ५७ ११
देवसिद्धासुग्रदीनाम् । केन्द्रकेन्द्रप्रकार		कृतिविद्युष्ट्र सामानुष्ट्र सन्दर्भनी करा	देवेश प्रहितो वास् केर्क स्टब्केटर्स	6. 3
देखस्थेनसर्गति प्राप्तः । देखसम्बद्धाः पत्र्ये प्राप्तिः ।		e \$\$100 \$\$	देशीत अन्दितोऽसी देवो वा दानवो वा स्वन्	··· ४ व १५ ··· ५०१३ ८
देवकस्य सुती पूर्वम् । नेकार्यने अस्तराज्यसम्		હું જેવા કું	देवी प्रातृतिभावारी देवी प्रातृतिभावारी	\$ 1245 S. 44. 46.
देशभूति तु शुक्रुपानासम् देवगर्मस्यापि सूरः		8 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18	देशनुमा महाराज देशनुमा महाराज	and the second second second
देवलनुषदेवः सहदेवः		2. 3. 68. 20. 20. 60.	देतेनाः सक्तरेः शैरीः	\$
देवकनुगरेवश्च	F17	2 58 60	देखगुष विषं दतम्	\$ 55.865- 40
देखकर्नुगदेवस्	117	३ टाल्स्क्रीलाध ३र्थ ः ० न ् र	देखद्भवकन्याभिः	4 SECCO
र्जनकारि । अन्यक्षाः इ.स.च्या		A . Articultable;	Annual mental and the	A. Mariana

36

¥

719

80

28

35

80

36

40

58

48

%9

ч

t

२३

٩

98

38

1

Ę

₹o

20

28

23

२२

X.Ca

69

35

88

SID

84

220

47

१०४

28

च्च

إبالم

19

44

島屬

399

ŧ

3

¥

₹

X

\$19

196

3.5

99

48

X

23

12

X

ŧ

۹

۹

શ્ધ

१७

ģ

3

3

319

36

38

49

33

१९

3

4

10

3

큮

6

X

th,

44

(g

84

lą,

*

रर

وا

100

4

इत्लेकाः

देखेन्द्रदीपिती वहिः

देत्येन्द्रसूदोपहतम्

दैत्वेश्वर न कोपस्य

देखः पञ्जबनो नाम

दौर्वल्यमेवाच्तिहेतुः

दंष्ट्रियदगृहियशैव

द्यतिमन्तं च राजानम्

द्रव्यनाशे तथोत्पत्ती

द्रव्यावयवनिर्द्श्तम्

हुद्योस्तु तनयो बधुः

द्वापरे द्वापरे जिल्लुः

द्वापरे प्रथमे व्यस्तः

द्वारको च मयः त्यक्ताम्

द्वारबत्या विनिष्कान्ताः

द्रास्वत्यां रिथते कृष्णे

द्वारवत्यां क यातोऽसौ

द्विजमीवस्य तु यबीनरसंज्ञः

द्वारकाशासी जनस्त्

द्विजन्।श्रूपरीवैपः

द्विज्ञातिसंक्षितं कर्म

द्विजांश भोजन्यामास्

द्विर्कंयं विष्णुसंज्ञस्य

हितीयस्य परार्द्धस्य

द्वितीयोऽपि प्रतिक्रियाम्

द्विपराद्वीत्मकः कालः

द्विपादे पृष्ठपुन्छ। द्व

द्वियष्टिवर्जाण्येतम्

हे चैव बहुपुत्राय

हे ब्रह्मणी बेदितच्ये

द्वे रूपे ब्रह्मणसास्य

हे लक्षे चीतरे बहान्

हे विद्ये लगनासाय

दे वै बिद्धे बेदितव्ये

द्वे ब्रह्मणी त्वणीयोऽति॰

है कोटी तु बनो लोकः

हादशवार्षिक्यामनावृष्ट्याम्

हुपक्षयमधी दृष्टा

देष्ट्रामिकन्यस्तपदोषयेतत्

द्यावापृथिष्योरतुरुप्रभाव

देष्ट्रा विशीर्णा मणयः स्फुटित

द्रक्ष्यामि तेवामिति चेट्यस्तिम्

दोगहेलूनदोषांश्व

देखेश्वरस्य वधायास्त्रितः

इस्प्रेकाः 688 धनधान्यद्भिमतुरुम् 348 Ł 84

(884)

धनानामधिपः सोऽभृत् धनुर्महमहाबोगः धनुर्महो यमाप्यत्र

धन्वन्तरिस्तु दीर्घतपसः

धन्यास्ते पार्थं ये कृष्णम्

धरित्रीपालनेतैव

धर्मज्ञ ध वृत्रज्ञश

धर्ममधं च काम च

धर्मस्य पुत्रो द्रविणः

धर्मभुवादा स्तिष्टन्ति

धर्मध्यजो वै जनकः

धर्माय त्यज्यते किञ्

क्षमीयमीं न सन्देहः

धर्मार्थकामै: कि वस्य

धर्माताः सत्यशीर्यादिः

धर्पार्थकाममोक्षाश्च

धर्मात्मनि महाभागे

धर्में मनश्च ते भद्र

घमोंत्कर्यमतीया<u>त</u>्र

धर्मो विमुक्तेरहेँ ज्यम्

घमीक्ष ब्राह्मणदीनःम्

धाता ऋतुस्थला चैव

भाता प्रजापतिः शकः

धाराभिरतिमात्राभिः

धिक्लां यस्त्रमेव

धृतपापा दिवा चैव

घृतवतात्सत्यकर्माः

घ्तकेतुदीप्रिकेतुः

धृते गोवधीन शैले

धृष्टकेतोईर्यश्नः

भृष्टस्यपि घाष्टेकम्

धेनुकोऽयं मया क्षिप्तः

भ्यायन्कृते यजन्यज्ञैः

ध्यानं चैवात्मनो भूप

भुवस्य जननी चेयम्

धुवसूर्वान्तरं यस

भुवप्रहादचिताम्

धोमान्होमान्समायुक्तः

धृतराष्ट्रोऽपि गत्भावांम्

धर्मायैतद्धर्माय

धर्महानिर्न तेष्रस्ति

Me

Sq. ₹

ŧ

Ŷ.

₹

Ŷ

3

₹,

Ę

ţ

R

3

Ę

Y

₹

₹

ŧ,

24 24 Ó 37 Ċ \$3 89

अंदाः अध्याः इले॰

3.8

19

1,20

¥

6

24

6

34

35

Ę?

25

lg.

56

310

63

۲

ÇĢ

35

2019

38

713

26

Ę

ŧο

3

ER

38

₹4

23

28

35

98

ξ

719

28

V9

26

200

808

38

देव

38

१५

₹६

28

8

28

Ž

ŧο

28

3

\$4

१२

X

80

3,8

3

88

Ŷ

4

ĘŞ.

₹

28

. 8 1.

ा**ः इत्येकाः** अस्

नदीकदतराकेषु

अंशाः अध्या॰ १२लो॰

... beine 65; - 5r

अंशाः अध्यक्ष ः रास्त्रेष

··· 🛊 😘 🤻 २२

More than to the

श्वमेकाक्षरं ब्रह्म

Read of the second	··· • • • • • • • • • • • • • • • • • •	Advantiserabile	
धुषारिसार्थं च भव्यं च	·· १ ⊬ १३ ° १	नदार्पेशिय से वत्र	··· \$200880 188
पुषादुष्यं महलोकः	··· ?'· ७'१२	न दुर्श दुस्याकर्ष या	··· \$ 10 80
প্রকার রাজু রাজনামু-	··· 4 (3 DE 32	न प्रदर्भात क्रास्त्रेभ्यः	- 5 EUN 62 to U.S.
75	A CONTRACTOR OF	नसो स्दाः समुद्राक्षः	4 10 44 1 24
न कहोतर्न नेत्राहम्	··· 6.0 6.2726	नद्यः समुद्रा ितयः ।	··· 4 min 32" mines
न करणनामृतेऽर्थस्य	··· 4 82 144	न ह्यस्त्रश्राधरणाः !	4 16 11 33
न कुर्य इत्तसक्ष्यम्	··· ৯ হ ২ ্টেড, ९	न नूनं कार्तकीर्यस्य	* * * * * * * * * * * * * * * * * *
न कुरिसवाइवे नैये 🗈	३ ११ ८१	नन्दगो ह्यू गोपाः	··· वृद्धाः २ठ दशहरू
<i>न्यूक्तित</i> न्यमास्यासम्	··· 3 · · · · · · · · · · · · · · · · ·	न्दगोग्गुसा गोगः	4- 46- 48
न कृष्टे सस्यमध्ये वा		नन्दगापरसुदुबुद्धिः	··· 阿斯特特·尔丁美
न केश हो खात गांग प्रजानसम्	··· \$ 411.50.77.1.158	नन्त्रपोपस्य वन्त्रमम्	4 70 74
नकेवले पद्धतं सविष्युः	···· . 72 . 760 % . 725	न्द्रपेश्व गोपाङ	d
न केवले रवे: इति।	** 5 565 65	न-दगोपोऽपि निश्चेष्टः	on 1 200 20 58
न केवले हिज्लेष		नन्दिनः सङ्गृर्कतासम्	of 125 11 45
नकानदमनुब्दियम्	··· \$ '26' '20	नन्दोयमञ्जूष्यकाराः	··· & Adu 53
नक्षत्रवहचीङ सु	en de saucent	नन्दोऽपि गृह्यतां पापः	4 20 C3
नक्षत्रकार्यम् <u>।</u>	and I hope in the	नन्दं च दीनमस्पर्यम्	** Comment Address 388
नव्यस्थि चोषपत्रम्	··· \$. \$40.222.56	न पप्तत गुरुबोक्तम्	··· २: (3 ··· 34
नसाङ्कुरविनिर्धित्रः ।	m 4 The Till	न ऋषितं स्वयः करनात्	on Eliza in Paris In St.
नगरस्य बहिः सोऽभ	··· 3 . 665	न प्रोडिर्वेडकारेषु	E & X4
नप्रस्वकार्यमञ्ज्ञासि ः	12 60 W. A.	न कवन्यक्रिको स्थेवम्	11 4 TE W
नामे पर्यक्रयं भेग	5. 55 . 55	न बहुत नेन्द्रश्चातिक	६ वर्ष्य 🤼 १
न प्रापंतरक्षत्री शामाम्	व १०० वर्ष	नर्पाररास्तेऽप्युक्ताश्च केहाः	4 4 36
न च नाक्षिद्ययोजिद्यतिः	" R 58 60	नभरकेऽन्द्र भुकः पहुन्	6 50 SX
न चलति निजवर्णधर्मती यः	·· 5 0 50	न पित्रं विविधैः ससैः	१ १५ १४६
न चान्येनीयहे केरियत्	75 65 7	न्भक्ते परम्बद्धस्तरम्	6 22.8.2 68
न पासी रहना गमार	an & salesting	नमस्ते सर्वक्षेकानाम्	6
न चर्ता सर्गसंहरः	on the state of th	न मन् यादियूत शतः	" 6 66 - Jan A
न विच्यं सकतः निक्रित्	··· 2 24 - 34	नमले पुन्हर्गभास	4 30 E
न चित्तमति को राज्यम्	6 464 AS	नमस्ते पुष्परीकाक्षः	\$ \$6 E8
ने ज़ातु कामः कामानाम्	* \$2 53	ननस्ते पुण्डरीकाश्च	6 mar A 16
न राष्ट्रस्य पादयानः म्	··· *• \$21 /43	रमस्त्रसे नमस्त्रसे	E . 56 . 96
<i>न ता</i> लेगयुजा दावपम्	بسائل الله الله الله الله الله الله الله ا	नमस्कृतवाभिष्ययः	१ २२ ६७
न ताडचति नो हन्ति	·· \$ 6 84	नमस्त्रिके द्वाराय 🧷	অভুয়ে অনুধি একছুৱ
नताः स्म सर्वयन्तसाम्	··· 6 : 62 . 59	नमस्ते व्यवस्थाय	v 30 22
न तु सा वास्त्रक देवी	३ १५ चंद	नमहीर सर्व सर्वेशम्	··· \$ = 8 = 80
न तु स गस्मिकतदिनिधने	· 8 84 56	न मामाधिर्भ चैयोतात्	··· 6 Complete Complete Com
न तेषु वर्षते देखः	··· २ के कि कार्य	न ने जाम्बवरी तादुक्	··· between the sel
न ने नजीयत् इत्ताः	··· \$ 1. 18. 18. 18.	न में इस्ति विश्व न धर्न च कन्यत्	··· \$ 100 48 300 \$0
न स्यक्ष्यकि हरे: पक्षम्	·· १ ं १७ व्या ५३	ननो नगरते प्रसु सहस्रकृत्यः	
न क्यों मंत्रोध्यहं भस्म	··· 2 # 12 4 - 3182	नभो महाण्यदेवाय	100
न को क्की महाभाग-	Se 35 €	नगो वियसते ऋहा	14 1146 1180
अर्क्स्थी भगवान्	- tangangang	नन्त्रे हिस्स्यगर्भाव 🦠 👚	१ व्यक्तिका प्राप्तिक

	(4	(00)	
े देशीका दर ५ एक	अंशः अध्यक्षः (१८)०	ीश क्सनेवत ा । १९५६	असाः उसमाः इस्मे॰
नमो नमोऽविशेषस्यम्	··· \$ 19.99 - 34.68	न सेहे देखकी ब्रहुम्	சி. இவருக்கு _{இதி}
नमोर्जप्रयोग <i>पूराव</i> ः	\$ [\(\frac{1}{2} \) \(\frac{1}{2} \)	न स्थूलं न च मृक्ष्मं यत्	or of any profes
नमाञ्च्य विष्यत्वे तस्म	\$1 MARES 1988	न स्त्रचाष्ट्र स्वरेत्रप्रः	··· denists mist
रमेच सुरसादातः	5 m 2 m 184	न संदेश न च दौर्गभ्यम्	··· ব্ৰংগ্ৰহণ প্ৰক্ৰ
रमः सन्तरे सूर्यातः	30 CA	न हन्त्रका महाभाग	10 to \$ \$0
न यक्षः सम्बर्धन	··· \$ 144.6 (20 - 50	न दि कडिस्टागवता	K. 4.68 ELKA
न रष्ट्रकर न दातव्यम्	\$ 10. \$\$ PERMEN	न हि पूर्वविभाग थे	··· \$150,4\$500.00\$
न गरीनं च दैतरेन्द्रैः	\$ miles u co	न हि करितृहर्ल क्षत्र .	··· \$\$\$\$
न सस्य अन्यने भारत	4-2011 @ 821 465	न हि पहलनसामध्येम्	··· \$ 14 55 am 55
त यत्र सध्य विकृती .	··· ५ व्या १८०० । ५३	त्रष्टुगधान्युद्धरामधीलः	··· A-nation series 14.
न पाच्चा धनवसूनाम्	··· & 5	न श्रमुल्स् कृत्र वरण्डदम्	··· \$4.55 \$3.14 00£
नक्त्रयु समस्त्रेषु	··· Berlieben abe	न इत्तरकादा नभसः "	· 大学のは、文字のは、大学の
नरस्य सङ्ख्यातसम्बद्धाः	X 246 35	न द्वादिमध्यान्तमजस्य यस्य	··· · * · · · · · · · · · · · · · · · ·
नरजन्यासुरस्थ	400 \$60 P - Q	न इपेलाद्गन्यत्	··· Aller Committee
नरके यानि गुःस्मित	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	नाकारणस्थरणनासः	··· ६ शास्त्रहोत्सस्य ५१
नरकिञ्चराधासि 🕒	\$ 500 A 500 A 60	नागरीकोचितां मध्य	4 50 38
नक्षेत्रकारः तराभूत्	6-1156: 1.37	नागद्वीपसाधा सँग्यः	en j enjørskel
नरकं कमें हो स्रोपात्	美国电影	नागकीच्युत्तरं यम ः	··· 9-56 6 11 40
नव्यदिक्षेत्रज्ञ कलमः	•••	नागवरन्द्र स्वासः।	··· A CONTRACTOR CONTRACTOR
नरेस्ट्र स्मर्यसम्बद्धाः ।	· 3 3 86 10 Co	नाहिस्टेहर्ति नैवायम्	\$ 4.50 6 7 45
नरेन्द्र कस्मात् 📝	8 5 55	नाहिन्स तु प्रमाणेन :	44. Grang, Gip gent '&
न रेबे उत्तरितशन्त्रः 🗸	THE PROPERTY OF THE PARTY OF TH	राविकाभ्यामस्य द्वासाम् 🕟	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
नरः स्यातिः केतुस्यः	··· \$ \$	न्यतिकानुमार्थं ब्राह्मन्	··· 4 #5\$6 55 169
नगंदायै नमः	・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・・	मतिद्धेश्वरिवर्तं चः	A verk 640
न स्पर्य कर देनीय	··· ··· ··· ··· ··· ··· ··············	मुनिस्रक्षकार्वि पण्डु०	··· :\$10 (\$4)(\$1 (\$\$
न वयं कृषिकालेरः	37 - to 12 - 37	नातिदीर्थं नाजिहस्थम्	1. 4. 460 Mills
नवयोजनसाहरः	en felkust für instille	अतिक्षनवहा सस्मिन्	··· \$ my to percept
नवसृक्षेत्रमावासा	··· \$2 '\$8, ! \$42	त्रातिकेदेश महता	··· Eruditän phád
नस्वर्ग तु मैत्रेय	··· 4 ··· 4 ··· 50 ··	नात्र भवता प्रत्याख्यानम्	··· Renter and 1
नवसाहरूमेकैकम्	\$. Y & A. 18 &	गान त्येयं स्वया सर्थः	en ji kaji ji kan ji bila
नय सहस्या इसोटी	g g	नाथ जेडीनसङ्ख्येषु	on it is to plants
नक्सो दशक्तिक्षिः	··· 3 / \$ 00 5 \$ 00 }	नादक्षिणां नानक्ष्यमाम्	beginstlerellte
न राजयन्यस्य विद्यागः	··· X part & for each	नायूकी सुव्याप्य गण्डेत्	··· \$
न वामना नातिदीर्थाम्	··· वे १००० देनः	नानव्याचाः पृथागृष्टाः	··· Profession
न विश्वः कि.स शक्तरवर्ग्	··· \$ 1.45 \con \$6.	मलायनिःश्रयोकांशित्	··· ३१ कहरू/४ अ १६
स्बोदताल्यदन्तीशुः	··· 47 38 - 129	महमायकारतकातम् /	··· \$ 00.850 00 056
न कन्द्रभीच्यं यस्य	१ वर्ग देखाल हिन्द	नामीलक्षीः समान्देश	··· \$60, 1-56.9. 10. 55
न शासा राषि घोरासे	1 . 5 . 86	नकेर्धन गरः रच करः स्मृद्रकेरिः	₹. ₹Z≈₩ ξ ο
न इपन्नु पद्मकेल्लोहम्	··· \$5 - \$7000 \$20	-उन्द्रेपुराः पितृगयः	· 3 184 315 X
नष्टे चात्री च सत्ताम्	900 \$ 1. A SEC.	चान्यविष्टे हि केसस्य	··· Auchoritation
न सहित परसम्पदं विनिन्दाम्	··· Birth Agust Sa	नाम्यरिक्यं तथा वैरम्	··· केन्द्र १२ अश्राक्षेत्
न सस्यानि न गोर भग्नम्	6 63 CR.	नात्ययोगाययोगी वा	··· 3 5 885 388
न समर्थाः सुरुस्तोतुम्	··· 4 15 19 19 38 1	नान्यसगद्वैतसास्त्रस्	··· - २ प्याद्वालकार्यः
न सन्ति यत्र सर्वे हो 🍴	me	नक्तरतमपोस्तिः	··· १5:27:37

\$3

अहाः अध्याः स्टोः

\$\$

ሄ ^{ዓ ዓ}ኛ ት ነገር **ኒ**

··· \$

SECTION SOLV

नाप्यु नेजाम्बरस्टीरे

नाभागस्यत्यातः "

निम्छत समुख्य 🌯

निमध्य पुरस्तीये 🦈

निमित्तमात्रमेषा उद्यो

'दलोकः' ः

निमित्तमात्रं मुक्त्येवम्

निमेक्षे करूचे योजसी

असाः अध्याः "स्टो•

m 3 5 2 X .

10

६ क्षणाह नामक्ष्रे इ.स.च्याहरू

Although a ballet time to a	4 .4	Land and All and All Anders		4 4	- 4
नाम रूपं च भूजनाम्	··· *· • • • • • • • • • • • • • • • • •	न्तिमस्य तव्वरीसमितमनोहरः	•••	8	23
नाम देहाँति ते स्नेऽध	-1. 5 K. K.	नियुद्धे तिर्द्धनादीन	- 10	6 20	50
नारदे तु यते कृष्णः 🌯	··· 4 - 128 *** \$2"	न्यिद्धप्राधिकानो व	det	A 50	· 59
नस्देनवयुक्तः स्व	५ २७ १२	निस्काः परः प्राहेः	***	11 Mg - 1 1 Mg -	ሄዩ
नारमेत करिं प्राज्ञः	3 12 23	स्रितेशयपु ण्यसपृद्ध तम्	***	X 26	i i
नरप्रकारमञस्युक्तमं	K 28 K8	निस्स्रितिशयह्मद्रद			48
नारपराभुकाषातः"	··· 4 33 10	निर्वेडय वं तरा देवी	mit	. 5 . 8	**
नारायच्याचीयां सम्	1	किञ्ज्यसः सर्वतन्यः	814	Commence of	5.5
नारायनः परेऽनिन्तः	m 4 . 8 . 8	क्तित्रकाले देखेंपे	100	6	¥2
नार्यहीनं न बादासान्	3 to to	निगुषेत्रपि चपेर		· · · ·	30
नाईसि सीधर्भसुसाधिकः	A . A . 63	निगुनस्यस्यमेयस्य ।	PER	2 3	100
नामगादे जासीयस्य ।	S \$\$ 6	निर्मोहरूकदर्श न		₹	180
नाविश्वरतं न वै भवाम्	3 28 282	निर्काणं बरुभहस्य "		65 8	4/
नासकन्यस्तो बातुम्	4 24 7 2	नियोज्य सरकारी हो।	4.4	A PART	- 1-4
च्यायस्य निमरतन	··· 4 80 33	निर्विन्यविकास रहः	444	\$ 86	. 00
नदोर्थं पुरुषोऽकीयात्	··· 3: 22 " 68	निकंगम गृहाचातुः	718	4 45 .	30
नासमञ्जसको हैन्सु	*** ** **	निर्वित्व रविमानं सम्पक्		4 146	17
नासस्या नातृत्या भूमिः	in the table	निर्वितस भगवतः	817	K . 59	43
नासन्दर्शस्थितं पात्रे	\$ 17 64 1. Ca	निर्मत्यः सर्वकारम्	H = 1	Ar 111 4	80
नास्म्बन्धः सक्यते हन्तुम्	··· Vitter Fig.	निर्मार्जभागः गाप्राणि	rep	\$ 24	×10
नाहम्ययभी पहिष्	·· 6: 66 Af	निर्वातम्य एकायम्		6 9	4.4
नाहो न राहिर्भ मधी म भूगिः	···	निर्द्याणसम्बद्धियम्		2 25	40
नाई मन्ने होकअयात्	4 20	निईन्द्रा निर्माभयनाः	810	2 4	CE
नरं कृपस्पुत्रस्यः	m 5 4 3550	निर्देशसङ्ख्याम्	-+1	3 . 2	24
नहीं खसिप्टे बहुना	" 16 m. 4 . 1 . 1 . 155	नियोक्त गतकीका	-H	te good of	38
नाई पीकान चैनोका	·· \$ \$\$. 85	निकारयामास हरि:	ner.	" V 30	28
नातं बहामि शिविधारम्	5 5% . 8	निकारेन पिहतर्पन्	199	\$ · · · · · · · · · · · · · · · ·	9
नारं प्रसूता पुत्रेण	2 65 56	निवृत्तस्तद्यं गोप्यः	119	6 83	4 . 35
सहं बलदेववानुदेवाध्यान्	8 23	क्रिकेश्वाकेश्वय नोस्त्र क्रन्यम्		8 3	100
नाहं देखे न प्रथर्वः	4. 18 55	निशम्ब तस्येति वयः	116	5. 5X	3
निकुम्पस्यमिता <u>सः</u> ।	8 . 5 . R.	निश्चय तद्वचः सत्यम्	100	2 84	1
निप्रस्य प्रमेनसम्बद्धिः	¥ 73 70	निक्रवेंद्रद्शेषेण		\$ 83	
निष्टेन रासा मानेत 🦿		विश्वसु च बयत्त्रहो		4 35	. 30
निस्वनैनिकिकः स्थापकः	··· 3 to 4	निरोप नीयती कीर	448	4 26	20
नित्वहिन्द्यमगद्भारम्	m 2 7 40 7 17	निश्भीकता न में विजय	115	4 36	1.3
निस्यानां कर्मणां विप्र	3 8% TE	नियं यहात्रप्यतः ः	***	$\sum_{i=1}^{n} f_{ij} _{L^{2}(\Omega)} = 0$	70%
निस्पैतीया जन्मभारता	··· t 3 ··· to	न्विधः परिकाशस	127	9 9	185
निहे पन्छ ममादेशाल्	··· Q of the TOP	निय्करस्थातम् यापः		\$ 23	90
निभृतोऽभयरत्यर्थम्	4 to to	निकामसम्बद्धार्थनसम्	107	4 74	¥
Course wassers in	the state of the s	Francisco Waller		6.0	11

\$ -7 m

A HAPPING

to VE

निकाम सम्दातस

निव्यदितो मगः गागः

निणादितोरुकार्यस्य

्य**रनेकाः** ।

प्रकल्पा तु सा मारम

पञ्चमानस्थितो देहे

पद्धपारमिक्तः सर्गः

अंशः अध्यक्षः रहने

१ अस्ट्रेश्टरं वेक्ट्र

\$.6x ≥ 55

\$ - 14 TOPK

3 magyan make

\$ 1880 an 84

Emino Xerman ≥€

ু প্রায়াং প্রহাণ হতাণ

दे ११ मा अर्

3.6.54 . 35\$

... 3 . 20

् इलोकाः

निणकान्त्रे नौसीस्

पश्चिमः स्थायत् हैन

पञ्चमा महत्पक्षा छ

पञ्चम याणि मेप्रेस

प्रकार्यसङ्**सा**णि

निसर्पते अधिकाङ्गी सा

निष्पदिताहिम तीयानु

		frage are of the day	The second secon
निस्तेत्रसो बदस्येनज्	\$ 10 - bq - 5 - 80	पञ्चभूतास्थरी और :	··· E series transfel
निसम्बन मुखियदं यतीनाम्	X 5 - 55X	रहामूबास्पर्क देहे	CASS. SEPTER
निसरस्यानामशीनकन्तर्		पंछा अंदुहितस्सास्याम्	··· ও জ স্বর্জান্ত্রের
निस्स्वाध्यायसम्बद्धार	··· Burney La	पद्मात्रात्कोटिविस्तारा	··· २०११ अक्षा हमाहरू
निस्पृतं तदमाबास्याम्	3 \$3 53	पठतश्चायसंस्थान्येव	··· 然识的概念实现是
निःसलाः सकता लेकाः	··· \$ 4 . 4C	पट्यती भवता बसर	··· १ १७ ७ १६
नि:चरश्राक्षिकोजाम	ma 一覧。 第1660月的開覧	पड़पते पेषु चैरोयम्	and American Recognition
निहतस्य पर्होर्यहे 🦙	··· \$ 35	पत्रक्षिकसम्बद्धम् ।	··· 表示了作的 2000年度
नीते अप्रदर्शततां नागैः	मा ६ लड्डकाट हिस	पतामनं जगहरूकी 🧳 🔠	ए ११ : ::::::::::::::::::::::::::::::
नीयतां पारिजातीऽप्रम्	··· 4 38 13	पुरस्कतुमाद्यानः	1 1944 1888
गेलकासा मदोदिसकः	3 10.541.0180	पर्ताटक्यां तु धरङम्	··· tessaratura
नूनमुक्ता कारापालि	··· 4 11/83 - 17/80	प्रसदा तब्दर्गरेण	··· place the secretary
नृतं लया लन्धक्	∀	पतिकायो मृगास्ते प्यः	··· \$55534 FEE
नृतंते दृष्टमाश्चर्यम् .	42 -86 - 12 6	प्रतिक्या स्मानकाम	\$ \$ W
नृपाणां कवितसर्थः	··· 4 · · · · · · · · · · · · · · · · ·	पंडिते चाक्ने नेव	K 100 50 00 10 75
नेद्रत्वं न च सूर्यत्वम्	··· ጳሳ ጳጳስ ነትሪ ፡	पतिपर्वादक्षेत्रेन	by a \$0.750,556
ीतहासास्तं योग्यम्	00 jon 55 5	प्रलीशास्त्र मुने सम्बद्धाः	·· Report du propert
नैतद्यक्तिमहं याक्यम्	·· \$. \$6 - 35	पुली परीचे: सन्युक्तिः	··· q qobye t
नेते भमानुस्तकः	X. 29 29	उल्यम् प्रतिस्थात	·শ প্ৰাকৃতি বিদ্বাসি হোলুক্ ত
नैमिनिकः प्राकृतिकः	188 (4) 188	पञ्चलापं त्रवदिशयाः	··· 4
देखेलामिषु विशेषम्	La Francisco de	पळक्ष्मकासमुखं पवसम्	11 6 8 . BALLER
नैयनदिसारुसार्ययसायिनी	··· ४ · ३. p. ३३	पद्भा का कारामकाङ्गान्	··· Promit mixt
देवासामनम्बद्धाः	3 . 5 34	पर्भापुनाभां स तदा	··· 4 STOTES
नैकारस्तस्य न निका	- 4 X X X	पुन्द्रको गता खेळानमध जाता	··· ¥ 5000 \$1000\$\$2
के पम क्षेत्रे भवत्यान्यस्य	¥ 4 6 mm ₹ 8	पद्भ्यामन्याः प्रजा बह्या	···
नैय सम्बिष्ठमात्र १९०	8 - 58 - €€	परायोनेदिन वन् ः	on Applications
नेषधास्तु त एव	X 3X 60	प्रचारको प्रचनसम्	- t vijenette
बोर्डिहरीत् सदाव्यं व	3 89 22	पर्यं च संस्पोर्धिभः	
महिन्द्र मास्त्रमेला च	··· ? ·· 32	पर्यास्त्र सर्वदा सर्वः	- Pranking 16
गेडिंगस्तात् सर्तय्यः	m & 28 m 20	परकारत वच्छेब	··· \$. \$\$:\$94
नोध्वं न तिर्यन्द्रं वा	** \$ = 22 pr = 28	परपूर्वापविद्वीय 🦠	··· All New River posts
नोपमणीदिक दोपम्	·· 95 38 38	परमान्य च भूतात्मा.	4 # 8855 F34
त्यप्रोधः सुमहानस्य	t - the end 4	एरमात्मा च सर्वेधान्	··· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ·· ··
त्याहेशः वृष्यसर्द्धापे	AR POSTER Ch.	पुरस्त्रेवन्यप्रसास्य 🗸	··· Kringskoppede
ह्यायते प्रयासते जवि	4 to 42	<u>पर्वरेक्षभिभवम्</u>	
100	19 (पस्टारपाड्यक-	The Bearing
पक्षतुप्ते शु देवानाम्	- 4 88 gr 26	मुख्यानमञ्जादारः,	··· Bringkanne Bo
All the second s		A. S.	

\$ 69 56

315 . Y. p. 284

3- 20 - 3 - 23

3 - hory & Gridle & G

बरस्त्रत्याहमतीर्पाणः

चत्मेशस्यपुणवात् ।

परमार्थस्त्रमेवैकः

पानेश्वरतंत्री हा

				- 1,0	(803)				
ङ्क्षेकाः -		31.70	આપ્યા	n करके	इत्लेक्यः		अंग्रेड	वः अध्य	० इत्हो
परमार्थीऽसमस्यर्थम्	127	3	36	50	पद्मश्राचनतम्		. 1	219	19
परस्य ब्रह्मणो रूपम्	,	8	3	84	पादाङ्गहोन सर्गादन		. 8	₹₹	20
परमञ्ज्ञाणे तस्म	100	₹	\$	196	पान्यपन्यनोत्रिक्ष्		. 3	22	30
परमसुरहि बान्यवे कसले	11.6	3	13	30	पादेषु नेदासम्ब वृत्तदंष्ट्र	100		×	65
परापरात्निकारात्न्	221	₹:	R	२२	पादेन नष्टनमंताहम्		3	23	44 44
परायचार्द पैद्युन्यम्	401	3	6	25	पादोद्भुतैः अमृहेश	310	4	50	8.9
पराच्छा रहमेच		X	2.5	33	पानसकं महाद्यालम्		1	tis	ي و
पराद्वसंख्या भगवन्		F _q	3	- 3	भानीयमध्यत्र तिर्देशीयश्रम्	en-	3	48	48
पराक्षींद्रगुष्ये गत्	BLE	F.	3	واله	पायनस्मृत्रू प्राप्ति	124	3	6	<u>\$10</u>
परिवर्तितलासमः		F	ų.	- 180	पारे गुरूण गुरुण	616	3	Ę	36
परिमण्डलं च तुष्मिम्	6.1	E	¥	. २६	पापं करीं। यत्पुंताम्	8.18	Č,	60	30
धरितुष्टारिय देखेश		3	8	234	पायुपस्थी करों पादी	475	\$	्र १७	8.6
परित्यज्ञति बदसाद्य	40.00	8	22	2.5	माञ्चयकार्व्यक्षाय	1.6	3"	3.5	2.0
परिस्त्रजेदर्थकामी	***	4	99	19	पारतन्त्रवं समस्तेष	h.d.	€		
परिनिधितयहै आखार्ये		76	8.	¥ξ	पारबीलः		8	3.	₹₹
परित्यन्य तावायुरमानी		¥	Ę	₹0	पातमरंचि मध्येश		_	25	34
परिवृशिक्षमेणैक्स		£q.	13	43	पायनतासत्यिज्ञः	424	ą.	3	24
परित्वकृष्टन्यविषयः	46.	4	25	ę	परिकाततसङ्ख्यम्		a	8	7.0
परित्यक्ष्यन्ति धर्तारम्		€ "	- 7	36	पश्चित्रातत्त्रमेः पुष्पन	101	Le,	38	4
परोधितो अस्पे क्या		×	₹ · 4	3	धारे पर जिल्लारपारपारः	F11	He,	\$ 4	30
परं तहा परं धान		\$	22	ΥÉ	'अ र्थितत्सर्वभूतस्य		ę	40	4ti
परः क्राची पर्मः		8	2	80	पार्थः प्रश्ननदे देशे		34	\$4	88
५८: परस्त्रतपुरुषात्	104	2	9	8∌	यानके प्रवासाय तु		eq.	36	१२
परः पराणां पुरुषः	188	8	89	88	सम्बाद्यं च व्हिन्सम्	310	3	50	80
पर्णमूलफलप्रहारः		3.	4.	779	पारां सलिखराजस्य	7.1-	€	6.	30
पराह्मासु संस्कृत	1116	L.	Ę,	7650	वार्षावेडन समाभाष्य		4	30	48
पर्वस्वभिगमो सन्तः	***		7.7	१२४	पत्रकितो विकर्णस्थन्	917	B	35	(gw
परित्रोद्ध्यश्च भविता	141	ξ	\$:	7.5			à	१८	505
प्रिकारपाणि ।	11-		86	48.	निक्दः पृथायतः पृप्तः निक्दः पृथायतः पृप्तः	- 1-	3	₹\$	63
पशबद्य मुगाक्षेत	114		17 30	\$5	पिक्रकुंगर्राते नीते	4+-	3	40	8.5
पञ्चां हे च पहनः			÷ ?	44		F11	*	7-0	3.6
पञ्चतां सर्वभूतानाम्		Ġ.	ا بوا اوا	60	गितर्पुपरने सोऽब	***	3	₹ \$	λď
प्रधादमञ्जी विश्याताः	211	\$	4.	80	भितर्युपरते जासी रिक्टो	ALL	8.	₹	25
गशिमस्यां दिशि तथा	133			54	चितरो ब्रह्मचा सृष्टा	***	8	१०	58
पाकाय बोऽजिल्लमुपेति त्लेकान्	-11	¥,	₹₹ - ₹	90	पैतासहश चगलान्			\$\$	25.
पाण्डोरप्यरण्ये			9		पिता मता तथा आहा			έ.κ	ξ Ε,
पता ले बाओ परिश्वमत्त्वम्	TIL		Æ	80	िया चास्यचिक्यस्यम्	11	A	× .	4
पातासानामध्यसम्ब			9 9	.56	वितामहाय चैवानाम्				33
पतास्त्रनि समस्तानि		_	-	5.5	पिता पितामहर्श्वन	171			39
पालके स मनुष्यकः			3	२५ ४४	विता वितामहर्श्वच	614			4.5
गाने प्रेतस्य तत्रैकम्	814		6	W.C.	विता पितामहश्चेष्				\$8
पातितं तन नेकैकः				75	पिता फिलामहर्द्धेच				à.
चिद्रशीचादिना नेहम्		4 7		- tq	पिता गुरुवें सन्देहः रिकास	- 4 -			813
यादगण्यम् यक्तिश्चत्		a t		१३	गिता च गग फर्वस्थित्। र	197			g c _a ,
करण न में जादका र म्	6	₹ !	3	\$ 6	<u> पिरामहत् दत्ताव्य</u> ः	-14	*	2	र इ

>-		~~~	
* (\$0\$46) 70%	क्षेत्रः अध्याः । एत		अंसाः अध्याः । इस्तेः
<u> पितृमातृसाधिष्डेस्तु</u>	\$ e-\$\$ 7.34	77 160	Artelige of the later
नितृपूर्वाक्रमः प्रोकः	19 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18	The state of the s	··· iring \$\$ all as \$\$
षितृदेवमगुष्यादीन् ।	\$4 \$4 \$.	पुनश्च गर्भे भवति	··· E za elitar a el l
चितृदेवातिधीम्बद्ध ा	m. å.⊈i#e ∃ ⊘ki	. पुनक्षेश्वरकोषात्	m t coArestante 65
भितृपुत्रसुहद्शातृः	10 2	गुनस्तगोकं स शका	"" \$ 15% h. a. R.
वितृष्ट्र <i>जानवपू</i> र्ण	an Rough Shines	१ पुनश राजस्थरपृक्	सन् ३ देह ्र ६
पितृक्वनाच्चाग्राजितः	3 5.	पुनश पर्वादुरमञा	in 5 36 125
पितृष्यः प्रथमं भवत्वा	··· ት መስተ ጽህ - ምት አኛና	पुनश भ पुरा जेन	··· \$ 14 \$ \$ 15 5 5 \$
पितृतीर्धेव सतिलम्	··· 3 1 24 - 184	पुनगति वर्षकृते	6 - 60 J. 55
पितृगीरान्त?श्रेनाद	··· \$ \$X 9:	पुनान कामासंदिगात्	··· 3 . 5- 44 34.
<u> भितृष्यामयसम्ब</u> सत्		पुनमाचेव किन्सिमान्	an in San Signification of the
तितृषां धर्नकर्व तं	\$ 15 \$ 1	् पुनः पकनुपादाव	व ११ १०५
रिकृतो जीवनार्थाय	44	पुनः पुनः प्रणक्योपी	५ १९ - २३
फिर्म चापर विप्रम्	\$10 \$\$ (10 m) \$1	70 K	··· 2 23 30
पिता प्रचेतसः श्रीतनः	a 18 " 1	पुमानसर्वमहो व्यापी	···
पित्रकृपसीतान्यस्तरस्य :	Carlo make	पुमान् स्वी गीरजो काजी	··· 15 3 4 53 4 1 1 60
पिपरितकाः कीटपतङ्गकादाः	··· \$1 5 \$2 155.46	पुरानेके सम्मेः	··· 4 1/3\$*** \$\$
पिनतां तत्र चैतेपाम्	··· die \$peri Ko	पुरवासम्बन्धेलयः	m Killison in
पिनित्त दिकसम्बर्धम्	5 45 5:	पुरक्षको नाम राजवैः	me John April 196
योतनीलाम्बरधरी		, पुराणशीदिताकर्ता -	30 25 - 24 - 24
पीते यसानं यसने	··· during south fre Ro	पुरा गण्यायते बस्य	in 31.45 14 14
पोडेअपुरो च यहिर्मगः	5 5 565	पुरा हि बेतामान्	कर् ४ व्याः कृष्णः ः वृहे
पीर्त संदिक्तकं सोगाग्	···	पुरा गार्थिय स्वधितम्	··· ५७% दुई ** १७
वीरवान्यं सि समस्तानि	··· 4 4 4	पुराण येष्णवं चेतन्	··· Employers &
ुन्देशिक पहेन्द्रश	ः १ १६ , वृश	पुरुषः पर् च बरिश्च	··· A 2.469. (*)
चुन्द्राः करिल्ला गणबाः	an できない意味 うつまき		··· * * * * * * * * * * * * * * * * * *
पुष्पदेशप्रभावेण ।	···· 生.转, 特别应答 ···		A
कुम्योपचयसम्बद्धाः	ल्ल दे ल्ह्हेल ल वृद्		···
पुण्याः प्रदेशः मेदिन्दाः		पुरुषेगंज्युरुषः	· 5 3: 10.1.56
पुत्रवासमाजिक्तीकः	··· 6 35 se	पुरुषधिशितन्त्रच ः	**
पुरः पात्रः प्रशेषो थाः	357183 75.38		X 2 6 9 2 2
पुत्रपीरीः परिकृतः	··· 4 33 45		··· 按:小麦红 一次板
पुत्रक्षाभावतः ।	'¥ '¥ : '0€		·····································
पुण्डाव्यकारमेषु -	39 ca .24		48 44 6 34
पुत्रश्चेत्यरमार्थः स्यात्	\$. \$R. = .84		100 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10
पुत्रसस्तर्रापवलीस्	··· , 🔫 · (0.2, 1.30		& for the se
पुत्रज्ञ सुमहागार्थम्	m 32m14 make		12 4 78 6 W.
पुष्टि सर्व एकलसुनम्	· × × × × × × 55		··· Silkutudž
पुनि कस्मात्र जायसे	··· × ₹\$ ··· ₹₹₹		14 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15
पुनश् प्रणन्य भागवते	an \$100 -62		··· 40000000000000000000000000000000000
पुनश तृतीर्थं समयन्द्रसंज्ञप्	··· ¥, - \$3 \$6	The state of the s	4
पुनर्वं अक्षप्रवीर्यः	X2-8X - 189		and the first of the second
पुनर्हेदिराजस्यः	ш Х. ҚХ., цо		··· And And the state of the st
पुस्रप्य जुलकिने पतम्	\$ model 15 - 160		10 1 10 Pod

६ 🕾 ६ 🕾 १५७ । अक्षाल्यते वदा सीऽस्य

३ १२ १४ यसासिसाईघराणि च

५ ६ २६ प्रक्षीणाकिरुव्ययस

ु के **मुख्येका** अपने अपने

अंखः अभ्यतः इत्ले

\$ 2ª 80

4 33 6 4

ह् जिल्ला २०

६ क्षेत्रपद्धस्यकृष्टम**ङ्**ष

अद्याः अच्याः ः इस्रोः,

ः इस्त्रेकाः । ११८

पुजिताङ हिजारसर्वे

पुज्यदेयद्रिज्ञ्योतिः

पुत्तन्त्रया विज्ञासम् . 👚

अकृतिसम्बं परा सूक्ष्मा

मक्ती संस्थिते व्यतस्

Signature and an extension of		4	Section (Security 2017)		144	6 4 1 4 4 5 1 4 3 6
पूर्वसम्बद्धाः स्था	301	K 60 - 30	प्रस्थाको न्यास्त्रदिक्योऽभूत्		44-	\$15,56,500 Page
पूर्व काससम्बद्ध		- Samuel Stranger	अधेतसः पुत्रस्थातधर्मः			R Like Bloom
पूर्ण वर्षसङ्खं मे 🕟	•••		प्रवहास तथैकोर्सः	1	751	Carrester 69
पूर्वमेव महाभागम्	***	5 1680 grada	प्रजापतिकृतः रहपः			5 10 5 Cale 12 100
पूर्वसरे दिया उजानम्	***	a medical production of the	प्रज्यानमुपंकतस्य 🗇		m	र रेश्वरीय जन्म
पूर्वमन्यच्छे क्षेष्ठः	•••		प्रजारतीमां दक्ष हु			s an security s
पूर्वसञ्जेदयमितः		२ विवाहके अवस्ति ।	अजायति शामुद्धियय <i>े</i>		;	रत्तर्भवका वृद्धकाना सुद्
पूर्वमेयानुदासका भगवता		४ व्यक्षया अधिक	<u> ফলমেরিমরির্ম্নার</u>		114	A STATE OF THE PARTY OF THE PAR
पूर्विमेशं सुनिगर्णः 🧷		૱ ૽ઌૡૡૼૺૹૡૡૺ	ক্রতাপরিশ্র		444	मीत केलांग्यका गाउँ कर
पूर्वकारमञ्जयं कृत्याः	٠	8 - 58 - 556	ञ्जास्ता ब्रह्मणा सृष्टाः			2 100 600 61
पूर्वाः क्रिया मध्यमाश्च	٠,	3 22 88	क्रजापतिः स अग्राह			\$ 150 B. W. Sep.
पूर्वाः क्रिनाश कर्तव्याः		_ gentlem that a least	प्रजाः समर्वे परायान्			र्वेद्ध में भूजियां में मह
पूर्वेण मन्द्रों नाम		.२१ े स्टिंग्स	प्रजाः स्थेति व्यादिष्टः		F1.1	१ - १५ - ८६
पूर्वेण शैलात्सीता	133	12 3 cm 5 mer 1/30	प्रवादे सन्दर्भकृते		171	्रम् द्वार्थीय स्टब्स्टरीय की क्षेत्र
पूर्व यह हु सत्रहोंन्	144	१ । ११ मा अपूर	भगनियाँ कृतास्माकप्		***	५ अव्यापा विष्ट
पूर्व अग्र गहरा वर्णम्		Secure Contraction	भगष्टकते देवेन्द्रम्		114	4 30 00
पूर्व त्यक्तिसस्य अभ्योगिः		TO STORE OF THE PERSON OF THE	प्रधवन्ति ततातेभ्यः			तारीय व ्यति हैं के किस्ति हैं व
पृथा वसुरविर्वातः	400	Sec. 60, 30 (10 66)	प्रणवासस्थितं विस्त्रम्			ক্ষেত্ৰ প্ৰসূত্ৰ
पृथक्तयोः केविदाहः		\$ 80 8 68	प्रणम्य प्रणताः सर्वे		:42	4 TH 4 THE E
पृथाभूतैकभूताव ं	-14	5 18 15 ES 16 ES	प्रमामध्यक्षा नाश्च			के समित्र के कर के रह े
य्था शुक्रदेवा शुक्कोर्तिः		४ १४ : वर्	प्रक्रिपरच चैनमाह		+-1	अस्तितार्कुतान कर ्व
पृथिनी निषयं सर्वम्		6 - 6de 4 465	प्रणिपस्य विद्युः पत्यीः		-21	र ११९
पृथित्यापरतथा देवः	10	१ % २ ि १८	प्रवेतर्मनमो खुद्धः		-11	य दिक्त है जि
पृषु विपृश्वधमुक्षाक्षित्रक ः		A 62 86	अतिदिनं तन्मीणस्त्रम्		66	8 189 1896
पृथुस्तदस्ततो नकःः	175	5 36,000	प्रतिद्वेति विख्यातः		114	₹ 6 0 0 9 9 6
पृद्धधवसङ पुत्रः 📑	151	K JAS SE SER	प्रतीकारमियं कृतकः			हें हैं। है के उत्हें
<u>पृथुत्सम्मतान्विचचार लोकान्</u>		8 52 58d	प्रत्यक्षं भन्तता भूष		127	\$ 683 EX
पृद्युरचेनसः 🕟 🕝		4 1 4 1 1 1 3K	अत्यक्षं दृष्ट्यसं गीवान		161	4 44 45 45 64
प्योर्विष्टरश्नः ः	ы.	\$ 1. 14 Bell \$4	प्रत्यक्षं भूपविस्तरकः		414	September September 1
पृथोः पुत्री जु धर्महो	19.5	t 18	अत्यसाधिवापेट यत्	131		द <i>नार्विक वि</i> क्ष
पृथ्वी समेच सकला मनेवा		R 48. 438.	प्रस्थिद्धिरसनाः श्रेष्टाः		717	2 24 134
पृथ्वी मनियान्। परिस्कीनाम्	1	४ २४ १३६	अस्यूषस्यागता अक्रान्		111	ૡ૽૽ [૽] ૾ૹૣ૽ૡૣ૽૽ઌ૽૽૽૽૽૽૱ઌ
पूपदर्भमुकीरके च्यापद्रकाश	4 6 1	8 86 80	प्रत्युवस्य चिदुः पुत्रम्		***	t 60 640
क्षेण्ड्को यामुदेवालु	- 4	4. 38. 3. (3.1.8.)	प्रथमेर्जेड बुधरसस्तात्	4	***	A SAME OF LAND
मीण्ड्कोकं त्वया यत्	R1 1	ે પુ ^ત ે કુઇ⊹ ઃારફ	प्रथमे कृतिका भागे			3 8 8
<u>भौजेमास्याच्यास्यास्</u>		ेर ारु ः ुइट	प्रथमे अहं तृतीय स			के । १३ में स्व
पीशगारी बसन्त्येते 🖟		P - 90 - 24	प्रदोषाने कदाचितु			Continues waster
भक्तरीपृतसर्वास्थिः <u> </u>		् द ्वार् द्वे कार्या २०	प्रयुक्षी अपि रुविमण्ड		ы	A SACREMAN
मकृतिकी सदारमञ्जूत	111	8 . 7 X 19 8 38	श्रद्धासोऽपि महानीर्यः			Carlo Sales Andrews
स्वाचित्रको भाग भागमा		ATT ATTOM STATES AT A				may an interesting a climater or

य ः १ व्या ७ प्रश्नुमाचा हरेः पुत्रः ह

.... १ २५ प्रमुप्तः प्रथमस्थानम्

					Andrew Control
লগ্ রকৌদস ্থার , গ্রন্থের		अंदाः अध्यक् _ः दस्ते _य	् इ स्टोन्स अस् १८७		अशाः अध्या <u>ः इस्त्रे</u> ॰
प्रद् यासमान्यसमुखा ः	FFI	उध ्यक्त थेड़े रहे प्रस्	সক্ষর বহাসিরে: ্	E11	३ १३ २५
प्रसानपुरुपश्चला	400	\$ \$1000 \$1000 b.\$\$	अभितास्तान्पुनीन्दुः	ы	٧ 30 ٧
्यवानपुरुषध्यक्तः	***	१ क्षेत्र ीक्ष्र्रध	असम्बद्धं नारुः	81.4	6 10 (10 CO
अधानतत्त्वगुद्धृतम्		J 24 5 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	प्रसनोऽदं महाधागः	- ·	८, ३३८ ा ४६
प्रधानपुरुषी कृषि 😪	-60	\$500 F. 100 B.	प्रसन्देऽई गरिज्यामि	ы.	च् <u>विदेश</u> कारा विक
प्रधानतत्त्वेन सम्मम्		१ े २ ः । अस्	प्रसन्नर्स तु तो प्राह		d (50 mg) 54
प्रधानं च पुनोश्चेद ः		85 Sec. 54	प्रसन्नश्च देवानाम्		8444 Sept. 101.52
प्रधानपुर्वास्वयोः 🕝		\$ 120,8 1 to 30	प्रसम्बद्धान्यस्थान्		8 60 A C
प्रधानमस्यम्बेनिश		5 ° 8 3 (*) ≥ 60	प्रसारणाकुञ्जन दी		६ ः ५० ः १२
प्रधानमुद्धवादिमयाद्योपात्	611	\$17.60 miles	प्रसादपरमी न्यूची	м-	d 286 to Mass
प्रकृत्त्वपद्मपत्राक्षम्		५ -१७ े २०	प्रसाधमानः स तदा		200 6 00 6 20 66
प्रयुद्धशासायधनिपतिरपि	461	४ ५७०% ५	प्रसाद इति मोर्क है	-	6 46 10 24 53
प्रवृद्धाक्ष ऋषयः	•••	R. S . E. O.	प्रसोद सर्व सर्वात्मन्	107	6 100 18 100 183
प्रबुद्धश्च पुनः स्त्रष्टम्	611	\$ 15 F 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15	प्रसोद सर्व सर्वात्मन्		of 25 50 12 165
प्रभा विवस्ततो सभी	20	₹::# ८ ::::::::::::::::::::::::::::::::::	प्रसीद देवि सर्वस्य ः	611	- For Jan 15 2004 - 55
प्रभास सम्बन्धाहाः ।		० ३७ ३९	असीद महिताशीय	14-	5 ≈ \$0 \$3
प्रयाची सोऽज्यवन्दिकप्रम्	0.0	e substantial	मस्बेदेश्याकुकुलतिलक ः		R 4 8 4 5 4 5 4 5 4 5 4 5 5 5 5 5 5 5 5 5
अयागे पुष्करे चैव	181	६ - ८ १ १९	प्रसोद सीदवी दत्तः .	***	$e^{i\omega}$ if $S^{i\omega} \ge 6\pi S^{i\omega} $
अधास्यन्ति यदा चैते		A = 48, 50 865	प्रस्तेद् सर्वभूतत्व्यन्	444	Aug 56 ac 35 56
प्रपन्ति तोयानि लुग्यविक्षतः	FFI	\$ 75 X 175 786	प्रसृति च ततः सृथ्का	449	्र क ्षेत्रहा श वर्षक र 🕻
अमासः रमध्ये क्येऽस्य		१. १७ - ७८	असूर्यो च तथा दशः	-4-	\$ 10 15 53
प्रस्त्वकाणाट्या	***	দুৰ্ভিত ক্ৰিছতি কৰ ্ট্ ঞ	प्रस्तिः सक्तेर्या तु	304	\$ A.
प्ररूपोऽयम्शेषायः		५ ३ ३३ ४३३ २३	प्रसिननिसी मुखनाखोऽभ्यत्		8 mil gings
प्रतम्बकार्डे अतिमुखः		of 1 68. policies of	प्रस्कित्धमस्त्रेदाक्ष	200	\$ 225,66 also \$
प्रलम्बं सिततं दृष्टा	117	Part & sect 30;	प्रदर्शन्त महास्मानः		6 66 6r
प्रत्मेन च ततस्वस्मन्	raa	६ ५ ४ जन २१	प्रहस्य तानाइ वृषः	141	६
प्रक्रिकेश च ग्रहा 🕞	116	४ , का १२ ० वर्ष ३२	प्रहष्टसाध्यति प्राट		Significant Company
अधिष्टाश्च सम्बं गोमिः	186	३ ्१३ 🐃 १०	प्रह्मद् सर्वमेतते	3 - 8	१ ५० व्यासम्ब
प्रविष्टः कोऽस्य इत्ये	174	6 - 30 may 50	प्रमृद्ध सुप्रभावोऽसि	788	र्ड <i>देश</i> , जिल्ला के
प्रविष्टः पोडगाधस्त्रत्		र व्याप्त है . अ प्राप्त है ।	प्रहार् <u> सकस्त्रपत्तु</u>	F 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10 10	per 4 m 40 1800138
प्रतिदय नैके प्रास्तदम्		A 3 3 4 63.	प्रहादस्य तु दैत्यस्य -	986	\$ 58 marks.
प्रविदय द्वार्की सोऽध	477	4.000 24 170 4003 :	মাকুরা উক্তাঞ্জ		\$ A case 58
प्रसिक्षी पहने कृष्णः	***	1 33 m	प्राकृतो वैक् तवे न		१ के ६ ६ २५
प्रवृते च निवृते च		6. Bear 60	प्रावसार्यदम्बानक्तिला न ्	500	The same of the sa
प्रकृतिमार्गठयुन्छितिः	***	१ ा ६ ा ३१	प्रामुखे च दिल्यामे		162 \$ 466 2210 , 200
प्रभूतं च निवृतं च	4116	8 - 8 , m. 86	બાજ્યોતિષપુરસ્યોપિ	5 m 2	
प्रकृत च निकृतं च	***	্ ৰ জ্বলৈও চ্ছিত্ৰ ইক	प्राग्द्रवं पुरुषोऽशीयात्	485	35 74 7 7 7 7
प्रमुत्त्वा रजसो यच		3 70 5 70	प्राङ्मुखान्भोजयेद् विधान्	***	\$1 144 00 10
प्रवेदमानी सततम्		62.64.255.22	प्राङ्गुस्रोदङ्गुओ कपि	0.0	Sand Statemer 99
प्रवेश्य च तम्ब्रियमन्तः पुरे	4 = 4	33 and 5000 8	आवीतवर्तिर्भगव्य न ्	46.6	\$ 10.88 1 180 3
प्रशासभुद्धपात्रे तु		३ ११ ८२	प्राचीपत्यः कुशास्त्रस्य	17.0	\$ - 38 mg. 4
प्रकारामभयं सुद्धन्		8 1 88 FFF 48	সাল্য বিভিন্নিক্তেক্সক্রদ্		\$ \$ \$ \$ * * * \$ \$ \$
प्रशासिकासम्बद्धाः । इ.स.च्या	***	3 5 (16) 1287 4	प्राज्यस्य ब्राह्मणलाम्	1111	Solater ale 3A.
्रप्रशास्त्रीतं तदाः ज्योतिः		• १ = १४०० ्२२	जाजसङ्ग्रेद् या सर्वम्	614	parateria ind

		(14)	(0)		
्रक ्रकोषप्र ः । इत्र		अंदर्भः अध्यात् । स्रहोद	granden om bes		अंशः अध्याः उलोः
प्राणायामेन यवने 🕝 💎 .	***	\$ 1. Va. XV	मोल्यते परभेदते हि		\$ 115\$00 g ()\$\$
प्राचारसम्भितं वद्यम्		to to to	24हरेप्यमध्ये		रे≔, ४ ं रे॰
प्राथम्बरम् इक्स्पेनिः		4 20 - 24	इतकास के सूचन	,	4 26 1
प्राप्ताः पाणे प्रभूतं शास्त्र	4.14	4 0 84	gard gar	48 0	77 1 3 L. 14
जनप्रभानिमेलं च	***	79 2 7 2 5	ग्रहणस्मित्रसङ्ग्रीणः	•	3 4 34
मलमहाक स पृष्ठः	1-1	\$ \$3 C9	प्रशासक्त्र समास्यकाम्	+	4 26 36
माण्डेय मुक्तपद्वत	***	3 . 20 - 50 X	प्रत्यमर्भा लमेकेच्या		Margit Rosen 15 . C
भागस्य सुविधान्युत्रः	1.40	thinkey now 4	फलकी पदय तालासम्		STATE OF PERSON
प्रापासनसभावतम्	***	\$ \$1 68	प्रतसन्त्रं परस्त्रं शब्दम्		Same Grantino
प्रतिस्य पिटुः पार्वी	4	\$ 22 35	फूछ दास्त्रीमी विक्री	***	philips and
प्राणितानुपरसम्बद		\$ 45 Xd	फुल्लेन्द्रीयस्माभम्	717	- miles 100 100 4
प्राणेश्चः सुनिराज्याः		\$1. \$2 6 \$.	ger garage	- 20 €	pr 2010 1
प्राथनिति तथा सम्बद्धः	-+-	₹ - ₹ - 1 % \$.	बद्धेरुल्यस्	7-6	8 17 S 17 18 8C
प्रसर्वेद्यापराहे च	***	The product (see	व्यक्रवेराणि भूकिन -	601	\$. \$0
आतस्त्रपानता भद्रे		१ १५ २८।	अद्भार समुद्रे प्रतिशाहः		38 p. 124. 1. 3. 23
प्रावर्गन्यक्षित्रं च		२ १६ - २१	बद्भा पाम्हेनिधिम्	-61	8 (2) 8 20 80
प्राप्तास्यास्य विकर्त	12-	4- 44 ×44	बन्धारते वेगवन्	***	法就叫 了中央表表
प्राहसम्बद्ध दक्षिणम्	•••	3 3 40	व्युव निर्मलं औषः	rir	4- 20 28
प्राप्नीचे यदि भर्तरम्	41.	4 33	वश्रीसोतुः ः	h-1	8-11-50
अविज्ञान्य शेकपि	***	₹11 \$ 38.	वरियहरूस्ति		24 gard \$ 100 \$ \$
प्रायश्चितेन महता		18 18 . Ro.	<u>ब्रह्ममाग्रहमञ्जूष</u>		4 经有效的
आयश्य हैहस्तास्ट		A . 4 . K.	बरुदेयस्ततो पत्ताः	. *1+	a material
प्रामिहतमक्षेत्रण		4 6 58	सराभद्र) यहात्रीयः	***	min \$1000 \$\$ 10 前便 3 名
प्राचेनीते अस्त्रकार-	1-5	¥ 4 \$8	क्लंबोऽपि तस्मस्य्		A Targon - District
फरम्भ धावरहे टीस	***	4 3000	बलक्डेजर जस्सेटर	-12	4 四十十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十二十
प्राकृत्वाले च नपरि		4 7 30	नस्टेबोर्ड्स नेतेष	-614	A SX - We C
प्रत्यद्वस्त्रसारी अहेर-		\$125 6 30 分 是 6	वरदानि व सौध्य		Grant Control of the
मार्म्नुमणाईसम्	ret	d = 40 = 58	बसक्ष्मी समझ्द	O.	4 A COURT WE
डिक्ड को ददी नेपाम्	161	5 5 15	जलकार्य विकृति च	-	AM SA COS SAS
<u>शियवतालानपादी</u>		t te	बलमेबाकेन् भगदितुः	110	XXXXX SISMA
विश्वासीलाम् पर्य		3 3 1 1 2 E	बलदेशिक्षी रेवस्वा	131	Aggstury (120
प्रिम्झतस्य नेकोत्स		3 2 3 - X	बरम्द्रसदस्त्राम्हर्न्दः	r	25 con 45 Y
विष्णुकं हितं नैवत्	***	\$4.43 · AR	बलसत्यवसोकनात्	-644	Act 14 2 545
क्षिमञ्चनेकर-पवदन्	7-5	-41 -316 25	यसम्बन्धनसमितिः	***	¥\$55,7 55,552
प्रीतिमोश्चरम्बर स्मिन्	***	18 180 miles	बरुक्शुश सम्बद्धः	414	· 中国的人,人名西里里
प्रीतिः स र्वाशु मारस्य	***	18 18 PM	<u>शरुवानभवद्यायुक्तस्य</u>	171	18 11 1 2 24 1 1 38
प्रोत्यभिव्यक्षितसम्बद्धाः	•••	and the state	হত্ নী ৰ্ক্ষণাৰগ্	77-	6 - 16 30
प्रेरचं पुरस्कान्डंचन्	411	%रे. रे ः ≔ृष्	वसेन मिहते दृष्ट	7.7	4 536 5 55 60
प्रेस्टलस्य पाचस्य	• • • •	4= 36 = . 36	बरेः पुत्रस्तं त्वसंत्	***	\$ \$500000000000000000000000000000000000
वेतके सुर्थः यहिः	474	3. 53 7400	बहिएन सिटे सैन्ये	121	भ ार्ड्ड हें कर देंद
इते विक्रमायमे	414	9 m 43 m 60	चदुप्रकारमङ्ग्यंम् :	44-	A 25 C 425 TA 4
प्रोतःश देवैसल्युक्तम्	235	4 53 53	बहुत्यकामध्यनम्	- 100	X 5X 550
भेकपर्वस्वक्षे ष्	•••	3 88 6839	बहुकारमेपभूकः		A SA James R.
भ्रेतवन्त्रेतानि भूभत्।		Angel & paracles	बहुक्केऽच्यभिहिता		· 医电影看医学/克鲁
वि॰ पु॰ १७ —					

10 To		(24	74)		
पर्शका ः ः		अंशाः अध्यक्ष - इत्हे	्रकोकाः 🦠 🚟		अंदर आयार् स्टो॰
महुशक्ष युहस्पति॰	171	8 8 18	योग्याधिगादको तहत्		\$ x 60
बहुदी करितोऽस्माधिः	146	\$ \$4. 08.	ब्रह्मचर्यमहिसाच		€ 0 3€
षष्ट्रनाव किमुतिम		\$ \$5 50	ब्रह्मसूत्रमेय वित्रलहेतुः		A 58 Ce
अहुयुजस्य विद्युषः	.:.	१ १५ १३५	वस्यक्षत्रस्य यो योनः		8 58 88
बहुनां विप्र वर्षान्यम्	144	१ १५ २७	নয়গণ্ড ব্যঞ্জিদানুস্থত		A L
बाह्रीर रावांत्रव मान्यर्यम्	154	S 5 180	बस्चारी गृहस्थल	119	3 85 30
बाद्धमिल्लेल तेनोलः	- 194	£ & X9	ब्रह्मचर्येण या कारान्		3 60 58
बायस्य एसी कृष्यण्डः	175	4 35 40	बस्रहरयकतं चीर्जम्	1.00	\$. 4 \$8
बागोऽनि प्रणियस्यामे		4 44 1	ब्रह्मणा चोदितो व्यासः		3 8 0
बाललं चातिवीर्पव्यम्	.,-	ય રક્ષ	ब्रह्महस्मक्षमे याभ्यान्	110	₹ 6 . 66
बालक्षेडियमतुरम		५ १३ - ३	मस्यविष्युशिया मस्य	-910	\$ 55 00
बालत्वं सर्वदोषाणाम्	7.	१ १७ ५१	ब्रह्मनप्रसहदम्बणम्	114	6 8 64
वास्त्रिका बत यूथे वे	110	\$ 50 63	ब्रह्मणी दिवसे ब्रह्मन्	114	१ के कि एक
बाडे देशात्तरस्ये च		३ १३ १७	ब्रह्मणोऽभून्यहान् ं		5 0 66
बालोऽहं तायदिवससः	* ***	द १७ ७३	ब्रह्मरूपधरी देखः	900	8 8 00
बालः कृत्रोपनयने	100	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·	ब्रह्मणा देवदेवेन	66	5 68 60
बालस्त्रिल्यास्त्रथेयेनम्		२ १० २२	बद्धपारं मुनेः श्रीदुम्	114	\$ \$4 . 48
वाल्ये क्रीडनकासत्त्रः	**	2 60	ब्रह्म प्रमुख्या स सर्वभूतः	117	१ १५ ५०
बाहुमाभौगिन कृत्वा	111	4 38 6	बहाबन्दी किमेतरे		१ १७ १७
बाह्यार्थादिक्षं राज्यान्त्रम्		१ ११ ५३	ब्रह्मत्वे सुनते विश्वम्	P2.0	\$ \$4 . 28
वाद्यार्थनिरपेक्षं ते		१ १२ अव	ब्रह्मा नाएपणाख्योऽसी		6 . 8
बाह्यकारगण्डलः	·	A 60 \$4	[बह्माधैर्यस्य वेद्यौः	· in	\$
भिभक्तिं मचासिरसमञ्जूतः		\$ 55 000	ন্নরা জন্মধনঃ স্বন্ধ্য	813	8 63 58
निमर्जि यत्सुरप्रणान्	•	\$ 6	ब्रह्माक्षरमञ् नित्यम्		8 84 WC
विषेद् प्रथमं विष		\$ X 64	त्रसा दक्षादयः कालः	***	\$ 55 35
विभती पारिजातस्य	F11	५ ३० ३७	ब्रह्मा सुब्रत्यादिकाले	***	\$ 55 34
विश्वार्थ वाससी पीते		A 60 55	ब्रह्मासैरचितो यस्तु	***	ি লাও জিলি হর্
बीजारङ्कुरसम्भूतः	•••	१ १२ ६६	श्रह्मायासकरस देगः		r 30 60
बीकर्युक्षप्ररोहेण	ri.	२ ७ ३५	ब्रह्मन्द्रस्त्रासत्यः	479	₹ 88 \$
<i>बुद्धिरम्</i> वाकृतप्रापाः	•••	4 54 53	वादाणान्मोजयेच्युक्		3 64 €
सुभुने च तया सम्द्रम्		09 28 F	ब्राह्मणाडास्त्रु ये यर्गाः	***1	3 8€ 8€
ब्हदरूस पुत्रः		R 55 5	अहाणसञ्ज्ञावित्राम्		3 5 54
बृहस्ताद्बृहागस्त्राच	•••	\$ 45 00	हाहाणः शत्रियो नैदयः	711	\$ 5 \$5
ब्हरमतेलु भगिनी		र १५ १९८	बाह्मणाः क्षत्रिया वश्याः	***	S \$4
बृहस्पतेरीप सकस्टदेव॰	F1 -	A & 60	बाह्मणः सनिया वैश्याः		5 4
मृतस्पतिमन्दुं च तस्य		A. £ 58	ब्राह्मणाः सत्रिया वैदयाः	261	- 5.00 \$ 500 A
बृहत्स्य बमहावीर्षे •	-11-	8 64 58	ब्राह्मणाः सत्रिया बेश्याः		ाहि ६-५००६
न्हत्यायस्य सुरोवः		x 66 50	ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः		R SR 66€
मृद्यदियोर्थ्हरूतुः		A 54 38	ब्राह्मणेष्यः पितृष्यश्च	7 41	3. 7 min 86
<i>बृहदशादिवोदासः</i>	***	A 66 65	बाडी मुद्दी चीत्थाय		<u>्र १९</u> १८ के के वि
ब्रद्यप्रत्यस्कुरणव ॰	her.	A (6	ब्राह्मी नैम्बितकस्तेषाम्	461	€ 25€
<i>बृहद्रथा</i> कुशायः	***	A 66 C5	बाह्यो दैवस्त्रधैकर्मः		\$ 50
न्द्रश्यासान्यः	•11	A 66 83	त्राद्धो नैस्त्रितकस्थात्र	4-1	\$ 10 PS
बोचं युद्धिसध्य रच्या		१ ७ ३०	ब्राह्म पाच वैकार्य च		——————————————————————————————————————

(५०९)

'লো

27 ٩ 30 3 10 74

3 60 8 3 28

Ę X 30

¥ ħ

अञ्चाः सम्बद्धाः

170

इंट्रजेकाः

भक्ति चोदान लिक्स्स

मकि भेदानुस्थितान्त्री

मस्यत्यम् करमाने

भक्षवित्वः च भूतानि

भक्षभोज्यमहत्त्वस्यः

भगविद्यापासाङ्ग्रह

भगव-पुतमञ्जेरा

भगवानियं सर्जस्य

भगवन्त्रदि में बोदम्

मगवन्यास्टिमन्यात

मगन-सञ्जापाक्रमतम्

मगवन्सस्यगारुवाहम्

भगव-दत्स्या प्रोत्तर

भगव-भगवानेवः

भग्य-पर्यंट कार्यम्

भगवज्ञेयमधस्यते

भगवत्यस्यस्यान्धरम्

भगवन्त्रेऽस्त्रिलस्सार-

भगवास्वेतद्शानात्

भगवन् मयना हरुष्

भागवास सम्बद्धाः

धावदाग्यनोद्धतः

भगवानिय यथानुभूतम्

भगवतः च स निश्चतः

भगक्त् सदै प्रसप्तः

भगवानव्य बोत्सतान्

भगवन्यन्यना कार्यम्

मगवानीय गौतिन्दः

मगर्यसम् योगम्

मगवन्कशितं सर्वध्

भग्डेश्याधाससम्बद्धाः

भवनभ्यमानद्वियान्द्व-

भजमानस्य निविक्तंकपश

गजमा बह विदुः धः

मगरियान्सुहोतः

मंगोदने ने करिय

भगवते उपयह मह्मिक्षेके

भगभग्येतत्समन्तकसमम्

भगवत्रसम्बद्धम्य

भगवन् अस्मत्कुरतियतिरियम्

भगवन्मृतभक्षेज्ञ

भगवनेभिसमगरतन्त्रीः

मक्यागक्येषु नारवस्ति

8 ₹ ₹ ŧ

₹

2

Y

¥

Y

Y

X

¥

Y,

¥

L

Ę

侯

X

×

4

¥

? 24 3

35 4

Ł

ξ

3

23

23

28

13

13

18

2.10

24

315

310

30

¥

ZX.

34

73

23

24

33

43

44

769

25

30

à

35

??

- P.

1.2

22.8

43

6.3

38

28

33

FE

X

4

35

13

2

ż

288

\$3

€?

2

ŧ

भरताद्वृषः भवत्यमध्यक्तमतिः भवन्तु पत्यः क्लाप्याः भक्ति ये गनोः पुत्राः

भवतोऽपि पुत्रमित्रः

भवती चौपसंखरः

महस्दिपंदि भिषेतम्

मधं क्र्यमधेकानम्

भव्यक्ष मया न

भवानहं च विश्वासम्

भविष्यन्ति महावीर्याः

भविता योषितां स्तृतिः

भविष्ये द्वारो सहिर

भागतः सम्मानिवाद

भारतस्कत्व वर्षस्य

पारतं प्रथमं वर्षम्

भारताः केतुमारमञ्ज

भारवतार्थे साह्यप्

मरावक्सकार्या प्रम्

मार्यावस्थान्तु ये केवित्

भावगर्भस्मिते जावसम्

भिक्षामुज्ज वे केवित

<u> विद्यमानेष्ठकेष</u>

भागवतारणार्थाय

म्हरावतार्वार्थाप

म्हराज्यसम्बद्धाः

<u> শহরীর জনফির মরায়তা:</u>

भन्न**सभद्रमङ्**

भद्रयाशोपनिधिगदाजाः

भववाणस्यक्षाम् भर्य भयानामपद्मारेणे स्थिते

भरद्वाक्सम वितये

भरतस्य प्लीत्रये मरतोऽपि गन्धवीविषयः भरतः स महीपालः भर्तृञ्जूषणं धर्मः भवंबाहमहानयात् नल्लामकास्य जातात् भवतोऽपि महत्रपाग भवस्पेतं यदि मे समय॰ भगती यत्यर क्रावय

अन्याः अस्थाः

24

t's

9

16

25

28

×

23

tt

74

30

28

7

٩

24

₹

₹

36

4

€.

24

ŧ

3

₹

₹

₹₹.

2

28

36

3/5

17

16

2

93

4

7

¥

¥

×

2

₹

ŧ

4

ŧ

ŧ

ą.

-

t

4

¥

t

3

₹

₹

इस्के

40

36

33

£8.

99

36

99

88

200

36

34

4

2.3

39

85

16

38

ĘΥ

86

Sec.

45

18

213

.

35

84

5/

X

77

88

. .

25

₹9

b

14

74

20

te

13

13

27

		(48	(0)		B. T
THE THIRD IS NOT THE	अंशः अध्य	- इस्ते र	ः इस्तेन् तः,		अंशाः अध्य-् स्टो॰
पित्रेष्ठ रोज् काणे स्	Bo	- (2 5 13	भूगमा-वरिशुप्रणि	211	२ ५ ११
धीमस्य काञ्चलः		Sparing Section	भृतुषा पुरुकुरसाय	141	R 26 4 4 5 84
দীলক: কুণিড়া কৰা		Crisis in A	भृगुभंद्यो मर्शविश	141	\$ 17. 6 40. 188
मोमदोणकपत्तीनाम्	2 1 2 1		भृतु पुलस्यं पुलस्य	142	2 10 4
प्रीयद्रोजाहरूवादाः		Yo	भृगोः स्यात्यं समुसम्	***	3 - 20 - 3
भुक्ता दिव्यात्महाभोगान्	८ , ∓४	Company A	भगेः स्थालवं सन्तरक	212	\$ 4 1862
भूक्ता सम्बाधासम्ब	1.1	Qo.	भूतवद्भारणाधारव	•••	2.8 × 6.20 34
भुष्या च विदुलासोनान्	c. \$4		चेद्रं चालकनन्यस्यम्	614	788 = 3 5.
भुद्रके कुल्याक्ष्मद्रादिः	2 23	4 margin 18.54	भैक्षवतापयः स्टूबः		\$
भूद्रकेऽप्रदाय विप्रेष्टः	··· (a)4 (b)	25.00	मोत्तरवं तैस तसितैः		3- 84-, 20
भुज्यतेऽनुदिनं देवैः	··· 3.089	3,5	मोतकरे भीन्यभूतं च		8 mg 4 4 40
भुक्षन्दर्स तया सोऽभ्रम्	3 26	60	भोगेनस्वेष्टितस्यापि		4 32
भुवस्रीक ततस्सर्वम्	4, 3	२६	भोजन पुरुष रहीपे		S
मुखनेक अगन्त्राय	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·		भी सह वेऽपराधान		€ € X
भुको भारताचे भारोऽयम्	· 4. 30	3 3	भो मो बनियदाबाद		25 m 15 m 18
मुलादि असते चापि	··· Same	177.36	भी भी राजन् शृणुष्ठ लम्	F13	. tr. tt48
मूलान्यनुदिनं यत्र	ar at right	Brace -	भो भो सर्पाः दुसनारम्	-20	t 26 36
भूतादिमिन्द्रियादि च	3 25		भो भो बिस्नन्य शिविकाम्	*13	₹ , 18 👾 ७८
भूतासा नेन्द्रियातम् च	٠٠٠ م ور		भो भो श्रुतिदवर्कस्वाभः	***	X
भूग नि सन्दिण तथालधेतत्	· 3 21	LAKE.	भी भी बहास्त्यमा मृतः	428	45 4 5 48
<u> পূলনি বহিস্ণিগ্রহ</u>		10	भो भी नेवा निवासीतत्	498	4 . 48
मृतादिस्तु विकुत्वाणः	t 3	\$\alpha \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \ \	भो भो दानपढे व्यवसम्	171	\$\$ #\$ \$\$
भूतेषु वराते सोऽन्तः	••• _{3 500} \$ 500 \$	53,62	भो भो किमेत्रस्तरः	***	4, 34
भूतं मरुपं पिकवं च		44	भो क्षित्रवर्ष मोक्तस्यम्		30-35 m. 38
पूर मूलन्यशेकांग	9 9	44	મો નિપ્રગલમામાર્દ:		₹ 1588 mm 4
भूष प्रकारित कि क्रेच	··· 9 - 97	page 333	भो राजी देवराजस्य		4 30 48
मूपतबद्वतस्य	4- 9 - 23	ξο.	मीनमेतस्यो दुन्धम्		4 4 60 53
भूष्ट्मस्यास्य शैल्बेऽसी	··· ₹ 4	(to	भीगभतुर्दशशात	arı	\$ 100 8 100 83
भूगरज्ञानकरपुरु	··· 2 25	68	भीगा होते स्मृताः स्वर्गाः	***	2 - 3 - 5 X6
भूनावासभेदिरस्वन	··· 54 34	SE	भौगोऽयं गरको सम	*** 3	3 M. H. Gam
भूमित्रपोऽनत्ये सायुः	··· ₹ ··· ₹		भीमें मनोरधं स्वराम्	171	\$. 3 , 6 gr. , 5
भूमिशूर्यान्तरं यदा	··· 3 / 5/2	815	प्रकृतीपुर्वदर्शनस्य	8.69	8 m 1 m 1 m 85
भूमेर्कीजनलक्षे तु	5	ar da j	भ्रम्तमारोष्य सूर्य सु	•••	25 1 1 Fee 1 1
मूनी पददुन ल्डल		_{2 स} द्द	असमाणी तले दृष्टा		et 54 4x
भूगततो वृत्रो जन	· 3. W	95	अन्तप्रहरूक संदर्भः	***	4 - 90 4
गूमश सूरवेष कृत्या	" A week	80	भ्रामधितम रातपुरम्	444	4 20 184
भूय एवाइमिन्छमि	3. 34	Sagar B.	भूणहा ध्रहसा च		3 ,51 - 5 11/22 - 6
भूषरस मन्तिभिरसाईम्		88	3.	iii.	Frank Marie
भूगनीमां समस्तानाम्	1 12		मक्षमञ्ज्ञतिशेधन		4 83-6-5-6
भूत्रीजमस्तिल दृष्ट	··· \$ _= \$3	We the	मसह मागइना च		NS 5 4 5 15 - 58
भूत्रोक्षेत्रक भूपलीकः	*** 25 King R		नसे प्रतिहते शहर	***	4 . 28 8
मुदिपाणं रतः कृत्या	in the is	8×	गगभाषं तुविश्वः	117	300 Karo & Karon & &
भूवणाद्मस्य रूपस्यम्		56	मध्रीऽध आह्रवीतीयात्		4
भूरणानां च सर्वेष्णम्	- 2 1	230	गद्गल्यनुष्मरताच्यः		\$464\$\$400 BZ

R 48 493 मनोरिक्ष्यप्रस्थायुष्ट ।

LES RESERVE FRANCES PAR 4 34 - 20

355

...

100

्य **स्टोक्बः** क्षान

म्ब्लिपुरपतिपुत्र्याम्

एत्कृते रितृपुत्रत्वम्

मतः क्षेपन चन्पूर्णन

मत्पदानि च ते सर्व

मत्यरोपः हि सकल्ल

मञसादात्र हे संभ

मत्रपादन भनारम

महर्मितिः परमो धर्मः

सन्त्राम्बलीन को गोपाः

मनवरूपश गोविन्दः

मस्यक्रमेय सहस्र

मध्ये प्राप्य गोविन्दः

मध्यकातिनं खेळम्

मध्यता समृतं देखाः

मण्यमानास्यम्सस्यो

मध्यमाने ततस्तरिकन

मध्यमानेऽभवं जातम्

मध्यमाने च तर्शकी

मध्यमाने च तत्राभतः

मदान्यस्वीता शोऽस्य

मदाबरेभ्यम् सक्दरः

महत्ता भक्ता गसात्

मद्देपमास्टाय स्वत्यलो यः

महाहे बहरता वहिः

मध्याकम्लक्न

मन्त्री पृष्ट्वसोन्द्राः

मनसः स्वस्थता तृष्टिः

मनस्वतिथते निमन

मनवो सनुसूत्राक्ष

यनसैव जगरसिंहम

गर्चाइकारमधाः केविदै

मन एवं गनुःशाणाम्

मन्ब्यदेहिना चेष्ट्राम्

मनुरक्षार्थको देखाः

प्त्यवेहम्त्स्प्य

मनुरप्यह बेदार्थम्

मनुष्ययम्बिभातौ

मनुष्यख्येत्वं भगवन

मधुसंज्ञाहेत्श

मदाबर्णि<u>क्</u>रनेत्रोऽस्

मध्यां च पुनः प्राप्ती

मञ्जूरानगृद्धिरीर॰

मस्यवसीक प्रस्केऽसी

मतः कोऽभ्यपिकोऽन्योऽस्ति

الم الم الم الم × 19. 23

The Part of the second

79 min 18 1 m 18

4 30 37

Branch Co

Actor Samor to

₹-30°4000 -3\$\$

Fr. . Agengib

Barrell British & Ch.

San Y See 6

X ... 38 38

\$ 8x 84

8-84 - 38

in Programme

S near TSREE BURE

Am 38 milks

5 m. 4. m. 34.

Brown Day on RC

3 3 86

2%

h AR TO

15 90 30 may 34

Thronton parish

4 . 6 . 39

the few of the same by

8 . . . Sec. 16.

4 30 26 30 36 69

8 85 60 Walter Street Street Street Street 3800 07, 100 0 48

(488)

मेन बांक्षेत्र संयक्तः

मग्हर्जन्दनं भीपस्य

ममारी वालकस्त्रप्र

पर्गादाः पुरुषञ्यकः

समैयायं नित्तधनस

नमोर्वरहे सहलेक्य॰

नमोपदिष्टं स्थन्सम्

मयः दत्तक्षिम्हं मालम

मक्येत्द्यधान्यसम

मयाप्येतदशेषेयः

मयापि तस्य गदतः

भवानाक्रिस्वाली .

युवा चास्य प्रतिहातम

गम्। संस्कृतकोऽस्मित

मया इतं पुलकामिन्दा

मवि अक्तिसावाहवेव

मयि द्वेषान्यन्येऽभृत्

मयि मने प्रमत्ते हा

मधुरध्यजमङ्गरते.

मयुरत्वे ततस्या है

मण्ड मौतमातस्यः

मर्देव मवता प्रश्नः

मध्यनक दवानेम्

मर्व्यक्तिस्य बाल

मया हि तह चर्च सक्लेक्ट्र्यू॰

ममेति यक्तया खोकम्

मनोरकानो न समाविवरित मनोरवांपना दश यनोः पुत्रः करवः यनः प्रीतिकाः स्वर्गः नन्तपद्भपरा विभाः मन्तपूर्व गितृपां तु मनाभिमुलितं शातम मन्याने मन्दरे कृत्वा मन्दाक्ष व्यक्तित्रयने मन्दं जगर्जकंत्रदः मन्मधे तु गते नाइतम् मन्मना मदासादेन एन्यनसाधियो क्षेत्र सन्वसरेऽद सम्पति भन्यसाराज्यकेषाणि मन खबा समं युद्धम्

ú.

...

39.084 Sec. 32 Ble 22 months and ment became the Sking Com 38 Min Select b 19 Marin 49 Marin 26 selukirikik orgaiki Bussidaksur ¥ ुद्रेणसंख्ये असमार¥रे Redication to 43 Physical Straight 2 - 24 - 20

अंशः अध्याः प्रदेशः

443983 Back

William Continue to

X ... 300 388

4 13 X

Machine Court Many

AF emphysion 84

\$5,000 a 35,000 pt.

Shorthe with

100 X 201 - 2 20 1 - 13 242

35. Frankisco (4.5 fa. 4

Mary Rose See 6 11 \$1500 \$ \$4000 Per 24

CHECK PARTIES AND A STATE OF THE PARTIES AND A S tern fred a Magnetic 40 Achielo the ? Diogramma 4 Ministry of the a Richard Comment

33 g coping gate. X to المقور بالمراجعة والمراجعة

chicatements. The Roman Roman Ro

Semantia um ein bie

क्षत्रिकार वर्ष किल्लाहरू है

\$300.86 Same

Blood the Same

९५५% देशक्षणा देशे

8 63 25

25 - 199 - 3- 22

्रिलोकाः मरीचिनिप्रैर्दशाधः			4 .4	(7)			
ार्जा क्रिकेटिक केर्ज करावी.		अंशः अध्यः	क्लो ॰	१८ ड एस्ट्रेका ः १९१५		अञ्च अध्या	शले
नवानानात्राहरू। वर्षानानात्राहरू	2111	\$ 36	25	मान्यात रातविन्दोः		A STATE OF THE	इह
मरीचिमुस्यैम्निनिनः	ete	* \$ 1.88°	4	मा पुत्रान्या सुहद्दर्गम्		STATE OF THE PARTY	395
मस्तस्य दथा यदः	- 10	entre de la companya	32"	मायया गोहरियला तान्		To the state of th	208
प्रमीयहिंद्रमें हारोगैः		6	न्य व	मायमा सुपुधे तेन	204	1 33 m	SE Q
[े] मर्यादाकारकारतेपा <u>म्</u>	148	\$ S	· 作 €	याया उचेयमञ्जवन	614	1 30 mm	88
गररज्याजिकवर्गश्च	128		ें देह	मायायती ददी तामै	1.0	4 70	68
महता सक्तान्त्रन	,22	8 23	849	माया च येदना सेव		for the Tollier	23
महदादेशिकारस्य	44-	8 8	23	मावासोहोऽयमधितलान्	175	₹ 80°°°	88
महार्थकार्तः सस्टिलं	-11	2 24	884	मध्यामीहेन ते देखाः		To Sheet West	35
महाकाष्ट्रचयस्य तम्	20	8 20	. XE.	मापाकिमोहितदुका तनवो समेति		17 ¥ 0 ₹ 0 2 - 9	205
यहाप्रका महावीर्याः	411	2 2	TAGE 6	मारिण जम नासेण		2 24	
महाबीर वहिर्वर्षम्	,	3 18	10	मा रेव्हेरिति से इंछा:		Corre and a gradual	30
महस्राज्यसम्मनेनाविद्येकः	hin	STATE OF LATE	88	मार्ग्यं वश्वस्थाः		4 7 B	49
महम्भोजस्त्रातिधर्मातम	117	8 . 83	uma (g)	मार्जारकुकुटच्छान	211	रे भिर्महें ना	19 Zt
महानन्दिनस्ताः	114	8 58	120 s	मालाकाराम कृत्योऽपि	-11	ું રવે	16.
महान्तं च समावृत्य		3 19	ाल्युं ।	क्य मुद्रा गस्यश		্বিল প্রা	95
महापरापुत्राशिकम्		S 38	54	म्डमः पश्चद्ववेनोतः		75 4 . 2 . 3	190
महाबलन् महावीर्पान्	255	X 04	685	भवरत गरस्कारत यथे		3 68	S-11 -
महाबल्परीवारः	846	4 77	11. 2	मसि मसि रवियों यः		\$ 68	ा व
महत्त्रामा महान्त्रामाः		le in the le	TRUE S	मासेक्षेत्रेयु मेंत्रेय		as a market of the	
पहीं घटले घटतः कपारिका		rake a Still	165	मासेडीद्शभिवं र्ष म्	177	5 50	175
महोबोर्याच दुश्शयः		A. 100 (1)	- 58 ·	माहिष्यसमे दिन्दिणयः			20
गर्लन्ह्री मलमः संद्धः		- Ser = Walky Are :	N. 3 3	मां नत्मसे स्व सहवाम्		A. 64	23
फोन्द्रो वारणस्करात्	tre	grant of m	u erda i a			Leginoriganach	(4
महोत्सवमित्रासाय		Q 20	afgler.	मासास्क्रपुर्याध्यम्बर स्रोत्रास्कृतिक		₹ ₹6	4.5
महोतालं महादख्य	178	ि स् इ े	^{ाव} ५२ ।	मा हलुममर्स्यकः जिल्लामा स्टेक्ट		77 (4.15) 727 (4.17)	等 [197] 。—
महोरगञ्ज्या यक्षाः	, hory	- 15 4 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	120,50	सित्रधूपुत्तस्त्री क्रीयः मित्रायोरःध्यथनः		The second second	74
मानवस्य बले श्रीजम्		20 1 -5	1712 1	भिनेषु धरेत कथम् भिनेषु धरेत कथम्	E. I	8. 66	90
माग्यानं वार्द्ध काम्		4 48	2015 A	भित्रोऽत्रिस्टशको रक्षः	1.	भारतसम्बद्धाः १५ ०० क्षेत्रः । भारतसम्बद्धाः भट्टास्टरम्	7.4
		* ** * : ": = !:"		La de la		₹ ₹6	kradi.
नायक्षेत्र शु मानेन नाममारे जसन्देवे		\$ 1 131 250 250 2	6 I	मिषतः पाण्डुपुत्रस्य		4 \$ 6	₹€
म्बन्धार प्रसायन्य म्बन्धेऽस्ति प्रस्तुशी कदाचित्		रे १०	10	मुक्तमात्रे व तस्मिन्	178	A \$3	6.80
म्बन्धास्त पहच्चा कवापत् म्बन्धानीतं सर्थ कंलाः		3 5.8	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	मुखनिः श्रास्त्रजो विष्णोः	148	To distance to	4
		1 25	98	मुखं बाह् अब्बह् च	***	Tall (1) Tall in the	24
माता मस्त्र पितुः पुत्रः	144	1.5 Jak	65	मुख्या नगा यतः श्रीकाः		ALTERNATION OF THE STATE OF THE	45
स्वत्वमहानामध्येत्रम्	148	₹ १ ५	80	मुन्कुन्दोक्षम् वशसी	-+-	4 74 TO 10	74
महतामहस्त्रुतिमुचैतु तस्य	411	3 76	127.3 E 1	मुक्षते वाजनाशाय	171	A . 50	36
मात्रसहाय तिरात्रे	191	उ ११	30	मुद्रस्त्यहृदशः		A 56	€6
मात्रे प्रमाते उत्पापे	100	\$ * ? ?	Literatura.	मुद्रस्थय मोदल्याः	. 12	8 88	Ę0
मार्क्य च गारुडे चैव	781	w	S PER S	युन्यो पावितात्पारः		6 4	*4
माध्ये सिवसन्यते	•••	2 70	1917	<u>पुष्वाते तथास्त्रत्य</u>	- ;-	The second second	33
मानसोऽपि दिजलेह	•••	6 4	They	मुमोच कृष्णां और तदा		4 88	ેવ્ય
म्बन्सोत्तर ी लस्य	F11	\$ 2	4	मुख्य तनयानसप्त	178 .	4 56	35
मानसान्येय पूतानि		\$ \$0	C 13	मुख्नि सोऽइनन्यूर्षि	110	the statement	74
मा नः क्येशं तथा भोक्षम्	14-	Par Pickel	650	मुसलस्याद लोहस्य	137	4 819	43

ŧ

₹

\$

ξ

ŧ

ų

3

Ť

ą

ş

q

?

6

ч

?

₹

7

₹

\$

Ę

٩

461

460

24

13

B. 二位

२२

戛

19

24

30

₹₹

244

₹₹

23

22

70

76

313

ξ,

Ŕ

₹

35

t

54

\$

\$

 $x\in \mathbb{Z}_{p}$

१२३

₹₹

17 14

'n

78

613

29

46

86

46

24

86

298

જર્વ

7E

33

Xt.

29

204

73

79

4

Ų.

589

8£

10

\$E

3

3

3

٧

विकास एक प्रशासकी ।

य इदं धर्मसेत्रम्

य इदं जन्म वैन्यस्य

यक्षरकोरकैः सिद्धैः

यक्षाणां च रथे भरनेः

यत्त कार्यं तवास्मापिः

यस मृतं हरे स्कृत

यसान्यदक्तोल्हर्म

यसारं भक्तत्र पृष्टः

यजन्यज्ञान्यजस्यमम्

थजुर्वेदतरोइज्ञासाः

यज्ञान विस्टानि

वर्जुवि त्रेष्टुभं छन्दः

कर्ष्य वैस्मीसनि

यज्ञनिष्यतये सर्वम्

यसस्य दक्षिणांची तु

दब्धिया महाविद्या

मजाङ्गपूर्व सङ्ग्रम्

यद्रोद्धारपुत गोर्थिन्द

यज्ञेन यज्ञपुरुषः

यञ्जेषु यञ्जपुरुषः

यञ्चलक्ष्यक देवाः

अर्थकेखरो देखाम्

गक्रेनिदेवत्यम्

वर्त्तेस्स्विमन्यसेऽचित्स्यः

भईर्गक्षिको यजन्ति सत्तरम्

यक्षेश्वरी हरूपसं नस्तकरूर

यद्गे च भारीचमिनुवाताहरूम्

यञ्चसमाती भागवहण्डय

यक्रेतद्भुयनगतं मया तचेत्त्रम्

यक्षराक्षसदिवेश-

य एते भगतोऽधिमता

म्हेन्छकोटसहस्राणस्

मृगञ्चाषध सर्वस

मृगपशिम**ुन्या**दीः

सृगान्ते वद पृष्ठेषु

मुगमय तदाइसीत्

मृगाप्त चैव सर्वेषाम

मृष्मवं हि क्या गेहम्

माम्मर्थ हि गृह यहत्

मृतस्य केरीयुं तदः

मृतवन्यदेशस्त्रन

मृतस्य च पुनर्जन्य

मृताहनि च कर्तञ्यम्

मृताहाँन च वर्जव्याः

मृतो नरकमण्येति

मदङ्गदिषु तृपेषु

मृष्टं न मृष्टमध्येषा

पृष्टे एदियान्त्रे ते

मेचपृष्टे बल्डकानाम्

मेपानां पयसां जेहाः

मेथेषु सङ्गत वृष्टिः

मेधानिकातुपुत्रास्

मेरदस्यमभूतस्य

मेरपूर्व पत्रस्पूर्वः

देशक्रवृद्धिशं ये तु

मेर्ग*रनस्तरहे*य

मेरोखतुर्दिशं तनु

पेत्रेगैतद्रशं तस्य

मैत्रेय श्रूपता मतः

मैत्रेय शूपता कर्न

मेत्रेय सूयतास्यम्

मञ्जब खुकतामतात्

मैत्रियं श्रृयतामेगत्

मैनेय श्वरामेत्त्

मेथावनो रिपुश्रवस्ताः

मेधा मुर्व क्रिया दण्डम्

(483)

अंशाः अध्या

7

٤

X

3

7

ч

Ę

ζ

ì

۲

3

ŧ

₹

₹.

Sq.

515

10

33

73

14

4

4

Y

₹**Э**

22

23

1

Rt

v

27

38

4

27

4

4

4

4

Eq.

3

10

74

11

ŧą.

15

18

36

70

220

315

68

κ\$

33

₹₹

ŧĘ,

83

elel

88

WY

29

१९

3

ijφ

₹

80

115

ξõ

1

**

4X

38

*Y

٥

99

099

35

815

¢

16

Ę

63

TT

74

··· २ प्राथ २ प्राथ अर्थ प्राथ समे त्यावाः

यशः पञ्चाद्विरदोगमहित्कृ

यत्र का वर्षी देशी

यत्र नेत्यं वसदर्भः

असः अध्याः स्टो॰

... × 130 ... 43

t sitt minute

पान्येव मुख्यादायाम्		£ 38	यत्र कचन मेस्समञ्	114	Paralling or 30
द्रम्बदिर्गञ्जपुरमः		4 20 24	यञ्जाकोषालोकनियासः		Section Mark
यद्वश क्षणककृति		Yang sangs	यञ्जदी भगवाक्षणवरमुकः		Princes & second
यत्रशोशमा स्रतः		Y gar generally	दत्रानपायी भगकान्	-14	Tpitte 10 35
यतन्तो न बिदुर्नित्यम्		4 4 4	युप्रान्तु जिन्दरमा सदिव	914	4 86 30
यतिययतिसंगित्पायातिः		Y 10	यत्रोतमेतस्योतं च		3 pp. 4 ps. 203
यतिस्तु कर्म नैन्छत्		10 10 in 18	य्योतनेत्रयातं च)13	6 86 25.53
यतो धर्मार्थकामस्यम्	u ten	1 14 39	यश्रद्भविभानि		24 at September 54
पता भूगान्यक्षेत्रकांग		3 10 43	न्यभा सन्तिभिष्कत्रेण		\$ part \$ 17.78.39
वहो वृत्रिगत्त्र्ञाम्	4	35 38 X	यथा सुरा पदेवेन्द्रः		4 30 1 200 800
चतो हि इल्लेक्षः	e m	1 8 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	अवा केरहाप्याचे प्राप्त	197	Kernerkon mind
यतः काण्यायन द्विज्ञः	-45 em	४ १५ ३२	व्या च प्रद्योगूरू	00	2 mb 33
यतः काण्यापनाः		Our which &	यथा संसर्ज देवोऽसी		Completed age .
यदः कुतकित्सम्बाप्य		35 XX 36	यक्षा च वर्णानसुनत्	***	PREADE SALE
वतः सा प्रवताग्यसम्	14-	3 6 645	यश्रायक्रप्रियो देवैः	14-	Bur Series A.
वतः प्रभानपुरुषी	634	5 80 30	द्रमाभग िस् तान्		निवासी के रहेर विकास
युवः सस्यं ततो स्वयन्तिः		28 - 28 - 3	यथा च्ह्राचनं तस्य	***	Paragetta 5
वस्त्रिक्षसम्बद्धाः येन	48.	\$ 22 34	यथारिस्दर्शक्षाः	444	6 . W . W
यत्किञ्चित्रमानसा ऋतसम्		Charletter 5	यथा गृहोतामभ्देषेः	4,44	4 pgs p 38
युक्ते दशभिवर्षः	144	Same Brown \$5	व्यायया प्रसम्रोऽसी		9 36
दतसम्बद्धियानं तेजः		\$ 400 A 1500 30	सधार्रमस्य स्वेकस्य	1.00	Sec. 4
यसद्द्वसम्बदम्		\$ 5 co + 55	यस्य हि कदस्य नाऱ्या		1 g\$\$pang \$9
यनु निष्पाचने कार्यम्		18 2 14 Hards	यया सूर्यका मैश्रेय	***	\$ \$4 . 239
स्तु कार् य तरेषाचि		3-13-120	दशा सर्वेषु पूर्वेषु		t Bearings
ब्लु मेर्थ समुत्र्ष्ट्रभ्		3 - 2 - 2 - 2 36	यथा सर्वगतं विष्णुम्	484	t +4
यसु पूर्वारीर मुखल	138	3 -6	युपा ने नि श्र ल चेतः	-11	50 30 m 1236
युराया प्राथकी स्थानम्		1 13 4 63	यथा च तेन सै व्यास		A MAR AND STOR
यत्त्रमात्वास्थितं दूव	150	५ ३७ - भर	युष्यवल्यभितं सर्वम्	11-	3 . 15 19 19 19 19 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18 18
यहोतद्वता प्रेकम्		18-3-30 14 April 48	युपासनि च पुत्रे च	404	A 1 5 1 3 3 3 9
स्त्रेतद्रगत्राना ह	. ***	3 Wille attail \$	पया न बाद्यणेभ्यः		X & Mark Vo
युरोतन्द्रगरहन्द्रह		5 SE 140 100 5	यसा च नैत्रम्		* postanies.
पत्रेतस्त्रमनर्नेस्युक्तम्		\$ m. \$4 mm 34	यथाड चसुषा सर्वम्	F-4	4 pullmanni Att.
गरम्ब्यनि प्यापेतम्		t prés part	यव्यक्तिको स्टूटा समिधाते	*17	\$ 数字的图题
गरप्रिक्त्या सीहियवाम्		- Kon 20 11 78	यथार भवता मृष्टः	-1-	1. 19 19 193
स्त्रगारवीन भूतानि		Burney Stone	युग् एक जुले चाता	***	A MANAGES
यस्त्रमाणांमदं सर्वभ्	. 751	-34 DAPE 1984	ययाहं पूज्या तेन		8 10 308
युत्र तत्र रिधता देवत्		4 48 States In &	यथा समस्तपृतेषु	•••	4 88 1711 58
ধন কুম কুউ সাম:		म कर्षे क व्यक्तिक श े रिय	यथा य माहिषं सर्पिः	102	4 64 m 35
वन्न सर्व यतः सर्वम्	07	med Sprace	युध्य यय जगरूपि .	***	4 580- 78 38
राज्ये देवदेवस्य	- ***	A party larger to	युषा निर्मित्रितसीन		A SERVICION DAY
का युद्धमभूर्यतम्	119	4 37, 310,6	युवेच्य्रकारमिरकः	* 18	t perform it?
अन्य यह सारी केली		9 95 166	ന്നിയ അന്ത്രിക്ക്	***	5 6 35

··· र २३ ७१ यथैन प्रप्राचीकनि ··· ५ ७ २९ यथैन प्राची दूरत्

(486)							
SCHOOL WILLIAM		अञ्चाः अध्याः २एरे॰	100 TONAN (1998) (1998)	अंशाः अच्याः वस्त्रेन			
यथैव क्यांति वहिः	***	A 2 64	यदं च तुर्वस् नील	··· Sala			
यशोककर्मकर्नृत्वात्		5 8 8	यदेतन्द्रगन्धनाह				
यधोक सा जगदात्री	1.64	d A Second	यदेतन्तव मेशेय	4 78 78			
यद्द्रा बुरुदे पाएम्		5 65 30	यदेतद् दृश्यते भृत	6 Sure 34			
यदम्बु वैलावः करयः	114	२ १२ ३७	यदेतदुक्त भवता	30 50			
पद्योगागताः कर्यम्	12.0	haragan a san	बदैव भगवान्	R SR 600			
यद् । सामार्व कार्यम्	1-4	A 300 A 100 546 :	यदोवेश नरः श्रुत्वा	" Richard Con Hilliam Co			
यदास्रक्षेत्रे सूद्ते		£ 20	यद्गुणं यत्नेभावं च	···· 6 法法法的法法法			
यदशमभावभूभे	1-2	S. 250 Sec. 3	यद्द्रव्या क्षित्रका चेवप्	··· 5 55 @€			
यदस्य कथनाः वासः		€ ₹ 48	यहरू यह मरीवः	··· 4 35 X3			
क्दर्य ते महात्सनः		\$ 88 %	यद्भेत यस वै भव्यम्	१ १३ ५७			
यदा तु शुद्धं निजलपि सर्वम्	***	२ १२ ४०	कादगृहे तन्मनीस	१ १७ ६७			
यदारगद्भचनामाह॰	ng e	4 45 36 36 36	देखन्यथा प्रयतिवम्	u (9%)			
यदास्य ताः प्रजाः सर्वाः	***	8 2 8	यंबनीतिकरं पुसाम्	इ अस्पारमा देव			
यदास्य सूखमानस्य	***	\$ 74 65	<u>यद्यन्तग्रयदेषिण</u>	§ 3x			
क्दाभिविकः स पृष्		The second second second second	यक्तमां अस्ति वरः को अप	··· 5 54 60			
यदा विवृष्णतेऽननः		4 6 53	यद्मदिन्छति यद्भव	3			
यदा बन्द्रश्च सुर्यश्च	***	द २४ १०२	यद्यायरोपभूतस्य	३ १७ ६८			
यदः यशोदा ती बाली		e and the same	यस्त्रक्षं को ग्रहाः	···· * * * * * * * * * * * * * * * * *			
यदा चेतैः प्रबाध्यन्ते	***	५ १० ३५	यद्यसारपरित्राणासमर्थम्	··· 8 \$3			
स्दारमुङ्ता नाथ	119	५ २९ २३	यदान्यायाग्	8 43 Z4			
यदा रुज्याकुरुः गापै		S7 76	यद्येव तदादिश्यताम्	The State of the s			
यदा यदा हि मैत्रेच		E 800	मदीयं त्वनाहं पूर्वमेव	Andrew States &			
यदा यदा हि पापञ्छ॰		6 5 80	यद्योगिनः सदोद्युक्तः	··· 6 4 68			
यदा बस्र सता हानिः		E	यद्योतिमृतं स्रगतः	6 68 5 56			
यदा यदा न यज्ञानाम्		Against the teacher	यत्र केयलम्पिसम्पूर्वकम्	Kapin Karasa 1214			
यदा दागति सर्वात्मा		E S S	यत्र देवा न मुनयः	" Like to frame a land to be seen			
यदाओति नरः पुरुषन्	-41	g e xa	यञ्जनहेत्द्रवैः	way at the state of the state o			
यदा सामबयस्यस्य		3 3 3 3 3 3	यश्रय भगवान् ब्रह्म	6 6 66			
यदा पुसः पृथम्भावः		२ १३ ७५	यश्रमकीर्तनं मक्त्या	\$ \$ \$ 6			
यदा समस्तदेहेषु	P-9-	The property of	पत्र शरीसु परन्यदेहे	See Section 1			
वदा सुनिस्ताभिरतीयस्ट्रदीत्		्रकार होते - स्थलामास्य इ.स. इत्योजना १० होते	यनस्य च जगद्गस्य	en 6 Elegandered			
गदा च सप्रकृतिण	101	उत्तरकारकारक समस्य स्टब्स् मुख्याच्याचीते नामसामानुस्य	गंपनिगमिक <u>पूरका</u> स्प्राणाम्	विद्यानाद्वार क्यान्युट्ट			
यदा न कुल्हे भा व म्	-	स्वास्त्रकार । स्वास्त्रकार । स्वास्त्रकार । स्वास्त्रकार । स्वास्त्रकार	यम् ध्रक्रभरः साक्षात्	Partie Village Sept.			
वदि चेलद्रवः सत्य		५ ३० ३४	बमस्य विषये छैतः	ाः विकास स्थापना स्थापन			
यदि त्वं दियता भर्तुः		0, 30 00 6 6 00	प्राप्यस्य जनस्यकः	क्षात्र क्षात्रका विकास स्थापना स्थापन स्थापना स्थापना स्थापन			
यदि चेहीयते महाम्			यमाराध्य पुराजयिः	्राक्षेत्रकारण केल्याकृतिकार है। स्थान कार्यकार्यकृतिकार है।			
यदि शाधीपि गुन्छ लम्		Control of the second of the s	यमुनो जातिगम्भीराम्	्रहेड्ड स्टब्स्ट के स्टब्स्ट स			
यदि ते दुःसमस्यर्थम्		ક્ષેત્ર ફુક કરો કરો છે. કુસેલ્ડ કુક જાણ	यभुक्तस्र्यण्डदेनि				
विद्मी वर्जनीयं च		e es ce	यमुनासकिक्यातः	The Same of Same of S			
यदि योऽस्ति मयि प्रक्रिः		4 23 82	यभेन अहितं दण्डम्	The second leaving the highest property and the second second			
यदि समगणी यारि	. 11-	and the state of t	चया क्षेत्रप्रशासिकता				
यदुक्त ये भगवतः	1	5 2 5 3 5 3 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5 5	यपक्रिजापाईशोऽप्यम्	" IN THE STREET SECTION OF			
यद्वरं भृद्धयतः	***	रे १ र	वयातेशतूर्यपुगस्य	k. 55			

(५१६) ধারা: প্রক্ষান_{্ত}্র হন্ত্যন

३ ३ १ ७ वस्मिन् कृष्णो दिवं शातः १ १५ ४३ वस्मिन्यतिष्ठितं सर्वम्

गमसी कुरुटे सन्ता

पया अक्रियार्थिन्या

प्रक्रिन्यस्मिन्तुगे व्यासः

वस्यिकान्यन्तरे ब्यासाः

यस्पिक्षमध्ये जगदेतदाङः

अस्तः अध्याः इस्ते

¥ . 28 . 213

4 30 . 407

t 24 68

ययातिस्तु भूभृदभवत्	***	A 60 mm 3	परिमन्दिने हरिमादः	14-	Application of C
युक्ते जडमतिः स्पेऽध		₹ m,₹₹	र्यास्पत्रदत्ते सक्छम्		\$\$\$
यकगा न्य ण्डतशिरसः	. 64	8 × 5 × 80	पर्ग पर्ग सान सप्ती	118	the second
ययगोधूनमुदादि॰	.,-	२ १५ ३०	यस्य सङ्गतनोपस	4 104	\$ 7. 8
यकन्तुना च देवानाम्		3 - 24 - 70	यस्य नागत्रपूहस्तैः		\$ Q4
प्रवरः थियञ्जलो मुद्राः		3 paters from \$ 1	यस्य नादेन दैरवानाम्	101	25 155 4
यशोदा सकटासङ्	***	Harris Committee	यस्य दक्तरथी मित्रम्	114	¥ 34 40 25
युरोदारुखे मां तु		4 3 48	यस्य प्रसादाद्वरूपण्युतस्य	- 11	¥ 4 4 - 1 4 4 4 5
यक्ष सार्वे तथा प्रातः	117	3 8 838	यस्य रामादिद्वीयेण	***	3 6 46
যয়নুবিগানি মা -খে	***	Y 28 47	यस्य संशोधको नायुः	· 1=	\$ \$6, \$60
यस प्रसासितियम्	111	Y 31	यस्य क्षेत्रे दीर्यतम्	-1-	¥ . 14 13
यश्च मगदता सकलः	-11	8 4 8 X	यस्य चौत्सदिता कृत्या	•••	F48 48 T
पश्चेतकरितं तस्य		ዓ 36 ዓ ሄ	यस्य प्रभावान्द्रीयमधिः	10	4 36 X8
यक्षेत्रत्सीभरिचरितम्	. 14	₹ \$ ₹ ₹ ₹	यस्यावताररूपाणि		4 63
यशैतच्युम्याज्यम	114	8 - 8 - 8×E	यस्यायलोकनादसम्बर्	***	4 9c xe
यक्षेत्रस्यविद्याप्रस्य		7 25 207	यस्यासिकसम्बद्धियोगः		ام ال
यशैतमस्ति तस्य		4 36 88	यस्यायुक्तयुक्ताशीको		₹ 9 4€
यरमुकद्दितरं क्येसिम्	144	1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	पस्यान्तः सर्वमेञेदम्	***	5 . 55 . Xd
र्याष्ट्रहरुक्तनवेश्यास्मान्	114	4 36 80	यस्याज्युत्रो दशस्यः	***	S\$ \$2 \$2
यस्त्रमास्त्रीतं तीयात्व		1 53 18 S 39	यस्याहः प्रथम रूपम्		\$ \$8 - 60
यस्तु सम्यक्षरोधियम्		3 mg 3 mg 19	यस्वायताररूपाणि		\$ 19 60
यस्तु सन्यस्य गाहरूयम्	F**1	3 26 36	यस्याभिद्ध भद्धयकै	-11	5 6 850
पस्ते अनिष्यते		Y 22	यस्याश्च ऐमदी जहें	0.1	\$ 20
यस्ते नापहतः पूर्वम्	era (T	og til som til store	यस्यैया सकरल पृथ्वी	711	₹
पस्त्वेतत्सकलं गुणोति पुष्पः	mark .	\$ 775 m 44	यस्यते सर्गकृदस्यनेव		¥ - 1- 29
यस्त्रेतचारितं तस्य	00	१ २० ३६	याचिता देन सन्बङ्गी		2, 9, 15, 4
यस्लेलं नियद्धर्याम्		300 p 10 33	यासवस्त्रवोऽपि नैतेय		\$. 4
यसम्बामसम्बाद्य	-11	X 40 20	याज्ञयल्बयस्तु त्रज्ञभूत्॰	***	Brown Street B
यस्म दिष्टमिद् जिसम्	-11	Augalonia Mh	याञ्चलस्यस्त्रतः ऋह	-11	\$ 4 6 44 55
यस्मदभोज्यम्	10	K - 1918 - 1948	याञ्चलक्यसादा आह	-1P	3 4 90
यसम्बेद्धं मञ्जातृत्रायाम्	119	our Property of the second	यातमाभ्यः परिच्छाः	***	3 0 €
यसगद्भारा च स्ट्रध		4 1932 6 10 10 15 15 1	यात देवा यथाकामम्		25 25 38
यस्मात्वयेष दुष्टात्व	r14	4 m 3 8 m 1 m 3 8 1	थातोतगोचरा वाचाम्		\$ 19 50
यस्याञ्चगन्सक्रुभेतदनादिमञ्जात्	113	4. 30	यादवाङ यदुनामोपः	- 2 P	A 15 30
यस्महिक्तरूपं भाग्	511	4 8136 page 48	या दुरस्यका दुर्परितिनः	***	¥
यस्पदर्वाग्व्यवर्तन्त	61.1	Z	য়া নামিকাৰ আউদ্য		7 10 - 4
यस्मिन्त्रविष्ठिते भास्त्रान्		5 -45 - 80A	यानि मूर्वान्यमूर्वानि	-11	₹
यरिक्ताराधिको सर्गम्		\$ - \$ \$ \$ \$	यानि किन्युरुषद्विन	-11	7
यरिगञ्चरतम्बर्तिनं याति नरसम्		ا (المرابع على المرابع	यानि किन्युरुवादीनि	-17	3 - 2 17 34

यानीन्द्रबार्यक्रेबाणि यास्येते द्विज समैद

3-3-3-4

100

४ १ ९० या प्रीतित्विकानसम्

	(0	5 (8)	
ल परमेका ः हुन् ।	अशः अध्यः इस्तेः	इस्रोक्षः 🗥 —	असः अञ्चलः इस्त्रे॰
थाना नाम ठरा देखाः	···	येन विश्व विश्वानेय	··· 324-8 4446
थानेता वहसे मृद	··· 4 8 6-	येन द्रशासिक्युता	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
खन्यकि <u>त</u> ्वस्याः ॥दि०	··· 4 50 4 5 8 86.	येन प्राचुवेणः	King & Same of
कवनार्वे प्रदेशो तु	· 7 690	वेन स्वर्गदिह्यगम्य	··· * ·· * ·· 44
यावसी बन्दवः स्वर्गे	**	वेनाप्रितिगुद्धावरियगास्त्र	w 4,50 \$10 m 29.
पायतः कुरुते जन्तुः	१ १७ .म्ह	वेनेदमाकृतं सर्वम्	··· & Aggraffers matt.
यावदित्यं संवित्ररिः .	··· \$ \$6 86.	चे अपि तेषु	K 103
यावनाः सागव द्वीपाः	··· 4 1 3 ··· 8	ये साम्यसम्बद्धाः का	3 22 45
क्षक्रामाणा पृष्टिची	2 ¢ ¢	ये भावव्यन्ति से भूताः	··· { 1-32 to
याजस्य शैय तागस्ताः	\$ \$\$	येमं नित्या रिगरितार्वहान्	··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··· ··
यायच ब्रह्मलेकात्सः	10 R = 25 Tink	थेकामधे रिस्सासायुधः	x . 8
वायान्यहीतले शक	··· 4 85 50	वेषां व करलम्भाग्रेऽस्थ	··· \$ prospersor (3%)
यत्त्रस्य गरम्मारुकी	4 - 44 5	येशं न माता न पिता न पन्युः .	··· 128 -038 107 198
याथशायम् पाणूरः	··· 4 50800 480	ये साम्प्रते ये च नृषा भविष्याः	×
याथ जी अति राजाम	··· 8, 6, 4, 4,3	थे अनुमागतः दत्तम्	··· tomate a ske
याबतार्प उदेस्यताभ्	¥ . ₹	वैर्यत्र दुश्यतं भारताम्	3 Fre 458
यावच अनकराजगृहे	··· ¥ 43 206	यैः साधर्मरीर्माय	··· · · · · · · · · · · · · · · · · ·
यायदेवापिने पतन्त्रदिभिः	\$ 4 50 1/50°	योगसुक् प्रथमे योगी	Karanga 38.
चन्त्रसिक्ते वन	en in Sperift bei haber	बोगस्वस्थं खण्डिकः	m they be seen
क्यतः प्रदयक्तभग्	" K 48 409	योगन्छ पर्यटायाः	\ \
या विकास या तथ्यविकार	- t- 77 ~ 46:	योगनिहा महामाख	111 Granit a 188.
याः सप्तविशतिः प्रेतन्तः	··· \$ 24 / 348 -	यो गुहुत्यापहुरो	X . 128 . march
युकारमस्त्रप्रमाञ	··· 8 4 \$8.	यो महाहरतः	9 8 mg 24 3 mg 26
युगे युगे भवस्येते	\$ 84 : 63	योगप्रकाराष्ट्रादे	3
मुभ्यक्षेषु च बतीयम्	··· रे . ६ . १६ ·	योगिनो विविधि स्पै:	**************************************
युष्पान्द्रेयां ह पित्रयाश्च	3 (3	योगिनो युक्तिकायस्य	\$ 35 80
भुमास्य अञ्मुकान् विवान्	- 3 mile 4.	योगिनाम्बतं स्थानम्	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
दुक्कतः केशसुकसार्यम्	1 . 35 Xa	भोग्यासस्यक्तिमानो ह	·· 3 / 143 x - 144
युद्धोतहरुशेऽहमलर्थम्	··· . 4- 86-4 202	योगानामां सहस्राणि	··· দিয়েত কিয়ে এ ই ছ
युभिद्रिराकतिकिस्यः	Yo 30 . X2.	पोजनानी सन्नम्बाणि	ল ই জাই চাই সাই।
युपुषे च बस्टेनस्य	4 38. 29.	योजनानं सहस्र दु	Rosestinian 4:
युषके परिता गर्भाः	14 X 254.	वेनिस्टोग सत्या च	\$
कुमहोर्क-इसन्पृद्धिः -	··· ५ ३१ -ः हर ः	योऽनलः पृथिकं धरे	ધ ૧૭ ફર
युम्पदतपरी वाणः	4 93 86	योऽनक्ष्म्योऽस्तिलविश्वस्यः	m Grannanger (\$2.
युष्पकं तेजसाइदेव	\$ 84 . 9	यें असस्तिहत्र संबद्ध	8 68
ये करमञ्जीधकोमानाम्	2 85 RS	येजनाः पड्यते सिर्देः	··· 3 48
थे ज हव मानयाः प्रतः	. 22 94	यो भवा-विश्वमित्तं था	२ : १३ : ७९
ये तु देवाचिपतयः	·· 1 ·· 23 · 26	यो गुसं सर्वदेवानाम्	40 \$ \$%
ये हु ऋर्यवदः सुरू	- 1 × ×1	ये में मनोर यो नाव	·· 4 44 . W.
ने लनेकम्बसुप्राय-	१ ६५ १०१	यो गरा फरान्धर्य	··· 4 = to = bt
ने लाभावति दुर्गति	··· 4 - 8 - 88	यो यजपुरुयो यज्ञः	\$ 2\$3
येन तात प्रमाहरी	··· 8 - 88 1 - 3188	यो यहपुरुषं जिळ्युन्	THE RESERVE THE PROPERTY OF TH
सेन केन च योगन	··· \$ \$ - \$5.	बोऽयर्पती जगत्सृष्ट	- Grant Barriots
यन दुष्का मध्ये पूर्वम्	m to sittle - Con to	यो पोऽभर्थनागाङ्कः	The same of the sa
W . C. W. Z.	4 4 4 4 4 4	en interest andream depte	A Ser The Service of Bull

	(0	(4)	· · · · · · · · · · · · · · · · · · ·
विकासिकाः ^{कि} न्यः स्वर्णेकः	अंदाः अध्यार १सी०	Total Cont	अंद्राः अभ्याः प्रस्ते
केंद्रय गर्भेड्सम्बन्धम्	\$ \$\$\$ S	रम्पर्वस्त्रेतमानान्त्रभ्	પ કરે છે.
योऽर्य साम्प्रशम्	A. 55 /9	रस्यक चालर वर्गस्	\$
चे ३२ साम्बर्धमनोपतिः	x 45 2 8	रस्यो हिरम्बान्सहरू	··· 3 * * * * * * * * * * * * * * * * *
को उस रिपुद्धाच्या नाम	A 5.	रम्योपवनपर्यन्त	इ. १५ फ
नो वै यदाति बहुरः ।	" Application and Section	राधे गीतकारी शुला	63 50
पोषिच्छुक्षुक्रा (दर्नुः	··· & THE PERSON	रवंगन्द्रमसोयवित्	ə 🖟 🖟 🖟 🖟 🗗 🕭
योजिता नायमञ्जल	··· à 27 20	रहाल्ले मीनेया हम	" A STATE OF ALL
बोऽसाबुदक स्य मन्द्रिः	m & A Second	रसात्रः अगत्र शासी	குழியிடுகிய 🎉 "
योजनाव न्यणिया है	6 50 58	रसेन तेष्टं प्रस्थाता	" å gag S 55.
नोऽस्ति रवेऽसि जगरतंत्र-	··· The state of	यम्बल्देः भवत्स्वेताः	" 6 gar, 4 . 344
थोऽसी निःक्षते	R . A. A.	राजमार्गे ततः कृष्णः "	·· 4 - State of the safe
योजनी योजनी स्थाय	A. X 146	राजवादनास्तुवादः	· 8 . 4 . 30
योऽसी यहजाटमसिस्स्	" hear & see Prose + of the	राज्यस्य व्यक्त रहरते	··· 4 5 8 10 160
योजनी भागविद्शम्	- 8 St. 54	सुर्वित्रयम्भतं कोषः '	- \$ 40 AL
योऽसी याञ्चलन्यात्	X . S. S. A.	ससपुर यथा विष्योः	··· Laston da
केल्पेड्ड भवताम्	- A Shipe Single	राजां दु प्राग्रस्थानसम्बद्धानस	X 8 24
योजसा स्वेशस्यिति ब्रह्मन्	२ १३०००८५	राजासनीरेयतस्याङ्क्ष्य	Walter State of the state of the
योज्यं संस्थ जनधेदम्	··· 4 \$3 86	राजाराने राजन्छत्रम्	··· 4 82 3 86
यीचेया मुध्दिसार्वकरम्	R 50 RR	राजाप्यमं वेदशाद-मन्त्ररम्	R 6 60
सं ये कराप्या स्पृशित	- X 60 53	राज्यपि माओ वेशी	··· A LANGE OF THE SECOND
द हरण्यमध्ये योगप्	A Se 1844	ग्राव्यभिदेशकामञ्ज्यो	4. 4. A.
यः कारणं च कोचे ट ं	4 : 6	रामा य शानगुरियः	8 59 53
यः कार्तनीयी बुपुत्रं सन्छान्	& £8 5/25	गुड़ी साध्यविदेश	4 3 18
भः श्रेतन्योत्तरः शैलः ^१	4 FEA. 194	राज्ये चैक्सवर्ण ग्रह्ये	** 1 3 4 8 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
यः रेषुलस्थ्यः प्रकटप्रकातः	··· \$ 25.49 M. 2.5	करपूर्वी बर्ल कोइः	d 63 Xv.
5A 48 1	१ ० व्यास्त्र शहित्र विताली ।	राज्यदिकामस्येतः	6 KX 64
एशद् स्वमशेषामाम्	··· Particular Company	राज्ये मृक्षान्यविद्यासः	The state of the s
रक्षेत्रमन्त्रवर्गम् 🕛	" के रेक वर	राज्यक्रीभीवताः कृष्णेत	4 58 60
र धारि स वासि ते नायाः	१ १२ २२	गुज्यं मुक्त्वा सथान्यायम्	" Bucksuckey
रहार स्टब्स् केयाच	··· २ ड रि?	राजी ते समस्यकृत्य	\$ 13 R6
रजीद्रेजप्रेरितिकासम्बद्धाः	··· & is the many	राम्यम महाजाहो 🕒	··· q = \$4 = 33
ग्रिक्टि देवसे ।	m & said and	वर्षे प्रेय कर एस	8 S. CC
रजेल् सन्तरिः 🦯	A S 54	एसमञ्डलनाथेऽपि	d 62 86
रजेलु परनुषश्चन	and the property of the second	एसमेद स्मी कृष्णः	- 14 K3 6E
रजी गोशेद्रीय बाहुश	\$ 69 63	राञ्चि अमाणजनितः	7 6 84
रक्षीभाजात्मकानन्याम्	··· Valled and with the same of the same o	दिन् रिपुक्षयं विक्रम्	··· & also and so
्नी भागात्ममत्स्य 🦠	\$15 00 E . 3 2 2 2	स्विन्दी सामग्रहास्या	५ २७ २२
रणञ्जनसम्बद्धाः	··· And Spinists	रुविमाणी सकते कृत्यः	··· 4 - \$\$\\ \bar{\partial} \pa
रसपातुर्देव 🥳 🤚	- Kinsk queti	श्रीमाधकादयपूर्वतृ ः	··· 8 66 36
एलभूता च कन्येयम् 🦈 🥂	" 6 while we	सचिराधपुतः पृथुसनः	R 56 20
रते वर्षे महत्वनम्	3 (8 53	स्टल दृष्ट्यस्मितः	५ स्ट्रीन्स्ट्रीलेक्ट्रक
रश्रस्यच्छः स्त्रेमस्य 🤊	··· Sales Specialization	रहेपुत्रस्तु सार्वाणः	··· 3
रूपस्त्रनमस्केरणान्	- Actual Contract	म्हः बालानगणक	१ २२ ३३
रम्भातिकोत्तनामाश्तु	··· 6 38 65	रिधराम्भे वैतर्राणः 🎺	> my ex my e.

(684).							
रुखेका		अक्षः अभ्या	रहते?	इस्स्माः १०% - ११%		अंदरः अध्यक्षः । दले॰	
स्पेद एखर सोऽथ		Carlot Said	100	यत्सभीतेः प्राशुरमञत्	100	A	
स्पक्रमस्त्रसम्बद्धाः		A Same	18	वस्य लगातानहस्रापदियम्		8 30 9	
स्पराध्यस्यवासुराज		₹ ₹4	56	अस्स कः कोपहेतुः		2 82 83	
रूपेणस्येन देखनाम्	19.8	E Walter	49	चत्रा बता सुबोराणि		१ १२ रहे	
रूपीदार्यगुणोपनः	101	4 200	95	बरसास्टनेनिजीवन्	4.4	A spirit societies	
रूप गन्धो मनो सुद्धिः		1 25	68	यस्माहा दीनवटनाः		4 266 200 85	
रूपे महत्ते स्थितमत्र विश्वम्		. 28	98	वदिष्यायस्तृतं त्रहान्	4 *-	इतिहरी के विके	
रेखामभूरवधादित्व		2 10 2 m	48	यनग्रजि तथा भुजर्	115	4 68 20	
रेणुमत्यां च नकुटोर्जप	-111	16 30 Per	82	यनस्पतीनां राज्यनम्		रूपार्थ केन्द्रिक विश्वक	
रतायाः पुत्रो नगति	461	8 19	13	द्यनानि नहीं रम्बनि	Tell	र्मिकल् मुन्यस्य स्थित	
स्वताल्ड्रिप रेलकः पुत्रः		ញា ស្នំនួន និក្ខា ស។	E 4	वने विचातस्त्रस्य	4 19	्र होता संस्थान होता है। इस्तार संस्थान	
रेवती महम तनगडम्	175	ય વેલ	75	सनं नैतरथं पूर्वे		सार सार्वे अस्त्राक्षील	
रेवती सानि रागस्य		a 24	3	वन्यक्रेहेन गात्राण्यम्	a I ii	े एक्या अस्ति। इ.स.च्या	
रतःपातादिकत्तिः		1,83,946	ાર્ચે.	क्यमप्पेर्व पुत्रादिधः	4.4	ાં કું જેવા કર્યું છે. જેવા કું જેવા કહ્યું છે.	
रवतं अपन्तरे देवः		The Park to	ૼ૾૽ૢૺ૽	असम्मान्यहायः ।	414	P AS AN WEAK	
	FET	8 4	Contract Co.	व्यवस्थितम् राजन्		3 September 18	
रोमाञ्चिताङ्गः सहसा	141	8 45	86	बादा यदि में देवि		र अर्थ अर्थि	
रोमहर्षणनामानम्		THE RESERVE OF THE	- 20 - 20	बर्दा सद ग दान बरुपप्रहिती चारमें		THE STREET STREET, STR	
रोमपादाद्वभू	181	४ १२	36			4 84 88 2 80 C	
रोमपादाबतुरङ्गः	781	8 \$2	95	वरुणो वसिद्धो नागश्च		August 1 of the Party State	
रौद्राञ्चेताहन रूपाणि		ryjana mje s	36	क्रणच्छा-द्रयामारः	-,	4 56 35 10 10 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15 15	
रीट शकरचक्राक्षम्	446	4 4	१९	यरं यहवं तस्मान्यम्		१ १२ ७६	
रौरवः स्कृत्ये येथः		₹ . ₹	ा <i>स्थान</i> ।	वर्ज्यानि कुर्वता शासम्	114	3 84 43	
A 44 44	ক্ত	andle of		वर्णधर्मास्त्रधारयाताः	1.48	A secondary of the	
रुश्चमाणी हो मध्यी	102	e	17	वर्णशर्मदयो भर्गः	. 45.060	OF THE STATE OF	
लक्ष्मकभात ः सुष	751	* * * * * * * * * * * * * * * * * * *	88	वर्णाश्रमनिकद्वं च	110	1. 4	
ক্ত-বাষাগ্ৰন্থ খাৰীऽথ	481	६ र⁴	503	वर्णाभण्डवसवती	114	E CONTRACTOR	
काक्षाणीयस्थानी च		5 8	50	वर्णामधानाणां च	-110	£ 33	
्राङ्ग व्यक्तकत्त्रका मः		5 4	25	বর্ণাপ্ত রূপ ঘরণক		S. R. S.	
लिक्टाणमेलाब्रमहतुः	144	R 5.R	52	यणांसप्रधिन यस्तरः		5 x 35	
रेजेरिङ्कानन्स्य नियमप्		4 28	ą	वर्णाश्रमेषु ये धर्माः	119	\$ 5 66	
लोकाञ्चम्ति सर्वेपाम्	186	र २२	22	वर्गाश्रमच्यास्थता		And the second	
लेकालेकस्वतं रहोलः	- 44	5 8	₹X.	यदिते इसते चैय	412	The Bear FEE	
लोकासिनीधर्मिसैव			Ę	सर्पतां जलदानां च	200	4 3 60	
लोकालोकश्च गएडीलः	***	₹ 6	55	वर्षप्रवासे च बाग्र्यसेवन		8 83 800	
लोभाभिभूता निःश्रांकाः	110	1	33	वर्ष बरेषु रम्येषु	174	Same Action of	
स्मेलुग इस्पदेशस		8 8	₹4	नविनसालु साँदे		\$ 8 35	
7 77	वः	7.5	no, i	वर्षाणां स नदीनां ख		5 55 38	
वक्षरवे स्वरोद्धिकाः	114	£	A.	वर्णातपादिभु च्छवी		3 27 34	
वक्षः स्थलं तथा बाह्	140	2 23	€19	वधितेषु रम्येषु		4 × 44	
बङ्गाङ मागवाजैब	. 14	9 X	E9	वर्षेत्रतेषु तान्युक्षत्		5 8 500 58	
वज्ञपद्वीगर्महागर्भम् ।		1 28	3.5	वर्षरिकारणां भाषांस्		्रेन्द्रिक्ष्यूकेत कराप्रकृति	
यकस्य प्रतिब्बहुः		8 84	85	वलयाकारमेककम्		S at Shapes and	
यस चेद गृहाण स्वम्		વ કેર	toggi.	बस्त्रिक्षपद्भना सम		E CALLED TO THE SERVICE OF THE SERVI	
वसपार्श व संपृती		d g	32	बर्ल्यान्त गोसः कृष्णेन	20.10	4 30 28	
And Mari Aliza Arm		9 74	4.2	hara was mass Second		1	

्यत्से व

(420)

उरहेका:

वारिवादिन स्वकारीः

वायाँभैः सन्तर्वस्याः

क्यांना प्रस्तेदास्त

बातवा बैक्स बदर्श

∌¥ 24 Too. 13

अंदाः अध्यक

Ca.

ं इस्टेन्स

ब्रह्माता मृष्टिकेनैय

ववल्यत्सतो छे

यद्यता परमा तेन

वसनित तत्र पुरानिः

चराति मनसि यस्य

भसति हरि सनादने च

वसर्व मस्तः सञ्चा

बसती पोक्ते तेवाम्

थसिट व होतारम

समित्रशायस परे

वसिष्ठतनया होते

व्यक्षप्राचैर्दयासारे:

यसदेवस्य वातन

वस्ट्रेनस या पत्नी

यसदेवेन कंसाय

वसुदेवोऽपि विन्यस्य

बस्देबोर्जप तं प्राह

करत राजेति फल्लेके

वरलेकमेव दुःसाय

वस्य क्षिमस्दादित्यः

वस्वीकसारा शुक्रस्य

बहरित पत्रमा असे:

वर्धन्त पत्रमा एक्षेः

वहित प्राप्त वायुः

सहिता पार्थिवे गाउँ।

विदेश येऽक्षया दलाः

वहैः प्रभा तथा भारः

क्षारक्ष पीण्डको मुखा

वाष्यश्च द्वरकावाले

वाजिरूपचरः सोऽध

यक्त्रस्य भविकत्ति

<u>सम्बद्धात्रधानेन</u>

जमनो रक्षत् सदा

यामपादाम्बुव ङ्गुष्ठ०

करामानेषु तुर्वेषु

বাস্থান কামস্টর্ভীক

वहिस्याली मनैया

वस्त्रस्य कि कुत्रचिद दिमध्य

लसुदेवसूती तत्र

चसित्रक्षपुत्रेच राजा

यसिष्ठः कारक्केश्यतिः

वसुदेवसा सानकदन्द्रभेः

वसिन्द्रोऽप्यनेन समन्द्रीदेशतम्

यत्मीयन्त्रियोग्दरम्

¥

28 24

٩

Ý.

₹ 13

ż

Ś

₹

₹

¥

ů,

Ę

- 7.4

F13

١

14

24

23

30

4

20

38

10

34

4

36

.4 ₹

2

5%

30

21.

100

53

72

R

\$K

27

X4

¥15

ŢŌ

2

₹₹

175

78

50

40

28

₹₹:

40

3

48

49

30

幕幕

ÇQ.

20

₹

वास्ट्रेबोऽपि दारकामाञ्चलाम यासदेवात्सकं मर जरादेचे गन्हे यस विकासगुर्वरूपैश्च विवास्ते च सम् गोमिः विकासिनेप्रयुगुरू विकासमुखपुरान्याम्

विक्लिकाः सर्वसन्देशः

किमयक भृति पुत्रम

विक्रियमं च एशास्य.

विकितासिक्या देखें:

विज्ञातपरमार्थी ५पि

विञ्चनं प्रार्थं प्राप्ये

विद्याय न स्थार सोकम्

वित्रासमयमेवैटत

वित्रथस्त्रश्य मन्यः

बिहेन गविता पुरुष्

विदिवासिकविक्रमः

चिदितार्था तु तामाह

निरिद्यार्थसम्बद्धाः

विद्रवान्ध्रः शुक्रस्मी

श्रियमा यो यया यक्तः

विद्याचिद्धारिद्धाराम

क्रिक्रियो भवा सत्यम्

বিশ্ববেশনা ক্রমতার-

विद्यो हेमरीलक्ष

विद्यप्रपतितोष्मतः

विद्याक्षिति मैत्रेथ

विदितलेकरपवादस्तानाश्च

विविद्यक्षभाष्ट्रस्य स्थितिक विदेश

विकासि सर्माजन विक्यांनानि चामांसि दियस्य गडदेवोऽपि

विधित्रपीर्योऽपि काशिएकः

...

...

4-

612

अंदरः आजाः (१९०)ः

23 mg

28

20

₹6.

35

43

35

222

16

44

83

Q.

14

18

38

S.

X

34

\$7.

35

4

5>

18

36

26

22

344

33

90

铍

Y3

Tro

ΥŁ

Ę

.88.

... 31

₹3.

13

3%

78

10

34

20

6

26

53

Ę

313

26

36

50.

2

43

39

32

Ę

XX.

F,

28

17

22

X

\$2.18

Ę

à.

4

.

Ł

€

ta, 14

...

₹

20

2 ... 6

(431)

अञ्चः अध्यक् ११वे

\$6 . YY

多个人更有

美一方面を 一面 日本大

विनवायासु ही पुत्री	P#1	2 = 22 . == 26	विवाह न करते भन्नीः	-==	4 52 mxt
विमार्थ कुरुवस्तरम	FFI	र २२, ३०	विकासचे हतः सर्वे -	7	4 -24 *
वितासका न करवामः		4 6 - 56	क्याहे तत्र निर्वृते	***	4 86 80
बिस कोई इक सुरलेक	616	¥ 40	विश्वस्थां क्य सूर्यः	875	301.5 40
विना एनेज समुस्त्		५ १३. १६	विश्वक्रके प्रवित्यम्	210	2 4 48
विविन्द्रोत्यं स धर्मञ्		2 - 24 - 38	विसकर्गा ग्रहाधारः		2 24 225
विनिद्धकानां येदस्य	***	₹ · € · · ४₹	विश्वास्य देवजन्यः च	•••	A 60 50
विनिर्वामुगता बेगाः		4 10 . 4	विश्वसिवधपुकेन	441	\$ 1800 to
विकाशसन्त्रीपसु		\$ 0 34	विस्रवसुर्भेख्यवः	444	₹ - ₹0
विकियसीते करिते	0.10	to the city	विश्ववसून्यसम्बद्धाः		4 4 405
विपरेताने दुद्धा च		\$ 58. 555	विस्त्रमित्रपुष्ट्य		A 30 50
विपर्यमें न तेज़रित		₹ ₹ ₹	विश्वानियस्त्रस्य कथकः	4	4 30 4
विपाटितोह्ये यहुरुन्		4 14 17	विश्वेदेनाम् विश्वामाः	224	t 24 208
विभाषो च कृतं तेन	***	२. १व ः ⊸ः६	विश्वेदेवासापितरः	187	- 3 - 24 - 5 - 48
विप्रस्थेतद् श्रदशासम्		3 22 - 25	विश्वदेशन्तिश्वभूशन्		3 88 88
विदुधाः सहिताः सर्वे	h-4 (विश्व भवान्स्वति सूर्यगण्डसिस्यः	170	9 36 40
विभवारी श्रीरंतसः		\$ 2 32	विवयेभ्य सामानुस्य	1.64	4 3 66
विभू सर्वनते निस्यम्		\$. 4 ES	विषये प्यसम्बद्धाः	4.61	$\xi_{\rm in} \times \omega_{\rm in} \sim -22$
विभूतयह यस्तस्य	255	4,0 8 38	विश्वपभद्रभुषताः,	110	o tepta - tat
विभेदजनकेडज्ञाने	191	\$ 0 . 95	विश्वानाश्रेण सदाहुन्	i na	२, १३, . २६
विधरमञ्जानको ः	157	५ १० ः १६	विद्यानसम्बलमुकाः	4.1	to 34 . 1800
विगरम्बतिरम्बादः प्रश्नाताः	101	३ ७ २४	श्रिष्मिना प्रसरता .	128	. 4 - W X
विमानमागर्तं सराः		५ ३७ ७३	विषुवे नामि सम्माति	600	4 - 28 - 4
वियुक्तवज्ञतनयः		₹: ₹\$ ₹\$	विकारमा रविता मेरोः	and *	8: 8 10
किमुक्ते वसुदेवोऽपि		1 4 m 4 m - 2	विष्ट्रयमे कुशं दल्ला	791	4 84 88
विमोहयसि मार्ग्डाः	***	p. 4	विष्णवाद्यारं यथा पैतत्	2017	₹ ₹\$ ** = ₹
विर णाकोर्यतीयो श	444	34-45-166	विष्णुवर्क करे बिहाग्		6 169 see 86
विराधकरदुषणारीम्	466	X X 96:	विष्णुर्मन्यादवः कालः	***	१ अपूर्वां का वर
34			6 66		

19 16

支持

. 22

2x

∵२२

250

124

33

46

. १२६

70

7. 31

1988

20

विरूपालुबद्धः

विरोध नेतामगळेत्

विहासकारायनेद

विस्थासक्तिकं प्राह

विस्त्रेक्य नुपतिः सोऽध

वित्त्रेक्यात्मजयोद्योगम्

विस्थेवय मधुरो कृष्णम्

विलंबरेका पुत्रम्

विवद्धियमते ह

विवसानुप्रसेनक

विवस्यनुदिशे मध्ये

विवस्ततस्त्रो निज

विषय-स्वित देव

विश्वसम्बद्धिस्त्रीस्त्रैः

क्लियने मध्यहनी महात्मन्

0.00

क्षण्युपादविनिपाता<u>न्त</u>ा

विष्णुसंस्**राज्यस्थितः**

विष्णुरश्चतिके स्था

विस्तुनश्चध्य तपसा

विष्युदाक्तिस्**नीयस्य**

किल्प्रसादादनथः

विष्णुरता तपैवासम्

विष्णुखेश प्रमुखे व

विष्पुरक्तिः परा मोता

किनु प्रसन्ने विसस

বিন্দু: বিদ্যুদ্ধ: দথা

विष्युः ससेतु वृष्यस्

विष्योसस्य प्रभावेष

निज्युसस्परतेन्द्रयदेहदेही

			(4)	??)		
प्री. इत्सेकां ट्रस्थः १९४८	-		अंशाः अध्याः 🔫 २८%	ু ^{িত্} বলীকা ^{্ড} ্ ^(৪)		अंदरः अध्यक्ष े स्टो॰
विकारे सक्तात्परतः	1	140	14 3 14 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	वेदवादविगेधवचन॰	**1	A 50 50
विद्युण्योतिः प्रधानस्ते		17-	क्षिता विकास समामित	केदमार्गे प्रस्केते च	-11	£ 3 2 34
विसस्मार व्यात्प्रनम्		755	4 3 3 4 B 1 5	येदादानं करित्यन्ति ।	gri	इस्तिक विदेश
विम्रजेमस्त्रीतिक्यः		171	3 40 89	वेदाभ्यासकृतप्रीती	202	प् २१ २०
विस्तारः सर्वभूतमः		1-1	४ १७ ८४	वेदान्तवेद्य देवेदा	701	न्यस्तिहा द्वान्या प्रमे
विस्तार एक करियतः		***	र-विकित्त कि है।	वेदाहरणस्थ्यम	101	3 1 1 6 mil 65
लिह्यूयाः कामगणाः			4 minight property	वेदाङ्गानि सम्मरतानि [ः]		S. 55 CA
विक्तारिकाक्षि <u>यु</u> गसः		7-1	4 78 43	बेदारतु हापरे व्यत्य	100	300000000000000000000000000000000000000
विज्ञाससूपभोगेषु		-11	५ २७ ३१	वद्दुमस्य मैत्रेय	100	\$ 10 \$ 10 mg/A
विश्वविस्तु सहस्राच्य		111	१ किलाहर स्थ	चेनस्य पाणी मासिते	***	S 59 Parties C.
बीथ्याश्रयाणि ऋशाणि	-	***	३ ल् १२ ोक्स्या २ े	वैद्यानस्य वापि भवेत्	513	\$ 180 BU
बौरमाखय ते साम्ब्रम्		-1-	५ हुद् े देश	वैद्यस्वते च महति 🐬	1114	१ े दशका २८
वीरुधीपधिनिषस्या		***	\$ \$\$. SA	वैरानुबन्धं बलवान्	***	क्षिक्षित विकेत
नौर्य तेजो सर्छ चास्यम्			ब ्देशकी है।	वैर महति बहाक्यात्		6 6 5
व्काणां सुतां महस्यान्		1.14	५ ३३ - ४	वैवस्यताय चैवान्या	614	३ १५ २८
वृद्धारमर्थसञ्जूता 🦚		611	8 . 600 . 40	वैद्यसञ्ज्ञहादस्याम्	F:=	4 35 48
वृश्कणो पर्वतानां च		553 75	46 35 36 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1	वैद्या सन्द्रासस्य च या तृतीया		\$ 62 . 34
वृक्षादास् तरक्षेत्रम्		100	स् १३ १३	वैद्रात्स्यां च कौशिकप्	***	X - 744 - 7 74
वृक्षारूडी गहाराजः	11		\$ 25.4 \$ 10.00 to 6.8	वैदयास्तवीस्जाः भूदाः	b	62 65 at 65
वृदो नवायं प्रथमं मस्परम्		100	8 3 48	वेदपानी महस्ते स्थानम्	O.	१. कि.स. सम्बद्धाः इ.स.
युर्व वासुवित्रामाचैः		111	्ं १८ ें ३७	वैदयाः वृत्यिविपान्यादि	• • • •	इ व्यक्ति ३६
कृत्यर्थं कातयेसान्यान्		140	व स्थापन स्व	वैष्णवीदराः परः सूर्यः	•••	S MESTER PARTY OF
वृथा कथा वृथा भोज्यम्	1	101	स् व्यक्त स्था रहे	यंदासकीति सुप्राम्	112	2.15.5 · 在5.5 是上的1.6
वृषेवास्माभिः शतयनुः		181	x 53 500	विशानो उत्य कर्नृत्वम्	1.16	8 86 00
वृद्धीऽहे सम कार्याण	,	107	\$ 50 23	व्यक्तस्य एवः चाव्यक्तः	175	ह् अक्षानिक अध्
क्न्द्रक्नमितः स्थानात्		***	4 4 58	<i>व्यक्ताव्यक्तस्यरूपस्त्वम्</i>	***	U 2 - 1 30
वृन्दावनं भगवता		146	F 6	व्यक्तरव्यक्ताविनका तस्मिन्	***	F 3
युन्दाक्तचरं योरप्	11		A 60 80	क्यतेत्र स प्रकृती स्त्रीने	444	5 115 X 1 27 XC
वृषस्य पुत्रो मधुरभनत्	,.	44-	R 58 5E	व्यक्तं विष्णुस्तशान्यक्तम्	- 141	\$ 5 50
बृष्ट्या प्रामिदं सर्वम्			5 65	व्यक्तं प्रधारपुरवी		\$ \$\$ TO
श्रुष्णेः सुधिशः 💡	51		B SEL MES	व्यवस्थानस्य तस्यां सः		C TO WELL AR
कृष्यन्यसम्बद्धाः सर्वप्	• • •	***	# 138 156	व्यतीतेऽद्धंतावे		8 5 to 256
वम्बती सुधः 🤚			A 528 1235 80	व्यक्षे नमस्ति देखेन्द्रे		€8.66 <u>200</u> .58
वेगीपूक्तहे चैकः 🕒			5 mg & 31.86	<i>च्यास्थातमेतद्वह्याण्डः</i>	177	िसमें इन्सन्द्रं मेन विस्तृ
यमुरस्रप्रभेदेन 🌼		157	२ - १५८ मा ३ २	व्याख्याता भवता सर्गः	7-1	多數學 [2]等 [2]的原
बेदबाद्धविदो विद्यन्		161	अस्तिक देवना पुर	व्यक्तिसम्हरू	•••	PQ CENTRA
वेदयज्ञमयं रूपम् 🐔		161	Saper Mary Holical	व्यक्तिष्टं किङ्करण्यं तु	711	्रवश्चित्र अविद्यास्य छ
बेदयादास्त्रध्य येदान्			१ कि है कि	व्यापप्रश्राणि कथितः	•••	15 68 10 10 6
बेदना स्वसुर्त चापि 🖰	.*	461	\$ 100 1 25	व्यक्तिकांचे क्रिया कर्ता	101	A 26 26
वदद्गुरंगता यश	ı.	441	क्षाना द्वारा अध्य	क्यासवस्को च ते सर्वे	421	19 32 00000
वेदिण्यस्य भागत्यः		44,1	2 5 1 8 1 1 1 5 8	स्यासकाद महानृद्धिः	***	हैं की नहीं का कार करें। व
बेदमेक चतुभेदम्	-1		Strate Sees levy	स्योमानिला[मनलभूखनामकय	-11	इ इन्द्रेशकर इइ
वेदहुमस्य मैत्रेय	1	h. 1	कृतिहर कुण्यात्रहरू	अञ्चतस्तिष्ठतोऽन्यहाः	11.1	E W. W. Ca
बेदव्यासा व्यतीता थे		-0.	Latin Sim party	बतचर्याग्रेमीस्मा 🦻	- - 1-1	£ 74.5

(489)

		(4)	(4)		
SECTION SECTION		अवाः अध्यक् वस्त्रेन	र्वन प्रत्येका ३००० मध्यः		अञ्चाः अध्यातः इत्होत
समानि वेदवेदग्राहि॰	ier	፣ ቲ ፡ የፍ ፡፡ . "ቒሪ።	शन्देर्वटा कलन्य च	F1.1	\$ 30 . B. B
वतामां जिपको यक	10	र इंग्लिस	इध्यासमीपे समोरणवद्भवम्	Cipi	Report Burness
नामग्रह यक्तिय	177	्र कार दे क्ष वि रुद्ध	शब्दारनीयधोगश		19 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
बीहर्वस्त्रयया भागः	191	१ ६ २४	शरतसूर्याशुलमानि	40	ૄે પ્ રાથિ ફેઇ સામાર સ્થયે ન
ब्रीहिबीजे यथा मृत्स्म्	•••	२ व्याप्त अस्ता ३७	शरद्वतकाहल्यायाम्	***	8 36 63
37 N N P	হা প	efficients and	ञ्चरद्वसन्त्रयोगंध्ये 🕆		5 July 5 1. 1 1879
र् कपवनक्यम्बो जः	446	A 2 19 4 at , 85	शरणं ते समध्येत्य	- 6-4	26 Cappe 28 15 6 5
शकुनिप्रमुखाः पद्याकात्	100	R. Martin Ser 14.3	शरान्युमोन नैतेयु	100	A. 35 - 53
इत्तानो यस्य देवस्य	44-	5 6 2 6 4 4 6€	शरीरागेणपेश्रांप्		4 4 550
इक्तमः सर्वमाबानाम्		१पाल्≩ प्राप्तः	शरीरे न च ते व्याचिः		表: 2- 更多 2016 · 1 美有
राकि गुरुस्य देवानाम्		३ १९ जाक १२	शरीरिणी तदान्येत्व		व इद
शक्रमसम्परतदेवभ्यः .	175	£ 60 50	शर्मित ब्राह्मणस्थोक्तम्	***	32626 46
प्रक्रमर्के सम्बद्धाः ।	IEF	3 40 20 20 20	श्रायकिः कर्त्या सुकर्त्या	175	8 6 85
शक्तदीना पुरे तिष्ठन्	461	र े ८ ः १६	संस्कृतः श्रीयरः कान्तिः	19.4	REALING SELECTION
प्रक्रं पुत्री निहत्ता ते :	200	रेकानेरे : अवेवे	शङ्गादस्य तस्य पुरस्रयः	***	8 37 \$ 100 . 50
शङ्कुरो मगवाञ्छीरः	***	१ च्य ८ श्युश २३	शस्त्राम्य परितंतान्यक्षे	444	\$ 1.50 3 35
शङ्ख <i>न</i> क्रगदाशाङ्गे॰	481	\$ 45 × 84	इस्तान्त्रेयो महोरक्षा		3
राष्ट्रभारतेन गॅरियन्दः	451	5 55 26	शसास्त्रवर्षं मुखन्तन्	448	वा रह
<u>सह्यक्ट्</u> निमाश्चान्ये	-	£	इक्काञ्चमोश्च र क्ष्	4.00	AC 38 34 186
शुन्ती च सलभाषाची	*15	4 30 38	क्षास्त्रद्वीयेश्वरस्थापि ः	***	S. S. C.
श्चीविभूवणार्थाय	er#+4	d- 30 - x5	इक्क्ट्रीये तु तीर्विण्युः	444	3 8 30
रातबनुरपि सा परिस्थन्य		8 - 43 - 48	इक्क्स्ट्रीयस्तु भेषेयः		SHELL R. ST. 25
इत्तबनुरयतु रावे गाग्	1.55	A -53 - 65	इतकस्तत्र महत्व्यः		5 to 1 to 1 to 1 to 1 to 2 to 2 to 2 to 2
शतकतुरपीन्द्रलं चकर	F 1 8	R. 8 8 48.	काखामेदास्तु तेषां वै	771	34
शतस्यां च तां नारीम्	***	१ ७ १७	इत्याद्भारमाणि अस्त्राणि	777	६ १ ५३
रातवूच द्रभागाधाः	416	3 3 60	शान्तपुस्तु महीपात्मेऽभूत्	***	8. 50 66
ञ्जलोकादश्यमेथदतः	***	x 35 A	शान्तनोरस्यमरसद्याम्	•••	8 30 1 23
राधानन्द्रास्तत्यधृतिः	***	x 36 42	राग्यत भोराश्च		\$ 45
इस्तर्धसंस्थालय सन्ति सन्याः		x 5 66	शारीरं मानसं तुःखम्	414	Same be well
इसर्वन रहिन दिय्यानाम्	n-r	x 3x 55d	राष्ट्रव्यकगदायागेः 🖰	4	4 11 4 20
राष्ट्रकेनाण्यपित्र ः	4	४ ४ १०१	शार्क्षराञ्चलदास्यस्य-	# (#)·	
शनके रशनके ती स्प्		4 80 6	शास्त्रक्षमे महत्त्रभागः		\$ 188
दनिवस्तिर्वयी गोपी	***	५ १३ १८	शास्त्रके ये तु कर्णात	-	4 4 20
शर्ने हरस्तथा शुक्रः	401	\$ 6 88	शा ल्यलेन समुद्रोऽसी	***	£ 100 Russ LA
शप्ता चैवं रहितम्	***	४ ४ ६६	शास्मलस्येष्मरे वीरः	FIF	\$ 5.8 S 54.5
राज्यमध्ये तथाकाराम्	21 6	SE 5 8	शत्मले च बपुष्पन्तम्	144	Sec. 5 63
शब्दादिभिक्षं सहितम्	•••	इ. ८ इ	शायस्तस्य बृहदमः	122	R the Sample of St.
शायादिश्रमुख्यानि	***	६ ७ ४३	शास्त्र विष्णुरक्षेयस्य	124	S 60 100 50
सन्दादिहीनमञ्द	•••	५ २३ ३४	शिक्षिकसाः सबैहुर्यः	***	5 4 5 day 56
पादरी अस्तिति स्तेपाद	•••	र १३ ८६	दिक्षिकां च धनेपास्य	•••	्रं ३० हर
दामीमभ चः धस्यम्	LIS	४ ६ ट्रें	शिविकायां स्थितं चेदम्	***	5 \$3 20

··· ३ १२ ३७ शिनिका दाहरसङ्गतः १ १५ १५३ विनिरिद्रस्तयः चसीत्

·· ५ २७ १ | डिस्स्ले पातु गॉर्जन्द

शर्म नवति यः कुन्हान् द्रान्यस्य च म्हणनाम्

इंग्जोण इही बीट

··· 5 ·· \$2 : 54

\$ 712 - 1.20

्राष्ट्र विकास विकास विकास

		C75	(0)		
् ञ्चलेलाः । १०००		अंशाः अध्याः 🖂 वली॰	्रकेन् हरनेस्त ालस्य इत्स		अंद्राः अध्यः ः इस्रे॰
दिसोरोगप्रतिद्वयायण		६ ,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,	अद्धा करमं चला दर्पम्		35 4 + 0 mg/s
शियाच यत्त्रों नेदुः	(ংলার্ র ভাইর গলাম্বর ী	श्राद्धाईमागतं द्रव्यम्		35 C (X 5 1 - 1 X
शिक्षुपरस्त्रेअपि भगवतः		४, १४ च्या भर	आडे नियुक्तो भुकता वा		\$ 1034 BRES
शिशुपागकृति प्रोक्तम्	***	र ्तेप र ेक्कब्र	औदासा सह गोविन्दः		ন প্ৰসাধ সংগ্ৰহ
विद्युपारस्तु यः प्रोक्तः	Eth	4 23 page 34	औदामार्थं स्तरः कृष्णः		ASSESS TO SEE
शिक्षः संवत्सरसास्य	201	र १२०००३३	श्रीवत्सवधातं चार	FC	4 86 88
दिख्यानाह संभी दिख्याः		\$ 前腹口前:" "	श्रीवत्साङ्के महद्भाष		५ : २० : प्र
शिष्येम्यः प्रदरीताश्च	461	કે _{ન્} ર(૫ વ્યવસર્	श्रीवत्ससंस्थानध्यम्		,पश्चाप्यकृतसम्बद्धाः
्डेतवातो त्स्यकर्तम्बुर	200	€ 70 477000 €	श्रुतकीर्तिमधि केकस्मादः		x 4x x4
श्रीताम्बर कुपुन्दश	814	राजान र पर विका	शुत्रदेवां तु वृद्धभर्म	2	· 1000年代 中国人
शोर्षण्यानि वतः सानि	461	३. ४ १९ ० (स≒२१	अु तअवसमिप	414	8 3 48 3 3 48
रुको रहकानजनयत्	23.5	14·15·18·2016 - 12·4	ञ्रुता भिरूपिता दृष्टा		\$ " The & " The \$
शुक्रकृष्णक्याः पीताः		18 · 19 · 19 (17 · 15 18 18)	श्रुत्वा तत्सकलं केसः		over high the little was
कृत्वादिवीपीदियनादिकीन ः ।		मकेट श्रेष्ठी पुर वेर	श्रुत्वा न पुत्रदारादी		8 28 485
ञ्चित्रवस्थ्यसः स्रतः		13- 22	श्रुत्वेत्वं पदितं तस्य		र्क अरूप निर्माण्डर
ञ्चळाँदक्रान्य क्षिगणान्		\$ 25	सुर्द्धतदाह सा कुट्या		वेश इसाम रहा।
मुद्धे च तारतं मनसि		१ भागे हैं नेतृत्व १३	सूयता नुपद्मार्ट्छ		इ विक्षान सम्बद्ध
सुद्धै महाविभूत्यास्ये	129	૨ મહુમ ાં જ્વાન ા છે?	अूयते चाणि पितृशिः		3 26 20
भुद्धः सूक्ष्मेर्जनस्थापो	F28	१०) १२ हेव्स ५२	श्रुवते च पुर्ग स्थातः		इ १८ ५३
सुद्धः सैक्लक्ष्यते शक्ता	1.15	\$ 88 430	श्रुवन्ते विरवंशिव ^व		रे किंग के
पूनके पृच्छ राजेन्द्र .		दः । दः <i>व</i> ः । दह	श्रुवतां मुनिशार्दूल		hije ako jina
सुधासयः स चित्रस	414	६ कर्ता ७ क र्यक्र ७६	अंतरा सुराशादुर		many significant
शुष्केखणैसाया पर्गैः	440	2 . 88	श्रूयता सम्बद्धिस्थलत्		the best of the second state of
सूद्रस्य संविदशीवम्	4-1	ই শৃত কল প্রসাধিক	श्रुवतां तःत वस्यामि		मानुस्य अपूर्वास्त्रकारः । य
য্ ই ণ্ড হিলয়ুপুদ _{্ধ}		. ६ .०० २००० हेन्	श्रूषती परमाधी मे		200 GA
शुस्याणि मारिषा नाम	1.6	- R- 68: - SE	श्रूपतां पृथियीपस्ट		3 88
श्रुस्य दुर्शन हम		8- 68- 35	श्रेषास्पेवमनेवर्गन		Section of the sectio
शुलेक्करेप्यमान्यसम्		E A TO	श्रेपः फिन्छ संसहे		5 63 48
शृतु मैत्रेय पोकिन्दम्	100	to standard	श्रोत्मिन्छाम्यहं त्वत्ः	- 100 - 100	a all triggs grat(f) rec
शृतोति य इमे भक्ता		A 54 636	श्रीते स्मार्ते च मर्मे	1.	R 38 65
भूगोलकर्गः परिपञ्चसि त्वभ्	100	4 - 2 - 32	इल धर् भीवा ङ् भिहलोऽस	261	6 4 30 3 22 29
शैलानुस्पाटन होयेषु	9.51	Marris English (M	ङ्ख्यकिद्धाणिकोत्सर्गः		3 23 23
दैलिक्कान्तदेखेअप		3 - 600 - 8.85	इलोकोऽन्यत्र गोयते		K
शैलैककान्तदेहीअप		·	श्चाण्डलविह्नुनम्		agt perse
रौट्यसुप्रीवमेञ्चुच्यः	-1.	x 49	क्षफल्कतन्यं सूरम्	101	" - 18 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
श्रीभनं वे मतं क्लाः		shooter hours	श्रकत्करणयः	.4.1	18
र्यं चाचाजतं तत्र	4	Strong Trans	धफल्कादकुरे गान्दिन्याम्	911	R 52 P
शौनकसु दिया कत्वा		কু নুদ্ধ ল ং ই	धमोजनोऽकप्रतिष्ठः		₹ - ₹ - % - 4
र्श्नेरिर्वृहस्पतेखोध्र्यम्		250 c n 400 c p	अश्वश्राम् धिष्ठः		E 8
स्थामाकास्त्वच नीवारः	-1.	१ :::: १ :::: २५	सापदादिखुए हस्ती	113	\$ 100 A 100 A 3
श्रद्धमा चालदारीय :		3 2t	Now to the Asset	118	3 ¥ 38
श्रद्धावद्धिः कृतं यतात्		377,865 37,48	बेतोऽय हरितक्षय		3950 X 1100 33
श्रद्धासमन्त्रितदेतम्	***	3 16 76	हेरा उदुत्तर वर्षम्	119	• २ ३३७०० २ ३- ०० । इ २१
श्रद्धा रुक्ष्मीर्धृतिस्तुदिः	17.1		क्रोभाविति विकारे हु		५ े र्ड ालकेट
अद्यं करनार्वप्राचीकः	17.1	दे- हिंदी स्थित कि देवे हैं।	काभावान खळह तु	. "	.भ ार्षिकारकात्रव

A TOTAL STATE		अंशः अणाः रहेः	THE PERSON NAMED IN COLUMN TWO IS NOT THE PERSON NAMED IN COLUMN TRANSPORT OF THE PERSON NAMED IN COLUMN TWO IS NOT THE PERSON NAMED IN COLUMN TRANSPORT NAMED IN COLUMN TWO IS
11 11 8	1	व्यासमूख्य मानक हैने हैं के दिन	स्सुपूर्ण तु सारधेन
षद् सुताः सुनृशासत्त्राः	17.8	4 138 m 3284	सङ्कर्षजस्तु ते दृष्ट्या
पद्गुणेन उपालीकात्	1.90	8 mg 5-34	सङ्ग्रान्तगतियापि
व्हेब ग्रहीन्यो भुक्ते	441	3 m & m 188	सहेपत्वधितः सर्गः
भृद्धेते मनके उत्तरक ः	1117	The state of the s	स न प्रणिपत्य पुनरप्रेतम्

ष्णद्रश्राचिद्धः चाण्डारः -

षण्यानि दश्युकाः

पष्टे प्रति, जातमाने व

ष्ट्रे मन्बन्तरे चार्यात.

स एव खब्दः स च सर्गकर्ताः

सकलिम्द्रमजस्य थला रूपम्

सु एवं मुलप्रकृतिः

स एक मणके कुनम्

स करपयित्वा वस्ते रा

स्यःस्यवनाधिपक्षप्रश

र करवा खेरभोगेश

सकल्प्रीमदमहं च बागुदेबः

सहरू पुनासू के ईवित्याला

सकरुक्त्रियस्वयस्त्रीयन्

स क्राण कारणतस्तोऽप

संकरम्याद्यसम्बद्धम्

सक्लावरगतीत

स वहरूपस्त्रात्र मनवः

सक्रमेनेच सा प्रोक्तर

क्षेत्र अन्द्रनम्य स्तः

सकुदुसारिते वानरे

सत्यावकवाट्याक्रम

संस्थः पदयतं कृत्यस्य

संख्यः प्रापत चार्यस र गुरू विद्युष्टे सर्वेः

सनारः प्रणियत्येनम्

सम्बोधिय समाध्यानम्

समरोज्यश्वमायाः ।

स ग्रांग्स्यं प्रशः

सम्तोजककमन्याधानुसारिक

ंस वैश्विदसम्परिश्वरू

स खुरक्षरभूपृष्ठः

पटियपीसहस्त्राणि

A digress 55 25

Fried of the E

Y gold from war a 213

227

4 30

34

gar of Garding Provide 1 th 2565

and the same of the

4 Historia

XxxxxXxxhtum\$3

3 - 0 - 253

2 23 50

20

Br. Oak

3. 19 37

Kan and markets

\$ 30 \$. words

6 60 00

F 36 C 1000 \$

4 3% 30

Some of the Post

d 50 6X

4 30 48

1 25

Valuate my VS

¥ 300 8 300 383

X 12 X 12 133

25 0

*

3 . 34

26 80

25

29. 293

Van SY

E . . .

100

11.6

617

...

4.5.30

20

₹¥

205

60

स च बहुईद्धभावात् संचतां खुप्रम् स च तदेख मणिरलग् संघानली तरावर . स चाह रा यज्ञान्येथः

श चारंप तस्मै तहत्त्व

स चानिवकनमंदिः

स नवि राजा प्रस्कात

स चापि देवातं दस्या

स चरक्या नुगयाची

स चापि भगवान करहः

स वाजवित्तपदारे अस्य

स खब्दाल इम्परतक्ष

स खाचर यशा-गयम्

स नितः पद्मीरनाः

स चेक्सक्राष्ट्रकायाः

खबैरुस पितुः सानम्

स भैने सामिने हत्या

सन्द्राधादिविनोदेन

सं जगाग तदा भूकः .

सङ्गास्यपि महता

सञ्ज्ञाननमञ्ज्ञ

स तहेच च तस्त्री

स तथा सह गोपीमः

स तत्क्षदं नुगान्सरम्

स तथित गुरीहासः

स तरह वैब्रदेवाचे

स जगामाध बहिल्दीन्। स इक्ता सामुदेवग्

स देक लगान

स चासहराजः

स बागत्यस्याचेननीयमानः

स न तं समनकमणिम

स च कुकस्यमकरेत

स ब तस्मै वरं प्राटात

स चाप्रिः सर्वतो स्याप्य

स च वं शैलनाश्रातम् स स विष्णुः पर नहा

और : अध्या

3

....

23

35

₹0

m 6

23

\$3

१६

26

38

50

44

. 4

., &

80

28

25

祗

23

54

29

16

22

34

¥2

47

88

140

33

37

83

24

32

94

99

80

. 215

10

44

ĘŖ

. 28

23 Y ... 23 .. 4 30 8 8 W A . 88 8 .20

X 4 83

A . 5

\$... \$8.

2 - 24

¥ ¥....

§ . . E

T 28

S ... \$5. 11. 6 1

\$\$.

4. 24.

25

23

£5 ... ¥.

24

X. 13

10)

चेडगर्गसहस्राण रः च महर्थपन्यं अधिनासन्त स॰ स ईसरो व्यष्टिसम्बद्धिरूपः स इद्देश्यदस्यानगरः स एए क्षेत्रको बहुन् 44.3 leto. 14.28 स एव सर्वभूतस्या

30

(**५**₹६)

सद्सद्धपिणी यस्य

स दंदर्श मुनीस्त्रत्र

सत्तसन्तयमध्यम्

सन्तानकानामस्वित्रम्

सन्तीययागासः च तम्

सन्याकाले च साप्रति

सन्यासञ्जाशयोदनः

सन्धा राजिस्हो भूमिः

संबद्धः खुनीधलाखापि

सन्धियानाद्यायकाराः

सन्मात्ररू**षिणेऽनिन्यम्**

सन्नतिमनः कृतः

सन्धिपातावभूतैरत्

स गंपात इतस्तेन

रापनीतनम् दक्षा

स परः प्रश्नकीनाम्

स पृष्टश मया भृक

सम द्वीपानि पाताल॰

सह मेथातियेः पुत्राः

सप्रविभामशैषाणाम्

सप्तर्पयः खुराः दाकः

सुप्रमे च तर्वेचेन्द्रः

सहवींगां हु यौ पूर्वी

सप्तमो भोजराजस्य

सहमे रोहिनी गर्म

सङ्गरात्रं महामेषाः

सप्तर्याणां सु बस्थानम्

सन्देशसायमध्रीः

सन्देहनिणयार्थाय

सत्तर्वर्ने नगःच्छेदः

¥

7

3.5

38

32

YY

719

44

88

2.2

196

SE.

34

6

इइ

39

78

Ę¥

04

2

YY

38

28

84

34

33

503

22

3

-

27

ξĻ

38

13

ż

88

4

2 44

199

₹ø

₹₹

60

2

85

₹

Y

₹4

1

8

90

3

88

78

3

22

40

38

EE

28

XX

8

53

11

₹

3

27

Çty.

36

23

206

1990

₹₹

3

अंशः अध्याः

4

ų

٤

ŧ

ŧ

4

₹

₹

4

Ę

۹

Ų,

Ę

ξ

3

t. 43

4

Ę

8

ч

¥

X

9

Ų,

Ġ, 8,6

4

₹

*

ę

3

Ŕ

٤

•

٤

ą

¥

4

111

ge s

W.

3

99

2

27 53

30

१२

R

ŢŸ

90

U

G

24

ğ

2

48

₹

Ġ

3

30

٤

99

10

20

30

22

33

13

8

83

3

ŝ

ą

28

₹

₹

28

	३ १८ ६२	स दहन हमः पालम्
100	1 3 58	सदानुषहते वस्त्रे
	ર ૧૫ ૬૫	
187	३ १८ ५५	स देवरचितः कृष्णः
	५ २३ ६	स देवेशस्थारीराणि
	5 65 80	सद्भाव एव भवतः
	₹ 88 \$	सद्यो वंगुण्यमायाति
	वे ५ २१	सद्देषपार्येव पात्रम्
	\$ \$3 X5	स धर्मचारिणी प्राप्य
HIT	१ ५ ३५	सन-दन्द्रयो ये तु
.,.	t 4 800	समन्द्रबदयो ये व
-1.	र ९ २२९	सन्दनावैर्मुनिमिः
• • • • • • • • • • • • • • • • • • • •	१ ४ ४३	स निकारसवमस्तिकः

1

¥

¥

Ý

K

¥

Ę

¥

4

4

۲

ď

¥

¥ X

8

ŧ

Ę

¥

٧,

٩,

4 39

٩,

1.15

13

ۋرا

90

2

14

99

20

8

É

83

30

2

33

34

23

23

83

33

8

27

26

83

33

33

17

इस्प्रेकाः

स तामादाय करपेयम्

स तु सगरतनपराजनार्गेश

सत्स्वान्द्रानशीलोऽजम

रत्सपरतया ऋतध्यजसेशाम

सहस्रकरणीय कीशिकी

स्त्यकर्मणस्य तिरथः

संख्याचीयस्यसम्

सत्यक्तां च चित्रकृदः

सरवाधिध्यायनः पूर्वम्

क्रले सर्व मधैनवयहासना

ख्यानृते न तत्राख्यम्

सत्यं तदादि गोविन्द

કહ્યું રહ્યું શહે પાર્ટી

सम्बन्धियम् सम्बन्ध

संत्रजिद्धि मयास्य मृत॰

<u> ए व्यस्पन्नसी</u> वारुः

सलतादेशे सालताः

ए त्यासतम्पतिः कृष्णे

स स्वामह हनिष्याम

सन्बं प्राप्ति न सन्देहः

सत्वं प्रसीद गरभेहर

संस्थे गच्दा न सन्तरमम्

तं रही कुरम्बधिपेश्यामि

स ददर्भ तही ज्यासम्

संस्थेकदा प्रमुख

एकविटप्यधुना जनधन्त्रना

*सम्बद्धितयम्*नृतः

इत्यं कथ्यासाक्षिति

रख्यं चीर बदस्येतस्यतिहासः

सत्यवतीनियोगार्थ

स ते प्रणम्य इक्रेम

		(વર	(a)		
CONTRACT OF IT		अश्वः अय्याः द्रस्ये	4 TO 1. (7) 1.		अंशाः अध्यक्तः क्लोन
संतर्भिकात्मस्यकम्		₹ ¹ \$ ¹ 1	समुप्रस्वत गोसिन्दम्	111	A 33 Re
सतर्विभिस्तवा चिक्यमेः		\$ 5 m 30	समुद्रतनदायां सु	F11	5 188 mill d.
सहसंबोऽध सनवः		\$ 188° Y	सनुद्धयसामसाच		4 30 96
स्रतमीरप्रभृतयः		¥ 72 4	समुद्धान्यस्य मार्चम्		\$ 50 . 94
सकाष्ट्रदिकार्यन्तम्	rr'	4 85 48	समुद्रानसरितः सैलः	-14	£ 3. 7. 88
सहोत्तं प्रत्यतीराति	751	2 64 87	सपुताः पर्वताक्षेत	•••	5 6 03
संविधकोषिपूतम्		र प्राप्त २०	समेल्य-पेन्यसंध्येग्स्		5 2 3 65
स ब्रह्मञन्तुरम्सर्वान्	***	4 2 83	स ने समाधिकंत्रवासंभिक	- 07	A 5 650.
सभानलपुत्रः	100	* 25 ×	स मेने वासुरेको ग्रहम्		4 38 3 A.
सभा सुधर्मा कृष्णेन		५ ३८ ७	सनः स्त्री च भित्रे च	110	2 23 63
सं भिन्नते केट्सपस्यवेदमयः	400	- 3- 1. 3 . C. 34.	सम्पर्देशयंगहात्मः		6 65 - SK.
समूपृद्धसर्वेतं तु 👙	-6-	d 38 XS	संभ्यश्रियाता सम्बन्धः		\$ 8 56
स मोलर भोज्यसम्बद्धम्	0.61	36 36	संस्थिक्य सर्वभूतानि	1.1"	5 60 52.
समस्तती वैद्यानान		\$ & C 43	सम्भतिति तथा भती	144	E 4 08
सण्यार्थान्युतं सम्बन्	440	8 6 86	सम्बद्धीत वतोज्ञमंसि	614	१ र ४२
समस्त्रितं अहं च		5 9 69	सम्मारणभूप्रकाद		\$ 55 88
सम्बद्धान्तियनस्तर		8 4 58	सम्भृते चार्थमासेन	£ 1.4	4 1 44 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1 1
संगळावाकिरूपाणि	щ	E-15. P. 12. 105.	सम्मादना पर्य हानिम्		२ १३ ४२
समस्ताः शक्तवस्ताः		£ 6 00	सम्मानपन्द्रिज्ञवयः		4 30 50
समस्तकल्याजगुनातमकोऽसी	112	£ 4 68	सम्बक् न प्रजायलनम्		x 40 . 34.
समस्य सहयेऽन्मासि	2.12	4 3 58	स बदा गीयनाभीगः		4 500 11
समसाभूभूतो गाँदः		५ ३५ २६	सरहस्य धनुष्टम्		५ २१ २१
स मनोञ्जयनाधर्मामः	60	4 56 6	स रचे प्रशिक्षितं देवैः	817	₹ ₹0 ₹
समस्त्रजगदाबादः		4 0 44	स राजपुरस्ता-सर्वान्	61.6	\$ \$6. 35.
स मस्तक्षक्रवर्ध		A 5 3R	स राज्य दिनिकारुदः	***	२ १३ ५३
समस्तावयवेभ्यस्त्यम्		5 53 503	सरित्समुद्रभौमास्तु		२ ११
सम्लब्धनेन्त्रेतः च		6. 16. 01	सरोक्षान्याणान्		\$ 5R 5
सम्बेतः जगर्यः स्मन्		र रेप रेपप	सरोक्षक म्यास्तवे		4 63 36
समस्त म मदा जीर्णाः	***	र १३ ७९	सगेष् रिवंदर् गैश		इ ८ ३५
सगलेडियसर्गस	201	\$ 48. 35	सर्गश्च प्रतिसर्गश्च	ann S.	इ :ा इ
समस्त्रपूर्वादमस्त्रदरस्वत्		x 5 5.55	सर्गश्च प्रवसर्गश्च	738	\$ 5 69
समस्यापि पारभुगार	140	x 46 86	सर्विकेदिनिना सत्तान्	444	1 3 8
समाप्ते चाम्यरपते भीने		8 4 16	सर्गिलक्षिकात्रानाम्	147	A 50 50
समाधिवद्यानवगरार्थः	-51	x x 44	सर्गकागस्ततो विद्वान्		१ १६ १०२
सम्बद्धितम्बतिर्मृत्व		र रद रद	सर्गरिवदिविनासंस		\$ 2 80
स मातामहद्येण	427	१ १३ १२	सर्गप्रकृतिभवतः	411	\$ \$ Ax
समाधिभङ्गस्यसीत्		5 58 56	संगद्धि प्रस्कृभ्यो ज्ञस्य	4.0	र ११ १३
समागच येखान्यायम्		३ १८ ६०	सर्ग च प्रतिसर्ग च		३ ः इंद्रान्त रहे
सम्बद्धिय ततो प्रेयम्	.,.	4 85 88	सर्वनाचेऽभवन् सर्वः	-4-	\$ 4 80
संधानपीठनं पेतः	g	क १ २३	सर्वजातिरियं क्रूस		પ છ છા
सम्। च कुरु सर्वत्र	***	४ १३ ८९	सर्वभूतात्मके कर्त	1-9	5 56 50
समितुषकुशादानम्	E11	₹ं १३ ं ११	सर्वेद्यापिन् जगद्भप	, de	\$ \$5 38
समुद्राह्म नदीहीक	***	4- 3 13	सर्वपूर्वास्थते तस्मिन्	****	\$ 60, 06.
संस्कृतकर्ण गाति	•••	R 5R 485	सर्ववासी समार्च प	414	१ र २२

अंशाः अध्यकः इस्के

२ २ व

Y 30

ব্যক্তি দেৱ প্রতি

111

सबतो सुर्तिमान् भव्यः

- HELDS ALGE (\$100)		otell: Staffe - Addle	The State of the Party of the P		अस्ताः आब्दाः इस्त्रः
सर्वस्थिनसर्वभूतस्त्वम्	440	tonte, mobile	स्वरूथः सानुकर्यः		२ ार्वेन्द्रकार्व्यक्ष
सर्वमापुरयनीदन्		£ . K \$ E.		F11	4 34 38
सर्वभूतमयोऽभिक्तः	4	\$ provinces \$	सवर्णकात सामुद्री	114	2 28 00.6.
सर्व एव नहाभूग		8	स वा पूर्वमण्युदारीक्झमः	.,-	A SR RE
सर्गभूतेषु सर्वात्मन् 🦠	6.4	t 29 195	राजिकारं प्रधाने च		7 27 55
सर्वगत्बदनन्तस्य		7 89 54	स विदेहपुरी प्रविवेश		¥ 23 - 207
सर्वभूतेषु चालेश		8.00 3 Fee 12 19 3 34	सचित्रसस्मिताधारम्	***	4 10 29
सर्वशक्तिमयो विष्णुः		18 - 38 mm 48:	स विषयसप्रयाजेन		4 00 319 000 04
सर्वस्थाधारभूतोदसी		रेज्यार्थकें कुछ्क । पर	स इलाव्यः स गुणी धन्यः	100	\$ \$
सर्वतुंसुखदः व्यक्तः		₹	स सर्वः सर्वविद्यसर्वः	4-1	\$ price & separate 80
सर्वश्रक्तिः पर् विष्णोः	3.16	7 n. 82 - here 15	स सर्वभूतप्रकृति विकासन्		grafi an Art f. 44.
सर्वविद्यानसन् य त्रः	***	रेकारदेकालाक्ष्रयः	सं सम्बवसितः सर्वः	***	4 (\$4,000
सर्वभीयस्य सन्देशः	2.6	4 20 39	ससम्बमस्तमाद्धेक्य		1-20-
सर्थरूपाय रोइविन्त्य	451	4 166 88	सस्यः पुष्पदर्यान	118	A CONTRACTOR
सर्वकालभुपस्थानम्	141	3 32 308	स सृष्टा मनसा दक्षः	Lin	2 24 95
सर्वधेश जागत्ववे		५ ं देवलावेक	सजी स्वयं च तन्यकी	-in-	35 - 39 8
सर्वम् गारतं कुर्यात्	1.11	\$ p. 6000 1860	सहस्रमेकं किन्द्रशाम्	110	4 26 24.
र्व्यभुक्तवभेदेन		₹ ⋼ ं१६ – ₅ॢ⋧⋗	सहस्रक्को भगवन्यहाभा	110	4 9 00 79
खर्वभगसुधर्मा च	199	के उन्हें उक्ते दुर केर .	सहदेवासोगापिः	• 17 (**	¥ 33 ¥
सर्वज्ञातिभसमानि ,		de 189 1 38	सहदेवता विजया	tion of	8 90 89
सर्वमन्त्रनारेष्ठेवम्	181	3 16 4 - 37	सह जाम्बवस्या सः		8 18 4
सर्विनेत कर्ली ज्ञासम्		\$ _ \$\tag{8}	सहज्ञनिरपुत्रक्शतनित्		¥ 22 €
सर्वयदनसङ्ख	***	५ व्यक्त	सहस्राजितसम्बद्धाः		× 32 4
सर्वस्य धातासर्थिस्यस्यम्		¥	स्कृतकोषां कुत्यः	h11	\$ -\$3cm; (48)
सर्वस्पेव हि भूपाल		3 ≈ ₹3 ° ± , ∠₹ ;	सङ्ग्रह्ममाग्रह्ममा	LI :	₹ %€nges\$4
सर्वसभूतो देवासम्	1.6	4 3 57 36	सहस्रहाहितापेदम		Burger Branch
सर्वात्पकोऽसि सर्वेश	40	१ १२ १० ७२	सङ्ख्रस्कपि विप्राणाम्	144	₹ pr.\$NoberoNA.
सर्वातरनसर्वभूतेज्ञ		\$ 25 5	सह ताभ्यां तदाकुरः 🖟		4 . 86 . X
सर्वाध्यवे वन गरवा	144	\$ 8× 33.35	महास्त्रपशु संसर्गः	•••	\$ 24 200
सर्वाणि तम् भूतानि	177	E 14 69	स हि संसिद्धकार्यकरणः	-17	Sec. 30. 3
सर्वाधांस्वमञ्ज्ञ विकरपर्वाधरेतैः	111	4 36 44	स है देवादुरे युद्धे	***	4 - 23 23
सर्वाभिक्ष ताभिक्तवैष	***	X		114	4 - 24 - 24
सर्वाका सर्वीकसर्वः	***	9 - 84 - 1 - 8			1 84 90
सर्वा यशोदया सार्वाम्	61.1	9 9 25	र्फेड्यज्ञस्थतां निप्राः		₹ % £ 200\$
सर्वेश सर्वभूतात्मन्		? 9 40	सद्भाश चहुते बेदान्		4 28 23
सबैदेतेषु कर्वेषु	144	₹ ₹ . ५६	सागरं चात्सकप्रीसत	111	X X 35
सर्वे च देवा मनवः		San San San	सा च वहवा शतयोजन॰	177	Yo. 33.
सर्वे चैते वर्श गान्ति		3 - 6 -	सः च देनैवयुक्तम		¥
सर्वे तेञ्चागतङ्गाना -		t 0 to	सा च कन्या पूर्ण इपि	118	× 13 116
सर्वेषेतेषु युद्धेषु	- 60		सा चावलेका राष्ट्रः		¥ 18 -34
सर्वेपामेन मुतान्त्रम्			सा चैन रसात्रकम्		* got proje;
सर्व देहोपमोगाय		₹,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,,			4 70 mgt
सबनगढी है अजिनके हरी		× 23 209			₹ - ₹₹ 11.8¥

४ १३ १०९ सा तत्र पनिता दिश्

३ 🖟 🤻 🖟 २३ | सा तस्य भागी विताम्

14

100 H

सतिनुत्त्रमदासक सा तु निर्भिर्सता तेन

स्वाध मा किमनत्तेन

साध्या विश्वेऽध मस्तः

साम्बंदिकपकृद्ध-थ

समुरमध वस्ते बुधः

सहस्वनिकादयी वह ते

सत्बद्धयं नम् सनः

सापि विद्योचे सम्माने

सापि ताबता कार्ट्या

सान्धेदतचेइञ्राद्धा

साम चीपप्रदान च

सहन चोपप्रदान च

सहस्रपृतं च रेतेयाः

सामग्रहाची भगवान

सामानि जगतीकस्यः

साम्बनसर्वकोकस्य

साधतं च जगत्स्वामी

सा यदा धारण सहस

सारं नमस्त्रगोपस्य

स्वर्धकोटसाम् स्व

सर्वर्डमार्डिडिस्सुसस्य-

सहस्रमाने महायोगः

सावर्षिक् भनुवाइसी

सार्वातिमण्डलकास्य

सक्तं च तं निहस्य

रिस्त नी लग्नेद मे देन

सित्दोर्यादिनिइडोर॰

सिम्ब्लो निजशन्देन

ति-पुतरदायोक्टेर्ग.

साम्रतं महीतरुञ्जाबिशवि॰

सामध्यें सति तस्यान्यन

साफल्यमङ्गोर्युतमेखद्र

साध्विदं प्रयापहरादितस्य

साथु मैत्रेय भर्मज

(438)

KE.

30

63

33

83

36

99

ġŧ,

\$ 20

A. Oak

20

34

213

134

33

You

64

88

13%

68

42

53

38

35

Ç

A.

3 60,84

17 Page 18

52

.83 88

सा तु जातिस्मर्ग जहे		3 . 26 . 48	सिंहास्स्नगतः इसकः	
सावधितती सस्य पापा	***	4 96 4	मिहिना चाम्प्रस्टिक	***
सन्दीपनिरसम्भाष्यम्	11.5	4 38 83	सिंहः असेनमवधीत्	777
साहिद्रीपसभुडाक्ष	11.5	e 5 40	स्रोतामयोक्तियं जनकः	
साधवः श्रीणदीवासु	- 111	₹ 99 €	सोता चारकनन्दा प	
माध्यारम्यनं अनम्	to a	१ ३१ ४६	रागन्त्रेजयने वैव	
साधितं कृष्ण देवत्नाम्		4 17 10	सीरध्यनस्य प्रता	-
सामु साधु जगन्मध	***	4 35 . 29	सीरध्वजस्थापत्यम्	
सक्ष्य साध्यस्य ऋपम्	674	8 6 08	सुकुमारसंज्ञाय बारम्बयय	

24.

30.

Ŷ.

4 . 66

50

. . .

36

24

.33

.. 6

2.39

. 23

支援

30

. 3

A .. 3K .. ES.

110

...

40.

100

F2.5

सुक्रमारसञ्जाब बारक्षप्रव सुक्रमारतनुर्गभ

सुकुमारी बुमारी च

सुक्षेत्रक्षोत्रमीव्यक

सुष्युः सोपमानी त

सुबादयसमानदः

स्गर्भवदावार्यम्

सुटक्ष्यस्या कन्यः च

सुत्रामाणः सुकर्माणः

सुनुमस्तु स्केप्धंवनस्यट

सुत्रीरतेर्जातः

ल्हासत्सीदासः

नुधनुर्वहपर्यक्रित

स्थल्य प्रस्तुहोत्रः

मुधामानस्तथा सरवा

मुधाना राह्नपार्छेय

सुनीभा नाम या कन्या

सुनोतिसीय ते माता

सुरोतिनाम तन्मता

स्वोतिनीम या स्थः

लुगेश तानुपरिव

लुरेषु नेषु अतीय

लुप्रभागाच्य रचनी

सुप्रसप्तादिस्यवन्द्रादि-

सुबलात्सुनीतो भवितः

सुवारुप्रमुखांश सपम

सुमदायः कार्मकरदेवीर

सुपतिमार्वतर्थं स्थप

सुंधु स्थानहरू

सुपारास्पृष्ट्

सनिवातेनु देशेषु

स्वं मिद्धपंतः कॉर्नेः

स्टालकोस्तदनयेश पुषः

युक्तयुद्धक मया सर्वम

64 3 050 X

£4.

214

Service Comments

X 24

25

3 mg 8 ...

4 28

25

77 X

F 63

19 ... 1

or was A

\$ 33

4 20 86 3000

¥ 14

¥- 20

Trans.

A 56 X

1

48

अंशाः अध्यकः इसके

225

426

225

4 . 18

3. 34

th.

अंशः अप्यः

PLANTE

天帝东。

सुमति: पुत्रसहस्याणि

मुस्तिशक्षियवीध

सुरह आयमञ्जूष्ट

सुमति भैस्तरमाभूर

सुपेक जिस्के हैं ब

धुबोधनस्य समयाग्

सुरम्याणि तहा लासु

सुर्यभवित्ता वैश

सुरस्त्रमा सहर्र तु

मुगसुगन्ध**बंदश**्

मुख्ये बहाद्य हर्ष

मुख्यार प्रहारेश

मुर्खेचदीयका गणः

सुरुच्धिः सत्यवाहेदम्

सुनणं अन्यूणां भ्याम्

सुक्ष्मां हु कल्यम्

तुर्हालो भन्ने भनन्ति

मुदोबादको पे स्ट्रम्

सुद्दमातिसु ६मारिक्ड्रप्रमत्य

मृतनात्रम् गुणानित्यम्

सूदयान्येत्र देखेन्द्र

सूदवंदापसानुबः

सुर्वस्य बंदयः भगवन्

सर्वस्य पद्धी संज्ञाभूत्

सूर्परस्थिः सूनुत्रः यः

सुर्याचन्द्रमधी तहराः

स्वदीन दिश्येत

स्याल्येपातथा भीगात्

सूर्वादीनां च इंरखनम्

सूर्याञ्चलतितं वापम्

स्येगा खुटले यश

सुजल्येष जगतमृष्टी

सुन्यते भवता सर्थम्

सुन्यस्वरूपगर्भास

मृज्ञयात् पुरङ्गपः

सुबें हादशिः शैप्यान्

सुरोटकः परिवृतः

मुवर्चरः तथन्द्रेषः

मुक्तिमाना सरी

सुबद्धेः केवरः

मुग्रेश सकल्यस्यारीः

मुरासमस्त्रास्तुरन्द्रध कार्यम्

सुमतस्त्रेजसस्तरमञ्

सुकत्त्रसासा पुत्रोऽभूत्

23 \$33 4 곡

3.4

₹

314

33

१ऐ

22

6

3

2

28

Y

33

58

7

27

3.3

20

tt

44

ď

X

₹

Ŕ 8.0

4

₹

4

2 33 2 1

12.

25,

6

10

Ç.,

36

19

48

BY

76

1

EX.

25

Ę

Ę

2

??

99

19

13

₹8

78

50

107

394 94 43

(430)

TOPEL

स्टिन्धितिकत्तरानाभ्

8 U.S.

स्टिक्टिश्यस्तकरणीम्

52 X3

हृष्टि नित्तयतस्य

सोप्रीय तत्स्वाल एवान्यैः

रहेप्रयि पौरवं जीवनम्

मेप्रश् के लेक्कपण

श्रीप्रध्यतीन्द्रक्**मारमेग्य**

सोशयेनं ध्यवसङ्गास्त्र

क्षेत्रधानं मुख्ति। मृद्धि

स्रोगदत्तः कृशाक्षत्वाशे

सोमसंस्था हविस्संस्थाः

स्रोपस्य भगवान्यचीः सोमावरं न्यन्युवायून म

स्रोधानारः वितृपापः

सोम पञ्चदरो भागे

ग्हे अगेको वथा येदः

न्येज्यं येन्द्र हरता धोराः

मोज्य त्यस्य दत्ते मे

सोऽयं स्तामजः सूर्यः

स्केश्यपादन निरङ्खुः

सोज्यमिक्समि धर्मञ

स्रोऽमं यः क्रालियं नागम्

सोऽद्गीनच्यांम तच्चीतुम्

सोऽयं सोऽयंगितीस्कि

रहेमदतस्यवीय भूरिः

सोमञ्जन्तुः

सोमदर्त सर्छ चैव

सुष्टं च पारवनुषुगगर् सेतुपुत्र अस्टअनामा सेन्द्रै स्टामिवसुगिः লৈ থকা বিভাগী স सैश्यानुहिकेशध রীয় ব শিক্ষরতপর্যা: सैंग किन्तुः स्थितः रिथत्सम् सैर प्रमन् प्रामकी सेवा भागी विधानी क सं प्रतिकारमुपाराध्य सोर्जयस्यः महतकपम् खोऽनपत्चे ऽपतन् सोऽपि च रामतिद्वयितस्करः सो प्री प्रकेष्ट्री यक्षनः

ų 7 ¥ ş ζ Q ¥

47 4 314

1

CY

43

٧ŧ

Yo

25

57

N.

43

13

20

Š

¥

জায়া: ডাম্বন

*

ŧ

35

23

13

₹

£15

Ę

ŧ

33

8

13

24

37

?E

Ę

23

4

80

₹₹

34

₹6

34

99

35

११

24

13

¥

30

32

44

80

10

2

×

Ÿ

¥

Ş

7

3 ŤŔ.

4

40 37

999

25

44

22

24

76

78

4.4

93

¥ 8,

स्थानेनेह व नः कार्यम्

स्थाप्यः कुवलवापोडः

Commission 38

88 July 38 - F

		-1-3	56)		1 A 1 A 1 A 1 A 1 A 1 A 1 A 1 A 1 A 1 A
্ৰু তীকু ্ত্ৰ লাহ		अञ्चः अध्यक् राले	्रहरो णस ्द्रक्ष पहार		क्षंत्राः कष्याः इस्के
सोऽहं त्यां ऋणम्यारभारभारभेशम्	***	4 . 4	स्थालीस्यानीययंग्रीत्वार्		S 322 - 13 de
सोऽहं गन्तान् वागना	***	2 24 - 24	स्यायराचाः सुरागास्तु	ner '	25 Sec 145 2015
स्बेध्दं न जर्जनस्थान		\$ 64 101 100 0	स्पत्ना कृमपञ्चन		₹ \$1×12.3×
रकेइदं तथा कविषयम्		2. 88 . 78	स्वर्शनको तु व वायुः	***	3-1-1-3-1-1-43
सोश्ह बदान्यसेवं ते	4	t standate	स्थित विदेहचेछाते ।	:-	parita materialista
सोऽहे ते देवदेवज्ञ	***	4 . 5 . 60	स्टिती स्थितस्य मे यूप्ताः	***	3 10 83
खोऽहं यास्त्रमि बोकिन्द	861	4 25	स्यूकः मध्यास्त्रया सूक्ष्माः		45.50
खोऽर्द साम्बदगायातः	PH -	The state of the s	स्यूटीः सूक्ष्मेसाया सूक्ष्मः	•••	Berlind & States
श्रीभ्यःसीर्म्यस्तदा शान्त्रः	14.1	18 20 1 24	स्रातस्त्रगाह्यभूवप्रोतः	•**	3 - 22 - 220
सौरापुरवन्तिः		N 28 N	स्रातस्य स्रीहेले यस्याः	APT 1	8.78 June 2000 F
संख्यानं पादवानाम्	***	K RATES	आतो मानुसस सम्मार्जन्	114	39 29 miles
संद्रापने येन तदस्तदेषप्		₹ (4 cm 60	खातो यथावासून्त्र्या	110	112 mg \$\$ 4 5 mg 185
संज्ञेयांमस्ययार्कश्च	114	3 5 3	ञ्चानमेर प्रसाधनहेतुः	,	X 25 8 X 27 5 43
संबरणात्कुरुः	F-14	X 43 11 15	स्रामिक्ष्युद्रम्पास	COP.	2 4 218
संघतरं क्रियासीः	***	\$. 16	स्क्रमायसानं ते तस्य		अकेट करें अस्तरहरू
रत्यत्सर्ह्यु प्रथमः	***	9 6 99	श्तुनं भूतं चरि यता		₹ 11/5/25/24\$
संयक्तरावद्यः पञ्च	717	30.00	स्बष्टे कानं सबैहरूव		3 44 85
संस्थिक रूथा वायुम्	***	\$ 35 78	स्पृष्टी नस्त्राणसा बाध	100	4 3C 88
सम्बरपतितस्येकः		4 28 - 32	स्पृष्टी यदशुभिलीकः		\$3400 Aggress \$3
संसिद्धार्य तु वातीयाम्		James Adres of RR	स्पर्धेटकांगेलिशिकसम्बद्धः क विष्णुः		3
संस्तृतो भगवानिस्थम्	1 10 10	4 38 m 1 8	स्नरतस्तस्य गोधिन्द्रम्		\$ 50 X\$
संस्कृपमानी गोर्थस्तु	411	4 8	स्मराकोषजगद्गीज॰		18 m 18 m 18 18
संस्कृत्व प्रश्निपत्येनम्		44.83	समर्थतां लग्नहाराज्	***	3 36 48
संदिवात्रितयं बक्रे	***	\$ 250 X . 150 53	स्मारितन यदा स्थकः	***	\$ 25 49
संहादपुत्र आयुमान्		\$ -5 - 5 Feet - 5	स्मृतजन्मसम्बर्धाः	•••	3 24 mm.CV
स्तुमस्त्रदर्णस्यङ	446	R 50 133 months	स्मृते सकरुकस्थानः	***	ખ _ા ૧૭ ાત ૧૭
स्तर्व प्रचेतनो विष्णुः	261	\$. \$x	स्यम चक्कमणिरत्ममपि	***	XXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXXX
सुखेऽहे यत्वया पूर्वम्		4 . 3 . 28	रामनकं च स्त्राजिते		४ १३ ६२
सुर्वाच मुनरः सूर्वम्	E11	5 40 - 30	स्राप्टरं पीतवसनम्		d 38 60
सुर्वान्त चैनं मुनवः	***	\$1 -88 miles	स्रश स्वति चलानम्	9.50	8 13 mg 50
स्तुवतास्य नृगतः	E11	\$ 1882 S 38	स्तृष्टा विष्णुरियं सृष्टिः	20.4	8 66 6 38
स्तोत्रस्य चाष्स्राने ते	611	4-91.89 1 1.70 844 1	सुक्तुण्ड सामस्यरधीरनाद	11	\$ 1917 X 1917 3X
स्तोबेण यस्त्रश्रीतम	10	OF5 9 9	स्वकीयं च प्रीयगम्	F 211	A 50 10
(स्रदोऽनुकम्यास त भूतम्	11-	A more than the second of the	स्वधर्षक्रयस् तेषाम्	491	3 84
क्षियः कली भविष्यति।	147	Constanting	ख्यमंत्राष्ट्रियेयन	4.64	Samilanda 34
स्रीलपेबोपप <u>ेपहेतुः</u>	15.5	1 1 38 maria	स्वपुरुवमामवीक्ष्य पाशहसाम्		\$ 250 3 Geo \$8
स्रोत्सदगुरुचिकाहम्		4, 20, 11-64	स्यूपोकणपर्यः सुद्धाः	252	€
स्वीभिन्देश सानन्दम्	17.0	4 39 - 13	स्वयंयो कृते सा तम्		\$ 36 68
स्रीवधे त्वं मद्यापम्		1 13 65	खब सुब्रुक्गाद्धम्यात्	***	₹
र्वा सहस्राण्यने वर्गन	185	4 34 48	सर्गस्थर्षामसङ्ग्रहे		\$ 5 to 25 38
स्थानप्रतीन चार्यात	***	to 19 103	खगाँचे पदि यो सञ्ज		₹ 35 25
स्थानास्थानं दशगुणम्	•••	र्वकार्यका क्रम्	स्वर्गापवर्गञ्जासेकः	•••	\$ 3.5
مرينانان والمراجع		3			

स्वर्गापयमां मानुष्यत्

५ ३० २३ स्वर्गाक्षयत्वमतुलम्

... 4 5 38

स्टोकः

इस्त गर्वसमास्यः

हत्त्व्यो हि महाभाग

श्रमें य कुरुनिय

(433)

अद्धः अध्यक् इस्तेः

\$ 1. 4. 1. 1. 5 ¢

\$ 55 36

रुषन्त्रस्य क्रश्रे	HI K	2	१२ २१	इन्पतं इन्यत्यमेषः	2.7	- 2	23	50
संबंधितु स्वी	mé.	il Track	\$ 34	रूप सम्बद्धार	978	3		
स्वलीकार्याः रामाणि		3	4	हरित परभनं निहन्ति जन्त्	***	3		- 36
स्थात्यमेतत्वारणं वदयम्	416	¥ .	१३ १३२	हरा ब्रह्मपश	100	*	14	\$55
स्वल्पन्युद्धिः पर्कन्यः		1600	6 65	हरियामीयने नाम	121	4	le i 💆	1.0
स्वल्पेनेय हि कालेन	are.	-	88 31	हरिशहुरशेर्युद्धम्		4	33	. 55
स्वरूपेन हि प्रयुक्तेन	10	116	. \$	स्ररियमस्वराधिताङ्गिपदाम्		4	9	1 1. S.C.
स्तरपेनैय तु करहेन	247	Cart.	\$ 20	हरिणी तो विस्तेवसाध		. 5	13	3,6
सन्तर्भगर्या परन	***		98 09	हरिता रोहिता देवा:	Les	3	₹ "	3¥
सर्थायं बाङ्कं सोऽप	•••		4 .	हर्वभेषय नहेचु	222	₹	14	26
रास्त्रस्तु ते गनिष्यागि	400	4	16 58	हर्षह्रक्रदहरचः	444	¥	35	3.5
सस्यः प्रशास्त्रीयतस्तु	414	9	\$\$. \$\$. हर्षप्रायमसमार्ग	4**		80	45
स्टल्पः प्रज्ञा निरातकुः	***	₹ "	२- ५४	हरूं च बलन्द्रस्य	190	e,	55	* *
स्थानन्सम् ततः कुर्यात्	50	3 7	११ २२	स्वयंत्रत् पदातेचे	***	*	68.	₹ 7
स्तरकोदिका	457	5	Y . C.	इतित्वा-सुन्द्रसात्यः	171	2	. 5	50
साद्दकस्य परितः	me:	₹	A 43	इक्लिम्सरामासेल्		3	\$ E. "	1
स्कार या याचेठासरम ्		3	tt 148	हत्त्रसंस्थर्यनाचेण	100	4	13	₹ .
स्त्राप्यायसंस्थानयां स	***	•	६ १	हस्त-नस्तामहस्तेयम्	***	4	# 3	34
स्थाध्यस्याचीयसम्बद्धीत	407		8	हस्ते तु दक्षिणे चत्रम्	111	T & 1	\$3	150
स्वध्यायजीयहत्तीपः		T.	U 30	हरतेन गृहाः वैकिकाम्		4	\$3	40
स्वयम्भुवो मन्ः पूर्णप्		4	£	सक्दरस्यक्रकः:		*	58	27)
स्वयम्पूर्व तु कवितम्	· wit	4	A	हास्प्रहर्स विपयनहो	100	*	35	₹ €
साराचग रा भगर		3	\$ 58	इस्ट्राइस्ट जिपे गस्य	***	ŧ	36	4
र्साकरणमेश विवाहरेतुः	-	¥ :	88 C8	इस्टब्स्ड विशे पोरम्			35	Ç.
सेनैत कृष्णी स्थाप	700	4	38 09	सक्ताचे महास्त्रे	111	4	οĘ.	33
संसंगे पुरुष देशम्	***	4	३४ ४६	सहन्कारी महाजाहे		49	50.	83
in .	8.	11.50		स स कासविते जनः	7011	44		78
हतनी में हतनिय	387	4	৬ ৬	रिडिम्ब घटोतानम्	wind	*	30	84
इतेषु केर्रन		· ' b ₁ · ·	4 . 95	हिते मित्रे क्रिये काले	600	8	13	3.8
इतेषु हेषु देवेन्त्र	***	Market 1	१२ २२	हिमवान्त्रसमूदध	6.4	2	3	. 55
हरेषु तेषु काणोऽस्य	104		\$\$ L	हिम्बलयं स्थायगुर्भाष्	ke e	\$	43	4
रते वु सरके भूगः		4	? \$??	हिमाहवं तु ये कांग्	761	₹.	ţ,	50
हता च लक्षण रक्षः	***		१२ ४	हिमान्दुसमेवृष्टीनाम्		4	. 4	Śø
इत्या तु केशिनं कृष्णः	•• 9		१६ १६	हिर्प्यमान्यतनयः	714	5	4	3,6
ह्त्वादाय च बन्तांग		THE PARTY NAMED IN	\$6 50	हिरण्यगर्भदिषु च	114	6	្ស	41
रजा कुत्रस्यापीहरू	100	47	\$0 8E	हिरण्यकदित्योः पुजाः	4-1-	H.		190
हत्त्व यर्थ सनागरकम्	***		रेष १०	हिरण्यक्रियोः युगः	***	1	54	5.83
हत्वा चिक्षेप लेक्स्	= = =	-	60 E	हिरम्बद्धीस्पृते व	828	¥	14	Ę
इत्य सैन्द्रमध्ये हु			१५ ६९	हिरम्पनापस्य पुतः	111	X	K	\$06
हत्त्व मुर्ग हरामीतम्	***		२९ १९	हरण्यक्राध्यक्ष	443	-	€.	5
हत्त्व तं पीच्युकं श्रीरि		$\mathbf{q}^{(i)}$	\$8 50	हिरन्दनाभाकापत्यः	114	\$:	Ę	*
The state of the s		1 2 4		The second second		100	1 2 -	1 10

हिरण्यनामः चैसल्यः

३४ हिरण्ययं रणं वस्त

25

4 36

			6 40	5.7				
l _{ett}	अंशः व	स्याः	रहो।	হতাকা		अंशाः	: अध्या॰	इस्रो॰
	8	28	₹	हे प्ररूप्य महाबाह्ये	- ***	44	A	₹
140	8	2.2	فودو	हेमचन्द्रश्च विशासस्य	de b	8	\$	40
	₹	3.3	88	हेमकूटं तथा वर्षम्	***	3	8	66
ree	3	2	२२	हे राम हे कृष्ण सदा	200	ų	4	R.
121	Ę	6	23			*	18	45
	Ę	L9	48		198	*	16	3
	t	13	३२	हे हर्यका महावीयाः	1 (in	*	44	15
166	8	U _Q	83	हे हे शालिन मरेहे	1111	?	814	18
4-6	t	27	28	हैहयपुत्री धर्मस्तस्वापि	10	8	9.9	4
	3	8	58.	होमदेवार्चनाद्यासु		3	8.5	40
44.0	3	15	20		1.79	3	26	u _(S)
311	eq.	ly.	48	हंसकुन्देन्द्रयवलम्		4	8,00	53
	3	43	3-2	हस्बदीर्धपूरीर्यनु		€,	A	20
111	8	240	18	हासवृद्धी त्वहभागिः		3	6	E o
	4	35	3	ह्रादिनी सन्धिनी संवित्		\$	रस	80
				k				
	121 221 221 221 222 223 233 233 233		\$ \$7 \$ \$7 \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$ \$	\$ \$\$ \$\$ \$ \$\$ \$\$ \$ \$\$ \$\$ \$ \$\$ \$\$ \$ \$\$ \$\$ \$ \$ \$ \$ \$\$ \$ \$\$ \$ \$\$ \$ \$\$ \$ \$\$ \$ \$\$ \$ \$\$.	 ११९ १ हे अरुप्य महायाहो ११९ ५५ हे अरुप्य महायाहो ११९ ५५ हे अरुप्ट तथा वर्षम् ११३ ४४ हे सम्बूट तथा वर्षम् ११० ५६ हे सूदा पप पुतोऽसी १५० ६१ हे दे शास्तिम महे हे है सम्बुत परास्वाप १५० ६१ हे दे शास्तिम महे हे है सम्बुत परास्वाप १९० १९ १४ हो सम्बद्धा वार्म सम्बद्धा ११० १९ हमस्युती व्यवस्था ११० १९ हमस्युती व्यवस्था 	अंद्राः अध्याः रहीः रहीः रहीः । ११९ १ १ १ १ १ हे प्रसम्ब महाबाहो । ११९ १ १ १ १ हे प्रसम्ब महाबाहो । ११९ १३ ४४ हे प्रसम्ब विद्यालस्य । ११९ १२ हे प्रमाहे कृष्ण सदा । ११० ६६ हे द्वापितो हे एही । ११० ६२ हे हे प्राण्डित महेहे । ११९ १४ हे हे प्राण्डित महेहे । ११९ १४ हे हे प्राण्डित वा वानैः । ११० ४१ हम्मद्दी खहभाँगैः ।	अंद्राः अध्याः १ होः १ हो इतिहाः १ हो प्रस्ताः । १ १९ १ हे प्रस्ताः । १ १९ १ हे प्रस्ताः । १ १९ १९ हे स्वा पर्वम् । १ १९ १९ हे स्वा पर्वम् । १ १९ १९ हे हे शास्त्रिताया सर्वम् । १ १९ १९ हे हे शास्त्रिताया सर्वम् । १ १९ १९ हो सहेवार्यना । १ १९ १९ १९ हो सहेवार्यना । १ १९ हो सहेवार्यना । १ १९ १९ हो सहेवार्यना । १ १९	अंद्राः अध्याः रहते रहते रहते रहते । स्वाप्ताहे । प्रे ४ । १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १

श्रीकृष्णाङ्क (समित्र, सजिल्द्) [वर्ष ६, सन् १९३२ ई० (कोड नं० 1184)]— भगवान् श्रीकृष्णका चरित्र

ईश्वराङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ७, सन् १९३३ ई० (कोड नं० 749) }—यह विशेषाङ्क ईश्वरके स्वरूप, अस्तित्व, विशेषता, पहत्त्व आदिका सन्दर परिचायक है। इसमें ईश्वर-विश्वासी भक्तों, विद्वानीं, सन्त-विचारकीके ईश्वरके

शिवाङ्क (सचित्र, सजिल्द्र) [वर्ष ८, सन् १९३४ ई० (कोड र्व० 635)]--- यह शिवतत्त्व तथा शिव-महिमापर विशद विवेचनसहित शिवार्चन, पूजन, ब्रत एवं उपासनापर तास्विक और ज्ञानज़द मार्ग-दर्शन कराता है। द्वादश ज्योतिलङ्गोंका सचित्र परिचय तथा भारतके सुप्रसिद्ध शैव-तीर्योका प्रामाणिक वर्णन इसके अन्यान्य महत्वपूर्ण (पटनीय) विषय हैं। शक्ति-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ९, सन् १९३५ ई० (कोड नं० 41)]—इसमें परब्रह्म परमात्माके आदाशकि-स्वरूपका तात्विक विवेचन, महादेवीकी लीला-कथाएँ एवं सुप्रसिद्ध शाक भक्तीं और साधकींके प्रेरणादायी

योगाङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष १०, सन् १९३६ ई० (कोड नं० 616)]—इसमें योगकी ब्याख्या तथा योगका स्वरूप-परिचय एवं प्रकार और योग-प्रणालियों तथा अङ्ग-उपाङ्गीपर विस्तारसे प्रकाश डाला गया है। साथ ही अनेक योगसिद्ध महात्माओं और योग-साधकोंके जीवन-चरित्र तथा साधना-पद्धतियोगर रोचक, ज्ञानप्रद वर्णन हैं।

संत-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष १२, सन् १९३८ ई० (कोड नं० 627)]—इसमें उच्चकोटिक अनेक संतौं—प्राचीन, अर्वाचीन, मध्ययूगीन एवं कुछ विदेशी भगद्विश्वासी महापुरुषों तथा त्यागी-वैशागी महात्याओंके ऐसे आदर्श जीवन-चरित्र हैं, जो पारमाधिक गतिविधियोंके लिये प्रेरित करनेके साथ-साथ उनके सार्वभीयिक सिद्धान्तों, त्याप-वैराग्यपूर्ण तपस्वी जीवन-शैलीको उजागर करके उच्चकोटिके पारमार्थिक आदर्श जीवन-मृल्योंको रेखाङ्कित करते हैं। साधनाङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष १५, सन् १९४१ ई० (कोड र्न० ६०४)]—यह अङ्क साधनापरक बहुमूल्य मर्ग-दर्शनसे ओतप्रोत है। इसमें साधना-तत्व, साधनाके विभिन्न स्वरूप, ईश्रोपासना, योगसाधना, प्रेमाराधना आदि अनेक

भागवताङ्क (सबिब, सजिल्द) [वर्ष १६, सन् १९४२ ई० (कोड ने० 1104)]—इस विशेषाङ्कमें भागवतकी

सं० वाल्मीकीय रामायणाङ्क (सचित्र, सजिल्द्) [वर्ष १८, सन् १९४४ ई० (कोड नं० 1002)]—इस विशेषाञ्चमं श्रीमहाल्मोकि रामायणके विभिन्न पक्षाँपर विद्वान् सन्त-महात्माओं, विवारकोंके शोधपूर्ण लेखोंके साथ

इतना मध्र है कि बड़े-बड़े अमलात्मा परमहंस भी उसमें बार-बार अवगाहन करके अपने आपको धन्य करते रहते हैं।

इस विशेषाङ्कों भगवान् श्रीकृष्णके मधुर एवं ज्ञानपरक चरित्रपर अनेक सन्त-महात्मा, विद्वान् विचारकोंके शोधपूर्ण लेखोंका अद्भव संग्रह है।

अस्तित्वको सिद्ध करनेवाले शोधपूर्ण लेखोंका अनुपम संग्रह है।

जीवन-चरित्र तथा उनकी उपासनापद्धतिपर उत्कृष्ट उपयोगी सामग्री संगृहीत है।

कल्याणकारी साधनों और उनके अङ्ग-उपाङ्गोंका शास्त्रीय विवेचन है।

वाल्मीकीय रामायनकी सम्पूर्ण कथाओंका सुन्दर संग्रह किया गया है।

नारी-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष २२, सन् १९४८ ई० (कोड र्न० 43)]—इसमें भारतकी महान् नारियेंकि प्रेरणादायो आदर्श चरित्र तथा नारीविषयक विभिन्न समस्याओंपर विस्तृत चर्चा और उनका भारतीय आदर्शीचित समाधान है। नारीमाज्ञेक लिये आत्मबोध करानेवाला यह अत्यन्त उपयोगी और प्रेरणादायी ग्रन्थ है।

महतापर विभिन्न विचारकोंके शोधपूर्ण लेखोंके साथ श्रीमद्भागवतकी सम्पूर्ण कथाओंका अनुगम संग्रह है।

उपनिषद-अङ्क (सम्बद्ध, सजिल्द) [वर्ष २३, सन् १९४९ ई० (कोड नं० 659)]--इसमें मी प्रमुख उपनिषदों-(ईश. केन. कठ, प्रश्न, भण्डक, माण्डक्य, ऐतरेय तैत्तिरीय एवं श्रेताश्वतर-) का मूल, परच्छेद, अन्वय तथा

व्याख्यासहित वर्णन है और अन्य ४५ उपनिषदौंका हिन्दी-भाषान्तर, महत्त्वपूर्ण स्थलौंपर टिप्पणीसहित प्रायः सभीका अनुवाद दिया गया है। हिन्दू-संस्कृति-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष २४, सन् १९५० ई० (कोड र्प० 518)]---यह भारतीय

संस्कृतिके विभिन्न पक्षों—हिद्-धर्म दर्शन, आचार-विचार, संस्कार, रोति-रिवान, पर्व-उत्सव, कला-संस्कृति और

आदशौंपर प्रकाश डालनेवाला तथ्यपूर्ण बृहद् (सचित्र) दिग्दर्शन है। भारतीय संस्कृतिके उपासकों, अनुसन्धानकर्ताओं और जिज्ञासऑके लिये यह अवश्य पतनीय तथा उपयोगी दिशा-निर्देशक है।

है। इसके अतिरिक्त अनेक आख्यान एवं बहुत-से रोचक, ज्ञानप्रद प्रसंग और आदर्श चरित्र भी इसमें वर्षित है। शिव-पुजनकी पहिमाके साथ-साथ तीर्थ, व्रव. जप, दानादिका महत्त्व आदि भी इसके विशेषरूपसे पठनीय विषय हैं। भक्त-चरिताक्क (सिचन्न, सिक्ट्स) [वर्ष २६, सन् १९५२ ई० (कोड नं० ४०)]—इसमें भगवद्विशासको बढ़ानेवाले भगवद्भकों, ईश्वरोपासकों और महात्याओंके जीवन-चरित्र एवं विभिन्न भक्तिपूर्ण भावोंकी ऐसी पवित्र, सरस मधुर कथाएँ हैं जो मानव-मनको प्रेम-धक्ति-सुधारससे अनावास सरस्वोर कर देती हैं। रोचक, ज्ञानप्रद और निरन्तर अनुशीलनयीग्य ये भक्तगाथाएँ भगवद्विश्वास और प्रेपानन्द बढानेवाली तथा शान्ति प्रदान करनेवाली होनेसे नित्य पठनीय हैं। बालक-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष २७, सन् १९५३ ई० (कोड नं० 573)]—यह अङ्क बालकॉसे सम्बन्धित सभी उपयोगी विषयोंका बृहत् संग्रह है। यह सर्वजनोपयोगी होनेके साथ बालकोंके लिये आदर्श मार्ग-दर्शक है। इसमें प्राचीन कालसे अवतकके भारतके महान वालकों एवं विश्वभरके सुविख्यात आदर्श वालकोंके अनुकरणीय जीवन-वृत्त एवं आदर्श चरित्र बार-बार पठनीय और प्रेरणाप्रद हैं। संतवाणी-अङ्क (सचित्र, सजिल्द्) [वर्ष २१, सन् १९५५ ई० (कोड ने० ६६७)]—संत-महात्माओं और अध्यातमचेता महापरुषोके लोककल्याणकारी उपदेश-उद्घोधनीं-(वचन और सुक्तियाँ-) का यह बृहत् संग्रह प्रेरणापद होनेसे नित्य पठनीय और सर्वथा संग्रहणीय है। सत्कथा-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ३०, सन् १९५६ ई० (कोड नं० 587)]—जीवनमें भगवरप्रेम, सेवा, त्याग, वैराग्य, सत्य, अहिंसा, विषय, प्रेम, उदारता, दानशीलता, दया, धर्म; नीति, सदाचार और शान्तिका प्रकाश भर देनेवाली सरल, सुरुचिपूर्ण, सत्प्रेरणादायो छोटी-छोटो सत्कथाओंका यह बहुत संग्रह सर्वदा अपने पास रखनेयोग्य है। तीर्धाङ्क (समित्र, सजिल्द) [वर्ष ३१, सन् १९५७ ई० (कोड नं० 636)]—इस अङ्कर्मे तीर्थोकी महिमा, तनका स्वरूप, स्थिति एवं तीर्थ-सेवनके महत्त्वपर उत्कृष्ट मार्ग-दर्शन-अध्ययनका विषय है। इसमें देव-पूजन-विधिसहित, तीर्थोंमें पालन करनेबोग्य तथा त्यागनेबोग्य उपयोगी बातोंका भी उझेख हैं। भारतके प्राय: समस्त तीर्थोंका अनुसन्धानात्मक हान करानेवाला यह एक ऐसा संकलन है जो तीर्घाटन-प्रेमियोंके लिये विशेष महत्त्वपूर्ण और संप्रहणीय है। (सन् १९५७ के बाद तीर्थोंके मार्गों और यातायातके साधनोंमें हुए परिवर्तन इसमें सम्मिसित नहीं हैं।) भक्ति-अक् (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ३२, सन् १९५८ ई० (कोड नं० ६६०)]—इसमें ईश्वरोपासना, भगवद्भक्तिका स्वरूप तथा भक्तिके प्रकारों और विभिन्न पश्चोंपर शास्त्रीय दृष्टिसे व्यापक विचार किया गया है। साथ ही इसमें अनेक भगवद्भरतीके शिक्षाप्रद, अनुकरणीय जीवन-चरित्र भी बद्दे ही मर्मस्पर्शी, प्रेरणाप्रद और सर्वदा पठनीय हैं। संक्षिप्त योगवासिष्ठाङ्क (सम्बद्ध , सजिल्द) [यर्ष ३५, सन् १९६१ ई० (कोड नं० 574)]— योगवासिष्ठके इस संक्षित रूपान्तरमें जगतुकी असत्ता और परमात्मसत्ताका प्रतिपादन है। पुरुवार्थ एवं तत्त्व-ज्ञानके निरूपणके साथ-साथ इसमें शास्त्रोक सदाचार, त्याग-वैराग्युक सत्कर्य और आदर्श व्यवहार आदिपर भी सुक्ष्म विवेचन है। संक्षिप्त ब्रह्मवैवर्तपुराणाङ्क (सम्बन्न, सजिल्द) [वर्ष ३७, सन् १९६३ ई० (कोड नं० 631)]—इसमें भगवान् त्रीकृष्य और उनकी **अभित्रस्वरूपा प्रकृति-ईश्वरी त्रीएधाकी सर्वप्रधानताके** साथ गोलोक-लीला तथा अवतार-लीलाका विशद वर्णन है। इसके अतिरिक्त इसमें कुछ विशिष्ट ईश्वरकोटिके सर्वशक्तिमान् देवताओंको एकरूपता, महिमा तथा उनकी साथना-उपासनाका भी सन्दर प्रतिपादन है। श्रीभगवज्ञाम-महिमा-प्रार्थनाङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ३९, सन् १९६५ ई० (कोड नं० 1135)]—यह विशेषाङ्क भगवत्राम-महिमा एवं प्रार्थनाके अमीप प्रभावका सुन्दर विश्लेषक है। इसमें विभिन्न सन्त-महत्माओं, जिद्वान् विचारकोंके भगवनाम-महिमा एवं प्रार्थनाके चमत्कारोंके सन्दर्भमें शास्त्रीय लेखोंका सुन्दर संग्रह है। इसके अतिरिक्त कुछ भक्त-सन्तोंके नाम-जपसे होनेवाले सुन्दर अनुभवोंका भी संकलन किया गया है। पालोक और पुनर्जन्माङ्क (सचित्र, सजिल्द्) [वर्ष ४३, सन् १९६९ ई० (कोड नं० 572)]—मनुष्यमात्रको मानव-चरित्रके पतनकारी आसुरी सम्पदाके दोषींसे सदा दूर रहने तथा परम विशुद्ध उण्ण्वल चरित्र होकर सर्वदा सत्कर्म करते रहनेकी शुभ प्रेरणाके साथ इसमें परलोक तथा पुनर्जन्मके रहस्यों और सिद्धान्तोंपर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। आत्मकल्याणकामी पुरुषों तथा साधकमात्रके लिये इसका अध्ययन-अनुशीलन अति उपयोगी है।

संक्षिप्त स्कन्दपुराणाङ्क (सचित्र, सजिस्द) [वर्ष २५, सन् १९५१ ई० (कोड नं० 279)]—इसमें भगवान् शिवको महिमा, सती चरित्र, शिव-पार्वती-विवाह, कुमार कार्तिकेयके जन्मकी कथा तथा तारकासुर-वध आदिका वर्णन

गर्ग-संदिता (सच्चित्र, सजिल्द) [वर्ष ४४-४५, सन् १९७०-७१ ई० (कोड र्ग० 517)]—इसमें होराधाकृष्णकी दिव्य, मधुर लीलाओंका बड़ा ही इदयहारी वर्णन है। इसकी सरस कथाएँ भक्तिप्रद और भगवान श्रीकृष्णमें अनुराग बढानेवाली हैं। श्रीगर्णश-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ४८, सन् १९७४ ई० (कोड नं० 657)]— भगवान् गणेश अनादि, सर्वपृष्य, आनन्दमय, ब्रह्मयय और सच्चिदानन्दरूप (परमातमा) हैं। महामहिम गणेशकी इन्हीं सर्वमान्य विशेषाओं और सर्वसिद्धि-प्रदायक उपासना-पद्धतिका विस्तृत वर्णन इस विशेषाङ्कमें उपलब्ध है। इसमें श्रीगणेशकी लीला-कथाओंका भी बड़ा हो रोचक वर्णन और पुजा-अर्चना आदिपर उपयोगी दिग्दर्शन है। श्रीहनुमान-अङ्क (सिंबन्न, सिंजल्द) [वर्ष ४९, सन् १९७५ ई० (कोड नं० 42)]—इसमें श्रीहनुमान्जीका आद्योपाना जीवन-चरित्र और श्रीरामभक्तिके प्रतापसे सदा अमर बने रहकर उनके द्वारा किये गये क्रिया-कलापींका तास्विक और प्रामाणिक चित्रण है। ब्रोहनुमानुजीको प्रसन्न करनेवाले विविध स्तोत्र, ध्यान एवं पूजन-विधियोंका भी इसमें उपयोगी संकलन है। सुर्योक्क (सचित्र, सजिल्द्) [वर्ष ५३, सन् १९७९ ई० (कोड नं० 791)]— भगवान् सूर्य प्रत्यक्ष देवता हैं। इनमें समस्त देवताओंका निवास है। अत: सूर्य सभीके लिये उपास्य और आराध्य हैं। प्रस्तुत अङ्कर्पे विभिन्न संत-महात्माओंके सूर्वतत्त्वपर सुन्दर लेखोंके साथ वेदों, पुराणों, उपनिषदीं तथा रामायण इत्यादिमें सूर्य-सन्दर्भ, भगवान् सूर्यके उपासनापरक विभिन्न स्तोत्र, देश-विदेशमें सूर्योपासनाके विविध रूप तथा सूर्य-लोलाका सरस वर्णन है। संव भविष्यपराणाङ्क (सिश्चन्न, सजित्द) [वर्ष ६६, सन् १९९२ ई० (कोड पं० 548)]—यह पुराण विषय-वस्तु, वर्णन-रोली एवं काव्य-रचनाकी दृष्टिसे अत्यन्त भव्य, आकर्षक तथा उच्चकोटिका है। इसमें धर्म, सदाचार, नीति, उपदेश, आख्यानसहित, वत, तीर्यं, दान तथा ज्योतिष एवं आयुर्वेदशास्त्रके विषयोंका अद्भुत संग्रह हुआ है। वेताल-विक्रम-संबादके रूपमें संगृहीत कथा-प्रबन्ध इसमें अत्यन्त रमणीय है। इसके अतिरिक्त इस प्राणमें नित्यकर्म, संस्कार, सामृद्रिक-लक्षण, ज्ञान्ति-पौष्टिक मन्त्र तथा आराधना और व्रतोंका भी वर्णन है। शिबोपासनाङ्क (सिंबन, सिंबल्द) [वर्ष ६७, सन् १९९३ ई० (कोड नं० 586)]—इस अङ्गर्पे शिवसे सम्बन्धित तात्त्विक निवन्धोंके साथ शस्त्रोंमें वर्णित शिवके विविध स्वरूप, शिव-उपासनाको मुख्य विधाएँ, पश्चमूर्ति, दक्षिणामूर्ति, ज्योतिर्लिङ्क, नर्भदेश्वर, नटराज, हरिहर आदि विभिन्न स्वरूपोंके विवेचन, आर्थ ग्रन्थोंके आधारपर शिव-साधनाको पद्धति, भारतके विभिन्न प्रदेशोंमें अवस्थित शिवमन्दिर तथा सैच तीथौंका परिचय और विवरण आदि है। श्रीरामभक्ति-अङ्क (सिचन, सिजल्द) [वर्ष ६८, सन् १९९४ ई० (कोड नं० 628)]---भगवान् श्रीरामके वरित्रका श्रवण, मनन, आवरण तथा पठन-पाठन भवरोग-निवारणका सर्वोत्तम उपचार है। इस अङ्क्रमें भगवान श्रीराम और उनकी अभिन्न शक्ति भगवती सीताके नाम, रूप, लीला-धाम, आदर्श गुण, प्रभाव आदिके ताल्विक विवेचनके साथ श्रीरामजन्मभूमिकी महिमा आदिका विस्तृत दिग्दर्शन कराया गया है। गौ-सेवा-अङ्क (सचित्र, सजित्द) [वर्ष ६९, सन् १९९५ ई० (कोड नं० 653)]— शास्त्रोंमें गौको सर्वदेवमधी और सर्वतीर्धमयी कहा गया है। गीके दर्शनसे समस्त देवताओं के दर्शन तथा समस्त तीर्थीकी यात्राका पुण्य प्राप्त होता है। इस विशेषाङ्कर्मे गौसे सम्बन्धित आध्यात्मिक और तात्विक निषम्धेकि साथ, गौका विश्वरूप, गौसेवाका स्वरूप, गौपालन एवं गो-संबर्धनकी मुख्य विधाएँ तथा गोदान आदि अनेक उपयोगी विषयोंका संग्रह हुआ है। भगवाद्धीला-अङ्क (सचित्र, सजिल्द) [वर्ष ७२, सन् १९९८ ई० (कोड नं० ४४४)]—इस विशेषाङ्कर्ने भगवान ब्रीराप-कृष्णकी लीलाओंके साथ पञ्चदेवोंके विभिन्न अवतारोंकी लीलाओं, भगद्धकोंके चरित्र तथा लीला-कथाके प्रत्येक पक्षपर पठनीय एवं प्रेरक सामग्रीका समायोजन किया गया है। संव गरुइपुराणाङ्क (सम्बन, सजिस्द) [वर्ष ७४, सन् २००० ई० (कोड नंव 1189)]—इस पुराणके अधिष्ठात्देव भगवान् विष्णु हैं। इसमें भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, सदाचार, निष्कामकर्मकी महिमांके साथ यह, दान, तप तीर्थ

سميمانا

आदि शुध कर्मीमें सर्व साधारणको प्रवृत्त करनेके लिये अनेक लौकिक और पारलीकिक फलॉका वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद, नीतिसार आदि विषयोंके वर्णनके साथ भूत जीवके अन्तिम समयमें किये जानेवाले कृत्योंका

विस्तारसे निरूपण किया गया है। आत्मज्ञानका विवेचन भी इसका मुख्य विषय है।